Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

NYA JEVAN 1965 G.K.V.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

76291

नया जीवन

सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक
चेतना का प्रेरक मनोरंजक मासिक

जनवरी १९६५

76,297

ठीक जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
राय बनाने के लिए मासिक आवश्यक है,

'नया जीवन' में
दैनिक-साप्ताहिक-मासिक की इन विशेषताओं का समन्वय है।
आप उसका एक अङ्क देख कर ही इस के साक्षी हो जाएंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

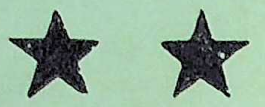

कागज़ के एक छोटे पुर्जे पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी।
अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है।

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज के बिना न
शास्त्र मिलते न साहित्य।
कागज हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

111311

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

मुसीबत क्यों मोल लेते हैं ?

क्या आप लेना चाहेंगे? नहीं, न! लेकिन आप हमेशा खरीददारी सेर या पौंड में करते हैं।

ये बाट गैरकानूनी हैं। जो दुकानदार इनका प्रयोग करते हैं उन्हें सजा मिल सकती है। पर आपको तो तुरन्त सजा मिल जाती है—आपके पैसे के बदले में आपको वस्तु कम मिलती है।

किलो में ही खरीददारी कीजिए

DA 4/372

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–
उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है !

★

कोशिश कीजिये–

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए !

खड़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत

एवं

भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस : चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—३१६, ३६४, १२०

संचालक
सेठ सुशील कुमार बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दून घाटी

= का =

गौरव

अमिताभ टैक्सटाइल मिल्स लिमिटेड

देहरादून :: उत्तर प्रदेश

श्रेष्ठतम : सूत ★ हौज़री ★ बंटा सूत

निर्माता

अमिताभ ! अमिताभ !! अमिताभ !!!

त.र—बम्बई—'साहूजैन'
धांगध्रा—'कैमिकल्स'
आरूमुगनेरी—'कैमिकल्स'

टेलीफोन:—बम्बई—२५१२१८-१९-१०
(तीन लाइन)
धांगध्रा—३१ एवं ६७
कयालपट्टनम—३०

धांगध्रा कैमिकल वर्क्स लिमिटेड

१५ ए-हार्निमन सर्किल

फोर्ट, बम्बई-१

प्रसिद्ध 'हार्स शू' छाप कैमिकल्स के निर्माता

सोडा ऐश, सोडा बाईकार्ब, केलशियम क्लोराइड,

नमक और इलेक्ट्रोलीटिक कास्टिक सोडा

(९८ प्रतिशत N&OH Purity)

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

धांगध्रा (गुजरात राज्य)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुचिपूर्ण—
कलात्मक, यथातथ्य,

ब्लाक

लाइन
हाफ़टोन
रंगीन

दिगम्बर आर्ट कॉटेज
२३०५, धर्मपुरा, देहली

Phone 262724

Telegrame 'Digarts' Delhi

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गणतन्त्र के पावन अवसर पर

नगरपालिका, सहारनपुर

की ओर से

सभी नागरिकों, शुभ-चिन्तकों तथा सीमाओं की सुरक्षा में
संलग्न सैनिकों के प्रति हमारी हार्दिक शुभ कामना है।
अपने घर, पास-पड़ौस और नगर को स्वच्छ रखना देश का सौंदर्य
बढ़ाना है, जो प्रत्येक नागरिक का परम कर्त्तव्य है।
आइये, इस सांगनिक अवसर पर अपना उत्तरदायित्व दोहराएं।

★ अपने घर का कूड़ा-कचरा सड़क पर न डालिए।

★ केला व दूसरे फलों के छिल्के रास्ते में न डालिए।

★ पार्क में जाएँ तो फूल न तोड़िए और इस तरह के दूसरे नियमों का भी पालन कीजिए।

★ दूकानों के सामने अपना सामान न फैलाइए।

★ सड़क के बीच में खड़े होकर कभी बातें न कीजिए।

★ अपने मकान के पतनालों को टीन से ढकिये या पानी निकलने की नली बनवाइए ताकि आने जाने वालों के कपड़ों पर गन्दे छींटें न पड़ें। इस कार्य को तुरन्त करा लें।

★ उपयोग करने के बाद नल की टोंटी को कभी भी खुला न छोड़िए।

सूचना केन्द्र

नगर पालिका सम्बन्धी सभी प्रकार की जानकारी के लिए कार्यालय में
स्थापित सूचना केन्द्र का लाभ उठाइये—समय दिन में २बजे से ४ बजे तक।

भगवान दास

अध्यक्ष—नगरपालिका, सहारनपुर उ० प्र०

[फोन-कार्यालय—४११, निवास ५६६]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्त तक ८५ प्रतिशत बालक तथा ६५ प्रतिशत बालिकाएं स्कूल जायेंगी।

तृतीय पंचवर्षीय योजना के प्रथम तीन वर्षों में ८,००० मिश्रित विद्यालय ३,००० कन्या जूनियर बेसिक स्कूल ग्रामीण क्षेत्रों में और बड़े पैमाने के १००० जूनियर बेसिक स्कूल नगर क्षेत्रों में खोले गये हैं। योजनाकाल की समाप्ति काल तक १६,५०० मिश्रित, ५४२३ कन्या जूनियर बेसिक स्कूल ग्रामीण क्षेत्रों में खोले जायेंगे।

हमारा लक्ष्य वर्तमान योजनान्त तक, ६-११ वर्ष तक के ८५ प्रतिशत बालक तथा ३८ प्रतिशत बालिकाएं जूनियर बेसिक स्कूलों में प्रविष्ट कराने का था परन्तु नूतन संकल्प यह है कि उक्तायु के ९५ प्रतिशत बालक तथा ६५ प्रतिशत बालिकाएं योजना के समाप्ति-काल तक जूनियर बेसिक स्कूलों में प्रविष्ट हो जायँ जिससे प्रदेश इस क्षेत्र में देश के अन्य राज्यों के समक्ष पहुँच सके। अन्य राज्यों के शैक्षिक-प्रगति तक पहुंचने के लिए इस वर्ष इस प्रकार अथक प्रयास किया जा रहा है कि तृतीय योजना के अवशेष काल की पूर्ति अर्थात् ३१ मार्च, १९६६ तक हमारा राज्य प्राथमिक स्तर पर शिक्षा सम्बन्धी राष्ट्रीय प्रतिशत (क्रमशः बालकों का ९७ प्रतिशत तथा बालिकाओं का ६३ प्रतिशत) को प्राप्त कर सके।

ग्रामीण क्षेत्रों में अध्यापक

नये स्कूलों को चलाने के लिए शासन ने पर्याप्त संख्या में अतिरिक्त अध्यापकों की नियुक्ति की है। इस वर्ष ३७७५ मिश्रित स्कूल, १४२३ बालिका जूनियर बेसिक स्कूल ग्रामीण क्षेत्रों में तथा १०० बालकों एवं ५४ बालिकाओं के जूनियर बेसिक स्कूल नगर क्षेत्रों में खोले जाने वाले हैं।

१५०० प्रधान अध्यापक मिश्रित स्कूलों में नियुक्त किये गए हैं और गाँवों में चुने हुए कन्या जूनियर बेसिक स्कूलों में ७३५ कन्टीन्यूएशन कक्षाएं खोली जायेंगी जिसमें बालिकाओं को व्यक्तिगत रूप से जूनियर हाई स्कूल परीक्षा के लिए तैयार किया जायगा।

गत तीन वर्षों में आयोजित छात्रवृद्धि आन्दोलनों के फलस्वरूप बालक एवं बालिकाओं की क्रमशः ६५ से ७९-८ प्रतिशत तथा १९ से ३०-६ प्रतिशत वृद्धि हुई हैं।

तृतीय पंचवर्षीय योजना में बालिकाओं की शिक्षा में सुविधा प्रदान करने के लिए विशेष प्राविधान किये गये हैं। मिश्रित स्कूलों में पढ़ती हुई बालिकाओं की निगरानी के लिये स्कूल माताओं की नियुक्ति की गई है और गांवों के मिश्रित स्कूलों में शौचालयों का निर्माण किया जा रहा है।

स्थानीय निकायों के अन्तर्गत बालिकाओं के स्कूलों की ८वीं कक्षा तक तथा १५,००० आबादी से कम नगर के व्यक्तिगत स्कूलों में उक्त कक्षा तक निःशुल्क शिक्षा प्रदान की जाती है और इस मास से ग्राम तथा नगर दोनों क्षेत्रों में कक्षा १० तक निःशुल्क शिक्षा दी जायगी।

शिक्षित महिलाओं को गांवों में शिक्षण व्यवसाय के प्रति आकर्षित करने के लिए जूनियर बेसिक स्कूलों में पढ़ाने वाली प्रशिक्षित महिलाओं को १५ रु० तथा अप्रशिक्षित महिलाओं को १० रु० प्रतिमास ग्रामीण भत्ता दिया जाता है।

उक्त लक्ष्यों की पूर्ति हेतु प्रदेशीय शिक्षा विभाग समूचे प्रदेश में आठवां छात्रवृद्धि पर्व तथा बेसिक शिक्षा सप्ताह २० से २६ जनवरी, १९६५ से आयोजित कररहा है। इस आयोजन में निम्नांकित अन्य कार्यक्रमों पर बल दिया जायगा:-

१—जूनियर बेसिक स्कूलों के लिए भवन-निर्माण,

२—कन्या विद्यालयों के अतिरिक्त मिश्रित स्कूलों में छात्राओं का अधिकाधिक संख्या में प्रवेश

३—मध्यान्ह स्वल्पाहार योजना।

४—बेसिक शिक्षा का सर्वांगीण विकास।

५—बेसिक स्कूलों का सामुदायिक केन्द्र के रूप में विकास।

शिक्षा प्रसार विभाग उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमि को उत्पादन की महान शक्ति प्रदान कर उर्वरा तथा उपजाऊ बनाती है। इन खादों के प्रयोग से फसल का चौगुना होना निश्चित है!

अच्छी फसल, उत्तम अन्न

एवम्

आर्थिक लाभ के लिए

सरकार द्वारा निश्चित दरों पर हमारे यहाँ निम्नलिखित खाद सुलभ हैं—

★ एमोनियम सल्फेट
★ कैलशियम एमोनियम नाइट्रेट
★ यूरिया ★ सुपर फ़ास्फेट
★ फर्टीलाइजर मिक्शचर

हमारे धन से होने वाले लाभ ही हमारे हैं!

राष्ट्रीय भावना की इसी छाया में

खिलती है स्वतन्त्रता, बढ़ता है उत्पादन,
मिटती है बेकारी, जागती है आत्मनिर्भरता

अब हमारे यहाँ उचित मूल्य पर—

एग्रीकलचरल डवलपमेंट सोसायटी
नैनी, (इलाहाबाद)

तथा अन्य प्रसिद्ध उत्पादकों द्वारा निर्मित—

कल्टीवेटर्स, थ्रैशर्स, रिजर्स, व्हील हो, डिस्क हैरो

तथा

अन्य सभी प्रकार के कृषि यन्त्र मिल सकते हैं।

बुद्धि के पकाव पर जिस तरह मनुष्य के जीवन का निर्माण निर्भर है,

ईंटों के सही पकाव पर उसी तरह आपके भवन का निर्माण निर्भर है।

जिले के निम्नलिखित स्थानों में हमारे भट्टों पर बनी ईंटें इसी कसौटी पर पूरी उतरी हैं।

भट्टों के स्थान—

सहारनपुर

मिरगपुर (देवबन्द), भायला

नगला खुर्द, महेशपुर।

देश की प्रगति और समृद्धि

पंचवर्षीय योजनाओं पर निर्भर करती है

हमारा कर्तव्य है कि कम से कम खर्च में अधिक से अधिक लाभ उठायें और उस धन को ऐसे मदों में लगायें जो राष्ट्रीय उन्नति में सहायक हों!

इसके लिये—

इण्डियन आयल्स कम्पनी लिमिटेड

के विशुद्ध—

❀ ज्योति मार्का मिट्टी का तेल
❀ हाई स्पीड डिजिल
❀ लाईट डिज़िल

का सर्वदा प्रयोग करें!

मिलने का स्थान—

टैलीफोन : १०

डिस्ट्रिक्ट को-आपरेटिव डवलपमेंट फैडरेशन लि०

स्टेशन रोड, सहारनपुर

बिक्री केन्द्र—जिले के समस्त सहकारी संघ, क्रय विक्रय एवं बड़े आकार की सहकारी समितियाँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

USEFUL MODELS AND CHARTS

FAMILY PLANNING MODELS

(Set of 9 Models)

The models are prepared according to approved specifications.

The models depict the various contraceptive methods in accordance with the Government's Family Planning Scheme and are very suitable for display in Health Clinics, Dispensaries and Block Development Museums, Information Centres etc.

The full set consists of the following models in 9″ × 13″ size suitably mounted on shields.

1. Methods of Diapharagm Insertion.
2. Finger touching Diapharagm Rim.
3. Fixed position of the Diapharagm on the uterus.
4. Finger touching uterus only.
5. Foam tablets.
6. Application of Jelly through applicator.
7. Wrong position of check passerie.
8. Correct position of diapharagm.
9. Average normal Cervix and Vagina.

The price is Rs. 250·00 per set or Rs. 30·00 each model.

Adult Education Charts

Set of 17 Charts in 20″ × 30″ for educating the adults Full set Cloth Mounted with Rollers Rs. 47·50

प्रौढ़-शिक्षा चार्ट

१. सहायक शब्दों का पाठ–१
२. ,, ,, ,, ,, २
३. पहले समूह से शब्द और वाक्य १
४. पहले समूह से शब्द और वाक्य २
५. अक्षरों का दूसरा समूह
६. अक्षरों के दूसरे समूह के शब्द और वाक्य
७. अक्षरों का तीसरा समूह
८. अक्षरों के तीसरे समूह से शब्द और वाक्य
९. अक्षरों का चौथा समूह
१०. अक्षरों के चौथे समूह से शब्द और वाक्य
११. अक्षरों का पांचवां समूह
१२. अक्षरों के पाँचवे समूह से शब्द और वाक्य
१३. ा की मात्रा का शब्दों में प्रयोग १
१४. ा की मात्रा का शब्दों में प्रयोग २
१५. ा मात्रा का वाक्यों में प्रयोग
१६. ा मात्रा का वाक्यों में प्रयोग
१७. शब्द और वाक्य

Kindly send your orders to:–

National Audio Visual Aids Corpn.

11, DARYAGANJ, DELHI—7

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरी जानकारी

- वर्ष भर का मूल्य पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे है। वार्षिक विशेषांक का मूल्य दो रुपया है, जो ग्राहकों को वार्षिक मूल्य में ही मिलता है।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और अपनी प्रत्येक रचना पर अन्त में अपना पूरा नाम-पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बाध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण !
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह प्यार-मान दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें। ३ महीने के भीतर आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाए, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या लिखने की आवश्यक प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीजों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक

नया जीवन' * सहारनपुर * उ० प्र०

नया जीवन

विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'
निदेशक

अखिलेश
सम्पादक-संचालक

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे नव दिमाग ऐय्याशों का फालतू समय चैन से काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें !

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं !

जनवरी १९६५
संचालक

विकास लिमिटेड
सहारनपुर · उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अता-पता

एक स्वर मेरा मिला लो	—		
उलाहना (चतुर्दपदी)	—	स्व० श्री शिशुपाल सिंह, ऊदी जि० इटावा	३
नया साल	—	श्री गिरीश दत्त पाण्डेय ३, क्विटन रोड, लखनऊ	४
नव वर्ष की शुभ कामना	—	श्री विश्वदेव शर्मा, ४ आफीसर्स फ्लैट्स, गणेश लाइन, किशन गंज दिल्ली-६	४
राष्ट्र-चिन्तन	—	स्तम्भ	५
विचार-गोष्ठी	—	स्तम्भ	१०
समय देश की समय समस्याओं का समय समाधान	—	श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'	१३
कुछ स्मृतियाँ : कुछ अनुभूतियाँ	—	पद्मभूषण श्री सूर्यनारायण व्यास भारती भवन, उज्जैन	१८
लाखों बीबो : एक फरिश्ता	—	श्री बी० मेहरा द्वारा श्री एच० एन० एण्ड सन्स, ३३५ कालबा देवी, बम्बई	२१
संकट टलेगा या प्रलय आयेगी ?	—	श्री जैनेन्द्र कुमार ७, दरियागंज, दिल्ली	२४
श्री अक्षय कुमार जैन	—	श्री शिव कुमार गोयल पिलखुवा (मेरठ)	२६
बूँद और समुद्र	—	श्री तिलक, स्वदेशी हाउस, कानपुर	२८
पंजाब केशरी ला० लाजपत राय: एक जीवन झाँकी	—	श्री अलगूराय शास्त्री लोक सेवक मंडल, लाजपतनगर नई दिल्ली—१४	२९
बोलती खबरें	—	स्तम्भ	३२
अपने पढ़ने के कमरे में	—	स्तम्भ	३३
अपने भारत को जानिए	—	श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार इतिहास सदन, कनाट सर्कस, नई दिल्ली	३५
जीवन के झरोखे से	—	स्तम्भ	
दस वर्ष बाद फिर उसी गांव में	—	श्री ठाकुर प्रसाद सिंह, प्रकाश भवन मुरली नगर, कैण्ट रोड, लखनऊ	३८
पुस्तक-परिचय	—	स्तम्भ	४०

वे नहीं रहे !

- श्री मैथिली शरण गुप्त राष्ट्रकवि थे और मानवीय शालीनता के एक अनुल्लंघनीय मानदण्ड।
- श्री मामा बरेरकर एक विशिष्ट साधक थे मराठी के और विशिष्ट समर्थक थे राष्ट्र भाषा के।
- श्री जहूर बख्श ने अपनी हिन्दी सेवा की बहुत कीमत दी। कभी हिन्दुओं ने डांटा कि वे मुसलमान हैं और कभी मुसलमानों ने पीटा कि वे हिन्दू-भाषा लिखते हैं।
- श्री मुक्ति बोध जीवित संघर्ष थे और नई कविता के दृष्टा कवि।
- 'नया जीवन' स्मृति में नतमस्तक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'एक स्वर मेरा मिला लो।'

स्व० शिशुपाल सिंह 'शिशु' के जयगान में मैं चाहता हूँ कि मेरा भी एक स्वर मिलाया जाए; क्योंकि यह जयगान किसी व्यापारी साहित्यिक का नहीं, एक साधक इन्सान का है—कविता नहीं, इन्सानियत ही जिसकी साधना थी।

समाज के सम्मान-सिंहासन पर आज मनुष्य पद और पैसे से प्रतिष्ठित होता है, पर उस दिन जब वे महामहिम राष्ट्रपति के सामने अधिष्ठित हुए, तो न पद के कारण, न पैसे के कारण ही यह उनकी मानवीय साधना का ही राष्ट्रीय अभिनन्दन था।

शिशु जी इतना पथ चले, यह नाप कर क्या हम उनके साथ न्याय कर सकते हैं? ना, देखना यह होगा कि पथ कैसा था, चलने के साधन क्या थे और चलने वाला किस स्थिति में था। यों समझें कि नन्दू मोटर में सौ मील चला और चन्दू बीमारी की हालत में पैदल सात मील चला, तो कौन ज्यादा चला? किसे हम पहला नम्बर दें?

सड़क क्या, पगडंडी भी नहीं थी उस वन में जो 'शिशु' जी का यात्रा पथ था। दलबल क्या, लाठी भी उनकी साथी नहीं थी। उफ़, उनकी इच्छा ही उनका पाथेय था। वे अपने संकल्प के सहारे मंजिल पा गये थे।

चतुर्दश पदी

—०—

उलाहना

—०—

पथ पथिक का ऐसा है पथी कि निखरे तिनके चुन चुन कर
बनाया था जो मैंने नीड़ परिश्रम से सर चुन चुन कर
उसी ने मेरे उड़ते समय एक भी बार न साथ दिया
जिसे समझा था अपना सगा, उसी ने मुझ से दगा किया

—००—

नीड़ का यह उलाहना है कि वृक्ष मैंने सम्पन्न किया
जहाँ सब रूँगे फल थे नहीं चहकता फल उत्पन्न किया
फिर जब किसी क्रूर ने हाथ मार तिनके बिखराया
उस समय प्रतिशोधित तो दूर वृक्ष प्रतिरोध न कर पाया:

—०००—

वृक्ष की यही शिकायत है कि छत्रवत मैंने छाया की
आँधी अपने सर पर झेल धरा की शीतल काया की
किन्तु आँधी के भीषण वेग जब कि लाये दुस्सह बाधा
उस समय पैर उखड़ते देख धरा ने मुझे नहीं साधा

^

सभी के उपालम्भ यों उतर रहे हैं धरती के पग में
मगर वह बेचारी क्या करे? पड़ी खुद दुहरे चक्कर में

(— आत्मा प्रकाश)

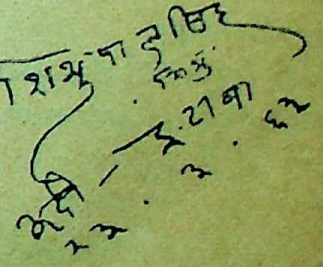

सर्पदंश से उनकी मृत्यु अभाव है समाज का, घाव है अपनों के कलेजे का और एक पाठ है उन सबके लिये, जो जीवन को एक युद्ध मानते हैं कि वे मरते मरते भी उस साँप को अपनी लाठी से मार गये।

मैं चाहता हूं उनके जयगान में मेरा भी एक स्वर मिलाया जाए; क्योंकि यह जयगान किसी व्यापारी साहित्यिक का नहीं, एक साधक इन्सान का है—कविता नहीं, इन्सानियत ही जिसकी साधना थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया साल

श्री गिरीशदत्त पाण्डेय

हर साल की तरह इस साल
भी आया नया साल।
हर साल की तरह इस साल
भी कार्ड हरे लाल
आने लगे
मित्रों के और रिश्तेदारों के—
'हर साल की तरह इस साल
भी हो मुबारक तुम्हें नया साल'।

लेकिन जब मैं सोचता हूं
हर साल की तरह इस साल
क्या ख़ास चीज़ ल या नया साल
तब कुछ समझ में नहीं आता
जहाँ से चलता है दिमाग़ लौट
फिर वही है आता;
वही इकतीस दिसम्बर की ठंडी ठंडी शाम,
वही झंडी-बत्तियों का ताम-झाम,

गिरजों के घंटे, सिनेमा, क्लब में डाँस-बाल
हर साल की तरह इस साल।
थोड़ा यदि अंतर है तो सिर्फ यह—
हर साल की तरह इस साल
उन दामों नहीं मिलता है आटा-दाल
लेकिन इससे क्या
कोई अंतर 'न्यू ईयर्स ईव' में हुआ ?
केक-पेस्ट्री, चिकेन, व्हिस्की-ब्रांडी, सब हैं—
महँगी सही—परवा ही किसको है दाम की ?
होटल-क्लब भरे हैं खाने की चीज़ों, खाने वालों से
भले ही राशन-शॉप में न हो कुछ भी माल
हर साल की तरह इस साल।
यह तो बात शहरों का, शहर वालों की हुई
सेठों की, बँगले और कोठी वालों की हुई
और गाँव वाले भी
मुँहमाँगे दामों में धान बेच

(या छिपा—बनिए से पेशगी रक़म सँभाल—
'लेंगे उठा सुभीते से कभी भइया भिक्खू लाल')
गन्ना बेच क़रारों को मँहगे में—
मिल को कंट्रोल-रेट में न दे—
उनके भी कोई ऐसे बुरे नहीं हाल-चाल
हर साल की तरह इस साल।
रहे कौन ?
जो हैं बेचारे बेजबान, मौन !

मध्यवर्गी—निश्चित वेतन वाले, कर्मचारी,
शिक्षक, डाक्टर, वकील, अधिकारी.....
जिनकी आय बढ़ती हुई कीमतों की दौड़ में पिछड़ गई
बुरी तरह
यहाँ तक कि बहुतों की सामाजिक न्याय में
आस्था उखड़ गई !
उनकी जेब हल्की, मन भारी, पिचके पेट-गाल
हर साल का तरह इस साल।

नव-वर्ष की शुभकामना

कोई सिंदूरी सांझ बांझ रह जाय नहीं,
कोई पूनम, कालिमा आज, रह जाय नहीं।
हर सुबह नये उपहार सजाये द्वार मिले,
इस वर्ष सभी सपनों को शुभ आकार मिले।

श्री विश्व देव शर्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

२६ जनवरी से

१९६५ की २६ जनवरी इसके लिए इतिहास में सदा याद की जायेगी कि उस दिन से हिन्दी भारत की राज-भाषा मान ली गई। अभी तक अंग्रेजी राजभाषा और हिन्दी उसकी सहायक थी। अब हिन्दी राजभाषा और अंग्रेजी उसकी सहायक हो गई। व्यवहार में कोई खास फर्क इससे न पड़ेगा, फिर भी इस कानूनी रूप का विशेष महत्व है और इसीलिए इस घोषणा का स्वागत ही हुआ है। यह घोषणा कोई नई बात नहीं है। १९५० में जो संविधान लागू हुआ था, उसमें कहा गया था कि १५ वर्ष तक अंग्रेजी मुख्य भाषा रहेगी और २६ जनवरी १९६५ से हिन्दी मुख्य भाषा बनेगी। इन १५ वर्षों में हिन्दी के लिए जो होना चाहिए था, न सरकार ने किया, न हम हिन्दी वालों ने और इसीलिए अंग्रेज को हरा कर भी हम अंग्रेजी से हार रहे हैं। काश, हम अब भी जागें!

दुर्गापुर के काँग्रेस-कुम्भ में

भारत के प्रथम प्रधान मंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने उन स्थानों को भारत का नया तीर्थ कहा था, जहाँ नये बांध और कारखाने बन रहे हैं। दुर्गापुर भी अपने इस्पात कारखाने के कारण भारत का नया तीर्थ ही है। इसी नये तीर्थ में भारतीयकांग्रेस का उनहत्तरवाँ अधिवेशन जनवरी १९६५ की ६ तारीख से १० तारीख तक हुआ।

१९४७ से १९६४ तक, यानी भुवनेश्वर कांग्रेस तक जवाहर लाल नेहरू देश और कांग्रेस के नेता थे। भुवनेश्वर के कांग्रेस-अधिवेशन में वे बीमार पड़े और २७ मई १९६४ को स्वर्ग सिधारे। उनका नेतृत्व एक लोकप्रिय व्यक्ति का नेतृत्व था—एक हम व्यक्तिवादी होकर भी लोक सम्मत। उनके गुणों का देश को महान लाभ पहुँचा और उनके दोषों से, कमजोरियों से देश की भयंकर हानि हुई। यह बात सुनकर व्यक्तिवादी भावुक लोग गुर्रायेंगे, पर सत्य कभी एक आँख से नहीं दीखता। उसका दर्शन पाने के लिए दोनों आँखें खुली रखनी पड़ती हैं।

आज हमारे देश में उद्योग-धन्धों का जो जाल फैला है, वह नेहरू के गुणों का उपहार है, जो चमत्कारी बांध बन रहे हैं, जो प्रजातंत्री पद्धति पनपी है, जो संसार में हमारी चर्चा है, यह सब नेहरू के गुणों का उपहार है। यह सच है, पर यह सच है, तो यह भी तो सच है कि आज जो कांग्रेस-संगठन चरमरा रहा है, कांग्रेस-शासन शिथिल है, प्रजातन्त्र की चूलें हिल रही हैं, चीन-पाकिस्तान हुँकार रहे हैं, देश भुखमरी की हालत में है, यह सब नेहरू के दोषों का ही हाहाकार है।

भुवनेश्वर कांग्रेस नेहरू के आत्मबोध का उत्सव था कि वे समझ गये थे यों ढुलमुल नीति से अब काम नहीं चलेगा और समृद्धि के साथ सामर्थ्य की भी साधना करनी पड़ेगी। वे बहुत बड़े इरादे और प्रोग्राम लेकर भुवनेश्वर गये थे। इन इरादों और प्रोग्रामों का सार था—अब कुछ करना है तेजी से! वे बीमारी के कारण अधिवेशन का नेतृत्व न कर सके, पर उनके मन का वातावरण काम करता रहा और भुवनेश्वर ने देश को नया जीवन देने की एक नई जोत जलाई, जिसमें जनता की समृद्धि की रोशनी थी, प्रशासन की चुस्ती की गरमी थी।

जवाहर लाल यह जोत जलाकर चले गए, बिना यह परीक्षण हुए कि इस जोत में कितना दम है और यह रोशनी फैलने वाली है या बुझने वाली है। वे भाग्य-पुरुष थे। भाग्य ने जीवन भर उनका साथ दिया था और अन्त में यह दुलार देकर उनकी विदाई को मधुर-महत्वपूर्ण बना दिया। वे सम्मान के साथ जिये थे, सम्मान के साथ चले गये। इस का अर्थ साफ साफ हम समझ लें। जवाहरलाल के दोषों-कमजोरियों से जो अव्यवस्था देश में पैदा हुई थी, उसे जवाहर लाल ने अनुभव किया, पर वे उसे दूर करने का काम अपने उन साथियों पर छोड़ गये, जो अपने नेता की ही कमजोरी के कारण बिखरे और बिगड़े हुए थे।

उन साथियों ने परिस्थिति को समझा और सर्वसम्मति से अपना नेता चुन संसार को चमत्कृत कर दिया। इन साथियों ने मोटी बाती में भरपूर तेल भर जवाहर जोत जलाई। वह सैंकड़ों मील का भ्रमण कर दुर्गापुर पहुँची और वे सब साथी भी इकट्ठे हुए। इस प्रकार कांग्रेस का दुर्गापुर-अधिवेशन उन साथियों के दिल की धड़कनों को जाँचने का यन्त्र हो गया। प्रश्न यह है और निश्चय ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह राष्ट्रीय महत्व का प्रश्न है कि इस जाँच के परिणाम क्या निकले ?

* दुर्गापुर अधिवेशन की कार्यवाही को बहुत गहराई से देखभाल कर पहला परिणाम यह निकलता है कि भुवनेश्वर कांग्रेस में नेहरू का नेतृत्व न मिलने पर भी नेहरू के साथियों में लक्ष्य के प्रति–देश को भुजाओं में लेकर तेजी से आगे बढ़ने की भावना के लिए–जो जोश और एकाग्रता थी, वह दुर्गापुर पहुँचते तक खंडित हो गई।

* दूसरा परिणाम यह कि कांग्रेस की स्थिति अब यह है कि गाड़ी लक्ष्य की ओर बढ़ने के लिए सजी—सन्नद्ध तैयार है, घोड़े उसमें जुते हुए हैं, मालिक गाड़ा में बैठा हुआ है, पर हाँकने वाले आपस में इस बात पर लड़ रहे हैं कि घोड़ों की लगाम किस के हाथ में हो। वे इतने उत्तेजित हैं कि यह भी भूल गये हैं कि इस छीना झपटा में लगाम के टूट जाने का ही खतरा है, जिससे फिर घोड़ों का नियंत्रण में रहना ही असम्भव होगा।

* तीसरा परिणाम यह है कि जनता से कार्यकर्ता दूर हैं, कार्यकर्ताओं से नेता दूर हैं, नेताओं से मिनिस्टर दूर हैं, मिनिस्टरों से अफसर दूर हैं और अफसरों से जनता दूर है।

* चौथा परिणाम यह कि जवाहर लाल के भी अधिकांश साथी मानसिक रूप में जवाहर लाल के साथ न थे और लालबहादुर जी के भी अधिकांश साथी मानसिक रूप में लालबहादुर जी के साथ नहीं हैं। जवाहर लाल के साथियों में सरदार पटेल की मृत्यु के बाद कोई ऐसा न था, जो जवाहर लाल को उलटकर उनकी जगह बैठने के सपने देखे, पर लाल बहादुर जी के साथियों में कई ऐसे हैं, जो उन्हें उलटकर उनकी जगह बैठने के लिए सपने ही नहीं देखते, प्रयत्न भी करते हैं।

* पाँचवाँ परिणाम यह कि लालबहादुर जी राष्ट्रीय नेतृत्व की दृष्टि से जवाहरलाल से श्रेष्ठ हैं, क्यों कि वे संसार को भले ही जवाहरलाल से कम जानते हों, देश को उन से अधिक समझते हैं और उनके पास देश की परेशानियों का, परिस्थितियों का सही और पूर्ण रूप चित्र है, जो जवाहर लाल के पास नहीं था।

* छठा परिणाम यह कि लालबहादुर जी परिस्थितियों पर भी और अपने साथियों पर भी नियंत्रण पाने के लिए चौकस, चौकन्ने और चतुर्मुख प्रयत्न कर रहे हैं। वे 'विश्वास के मनुष्य' (ए मैन ऑफ कन्विक्शन) हैं और उन्हें अपनी सफलता में अखंड विश्वास है !

* सातवां परिणाम यह कि उनके विश्वास की परीक्षा अगले दो वर्षों में होगी और उसके जो फल होंगे, वे ही कांग्रेस और देश के भविष्य का निर्णय करेंगे।

व्यवस्था, उपस्थिति, कार्य और प्रभाव, चारों दृष्टियों से कांग्रेस का यह अधिवेशन असफल रहा और देश के लिए ही नहीं, स्वयं कांग्रेस के नेताओं के लिए भी यह महत्वपूर्ण प्रश्न है कि इस असफल उत्सव पर, जो एक कुम्भ की तरह का मेला भरा था, चौदह लाख रुपये खर्च हुए, तो प्रश्न यह है कि क्या कांग्रेस के रूप विधान में कोई परिवर्तन होना चाहिए ? पहले कांग्रेस का अध्यक्ष प्रतिवर्ष नया चुना जाता था। अब दो वर्ष के लिए चुना जाने लगा है, पर अधिवेशन हर साल होता है, इसका क्या अर्थ ?

लोक सभा, राज्य सभा, विधान सभा, विधान परिषद्, स्थानीय बोर्ड सब का चुनाव पाँच वर्ष में होता है। मतलब यह कि समय की सार्वजनिक जीवन में अब पहली इकाई पाँच वर्ष है। कांग्रेस का अध्यक्ष भी पाँच वर्ष के लिए चुना जाए कि वह पूरी इकाई नेतृत्व करे और अधिवेशन भी पाँच वर्ष में एक बार ही हो। कांग्रेस महासमिति के अधिवेशन भिन्न-भिन्न समय और स्थान पर अब की तरह ही होते रहें, यह उचित है। यहाँ तक कांग्रेस नेता न बढ़ें, तो हर दूसरे वर्ष अधिवेशन करने की बात पर तो उन्हें विचार करना ही चाहिए और साथ ही अधिवेशन के रूप पर भी।

सब मिला कर कांग्रेस की स्थिति निराशाजनक है और आशा की किरण प्रधानमंत्री शास्त्री जी की स्पष्ट दृष्टि ही है। वे वाद को न देखकर समस्या को देखते हैं और पूरे रूप में देखते हैं। बस यदि अपनी स्थिति मजबूत कर वे होड़ाहोड़ी और जोड़-तोड़ पर हावी हो सके तो अगले दो वर्षों में समृद्धि और सामर्थ्य का वातावरण देश में बनाकर चौथी पंचवर्षीय योजना की गाड़ी को आगे बढ़ा सकेंगे। नहीं तो कांग्रेस का वही हाल होगा कि कमावे भतार, खावे यार—उसके निर्माण का लाभ कोई और उठायेगा ; वह कोई और, कोई भी क्यों न हो !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नम्बर एक राजनैतिक प्रश्न

कांग्रेस के सम्बन्ध में कोई लाख मतभेद रखे, उसके पक्ष में एक बात से सब सहमत होंगे कि वही एक मात्र राजनैतिक दल है, जो पिछले १७ वर्षों से पूरे देश पर शासन कर रहा है। इसका गहरा अर्थ यह है कि इन वर्षों में देश की राजनैतिक एकता का वही आधार रही है।

इस बात में भी मतभेद की गुंजायश अधिक नहीं है कि कांग्रेस देश को वैसा शासन नहीं दे पा रही है, जैसे शासन की आज देश को आशा है—शुद्ध, उद्बुद्ध शासन!

इस स्थिति में यदि देश के राजनैतिक दल या दूसरे बहुत से जन यह चाहें कि अब देश का शासन कांग्रेस के हाथ में न रहे, तो यह एक उचित बात है, साधारण बात है। इस चाह से कांग्रेस चिढ़ नहीं सकती; क्योंकि जिस सम्विधान के अनुसार दूसरों को ऐसी चाह करने का अधिकार प्राप्त है, उसका निर्माण स्वयं कांग्रेस ने किया था और कांग्रेस ने ही १९५२, १९५७ और १९६२ के चुनाव कराये थे। प्रजातन्त्र में शासक दल का बदल जाना एक शुभ कार्य माना जाता है। अभी अभी इंगलैण्ड में कंजर्वेटिव दल का शासन समाप्त हो गया है और लेबर पार्टी का आरम्भ हो गया है, पर इससे वहाँ के राष्ट्रीय जीवन में कोई उथल पुथल नहीं मची—एक शुभाशा का ही जन्म हुआ है।

भारत में भी १९६७ के चुनाव में यदि कांग्रेस हट जाए, तो यह कोई विप्लव नहीं है, पर प्रश्न यह है कि कांग्रेस को हटाने वाला कोई दल सामने हो और उसमें कांग्रेस से अच्छा शासन करने की ताकत हो। कांग्रेस अच्छा शासन न करने पर भी अगर जमी हुई है, तो इसका कारण कांग्रेस की ताकत नहीं, विरोधी दलों की कमजोरी है। इस तरह बिना नमक मिर्च लगाये, पूरी सच्चाई के साथ यह कहा जा सकता है कि आज देश में जो खराबियाँ हैं, उनके लिए जितनी जिम्मेदारी कांग्रेस की है, उतनी ही विरोधी दलों की। यह इसलिए कि प्रजातन्त्र में विरोधी दलों का काम शासक दल को चुस्त रखना और न चेतने पर हटाकर उसका स्थान लेना है। १७ वर्षों के लम्बे समय में तीन-तीन चुनावों का अनुभव पाकर भी देश में कोई ऐसा विरोधी दल नहीं बन सका, जो कांग्रेस को डरा सके, हरा सके, तो यह विरोधी दलों के नेताओं के लिए डूब मरने की बात है।

लोक सभा, राज्य सभा, विधान सभा में और विधान परिषदों में सब मिलाकर पौने चार हजार के लगभग सीटें हैं, पर कांग्रेस के सिवाय चुनाव में कोई भी दल पूरी सीटों पर पूरे उम्मीदवार खड़े नहीं करता। तो जब कोई राजनैतिक दल पूरे देश के पूरे शासन को सम्भालने का दावा ही नहीं करता, तो देश की जनता किसे शासन सौंप दे? चुनावों में पचास प्रतिशत वोटरों का उदास रहना, किसी को भी वोट न देना, इसी बात का तो प्रमाण है। कांग्रेस पसंद नहीं, दूसरा कोई सामने नहीं, फिर किसके लिए वोटर उठें? प्रजातन्त्र में ऐसी अधूरी पार्टियों को 'राजनैतिक उचक्का' कहा जाता है। क्या कांग्रेस और दूसरे राजनैतिक दलों के नेता इस पर ध्यान देंगे और अगले दो वर्षों के लिए कोई कार्यक्रम बनायेंगे?

कहा जाता है, पर—

कहा जाता है कि कांग्रेसी गुटबन्दियों में बटे हुए हैं और लड़ते रहते हैं, काम नहीं करते, पर क्या राजनैतिक दलों के नेता भी दलबन्दियों में नहीं फँसे हैं और सिवाय चुनाव की हाय हाय के जनता में कोई काम नहीं करते?

कहा जाता है कि कांग्रेसी नेता विरोधी गुटों को गालियाँ देने के सिवा कुछ नहीं करते, पर क्या दूसरे राजनैतिक दलों के नेता कांग्रेस को गाली देने के सिवा कुछ करते हैं?

कहा जाता है कि कांग्रेसी नष्ट होने को तैयार हैं, पर आपस में मिलने को नहीं, पर क्या राजनैतिक दलों के नेता भी चुनाव में अनन्त काल तक मिटने को तैयार हैं और मिलकर एक मजबूत राजनैतिक विरोधी दल बनाने को नहीं?

१९५७ के चुनावों का विश्लेषण करते हुए मैंने 'नया जीवन' में लिखा था कि कांग्रेस वर्तमान रूप में ज्यादा दिनों तक देश का शासन अपने हाथ में नहीं रख सकती और विरोधी दल अपने वर्तमान रूप में देश का शासन अपने हाथ में नहीं ले सकते। अब यह स्थिति और भी मजबूत हो गई है और दोनों का ध्यान इस पर जाना चाहिए।

मुख्य प्रश्न जन जागरण का है और चुनाव उसका सबसे बड़ा साधन है। तीन चुनाव हो चुके हैं। तीनों में सब राजनैतिक दलों ने अपने अपने चुनाव घोषणा पत्र प्रकाशित किये, पर उनके आधार पर चुनाव-प्रचार एक भी दल ने नहीं किया। इसका अर्थ हुआ कि देश के किसी भी दल ने यह प्रयत्न नहीं किया कि वह जनता को सम-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झाये कि शासक दल की अमुक नीति गलत है। उससे यह यह नुकसान हो रहा है। हमारी नीति यह है और उससे यह यह लाभ होंगे। स्वयं शासक दल ने भी कभी ऐसा प्रयत्न नहीं किया। इसका अर्थ हुआ कि सत्ता पर कब्जा रखने या पाने का हल्ला तो सब कर रहे हैं, पर व्यवस्थित प्रयत्न कोई नहीं कर रहा है।

इसके जो बुरे और घातक फल हो रहे हैं उन्हें समझने के लिए यह आवश्यक है कि हमारा ध्यान इस बात पर जाये कि तीन चुनाव हो जाने पर भी पूरे देश के पूरे मुसलमान पूरे राजनैतिक दलों के प्रति निर्लिप्त खड़े हैं। स्थिति ऐसी है कि एक कमजोर चट्टान की आड़ में पानी इकट्ठा हो रहा है और वह चट्टान हटे, तो आस-पास का सब कुछ बह जाये। बहुत साफ शब्दों में परिस्थिति जिन्ना के अनुकूल होती जा रही है, गाँधी के नहीं, पर हम खुर्राटे ले रहे हैं।

एक ताजा उदाहरण बात को समझने में मदद देगा। देश में खाद्य संकट है, जनता उससे परेशान है। इसके लिए सब विरोधी दल कांग्रेस सरकार को गाली देने के अतिरिक्त कोई रचनात्मक काम नहीं कर रहे हैं। कितने दुख की बात है कि एक भी दल ने कांग्रेस सरकार को यह चलेंज नहीं किया कि सरकार अन्न-वितरण का काम हमको दे, तो हम उसकी उत्तम व्यवस्था करेंगे। एक भी दल ने यह नहीं किया कि नगर नगर में वहाँ के व्यापारियों से मिलकर और गाँवों में किसानों से सम्पर्क साध कर स्थिति को सवाँरने का नहीं, तो सम्भालने का ही प्रयत्न करें। इस से और कुछ न होता, तो यह तो होता कि जनता समझती कि कोई हमारे साथ है, पर किसी ने भी इस अवसर का लाभ नहीं उठाया। कांग्रेसी कांग्रेस को तोड़ रहे हैं, सब विरोधी दल कांग्रेस को तोड़ रहे हैं, तो क्या यह तोड़ने का ही युग है, जोड़ने का नहीं? गाँधी जी ने विदेशी वस्त्रों की होली जलाई, तो खादी-चर्खे का साथ ही प्रचार भी किया। खाली तोड़-तोड़ ही तोड़ का नकारात्मक रूप-तो खोखलेपन को जन्म देता है, जिसमें किसी के लिए भी जीने का अवसर नहीं होता! क्या आज के नेताओं का यही लक्ष्य है?

यह घरेलू शीतयुद्ध!

भारत के दोनों तरफ चीन पाकिस्तान युद्ध की गर्जना कर रहे हैं और हमारे विरुद्ध संसार में शीतयुद्ध भी चला रहे हैं, जिससे हमारा प्रभाव संसार के देशों में कम हो जाए, पर इधर कुछ दिनों से हमारे देश में एक घरेलू शीतयुद्ध हो रहा है। उसकी तरफ देश के विचारकों का ध्यान अभी नहीं गया, पर जाना चाहिए। वह शीतयुद्ध है सरकार और व्यापारियों के बीच।

६ जुलाई १९६४ को भारत के खाद्य मन्त्री श्री सुब्रह्मण्यम् ने बंगलौर में अनाज के व्यापारियों की सभा में इस युद्ध की घोषणा की थी—

"अब या तो मैं नहीं; या फिर मुनाफाखोरी नहीं। तीन महीने के अन्दर अगर आप लोगों ने अपने व्यापारी रवैये को ठीक नहीं किया, तो सरकार वितरण के अन्य तरीके अपनायेगी। अनाज के व्यापारियों को अनुशासन और औचित्य का ध्यान रखकर मूल्य निर्धारित करना चाहिए। यदि आप लोगों ने स्थिति को नहीं सुधारा, तो सरकार भारत रक्षा कानून के आधीन दण्ड की व्यवस्था करेगी।"

ये तीन महीने बीत गये और यही नहीं कि हालत नहीं सुधरी, हालत और भी बिगड़ गई। इसका अर्थ है कि अनाज के व्यापारियों ने खाद्यमन्त्री के चैलेंज को मंजूर कर लिया और उसका जवाब दिया—इसके जवाब में सरकार एकदम मोर्चे पर आ गई और उसने आर्डीनेंस बना दिया। इसके अनुसार व्यापारियों को बिना लम्बी मुकदमेबाजी के जेल भेजने का अधिकार जिला अफसरों को प्राप्त हो गया। इससे अफसरों को वैसी ही ताकत प्राप्त हो गई, जैसी दूसरे महायुद्ध के समय डिफेंस आफ इंडिया रूल्स के द्वारा अंगरेज कलक्टरों को प्राप्त थी। इस आर्डीनेंस का महत्व यह था कि जिलों के अफसर हमेशा यह कहते थे कि कानून की लचक के कारण हम भ्रष्टाचार नहीं रोक सकते, क्योंकि अपराधी कचहरी जाकर अपने वकील के द्वारा इतने दाँव-पेंच चलता है कि मुकदमा उसके पक्ष में हो जाता है। आर्डीनेंस के अपराधी को इस सुविधा से वंचित कर दिया।

यह आर्डीनेंस पास करके सरकार निश्चिंत थी कि अब जादू के एक चमत्कार की तरह अनाज व्यापारी सीधे हो जायेंगे और बाजार अनाज से भर जायेंगे। प्रधानमन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने यह कूटनीतिक वक्तव्य देकर तो उस आर्डीनेंस की धार पर सान ही चढ़ा दी कि हमने प्रशासकों को पूरे अधिकार दे दिये हैं। अब अगर स्थिति नहीं सुधरती, तो यह प्रशासकों का निकम्मापन होगा, मंत्रियों का नहीं।

इसके बाद दिल्ली में अन्न के भंडारों पर छापे मारे जाने की कुछ खबरें मोटे टाइपों में छपीं, हजारों टन अन्न पकड़े जाने की बात पाठकों ने पढ़ी और बाद में खुलेआम सरकार ने स्वीकार कर लिया कि वह अन्न गैर कानूनी नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। अन्न व्यापारी संघ के महामन्त्री की फटकार पीकर खाद्यमन्त्री रह गये। मतलब यह कि सरकार का ऐटमबम व्यापारियों के बिल तोड़ने में असमर्थ रहा। इस कहानी के दो क्लाइमेक्स हैं। पहला यह कि मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री द्वारका प्रसाद मिश्र ने कहा कि पुलिस छोटे व्यापारियों से ही छेड़छाड़ करती रहती है और बड़े व्यापारी मगरमच्छों पर हाथ नहीं डालती। दूसरा यह कि नूरजहाँ जैसे भोलेपन से एक खाद्यमन्त्री ने कहा कि फसल बहुत अच्छी है और विदेशों से भी काफी अनाज आ रहा है। इस तरह हम व्यापारियों के दाव से ही व्यापारियों को परास्त करेंगे, क्योंकि वे ज्यादा दिन इस हालत में अनाज को चोर गोदामों में बंद नहीं रख सकते।

यह तो हुई अन्न के मोर्चे पर शीतयुद्ध की बात, दूसरा मोर्चा है छिपे धन का। सरकार मानती है कि मंहगाई का एक कारण छिपा धन भी है और वह धन दस अरब से एक खरब तक है। उसे निकालने के लिए वित्तमन्त्री श्री टी० टी० कृष्णमाचारी ने युद्ध घोषणा की। लोकसभा में कानून पास कराकर उन्होंने लोगों के गुप्त लॉकर खोलने का अधिकार ले लिया और पहला छापा फिल्म अभिनेताओं पर पड़ा। पत्रों में फिर मोटे हैडिंग लगे, लाखों काले रुपये मिलने की खबरें छपी और फिर गाड़ी चलने लगी ज्यों की त्यों। कहें, व्यापारियों ने श्री सुब्रह्मण्यम् को चारों खाने चित्त दे मारा, तो धनपतियों ने श्री टी० टी० को धर पटका।

डंका पीटा गया कि इतने करोड़ रुपये मिले हैं, पर कोई यह कैसे भूल सकता है कि श्री महावीर त्यागी जब वित्त विभाग में राज्य मन्त्री थे, तो उनकी अपील पर ही चवालीस करोड़ रुपये का छिपा धन बाहर निकल आया था। इस स्थिति में घमासान मचाकर यदि कुछ करोड़ रुपये मिले तो उन्हें सफलता नहीं कहा जा सकता। फिर इसी देश में दो साल कुछ महीने पहले चीनी आक्रमण होने पर इन्हीं व्यापारियों ने बिना सरकारी दबाव के मंहगाई का नियन्त्रण किया था, भावों को एकदम स्थिर रखा था, यह भी भूलने लायक बात नहीं है।

सौ बातों की एक बात यह है कि व्यापारियों, धनपतियों और भारत सरकार में खुले आम बिना हथियारों का युद्ध हो रहा है और सरकार गाँधी जी का विरोधियों में सद्भाव जगाने का मार्ग छोड़कर स्टालिन के दमन मार्ग पर आ गई है। अब तक का विश्लेषण यह है कि गाँधी से उसका सौ प्रतिशत सम्बन्ध-विच्छेद हो गया है, पर स्टालिन का रूप उससे लिया नहीं जा रहा है। विचारक उत्सुकता से इस युद्ध के परिणामों की प्रतीक्षा कर रहे हैं, क्योंकि इन परिणामों से ही यह पता चलेगा कि श्री टी० टी० कृष्णमाचारी और श्री सुब्रह्मण्यम् शास्त्री-मन्त्री मण्डल की प्रतिष्ठा का कफन सिद्ध होते हैं या समाजवाद का दृढ़ सड़ककूट इंजन!

नेहरू की नीतियाँ न छोड़ो!

देश के कम्यूनिस्ट और कांग्रेस के वामपंथी दुर्गापुर कांग्रेस के पहले तो कहते ही थे, पर उसके बाद तो चिल्ला रहे हैं—नेहरू की नीतियाँ न छोड़ो। उनका लांछन है कि नये प्रधानमन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री नेहरू की नीतियों को छोड़ रहे हैं और इस तरह देश को डुबो रहे हैं।

इस चिल्लाहट और लांछन को सुनकर मन में कुछ कड़वे प्रश्न उठते हैं—

* आज जो देश में चारों ओर भुखमरी है और बचाओ बचाओ की करुण पुकार मच रही है, क्या यह नेहरू नीतियों का फल नहीं है?
* समाजवाद के नारों के कोलाहल में जो लाखों नये लखपति पिछले १७ वर्षों में बने हैं, क्या यह नेहरू नीतियों का फल नहीं है?
* देश का मजबूत और देशभक्त प्रशासन ढाँचा, जो आज चरमरा रहा है कि आर्डीनेंस का सहारा ले कर भी कुछ नहीं कर पाता, क्या यह नेहरू नीतियों का फल नहीं है?
* कांग्रेस का संगठन जो आज फ्री स्टाइल कुश्ती का मंडप बना हुआ है, क्या यह नेहरू नीतियों का फल नहीं है?
* भारत जो आज दोनों तरफ दुश्मनों से घिरा है और सरदार पटेल के बाद जो एक भी समस्या नहीं सुलझी, ढेर बनकर रह गई, क्या यह नेहरू नीतियों का फल नहीं है?
* त्रिमूर्ति भवन की छाया में जो राजधानी के फुटपाथों पर हजारों आदमी ठण्डक में रातभर सिकुड़ते हैं, क्या यह नेहरू नीतियों का फल नहीं है?

हाँ, यह सब और इससे आगे भी बहुत कुछ नेहरू नीतियों का ही फल है। तो क्या ये बाद के बन्दी लोग चाहते हैं कि इन नीतियों को न बदला जाये? यदि उनका मतलब तटस्थता, धर्म निरपेक्षता और लोकतन्त्री समाजवाद से है, तो उन्हें कौन बदल रहा है?

—कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार-गोष्ठी

वामपंथी कम्यूनिस्टों की गिरफ्तारी

१९६४ का अन्त होते-होते भारत-सरकार ने एक झपाटे में कोई ६००वामपंथी कम्यूनिस्टों को गिरफ्तार किया। अक्सर ऐसे फैसलों की खबर फूट जाया करती है, पर सरदार पटेल के बाद गृह-मन्त्री श्री गुलजारी लाल नन्दा की व्यवस्था बधाई की हकदार है कि इतना बड़ा निर्णय अन्तिम क्षण तक गुप्त रहा और सभी उल्लेखनीय नेता पकड़े गये। इस पर कहा गया कि केरल का चुनाव जीतने के लिए भारत सरकार ने यह कार्रवाई की है।

गृहमन्त्री श्री नन्दा जी ने अपने कार्य का समर्थन करते हुए रेडियो पर एक लम्बे वक्तव्य में कहा—

"यह विश्वास करने के कारण हैं कि वामपक्षी भारतीय साम्यवादी दल पेकिंग की प्रेरणा से स्थापित किया गया है। इस दल का उद्देश्य चीन के नये हमले के वक्त देश में आंतरिक क्रांति पैदा करना है। वामपक्षी साम्यवादी दल एक तरह से सन्यासी आन्दोलन द्वारा भारत की लोकतन्त्री सरकार को खत्म करना चाहता है। १९६२ में यह आशा पूरी नहीं हुई थी।

चीन सरकार को उम्मीद थी कि उसके द्वारा हमले के अवसर पर भारतीय साम्यवादी दल आंतरिक तोड़ फोड़ की कार्यवाहियाँ आरम्भ कर देगा, किन्तु यह आशा पूरी नहीं हुई, क्योंकि उस वक्त वामपक्षी गुट इतना मजबूत, संगठित नहीं था कि प्रभावकारी कदम उठा सके।

इस अनुभव के आधार पर चीन और उसके समर्थक वामपक्ष गुट ने कमजोरी दूर करने की तैयारी शुरू की और जुलाई १९६४ में तेनाली सम्मेलन में वामपक्षी गुट भारतीय साम्यवादी दल से अलग हो गया और उसने एक नये दल की स्थापना की, जिसका उद्देश्य था भारत में अस्थिरता पैदा करने में चीन का हथियार बनना, चीन के इरादे को मदद देना, उसके विश्व क्रान्ति के उद्देश्य को बढ़ावा देना और एशिया में उसका प्रभुत्व जमाना। इन सब बातों से सरकार को विश्वास है कि वामपक्षी साम्यवादी दल का चीनियों से निकट सम्बन्ध है। वे चीनियों से सैद्धान्तिक प्रेरणा के साथ अन्य रूपों में मदद भी प्राप्त करते हैं।

सीमा के प्रश्न पर भी इस दल का प्रचार चीनी रुख के अनुरूप था। उसने भारत विरोधी और चीन-समर्थक अनेकों कागज व्यापक पैमाने पर वितरित किये। उसने लद्दाख में चीन के क्षेत्रीय दावे को उचित ठहराया तथा मैकमेहन रेखा की वैधता पर आपत्ति प्रकट की। यही नहीं, तेनाली सम्मेलन में माओत्सेतुंग का चित्र रखा गया और बाद में बम्बई में भी एक बैठक में ऐसा किया। तेनाली सम्मेलन में एक प्रस्ताव पारित किया जिसका उद्देश्य जनता में यह धारणा पैदा करना था कि चीन नहीं बल्कि भारत का रुख ही हठ पूर्ण है और वह सीमा विवाद का शन्ति पूर्ण हल नहीं चाहता।

वामपक्षी साम्यवादी, चीनी प्रधान मन्त्री चाऊ एन लाई के वक्तव्य के अनुसार चाहते हैं कि चीन कोलम्बो प्रस्ताव स्वीकार न करे तो भी भारत को उससे वार्ता शुरू करनी चाहिए।

वामपक्षी साम्यवादी दल का कलकत्ता अधिवेशन उस दल के राष्ट्र विरोधी संगठन के रूप में विकसित होने की प्रक्रिया में एक नया अध्याय था। सम्मेलन में दल को षड़यन्त्रकारी एवं तोड़ फोड़ की कार्यवाहियों के उपयुक्त बनाने के लिए उसके ढाँचे में रद्दोबदल किये गये। कलकत्ता सम्मेलन में स्वीकृत कार्य-क्रम तथा १९४८ में तेलंगाना में संघर्ष शुरू करने से पूर्व स्वीकृत कार्य-क्रम में बहुत साम्य था।

प्रमुख वामपक्षी साम्यवादी नेता इस तथ्य पर संतोष व्यक्त करते हैं कि तेलंगाना संघर्ष के समय जैसी बुरी परिस्थिति आज नहीं है; क्योंकि अब भारतीय सीमा के उस पार एक साम्यवादी ताकत है जिसके कारण देश के अन्दर क्रांतिकारी कार्यवाहियोंके लिए बहुत अच्छा अवसर है।

एक नया प्रश्न उठता है—

नन्दा जी के वक्तव्य का और कार्य का जनता पर अच्छा असर पड़ा और यह स्पष्ट है कि आम भारतीय ने चीन समर्थक कम्यूनिस्टों की गिरफ्तारी को पसंद किया, पर रूस समर्थक और चीन विरोधी कहे जाने वाले कम्यूनिस्टों के नेता श्री डांगे ने इन गिरफ्तारियों का कड़वा विरोध किया और इस काम को विरोधी दलों के व्यापक दमन की भूमिका बताया। इससे भी बढ़कर बात यह हुई कि प्रजासमाजवादी और समाजवादी नेताओं ने भी इन गिरफ्तारियों का विरोध किया है। इस विरोध से एक नया प्रश्न उठता है कि क्या इस विरोध का यह अर्थ है कि ये विरोध करने वाले भी उन गड़बड़ करने वालों के ही साथी-समर्थक हैं? और यदि यही अर्थ है, तो फिर ये जेलों से बाहर क्यों हैं?

नागालैंड में शांति प्रयत्न

स्वतन्त्र भारत के सामने जो बड़ी बड़ी समस्याएँ हैं, उनमें नागालैंड की समस्या भी काफी कड़वी है। यह एक सरहदी क्षेत्र है और इसमें आदिवासी नागाओं की बस्ती है। ये लोग पुराने कबीलों की तरह सदा आजाद रहे हैं और इन्हें भारतीय राष्ट्रीयता की माला में पिरोने के प्रयत्न जारी हैं। यह क्षेत्र देश के एक जिले जितना है, फिर भी उसे नागालैंड के रूप में एक राज्य बना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया गया है। वहाँ उसी क्षेत्र के लोगों का मंत्री मंडल है। काफी नागा उस मंत्री मंडल के साथ हैं, पर यह छिपाने की चीज नहीं है कि काफी नागा उसके विरुद्ध भी हैं। यह विरोध इतना खूनी है कि भारत सरकार को बरसों से वहां फौजी कार्रवाई करनी पड़ती है। एक मुख्यमंत्री की हत्या हो चुकी है और उनकी माँग है कि हम एक स्वतंत्र राज्य चाहते हैं, जैसे सिक्किम और भूतान हैं।

सर्वोदयी नेता श्री जय प्रकाश नारायण और पादरी माइकेल स्कॉट भारत सरकार और विद्रोही नागाओं के बीच शांति-सुलह का प्रयत्न कर रहे हैं। फलस्वरूप वहाँ फौजी कार्रवाई रोक दी गई है। शांति मिशन के प्रयत्नों को देश उत्सुकता से देख रहा है। 'पांचजन्य' के सुयोग्य सम्पादक श्री यादव राव ने नागालैंड के मुख्यमंत्री से एक मुलाकात में पूछा—

प्रश्न—क्या आप समझते हैं कि सैनिक कार्रवाई रोक देने के बाद विद्रोही नागाओं के विचारों और दृष्टिकोण में कोई अन्तर आया है ?

उत्तर—अन्तर तो अवश्य ही आया है। विद्रोही नागा नेता गत अनेक वर्षों से स्थानीय जनता की भावनाओं को भड़काकर भारत के विरुद्ध छापा मार युद्ध में संलग्न हैं। उस क्षेत्र की पूरी जनता उनके साथ है यह कहना गलत होगा, पर हमारी ओर से निरन्तर सैनिक कार्रवाई के कारण उनके सामने कोई विकल्प नहीं रह जाता सिवाय इसके कि वे हमें अपना शत्रु समझ कर उनका साथ दें। युद्ध-बन्दी ने वहाँ की जनता को यह अनुभव कराने का अवसर प्रदान किया है कि शान्तिकाल में मनुष्य कितना आश्वस्त और सुखी रह सकता है। मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूं कि आज विद्रोही नागा क्षेत्र की जनता भी युद्ध नहीं चाहती, वह शान्ति और सुव्यवस्थित नागरिक जीवन यापन करने के लिए लालायित है।

प्रश्न—पर आपके कथनानुसार यदि स्थानीय जनता शान्ति की इच्छुक है तो विद्रोहियों के विध्वंसक कार्यों में सहयोग क्यों देती है। यदि स्थानीय जनता का समर्थन प्राप्त न हो तो क्या विद्रोही नेता एक दिन भी संघर्ष चालू रख सकते हैं ?

उत्तर—मेरा अनुभव यह है कि जनता का समर्थन उन्हें प्राप्त नहीं है। उनके आतंक के कारण ही जनता को उनका साथ देना पड़ता है।

प्रश्न—पर जब यह समस्या मुट्ठी भर विद्रोही नेताओं तक ही सीमित है, तब उन नेताओं को शक्तिपूर्वक दबाने में हमें हिचक क्यों होनी चाहिए ?

उत्तर—हम लगातार दस वर्षों से सैनिक कार्रवाई से दबाने की चेष्टा करते रहे, पर आप देख रहे हैं कि उससे यह समस्या हल नहीं हुई, अतः हम शान्ति-उपायों से समस्या का समाधान ढूंढने की कोशिश कर रहे हैं।

प्रश्न—क्या इसका अर्थ यह नहीं निकलता कि भारत सरकार की सैनिक क्षमता इतनी अपर्याप्त है कि वह मुट्ठी भर लोगोंके विद्रोहको भी दबानेमें असमर्थ है ?

उत्तर—नहीं। बात यह है कि विद्रोही नागा छापामार युद्ध में प्रवीण और उस पहाड़ी और जंगली क्षेत्र के चप्पे चप्पे से परिचित हैं। हमारे सैनिकों को इस क्षेत्र में कठिनाई होती है। हम चाहें तो अत्यल्प समय में ही बमबारी करके सम्पूर्ण क्षेत्र को ही ध्वस्त कर सकते हैं, पर उस प्रदेश की जनता का उन्मूलन करना हमें कदापि इष्ट नहीं। वहाँ की जनता भी भारत की जनता है। हमें उसके जीवन की रक्षा का भी समुचित ध्यान रखना ही पड़ेगा।"

काश्मीर के दो प्रश्न

काश्मीर के सम्बन्ध में पहला प्रश्न यह उठता है कि शेख अब्दुला को जेल से क्यों छोड़ा गया और अगर किसी विश्वास से छोड़ा ही गया, तो छूटने के बाद अपने साम्प्रदायिक और देश दोही रवैये से जब शेख ने उस विश्वास के टुकड़े-टुकड़े कर दिये, तो उन्हें गिरफ्तार क्यों नहीं किया जाता ?

काश्मीर के सम्बन्ध में दूसरा प्रश्न यह उठता है कि काश्मीर राज्य की शासक संस्था नेशनल कान्फ्रेंस को भंग कर वहाँ आल इंडिया कांग्रेस कमेटी की जो स्थापना दुर्गापुर कांग्रेस के फैसलेके अनुसार की गई है, इसका असली उद्देश्य क्या है ?

'ब्लिटज' ने इन दोनों पर काश्मीर के प्रधान मंत्री श्री सादिक साहब से मुलाकात की। पहले प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा—

"हमने सिर्फ शेख अब्दुल्ला को नहीं बल्कि बहुत से दूसरे लोगों को रिहा किया था, बहुत से मुकदमे वापिस लिये थे और राजनीतिक विरोधियों को खुल कर मैदान में आने का मौक़ा दिया था। यह काश्मीर के राजनीतिक जीवन में एक नया मोड़ था। लोकतंत्र विरोधी दमन उसी जमाने से शुरू हो गया था जब शेख अब्दुल्ला प्रधानमंत्री थे। हम इसे खत्म कर देना चाहते थे।

शेख अब्दुल्ला की रिहाई का एक राजनीतिक पहलू भी है। हमें उनके विचारों के बारे में कोई भ्रम नहीं था। हम जानते थे वे क्या रवैया अपनायेंगे, लेकिन साथ ही हम जानते थे कि उन्हें उन आर्थिक और सामाजिक समस्याओं का भी हल बताना पड़ेगा, जो हमारे राज्य के सामने हैं।

उनके गुस्से और जोशीले प्रचार के बावजूद हमारे राज्य में शांति और व्यवस्था भारत के दूसरे राज्यों से बेहतर नहीं तो बदतर भी नहीं है। चूंकि शेख साहब जनता के सवालों का जवाब नहीं दे सके इसलिए उनकी साख बहुत कम हो गयी है।"

दूसरे प्रश्न पर सादिक साहब

"नेशनल कांफ्रेंस ने कांग्रेस में शामिल होने का फैसला क्यों किया और उसका क्या असर होगा ?

इस सवाल के दो पहलू हैं—एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का सम्बन्ध हमारे अपने राज्य से है और दूसरे का बाकी देश से। जहां तक हमारा सवाल है, हमारे देश में कांग्रेस की स्थापना से हमारे राज्य के लोग सिर्फ कश्मीर के बारे में सोचने के बजाय पूरे भारत और उसके भविष्य के बारे में सोचने लगेंगे।

मैं समझता हूं कि हमारे कांग्रेस में शामिल होने से सारे देश में दो मुख्य प्रतिक्रियाएँ होंगी। पहले तो कांग्रेस के अन्दर उन शक्तियों के साथ हमारा सम्बन्ध स्थापित हो जायेगा जो समाजवाद के पक्ष में हैं। आप जानते हैं हम हमेशा से पक्के समाजवादी रहे हैं और आगे भी रहना चाहते हैं। मैं समझता हूं इससे समाजवादी शक्तियों की ताकत बढ़ेगी।

दूसरे, इससे बाकी देश में मुसलमानों का सोचने का ढंग बदलेगा। वे खुलकर अपनी भावनाएँ व्यक्त कर सकेंगे। देश के बारे में फैसले करने में उनकी भूमिका बढ़ेगी और उनकी मौजूदा निराशा, अलगाव और अपने आप पर तरस खाने की भावना दूर हो जायेगी। मतलब यह कि इससे हमारे राष्ट्रीय आंदोलन और हमारे गणतंत्र की धर्म निरपेक्ष बुनियाद और मजबूत होगी।"

इस सम्बन्ध में 'नवभारत टाइम्स' के विशेष प्रतिनिधि श्री रघुवीर सहाय ने नेशनल कांफ्रेंस के सेक्रेटरी श्री मीर कासिम से बातचीत करके जो सार निकाला है, वह इस प्रश्न पर महत्वपूर्ण और सर्वांगपूर्ण प्रकाश डालता है—

नेशनल कांफ्रेंस के वर्तमान महा सचिव सैयद मीरकासिम "जो बातचीत में संयम और काम में सख्ती के समर्थक लगते हैं, खुद अपनी जगह आश्वस्त हैं कि नेशनल कांफ्रेंस का कांग्रेस में परिवर्तन सहजभाव से हो जायगा।

भारत से अभिन्नता ही जिस दल की नीति शेख अब्दुल्ला के समय में थी वह अब भारत से वैमनस्य का झण्डा उठाकर कैसे चल सकेगा? यह प्रश्न उन्होंने भोलेपन से किया और खुद ही जवाब दिया 'मेरी राय में शेख साहब नयी नेशनल कांफ्रेंस नहीं बनायेंगे, क्योंकि वह जनमत संग्रह मोर्चे को आशीर्वाद दे चुके हैं और नेशनल कांफ्रेंस तो जनमतसंग्रह को गैरजरूरी करार देती रही है।'

यह मानकर चलना अच्छा मालूम होता है कि शेख अब्दुल्ला नेशनल कांफ्रेंस से परहेज करेंगे मगर यह आशंका उस पद्धति में निहित है जिससे नेशनल कांफ्रेंस का विसर्जन किया जाएगा। कांग्रेस में उसका विलय नहीं होगा। २६ जनवरी को प्रत्येक ने० कां० सदस्य अपनी सदस्यता से मुक्त हो जायगा—उसे फिर कांग्रेस का सदस्य बनने की छूट होगी। मीर कासिम और उनके सहयोगी प्रयत्न करेंगे कि अधिक से अधिक सदस्य कांग्रेस में आ जायें, पर शुरू-शुरू में चार-पाँच हजार से ज्यादा किसी हालत में नहीं आ सकेंगे—इससे ज्यादा सदस्यता फार्म बांटे भी नहीं जा रहे हैं। कुल सात लाख की शक्ति वाली कांफ्रेंस का हर एक सदस्य कांग्रेस में आयगा, यह भी कोई नहीं मानता। सातों लाख सदस्य सक्रिय भी नहीं है।

जनमत संग्रह मोर्चा इसमें से अवश्य ले जायगा और कुछ को—अपने हाल पर—कांफ्रेंस के नेता कांग्रेस बनाते वक्त खुद ही छोड़ देंगे। वे नहीं चाहेंगे कि इस बार पार्टी में अमित्र तत्वों से सह-अस्तित्व करते-करते उनकी काफी शक्ति व्यर्थ हो जाये। उनकी नजर अगले पार्टी चुनाव पर अभी से है जो जून में सदस्य बनाने का सिलसिला खत्म होने पर उन्हें करना पड़ेगा। उन्होंने फिलहाल सिर्फ एक लाख २० हजार फार्म छपवाये हैं।

इसी तरह की दृढ़ता मन में रखते हुए जिस समय श्री कामराज ने सैयद मीरकासिम को जम्मू-काश्मीर में कांग्रेस बनाने का अधिकार सौंपा तो यह बात तय करली कि नेशनल कांफ्रेंस को वैसे का वैसा उठाकर कांग्रेस में नहीं रख दिया जायेगा। उसकी समितियों के पदाधिकारियों को वही पद कांग्रेस में मिलें यह जरूरी नहीं है, बल्कि नयी पार्टी के संयोजक ने तय कर लिया है कि वह संख्या में अधिक सदस्यों के लिए उतने उत्सुक नहीं रहेंगे, जितने पक्के, ठोस सदस्यों के लिए।

एक अच्छाई जो नेशनल कांफ्रेंस के खत्म होकर कांग्रेस बनने में छिपी है, जम्मू-कश्मीर के मामले के विशेषज्ञों के अनुसार यह है कि पाकिस्तान यह महसूस करने लगेगा कि अब कश्मीर में कभी भी शून्य की स्थिति नहीं रह सकेगी। उसको आन्तरिक षड़यन्त्र के अवसर नहीं मिलेंगे। कांग्रेस सरकार पर अखिल भारतीय कांग्रेस पार्टी का अनुशासस रहने से उन कठिन स्थितियों का उपाय भी निकल आया करेगा जिनमें जम्मू-कश्मीर का नेतृत्व अन्यथा अकेला पड़ जाता, मगर सबसे बड़ी बात यह होगी कि जम्मू और कश्मीर की राजनीतिक धुन्ध छंट कर लोगों के चेहरे साफ साफ दिखायी देने लगेंगे। अभी ही ने० कां० के कुछ सदस्य टूटकर कम्यूनिस्ट पार्टी में चले गये हैं जो जम्मू-कश्मीर में काम कर रही है—'दक्षिण, वाम और मध्यस्त तीनों दिशाओं में।' नयी कांग्रेस को मुमकिन है अगले चुनाव में कुछ सीटें प्रतिपक्ष को ज्यादा गिन देनी पड़ें—अभी तो कुछ का अनुमान है कि—जनसंघ, कम्यूनिस्ट और जनमत संग्रह मोर्चा इन सब को कुल मिलाकर कश्मीर वि० स० में १३-१४ से अधिक सीटें नहीं मिल सकेंगी। जो हो इस नये परिवर्तन से जम्मू-कश्मीर को जो आशाएं हैं उनका सारांश पार्टी संयोजक के इन शब्दों से ज्यादा अच्छी तरह व्यक्त नहीं किया जा सकता कि अब कोई सादिक को पार्टी से निकालने की मांग करना चाहे तो करे पर अपने उद्देश्य की सिद्धि के लिए जम्मू और कश्मीर में तमाशा नहीं खड़ा कर सकेगा।"

—अखिलेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम अपनी रीति नीति में, गति यति में क्या परिवर्तन करें ? इस प्रश्न का सही समाधान करने के लिए आवश्यकता नम्बर एक यह है कि हम यह जानें कि आज हम जिस गतिरोध का शिकार हैं वह क्यों पैदा हुआ ? मुझे नहीं मालूम कि देश के कर्णधार, जिनके हाथों में देश की बागडोर है इस प्रश्न को किस रूप में देखते हैं और इसका क्या हल बताते हैं, पर एक राष्ट्रीय पत्रकार के १५ वर्षों के अहर्निश जागरूक अध्ययन और चिन्तन के आधार पर अपने महान राष्ट्र के वर्तमान जीवन का निदान प्रस्तुत है--

समग्र देश की, समग्र समस्याओं का समग्र समाधान !

—कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

दिल्ली से लौट कर सहारनपुर आ रहा था कि गाड़ी एक स्टेशन पर ठहरी। ठहरना आवश्यक है, पर गाड़ी का धर्म तो चलना है। इसलिए ज़रा ठहरो कि चली, पर यह क्या कि आगे न बढ़, पीछे लौटी। यह हुई बेठीक बात और मनुष्य का स्वभाव है कि बेठीक पर चौंके। मैंने भी चौंक कर सहयात्री से पूछा--"क्यों जी, क्या बात है ?"

अनजान में जो बात अद्भुत या असाधारण है, वही जानकारी में साधारण हो जाती है। गाड़ी के पीछे लौटने का कारण उन्हें ज्ञात था, इसलिए साधारण भाव से बोले—"यहाँ बम्बई ऐक्सप्रेस के साथ गाड़ी का क्रास है, इसलिए गाड़ी पीछे हटकर दूसरी लाइन पर आ जायेगी, जिससे दूसरी गाड़ी प्लेट फार्म पर आ जाए।"

ठीक बात है, यह गाड़ी यहीं खड़ी रहे, तो आने वाली गाड़ी से टकरा जाए, हड्डी-पसली बराबर हो जाए। मन में प्रश्न उठा—क्या टक्कर के भय से आने वाली गाड़ी के लिए अपना स्थान छोड़ना कायरता नहीं है ?

भय से स्थान छोड़ना निश्चय ही कायरता है, पर मैं स्वयं जीवन में बिना किसी भय के स्वेच्छापूर्वक, पूर्ण प्रसन्नता के साथ दूसरों के लिए स्थान छोड़ चुका हूँ, इसलिए इस प्रश्न पर मैं हाँ न कह सका।

इसी उलझन में एक नया प्रश्न उभर आया—जिस स्थान को यह गाड़ी छोड़ रही है, क्या वह उसका अपना स्थान है ? अपना स्थान का क्या अर्थ ? उप प्रश्न आया, तो उत्तर मिला —"अपना स्थान वह, जिस पर अपना क़ब्ज़ा।" यह उत्तर मन में बैठ ही रहा था कि नये प्रश्न के कुल्हाड़े ने उसे काटा —क़ब्ज़ा तो किसी स्थान पर डाकू भी कर लेते हैं, तो क्या उसे उनका अपना स्थान मान लिया जाए ? हमारे ही देश के काश्मीर, लद्दाख और नेफा के कुछ हिस्से पर दुष्टात्मा पड़ौसियों का क़ब्ज़ा है, पर हम उन स्थानों को उनका मान लें, तो राष्ट्रीय गैरत की दृष्टि से कितने हीन हो जाएँ।

यों उलझन ही उलझन, पर यह आई सुलझन—कब्जे को उचित मानने के सिद्धान्त से तो संसार के अनेक देशों की गुलामी एक स्थायी चीज़ हो जाएगी, इसलिए अपना स्थान का यह लक्षण मानना ठीक होगा कि जिस स्थान पर, जिसकी, जितने समय, समाज द्वारा स्वीकृत उपयोगिता है, वह स्थान उतने समय उसका अपना है।

हमारी गाड़ी जो स्थान छोड़ रही है, वह उसका उपयोग कर चुकी और जो गाड़ी आ रही है, उसे उसका उचित उपयोग करना है, इसलिए हमारी गाड़ी द्वारा उसके लिए यह स्थान छोड़ना उचित है, कायरता नहीं।

मैं सोचता रहा और गाड़ी के पहिये अपना काम करते रहे। अब हमारी गाड़ी दूसरी लाइन पर आ गई थी और प्लेट-फार्म के सामने ही खड़ी थी। थोड़ी देर में खाली लाइन पर दूसरी गाड़ी आई और चली गई। तब हमारी गाड़ी भी चली और थोड़ी दूर पर कांटा बदलते ही फिर उसी लाइन पर, यानी सही लाइन पर आ गई।

मन में आया—यह क्या बात हुई ? चिन्तन ने जिज्ञासा को समाधान दिया—मार्ग में गतिरोध आने पर, वह दिशा भ्रम के कारण आये या परिस्थितियों के गलत अनुमान के कारण, लक्ष्य पर दृष्टि रखते हुए अपनी रीतिनीति में, गति यति में परिवर्तन कर—इधर उधर होकर—फिर अपनी सही राह पकड़ लेना नीतिमत्ता है और अड़ियल बन कर यह स्थिति पैदा करना कि वीरता की डींगें तो लगती रहें, पर प्रगति का रथ आगे बढ़ न पाये, बुद्धिमता नहीं, मूर्खता और जिद्दीपन ही है।

गाड़ी चली जा रही थी। दोनों ओर खेतों में गेहुँओं की हरियाली छा रही थी और बीच बीच में सरसों के फूल गमक रहे थे। तभी मेरे मन में भी विचार का एक फूल खिल उठा—१५ अगस्त १९४७ को भारत स्वतंत्र हुआ और २६ जनवरी १९५० को उसने

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतीतियों और नीतियों का गहरा विश्लेषण कर अपनी प्रगति की रेल को लाइन पर चढ़ाया। अब जब हम उस लाइन पर पूरे १५ वर्ष चलने के बाद नये कार्य क्रम के साथ, नये नेतृत्व में आगे बढ़ रहे हैं, तो क्या यह उचित न होगा कि हम इस प्रश्न पर विचार करें कि क्या हमें भी रेलगाड़ी की तरह अपनी रीति नीति में, गति यति में परिवर्तन कर सही राह पकड़ने की ज़रूरत है?

गाँधी जी ने जिस राष्ट्रीय चरित्र का विकास किया था, वह पूरी तरह समाप्त होगया है, सादगी का स्थान विलास ने ले लिया है, समाजवादी झंडे के नीचे व्यक्तिवाद पनप उठा है, युग ने धर्म की मर्यादा को तोड़ डाला है और उसके स्थान में राष्ट्रीयता की स्थापना न होने के कारण धर्म की उस अमर्यादा ने युग को तोड़ कर रख दिया है। अकुशलता, शिथिलता और भ्रष्टता का सर्वभक्षी राक्षस प्रशासन, संगठन और जन जीवन के पूरे ढांचे को खोखला कर रहा है। आवाज़ से मालूम होता है कि पूरी तेज़ी से तूफान मेल सामने से आ रहा है, जो टकरा कर हमारी प्रगति की रेल को विध्वस्त कर सकता है। इस स्थिति में कौन देश भक्त इस प्रश्न पर ना करेगा कि क्या हमें भी उस रेलगाड़ी की तरह अपनी रीति-नीति में गति विधि में परिवर्तन कर फिर से सही राह पकड़ने की जरूरत है?

उस ज़रूरत का स्वरूप क्या है? इस प्रश्न का अर्थ है कि हम अपनी रीति-नीति में गति-यति, में क्या परिवर्तन करें? इस प्रश्न का सही समाधान पाने के लिए आवश्यकता नम्बर एक यह हैं कि हम जानें कि आज हम जिस गति-

मुझे नहीं मालूम कि देश के कर्णधार, जिनके हाथों में देश के नवनिर्माण की बागडोर है, इस प्रश्न को किस रूप में देखते है और इसका क्या हल बताते हैं, पर एक राष्ट्रीय पत्रकार के रूप में अपने १५ वर्षों के अहर्निश जागरूक अध्ययन और चिन्तन के आधार पर अपने राष्ट्र के वर्तमान जीवन का निदान प्रस्तुत है।

गाँधी जी के बाद देश के नेताओं ने भारत की मूल प्रकृति को आँक कर उसके अनुसार पूरे देश की पूरी समस्याओं को पूरी तरह समझ कर उनका पूरा समाधान नहीं खोजा, नहीं लागू किया। नतीजा यह हुआ कि भारत की प्रगति के रथ में जो घोड़े जुते, उन सब के मन में एक दिशा का बोध था, न लक्ष्य का एक स्वरूप था, न वाद की एक प्रक्रिया और प्रतिक्रिया थी। फल यह हुआ कि दौड़े सब, काम सब ने किया, उसके फल भी निकले, पर देश की समग्रता पुष्ट नहीं हुई और १५ साल बाद हम जहाँ खड़े हैं, वहाँ स्थिति यह है कि भारत की मूल प्रकृति को समझकर उसके अनुसार पूरे देश की, पूरी समस्याओं को पूरी तरह नाप जोख कर, उनका एक पूरा समाधान न खोजा गया, लागू किया गया, तो फिर देश के पास अपनी समस्याओं के समाधान का एक ही रास्ता रह जायेगा कि वह अपनी मूल प्रकृति में आमूलचूल परिवर्तन करे। साफ साफ यों कि लोकतंत्र को विदा कर अधिनायकता को अभिवादन दे।

आवश्यकता है कि इस आमूल-चूल परिवर्तन को हम जानें-समझें ही नहीं, अनुभव भी करें। सौभाग्य से जनरल अयूब साहब ने इस अनुभव को सुगम कर दिया है। अकुशल और अदूरदर्शी राजनीतिज्ञों का वर्षों तक खिलौना बनने के बाद पाकिस्तान जनरल साहब की अधिनायकता के शिकंजे में आया था, पर कुछ ही वर्षों में उसकी आत्मा त्राहि-त्राहि कर उठी। पाकिस्तान की जनता में अपने खोये लोकतंत्र को पाने के लिए कितनी प्यास है, राष्ट्रपति का ताज़ा चुनाव इसी का तो प्रदर्शन था! कौन जीता कौन हारा यह नम्बर दो की बात है और नम्बर एक बात है यह कि गोलियों, लाठियों और लम्बे नादिरशाही त्रासों के खतरे उठाकर भी लाखों आदमी कुमारी फातिमा के चुनाव-जलसों में शामिल हुए और हजारों ने उन्हें वोट दिया। देश के कर्णधारों का ही नहीं, विचारको, विभिन्न राजनैतिक दलों और नागरिकों का भी इस पर ध्यान जाना चाहिए। अब न चेते, तो हमें भी बहुत कीमत देनी पड़ेगी।

इस चिन्ताभरी चेतना का आधार है राष्ट्र का मनोवैज्ञानिक अध्ययन। १५ अगस्त १९४७ को स्वर्ग आकाश से उतर कर भारत के प्रधान मंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू के बाहर आ खड़ा हुआ था। यह इस रूप में कि अंग्रेज-शासकों के नीचे काम करने वाले भारतीय अफसरों में एक आश्चर्य जनक मनोवैज्ञानिक परिवर्तन हुआ था और वे राष्ट्रमय हो उठे थे। यह स्वतन्त्रता की महान उपलब्धि थी—यही वह स्वर्ग था। हमारे मंत्रियों ने उनके सामने अपने निजी जीवन की इतनी क्षुद्रताओं का प्रदर्शन किया कि १९५० के बाद उनकी राष्ट्र-ममता नष्ट हो गई और उन्होंने जीवन का यह सूत्र पकड़ लिया कि उन्नति का रास्ता देश की सेवा करना नहीं, जैसे तैसे मंत्री जी को प्रसन्न रखना है। इस तरह उस स्वर्ग ने ठोकर खाई और वह प्रधानमंत्री के द्वार से हट गया।

अक्टूबर ६२ में चीन का आक्रमण

स्वर्गीय श्री जवाहर लाल नेहरू के द्वार दो बार ठुकराया गया स्वर्ग फिर प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री के द्वार आया है! इस बार ठोकर लगी, तो फिर न आऊँगा; यह उसका निश्चय है!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने पर यह स्वर्ग फिर नेहरू जी के द्वार आ खड़ा हुआ। अनेकता में एकता बिना प्रयास स्थापित हो गई, गरीब से गरीब आदमी ने अपनी शक्ति भर धन दिया, माताओं ने हंसकर पुत्रों की बलियां दीं. व्यापारियों ने बिना सरकार के कहे स्वेच्छा से मंहगाई का नियंत्रण किया और इस तरह एक अद्भुत रूप में हमारा राष्ट्र तन कर खड़ा हो गया। इस एकता का सदुपयोग नहीं हुआ, उस महान चेतना को नेताओं ने दिशा नहीं दी, काम में नहीं लगाया, उस चेतना के अनुरूप अपने को ऊँचा नहीं उठाया और विविध रूपों में उस चेतना का दुरुपयोग किया। इस तरह उस स्वर्ग ने ठोकर खाई और वह फिर प्रधानमंत्री के द्वार से हट गया।

नेहरू जी की मृत्यु होते ही वह स्वर्ग तीसरी बार फिर आया और काँग्रेस कमेटी के द्वार पर खड़ा हो गया। इस बार उसकी उपेक्षा नहीं, उसका स्वागत हुआ और श्रीमान कामराज ने दृढ़ता, श्री लाल बहादुर शास्त्री ने निस्पृहता और श्री मुरार जी देसाई ने दूरदर्शिता और दूसरे लोगों ने शालीनता के पुष्पों से उसका स्वागत किया—प्रधान मंत्री का निर्वाचन बिना चुनाव-संघर्ष के सर्व सम्मति से हो गया।

स्वर्ग अब काँग्रेस कमेटी का द्वार छोड़ प्रधान मंत्री के द्वार आ खड़ा हुआ है और रीति-नीति में आमूल-चूल परिवर्तन की प्रतीक्षा कर रहा है। उसकी घोषणा है कि इस बार मुझे ठोकर लगी, तो मैं फिर कभी न आऊंगा। इसी अर्थ में मैंने निवेदन किया कि हम अब न चेते, तो हमें भी बहुत कीमत देनी पड़ेगी और हमारे चेतने की कसौटी है यह कि हम पीछे हटकर सही सड़क पर आते हैं या नहीं ?

- अभी तक हमारा नेतृत्व खंडित दृष्टि का शिकार रहा है। समग्र देश की, समग्र समस्याओं का समग्र समाधान सामने आना चाहिए।
- शासक-संगठन और शासक-दल के अधिकारों और कर्त्तव्यों की सीमा निश्चित होनी चाहिए।
- कृषि और उद्योग में समन्वय होना चाहिए, यानी देहात और शहर में।
- हमारे प्रजातंत्र में फैलाव बहुत है, गहराई कम। फैलाव को हिम्मत के साथ कम करना चाहिए और गहराई को अधिक।
- दुष्टताओं का दमन निर्दयता से होना चाहिए कि अच्छाइयाँ पनप सकें।
- राष्ट्रीय चरित्र विकास की उपेक्षा बन्द होनी चाहिए।
- जैसे भी हो प्रशासन में चुस्ती आनी चाहिए और राष्ट्रीय जीवन में नव चैतन्य।

आइए, शीर्षकों की रंगीनी में न उलझकर उनकी बारीकियों में उतरें और खुले पत्तों की तरह समस्या को दिल-दिमाग में उतारें कि एक और एक दो दिखाई दें।

उस दिन पादरी जलालुद्दीन साहब ने बातों बातों में एक बात सुनाई, तो आनन्द आया और मन में विचारों के फूल भी खिले। बात यह थी—एक उद्योगपति ने एक कारखाना लगाया। लाखों रुपये की मशीनरी मंगाई गई। इंजीनियरों ने निर्देश दिये, कारीगरों ने करामात दिखाई, मजदूरों ने मेहनत की, मशीनें फिट हो गईं। खुशी खुशी बिजली खोली गई, सूं-सां हुई, पर मशीन नहीं चली।

बॉयलर का इंजीनियर बॉयलर को लिपटा, बिजली का बिजली को और इसी तरह और, पर मशीन टस से मस न हुई। तब उद्योगपति ने एक विशेषज्ञ को बुलाकर कहा-"एक एक पुर्जा ठीक है, पर मशीनरी काम नहीं करती।" विशेषज्ञ ने कहा—"आप चिंता न करें, मशीनरी काम करने लगेगी, आप संतुष्ट होंगे, मेरी फीस पाँच हजार रुपये है।" उद्योगपति ने स्वीकार कर लिया।

विशेषज्ञ ने इधर उधर घूमकर देखा और अपने थैले से निकाल कर हथौड़ा एक पुर्जे पर जोर से मारा। घड़घड़ा कर मशीन चल पड़ी। विशेषज्ञ ने कहा—"आपका काम हो गया। अब मुझे चैक दीजिए, तो मैं जाऊं।"

उद्योगपति को लोभ आया। उसने कहा—"एक हथौड़ा मारने के पाँच हजार रुपये ?"

विशेषज्ञ ने कहा—"श्रीमान, कीमत हथौड़ा मारने की नहीं, इस बात की है कि हथौड़ा कहाँ मारें; क्योंकि सही जगह सही ढंग से हथौड़ा मारने के लिए पूरा कारखाना एक साथ खोपड़ी में रखना पड़ता है।"

पाकिस्तान के चुनाव में कौन जीता कौन हारा यह नम्बर दो की बात है। नम्बर एक की बात है यह कि गोलियों, लाठियों और लम्बे नादिर शाही त्रासों के खतरे उठाकर भी लाखों आदमी कुमारी जिन्ना के चुनाव जलसों में शामिल हुए और हजारों ने उन्हें वोट दिया। देश के कर्णधारों का ही नहीं विचारकों, विभिन्न राजनैतिक दलों और नागरिकों का भी इस पर ध्यान जाना चाहिए। हम अब न चेते तो हमें भी बहुत कीमत देनी पड़ेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्योगपति विशेषज्ञ की बात से खुश हुआ और उसने उसे चैक देकर आदर के साथ विदा किया। सुनकर आनन्द आया और मन में विचारों के फूल खिले कि जिस तरह उस उद्योगपति के इंजीनियर मशीन के अलग अलग भागों पर ध्यान दे रहे थे, क्या उसी तरह हमारे देश के नेता भी राष्ट्र की प्रगति-मशीन के अलग अलग भागों पर ध्यान नहीं दे रहे हैं। कहें, उनमें समग्र राष्ट्र की, समग्र समस्याओं का, समग्र समाधान नहीं है, इसीलिए वे कभी बायलर को देखते हैं, कभी पावर हाउस को, पर सही जगह पर हथौड़ा नहीं मार पा रहे हैं।

इसका एक उदाहरण थे स्वर्गीय श्री रफी अहमद किदवई। १९३७ में जब पहली बार जन-निर्वाचित मंत्री मंडल बने, तो रफी साहब उत्तर प्रदेश में पुलिस-मिनिस्टर बनाये गये। पावेल नाम का अंग्रेज तब पुलिस का इन्सपेक्टर जनरल था। बड़ा घमंडी और बदमाश। उसने दावा किया था कि वह दो महीने में कांग्रेसी मिनिस्टरों को पागल बनाकर भगा देगा। उसने मुस्लिम लीगी दिमाग के दीवानों (हेड कांस्टेबलों) को अपनी छापामारी में ट्रेंड किया और कांग्रेस मिनिस्टरी बनने से पहले ही उन्हें थानों का इंचार्ज मुहर्रिर बना दिया। उनका काम था गुंडों को बढ़ावा देना, उनके खिलाफ रिपोर्ट न लिखना, उन्हें गिरफ्तारी से बचाना और व्यापक उपद्रवों की तैयारी करना। ये दीवान इन्सपैक्टर जनरल की उंगलियां थे, जो सब थानों तक पहुंची हुई थी।

रफी साहब ने कुरसी पर बैठते ही इस षड्यंत्र को भांप लिया। उन्होंने पावेल को चाय पर बुलाया, अपने हाथ से उसकी चाय बनाई, भोली भोली बातें कीं, अपने सीधेपन के कई पोज़ दिये और चलते समय उससे कहा—"मिस्टर पावेल, ऐसे २०० दीवानों की लिस्ट एक हफ्ते में मुझे दीजिये, जो हिन्दी जानते हों। उन्हें थानों का इंचार्ज मुहर्रिर बनाना है। मेरे पास शिकायतें आई हैं कि आम जनता खासकर देहातों में, हिन्दी जानती है और उसे परेशानी है।" २०० दीवानों की जो लिस्ट बनी उसमें पावेल की स्कीम फेल हो गई, वे छुट्टी लेकर इंग्लैंड भाग गये और पूरे विभाग पर रफी साहब का क़ब्जा हो गया। यह है सही जगह पर हथौड़ा मारना।

इसके विरुद्ध एक दूसरी तस्वीर प्रस्तुत है। भ्रष्टाचार लोकतंत्र का सबसे बड़ा दुश्मन है। इसलिए भ्रष्टाचार की मशीन को काबू में करने के लिए सौ प्रयत्न हो रहे हैं। इन प्रयत्नों में ईमानदारी है, लगन है, शुभेच्छा है, पर भ्रष्टाचार की मशीन काबू में ही नहीं आ रही है। क्यों? क्योंकि सही जगह पर हथौड़ा नहीं पड़ा है। आइए, इसे समझें।

- मान लीजिए एक राज्य में बीस ज़िले हैं उनमें बीस ही कलक्टर हैं। इनमें १८ भ्रष्टाचारी हैं और दो ईमानदार। बीस वर्ष में भ्रष्टाचारी धनवान हो जाते हैं और ईमानदार गरीब ही रहते हैं। उन ईमानदारों की लड़कियाँ जवान हैं। वे उन १८ बेईमान कलक्टरों के पास जाते हैं कि अपने लड़कों से हमारी लड़कियों का विवाह करलें, शर्त यही है कि दहेज हमारे पास नहीं है। क्या कोई कलक्टर इस रिश्ते को मंजूर करेगा? स्पष्ट है कि ना! यह क्या बात हुई?
- दो पड़ौसी हैं—एक ईमानदार गरीब, दूसरा भ्रष्टाचारी पैसे वाला। दोनों के बच्चों को एक साथ डिप्थीरिया हो जाता है। बेईमान डाक्टरों की भीड़ जोड़ देता है। हर दो घंटे पर बढ़िया इंजेक्शन लगवाता है और अपने बच्चे को बचा लेता है। गरीब ईमानदार सरकारी अस्पताल पर निर्भर करता है और उसका बालक दम तोड़ देता है। यह क्या बात हुई?
- दो परिचित हैं—एक ईमानदार गरीब दूसरा भ्रष्टाचारी पैसे वाला। ईमानदार का पुत्र होनहार है और भ्रष्टाचारी का भौन्दू, पर भ्रष्टाचारी अपने पुत्र को पब्लिक स्कूल में भेज देता है और ईमानदार मजबूर है कि अपने होनहार पुत्र को म्यूनिसिपैलिटी के बूचर खाने में पढ़ाये। यह क्या बात हुई?

यह! यह!! यह!!! और यह वह क्या, सौ बात की एक बात कि हम जिस समाज व्यवस्था में जी रहे हैं, वह धनवादी है। उसमें धन पास हो, तो सब कुछ सुलभ है और धन पास न हो, तो कुछ भी सुलभ नहीं, सब दुर्लभ है। इस स्थिति में भ्रष्टाचार की मशीन को वश में करने के लिए जिस हथौड़े की जरूरत है, वह है समाज में धन की सर्वशक्तिमत्ता को, उसकी उपयोगिता को नष्ट करना और परिस्थितियों को ईमानदार आदमी के लिए उपयोगी, पोषक और संरक्षक बनाना। ऐसा किए बिना भ्रष्टाचार-निवारण के प्रयत्न जड़ को सींचकर पत्ते नोचना है, यानी सही जगह पर सही हथौड़ा मारना नहीं है।

विरोधी दलों की बात छोड़िये, सत्ता प्राप्त करने का प्रयत्न करना उनका सम्विधान-सम्मत अधिकार है, कर्त्तव्य है, पर जिस दल को १५ अगस्त १९४७ से अब तक सत्ता प्राप्त है, उसके लोगों में भी पदों के लिए भयंकर होड़ा-होड़ी है। इस होड़ा-होड़ी ने दल की ताकत को तोड़ कर रख दिया है। लोग पदों के पीछे इस तरह दीवाने हो गये हैं कि दल को भी भूल गये हैं और देश को भी। एक तरह का गतिरोध पैदा हो गया है, जो न उनको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमने धन को सर्वशक्तिमान बना दिया और प्रयत्न किया कि लोग धन की कामना न करें ! हमने पदों को कल्पवृक्ष बना दिया और प्रयत्न किया कि लोग पदों की कामना न करें ! हमने सुविधाओं को एक वर्ग में बंदी कर दिया और प्रयत्न किया कि दूसरे लोग शांत रहें ! हमारे प्रयत्न उस वैद्य की तरह हैं, जो रोग को बिना जाने रोगी को टटोलता रहता है।

काम करने देता है, जो पदों पर हैं और न उनको, जो पदों पर नहीं हैं।

देश के नेता इस बात से चिन्तित हैं, परेशान हैं और इस होड़ा होड़ी के रोकने के लिए १९५७ के बाद से बराबर कुछ न कुछ करते ही रहते हैं। इस दिशा का सबसे बड़ा प्रयोग था कामराज योजना। उसके अनुसार कुछ बड़े बड़े लोग पदों से हटे, पर क्या हुआ उसका नतीजा ? कुछ भी नहीं, सिवाय इसके कि समस्या के जिन धागों में उलझन थी, उनमें गांठें पड़ गईं।

यह क्यों ? इसीलिए कि समग्र परिस्थिति को आंक कर समग्र समाधान पेश नहीं किया गया। वही बात कि सही जगह हथौड़ा नहीं मारा गया। पदों के लिए जो होड़ा होड़ी है, वह रोग नहीं, रोग का लक्षण है। सिर में दर्द क्यों है ? दर्द इसलिए है कि पेट में कब्ज़ है। तो इलाज बाम नहीं, जुलाब की गोली है। पदों की होड़ा होड़ी भी दर्द की तरह है, पर उसकी जड़ कहाँ है ?

वह जड़ गाँधी जी के दिमाग में है। १९३७ में पहली काँग्रेस मिनिस्ट्री बनने से पहले उन्होंने तै कर दिया था कि ५०० रु० मासिक से अधिक वेतन कोई न ले ! यह सब क्या था ? क्यों था ? यह था मिनिस्टर के पद को आकर्षक न बनाना। आकर्षक चीज़ की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक है। उर्दू के एक शेर का अर्थ है कि मुझे तो सब कहते हैं कि मैं उन्हें न घूरूं, पर उनसे कोई यह नहीं कहता कि वे यों सजधजकर न निकलें।

एक घटना से बात साफ हो जाएगी। उत्तर प्रदेश में पन्त जी पार्टी के नेता चुने गये, तो उन्होंने न्यायमंत्री बनने के लिए डा० काटजू से कहा। डा० काटजू तैयार नहीं हुए, क्योंकि उनकी वकालती आय हज़ारों रुपये महीने की थी। तब पंत जी ने कांग्रेस अध्यक्ष श्री जवाहर लाल नेहरू से निर्देश भिजवाया कि वे देश के लिए यह कार्य करें, क्योंकि कानून के सम्बन्ध में अंग्रेज गवर्नर को ठीक रखने के लिए उनके सिवा कोई दूसरा सदस्य सुलभ नहीं है। इस घटना के बीस वर्ष बाद डा० काटजू मध्य प्रदेश के मुख्य मंत्री थे और बुरी तरह आग्रही थे कि मुख्य मंत्री ही रहें, पर परिस्थितियों ने उन्हें धकेल दिया। क्या यह परिवर्तन कुछ नहीं कहता ? कहता है और यही कहता है कि पदों के लिए होड़ा-होड़ी रोकने का उपाय यही है कि हम उन्हें चाणक्य की राह पर स्थापित करें, मुगल दरबार की राह पर नहीं—वे तप, सेवा का साधन हों, ऐशआराम शान और बुढ़ापे की बेफिक्री का नहीं। ऐसा न करके हम जो भी प्रयत्न करेंगे, वह लीपापोती होगी, सही जगह हथौड़ा नहीं पड़ेगा।

बस एक बात और—मंत्री स्तर पर और अफसरी स्तर पर भ्रष्टाचार न हो, क्योंकि वहीं से वह समाज में फैलता है, यह बात नेताओं के सामने है और उसके लिए प्रयत्न हो रहे हैं। सदाचार समितियां हैं, तो सदाचार सँहितायें भी हैं। इन प्रयत्नों का अभिनन्दन, पर प्रश्न है सही जगह हथौड़ा मारने का। सही जगह कहां है ? मिनिस्टर किसी का अनुचित कार्य अपने अफसर से करा देता है और उस 'किसी' से अनुचित लाभ उठाता है। तब अफसर भी हाथ रंगता है। यह है समस्या, जिसे श्री प्रताप सिंह कैरों के काँड में दास आयोग ने उधेड़ कर सामने रख दिया है, पर हुआ क्या ? कैरों मुख्यमंत्री पद से हटाये गये, उनके साथ मंत्री भी, पर उनके साथ ही उन अफसरों को पदच्युत नहीं किया गया। ऐसा होता, तो देश भर के अफसर सतर्क हो जाते और दूसरे राज्यों में किसी मंत्री का मुंह न रहता कि उनका दुरुपयोग करें और स्वयं उनमें हिम्मत न रहती। आज की स्थिति यह है कि सरकार धनपतियों के छिपे धन को निकालने के लिए छापे मार रही है, पर अफसरों के पास भी छिपे धन के ढेर हैं। यही हाल दूसरे प्रश्नों का है।

समय का तकाज़ा है कि हम पूरे देश के पूरे प्रश्नों का पूरा समाधान खोजें और इस तरह सही जगह पर सही रूप में हथौड़ा मारने में सफल हों, जिससे हमारा महान देश अपना पूर्ण स्वरूप प्राप्त करने में समर्थ हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* श्री सूर्यनारायण व्यास हमारे देश की एक विभूति हैं।
* ज्योतिष के वे सर्वांगीण आचार्य हैं कि उसके फलित पक्ष में उनकी भविष्यवाणियाँ पिछली चौथाई शताब्दी में चमत्कारी सिद्ध हुई हैं और उसके विज्ञान पक्ष में उनकी गति देख ग्रीनविच की वेधशाला के विशेषज्ञ स्तब्ध रह गये।
* वे अपनी पीढ़ी के श्रेष्ठ पत्रकार हैं। मासिक 'विक्रम' में उन्होंने ८ वर्ष में दो हजार बड़े साइज के पृष्ठों में सम्पादकीय लिखा था। वर्षों बीत जाने पर भी उनकी विवेचनात्मक टिप्पणियाँ लोगों की स्मृति में अंकित हैं।
* उज्जयिनी के वे महान पुत्र हैं। अतीत में राजा विक्रमादित्य ने उसे प्रतिष्ठा के सिंहासन पर बैठाया था, तो वर्तमान में उपेक्षा के अंधकार से उसका उद्धार किया है व्यास जी ने —अकेले, केवल अपनी प्रतिभा और परिश्रम के बल पर।
* इस सब के साथ उनके जीवन का महत्वपूर्ण पहलू है उनका स्वाभिमान कि उन्होंने 'झुककर' कभी अशर्फी नहीं ली, 'तनकर' मिली इकन्नी को हीं गिन्नी समझा। कहूँ, 'साख' खोकर लाख' की चिन्ता उन्होंने कभी नहीं की और एक ग़ैरतदार इंसान की तरह सदा जिये।
* यह महँगी का युग है कि कोई चीज सुलभ नहीं, यह सस्ती का युग है कि आदमी का ईमान और इज्जत सब्जी की तरह हर कुंजड़े के टोकरे पर सुलभ है। व्यास जी का आत्म निरीक्षण ग़ैरतदार जिंदगी का व्याकरण प्रस्तुत करता है। युग के युवा उसे पढ़ें और आदमी की तरह जीना सीखें।

कुछ स्मृतियाँ, कुछ अनुभूतियां !

पद्मभूषण श्री सूर्यनारायण व्यास

राजों-महाराजों के यहाँ किसी का मिलना-जुलना समय प्राप्त करके ही सम्भव होता था, पहले से दिन और समय की स्वीकृति लेना आवश्यक होता था। स्वीकृति मिल जाने पर भी घंटों प्रतीक्षा-कक्ष में बिताने पड़ते थे। यही दशा आज के राजों-महाराजों की है, जिन्हें हम मंत्री, मुख्य-मंत्री, केन्द्रीय-मंत्री आदि नामों से पहिचानते हैं। राजों-महाराजों के यहाँ व्यवस्था रहती थी, वे उनके अभ्यस्त रहते थे, परम्पराएँ होती थीं, पर आज के 'राजों' में वह कैसे आ सकती है? इनका जीवन-काल ही कुल 'पांच साला' होता है। मुझे पुराने राजों-महाराजों से भी काम पड़ा है और आज के राजों-रईसों से भी, पर बड़ा ही अन्तर अनुभव किया है मैंने।

पिछले राजों-महाराजों में से अनेकों से मेरा निकट-सम्बन्ध आया है, परन्तु अपने किसी काम से कभी नहीं। इसलिए मुझे प्रतीक्षा-कक्ष की कठिनाई का, समय की बर्बादी का कोई कटु-अनुभव नहीं हुआ; क्योंकि जब भी किसी महाराजा ने मुझे आमंत्रित किया, तभी गया हूँ। जब उन्हें स्वतन्त्रता से मिलने और शाँति से बातें करने की सुविधा होती थी, तभी वे मुझे निकट बुलवाते थे, इसलिए प्रतीक्षा का प्रश्न ही प्रस्तुत नहीं होता था। वे जब तक स्वयं मिलने की सूचना न पहुँचाएँ, अपने निवास कक्ष में स्वतन्त्रता पूर्वक रहता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़े से बड़े महाराजा को इसी कारण निकट से स्वतंत्र रूप से समझने का मुझे सुयोग मिला कि उनसे खुले-हृदय से बातें होती रहीं। घन्टों के सम्पर्क में उनके वास्तविक-स्वरूप को स्पष्ट समझ पाता था।

एक बार मिलने पर ही मेरे प्रति विश्वास की भावना उनके मन में बन जाती थी और परिचय निकटता से आत्मीयता में परिवर्तित हो जाता था। समय की पाबंदी का सवाल मेरे समक्ष कभी नहीं आया। मैं चाहे जल्दी कर विदाई चाहता, किन्तु मेरे लिए समय की सीमा बन्धन कारक नहीं रहती थी। मैं उनके महल में ही चाहे ठहरा हूँ, बिना महाराज के बुलवाए कक्षान्तर में नहीं जाता था। मेरे लिए कोई प्रतिबन्ध नहीं रहता था और जब मैं महाराजा के कक्ष में होता, परामर्श चलता या गप-शप हो, तब अन्य मिलने वालों को निराश हो जाना पड़ता था। ए० डी० सी० या सेक्रेटरी सीधे ही लोगों को जवाब दे देते थे कि अब मिलना संभव नहीं। वे महाराजा के निकट पहुँचकर किसी की सूचना देने का साहस ही नहीं करते थे।

मुझे इस बात का गर्व है कि वर्षों के लम्बे-गहरे सम्बन्धों से भी मैंने अपने लिये या किसी अपने के काम के लिए किसी महाराजा से कभी कोई बात नहीं कही। इसलिए मेरे और महाराजाओं के सम्बन्धों में अन्तराय आने का अवसर नहीं आया, विश्वास ही बढ़ता गया।

महाराजाओं के साथ निकट सम्बन्ध रहते हुए भी मैंने उनके मिनिस्टरों से मिलने या उनकी निकटता पाने की कभी कामना नहीं की। जो स्वयं मिले, उनसे ही मिलना हुआ। महाराजाओं के राज्य काल तक जिन से एक बार सम्बन्ध आया, स्थायी बना रहा और राज्य न रहने पर भी मेरा सम्बन्ध यथावत् चलता आ रहा है, अन्तर केवल परिस्थिति का ही आया।

राष्ट्रपति महोदय से भी मेरा १२ वर्ष तक सम्बन्ध रहा। उनकी कृपा रही, पर उन्होंने जब भी स्मरण किया तभी दिल्ली गया हूँ। राष्ट्रपति भवन में ही ठहरता हूँ, किन्तु जब राष्ट्रपति जी को सुविधा होती, सूचना मिलने पर ही उनके कक्ष में उपस्थित होता था। कई बार ऐसे प्रसंग भी आजाते थे कि अपने कक्ष में सुविधा सम्भव न होने के कारण स्वयं राष्ट्रपति जी मेरे कक्ष में ही सहसा पहुंच जाते थे और घण्टों चर्चा चलती रहती थी, राष्ट्रपति भवन में रहकर भी कभी मैंने यह प्रयास नहीं किया कि किसी मिनिस्टर से सम्पर्क किया जाए। यद्यपि कई मंत्रियों से मेरे स्नेह सम्बन्ध रहे हैं, पर मैंने कभी स्वयं जाकर मिलने की कोशिश नहीं की। जब भी उन लोगों को मेरे आने का समाचार मिलता और वे याद करते तभी गया हूँ। राष्ट्रपति भवन के नियमानुसार राष्ट्रपति भवन में ठहरने वालों, आने जाने वालों की सूची 'कोर्ट सर्कुलर' में प्रकाशित होती रहती है। इससे लोगों को सहज ही विदित हो जाता है कि कौन आया, गया। आरम्भ में कुछ समय इसी तरह मेरा नाम भी प्रकाशित होता रहा। बाहर के मित्रों को इससे शिकायत रहने लगी कि मैं राष्ट्रपति भवन में ठहरता हूँ और मिलता नहीं। उधर मुझे अपने लिए बार बार सवारी की सुविधा के लिए ए० डी०सी० से कहलाने में संकोच होता था, इसलिए आगे से मैंने प्रेस-सचिव से निवेदन किया कि कृपया मेरा नाम प्रकाशित न हो तो उत्तम है। इस प्रकार उस संकोच से भी बच गया और शिकायत से भी।

लेखक

फिर भी किसी तरह बात बाहर पहुँच ही जाती थी और मेरा कक्ष मिलने जुलने वालों से हर समय भरा ही रहता था।

अपने घर पर रहते हुए मैं भी समय का बहुत खयाल रखता हूं। वैसे प्रातः ४ बजे से लेकर रात को ८॥ बजे तक सतत कर्म-रत रहता हूँ, परन्तु सुबह ४ बजे स्नान से निवृत्त हो ६-६॥ बजे तक टेबल पर पहुँच कर एक दिन पूर्व सायंकाल की आई हुई डाक और लेखन कार्य को ८ बजे तक निबटाता हूँ। आठ बजे के बाद ही लोगों से मिलने का समय रहता है। १० बजे कि मिलना बन्द कर उठ जाता हूँ। भोजन से निवृत्त हो लिखने पढ़ने बैठता हूं। तब किसी से नहीं मिलता। इस नियन्त्रण से कुछ लोगों को नाराज भी होना पड़ता है, पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि ऐसा न हो, तो मैं कोई भी कार्य नियमित नहीं कर पाऊँ। मैं आज के काम को प्रायः कल पर नहीं छोड़ता। यह नियम बद्धता के कारण ही संभव हो सकता है।

कुछ मित्र इसमें गौरव अनुभव करते हैं कि 'हमारे लिए कोई प्रतिबन्ध नहीं'। वे प्रतिबन्धित समय पर पहुंच कर कार्य में बाधा उपस्थित करने में स्नेहाधिकार समझते हैं। तब आत्मा के प्रतिकूल संकोच वश मन मारकर रह जाना पड़ता है और नियम भंग करना पड़ता है। प्रायः अधिकारी और रईस लोग भी यही समझते हैं कि उनके लिए समय का बन्धन नहीं है, जब कि वे स्वयं अपने यहाँ समय का बन्धन बनाये रहते हैं। ऐसे लोगों के प्रति मेरा मन अधिक विद्रोही बन जाता है और रूखेपन के साथ उनकी 'कार' लौटा देने को विवश हो जाता हूँ। कई बार राजा-रईसों और अधिकारियों को उस समय लौटना पड़ा है जो मेरे मिलने का समय नहीं है। कार्य हानि मेरे लिए कष्ट प्रद होती है। कई लोगों को इसमें मेरे 'अहं' की शिकायत हुई है, जब कि समय पर मैंने अकिंचन का भी सहर्ष स्वागत किया है, असमय आने वालों को नाराज़ी का शिकार बना हूँ।

एक बार एक महाराजा के यहाँ मेरा भाई सहसा प्रवास प्रसंग में पहुँच गया। तब महाराजा ने कहा कि पूर्व सूचना न मिलने से ठहरने की-मिलने की सुविधा संभव नहीं है। यह उन महाराजा का व्यवहार था, जिनके साथ मेरे गहरे सम्बन्ध थे। मेरा मन विद्रोही बन गया। वे प्रायः मेरे यहाँ आया करते थे, इस घटना के एक मास बाद जब वही महाराजा मेरे यहाँ अ-समय पधारे, तो उन्हें एक घण्टे मेरे दरवाजे पर ही रुके रहने को विवश बनना पड़ा। समय होने पर ही वे प्रवेश पा सके। वे सज्जन थे, उन्होंने अपनी भूल स्वीकार की और मैंने भी उनका बाद में उचित आतिथ्य किया। जो आदमी अपने लिए समय की पाबन्दी आवश्यक समझता है, वही कई बार दूसरे के लिए आवश्यक नहीं समझता और अवहेलना करता है। ऐसी श्रेणी के लोगों को मैं क्षमा नहीं कर पाया। इसका कारण यही है कि मैं अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए अधिक संवेदनशील हूँ। संयोग ही समझिए कि जीवन में कभी परतंत्र नहीं रहा। अपने पुरुषार्थ पर ही आस्था रखता आया हूं। मानवता सज्जनता के साथ किसी ने स्मरण किया तो सहर्ष पहुँच जाता हूँ, अन्यथा अनाहूत कहीं भी नहीं जाता। विशेष रूप से राजा-महाराजा-रईसों-मंत्रियों से दूर रहने में ही सुख समझता हूं; क्योंकि मेरी कोई आवश्यकता नहीं, महत्वाकांक्षा नहीं। इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि मैं भौतिक-दृष्टि से सम्पन्न हूँ। मैं अभावों में भी आत्म परितोष मानता हूँ और भगवत्गीता के इस वाक्य पर—

'योग-क्षेमं वहाम्यहम्'

(रिज़्क का ठेका रहीम के सिर)

पूर्णरूप से आस्थावान् हूँ।

अवश्य ही देश के लाखों श्रीमंतों से मेरा सम्बन्ध हुआ है, परन्तु जिन में 'श्रीमंती' की अपेक्षा मानवता या सौजन्य के दर्शन हुए, उन्हीं से निकटता हो सकी है और वह भी स्वाभिमान एवं समता के आधार पर। इस बात का मुझे गर्व है कि जीवन में स्वार्थ-साधन का मुझ पर आरोप नहीं लगाया जा सका और न 'सिर' झुकाने का प्रसंग ही आया, मुझे समाधान है कि मेरे प्रयास के फल स्वरूप उज्जैन में विक्रम विश्व विद्यालय की स्थापना हुई। विक्रम कीर्ति मन्दिर का निर्माण हो गया। कालिदास एकेडेमी बनने जारही है। बस कालिदास-स्मारक का निर्माण हो जाए, यही कामना शेष है। स्मारक के लिए पौने दो लाख की धन राशि जमा है, किन्तु १० लाख की पूर्ति होना शेष है। देखें, भगवान की क्या इच्छा है!

फूलों पर बहार आई है मौसम बदल गया है,
कलियों का सौभाग्य गंध का बचपन मचल गया है,
होगा नहीं विनाश आँधियों तूफानों से कह दो,
पतझर की न चलेगी अब से माली संभल गया है!

—श्री वीरेन्द्र शर्मा

मिटा के तम को, उजाले का घर बसाना है,
बुझे न आँधी में, ऐसा दिया जलाना है,
गगन के तारों से भर माँग अपनी धरती की,
हमें कुआँरी धरा को, दुल्हन बनाना है॥

—श्री वासुदेव शर्मा 'नायक'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

लाखों बीबी: एक फरिश्ता

—बी० मेहरा

जब हम तीनों ने कमरे में अपनी गर्दनें डाली, तो अपने होस्टल के कमरे को ऐसा नहीं पाया, जैसा हमने उसे छोड़ा था। उसकी इज्जत लुट चुकी थी! कमरा बुरी तरह से अस्त-व्यस्त था। टेबल लैम्प समीप की कुर्सी के दामन में तिरछा पड़ा था, उसका तार फर्श पर बेतरतीब पड़ी तीन चद्दरों को स्पर्श करता हुआ हिल रहा था। तीनों पलंग नंगे होकर शर्मा रहे थे। कमरे की इज्जत लूटने वाला हमारा नया साथी कुर्सी पर उकड़ूँ बैठा हुआ सिगरेट फूँक रहा था।

हम तीनों के दिल फुक गये और हम गुस्से से भरे कमरे में पहुँचे।

मैं चिल्लाया—"कौन हो तुम बदतमीज़ ?"

दूसरा—"आप कौन हैं जनाब ?"

तीसरा चीखा—"उल्लू के···" खें-खें···खी-खी। वह हँस रहा था हमारे गुस्से पर। "कम्बख्त···"

कुर्सी पर उकड़ूँ बैठे बैठे उसने सिगरेट हवा में उछाली और ऊपर से ऊपर मुँह में ले ली। बोला—"घबराओ नहीं। मैं इस कमरे में ज्यादा दिन नहीं ठहर सकूँगा। मै जानता हूँ, तुम लोग मेरी हरकतों से जल्दी ही ऊब जाओगे और मेरी शिकायत होस्टल के बकवास से करोगे। वह (गाली) फिर मुझे इस कमरे से हटाकर दूसरे कमरे में डाल देगा। मैं इन्सान नहीं हूं। मैं पार्सल हूँ। मैं बीबो हूं, आवारा बीबो, हर साल फेल होने वाला बीबो, गँवार बीबो, लड़ाकू बीबो, दुनिया में बे सहारा बीबो, नीच और गंदा बीबो, सिगरेट उछालकर पीने वाला बीबो, बीबो!

फिर कमरे में भयानक खामोशी छा गई। रात का स्याह अन्धकार उस सन्नाटे में खोये कमरे में फैल गया था। उस अजीब आगन्तुक की आवाज आखिरी बार 'बीबो'! बोलकर दम तोड़ चुकी थी।

पलंग पर बैठे-बैठे मैंने अपनी टांगें हिलाई और बुद-बुदाया-बीबो! दूसरा उठा और उसने टेबल लैम्प को जला दिया। लैम्प टेबल पर आने से लैम्प से टेबल लैम्प हो गया। कमरे में रोशनी फैल गई।

तीसरा छत को घूरता-घूरता बड़बड़ा रहा था—जंगली भेड़िया! सूअर! एक दम हैवान! वह ऊँघने लगा और अपना पलंग ठीक कर सो गया। कमरे में रोशनी फैली थी।

दूसरा टेबल लैम्प की रोशनी में आँखें फाड़े, एक मोटी-सी किताब निगल रहा था। बीबो ने टांगें टेबल पर फैला दी, जिससे किताब फर्श पर गिर पड़ी। वह खामोशी क्षण भर के लिए किताब गिरने से टूट गई। दूसरे ने आँखे निकाल कर कोफ्त के साथ बीबो को देखा। बीबो आराम से टेबल पर टांगे फैलाये, खुर्राटें भर रहा था। दूसरा भी गालियाँ बकता हुआ पलंग पर जाकर सो गया। मैंने घृणा से बीबो को देखा और रोशनी गुल कर दी। मैंने सोने के पहले उसे गाली दी—जानवर!

सुबह तड़के उठ कर हम तीनों हमेशा की तरह पढ़ने लगे। नम्बर दो का चेहरा लम्बूतरा है। कद भी लम्बा है। उसका बाप जज है। उसके पास कबूतरी रंग का उम्दा सूट है, जिसे पहनकर वह स्वयं कबूतर हो जाता है। कानून कॉलेज में पढ़ रहा है। इस वक्त वह बड़ी-सी किताब पढ़ रहा था, फिर पढ़ी हुई बात को आँखे मूँदकर दोहराता था। दोहराते-दोहराते बड़बड़ाने लगता और एक हाथ को हवा में मारता, जैसे किसी मक्खी को पकड़ रहा हो। इस बार सचमुच उसने एक मक्खी को पकड़ लिया और आँखे मूँदे ही दोहराता रहा—'इन्सान का सबसे बड़ा अधिकार है आजादी···'

तीसरे का बाप डाक्टर है। इसका नाक चपटा है। आँखें छोटी-छोटी हैं, परन्तु शरीर मोटा तगड़ा। यहाँ कॉलेज में विज्ञान का अध्ययन कर रहा है। अभी कुछ लिख रहा था।

मैं मँझले कद का हूँ। आँखों पर चश्मा लगाता हूँ। इस वक्त मेरा मन पढ़ने में नहीं था, क्योंकि मेरी नजर बार-बार कोने में एक सिकुड़े हुए कुत्ते-से पड़े बीबो पर जा उलझती थी। बीबो दुबला है, उसकी आँखें अन्दर धँसी हुई है। पतलून मैली है और कमीज का कालर एक जगह से फटा है। सिर के घने बालों को देखते ही अफ्रीका

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

के खौफनाक जंगलों की याद आती है, जहाँ कोई एक बार जाता है, पर लौट कर नहीं आता !

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम हर सुबह कॉलेजों की लेबों, प्रोफेसरों और निहायत भद्दी गैसों में जा उलझते हैं, शाम को थके-मांदे लौटते हैं। आज हमेशा की तरह शाम का प्रोग्राम शहर के शानदार रेस्तोराँ में जाने का था, पर रास्ते में बीबो मिल गया।

बेमन हमने उसे साथ लिया और उस शानदार रेस्तोराँ में दखिल हुए ही थे कि बीबो जोर से छींका; इतने जोर से कि रेस्तोराँ की सारी जेन्ट्री, छुरी कांटे और सलीके दम भर को ठिठक गये। हमारी आँखों के हजार नकारात्मक इशारों के बावजूद वह कम्बख्त अपनी कुर्सी पर उकड़ूँ बैठा। उसकी असभ्यता से हम तीनों बहुत खीजे और होस्टल पहुँच उसे खूब गालियाँ दीं। वह पहले सुनता रहा, फिर खीसें निपोरने लगा, फिर उबल पड़ा—हाँ, मैं बुरा हूँ। सब लोग मुझे ऐसे देखते हैं, जैसे मैं कुत्ता हूँ। तुम लोग अमीर बाप के बेटे हो, तुम्हारे पास किताबें हैं, गर्म कम्बल हैं, पैसों से फूले पर्स हैं, खूबसूरत टाईयाँ हैं, सूट हैं, चमकीले बूट हैं, पर मेरे पास क्या है ? यही एक कमीज, फटी पतलून किताब कोई नहीं और मैं पढ़ता हूँ। तुम लोगों को शर्म नहीं आती; रात को अपने गर्म कम्बलों में घुस कर सो जाते हो और मैं तुम्हारे ही कमरे में भूखा-प्यासा इस सर्दी में भी फर्श पर लुढ़क जाता हूँ !

एक गहरा सन्नाटा छा गया। ठंड से कमरा जम-सा रहा था। रात ठाठें मार रही थी। हम गले तक गर्म कम्बल चढ़ाये मौज में पड़े थे। सचमुच हमारी गर्दनें शर्म से झुक गईं।

दूसरी सुबह हमने कॉलेज के साइकिलस्टैंड के किनारे खड़े होकर गैसों और प्रोफेसरों की जगह बीबो की 'समस्या' पर गम्भीरता के साथ वादविवाद ही नहीं किया, बल्कि हमने अपनी विलासी जिन्दगी के बीच एक अजीबो-गरीब इन्सानी एक्सपेरीमेंट की स्कीम तैयार की।

और, उसी शाम से हम तीनों अमीर बाप के बेटों ने उस बीबो की 'समस्या' को अपने छह हाथों में गम्भीरता के साथ ले लिया। हमने तय किया कि हम अपने तमाम खर्चे बन्द करके बीबो के अभावों को दूर कर देंगे।

बीबो के लिए उम्दा सूट आया, नई किताबें आईं, एक शानदार पलंग आया, जिस पर मच्छर दानी चढ़ी थी। खर्चा इतना हुआ कि हमारे पलंग, सूट, किताबें, गर्म कम्बल आदि सब चले गये। अब रात में यह होता था कि बीबो शान से गुदगुदे बिस्तरों पर सोता, बेहद कीमती गर्म कम्बल से अपने जिस्म को लपेटे हुए सुनहरे भविष्य का ख्वाब देखता था। हमारी ओर दो आँख तो दूर वह एक आँख से भी नहीं देखता था। हम लोगों ने अपने इस अजीज महबूब पर इतने पैसे बहा दिये थे कि उस कड़कती ठंड में एक पतलून पहने ही रात काटनी पड़ती। हमारी किताबें बीबो के नाम बिक चुकी थीं। हम आधी-आधी रात धीमी आवाजों में गपशप करते थे। लोग हमें तुच्छ दृष्टि से देखने लगे थे। हम सब सहते थे, परन्तु अपने महबूब को कुछ भी नहीं कहते थे, जो एक बेफिक्र सांड की तरह उस शानदार पलंग पर सोकर जाने किन सपनों में मशगूल रहता था ! हम रात को हल्के-हल्के खांसकर, अपने गलों को दुरुस्त करते थे और इस मधुर भावना से रात को दिन कर देते थे कि एक दिन बीबो हमें इन्सान की नजर देखेगा और हमारा प्रयोग सफल होगा।

सर्दी की मौसम में एक गरम कमीज, गरम स्वेटर, गरम कोट, ओवरकोट, फुन्दनिया टोपा, हिरन की खाल के झबरे दलाने, गरम पतलून, ऊनी मौजे और बूट से अपने को सुरक्षित किये सुबह-ही सुबह घूमने जा रहा है एक।
नंगे पैर, नंगे सिर, बदन में कमीज का चिथड़ा लटकाये उसी सड़क पर खड़ा काँप रहा है दूसरा और पुकार रहा है कराहती.सी आवाज में—"बाबु जी, चाय पिला दो, ईश्वर आपका भला करे। सर्दी के मारे जान निकली जा रही है।"
'एक' अपनी जेब से पाँच पैसे का सिक्का निकाल कर 'दूसरे' के सामने फेंक देता है। यह एक कौन है ? यह दूसरा कौन है ?
हाय रे, ये दोनों मनुष्य हैं। हाय रे ये दोनों इसी देश के नागरिक हैं !

परन्तु वह दिन नहीं आया। बीबो हमें ऐसे देखता था, जैसे हम बेहूदे-घिनौने पिल्ले हैं, जो ज्यादा भौंकते हैं और उससे भी ज्यादा पूँछ हिलाते हैं। एक दिन उसे हमारे ऊपर दया आई। वह हम लोगों को उसी रेस्तोराँ में ले गया, जहाँ कभी हम उसे ले गये थे। रेस्तोराँ शानदार लोगों से ठसा-ठस था। बीबो कुर्सी पर गले की टाई की गाँठ को ठीक करता हुआ, बड़े सलीके के साथ बैठा। हम अभाव और परिस्थितियों से परेशान थे। हमें अपनी भूख से लगाव था, तो सलीके से नहीं, हम तीनों कुर्सियों पर उकड़ूँ बैठ गये। हम भूखे थे, हमें मैनेजर की गंजी चाँद पर कॉफी नजर आ रही थी, औरतों की मदहोश आँखों में कॉफी दिख रही थी, उनकी जुल्फों से कॉफी की महक आ रही थी। आखिर कॉफी के प्याले आये। हम तीनों एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्म की धुरंधर घोषणा है कि यह 'एक' पुण्यात्मा है और इसने यह सिक्का फेंककर पुण्य किया है। इसके बदले स्वर्ग का फरिश्ता इसे मरने के बाद सुख होगा। मतलब यह कि 'एक' आज भी सुखी है, कल भी सुखी रहेगा। उसके सत्कर्म को धन्यवाद कि उसने 'दूसरा' को आज जीवित रखा, पर बेचैन फड़फड़ाती जिज्ञासा पूछती है—एक ही देह के दो अंग हो कर भी में इतनी भिन्न स्थितियों में क्यों है? और वह फरिश्ता कहाँ है, जो इस 'दूसरा' को भी मनुष्य की तरह जीवित रहने का अवसर दे? इस बेचैन जिज्ञासा का चित्र है यह कहानी श्री बी० मेहरा की और बी० मेहरा हैं नई पीढ़ी के एक ऐसे कहानीकार, जिन की कलम के साथ दौड़ती है बुद्धि-विवेक-तर्क मानवता की चौकड़ी।

सपाटे में सुड़क गये कि गर्म कॉफी से मुँह भी जल गये। हमने दीनभाव से बीबो को इस नजर घूरा कि हमें वह और कॉफी पिलाये, परन्तु बीबो गुस्से में था, उसकी नजरों से अंगारे उछल रहे थे।

हम रेस्तोराँ से उठा दिये गये। बीबो बोला—कम्बख्तों निकलो यहाँ से। हम उठे, बिना और कॉफी सुड़के। रेस्तोराँ में गुजरते वक्त तीन खूबसूरत महिलाएँ एक टेबल के इर्द-गिर्द बैठी थी। इनके बाल अंग्रेजी थे, बातें अंग्रेजी थी, टेबल पर पड़ी जासूसी किताबें अंग्रेजी में थी, अदाएँ अंग्रेजी थी, दिल अंग्रेजी था···हमारे दिलों ने चाहा कि इन महिलाओं को अंग्रेजी के साथ ही सुड़क जायें!

—लेकिन बीबो ने हमें धक्के मार कर रेस्तोराँ से बाहर कर दिया था। रात अन्धेरी थी, राहसूनी दूर तक। बीबो हमें गालियाँ दे रहा था कि हम इन्सान नहीं जानवर हैं। हम सिर झुकाये सब सुन रहे थे, चल रहे थे, फिर चलते-चलते बातें भी आपस में करने लगे।

लम्बूतरे चेहरे वाला जज का लड़का कंधे उचकाकर गुस्से में उबल पड़ा—आग लगे ऐसे एक्सपेरीमेंट को।

चपटे नाक वाला डाक्टर का लड़का बोला—अभाव इन्सान को गवाँर बनाता है, पर जब अभाव दूर हो जाता है, तो इन्सान सभ्य होकर इन्सानियत के प्रति गवाँर हो जाता है। मुझसे ठंडी फर्श पर सोया नहीं जाता।

दूर तक खामोश सड़क थी। मैं उनके साथ चलता-चलता चश्मा ठीक करते हुए बोला—ठीक कहते हो दोस्तों, बीबो पर हमने एक्सपेरीमेंट किया, परन्तु इसमें हम सब बीबो हो गये। हमें फिर से वही गर्म कम्बल चाहियें, वही टाईयें।

हम टूट पड़े। बीबो को पीटने लगे। उसका सूट फाड़ दिया। वह चीखा, चिल्लाया, पर उस सुनसान अन्धेरी सड़क पर कौन था? खूब पीटा, इतना कि उसके ओठों पर खून आ गया। अब बीबो फिर बीबो था!

कमरे में फिर हमारे वही पलंग आ गये थे। अब हम पहले की तरह सूट पहने, टाईयों की गाँठें ठीक करते, घूमने लगे हैं। कड़कती ठंडी रात को अपने जिस्म को गर्म कम्बलों से लपेटे हुए सोते हैं। सुबह तड़के उठते हैं। लम्बूतरा कानून की किताब को याद करता-करता मक्खी को पकड़ लेता है। डाक्टर का लड़का सिर झुकाये किताबों के दरिया में गोता लगाता रहता है। मैं अपने चश्मे से वैसे ही आबाद, रंगीन और खुशनुमा दुनिया के नजारे देखता रहता हूँ। बीबो वैसे ही फटे हाल है, वैसे ही ठंडी फर्श पर लुढ़ककर सो जाता है और भूखे पेट अधमुंदी आँखों रोता है। उसका यह विचार कि वह एक इन्सान नहीं, पार्सल है, अब भी बुलन्द है। अब वह हम लोगों को घूर-घूर कर देखता है। हम उसे चिढ़ाते हैं और साबुन के बुलबुलों-से कहकहे पैदा करके फोड़ देते हैं।

एक दिन बीबो का दिल भर जाता है। वह भर्राये कंठ से कहता है—बस दोस्तों, मैं चला। मैं अब एक ऐसी दुनिया में जाना चाहता हूं, जहाँ मुझे इन्सान के दिल का प्यार मिले और जहाँ के लोग मुझसे कभी न ऊबें और न ही मुझे वे पार्सल करें···अलविदा होस्टल कॉलेज! अलविदा किताबें! अलविदा दोस्तों!···अलविदा गर्म कम्बलों!!

रात की स्याही फैली है। वह होस्टल के फाटक की ओर बढ़ता है। खुले फाटक के बाहर अन्धेरे में डूबी हुई घनी झाड़ियों के झुरमुट हैं। लम्बूतरा और चपटा दोनों ओठों के कोनों में व्यंग से हँस रहे हैं। मैं जोर से चीखता हूं, इतने जोर से चीखता हूं कि मेरा चश्मा होस्टल के कचरे की टोकरी में जा पड़ता है। मैं गला फाड़कर चिल्लाता हूँ—हम एक्सपेरीमेंट में हार गये। चुनाचे हम तीन सिर्फ खुदगर्ज शैतान हैं, परन्तु है कोई ऐसा फरिश्ता, जो एक नहीं लाखों-बीबो पर एक्सपेरीमेंट करे? है कोई? एक बीबो नहीं, हिन्दुस्तान के लाखों गरीब बीबो पर!!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पति धृतराष्ट्र अंधे थे, देखने के सुख से वंचित, पत्नी गांधारी आँख-पट्टी बांध देखने के सुख से वंचित हो गई ! आराध्य जनता गरीबी और अभाव से संत्रस्त थी; आराधक गांधी ने जीवन और वेश में गरीबी अपना ली ! प्यार का सूत्र है—'जो उन्हें प्राप्त नहीं, मुझे ग्राह्य नहीं।' गांधी के बाद भारत के नेता इस सूत्र को भुला बैठे और उस भूल से हमारे उगते राष्ट्रीय जीवन में एक संकट खड़ा हो गया । इसी पृष्ठ भूमि में विख्यात विचारक का यह विवेचन हम सबके लिए एक दीप—

संकट टलेगा या

मार्क्स ने एक नया दर्शन संसार को दिया। उसके आधार पर रूस देश में एक नया साम्यवादी राज्य आ गया। राजन्य वर्ग के लिए पहली कठिनाई तो उसने पैदा की । राजा पहले खास आदमी हुआ करता था। अन्दर से बहुत खास हो कि न हो, ऊपर से उसे बेहद खास बना कर रखा जाता था। जन्म से वह विशिष्ट होता था और लालन-पालन से भी। बीच में कुछ क्रान्तियाँ हुई और राजाओं के सिर कटे, लेकिन क्रान्ति बीतते ही समाज की स्थिति फिर पहले जैसी हो गयी। मानो प्रजा में हाकिम को, अफसर को, राजा को फिर उसी ऐश्वर्य और आडम्बर के बीच देखने की आदत और आशा जग आयी। प्रजा ऊपर आँख उठाकर राजवैभव की ओर देखती थी और उस विभुता में उसे सन्तोष होता था। सबसे बढ़-चढ़कर न हो तो वह राजा ही क्या ? वैभव और ऐश्वर्य से उसे मण्डित होना ही चाहिए। और सचमुच इस वैभव का अन्तर बीच में डालकर राजा के प्रभाव को अनिवार्य और अमोघ बनाया जाता था।

रोमान्स की भांति यह प्रजा जन को प्रिय होता था। अब भी कहीं-कहीं प्रिय होता है, लेकिन मार्क्स ने इस धन-वैभव की सत्ता के बारे में कुछ ऐसी दृष्टि लोगों के मनों में उतार दी कि उसका आतंक और प्रभाव जाता रहा। पहले यदि उस के प्रति प्रशंसा का भाव होता था तो इस नये दर्शन के सहारे निन्दा का भाव जागने लग गया। पहले वैसा शासक पोषक और रक्षक समझा जाता था। इस नव दर्शन के अधीन वह शोषक और भक्षक दीखने लग गया। परिणाम यह कि छत्र-दण्ड-धारी राजत्व का जो सर्वोच्च प्रतीक था, वह जार इस क्रान्ति में सदा के लिए मार डाला गया। इस साम्यवाद ने आम लोगों के मनों में यह भर दिया कि राजा उनमें से ही हो सकता है, विशिष्ट नहीं हो सकता।

नेतृत्व की कल्पना के परम्परागत रूप को पहला आघात साम्यवाद की ओर से यह लगा। विशिष्ट और कुलीन होना मानो दुर्गुण हो गया। नेता के लिए सम-सामान्य और सर्व साधारण आवश्यक होने लगा।

फिर भी साम्यवाद ने स्थापित राज्य का जो स्वरूप लिया, उससे धीरे धीरे कठिनाई कम होने लगी। साम्यवाद का और क्रेमलिन के दुर्ग-प्रासाद का धीरे-धीरे मेल बैठने लगा। वहां भी नेता के लिए सुविधाओं की ओर से विशिष्ट बनना मानों सहज और ग्राह्य होने लगा।

फिर भी मार्क्स ने जो दृष्टि दी वह जन-सामान्य में गहरी घर कर चुकी थी। समय समय पर जन नेता के रूप में प्रगट होते रहने की आवश्यकता राज-नेता के लिए बनी रही। प्रधानमंत्री चाहे कहीं रहें, महल में चाहे रहें, लेकिन वे सबके लिए सुलभ और आत्मीय हैं, इसका प्रकाशन करते रहना उनके लिए जरूरी होता है इतने मात्र से साम्यवादी देशों में कठिनाई ऊपरी तौर पर हल हो जाती है। यदि कहीं नीचे असन्तोष हो तो वह ऊपर फटे बिना रह जा सकता है।

किन्तु भारत की हालत उससे दूसरी हैं। गान्धी ने अंग्रेजी राज्य के रहते हुए भी भारत देश के मन पर इतने लम्बे काल तक एक छत्र राज्य किया। जिस तन्त्र द्वारा उस महात्मा का राजकाज चलता था, उसका नाम कांग्रेस था। कांग्रेस का बड़ा कारोबार था । लम्बा चौड़ा दफ्तर उसके लिए जरूरी होता था, लेकिन गान्धी की राजधानी सेवाग्राम थी,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रलय आयेगी ?

—श्री जैनेन्द्र कुमार

जहां फूस की कुटिया थी । सबके बीच चटाई पर वह राज-राजेश्वर उठता-बैठता सोता था ।

गान्धी के न रहने पर भी यह चित्र देश के मन से उतरता नहीं है । इसके पीछे उसे अपनी तमाम परम्परा का बल भी मालूम होता है । राम बनवासी हो गये, कृष्ण ग्वाल-बाल के संगी-साथी बन कर रहे, इत्यादि उदाहरण भारतवासी के चित्त में ऐसे बैठ गये हैं कि वह उन्हीं से अपने नेता और राजा को नापना चाहता है । साम्यवाद तो चाहे समझौता कर भी ले, लेकिन भारतीय मानस की यह मांग समझौता कर नहीं पाती है । आज का संकट ठीक इसी कारण विकट बन गया है और विकटतर बनता जाता है ।

मामूली तौर पर राजा को प्रजा अपने बीच राजा बनाकर रखना चाहती है । उसी तर्क से आज का राज-नेता भारत के दूतावासों को खर्च के और रहन-सहन के मामले में किसी भी देश की बराबरी पर रखना चाहता है। गान्धी ने कहा था कि यह भूल है । देश गरीब है तो उसके प्रतिनिधि को गरीब दीखने में शर्म किस बात की होनी चाहिए, लेकिन गान्धी की यह बात जिसको रोब-दाब रखकर राज करना है उस राजनेता की समझ में नहीं आयी । परिणाम यह हुआ और हो रहा है कि देश गान्धी की याद करता है, उसे अपना स्वराज्य अपनी ही आशाओं और अपेक्षाओं से उल्टा मालूम होने लगता है और इस विडम्बना को वह समझ नहीं पाती ।

मैं मानता हूँ कि समय पीछे नहीं जा सकता । मार्क्स के दर्शन ने यह बात [illegible] दी है कि गरीबी अगर है, तो उसके साथ चलने वाली अमीरी में शोषण का दोष अवश्य है । मार्क्स की इस बात के ऊपर गान्धी ने आगे बढ़कर और यह दिखा दिया है कि सच्चा आदमी वही है, वही हो सकता है, जो कम चाहता और रखता है, जो विशिष्ट बनने से उल्टे सेवक बनने की कोशिश में रहता है । यह दोनों दर्शन किसी भी तरह मिटाये नहीं जा सकते बल्कि दिन-दिन वे उजागर और अमोघ ही होते जाने वाले हैं । जो नेतृत्व इन नये मूल्यों को अपने से ओझल रखेगा वह सदा खतरे में और डगमग ही रहने वाला है । वह कभी जम नहीं सकेगा । अपनी रक्षा के लिए उसे सदा तिकड़म का सहारा लेना होगा । जब तक मन न जीता जाये तब तक जन साधारण के अस्तित्व को विवश बनाकर अपनी हकूमत चलाना यदि सम्भव हो भी तो वह कुछ दिनों के लिए ही हो सकता है उस शासन में स्थायित्व नहीं आ सकता, नहीं आ सकता ।

आज लगता है शासन-सत्ता को गांधी के वे मूल्य याद नहीं रह गये हैं । इस क्षति के रहते हुए हम आर्थिक और औद्योगिक और समाज वादी जनतन्त्रीय और स्वान्त्र्यवादीय अथवा साम्यवादीय चर्चा कितनी भी करें, उससे वह क्षति भर नहीं सकती । बातें उस घाव पर मरहम का काम दे भी जायें इलाज का काम किसी हालत में नहीं दे सकती ।

एक ही उपाय है । संकट दूसरी तरह टलना असम्भव है । वह उपाय यह है कि नेतृत्व समय से पिछड़े नहीं, आगे बढ़े । समय को उलट कर कोई चला सकता है यह सम्भव नहीं है । समय को रोकने से प्रलय फूट निकले विस्मय की बात न होगी । गान्धी की बातों को पुरातन और जीर्ण और ग्राम्य कहकर इस ऐतिहासिक यथार्थ को किसी तरह समाप्त नहीं किया जा सकता कि इसी विज्ञानवादी बीसवीं सदी के राजकारण में गान्धी ने चमत्कार दिखाया था और उसके शब्द आज भी प्रबुद्ध मानस को छूते और पकड़ते हैं । मानव के ज्ञान-विज्ञान में मार्क्स का वाद दर्शन जिस गहराई तक उतरा है, उससे ज्यादा गहराई तक गान्धी का कर्म-दर्शन उतर चुका है और उतरता जायेगा । समय के इस निर्देश पर आंख मूंदी नहीं जा सकती । उसको पहचानना ही होगा और नेतृत्व को अपने आचरण द्वारा इस सचाई की मिसाल बनना होगा कि समझे जाने वाले जीवन-मान की ऊंचाई से और खर्चे की बड़ाई से आदमी बड़ा नहीं होता है, बड़ा नैतिक गुणों से और सेवा के स्वभाव से हुआ जाता है । इन बातों को भावुकता की कहकर टालने से प्रजा और राजा के बीच की बढ़ती हुई खाई की ओर बढ़ने से रोका नहीं जा सकेगा । यदि यही हाल रहा तो धीरे २ हाइकमान के एक-एक सदस्य को अपनी जगह पर अपराधी बनना पड़ जायेगा । हर आदमी अच्छी तरह रहना चाहता है और जो सबके लिए खुशहाली का बीड़ा उठाते हैं उनसे यह दावा रखना चाहता है कि वे पहले उसे खुशहाल बनायेंगे । हो तो पीछे ही खुद खुशहाली अपनायेंगे, नहीं तो नहीं अपनायेंगे । वह अगर यह देखेगा कि स्वयं के हाल खस्ता हैं, जबकि नेताई की राह पर थोड़ी दूर चलकर अमुक महाशय जरा में माला-माला हो गये हैं, तो निश्चय रखिए कि भ्रष्टाचार को रोकने की कोई योजना कारगर होने वाली नहीं है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री अक्षय कुमार जैन

—श्री शिवकुमार गोयल

उनकी सफलता का रहस्य उनके विनम्र एवं आकर्षक व्यक्तित्व में छिपा है और उनकी विनम्रता और आकर्षण की विशिष्टता इस बात में है कि वे जल की तरह तरल होकर भी अनल की तरह अपनी बात पर अटल रहते हैं। इस तरह एक समर्थ व्यक्तित्व—

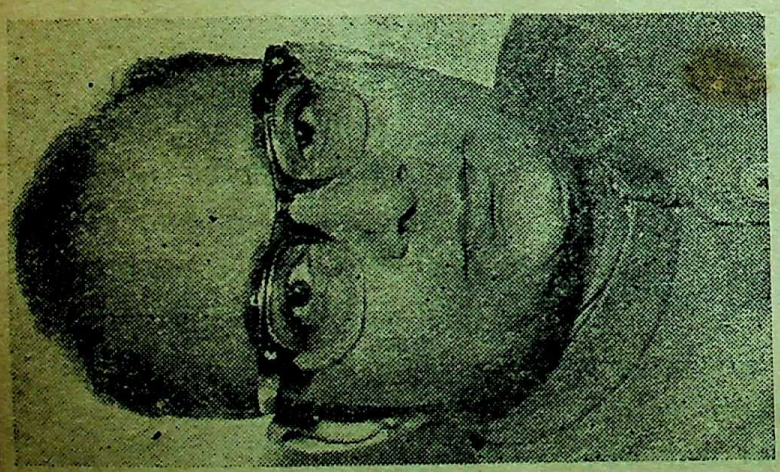

दैनिक 'नवभारत टाइम्स' के यशस्वी सम्पादक श्री अक्षय कुमार जैन देश के उन मूर्धन्य हिन्दी पत्रकारों में हैं, जिन्होंने पिछले वर्षों में अपनी सुयोग्यता, कर्मठता एवं अनुभव के बल पर हिन्दी पत्रकारिता के स्तर को एक स्वस्थ स्वरूप प्रदान किया है। और इसके लिए योजना पूर्वक प्रयोग किए हैं।

श्री अक्षय जी की सफलता का रहस्य उनके विनम्र एवं आकर्षक व्यक्तित्व में छिपा है और उनकी विनम्रता और आकर्षण की विशिष्टता इस बात में है कि वे जल की तरह तरल होकर भी अनल की तरह अपनी बात पर अटल रहते हैं। वे सोच विचार कर निर्णय लेते हैं और फिर उस निर्णय पर दृढ़ रहते हैं—उससे उन्हें हटाना संभव नहीं है। अपने निर्णय के औचित्य में उनका विश्वास हो, तो वे डूबना पसन्द करेंगे; यह नहीं कि उसे बदल कर तैरती नाव पर जा बैठें। उनमें इक़रार है और इन्कार भी, पर मजेदार बात यह है कि इन्कार भी हुँकार के साथ नहीं, झंकार के साथ है। जो व्यक्ति कभी अक्षय जी के सम्पर्क में आया है, वह उनकी विनम्रता, मिलनसारिता एवं आकर्षक व्यक्तित्व से प्रभावित होकर ही लौटा है। अक्षय जी के व्यक्तित्व में एक जादू है। उनकी वाणी में मधु जैसी मिठास है और यह मिठास एक खास पैनेपन के साथ निवास करती है। उनका व्यक्तित्व शांत और तेज तर्राक एक साथ है। इसी कारण उनका व्यवहार प्रत्येक को चुम्बक की तरह अपनी ओर खींच लेता है और कोई भी उन्हें दबा नहीं पाता!

उस दिन राजधानी में, अ० भा० समाचार पत्र सम्पादक सम्मेलन के अध्यक्ष चुने जाने पर अक्षय जी का स्वागत करते हुए सुप्रसिद्ध विद्वान् डा० विजयेन्द्र स्नातक ने अक्षय जी की सफलता का रहस्योद्घाटन किया था—"अक्षय जी अपनी सौम्यता, सज्जनता एवं योग्यता के कारण ही आज इतने प्रतिष्ठित पद पर आसीन हुए हैं। वह सौम्यता एवं सज्जनता की साक्षात् मूर्ति हैं।" संसद सदस्य श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने श्री स्नातक के रहस्योद्घाटन का प्रबल समर्थन इन शब्दों के साथ किया था—"अक्षय जी एक सफल पत्रकार और लेखक ही नहीं बल्कि एक सहृदय मानव भी हैं और यही इनकी अद्भुत सफलता का कारण है।"

श्री अक्षय जी को मुझे लगभग दस वर्षों से निरन्तर निकट से देखने का और प्रायः प्रति सप्ताह ही उनके सत्संग का शुभ अवसर मिला है। मैं जब भी उनसे मिलता हूँ उनकी उदारता एवं निस्पृहता में निखार के ही दर्शन पाता हूँ। मैंने कभी उन्हें किसी से रूखा व्यवहार करते नहीं देखा। प्रत्येक का गुलाब के समान खिले हुए चेहरे से स्वागत करते हैं। उनका मुस्कराता चेहरा मन को बरबस आकर्षित कर देता है। वह एक जिन्दादिल और जीवट के व्यक्ति हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी दूर से उनका नाम सुनता है, एक सच्चे बड़े दानवीर के रूप में उसे पढ़ता है, तो एक कल्पना करता है उनके बारे में कि वे ऐसे होंगे। इस कल्पना में वे एक भारी-भरकम दबदबेदार बड़े आदमी के रूप में होते हैं। मिलने पर यह कल्पना पहले ही क्षण में ढेर हो जाती है। अक्षय जी उम्र में प्रौढ़ होकर भी अपने छरहरे सुन्दर, स्वस्थ शरीर के कारण आने वाले को, यदि वह प्रौढ़ है, तो अपने से छोटे और युवक है, तो अपने समान दीखते हैं। इसके बाद भी उनके पद का जो रौब नवागन्तुक पर रहता है, उसे उनकी खिली हँसी, खुली बातचीत और घुलामिला व्यवहार दूर कर देता है और वह सोचता है—अरे, अक्षय जी तो अपने ही हैं। मैंने बहुत बार सोचा है कि यह सहज अपना पन ही अक्षय जी का जादू है, यही उनकी कमाई है, यही उनकी सफलता है।

१९५५ की बात है। 'नवभारत टाइम्स' के समाचार सम्पादक श्री हरिदत्त जी शर्मा एवं श्री आराधक जी के पास बैठा मैं बातें कर रहा था। हम तीनों के बीच में कुर्सी पर श्री अक्षय जी आ बैठे और गप्पगोष्ठी में सम्मिलित हो गये। एकदम घरेलू ढंग। भाई श्री हरिदत्त जी ने उनसे मेरा परिचय कराया तो श्री अक्षय जी कह उठे—"भक्त रामशरणदास जी को तो विद्यार्थी जीवन से जानता हूँ। अलीगढ़ में पढ़ते समय 'कल्याण' में उनके लेख पढ़ता था। उनके पुत्र से आज परिचय हुआ है।" अक्षय जी मुझे अपनी मेज पर ले गये और देर तक पिताजी के सम्बन्ध में बातें करते रहे। उस प्रथम साक्षात्कार में ही मुझे अक्षय जी में एक विशिष्ट व्यक्तित्व के दर्शन हुए और मैं उनके सद्व्यवहार से आकर्षित हुए बिना न रह सका।

१६ जून सन् १९६३ को मेरठ के साहित्यकारों एवं पत्रकारों की ओर से 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' के यशस्वी सम्पादक श्री बाँकेबिहारी भटनागर एवं 'नवभारत टाइम्स' के विशेष प्रतिनिधि श्री फतहचन्द शर्मा 'आराधक' का सम्मान किया गया था। उस सम्मान समारोह के स्वागत मन्त्री थे श्री मदनगोपाल सिंहल (स्वर्गीय) एवं स्वागत उपमन्त्री था मैं। जब मैंने दिल्ली जाकर श्री अक्षय जी से उक्त समारोह में सम्मिलित होने के लिए मेरठ पधारने की प्रार्थना की, तो उन्होंने उत्तर दिया—"यह तो बिरादरी (पत्रकार समाज) का प्रश्न है। भला क्यों नहीं पहुँचूगा?" श्री अक्षय जी मेरठ पहुँचे। उन्होंने दोनों पत्रकारों का स्वागत करते हुए 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' के स्वस्थ स्तर की सराहना करने के पश्चात कहा—"जहाँ तक भी आराधक जी का प्रश्न है, मैं उन्हें 'नवभारत टाइम्स' की प्रगति का एक प्रमुख स्तम्भ मानता हूँ। उनके कड़े परिश्रम के कारण ही आज 'नवभारत टाइम्स' प्रगति के शिखर पर पहुँच सका है।" उन्होंने आगे कहा—"मैंने एवं आराधक जी ने काफी दिनों तक साथ-साथ काम किया, किन्तु न जाने क्यों मुझे 'नवभारत टाइम्स' के प्रधान सम्पादक पद पर नियुक्त कर दिया गया, जबकि उसके वास्तविक अधिकारी आराधक जी थे।" आराधक जी अपने वरिष्ठ सम्पादक महोदय के मुख से उपरोक्त शब्द सुनकर संकोच से गड़े जा रहे थे और उपस्थित व्यक्ति अक्षय जी की उदारता से दंग थे।

कितने बड़े हैं, जो अपने छोटों की ऐसी बढ़ी चढ़ी प्रशंसा खुले आम कर सकें? इसे सुनकर ही मैं यह समझ पाया था कि 'नवभारत टाइम्स' के दफ्तर में जो पारिवारिक अनुशासन है, उसका रहस्य क्या है? अक्षय जी में महत्व और ममता के समान वितरण की जो खानदानी प्रवृत्ति है, उसकी जड़ तो जानता था, पर उसके पुष्प-पल्लव उसी दिन देख पाया था मैं!

'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' के सह सम्पादक श्री जयप्रकाश भारती का मेरठ में विवाह था। बारात में आये राजधानी के अनेक कवि, पत्रकार एवं साहित्यकार! श्री भटनागर जी, श्री वीरेन्द्र मिश्र, श्री लल्लन प्रसाद व्यास, पं० क्षेमचन्द्र सुमन, आराधक जी, श्री बालस्वरूप राही आदि धर्मशाला के कमरे में विराजमान थे। देखा सामने से अक्षय जी चले आ रहे हैं। देखते ही श्री बाँकेबिहारी भटनागर ने कहा—"आप बीमार चल रहे हैं, डाक्टरों ने आने-जाने को मना किया हुआ है, फिर क्यों चले आये?" अक्षय जी ने तपाक से उत्तर दिया—"भारती जी को दूल्हे के रूप में देखने के लिए।" और उनकी जादूगरी मुस्कराहट पूरी देह को पलभर के लिए लहराकर उनकी खूबसूरत आँखों में जा टिकी कि क्षणों तक टिकी रही, जैसे वे एक परिचित तरुण पत्रकार के विवाह में नहीं, अपने पुत्र के विवाह में सम्मिलित हों। देखकर मन उनके प्रति आदर से भर गया और सोचा—अक्षय जी को अपने कार्यालय से बाहर भी, दूर दूर तक जिस शक्ति ने उन्हें अपना बना दिया है, वह यही सदभाव की शक्ति है।

अक्षय जी का जन्म ३० दिसम्बर सन् १९१५ को अलीगढ़ जिले के विजयगढ़ स्थान पर एक प्रतिष्ठित जैन परिवार में हुआ था। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से बी० ए० करने के उपरान्त उनका झुकाव पत्रकारिता की ओर हुआ और उन्होंने सन् १९४२ में दैनिक 'सैनिक' (आगरा) के सम्पादकीय विभाग में प्रवेश करके पत्रकारिता का जीवन आरम्भ किया। कई वर्षों तक वे वहां रहे।

'सैनिक' के उपरान्त अक्षय जी 'नवभारत' में आ गये। 'नवभारत' का 'नवभारत टाइम्स' हुआ और अक्षय जी अपनी योग्यता के बल पर सम्पादक से प्रधान सम्पादक। उन्होंने कुछ

श्री अक्षय कुमार जैन

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

ही समय में अपनी परिश्रमी प्रतिभा के बल पर पत्रकारिता में अपना विशेष स्थान बना लिया। अपने दैनिक में जितना अधिक अक्षय जी ने लिखा, उतना कम ही प्रधान सम्पादकों ने लिखा होगा। कार्य को अपनी शक्ति भर पूर्णता तक पहुँचाना उनका स्वभाव है और यह वृत्ति ही उनकी उन्नति का प्राण रही है।

श्री अक्षय जी को कई बार विदेश भ्रमण का अवसर प्राप्त हुआ है। रूस, अमरीका, इंगलैण्ड आदि अनेक देशों का भ्रमण कर वे वहाँ की राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों का दिग्दर्शन कर चुके हैं। 'नवभारत टाइम्स' में उन्होंने विदेश यात्रा में अपने रोचक एवं तथ्यपूर्ण संस्मरण देकर लाखों पाठकों को विदेशों की सैर कराई है। उनके संस्मरणात्मक लेख सजीव होते हैं। मैं जब उनकी 'ब्रिटेन में चार सप्ताह' पढ़ने बैठता हूँ तो लन्दन की सड़कों पर घूमने लगता हूँ। उनके यात्रा वृत्तान्त उनके पत्रकार को पहचानने में जितनी मदद करते हैं, उतनी और कोई चीज नहीं। इनमें उनकी व्यापक पकड़, गहरी और सूक्ष्म दृष्टि के बड़े ही प्यारे स्पर्श हैं। साथ ही बात को थोड़े में, साफ साफ कहने की शक्ति के भी। इसी कारण उनका यात्रा साहित्य अत्यन्त लोकप्रिय है।

श्री अक्षय जी को अ० भा० समाचार पत्र सम्पादक सम्मेलन का अध्यक्ष निर्विरोध निर्वाचित किया गया है। यह उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व की विजय है कि वे इस पद पर बैठने वाले पहले हिन्दी पत्रकार हैं। उन्होंने अध्यक्ष निर्वाचित होने पर कहा था—"यह मेरी नहीं, हिन्दी की प्रतिष्ठा है।" उन्होंने घोषणा की—"अब वह दिन दूर नहीं, जब हिन्दी पत्रकारों को वांछित सम्मान प्राप्त होगा।" अक्षय जी हिन्दी पत्रों व पत्रकारों की उपेक्षा सहन करने को कदापि तैयार नहीं हैं। उन्होंने स्पष्ट कहा था—"भारतीय पत्र राष्ट्रीय आन्दोलन के समय जिनके लिए लड़े थे और जिन्हें उन्होंने सम्मान दिया था, वे भी आज भारतीय पत्रकारिता की उपेक्षा कर रहे हैं। यह उपेक्षा हिन्दी पत्रकार अधिक सहन न करेंगे।" अक्षय जी के सम्पादक व्यक्तित्व का यह चित्र कितना मनोरम है कि समाचार पत्र सम्पादक सम्मेलन के धुवांधार अंग्रेजी वातावरण में भी उन्होंने गोहाटी-अधिवेशन में अपना भाषण हिन्दी में ही पढ़ा। उनका हिन्दी बोध इतना प्रखर है कि हीनता बोध उनके पास नहीं फटकता। अक्षय जी एक सफल, सरल, सबल साधक!

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूँद और समुद्र

श्री तिलक

किसी शहर में एक बड़े सेठ रहते थे। संसार भर में उनके व्यापार-धन्धों का फैलाव था। लक्ष्मी सचमुच उन की चरणचेरी थी। वे सही अर्थों में धनकुबेर थे। समुद्र के किनारे सेठ जी ने अपने रहने के लिए एक आलीशान महल बनवाया, जिसकी दीवारें सोने की, दरवाजे चन्दन के और खिड़कियां आबनूस की थीं। महल का सारा फ़र्नीचर हाथीदाँत का था, जिसमें जगह-जगह बहुमूल्य हीरे जवाहरात जड़े हुए थे। महल में अभ्यागतों के लिए अतिथिगृह, सुसज्जित पुस्तकालय, नन्दन-कानन को भी लज्जित करने वाली पुष्पवाटिका थी। कर्मचारियों के रहने के लिए जो भवन बनाए गए थे, वे इतने सुन्दर, सुव्यवस्थित और सम्पन्न थे कि इन्द्र भी उनके लिए लालायित हो उठे।

सेठ जी बड़ी धार्मिक रुचि के व्यक्ति थे। जप-तप, कथा-कीर्तन, भजन-पूजन उनके नित्य कर्म थे। संत महात्माओं का उनके यहाँ प्रातः आगमन होता रहता था और सेठ जी बड़े चाव से उन्हें अपना महल दिखाया करते थे।

एक दिन उन्होंने इसी तरह एक साधु को महल दिखाना आरम्भ किया। साधु जी सब चीजों को बड़े शान्त और निर्विकार भाव से देखते रहे, लेकिन पुस्तकालय के मध्य रखे एक ग्लोब (संसार के मानचित्र) को देखकर पूछ बैठे—"बच्चा, यह क्या है?"

सेठ जी ने कहा—'यह दुनिया का नक्शा है।'

"इसमें तुम्हारा देश कहाँ है?" साधु ने पूछा और सेठ जी ने उंगली के इशारे से बता दिया।

"इसमें तुम्हारी महानगरी कहाँ है?" साधु ने दूसरा प्रश्न किया और सेठ जी ने एक नन्हे से बिन्दु की ओर संकेत किया।

"बहुत छोटी है तुम्हारी महानगरी।" साधु ने आश्चर्य से कहा—"इसमें तुम्हारा महल कहाँ है? तुम कहाँ हो?" फिर कुछ रुक कर साधु ने कहा—"ब्रह्मांड के नक्शे में तुम्हारी यह दुनिया बहुत छोटी है। अथाह समुद्र में बालू का कण जैसा है तुम्हारा महल और समुद्र में नन्ही-सी बूंद जैसे तुम। जानते हो महाकाल की अनादि, अनन्त अवधि में कीट-पतंगों की गणना नहीं होती।" 卐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजाब-केशरी लाला लाजपत राय; एक जीवन झाँकी

—श्री अलगूराय शास्त्री

सन् १८५७ की आजादी की प्रथम क्रांति के आठ साल बाद अध्यापक राधा कृष्ण के घर गुलाब देवी जी की कोख से २८ जनवरी १८६५ को जिस नन्हे शिशु ने अपने नाना जी के गाँव ढडीके में जो पितृग्रह जसरावाँ से केवल ५-७ मील के फासले पर है, जन्म लिया। कौन जानता था कि बड़ा होकर वह पंजाब-केसरी बनेगा। माता, पति परायणा, गुरुओं की पवित्र वाणी का मनन करने वाली और पिता आजीवन विद्य और धर्म के जिज्ञासु थे।

लाला जी अपने अध्ययन काल में ही ब्रह्म-समाज की ओर खिंचे थे। कालोपरान्त यह आकर्षण देव-समाज के लिए हो गया। पीछे जाकर आर्य-समाज ने इन्हें अपनी ओर खींचा। यह आकर्षण जीवन पर्यन्त दृढ़ रहा। आर्य-समाज में प्रविष्ट कराने वाले साँईदास जी के सम्बन्ध में हम लाला जी की आत्म-कथा में पढ़ते हैं :—

"अपनी मातृ-भूमि तथा अपने देशवासियों में उनकी भक्ति के भाव निस्सन्देह बहुत ही महान् थे। हिन्दू जनता के प्रति, जिसकी अधोगति ने उनके हृदय को घायल कर रखा था और जिसके लिए वह दिन-रात व्याकुल रहते थे, उनमें अगाध प्रेम था। जब वह बोलते थे, तो स्पष्ट प्रतीत होता था कि उनके अन्दर ज्वाला धधक रही है जो उनके शरीर तथा आत्मा को भस्म किये डालती है। जब वह हिन्दू जाति की वर्तमान अधोगति का उसके गौरवमय अतीत से मुकाबिला करते थे तो उनके मुँह से सदा ठण्डी आह निकलती थी। हिन्दू जाति के लिए शुद्धानुराग, हिन्दू जनता के कल्याण की प्रबल भावना रखने वाले लाला सांईदास जैसे व्यक्ति मैंने बहुत ही कम देखे हैं। लाला सांईदास का यही विशेष गुण था कि उनके सम्पर्क में आने वाला व्यक्ति उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता था। उनके देशानुराग की यह भावना एक संक्रामक रोग जैसी थी, उनके समीप आने वाले को यह संक्रामक रोग लग ही जाता था।" लाला जी के इन शब्दों को हम स्वयं उन्हीं पर अक्षरशः घटित होते पाते हैं। लाला जी की दक्षिण-यात्रा के अवसर पर हृदय से फूट कर निकलने वाली इस कातरोक्ति से कि जीवन के अवसान के निकट आये क्षणों में उन्हें यदि दुःख था तो इस बात का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि जिस भारत-माता की गोद में जन्मे, जिसकी चादर मैली की, वह माता अब भी बन्धन में है।

आइए, दो क्षण हम इस अद्भुत जीवनी पर एक विहंगम दृष्टि डालें और इस प्रकार उनके व्यक्तित्व का थोड़ा विश्लेषण करें। यह मानना पड़ेगा कि लाला जी जन्मजात राजनीतिज्ञ नहीं थे। परिस्थितियों के प्रभाव से वह राजनीति के मैदान में उतर आये। प्रारम्भ में उन्होंने समाज-सुधार को ही अपनाया था। उनके अन्तःस्तल में दीन-दुखियों, पीड़ितों एवं शोषित वर्ग का कष्ट दूर करने, उनकी सेवा करने की उत्कट भावना थी। राजनीति में रहते हुए भी उनकी यह प्रवृत्ति जोर मारती रही। इस वृत्ति में उन्होंने महामना गोखले का बहुतांश में अनुसरण किया। लोक-सेवक-मण्डल की स्थापना कुछ इसी प्रकार हुई। राजनीति और शुद्ध समाज-सेवा का ऐसा सम्मिश्रण बिरले ही मनीषियों की जीवनी में देखा गया होगा। स्त्रियों तथा हरिजनों के लिए उनके मर्म में सर्वाधिक टीस थी। उनके उन्नयन के लिए उन्होंने अथक प्रयास किया। इसी कारण महात्मा गाँधी ने लाला जी को 'स्वयं एक संस्था' की संज्ञा दी थी। उन्होंने शिक्षण-संस्थाओं को खोला, दलितों को अपनाया, अपने आपको दीन-दुखियों के बीच उत्सर्ग किया।

गोखले ही की भांति उनकी न्याय और तर्क नीति उन्हें उग्र परिस्थिति में भी मध्य-मार्ग के अन्वेषण में प्रेरित करती रहती थी। यही कारण है कि लाला जी (१९०७) की सूरत-कांग्रेस-अधिवेशन की भारी पहेली बन गए। जहां उनके अध्यक्ष पद के लिए उनके नाम पर भारी लड़ाई छिड़ी हुई थी, वहाँ वह स्वयं संधि के लिए भरसक प्रयत्न कर रहे थे। जब संधि वार्ता टूट गई और फूट टल न सकी, वह उन्हीं लोगों के बीच जा बैठे, जो उनका विरोध कर रहे थे। [illegible] जी—जब कांग्रेस में फूट पड़ गई, तो सूरत के समरांगण में ही रचनात्मक कार्यों में इस प्रकार जुट गए जैसे कि कुछ हुआ ही न हो।

लाला जी के विचार में, जैसा कि उनके लेखों से स्पष्ट होता है, ऐतिहासिक व्यक्तियों की तीन मुख्य श्रेणियां हैं। उच्चकोटि में वे महा-पुरुष जो स्वार्थ-भावना से परे रह कर परोपकारार्थ कर्मरत रहे—बुद्ध, शंकराचार्य, ईसा, मुहम्मद, अशोक, नानक, दयानन्द, मार्क्स, गाँधी, मेजिनी, वाशिंगटन आदि की गणना वे इस कोटि में करते थे। निम्न कोटि के व्यक्ति उनके विचार में स्वार्थ-सिद्धि तथा महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिए बड़ी से बड़ी हिंसात्मक कार्यवाही करने वाले—चंगेज खाँ, तैमूर-लंग जैसे लोग थे। मध्यम श्रेणी में उन लोगों की गणना करते थे, जिनके कार्यों को प्रेरणा तो उनकी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा से प्राप्त होती थी परन्तु इससे जन-वर्ग एवं समाज का भी लाभ हुआ। वर्तमान युग के विद्यार्थी लाला जी के इतिहास के गहन अध्ययन की प्रवृत्ति का अनुकरण कर अत्यन्त ही लाभान्वित हो सकते हैं। स्वयं पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें 'तत्कालीन राष्ट्र-नेताओं में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की सबसे अधिक जानकारी रखने वाला' माना है।

बहुतों ने लाला जी के बार-बार पक्ष-परिवर्तन को एक पहेली माना है। मेरी समझ में पंजाब-केसरी के सम्बन्ध में ऐसी अनुदार भावना अनुचित है। इन प्रश्न पर विचार करने से पूर्व हमें इस पक्ष पर भी सोचना होगा कि लाला जी का जनता पर इतना प्रभाव क्यों और कैसे हुआ? मैं तो यही कहूँगा कि संस्कार-रूप से पिता जी से मिली ऐतिहासिक शोध की प्रवृत्ति और माता से प्राप्त सेवा-भावना उन्हें निरन्तर उस दिशा में [illegible] गई, जहाँ वर्तमान की प्रबलता का प्रभाव ही उन पर सर्वाधिक पड़ा। माण्डले में निर्वासन की अवधि बिताकर लौटने के बाद भारत के राजनीतिक रंग-मंच पर बाल (तिलक), पाल (विपिन चन्द्र पाल), लाल (लाला जी) की त्रिमूर्ति ही युवक समुदाय द्वारा पूजी जाती थी। लाला जी लोकमान्य तिलक के साथ 'रिसपान्सिव कोआपरेशन' के सिद्धान्त में विश्वास रखते थे। इसी कारण आरम्भ में असहयोग आन्दोलन के विरोधी थे, परन्तु जब उन्होंने उसका महत्व देखा तो इस आन्दोलन के भी अगुआ बने। बाद में जब मोतीलाल जी ने पार्लियामेण्टरी दलों की तरह सुसंगठित स्वराज्य-दल खड़ा किया और फिर राजनीति में माया की तरंगें आई तो लाला जी ने स्वतन्त्र कांग्रेस-दल बनाया। लाला जी ने साइमन-कमीशन के विरोध में अग्र-भाग लिया। इस प्रकार इन समस्त परस्पर विरोधी पक्ष परिवर्तनों के केन्द्र में हम लाला जी को जन-रुचि के साथ साथ चलने वाला, जनता की नाड़ी पहचानने वाला पाते हैं।

पंजाब का यह सिंह जब जन-समूह के बीच भाषण देता था, तो उसके सामने न भूत रहता था, न भविष्य की समस्या रहती थी। ठीक ही कहा गया है "वे राजनीति में सदा शुद्ध तत्काल के प्राणी रहे।" ईसा होना पसन्द न कर वे उनके अग्रदूत सन्त जॉन की तरह वर्तमान पर आरूढ़ रहकर विचार करने के आदी थे। परिणाम स्वरूप परिस्थितियों के अनुसार अपने को नियंत्रण में रखकर वह भावों पर काबू रखते थे और उन्हें व्यक्त करने की जो दैवी विशेषता उन्हें सिद्धि के रूप में मिली थी, वह अनोखी थी। उनके शब्द जन-समूह को हिला देते थे। जनता में एक नैतिक प्रवाह प्रस्तुत करते थे, श्रोताओं को आत्मसात् कर लेते थे। क्या कोई साहित्यिक इससे अच्छे शब्द चुन सकेगा :—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा मज़हब हक़ परस्ती है,
मेरी मिल्लत कौम परस्ती है।
मेरी इबादत खलक परस्ती है,
मेरी अदालत मेरा अन्तःकरण है।
मेरी जायदाद मेरी कलम है,
मेरा मन्दिर मेरा दिल है।
मेरी उमंगें सदा जवान हैं॥

—(बन्दे मातरम्—प्रथमांक)

उनकी वाणी में, बोलते समय की भाव-भंगिमाओं में, सामयिक मनोरंजन की सामग्री को प्रत्युत्पन्न मतित्व से भाषणों में ढालने की विलक्षण प्रतिभा थी। बोलते थे श्रोताओं को मुग्ध कर देने के लिए, जनता को भावों से ओत-प्रोत कर देने के लिए। पंजाब केसरी की उपाधि में रंचकमात्र अतिशयोक्ति नहीं है, यह उनकी सिंह-गर्जना को सुनकर स्पष्ट प्रतीत होता था।

पंजाब-केसरी की ६३ वर्षों की जीवनी को स्थूल रूप से हम तीन बराबर भागों में विभक्त कर सकते हैं। पहले भाग की चर्चा हम इस झांकी के आरम्भ में कर आये हैं। मध्यम भाग में हम लाल जी को एक प्रबल समाज-सेवी, शिक्षा-व्यसनी, ओजस्वी-वक्ता एवं सफल साहित्य निर्माता के रूप में देखते हैं। आर्य-समाज और डी० ए० वी० शिक्षा-संस्थाओं को उन्होंने त्याग, तप तथा अहेतुक प्रेम से निरन्तर सींचा। सन् १८९६ के उत्तर भारतीय अकाल में, सन् १८९९ के राजस्थानी दुर्भिक्ष में एवं १९०५ ई० के कांगड़ा भूकम्प में उन्होंने अविस्मरणीय सेवायें प्रदान कीं। १९०१ में भारतीय दुर्भिक्ष आयोग के समक्ष उन की साक्षी आज भी पठनीय है। सन् १९०५ ई० में स्थापित आर्य-समाज की सहायक-समिति आधुनिक सेवा-समिति का रूपान्तर मात्र थी। इस समिति ने कांगड़ा भूकम्प के अवसर पर दिव्य सेवायें प्रदान कीं। स्वयं लाला जी इस महत्वपूर्ण कार्य में अग्रणी रहे। सन् १९०७-८ ई० नें उसी प्रकार उन्होंने उत्तर, मध्य प्रदेश एवं गुजरात के भयंकर अकाल में बहुविध सहायता पहुँचाई। सन् १९०५ ई० में कांग्रेस के शिष्ट-मण्डल के सदस्य होकर, गोखले के साथ लाला जी विलायत गये और वहाँ की जनता तथा पार्लियामेण्ट के सदस्यों के सामने भारतीय राजनैतिक समस्याओं एवं उनमें सुधार के सुझाव प्रस्तुत किये। इसी यात्रा में कुछ दिनों के लिए अमरीका का भ्रमण भी कर आये। इस यात्रा से लाला जी को योरोपीय राष्ट्रों के आचार-विचार, उनके नैतिक स्तर का परिचय प्राप्त हुआ। उन्होंने यह भी समझ लिया कि स्वाधीनता की भीख न मांगने और न दी जाने की वस्तु है।

उनके विलायत से लौटते लौटते कांग्रेस में दो स्पष्ट दल हो गये—गरम (बाल-पाल-लाल) की प्रधानता में और नरम जिसके नेता गोखले, सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी आदि थे। बंग-भंग हुआ। १९०७ में पंजाब में किसान आन्दोलन जोर पकड़ रहा था। भू-विषयक नये कानूनों से कृषकों में बड़ा असन्तोष फैल रहा था। गवर्नर के नहरी आबादियों के कानून ने उस इलाके में खलबली पैदा कर दी। शताब्दी के प्रारम्भ से ही लाला जी और उनके मित्रों द्वारा संचालित 'पंजाबी' पत्र पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया और अनीतिपूर्ण दण्ड सुनाया गया। पंजाब के घर घर में जन-जागरण की ज्वाला देख सरकार घबरा उठी और १८१८ के मुर्दा कानून की धारा ३ लगा कर लाला जी को माण्डले में निर्वासित कर दिया। पार्लियामेण्ट के उदार दलीय सदस्यों के निरन्तर विरोध के कारण यह निर्वासन ६ महीनों से भी कम अवधि का रहा। इस प्रकार माण्डले से लौटने तक इस महान आत्मा की जीवनी का मध्य भाग शेष होता है।

लेखन-कला का शौक तो १९०० ई० के पूर्व से ही स्पष्ट होचुका था। १८९०-१९०० ई० में प्राचीन भारत पर एक छोटीसी पुस्तिका प्रकाशित हो चुकी थी। लोक-प्रिय 'पंजाबी' पत्र भी निकल रहा था। उसमें लाला जी प्रायः ही लिखा करते थे। माण्डले के निर्वासन काल में अध्ययन क्रम और बढ़ा। इस अवधि में बर्मा-वासियों के सम्बन्ध में एक पुस्तक, उर्दू में एक उपन्यास, समाज-सुधार पर अंग्रेजी में एक निबन्ध तथा गीता का संदेश नामक लेख भी लिखे गये। निर्वासन की कहानी भी मर्मस्पर्शी प्रांजल भाषा में लिखी गई।

सन् १९०८ में देश की स्थिति से खिन्न लालाजी दुबारा विलायत गये और देश के विषय में पर्याप्त प्रचार किया। सन् १९०९ में लौटने के उपरान्त पंजाब हिन्दू-सभा की स्थापना की। सन् १९१० में वह पुनः इंगलैण्ड अपने रुग्ण पुत्र को लाने गये, जो वहीं पढ़ता था। १९११ ई० में इस बालक की मृत्यु से लाला जी के हृदय को बड़ा आघात लगा। सन् १९११-१२-१३ ई० शिक्षा संस्थाओं के प्रतिष्ठायन, राजनैतिक मंत्र के दूषित वातावरण में प्रकाश के अन्वेषण और प्रवासी भारतीयों की सेवा के भगीरथ प्रयास की कथाओं सेभरे है। सन् १९१४ से १९२० ई० की अवधि में लाला जी पुनः एक डेपुटेशन के सदस्य के नाते विलायत गये और लौटने की अनुमति न पाकर जापान, विलायत और अधिकांश में अमरीका में प्रचार कार्य करते रहे। लाला जी विदेश ही में थे जब पंजाब का जलियांवाला बाग जैसा भीषण लोमहर्षी हत्याकाण्ड हुआ।

सन् १९२० ई० के बाद असहयोग का वातावरण गहरा होता जा रहा था। लाला जी भी इस आन्दोलन में कूद पड़े। सन् १९२० के कांग्रेस के विशेष अधिवेशन की अध्यक्षता लाला जी ने की। दिसम्बर १९२१ ई० में लाला जी को पुनः गिरफ्तार किया गया। उन्होंने गिरफ्तारी से पूर्व तिलक स्कूल आफ पालिटिक्स को लोक सेवक मण्डल का रूप दे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया जो आजीवन सदस्यों का एक सुदृढ़ संगठन आज भी है। उन्हें डेढ़ साल का कारावास एवं ५००) रु० जुर्माना हुआ। इस अवसर पर उनकी देश और पंजाब के नाम की अपील देश-प्रेम का परम-निर्मल उदाहरण है। कुछ समय बाद यह छोड़ दिये गये और फिर कुछ ही समय बाद दो वर्ष के कारावास से दण्डित हुए। इस कारावास में लाला जी से काफी अन्यायपूर्ण व्यवहार अधिकारियों ने किया। उनका स्वास्थ्य बुरी तरह गिर गया। सन् १९२३ ई० के अगस्त मास में उनके गिरते हुए स्वास्थ्य से भयभीत होकर नौकरशाही ने उन्हें रिहा किया।

सन् १९२५ में लाला जी कलकत्ते में हिन्दू-महासभा अधिवेशन के अध्यक्ष थे। इस मंच से भी उन्होंने साम्प्रदायिकता का विरोध ही किया। उन्हीं के सत्प्रयास का यह परिणाम था कि हिन्दू-महासभा ने सन् १९२६ में अपनी ओर से उम्मीदवार न खड़ा करने का निश्चय किया।

सन् १९२५ में पहले तो स्वराज्य-दल में सम्मिलित हुए और केन्द्रीय परिषद में उसके उप-प्रधान बने। दल की 'वाक आउट' नीतियों से असन्तुष्ट होकर वह इससे अलग हो गये और स्वतन्त्र कांग्रेस-दल की स्थापना की। इस नए दल की तरफ से निर्वाचित होने के उपरान्त केन्द्रीय असेम्बली में 'शान्ति रक्षा बिल' और साइमन कमीशन के विरोध में दिये गये उनके ओजस्वी भाषण विशेष रमणीय हैं।

३० अक्टूबर सन् १९२८ ई० को साइमन कमीशन के बहिष्कारार्थ जनता काले झण्डों का जुलूस निकाल रही थी। १४४ धारा तो सरकार लगा ही चुकी थी। पंजाब-केसरी अन्य नेताओं के साथ-साथ जुलूस के आगे आगे थे। एकाएक पुलिस की लाठियां बरसने लगीं, अकारण ही। स्वयं सीनियर सुपरिन्टेण्डैण्ट पुलिस श्री स्काट एवं उनके सहायक श्री साण्डर्स पशुबल से लाठियां चला रहे थे। जर्जर स्वास्थ्य एवं छोटे कद के पंजाब-केसरी ने इस प्रकार उन लाठियों को अपने शरीर पर झेला, आपने जनता को लाठियों का प्रत्युत्तर देने की अनुमति न दी। रायजादा हंसराज एवं कतिपय अन्य साथियों ने चेष्टा तो की कि लाठियों का प्रहार उन पर पड़े, न कि लाला जी पर, परन्तु अधिकांश प्रहार लाला जी पर ही हुआ। डा० गोपीचन्द भार्गव जो उस समय वहीं थे, आश्चर्यचकित थे कि आप चोटों के कारण वहीं क्यों नहीं गिर पड़े। लालाजी के ये शब्द "हम पैर की गिरी एक एक चोट-ब्रिटिश साम्राज्य के कफन में एक एक कील सिद्ध होगी।" सच होकर रही।

उन चोटों का घायल हमारा प्यारा लाजपत १७ नवम्बर सन् १९२८ के प्रातः ७ बजे हमें बिलखता छोड़, अमर निद्रा में चला गया। आज वह नौकरशाही भी न रही। हम आज उसी अमर शहीद की जन्म शताब्दी मना रहे हैं और उस हुतात्मा को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित कर रहे हैं।

बोलती खबरें

अंग्रेज और अंग्रेजियत

अंग्रेजों और अंग्रेजियत के बारे में गाँधी जी और नेहरू जी के मतों में अन्तर था। गाँधी जी से एक बार जब इस संबंध में पूछा गया, तो उन्होंने कहा था—"जवाहरलाल जी चाहते हैं कि अंग्रेज यहां से चले जाएँ और अंग्रेजियत बनी रहे और मैं चाहता हूँ कि अंग्रेज चाहे हमारे देश में रहें, लेकिन हमारे देश से अंग्रेजियत चली जानी चाहिए।"

गाँधी जी से यह जिज्ञासा श्री कमलनयन बजाज ने लाहौर कॉंग्रेस के बाद उनके वर्धा आने पर की थी।

मां का आशीष

विल्सन जोन्स, जिन्होंने हाल ही में आकलैण्ड में विश्व अमेच्योर विलियर्ड प्रतियोगिता जीती थी उक्त प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए न्यूजीलैण्ड जाने को तैयार न थे क्योंकि उनकी माता श्रीमती ग्लेडेस डायस जोन्स बीमार थीं, लेकिन उनकी माता ने कहा—"तुम अवश्य जाओ क्योंकि तुम्हारी विजय निश्चित है। मेरी खातिर इस यात्रा को रद्द न करो।"

आखिरकार विल्सन जोन्स को अपनी माता की बात माननी पड़ी और वे तुरन्त विमान द्वारा न्यूजीलैण्ड के लिए रवाना हो गये। जोन्स ने जिस समय विश्व विलियर्ड प्रतियोगिता जीती उस समय उनकी माता जीवन और मौत के बीच संघर्ष कर रही थीं। उन्हें तुरन्त ही जोन्स की विजय की सूचना दी गई। यह सूचना पाकर उन्होंने अपने पति से कहा कि "मेरी इच्छा पूरी हो गई है।" जोन्स के पूना पहुंचने के कुछ ही घंटे पूर्व उनकी माता स्वर्ग सिधार गई।

मिलावटी दूध बेचने पर

आगरा के एक मजिस्ट्रेट ने एक दुग्ध विक्रेता को मिलावटी दूध बेचने के आरोप में ८ वर्ष की सख्त कैद और ६,००० रु० जुर्माने की सजा सुनाई। जुर्माना न देने पर कैद की सजा में २ वर्ष की और वृद्धि हो जाएगी। मिलावटी दूध बेचने पर दी गई यह सजा अब तक की सजाओं से अधिक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बम्बई-मद्रास के भूतपूर्व गवर्नर, केन्द्र के व्यापार-वाणिज्य-मंत्री, पाकिस्तान के राजदूत, मनस्वी विचारक और लेखक श्री श्रीप्रकाश जी का महत्वपूर्ण प्रश्न—

कांग्रेस-अध्यक्ष या केन्द्रीय सरकार?

देश के राजनीतिक क्षितिज पर कुछ ऐसी प्रवृतियों का उदय हो रहा है जिन्हें यदि शीघ्र ही रोका न गया तो ये भयानक रूप धारण कर लेंगी और हमारे लोकतन्त्र के लिए निश्चित रूप से खतरा पैदा हो जाएगा। महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि संगठन तथा उसके टिकट पर निर्वाचित विधायकों एवं मन्त्रियों के बीच किस प्रकार के सम्बन्ध अपेक्षित हैं!

जहाँ तक मैं जानता हूँ, लोकतन्त्रीय देशों में दल के गैर-सरकारी नेता सरकार के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों के निर्णयों को सक्रिय रूप से प्रभावित करने की चेष्टा नहीं करते, यद्यपि सरकार के बाहर और भीतर के लोगों तथा संसद का एक-दूसरे के साथ सम्पर्क बना रहता है। यह इसलिए आवश्यक होता है कि जनमत के साथ विश्वासघात न हो सके और चुनाव के समय किये गये वायदे पूरे किए जा सकें, किन्तु कम्युनिस्ट देशों में वास्तविक सत्ता सरकार के हाथ में न होकर उससे बाहर पार्टी के नेता के हाथ में रहती है। सरकारी पदों पर आसीन व्यक्ति सलाह तथा मार्ग दर्शन के लिए हमेशा पार्टी नेताओं पर निर्भर रहते हैं।

यह समय है जब हमें निर्णय करना है कि हम अपने देश में कैसी व्यवस्था रखना चाहते हैं? जहां तक हमारे महान् प्रधानमन्त्री स्व० श्री नेहरू की बात है, वे ऐतिहासिक कारणों से तथा अपने महान् व्यक्तित्व के नाते वास्तव में कांग्रेस सरकार तथा संगठन दोनों के प्रधान थे। उन्हीं की कृपा पर किसी का राष्ट्रपति, राज्यपाल, राजदूत, किसी राज्य का मुख्य मन्त्री अथवा कांग्रेस का पदाधिकारी होना निर्भर था। उनकी मृत्यु के पश्चात् सत्ता दूसरे लोगों के हाथ में आ गई है और हमें निश्चय करना है कि भविष्य में हम कैसा ढांचा चाहते हैं।

मेरे मस्तिष्क में यह प्रश्न बड़ी तेजी के साथ घूम रहा है, क्योंकि मैं देखता हूँ कि वर्तमान समय में कांग्रेस अध्यक्ष विशेष प्रभावों का प्रयोग कर रहे हैं। व्यक्तिगत रूप से मैं श्री कामराज का बहुत सम्मान करता हूं। मद्रास में तीन साल तक मेरा और उनका साथ रहा जबकि वे वहाँ के मुख्य मन्त्री थे और मैं राज्यपाल। वे राज्य सरकार के सर्वाधिक सफल शासक थे। उन्होंने सिद्ध कर

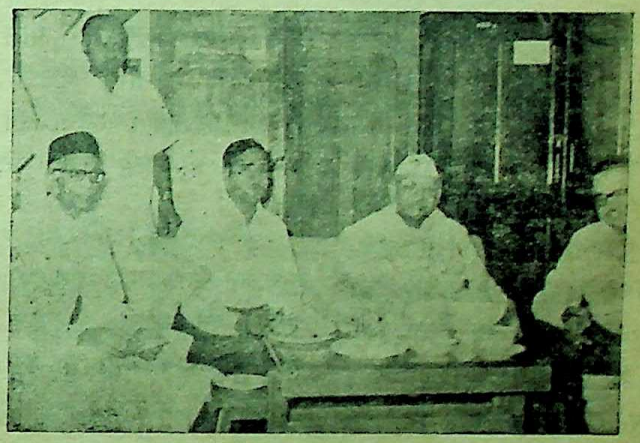

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया कि शासन के नाजुक से नाजुक मामले निबटाने के लिए अंग्रेजी भाषा की जानकारी आवश्यक नहीं है। जनता से उनका सम्पर्क बना रहा। स्वेच्छा से अपना सरकारी पद छोड़कर वे कांग्रेस पार्टी के अध्यक्ष बने। मैं उनकी बड़ी इज्जत करता हूँ, परन्तु फिर भी बाध्य होकर कुछ कहना पड़ता है।

स्व० प्रधानमन्त्री के निधन के बाद मुझे मालूम हुआ कि कांग्रेस अध्यक्ष ही वस्तुतः नये प्रधानमन्त्री के निर्माता हैं। पंजाब के मुख्यमन्त्री का चुनाव कराने में उनका बहुत बड़ा हाथ था। इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने स्थिति को बहुत सावधानी से संभाला, किन्तु प्रश्न यह है कि क्या ऐसे मामलों में पार्टी के अध्यक्ष को खुले रूप में इतना आगे बढ़ना चाहिए अथवा नहीं? यह बात जरूर है कि अन्य लोकतन्त्रीय देशों में ऐसे मामलों में गैर सरकारी नेताओं की सलाह ली जाती है, किन्तु यह सब गोपनीय ढंग से होता है और सम्बन्धित व्यक्ति खुलकर सामने नहीं आते। बाद में खबर आई कि कांग्रेस अध्यक्ष ने उत्तरप्रदेश की मुख्यमन्त्री को आदेश दिया है कि वित्तमन्त्री का लम्बे समय से अधर में लटका त्यागपत्र स्वीकार कर लिया जाए। पाण्डीचेरी की जनता को उन्होंने ही आश्वासन दिया कि उनकी विशिष्ट स्थिति में हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा। सरकार से अधिकार प्राप्त किये बिना वे ऐसा कह नहीं सकते थे। ऐसे मामले में लेफ्टिनेण्ट गवर्नर को ही बोलना चाहिए था। कांग्रेस-अध्यक्ष ने ऐसा वक्तव्य देकर सरकार को अपने दृष्टिकोण से वचनबद्ध किया, प्रजातंत्र की दृष्टि से यह उचित नहीं था।

अखबारों में ऐसी खबरें पढ़ने को मिलती हैं कि मैसूर-महाराष्ट्र सीमा-विवाद की रिपोर्ट स्वराष्ट्रमन्त्री तथा अन्य उत्तरदायी उच्चाधिकारियों द्वारा एक साथ ही प्रधानमन्त्री और कांग्रेस-अध्यक्ष के पास भेजी गई। काश्मीर और पंजाब तथा अन्य स्थानों के विभिन्न मामलों से सम्बन्धित रिपोर्टों का भी यही हाल है। ऐसा गैर-सरकारी व्यक्तियों द्वारा नहीं, बल्कि सरकारी पदों पर आसीन बहुत जिम्मेदार व्यक्तियों द्वारा किया जाता है। मैं बड़ी गम्भीरता के साथ पूछता हूँ, क्या यह ठीक है?

उच्च सरकारी पदों पर काम करने वाले व्यक्ति सरकार से बाहर के बड़े या छोटे लोगों की राय-सलाह अगर लेते हैं, तो इस पर कोई आपत्ति नहीं की जा सकती, किन्तु ऐसी मन्त्रणायें व्यक्तिगत रूप से ली जाएँ। उनका इस प्रकार सार्वजनिक प्रचार न किया जाए, जैसा कि प्रधानमन्त्री और कांग्रेस-अध्यक्ष की मंत्रणाओं का किया जाता है। सभी व्यवहारिक मामलों में प्रधानमन्त्री तथा कांग्रेस को औपचारिक-रूप से समान धरातल पर रखा जा रहा है। कांग्रेस कार्य समिति तथा कांग्रेस महासमिति की कार्यवाहियों की जांच करने पर मालूम होता है कि सरकार से बाहर के कांग्रेसी नेता शासन सम्बन्धी मामलों में इस अधिकार के साथ बोलते हैं, मानों वे सरकार में हों। इतना ही नहीं, प्रायः मन्त्रियों को उनसे निर्देश लेने पड़ते हैं।

मैं अत्यन्त निर्भीकता के साथ अपने मन का भय प्रकट कर देना चाहता हूँ। मुझे याद आता है, एक बार स्व० प्रधानमन्त्री ने मैत्रीपूर्ण ढंग से बातचीत करते हुए मुझ से कहा था कि भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के एक चोटी के नेता ने कांग्रेस के तीव्र गति से विघटन पर अपनी चिन्ता प्रकट की है। कम्युनिस्ट नेता ने यहाँ तक कहा था कि उसकी अपनी पार्टी अभी सत्ता ग्रहण करने के लिए तैयार नहीं है। वर्तमान संदर्भ में यह बातचीत अत्यन्त बलपूर्वक मेरे दिमाग में आती है। यह निश्चित है कि वयस्क मताधिकार वाले हमारे लोकतन्त्रीय देश में कांग्रेस पार्टी की भांति ही कम्युनिस्ट पार्टी भी एक दिन सत्ता प्राप्त कर सकती है।

कम्युनिस्ट लोग आज उतनी ही निःस्वार्थता और मनोयोग के साथ काम कर रहे हैं, जिस प्रकार हम कांग्रेसी अतीतकाल में करते थे। हमारी ही भांति एक दिन वे भी मतदाताओं का समर्थन प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं। यदि वे सत्ता रूढ़ हो जाएँ और यदि उनके गैर-सरकारी नेताओं को कम्युनिस्ट मंत्रियों के निर्णय प्रभावित करने का अधिकार रहे, तो यह भी संभव है कि रूस और चीन जैसे विदेशी राष्ट्रों के आदेश हमारे मुल्क पर लादे जाएँ। इस बात की आशंका है कि कम्युनिस्ट लोग अपने विदेशी सलाहकारों और स्वामियों द्वारा दिखाये गये रास्तों पर चलकर देश का सम्पूर्ण जीवन छिन्न-भिन्न कर दें।

मेरा निवेदन है कि मुझे गलत न समझा जाए। एक सच्चे कांग्रेस कर्मी के नाते मुझे इस बात का हर्ष है कि सत्ता के सूत्र कांग्रेस के हाथ में हैं, किन्तु मैं समझता हूँ कि राजनीतिक चित्र बदल भी सकता है। अन्य दल भी शासनारूढ़ हो सकते हैं। अतः मेरे मित्रों को मेरा दृष्टिकोण समझने का प्रयास करना चाहिए। मुझे विश्वास है कि सरकार के अन्दर प्रशासन की बागडोर सम्भालने वाली और शासन से बाहर रहकर संगठन का नियमन करनेवाली दोनों शाखाओं के जागरूक नेता पारस्परिक विचार-विमर्श द्वारा इस समस्या का समुचित हल निकाल लेंगे, जिससे हमारे लोकतन्त्र की जड़ें मजबूत हो सकें और ४४ करोड़ देश बन्धुओं का हित साधन भी सरलता से हो सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक समय था जब यातायात के साधन नहीं थे और देश के भीतर भी एक स्थान से दूसरे स्थान तक जा पहुँचना कठिन था। उस समय भी यह महान भारत अपने तीर्थों के माध्यम से जुड़ा रहा।

स्वतन्त्रता के बाद राष्ट्रीय महत्व के अनेक निर्माण हुए हैं और आगे भी तेजी के साथ हो रहे हैं। उनके ज्ञान एवं दर्शन का महत्व भी तीर्थों से कम नहीं है। ये तीर्थ देश के विभिन्न राज्यों में स्थित हैं।

'अपने भारत को जानिए'—स्तम्भ में प्रकाशित 'नया जीवन' की इस नई लेख माला का यही उद्देश्य है कि हम प्रदेशों के माध्यम से पूरे देश को जानें। इस शृंखला की पांचवीं कड़ी के रूप में यहाँ प्रस्तुत है 'मध्य प्रदेश' और प्रस्तोता हैं हिन्दी के सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय पत्रकार पंडित अवनीन्द्र कुमार जी विद्यालंकार।

मध्य प्रदेश

श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार

१ नवम्बर १९५६ से पहले भारत में इस नाम का कोई राज्य न था। भारतीय इतिहास में भी इस नाम का कहीं पता नहीं चलता। इसका यह अर्थ नहीं कि आज जिसको मध्य प्रदेश नाम से कहा जाता है वह अज्ञात था। बुद्ध के समय के सोलह जनपदों में से अवन्ती भी एक जनपद था। प्रद्योत वंश की राजकुमारी वासवदत्ता और उदयन की प्रेम कहानी का वर्णन तो भारत के नाटकों और मेघदूत में भी किया गया है और कहा गया है कि गाँवों के लोग इसकी कथा बड़े प्रेम से सुनते और कहते हैं। तब अवन्ती नाम था। इसका एक भाग महाकौशल था जो १ नवम्बर १९५६ से पहले विदर्भ के साथ मिल कर मध्यप्रदेश कहलाता था। अशोक का बनाया सांची का स्तूप भोपाल से कुछ दूर है और बौद्धों का एक तीर्थ स्थान और पर्यटकों के लिए रमणीय स्थान है। विदिशा इस से थोड़ी ही दूर है, जो कभी एक राजधानी थी और पुष्यमित्र ने अश्वमेध यज्ञ के घोड़े की रक्षा के लिए अग्निमित्र को विदिशा ही पत्र लिखा था कि वह वसु मित्र को शीघ्र भेज दे। इस के ही समीप उज्जैनी है जहाँ से चन्द्रगुप्त मौर्य का बनाया पश्चिमी पथ होकर भृगुकच्छ (भड़ौच) पहुंचता था। उज्जैन में ही उस समय के ज्ञात विश्व में विख्यात विश्वविद्यालय था। सुदामा-कृष्ण के गुरु का यही आवास था। महाकाल का मन्दिर यहीं है जिसको कालिदास और भास ने अमर कर दिया है। विक्रम सम्वत् का संस्थापक शकारि विक्रमादित्य इसी सिप्रा नदी के किनारे जल भरता था, प्राचीन समय से यह प्रसिद्ध है। ग्वालियर का किला मुगलों के समय शाही कैदियों का बन्दी घर था। मालवा की भूमि प्यार और रंग-रंगीलियों की भूमि है। मांडू दुर्ग बाजबहादुर के उस प्रेम की कहानी को कह रहा है, परन्तु यह सब अलग अलग था। नर्मदा और चम्बल ने इनके वास्ते 'मणि-सूत्र' का काम नहीं किया था।

नर्मदा ही भारत की एक ऐसी बड़ी नदी है जो बंगाल की खाड़ी में न गिर कर अरब (सिन्धु) सागर में गिरती है। यह प्रदेश भावी भारत की समृद्धि, सम्पन्नता और श्री का केन्द्र है। आज भी यह महाराष्ट्र और गुजरात को अन्न दे रहा है। यह लघु भारत है। भारत का केन्द्र यही है और यह मानना कोई भावुकता नहीं है कि भविष्य में भारत का हृदय होगा। इसके बलशाली रहते हुए भारत की एकता के छिन्न-भिन्न होने का कोई भय नहीं है। भारत का मानचित्र देखिए, यह राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, आंध्र और महाराष्ट्र एवं गुजरात इन सात प्रदेशों के साथ जुड़ा हुआ है और इनसे घिरा हुआ है। यह प्रदेश इन सातों को अपने यहां बसाने को बुला रहा है। यह इन सबको रक्त देगा।

क्षेत्र फल में यह राज्य भारत के सब राज्यों से बड़ा है। १७१२१७ वर्ग मील पर इसकी जनसंख्या केवल ३,२३,७२,४०८ ही है। प्राकृतिक भूगोल की दृष्टि से सिहोरा (जबलपुर के समीप) भारत का केन्द्र स्थल है। भारत की एकता को यह प्रदेश दृढ़ करता है। यह हिन्दी की शक्ति का प्रतीक है। १९५१ की जन संख्या के समय इस प्रदेश के लोगों ने ३७७ बोलियाँ अपनी लिखाई थी। हिन्दी यहाँ एकता का सूत्र है। हिन्दी का अभिमान और गर्व यहाँ पुष्ट और पुष्ट होता है। हिन्दी जन-एकता की भाषा है यह दावा सार्थक होता है। इस प्रदेश के सात व्यक्तियों में से एक व्यक्ति वन-वासी जातियों का है। भारत में यदि आर्य बाहर कहीं से आए, तो उन्होंने द्रविड़ों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को नहीं, मांडो और भीलों को खदेड़ा और वे आज भी मुंडा, बैगा, गोंड, मारिया, मंडिया, भाथरा और अन्य नामों से जंगलों और हिमालय से भी पुराने विंध्यपर्वत की खोहों में बसे हुए हैं। इन्होंने पराजय नहीं मानी और यहाँ वनों और पहाड़ों नें छिपकर प्रतिरोध जारी रखा। ये ही विशुद्ध भारतीय भावना से अनुप्राणित हो, प्रान्तीयता की भावना से युक्त हो, भारत की स्वाधीनता की रक्षा करेंगे। आज तक इस प्रदेश के किसी व्यक्ति को केन्द्रीय मन्त्रीमण्डल में स्थान नहीं मिला है (डा० कैलाशनाथ काटजू को मध्यप्रदेश का नहीं माना जा सकता। इलाहाबाद में उन्होंने अपना नया घर बनाया है।)

भूगर्भ शास्त्रियों की दृष्टि से विंध्यपर्वत प्राचीनतम है। उनके शास्त्र का प्रारम्भ ही 'मोडवाना युग' से होता है। यह प्रदेश धन-धान्य सम्पन्न होने पर भारत का वस्तुतः हृदय सिद्ध होगा। यूरोप में जो स्थान छोटे बेलजियम-लक्समबर्ग का है, वही बृहत्तम मध्यप्रदेश का भारत में होगा। भारत का नया नेतृत्व यहां उत्पन्न होगा। अखबारी कागज 'नेपा' (नेपानगर में) यहीं तैयार होता है। इस का कच्चा लोहा जापान की लोहे की भट्टियों को काम देता है, इसके जंगलों का टीक (सागवान) बर्मी टीक का मुकाबला कररहा है। विंध्य ने आज तक अगस्त्य को वापस लौटने का मार्ग नहीं दिया। यह भविष्य में भी भारत को संयुक्त रखेगा। इस प्रदेश की महिमा का गान नए युग के पुराण करेंगे।

विंध्य प्रदेश, मध्य भारत, भोपाल और महाकौशल इन चार को मिलाकर इस विशाल राज्य का निर्माण किया गया है। इससे विदर्भ को अलग रख कर न केवल भारतीय भावना का तिरस्कार किया गया अपितु विदर्भ से फलने-फूलने का अवसर छीन लिया गया। मराठों के आत्माभिमान को सन्तुष्ट करने के लिए विदर्भ इससे अलग रखा गया, किन्तु इसी के कारण नर्मदा, ताप्ती, महानदी, चम्बल और वेनगंगा से सिंचित प्रदेश एक हुआ। यह पठार औसतन १६०० फुट ऊँचा है। नर्मदा और ताप्ती की घाटी इसका अपवाद है। मेघदूत का अमर काव्य इसी प्रदेश में रचा गया। कालिदास का मालव-मयूर के प्रति प्रेम आज भी आल्हादित करता है। इस युग में "भारतीय आत्मा" की वाणी यहीं मुखरित हुई। नेताजी का विद्रोह यहीं जन्मा।

१ नवम्बर १९५६ को इस प्रदेश का जब जन्म हुआ, तो सुनेल टप्पा इसमें से काट दिया गया, पर इसके बदले सिरोंज का इलाका (कोटा, राजस्थान) मिल गया। आठ साल बाद भी इस प्रदेश में एकात्मता का उदय नहीं हुआ। यह आज भी ग्वालियर, इन्दौर, रायपुर, जबलपुर, विलासपुर, रींवा, टीकमगढ़, भोपाल, उज्जैन की भाषा में सोचता और कार्य करता है। इस कारण यह अपने विकास की उच्च सीमा तक नहीं पहुँचा है। सुरेन्द्रनाथ बनर्जी के विषय में नवीन भारत के लेखक सर हेनरी काटन (असम के चीफ कमिश्नर और कांग्रेस के एक अध्यक्ष) ने लिखा था कि उनकी बात को कलकत्ता और मुलतान में एक समान आदर और सम्मान के भाव से सुना जाता है और माना जाता है। मध्यप्रदेश में अभी तक ऐसा कोई उदय नहीं हुआ। फिर हाईकोर्ट और दफ्तर एक स्थान पर नहीं है। हाईकोर्ट इन्दौर में है। सब दफ्तर भी एक स्थान पर नहीं हैं। फिर इसके सब केन्द्रों के बीच यातायात की सुविधा सुलभ नहीं है।

जिस वस्तर का पट्टा 'इम्पीरियल कैमिकल वर्क्स कम्पनी' को निजाम द्वारा दिए जाने के भय से सरदार पटेल ने पाकिस्तान का बनाना स्वीकार किया था, वह आज भी उपेक्षित है। ठीक है, वहाँ दण्डकारण्य में शरणार्थी बसाये जा रहे हैं, परन्तु भोपाल से उसका सीधा सम्बन्ध नहीं है। रायपुर, जबलपुर, सागर, उज्जैन, इन्दौर और ग्वालियर भोपाल और विलासपुर, रीवां के विश्वविद्यालय जब कभी एकसूत्रित होंगे, तब शायद नया भारतीय नेतृत्व भी उत्पन्न हो जो पूर्वाभिमान और प्राचीन दृष्टि कोण से मुक्त हो जो कि आज केन्द्रीय मन्त्रीमण्डल का एक भारी दोष है और अभिशाप है।

मध्य प्रदेश की आबादी सघन नहीं है। प्रति वर्गमील १८९ व्यक्ति ही बसते हैं। यद्यपि इसकी जनसंख्या की वृद्धि का प्रमाण २४.२५ प्रतिशत है, परन्तु भविष्य में उद्योगों के विकसित होने पर इस की जनसंख्या १५-२० करोड़ तक पहुंच जायगी। सोवियत रूस में जो स्थान यूक्रेन का है, वही इसका होगा, पर यह एक भारत राष्ट्र का निर्माण करने वाला होगा। भाषा और धर्म की दृष्टि से इस के लोग इस प्रकार विभक्त हैं—

भाषा की दृष्टि से

हिन्दी	१९.९६५९७२
उर्दू	३६५९६९
मराठी	५९२८२१
राजस्थानी	६९६६४४
मोंडी	११४०००
अन्य	१२८०४३

धर्म की दृष्टि से

हिन्दू	२४.०५३२७६
सिख	३९९७७
मुसलमान	१०४०३४१
ईसाई	९१८०३

इस प्रदेश में स्त्रियों की कमी है। प्रति हजार पुरुषों के पीछे स्त्रियों की संख्या ९५५ है। यहां साक्षरता १६.९० प्रतिशत (२०.७ प्रतिशत पुरुष और ६.६ प्रतिशत स्त्री) हैं। शिक्षा की दृष्टि से विशेषतः स्त्री-शिक्षा की दृष्टि से, यह केवल राजस्थान से ही आगे है, परन्तु प्राथमिक शिक्षा निःशुल्क और वाधित होने के बाद से शिक्षा का प्रसार तेजी से हो रहा है। इसमें भी यातायात के साधनों की कमी भारी रुकावट है। रेलवे से भी यह उपेक्षित है। हां, बस-सर्विस है। यद्यपि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही एक प्रदेश है, जहाँ संगीत का (खैरागढ़) भी एक विश्वविद्यालय है। २५२४९ प्राइमरी स्कूलों में १३७०२०८ छात्र शिक्षा पा रहे हैं।

इस प्रदेश की राजस्व आय भावी सम्भावनाओं को प्रकट नहीं करती। राजस्व आय ७८६८·७३लाखरु० (१९६१-६२) थी। आय के मुख्य स्रोत थे—

भू राजस्व	८८८.३९ लाख रु०
जंगल	१००३·३३ लाख रु०
आबकारी	१०६८·३७ लाख रु०
बिक्रीकर	९२०·५० लाख रु०

इस प्रदेश का व[illegible] व्यय ८३६१.४५ लाख रु० था। व्यय की मुख्य मदें हैं—

शिक्षा	१८३९·८४ लाख रु०
प्रशासन	४३२·१३ लाख रु०
पुलिस	७४०·३१ लाख रु०
स्वास्थ्य	१०९१०·५४ लाख रु०

१९६२-६३ का आय-व्यय था—

आय	८३२६·२८ लाख रु०
व्यय	८३१३·५६ लाख रु०

इस प्रदेश के ७८ प्रतिशत लोगों की आजीविका का साधन खेती है। इस प्रदेश की वनसम्पत्ति प्रचुर है। प्रदेश का ३० प्रतिशत भाग वन से आच्छादित है और वनों से १० करोड़ रु० की वार्षिक आय होती है। बस्तर वनमय है। इसकी भोपाल राजधानी है। इस प्रदेश में पशुओं की भी कमी नहीं है २४७७-४०६१ (१९६०) पशु हैं।

इसकी भावी सम्भावनाओं का स्रोत इसकी खानें हैं। खनिज सम्पत्ति इसके विस्तृत क्षेत्र में बिखरी पड़ी है। कोयला, लोहा, बाक्साइट, मैंगनीज, चूने का पत्थर, चीनी मिट्टी, स्टेराइट, संगमरमर, लाल और पीला ओचरेज, ग्रैफाइट, अभ्रक, ताँबा आदि २०० मील में विद्यमान है। ५०० खानों में काम हो रहा है।

बैलाडेला की लोहे की खान विश्वभर में समृद्धतम मानी जाती है। इसका ही कच्चा लोहा जापान निर्यात किया जा रहा है। भिलाई में इस्पात का कारखाना है। इसकी क्षमता शीघ्र ही २० लाख टन की जायगी। इस्पात का और एक कारखाना खुलने वाला है।

उद्योग की दृष्टि से यह प्रदेश सूती वस्त्र, रेयन और नकली रेशम के लिए प्रसिद्ध है। सूती मिल के केन्द्र हैं इन्दौर, उज्जैन, ग्वालियर। १२५५४ करघे हैं और ५१३५८० तकुए हैं। कपड़े की १९ मिलें हैं। कीमोर (कटनी) में सीमेंट की सबसे बड़ी फैक्टरी है। नेफा कागज अखबारी है और ३०००० टन प्रतिवर्ष तैयार होता है। भोपाल में हैवीइलेक्ट्रिक का कारखाना है। इसकी चँदेरी की साड़ियाँ भारत भर में प्रसिद्ध हैं। यह हाथ करघे पर तैयार होती हैं। प्रतिवर्ष यहां ९०३०००० टन अन्न-चना उत्पन्न होता है। फलों के लिए यह प्रदेश प्रसिद्ध नहीं है। अंगूर लगाने की यहाँ अभी तक कोशिश नहीं की गई है। यह अपने शरीफे से ही सन्तुष्ट है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न इस प्रदेश में राजनीतिक स्थिरता का अभाव है। पिछले आठ सालों में इस प्रदेश के चार मुख्यमन्त्री हो चुके हैं। १९६२ के चुनाव के बाद विधान सभा के कुल २२८ स्थानों में कांग्रेस के १४२, जनसंघ के ४४, प्रजा सोशलिस्ट के ३३, सोशलिस्ट के १४, स्वतन्त्र के २, कम्युनिस्ट के १ और आजाद ११ हैं। इस प्रदेश में विधान परिषद नहीं है। ८० सदस्यों की विधान परिषद की स्थापना की जा सकती है, परन्तु राजनीतिक कारण से नहीं की गई है। आशा भी नहीं है और इस की आवश्यकता भी नहीं है। मध्य प्रदेश का सबसे बड़ा प्रश्न स्थिर नेतृत्व का है और इसी पर सब कुछ निर्भर करता है।

जीवन के झरोखे से

स्वर्गीय पं० रविशंकर शुक्ल

श्री द्वारका प्रसाद मिश्र, मुख्य मंत्री मध्य प्रदेश

उन्होंने उन सभी की सहायता की, जो उनके पास सहायता के लिए आये। रायपुर में शुक्ल जी के एक पुराने महाराष्ट्रीय मित्र थे। उनका पुत्र शिक्षा-विभाग में कार्य करता था जिसकी पदोन्नति उसकी बारी आने के पहले ही शुक्लजी ने कर दी थी। यह मामला राज्य विधान सभा में उठाया गया। शुक्ल जी ने तत्संबंधी उत्तर में कहा—मैं उसे बचपन से जानता हूं। वह मेरी गोद में खेला है। इसमें गलत क्या है, यदि मैंने उसे पदोन्नत कर दिया।

मैं यह आशा कर रहा था कि संसदीय तरीके से ही शुक्ल जी इसका उत्तर देंगे, किंतु जो उत्तर उन्होंने दिया, उस पर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने जब उनसे पूछा, तो उन्होंने कहा—किसी के द्वारा दिया गया प्रमाण-पत्र भी स्वीकार किया जाता है। फिर उस बालक को मैं पदोन्नत क्यों न करूं जिसे मैं जन्म से स्वयं जानता हूं? और इस तर्क का मेरे पास कोई उत्तर नहीं था।

सन् १९४२ की बात है। शुक्ल जी और मैं—दोनों ही अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के ऐतिहासिक अधिवेशन, बम्बई में उपस्थित थे। शिवाजी पार्क में भीड़ पर प्रयुक्त अश्रु-गैस से शुक्ल जी इतने उत्तेजित हो गये कि पुलिस का विरोध कर उन्होंने स्वयं को गिरफ्तार करा लेना चाहा। मैं बड़ी कठिनाई के साथ उन्हें वापस ला सका; क्योंकि नागपुर में उनकी आवश्यकता अपरिहार्य थी, लेकिन लौटते समय जैसे ही ट्रेन मलकापुर मध्यप्रदेश के पहले स्टेशन पर पहुंची, एक अंगरेज पुलिस-अधीक्षक ने हम सबको गिरफ्तार कर लिया। वह अधीक्षक इस कार्य से स्वयं को गौरवान्वित अनुभव कर रहा था, परन्तु उसका चेहरा उतर गया, जब शुक्ल जी ने उससे कहा—मैं पहले ही जानता था कि यह घटना होगी। इसीलिए टिकट केवल मलकापुर तक का ही लिया था। शेष यात्रा तो सरकारी खर्च से होगी ही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* उत्तर प्रदेश के प्रशासनीय क्षेत्रों में जो नाम सुनकर मन में मान उमड़ता है, उन्हीं में है एक नाम ठाकुर प्रसाद सिंह।
* उत्तर प्रदेश के साहित्यिक क्षेत्रों में जो नाम सुनकर मन में प्यार उमड़ता है, उन्हीं में है एक नाम ठाकुर प्रसाद सिंह।
* मित्र मंडली में जो नाम सुनकर सबके मन में विश्वास उमड़ता है, उन्हीं में एक नाम है ठाकुर प्रसाद सिंह।
* ठाकुर प्रसाद सिंह कि स्वभाव में ठाकुर के प्रसाद की तरह सुलभ-सुगम, पर सिद्धांतों में सिंह की तरह अटल-अगम।

दस वर्ष बाद फिर उसी गाँव में

श्री ठाकुर प्रसाद सिंह

अभी पिछले दिनों एक गाँव में जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ। दस वर्ष से ऊपर हुए जब वहाँ पहली बार गया था, एक शादी के सिलसिले में। मुझे खूब याद है कि जितने लोग भी बाहर से वहाँ गये थे, रास्ते भर उस गाँव को कोसते हुए ही गये; स्टेशन से उतरकर एक ऐसी सड़क से तीन-चार कोस चल कर, जिससे ऊसर की पगडण्डियां भी अच्छी होंगी। जब लोग गाँव में पहुँचे, तो वहाँ छाया के नाम पर कायदे की एक बारी या अमराई भी नहीं थी। कुआं दो घंटे की सिंचाई के बाद ८ बजते-बजते ही सूख गया था, तालाब में केवल कीचड़ बच रही थी और जिधर देखिए उधर ही क्षितिज तक फैले सूने खेतों पर धूप की लहरें नाच रही थीं।

* रात को गांव की गरीबी का पता भी लगा। बदन पर साबुत कपड़े नहीं, दाढ़ी बढ़ी हुई और बच्चों को मैली धोती में ढांके—गांव के ८० प्रतिशत लोग थोड़े से सफेद-पोशों को देखने के लिए बारात को चारों ओर घेरे हुए थे।
* दूसरे दिन एक बच्चे को स्कूल जाते देखकर पूछा, तो पता लगा कि प्राइमरी स्कूल यहाँ से पाँच मील पर बाजार में है।
* घोड़ी पर चढ़े वैद्य लड़की वालों की तरफ से बिदायी पाकर लौट रहे थे। वे ही चलते-फिरते औषधालय थे। बारात में आम ज्यादा खा लेने से बीमार पड़े एक सज्जन के लिए उन्हें हम लिवा ले गये। बातचीत के बीच उन्होंने कहा—अस्पताल तो केवल तहसील में है। तहसील वहाँ से १० कोस थी। वैद्य जी के कथनानुसार इस गांव-देश की औरतें अपने मर्ज पेट में छिपाये दुख भोगती हैं, असाध्य होने पर ही उनकी दवा होती है, इसलिए चिन्ता की कोई बात नहीं है।
* वैद्य जी हँसे और उन्होंने खेतों की ओर इशारा करते हुए कहा कि बरसात में गांव के दरवाजे-दरवाजे पानी की दुहाई फिर जाती है। पानी पहले तो जल्दी हटता नहीं, अगर हटा भी तो बीमारी को छोड़ जाता है—अपनी लगान वसूली के लिए। औरत हों या मर्द उन्हें घनघोर दिक्कतें भोगनी पड़ती हैं। वैद्य जी की घोड़ी काठ की तो है नहीं, जो कल घुमा देने से किसी के आंगन में ही जा उतरे या कम से कम पानी में तैरती चली जाए। इस लिए वे जब तक धूप है घास-भूसा जुटा लेते हैं और बरसात में अपने गांव में क्षेत्र सन्यास ले लेते हैं।
* दोपहर को खिचड़ी-भात की रस्म पर पैसे और लेन देन का सवाल उठा और घनघोर हंगामा उठ खड़ा हुआ। लड़की का पिता सूखा मुंह लिए खड़ा था और दोनों ओर से उस पर डांट पड़ रही थी। उस के लड़के बहिन को गरीब घर में फेंक देने के लिए नाराज थे और लड़के के पक्ष वाले उस पर कंजूसी का आरोप लगा रहे थे। अच्छे खासे खेत थे उस के। लोगों ने बताया कि इतनी अच्छी गृहस्थी कम देखी जाती है, पर रोज-रोज की बाढ़ और सूखे के चलते लोगों की कमर ही टूट गयी है।
* दरवाजे से हटकर बैलों की चरनी थी। वहां पशुओं की आँखों में अपार करुणा थी, गायों के थन सूखे थे-केवल सूखा पुआल खा कर साल के आठ-दस महीने बिता देते हैं। शाम होते-होते मुझे घोर उदासी ने लपेट लिया और मैंने सोचना बन्द कर दिया।

दस वर्ष पहले देखे उस गांव की ओर जब मैं चला तो पिछली बातें एक-एक करके याद आयीं। हमेशा नाराज और असंतुष्ट रहने वाले लोग स्वतन्त्रता के बाद के गांवों की हालत से इतने निराश हैं कि उन्हें जीने-मरने में कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तर ही नहीं दीखता। मेरी बगल में ऐसे ही एक महाशय जा रहे थे, मैंने गलती से उन से सवाल कर दिया और वे बिगड़ पड़े। खाक सुधरी है हालत ? विकास, सहकारिता, पशुपालन, यंत्र, और जाने कितने ही शब्द वे बीच-बीच में मुँह टेढ़े करते बोल गये 'सब खिलवाड़ लगा रखा है।'

मैंने उन से शर्त लगाई। जिस गांव में हम चल रहे हैं उसी में इस का फैसला हो जायगा। वे तैयार हो गये। १० वर्ष पहले वाली बारात में भी वे थे, आसानी से उन्हें पुरानी और नयी दुनिया का फरक दिखाया जा सकेगा।

मुख्य सड़क से, जैसा कि हमें बताया गया था, नहर की सड़क पकड़ कर सीधे गांव के पास पहुँच जाना था। तीन मील के लगभग [illegible] सुन्दर रास्ते पर सवारी घूमते ही तबीयत खिल गयी। नहर ने इस उजाड़ को वैसे ही बसा दिया था, जैसे सुलच्छन बहू पति के घर की काया बदल देती है। बीच-बीच में बनी सीढ़ियों पर औरतें और बच्चे नहा रहे थे या हाथ-पैर धो रहे थे। हमें देखकर सहमी हुई निगाहों से वे चुप हो गये, जैसे उनके आंगन से होकर कोई अजनबी चला जाय। नहर आयी हुई थी और दोनों तरफ ईख के खेतों में लोग पानी की भराई कर रहे थे। सब कुछ व्यवस्थित था, कहीं कोई परेशानी नहीं। इतमीनान के लिए मैंने गांव का रास्ता पूछा. तो सब हँस पड़ी। नहर पकड़ कर चले जाओ, जीजी घर पहुँचा देंगी।

मेरे मित्र की उदासी कट गई। वे रास्ते में घूम कर खड़े हो गये और शर्त हार जाने को आमादा, पर नहर ने हमें जिस गांव के गोहार पर ले जाकर छोड़ा वह गांव हम पहचान नहीं सके।

तब जो गांव देखा था, उसके बाहर विशाल गढ़ा था, जिस पर काठ के तख्ते रखकर गांव में घुसने का रास्ता बनाया गया था। फिर एक पतली गली थी, जिससे होकर मुश्किल से दो आदमी एक साथ जा सकते थे। उस बारात में हाथी-घोड़े थे, पर दरवाजे तक कोई नहीं पहुँचा था। काठ के तख्ते से हाथी लाचार, गली से घोड़े बेकार। बारात वाले नाराज कि बारात की शोभा नहीं हुई। दूल्हा मोटर कार पर उदास, उसे लोग गली में पैदल ले जाने को आमादा थे।

आज वहां देखता हूं, तो नहर की सड़क ने गढ़ा पाट डाला है और एक पक्की पुलिया पर से होकर नयी बारात के लोग हाथी घोड़े के साथ गांव के चौड़े और खड़ंजा बिछे रास्ते पर जा रहे हैं। लैम्प के शीशों पर लाल कागज लगाकर दिया जला दिया गया है और बन्दनवारें झूल रही हैं। मैंने भी अपनी गाड़ी दूल्हे की कार के पीछे लगा दी और दरवाजे पर मुझे देखकर जब दौड़ते हुए लोग पास आये, तो मैंने कहा कि दस बरस पहले सवारी पर यहाँ तक आने की इच्छा अधूरी लेकर गया था। अब बारात के साथ यहाँ तक आ गया हूं। मेरी खातिर वैसे ही करो जैसे पहली बार की थी। पुराने कई हिसाब भी होने को रह गये हैं, लगे हाथ मुझे भी निपटा डालो। जोर की हँसी के बीच मैंने घर के युवक मालिक की मन्द मुसकाहट देखी। कन्यादान के लिए पीले कपड़े पहने खड़ा वह नये बने पक्के दरवाजे के सामने बड़ा ही भला लग रहा था। तब वहीं इस के पिता खड़े थे, उदास और चिन्ता से भीत। वही घर है, वही धरती। इस लड़के ने इधर हर लड़की की शादी खोजकर अच्छे घरों में की है और नहर तथा नयी सुविधाओं के बल पर उसने लड़के वालों की हर मांग पूरी की है। गांव का प्रधान है वह, और गांव का हर रास्ता पक्का है, हर नाली साफ है, कुएं में पूरा जल है और तालाब नहर के पानी से लबालब भरा है। जलकुम्भी में पानी बरफ की तरह ठण्डा है जिसमें गांव की लड़कियां और बच्चे ऊधम मचा रहे हैं। गांव का अपना प्राइमरी स्कूल है, जहाँ कलमी आम, अनार, पपीते और जाने कितने ही तरह के नये पेड़ हैं। वहीं बारात टिकी है और लोग पिकनिक का आनन्द ले रहे हैं।

दूसरे दिन सुबह मैंने ग्राम सेवक से पूछताछ शुरू की। वे प्रमुख प्रबन्धकों में से थे और गांव के हर सामाजिक उत्सव में उनकी उपस्थिति आवश्यक थी।

गांव, सचमुच पहचाना नहीं जा रहा था। नये बीज भण्डार, सहकारी समिति तथा खेती के नये साधनों का जितना उपयोग तब तक हो चुका था, उतने ही से वहाँ का नक्शा बदल गया था। बाकी तो अभी बहुत काम पड़ा था। ग्राम-सेवक ने कहा कि पूरा गांव अभी जागा नहीं है, शिक्षा तथा विश्वास साथ-साथ चलते हैं। पुराने लोग सोचते विचारते बहुत हैं, पर नये लड़के बहुत विश्वासी हैं। उन्होंने एक पुस्तकालय खोला है और वे कई अच्छे अखबार भी मंगा रहे हैं। एक लड़के की ओर इशारा कर के उन्होंने कहा कि यह कहानी भी लिखता है। मैंने उस लड़के का उत्साह बंधाया और खुली आँखों से गांवों को देखने वाली बात दुहराई।

मेरे मित्र लौटे तो रास्ते भर 'उद्धव' की तरह हैरत हिराने से। इन गांवों पर सोना ऊपर से नहीं बरसा कि ये सुदामा के महल होगये हैं, सोना तो यहाँ धरती से निकला है, पर मेरे मित्र शर्त हारे तो हारे ही।

नये गांव का स्वरूप नया है। उसे बिना देखे जो लोग भी शर्त लगायेंगे वे हार जायेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर बैतलवा डाल पर

अंग्रेज ने आरम्भ में ही भारत के दो टुकड़े कर दिये थे। एक का नाम था ब्रिटिश भारत और दूसरे का नाम था रियासती भारत। यह भारत का राजनैतिक बटवारा था। इसके साथ ही एक और बटवारा था, जो अघोषित होकर भी गहरा था। वह था शहरी भारत और ग्रामीण भारत का बटवारा। प्रेमचन्द पहले भारतीय थे, जिन्होंने उपेक्षित ग्रामीण भारत को शहरी भारत के सामने ला रखा। गान्धी जी ने इस पीड़ित ग्रामीण भारत को जगाया और जवाहर लाल ने उद्वेलित किया। यों भारत स्वतंत्र हुआ। स्वतंत्रता के बाद सरदार पटेल ने ब्रिटिश भारत और रियासती भारत को एक कर दिया, पर स्वतंत्रता के १७ वर्ष बाद भी शहरी भारत और ग्रामीण भारत के बीच की खाई नही पटी, यह हमारे राष्ट्र का एक गंभीर प्रश्न है और इसका सबसे गंभीर पहलू है यह कि राजनीति के साथ साहित्य ने भी ग्रामीण भारत की उपेक्षा की।

यों समझिये कि प्रेमचन्द ने ग्रामों का जो चित्र दिया, वह ज़मीदारी के अत्याचारों से त्रस्त था। जमीदारी समाप्त हुई और नये ग्रामों का जन्म हुआ। पूरे हिन्दी संसार में अकेले श्री प्रकाश चन्द सक्सेना (वर्तमान जिलाधीश, जालौन उत्तरप्रदेश) ने अपनी चार कहानियों में इस परिवर्तन को चित्रित किया। स्वतंत्र भारत में अनेक उपन्यास देहाती जीवन पर लिखे गये, पर ऐसे लेखकों द्वारा जिन्होंने देखना तो दूर देहात को सूंघा भी नहीं। आदरणीय श्री वृन्दावन लाल वर्मा का उपन्यास 'अमरबेल' ही इनमें अपवाद है।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम और ग्रामीण पंचायतीराज के उदय से ग्रामीण भारत का तीसरा अध्याय आरम्भ हुआ, पर विचारणीय बात है कि पूरा हिन्दी संसार इस पर चुप रहा हम सबको कृतज्ञ होना चाहिए श्री विवेकीराय का कि उन्होंने 'फिर बैतलवा डाल पर' लिख कर इस तीसरे अध्याय को उजागर कर दिया है। बिना संकोच कहा जा सकता है कि विवेकीराय को नये ग्रामों का वैसा ही स्वानुभूत, समग्र और गहरा ज्ञान है, जैसा प्रेमचन्द को पुराने गाँवों का था या प्रकाश चन्द सक्सेना को बीच के गाँवों का। हाँ, प्रेमचन्द और प्रकाशचन्द कहानी लेखक हैं, तो विवेकी राय हैं लेखक, पर निश्चय ही एक अद्भुत लेखक।

अद्भुत इस अर्थ में कि उनकी लिखने की शैली उनकी अपनी है, जिसमें निबन्ध, संस्मरण, कहानी और रिपोर्ताज का समन्वय है। पढ़ने में मार्मिक, विचार में

पुस्तक-परिचय

तार्किक और प्रभाव में आन्तरिक है यह शैली। यह पुस्तक उनके लायक है जो गाँवों को कुछ बनाना चाहते हैं, उनके लायक है जो गाँवों को समझना चाहते हैं और उनके भी लायक है, जो सिर्फ नया स्वाद चाहते हैं। और वाह, क्या नाम है इस पुस्तक के लेखक का—विवेकीराय! जी में आता है अपने जिले के देहाती लहजे में उनसे पूछूँ—"अरे भभेकीराय, तौ मुझै या बात बता अक तेरा यो नाम कौणसे जोतसी ने रखा था?"

श्री जितेन्द्रनाथ पाठक ने इस पुस्तक की सार गर्भित भूमिका लिखी है। आज की बेकार भूमिकाओं के अम्बार में एक उल्लेखनीय रत्न कि पढ़ने की प्रेरणा मिले और लेखक की दिशा का बोध भी। भारतीय ज्ञानपीठ काशी स २३५ पृ० की सजिल्द पुस्तक ३॥) में प्राप्त।

खलंगा, खुकुरी और फिरंगी

कुछ दिन पहले श्री अमृतलाल नागर का उपन्यास 'शतरंज के मोहरे' पढ़ा था और मन में यह विचार आया था कि जो कोई यह समझना चाहे कि इतने बड़े भारत को थोड़े से अंगरेजों ने कैसे जीत लिया, वह इस उपन्यास को पढ़ें। श्री के० बी० क्षत्रिय का उपन्यास 'खलंगा, खुकुरी और फिरंगी' पढ़कर लगा कि यह भी उसी कड़ी का एक जोड़ है। फ्रांस, पुर्तगाल और इंगलैंड के साथ छोटे से नेपाल ने भी भारत को जीतने की कोशिश की थी और नाहन से अलमोड़ा तक के पहाड़ी क्षेत्र पर कब्जा कर लिया था। उस कब्जे को हटाने के लिए अंग्रेजों और नेपालियों में देहरादून से ऊपर के क्षेत्र में जो रोमांचक युद्ध हुआ था, इसमें उसी का वर्णन है।

क्षत्रिय जी नेपाली हैं और भारत के नागरिक हैं। नेपाल में उनकी आत्मा है, भारत उनके जीवन का केन्द्र है। यही कारण है कि वे इस उपन्यास को इस तरह लिख सके कि भारत का पाठक इसे पढ़ते समय देश भक्ति की भावना में विभोर हो उठता है। चित्रण इतना सफल रहा कि पढ़ते पढ़ते लगता है कि हम उस युद्ध को अपनी आँखों देख रहे हैं या स्वयं उसमें सम्मिलित हैं। आज जब देश को देशभक्ति की, राष्ट्रीयता की सबसे अधिक आवश्यकता है, यह उपन्यास एक महत्वपूर्ण कृति है और इसे नई पीढ़ी तक पहुंचाना एक राष्ट्रीय कार्य है।

क्या ही अच्छा हो कि कोई आदर्शवादी फिल्म निर्माता इस उपन्यास पर ज्यों का त्यों एक फिल्म बनाये और इस तरह इसे जनता के लिए पठनीय के साथ दर्शनीय भी बना दे। श्री के० बी० क्षत्रिय इसे लिखकर राष्ट्र सेवा का एक कार्य करने में सफल हुए हैं और पाठक की बधाई के हकदार हैं।

११६ पृ० की सजिल्द पुस्तक का दाम ३॥) और प्राप्ति स्थान साहित्य सदन, देहरादून है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापित—१९२४ फोन—१७६

आपके धन की सुरक्षा तिजोरी के ताले से नहीं,
उसे बैंक में जमा करके राष्ट्रीय उन्नति में सहायक बनिए।
इस सम्बन्ध में आपकी सेवा के लिए सदा प्रस्तुत--

डिस्ट्रिक्ट कोआपरेटिव बैंक लिमिटेड

रेलवे रोड, सहारनपुर : (उत्तर प्रदेश)
(शाखा-देवबन्द, फोन-५७ एवं गंगोह)

जिसकी प्रगति गत वर्षों में प्रकार है—

	३० जून १९६२	३० जून १९६३	३० जून १९६४
व्यापारिक पूंजी	११३'७९ लाख	१'३६ करोड़	१'५९ करोड़
अंश पूंजी	१७'६८ लाख	२१'०० लाख	२२'५७ लाख
निजी पूंजी	२१'१८ लाख	२५'०० लाख	२९'१६ लाख
डिपॉजिट एवं ऋण	९२'६० लाख	१'११ करोड़	१'३० करोड़
सहकारी समितियों को ऋण	१०१'९३ लाख	१'२२ करोड़	१'४६ करोड़

विशेषताएं--

बैंक में सबसे अधिक हिस्से सरकार के हैं।
निरीक्षण एवं ऑडिट सरकार द्वारा होता है।
सेविंग बैंक पर ब्याज की दर २॥ प्रतिशत से बढ़ाकर ३ प्रतिशत कर दी गई है।
लाभांश ३॥ प्रतिशत से बढ़ाकर ४ प्रतिशत किया गया है।
सेवा लेकर पूरा लाभ उठाइये और अपने परिवार-व्यापार की उन्नति कीजिये।

सुरक्षा के साथ उचित ब्याज आपके धन में वृद्धि करेगा !

सावधि धरोहर पर ब्याज--१ वर्ष के लिये ५ प्रतिशत
२ वर्ष के लिये ५। ,,
३ वर्ष के लिये ५॥ ,,
५ वर्ष के लिये ६ ,,

सेविंग बैंक और करेंट एकाउन्ट की पूर्ण व्यवस्था है।
एक बार पधारें तो चिर सम्बद्ध हो जाना निश्चित है।

महेन्द्र प्रताप सिंह
मैनेजर

साधूसिंह
मैनेजिंग डायरेक्टर

आर० के गोयल
आई. ए. एस.
(जिलाधीश, सहारनपुर) चेयरमैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

शिलाओं, पेड़ों की
छाल, जानवरों की खाल
अथवा धातुओं के
टुकड़ों की लिखावटें
सभ्यता के
उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक
नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के
विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण
साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज
आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

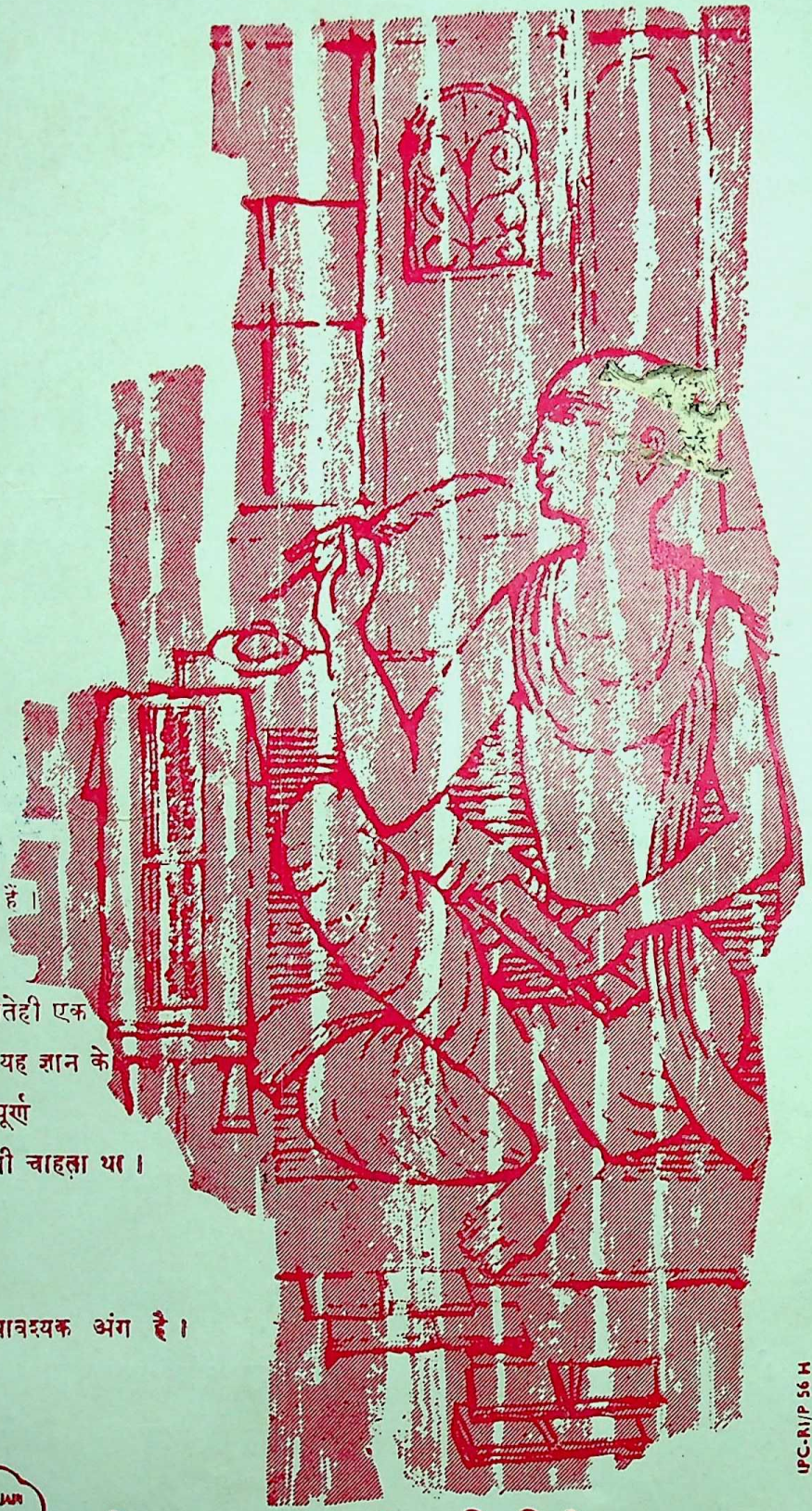

IPC-R1/P 56 H

ROHTAS

SAHU JAIN INDUSTRIES

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

मुद्रक—अखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स, सहारनपुर में मुद्रित-प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

सांस्कृतिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक
नव राष्ट्रीय चेतना का प्रेरक मनोरंजक मासिक

फरवरी १९६५

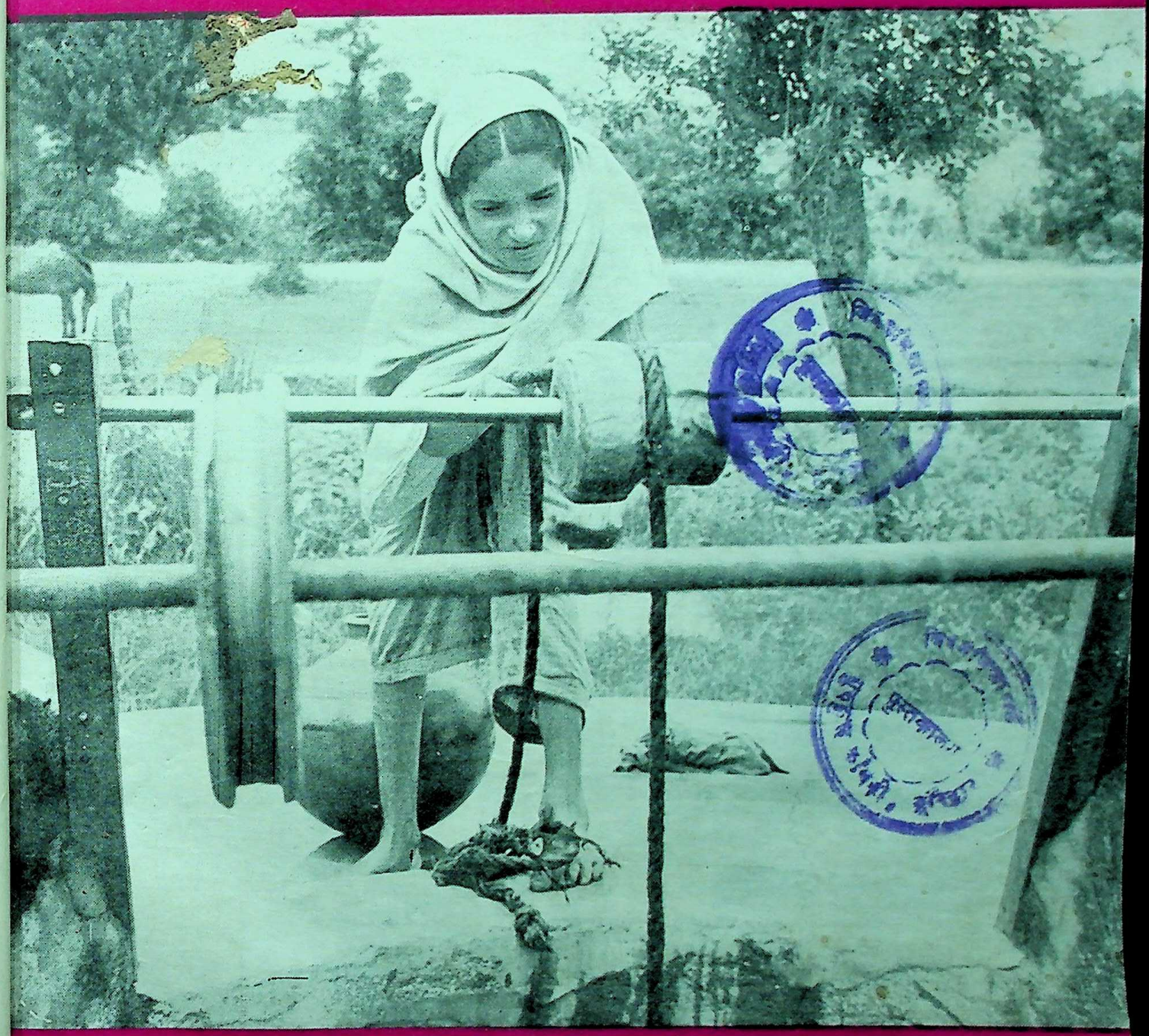

दुनिया को ठीक जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
दुनिया को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,

'नया जीवन' में
दैनिक-साप्ताहिक-मासिक की इन विशेषताओं का समन्वय है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज़ के एक छोटे पुर्ज़े पर महात्मा गांधी ने आश्रम के एक रोगी को रात में दो बजे एक हिदायत लिखी थी। अब यह पुर्ज़ा एक कीमती संस्मरण है!

विदेश के एक अज्ञात कवि द्वारा लिखा एक पुर्ज़ा मिला उसके मरने के बरसों बाद, वह उसी से अमर हो गया; उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

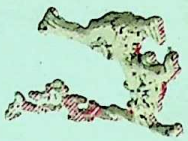

कागज़ के बिना न शास्त्र मिलते न साहित्य। कागज़ हमारी सभ्यता की एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज का युग मशीनों का युग है मजबूत पुर्जों से
बनी मजबूत मशीन ही अधिक अच्छा
कार्य करती है।

कुशल इंजीनियरों द्वारा हमारे कारखाने
में सर्वोत्तम छपाई, कटिंग परफोरेटिंग एवं
स्टिचिंग मशीनों का निर्माण होता है!

आधुनिक अंग्रेजी हिन्दी के टाईप, स्पेस, एवं प्रेस सम्बन्धी
सभी सामान सदा गारेण्टी से सुलभ है।

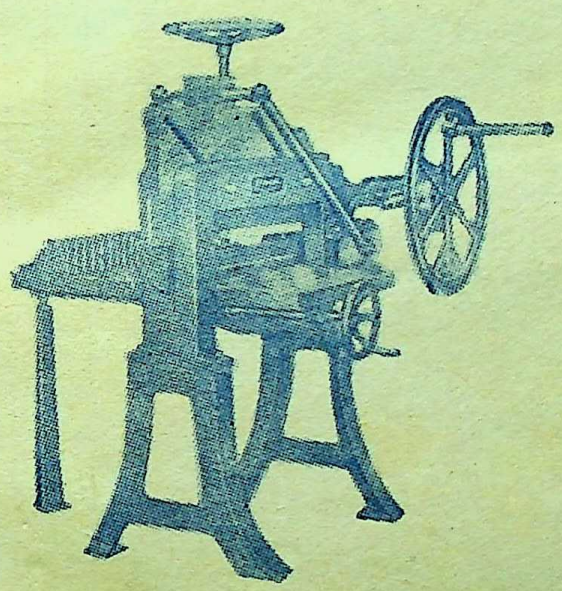

कटिंग मशीन
२२", २६", ३२", ३६"

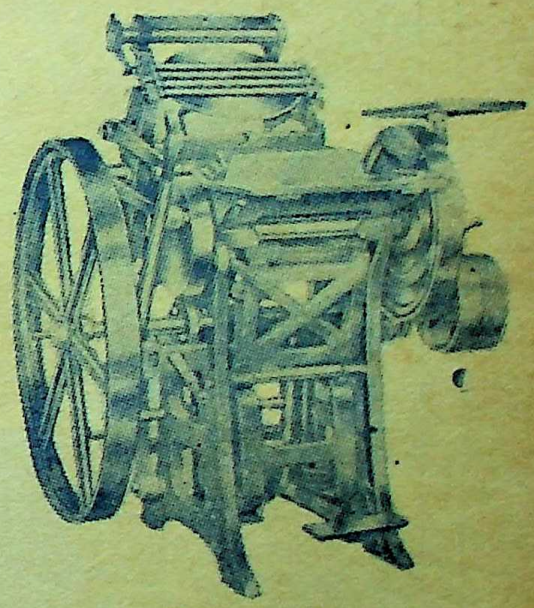

प्रिंटिंग मशीन
९"×१३", ११"×१६", १२"×१८", १५"×२०", १८"×२४"

तारः—"किरण इन्डस्ट्रीज़" फोनः—पी० पी० ४५०

किरण इन्डस्ट्रीज़ (रजि०), बाजार ख़राद़ीयान, लुधियाना

फक्टरी—शक्ति फाउन्ड्री और वर्कशाप, चित्रा टाकीज़ रोड, अमृतसर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुचिपूर्ण—
कलात्मक, यथातथ्य,

ब्लॉक

लाइन
हाफ़टोन
रंगीन

दिगम्बर आर्ट कॉटेज

२३०५, धर्मपुरा, देहली

Phone 262724 Telegrame 'Digarts' Delhi

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन राम् ने क्या कुछ कहा,
कि श्याम् भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
राम् और श्याम् दो सगे भाई,
राम् स्वभाव का कड़वा,
श्याम् शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित यह साहित्य
आपके पुस्तकालय में न हो तो इसे तुरन्त मंगा लीजिये !

★ ज़िन्दगी मुस्कराई ४.०० रु०
★ बाजे पायलिया के घुंघरू ४.०० रु०
★ दीप जले शंख बजे ३.०० रु०
★ महके आँगन चहके द्वार ४.०० रु०

(नई स्फुरणा के साथ जीवन को चमकाने वाली चारों पुस्तकें)

★ माटी हो गई सोना २.०० रु०
बलिदान के चेतना से पूर्ण १७ अमर अक्षर चित्र का संग्रह

★ आकाश के तारे धरती के फूल २.०० रु०
जीवन की गहराई, लोच और गति से भरपूर अनोखी लघु कथाएँ

★ क्षण बोले कण मुस्काए ४.०० रु०

लेखक की विशिष्ट शैली का प्रतिनिधित्व करने वाले
ललित एवं मनोरंजक निबंधों का नव प्रकाशित संग्रह

प्रकाशक:—

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुंड, वाराणसी

विक्रय केन्द्र ३६२०/२१ नेता जी सुभाष मार्ग, दिल्ली—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–

उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है !

★

कोशिश कीजिये–

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए !

खड़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत

एवं

भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस : चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—११६, ११४, १६०

संचालक
सेठ सुशील कुमार बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रूरी जानकारी

- वर्ष भर का मूल्य पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे है। वार्षिक विशेषांक का मूल्य दो रुपया है, जो ग्राहकों को वार्षिक मूल्य में ही मिलता है।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और अपनी प्रत्येक रचना पर अन्त में अपना पूरा नाम-पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएँ स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएँ और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह—मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह प्यार-मान दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें। ३ महीने के भीतर आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाए, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या लिखने की आवश्यक प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीजों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक

नया जीवन' • सहारनपुर • उ० प्र०

नया जीवन

विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'
निदेशक

अखिलेश
सम्पादक-संचालक

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमागी [illegible] अमूल्य समय चैन से काटने के लिए मनोरंजक [illegible] नाम का मैखाना हर [illegible] खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि [illegible] देश के कोने-कोने में फैले जन-[illegible] के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएँ!

फरवरी १९६५

संचालक

विकास लिमिटेड
सहारनपुर • उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अता-पता

तीन तीर	श्री ब्रजकिशोर नारायण, कच्ची तालाब यारपुर, पटना-१	४३
प्रतिक्रिया	श्रीमती राज मेहता, गवर्नमेंट हाई स्कूल, नहान, हिमाचल प्रदेश	४४
नए विकास के लिए	श्री सीता राम गुप्त, हाथी बाबू का बाग, स्टेशन रोड, जयपुर	४४
राष्ट्र चिन्तन	स्तम्भ	४५
श्री ब्रज किशोर 'नारायण'	संक्षिप्त परिचय	५१
विचार गोष्ठी	स्तम्भ	५२
आज का यह मानसिक डांवाडोल	श्री कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'	५३
सपनों को दे देश निकाला मेरे दृग सो जाते हैं !	श्री रमेश जोशी 'मृदुल' पुरुषोत्तम निवास माधव नगर, उज्जैन	५८
ईर्षा की आग से बचिए	डा० रामचरण महेन्द्र, गवर्नमेंट कालेज, कोटा (राजस्थान)	५९
एक दास्तान, कुछ सवालों से भरी कुछ इशारों से भरी ।	श्री जगदीश चावला, देहरादून रोड, सहारनपुर	६१
श्रीमती कमला चौधरी ; एक प्रतिभाशाली व्यक्तित्व	प्रो० देवेन्द्र दीपक, गवर्नमेंट डिग्री कालेज, सीधी म० प्र०	६४
जैसे हम; वैसा भारत	श्री जवाहर लाल नेहरू	६६
अपने पढ़ने के कमरे में	स्तम्भ	६७
अपने भारत को जानिए	श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार, इतिहास सदन, कनाट सर्कस, नई देहली	६९
नवाब वाजिद अली शाह; गिरफ्तारी और जेल-जीवन	श्री अमृत लाल नागर की अत्यन्त महत्वपूर्ण पुस्तक 'गदर के फूल' से साभार संकलित	७२
फीजी में हिन्दी-प्रचार : एक सिंहावलोकन	श्री रामनारायण गोविन्द, पो०बा० ५४ सिगाटोका, फीजी	७४
सोने के फूल	श्री ठाकुर दत्त शर्मा 'पथिक' टी०सी०जैन कम्पाउंड, कोर्ट रोड, सहारनपुर	७७
नए लेखकों की पाठशाला	श्री बालकृष्ण बलदुवा, रामगंज, कानपुर	७८
रेडियो समीक्षा	स्तम्भ	७९
पुस्तक परिचय	स्तम्भ	८०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन तीर

— ब्रजकिशोर नारायण —

हम साधकों का वर्ग बेसहारों का!
अल्पमत में, किस्मत के मारों का!
चाँद बेचारा दाग़दार क्यों न फिरे
जबकि गगन में बहुमत है सितारों का!

× × × × × ×

ग़हसुन को रंज क्यों क़यामत का, क़हर का
किनारों को डर क्यों है धार का, लहर का
क्यों सभी में जाहिर कोई अमृत को खोजने
धरती पर बढ़ता है जब जाम ज़हर का

× × × × × ×

क्यों थकी है बहसों में सवाल में
क्यों लिए रथ मृग मरीची आज में
आचरण पर इस क़दर पानी फिरा
लग गई है आग अब विश्वास में!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिक्रिया

श्रीमती राज मेहता एम. ए.

फूल बनने की नहीं अब कामना,
कामना है बस यही, अंगार बन जाऊँ !

प्रार्थना के गान मैंने भी सुने,
तज्जनित वरदान भी मैंने गुने,

प्रार्थना से लक्ष्य पाना है कहाँ सम्भव ?
कामना है बस यही हुंकार बन जाऊँ !

हृदय-परिवर्तन यहाँ होता कहाँ,
क्रूरता-नर्तन सदा होता यहाँ,

दानवों का देवता बनना कहाँ सम्भव ?
कामना है बस यही संहार बन जाऊँ !

मित्र समझा था जिन्हें वे भूत निकले,
नियम समझा था जिन्हें यमदूत निकले,

भूत से, यमदूत से ममता कहाँ सम्भव ?
कामना है बस कि चक्राधार बन जाऊँ !

नए विकास के लिए

श्री सीताराम गुप्त

समय तुम्हें पुकारता, स्वदेश पथ निहारता,
नयी बहार के लिए, नये विकास के लिए !

निशा गयी नयी दिशा मिली, मिले नये सपन,
सुहास पा रही कली, सुवास पा रहे सुमन,
आज हम स्वयं चमन और बाग़बाँ स्वयं,
भूमि मुक्त आज और मुक्त हैं पवन, गगन,

किंतु पतझरों की प्यास है अभी बुझी नहीं,
उठो नया सृजन करो बसन्त मास के लिए !

लक्ष्य के लिए अगर मनुष्य हो उठे विकल,
न राह रोकते जलधि, न राह रोकते अचल,
कह रहा है इसलिए हरेक शूल राह का,
ओ पथिक, न रुक चढ़ाव पर क़दम सँभाल चल,

दूर है अधिक नहीं, मंज़िलों की रोशनी,
नया क्षितिज बुला रहा नये प्रकाश के लिए !

हर कुटीर का तिमिर, नयी किरण निगल सके,
हर उदास दृष्टि में नई खुशी मचल सके,
मुक्ति को नया सिंगार इस प्रकार चाहिए,
हर उदास पंथ में नवीन दीप जल सके,

माँगता नया समाज, संगठित कठोर श्रम,
उठो, समय पुकारता नये प्रयास के लिए !
नई बहार के लिए, नए विकास के लिए !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

श्री प्रताप सिंह कैरों की हत्या : कुछ विचार : कुछ विश्लेषण

ये प्रशंसक :

७ फरवरी १९६५ के दैनिक पत्रों की मुख्य खबर थी, पंजाब के पदच्युत मुख्य मन्त्री श्री प्रतापसिंह कैरों की हत्या। वे दिल्ली में प्रधान मन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री से मिलकर पंजाब जा रहे थे कि दिल्ली से १९ मील दूर ग्रांट ट्रंक रोड पर उनकी मोटर रोककर राइफल की गोली से हत्या कर दी गई। ड्राइवर समेत जो तीन आदमी उनके साथ थे, उनकी भी हत्या की गई। मारने वाले भी चार थे। वे सुबह से ही हत्यास्थल पर थे और पूछने वालों से उन्होंने कहा था—"हम पागल कुत्तों को मारने आये हैं।"

परम्परा के अनुसार प्रसिद्ध पुरुष की मृत्यु पर बहुत से प्रसिद्ध लोगों के वक्तव्य भी इस तारीख के पत्रों में भरे पड़े थे। राष्ट्रपति और गृहमन्त्री ने शिष्टाचार के रूप में परिवार के साथ सहानुभूति प्रकट की थी, पर दूसरे वक्तव्य श्री कैरों की प्रशंसा से भरे पड़े थे।

बिहार के मुख्य मन्त्री श्री कृष्ण बल्लभ सहाय ने उन्हें 'दृढ़ निश्चयी और वर्तमान पंजाब के निर्माता' कहकर उनकी मृत्यु को 'देश की क्षति' कहा, तो केन्द्रीय सूचना मन्त्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने 'शक्ति शाली और प्रभाव शाली मुख्यमन्त्री एवं पंजाब की औद्योगिक तथा अन्य क्षेत्रों की प्रगति का विधाता' बताया। पंजाब के मुख्यमन्त्री श्री रामकिशन ने कहा—"वे पक्के कांग्रेसी, देशभक्त, साम्प्रदायिकता के विरुद्ध संग्राम जारी रखने वाले, जनता में प्रिय जन नेता, कृषि एवं औद्योगिक उन्नति के विधाता और साहस की मूर्ति थे।" दिल्ली प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष श्री मुश्ताक अहमद ने उन्हें "नवीन पंजाब के निर्माता, साम्प्रदायिकता के दुश्मन, अच्छे प्रशासक, बहादुर आदमी और हाड़मांस तक देशभक्त आदमी" बताया। केन्द्रीय रेल मन्त्री श्री पाटिल की राय में "वे महान देश भक्त थे", तो ज्ञानी श्री गुरुमुख सिंह मुसाफिर की राय में "बड़े देशभक्त" और राजस्थान के मुख्य मन्त्री श्री मोहनलाल सुखाड़िया की राय में "देश की स्वाधीनता के लिए उत्कट भावना वाले" थे। राजस्थान के योजना-मन्त्री श्री मथुरा दास माथुर की नजरों में वे "कुशल प्रशासक, योग्य नेता और देशभक्त" थे। केन्द्रीय विदेश मन्त्री श्री स्वर्णसिंह ने उन्हें "लौह इच्छाशक्ति, दृढ़संकल्प और अजेय साहस का धनी" बताया, तो "देशभक्त और विशिष्ट नेता भी।"

प्रशंसा के इस बाढ़ प्रवाह में पैर टिकाना असम्भव हो गया और बार बार एक प्रश्न मुझे झकझोरने लगा कि यदि श्री प्रताप सिंह कैरो ऐसे ही थे, तो उनकी दुष्टता का वर्णन किन शब्दों में किया जाय, जिन्होंने उन्हें मुख्यमन्त्री पद छोड़ने के लिए विवश किया? और दास आयोग की रिपोर्ट में, उससे पहले और उसके बाद जो कुछ प्रताप सिंह कैरों के सम्बन्ध में कहा गया, वह झूठ था और सच यह था कि एक सत्पुरुष को असत् पुरुषों ने मिलकर हुर्ला लिया था? ये प्रशंसक क्या इन प्रश्नों पर हां कहेंगे?

अनेक विचार मन में आये। एक यह कि यह भारत बुद्ध की करुणा, महावीर की दया और गांधी की अहिंसा का देश है, जिसमें बिना टिकट के रेल यात्री को "नृशंस टिकट चैकर के पंजे से छुड़ाने के लिए" सहयात्री चंदा करके रेलभाड़ा भर देते हैं और इस देश में पेशेवर प्रचारकों की तरह पेशेवर स्यापे वाली भी आदर का स्थान पाती है!!

हम यों देखें—

श्री प्रतापसिंह कैरों, स्व- निर्मित व्यक्तित्व थे।
श्री प्रतापसिंह कैरों, एक विशिष्ट प्रशासक थे।
श्री प्रतापसिंह कैरों, ने कई बेजोड़ काम किये।
श्री प्रतापसिंह कैरों, संक्षेप में एक राष्ट्रीय व्यक्तित्व थे।

पूरी ईमानदारी के साथ यह सब सच है और पूरी ईमानदारी के साथ यह भी सच है कि उनके महान व्यक्तित्व की छाया में बेईमानी और बदमाशी से करोड़ों रुपये बनाये गये, जाने कितनी भली स्त्रियों के साथ बलात्कार किया गया, जाने कितने भले आदमियों को पीसा गया।

इसके साथ ही यह भी सच है कि जो वे चाहते थे, कर लेते थे, बिना यह याद रखे कि जिन तरीकों से उन्हें वे कर रहे हैं, वे तरीके उस प्रजातन्त्र से मेल खाते हैं या नहीं, जिसने उन्हें ये अधिकार सौंपे!

संक्षेप में वे आदर के नहीं, आतंक के प्रशासक थे, मुख्यमंत्री नहीं, अधिनायक थे!

जब श्री कैरों बीमार थे, तो उनके राजनैतिक विरोधी और पंजाब के शिक्षा मन्त्री श्री प्रबोध चन्द्र ने उन्हें अपना खून देने की इच्छा प्रकट की थी। इस पर किसी पत्रकार ने उनसे कहा—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आप तो उनके विरोधी हैं।" उत्तर में श्री प्रबोध चन्द्र ने कहा था—"मेरा उनका मतभेद असूलों का है, व्यक्तिगत नहीं। मैं उन्हें अपना खून दे सकता हूँ, पर अपना वोट नहीं दे सकता।" यह संस्मरण श्री कैरों का सर्वोत्तम चित्र पेश करता है।

दूसरा संस्मरण मेरा अपना है। श्री प्रतापसिंह कैरों के सम्बन्ध में उनके विरोधी कहते थे कि उनके संरक्षण में सोने का तस्कर व्यापार होता है। उनके पदच्युत होने पर मैं सहारनपुर के सर्राफे में घूमा, तो पता चला कि बाजार में सोना दुर्लभ है और उसका भाव बढ़ा हुआ है। कारण यह बताया गया कि श्री कैरों के हट जाने से पंजाब की सरहद से सोने का आना बन्द हो गया है। उनके हटने से कुछ पार्टियां पकड़ी गई हैं और कुछ डर गई हैं। बंबई की तरफ से जो चोरी का सोना आता है, उसमें दूरी के कारण यहाँ आने तक इतने हाथ लगते हैं कि बहुत मामूली लाभ बचता है और उतने कम लाभ के लिए कोई खतरा उठाना नहीं चाहता। डरते डरते दिल्ली से कोई थोड़ा-सा लाता है, तो वह जरूरत मंदों से कसकर दाम मांगता है। क्या यह संस्मरण कुछ कहता है?

मानसिंह ने सैंकड़ों गरीब आदमियों की बेटियों के विवाह में मदद की, सैंकड़ों को संकट में सहारा दिया।

लाटरी और भ्रष्टाचार के द्वारा देश में हजारों नागरिकों को भरपूर जीवन प्राप्त हुआ और उनके फूटे भाग्य जुड़े।

मानसिंह की सज्जनता भी सही है और लाटरी-भ्रष्टाचार की उपयोगिता भी सही है, पर नैतिकता के मापदण्ड से ये दोनों वर्जनीय हैं, वन्दनीय नहीं। सरदार प्रतापसिंह कैरों गुणों के भंडार होकर भी प्रजातन्त्र के मापदण्ड से वर्जनीय ही थे और उन के इन सामयिक प्रशंसकों ने शिष्ट होकर भी समाज की कुसेवा की है—इस अर्थ में कि उनकी प्रशंसा से जनता में विवेक की नहीं, बुद्धि-भेद की ही दृष्टि का जन्म सम्भव है।

उनकी मृत्यु के नेपथ्य में

उनकी मृत्यु हत्या के द्वारा हुई। इस हत्या के नेपथ्य में, पृष्ठ भूमि में क्या रहस्य है? यह प्रश्न उनकी हत्या की खबर के साथ ही पैदा हुआ और इसका पहला उत्तर दिया उत्तर प्रदेश की मुख्यमन्त्री श्रीमती सुचेता कृपलानी ने। समाचार सुनते ही श्रीमती कृपलानी ने कहा—"निश्चय ही, मैं प्रदेश के सार्वजनिक कार्यकर्ताओं की सुरक्षा का विशेष प्रबन्ध करूंगी।" इसका साफ अर्थ था कि यह हत्या राजनैतिक है और जिन परिस्थितियों में यह हुई है, वही उनके राज्य में भी वर्तमान है।

भूतपूर्व वित्तमन्त्री श्री मुरार जी देसाई ने कहा—"उनकी हिम्मत और देश के प्रति उनका प्रेम इतना अधिक था कि उन को अपमानित और प्रभावहीन करने की सारी कोशिशें निष्फल रहीं। इसलिए जिन्होंने उनकी हत्या की है, वे शायद उनका राज्य और देश से ही अस्तित्व मिटा देना चाहते थे। यदि यह हत्या उस जहरीले प्रचार और नीचा दिखाने की कोशिशों का परिणाम है, जो उनके कुछ राजनैतिक शत्रुओं ने की हैं, तो हम सबको अपने इस लोकतन्त्र के भविष्य के बारे में बहुत गंभीरता के साथ सोचना चाहिए।"

'यदि' शब्द से स्पष्ट है कि मुरार जी भाई के पास हत्या के सम्बन्ध में कोई जानकारी नहीं है, फिर भी उन्होंने उस हत्या को साफ साफ राजनीति से जोड़ दिया और कैरों गुट के समर्थक पंजाब विधान सभा के ३० सदस्यों ने तो उसे साफ साफ ही राजनैतिक हत्या कह दिया। इससे पता चलता है कि हमारे देश के राजनीतिज्ञों में गैर जिम्मेदार वाचालता का कितना जोर है। गंभीर प्रश्न है—राजनीतिज्ञों की यह गैर जिम्मेदार वाचालता क्या कैरो की हत्या से भी अधिक भयंकर नहीं है? प्रसन्नता की बात है कि प्रधानमन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री इस पर चुप रहे और वयोवृद्ध श्री राजाजी ने कुछ भी कहने से इंकार कर दिया।

तीन संभावनायें

जहाँ यथार्थ सामने न हो, वहाँ सम्भावना का अस्तित्व मैं स्वीकार करता हूँ, पर सम्भावना का निरूपण परिस्थितियों के समग्र अध्ययन पर होना चाहिए। इस दृष्टि से देखें, तो इस हत्या के पीछे तीन सम्भावनायें खड़ी होती हैं।

पहली यह कि श्री कैरों पिछले वर्षों में जिस तरह का जीवन बिता रहे थे, उस तरह का जीवन जीने वालों के पास ढेरो ऐसा रुपया होता है, जिसे बैंकों में नहीं रखा जा सकता। उसे वे अपने विश्वास पात्र लोगों के पास रख देते हैं। रुपये की चमक इस विश्वास को नष्ट करती है और उस रुपये को अपना बनाने की लालसा को जन्म देती है। उसका फल होता है उस गुप्त धन के स्वामी की हत्या।

रिपोर्टों में चाहे जो कहा हो, भीतरी बात जानने वाले कहते हैं कि डाकू मानसिंह का लाखों रुपया जिनके घर में जमा था, उन्होंने ही जहर देकर मानसिंह को मारा था और बाद में पुलिस ने उनकी लाश को गोलियों से बींधकर खाट पर बाँध दिया था। पुलिस ने जहर देने वालों से जो वादे किये थे, वे झूठे रहे और मानसिंह के शिष्य लाखनसिंह ने उस परिवार के एक एक पुरुष को गोली के घाट उतारा। संभव है श्री कैरों की हत्या के पीछे कोई ऐसा ही हाथ हो।

दूसरी यह कि श्री कैरों ने अपनी ताकत से बहुत से अफसरों और साथियों को बुरी तरह सताया था, पीसा था और जाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या-क्या किया था। अब जब कि श्री कैरों उतार की जिन्दगी जी रहे थे, किसी का प्रतिशोध उनकी जान का गाहक हो गया हो। हत्या की योजना जिस ढंग से संगठित की गई है, उससे यह तो स्पष्ट ही है कि विशिष्ट मस्तिष्क उसके पीछे हैं।

तीसरी सम्भावना यह है कि श्री कैरों यदि जीवित रहे, तो चैन न लेने देंगे और फिर ऊपर आ गये, जिसके लिए वे प्रयत्न कर रहे थे, तो जीना असम्भव होगा, इस भय से उनके किसी राजनैतिक प्रतिद्वन्दी ने इस हत्या को संगठित किया हो।

बस, इस प्रसंग में एक ही बात और—श्री प्रताप सिंह कैरों के भोग में एक लाख आदमी इकट्ठे हुए। क्या यह उनकी लोकप्रियता की कसौटी है? जो लोग इस बात पर हाँ कहना चाहते हैं, उनकी याद में यह बात भी रहनी चाहिए कि अपने प्रताप की पूरी तपती दोपहरी में श्री प्रतापसिंह कैरों जाने कितने जोड़-तोड़ लगा कर कुल २४ वोटों से चुनाव में जीते थे। कहा तो मैंने कि वे प्रजातन्त्री आदर के प्रशासक नहीं, अधिनायकी आतंक के प्रशासक थे। ताकत उनका जीवन था, ताकत ही उनका अन्त हो गई।

आशा तो करनी ही चाहिए कि भारत की पुलिस के जो चार हजार अफसर कर्मचारी इस हत्या की जाँच में लगे हैं, वे सफल होंगे और हत्या का वास्तविक उद्देश्य सामने आएगा। जो हो एक बात स्पष्ट है कि श्री कैरों की हत्या एक बहुत बड़ा राष्ट्रीय संकेत है और देश के कर्णधारों का ध्यान तुरन्त उधर जाना चाहिए।

मद्रास के उपद्रव

मद्रास में जो उपद्रव हुए, वे कहने को ही उपद्रव थे, असल में वह विघटनवादी द्रविड़ मुन्नेत्र कडघम और प्रजातंत्र विरोधी और खुले आम चीन का समर्थन करने वाले कम्यूनिस्टों की भारत सरकार के विरुद्ध बगावत थी।

मद्रास में जो उपद्रव हुए, वे कहने को ही हिन्दी के विरुद्ध थे, असल में वे हिन्द के विरुद्ध थे।

चलती रेलों को रोक कर फूक देना, स्टेशनों में आग लगाना, बसों का जलाना, थानों पर कब्जा करना और पुलिस-कर्मचारियों को पीटना, आन्दोलन नहीं है, खुले आम बगावत है।

इस बगावत को इस झूठे प्रचार पर खड़ा किया गया कि २६ जनवरी १९६५ से तमिल भाषा का घरों में बोलना भी वर्जित होगा और स्कूलों में पढ़ना भी, सब कामों में हिन्दी का प्रयोग करना पड़ेगा और इस तरह भारत सरकार तमिलनाड की मातृभाषा तमिल को नष्ट कर, हम पर हिन्दी थोप देगी।

मद्रास के मुख्यमन्त्री श्री भक्त वत्सलम् को एक पत्रकार ने "सबसे बड़ा दिवालिया मुख्यमन्त्री" कहा है। वे न तो बगावत को भाँप सके, न मेल मिलाप और प्रचार के द्वारा उस झूठ का पर्दाफाश कर सके, जो योजना पूर्वक प्रदेश के घर घर में फैलाया गया था।

केरल के आम चुनाव का संचालन कांग्रेस-अध्यक्ष श्री कामराज ने स्वयं अपने हाथ में ले रखा है और मद्रास की बगावत का एक उद्देश्य केरल चुनाव में कांग्रेस को हराना भी था, इस हालत में मद्रास की बगावत के बारे में श्री कामराज का अपने प्यारे मुख्यमन्त्री श्री भक्त वत्सलम् से भी बड़ा दिवालिया सिद्ध होना एक विचारणीय प्रश्न है हमारे राष्ट्रीय जीवन का। इस प्रश्न की गहराई यह है कि श्री कामराज ही अगली बार भी कांग्रेस के अध्यक्ष हों, इसका प्रयत्न हो रहा है और यह करीब-करीब निश्चित समझा जाता है।

जब आन्दोलन उभरा, तो वे मद्रास में ही थे। प्रधान मन्त्री श्री शास्त्री जी दिल्ली में बैठे बैठे ही अपनी सहज दूर दर्शिता से उठ उभरते आन्दोलन की भयंकरता को ताड़कर साथी मन्त्रियों से बार बार परामर्श कर रहे थे और श्री भक्त वत्सलम् और कामराज को तार दे रहे थे। इसके साथ ही उन्होंने गृहमन्त्री श्री नन्दा को कलकत्ता से आगे का प्रोग्राम बदल कर सीधे मद्रास जाने का निर्देश दिया था। इस पर श्री कामराज ने शास्त्री जी को तार देकर मद्रास में स्वयं उनके रहते चिंता करने पर आश्चर्य प्रकट किया। इस आश्चर्य में हल्का-सा गुस्सा भी था, पर बाद की घटनाओं ने बताया कि श्री कामराज अपने को चाहे जो समझते हों, देश को शास्त्री जी उनसे बहुत ज्यादा समझते हैं और सही समझते हैं।

श्री कामराज और हिन्दी के प्रश्न पर एक बात और स्मरणीय है कि श्री कामराज ही हैं, जिन्होंने मद्रास में अपने मुख्य मन्त्रित्व में हिन्दी को शिक्षा के अनिवार्य विषय से हटाकर ऐच्छिक विषय बनाया था और इस तरह हिन्दी के प्रसार में एक सबसे बड़ी बाधा खड़ी की थी और श्री कामराज ही हैं, जिन्होंने अब कहा है कि यदि दक्षिण में हिन्दी का कोई कागज केन्द्रीय सरकार भेजे, तो उसे फाड़कर फेंक दो। बाद में उन्होंने कहा कि मेरा यह मतलब नहीं था, पर ये जो पहले ही झपाटे में केन्द्रीय सरकार के २४ हिन्दी कागज केरल से वापस आये हैं इस रिमार्क के साथ कि 'हम इसे नहीं समझते' इस विद्रोह और अनुशासन-भंग का जिम्मेदार कौन है?

इन उपद्रवों पर प्रधान मन्त्री से लेकर भकुआ प्रधान तक ने जो वक्तव्य दिये हैं, उनकी एक ही ध्वनि है कि हमारा नेतृत्व भोलेपन का शिकार है या भौंदूपन का। सभी वक्तव्यों में यह भी कहा गया है चीन परस्त कम्यूनिस्टों, द्रविड़ मुन्नेत्र कड़घम वालों और कुछ धनपतियों ने भारत सरकार को ठप्प करने के लिए आन्दोलन चलाया और सभी में यह भी कहा गया है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी के बारे में लोगों को गलत फहमी हुई। उस दिन से आज तक सब लिपटे हुए हैं गलत फहमी दूर करने पर कि हिन्दी के कारण किसी का कोई नुकसान न होगा, जैसे कि बड़ा नुकसान होने वाला था ! असल में गलत फहमी स्वयं नेताओं को है और उनके तथा देश के भविष्य की दृष्टि से आवश्यक है कि वे जानें कि दुष्टता को पनपने से पहले काटना आवश्यक है और दुष्टता की जड़ तुष्टी करण के पानी में गलती नहीं, उसे गलाने के लिए तेजाब छिड़कना अनिवार्य है।

किसी डाक्टर से पूछिए

हमारे नेता किसी डाक्टर से पूछ कर यह जान सकते हैं कि पागल आदमी के दिमाग में यह बात होती है कि जो कुछ वह सुनता है उसे सच मानकर कहने-करने लगता है। इस वैज्ञानिक बात को हमारे लोकजीवन में यों कहा है–एक आदमी के छप्पर की तरफ एक पगली आ रही थी। उस आदमी ने पगली से कहा "मेरे छप्पर में आग मत लगा देना।" पगली के दिमाग ने यह बात पकड़ ली और झट छप्पर में आग लगा दी। उस आग को देखकर हँसते-हँसते पगली ने कहा—"वाह, यह बात इसने खूब बताई।"

फरवरी में जो आग मद्रास में धू-धू जली, उसकी पहली चिनगारी बरसों पहले उस दिन रखी गई थी, जिस दिन प्रधान मंत्री जवाहरलाल नेहरू ने इस नारे का आविष्कार किया था—"हिन्दी किसी पर नहीं लादी जायेगी।" कमाल है कि डॉ० नर्लीकर के आविष्कार के बाद डॉ०आइंस्टीन के सिद्धांत में सुधार हो गया, पर उस चिनगारी के ज्वालामुखी बन जाने पर भी हमारे नेता वही नारा दोहरा रहे हैं—"हिन्दी किसी पर नहीं लादी जायेगी !" और पगली को छप्पर फूंकने की सूझ दे रहे हैं। इस कमाल का महा कमाल यह है कि जिस अंग्रेजी को जनता पर १०० साल तक लादते अंग्रेज लद गये और उनके वारिस १७ साल से लाद रहे हैं, उसकी कोई चर्चा नहीं करता। सम्भव है सन २०६५ में इतिहासकार यह लिखें—'भारत के स्वतन्त्र होने पर शासन उन लोगों के हाथ में आया, जो 'जन-मन-गण अधिनायक' का राष्ट्रगीत गाते रहने पर भी जन-मन से सदा दूर रहे और न वे जन-मन को पढ़ सके, न प्रशिक्षित कर सके—उन के और उनके द्वारा स्थापित प्रजातन्त्र के पतन का यही कारण हुआ।'

यह सम्पत्तिदान !

श्री प्रताप सिंह कैरों के बदनाम बेटे, श्री सुरिन्दर सिंह और श्री गुरिन्दर सिंह कैरों ने श्री प्रताप सिंह कैरों के भोग में यह घोषणा की कि अपने स्वर्गीय पिता की अन्तिम इच्छा को पूरा करने के लिए वह सब सम्पत्ति देश और कांग्रेस को समर्पित कर देंगे, जो हमने उनके मुख्यमन्त्री रहते समय इकट्ठी की थी।

श्री प्रताप सिंह कैरों ने अपनी हत्या से कुछ दिन पूर्व अपने पुत्रों से कहा था—"तुम्हें अपना पिता प्यारा है या दौलत ? जो तुम्हें ज्यादा प्यारा हो, उसे रख लो और जो कम प्यारा हो उसे त्याग दो।"

पत्रों में प्रकाशित अनुमान के अनुसार यह सम्पत्ति तीस लाख रु०है। प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने इस दान को 'बड़ी बात' कहा है, पर इसमें संदेह नहीं कि यह एक गहरी बात है। उसे हम समझें। मुख्य मंत्री रहते समय ही श्री कैरों को राम प्यारा कांड ने उलझन में डाल दिया था। श्री प्रबोधचन्द और श्री दरबारा सिंह ने श्री कैरों की डिक्टेटरी का जो पर्दाफाश किया, उससे वह उलझन बढ़ी थी। दास आयोग की स्थापना और मुख्यमंत्री पद से हटकर वे पूरी तरह उलझ गये थे।

वे बहादुर आदमी थे। यहाँ तक भी वे गरजते रहे और अपने बहुमत का भरोसा कर उन्होंने अपने लैफ्टीनेंट श्री मोहन लाल को मुख्यमंत्री बनाने की गर्जना की। प्रधानमंत्री ने दास आयोग की रिपोर्ट का वह हिस्सा भी छाप कर, जिसमें श्री मोहन लाल लाँछित थे, उनके हौंसले पस्त कर दिये। श्री राम किशन के मुख्य मंत्री चुने जाने पर हिम्मत के साथ कानून की उन गाँठों को खोल दिया, जिन्हें श्री कैरों ने अपने जूते से दबा रखा था। इससे उनके और उनके बेटों के खिलाफ अनेक भयंकर मुकदमें उभर आये। इस हालत को भाँपकर श्री कैरों ने नई राजनैतिक पार्टी बनाने की बात सोची। केरल की तरह अपने गुट के विधायकों को लेकर श्री रामकिशन के मन्त्री मण्डल को तोड़ डालने की बात भी उनके सामने थी, पर वे बुद्धिमान थे और जानते थे कि कांग्रेस से बाहर जाकर श्री द्वारका प्रसाद मिश्र, आचार्य श्री कृपलानी और श्री ब्रिजलाल बियाणी जैसे लोग पैर नहीं जमा सके, तो एक धड़ाका मैं भले ही कर दूँ, अगले चुनाव में कहीं का नहीं रहूँगा।

तब उन्होंने कांग्रेस में ही फिर से चमकने की सोची, पर यहाँ के रास्ते तो बन्द थे। वे कैसे खुलें ? कोई बड़ा धड़ाका ही उन्हें खोल सकता है। सूझ उनमें थी ही—उन्होंने धन की आहुति देकर व्यक्तित्व को बचाने का संकल्प किया। भाग्य उनसे रूठ चुका था, इसलिए यह संकल्प घोषित होने से पहले ही वे चले गये।

उनके लिए व्यक्तित्व का प्रश्न था, तो उनके पुत्रों के सामने अस्तित्व का प्रश्न है। कानून के जिन शिकंजों में वे कसे हुए हैं, उनमें जेलयात्रा सामने है और इस तरह सब कुछ समाप्त होने का खतरा है। श्री कैरों के शव को देखते ही श्री सुरिन्दर कैरों ने चीखकर कहा था—"मैं बर्बाद हो गया !" सचमुच वे बर्बादी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ज्वालामुखी के किनारे खड़े हैं। पिता की हत्या से उपजी — चहुँमुखी करुणा के वातावरण में तीस लाख का यह दान-त्याग आत्मरक्षा का एक मनोवैज्ञानिक धड़ाका है, पर प्रश्न यह है कि गाँधी जी की हत्या के बाद आदर्श के वातावरण में जब गोडसे को छोड़ देने की आवाज उठी थी, तो श्री नेहरू ने कहा था—"कानून अपना काम करेगा।" क्या कानून अब अपना हाथ रोक लेगा और वे मुकदमें वापस लिए जा सकेंगे ?

अब तुम बोलो भाई !

लोक कथा है कि एक आदमी की मृत्यु हो गई, तो बिरादरी के लोग इकट्ठे हुए। रोते रोते मृतक की विधवा ने कहा—"उन्होंने अभी अभी सुन्दर घोड़ी खरीदी थी। हाय, अब उस पर कौन चढ़ेगा ?"

एक युवक ने खड़े होकर कहा—'भाभी, तुम चिंता न करो, उस घोड़ी पर मैं चढ़ा करूँगा !"

रोकर विधवा ने कहा—"अभी अभी उन्होंने नये सूट सिलवाए थे। हाय, उन्हें कौन पहनेगा ?" युवक ने कहा—"भाभी, तुम दुखी न हो, उन्हें मैं पूरे सम्मान और सलीके से पहनूंगा।" इसी तरह उस युवक ने और बहुत-सी चीजों के लिए अपने को पेश किया। तब विधवा ने कहा—"हाय, वे दस हजार रुपये का कर्ज छोड़ गये, उसे कौन उतारेगा ?" सबने सोचा—अब भी वह युवक अपने को पेश करेगा, पर उस युवक ने कहा—"भाइयों, अकेले मैंने इतनी बातों पर हाँ की है, अब इस एक बात पर तुम सब मिलकर तो हाँ करो !"

उत्तर प्रदेश के गैर सरकारी माध्यमिक स्कूलों के अध्यापकों ने अपने व्यवहार से इस लोक कथा का नया संस्करण पेश किया है। उनकी माँग है कि हमें भी गवर्नमेंट माध्यमिक स्कूलों के अध्यापकों की समता मिले। उत्तर प्रदेश के भावना शील और शिक्षा एवं शिक्षकों के स्तर में क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए स्वयं प्रयत्नशील शिक्षामन्त्री श्री कैलाश प्रकाश ने उनके शिष्ट मण्डल से कहा—

- गवर्नमेंट स्कूलों के अध्यापक पब्लिक सर्विस कमीशन द्वारा अपने कालिज-कैरियर के आधार पर छँटकर आते हैं, क्या आप पब्लिक सर्विस कमीशन के सामने अपनी जाँच कराने को तैयार हैं ?
- उनका ट्रांसफर गोरखपुर से उत्तर काशी तक हो सकता है, जब कि आप एक ही जगह रहते हैं। क्या आप इस के लिए तैयार हैं ?
- उनके लिए दो ट्यूशन से अधिक ट्यूशन करने की पाबन्दी है क्या आप इसके लिए तैयार हैं ?
- और भी बहुत-सी बातें हैं जिनमें आपको उनसे अधिक सुविधायें हैं, सिर्फ वेतन उन्हें और महंगाई भत्ता आपसे अधिक मिलता है।

अध्यापकों का उत्तर है कि वे उन सुविधाओं को ज्यों का त्यों उपभोग करते हुए सिर्फ वेतन और महंगाई में समानता चाहते हैं। यह मांग अस्वीकृत होने पर उन्होंने ११ मार्च से आरम्भ होने वाली इन्ट्रेंस और इन्टर की परीक्षाओं में, जिनके साथ उनके ५ लाख शिष्यों का भाग्य जुड़ा हुआ है, सहयोग देने से इन्कार कर दिया है।

इस इन्कार पर एक स्थायी धिक्कार तो यह होगी कि विद्यार्थियों में उनके प्रति जो थोड़ा बहुत मान है,वह और घट जायेगा, पर एक सामयिक धिक्कार यह पड़नी चाहिए कि नगरों के शिक्षित लोगों को परीक्षाओं के प्रबन्ध में स्वयं सेवक के रूप में अपनी सेवा देकर परीक्षाओं को सफल करना चाहिए। मेरे नगर में ऐसी व्यवस्था हो रही है। आशा है यह प्रवृत्ति सर्वत्र पनपेगी और इस डकैत राजनीतिज्ञता का दमन होगा।

हिन्दी वाले शान्त रहें

हिन्दी-विरोध के नाम पर मद्रास में जो कुछ हुआ, उस पर हिन्दी वाले शान्त रहें, यही उचित है। पहली बात यह कि वह हिन्दी-विरोधी आन्दोलन हिन्द-विरोधी आन्दोलन है और हम भी भड़क उठें, तो यह उन हिन्द-विरोधियों की ही सफलता होगी। दूसरी बात यह है कि निर्माण और सफलता क्रिया से ही सम्भव है, प्रतिक्रिया तो विध्वंसक ही होती है। तो हम भी प्रतिक्रिया में फंसें, तो कहाँ पहुँचेगा देश ? तीसरी बात यह कि इस आन्दोलन के एक अपराधी हम भी हैं। हमें शर्म आनी चाहिए यह सोचकर कि बीते १५ वर्षों में १४ वर्ष हमारा हिन्दी साहित्य सम्मेलन मुकदमों का अखाड़ा रहा और अब एक 'सरकारी दफ्तर'-सा है। इस स्थिति में हमारा भड़कना न उचित है, न हितकर है। इस समय अंग्रेजी साइनबोर्डों को पोतने वाले हिन्दी और हिन्द का मुंह ही काला कर रहे हैं।

काने राजा

सितम्बर-नवम्बर १९६४ में उड़ीसा में छात्रों के उपद्रव हुए थे। पहली फरवरी १९६५ को उसकी जांच के लिए एक कमीशन बैठाया है। फरवरी के दूसरे सप्ताह में मद्रास में छात्रों के उपद्रव हो गये। अब जून १९६५ में शायद इसके लिए एक दूसरा कमीशन बैठेगा। हमारे नेता काने राजा का सर्वोत्तम उदाहरण हैं कि वे समस्या को सदा टुकड़ों में देखते हैं—उसके समग्र रूप में नहीं। तभी तो समस्यायें सुलझती नहीं, उलझती ही जाती हैं। अरे भले आदमियों, इस प्रश्न पर विचार करो कि हमारे देश के विद्यार्थी अपने जीवन निर्माण को भूल कर टेरेलीन की साड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्यों हो रहे हैं कि आग कोई जलाये, भट जलने व लगते हैं !

और यह भी सुनिए–

राष्ट्रीय विकास-परिषद् की कृषि तथा सिंचाई समिति ने बैठक में जिसमें विशेषज्ञ सदस्यों के साथ केन्द्रीय कृषि मन्त्री, सामुदायिक विकास मन्त्री, अनेक राज्यों के कृषि मन्त्री, सिंचाई मन्त्री उपस्थित थे 'गंभीर विचार विमर्श के बाद' यह बात 'आम तौर पर मान ली है' कि छोटी सिंचाई योजनाओं को सबसे अधिक प्रोत्साहन दिया जाय और जमीन के भीतर के पानी की जांच के साथ तालाबों को गहरा करने का काम बड़े पैमाने पर किया जाय।

जो राय फरवरी १९६५ के प्रथम सप्ताह में महान नेताओं और महान विशेषज्ञों ने महान खोज के रूप में पेश की है, बहुतों को जानकर आश्चर्य होगा कि इस पर पूरी ताकत से अमल आरम्भ हो गया था १९३७ में; यानी इस खोज से २७ साल पहले, जब उत्तर प्रदेश में श्री श्रीकृष्ण दत्त पालीवाल और श्री श्रीराम शर्मा सरकारी रूरल डपलपमेंट विभाग के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष थे !!

बाद में जो शाही हकूमत कायम हुई, उसमें 'छोटा आदमी' ही उपेक्षित हो गया, तो 'छोटी योजना' की बात कौन पूछता ? इस उपेक्षा से लाखों कुए और तालाब बर्बाद हो गये और बांध बनते रहे। बाँधों का बनना बुरा नहीं, पर क्या पैर काट कर कोई सिर पर मुकुट रखे शोभा पा सकता है ? श्री लाल बहादुर शास्त्री ने प्रधानमन्त्री चुने जाने के बाद अपने पहले ही भाषण में छोटी चीजों के महत्व पर पूरे बल से कहा, तो 'साहब बहादुरों' ने इधर भी आँख फिरायी, पर जिनके पैर ही धरती पर नहीं और जो जी ही रहे हैं आसमान में, क्या समस्या की तह में उतर सकते हैं ? असल में प्रश्न ही यह है कि शासकों और प्रशासकों के आसमानी सपनों में भारत की फुलवारी कैसे रोपी जाय ?

फिर अलग !

उत्तर प्रदेश के प्रजासमाजवादी और समाजवादी दल के विधायकों ने चुपचाप नेताओं से बिना पूछे मिलकर नेताओं को एकता के लिए मजबूर कर दिया था, पर वाराणसी में नेताओं ने लड़कर फिर अपने दलों को अलग कर लिया।

मेल में क्या लाभ हैं ? लाख लाभ हैं !

मेल में क्या नुकसान है ? एक नुकसान है !

और वह यह कि अपनी अपनी टुकड़ी में 'सर्वोच्च' कहे जाने वाले दो नेताओं को सिर्फ 'उच्च' रह जाना पड़ता है और यह नुकसान उठाने को कोई तैयार नहीं !

फालतू और पालतू

फालतू काम और पालतू आदमी निर्माण और परिपूर्णता के सबसे बड़े शत्रु हैं। श्री चन्दूलाल चन्द्राकर की सूचना है कि भारत सरकार में जितने कर्मचारी हैं, उनमें आधे हटा दिये जायें, तो कोई नुकसान न होगा। उनकी राय में आदमी ही नहीं, कई महकमें भी फालतू हैं, जैसे सामुदायिक विकास और समाज कल्याण। ये पालतू लोग कैसे फालतू काम करते हैं, इसका भी नमूना लीजिए।

गाँधी जी मिलों के कुटे और पालिश किये चावलों के विरोधी थे, क्योंकि चावल का पोषकतत्व इससे कम हो जाता है, पर खाद्य संकट के इस युग में इसका एक और भी पक्ष है कि जापान आदि देशों में जब चावल का तीन फीसदी भाग ही छीला जाता है, भारत में पाँच फीसदी छीला जाता है, पर आंध्र सरकार का चावल खरीदने वाला विभाग सात फीसदी छिले चावल ही खरीदता है। पता नहीं, हम नाश के पुजारी हैं या निर्माण के या एक साथ दोनों के ही ?

किस चीज की कमी है ?

बर्दवान विश्व विद्यालय में दीक्षांत भाषण करते हुए योजना कमीशन के सदस्य श्री डा० वी० के० आर०वी० राव ने कहा—'हमारी आर्थिक योजनायें आम आदमी में लाभ उठाने की भावना भरती हैं, पर सक्रिय और सोद्देश्य सहयोग की नहीं। काम काफी हुआ है, फिर भी हममें किसी चीज की कमी है। स्वतन्त्रता संग्राम के समय जैसी लक्ष्य के लिए मिलकर काम करने की लगन हममें नहीं है, हल्की भावनाओं के हम शिकार हैं। इस स्थिति में आर्थिक योजनाओं के मानवीय पहलुओं पर पुनर्विचार की आवश्यकता है।" किसी चीज की कमी है यह तो १९५६ से अनुभव किया जा रहा है, पर प्रश्न तो यह हैं कि कमी किस चीज की है ? क्या जन साधारण की तरह योजना कमीशन के सदस्य भी प्रश्नकर्ता ही हैं ?

हथनी और महामहिम

दिल्ली के चिड़ियाघर की उर्वशी नामक हथनी ने थोड़े ही दिनों में माउथ आर्गन का बजाना और पैर में बंधे घुंघरू के ताल पर नाचना सीख लिया। यह समाचार है और यह भी कि पिछले १४ सालों में महामहिम लोगों के हिन्दी न सीख सकने के कारण बजट अधिवेशनों में जगह जगह सदस्यों ने वाक आउट किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहने दीजिए इन्हें !

कलकत्ता में सार्वजनिक स्थानों पर खड़े अंग्रेजों के स्टैच्यू हटाने का निश्चय बंगाल सरकार ने किया है। पता नहीं हम कल्पनाहीन क्यों हो गये ? जरूरत है कि उनके नीचे लगे परिचय-पत्थर हटा दिये जायें और सुन्दर मूर्तियों के रूप में उन्हें सड़कों की शोभा बढ़ाने का काम करने दिया जाये। १५ अगस्त से पहले वे अपनी विजय के चित्र थे, अब अंग्रेजों की पराजय के व्यंगचित्र हैं। व्यंगचित्र तो मनोरंजक ही होते हैं, उनसे हमारा सम्मान नहीं घटता। वे वे हैं, जिन्हें हमने हरा दिया; अब वे वे नहीं, जिनसे हम हारे !

उफ !

१९६२ के चुनाव में उत्तर प्रदेश में एक धनपति ने राज्य-सभा के लिए वोट खरीदे थे। लोकसभा के लिए एक दूसरे धनपति ने मतपेटिकाओं में ही उलट फेर कराई थी। दोनों बातों की चर्चा पत्रों में हुई थी। अब बिहार में एक और वीर ने वोटों की खरीदारी की, यह खबर छपी है।

नजर में

खाद्य मन्त्री श्री सुब्रह्मण्यम् और उपमन्त्री श्री अलगेसन ने मद्रासी बगावत की आग में अपने इस्तीफों से खूब घी डाला और बाद में इस्तीफे वापस ले लिये। 'जनमनगण' की नजर में उनका कार्य देशद्रोह है, पर 'जनमनगण-अधिनायक' की नजर में एक मामूली बचपना।

शुभ वचन

कांग्रेस-अध्यक्ष श्री कामराज ने एक शुभ वचन कहा है कि राज्यों के वर्तमान नेतृत्व में आगामी चुनाव तक परिवर्तन न होने दिया जाएगा। स्थिर शासन जनता की सबसे प्रिय इच्छा है और इस समय तो यह अनिवार्य आवश्यकता है। इस स्थिति में यह शुभ वचन है, पर इसमें इतना परिवर्तन भी आवश्यक है कि आज मन्त्री मण्डलों में जो उठक पटक हो रही है, उसे भी शांत कर दिया जायेगा।

नहीं !

- क्या २६ जनवरी १९६५ को भाषाओं की १९५० से चालू स्थिति में कोई अन्तर हुआ ? नहीं !
- क्या मद्रास के दंगों का कोई आधार था ? नहीं !
- क्या उन दंगों के बाद पार्लियामेंट में प्रधानमन्त्री ने जो वक्तव्य दिया, उससे भाषाओं के सम्बन्ध में कोई नया निर्णय हुआ ? नहीं !

—कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

श्री ब्रजकिशोर नारायण : कुछ रेखायें

"नारायण जी जबर्दस्त आदमी हैं।"

एक पत्र में बिहार राष्ट्रभाषा परिषद के डायरेक्टर श्री भुवनेश्वर मिश्र ने मुझे लिखा था। सचमुच बड़ा परिपूर्ण परिचय है यह श्री ब्रज किशोर नारायण का। इस परिचय से पहले मेरे मन में उनके परिचय के बोल थे—मलंग जीव !

मुलाकात का मौका तो बहुत बाद में मिला, पर बहुत पहले 'चाणक्य' व्यंग मासिक का एक अंक देखकर तबियत मचल उठी थी कि आदमी इश्क लड़ाने के लायक है।

और 'चाणक्य' का एक अंक देखकर ही बिहार के केशरी और मुख्य मंत्री श्री कृष्ण बाबू उबल पड़े थे और अपने एक मंत्री से उन्होंने कहा था—"निकालो इसे नौकरी से।"

बड़ा मजा आया, जब मंत्री ने दो दिन बाद फोन पर मुख्य मंत्री से कहा—"श्री बाबू, नारायण का कोई दोष नहीं, उसके खून में ही जर्म्स हैं।"

"क्या मतलब ?" श्री बाबू ने हुँकार के तोल पर पूछा था और मंत्री ने कहा था—"वह पार्वती बहन का पुत्र है।"

केशरी की हुंकार पुचकार में बदल गयी थी—"अच्छा-अच्छा, ज़रा बुलाकर समझा देना।"

नारायण खरगोश की तरह मुलायम है और नारायण सेह की तरह कंटीला भी। वह पैट्रोल के उस वैगन की तरह हैं, जिस पर लिखा रहता है—'नाट टु बि लूज़ शंटेड !' वह प्यार की मुस्कान पर रस में सरसार हो जाता है, तो व्यंग की मुस्कान पर खूंखार भी।

वह गऊमाता खद्दरिया नहीं, रंगीला जवान है कि महफिल में बहके, तो क्लब में महके; कहें पतंग की तरह उड़ंचू, पर मर्यादित भी कि पैरिस की उच्छृंखल परियों के जमघटे में भी डोर बंधा कि उसके हर काम के साथ उसके भारत की इज्जत बंधी है।

नारायण कवि, लेखक, पत्रकार, तीनों में हिन्दी का यशोवर्धन राजकुमार, पर न कवि, न लेखक, न पत्रकार, बल्कि एक मुकम्मल इंसान कि उसमें भूत और देवदूत का एक साथ निवास और यह स्वयं आपके हाथ कि वह आपकी आँखों में भूत बन कर जले या देवदूत बना रस घोले, श्री ब्रजकिशोर नारायण !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचार-गोष्ठी

भारत की एकता के लिए

भारत की एकता का प्रश्न देश का सबसे बड़ा राष्ट्रीय प्रश्न है। इस प्रश्न में जो ज्वाला मुखी खतरा है, उसे प्राँतों के पुनर्गठन पर हुए गुजरात महाराष्ट्र के हिंसात्मक उपद्रवों ने उजागर कर दिया था और अब मद्रास के दंगों ने तो उधेड़कर ही सामने रख दिया है।

एकता के प्रश्न को राजनीतिज्ञ ऊपरी निगाह से देखते हैं और विचारक भीतरी निगाह से। राजनीतिज्ञों के लिए यह जमीन के टुकड़ों को जोड़ने का—जोड़े रखने का प्रश्न है, पर विचारकों के लिए जातियों, धर्मों, प्रांतों, हितों और विभिन्न विश्वासों में बँटे भारतीयों के हृदयों को एक रस रखने का प्रश्न है।

श्री द० रा० बेन्द्रे जन्म से मराठी भाषा भाषी हैं, पर कर्म से कन्नड़ के मनीषी महाकवि। हिन्दी साधक श्री दिनकर सोनवल्कर से अपनी बातचीत (धर्मयुग में प्रकाशित) में श्री बेन्द्रे ने कहा—

❀ "भावात्मक एकता की सीधी और सरल राह यही है कि विभिन्न भाषाओं के किसी कालखण्ड अथवा प्रसंग को आधार बनाकर तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किये जायें। जैसे यह कि जैमिनी अश्व मेध की कथा ने कृष्ण-काव्य को (विभिन्न भाषाओं में) किस तरह प्रभावित किया है? अथवा चन्द्रहास की कथा, सुरस सुधन्वा का आख्यान या मयूरध्वज प्रसंग विभिन्न भाषाओं में किस तरह प्रस्तुत किये गये हैं—दर्शन, धर्म एवं साहित्य के सन्दर्भों में?

❀ या दूसरा तरीका यह हो सकता है कि किसी काल खण्ड. जैसे दसवीं शताब्दी में भाषाओं की साहित्यिक प्रगति का तुलनात्मक सर्वेक्षण प्रस्तुत किया जाये। इन अध्ययनों से स्पष्ट होगा कि किस तरह समूचे भारत की मनीषा भावात्मक रूप से एक थी? लेकिन मुश्किल तो यह है, "कि रागात्मक स्तर पर सोचने के लिए ही लोग तैयार नहीं हैं। हमारा संवेदन ही निष्प्राण हो चला है।"

अन्तर्राष्ट्रीय विवादों को सुलझाने में मध्यस्थता करने वाला, पंचशील का उद्घोषक यह देश और इसके नागरिक अगर छोटे-छोटे विवादों में फँस जायेंगे, तो फिर एशिया के मुल्क नेतृत्व की प्रेरणा किससे ग्रहण करेंगे? इस मान्यता की पृष्ठ भूमि में बेन्द्रे जी ने तटस्थ भाव से कहा—"मैं जानता हूँ कि मेरे इस मन्तव्य के कारण कुछ लोग मुझ से प्रसन्न नहीं होंगे, लेकिन मैं तो एक साहित्यकार हूं और सच्चे साहित्यकार का दृष्टिकोण संकुचित हो ही नहीं सकता। राजनीति की दृष्टि टुकड़ों-टुकड़ों में बंटी होती है। साहित्य की आस्था अखण्ड-दर्शन में है। यो वै भूमा तत् सुखम्।"

हमारे ग्राम कैसे जायें?

गाँधी जी कहा करते थे कि असली भारत ग्रामों में बसता है। कवि शिरोमणि श्री सुमित्रा नन्दन पंत की एक पंक्ति है—"भारत माता ग्राम वासिनी।" हमारे देश की राजनीति का एक घातक दोष नेहरू जी के नेतृत्व में यह रहा है कि हमारा अधिकतर ध्यान शहरों पर रहा है और हम भारत के १७ प्रतिशत शहरियों के प्यार में डूबकर ८३ प्रतिशत ग्रामवासियों की उपेक्षा करते रहते हैं। फलस्वरूप तीसरी पंचवर्षीय योजना के बीच पहुँचने पर भी देश के जीवन में सजीवता नहीं आ पाई। शायद इसी पृष्ठ भूमि में युग संत विनोबा ने कहा है कि शहर भारत के कैंसर हैं। बड़ी सचोट टिप्पणी है। कैंसर उस सब रस को चूस लेता है, जो बीमार को भोजन के रूप में मिलता है और फिर उस रस को जहर बनाकर वह शरीर में फेंकता रहता है। प्रसन्नता की बात है कि नये प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री उस जहर को समझते हैं और योजना को नया रूप देने का प्रयत्न कर रहे हैं।

हमारे ग्रामों में नई रचना के दो तंत्र हैं—एक ग्राम पंचायत और दूसरा सरकारी ग्राम विकास विभाग। इनकी स्थिति क्या है?

(कृपया देखिये पृष्ठ ७५ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजनीतिज्ञ अस्थिर हैं अपनी हिलती कुरसियों पर,
नागरिक अस्थिर हैं भावों के उतार-चढ़ाव पर,
देश की निर्माण-भूमि है स्थिरता; तब चिंतनीय है:—

आज का यह मानसिक डावाँडोल !

—कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

दूसरे विश्व-युद्ध की खबरों से संसार का वातावरण कांप रहा था। ज्वालामुखी लपटें अपने प्रचंड वेग में लपलपा रहीं थीं और राज्यों के सिंहासन लुढ़क पुढ़क हो रहे थे। बड़े-बड़े विचारकों के लिए भी भविष्य के सम्बन्ध में कोई धारणा बनाना सम्भव न था। कुछ भी टिक न पा रहा था, सब कुछ ढहा जा रहा था।

यह १९४० की बात है।

तभी प्रधान मन्त्री विंस्टन चर्चिल ने इंगलैंड की पार्लियामेंट में एक ओजस्वी भाषण दिया था। हमारे देश में जो मंत्री-मण्डल विभिन्न राज्यों में काम कर रहे हैं, उनके लिए उस भाषण में एक संजीवनी बूटी है—एकदम अमृत, पर उसे पीने-पचाने के लिए उन परिस्थितियों का जानना जरूरी है, जिनमें वह भाषण दिया गया था।

तो १९३२ से बात शुरू करें। उस साल जर्मनी ने उस समय के राष्ट्रसंघ (लीग आफ नेशन्स) से त्याग पत्र दे दिया और निशस्त्रीकरण की जो बात चीत हो रही थी, उसका भी बहिष्कार कर दिया। चर्चिल ने इस घटना को बहुत महत्व दिया और हवाई सेना को मजबूत करने की आवाज उठाई। प्रधान मन्त्री बाल्डविन शान्ति प्रिय आदमी थे। उन्होंने शान्तं-शान्तं की बात कही। आम हड़ताल के बाद वाले निर्वाचन में उनका नेतृत्व समाप्त हो गया और मैकडानल्ड प्रधान मन्त्री हुए। ये भी शान्ति के पुजारी थे। इसके बाद मैकडानल्ड और बाल्डविन ने संयुक्त मन्त्री मण्डल बनाया, पर यह भी दीर्घायु न हुआ। तब चैम्बरलेन प्रधान मन्त्री हुए पर ये एकदम गऊ माता कि सींग मारे न पूंछ हिलायें।

इधर यह शान्ति और उधर ? इटली के तानाशाह मुसोलिनी ने अबीसीनिया पर चढ़ाई कर दी। इंगलैंड के प्रभाव में राष्ट्रसंघ चुपरहा उस क्रूर मनमानी पर। जापान को शह मिली और उसने चीन के सीने पर संगीन रख दी। चीनी जनता त्रस्त होती रही, पर सब शान्ति पाठ में डूबे रहे। जनरल फ्रांकी ने स्पेन में गृहयुद्ध छेड़ दिया और हिटलर मुसोलिनी ने उस की मदद की। वहाँ की लोकप्रिय सरकार चकनाचूर हो गई, पर किसी के कलेजे में दर्द न उठा।

हिटलर ने आस्ट्रिया को हड़प लिया और चैकोस्लोवाकिया को खूनी आँखों से घूरा। चैकोस्लोवाकिया का सम्बन्ध फ्रांस से था। इसलिए फ्रांस का शान्ति प्रिय प्रधान मन्त्री दलादिये कुलमुलाया और उसने प्रधान मन्त्री चैम्बरलेन को उकसाया। कुलमुलाहट और उकसाहट ने मिलकर जो कारनामा रचा, उसे इतिहास में म्यूनिच कांड कहते हैं। म्यूनिच में चैम्बरलेन हिटलर और दलादिये मिले। हिटलर ने गंगाजली उठाई कि चैकोस्लोवाकिया को यदि हड़पने का मौका दिया गया, तो वह यूरोप में और कुछ नहीं मांगेगा। चैम्बरलेन और दलादिये ने शांति पाठ करते हुए कहा—एवमस्तु, एवमस्तु। चैम्बरलेन इंगलैंड लौट आये और अपना छाता म्यूनिच में ही भूल आये। हिटलर ने विशेष वायुयान से वह छाता इंगलैंड भेजा और अपनी शिष्टता-कृतज्ञता का परिचय दिया।

चर्चिल ने इसे कायरता कहा, युद्ध की तैयारी का आह्वान किया, पर चैम्बरलेन शांति की दिशा में अपने काम को महान कदम मान संतुष्ट हुए, पर संतोष की मिठास अभी गले के पार भी न हुई थी कि हिटलर ने पोलैंड पर चढ़ाई कर दी और ब्रिटेन-फ्रांस लड़ाई के मोर्चे पर खड़े दिखाई दिये।

यह सब क्या हुआ ? यह वही हुआ, जो इसके बरसों बाद भारत में हुआ कि हमारे शांति प्रिय प्रधानमन्त्री जवाहर लाल नेहरू ने अंग्रेजों के समय से रहती फौजों को वापस बुलाकर तिब्बत को माओत्से तुंग की राक्षसी गोद में अपने हाथों फेंक दिया। सह अस्तित्व के नारे लगे पंचशील की जय बोली गई, हिन्दी चीनी भाई से नगर-गाँव गूँजे और तब भारत पर चीन का खूनी आक्रमण हुआ।

भारत के शक्ति पूजक विचारकों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरह चर्चिल की बात सच निकली और चैम्बरलेन ने उन्हें युद्ध मन्त्री मण्डल में लेकर नौ सेना का अध्यक्ष बनाया। यह चर्चिल के व्यक्तित्व की बहुत बड़ी विजय थी, क्योंकि ऐस्क्विथ के प्रधानमंत्रित्व में लार्ड फिशर के विश्वासघात के कारण उन्हें एक बार इसी पद से त्याग पत्र देना पड़ा था, पर इससे काम न चला और नार्वे के पतन के बाद इंगलैंड में फैली घबराहट के कारण चैम्बरलेन ने त्यागपत्र दे दिया।

चर्चिल के अन्दाज सच निकले थे। वे ही प्रधानमन्त्री चुने गये, पर हिटलर अब भी पूरे वेग में था। उसने फ्रांस पर चढ़ाई की। प्रधानमन्त्री मार्शल पेतां ने सोचा कि लड़ने से पेरिस की सब कला कृतियां नष्ट हो जायेंगी और आत्म समर्पण कर दिया। इंगलैंड पर भयानक हवाई हमले हो ही रहे थे कि मुसोलिनी ने अफ्रीका के ब्रिटिश उपनिवेशों पर छापा बोल दिया। इस क्षेत्र के सेनाध्यक्ष जनरल वावेल ने इटली की सेनाओं को खूब रौन्दा, पर ग्रीस में इटली का आक्रमण हो गया। अंग्रेज और ग्रीक खूब लड़े, चर्चिल ने खूब कुमुक भेजी, पर तभी हिटलर ने यूगोस्लाविया पर चढ़ाई कर दी। अंग्रेजी फौज वहाँ पहुंच न सकी, उसका पतन हो गया और फलस्वरूप ग्रीस में भी अंग्रेज पिट गये।

अब क्रीट सामने था। उसका बेहद सैनिक महत्व, अंग्रेजों का वहां सैनिक अड्डा। हिटलर और चर्चिल में जान जान की बाज़ी लगी, पर अंग्रेजी फौज को उल्टे पाँवों भागना पड़ा और १५ हजार सैनिक हताहत हुए। चैम्बरलेन के बाद इंगलैंड की जनता चर्चिल के दृढ़ व्यक्तित्व में अपनी आस्था जमा कर बैठ गई थी, ग्रीस और क्रीट की हार से वह डिग गई और पार्लियामेंट में कंजरवेटिव पार्टी के ही सदस्य होर बेलिशा और कर्नल मैकनमारा आदि ने कठोर और कड़वी आलोचना की। इंगलैंड हिटलर के आक्रमण से त्रस्त भी था, भयभीत भी—आक्रमण हुआ कि झंडा गिरा। चारों ओर से चर्चिल पर अविश्वास बरस पड़ा।

इसी कांपती परिस्थिति में चर्चिल ने पार्लियामेंट में वह भाषण दिया जिसे मैं भारत के मन्त्रीमण्डलों के लिए संजीवनी बूटी कहता हूं और उसमें कहा—"कोई भी प्रधानमन्त्री हो और कैसी भी अनुभवी बुद्धिमान और ताकतवर सरकार हो, वह देश को खतरों से बचाकर आगे बढ़ा ले जाने का काम नहीं कर सकती, जब तक वह मजबूत आधार पर न खड़ी हो। सबसे जरूरी और बड़ी बात यह है कि दल के नेता और उसकी सरकार को बार बार पीछे मुड़कर यह देखने के लिए बाध्य न होना पड़े कि उसकी पीठ में कोई छुरा तो नहीं मार रहा है।"

इस तर्कपूर्ण और ओजस्वी भाषण ने चर्चिल के चारों ओर छाये अविश्वास के कोहरे को साफ कर दिया और पूरी निष्ठा एवं एकाग्रता के साथ वे अपने काम में जुट गये—युद्ध को जीतने में सफल हुए। प्रश्न यह है कि क्या जिन परिस्थितियों में उन दिनों चर्चिल थे, उन्हीं परिस्थितियों में हमारे मंत्रीमंडल और उनके नेता नही हैं? और क्या उन्हें भी उस संजीवनी बूटी की जरूरत नहीं है, जिसका उल्लेख अपने भाषण में चर्चिल ने किया था?

ये बहुत गंभीर प्रश्न है और इन पर तुरंत हमारा ध्यान जाना चाहिए। आज हमारे देश की दो सीमाओं पर शेर जैसा खूंख्वार और भेड़िये जैसा धूर्त दुश्मन चीन अपनी पूरी तैयारियों के साथ जुटा हुआ है और तीसरी सीमा पर खाइयां खोद रहा है पाकिस्तान। दोनों में दोस्ती है, जो करेले को नीम चढ़ा बनाती है। परिस्थितियों का अध्ययन कर ऐसा लगता है कि दोनों की व्यूह-रचना यह है कि पाकिस्तान काश्मीर पर आक्रमण करे और चीन अपनी जगह डटा रहे—छेड़ छाड़ करता रहे। भारत लद्दाख और नेफा और भूतान-सिक्किम की सीमा पर से अपनी सेना न हटा सके और काश्मीर में उसे पाकिस्तान से पछाड़ खानी पड़े। यदि वह पाकिस्तान के लिए भारी हों तो चीन भी युद्ध आरम्भ कर दे। इसी बीच कम्यूनिस्ट और दूसरे पंचमांगी देश में अव्यवस्था फैलाने के विध्वंसक प्रयत्न करें। नतीजा यह कि काश्मीर, लद्दाख, भूतान, सिक्किम, नेफा और आसाम तक का क्षेत्र भारत से छिन जाये!

क्या यह परिस्थिति उससे बुरी नहीं है, जिसमें उस समय चर्चिल थे? है ही, तो हमारे मंत्रीमंडल और उनके नेता किस परिस्थिति में है? क्या उन्हें उस संजीवनी बूटी की जरूरत नहीं है, जिस की मांग उस समय चर्चिल ने की थी? जनता का विश्वास और आदर उन्हें प्राप्त नहीं है और अपने ही दल के लोग कब पीछे से उनकी कमर में छुरा घोंप दें और कब आगे से गला घोट दें, इसका खतरा हर समय है। क्या इन परिस्थितियों में उनसे यह आशा करना पागलपन नहीं है कि युद्ध की परिस्थितियों और राष्ट्रीय दुस्थितियों का मुकाबला करें?

केरल में अपनों के कारण मंत्रीमंडल का पतन हुआ, क्या यह सत्य नहीं? भोपाल में श्री द्वारका प्रसाद मिश्र के मुख्यमंत्री बनने पर स्थिरता की जो आशा उगी थी, क्या वह कुम्हलाने नहीं लगी? यू० पी० में श्रीमती सुचेता कृपलानी क्या खींचतान का शिकार नहीं है? जमींदारी का खात्मा करने वाले श्री कृष्ण वल्लभ सहाय क्या बिहार में निश्चिन्त हैं? पंजाब में साधुमना श्री रामकिशन को अस्तित्व के लिए ही क्या पूरी शक्ति लगानी नहीं पड़ रही है? क्या उड़ीसा में उखाड़-पछाड़ की कमी है? क्या काश्मीर में सादिक साहब को मोर्चे पर पूरी ताकत लगाने की फुर्सत दी जा रही है?

इन सब प्रश्नों का उत्तर है नहीं, नहीं, नहीं! माउंटबेटन अंग्रेजी राज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को समेटने के लिए भारत आये थे। यदि आज के नेता प्रजातंत्र को समेटने के लिए ही गद्दियों पर नहीं बैठे, तो उनका आज का काम है विभिन्न राज्यों के मंत्रीमंडलों में जांच-पड़ताल, अदला-बदली का काम जल्दी निमटाकर ऐसी स्थिति पैदा करना कि अगले चुनाव तक अखंडनीय स्थिरता कायम हो, चाहे वह लाड़ से हो, चाहे ताड़ से और चाहे उखाड़ (राष्ट्रपति शासन) से !!!

(२)

जौन्सन से किसी ने पूछा—"आप इतने बुद्धिमान कैसे बन गये ?" जौन्सन ने उत्तर दिया—"मूर्खों की कृपा से !"

प्रश्न कर्ता अचकचाया—"मूर्खों की कृपा से ?"

जौन्सन स्थिर रहे—"हाँ, मूर्खों की कृपा से और यह इस तरह कि मूर्खों को जो जो मूर्खता करते देखता रहा वही-वही मैं छोड़ता रहा। जीवन से मूर्खता हटी, तो बुद्धिमता स्वयं ही वहाँ आ-बैठी और इस तरह मैं मूर्खों की कृपा से बुद्धिमान हो गया।"

प्रश्न समाधान पा नये प्रश्न में उठ-उभरा—"तो आपकी राय में बुद्धिमान कौन है ?"

जौन्सन ने कहा—"जो दूसरों के अनुभव से लाभ उठाये, वह बुद्धिमान है।"

"और मूर्ख कौन है ?" उप प्रश्न जन्मा, तो उत्तर मिला—"मूर्ख वह है, जो अपने अनुभव से लाभ उठाये।"

प्रश्न कर्ता उलझ गया था, तो उसने अन्धेरे में टटोला—"जो दूसरों के अनुभव से लाभ उठाये, वह बुद्धिमान है और मूर्ख वह है, जो अपने अनुभव से लाभ उठाये, पर यह तो बताइए कि जो दोनों के अनुभव से लाभ न उठाये, वह क्या है ?

जौंसन पूरी रोशनी में थे। झट बोले—"वह जानवर है।"

बात पूरी हो गयी और कानों कान और आंखों आंख सब के पास पहुँच गयी। आज हमारे सामने वह इस प्रश्न के रूप में खड़ी है कि भारत में जो लोग पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा देश के नव-निर्माण का काम कर रहे हैं, वे किस दर्जे में आते हैं ? वे बुद्धिमान हैं ? साधारण हैं ? या इन दोनों में नहीं हैं ? इन प्रश्नों पर सही राय बनाने के लिए इनकी पृष्ठभूमि को समझना भी जरूरी है।

आज देश में जो अस्थिरता है, घबराहट है, हाहाकार है, परेशानी है, महंगाई है, अभाव है और इन सब के कारण मानसिक डांवाडोल है, उस का नम्बर एक कारण पंचवर्षीय योजना है, नम्बर दो वितरण की अवव्यस्था है, नम्बर तीन समाज में सामाजिक दृष्टिकोण की कमी है। इन तीनों पर सही और सच्ची नजर न हो, तो बात समझ में नहीं आ सकती और जो बात हमारी समझ में न आये, उसका हल हम कैसे निकाल सकते हैं ? पांचवी पंचवर्षीय योजना के अन्त में देश आज की अस्थिरता, घबराहट, हाहाकार, परेशानी, मंहगाई, अभाव और इन सब के कारण उपजे मानसिक डांवाडोल के पार पहुंच पायेगा, हमारे राष्ट्रीय जीवन का यह सबसे बड़ा सत्य है, पर इस सत्य की महत्वपूर्ण बात यह है कि आज के मानसिक डांवाडोल को, जो जनता के लिए असहनीय हो चला है, सहनीय बनाये बिना हम पांचवी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक का समय-सागर पार नहीं कर सकते।

मंहगाई और सस्ती का मोटा असूल यह है कि जब बाजार में सामान कम होता है और खरीदार ज्यादा होते हैं, तो चीजें मंहगी हो जाती हैं और खरीदार कम होते हैं और चीजें ज्यादा, तो चीजें सस्ती हो जाती हैं। यह बाजार की जिन्दगी का पक्का कानून है और बाजार का उतार चढ़ाव इसी के हाथ में है। अब साफ बात है कि बाजार में इस समय खरीदार ज्यादा हैं और चीजें कम हैं।

सवाल उठता है ये खरीदार कहाँ से आये ? इन खरीदारों को पंचवर्षीय योजनाओं ने पैदा किया। हमारी योजनाओं पर हर साल दस बारह अरब रुपये खर्च होते हैं। इंजीनियर, मिस्त्री, मजदूर, चौकीदार को वेतन मिलता है, ईंट वाले की ईंटें बिकती हैं, चूने वाले का चूना, प्रेस वाले की छपाई बनती है और बस यों ही वह रुपया लोगों में पहुँचता है। ये लोग ही खरीदार हैं और वह रुपया लेकर वे बाजार में आते हैं, पर चीजें कम हैं। वे खरीदारों की भीड़ देखकर मंहगी हो जाती हैं। मंहगाई के कारण ब्लैक मार्केटिंग होता है। उस ब्लैक मार्केटिंग से कुछ लोग और ज्यादा रुपया कमाते हैं। उस कमाई से और खरीदार बढ़ते हैं। उन खरीदारों से और मंहगाई बढ़ती है। उस मंहगाई से और ब्लैक मार्केटिंग होता है और बस यों ही उलझन पर उलझन बढ़ती जाती है।

चीजें कम क्यों हैं ? वे इसलिए कम हैं कि जिन कारखानों में वह करोड़ों-अरबों रुपया लगता है, वे इतने बड़े हैं कि साल भर में ही पूरे नहीं हो जाते। इसका मतलब है कि उनमें चीजें नहीं बनती। कई वर्ष बाद वे पूरे होंगे, तब उनमें पैदावार शुरू होंगी और उनका फल बाजारों को मिलेगा। यदि ये योजनायें गाँधी जी के ढंग से चलतीं, तो काम सारे देश में फैल जाता, लघु-उद्योगों और कुटीर उद्योगों के द्वारा जगह जगह चीजें बनने लगतीं और चीजों की ऐसी कमी न होती, खरीदारों की यह भीड़ न होती। अब यह भरी पूरी हालत पांचवी पंचवर्षीय योजना में आयेगी। कांग्रेस के अध्यक्ष श्री कामराज ने इसीलिए दुर्गापुर के भाषण में योजना को बहुत बड़ी न बनाने पर जोर दिया था, पर हमारे

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रधान मन्त्री श्री शास्त्री जी योजना को छोटी नहीं करना चाहते और ऐसी तरकीबें सोच रहे हैं, जिनसे खरीदारों की भीड़ और चीजों की कमी का कोई उपाय निकले। तो मतलब यह कि आज की परेशानियों का नम्बर एक कारण हमारी पंचवर्षीय योजनायें हैं। जरूरत है कि जनता को समझाया जाये कि कल के और हमेशा-हमेशा के आराम के लिए आज की पीढ़ी को तकलीफें बर्दाश्त करनी चाहियें और सरकार समझे कि बर्दाश्त की सीमा कितनी हो सकती है।

दूसरा कारण परेशानियों का यह है कि जो चीजें देश के पास हैं, चाहे वे यहाँ पैदा हुई हों, चाहे कहीं से मंगाई हुई हों, उनका वितरण यानी बटवारा ठीक नहीं होता। इस से जनता में अविश्वास और बेइत्मीनानी पैदा होती है कि पता नहीं चीजें मिलेंगी या नहीं। चीजों की कमी है पर उतनी कमी नहीं है जितनी कमी का हल्ला है। बटवारे का इन्तजाम ठीक हो, तो परेशानियां बर्दाश्त के लायक बन जायें। बटवारे का सवाल बहुत अहम है। पंचवर्षीय योजनाओं से जो धन देश में बढ़ा है, वह थोड़े से लोगों में इकट्ठा हो गया है और उसके फैलने की जरूरत है, यह तो बड़े दर्जे की बात है, पर नीचे के दर्जे को हम आसानी से ठीक कर सकते हैं।

समझने के लिए शहरों में सब से ज्यादा हल्ला अनाज और चीनी का है। इसका कारण व्यापारी हैं और सरकारी दूकानें हैं। न व्यापारियों ने ईमानदारी बरती है न सरकारी महकमें ने। सरकार को पहले अपने महकमें को ठीक करना चाहिए था, पर आपस की फूट से शासक दल का पूरा ढांचा ऐसा सड़ गया है कि अपनी मशीनरी पर उसका कंट्रोल नहीं है। सरकार ने अपने महकमें को ठीक न कर व्यापारियों को ठीक करने की चढ़ाई शुरू कर दी, तो हल्ला और बढ़ गया और व्यापारी तो ठीक होते ही क्यों? बात यह है कि व्यापारियों को ठीक करने का उपाय भी तो वही मशीनरी थी, जो खुद ठीक न थी। इस तरह वितरण की व्यवस्था गड़बड़ थी, गड़बड़ है और जैसे भी हो, उसे ठीक करना ही पड़ेगा। उस का उपाय यही है कि शासक दल के नेता पहले स्वयं ठीक हों और तब अपनी मशीनरी को ठीक करें। यदि सरकारी दूकानों का संचालन ठीक हो, तो पचहत्तर प्रतिशत हो हल्ला आज शांत हो जाये।

सबसे बड़ी बात यह है कि सबसे बड़ा अभाव अभाव के हो हल्ले का है। इस हल्ले से अभाव की हवा बंधती है। उससे व्यापारी लूटने को मजबूत हो जाते हैं और खरीदार लुटने को मजबूर। जब स्वर्गीय श्री रफी अहमद किदवई केन्द्रीय खाद्य मन्त्री हुए, तो चारों ओर अभाव का हल्ला नहीं, हाहाकार था। उन्होंने पत्रकारों से कहा—यह हल्ला नकली है, धोखा है। मैं कन्ट्रोल हटाने के लिए राज्यों के खाद्य मन्त्रियों से सलाह करूंगा।

उत्तर प्रदेश में श्री चन्द्रभानु गुप्त उस समय खाद्य मन्त्री थे। उनकी और रफी साहब की बनती न थी। गुप्त जी ने ऐलान किया कि यू० पी० कन्ट्रोल हटाने के पक्ष में नहीं है, क्योंकि इससे जो गड़बड़ी मचेगी, उसका नियंत्रण असंभव होगा। दूसरा कोई होता तो हप्प हो जाता इस मार से, पर वे तो रफी साहब थे। उस समय अभाव का सबसे बड़ा क्षेत्र मद्रास था और श्री राजगोपालाचार्य वहाँ मुख्यमन्त्री थे। रफी साहब हवाई जहाज से मद्रास जा पहुँचे और राजा जी से कहा कि मेरे नाम एक प्रार्थना पत्र लिखकर दो कि मद्रास में कन्ट्रोल तोड़ दिया जाए।

राजा जी ने कहा—हमारे यहां तो अनाज की बहुत कमी है। कंट्रोल हटाने से गदर मच जायगा। रफी साहब ने कहा—आपके यहां ज्यादा से ज्यादा जितने अनाज की कमी हो सकती है, उससे कुछ ज्यादा अनाज कलकत्ता से जहाजों द्वारा मद्रास भेजने का आदेश देकर मैं दिल्ली से चला हूँ। कल वह आपको मिल जायगा। राजा जी ने खुशी खुशी प्रार्थना पत्र लिख दिया और रफी साहब ने दिल्ली आते ही कंट्रोल समाप्त कर देने की घोषणा कर दी। जब मद्रास तैयार था, तो यू० पी० के इन्कार की कोई कीमत न थी। दुनिया कहती है रफी साहब ने कंट्रोल हटाने का चमत्कार दिया। मैं कहता हूँ रफी साहब ने चमत्कार किया अभाव के होहल्ले को खत्म करने का। अभाव के होहल्ले पर कंट्रोल टिका था। होहल्ला टूटा कि कंट्रोल धड़ाम गिरा।

एक नया मजाक भी चमत्कारी है। रफीसाहब के दोस्त और केन्द्रीय पुनर्वास मन्त्री श्री महावीर त्यागी देहरादून गये थे। अपने जादूगरी स्वभाव के कारण उन्होंने दो-चार जगह बातचीत में गप्प उड़ाई कि केन्द्रीय मन्त्री मण्डल अनाज पर से सब तरह का नियंत्रण हटाने का विचार कर रहा है, क्योंकि फसल अच्छी है और विदेशों से काफी अनाज आ गया है। गप्प फैल गयी और अनाज का भाव दस रुपये मन गिर गया। वही बात कि आज की परेशानियों का दूसरा कारण वितरण की अव्यवस्था है, जो अभाव का ढिंढोरा पीटती है और अभाव का भाव पैदा करती है।

अब तीसरी बात सामाजिक दृष्टिकोण की कमी। स्वस्थ समाज वह है, जो व्यक्ति को-नागरिक को पोषण दे कि वह पनपता रहे और स्वस्थ नागरिक वह है, जो इस तरह पनपे कि समाज को भी ताकत मिले। यों समझिये कि म्यूनिसिपैलिटी की जिम्मेदारी है कि शहर को साफ रखे, जिससे बीमारियाँ शहरियों को खतरे में न डालें और शहरियों की जिम्मेदारी है कि इस तरह रहें कि म्यूनिसिपैलिटी को परेशानी न हो। इसे और साफ करने की जरूरत है। म्यूनिसिपैलिटी सुबह आठ बजे सड़कों गलियों को साफ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करे, जिससे दिन भर शहर जीने के लायक रहे, यह उचित है, पर यदि सुबह की सफाई के बाद नागरिक लोग अपने घर का कूड़ा बाहर फेंक, तो शहर साफ कैसे रह सकता है ? तो दोनों की जिम्मेदारी हुई कि एक दूसरे को सहयोग दें, एक दूसरे से सहयोग लें । यही है सामाजिक दृष्टिकोण !

इस सामाजिक दृष्टिकोण की कमी से आज की अव्यवस्था बढ़ती है । यदि शिक्षा और प्रचार के द्वारा यह कमी दूर की जाती, तो देश में अल्पबचत का काम सरकारी महकमा न बनकर देशवासियों का धर्म बन जाता । जिनके पास पैसा है, वे अंटशंट चीजें न खरीदें, उस पैसे को बैंक में जमा करें । इससे बुढ़ापे के सुख की गारंटी होती है देश के निर्माण को सहारा मिलता है और आज का हाहाकार भी कुछ कम होता है । योजनाएं समाज का प्रतिनिधित्व करने वाली सरकार ने बनाई चलाई हैं, पर वह आसमान में ज्यादा उड़ीं, धरती पर कम रहीं । उसने बरसों बाद बिजली देने वाले बांध और बरसों बाद पानी देने वाली नहर पर भरोसा किया, ध्यान दिया, पर तुरन्त फल देने वाले कच्चे कुए और छोटे-से तालाब पर ध्यान नहीं दिया । १९४८ में बाजार में अच्छे कपड़े और विलास की चीजों का घोर अभाव था । सरकार ने चार अरब रुपये के विदेशी वस्त्र, घड़ियां, फाउनटेनपैन ही नहीं, पाउडर-लिपस्टिक तक मंगा कर बाजार भर दिये और इस तरह समाज पांचवी पंचवर्षीय योजना तक सादगी-संतोष से चलने की भावना से हीन हो गया । मजदूरों की सुविधा के बहुत अच्छे और उचित नियम बनाये, पर उनमें अच्छा और अधिक काम करने की भावना पैदा नहीं की । मतलब यह कि आज व्यक्ति समाज को खाकर पनप रहा है और समाज व्यक्ति को पुष्ट न कर निचोड़ ही रहा है ।

अब तक जो कुछ कहा, उसका सार है वही कि आज जो अभाव है, हाहाकार है, परेशानी है और मानसिक डांवाडोल है, उसका कारण पंचवर्षीय योजना है, वितरण की अव्यवस्था है, सामाजिक दृष्टिकोण की कमी है । पांचवी पंचवर्षीय योजना की पूर्णता देश की जनता को शांत-संतुलित जीवन देगी, पर उस पूर्णता तक पहुँचने के लिए आज के मानसिक डांवाडोल में स्थिरता उत्पन्न करना अनिवार्य शर्त है ।

यह शर्त कैसे पूरी हो ? जौन्सन के शब्दों में बुद्धिमान वह है, जो दूसरों के अनुभव से लाभ उठाये । हम भी रूस के अनुभव से लाभ उठायें । १९१७ में रूस में साम्यवादी क्रांति हुई और बाद में प्रतिक्रांति की घमासान मची । उससे निमटते ही महान नेता लेनिन ने यह सत्य समझ लिया कि पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा देश में उद्योग-धंधों का फैलाव करके ही नये रूस का जन्म हो सकता है । उद्योग धन्धों के लिए मशीनों की जरूरत थी और मशीनों को खरीदने के लिए विदेशी सिक्कों की जरूरत थी । वे रूस के पास न थे, न उसे हमारी तरह उधार मिल सकते थे । वह अपनी चीजें विदेशों के हाथ बेचकर ही विदेशी सिक्के कमा सकता था । जांच से मालूम हुआ कि रूस के पास जंगलों में लकड़ी है, जानवर हैं गोश्त वाले और दूध वाले । बस और कुछभी नहीं । लेनिन ने लकड़ी, गोश्त, खाल और दूध का मक्खन-पनीर बनाकर विदेशों को भेजना आरम्भ कर दिया और बदले में मशीन खरीद कर पंचवर्षीय योजना आरम्भ की । लेनिन जानते थे कि १५-२० साल में नई हालत आयेगी और तब तक जनता को तंगी भुगतनी पड़ेगी । उन्होंने घोषणा कर दी कि हरेक नागरिक को तुलकर इतनी रोटी मिलेगी और दूध कोई न पी सकेगा, जब तक डाक्टर उसे नुस्खे में न लिख दे । ७॥ वर्षों तक तुलकर रोटी मिली और नपकर दोरड़े जैसे मोटे कपड़े । इतनी सख्ती से इस नियम का पालन हुआ कि प्रिंस क्रोपाटकिन जैसे महापुरुष को भी जीवन के अन्तिम दिनों में दूध नहीं मिला । जनता में अभाव था, पर हाहाकार नहीं, शासन दंड और शासन प्रचार से सब समझ गये थे कि इस स्थिति में अभी परिवर्तन सम्भव न होगा । दंड ने बकवाद को रोका, तो प्रचार ने बोझ को सहने लायक बनाया और रूस नगण्य से अग्रगण्य हो गया । क्या मतलब इस बात का ? मतलब यह कि अभाव में भी अपने तरीके से मानसिक स्थिरता पैदा करने से ही रूस को सफलता मिली ।

प्रश्न यह है कि अपने प्रजातन्त्री देश में हम जनता में यह मानसिक स्थिरता कैसे पैदा करें ? हमारा देश प्रजातन्त्री है । हम डन्डे के जोर से जनता की आवाज बन्द नहीं कर सकते, यह सौभाग्य की, गर्व की, सुख की बात है । हम जनता में मानसिक स्थिरता पैदा कर सकते हैं जीवन में रोज-रोज के उपयोग की चीजों के भावों में स्थिरता उत्पन्न करके । विलास की चीजों में लाख उतार चढ़ाव आयें, पर मनुष्य का साधारण जीवन शांति से चले । उसे भले ही और और और चीजें मिलने की आशा न हो, पर उसे यह यह यह मिलने का अखंड विश्वास हो । इसके लिए आवश्यक है कि देश के मन्त्री मंडलों में जो रोज हुड़दंग मचते हैं, उलट फेर होते हैं, वे बन्द हों और उन्हें विश्वास के साथ काम करने का अवसर मिले । वे लोग सबसे पहले वितरण की व्यवस्था को ठीक करें, जिससे कम आय के लोगों को ही नहीं, मध्यम आय के लोगों को भी विश्वास रहे कि उन्हें जब वे चाहें उनकी जरूरत का अन्न उचित मूल्य पर मिलेगा । इस सस्ते अन्न के लिए और देश में अधिक अन्न उपजाने के लिए यदि योजना का एक बांध या कारखाना कम करना पड़े, तो उससे कोई हानि नहीं । किसानों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के काम की चीजों के दामों में भी स्थिरता हो, जिससे उनकी लागत में उतार चढ़ाव न हो बार बार। उद्योग धन्धों की ही शर्त पर उन्हें भी लम्बे समय के ऋण मिलें और योजनाओं नें दीर्घकालीन और अल्पकालीन का अनुपात ठीक ठीक स्थापित हो।

आज जो अव्यवस्था और हाहाकार है वह रुपयों के अभाव के कारण नहीं है। रुपयां तो पिछले वर्षों में बुरी तरह बखेरा गया है और आज भी बखेरा जा रहा है। सालभर सुस्त रहकर मार्च में सरकारी महकमें जिस तरह रुपया उलीचते हैं, वह बड़ा ही दर्दनाक दृश्य होता है। यदि समाजवादी या गाँधीवादी ढंग से चौथी पंचवर्षीय योजना को चालू किया जाये, तो बिना किसी हड़कम्प के आज का हाहाकार दूर होकर जनता में स्थिरता आ सकती है। यह स्थिरता सब कामों से पहला काम है, क्योंकि चीन-पाकिस्तान का आक्रमण कभी भी सम्भव है और जनता में स्थिरता स्थापित करके ही युद्ध जीता जा सकता है। जान्सन की सूक्ति के अनुसार वह हमारी परीक्षा का समय है कि हम रूस के अनुभव से और अपने भी इतने वर्षों के अनुभव से लाभ उठाकर एक बुद्धिमान की तरह आगे बढ़ते हैं या जानवर सिद्ध होते हैं कि कोई आकर हमें हांके।

सपनों को दे देश निकाला मेरे दृग सो जाते हैं !

जनम-जनम का पीड़ाओं से मेरा एक अनुबन्ध है।
इसीलिए हर रुंधे कन्ठ से मेरा स्वर-सम्बन्ध है॥

खुशियों की परछाँई में दब मेरे गीत कराहते,
दुख से भीगा आँचल पाकर अपने भाग सराहते,
इसीलिये आँसू से गीला मेरा हर एक छन्द है।
जनम-जनम का पीड़ाओं से, मेरा एक अनुबन्ध है॥

रोते-रोते हँस लेना भी पुण्य भरा एक पाप है,
मेरी हर निर्वसना आशा मुझ पर ही अभिशाप है,
इसीलिए निर्लज्ज लाज भी हो जाती स्वच्छन्द है।
जनम-जनम का पीड़ाओं से मेरा एक अनुबन्ध है॥

गीत मेरे पीड़ा-पनघट पर अपनी तृषा बुझा लेते,
और वैरागिन यादों के संग मन ही मन में गा लेते,
इसीलिए हर गीत अधर के कारागृह में बन्द है।
जनम-जनम का पीड़ाओं से मेरा एक अनुबन्ध है॥

सपनों को दे देश निकाला मेरे दृग सो जाते हैं,
सुख-बोझे को चरण विवश हो कभी नहीं ढो पाते हैं,
इसी लिए सन्यासी संयम सदा रहा निर्द्वन्द है।
जनम-जनम का पीड़ाओं से मेरा एक अनुबन्ध है॥

श्री रमेश जोशी 'मृदुल'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ईर्षा की आग से बचिए !

डॉ० रामचरण महेन्द्र

ईर्षा क्या है ?

ईर्षा एक कुत्सित भाव है, जो दूसरे के गुण, सुख, न्नति और विकास को देखकर मन में पीड़ा और जलन पजाता है। यह एक आन्तरिक आग है, जो दूसरे की ढ़ती देखकर भीतर ही भीतर हमें जलाता है।

यह भाव कुत्सित क्यों है ? इसलिए कि यह अपना ख नहीं चाहता, अपनी उन्नति के लिए प्रेरित नहीं रता, बल्कि दूसरे का दुख चाहता है, दूसरे को गिराने ो प्रेरणा देता है।

लोक कथा है कि एक कुबड़ी बुढ़िया को देखकर नारद नि कृपालु हुए। बोले—बुढ़िया, मेरे पास आ, मैं योग ल से तेरा कूबड़ दूर कर दूँगा।

बुढ़िया ने हाथ जोड़ कर कहा—"नारद बाबा, कृपालु ा हुए हो, तो मेरा कूबड़ तो ज्यों का त्यों रहने दो, पर रे पड़ौसियों की कमर में भी कूबड़ कर दो।"

आश्चर्य-चकित हो नारद मुनि ने पूछा—"बुढ़िया, रों के कूबड़ से तुझे क्या लाभ होगा भला ?"

बुढ़िया ने कहा—"मैं उन्हें कमर झुकाकर चलते देख र सुख पाऊँगी।"

यह है ईर्षा कि बुढ़िया अपने सुख को भूलकर दूसरों दुख में दिलचस्पी लेती है। इसका अर्थ है कि संसार ईर्षा का भाव प्रबल हो, तो वह सुख का स्वर्ग नहीं, ख का रौरव ही हो जाये।

ईर्षा एक संकर मनो-विकास है, जो आलस्य, अभिमान ौर नैराश्य के संयोग से उपजता-बढ़ता है। अपने आप ा दूसरे से ऊँचा मानने की भावना अर्थात् मनुष्य का हं' पुष्ट करता है।

ईर्षा मनुष्य की हीनत्व-भावना से संयुक्त है। अपनी हीनत्व-भावना-ग्रन्थि के कारण हम किसी उद्देश्य या फल के लिए पूरा प्रयत्न तो कर नहीं पाते, उसकी उत्तेजित इच्छा करते रहते हैं। हम पहले सोचते हैं—काश, हमारे पास अमुक चीज होती ! फिर सोचते हैं—हाय, वह चीज उसके पास तो है, हमारे पास नहीं ! तब सोचते हैं—वह वस्तु यदि हमारे पास नहीं है, तो उसके पास भी न रहे।

स्पर्धा ईर्षा की स्वस्थ अवस्था है। स्पर्धा में किसी सुख, ऐश्वर्य, गुण या मान से किसी व्यक्ति विशेष को सम्पन्न देख अपनी त्रुटि पर दुख होता है, फिर प्राप्ति की एक प्रकार की उद्वेगपूर्ण इच्छा उत्पन्न होती है। स्पर्धा वह वेग पूर्ण इच्छा या उत्तेजना है, जो दूसरे से अपने आप को बढ़ाने में हमें प्रेरणा देती है। स्पर्धा बुरी भावना नहीं। इसमें हमें अपनी कमजोरियों पर दुख होता है। हम आगे बढ़ कर अपनी निर्बलता को दूर करना चाहते हैं।

श्री रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है—स्पर्धा में दुख का विषय होता है—मैंने उन्नति क्यों नहीं की ? और ईर्षा में दुख का विषय होता है—उसने उन्नति क्यों की ? स्पर्धा संसार में गुणी, प्रतिष्ठित और सुखी लोगों की संख्या में कुछ बढ़ती करना चाहती है और ईर्षा कमी।

स्पर्धा व्यक्ति विशेष से होती है। ईर्षा उन सब से होती है, जिनके विषय में यह धारणा हो कि लोगों की दृष्टि उन पर अवश्य पड़ेगी या पड़ती है। ईर्षा में क्रोध का भाव किसी न किसी प्रकार मिश्रित रहता है। ईर्षालु के लिए कहा भी जाता है कि अमुक व्यक्ति ईर्षा से जल रहा है। साहित्य में ईर्षा को संचारी रूप में समय समय पर व्यक्त किया जाता है, पर क्रोध बिल्कुल जड़ भाव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। जिसके प्रति हम क्रोध करते हैं, उसके मानसिक उद्देश्य पर ध्यान नहीं देते। निर्धन ईर्षा वाला केवल अपने को नीचा समझे जाने से बचने के लिए आकुल रहता है, पर धनी व्यक्ति दूसरे को नीचा देखना चाहता है।

ईर्षा दूसरे को असम्पन्न-हीन देखने की इच्छा के अपूर्ण रहने से उत्पन्न होती है। यह अभिमान को जन्म देती है, अहंकार की अभिवृद्धि करती है और कुढ़न का ताना बाना बुनती रहती है। अहंकार से आहत होकर हम दूसरे की भलाई नहीं देख सकते और अभिमान में फँसकर हमें अपनी कमजोरियां नहीं दीखती। अभिमान का कारण अपने विषय में बहुत ऊंची मान्यता बना लेना है। ईर्षा उसी की सहगामिनी है। जो कुछ हूं, मैं हूँ, जो कुछ मिले, मुझे ही मिले।

ईर्षा द्वारा हम मन ही मन दूसरे की उन्नति देखकर मानसिक दुख का अनुभव किया करते हैं। अमुक मनुष्य ऊँचा उठता जा रहा है। हम यों ही पड़े हैं, उन्नति नहीं कर पा रहे हैं। फिर वह भी क्यों इस प्रकार उन्नति करे। उसका कुछ बुरा होना चाहिए। उसे कोई दुख, रोग, शोक, कठिनाई अवश्य पड़नी चाहिए। उसकी बुराई हमें करनी चाहिए। यह करने से उसे अमुक प्रकार से चोट लगेगी। इस प्रकार की विचारधारा से ईर्षा निरन्तर मन को क्षति पहुंचाती है। अशुभ विचार करने से, सदप्रवृत्तियों का, हमारी प्राणशक्ति का धीरे धीरे ह्रास होने लगता है।

ईर्षा से उन्मत्त हो मनुष्य धर्म, नीति तथा विवेक का मार्ग त्याग देता है। उन्मत्तावस्था-सी उसकी साधारण अवस्था हो जाती है और दूसरे लोगों की साधारण अवस्था उसे अपवाद के सदृश प्रतीत होती है। मस्तिष्क में ईर्षा के विकार से नाना प्रकार की विकृत मानसिक अवस्थाओं की उत्पत्ति होती है। भय, घबराहट, भ्रम ये सब दोष ईर्षा और उससे उत्पन्न विवेक बुद्धि के अपकर्ष से उत्पन्न होते हैं।

प्रत्येक क्रिया से प्रतिक्रियाओं की उत्पत्ति होती है। ईर्षा की क्रिया से मन के बाह्य वातावरण में जो प्रतिक्रियायें उत्पन्न होती हैं, वे विषैली होती हैं। मनुष्य की अपवित्र भावनायें उसके इर्द गिर्द के वातावरण को दूषित कर देती हैं। वातावरण विषैला होने से सब का अपकार होता है। ईर्षा की जो भावनायें हम दूसरों के विषय में निर्धारित करते हैं, सम्भव है दूसरे भी प्रतिक्रिया स्वरूप वैसी ही धारणाएँ हमारे लिए मन में लायें।

जो लोग यह समझते हैं कि वे ईर्षा की कुत्सित भावना को मन में छिपा कर रख सकते हैं और यह मानते हैं कि दूसरा व्यक्ति उसे जान न सकेगा, वे बड़ी भूल करते हैं। प्रथम तो यह भावना छिप ही नहीं सकती, किसी न किसी रूप में प्रगट हो ही जाती है, दूसरे दुराचार और उसे छिपाने की भावना मनोविज्ञान की दृष्टि से अनेक मानसिक रोगों की जननी है। कितने ही लोगों में विक्षिप्त जैसे व्यवहारों का कारण ईर्षा जन्य मानसिक ग्रन्थि होती है। ईर्षा मन के भीतर ही भीतर अनेक प्रकार के अप्रिय कार्य करती रहती है। मनुष्य का जीवन केवल उन्हीं अनुभवों, विचारों, मनोभावनाओं, संकल्पों का परिणाम नहीं जो स्मृति के पटल पर हैं, प्रत्युत गुप्त मन में छिपे हुये अनेक गुप्त संस्कार और अनुभव जो हमें खुले तौर पर स्मरण भी नहीं हैं, वे भी हमारे व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं। फ्रान्स के प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक बर्नसां ने ईर्षा को मनुष्य-जीवन-विकास का यह सिद्धान्त माना है। ईर्षा, क्रोध, कामभाव, द्वेष, चिन्ता, भय और दुर्व्यवहार का प्रत्येक अनुभव अपना कुछ संस्कार हमारे अन्तर्मन पर अवश्य छोड़ जाता है। ये संस्कार और अनुभव सदैव सक्रिय और पनपने वाले कीटाणु हैं। इन्हीं के ऊपर नवजीवन के निर्माण का कार्य चला करता है।

ईर्षा के विकार अन्तर्मन में पैठ जाने पर आसानी से नहीं जाते। उससे स्वार्थ और अहंकार तीव्र होकर सुप्त और जागृत भावनाओं में संघर्ष और द्वन्द्व होने लगता है। निद्रा-नाश घबराहट, प्रतिशोध लेने की भावना, हानि पहुँचाने के अवसर की प्रतीक्षा, विमनष्कता इत्यादि मानसिक व्यथायें ईर्षा पूर्ण मानसिक स्थिति की द्योतक हैं। यदि यह विकार बहुत तेज हुआ, तो मन पर एक अव्यक्त चिन्ता हर समय बनी रहती है। जल, अन्न, व्यायाम, विश्राम का ध्यान नहीं रहता। शयन के समय, घातप्रतिघात का संघर्ष और अव्यक्त की अद्भुत वासनायें आकर विश्राम नहीं लेने देती। अतः मनुष्य की पांच ज्ञानेन्द्रियाँ बिगड़ जाती है। रुधिर की गति में रुकावट होने लगती है। शारीरिक व्याधियाँ भी फूट पड़ती हैं। सम्पूर्ण शरीर में व्यवधान उपस्थित होने से मस्तिष्क का पोषण उचित रीति से नहीं हो पाता।

ईर्षा और क्रोध को मन में स्थान देना अनेक मानसिक क्लेशों तथा रोगों को मोल लेना है। इसलिए सदा सावधान रहिए और ईर्षा से बचिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यालय में शिक्षा समाप्त कर बाहर आते समय कुछ के पास होती है प्यास, कुछ के पास धुंधली आस, पर कुछ के पास होते हैं गहरे संघर्ष के मजबूत इरादे और उन इरादों को सहारा देते चौकन्ने विचार; ऐसे ही एक हैं श्री जगदीश चावला, जिन्होंने परीक्षा के साथ ही दीक्षा ली है उस संघर्ष की, जो परीक्षा पर समाप्त नहीं, आरम्भ होता है।

एक दास्तान, कुछ सवालों से भरी, कुछ इशारों से भरी!

श्री जगदीश चावला

अपनी एम. ए. की परीक्षा देने के बाद से ही मुझे अपने जीवन में एक अभाव-सा महसूस होने लगा है। लगता है जितनी कल्पनाओं के महल बी. ए. तक सजा रखे थे, वे सब के सब—एक एक करके ढह रहे हैं और मेरी ओर बढ़ा चला आ रहा है—एक नीरव, उदास और खामोश अंधेरा—और इस अंधेरे में लगता है मानों मेरा वह सब कुछ खो चुका है, जिसके लिए ही मैं आज तक शायद जी सका हूँ। मुझे जिन्दगी से अब तक उतना प्यार नहीं, जितना कभी पहले हुआ करता था; अब तो अपनी सांसें भी एक बोझ लगने लगी हैं।

मेरे दोस्त अब जब कभी मुझसे मेरा हाल पूछते हैं, तो इस पर मुझे मुस्करा कर ही रह जाना पड़ता है। उन्हें शायद इतने से कुछ तसल्ली हो जाती होगी, लेकिन अपने पास तो रह गयी हैं, कुछ पुरानी यादें और कुछ गूंगी तन्हाइयाँ।

कभी अपनी बेबसी है, कभी दोस्तों की ख़ातिर!
कभी रो के दर्द काटे, कभी हँस के ग़म छुपाये!!

मेरे शुभ चिन्तक अब जब कभी मुझ से बाहर घूमने का प्रस्ताव रखते हैं या सिनेमा चलने का आग्रह करते हैं, तो कुछ बहाना बनाकर उन्हें टाल देता हूं; बेचारे इस पर निराश से लौट जाते हैं - हालाँकि उनके चले जाने पर मुझे भी कुछ कम दुःख नहीं होता। पार्टी के साथी मुझे जनता में भाषण देने के लिए कहते हैं, तो लगता है मेरी आवाज़ थक चुकी है, उसमें अब दम नहीं रहा। ड्रामें की स्टेज और पर्दे मुझे अपने मूक इशारों से बार-बार बुलाते हैं, लेकिन मैं अब उन तक जाना नहीं चाहता।

न जाने मुझ में इतना परिवर्तन क्यों आ गया है? कहते हैं कि परिवर्तन का नाम ही जिन्दगी है, लेकिन मैं तो जीवन और उन सब चीजों से, जो जीवन का शृंगार हैं, बहुत दूर, एक सुनसान और अंधेरी सड़क पर, जिसका न कोई अन्त है न लक्ष्य, बढ़ा चला जा रहा हूं—प्रेरित हो किसी अनजानी शक्ति से, जिसे न मैं रोक सकता हूँ और न ही समझ सकता हूं।

शाम ढल रही है। बाहर हल्की-हल्की बारिश हो रही है और इधर हवा के झोंकों से उड़ते हुए मेरे ड्राइंग रूम के पर्दे, लगता है हंस रहे हैं देखकर-मेरी मजबूर आरजू के कुछ टूटे कमल। मेरी आँखें प्रश्न भरी-सी अपने कमरे में न जाने क्या ढूंढना चाहती हैं? ओह! यह तो मेरी अपनी ही डायरी है, जिसे नेहरू की आत्म-कथा पढ़ने के बाद से ही मैंने लिखना शुरू कर दिया था।

हां, बेशक, अपकी डायरी अपनी तन्हाइयों का एक अच्छा साथी है। और आज;आज मैं खुद पढ़ना चाहता हूँ अपनी उस जिन्दगी को, जिसे खुद मैंने अपने हाथों से लिखा है। तो ये हैं मेरी डायरी के कुछ खुले पृष्ठ, जिन्होंने एक बार फिर झकझोर दिया है मेरा गुजरा हुआ अतीत और जो सुना रहे हैं, एक दास्तान-कुछ सवालों से भरी—कुछ इशारों से भरी।

सहारनपुर, ९ सितम्बर

कालेज में कालिज-यूनियन के चुनाव की तैयारी थी, और पूरे शहर में यह चुनाव एक आम चर्चा का विषय बना हुआ था। यूनियन के अध्यक्ष पद के लिए खड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उम्मीदवारों में मैं भी एक उम्मीदवार था। हालांकि मैं कोई जन्मजात राजनीतिज्ञ नहीं और न ही राजनीति कभी मेरा विषय रहा है, लेकिन फिर भी मेरे साथियों ने न जाने मुझ में क्या देखकर मुझे इस चुनाव में खड़ा कर दिया है और मैं भी जाने क्या सोचकर खड़ा हो गया हूँ। चुनाव में खड़े होने से पूर्व मैं सोचता था कि भारत के लोकतन्त्रीय प्रशासन की व्यवहारिक शिक्षा की एक कड़ी, यूनियन के ये चुनाव भी हैं, लेकिन चुनाव में खड़े होने के बाद मैंने देखा कि जितने द्वेष और नफरत के बीज यहाँ बोये जाते हैं, उतने शायद ही कहीं और बोये जाते होंगे। यहां विद्यार्थियों में गांव शहर का सवाल उठ खड़ा होता है, मुर्दा जातिवाद की नसों में फिर से लहू दौड़ने लगता है और पैसा पानी की तरह बहता है।

नगर की कुछ राजनैतिक पार्टियों के लोग भी इस चुनाव में रुचि रखते थे। कल चुनाव था और आज रात कालिज-होस्टल में हमारी एक फाईनल मीटिंग हो चुकी थी जिसमें कुछ शर्तें रखी गयी, कुछ आपसी पैक्ट हुए; हालाँकि इससे पूर्व इसी तरह की कई मीटिंग मेरे घर पर और नगर के कुछ मुख्य होटलों और रेस्तरां में हो चुकी थीं। प्रचार सम्बन्धी तमाम सरगर्मियां आज बंद थीं; इत्र और खुशबू लगे कार्ड और पेम्फलेट आज नहीं बट रहे थे। हुल्लड़बाजी को रोकने के लिए कालेज के चीफ़प्रॉक्टर व उनका बोर्ड काफी सतर्क था। दस बजे सुबह एक ड्रामा हुआ और विरोधी पार्टी के एक उम्मीदवार ने चुनाव से अपना नाम वापिस ले लिया। देखा-देखी दूसरे उम्मीदवार ने भी अपना नाम वापस कर लिया। अब केवल मैं ही अकेला उम्मीदवार मैदान में था। बस इन परिस्थितियों में मेरे कुछ विरोधियों ने कुछ तनाव भी पैदा करना चाहा, लेकिन झूठ के पांव टिक नहीं सके और इस प्रकार मैं अपने कालेज-यूनियन के इतिहास में 'कालेज यूनियन' का पहली बार निर्विरोध अध्यक्ष घोषित कर दिया गया।

इस घोषणा को सुनते ही कालेज के प्रांगण में जिन्दाबाद के कुछ नारे गूंज उठे और भावावेष में आकर मेरे कई साथियों ने मुझे अपने कन्धों पर उठा लिया। इसी बीच मिलती रही रिपोर्टों में मुझे बतलाया गया कि कालेज के लड़के लड़कियों ने एक भारी तादाद में मेरी इस जीत का हृदय से स्वागत किया है। मेरे लाख मना करने पर भी मेरे दोस्तों ने कालेज-होस्टल से नगर तक मेरा एक भारी जलूस भी निकाल डाला। इस जलूस में मेरे आगे-आगे बैंड बज रहा था और कुछ विद्यार्थी बैंड की धुन पर नाचते जा रहे थे। बीच में एक खुली कार में खड़ा मैं अपने दोनों हाथ जोड़े अपने दोस्तों और बुजुर्गों की शुभ-कामनाएँ लेता जा रहा था और मेरे पीछे-पीछे कालेज के विद्यार्थियों का एक हजूम बढ़ा चला आ रहा था। रात को हमारा यह जलूस प्रिंसिपल साहब के घर पर जा कर खत्म हो गया और मैं अपने कुछ साथियों के साथ घर पर लौट आया। यहाँ पहुंचने पर फोन से मेरे कालेज के कई छात्र-छात्राओं ने मेरी इस विजय पर मुझे अपनी काफी सारी बधाइयाँ दे डालीं, मैंने इतनी बातों की कल्पना भी नहीं की थी। निःसन्देह आज मेरे हौंसले बढ़े हुए थे और अपने फोन का रिसीवर रखते-रखते मेरे मन में यही सवाल उठ रहे थे कि—

★ क्या ये चुनाव एक जनून नहीं होते, जिसमें हजारों उल्टे सीधे वायदे किये जाते हैं?

★ क्या इन चुनावों को जीत लेने से वास्तव में हम कोई जिम्मेदारी महसूस करते या उन्हें निभा पाते हैं?

★ क्या इन चुनावों में सर्वत्र जो तोड़ फोड़ का कार्यक्रम चलता है जिसमें कहीं चट्टान पर सुनार की हथौड़ी का हल्का स्पर्श है, तो कहीं राख के ढेर पर लोहार के हथौड़े की गहरी चोट है, क्या इससे टूटने वाला आँखों की किरकिरी बनने के लिए आकाश में मंडराने नहीं लगता या विरूप बनकर हमारे पैरों की गति को आहत करने के कुचक्र नहीं रचने लगता?

इन सवालों का जवाब कुछ भी हो सकता है, लेकिन इस समय मैं समझने में असमर्थ हूँ।

दिल्ली, २० सितम्बर

आज के 'हिन्दुस्तान टॉइम्स' के मुख पृष्ठ पर यह समाचार पढ़कर मन को कुछ अशान्ति-सी हुई कि 'हरिद्वार में विश्व-शान्ति के लिए एक महान यज्ञ हुआ, जिसमें सैकड़ों मन अनाज, घी और दूध हवन-कुन्ड की आग में फूँक दिया गया।'

हरिद्वार—हिन्दुओं का एक पवित्र तीर्थ-स्थल, जिसके विषय में दूर दूर तक यह प्रसिद्ध है कि सैकड़ों पाप करने पर भी गंगा मैया यहाँ सब के पाप धो डालती हैं, लेकिन मैंने कई ऐसे लोगों को भी देखा है, जिनके यहां नहाने पर तन की मैल तो आसानी से उतर जाती है, लेकिन मन की मैल पर कई और मैली पर्तें आकर जम जाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर यहाँ के पन्डे और पुरोहित तो भगवान, स्वर्ग और नर्क आदि का भय बताकर आत्म शुद्धि के नाम पर दान में जनता से चान्दी की खुली रिश्वत लेने में ज़रा भी हिचक महसूस नहीं करते हैं।

गाँधी और गौतम के इस देश में इन पन्डों और मूर्ख दानियों ने लगता है यह कभी नहीं सोचा कि जितना अनाज और पैसा विश्व शान्ति के नाम पर व्यर्थ ही वे हवन कुन्ड में फूँक देते हैं, उससे कई भूखे पेटों की रोटी का सवाल हल हो सकता है, कई फुटपाथ पर नंगे आकाश के नीचे सोने वाले बेघर लोगों की समस्या सुलझ सकती हैं। लगता है इन को मुल्क के दर्द से कोई वास्ता नहीं, कोई सरोकार नहीं।

हमारे घर को लूटने के लिए दुश्मन बढ़ रहा हो, तो ये लोग हाथ पर हाथ रखे भगवान भोलानाथ पर ही सब कुछ छोड़ कर और अटल-विश्वास की भाँग पीकर मस्त पड़े रहेंगे या मन्दिरों में घंटियाँ बजा-बजा कर शान्ति के नि.स्तब्ध वातावरण में एक कोलाहल पैदा कर देंगे। इतिहास इनकी वह कहानी भूल नहीं सकता, जब ग़ज़नी का सुलतान मंदिर को लूटने के लिए मंदिर के द्वार तक आ पहुँचा, तो इन लोगों ने मंदिर के अन्दर हर हर महादेव का शोर मचाना शुरू कर दिया था और तलवारों की जगह ये लोग करताल और मंजीरे लेकर दुश्मन को अपना कीर्तन सुनाते रहे थे, लेकिन दुश्मन पर इस का कुछ असर नहीं हुआ था। वह इरादों में अडिग था अतः वह इन्हें और इनके भगवान को लूट कर चलता बना। बार-बार ये सवाल मन में उठते हैं—

★ क्या इस यज्ञ से संसार में कुछ शान्ति स्थापित हुई है?

★ क्या इस प्रकार के यज्ञ एक खास तरह की जहालत के नमूने नहीं हैं?

★ क्या इस जहालत के कारण सदियों से यहाँ रूढ़िवाद और दकियानूसी धारणाओं के शोले नहीं भड़कते रहे और हमारा समाज उसकी लपटों में आज तक झुलसता नहीं रहा?

ताज्जुब है कि आज के इस वैज्ञानिक दौर में हमारा समाज पुराने उसूलों की उन पुरानी लकीरों को ग़लत समझते हुए भी निरन्तर पीटने में लगा है?

४ अक्टूबर

आज मेरा जन्म दिन था। दिन भर मैं घर के कामों में व्यस्त रहा। शाम को हमारे यहाँ मेरे कई दोस्त,

श्री जगदीश चावला

रिश्तेदार और हितैषी 'एट-होम' पर आमन्त्रित थे। दर-असल अंग्रेजी तरीके से अपना जन्म दिन मनाने की साहबियत हम लोगों में कुछ इस प्रकार से घुस गई है कि इसे मनाते समय हम अपने में एक अजीब प्रकार का गर्व महसूस करते हैं। आज ढलती शाम के साथ साथ हमारा घर कई प्रकार की रोशनियों की जगमगाहट में निखर उठा! मेरी बहन ने मुझे टीका किया और मेहमानों के सामने मोमबत्तियाँ बुझाते हुए जब मैंने केक काटा, तो तालियों की गड़गड़ाहट के बीच कई भारी और पतली आवाज़ों ने 'हैपी बर्थ डे टु यू' गाते हुए मेरे लिए अपनी मंगल कामनाएँ प्रकट की।

मेहमानों की ओर से अपनी सालगिरह पर मिले उपहारों को लेकर मैं सोच रहा था—

★ क्या वास्तव में इस प्रकार अपना जन्म दिन मनाने से हमारी निश्चित उम्र में कुछ और नये वर्षों की बढ़ोत्तरी हो जाती है?

★ क्या 'तुम जीयो हज़ारों साल, साल के दिन हों पचास हज़ार' की मीठी लोरियाँ यथार्थ की कसौटी पर कभी पूरी उतरा करती हैं?

★ और क्या परस्पर इस तरह की शुभकामनाओं का आदान-प्रदान मृत्यु के प्रति हमारे अस्वाभाविक भय का ही प्रतिबिम्ब नहीं है?

★ क्या इस प्रकार अपना जन्म दिन मनाने के मूल में दूसरों पर अपनी सम्पन्नता और अमीरी का प्रदर्शन करने की भावना कुछ अंश तक हममें निहित नहीं रहती?

ये सवाल इशारे बनकर मेरे सामने खड़े हैं और मैं इन पर सोच रहा हूँ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधी शताब्दी से सात साल अधिक;
यानी सत्तावन साल की एक जिन्दगी !
यह जिन्दगी आँसुओं की, यह जिन्दगी मुस्कानों की,
यह जिन्दगी आग की, यह जिन्दगी बाग की,
यह जिन्दगी हर्ष की, यह जिन्दगी संघर्ष की,
यह जिन्दगी आँगन की, घर के एकान्त कक्ष की,
जलूसों की, जलसों की, जेलों की, जलजलों की,
यह जिन्दगी लोक सभा के गूंजते गुम्बद की;
यह जिन्दगी श्रीमती कमला चौधरी की कि
उनसे मिलकर जिन्दगी की एक तस्वीर मिले।
५८ वीं वर्षगांठ पर अभिवादन के साथ यह विश्लेषण—

श्रीमती कमला चौधरी-

प्रो० देवेन्द्र दीपक

श्रीमती कमला चौधरी सरस्वती की कन्या हैं !

श्रीमती कमला चौधरी गाँधीजी की पट्ट शिष्या हैं !!

हिन्दी जगत में श्रीमती कमला चौधरी का नाम किसी परिचय की अपेक्षा नहीं करता। कहानीकार और कवि के रूप में उनकी उपलब्धियों से सभी परिचित हैं। उनके साहित्यिक जीवन के आरम्भ में प्रेमचन्द जी प्रभृति बुजुर्गों ने उनकी कला की प्रशंसा की थी और बाद में वयस्कों का सम्मान भी उन्हें प्राप्त हुआ। हिन्दी अध्येताओं के मानस पर उन की कला की छाप काफी गहराई से अंकित हो चुकी है। उनके रंग बहुत गहरे हैं। यों वे प्रतिभा पुत्री हैं। इसीलिए तो मैंने कहा कि कमला जी सरस्वती की कन्या हैं।

देश की राजनीति से सक्रिय रूप में वे सम्पर्कित रही हैं। गाँधी की हर पुकार पर वे निश्चित होकर आन्दोलन में भाग लेती रही हैं। गाँधी ने भारत छोड़ो की आवाज लगाई, गाँधी की आवाज कमला जी के कानों से टकरायी—उनकी गोद भरी थी, तीन मास का बच्चा गोद में था, बिना परिणाम की चिन्ता किये उन्होंने जेल की कुण्डी जा खटखटायी। बच्चा दूध को मचले तो मचले, उनका मन भी तो आजादी के लिए मचल उठा था। इसीलिए तो मैंने कहा कि कमला जी गाँधी जी की पट्ट शिष्या हैं।

श्रीमती कमला चौधरी मंच की कला में निपुण हैं !

श्रीमती कमला चौधरी 'मैस' की कला में दक्ष हैं !!

कभी गांव-गांव, कभी नगर-नगर, कभी बड़ों-बड़ों में, कभी छोटों-छोटों में, कभी पढ़ों-पढ़ों में, कभी अनपढ़ों-अनगढ़ों में कमला जी की वाणी अपना प्रभावशाली फल दिखाती रही है। मंच चाहे वह राजनीति का हुआ या साहित्य का, वे सदैव सम्मान पाती रही हैं। सुनने वालों ने उनकी प्रशंसा की है, बोलने वालों ने उनसे कुछ लिया-दिया है। कमला जी की वाणी में बल है और वह केवल इसलिए कि वे बुद्धि से नहीं अन्तस्तल से बोलती हैं। उनके बोल का तोल बेमोल है। इसीलिए तो मैंने कहा कि कमला जी मंच की कला में निपुण हैं।

अनुभव ने बताया है कि महिला मंच पर गयीं, उसका नाम मैस से—कहें घर गृहस्थी के काज से—लगभग समाप्त हो जाता है। कहिए कि उसकी गृहस्थी चौपट हो जाती है, थैली बिखर जाती, मुट्ठी खुल जाती है। कमला जी इसका अपवाद हैं। वे मंच पर रहीं लेकिन मैस को कभी नहीं भूलीं। एक बार उनके निवास स्थान पर पन्द्रह मिनट गुजार आने पर हर भी व्यक्ति यही कहेगा कि कमला जी एक सद् गृहस्थ हैं, एक आदर्श

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक प्रतिभाशाली व्यक्तित्व

ीर एक नीति-निष्ठ माता हैं। इसी ाए तो मैंने कहा कि वे मैस की ला में दक्ष हैं।

श्रीमती कमला चौधरी एक मौन ाधिका हैं!

श्रीमती कमला चौधरी एक मुखर ायिका हैं!!

उन्होंने जो लिखा उसका विज्ञा- न तो दूर, ज्ञापन भी वे नहीं कर ायीं। आज भी उनकी डायरी की ानेक कहानियां अप्रकाशित हैं। सी प्रकार आज उनकी अनेक अनु- तियां भी अनकही रह गयी हैं। वे खने में विश्वास करती हैं, छपाने नहीं। छपाने की लालसा नहीं, छपाने की संकोच आशा उनमें र्वाधिक है। आलोचकों से गाँठ- ाँठ कर प्रचार-कला-निपुण वे कभी हीं रहीं। जो छप गया सो छप या, जो रह गया सो रह गया, और हीं यह भी कि जहाँ छप गया, छप या, इसीलिए तो मैंने कहा कि वे ाहित्य में भी और जीवन में भी क मौन साधिका हैं।

गायक मन की मौज-मस्ती में ाता है, किसी के अंकुश या आक्र- ण से नहीं। कमला जी की भी ही स्थिति है। उन्होंने जो अनुभव या, जो भी कुछ उनकी संवेदना सूत्रों को उलझा-सुलझा गया, जो छ उन्हें हंसा या रुला गया, उसी र उनकी कलम चली है। अपनी री तन्मयता से वे लिखती हैं; वह ी पुस्तकों को पढ़कर नहीं, जीवन ी पढ़कर लिखती है। उनका खना ही उनका गाना है। जब-जब अपनी रचना लिखकर वे उठी हैं और उठकर उन्होंने अंगड़ाई ली है, उनकी अंगड़ाई की हर शिकन थकान से नहीं, आनन्द रस से स्नात ही दिखाई दी। इसीलिए तो मैंने कहा कि कमला जी एक मुखर गायिका हैं।

श्रीमती कमला चौधरी का जीवन मुक्ति का जीवन है।

कमला जी जिस परिवार में जन्मीं वह परिवार बहुत धनी, प्रति- ष्ठित एवं प्रख्यात परिवार था। जिस परिवार में विवाह हुआ, वहाँ सोने- चाँदी की दुनिया थी। आज भी उनके आंगन में नित सोना बरसता है और उस सोने को खर्चने की ही नहीं, बखेरने और लुटाने की भी उन्हें पूरी स्वतन्त्रता है। वैभव की दुनिया ही उनकी दुनिया है। इसी लिए तो मैंने कहा कि उनका जीवन मुक्ति का जीवन है।

कमला जी को समीप से देखिए कि वे लक्ष्मी की कृपा-प्राप्त होकर भी सरस्वती के स्नेह की आकांक्षा को कभी कम नहीं कर पायीं। भोग में रहकर भी उनमें योगभावना की कमी नहीं। उनके दरवाजे पर छोटे बड़े कार्यकर्ता समान सम्मान पाते रहे हैं। वे धन होने पर भी धनमय या धननिष्ठ कभी नही बनीं। कम- नीय कोठी में रहते भी काल कोठ- रियों और कुटियों में उनका आना- जाना बराबर बना रहा और कार रहते भी खेतों की मेढ पर झपटते उनके पांव कभी नहीं डगमगाये। धन का उन्होंने सर्वस्व समझ कर उपभोग नहीं, साधन समझ कर उपयोग ही किया है। इसीलिए तो मैंने कहा कि कमला जी का जीवन मुक्ति का जीवन है।

कमला जी के दो कार्य-क्षेत्र हैं- साहित्य और राजनीति!

साहित्य की रचना उनके लिए कोई यश-लिप्सा का साधन नहीं है, उनके जीवन की एक अनिवार्य विव- शता है। जब उनका मन किसी प्रसंग को लेकर भर जाता है, तो वे लिखने बैठ जाती हैं। उनके पति डा० जे० एन० चौधरी शरीर के देश प्रसिद्ध डाक्टर हैं, लेकिन कमला जी मन की डाक्टर हैं। मन के सूक्ष्मा- तिसूक्ष्म रहस्यों को शब्दों का रूप देना ही उनकी साधना की सिद्धि है।

साहित्य में उनकी गति तीन दिशाओं में रही है—कहानी, कविता और अनुवाद। नारी का संदवेन- शील मन एक करुण कविता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कमला जी की कहानी मानों उस महान कविता का एक छंद है। अबला जीवन की यही कहानी है कि उसके आंचल में दूध है और आंखों में पानी। कमला जी ने अपनी कहानियों में अबला के इस दूध और पानी की ही कहानी कही है। आंखों के पानी में आंखों के काजल की स्याही जहां बूंद बनकर गिरी, समझो वहीं कमला की एक कहानी तैयार हुई। आंचल में दूध लेकर नारी रमणी से उठकर जननी बन गई। कमला जी ने पूरी आत्मीयता से उस आंचल और उसके दूध की मर्यादा-महिमा का अंकन किया है।

इधर कमला जी की अधिकतर व्यंग्य कविताएं ही प्रकाश में आई हैं। प्रश्न हो सकता है कि कमला जी में व्यंग्य के प्रति यह रुझान कैसा? इसका कारण? मेरे पास इस का बहुत महफूज़ जवाब है। बात यह है कि कमला जी के मन में देश का एक नक्शा था, जिसे लेकर वे राजनीति में आयीं। १९४७ से आज तक उनके उस नक्शे के रंग फीके पड़ते जा रहे हैं। वे पूछती हैं मन से, क्या यह वही हिन्दुस्तान है, जिसकी आजादी के लिए बार बार यातनाएँ-यंत्रणाएँ भोगा थीं? आज इस आपा-धापी के वातावरण में वे जब नेकनीयत का एक-न-एक दिया रोज बुझते देखती हैं, तो उनका मन खीझ उठता है। उसी खीझ में उन की व्यंग्य कविताएं जन्म लेती हैं। मैं समझता हूं उनकी व्यंग्य कविता की यही पृष्ठभूमि है। गोल्ड कन्ट्रोल पर उनकी कविता कदाचित हिन्दी भाषा की तद्विषयक अकेली श्रेष्ठ व्यंग्य कविता है!

उनका दूसरा क्षेत्र है राजनीति। राजनीति में आज तीन प्रकार के नेता हैं असली, नकली और फसली। फसली नेताओं की असली नेताओं से नहीं पटती, पट ही नहीं सकती, लेकिन आज असली नहीं, नकली और फसली नेताओं का ही बोलबाला है। कमला जी का दोष है कि उन्होंने तप किया है और वे राजनीति में नहीं, नीति में विश्वास करती हैं। स्पष्ट है कि आज विजय नीति की नहीं राजनीति की है और नई राजनीति राज से अधिक राज की नीति है, भेद की नीति है। अफसोस कि कमला जी भेद में नहीं, अभेद में विश्वास करती रही हैं और खुशी कि यह उन पर किसी और का नहीं, उनके ही साहित्यकार का प्रभाव है।

यह बात सही है कि राजनीति और साहित्य उनकी दो सन्तानें हैं। एक को गोद में खिलाती हैं, तो दूसरी मचलने लगती है दूसरी को खिलाती हैं, तो पहली मचलने लगती है। मेरा यह विश्वास है कि आज भी कमला जी में द्वन्द्व है कि वे किसे अपनायें। राजनीति उन्हें लिखने का पूरा समय नहीं देती और उस का लेखक उन्हें राजनैतिक हथकण्डा नहीं अपनाने देता, जो आज सिद्धि और प्रसिद्धि का कल्पवृक्ष है।

मेरी भविष्यवाणी है, आने वाले कल में वे राजनीति में नहीं, साहित्य में होंगी और वहीं रहकर वे गांधी दर्शन की साहित्यिक व्याख्या-आख्या के काम को अपने हाथ में लेंगी।

बात वही है कि श्रीमती कमला चौधरी एक साहित्यिक प्रतिभा हैं और एक राजनैतिक व्यक्तित्व हैं। साधना के उन्माद से उन्होंने अपना कैरियर आरम्भ किया और आज जब वे सिद्धि के आसन पर हैं, तब उनमें न उन्माद है, न प्रमाद है, न वाद है न वाद-विवाद है, केवल एक अपवाद—लोक-सेवा की अमिट प्यास है। उसके लिए मेरा साधुवाद।

卐

जैसे हम; वैसा भारत

जवाहरलाल नेहरू

मेरी पीढ़ी एक बीतती हुई पीढ़ी है और शीघ्र ही हम भारत की प्रज्वलित मशाल जो कि उसकी महान और सनातन आत्मा की प्रतीक है, युवा हाथों और सुदृढ़ बाहुओं को सौंप देंगे। मेरी यह कामना है कि वे उसे ऊपर उठाए रखें और उसके प्रकाश को कम अथवा धुंधला न होने दें, जिससे कि वह प्रकाश घर घर में पहुंच कर हमारी जनता में श्रद्धा, साहस और समृद्धि उत्पन्न करे। हम सभी भारत की चर्चा करते हैं और हम सभी भारत से बहुत बातों की आशा करते हैं। हम उसे इसके बदले में क्या देते हैं? उससे अधिक हम उससे लेने के अधिकारी नहीं। भारत अन्त में हमें वही देगा, जो कि प्रेम और सेवा तथा रचनात्मक कार्य के रूप में हम उसे देंगे। भारत वैसा ही होगा जैसे कि हम होंगे, हमारे विचार और कार्य ही उसे रूप प्रदान करेंगे। हम उसकी कोख से उत्पन्न बच्चे हैं, आज के भारत के छोटे-छोटे अंश हैं, हम आने वाले कल के भारत के जनक हैं। हम बड़े विचार के होंगे, तो भारत बड़ा बनेगा और तुच्छ विचार वाले और अपने दृष्टिकोण में संकीर्ण बनेंगे, तो भारत भी वैसा ही होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेल के डिब्बे में उस दिन

१९३३-३४ की बात है, मैं अलीगढ़ विश्वविद्यालय का विद्यार्थी था। हम लोगों को पता लगा कि श्री नेहरू दिल्ली से इलाहाबाद विशेष ट्रेन द्वारा जा रहे हैं। अतएव दूसरे स्टेशन पर जाकर हम जवाहरलाल जी के डिब्बे में चढ़ गये जिससे युवा जवाहर से बातें कर सकें जो कि उस समय हमारी पीढ़ी के हृदय-सम्राट थे।

उसी डिब्बे में यात्रा करते हुए हमें एक सफ़ेद दाढ़ी वाला पूज्य व्यक्तित्व भी दीखा, जिसे हम तुरन्त पहचान गये कि ये मौलाना अब्दुल कलाम आजाद हैं। उस समय वे एक पुस्तक में खोये हुए थे। ऐसा प्रतीत हुआ कि आधा दर्जन बातूनी विद्यार्थियों का अनचाहा आगमन उन्हें पसन्द नहीं आया, जबकि जवाहरलाल में यौवन की अनौपचारिकता थी, जिससे हमें संतुष्टी हुई, किन्तु उनके साथी का सम्मानपूर्ण संभ्रांत व्यक्तित्व हमें अनुभव करा रहा था कि हम लोग शोरगुल मचा कर उनके अध्ययन में विघ्न डाल रहे हैं।

हमारे द्वारा की गयी औपनिवेशिक स्वराज्य की कट्टर निन्दा से जवाहरलाल लेशमात्र भी अप्रसन्न नहीं हो रहे थे। वास्तव में हमारे आवेग और निन्दा में वे अपनी प्रसिद्ध विचारधारा 'सम्पूर्ण स्वराज्य' की पुष्टि खोज रहे थे। अतएव एक मुस्कान के साथ मौलाना की ओर मुड़े और कहा—"सुना मौलाना आपने, ये नौजवान क्या कहते हैं?"

मौलाना ने पुस्तक से क्षण भर के लिए नजर उठाई और अपने निराले ढंग से बोले—"सुना मेरे भाई, अगर हम आगे नहीं बढ़ेंगे तो ये नौजवान हमें पीछे छोड़ जायेंगे।"

किसी भी वृद्ध व्यक्ति से ऐसी बात कहे जाने की आशा नहीं थी, अतएव हम लोग आश्चर्य-चकित रह गये कि इस भव्य बाह्य रूप के अन्तर में अवश्य ही यौवन की कोई चिनगारी सुलग रही है।

जवाहरलाल संभवतः हमारे अव्यक्त विचारों को भांप गये। खुशी से उनकी आंखें चमक उठीं और उन्होंने अपने साथी की ओर इशारा करते हुए कहा—"सच, ये मुझसे ज्यादा बड़े हैं, किन्तु मौलाना होने के कारण ही ये बुजुर्ग दीखते हैं।"

इस पर दोनों ही हंस पड़े. मौलाना ने पुस्तक रख दी और एक टोकरी में से कुछ संतरे और सेब निकाल कर हमें दिये। फिर एक सेब उन्होंने छीला, उस के टुकड़े किये और एक टुकड़ा चाकू से उठाकर जवाहरलाल को दिया।

जवाहरलाल जी ने कहा—"नहीं, यदि अंग्रेजों के वैधानिक सुधारों की तरह संगीनों की नोक पर मुझे सेब भी दिया जायगा तब भी नहीं लूंगा।"

और इस पर वे दोनों हंस पड़े। दिखावटी राजनीतिज्ञों की तरह नहीं, वरन् मानों दो विद्यार्थी एक मजाक का आनन्द ले रहे हों। हमने अनुभव किया कि दोनों सम्मान और साझे आदर्शों पर आधारित बौद्धिक साम्यवाद और मित्रता के बन्धन में आबद्ध हैं।

'नवजीवन' दैनिक में ख्वाजा अहमद अब्बास

भक्त और भगवान

तस्वीर ज्यों-की-त्यों बनी हुई है। सत्रह साल बीत गये—मैं आज तक निर्णय नहीं कर पाया हूं कि उस समय गाँधी जी के मन का भाव क्या था? हाँ, इतना मैं जानता हूँ कि मेरी निगाह में वह पंजाबी बुढ़िया जीत गयी थी। भक्त ने भगवान को हरा दिया था।

उस घटना का मैं ही अकेला दर्शक नहीं था। वहां दस-पाँच और भी थे। उन्होंने उसे किस रूप में, किस दृष्टि से देखा, मैं नहीं कह सकता। गाँधी जी को सामने पाकर कौन और किसे देखता था?

१९४७ के पूर्वार्द्ध में गाँधी जी दिल्ली की भंगी बस्ती में ठहरे थे। मैं पास ही आराम बाग स्क्वायर में रहता था। दफ्तर से लौटकर, हाथ-मुंह धो, कपड़े बदल, सीधा प्रार्थना सभा में चला जाता था। वहाँ के वातावरण में कभी-कभी गर्मी और तनाव आ जाता था। पंजाब के बंटवारे से पहले होने वाले साम्प्रदायिक दंगों का पहला दौर समाप्त हो चुका था। विस्थापितों की पहली लहर दिल्ली तक पहुँच गयी थी। उनके मन और हृदय आक्रोश से भरे थे। प्रार्थना-सभा में जाकर, गाँधी जी को दो-चार खरी खोटी कहकर वे अपने को हल्का अनुभव करते थे।

किन्तु सभी ऐसे नहीं थे। वह पंजाबी बुढ़िया तो निश्चय ही नहीं!

भंगी बस्ती से लगा हुआ एक लड़कियों का स्कूल था—सैण्ट टॉमस। उस के पिछवाड़े एक खुलासा लॉन था। वहाँ गाँधी जी सवेरे-शाम टहलते थे। उनकी कुटिया से लॉन तक पहुंचने के लिए एक कच्चा मार्ग था।

उस दिन सोमवार था। मौन के कारण संध्या को प्रार्थना-सभा में उनका प्रवचन नहीं होगा, यह सोचकर मैं सवेरे ही दर्शन के लिए चला गया। कुटिया से लॉन के प्रवेश तक एक छोटी-सी भीड़ जमा थी। मैं कुछ हटकर एक पेड़ के नीचे खड़ा हो गया।

निश्चित समय पर वे कुटिया से निकले। उनके आगे खान अब्दुल गफ्फार खाँ थे। जितने ऊंचे, उतने विनम्र। जिन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सा शिष्य पाकर बापू का गाँधीत्व सार्थक हो गया था। गाँधी जी का हाथ खान अब्दुल गफ्फार के कन्धे पर था। कहने भर को वह वहाँ तक पहुँच पा रहा था।

गाँधी जी और भीड़ ने परस्पर अभिवादन किया। जैसे ही गाँधी जी ने लॉन पर पैर रखा, पंक्ति के अन्त में खड़ी हुई वह पंजाबी बुढ़िया उनके चरण स्पर्श करने को झुकी। गाँधी जी के पैर एक दम पीछे खिंच गये। खान अब्दुल गफ्फार के कन्धे से उनका हाथ फिसल गया। आँखों में भरी दुपहरी की तेजी कौंध गयी। उस क्षण ऐसा आभास हुआ कि स्थितप्रज्ञ के आदर्श को पूरे रूप से पाने में गाँधी जी की साधना अभी कुछ शेष थी।

गाँधी जी लॉन पर घूमते रहे। वह बुढ़िया उनके छोर पर बैठी रही। मैंने उसे पास आकर देखा। उसके हाथ प्रार्थना की मुद्रा में जुड़े थे। आंखें बन्द थीं—मानो आराध्य की मूर्ति को मन में उतार कर पलकों के पट मूंद लिये हों। वह सलवार-कमीज पहने थी, जो शायद कभी सफेद रहे होंगे। उसका दुपट्टा, भले ही बड़े जतन से ओढ़ा हुआ क्यों न हो, झीना-झीना हो चुका था। जीवन में उस ने चाहे जो कुछ पाया या खोया हो, उस समय उसका चेहरा विश्वास और भक्ति के भाव से उद्दीप्त था।

घूमना समाप्त हुआ। गाँधी जी कुटिया में लौटने के लिए मुड़े। पैरों की आहट से बुढ़िया ने आँखें खोली। गाँधी जी ने देखा और एक बारगी ठिठके। बुढ़िया हिली न डुली, झुकी न बढ़ी। उसने कोई चेष्टा नहीं की—बस, आँखें गाँधी जी के पैरों में गड़ा दीं।

गाँधी जी के पैर कुटिया की ओर बढ़ रहे थे, बुढ़िया की आँखें उनके आगे बिछती जा रही थी। वे मुड़-मुड़ कर पीछे देख रहे थे। पलक पांवड़ों से पावन की हुई उस धरती पर पैर रखना क्या उन्हें भारी हो रहा था?

कुटिया के द्वार पर पहुँच कर वे रुके, बुढ़िया को आंख भर कर देखा और भीतर चले गये।

वह बुढ़िया उठी। उसने कुटिया की ओर झुककर प्रणाम किया और हृदय के अन्तरतम से निकली हुई निश्वास के साथ एक बार 'राम' कहकर अपना रास्ता लिया।

मेरे चारों ओर उस समय सारा जगत भक्तमय था। मैंने जीवन में भगवान के दर्शन न किये हों, किन्तु उस भक्त के अवश्य किये थे जो उससे छोटा नहीं था!

'धर्मयुग' में श्री गोपाल दास

प्रसन्नता का रहस्य

प्रसन्नता एक आदत है—उचित जीवनचर्या और उचित विचारों की यह आत्मजा है। प्रसन्नता की प्राप्ति के लिए इन नियमों का अभ्यास कीजिए:

१—जीवन में सादगी को स्थान दीजिए, मिताहारी बनिए। स्वार्थपरायणता से दूर रहिए।

२—आय से व्यय कम रखिए। ऋण मत लीजिए। मितव्ययिता, सावधानी, आत्मत्याग से काम लीजिए। इन नियमों का पालन कठिन हो सकता है, पर अन्त में इनके पालन से आत्म-संतोष के रूप में भारी लाभ मिलता है।

३—रचनात्मक विधि से विचार कीजिए। स्पष्ट और सही रीति से विचार करने का अभ्यास डालिए। अपने मस्तिष्क में अच्छे विचारों को स्थान दीजिए।

४—दूसरों का दृष्टिकोण समझिए, उनकी सही बात मानने को तैयार रहिए। हर बात आपकी इच्छित रीति से हो यह आग्रह त्याग दीजिए।

५—अपने मनोवेगों पर अधिकार प्राप्त कीजिए। हर व्यक्ति के लिए सदिच्छा और शांति-भावना रखिए।

६—उदार बनिए। दूसरों को बुद्धिमत्ता पूर्वक देकर उनकी प्रसन्नता बढ़ाने-जैसा आनन्ददायक कार्य संसार में दूसरा नहीं है।

७—कार्य का उद्देश्य पवित्र हो। यदि उद्देश्य पवित्र हो तो वह कार्य आत्मिक शक्ति को बढ़ाता है।

८—आज, आज के बारे में ही विचार कीजिए। जो कार्य सामने है उस पर ध्यान दीजिए। आज का पूरा उपयोग कीजिए।

९—प्रकृति-निरीक्षण, टहलना, बागवानी, संगीत, बढ़ईगिरी, टिकटें इकट्ठा करना, विदेशी भाषा सीखना, शतरंज, पुस्तकें पढ़ना, फोटोग्राफी, समाजसेवा, भाषण, यात्रा, लेखन में से किसी या कई को अपने मनबहलाव का साधन बनाइये। केवल जीविका के लिए कार्य किए जाना आदमी को जल्द थकाता और बूढ़ा बनाता है।

१०—दूसरों के कार्य और सेवा में रस लीजिए। जितना ही अधिक आप लोगों की सहायता करेंगे, उन्हें देंगे, उन्हें अपना मानेंगे उतनी ही अधिक प्रसन्नता आपको प्राप्त होगी।

आत्म निर्भर बनिए। अपने निर्णयों पर विश्वास कर उन्हें दूसरों का विश्वास पात्र बनाइये। जिस प्रकार आप व्यायाम द्वारा शरीर को पुष्ट बनाते हैं, उसी रीति से आप अपने विचारों को भी पुष्ट बना सकते हैं। फिर लोग कहने लगेंगे कि आपके निर्णय विश्वास के योग्य होते हैं।

मनुष्य अकेला कुछ नहीं कर सकता। सभी कार्य प्रभु की इच्छा से ही होते हैं। अतः हर कार्य, विचार, कामना, आकांक्षा की पूर्ति और पथ-प्रदर्शन के लिए उसकी सहायता की प्रार्थना कीजिए। उसकी सहायता में विश्वास रखिए। वह आप को सत्य, प्रेम और न्याय-निष्ठ मार्ग पर ले चलेगा।

'आरोग्य' में स्वामी कृष्णानंद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ढेरों चारा खिलाने से सेरों दूध बनता है और सेरों दूध से जो मक्खन तैयार होता है, वह मात्रा में लघु होकर भी प्रभाव में महान सिद्ध होता है।

विशाल भारत के एक महत्वपूर्ण राज्य 'बिहार' के सम्बन्ध में जो गहरी एवं उपयोगी जानकारी इस लेख में प्रस्तुत है, सचमुच उसकी तुलना उस मक्खन से की जा सकती है, जिसकी उपलब्धि विशेष परिश्रम के पश्चात हो पाती है।

'नया जीवन' में निरन्तर प्रकाशित अपने भारत को जानिए–स्तम्भ की इस शृंखला में हिन्दी के श्रमशील लेखक एवं सूक्ष्म दृष्टा पत्रकार पं० अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार द्वारा यह छठा लेख यहाँ प्रस्तुत है।

बिहार

श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार

भारत का यह प्रदेश संमिश्र प्रकृति का है। मृदुता और कठोरता, आदर्श और व्यवहारिकता, स्वाभिमान और निरभिमानिता, स्वबोध और आत्म-विस्मृति, अमीरी और गरीबी का जैसा मेल इस प्रदेश में हुआ है वैसा भारत के अन्य किसी भाग में नहीं हुआ है। भूमि ही ऐसी है। मामूली वर्षा होने पर जमीन इतनी मुलायम हो जाती है कि पांव धंसने लगता है। धूप लगने पर यही जमीन फट जाती है, नंगा पैर हो तो काट लेती है। स्नेह की वर्षा होने पर यहाँ के लोग सर्वस्व अर्पण कर सकते हैं, पर वैरी के लिए क्षमा शब्द नहीं है।

इस प्रदेश के लोगों को बंगाली 'बुद्धु' और 'सत्तुखोर' कहते हैं। सत्तु इस प्रदेश में आज भी शौक से खाया जाता है और "सक्तु मिव तिल उना पुनन्ते" ऋचा की सचाई सिद्ध करता है। यहाँ ऊंचे से ऊंचे कद के और बौने देखे जा सकते हैं। इनकी सरलता, सादगी और रुक्षता दूर से दिखाई दे जाती है। जातिवाद के लिए बदनाम यह प्रदेश सर्वाधिक भारतीय मनोवृत्ति का है। परिवर्तनवादी बिहार ने ही श्री जयकर को अपनी ओर से अ. भा. कांग्रेस कमेटी का सदस्य चुना था। बम्बई के श्री मधु लिमये मुंगेर में विजयी हुए।

"डिफांयस" प्रतिरोध शब्द इस प्रदेश के प्रवेश द्वार पर लिखा हुआ है। ऋग्वैदिक आर्यों का प्रवाह मण्डक पहुँच कर रुक गया। विश्वामित्र 'ताडका' से डर कर भाग गए और मदद मांगने अयोध्या पहुँचे। गया और पुन-पुन में श्राद्ध और पिण्डदान होता है, किन्तु यह प्रदेश शास्त्रकारों ने 'वर्ज्य' कर रखा है, क्यों कि इस प्रदेश ने आत्म-समर्पण कभी नहीं किया। छोटा नागपुर मण्डल आज भी श्री जयपाल सिंह को अपना नेता मानता है श्री कृष्ण वल्लभ सहाय को नहीं। वन्य जातियां और हरिजन यहाँ संख्या की दृष्टि से अधिक हैं।

भारत में पहला साम्राज्य मगध ने ही बनाया। जरासन्ध के डर से श्री कृष्ण को मथुरा छोड़कर द्वारका जाना पड़ा। इस प्रतापी सम्राट के जीवित रहते हुए पाण्डव राजसूय यज्ञ नहीं कर सके। पटना को ही यह सौभाग्य प्राप्त है कि वह निरन्तर लगभग एक हजार साल तक भारत की राजधानी रहा है। इसी प्रदेश के वीरों ने भारत की सीमा हिन्दुकुश तक पहुँचाई। इसके ही एक सम्राट

अपने भारत को जानिये

ने ग्रीक राजकन्या से विवाह किया और ग्रीस के लोग आज तक इसको भूले नहीं हैं। 'चन्द्रगुप्त' के नाम से वहाँ आज भी वह गाँव विद्यमान है, जो उसको दहेज में दिया गया था। चाणक्य ने ही सर्वप्रथम "नौ सेना" के महत्व और खानों की महत्ता को समझा। इस प्रदेश के ही एक नैयायिक ने, यह कहने का साहस किया था :

"ऐश्वर्य मदमत्तो असि
माम अवज्ञया वर्त्तसे
पराक्रान्तेषु बुद्धेषु
मदाधीना तवस्थिति।

शाश्वत प्रतिरोध इसकी प्रकृति है। अणुबम बनाने का आग्रह भी आज यही प्रदेश कर रहा है। इसके रक्त में वीर-वृत्ति है, लेकिन भारतीय संस्कृति और सभ्यता का प्रतीक भी यही प्रदेश है। स्वामी विवेकानन्द ने एक बार कहा था कि यदि उनको भारतीय सभ्यता और संस्कृति का परिचय दो अक्षरों में देना हो, तो वे कहेंगे 'सीता'! जनक उपनिषदीय ज्ञान और संस्कृति के प्रतीक हैं और वैदिक यज्ञ, याग के प्रतिरोध हैं। बुद्ध, महावीर और अशोक इसी परम्परा के मणके हैं। "अर्ली हिस्ट्री आफ इंडिया" के लेखक सर विंसेंट स्मिथ के मन में भारत का क्रम बद्ध इतिहास का प्रारम्भ बिहार से होता है। कपिल का सांख्य, भीसम का न्याय, मिथिला का नव्य न्याय, पतञ्जलि का "महाभाष्य" चाणक्य का 'कौटिल्य अर्थ शास्त्र" इस प्रदेश में निर्मित हुए। डा० भण्डारकार का मत है कि 'कौटिल्य अर्थशास्त्र" के बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस देश में कोई मौलिक पुस्तक नहीं लिखी गई। पुष्पमित्र का अश्वमेध यज्ञ इसी प्रदेश में हुआ था। ऐहिक राज्य (सेक्युलर स्टेट) की कल्पना का उदय भी यहीं हुआ। सम्राट अशोक ने अपने पुत्र और पुत्री बौद्ध धर्म और संघ को भेंट किए, किन्तु राज्य नहीं दिया। अशोक ने पशु-वध का निषेध किया, किन्तु राज्य को बौद्ध-धर्म के प्रचार से पृथक ही रखा। इस प्रदेश के लोगों की मनोवृत्ति का यह परिचायक है। भारत को राजनीतिक एकता इस प्रदेश के शासकों ने प्रदान की। 'जरासन्ध' के समान यह प्रदेश भी अंग, मिथिला और मगध एवं नामपुर से मिलकर बिहार बना है। नालन्दा, उदन्तीपुर, विक्रमशील के विश्व विद्यालयों के समय 'बिहार' का अस्तित्व था। 'बिहार' नाम कब से प्रचलित हुआ इसकी ठीक-ठीक तिथि नहीं ढूंढी जा सकी है।

गंगा इस प्रदेश को उत्तर और दक्षिण में कृषिकर और औद्योगिक क्षेत्र में विभक्त करती है। मोकामा कापुल (मई १९५९) इन दोनों को मिलाता है और नूतन आर्थिक क्रांति उत्पन्न करता है। ६०७८ फुट लम्बे गंगा के पुल ने बरौनी में तेल शोधक (रिफाइनरी) का बनना सम्भव कर दिया। बिहार के आर्थिक जीवन का परिवर्तन बिन्दु यह पुल है।

जल-वायु की दृष्टि से यह संक्रमण की पट्टी है। यू० पी० और मध्य प्रदेश के सूखे प्रदेश और बंगाल के आर्द्र डेल्टा के बीच का यह प्रदेश अत्यन्त सुन्दर है।

इस प्रदेश की प्राकृतिक सुषमा ने ही आनन्द मठ के लेखक बंकिम से यह लिखाया था :

"सुजलां सुफलां मलयज शीतलाम्
शुभ्र-ज्योत्सनां पुलकित यामिनीम्।
फुल्ल कुसुमित द्रुमदल शोभिनीम्
सुहासिनीं सुमधुर भाषिणीम्॥"

कोसी, मण्डक और सोन नदियां यदि समृद्धि का कारण हैं, वहाँ ये नदियाँ बर्बादी और विनाश का भी कारण हैं। सोन नदी के ही कारण शेरशाह सूरी हुमायू को हराने और हुमायू को यह देश छोड़कर ईरान जाने के लिए बाध्य करने में सफल हुआ था। शेरशाह के दिए ढांचे पर ही मुगल शासन खड़ा हुआ।

यू० पी० के बाद सबसे बड़ी जनसंख्या का प्रदेश बिहार है। इसकी आबादी ४६४५५६१० है। यद्यपि क्षेत्र फल की दृष्टि से इसका स्थान आठवाँ है। इसका विस्तार ६७,१९६ वर्गमील है। प्रतिदशक १९.७६ प्रतिशत जनसंख्या बढ़ती है। १८.४ प्रतिशत साक्षरता है। ६५३६८७५ लोग अनुसूचित जातियाँ (हरिजन) हैं और ४२०४७७० इस प्रदेश में स्त्रियों की संख्या कम है। प्रति ७ हजार ९९४ है। जनमाशा औसतन ४५ वर्ष है।

कृषि प्रधान राज्य है। ८२ प्रतिशत जन आजीविका-उपजीविका के लिए खेतों पर निर्भर हैं। भूमि उपजाऊ है, किन्तु राज्य स्वाश्रयी नहीं है। चावल, तम्बाकू और गन्ना मुख्य फसलें हैं। गाँधी जी ने बिहार (दरभंगा) के आम को सर्वोत्तम बताया था। इसको गाँधी जी ने रत्नागिरि के आम से भी उम्दा और स्वादु बताया था। अरहर, खेसारी, मसूर की दालें भी यहाँ होती हैं। पटना का चावल पैरिस तक में प्रसिद्ध है। पटना की मिर्च भी प्रसिद्ध हैं। यही बात गोभी, आलू, तम्बाकू की है। बिहार का तम्बाकू भारत भर में सर्वोत्तम है, कुछ की दृष्टि से। मकई, शकरकन्द यहाँ गरीबों का भोजन है। गेहूँ उपजता है और प्रति एकड़ सर्वाधिक उपजता है।

१३००० वर्गमील अर्थात् लगभग १९ प्रतिशत क्षेत्र जंगल है। आदर्श की दृष्टि से वन कुल क्षेत्र का २० प्रतिशत चाहिए। बिहार के वन, लकड़ी, बाँस, लाख, गोंद, सरेश, चमड़ा बनाने की सामग्री, कड्डू पत्ती (बीड़ी बनाने की पत्तियाँ) और जड़ी-बूटियां प्रदान करती है। हजारीबाग में राष्ट्रीय पार्क विकसित हो रहा है।

आचार्य चाणक्य ने खानों को समृद्धि का द्वार कहा था। खनिज सम्पत्ति की दृष्टि से बिहार भारत का अक्षय भण्डार है। महत् परिमाण के उद्योगों के लिए यह प्रदेश उपयुक्त है। यूरेनियम भी यहां प्राप्त हो गया है। जमशेदपुर का लोहे का कारखाना भारत में आज भी सबसे बड़ा है। बोकारो में भी नया इस्पात का प्लाट लगाया जायगा। यह श्री नेहरू के स्वप्न को आंशिक रूप से ही पूरा करेगा। श्री नेहरू की इच्छा इसको करोड़ टन उत्पादन-क्षमता का बनाने की थी, किन्तु दस साल का विलम्ब हो जाने से यह ४० लाख टन उत्पादन क्षमता की योजना रह गई है।

मगध, विदेह (वैशाली), अंग, नागपुर से मिलकर बना बिहार पुनपुन, फल्गु सोन, गण्डक, कोसी और दामोदर आदि से सिंचित है। कोसी नदी घाटी परिकल्पना, दामोदर घाटी परिकल्पना ये दोनों राष्ट्रीय हैं। सोनपुर (हरिहर क्षेत्र) का मेला दुनिया भर में सबसे बड़ा है। यहाँ सूई से लेकर हाथी तक मिलता है।

पार्श्वनाथ पर्वत ही यहाँ सर्वोच्च (४४८१ फुट) है। यहां भारत भर में प्रसिद्ध एक सुन्दर जैन मन्दिर है। बिहार गोवा का प्रदेश है। नगर निवासियों की संख्या ३,९१,३९२० है और ग्राम वासियों की संख्या ४२५४१,६९० है। स्त्रियों की कुल संख्या २३,१५४,१६१ है। शासन की दृष्टि से बिहार चार मण्डलों में विभक्त है। यथा :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

	वर्गमीलों में क्षेत्र फल	जनसंख्या	बसे जन प्रति वर्गमील
पटना	११३३८	९८१५,६५५	८७१
तिर्हुत	१२५८५	१५१२२,५५४	१२०१
भागलपुर	१७९८०	१२५८६,११५	८०५
छोटा नागपुर	२५२९३	८९३१,२८६	३५४
	६७.१९६	४६४५५,६१०	

इसका अर्थ है कि सघन क्षेत्रों के परिवारों को छोटा नागपुर में बसाया जा सकता है और आबादी की समस्या और राष्ट्रीय एकता की समस्या को इस रीति से हल किया जा सकता है। तीस वर्षों में बिहार की जनसंख्या १५७ लाख बढ़ी है। प्रति वर्गमील बिहार में ६९१ जन बसते हैं, किन्तु यह औसतन है। एक अन्य बात ध्यान देने की है कि ६१ वर्षों में १९०१ से १९६१ तक पुरुषों की संख्या में ३८,१० ८८९की वृद्धि हुई और वे १३३४४४२७से बढ़कर २३३०१४४९ हो गए। इसके मुकाबले इसी आबादी में स्त्रियों की संख्या बढ़ी है, ३८६०९४३ और इनकी संख्या १४०६११०० से बढ़ कर २३१५४१६१ हो गई। बिहार की जनसंख्या ६१ सालों में १९०५०.०८३ की वृद्धि हुई है। बिहार में १५३ कस्बे और ६७६६५ गांव है।

हिन्दी के अतिरिक्त संथाली भुनडारी, आंसव और हो बोलियां बोली जाती हैं। भोजपुरी मगरी और मैथिली पुरानी भाषायें हैं। बिहारी हिन्दी का निर्माण इन से ही मिलकर हुआ है। अतः इस प्रदेश के लोग भी लिंग की भूलें करते हैं।

राज्य अपनी आय का१९५०.५१ में पुलिस पर १४.९ प्रतिशत खर्च करता था, किन्तु १९६२.६३ में राज्य ७.५ प्रतिशत ही खर्च कर रहा था। इससे राज्य की सामाजिक स्थिति का अनुमान किया जा सकता है।

शिक्षा में बिहार पिछड़ा प्रदेश माना जाता है, क्योंकि स्त्री-शिक्षा यहाँ नाम-मात्र की है।

	शिक्षण संस्थाओं की संख्या	छात्रों की सख्या	लड़के	लड़कियां
प्राइमरी	४१५१४	३७८३६९१	२८८५१६२	८९८५२९
हाई स्कूल	१८७३	६३६२७१	५५२१४५	८४१२६
हायर सेकेंडरी स्कूल	२६०	४१३७८८	३८३९८९	२९७९९
बहुविध स्कूल	१०२			
विश्वविद्यालय	५	९७०४०	८८९०६	८१३४

बिहार के पिछड़े होने का कारण यहाँ स्पष्ट हो जाता है। प्रारम्भिक शिक्षा पाने वाले (६ से ११ वर्ष की आयु) के लड़के लड़कियों के मध्य ३:१ का अनुपात है। इस स्थिति में क्या कोई भाग उन्नत होने की आशा कर सकता है? यद्यपि इसने १८५७ की लड़ाई में सर्वोत्तम सेनानी कुंअर सिंह और प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद इसने ही भारत को दिए हैं।

	उत्पन्न कपड़ा लाख गजों में	बिका कपड़ा लाख गजों में	लाख रु० में बिके का मूल्य
१९६१-६२	२०८.२०	२१६.४२	२११.५३
१९६२-६३	२८५.४५	२४३.३१	२३६.५७
१९६३-६४	३१०.२०	२९५.८७	२७१.३७

खादी का उद्योग मुख्य कुटीर उद्योग है। दो लाख करघों पर लगभग दसलाख लोग काम करते हैं। खादी का इसके आर्थिक जीवन के विकास में क्या भाग है, यह निम्न तालिका को देखने से ज्ञात होगा।

स्पस्ट है प्रति व्यक्ति की आय में खादी से वर्ष भर में लगभग आठ आना की वृद्धि होती है। खादी की लोकप्रियता के घटने का कारण इसमें देखा जा सकता है।

टसर (रेशम का एक भेद) उद्योग बिहार का ही है, परन्तु अभी यह उद्योग प्रारम्भिक अवस्था में है।

बिहार स्वास्थ्य और चिकित्सा पर ६३००,००० रु० व्यय करता है। प्रति व्यक्ति तीन रुपये व्यय करता है। ठीक है १९५५-५६ में सात आना ही प्रति व्यक्ति खर्च होता था; लेकिन यह तुलना भ्रमात्मक है, क्योंकि इन दस वर्षों में कीमतें भी बहुत बढ़ गई हैं। पिछले चार वर्षों में ही २५ प्रतिशत कीमतें बढ़ गई हैं। इसका अर्थ है कि स्वास्थ्य रक्षा और चिकित्सा पर राज्य ने कुछ मामूली व्यय बढ़ाया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवाब वाजिद अली शाह;

नूतिये शीरी, तकरीरे चमन, मूदते बुलबुल, खुशनबीद गुलशन, उल्फते गुँचा, मकसद तुम्हारा हमेशा शगुफ्ता रहे।

इस गर्दिशे इफराक से फूले न फले हम।
ज्यों सब्ज़ा रौंदे उगते ही पांवों के तले हम।

बहन शैदा बेगम, मेराजी की २६ तारीख सन १२७१ हिजरी पँजशंबे का दिन उम्र भर न भूलेगा जबकि सुल्ताने आलम को जनरल औटरम साहब ने बाप-दादा की सल्तनत छोड़ने और हुकूमत से दस्तबरदार होने का हुक्म दिया और लखनऊ से हम लोग जुदा हुए, जैसे बुलबुल गुलशन से छुटी, यूसुफ मिस्र से निकले, बूये गुल चमन से जुदा हुई। पिया जाने आलम का सुकूत और तमाम अमले का हसरत भरी निगाह से देखकर बेकसी के आँसू बहाना, कमाले अदब से रुमाल में गम के मोतियों को समोना, अइज्जा को हिचकियाँ लगी हुई थीं। हम आखिरश महरात में मातम बयां करते हुए सुलताने आलम के हमराह रवाना हुए। उस वक्त जाने आलम का यह कहना "तुम पर दस बरस तक मैंने सल्तनत की, इस अरसे में जो कुछ सदमा और रंज मेरी जान से तुमको पहुंचा हो उसको बखुशी माफ कर दो। इस वक्त मैं माजूर हूँ और तुम से छुटता हूँ, खुदा जाने जिन्दगी में फिर मिलूँ या न मिलूँ।" बहन इस जुमले से, तुम्हें याद है, मजमें को मजलिसे मातम बना दिया। हजरत मुनव्वरुदौला अहमद अलीखाँ ने कहा–'सरकार ऐसे वक्त में गुलाम को कदमों से जुदा तो न करो।" सुलताने आलम खामोश हो गये। हुजूर मल्का किश्वर आरा बेगम साहब और भइया सिकन्दर हश्मत सरमह और लख्ते जिगर नूरे-नजर वली अहद बहादुर सरमहू और चार सरकार की खादिमा हमराह थीं। रजब की पाँचवीं को लखनऊ से चले थे। कानपुर पहुँचे तब रोते हुए बुरा हाल हुआ। पलवन साहब के बंगले में हम लोग मुकीम हुए। रजब भर महीना वहीं बीता। शाबान की पहली को रुखसत हुए। आठ दिन वहाँ ठहरे, फिर बनारस आये। राजा पुराना नमकख्वार था। अपनी-सी उसने अच्छी खिदमत की। रानियाँ हुजूर मल्का की बहुत तवाजह करती थीं। हर वक्त हाथ बांधे चाकरी में खड़ी रहती थीं। मुझ मगमूम की पूछ भी बहुत थी। मैं हर वक्त सुलताने आलम की दिलजोई में लगी रहती, इनका बातों में दिल बहलाती, मगर वे गम से निढाल थे। मैं वारी जाऊँ, ये हाल देख मेरा जी कुढ़ता था। बनारस से दहकानी जहाज पर सवार हुए। कलकत्ते हमारा काफिला पहुँचा, सब पर थकान का असर था।"

नवाब वाजिद अलीशाह ने शैदा बेगम को अपने खत में लिखा–

मेहरे सिपहर, बेवफाइये माह समाये-दिलरुबाई, गौहरे ताज, आश्नाइये जौहर, शमशीरेयकता, हमेशा खुश रहो।

मालूम हुआ अवध में कुछ बलवाई लोग जमा हुए हैं और सरकार अंग्रेजी के खिलाफ हो गए हैं। कम्बख्तों से कहो, हम चुपचाप चले आये तुम लोग काहे को दंगा मचा रहे हो? मैं यहाँ बहुत बीमार था। सफरा कीतिब ने दिक कर दिया था। आखिर तबरीद के बाद सेहत हुई। जिस कदर नजरो नियाज मानी थी की गई। जलसा रात भर रहा, नाच गाना होता ही रहा। कोई चार घड़ी रात बाकी थी, गुल पुकार होने लगा। हम गफलत में पड़े थे। आँख खुलते ही हक्का-बक्का रह गये। देखा कि अंग्रेजी फौज मौजदर मौज टिड्डी दल चारों तरफ से आ गई। मैंने पूछा ये क्या गुल है? इनमें से एक ने कहा अलीनक़ी कैद हो

गिरफ्तारी

गये। मुझको गुस्ल की हाजत थी। मैं तो हम्माम में चला गया। नहा कर फारिग हुआ कि लाट साहब के सेक्रेटरी ओमगटम साहब? हाजिर हुए और कहने लगे, मेरे साथ चलिये। मैंने कहा आखिर कुछ सबब बताओ। कहने लगे गवरमेंट को कुछ शुब्हा हो गया है। मैंने कहा मेरी तरफ से शुब्हा बेकार है। मैं तो खुद ही झगड़ों से दूर भागता हूँ। इस कश्तो खून और खल्के खुदा के कत्लो गारत के सबब से तो मैंने सल्तनत से हाथ उठा लिया। मैं भला अब कलकत्ते में क्या फसाद करवा सकता हूँ? उन्होंने कहा मैं सिर्फ इतना जानता हूँ कि कुछ लोग सल्तनत के शरीक होकर फसाद फैलाना चाहते हैं। मैंने कहा, अच्छा अगर इन्तजाम करना है तो मेरे चलने की क्या जरूरत है, मेरे ही मकान पर फौज मुकर्रर कर दो। उन्होंने कहा मुझ को जैसा हुक्म मिला है वह मैंने अर्ज कर दिया। मैंने कहा, फिर आखिर मैं साथ-साथ चलने पर तैयार हूं। मेरे रिफ्का भी चलने पर तैयार हैं। सेक्रेटरी साहब ने कहा सिर्फ आठ आदमी आपके हमराह चल सकते हैं। फूफा मुजाहिदुद्दौला, जिहानतुद्दौला सेक्रेटरी साहब और मैं एक बग्घी में सवार होकर किले में आये और कैद कर लिए गये। मेरे साथियों में जुल्फिकारुद्दौला, फतेहुद्दौला,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खजांची काजिम अली, सवार बाकर अली हैदरखाँ 'कूल', सर्दार जमालुद्दीन चपरासी, शेख इमाम अली हुक्के बरदार, अमीर बेग खवास, वली मुहम्मद मेहतर, मुहम्मद शेरखाँ गोलन्दाज, करीम बख्श सक्का, हाजी कादर बख्श कहार, इमामी गाड़ी पोंछने वाला—ये कदीम मुलाजिम नमक ख्वार थे। जबरदस्ती कैदखाने में आ गये। राहते सुल्ताना खासा बरदार, हुसैनी गिलौरी वाली, मुहम्मदी खानम मुगलानी, तबीबुद्दौला हकीम भी साथ आया। देखा देखी आया था, घबरा गया और कहने लगा खुदा इस मुसीबत से जल्द निजात दे। मैंने बहुत कुछ हक जताये कि तुमको बीस बरस पाला है मगर फिर भी वो अपनी जान छुड़ा कर भाग गया।

नवाब वाजिद अली शाह ने शैदा बेगम को दूसरे खत में लिखा—

जानेजां, जाने आलम नवाब शैदा बेगम साहबा हुस्नहा व जमालहा। दो तशफ्फिये नामे तुम्हारे अजमुल-दौला बहादुर ने रजब को लाकर दिखाये। दिल शाद

और जेल जीवन

हुआ। तबीयत में कूबत आई। जान ताजा पाई। मगर ऐ जानी, अब हम वो नहीं रहे। हम अपना हाल लिखते हैं। इससे मालूम होगा कि हम पर क्या गुजर रही है। इश्को-आशिकी सब मफकूद है। रंज ने हालत तबाह की। हम किले फोर्ट विलियम में नजर बन्द हैं। लार्ड रंग (?) का मेरे पास खत भी आया कि अफसरान आपके एजाज में फर्क न करेंगे। मगर मेरी जिन्दगी दुश्वार हो रही है। आठ दिन बाद, किले में एक कोठी है उसमें आये। अब सिर्फ २३ आदमी हमराह हैं। परिन्दा तक पर नहीं मार सकता। कैदखाने के दरवाजे बन्द कर लिए गये। हमारा दम घुटता है। मुजाहिदुद्दौला मिर्जा जैनुल आब्दीन, दियानतदौला, मुत्तदीनुल्मुल्क मुहम्मद मोतमिद अली खाँ, अमानते जंग कुमेदान हर वक्त परवाना वार जांनिसार थे। फतेहुद्दौला बख्शिये मुल्क जईफी के सबब जिरागे सहरी थे। वे २८ सफर सन् १२७३ हि० को हमसे रुखसत हो गये हमको फुरक़त में छोड़कर खुद राही जन्नत बन गये। मोहतमिमदौला बहादुर और जुल्फिकारुद्दौला सैयद मुहम्मद सज्जाद अली खाँ रिसालुद्दार हर वक्त शरीके रंजो-राम थे। आखिर मुसीबत-ओ-तकलीफ से आजिज आकर पहले दियानतद्दौला किले से चल दिया। अब मोहतमिमदौला ने पागल बनकर हर एक को गालियाँ दी और मारपीट करने लगा। आखिर निकाला गया। मुहम्मद शेर खाँनेगो लन्दाज ने बाकर अली की नाक काटी। इसके बाद उसको सजा हो गई। जेल गया। करीम बख्श सक्का तपेदिक में मुब्तिला हुआ, तब मैं जाने से अजीरन हो गया।

नवाब वाजिद अलीशाह ने अपनी पाँचवी बीबी बेगम सर फराज़ महल को खत में लिखा—

शोलये बर्क दूरी नाइरें नार महजूरी आतिशे हुस्न दो बाला हो। जियो।

यहाँ का हाल क्या लिखूँ ? लखनऊ से मेरे साथ ५०० आदमी आये थे। मोचीखोला में मुकीम है। महल चहरुम बड़ी बेगम आशिके सुलतान मुमताज आलम कैसर बेगम न मनकूला थी न ममतूआ बल्कि सिर्फ दोस्ती में चली आई थी। उसने खर्च को मांगा। ११हजार रुपये दिये। वो रुपये पाते ही कलकत्ते से चल दी। पंजुमखस्ता महल, शिशुम ममतूआ जाफरी बेगम अजीब चुलबुली तबीयत नाजुक मिजाज, खिलदेड़ी, चंचल, जँगजू, तुदेखू, तेगजवान, दरिश्त कलाम हमको किले विलियम में अक्सर गिलौरियां भेज दिया करती थी। वह ऐसी महबूब थी कि एकदम हमारी नजर से जुदा न होती थी। अब महीनों से उसके फिराक में तड़फता हूँ। उनके गम में दिल पानी-पानी हो गया। गुँचये दिल कुम्हला गया। दिल हजार सम्हाले नहीं सम्हलता। सबा भी हम कैदियों की बेगम-बरी नहीं करती। हर तरफ पहरा है। दो रफीक हैं, एक खौफ दूसरा हिरास। एक कैदखाने में हम पड़े हुए हैं चारों तरफ हिरासत है। हमारे साथ १२ आदमी मुसीबत झेल रहे हैं। हर एक अपने दीन से बेजार है कैद गम में गिरफ्तार है। भिश्ती व खाकरू आते हैं. उनके साथ एक-एक अंग्रेज भी आता है। मजाल क्या है जो मुंह से बोल सकें। कैदखाने की कोठी बहुत वसीह है, मगर अपने किस काम की ? हर दरवाजा बन्द, गरमी से दिल तंग परेशान हालते तबा हूं। जब दरवाजे खुलते हैं तो धूप की शिद्दत से जान बेजार होती है। कई मर्तबा लाट साहब को भी शिकायती खुतूत भेजे मगर किसी का जवाब नहीं आया। तुम खुदा का शुक्र करो, आजाद हो। अपनी नींद सोती हो, कोई पूछने वाला नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फीजी में हिन्दी-प्रचार : एक सिंहावलोकन

श्री रामनारायण गोविन्द

सन् १८७६ ई० में प्रथम बार जब भारतीय मजदूर फीजी में आये, तभी यहाँ हिन्दी भाषा का पदार्पण हुआ। उन दिनों बोलचाल के सिवाय यहाँ हिन्दी का कुछ भी प्रचार नहीं था।

कुछ काल उपरान्त भारतीय मजदूरों को इस कमी का भान होने लगा। लोगों का ध्यान हिन्दी के सुव्यवस्थित प्रचार की ओर आकृष्ट हुआ। प्रचार कार्य करने के लिए उनके पास साधन का अभाव था। न तो पाठशालाएँ थीं, न यथेष्ट विद्वान ही। उस जमाने में भारतीय मजदूर प्लान्टरों की कोठियों में रहते थे।

सत्संग के लिए भारतीय जाति सुप्रसिद्ध है। गन्ने के खेतों में दिन भर के कठिन परिश्रम के बाद ब्यालू के उपरान्त इनके जमघट होते थे। भजन गाये जाते, धर्म चर्चा छिड़ती तथा कुछ आप बीती और कुछ जगबीती की बातें होती थीं। पढ़ने-पढ़ाने का आरम्भ भी ऐसी बैठकों से हुआ। जो पढ़ना चाहते थे, पढ़ लेते थे और जो पढ़ा सकते थे, पढ़ा देते थे। बहुत दिनों तक ऐसे ही चलता रहा।

बीच बीच में भारतीय नेतागण प्रवासी भारतीय भाइयों की खोजखबर लेने फीजी आ जाया करते थे। यहाँ हिन्दी प्रचार का अभाव उन्हें खटकता था। वे कहीं-कहीं छोटी-मोटी पाठशालाएँ स्थापित करा जाया करते थे।

सन् १९२० ई० तक ऐसे ही काम चलता रहा। इसी वर्ष शर्तबद्ध प्रवासी भारतीय मजदूरों के जीवन में एक महत्वपूर्ण घटना घटी। शर्तबद्ध मजदूर प्रथा का अन्त हुआ और भारतीय मजदूर मुक्त हुए।

इस घटना के पश्चात हिन्दी प्रचार जोर पकड़ने लगा। सुशिक्षित लोग धर्म तथा भाषा प्रचार के लिए भारत से फीजी आने लगे। पाठशालाओं की संख्या बढ़ने लगी।

१९२६ ई० में फीजी की सरकार ने एक शिक्षा मंडल की स्थापना की। मण्डल ने जो पाठ्यक्रम तैयार किया, उसमें हिन्दी को भी स्थान दिया गया। इसके फलस्वरूप फीजी की पाठशालाओं में हिन्दी-शिक्षण का कार्य विधिवत् आरम्भ हुआ। हिन्दी-प्रचार की वृद्धि तो हुई, परन्तु उस पर अंगरेजियत का जामा चढ़ने लगा। अंग्रेजी ढंग की हिन्दी पनपने लगी। पाठशालाओं में लगभग अभी तक इसी प्रकार की हिन्दी चल रही है।

फीजी की प्रत्येक पाठशाला में हिन्दी-शिक्षण का प्रबन्ध है। सरकारी पाठशालाओं में भी इसकी व्यवस्था है। ईसाई संस्थाओं द्वारा संचालित अधिकांश विद्यालयों में हिन्दी-शिक्षण का प्रबन्ध नहीं है। फीजी में अध्यापकीय प्रशिक्षण की एक मात्र विद्यापीठ नसीनू ट्रेनिंग कालेज में हिन्दी-शिक्षण विधि की ट्रेनिंग तो दी जाती है, परन्तु अंग्रेजी के माध्यम से।

विगत विश्व युद्ध के पश्चात भारतवर्ष से पत्र-पत्रिकाएँ तथा पुस्तक आदि मंगाई जाने लगी हैं। इस से विशुद्ध हिन्दी प्रचार को प्रोत्साहन मिल रहा है। फीजी में भारत सरकार के सांस्कृतिक मिशन की स्थापना से भी हिन्दी प्रचार को पर्याप्त बढ़ावा मिल रहा है।

उपर्युक्त साधनों के अलावा फीजी में हिन्दी प्रचार का कोई सुदृढ़ संगठन नहीं है। कुछ दिन हुए इस क्षेत्र में काम करने के निमित्त दो संस्थाएं कायम हुई थीं—फीजी कुमार-साहित्य-परिषद् और फीजी-हिन्दी-साहित्य-प्रचारिणी सभा। एक कवि-सम्मेलन कराने के बाद सभा शिथिल पड़ गयी।

फीजी-कुमार-साहित्य-परिषद् ही अब ऐसी संस्था रह गयी है, जो इस कार्य में संलग्न है। अब इस संगठन का नाम बदल कर फीजी-हिन्दी-साहित्य-परिषद् रख दिया गया है। सीमित पैमाने पर, किन्तु उत्साह पूर्वक यह संस्था फीजी में हिन्दी-प्रचार का काम कर रही है। परिषद् का हिन्दी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग) तथा राष्ट्रभाषा प्रचार-समिति (वर्धा) से सम्पर्क है। उन संस्थाओं द्वारा संचालित परीक्षाओं का केन्द्र परिषद् ने फीजी में खुलवा लिया है।

फीजी-हिन्दी-साहित्य-परिषद् का कार्यालय सिंगातोका नामक शहर में अवस्थित है। कार्यालय में हिन्दी की पढ़ाई होती है और परीक्षाओं के लिए विद्यार्थियों को तैयार किया जाता है। १९६३ की फरवरी में पहली बार परीक्षार्थी राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति की प्राथमिक परीक्षा में बैठे थे। बाद में दूसरी परीक्षाओं में बैठने की ओर भी ध्यान गया है।

फीजी वासी भारतीयों को इस कार्य में भारतीय नागरिकों, हिन्दी-प्रचार-संस्थाओं, पुस्तक-प्रकाशकों, विक्रेताओं और सांस्कृतिक संस्थाओं से सहायता एवं सहयोग की अपेक्षा है। हिन्दी प्रचार के लिए पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं तथा अन्य साहित्य की विशेष आवश्यकता है। उदार बन्धुगण फीजी हिन्दी साहित्य परिषद्, सिंगातोका (फीजी) के नाम पर ऐसी सामग्री प्रेषित कर सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(पृष्ठ ५२ का शेष)

ग्राम समस्याओं के विशेषज्ञ श्री ज्ञानेन्द्र प्रसाद जैन सम्पादक 'सेवा-ग्राम' ने पंचायतों के बारे में कहा है—

आज पंचायतों की हालत यह है कि स्वयं अधिकारी खुले तौर पर कहते सुनाई देते हैं कि "जाने दीजिए पंचायतों की बात तो" और वे पंचायतों को भुला कर गाँववासियों से सीधे संपर्क कायम करने की कोशिश करते हैं। यदि पंचायतों में जान नहीं आई तो वे जिम्मेदारियां कैसे निभा सकेंगी ?

सरकार की बड़ी जिम्मेदारी है कि पंचायतें और ग्राम सभायें मजबूत बनें। हम फिर दुहराते हैं कि सरकार या तो पंचायतीराज को 'झगड़ालूराज' मानकर खत्म कर दे और फिर पंचायतों की बात न करे या उन्हें अधिकार, धन और प्रशिक्षण देकर मजबूत और सक्रिय बनाए।"

दूसरे तंत्र के बारे में उनकी बात आँख खोल देने वाली है और कहती है कि हमारी राष्ट्रीय क्रांति किस तरह विभागों की कैद में बन्द होती जा रही है। वे कहते हैं—

"देश की विकास योजनाओं को व्यावहारिक रूप देने या दिलाने का काम ग्राम-स्तर के कर्मचारियों का है। इनमें ग्राम सेवक और पंचायत मंत्री ऐसे कार्यकर्ता हैं जो योजनाओं को नीचे तक ले जाते हैं और जनता को लाभ पहुँचाते हैं। बीच के कार्यकर्ता सिर्फ ऊपर के आदेश नीचे पहुंचाने और नीचे की सफलता के आंकड़े ऊपर ढोने में रहते हैं।

शुरू में इन निचले कार्यकर्ताओं को व्यावहारिक काम अधिक और कागजी खानापूरी कम करनी पड़ती थी, पर धीरे-धीरे ऊपर के अधिकारियों की सुविधा और जानकारी के लिए क्रम बदल गया है और अब हालत यह है कि ग्राम सेवक असली काम बिल्कुल न करे, पर यदि उसने अपनी दैनिक डायरी, मासिक प्रगति रिपोर्ट, स्टाक रजिस्टर, तकावी ऋण रजिस्टर, प्रदर्शन क्षेत्र रजिस्टर आदि ठीक भरे हैं, तो उसके क्षेत्र में काम हुआ माना जाएगा।

कहने को ग्राम सेवक पर अब सिर्फ कृषि कार्यक्रमों की जिम्मेदारी है, पर उसके चारों ओर जितना कागजी जाल फैला दिया गया है उसमें से ग्राम सेवक को निकल कर खेतों पर जाने की न फुर्सत है और न उनका दिल ही है।

ग्राम सेवक मजबूर है। उसे नौकरी करनी है, इसलिए कागजों का जाल बुनना पड़ता है। जो ग्राम सेवक पहले साइकिल पर चढ़ कर गाँव २ विकास का अलख जगाता था और किसानों की जरूरतें पूरी करने के लिए दौड़धूप करता था, वह अब कागजी जाल में फंस गया है।"

आचरण-संहिता

देश में फैला भ्रष्टाचार हमारे पनपते प्रजातंत्र का सबसे बड़ा शत्रु है। उसके दमन के लिए जहाँ और उपाय हो रहे हैं, आचरण संहिता का निर्माण भी है। इसका लक्ष्य यह है कि शासन में ऊपर का स्तर शुद्ध रहे। इस प्रश्न पर गहरी रोशनी डालते हुए दैनिक 'जागरण' के सम्पादक ने अपने अग्रलेख में लिखा है—

मोटे और मालदार होते जा रहे 'साधनस्रोत हीन' कार्यकर्ताओं की स्थितियों पर उभरे प्रश्न चिन्हों ने जिस वातावरण को निर्मित किया था, उसके फलस्वरूप अखिल भारतीय काँग्रेस द्वारा ऐसे लोगों की संपत्ति के ब्यौरे की माँग की गई और उस माँग पर बहुतेरे लोगों ने अपनी सांपतिक स्थिति का ब्यौरा उसे प्रदान भी कर दिया, परन्तु जहाँ तक उस ब्यौरे का ताल्लुक है, उसमें संभवतः यह बताने की आवश्यकता नहीं रखी गई थी कि जिस सम्पत्ति का ब्यौरा प्रस्तुत किया गया है, उसके अर्जित करने के आधार क्या रहे हैं ? इसलिए संपत्ति का ब्यौरा लेने के बाद भी उससे वे अपेक्षित परिणाम सामने नहीं आ सके, जिनकी आशा की गई थी। संपत्ति का ब्यौरा लेना एक बात है और संपत्ति कैसे, किन स्रोतों से अर्जित की गई उसका विवरण प्राप्त करना बिल्कुल दूसरी। यदि ब्यौरे के साथ ही उसके अर्जन स्रोत भी मांगे गए होते तो जाहिर है कि उससे उन साधनों का आभास मिल सकता था जिससे संपत्ति का अर्जन किया गया या किया जा रहा है, पर इससे एक हद तक ऐसे लोगों का जिनकी बढ़ती जा रही संपत्ति, लोगों की आंख में तिनके की तरह खटक रही थी, विवरण अखिल भारतीय कांग्रेस के समीप पहुंच चुका होगा और हो सकता है उसके संदर्भ में अखिल भारतीय कांग्रेस द्वारा भी किसी प्रकार का विचार विमर्श किया जा रहा हो ?

आचरण-संहिता का होना बहुत अच्छी बात है, पर आचरण संहिता के बाद उस पर अमल, आचरण की उससे भी अधिक आवश्यकता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

सांपत्तिक ब्यौरा देने मात्र से यदि भ्रष्टताओं पर काबू पाने की सम्भावना की जा रही हो, तो हमें यह कहना होगा कि इसमें ब्यौरा प्राप्त करने वाली आचरण संहिता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ अधिक लाभकारी सिद्ध नहीं हो सकेगी। जरूरत इस बात की है कि मंत्रियों की सम्पत्ति उनके आय कर स्रोत, उनके उद्योग, उनकी भागीदारी और इस सबके बीच चलने वाली गोपनीयताओं की पूरी पूरी छानबीन की जाए और यह देखा जाए कि कहीं शासन में रहकर अपने प्राप्त अधिकारों के उपयोग दुरुपयोग से उन्होंने 'अपने वालों' को लाभान्वित और मालामाल बना देने का गुनाह दूसरों का हक मार कर तो नहीं किया है?

आचरण-संहिता को यदि नाटक नहीं बनाना है तो यह जरूरी होना चाहिए कि मंत्रियों की संपत्ति और उनके आय स्रोतों का ब्यौरा प्रकाशित कर दिया जाय, जिससे जनता पर जाहिर हो सके कि उनके मंत्रियों का स्तर क्या है? हमारी मान्यता है कि आचरण संहिता के निर्माण के साथ उन स्थितियों के प्रति जागरूकता का परिचय दें, जिससे आचरण संहिता का आधार अवास्तविक होकर नहीं रह जाए। मंत्रियों, कार्यकर्ताओं के रूप में शासन और जनता के दिशादर्शकों का आचरण यदि शुद्ध और प्रोज्वल करने की पहल को असली रूप दिया जा सके, तो इसमें कोई संदेह नहीं कि आचरण संहिता हमारी दिन ब दिन ढहती जा रही नैतिक भित्तियों को एक नया आधार प्रदान कर सकेगी।

कांग्रेस शासन और कांग्रेस-संगठन

'नया जीवन' के पिछले अंक में मान्य श्री श्रीप्रकाश जी का एक लेख छपा था कांग्रेस अध्यक्ष या केन्द्रीय सरकार? इसमें यह प्रश्न उठाया गया था कि क्या कांग्रेस अध्यक्ष का प्रधानमन्त्री को शासन के कार्यों में प्रभावित करना प्रजातन्त्र की दृष्टि से उचित है? यह प्रश्न पुराना है और सबसे पहले यह तब उठा था, जब आचार्य कृपलानी ने इसी प्रश्न पर कांग्रेस अध्यक्ष के पद से त्याग-पत्र दे दिया था। इस प्रश्न का रूप यह है कि पार्टी के संगठन और शासन पक्षों के अधिकारों की मध्य रेखा कहाँ है? उस समय (१९५० के पहले आम चुनाव से पहले ही) विश्व विख्यात राजनैतिक विचारक श्री एम० एन० राय ने इस पर एक लेख लिखा था। यहाँ उसी के कुछ अंश प्रस्तुत हैं, जो इस प्रश्न के महत्व पर रोशनी डालते और इसे गम्भीरता के साथ विचारणीय बताते हैं—

एक सवाल, जो कल जोर पकड़ेगा!

"ब्रिटिश शासकों ने कांग्रेस को भारतीय जनता की एक मात्र प्रतिनिधि संस्था स्वीकार कर सत्ता उसके हाथ में सौंपी। सत्ता-हस्तान्तरण एक तरह की वैधानिक प्रक्रिया थी—विरोधी पक्ष का बहुमत स्वीकार कर उसे शासन सूत्र सम्भालने के लिए आमन्त्रित करना। इस तरह संक्रमण काल में नये संविधान के मुताबिक पहली पार्लामेंट के चुनाव तक कांग्रेस और सरकार का सम्बन्ध अत्यन्त अस्पष्ट रहा। इसका नतीजा यह हुआ कि नेहरू जी के बाद कांग्रेस के अध्यक्ष बनने वाले कृपलानी जी को सर्वोच्च अधिकार हस्तगत करने के अप्रत्यक्ष संघर्ष परिणामस्वरूप इस्तीफा देना पड़ा। यद्यपि कृपलानी जी ने साफ साफ नहीं कहा, पर उन के इस्तीफे के पीछे यह चीज थी कि कांग्रेस को सत्ता हस्तान्तरित की गयी है, तो कांग्रेस के अध्यक्ष को ही सरकार का भी सूत्र-संचालक होना चाहिए। कांग्रेस जनता के सामने सरकार की रीति-नीति की वकालत करने की जिम्मेदारी तब तक नहीं ले सकती, जब तक सरकार कांग्रेस-अध्यक्ष का परामर्श और निर्देश स्वीकार न करे। वास्तविकता कुछ और है। कृपलानी अडिग विचारों और दृढ़ संकल्प वाले व्यक्ति ठहरे, अतः उन्होंने कांग्रेस-अध्यक्ष पद से इस्तीफा देना ही उचित समझा और इस्तीफा दे दिया। तब से कांग्रेस और सरकार के सम्बन्धों में संकटापन्न स्थिति उत्पन्न हो गई है।

इस कठिनाई की जड़ यह है कि राज्य और पार्टी का क्या सम्बन्ध होना चाहिए।

कांग्रेस की गाँधीवादी परम्परा के अनुरूप कृपलानीजी ने राज्य और पार्टी के सम्बन्धों के बारे में एकाधिकारवादी रुख की अभिव्यक्ति की है। उनका कहना यह था कि कोई भी राज्य और सरकार राष्ट्रीय तब तक नहीं कहला सकती, जब तक उस पर राष्ट्र की पार्टी का नियन्त्रण न हो। जब एक पार्टी पूरे राष्ट्र का प्रतिनिधि होने का दावा करती है और इस दावे को वैधानिक रूप से स्वीकार कर लिया जाता है, तो दूसरे दलों का अस्तित्व पहले से ही समाप्त सोच लिया जाता है। एक दल वाले राज्य में दोनों एक ही चीज होती है। कांग्रेस परम्परा जिसकी सही अभिव्यक्ति कृपलानी जी ने की थी। कांग्रेस को एक सत्तात्मक राज्य के संगठन के साथ बांध देती है। इस राज्य में सरकार होगी, कांग्रेस होगी और जनता। सरकार को कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए क्योंकि कांग्रेस को जनता का विश्वास प्राप्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार नये संविधान के मुताबिक संगठि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने वाली पार्लामेंट की कोई जरूरत नहीं है। फिर भी वास्तविकता यह है कि काँग्रेस ने पार्लामेंट लोकतंत्र अपनाने की घोषणा भी कर रखी है।

वैधानिक तथा लोकतन्त्र की ओर अग्रसर होने वाले राज्य का सूत्रसंचालन अपने हाथ में लेने के बाद से ही यह समस्या कांग्रेस नेताओं के सामने थी। एक तरफ तो कांग्रेस की एकसत्तात्मक परम्परा, दूसरी तरफ लोकतन्त्रीय व्यवहार। लोकतन्त्रीय पार्लामेंटरी राज्य व्यवस्था शासन-कार्य के थोड़े समय में ही कांग्रेस नायकों को दोनों रुखों के परस्पर विरोधी स्वरूप का आभास हो गया। प्रधान मन्त्री का राष्ट्रीयता के प्रति उत्कट लगाव उन्हें एक सत्तात्मक राज व्यवस्था की ओर खींचता है, फिर भी व व्यक्तिगत रूप से पार्लामेंटरी लोकतन्त्र की व्यवस्था को ईमानदारी के साथ अपनाने के लिए तैयार हो सकते हैं। इस संक्रमण काल में सरकार पर पार्टी के एक सत्तात्मक नियंत्रण लागू करने के प्रयत्नों को असफल करने में वे सफल हुए हैं।

आम निर्वाचन के समय पार्टी को कांग्रेस संगठन की प्रमुखता प्राप्त हो जाएगी, पर चुनाव के बाद पार्लामेंट और पार्टी में सघर्ष हो सकता है। सरकार किसके प्रति उत्तरदायी होगी? कांग्रेस के या पार्लामेंट के? नये चुनाव के बाद कांग्रेस का यह दावा कि वह राष्ट्र की पार्लामेंट है, समाप्त हो जायगा। कुछ काँग्रेसी नेता पार्लामेंटरी लोकतंत्र की टट्टी के पीछे एक सत्तात्मक सरकार बनाना चाहते हैं। फिर भी साधारण निर्वाचन के पूर्व तो पार्टी को अपनी शर्तें मनवाने का मौका है। जब सरकार को अपने नियन्त्रण में रखने का उसे अधिकार नहीं है, तो वह उसे जिताने के लिए कोशिश क्यों करे? इसीलिए कांग्रेस के अध्यक्ष को राष्ट्र का प्रधान बनाने का सुझाव पेश कर एकसत्तात्मकता, पार्टी अधिनायकशाही की जड़ मजबूत करने की कोशिश की जा रही है।

एक दूसरा सुझाव यह है कि प्रधान मंत्री अथवा उनसे और अधिक शक्तिशाली उप प्रधान मन्त्री काँग्रेस के अध्यक्ष बनाये जायें। वह सुझाव भी ऊपर जैसा ही खतरनाक है।

इसके पक्ष में अनेक पुष्ट तर्क भी लोग दे सकते हैं। पार्लामेन्टरी लोकतन्त्र में हर एक सरकार पार्टी-सरकार होती है, फिर पार्लामेन्ट में बहुमत वाली पार्टी सरकार पर नियन्त्रण क्यों न हो? यह ठीक है कि पार्लामेन्टरी लोकतंत्र में सरकारें पार्टी सरकारें होती हैं, पर किसी भी लोकतन्त्रीय राज्य में कोई एक पार्टी यह दावा नहीं कर सकती कि वह राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करती है।

किसी भी लोकतन्त्रीय देश में पार्लामेन्ट के बाहर की पार्टी और सरकार का प्रधान एक ही व्यक्ति नहीं है। प्रधान मन्त्री पार्लामेण्ट्री पार्टी का नेता होता है और यह पार्लामेण्ट्री पार्टी बाहर के पार्टी संघटन से स्वतंत्र होती है। भारत में अभी यही ढंग चल रहा है। अगर यह चालू रहा तो पार्लामेन्ट के बाहर की पार्टी कांग्रेस की देश में प्रमुखता कम हो जायेगी। अगर बाहर की पार्टी का प्रभाव सरकार पर बढ़ाने की कोशिश की गयी तो लोकतन्त्रों के लिए खतरा पैदा हो जायेगा और अधिनायकशाही के लिए रास्ता साफ हो जायगा।"

—अखिलेश

सोने के फूल

श्री ठाकुर दत्त शर्मा 'पथिक'

एक साहूकार के कमरे में दो गमले रखे हुए थे।

एक गमले में मिट्टी भरी हुई थी, जिसमें गुलाब का पौधा महक रहा था।

दूसरा गमला चान्दी का बना हुआ था, जिसमें सोने की कलियाँ और फूल चमक रहे थे।

भ्रमरों की टोली गुनगुनाती आयी और गुलाब की अरुणिम पंखुरियों का रस पान करने लगी।

तभी दंभ में झूम कर सोने के फूलों ने भ्रमरों की टोली से प्रश्न किया—"क्यों भाई, तुम सब सोने-चान्दी की गोद छोड़कर, उस काँटे-भरे गुलाब पर फड़फड़ा रहे हो। वहाँ ऐसा क्या है?"

भ्रमरों की टोली ने उत्तर दिया—"एक तुम हो, जो अपने लिए, जन-जीवन का सौरभ हरते हो न और—एक ये हैं, जो जन-जीवन के लिए अपना सौरभ बखेरते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेडियो-समीक्षा

संसद देश के प्रजातंत्र की पोषक भी है, रक्षक भी और प्रेरक प्रहरी भी। यह कितने दुःख की बात है कि स्वतंत्रता के १७ वर्षों में किसी भी सूचना मंत्री ने इस प्रश्न पर विचार नहीं किया कि संसद के कार्य का जनता को ज्ञान कैसे हो ? इसके साथ ही हमारे दैनिक पत्रों ने भी संसद के समाचारों को जनता तक पहुंचाने के लिए किसी नई शैली का आविष्कार नहीं किया।

संसद का रूप गुलाम भारत में केन्द्रीय असेम्बली का था। देश की स्वतन्त्रता के योद्धा उसमें विरोधी दल का नेतृत्व किया करते थे। इस लिए स्वतन्त्रता के समर्थक दैनिक पत्र उन नेताओं के भाषणों को विस्तार से छाप दिया करते थे। इसका भीतरी रहस्य यह था कि असेम्बली के भाषणों पर कानूनी पाबन्दी नहीं थी और सम्पादक लोग राष्ट्रीय आन्दोलन के समर्थन में या सरकार की आलोचना में जो बात नहीं कह सकते थे और कहें,तो कानूनी शिकंजे में फंसते थे, वही बातें असेम्बली के भाषणों के द्वारा धड़ल्ले से कह देते थे। एक ही उदाहरण है, जब असेम्बली का भाषण छापने पर किसी पत्र के खिलाफ कानूनी कार्यवाही की गयी। असेम्बली के सदस्य श्री कृष्ण कान्त मालवीय का भाषण उनके ही पत्र 'अभ्युदय' में छपा, तो सरकार ने जमानत मांगली, पर असेम्बली में और पत्रों में इस पर इतना हल्ला मचा कि सरकार को झुकना पड़ा।

अब वह स्थिति बदल गयी है,पर अभी भी दैनिक पत्रों में संसद की कार्यवाही छापने का वही तरीका चल रहा है कि मन्त्रियों और प्रमुख सदस्यों के भाषण छाप दिए और बस ! विचार का विषय क्या है, उस का महत्व क्या है, उस पर किस दल की क्या प्रतिक्रिया है और उस प्रतिक्रिया का क्या महत्व है। इस सबसे पाठक वंचित रह जाता है।

इस उपेक्षा से जनशिक्षण का तो नुकसान हुआ ही, स्वयं संसद को भी घाटा रहा कि उसके प्रति जनता में, जो संसद की निर्मात्री है, संसद लोकप्रिय होने से वंचित रही और संसद के सदस्य, जो जनता में अग्रगण्य हो सकते थे, नगण्य ही रह गये। उनकी इस नगण्यता का फल संसद को इस रूप में भोगना पड़ा कि सदस्यों के लिए संसद के कार्य अरुचिकर हो गए। अब जो ५३० सदस्यों की लोकसभा में ५० सदस्य भी कई बार उपस्थित नहीं रहते और कोरम की कमी का हल्ला मचता है, उस का एक कारण यह भी है। संसद के कार्य को सही प्रचार देकर नये नेतृत्व को पनपाने का जो काम हो सकता था, वह भी नहीं हुआ, क्योंकि मतदाता जान ही न पाये कि किस प्रतिनिधि ने क्या काम किया ? मतदाताओं की चुनाव के प्रति उपेक्षा कि ५० प्रतिशत मतदाता उदासीन रहते हैं, यह भी एक कारण है।

इस पृष्ठभूमि में रेडियो कार्यक्रम में 'संसद समीक्षा' के नाम से जो वार्ता प्रतिदिन संसद-अधिवेशन के दिनों में प्रसारित होती है, उस का महत्व स्पष्ट है। उस वार्ता के लेखक और वाचक हैं श्री धर्मवीर गाँधी। स्वर और शब्द दोनों ही दृष्टियों से वे इस काम के लिए फिट हैं। दिन भर की कार्यवाही को कुछ मिनटों में बांधना कठिन कार्य है, पर वे इसे काफी खूबी से कर सकते हैं,पर समय की कमी उनकी खूबियों का गला घोट देती है। इस वार्ता का समय ५ मिनट की जगह १५ मिनट होना चाहिए, जिससे सब वक्ताओं के साथ भी न्याय हो सके।

विषय के साथ श्री धर्मवीर काफी अच्छा न्याय करते हैं और विषय का सार करने में उन्हें कमाल हासिल है, पर इस वार्ता का मोटो यह होना चाहिए कि पूरा ज्ञान और पूरा आनन्द। मतलब यह कि श्रोता को संसद की कार्यवाही का पूरा ज्ञान तो मिले ही, अधिवेशन का पूरा आनन्द भी मिले कि जैसे वह खुद ही अधिवेशन देखकर आया है। मतलब यह कि रिपोर्टिंग न होकर वह रिपोर्ताज हो। इस समय तक श्री धर्मवीर गाँधी अपने श्रोताओं की जो सेवा की उसे 'एप्रीशियेशन' मिलना चाहिए और इस वार्ता का समय भी बढ़ाया जाना चाहिए।

यह वार्ता अपनी जगह महत्वपूर्ण है और शासन के कर्णधार, विभिन्न राजनैतिक दलों, सुयोग्य सदस्यों और सबसे बढ़कर सम्मान्य श्रद्धेय श्री अध्यक्ष महोदय से तकाजा करती है कि वे यह सोचें कि संसद (और अपने अपने राज्य की विधान सभाओं) की गतिविधि से जनता परिचित रहे, इसके लिए क्या क्या करना आवश्यक है। यह व्यक्तियों का, दलों का ही नहीं, राष्ट्र और राष्ट्र के उभरते प्रजातन्त्र का प्रश्न है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यों जिन्दगी जियो; यों जिन्दगी लिखो !

श्री बालकृष्ण बलदुवा

मैंने जिंदगी देखी है : मैंने जिंदगी लिखी है।

कभी मैंने जिंदगी को भरा है अपने वक्ष में—आतुर प्रेमी की भाँति, तो कभी मैंने टेक दिया है अपना सिर जिंदगी के वक्ष पर—थके स्नेही की भाँति। कभी-कभी जैसे बादल उड़ कर छूते हैं, चूमते हैं गिरि-बालाओं के ललाट को, वैसे भी जिंदगी को छुआ है, चूमा है।

ऐसे भी अवसर आये हैं, जब जिंदगी को मैंने रौंद दिया है—काली की भाँति, तो ऐसी घड़ियाँ भी बीती हैं, जब जिंदगी का शव लेकर ताण्डव किया है—शिव की भाँति। अनेक बार जिंदगी रुद्र के तृतीय नेत्र की भाँति मुझ पर खुली है—अनायास, भस्म करते हुए मुझे काम-देवसा, तो कई बार मुझ भस्म की ढेर पर जिंदगी ने प्राण भी छिड़के हैं—मोहिनी के अमृत-घट की भाँति।

प्राय: जिंदगी मेरे लिए शरद् पूनो-सी रही। पूनो-सी, जिसकी जुन्हाई है मिलन में, तो अनल है वियोग में! पूनो-सी, जो दूध-खीरवालों के लिए रास की रात लाती है माधवी-कुंजों में, तो पिचके पेट बुभुक्षितों की आँखें पथरा देती है सर्द पटड़ियों पर।

और यह पूनो मैंने मिलन में नहीं बितायी, माधवी-कुंजों में भी शायद ही कभी बितायी।

इसीलिए ऐसा भी हुआ है कि मैंने प्रभंजन की भाँति जिंदगी को झकझोरा है अनेक बार, तो अनेक बार जिंदगी ने भी बरसाती नदी बन अपने भँवर-जाल में मुझे खूब ही फँसाया है, नचाया है; नचाया है, फँसाया है।

यों, जिंदगी मेरे लिए माखन-सी पौष्टिक नहीं बनी, बनी चने-सी ताकत देने वाली। चने-सी, जिसके पानीदार दाने गिजा देते हैं, तो बेपानी दाने टकराते भी हैं लोहे-से, चोट करते हुए, पीर देते हुए।

यों, पीर और चोट भरी जिंदगी मैंने देखी है, लिखी है। आज भी देख रहा हूँ, लिख रहा हूं।

जिंदगी देख कर कसक पायी है, तड़प पायी है। जिंदगी लिख कर राह पाई है, राहत पाई है।

रोना बुरा नहीं, यदि उसमें आँख का अंधियारा बह जाए। रोना बहुत ही अच्छा है, यदि उसमें मन का अँधियारा सने और सन कर आँख का अँजन बन जाए।

साहस के बोल मुखरित होते-होते मर जाएंगे—शव-यात्रा-घोष की भाँति, यदि वे जीवन के बोल नहीं, जिंदगी के गीत नहीं। साहस के बोल न खुद जिएंगे, न दूसरों को जिलाएंगे; यदि उनमें ज्ञान की बाढ़ है, अनुभूति की बरसात नहीं।

यों, रोना अपने-आपमें हेय नहीं, साहस के बोल अपने-आप में श्रेय नहीं, जिससे जिंदगी को निखार मिले, वही श्रेय है, जिससे जिंदगी को जीवन मिले, वही श्रेयस्कर है।

ऐसे मैंने जिंदगी देखी है। ऐसे मैंने जिंदगी लिखी है।

और ऐसे ही जिंदगी की तस्वीरें मढ़ी भी जायेंगी।

तुम जिंदगी की तसवीरें मढ़ना चाहते हो। मढ़ो!

पर जरा यह तो बता दो—

तुम तसवीर को काटोगे चौखटे के लिए या चौखटे को काटोगे तसवीर के लिए।

यदि तसवीर को काटोगे चौखटे के लिए, तो जड़ भले ही लो उसे चौखटे में, पर कटी तसवीर जिंदगी की विकृति होगी, प्राण नहीं; चेतना नहीं।

यदि चौखटे को काटोगे तसवीर के लिए, तो चौखटा निखर उठेगा तसवीर से और तसवीर बोल उठेगी चौखटे में।

यों, यह तुम्हारे हाथ में है कि तुम जिंदगी की तसवीर को विकृत कर दो या अलंकृत।

यों, यह तुम्हारे हाथ में है कि तुम चौखटे का सदुपयोग करो या दुरुपयोग।

सदुपयोग करोगे, तो तुम्हारा चौखटा निखर उठेगा, सिद्धान्त चमक उठेगा। दुरुपयोग करोगे, तो वह तस्वीर को ही विकृत कर पायेगा, जिंदगी को नहीं।

जिंदगी तो चलती ही रहेगी, बढ़ती ही रहेगी—आगे, निरन्तर आगे : झाड़-झंखाड़ काटते हुए, कुचलते हुए।

और उसे देखने वाले रहेंगे ही, लिखेंगे भी।

मैं चाहता हूँ तुम भी जिन्दगी को देखो, जिन्दगी को, लिखो। उसे देखकर कसको, तड़पो और लिखकर राह पाओ, राहत पाओ। कहूँ, राह दिखाओ और राहत दो भी।

मैंने जिंदगी देखी है : मैंने जिंदगी लिखी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक शुभ अनुष्ठान

मुझे जीवन के उग-उभरते क्षणों में जिन पुस्तकों से गहरा उत्साह मिला था, उनमें सैमुअल स्माइल्स की पुस्तक 'सैल्फ हैल्प' (अनुवाद-स्वावलम्बन) भी थी। मेरे जैसे और भी सैकड़ों युवक थे। देश के स्वतन्त्र होने पर मैंने बाजार में स्वावलम्बन की बहुत तलाश की, पर न मिली। तब मैंने उसके प्रकाशक अपने कृपालु बंधु श्री नाथूराम प्रेमी को पत्र लिखा, तो दर्द भरा उत्तर आया—"अरे भाई, अब वैसी पुस्तकें कौन पढ़ता है।"

इस पृष्ठभूमि में जब मुझे सुबोध प्रकाशन, चर्खेवालान, दिल्ली द्वारा प्रकाशित दस पुस्तकें एक साथ देखने-पढ़ने को मिली, तो मुझे अपने मित्रों से मिलने जैसा सुख मिला। इन दस पुस्तकों में से सैमुअल स्माइल्स की दो पुस्तकें हैं—चरित्र निर्माण कैसे करें और क्यों बचायें, कैसे बचायें। विश्वविख्यात जीवन शास्त्री स्वेट मार्डन की पाँच पुस्तकें हैं—आप क्या नहीं कर सकते, हँसते हँसते कैसे जियें, चिन्ता मुक्त कैसे हों, जो चाहें सो कैसे पायें, भय मुक्त कैसे हों। साधक शिरोमणि जेम्स ऐलन की एक पुस्तक है—आप सफल कैसे हों। जौन कैनेडी की एक पुस्तक है—इच्छा शक्ति कैसे बढ़ायें। जोजफ मैजिनी की एक पुस्तक है-आप क्या करें।

इन पुस्तकों में ज्ञान का बोझ नहीं है, प्रेरणा का स्रोत है। पढ़कर मन की निराशा भागती है, आशा का प्रकाश उदित होता है, मैं भी कुछ कर सकता हूँ, सफलता पा सकता हूँ, यह विश्वास उमड़ता है और आदमी अवसाद से उभर कर्म की प्रवृत्ति पाता है। ये पुस्तकें कागजी होकर भी नयी पीढ़ी के लिए जीवित मित्र हैं। भारत की नयी पीढ़ी विचार रिक्तता में काफी ग्रस्त है और इस दृष्टि से इन पुस्तकों का सामयिक उपयोग और भी अधिक है। आवश्यक है कि इन पुस्तकों का प्रचार लाखों में हो और ये पुस्तकालयों, परिवारों और शिक्षा संस्थाओं में पहुँचें। अनुवाद सरल-सरस है, पुस्तकें सजिल्द सुन्दर हैं और मूल्य स्माइल्स एवं मेजिनी की पुस्तकों का तीन रुपये, शेष का सवा दो रुपये प्रति पुस्तक है। इस प्रकाशन के संचालक बधाई और सहयोग के हकदार हैं और मैं उनकी सफलता की कामना करता हूँ।

झरोखे

श्री देवी दयाल चतुर्वेदी 'मस्त' हिन्दी के सुपरिचित पत्रकार हैं। उन्होंने कई पत्रों का सम्पादन तो किया ही, दो दर्जन से अधिक पुस्तकों की सर्जना भी की है। उनकी पत्नी श्रीमती हीरा देवी जी चतुर्वेदी भी यशस्वी कहानी लेखिका हैं। इन्हीं मस्त जी के २५वर्षों के पत्रकार जीवन की कहानी है झरोखे। यह कहानी कष्टभरी है, संघर्ष भरी है। एक साधनहीन स्वाभिमानी साधक को कैसे कैसे दिन देखने पड़ते हैं, अभावों की भट्टी में किस तरह तपना पड़ता है, हर पन्ने पर इसकी झाँकी है।

जिन रचनाओं से प्रकाशक लखपति हो जाते हैं, उनसे उनके रचयिताओं को पूरी रोटी भी नहीं मिलती। सचमुच मस्त जी उस पीढ़ी के रत्न हैं, जिसने हिन्दी पत्रकारिता की नींव भरने में अपने को खपाया है। जिस स्थिति के कष्ट मस्त जी ने भोगे हैं, वह बदल रही है और उनके बाद की पीढ़ी उनसे अच्छा जीवन जी रही है, यही उनकी साधना का इनाम है। मस्त जी ने ये संस्मरण लिखकर एक सत्कर्म किया है इसमें संदेह नहीं। १४० पृष्ठ की सजिल्द पुस्तक का मू० ३॥ रुपये और प्राप्ति स्थान लायल बुक डिपो, सरस्वती - सदन, ग्वालियर १ है।

दो कहानी-संग्रह

पत्थर और प्रतिमा लघु कथाओं का संग्रह है और कफन चोर कहानियों का। दोनों के लेखक हैं श्री तिलक। उनकी लघु कथायें पढ़ते बरसों बीत गये, मन पर उनकी सुरुचि की छाप थी, पर इन संग्रहों को पढ़कर यह छाप पड़ी कि वे हिन्दी साहित्य के एक ऐसे विशिष्ट साधक हैं, जो चुपचाप समुद्र से हीरे मोती निकाल कर अपने एकांत में ढेर लगाते रहते हैं, बिना यह सोचे कि जौहरी लोग इनकी क्या कीमत आँकेंगे।

पुस्तक-परिचय

उनका कथ्य शिष्ट है और शिल्प विशिष्ट। बात को बिना पंडिताई का प्रलेप किये सादगी से कह देना कि तुरंत पाठक का हृदय उसे आत्मसात कर ले, उनकी कला है। इन कृतियों से कृतिकार का जो इन्द्रधनुषी चित्र मन पर बनता है, वह है एक बहुदर्शी और व्यवस्थित अनुभवी साधक का चित्र। लघु कथा संग्रह उन्होंने विष्णु शर्मा, खलील जिब्रान और ईसप की परम्परा को समर्पित किया है और कहानी संग्रह प्रेमचन्द-गोर्की की परम्परा को। वाह, क्या सहृदयता है, क्या शालीनता! उन का कार्य सम्मति का नहीं समुचित मूल्यांकन का पात्र है, इसमें सन्देह नहीं। दोनों सजिल्द सुन्दर पुस्तकों का मूल्य ५-५ रुपये और प्राप्ति स्थान—कलाभारती १६/२० बी. सिविल लाइन्स, कानपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तार—बम्बई—'साहूजैन'
धांगध्रा—'कैमिकल्स'
आरूमुगनेरी—'कैमिकल्स'

टेलीफोनः—बम्बई—२५१२१८-१९-१०
(तीन लाइन)
धांगध्रा—३१ एवं ६७
कयालपटनम—३०

卐

धांगध्रा कैमिकल वर्क्स लिमिटेड

१५ ए-हार्निमन सर्किल

फोर्ट, बम्बई-१

प्रसिद्ध 'हार्स शू' छाप कैमिकल्स के निर्माता

सोडा ऐश, सोडा बाईकार्ब, केलशियम क्लोराइड,

नमक और इलेक्ट्रोलीटिक कास्टिक सोडा

(९८ प्रतिशत N&OH Purity)

卐

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

धांगध्रा (गुजरात राज्य)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

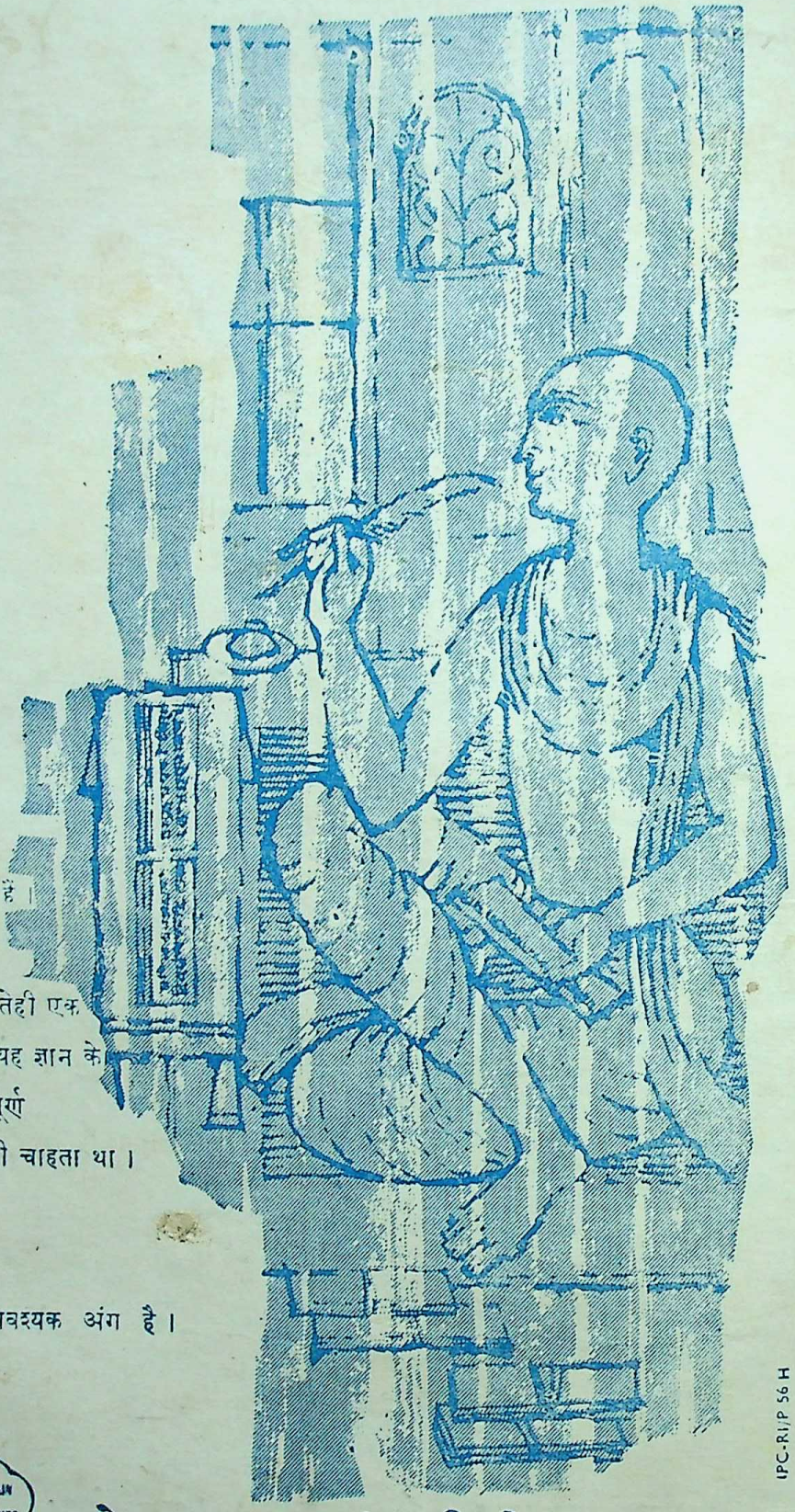

शिलाओं, पेड़ों की छाल, जानवरों की खाल अथवा धातुओं के टुकड़ों की लिखावटें सभ्यता के उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

IPC-RI/P 56 H

ROHTAS

SAHU JAIN INDUSTRIES

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

मुद्रक—अखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स, सहारनपुर में मुद्रित—प्रकाशित
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

कृतिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक
राष्ट्रीय चेतना का प्रेरक मनोरंजक मासिक

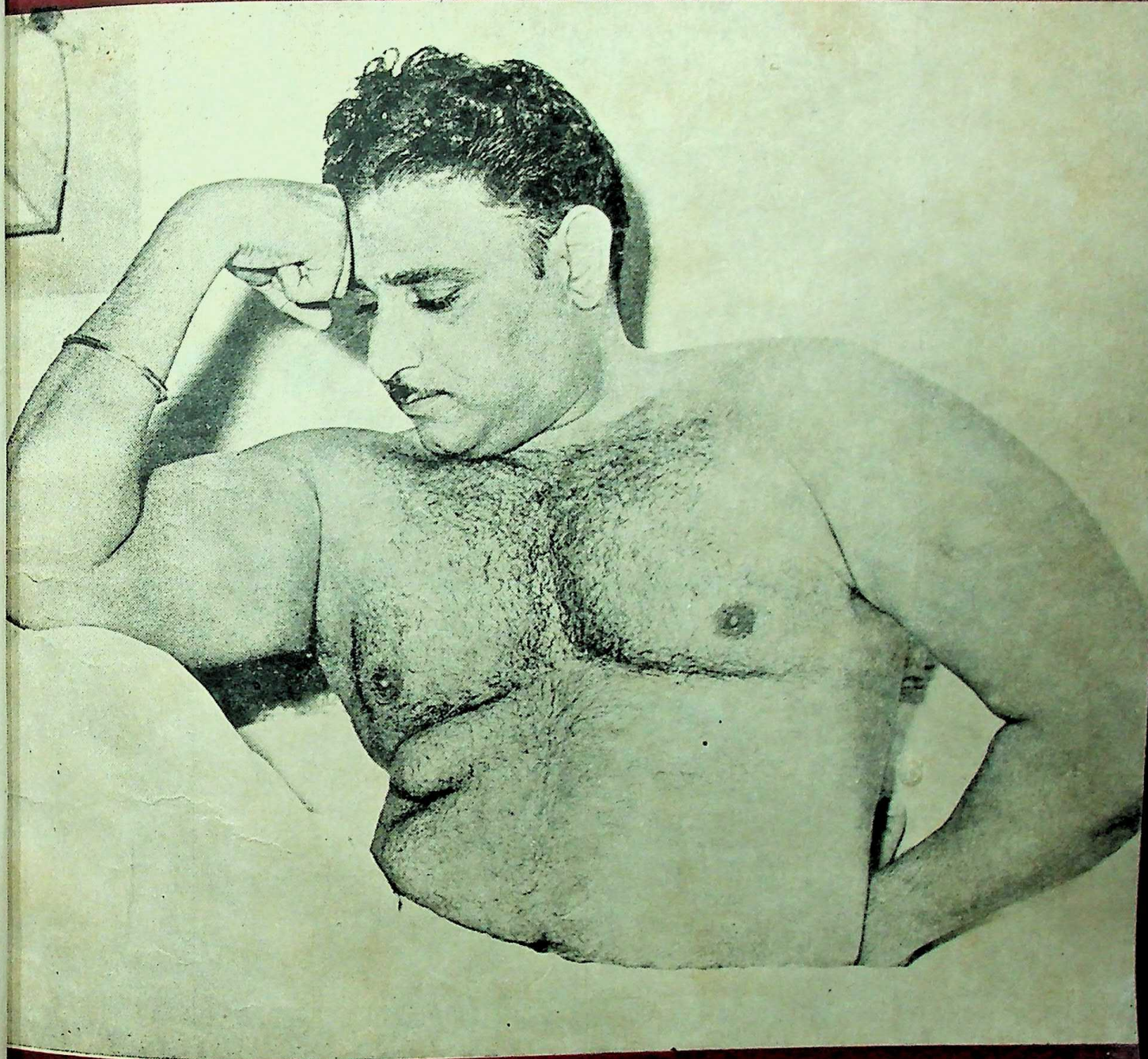

नया को ठीक जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
नया को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
मझे पर राय बनाने के लिए मासिक आवश्यक है.

'नया जीवन' में
दैनिक-साप्ताहिक-मासिक की इन विशेषताओं का समन्वय है।
आप उसका एक अंक देख कर ही इस के साक्षी हो जाएंगे

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज़ के एक छोटे पुर्जे पर महात्मा गांधी ने आश्रम के एक रोगी को रात में दो बजे एक हिदायत लिखी थी। अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है।

विदेश के एक अज्ञात कवि द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला उसके मरने के बरसों बाद, वह उसी से अमर हो गया; उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज़ के बिना न शास्त्र मिलते न साहित्य। कागज़ हमारी सभ्यता की एक पवित्र धरोहर है !

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित यह साहित्य
आपके पुस्तकालय में न हो तो इसे तुरन्त मंगा लीजिये !

★ जिन्दगी मुस्कराई ४.०० रु०
★ दीप जले शंख बजे ३.०० रु०
★ बाजे पायलिया के घुंघरू ४.०० रु०
★ महके आंगन चहके द्वार ४.०० रु०

(नई स्फूरणा के साथ जीवन को चमकाने वाली चारों पुस्तकें)

★ माटी हो गई सोना २.०० रु०
बलिदान की चेतना से पूर्ण १० अमर अक्षर चित्रों का संग्रह

★ आकाश के तारे धरती के फूल २.०० रु०
जीवन की गहराई, लोच और गति से भरपूर अनोखी लघु कथाएं

★ क्षण बोले कण मुस्काए ४.०० रु०
लेखक की विशिष्ट शैली का प्रतिनिधित्व करने वाले
ललित एवं मनोरंजक निबंधों का नव प्रकाशित संग्रह

प्रकाशक:—

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुंड, वाराणसी

विक्रय केन्द्र ३६२०/२१ नेता जी सुभाष मार्ग, दिल्ली—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेट्रिक प्रणाली एकमात्र कानूनी प्रणाली - मेट्रिक प्रणाली एकमात्र कानूनी प्रणाली - मेट्रिक प्रणाली एकमात्र कानूनी प्रणाली

मेट्रिक प्रणाली ही कानूनी प्रणाली है

खरीदारी केवल

किलोग्राम

मीटर

लिटर

में ही कीजिये

IPA 61/676

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दून घाटी

:: का ::

गौरव

अमिताभ टैक्सटाइल मिल्स लि०

देहरादून :: उत्तर प्रदेश

श्रेष्ठतम :

★ सूत

★★ हौज़री

★★★ बंटा सूत

निर्माता

अमिताभ ! अमिताभ !! अमिताभ !!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, -ईख की खोज करने वाला-
उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला-
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और तो संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लेमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है।

★

कोशिश कीजिये-

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए!

बढ़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत
एवं
भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-मुल्ला-कड़ा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस: चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

संयुक्त-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—२१६, २६२, १६०

संचालक
सेठ सुशील कुमार बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रूरी जानकारी

- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे है। विशेषांक का मूल्य पृथक, जो ग्राहकों को वार्षिक मूल्य में ही मिलता है।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और अपनी प्रत्येक रचना पर अन्त में अपना पूरा नाम-पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह प्यार-मान दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियां भेजें। ३ महीने के भीतर आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाए, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या लिखने की आवश्यक प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीज़ों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक

नया जीवन' * सहारनपुर * उ० प्र०

नया जीवन

विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ-१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'
निदेशक

अखिलेश
सम्पादक-संचालक

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का फालतू समय चैन से काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैख़ाना हर समय खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं!

अप्रैल-मई १९६५

संचालक

विकास लिमिटेड
सहारनपुर • उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुक्रमणिका

वासन्ती-गीत

साँप सीढ़ी का खेल मेरा जीवन

मैं एक कुंजड़िन हूं

राष्ट्र-चिन्तन

राष्ट्र-दर्शन

प्रजातन्त्र की रक्षा के लिए आवश्यक है

शान के दौर से सादगी की ओर

फिर एक चाँद का उदय होगा

अपनी सुन्दरता यों बढ़ाइए !

यह शान्त सन्तुलित और शक्तिधर व्यक्तित्व

काले पानी की कहानी

श्री सोहनलाल द्विवेदी; एक कवि, एक नागरिक, एक इतिहास

नये लेखकों की पाठशाला

सम्बोधनों में भटका हुआ खत

पढ़ने के कमरे में

पुस्तक-परिचय

श्री सोहनलाल द्विवेदी — १२३
बिन्दकी उ. प्र.

श्री देवेन्द्र 'दीपक' — १२४
राजकीय डिग्री कालेज, सीधी (म. प्र.)

श्री धर्मपाल 'दत्त' — १२४
ब्रज ब्राह्मण उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
सहारनपुर

स्तम्भ — १२५

स्तम्भ — १३१

श्री अशोक मेहता — १३३
योजना भवन, नई देहली

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' — १३६

श्री डा. एम. खुशदिल — १४२
समाज कल्याण समिति, मुरादाबाद

श्री धर्मचन्द सरावगी — १४४
८/१ एसप्लेनेड ईस्ट, जैन हाऊस, कलकत्ता

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' — १४५

श्री उपेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय — १४६
सम्पादक 'युगान्तर'

श्री अमर बहादुर सिंह 'अमरेश' — १५२
गांधी नगर, रायबरेली

स्तम्भ — १५४

श्री रमेश पंत — १५५
रेलवे स्टेशन, सहारनपुर

स्तम्भ — १५७

स्तम्भ — १६०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वासन्ती गीत

तृण तृण में है गान आज रे

कंठ कंठ में कोमल कूजन,
उर उर में है मादक स्पंदन
अधर अधर मुसकान आज रे।

वन वन में छाया है मधुवन,
रिश रिश में छाई सुषमा छन,
स्वर स्वर में है तान आज रे

आंगन आंगन में है उत्सव,
कानन कानन में नव वैभव,
मन मन में उत्थान आज रे

वन वन में हंसती हरियाली
उपवन उपवन छाई लाली,
कण कण में मधुमास आज रे

पल्लव पल्लव में है गुंजन,
डाल डाल में सौरभ के घन,
क्षण क्षण में नवलास आज रे

कली कली में केशर अभिनव,
कुसुम कुसुम में मधु का वैभव,
किसे प्राण उल्लास आज रे ?

—सुमित्रानंदन

[श्री सोहनलाल द्विवेदी, परिचय पृष्ठ १५२ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साँप सीढ़ी का खेल मेरा जीवन

श्री देवेन्द्र 'दीपक'

यों तो सभी का जीवन साँप सीढ़ी का खेल है;
लेकिन मैंने जीवन भर
साँप सीढ़ी का विचित्र खेल-खेला—
अवसर की सीढ़ी कभी न पाई
एक-एक घर आगे खिसका
और मंजिल के पास पहुंच कर
दुर्दिन का साँप सदा ही झेला
सीढ़ियाँ दूर-दूर
साँपों के बीच मैं अकेला !
हर बार डसा जब कभी साँप ने
मैंने उत्साह के मंत्र से
विष को कीला है;
पूरी तत्परता से पासा माँगा है
पूरे मन से दाव लगाया है
और सूत्र यह पाया है—
'दुर्दिन के साँप के डसने की चिंता छोड़
घर-घर बढ़ो
बढ़ते-बढ़ते मिले अवसर की सीढ़ी जो
बड़े चाव से उस पर चढ़ो
साँप सीढ़ी का खेल जो देता है पाठ
उसे पढ़ो
सोन-पत्र-सा उसे अपने जीवन पर मढ़ो !'

मैं एक कुंजड़िन हूँ

श्री धर्मपाल 'दत्त'

मैं एक कुंजड़िन हूँ,
शाक, फल, भाजी
सभी कुछ पास है मेरे;
कहानी से आलू हैं,
जो हर सब्जी में काम आते हैं
(कविता, नाटक, चम्पू सभी में कथा चलती है)
नाटक से टमाटर हैं—
दर्शनीय भी, स्वादिष्ट भी;
और भी कुछ पास है मेरे,
सुनो रे !
ये कुछ सेव हैं—
कविता से सरस, पौष्टिक और बहुमूल्य ।
मैं,
नारद की तरह
सारे नगर में घूम आई हूँ,
जन-रुचि जान आई हूं
और अनुभव की एक पूंजी साथ लाई हूँ ।
अनुभव यह है कि
उपयोगी, किन्तु सस्ती वस्तु बहुत बिकती है

मेरी टोकरी से
आलू बहुत बिके हैं,
टमाटर भी काफी बिके ,
किन्तु सेव,
इन्हें लाकर तो मैंने ग़लती की,
खरीदने की तो बात कहाँ,
मूल्य भी इनका कम ने ही पूछा है ।

अब मैं सोचती हूँ कि मण्डी से,
आलू खरीदूं,
टमाटर उठाऊँ
अथवा सेव लाऊँ ?
कुछ न कुछ लेना है,
पर वही, जिसकी बिक्री हो;
क्योंकि मैं कुंजड़िन हूं,
प्रदर्शिनी की दुकान नहीं !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

चीन का ऐटम बम

चीन ने ऐटम बम का धड़ाका क्या किया, सारी दुनिया का दिल धड़क गया। इस घटना का महत्व यह है कि इसकी उपेक्षा कोई नहीं कर सका, इस पर सबने विचार किया। किसी ने चीन के बम को हिरोशिमा पर डाले गए ऐटम बम की टक्कर का बताया, तो किसी ने उसे एकदम मामूली ही कहा।

सचाई यह कि संसार के जीवन की यह एक बड़ी घटना थी, क्योंकि यह विध्वंस की शक्ति का एक हाथ में पहुंचना था और वह हाथ भी ऐसा, जो विवेक का नियंत्रण नहीं मानता। चीन भारत का पड़ौसी है, भारत का मूर्ख और धूर्त दुश्मन है, इसलिए भारत के जनमानस में इससे जो हलचल मची, विचार-मन्थन हुआ, वह स्वाभाविक है, उचित है, आवश्यक है।

भारत में उसकी प्रतिक्रिया

इस हलचल की पहली लहर यह थी कि भारत क्या करे? इस प्रश्न का वास्तविक अर्थ यह था कि अक्टूबर १९६२ में भारत पर खूनी आक्रमण करते समय चीन में जितनी राक्षसी विध्वंस की शक्ति थी, भारत उसके ही अनुपात में कमजोर था, ऐटम बम बना लेने से क्या भारत और भी दयनीय हो गया? यह भय की चेतना थी। भारत के महान अणुविशेषज्ञ डाक्टर भाभा ने यह कहकर कि भारत अनुविज्ञान में चीन से अच्छी हालत में है, जब चाहे अणुबम बना सकता है और उसकी लागत १७ लाख रुपये से अधिक नहीं है, भय की इस चेतना पर मनोवैज्ञानिक ऐटम बम ही गिरा दिया।

तब जागी जनमानस में एक दूसरी वृत्ति—जब हमारा देश आसानी से अणुबम बना सकता है तो उसे तुरन्त अपने वैज्ञानिकों को अणुबम बनाने में जुटा देना चाहिए और चीन के भय से मुक्त होने के लिए ही नहीं चीन के पंजे में दबी अपनी भूमि माता को उबारने के लिए भी भारत को ऐटमी ताकतों की पँक्ति में खड़े हो जाना चाहिए। यह उद्बोधन और उत्तेजना की वृत्ति थी।

नए प्रधान मंत्री की परीक्षा

इस वृत्ति ने प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री को उस चौराहे पर खड़ा कर दिया जिस पर एक बार प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू को भी खड़ा होना पड़ा था। अमरीका ने पाकिस्तान को फौजी मदद दी, तो भारत के लोक-मानस में यही उत्तेजना भर गई थी और चारों तरफ से माँग हुई थी कि भारत को भी सैनिक सहायता लेनी चाहिए। असल में यह नेहरू जी की कठिन परीक्षा थी कि वे भी अमरीका से शस्त्र-सहायता लें, तो अपने सिद्धान्त से गिरें और न लें, तो फिर अपनी जनता की नजरों में गिरें।

जवाहर लाल गेन्द बल्ले के नहीं, जीवन के खिलाड़ी थे; यानी खतरों के खिलाड़ी थे। उन्होंने पूरे आत्म-विश्वास से कहा कि भारत किसी भी विदेशी शक्ति से शस्त्रों की सहायता नहीं लेगा और अपनी आर्थिक निर्माण योजनाओं को जारी रखेगा। भय और अभय दोनों छूतिया होते हैं—एकदम संक्रामक, छूत से फैलने वाले। जवाहर लाल का अभय सारे देश में फैल गया और जनता का ऐसा व्यापक और जागृत सहयोग उन्हें मिला कि दुनिया भौंचक देखती रह गई।

चीन के ऐटम धड़ाके के बाद भारत के राजनैतिक दलों और जनसंगठनों की इस सम्मिलित गूंज के बाद कि भारत भी ऐटम बम बनाए, प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने पूरी ताकत और सफाई के साथ यह कहकर कि भारत ऐटम बम नहीं बनाएगा और अपनी निर्माण-योजनाओं को जारी रखेगा, सारे देश ही नहीं, दुनिया के विचारकों को भौंचक कर दिया।

उन्होंने सचमुच जवाहर लाल से भी अधिक तेजस्विता से अपनी बात कही और साहस-संतुलन का नया रेकार्ड स्थापित किया। जवाहर लाल को कुछ भी कहते-करते समय यह भरोसा रहता था कि अपने दल में मेरा विरोध कोई न करेगा और कोई करेगा, तो मैं उसे झिड़क दूँगा। जनता तो उनके साथ थी ही। शास्त्री जी को यह रक्षा-कवच प्राप्त न था। घर में भी उनका विरोध हो सकता था और बाहर भी। वे उन परिस्थितियों से गुजर रहे हैं, जब हर कदम फूक-फूक कर रखना पड़ता है। इस स्थिति में लोक-मानस के विरुद्ध खड़े होकर उन्होंने सिद्ध कर दिया कि वे शारीरिक कद में लाख छोटे हों, मानसिक स्तर पर किसी से छोटे नहीं।

यह युद्ध से भागना नहीं

उन्होंने आर्थिक आधार पर ही ऐटम बम बनाने का विरोध नहीं किया, नैतिक आधार पर भी किया और साफ कह दिया कि विश्वशान्ति का प्रचार करते-करते हम यदि इस विध्वंस-अस्त्र का निर्माण करेंगे, तो विश्व में हमारी जो नैतिक प्रतिष्ठा है, वह नष्ट हो जाएगी। यह बात शास्त्री जी ने बार बार कही और जब कही, पहले से अधिक जोर से कही। इस कहा-कही में

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने एक बहुत मास्टरपीस नारा दिया—'ऐटम बम युद्ध जीतने का शस्त्र नहीं, विश्व-संहार का साधन है।'

शास्त्री जी का यह नारा देश में भी अर्चित-चर्चित हुआ और विश्व में भी। निश्चित रूप से शास्त्री जी का विश्व-व्यक्तित्व इस घटना से समृद्ध हुआ और देश में उठा बम बाजी का उद्घोष दब गया। यह प्रधानमंत्री शास्त्री की विजय थी। इसके लिए उन्हें बधाई और अभिनन्दन भी, पर साथ ही नम्र निवेदन भी कि आप ऐटम बम न बनाएँ, लेकिन वह भूल न करें, जो आपके पूर्ववर्ती प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने की थी और जिसके कारण उनकी जान गई और देश की आन के टुकड़े हुए।

पुरानी भूल न दोहराई जाए

वह बात विस्तार से कही जानी चाहिए और गहराई से पकड़ी जानी चाहिए। देश में ऐसे लोग भी हैं, जो यह कहते हैं कि उस समय अमरीका से शस्त्र न लेना प्रधानमन्त्री नेहरू की भारी भूल थी और देश में ऐसे लोग भी हैं, जो कहते हैं कि हाँगकाङ और फारमोसा की तरह हमें भी इंगलैंड-अमरीका का संरक्षण प्राप्त कर सुरक्षित हो जाना चाहिए, पर यह स्पष्ट है कि ऐसे लोगों को देश की गैरतदार जनता में कोई समर्थन प्राप्त नहीं है। हां, इस सत्य के साथ यह सत्य जनता के मन में निश्चित रूप से प्रतिष्ठित है कि पाकिस्तान की तरह अमरीका का आश्रित न बनकर नेहरू जी ने जहाँ विवेक का परिचय दिया, वहाँ यह अविवेक भी किया कि दुश्मनों के खतरों को ठीक आंक कर देश को युद्ध के लिए तैयार नहीं किया और इसी कारण चीन को हमले का साहस हुआ। उल्टी परिस्थितियों में चीन को रुकना पड़ा, यह ठीक है, पर यह भी तो ठीक है कि चीन का खतरा कम नहीं हुआ और उसके साथ पाकिस्तान की दोस्ती ने उस खतरे को और भी कड़वा कर दिया है। इस हालत में देश का नेतृत्व वह भूल न करे, जो पहले हो चुकी है।

क्या देश का नेतृत्व इस बात को अनुभव करता है? हाँ, करता है और इसकी घोषणा प्रधानमंत्री शास्त्री जी के उस नारे में ही है। वे कहते हैं कि ऐटम युद्ध जीतने का शस्त्र नहीं है व्यापक संहार का साधन है। इसका अर्थ हुआ कि भारत का नेतृत्व मानवता के—संसार के, संहार में हिस्से दार होने को तैयार नहीं, पर अपने देश पर आक्रमण करने वालों को पछाड़ने के लिए समृद्ध है। यह बहुत महत्वपूर्ण और महान दृष्टि कोण है और इसे इस जमाने में सिर्फ भारत ही पेश कर सकता है। इस का क्या अर्थ है? इसका अर्थ यह है कि यदि संसार में अणुयुद्ध होता है, तो उसे दो देश लड़ें या फिर दस देश, संसार का नाश निश्चित है। भारत उस नाशकांड में बिना हिस्सेदार हुए नष्ट होने को तैयार है, पर स्वयं उसमें हिस्सेदार होकर नष्ट होने को तैयार नहीं। गांधी जी की भाषा में यह है अच्छाई के लिए, सत्य के लिए खतरा उठाना। ऐटम बम बनाने की वृत्ति से संसार के सर्वनाश का खतरा बढ़ता है। इस खतरे को रोकने की जरूरत है। यह जरूरत वे पूरी नहीं कर सकते, जो ऐटम बम बनाकर उस खतरे को बढ़ा रहे हैं। इस खतरे को रोकने का काम वे ही कर सकते हैं, जो इस होड़ से बचे हुए हैं। भारत यही करना चाहता है, यानी भारत खतरे को बढ़ाते-बढ़ाते नष्ट होने को तैयार नहीं, उस खतरे को रोकते-रोकते नष्ट होना पड़े तो नष्ट होने को तैयार है। यह साधारण बात नहीं है, निश्चय ही यह असाधारण बात है और इस असाधारण बात को पूरी शक्ति और ईमानदारी से कहने के लिए इतिहास साधुमना प्रधानमन्त्री श्री लाल बहादुर को सदा स्मरण करेगा।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

भारत की संस्कृति का आरम्भ से ही नारा है युद्ध-विहीन संसार। राम के समय इस पर विचार हुआ, कृष्ण ने युद्ध को रोकने की चेष्टा की, महावीर और बुद्ध ने युद्ध का विरोध किया और सम्राट अशोक ने सशस्त्र सेनाओं का विघटन कर युद्ध विहीन संसार का एक महान प्रयोग किया। सम्राट अशोक को अपने कार्य का पूर्ण परिज्ञान था—'फुल कन्सैप्शन' था। इसलिए उन्होंने सशस्त्र सेनाओं का विघटन करने के साथ ही, एक अशस्त्र सेना खड़ी कर दी। यह थी धर्म प्रचारक भिक्षुओं की सेना। वे देश भर में छा गए और दूर-दूर फैले पड़ौसी देशों में भी पहुंच गए। अशोक यह जानते थे कि जब तक देश के लोगों में और पड़ौसी देशों के राजाओं में युद्ध विरोधी वातावरण न होगा, अकेला भारत अहिंसक समाज रचना में स्थिर-सुरक्षित न रह सकेगा। अशोक महान के प्रयत्नों का जो फल हुआ, उसके प्रमाण आज भी अनेक देशों में दिखाई देते हैं।

दुर्भाग्य है संसार का कि अशोक के उत्तराधिकारी उस आदर्श से च्युत हो गए और राजधन से पोषित बिहारों में ही ऐयाशी-आलस्य के वातावरण में डूब गये। अशोक का स्वप्न खंडित हो गया, क्योंकि अशोक के उत्तराधिकारी उसकी विकृत प्रतिलिपि थे। अशोक के बाद गांधी जी ने युद्धविरोधी संसार का एक महान प्रयोग किया—एक अहिंसात्मक युद्ध का आविष्कार करके। युद्ध-विरोधी संसार की रचना के मार्ग में रोड़ा बनकर युग युगों से एक प्रश्न खड़ा था कि यदि सत्य, न्याय और औचित्य को हमारा विरोधी न माने, तो क्या उस परिस्थिति में भी हम युद्ध न करें और दुष्टात्मा के सामने आत्म समर्पण कर चुप बैठ जाएँ? गांधी जी का ऐतिहासिक महत्व ही यह है कि संसार में सबसे पहले इस प्रश्न का उत्तर उन्होंने ही दिया—नहीं हम दुष्टात्मा के सामने आत्म-समर्पण न करें, युद्ध करें, पर स्वयं भी दुष्टात्मा बनकर नहीं, दुष्ट साधनों के द्वारा नहीं, सुद्ध

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधनों के द्वारा। संक्षेप में हम लड़ें, पर कष्ट देकर नहीं, कष्ट सहकर ही। दुष्ट की दुष्टता से हम लड़ें,पर दुष्ट से प्यार करें। संक्षेप मे भले आदमियों की यह जिम्मेदारी है कि वे बुरों को भला बनाएँ। सम्भवतः वेद के इस वचन की ही यह व्याख्या है—कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।

गांधी जी की बात न मानी

गाँधी जी को अपने कार्य का पूरा परिज्ञान था—'फुल कंसेप्शन' था। इसीलिए उन्होंने इस कार्य के लिए स्वयं-सेवकों की सेना बनाई, जो बुराइयों से लड़ी, अपने को बुराइयों से बचा-कर। देश की स्वतंत्रता के समय बुराई का-साम्प्रदायिक हिंसा का जो तूफान आया, उसमें यह सेना बह गई और उसका मुका-बला न कर सकी। गांधी जी चाहते थे कि जहां भी साम्प्रदायिक उपद्रव भड़कें, वहाँ काँग्रेस के नेता और स्वयं सेवक वीरता के साथ खुले रास्तों पर आ बैठें और बिना हाथ हिलाए कट जाएं, शहीद हो जाएँ। उनका विश्वास था कि इस बलिदान से देश की हवा बदल जाएगी और बटवारा रुक जाएगा, पर गाँधी जी के जनरल हिम्मत हार बैठे और आहुति की इस राह से कन्नी काट गए।

गान्धी जी क्रांतिकारी थे, कट्टर नहीं। उन्होंने एक गजब का और आश्चर्यजनक विकल्प पेश किया-अहिंसा और हिंसा में चुनाव करना हो, तो हिंसा से अहिंसा श्रेष्ठ है, पर हिंसा और कायरता में चुनाव करना हो तो कायरता से हिंसा श्रेष्ठ है। उनका निर्देश साफ था कि जो लोग अहिंसा-बलिदान का साहस नहीं रखते, वे हिंसक गुंडों का मुकाबला हिंसा से करें, पर काय-रता से आत्मसमर्पण न करें। दुर्भाग्य है देश का कि कांग्रेस स्वयं-सेवक और दूसरे लोग इसमें भी असफल रहे। राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ के कार्यकर्ताओं ने उस समय जहाँ-तहाँ बहुत हिम्मत की, साहस दिखाया, उससे लाभ भी हुआ; पर लीग के होमगार्ड इन सब पर तकड़े पड़े और देश को स्वतंत्रता-सौभाग्य के साथ बटवारे का दुर्भाग्य भी देखना पड़ा। कहावत है गवाँर गन्ना नहीं देता, भेली दे देता है। हम भी गवांर सिद्ध हुए कि वीरता पूर्वक दो-तीन हजार आदमी शहीद होने को तैयार नहीं हुए, पर हजारों आदमी कायरता पूर्वक मरने को और लाखों उजड़ने को मजबूर हो गए।

पाठ नहीं पढ़ा

प्रधान मंत्री नेहरू ने इस दुर्भाग्य से कोई पाठ नहीं पढ़ा, यह हमारे इतिहास का दुर्भाग्य है। उन्होंने पाकिस्तान को अमरीकी सैनिक सहायता मिलने पर स्वयं सैनिक सहायता लेने से तो इंकार किया, पर देश में न सैनिक तैयारी की ओर ध्यान दिया, न साहसिक जन-मानस-निर्माण की ओर। अक्टूबर १९६२ का चीनी आक्रमण उसी का परिणाम है, जिसमें देश को चीन द्वारा अपमानित भी होना पड़ा और अमरीका से सैनिक सहायता भी लेनी पड़ी। इस घटना का सम्पूर्ण परिचय ही यह है कि भारत में अशोक दूसरी बार असफल हुआ।

और अब ?

क्या इस घटना से हमारे नए प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने पाठ पढ़ा ? उत्तर है-हाँ। कम से कम बौद्धिक रूप में पूरी तरह। उन्होंने कहा कि ऐटम बम युद्ध-विजय का साधन नहीं, विश्व-विध्वंस का आयुध है। मतलब यह कि भारत युद्ध के लिए सन्नद्ध है, युद्ध की उपेक्षा नहीं करता-किसी नकली आदर्श वादी के माया चक्र-में फंसकर। साफ शब्दों में, भारत अपने को किसी भी आक्रमण से सुरक्षित रखते हुए, युद्धविहीन संसार की रचना में प्रयत्नशील है। निश्चित रूप से यह एक पूर्णदृष्टि है, कहें नए नेतृत्व की सैनिक नीति है यह-स्वागत और अभिनंदन के योग्य।

इधर जो घटनाएँ हुईं

इस स्वागत और अभिनंदन में भारत और पाकिस्तान की सीमाओं, पर जो घटनाएँ इधर कुछ दिनों में हुई हैं, उन्होंने एक प्रश्न जोड़ दिया है कि हमारा देश सैनिक तैयारी में कहाँ तक मजबूत है ? हमारे प्रधान-मंत्री, रक्षा-मन्त्री और उनके साथियों ने इस प्रश्न का उत्तर दिया है कि हम पूरी तरह तैयार हैं और युद्ध की किसी परिस्थिति को सम्भाल सकते हैं।

नेताओं की इन बातों से मन को ठंडक मिलती है और सहारा भी मिलता है, पर जनता को वे जिस तरह निश्चिन्त कर रहे हैं, उससे ऐसा मालूम होता है कि उन्हें पूरा भरोसा है इस बात का कि छेड़छाड़ चाहे जितनी हो, पर इस समय युद्ध नहीं हो सकता। डर लगता है यह सोच कर कि ऐसा ही भरोसा युद्ध न होने का स्वर्गीय प्रधान-मन्त्री श्री जवाहर लाल नेहरू को भी था और वह झूठा निकला था।

फिर एक प्रजातंत्री देश में जब सीमाओं पर दुश्मन गोलियां चला रहा हो जनता को निश्चिन्त करना और जनता का निश्चिन्त रहना क्या उचित है ? क्या हितकर है ? यह प्रश्न भी उठते हैं, क्योंकि युद्धों का फैसला मोर्चों पर तो होता ही है, पर कभी-कभी देश की गलियों में भी होता है। क्या भारत की जनता को गलियों के उस मोरचे के लिए तैयार करना आवश्यक नहीं है ? मन की भावना और संसार का अनुभव बताता है कि वह आव-श्यक है। भारत में भी चीनी आक्रमण के समय नागरिक रक्षा के प्रयत्न आरम्भ हुए थे। अब भी उनके साईन-बोर्ड देश में टंगे हुए हैं, पर यह सत्य है कि नागरिक रक्षा का आन्दोलन देश में एक जीवन्त आन्दोलन नहीं बन सका है, उसे ऐसा बनना चाहिए। युद्ध का सबसे बढ़िया जीवन सूत्र ही यह है कि हम कल्पना अच्छी से अच्छी करें, पर तैयार रहें बुरी से बुरी परि-स्थितियों के लिए।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरकार का संयम उचित है

हमारी सरहदों पर पाकिस्तान जो बदमाशियाँ कर रहा है उनका उद्देश्य क्या है ? आज की राजनीति का यह एक बहुत गहरा सवाल है। इस सवाल का साफ-साफ रूप यह है कि क्या पाकिस्तान भारत से लड़ना चाहता है ? अपने सैनिक और राजनैतिक सम्पर्कों का पूरा लाभ उठाकर और उसमें अपना चिन्तन जोड़ कर मैं जो कुछ कह सकता हूं वह यह है कि हाँ, पाकिस्तान इस समय भारत से लड़ना चाहता है।

इस चाह के पीछे उसकी ताकत नहीं, चीन की राजनीति है। २० अक्टूबर १९६२ को चीन के आक्रमण के पीछे नम्बर एक बात यह थी कि अमरीका और रूस क्यूबा के मामले में पूरी गर्मा गर्मी में फँसे हुए थे और चीन को उम्मीद थी कि दोनों में जमकर लड़ाई होगी। उस हालत में दोनों ही भारत की मदद न कर सकेंगे। भाग्य की बात क्यूबा का मामला आपसी ढंग पर निमट गया और चीन की योजना फेल हो गई।

इस समय भी चीन के कारण रूस और अमरीका वियतनाम में उलझे हुए हैं और चीन इसका फायदा उठाना चाहता है। वह इस तरह कि युद्ध खुद न लड़कर पाकिस्तान को भारत से लड़ा दे। भारत के लिए यह स्थिति खराब है। यह इस तरह कि लद्दाख से नेफा तक हमारी सरहदों पर चीनी फौजें पड़ी हुई हैं इस लिए उन सीमाओं पर से हम अपनी फौजें नहीं हटा सकते। इस तरह यदि पाकिस्तान से लड़ाई छिड़ती है, तो बिना चीन से लड़े भी हमें दो मोर्चे सम्भालने पड़ते हैं। जिन्होंने दूसरे महायुद्ध की पूर्णनीति को पढ़ा है, वे जानते हैं कि दो मोर्चों का अर्थ कितना खतरनाक है।

इसी पृष्ठ-भूमि में हमारे देश की सरकार पाकिस्तान की छेड़-छाड़ से उत्तेजित न होकर अपने संतुलन से युद्ध को बचाने का जो उचित संयम दिखा रही है,उसे सरकार की कमजोरी बता कर हंस लेना आसान है लेकिन देश के हित में नहीं है। तैयार होकर सोच-समझ कर युद्ध में कूदना बहादुरी है, पर दुश्मन की चाल से भड़क कर युद्ध में फँस जाना बेवकूफी है। ऐसा लगता है कि हमारी सरकार इस बेवकूफी से बचकर उस बहादुरी की तैयारी में लगी हुई है। देश में कौन है, जो इस काम में उसकी सफलता की कामना न करे ?

सन्देह क्यों है ?

इधर के दिनों में हमारे देशके नेताओं ने बार-बार यह कहा है कि हम युद्ध की किसी भी परिस्थिति के लिए तैयार हैं। इसका एक ही अर्थ होता है कि भारत सैनिक दृष्टि से अब मजबूत है, पर यह सुनने के बाद भी मैं अनुभव करता हूं कि भारत के पढ़े-लिखे समझदार लोगों और अनपढ़ भोले लोगों के दिमागों में बहुत दिनों तक भी सन्देह का वातावरण बना रहता है जैसे वे अपने से ही पूछ रहे हों-क्या सचमुच भारत मजबूत है ?

इस सन्देह की पृष्ठभूमि क्या है ? क्यों है यह सन्देह ? इस सन्देह की पृष्ठ-भूमि है चीनी आक्रमण का पुराना अनुभव। सर्वसमर्थ और सर्वाधिकारी स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने जो वादे किये थे कि यदि आक्रमण हुआ, तो मुँहतोड़ जवाब दिया जायगा, वे अनुभव की कसौटी पर झूठे और बेदम निकले। उनके साथ ही छड़ी हिलाने और चलाने में परम प्रचंड रक्षामंत्री श्री मेनन ने बार-बार फौजी सामान बनाने वाले जिन कारखानों की चर्चा की थी, बाद में मालूम हुआ था कि उनमें थर्मस बन रहे थे। ये बातें आम आदमी के मन में शक पैदा करती हैं कि आज के नेताओं के वादे भी कहीं वैसे ही न हों।

इस सम्बंध में जनता के सामने यह बात रहनी चाहिए कि बहुत दिनों तक 'अपने ही बनाए एक अवास्तविक वातावरण में रहने के बाद प्रधान मंत्री नेहरू जी यह समझ गए थे कि भारत सैनिक दृष्टि से भी समर्थ हो, इसके सिवा कोई रास्ता नहीं है और उन्होंने सैनिक दृष्टि से नए निर्माणों की प्रगति तेज कर दी थी। फिर वर्तमान रक्षा मंत्री श्री यशवंत राव चह्वाण सैनिक जाति और सैनिक मनोवृत्ति के व्यवस्थित और चुप-चाप काम करने वाले नेता हैं। इन दोनों बातों के साथ यह भी याद रखने लायक बात है कि देशके नये नेता यह खूब जानते हैं कि शासन की मूर्खता, अदूरदर्शिता और गलत अन्दाजों के कारण नेफा में भारत का जो अपमान हुआ, उसके बाद जवाहर लाल तो ठहरे रह गए थे, पर वे पलभर भी न ठहर सकेंगे और जनता उनको पलभर में होली का मजनू बना देगी। इसलिए इस समय भारत की सैनिक तैयारियों के सम्बन्ध में सन्देह का वातावरण फैलाना न उचित है न यथार्थ है।

सन्देह नहीं, जिज्ञासा

हाँ, प्रजातंत्री देश में जनता को यह अधिकार है कि वह अपने नेताओं से, जिन्हें उसने चुनाव में मत देकर हुकूमत की गद्दी पर बैठाया है, जिज्ञासा कर सकती है, तैयारियों के बारे में अपनी शंकायें उठा सकती है। नेताओं का भी कर्तव्य है कि वे बिना रहस्यों का भंडा-फोड़ किये, ढंग से जनता की जिज्ञासा को शान्त करें और उसे तैयारियों का आभास दें। इसी दृष्टि से एक जिज्ञासा यहां प्रस्तुत है, इस आशा के साथ कि इससे देश के नेताओं को अपने कार्यों को कसौटी पर रखने का अवसर मिलेगा और यह सोचने का भी कि वे जनता को कैसे संतोष दें।

कोरिया के युद्ध का अनुभव

चीन राजनैतिक और सैनिक दृष्टि से अत्यंत चालाक देश है। अब तो वह बहुत ताकत वर हो गया है, पर १९५० में उसने उत्तरी और दक्षिणी कोरिया की लड़ाई में अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौशल का ऐसा परिचय दिया था कि एक बार तो अमरीकी फौजों को हटाते-हटाते इस स्थिति में पहुंचा दिया था कि वे जमी रहें या पीछे हटकर जापान में शरण लें। फिर अमरीकी सिपाहियों को हर तरह की सुविधायें प्राप्त थी और चीनी सिपाहियों को जो घोर ठंडा पहाड़ी क्षेत्र रातों-रात पैदल पार करके आना पड़ता था, वह सैनिक साहस और कुशलता का एक आश्चर्य ही था। छिपते-छिपते आगे बढ़ने की कला में उनका यह चमत्कार ही था कि अमरीकी हवाई जहाजों की दूरबीनें भी बेकार रहती थीं। आश्चर्य और चमत्कार का भंडा-फोड़ इस सूचना से होता है कि तीन लाख से अधिक चीनी कोरिया में चुपचाप शस्त्र सहित पहुंच गए थे और अमरीका के गुप्तचरों को इसकी खबर तो खबर आभास भी नहीं था और वे चीन की इस झूठी घोषणा को सच मान रहे थे कि चीन कोरिया में अपने सैनिक नहीं, स्वयं सेवक ही भेजेगा। इसके विरुद्ध चीन के गुप्तचर जाने कैसे अमरीकी फौजियों की हर गतिविधि का पता चला लेते थे और पहले से ही उनका जवाब तैयार रखते थे। मतलब यह कि छापामार युद्ध के झपट्टू तरीकों में वे बेजोड़ थे।

इस घटना के ११ वर्ष बाद चीन का भारत पर आक्रमण हुआ और उसमें भी चीनी फौजों ने अद्भुत रणकौशल का परिचय दिया। बहादुरी और साहस में हमारी फौजें कम न थीं, पर धूर्तता में पाला उनके हाथ रहा और हम बुरी तरह पिट गये। भाग्य यानी परिस्थितियों ने हमारा साथ दिया, नहीं तो उस युद्ध में हम अपनी पहाड़ी पूरी पट्टी खोने से न बचते।

हमारी वीरता नहीं हारी

क्या यह हमारी कमजोरी का फल था? ना यह हमारी सूझ और ज्ञान की कमी का फल था। चीन से हमारी वीरता नहीं हारी, हमारा रणकौशल हारा। इसे बिना झिझके समझने की जरूरत है। जब हमारी फौजों ने तावांग कस्बा खाली किया और सेला-बोमडीला में मोर्चा जमाया, तो हम अच्छी हालत में थे। तावांग से सेला आने के लिए जो घाटी है, उस पर हमारा कब्जा था और उसकी बनावट ऐसी है कि हमारे थोड़े बहादुर भी चीनी रेले को बेकार कर सकते थे। फिर क्या हुआ? हुआ यह कि चीन के दूर पहुँचने वाले पैदल दस्ते, जिन्हें फौजी भाषा में लौंग्स रेंज पेनीट्रेशन ग्रुप कहते हैं, तावांग-तेजपुर सड़क और भूटान की सीमा के बीच वाले जंगलों पहाड़ों को पारकर हमारी सेना के पीछे आ गए और उन्होंने रास्ते को काट भी दिया और अवरोधक, जिन्हें फौजी भाषा में रोड्सब्लौक कहते हैं, खड़े कर दिए। इतना सब हुआ, पर हमारी सेना और उसके गुप्तचरों को पता ही न लगा। बाद में वह घबरा गई और डेढ़ अरब से ज्यादा रुपये का फौजी सामान चीन के हाथ लगा।

पहली भूल तो यह हुई कि जंगलों में भेद लेने वाले दस्ते, जिन्हें फौजी भाषा में प्रोविंग पेट्रोल्स कहा जाता है, नहीं रखे, जिससे चीनी सेनाओं के आने का पता लगता, दूसरी बड़ी भूल यह हुई कि हमारी फौजों को चीनी फौजों पर टूट पड़ने का हुक्म नहीं मिला। बहुत दुखदायी बात यह है कि चीनी एक हजार से ज्यादा नहीं थे और भारतीय १२ हजार से कम नहीं थे। हिम्मत और सूझ से काम होता तो एक भी चीनी सैनिक जिन्दा न बचता और लड़ाई का रुख ही बदल जाता। कमाल यह है कि जनरल स्टिलवेल की कमान में १९४३-४४ के युद्ध में जापान के मुकाबले पर जिन फौजियों ने ऐसे ही मौकों पर चमत्कारपूर्ण काम किए थे उनकी शिक्षा भारत में ही हुई थी।

फिर सामान छोड़ने की क्या जरूरत थी? व्यवस्था पूर्वक पीछे हटा जा सकता था। १९४५ में जापानी फौजों ने इम्फाल पर तिकोना हमला किया था, तो जनरल कावेन ने फौजों को टिंडिम से इम्फाल लौटने का हुक्म दिया था। जापान की फौजों ने रास्ते में रोड्सब्लाक खड़े कर दिये थे, पर भारत की १७ वीं डिवीजन उन्हें तोड़कर इम्फाल लौट आई। चीनी फौजों द्वारा बोमडीला मार्ग पर खड़े किए रोडस ब्लाकों को तोड़ने में हमारी फौजें क्यों झिझक गईं? जानकारी की कमी ने सूझ को चेतन नहीं होने दिया, और क्या कहें?

सरहदों का प्रश्न

इस घटना के तीन वर्ष बाद जब चीन का घेरा एक तरफ हमारी सरहदों पर है और दूसरी तरफ पाकिस्तान गोले दाग रहा है और तीसरी तरफ शेख अब्दुल्ला षडयंत्र कर रहा है, तो हमारे देश के नेता संसद में और बाहर कहते हैं कि हम इनका मुकाबला करने को तैयार हैं। वे तैयार होंगे ही, पर जनता के मन में उनकी बात सुन कर भी जो संदेह पैदा होता है, उसकी जड़ यही है कि क्या हमारी सरहदें इतनी सुरक्षित हैं कि यदि युद्ध हो, तो चीनी सैनिक उन्हें पारकर काश्मीर में या दूसरे-क्षेत्रों में न घुस सकेंगे? क्या हमारा बदनाम गुप्तचर विभाग अब अच्छे हाथों में है? यह सन्देह इस लिए भी होता है कि सरहदों से होने वाले सोने आदि के तस्कर व्यापार को हमारी सरकार नहीं रोक पाती और हमारे मंत्री कहते हैं कि हजारों मील लम्बी सरहदों पर हर समय ध्यान रखना सम्भव नहीं है। सरकार का कर्तव्य है कि वह इस संदेह का महत्व समझे, इस पर ध्यान दे और इसको दूर करने का प्रयत्न करे।

इस सिलसिले में अब बस एक ही बात और कि चीनी फौजों के आने की अफवाह सुनकर ही तेजपुर का कलक्टर भाग गया था और जनता में भी भगदड़ मच गई थी। उस स्थिति को फिर न होने देने के लिए यह आवश्यक है कि हमारी सरकार भले ही ऐटम बम न बनाए, पर जनता का आतम ऊंचा रखने का व्यवस्थित प्रयत्न तो करे ही, क्योंकि जैसा मैंने पहले भी कहा—युद्धों का फैसला मोर्चों पर ही नहीं गलियों में भी होता

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। जनता की मानसिक तैयारी आवश्यक है। डिक्टेटर के देश में वह गोली से होती है, तो प्रजातंत्री देशों में वह प्रशिक्षण से होनी चाहिए, पर होनी ही चाहिए।

मर्यादा की बात

प्रधान-मन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री लखनऊ गए, तो हवाई अड्डे पर पहले गवर्नर श्री विश्वनाथ दास ने उन्हें माला पहनाई, फिर मुख्य-मन्त्री श्रीमती सुचेता कृपलानी ने, तब भूत पूर्व मुख्य-मन्त्री श्री चन्द्रभानु गुप्त ने और तब कांग्रेस अध्यक्ष श्री कमलापति त्रिपाठी ने। आपस में काना-फूसी हुई, किसी ने कुछ कहा, किसी ने कुछ, किसी ने इस क्रम को अनुचित बताया और तब कई ने कई तरह के क्रम सुझाये। कुछ लोगों ने एकदम व्यक्तिगत बातें कहीं।

उन सब बातों को छोड़ कर जो बात सोचने की है, वह यह है कि यह प्रश्न मर्यादा का है। हर देश में अपनी-अपनी मर्यादा है और यह मर्यादा ही परम्परा बन गई है। कुछ दिन पहले एक विदेशी राष्ट्रपति भारत आए और दिल्ली से कलकत्ता भी गये। तब श्री विधान चन्द्र राय मुख्य-मन्त्री थे और श्रीमती पद्मजा नायडू गवर्नर थी। विधान बाबू सभी के आदरणीय थे। वे नम्बर एक पर खड़े हुए और पद्मजा जी नम्बर दो पर। जब विदेशी राष्ट्रपति हवाई जहाज से उतरे तो विधान बाबू ने सबसे पहले उन्हें माला पहना दी। स्वागत अधिकारी ने कहा कि गवर्नर को पहले माला पहनानी चाहिए, पर सवाल यह था कि मुख्य मन्त्री माला पहना चुके हैं। विधान बाबू ने हंस कर अतिथि से कहा कि हमारी गवर्नर यहां है और पहले आपको माला पहनाने का उनका अधिकार है, पर मैं दाल-भात में मूसल बन गया हूं इसलिए कृपा कर आप मेरी माला थोड़ी देर के लिए वापस कर दीजिये। सब लोग खूब हंसे और पद्मजा जी ने अपनी माला उन्हें पहनाई।

विधान बाबू के बड़प्पन और ढंग से बिगड़ी बात बन गई, पर हमेशा तो ऐसा नहीं हो सकता। इन सब बातों की मर्यादा निश्चित होनी चाहिए और उस का पालन सावधानी से किया जाना चाहिए। यह हमारे राष्ट्रीय चरित्र का भी प्रश्न है और राष्ट्रीय सम्मान का भी। जब बुलगानिन और ख्रुश्चेव भारत आए तो रूसी शासन के प्रधान मन्त्री थे बुलगानिन और रूसी कम्यूनिष्ट पार्टी के प्रधान-मन्त्री थे ख्रुश्चेव। रूस में पार्टी प्रधान है और भारत में शासन, इसलिए रूस में पहले हवाई-जहाज में चढ़े थे ख्रुश्चेव और बाद में बुलगानिन, पर भारत में पहले उतरे थे बुलगागिन और तब ख्रुश्चेव। इसी तरह की स्पष्टता और नियमबद्धता हमारे यहां भी आवश्यक हैं।

अनेक उत्सवों में हमारे राजपुरुष जाते रहते हैं उनकी मर्यादा भी पहले से निश्चित रहनी चाहिए। एक उत्सव में पुरस्कार वितरण के लिए अधिकारी ने एक मन्त्री को तीन बार तीन जगहों पर खड़ा किया था। ऊपर से हिदायत होनी चाहिए कि हर बात पहले से निश्चित हो, जिससे जनता के सामने व्यवस्थित रूप में ही हर बात आए। आशा है इस पर ध्यान दिया जाएगा।

निर्माण काफी नहीं

४ अप्रेल की नई दिल्ली की यह खबर दैनिक पत्रों में छपी है—'यहां के सरकारी सूत्रों के अनुसार स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद बने चौदह बांधों में या तो दरारें पड़ गईं, या कोई और गंभीर खराबी आगई और एक तो आंशिक रूप से बह ही गया। मध्य प्रदेश में चार, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में तीन-तीन, राजस्थान में दो तथा आंध्र, पंजाब एवम् दामोदर घाटी में एक-एक बांध को नुकसान पहुंचा।"

अगर गंभीरता से सोचा जाए, तो यह स्वतंत्रता के सतरह वर्षों की सबसे खराब खबर है, क्योंकि इससे आने वाले दिनों की एक भयानक तस्वीर सामने आती है। इन बांधों के कारण देश दूसरे देशों का अरबों रुपये का कर्जदार हो गया है। अब यदि दस-पाँच साल में ये बांध टूट-फूट जाते हैं तो देश कहां टिकेगा?

भाकड़ा बांध के टूटने की खबर छपी थी और यह भी कि उसकी मरम्मत में करोड़ों रुपये लगे। कई पुलों के बह जाने, टूट जाने और तिड़क जाने की खबरें भी मिल चुकी हैं और यह खबरें भी कि भारत के बने बहुत से सामान नमूनों के अनुसार न होने के कारण विदेशों में लौटाए गए हैं।

निर्माण ही आवश्यक नहीं हैं, निर्माण का अच्छा होना भी आवश्यक है। दुःख है कि स्कूलों, अस्पतालों, और विभागों की तरह सभी निर्माणों में श्रेणी से अधिक संख्या को महत्व दिया गया है। एक अनुभव की बात लीजिये कि गुलामी के दिनों में स्वान और ब्लैक बर्ड फाउन्टेन पैन अपनी खूबियों के लिए मशहूर रहे हैं। अब वे स्वतंत्र भारत में बनने लगे है, पर हालत यह है कि स्याही टपकातें हैं और ठीक काम नहीं करते। सब काम छोड़ कर पूरी सख्ती के साथ इधर ध्यान दिया जाना चाहिए कि हमारे निर्माण ऐसे न हों कि भावी पीढ़ियां उनके खण्डहरों को ही हमारे उपहार के रूप में पायें।

बहुमत का प्रश्न

इस समय देश के भीतरी जीवन में शासक दल के सामने जो बड़े-बड़े प्रश्न हैं, उनमें एक बहुमत का प्रश्न भी है। पहले इस प्रश्न को समझें, फिर उस पर विचार करें। शासक दल कांग्रेस में हरेक राज्य में गुटबन्दियां है और यह रहेंगी भी, क्योंकि ये किसी असूली मतभेद पर नहीं, व्यक्तियों की महत्वांकाक्षा पर खड़ी है। इनसे डरने की भी जरूरत नहीं, क्योंकि इंगलैंड के राजनैतिक दलों में भी ऐसी गुटबन्दियां हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निन्दा और चिन्ता की बात यह है कि हमारे यहाँ की गुटबन्दी स्वस्थ नहीं है। वह इतनी मर्यादा-हीन हो गई है न दल की प्रतिष्ठा के नाम पर रुकती है न देश की प्रतिष्ठा के नाम पर रुकती है। प्रजातंत्र बहुमत से चलता है। नियम यह है कि दल के निर्वाचित विधायकों में जिस नेता का बहुमत हो वह पूरे दल का नेता चुन लिया जाता है और वही मुख्य-मन्त्री बनकर अपना मन्त्री-मन्डल बनाता है। उसके मुकाबले पर चुनाव में जो नेता हारता है उसे और दूसरों को भी यह अधिकार है कि वे विधायकों को चुनाव के बाद भी अपने पक्ष में करने का प्रयत्न करते रहें। इसमें यदि कोई सफल हो जाता है तो विधायक दल पहले नेता की जगह उसे अपना नेता चुन लेता है। इस हालत में पहले मुख्य-मन्त्री की जगह यह नया नेता मुख्य मन्त्री बन जाता है। इसके बाद भी यह अदल-बदल हो सकती है।

इस खतरे से बचने का उपाय यह है कि निर्वाचित नेता अपनी योग्यता, सज्जनता से दल के लोगों को अपने प्रभाव में रखे, पर ऐसे लोग नई पीढ़ी में कम हैं, इसलिए बहुमत का एक नया तरीका निकला है कि मुख्य-मन्त्री बनने या बनाने वाला नेता विधायकों को अनुचित लाभ पहुंचा कर और पहुँचाते रहने का भरोसा दिला कर अपना पक्का बहुमत बना ले। अनेक राज्यों में, अनेक नेताओं ने ऐसा बहुमत बना लिया है।

अब उलझा हुआ सवाल यह है कि बहुमत प्रजातंत्र का मानदंड है, इसलिए उन नेताओं को नेता बना रहने का अधिकार है, पर क्योंकि यह अधिकार सही तरीकों से प्राप्त नहीं हुआ है और इसका उपयोग भी सही नहीं हो रहा है, इसलिए नैतिक दृष्टि से यह अधिकार मंडित करने के नहीं, खंडित करने के योग्य है। तो इस बहुमत को महत्व दिया जाये या नहीं? कांग्रेस हाई कमांड की इस बारे में कोई निश्चित राय नहीं है यह दुर्भाग्य की बात है। उत्तर-प्रदेश में सम्पूर्णानंद जी के हटने पर विधायकों का बहुमत चौधरी गिरधारी लाल जी के साथ था, पर हाई कमांड ने नेता चुनवाया श्री चन्द्रभानु गुप्त को, पंजाब में श्री कैरों के हटने पर विधायकों का बहुमत उनके ही साथ था, पर हाई कमांड ने दल से बाहर के श्री रामकिशन को नेता चुनवा दिया। इन दोनों के विरुद्ध उड़ीसा में श्री बीजू पटनायक और श्री वीरेनमित्रा के हटने पर उनके बहुमत को मानकर उनके ही दल के श्री सदा शिव त्रिपाठी को नेता चुनवा दिया। यह बात इस दृष्टि से महत्वपूर्ण थी कि वे दोनों भ्रष्टाचार में अलग हुए थे।

देश की जनता के मन पर इसका बुरा असर पड़ता है और इस मामले में कोई निश्चित नीति होनी चाहिए। आज जो स्थिति है उसमें बहुमत को आजाद नहीं छोड़ा जा सकता और उस पर हाई कमांड का कठोर नियंत्रण होना चाहिए, क्योंकि देश में ऐसे राजनीतिज्ञ पैदा हो गए हैं जो अनुचित तरीकों से बहुमत बना कर अपना नेतृत्व तो कायम रख सकते हैं, पर उन का नेतृत्व देश और कांग्रेस दोनों को उबारने वाला नहीं, डुबाने वाला ही सिद्ध होगा।

राष्ट्र-दर्शन

शीत युद्ध से प्रीत प्यार की ओर

जनवरी के 'नया जीवन' में एक सम्पादकीय टिप्पणी छपी थी—यह घरेलू शीत-युद्ध। इसमें खाद्य मन्त्री श्री सुब्रह्मण्यम् अन्न के व्यापारियों के साथ और छिपे हुए रुपयों के नाम पर वित्त मंत्री श्री कृष्णमाचारी उद्योगपतियों के साथ जो मोर्चे जमा रहे थे उनका वर्णन करने के बाद लिखा गया था—"सौ बातों की एक बात यह है कि व्यापारियों, धन-पतियों और भारत सरकार में खुले-आम बिना हथियारों का युद्ध हो रहा है और सरकार गांधी जी के विरोधियों में सद्भाव जगाने का मार्ग छोड़कर स्टालिन के दमन मार्ग पर आ गई है। अब तक का विश्लेषण यह है कि गांधी से उसका सौ प्रतिशत सम्बन्ध विच्छेद हो गया है, पर स्टालिन का रूप उससे लिया नहीं जा रहा है। विचारक उत्सुकता से इस युद्ध के परिणामों की प्रतीक्षा कर रहे हैं, क्योंकि इन परिणामों से ही यह पता चलेगा कि श्री टी० टी० कृष्णमाचारी और श्री सुब्रह्मण्यम् शास्त्री मंत्री-मण्डल की प्रतिष्ठा का कफन सिद्ध होते हैं या समाजवाद का दृढ़ सड़क-कूट इंजन।"

आश्चर्य और खुशी है कि इस युद्ध का परिणाम अब सामने आ गया है। महान योद्धा श्री सुब्रह्मण्यम् और श्री टी० टी० कृष्णमाचारी के आक्रमण पर देश के अन्न व्यापारी और उद्योगपति घबराये नहीं, किन्तु मोर्चे पर आ डटे। सरकारी योद्धाओं ने अगर तलाशियों और छापों का भूकम्प उठाया, तो व्यापारियों और उद्योगपतियों ने भी खुले धड़ाके किए। उन्होंने ऐसा वातावरण बनाया कि जैसे वे कांग्रेस से अपना सहयोग वापस ले रहे हैं। केरल के चुनाव में उन्होंने अपना हाथ सकोड़े रखा। दिल्ली में उद्योगपतियों का जो सम्मेलन हुआ उसमें भी आलोचना की टोन काफी सख्त रही। और तो और श्री कमल नयन बजाज जैसे कांग्रेसी उद्योगपति ने साफ-साफ कहा कि हमें उस दल को ही आर्थिक सहायता देने की घोषणा करनी चाहिए, जो हमारे विचारों का समर्थन करें। इस सब के पीछे खुले तौर पर बिना एक भी शब्द कहे वे नये प्रधान मंत्री की मूर्ति गढ़ते रहे। लोक सभा में भी जो गर्मी बरसी, उसका सूत्र भी कहीं दूर था। इस तरह दोनों दल टक्कर की पूरी ऊंचाई तक बढ़े।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब दोनों ने अपने-अपने को तोला। वित्त मंत्री के भूकम्प से कुल तीन करोड़ रुपये मिले और खाद्य मंत्री के भूकम्प से तीन आने क्विन्टल भी दाम नहीं गिरे। उधर सारे विरोधों से प्रधान मन्त्री की टोपी तो दूर, रूमाल भी नहीं हिला। तब दोनों का मेल करने में लाभ दिखाई दिया। हमारे प्रधान मन्त्री इस कला के आचार्य हैं। उन्होंने उद्योगपतियों के सम्मेलन में थरमामीटर के पारे को १०८ तक पहुंचा कर जीरो पर उतार दिया, यानी आंखें तरेर कर कन्धे थपथपा दिये। यह उनका कलापूर्ण निमन्त्रण था और अब अगला कदम उद्योगपतियों को उठाना था।

यह कदम उन्होंने कलकत्ते में व्यापारियों की सभा बुला कर उठाया। इसमें सरकार की ओर से श्री गुलजारी लाल नंदा और श्री सत्यनारायण सिंह उपस्थित थे। उद्योगपतियों का नेतृत्व श्री घनश्याम दास बिड़ला ने किया। इशारों-इशारों में और कूटनैतिक शब्दों में बहुत कुछ कहा गया। दोनों पक्ष सहमत थे कि संघर्ष उचित नहीं है। नन्दा जी ने यह भी कह दिया कि वे प्रधान मन्त्री से सलाह करके यहां आये हैं। सब मिला कर सार यह है कि शास्त्री जी ने अपने घोड़ों की लगाम खींच ली है और उद्योगपतियों ने भी अपने हन्टर नीचे कर दिये हैं और दोनों अब संघर्ष से बचकर सहयोग की राह चल पड़े हैं। बन्द कमरे की मुलाकातों में शायद अब इस राह को पक्का किया जायगा। इसी के साथ यह भी समाचार है कि दूसरे दलों के कुछ प्रमुख लोग ऊंचे पदों पर नियुक्त होने वाले हैं। सब मिलाकर कहना चाहिए कि शास्त्री जी संघर्ष का नहीं, सहयोग का मार्ग अपना रहे हैं और विरोध को उसका दमन करके नहीं, शमन करके शान्त करते जा रहे हैं। मेरा ख्याल है कि लोक-सभा में हुए विरोध को देखकर जो लोग शास्त्री जी की विदाई के सपने देखने लगे थे, उनके स्वप्न-दीप अब बुझने लगे हैं।

शेख अब्दुल्ला

कांग्रेस को कोसने का बहाना तलाश करने की धुन में विरोधी दलों के नेताओं ने संसद में शेख अब्दुल्ला को खूब उछाला। उनकी बात में दम था कि शेख को हज करने के नाम पर दुनिया में घूमने का पासपोर्ट क्यों दिया गया, अस्सी रुपये की जगह ३५००० रुपये की विदेशी मुद्रा क्यों दी गई और भारतीय की जगह कश्मीरी मुसलमान लिखने पर भी पासपोर्ट क्यों दिया गया? सच यह है कि अविश्वास के प्रस्ताव की बहस में उड़ीसा के मसले को लेकर और अब शेखअब्दुल्ला के मसले को लेकर सरकार की जो आलोचना हुई उसमें जनता का मन सरकार के नहीं, आलोचकों के साथ था।

देहाती कहावत है—फँस गई तो फड़के क्यों? मतलब यह कि चिड़िया जाल में फँसने के बाद अगर फड़कती है, तो उससे कोई फायदा नहीं, पर प्रधानमंत्री शास्त्री जी की यह 'स्वभाव' विशेषता है कि वे फँसने के बाद फड़कने में अपनी ताकत नहीं लगाते, बल्कि जाल को काट कर बाहर निकल आते हैं। शेख के मामले में भी उन्होंने यही किया कि शेख का पासपोर्ट सिर्फ हज के लिए रहने दिया और बाकी के लिए रद्द कर दिया, जिससे शेख न चीन जा सकते हैं, न अलजीरिया के सम्मेलन में।

दाना दुश्मन से नादान दोस्त खतरनाक होता है। शेख के नादान दोस्त पाकिस्तान ने ऐलान किया कि चीन के लिए शेख को हम पासपोर्ट दे देंगे, पर शास्त्री जी के दाव की खूबी ही यह है कि अगर शेख ऐसा कुछ करते हैं, तो फिर हिन्दुस्तान में घुस ही नहीं सकते और उनकी हालत वही हो जाएगी जो जूनागढ़ के नवाब, हैदराबाद के मीरलायक अली और नागालैंड के फिजो की हुई। शास्त्री जी ने शेख का भाग्य शेख की ही तराजू पर रख दिया है और उसे कुए और खाई के बीच की पतली पटरी पर खड़ा कर दिया है। देखना है शेख क्या फैसला करता है, पर इतनी बात साफ है कि शास्त्री जी ने उसकी अब तक की पूंजी छीनली है और कश्मीरियों की आँखों में उसकी जो तस्वीर बन रही थी, उसे धुंधला कर दिया है।

ये १४ वर्ष

१८ अप्रैल १९५१ को युगसंत विनोबा भावे ने भूदान आन्दोलन आरम्भ किया था। इस प्रकार १८ अप्रैल १९६५ को उसे १४ साल पूरे हो गये। १४ साल एक क्रांति के इतिहास में बहुत नहीं होते, पर कम भी नहीं होते। जब यह आन्दोलन आरम्भ हुआ था, जनता को इससे बहुत आशायें थीं। हरेक दैनिक पत्र विनोबा जी की पद यात्रा के दैनिक या साप्ताहिक समाचार विस्तार से छापता था। अब पत्रों में न पदयात्रा के समाचार छपते हैं, न भूदान आन्दोलन के। इसका साफ अर्थ है कि साधारण जनता और बौद्धिक वर्ग इस आन्दोलन और उसके नेता से निराश हो गया है। ऐसा दो कारणों से हो सकता है। पहला यह कि इस आन्दोलन ने अपेक्षित काम नहीं किया और दूसरा यह कि काम तो किया, पर प्रचार द्वारा उसका ज्ञान जनता तक नहीं पहुँचा। जो भी हो, आंदोलन के नेताओं की जिम्मेदारी है कि वे सच्चाई को सामने लायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा जाता है कि व्यक्ति की सात्विक प्रवृत्तियों ने ही लोकतंत्र को जन्म दिया और उसकी तामसिक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण रखने के लिए ही लोकतंत्र आवश्यक है। जिस समाज में नैतिक सिद्धान्तों की प्रतिष्ठा है और लोग खुशी से नीति और सदाचार का पालन करते हैं, वह समाज अराजकता से सुरक्षित रहता है। जहाँ नीति को नहीं माना जाता वहाँ अनीति, अत्याचार या तानाशाही का रास्ता खुल जाता है।

प्रजातंत्र की रक्षा के लिए आवश्यक है-

श्री अशोक मेहता, उपाध्यक्ष योजना-आयोग

卐

प्रसिद्ध ब्रिटिश विचारक एडमण्ड बर्क ने कहा है कि व्यक्ति की इच्छाओं पर नियंत्रण के बिना समाज नहीं रह सकता। चाहे व्यक्ति स्वयं अपने ऊपर नियत्रण करे, चाहे सरकार। व्यक्ति अपने ऊपर जितना कम नियंत्रण रखेगा, उस पर बाहरी नियंत्रण उतना ही अधिक होगा। बर्क ने यह बात फ्रांस की राज्य-क्रान्ति के समय कही थी, उस समय, समाज में सुव्यवस्था कायम करना उतना ही आवश्यक था जितना पुरानी व्यवस्था बदलना।

> बुद्धिमान राजनीतिज्ञों का काम है कि वे बाहरी नियंत्रण और आत्म नियंत्रण दोनों का सामंजस्य करें।

आत्म-नियंत्रण के कई प्रकार हैं। कुछ अच्छे कुछ बुरे। इसी तरह बाह्य नियंत्रण भी कई प्रकार के होते हैं। जिस समाज में लोग आत्म-नियंत्रण रखते हैं और समाज के नियम कानूनों को हितकर समझ कर उनका पालन करते हैं, वह समाज उन्नत होता जाता है, किन्तु जहाँ बाह्य नियंत्रण अधिक होता है और दबाव या डर से कानूनों का पालन होता है, वहाँ समाज कमजोर होता है।

आंतरिक या आत्म-नियंत्रण दो प्रकार के होते हैं। एक नैतिक नियम, और दूसरे सामाजिक आचार। गिलबर्ट मरे ने प्राचीन यूनान की एक कथा का उल्लेख किया है। एक बार दो सैनिकों में लड़ाई हुई, जिसमें एक मारा गया। मरने वाले सैनिक का कवच बड़ा सुन्दर था, दूसरे योद्धा का मन उसे लेने को ललचा। उस स्थान पर और कोई नहीं था और अगर वह चाहता, तो कवच चुपचाप ले जाता और किसी को पता भी न चलता, लेकिन उसकी अन्तरात्मा ने उसे ऐसा करने से रोका। वास्तव में अंतरात्मा ही नैतिकता का आधार है।

कहा जाता है कि व्यक्ति की सात्विक प्रवृत्तियों ने ही लोकतंत्र को जन्म दिया और उसकी तामसिक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण रखने के लिए ही लोकतंत्र आवश्यक है। जिस समाज में नैतिक सिद्धान्तों की प्रतिष्ठा है और लोग खुशी से नीति और सदाचार का पालन करते हैं, वह समाज अराजकता से सुरक्षित रहता है। जहाँ नीति को नहीं माना जाता वहाँ अनीति, अत्याचार या तानाशाही का रास्ता खुल जाता है।

रीनहोल्ड नेबर का मत है कि व्यक्ति नैतिक हो सकता है, समाज नहीं। राजाजी ने भी एक बार मुझ से कहा कि व्यक्ति निस्वार्थ भाव से काम कर सकता है, समाज नहीं। अपने हित या स्वार्थ की ही रक्षा के लिए समाज का संगठन होता है। सच तो यह है कि समाज की नैतिकता व्यक्तियों की नैतिकता से भिन्न होती हैं। समाज की नैतिकता केवल सिद्धांत पर नहीं, अपने हित, अपनी संस्था और प्रथा सब पर आधारित होती है।

सामाजिक प्रथाओं की उपयोगिता जब खत्म हो जाती है, तब वे रुढ़ि बन जाती हैं और विकास के मार्ग में रोड़ा ही अटकाती हैं। ऐसे समाज की रचनात्मक प्रतिभा नष्ट हो जाती है। उसकी नैतिक विचारधारा दूषित हो जाती है और वह समाज की रूढ़ियों और ऊँच-नीच के भेदभाव का समर्थन करने लगती हैं। रूढ़िवादी समाज में लोगों का दृष्टि-कोण बड़ा संकीर्ण हो जाता है।

भारत में अब पुराना समाज टूट चला है, किन्तु जब तक पुराना ढांचा बिल्कुल नेस्तनाबूद न कर दिया जाएगा

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized By Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहाँ हर आदमी अपने से अधिक देश की बात सोचता है, वहाँ प्रजातंत्र पनपता है और जहां हर आदमी देश से अधिक अपनी ही बात सोचता है, वहाँ अधिनायकता पनपती है।

हर आदमी की बात छोड़िए, पिछले वर्षों में देश के राजनीतिज्ञों और विद्वानों तक ने देश की बात सोचना बन्द कर दिया था और निश्चय ही उससे हमारे प्रजातंत्र की बहुत क्षति हुई।

विचार-उपवन के सूखने की इस बुरी मौसम में जिन विचारकों का चिन्तन देश के हृदय से जुड़ा रहा और जो उस पतझड़ को वसंत में बदलने का सदा प्रयत्न करते रहे, उनमें अग्रणी हैं योजना-आयोग के वर्तमान उपाध्यक्ष श्री अशोक मेहता, जो शिखर पर बैठकर भी यह नहीं भूलते कि इन शिखरों को काटकर हमें खड्डों को भरना है।

तब तक नया समाज नहीं बन सकता। साथही पुराना समाज टूटने से जो अव्यवस्था उत्पन्न होगी उसमें स्वार्थियों को जनता को बरगलाने का भी मौका मिलेगा। लोकतंत्र को सफल बनाने और आर्थिक और सामाजिक उन्नति के लिए अनेक प्रकार की संस्था और संघ कायम करने चाहिए। जब लोग अपनी इच्छा से ऐसे संघ बनाएँगे और उनको चलाएँगे, तो नया समाज पनप सकेगा। इन्हीं संस्थाओं के द्वारा व्यक्ति और समाज के संबंधों में सम्यक् समन्वय स्थापित हो सकेगा।

जिस समाज की पुरानी व्यवस्था के स्थान पर नई व्यवस्था नहीं कायम होती, वहाँ लोगों में झगड़ा, लड़ाई, उदासीनता, संकीर्णता और असहिष्णुता का दौर दौरा होता है और मनुष्यता का पतन हो जाता है।

जब समाज और व्यक्ति एक-दूसरे के सहायक होते हैं तभी उन्नति होती है। जहाँ मनुष्य केवल अपना स्वार्थ ही देखता है, वहां मात्स्य न्याय या जिसकी लाठी उसकी भैंस का हाल हो जाता है। ऐसी स्थिति में लोगों को स्वार्थ त्याग करना पड़ता है। तभी हालत सुधरती है।

ऐसी हालत में लोकतंत्र सरकारों को दो काम करने चाहिएँ। एक जनता जहां शान्तिपूर्ण और वैधानिक तरीके से फरियाद करे, वहां उसे सब तरह सहायता दे। दूसरे गैर कानूनी ढंग से काम करने वालों के साथ सख्ती से पेश आए। दुख की बात है कि आज देश में यह धारणा फैल रही है कि सरकार इसका उलटा कर रही है।

हम बहुत दिनों से विकेन्द्रीकरण की बात कर रहे हैं, किन्तु अभी तक देश में जनता की स्थानीय संस्थाओं की जड़ नहीं मजबूत कर सके हैं। अभी पंचायतों को ही बहुत कम अधिकार हैं, मजदूर संघों में फूट है, सहकारिता संस्था भी कमजोर हैं।

देश में लोकतंत्री सरकार तो है, लेकिन जनता में अभी, जिम्मेदारी नहीं आई है। जनता के ऐसे संगठन नहीं हैं जो वैधानिक तरीके से जनता की शिकायतें दूर करवा सकें। परिणाम यह है कि सरकार पर दबाव डालने के लिए आंदोलन और मोरचे लगाए जाते हैं। आज मांग अपने औचित्य पर नहीं, बल्कि इस बात पर स्वीकार की जाती है कि उसके लिए कितने दिनों तक भूख हड़ताल की गई या कितने लोग जेल गए।

इधर मालूम होता है कि सरकार भी जनता के कष्ट दूर करने का शान्तिपूर्ण तरीका नहीं खोजना चाहती और जनता के संगठनों को प्रोत्साहन नहीं देती। भारत ऐसे देश में जहाँ लोग इतने कष्ट-सहिष्णु और संतोषी होते हैं, बार-बार गोली चलाने की नौबत आए, इससे मालूम होता है कि हमारी लोकतंत्री व्यवस्था में कहीं कोई बड़ी गड़बड़ी है।

जीर्ण रूढ़ियों को नष्ट करना ही क्रांति का प्रयोजन है, किन्तु क्रांति होने पर समाज की जड़ें कट जाती हैं और अच्छी बुरी सभी परिपाटियां छिन्न-भिन्न हो जाती हैं। लोग जल्दी ही इस हालत से ऊब जाते हैं और सुव्यवस्था के लिए उत्सुक हो उठते हैं। रोयर कोलार्ड नाम के एक प्रसिद्ध फ्रांसीसी ने फ्रांस में पुरानी व्यवस्था के विनाश होने पर निम्न शब्दों में दुःख प्रकट किया था।

"(क्रांतिकारियों ने) राजतंत्र के साथ-साथ स्थानीय संस्थाओं और पंचायतों का भी सफाया कर दिया। ये संस्थाएं व्यक्ति स्वातन्त्र्य और लोकतन्त्र की प्रतीक थीं। ये राजसत्ता पर अंकुश रखती थीं। इनका सफाया तो कर दिया गया, लेकिन इनकी जगह कोई नई व्यवस्था नहीं की गई। क्रान्ति ने सब कुछ खत्म कर दिया। व्यक्तिगत बातों को छोड़कर अब सारे अधिकार सरकार ने ले लिए हैं। वही सब कुछ करती है —हमारा समाज विश्रृंखलित हो गया है।"

इसी प्रकार समाज रूढ़िवादिता और क्रांतिजन्य अराजकता की ढेंकी पर भूलता रहता है। समाज को इन अतियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे पड़ौसी देशों में लोकतंत्र विफल हो चुका है। इसका कारण यह नहीं कि लोग दुर्विनीत या उच्छृंखल हो गए हैं, बल्कि यह है कि राजनीतिज्ञ लोग रचनात्मक कार्य करने के बजाय फूट के बीज बोने लगे हैं। अगर अपने देश में हम लोकतंत्र को बनाए रखना चाहते हैं, तो हमें जनता के संगठनों को बनाने पर ध्यान देना होगा और तोड-फोड़ तथा उपद्रव से मुख मोड़ना होगा।

से बचाने के लिए, विचारक सदैव से प्रयत्न करते रहे हैं।

राज्य की सत्ता पर अंकुश रखने के लिए और व्यक्ति की स्वतंत्रता में राज्य को अनावश्यक हस्तक्षेप करने से रोकने के लिए कानून बने। इग्लैण्ड में राजसत्ता पर अंकुश लगाने के लिए लम्बा संघर्ष हुआ, पर अमेरिका में संविधान में ही व्यक्ति के स्वत्वों की रक्षा की व्यवस्था की गई। भारत में भी अमेरिका की तरह संविधान ने नागरिकों के स्वत्वों की रक्षा की व्यवस्था की गई है, पर पूर्ण स्वतन्त्रता नाम की कोई चीज नहीं होती। बिना कर्तव्य के कोई अधिकार या स्वत्व नहीं। स्वतंत्रता और संयम-नियम साथ-साथ चलते हैं। इसलिए लोकतंत्र का आधार जनता की प्रत्यक्ष संस्थाओं, पंचायतों आदि पर होना चाहिए। अमेरिका में टेनसी घाटी योजना के अधिकारियों को पूरे अधिकार दिए गए, लेकिन उन्होंने स्थानीय संस्थाओं के ही जरिये सारा काम कराया।

पुराने ढंग के समाज में सामाजिक संबन्धों और रीतियों का बड़ा महत्व होता है, परन्तु जब ऐसे समाज की अवनति होती है तो ये रीतियाँ मनुष्य की स्वतंत्रता का अपहरण कर लेती हैं। समाज के बिना व्यक्ति का काम नहीं चल सकता। वह अकेला नहीं रह सकता। जब कोई रूढ़िवादी समाज नष्ट होता है, तो उसके साथ ही नए समाज और नई रीतियों की रचना भी शुरू होती है। पश्चिमी देशों में जो नया समाज स्थापित हुआ है, उसमें विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तरह-तरह के सामाजिक समुदाय बन गए हैं, जैसे—मजदूर संघ, सहकारी समितियां, राजनैतिक पार्टियाँ चर्च या धार्मिक संप्रदाय, व्यावसायिक संघ हितकारी समाज और क्लब आदि।

इस प्रकार पश्चिम के संपन्न समाजों का ढाँचा विविधतापूर्ण है। विभिन्न वर्गों और श्रेणियों के ये संघटन राजसत्ता पर अंकुश हैं। इनमें राजसत्ता केंद्रित होने के बजाय कई संस्थाओं में बंट जाती है।

स्वाधीनता आन्दोलन के कारण हमारे यहाँ राजनैतिक चेतना बहुत हुई, किन्तु उन दिनों की राजनीति एक पवित्र लक्ष्य पाने का साधन थी। आज की राजनीति दलबन्दी बन गई है। आज हम हर बात को जाति या दल के फायदे की दृष्टि से देखते हैं। बिना लोकतंत्री संगठन और संस्थाओं के लोकतंत्र स्थिर नहीं रह सकता। हमें ऐसे संगठनों को प्रोत्साहन देना पड़ेगा।

हमारे पड़ोसी देशों में लोकतंत्र विफल हो चुका है। इसका कारण यह नहीं है कि लोग दुर्विनीत या उच्छृंखल हो गए हैं, बल्कि यह है कि राजनीतिज्ञ लोग रचनात्मक कार्य करने के बजाय फूट के बीज बोने लगे हैं। अगर अपने देश में हम लोकतंत्र को बनाए रखना चाहते हैं, तो हमें जनता के संगठनों को बनाने पर ध्यान देना होगा और तोड-फोड़ तथा उपद्रव से मुख मोड़ना होगा।

हमारे समाज में बहुत से छिद्र और फूट के कारण हैं। इनको बढ़ावा देने से लोकतंत्र खतरे में पड़ जाएगा। हमें याद रखना चाहिए कि तानाशाही फूट का इलाज नहीं है, न उससे जनता की जरूरतें पूरी हो सकती हैं। तानाशाही सरकारों के सामने सबसे बड़ी समस्या होती है अपनी सत्ता कायम रखना। फौजी शासन के अंतर्गत बहुत से देशों में मैंने यह शिकायत सुनी है कि वहां राजनीतिक शून्य है। बिना जन-सहयोग के न तो आर्थिक विकास सम्भव है और न सामाजिक सुधार।

जैसे आर्थिक क्षेत्र में झगड़े मिटाने और वर्गों के हितों की रक्षा करने के लिए गैर सरकारी संस्थाएं हैं, वैसी ही संस्थाओं की हमारे राजनैतिक जीवन में भी जरूरत है। लोकतंत्र को मजबूत बनाने के लिए राजनैतिक दलों को आचरण के कुछ नियम बनाने चाहिएँ और उन पर चलना चाहिए। देश में राजनीतिज्ञों का ऐसा समूह होना चाहिएँ जो निष्पक्ष होकर राजनैतिक कार्यों की आलोचना करे। राज्य के अधिकारों को स्थानीय शासन—संस्थाओं में बांट देना चाहिए और विभिन्न व्यवसायों के संगठन बनाने चाहिएँ। इनसे समाज में स्वतन्त्रता और स्वावलंबन को बल मिलेगा और उच्छृंखलता कम होगी। याद रखिए कि हम जितना आत्म-नियंत्रण रखेंगे, सरकारी या बाहरी नियंत्रण उतना ही कम होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान के दौर से सादगी की ओर ?

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

वैभव से स्वेच्छा निर्धनता की ओर

१९२० की बात है।

आन्दोलन का तूफानी दौर चल रहा था। गिरफ्तारियाँ चल रहीं थी। अंग्रेज-सरकार राजनैतिक कैदियों के बारे में कोई नीति-निर्धारित नहीं कर पा रही थी कि उनके साथ क्या व्यवहार करे ? परेशानी यह थी कि देश के सर्वोच्च लोग भी जेल में थे और अत्यन्त साधारण भी। कई उलट-फेर के बाद सरकार ने लखनऊ जेल को नेताओं के लिए 'स्पेशल जेल' बना दिया।

पंडित मोतीलाल नेहरू उसी जेल में रह रहे थे। उत्तर-प्रदेश के चुने हुए लोग तो वहाँ थे ही, दूसरे प्रान्तों के भी काफी लोग थे। एक दिन पंडित मोतीलाल नेहरू के पास बैठे लोग गप-शप कर रहे थे कि लखनऊ की मिठाइयों का जिक्र चल पड़ा। बातों-बातों में मद्रास के श्रीनिवास आयंगर ने कहा—"अरे पंडित जी, शान ही बघारते रहोगे या नमूना भी दिखाओगे उन मिठाइयों का।"

अपने शानदार स्वभाव के कारण पंडित मोतीलाल ने कहा—"जनाब, नमूना नहीं, भर पेट !" और पंडित जी ने सौ रुपये का नोट वार्डर को देकर कहा—"जाओ बहुत बढ़िया मिठाई लाओ।" जिन्होंने पंडित मोतीलाल जी को पास से देखा है, वे जानते हैं कि पंडित जी इतने रौबीले आदमी थे कि उनसे बात करना साधारण आदमी के बस की बात न थी। वार्डर को भी यह हिम्मत न हुई कि वह पूछे—कितनी मिठाई लाऊँ ? बाज़ार पहुँच उसने अक्ल लड़ाई कि इतने आदमी पंडित जी के पास बैठे थे, दो-चार बढ़ भी सकते हैं और वह दस रुपये की मिठाई ले आया।

उस जमाने में दस रुपये की काफी मिठाई आती थी। बड़ी टोकरी में मिठाई देखकर पंडित जी खुश हो गए, पर वार्डर ने नब्बे रुपये सामने किये तो भौंचक हो पूछा "ये कैसे रुपये ?"

"आप ने सौ रुपये का नोट दिया था सरकार !"

"नोट दिया था, तो मिठाई नहीं लाए !"

"सरकार, दस रुपये की मिठाई, बाकी नब्बे रुपये।"

पंडित मोतीलाल नाराज़ हुए और ज़रा तीखे होकर बोले—"तुमने हलवाई से यह क्यों कहा कि मिठाई मोती लाल ने मंगवाई है ?"

"सरकार, मैंने आपका नाम नहीं लिया। गया और मिठाई लेकर चला आया।"

"चुप रहो, झूठ बोलते हो; तुमने मेरा नाम जरूर लिया। उस भले आदमी ने तभी तो रुपये लौटाये। मैं यह पसंद नहीं करता कि कोई आदमी मेरी मुहब्बत की वजह से नुकसान उठाए।"

वार्डर सकपका गया। वह समझ ही न सका कि पंडित मोतीलाल कहां उलझे हुए हैं। पंडित कृष्णकान्त मालवीय भी वहीं बैठे थे। उन्होंने पंडित जी को पूरा हिसाब समझाया, तो उन्होंने तीन बार उन रुपयों को माथे से छूआकर कहा—"लो आज पहली बार जाना कि रुपये वापस भी आते हैं।" और वे नब्बे रुपये उन्होंने उस वार्डर को ही बख्शिश में दे दिए। बात यह थी कि पंडित जी को बाज़ार का क्या पता होता, अपने घर के रुपयों का ही पता न था। ऐसा वैभव था पंडित मोतीलाल नेहरू का, जिसमें जवाहर लाल नेहरू ने आँखें खोलीं।

१९२१ की बात है।

मुजफ्फर नगर में राजनैतिक कान्फ्रेंस हो रही थी। कर्मवीर सुन्दरलाल सभापति थे। एक बत्तीस साल का नौजवान भाषण देने को उठा—बेहद हसीन सूरत, पर वेश ? घुटनों को छूता सफेद मोटी खादी का कुर्ता, नीचे दो पाट सिली मोटी खादी की धोती, सिर पर गान्धी कैप और कन्धे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से, पुट्ठे तक झूलता थैला। दर्शकों ने देखा तो देखते ही रह गये।

सभापति ने उठकर युवक के कन्धे पर हाथ रखा और शंख जैसी गूंजती आवाज में कहा—"यह जवाहर लाल है, जो अपने बादशाह बाप का एकलौता बेटा है और थोड़े दिन पहले तक राजकुमारों की तरह रहता था। पब्लिक में अफवाह है कि इसके कपड़े पैरिस से धुलकर आते थे और यह सैंट में नहाया करता था। अब यह देश के वालिंटियर की ड्रेस में आपके सामने है। जब से इस पर गान्धी जी की छड़ी फिरी है, यह देश का दीवाना बन गया है।"

मैंने उस दिन पहली बार जवाहर लाल को देखा था, पर उनके जीवन-परिवर्तन में जो ज्वाला थी उसने उस दिन जाने कितनी जिन्दगियों में आग लगा दी थी। कान्फ्रेंस से लौटते समय स्वामी नारायणानन्द सरस्वती ने कहा था—"बुद्ध और महावीर राजभवन छोड़कर फकीरी में आए थे और जवाहर लाल भी राजभवन छोड़ कर फकीरी में आया है। उन्होंने समाज में उथल पुथल की थी, यह भी करेगा। मालूम होता है अंग्रेजी राज्य का समय समाप्त हो गया है।" मैंने बहुत बार सोचा है कि स्वामी जी ने उस दिन कैसी भविष्यवाणी की थी।

१९२७ की बात है।

पूरा नेहरू-परिवार अपनी विदेश यात्रा के बीच पैरिस में ठहरा हुआ था। पंडित मोती लाल नेहरू किसी काम से एक-दो दिन के लिए लन्दन जा रहे थे। उन्होंने अपनी छोटी बेटी कृष्णा से पूछा—तुम्हारे लिए क्या लाऊँ?

कृष्णा बहुत दिन से चमड़े के एक कोट को तरस रही थी। हाथ में पैसे थे, पर जवाहर लाल उसे विलास की चीज समझते थे और उसके खरीदने की चर्चा होते ही गरम हो जाते थे। बाप ने पूछा, तो कृष्णा ने झट कोट की बात कह दी। पंडित मोतीलाल जब लन्दन की मशहूर दूकान पर कोट खरीदने पहुँचे, तो उन्हें यह भूल मालूम हुई कि वे कोट का नाप लेना भूल आये हैं। मोतीलाल जी बादशाह आदमी थे। उनकी मनोवृत्ति थी—मेरी हरेक इच्छा पूर्ण हो। उन्होंने मैनेजर से कहा कि वे अपने यहां काम करने वाली ऐसी लड़कियों को एक लाइन में खड़ा करदें, जिनकी लम्बाई पांच फिट दो इंच के लगभग हो और उन्हें कोट पहना कर देखा जाय कि मेरी लड़की के लिए कौन-सा कोट फिट रहेगा। शर्त अजीब थी, पर कोट के मुँहमांगे दाम और लड़कियों को इनाम भी तो साथ था। पंडित जी की बात मान ली गई।

पेरिस लौटकर उन्होंने कोट खरीदने का किस्सा सुनाया, तो कृष्णा बेटी और बहू कमला ने उसमें खूब दिलचस्पी ली, पर जवाहर लाल ने सुना, तो उबल पड़े इस 'गलत और शानदार' बात पर—'पिताजी का केवल इसलिए कि वह ऐसा कर सकते थे और उन्हें कोई रोकने वाला न था, इस तरह की हरकत करना बड़ा ही गलत था।" वही बात कि जवाहर लाल में वैभव-शान के प्रदर्शन की जगह फकीरी की सादगी रच-पच रही थी।

१९३७ की बात है।

भारत के भाग्यविधाता आम चुनाव का दौर-दौरा था। कांग्रेस अध्यक्ष श्री जवाहर लाल नेहरू तूफानी दौरा कर रहे थे। वह हमारे जिले का दिन था। कार्यक्रम के अनुसार पहाड़ी क्षेत्र का दौरा कर दिन में तीन बजे वे सहारनपुर स्टेशन आये। अब शाम तक के लिए वे मेरे चार्ज में थे। 'सिर मुंडाते ही ओले पड़े' की कहावत सुनी थी, पर यहाँ 'राष्ट्रपति नेहरू' का चार्ज लेते ही गोले बरस पड़े। ज्योंही नेहरू जी रेल के डिब्बे में चढ़े, गरम हो गए।

डब्बा सेकेंड क्लास का था। साथ मना श्री शिवदत्त उपाध्याय उनके निजी सचिव थे। वे पहाड़ी क्षेत्र के दौरे में साथ नहीं गए थे, हमारे साथ ही रहे थे। उनकी तरफ मुखातिब हो नेहरू जी उबले—"आपके दिमाग में यह नवाबी क्यों है? सेकेंड क्लास! सेकेंड क्लास! सेकेंड क्लास!!! शान से रहना है, तो कांग्रेस से रिश्ता छोड़िए और बाहर धूम मचाइये।"

मैंने तोप का मुंह उपाध्याय जी की तरफ से, अपनी तरफ कर लिया—"पंडित जी, इसमें उपाध्याय जी का कोई कसूर नहीं है। मैं फर्स्ट क्लास के टिकट ले रहा था, उपाध्याय जी के मना करने पर सेकेंड के ले लिए। इसमें कोई भूल है, तो मेरी है।"

उबाल कुछ कम पड़ गया, फिर भी—"जनाब क्या कुछ कम हैं। हैं लेखक, लेकिन दिमाग में शान है। हमारे मुल्क में लेखक शानदार जिन्दगी नहीं जीते।"

मैंने तोप के मुँह में एक महकता फूल रख दिया—"जी लेखक नहीं जीते, पर हमारे राष्ट्रपति तो शानदार हैं।" पंडित जी का चेहरा मीठा पड़ गया—"जी हां!" इस बातचीत के कुछ देर बाद देवबन्द की आम सभा में मैंने सभापति पद से पंडित जी का परिचय देते हुए कहा—१९२१ में मैंने पंडित जी को वैभव के सिंहासन से उतर कर फकीरी के आसन पर बैठते देखा था। आज सहारनपुर के स्टेशन पर देखा कि वे तप कर अब सन्त हो गए हैं—भारत की भाषा में राजर्षि।

फरवरी १९३१ और उस के बाद—

५ फरवरी को लखनऊ में पंडित मोतीलाल नेहरू की मृत्यु हो गई और नेहरू वंश का कल्पतरु सूख गया। जेब में रुपए होते, गरीबी में जीवन बिताना बड़ी बात है, पर मीठी बात है। जेब में रुपये न होते गरीबी में खुश रहकर जीवन बिताना बड़ी बात है, पर सख्त बात है। इन दोनों के साथ ही यह भी कि वैभव में बरसों जीने के बाद जेब में रुपया न होते और उसकी जरूरत रहते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी, अपनी जगह हिम्मत से टिके रहना बहुत सख्त होते भी बहुत बड़ी बात है। पंडित जवाहर लाल नेहरू और उनका परिवार अब इसी हालत से गुजर रहा था —हिम्मत के साथ एक सख्त जिन्दगी जी रहा था। अपने नेता जवाहर लाल को समझने के लिए जरूरी है कि हम उस सख्त जिन्दगी को समझें।

निर्धनता से सख्त जिंदगी में !

पंडित मोतीलाल नेहरू की गोद में राजकुमारों जैसी जिन्दगी जीने के बाद जवाहर लाल कैसी सख्त जिन्दगी जी रहे थे ?

११ मार्च १९३४ को श्रीमती कमला नेहरू ने श्री जमना लाल बजाज को लिखा था—"मैंने उस दिन जिक्र किया था, १५००) रु० जो फिक्स डिपाजिट था, वह खर्च हो गया और दूसरी फिक्स डिपाजिट थी वह भी घर में ही खर्च होगी, तो इन्यु के (खर्च ?) में जो कमी थी वह पूरी नहीं हो सकेगी। हमारे मकान की छत फट गई है। उसकी मरम्मत में भी काफी रुपया लगेगा।"

इसी पत्र में आगे—'संतानम् ने लक्ष्मी इन्श्योरेंस में जो ५० शेयर थे, वे जवाहर के नाम कर दिये हैं। उनका सूद २५ से नहीं दिया है। मैंने लाड़ली भाई से कहा है कि उन्हें लिखकर मंगा लें। शायद ५००) रु० होंगे।"

घर का गड्ढा इतना छोटा नहीं था कि वह इस तरह की उलटा-पलटी से भर जाए। पास बुक ने जवाब दिया, तो हाथ आस पास घूमा और नौबत उस जेवर को बेचने पर पहुंची, जो श्रीमती स्वरूप रानी और श्रीमती कमला के लिए पंडित मोती लाल नेहरू ने धन खर्च करके नहीं, धन बखेर कर बनवाया था। बेचारे जवाहर लाल को क्या पता जेवर के मोल तोल का ? फिर अपना जेवर बाजार में बेचने जाना और उसका भाव-ताव करना, हया को ऐसी नहर खोदना है कि आदमी उसके किनारे खड़ा होकर ही उसमें डूब जाए।

गिरी-पड़ी के यार मुकन्दा; जो काम किसी से न हो, उसे करें जमना लाल बजाज। तो बेचने के लिए हीरे का लाकेट जमना लाल जी को भेजा गया। हाय रे, 'अर्थी दोषान्न पश्यति'—गर्ज का बावला दोषों को नहीं देखता। लॉकेट को निकालते–भेजते समय किसी ने ध्यान से नहीं देखा। उस समय की मानसिक दशा का, दिमागी अस्तव्यस्तता का कितना सूक्ष्म चित्र है यह ! बाप रे, जमना लाल बजाज। दाने दाने पै मोहर का मुहावरा है, पर वे दाने-दाने पै नजर वाले थे। लॉकेट को देखते ही उन्होंने जवाहर लाल का ध्यान एक बड़े ही बारीक मुद्दे पर खींचा।

२९ दिसम्बर १९३२ को जवाहर लाल ने उन्हें जो पत्र लिखा, उससे वह मुद्दा स्पष्ट होता है–"पूछा है कि जो हीरे का लाकेट है (मेरी तस्वीर का) वह तस्वीर के साथ बेचा जा सकता है या नहीं ? यह लाकेट पापा ने माता जी को दिया था और तस्वीर खास उनके लिए बनवाई थी। उस तस्वीर को वह रखना चाहती हैं और मैं भी नहीं चाहता कि वह बेची जाय। इसलिए कृपा करके तस्वीर को न बेचें, खाली हीरे के लाकेट को अलग करें।"

यह सिलसिला जारी रहा। उस में कितने उतार चढ़ाव आये, इसका पता उस पत्र से चलता है, जो जवाहर लाल ने १० अक्तूबर १९३३ को जमनालाल जी को लिखा—'आप हमारे लिए जो कुछ कर रहे हैं, उसके बारे में यदि मैं आपके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रदर्शित करूँ तो आशंका है आप इसे अनुचित समझेंगे। आप कहेंगे कि दोस्तों और भाइयों के बीच ऐसी जाहिर दारी नहीं होनी चाहिए। कुछ हद तक यह सही है, मगर फिर भी कमला और मैं दोनों महसूस करते हैं कि इसमें कोई जहिरदारी की बात नहीं और हमें आपके प्रति उस तमाम चिन्ता और ध्यान के लिए, जो आप हमारी सहायता के लिए और हमें अ कुछ चिंताभार से छुड़ाने के लिए काम ला रहे हैं, आपके प्रति हमें अपनी कृतज्ञ दिखानी ही चाहिए।"

यह सिलसिला टूटा नहीं और जे का बॉक्स खाली हो चला। अब उ हाथ डालने का मतलब था शून्य हो जाना नारी के लिए जेवर-विहीन जीवन कल्पना ही दुखद है, कि मुझे याद श्रीमती सरोजिनी नायडू बुढ़ापे में अपना लाकेट बड़ी शान से पहनती थी श्रीमती कमला की मनोवृत्ति का उस पत्र से चलता है, जो जवाहर ने २८ दिसम्बर १९३५ को विदेश जमना लाल जी को लिखा—"जेवर बारे में जो आपने पूछा, उसका जिक्र कमला से कुछ दिन हुए किया था। उ कुछ साफ जवाब नहीं दिया। अ होगा अगर आप इस सवाल को अ अटका रखें। मेरी वापसी पर बात हो जायगी।"

कैसी बेबसी है—'उसने कुछ जवाब नहीं दिया'–क्या जवाब दे कम परिस्थितियों का तकाजा है जेवर जाए, पर मनस्थितियों का तकाजा इतना तो बच ही जाए। दो महीने उधेड़-बुन में परिस्थितियाँ जीत गईं, स्थितियाँ हार गई। १० फरवरी १९ को लोजान से जवाहर लाल ने ज लाल जी को लिखा—"....लेकिन सोचता हूं कि उसको बेच देना ही होगा। यहाँ खर्च की तो कोई इन्तहा नहीं है और स्विटजर लैंड तो खास से महंगा मुल्क है। मरीज के इलाज में कुछ खर्च होता है वह तो है ही, लेकिन नर्सें रखनी पड़ती हैं, तो यह दुगना-ति हो जाता है। आज-कल और बहुत से कमला की हालत ऐसी है कि दो की जरूरत है। मालूम नहीं, कब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

76291

यह सिलसिला जारी रहे। इसलिए यह बेहतर है कि और रुपयों का इन्तजाम वक्त से कर दिया जाए। जो जेवर वहाँ है उसको मुनासिब दाम पर बिकवा दीजिए।"

वैभव में पले और स्वभाव से अपनी इच्छाओं के राजकुमार जवाहर लाल के लिए पैसे का यह दबाव, मृत्यु की ओर बढ़ती पत्नी के साथ उस दबाव पर सलाह और विदेश का अकेलापन कितना उत्पीड़क रहा होगा, इसे जवाहर लाल जैसे भावुक होकर ही हम अनुभव कर सकते हैं।

१२ अप्रेल १९३७ को जमना लाल जी ने जवाहर लाल को लिखा—"श्री कमला बहन के और तो सब जेवर बिक ही चुके हैं। मोती की कंठी भी बेच दी। केवल हीरे की चूड़ियाँ रह गई। हाल में २२५०) से ज्यादा में लेवाल नहीं है।" अन्त में जमनालाल जी ने २५००) में शायद अपनी बहू के लिए स्वयं ही खरीद लिया और इस तरह कमला की मृत्यु के कुछ दिन बाद उनके जेवरों की बिक्री का काम भी पूर्ण हो गया। कितनी मर्मान्तिक थी यह पूर्णता ? उफ स्वर्गीय पत्नी के जेवरों की बिक्री, आर्थिक परेशानियों के कारण ! राष्ट्रीय संग्रहालयों में रखने लायक चीज, साधारण जौहरियों की कसौटी पर।"

जरूरतों के गड्ढे किसी की परेशानी को कहाँ देखते हैं ? वे अब भी गहरे थे, भूखे थे और सिक्के मांगते थे। २६ मई १९३८ को जवाहर लाल ने लिखा था —"गणेशन ने मेरी आत्मकथा के तमिल संस्करण के लिए कुछ भी रकम अदा नहीं की। मैंने उसे लिखा कि मैं उसके खिलाफ कार्रवाई करूंगा। तब कहीं उसने मुझे हिसाब भेजा कि उस पर मेरे ५००) से अधिक लेना निकलते हैं। उसने मुझे यह रकम १५ मई तक भेजने का वादा किया था। उसने वह वादा पूरा नहीं किया। यह हिसाब सही है या नहीं, इसका भी कुछ पता नहीं।"

कितना बोझ था दिमाग पर कि जवाहर लाल ने अपने प्रकाशक को मुकदमे की धमकी दी, उसके द्वारा ५००) मिलने की बेकरार इन्तजार की और हिसाब के ठीक होने में शक किया — काश, ये रुपये ज्यादा होते। किताबों ने उस गरीबी में बहुत साथ दिया और चलते रहने में मदद की, फिर भी श्री मती कृष्णा हठी सिंह के शब्दों में स्थिति यह थी—"हमारी आर्थिक हालत अब इतनी अच्छी न थी। हममें से किसी के लिए भी जीवन सुखी या आसान नहीं था।"

बस इस मुश्किल जिन्दगी की एक तस्वीर और श्रीमती कृष्णा हठीसिंह की ही कलम से—' (इलाहाबाद स्टेशन पर गाड़ी से उतर) हम घर गये। अब की बार मोटर पर नहीं, इसलिए कि अब हमारे पास कोई मोटर नहीं थी। हम एक पुराने तांगे पर घर गये, जो इलाहाबाद की खराब सड़कों पर रेंगता-सा जान पड़ता था। आखिर हम आनन्द भवन के दरवाजों में से दाखिल हुए। इस बार मैंने वहाँ जो कुछ देखा, उससे बिल्कुल भिन्न था, जो मैं देख चुकी थी। अब न तो वहां ज्यादा रोशनी थी, न इधर उधर दौड़ने वाले नौकर चाकर। पूरे मकान में अन्धेरा था, सिर्फ बाहर के दरवाजे पर एक बत्ती धीमी-धीमी जल रही थी और एक कमरे में कुछ रोशनी दिखाई दे रही थी। हमारा घर उदास, उजड़ा हुआ और खामोश दिखाई दे रहा था। मुझ पर भी गम और उदासी छाई हुई थी और मुझे ऐसा लग रहा था कि मैं किसी ऐसी जगह आ गई हूं, जिससे मैं वाकिफ नहीं हूं और नहीं जानती कि आगे चलकर क्या दिखाई देगा।"

ऐसी कठोर जिन्दगी जी रहे थे जवाहर लाल, अपने प्यारे देश की आजादी के लिए।

सख्त जिन्दगी से शान के मंच पर

पंडित मोती लाल नेहरू की शाही गोद में पलने-पनपने के बाद जवाहर लाल नेहरू और उनका परिवार गरीबी की, तप की, साधना की जो सख्त जिन्दगी जी रहे थे, श्रीमती कृष्णा हठी सिंह की कलम से उसकी एक भावुक झांकी यह है—

❀ एक बड़ा भारी पुराना मकान, आदमियों से भरा हुआ, इसमें वे सारे सामान मौजूद हैं, जो अच्छी तबीयत और दौलत, दोनों मिलकर जमा कर सकते हैं।

❀ कुछ साल बाद। मकान वही था, पर वहां की शान शौकत सब गायब हो चुकी थी। कुछ साल पहले वहां जो ठाट-बाट दिखाई दिया करता था, उसकी जगह अब सादगी ने ले ली थी, पर मकान में रहने वाले वही पुराने लोग थे और मकान के मालिक की दिल से निकली हुई हंसी अब भी घर भर में गूंजती थी और जिनके दिल पर कुछ उदासी छाई हो, उनका दिल बढ़ाती थी। इस मकान में और उसमें रहने वालों में जो फर्क हुआ था, वह किसी मुसीबत या बदनसीबी से नहीं हुआ था, बल्कि उसका सबब यह था कि लोगों के दृष्टिकोण में और राजनैतिक विश्वासों में तबदीली हो गई थी।

❀ कुछ साल और निकल गए। पुराने मकान के करीब ही अब एक नया मकान और बन गया था। नया मकान क्या था, एक सपना था, जिसे एक प्रेमी पिता ने अपने प्रिय पुत्र के लिए मकान का रूप दे दिया था, पर इसके रहने वालों को उससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुख बहुत कम और दुख बहुत ज्यादा मिला।

❀ मैंने एक सुनसान घर देखा, जिसमें अब हँसी खुशी नाम को न थी। यह मकान एक बाग के बीच में था, पर बाग की अब देखभाल नहीं होती थी। मकान के अन्दर एक कमरे में उस घर का बेटा बैठा हुआ था। वह अपनी मेज के पास बैठा काम कर रहा था। हमेशा काम करते रहना उसकी आदत थी। उसकी जिन्दगी आराम की जिन्दगी नहीं थी और न उसे आगे चलकर कोई खास सुख या आराम मिलने की आशा थी, क्योंकि उसने अपने लिए एक सीधा और तंग रास्ता अख्तियार किया था और उस रास्ते से पीछे फिरने का सवाल ही पैदा नहीं होता था।

इस सब का निष्कर्ष भी उसी कलम से—जीवन की अनिश्चितता जो हमारे कुटुम्ब के हिस्से में आई है और जो हमारे और बहुत से देशवासियों के हिस्से में भी आई है, ऐसी चीज है, जो इन्सान को धीरे-धीरे थका देती है। मैं इस आशा पर जीती हूं कि फिर सब कुछ ठीक होगा, फिर अज़ीज़ एक साथ मिल बैठेंगे, फिर सुख-शांति के दिन आएंगे, फिर हमारा देश संपन्न होगा, पर सच तो यह है कि भविष्य अभी इतना रोशन नजर नहीं आता।

जवाहर लाल जो थकाने वाली सख्त जिन्दगी जी रहे थे, उसकी सबसे सख्त बात यह थी कि उसे आगे चलकर कोई खास सुख या आराम मिलने की आशा न थी और सच तो यह है कि भविष्य अभी इतना उज्ज्वल दिखाई न देता था।

इसी आशा—विहीन, पर दृढ़तापूर्ण स्थिति में १९४२ की क्रांति तक का समय बीत गया। क्रांति ने अपना काम किया, विश्व युद्ध ने अपना। क्रांति ने भारत को ताकतवर बनाया, विश्वयुद्ध ने इंगलैण्ड को कमजोर। क्रांति ठंडी पड़ चली थी, पर उसके दूसरे उभार को झेलने की ताकत अंग्रेज में न थी। इतनी कि गाँधी जी में क्रांति का नया उफान उठाने की पूरी ताकत बाकी थी और यहीं भारत की स्वतन्त्रता का अंकुर उग पनपा था। जून १९४५ में जवाहरलाल जेल से बाहर आ गए थे और वायसराय वेवल भारत की स्वतन्त्रता का ताना-बाना पूर रहे थे।

इस बीच की एक घटना ने जवाहर लाल की वैभव में जन्मी-पली और गरीबी के सख्त माहोल में जूझती जिन्दगी को एक पहला शानदार स्पर्श दिया। यह घटना थी भारत के वायसराय द्वारा जवाहर लाल को भारत के पड़ौस-बर्मा लंका क्षेत्र घूमने में सहयोग देना और वहाँ उनकाउस क्षेत्र के सेनाध्यक्ष श्री माउंट बैटन के घर अतिथि होना। यहां उन्होंने शानदार जिन्दगी का वही प्रवाह देखा, जो बचपन में अपने पिता के जीवन में, रहन सहन में देखा था। मैंने अक्सर सोचा है कि जवाहर लाल ने उस जीवन में सांस लेते समय मन ही मन सोचा होगा—ओह, यह जीवन! और उनकी बरसों से शमित-दमित सुखेच्छा ने पहली अंगड़ाई ली होगी।

इसके कुछ दिन बाद ये लम्बी बातें आरम्भ हुई, जिनमें जवाहर लाल को बराबर और बार बार वायसराय-भवन के वातावरण में जाना-आना और घुलना-मिलना पड़ा, जिससे सुखेच्छा की उस अंगड़ाई ने कामना का रूप लिया। गीता की सूक्ति है—संगत संजायते कामः—संग से इच्छा उत्पन्न होती है। १२ अगस्त १९४६ को वेवल ने उन्हें अस्थाई सरकार बनाने का निमंत्रण दिया और दो सितम्बर १९४६ को जवाहर लाल भारत के प्रधानमन्त्री बन गए। अब शानदार जिन्दगी कल्पना की नहीं, व्यवहार की थी और ये शाही शान के बीच में थे, जैसे उनके पिता का समय फिर लौट आया हो।

हिन्दुस्तान अब भी गुलाम था, पर उसकी गुलामी को खत्म करने की बात-चीत जोरों से चल रही थी। यह बात-चीत आजादी और बटवारे को एक [illegible] मिला रही थी और अंग्रेज कूटनीति[illegible] कांग्रेस को एक ऐसी चौकी पर बैठाया था, जिसके एक तरफ था [illegible] हुए आजाद हिन्दुस्तान का शानदार [illegible] और दूसरी तरफ एक लम्बे ज्वालामु[illegible] संघर्ष का हवन कुण्ड। गांधी जी का [illegible] हवन कुण्ड की ओर था, पर वर्मा-[illegible] में जवाहर लाल के मन में वैभव [illegible] आराम का, शान का जो बीज पड़ा [illegible] वह इतने महीने प्रधानमन्त्री रहने के [illegible] अंकुरित हो पौधा बन गया था और [illegible] उस ज्वालामुखी लम्बे संघर्ष के [illegible] कुण्ड में कूदने का चाव जवाहरलाल [illegible] था। इतिहास का कैसा मजाक है [illegible] कांग्रेस का सबसे अधिक संघर्षशील [illegible] जवाहरलाल ही सबसे पहले आजादी [illegible] बटवारे के प्रस्ताव से सहमत हुआ। [illegible] के बाद सरदार पटेल और तब [illegible] अध्यक्ष आचार्य कृपलानी। तब १५ [illegible] १९४७ को कांग्रेस ने इन पर स्वीकृति [illegible] मुहर लगाई और १५ अगस्त १९४७ [illegible] जवाहर लाल स्वतन्त्र भारत के प्र[illegible] मन्त्री हुए।

गरीबी के बोझ में दमित और [illegible] वैभव की इच्छा के उस नये पनपे [illegible] का अब क्या हाल था? यह अब वृक्ष [illegible] गया था और उसे हमने देखा उस [illegible] जिस दिन प्रधानमन्त्री जवाहरलाल [illegible] ने अपने लिए कमांडर इनचीफ करि[illegible] से अपने रहने के लिए त्रिमूर्ति [illegible] खाली कराया और उसे नये ढंग [illegible] सजाया गया। अब वे यों जी रहे थे [illegible] जैसे जीवन पुस्तक में पंडित मोती[illegible] के वैभव और प्रधानमन्त्री नेहरू के [illegible] के बीच गरीबी की सख्त जि[illegible] का जो अध्याय है, उसे निकाल [illegible] उस पुस्तक का नया राज संस्करण [illegible] रहे हों। राष्ट्रमंडल के प्रधान मंत्रि[illegible] प्रथम सम्मेलन में वे शामिल हुए, [illegible] इतने शानदार विदेशों में थे कि [illegible] के प्रधानमंत्री से अधिक वे इंगलैंड [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ड्यूक जच रहे थे। उस रूप में उनकी फोटो भारत के पत्रों में छपा, तो उसकी काफी कड़वी आलोचना हुई। जवाहर लाल भीड़ को प्रभावित करते थे, भीड़ से प्रभावित होते थे, इसलिए वह सूट उन्होंने फिर कभी नहीं पहना, पर वह था उन्हें बहुत प्रिय। उसे पहन कर उनके मन में शायद अपने शाही पिता के उस सूट की इन्द्र धनुषी झांकी झलक आती थी, जो उन्होंने सन् १९११ के दिल्ली दरबार में पहना था और जो पंडित मोती लाल को इतना प्रिय था कि १९२० में जब नेहरू परिवार के विदेशी वस्त्रों की होली जलाने के लिए कपड़ों का ढेर लगाया गया तो उस सूट को उन्होंने हाथ बढ़ाकर उठा लिया था और रख लिया था।

इसके बाद तो शान की, वैभव के प्रदर्शन की, उपभोग की आँधियाँ उठगई। शान के खर्चीले जीवन ने जवाहर लाल को गांधी जी से लाखों कोस दूर कर दिया। कहूं जवाहर लाल की शान में गांधी जी का दम टूट गया और वे जीने का चाव खो बैठे। गांधी जी के अतिथि अमरीकी पत्रकार लुई फिशर को नाश्ते में श्रीमती जीवराज मेहता ने कुछ बढ़िया चीजें परस दी थी और गांधी जी ने उन्हें साधारण से बहुत ज्यादा गहरी झाड़ पिलाई थी, पर नेहरू-सरकार ने शाही भोजों का तांता बांध दिया।

गांधी जी का कहना था कि हमारे मंत्री-मिनिस्टर उसी सादगी से रहें, जिस से वे अपने घरों में मंत्री बनने से पहले रहते थे, पर नेहरू-सरकार के मंत्रियों का-जीवन कहाँ था, इसका उदाहरण पंडित गोविन्द वल्लभ पन्त ने दिया। वे उत्तर-प्रदेश के मुख्यमन्त्री का पद छोड़ कर केन्द्रीय गृहमंत्री के रूप में नई दिल्ली आए, तो अपनी कोठी में उनका मन नहीं रमा, तब एक इंजिनियर लखनऊ गया और उनकी कोठी की साज-सज्जा का पूरा नक्शा बना लाया। बाद में दिल्ली की उनकी कोठी बिल्कुल उसी रूप में [illegible] और इसमें लगभग [illegible] हजार रुपये खर्च हुए।

सम्विधान में महामहिम राष्ट्रपति का वेतन दस हजार रुपये महीना रखने पर जब सदस्यों ने गांधी जी का नाम लेकर आपत्ति उठाई, तो जवाहर लाल ने साफ शब्दों में कहा कि राष्ट्रपति की शान के लिए यह आवश्यक है। बाद में एक राजा ने राष्ट्रपति को हाथी भेंट कर दिया और उस पर लोक सभा में चर्चा हुई तो जवाहर लाल ने कहा-उसे बेचना-हटाना राष्ट्रपति की शान के खिलाफ है।

१९४६ की जुलाई में गांधी जी से लुई फिशर ने कहा था-आपने कहा था कि पाल ने ईसा के उपदेशों को विकृत कर दिया। क्या आपके साथ के लोग भी ऐसा ही करेंगे? गांधी जी ने उत्तर दिया था "उनके भीतर क्या है, वह मुझे दिखाई देता है। हां, मैं जानता हूं कि शायद वे भी ठीक वैसा ही करने का प्रयत्न करें। गान्धी जी की यह भविष्यवाणी सच निकली और जवाहर लाल के मन में व्यक्तिगत वैभव की दमित इच्छा राष्ट्रगत रूप में इस तरह फल फूल उठी कि हम जड़ को भूल पत्तों के फैलाव में उलझ गए। गाँधी जी की समाधि पर बेमतलब लाखों रुपये लगाने वालों ने खुले आम कहा-रैन बसेरों के निर्माण के लिए रुपयों का अभाव है। देश में कारों की चमक पाँच सात गुनी बढ़ गई, पर बेकारों और गरीबों का जीना दूभर हो गया। गाँधी जी ने कहा था-बचाओ पर नेहरू सरकार का सूत्र हो गया—बहाओ। समाजवाद के नारे गूँजते रहे और नये लखपतियों की संख्या बढ़ती रही। कलश प्रदीप्त हो उठे, नींव कान खजूरों से भर गई। कृषि की दशा बिखरी की बिखरी रही, पर कृषि भवन ८ मंजिल ऊंचा हो गया। भारत युद्ध विरोधी संसार के निर्माण में जुटा रहा और चीन पाकिस्तान उसका मुंह थपड़ाते रहे। संक्षेप में देश में धन-वैभव के मूल्य बढ़ गए और नैतिकता के मूल्य शून्य हो गए-इससे भी बढ़कर यह हुआ कि गांधी जी के द्वारा जिस समाज-दृष्टि समाज की रचना हुई थी, वह व्यक्तिवादी हो गया। हरेक को अपनी पड़ गई।

जवाहर लाल ईमानदार और नेक इंसान थे। वे अनुभव करते थे कि भूल हो गई है। उस भूल से बचना चाहते थे, पर बच न पाते थे। झुंझलाते थे, गुर्राते थे और शान्त हो जाते थे। नागालैंड की रचना के समय मुख्यमन्त्री आओ से उन्होंने कहा था-"शान से बचना, हम तो उसमें उलझ ही गए हैं।" ओह, कितना दर्द था उस वाक्य में!!

भारत की आत्मा के कवि रवीन्द्र नाथ ने मुष्टि बद्ध हाथ उठाकर अपनी पूरी शक्ति के साथ देशवासियों से कहा था-"ओ मेरे बन्धुओं! अपनी सादगी की श्वेत पोशाक में अभिमानी और शक्तिशाली के सामने खड़े होने पर तुम्हें लज्जित होने की आवश्यकता नहीं है। तुम्हारे सिर पर मानवता का मुकुट हो और तुम्हारी आजादी का अर्थ हो आत्मा की आजादी। अपनी निर्धनता और अभावों पर प्रतिदिन भगवान का सिंहासन बनाओ और गांठ बाँध लो कि जो विशाल दिखाई देता है, वह महान नहीं है।"

जीवन का जो आदर्श देश के सामने रखा गया, उससे प्रभावित हो, भारत अपनी महानता का यह पथ छोड़, विशालता के उस पथ पर चल पड़ा, जिसमें अमरीकी जीवन के पूरे दोषों का समावेश है और गुण एक भी नहीं लिया गया। कहूँ, ऊँचे विचार का इष्ट हम भूल गए, ऊँचा रहन-सहन हमारा अभीष्ट हो गया!!! यह वो राह है, जिस पर अंत तक जाने के बाद अब पश्चिम भटक रहा है, सोच रहा है, परेशान हो रहा है और एक शोषक रिक्तता अनुभव कर रहा है। क्या यह सर्वोत्तम समय नहीं है कि हम अपनी अब तक की प्रगति और अगति पर गहरी छानबीन करें और संसार के अनुभव का लाभ उठाते हुए शान के इस दौर से फिर सादगी की ओर मुड़ें? ▣

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर एक चाँद का उदय होगा !

डॉ० एम० खुशदिल

मनुष्य के भीतर नई वस्तुओं को देखने की उत्सुकता स्वाभाविक है या अर्जित, इस बात पर मनोवैज्ञानिकों का मतभेद है, मगर इससे कोई इन्कार नहीं करता कि उत्सुकता-प्रवृत्ति मानव-स्वभाव का गुण है। जब कोई खेल-तमाशा होता है, तो बालक एक दूसरे को धक्का देकर आगे खड़ा होने की कोशिश करते हैं। बड़े लोग उचक-उचक कर देखते हैं। तमाशा दिखाने के लिए बच्चों को लोग अपने कंधों पर बिठा लेते हैं। चाहे २६ जनवरी का जलूस हो या गाँव में बाजीगर का तमाशा, आपको हर जगह ऐसा ही व्यवहार मिलेगा।

स्वतन्त्रता से कई साल पहले की बात है। जब लाहौर के चिड़ियाघर में अफरीकी शेर-शेरनी का नया जोड़ा आया, तो लाहौर के लोगों में उसे देखने की बड़ी उत्सुकता हुई। वैसे तो लाहौर के लोग वहाँ चिड़ियाघर होते हुए भी उसे देखने नहीं जाते और उनका हाल ऐसा ही है, जैसा गंगा घाट के पण्डों का, जो पास बहती हुई गंगा में भी स्नान नहीं करते, मगर जैसे किसी पर्व या त्योहार को गंगा के पण्डे भी स्नान करने को उत्सुक होते हैं उसी प्रकार लाहौर के लोग भी शेर-शेरनी के नव-आगन्तुक जोड़े को देखने के लिए उत्सुक हो उठे। भीड़ की भीड़ लारेन्स बाग की ओर रवाना होने लगी और कटघरे के चारों ओर भीड़ का गोल जम गया। स्त्री, पुरुष, बालक, बूढ़े सभी के भीतर उन्हें देखने का चाव था।

जब शहर में इस शेर-शेरनी के जोड़े की चर्चा अधिक बढ़ी, तो उन्हें देखने की उत्सुकता हमारे मन में भी उत्पन्न हुई। एक मित्र को साथ लेकर हम भी चिड़ियाघर गए और काफी देर उचक-मुचक और ठेलाठेली के बाद कटघरे के समीप पहुंच गए।

इतने ऊँचे कद के शेर-शेरनी हमने पहले कभी नहीं देखे थे। पीला मटियाला रंग, जिस्म पर कहीं-कहीं काली लकीरें और धब्बे, कंधे पर लम्बे-लम्बे बाल, भयानक चेहरा, बड़ी बड़ी लाल डरावनी आँखें, तेज नुकीले लम्बे दाँत, पतली कमर और चौड़े पंजे। शेर और शेरनी की शक्ल एक जैसी थी; अन्तर केवल इतना था कि शेरनी के कंधे पर बाल न थे। लोग उनको बबर शेर बतलाते थे।

"यह है जंगल का राजा, जिसको मानव ने कटघरे में बन्द कर लिया है।" मैंने अपने मित्र से कहा, तो मित्र बोला—"ठीक है। सौंदर्य, बहादुरी और आतंक का मिश्रण इन शेरों के चेहरों में उसी तरह प्रदर्शित है जिस तरह राजा के चेहरे से टपकता है।"

हम काफी देर तक इस शेर-शेरनी के जोड़े को देखते रहे और उनकी प्रशंसा करते रहे।

धीरे-धीरे शेरों की चर्चा कम होने लगी। नई चीज पुरानी हो गई और लोग यह सोचना भी भूल गए कि चिड़ियाघर में अफरीकी शेरों का जोड़ा अब भी कटघरे में रहता है या नहीं ?

कोई डेढ़ साल के बाद एक दिन मैंने अपने मित्र से कहा—"चलो, शेर के जोड़े को देख आएँ कि उनका क्या हाल है ?" हमारा मित्र अनमने मन से राजी हो गया। उसके भीतर उत्सुकता नहीं थी। सिर्फ मेरा साथ देने के लिए उसने हाँ करदी।

डा. एम. खुशदिल एक भावनाशील अध्यापक हैं। उनकी भावना का रूप है—कोई अपना काम करे न करे, तू अपना काम कर ! और कैसी भी स्थिति हो देश और समाज के लिए वे कुछ न कुछ करते रहते हैं। वे न मंडप की प्रतीक्षा करते हैं, न पंडाल की। कहूँ, वे उनमें नहीं हैं, जो यही सोचते रह जाएँ कि यह हो, तो वह करूँ और वह हो तो यह करूँ। जो हो सकता है वे वह कर गुजरते हैं और कर्म की यही श्रद्धा उन्हें अंधेरे में चांद और निराशा में आशा के दर्शन कराती रहती है। श्रद्धा की इस सुरभि से हम सब महकें।

हम चिड़ियाघर पहुँचे। वहाँ पहले जैसी भीड़ न थी। शेर साधारण बन गये थे, जैसे पण्डों के लिए गंगा।

हमने शेरों को देखा। वे जीवित थे, बिल्कुल उस अवस्था में, जैसी बन्दी गृह में कुछ वर्षों के बाद सुन्दर स्वस्थ नौजवान की हो जाती है। उनके चेहरे मुर्झा गए थे। रंग अधिक मटमैला हो गया था। काले धब्बे बुरे लगने लगे थे। शरीर सिकुड़ गया था और क़द छोटा-सा दीखने लगा था।

मैंने अपने मित्र से कहा—"यह है दासता का परिणाम।" मित्र ने कहा—"ठीक है। दासता प्राणी के शरीर तथा मस्तिष्क को ही दुर्बल नहीं बनाती, वरन् उसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुणों को भी नष्ट कर देती है।"

हमें दुख हुआ। पास खड़े एक सन्तरी से पूछा—

"ये शेर इतने कमजोर क्यों हो गए?"

सन्तरी ने कहा—"क्या बताएँ बाबू जी, बेचारों को सेर में पाव भर माँस भी नहीं मिलता। सरकार की ओर से दस सेर माँस का आर्डर है, पर इन बेचारों के भाग में दो सेर भी मुश्किल से आता है।"

मैंने सादगी से पूछा—"और बाकी कहाँ जाता है?"

सन्तरी हँसा। बोला—"बाबू जी, ऊपर वाले खा जाते हैं। क्या तुम जानते नहीं हो?"

यह सुनकर मैं चुप हो गया। अपने मित्र से बोला—"चलो, वापस चलें।"

हम कुछ ऐसे बेचैन विचार लिए हुए घर लौटे, जिन्होंने हमारे मस्तिष्क को असन्तुलित कर दिया था।

एक साल के बाद मैंने अपने मित्र से फिर कहा—'चलो शेर के जोड़े को देख आएँ।' न जाने क्यों मेरे मन में उनके प्रति सहानुभूति जाग्रत हो गई थी। मेरे मित्र ने आश्चर्य से मेरे मुँह की ओर देखा। वह मेरी आदत को जानता था। बोला—"आज तो फुरसत नहीं है, कल चलेंगे।" उसने मेरा दिल रख लिया।

दूसरे दिन हम शेरों को देखने गए। चन्द बच्चे खड़े थे और उनके नवजात शिशुओं को देख रहे थे। हमने भी देखा, दो छोटे-छोटे प्यारे बच्चे हैं। रंग पीला, छोटे-छोटे बाल, कोई बिल्ली के बराबर होंगे। उनके मुँह पर भयानकता का कोई चिन्ह न था, उनके चेहरे पर सौम्यता थी।

मैंने अपने मित्र से कहा—"यह है भूख का अभिशाप।"

मित्र ने कहा—"ठीक है। भूख, दासता, निरादर, जीवन का घोर पतन कर देते हैं। शेर के बच्चे बिल्ली बन जाते हैं।"

मित्र के इस कथन से मेरे भावों में ज्वार आ गया। मैं सोचने लगा—'हमारे देश के अधिक लोगों का यही हाल है। हरिजन, भंगी, चमार कभी मानवता को छू भी सकते हैं? सदियों से इनके बच्चे अनपढ़, निरादरित तथा भूखे रहते चले आए हैं और जाने कब तक ऐसे ही रहेंगे।"

"हमारे देश में भिखमंगों तथा फकीरों की तादाद बढ़ रही है। उनके बच्चे भी शुरू से भीख मांगना सीख जाते हैं। यह क्रम भी न जाने कितनी पीढ़ियों से चल रहा है। एक भिखमंगा अपने बालक को एक बड़ा भिखमंगा बनाता जाता है।"

फिर मुझे विचार आया—बंगाल का क्या हाल होगा? बंगाल में तो बड़ा भारी अकाल पड़ा था। बहुत दिन नहीं बीते हैं। बंगालियों को यह अकाल अब भी याद होगा। उनके बच्चे बड़े घरों की नालियों के पास बैठ जाते थे। जब जूठन के दाल चावल के दाने नाली में बह कर आते थे, तो वे उनको उठाकर खा लेते थे। यह अकाल कितना भयानक था। लोग घास, पेड़ों की पत्तियां और छाल तक खा गए। कहा तो यह भी जाता है कि बहुत-से माता-पिताओं ने अपने बच्चों को मार कर खा लिया।

मैं सोचने लगा—'ऐसे लोगों की सन्तान कैसी होगी? क्या मानवता के गुण उनमें भी विकसित हो पाएंगे?'

"देश की शताब्दियों की गुलामी, भूख, निरादर तथा असुरक्षा के कारण साधारण मानव का ही पतन नहीं हुआ है, वरन् ये दोष उनकी सन्तान में भी बीज रूप में आ गए हैं, बिल्कुल उसी तरह जैसे इन बन्दी शेरों के बच्चे बिल्ली के समान हो गए हैं।"

हम घर लौटे। शाम हो रही थी। सूरज धरती को चूम रहा था। पश्चिम के क्षितिज पर रंग बिरंगे बादल बिखर गए थे। लाल, नारंजी, सुनहरे, हरे, पीले बादलों की साड़ी पहने संध्या एक नई दुल्हन-सी प्रतीत हो रही थी।

मैंने अपने मित्र से कहा—"देखो कैसी सुन्दर शफ़क़ फूली हुई है।"

मित्र बोले—"ठीक है, थोड़ी देर में इसको अंधेरे का काला नाग डस जाएगा।"

"फिर चाँद का उदय होगा।" मैंने मुस्करा कर कहा—"और उसके बाद सूर्य का भी।"

१५ अगस्त १९४७ को उस सूर्य का उदय हो गया और देश नवनिर्माण के पथ पर तेजी से चल पड़ा, पर एक अध्यापक के रूप में और एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में भी मैं देखता हूँ कि गुलामी के अतीत में जो पीढ़ी पिस गई थी, उसे इतना पोषण अभी नहीं मिल पाया है कि वह अपने में नया उभार अनुभव करे।

देखकर मन में चोट लगती है और यह देखकर वह चोट गहरी कसक से भर जाती है कि आज भी देश में एक पूरी पीढ़ी ऐसी है, जो अभी भी पिस रही है और अपने बच्चों में उस पिसाई का नाशकारी प्रभाव छोड़ रही है।

मन डूबने-सा लगता है, पर फिर लाहौर की वह शाम याद हो आती है, जिसमें मुँह से निकला था—फिर एक चाँद का उदय होगा और उसके बाद सूर्य का भी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी सुन्दरता यों बढ़ाइए !

> सुन्दरता को बाहरी गहनों की मदद की जरूरत नहीं होती, वह तो सिंगार के बिना ही सबसे अधिक शोभा पाती है ।
>
> —अज्ञात

श्री धर्मचन्द सरावगी

अपने चेहरे की सुन्दरता को बनाए रखने के लिए विदेशों की तरह हमारे देश में भी लोग काफी खर्च करते हैं। तरह-तरह के पाउडर, रूज़, क्रीम, लिपस्टिक आदि का इस्तेमाल करते हैं। मंहगे कपड़े पहनते हैं। औरतें गहनों से सजती हैं। इन सब बातों से तड़क-भड़क भले ही प्रकट हो, रुपये का प्रदर्शन हो; लेकिन मुंह पर वास्तविक सुन्दरता नहीं आ पाती, बल्कि रोज-रोज पाउडर-क्रीम लगाने से मुंह का चमड़ा अपना प्राकृतिक रूप खो देता है और रोज इनका इस्तेमाल करने वाला यदि किसी दिन इन प्रसाधन सामग्रियों का इस्तेमाल करना भूल जाए तो उसका मुंह बहुत ही वीभत्स मालूम पड़ता है। कहना चाहिए इन प्रसाधनों से आदमी का सौन्दर्य बिगड़ता है और उसका अपना कोई रूप ही नहीं रहता।

शरीर की वास्तविक सुन्दरता स्वास्थ्य में है। मुँह पर सुन्दरता लाने के लिए क्रीम-पाउडर के बजाए अपने स्वास्थ्य को, प्राकृतिक भोजन, व्यायाम और नियमित रहन-सहन द्वारा ठीक रखना चाहिए, इससे मुंह पर अपने आप सौंदर्य और तेज रहेगा और किसी बनावटी प्रसाधन की जरूरत ही नहीं पड़ेगी।

इसके अलावा चेहरे की सुन्दरता को निखारने के लिए प्राकृतिक साधनों का सहारा लिया जा सकता है। विदेशों के प्राकृतिक चिकित्सकों ने अनुभव किया है और लोगों पर प्रयोग करके वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि प्राकृतिक साधनों का प्रयोग करने से चेहरे के सौन्दर्य की रक्षा तो होती ही है, वृद्धि भी होती है।

चेहरे की सुन्दरता बढ़ाने के लिए, मँहगे स्नो और क्रीम का लोग इस्तेमाल करते हैं। ये चीजें जिन शीशियों या डिब्बों में बिकती हैं, उनकी सुन्दरता से आकर्षित होकर लोग उन्हें खरीदते हैं, किन्तु इससे चेहरे की सुन्दरता में कोई स्थायी वृद्धि नहीं होती।

इसके बजाय उन्हें प्राकृतिक साधनों को काम में लाना चाहिए, जिन्हें घरों में ही आसानी से तैयार किया जा सकता है और कोई खर्च भी नहीं होता।

कुछ वर्षों पहले, एसिड के प्रभाव से एक व्यक्ति के शरीर का चमड़ा स्नान के बाद दर्द करने लगता था, उसमें एक तरह की चिनचिनाहट पैदा हो जाती थी, जिससे वह काफी परेशान रहता था। उसने अपने स्नान के पानी में एक प्याला अदरक का रस मिलाना प्रारम्भ किया। वह उसी पानी से स्नान करने लगा और उसकी यह परेशानी जाती रही।

यदि कोई व्यक्ति गठिया से पीड़ित हो, तो उसे भी इस तरह के जल के स्नान से लाभ पहुंचता है। अधिक परिश्रम से अथवा शरीर के किसी एक ही अंग के लगातार परिश्रम से उस अंग में जो दर्द हो जाता है, मांसपेशियाँ तनकर कड़ी हो जाती हैं, वैसी हालत में भी नहाने के पानी में अदरक का रस डालकर स्नान करने से लाभ होता है। यदि कोई व्यक्ति लगातार कुछ घंटे तक लकड़ी काटता रहे या जमीन खोदता रहे और बाहों के जोड़ों में दर्द होने लगे, तो ऐसी हालत में भी पानी में अदरक का रस डालकर स्नान करने से लाभ होता है। इसके साथ उस स्थान पर हल्की-हल्की मालिश भी करनी चाहिए।

दूध के ऊपर जो मलाई जम जाती है, चमड़े पर चिकनाहट लाने और उसे मुलायम रखने में बहुत ही उपयोगी है। बाजार में बिकने वाले तरह-तरह के मंहगे क्रीमों और स्नो पाउडरों के चक्कर में न पड़कर अपने मुंह पर मलाई की मालिश करनी चाहिए। इससे चेहरे पर चिकनाहट आती है, चमड़ा मुलायम होता है और उस पर एक चमक पैदा हो जाती है। बाजार में बिकने वाला मंहगे से मंहगा क्रीम भी इसका मुकाबला नहीं कर सकता। सबसे बड़ी बात यह है कि इसके लिए कुछ ज्यादा खर्च करने की जरूरत भी नहीं है; थोड़ा बहुत दूध तो सभी के घर में आता-होता है।

इसके साथ ही पके टमाटर के रस में शहद मिलाकर मुंह पर रगड़ने से भी चेहरे की सुन्दरता काफी बढ़ जाती है।

खीरे के टुकड़े को नींबू के पानी में भिगो कर चमड़े पर रगड़ने से चमड़े की बदरंगता जाती रहती है और चमड़ा अपने प्राकृतिक रूप में आ जाता है। इस प्रकार हम चमकदार और मंहगी चीजों के चक्कर में पड़ने से बच सकते हैं। जरूरत यह है कि हम अपने मन से यह बात निकाल दें कि मंहगी होने और सुन्दर डब्बों में बन्द होकर बिकने से ही कोई चीज उपयोगी हो जाती है। हमें सदा सीधे प्रकृति का सहारा लेना चाहिए और व्यर्थ के खर्चों और नुकसानों से बचना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह शान्त, सन्तुलित और शक्तिधर व्यक्तित्व

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

वर्ण व्यवस्था अपने मूलरूप में सर्वोत्तम समाज व्यवस्था रही है। उसकी विशेषता यह थी कि उसने टकराने वाले तत्वों को अलग अलग वर्णों में केन्द्रित कर दिया और इस तरह समाज की शांति और स्थिरता का वरदान दिया।

* ब्राह्मण को प्रतिष्ठा दी, तो क्षत्रिय को सत्ता और वैश्य को साधन-सम्पदा और शूद्र ? उसे सेवा का अधिकार दिया। क्या यह अन्याय न था ? ना, क्योंकि शूद्र उसे माना गया जो प्रयत्न करने पर भी ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य के वर्ण में प्रवेश पाने के योग्य न बन सके। जो इंजीनियर और मैनेजर न बन सके, उसे मजदूरों में भर्ती करना क्या अन्याय है।

* इस व्यवस्था में एक ऐसी लचक थी कि व्यक्ति से समाज और समाज से व्यक्ति संरक्षण भी पाता था और पोषण भी। समय के प्रवाह में यह लचक जड़ हो गई और जो कल आभूषण था, आज निगड़ बन्धन हो गया—संरक्षण, पोषण, दोनों सूख गए। तब उठा वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह। इस विद्रोह के उद्गम थे भगवान महावीर और भगवान बुद्ध।

* बुद्ध कैवल्य प्राप्त करने के बाद भी राजपुरुष थे। उन्होंने अपनी अन्त्येष्टि धूमधाम से—समारोह के साथ करने की वसीयत की थी। महावीर शुद्ध वीतराग सन्यासी थे। दोनों जब नहीं रहे, तो देश के वातावरण पर बुद्ध छाये हुए थे। उनके धर्म का राज्य और समाज पर पूरा प्रभाव था। बौद्ध विहार ही राष्ट्रीय जीवन का केन्द्र थे, पर विलास और प्रमाद का केन्द्र भी।

* यह विलास और प्रमाद इतना गहरा, भयंकर और व्यापक था कि उसमें समाज का सारा ढांचा चरमरा गया था और महावीर बुद्ध की जीवन-साधना अमृत के स्थान विष बन उठी थी।

* तभी उठा जगद्गुरु शंकराचार्य का कठोर कुठार। बुद्ध धर्म तो नहीं, पर बौद्ध समाज भारत में पूर्णतया समाप्त हो गया और वर्ण व्यवस्था एक नई और ज्वलंत शक्ति के साथ स्थापित हुई। अपने तीन लाख अनुयायियों के साथ डा० अम्बेडकर के बुद्ध धर्म ग्रहण करने तक भारत बौद्ध समाज से हीन रहा।

* गहरी खोज तो इतिहास के विद्वानों का काम है पर एक साधारण नागरिक के रूप में मेरे मन में यह प्रश्न उठा कि वर्ण व्यवस्था के विरोधी थे भगवान महावीर और बुद्ध दोनों, पर शंकराचार्य के जिस कुठार से बौद्ध समाप्त हो गए, उस से भगवान महावीर का जैन समाज कैसे बचा रह गया ?

* मैं नहीं जानता कि ऐतिहासिक विचारों के मन में यह प्रश्न उठा है या नहीं और उठा है तो उन्होंने इसका क्या उत्तर दिया, पर मेरा मन मेरे इस समाधान से सन्तुष्ट हुआ है कि बौद्ध समाज हिन्दू समाज से एकदम दूर हो गया था, जैसे इस समय सिख समाज है और जैन समाज भगवान महावीर के अनेकान्तवादी दृष्टिकोण के कारण धर्म की धारणाओं में पूर्ण स्वतन्त्र होकर भी सामाजिक सम्बन्धों में हिन्दू समाज के साथ एकत्व में बंधा रहा था—दोनों में,सामाजिक एकता थी। उसका यही फल हुआ।

* १९१९-२० के गांधी आन्दोलन में हिन्दू मुसलमान इतने समीप आए कि उनमें सामाजिकता के अंकुर फूटने लगे-मुसलमानों को मन्दिरों में घंटे बजाते मैंने देखा था। १९२४ से १९२८-२९ तक अंग्रेज सरकार इन अंकुरों को झुलसने के लिए हिन्दू-मुस्लिम दंगों की भूमिका रचती रही। १९३२ की गोलमेज कान्फ्रेंस में उसने अंग्रेजी भारत और रियासती भारत, हिन्दू और हरिजन, हिन्दू और सिख और हिन्दू और मुसलमान की विभाजक दीवारों पर पूरी तरह फौलादी प्लास्तर कर दिया-विघटन की प्रवृत्तियां पूरी तेजी से अपने काम में जुट पड़ीं।

* इन प्रवृत्तियों का बाहरी स्वरूप था-प्रान्तीय कौंसिलों में अपने वर्ण के लिये धर्म के नाम पर अलग सीटें सुरक्षित कराना। यह जहर कितनी दूर तक फैल गया था, इसका पता इस बात से चलता है कि मुरादाबाद से बदायूं तक के जिलों में फैली और आम तौर पर दूध बेचने का काम करने वाली अहीर जाति में भी यह मांग सरसराई थी कि यू० पी० कौंसिल में हमारे लिये दो सीटें सुरक्षित हों।

* इस स्थिति में यदि सर्वसाधन संपन्न जैन समाज में प्रथक सीटों की मांग सरसराहट से बढ़कर सनसनाहट तक पहुंची, तो क्या आश्चर्य ? आश्चर्य न हो, पर यह हिन्दू और जैन समाज की एकता को खंडित करने वाली बात बड़े रूप में राष्ट्र में विभाजन की वृत्ति को बढ़ाने वाली बात, तो थी ही। दिगम्बर जैन परिषद के लखनऊ अधिवेशन-

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में कुछ गरम लोगों ने जब इस मांग को प्रस्ताव का रूप देने की कोशिश की तो मैंने एक शान्त-गम्भीर और शालीन-सुदृढ़ वाणी सुनी।

यह वाणी अधिवेशन के अध्यक्ष साहू शान्ति प्रसाद जैन की वाणी थी। उन्होंने इस प्रवृत्ति को परास्त तो पहले ही झटके में कर दिया, पर मुझ पर जिस बात का गहरा प्रभाव पड़ा, वह था यह कि परास्त करके ही वे शांत नहीं हुये, अपनी सहज सहृदयता से वे तब तक प्रयत्न करते रहे, जब तक वह अस्त नहीं हो गई। इसके लिये उन्होंने बड़ा ही रचनात्मक रूप लिया कि जैन समाज के तीनों वर्गों--दिगम्बर, शवेताम्बर स्थानकवासी--की सामाजिक एकता पर पूरा जोर दिया और राष्ट्रीय दृष्टि विशाल जैन संघ के एकीकरण की ओर लोगों को अभिमुख कर उन्हें विघटन की उस प्रवृत्ति से विरक्त कर दिया।

यह साहू जी के जीवन को उनके विशिष्ट व्यक्तित्व को समझने के लिये एक सूक्ष्म दिशा है कि जैन समाज एक कट्टर पंथी समाज रहा है और उसके बड़े आदमी कट्टरपन का सहारा लेकर ही बड़प्पन पाते रहे हैं, पर साहू जी ने इस सरल मार्ग के विरुद्ध उस कट्टरपन पर चोट की-उसे ढहाकर सुधार के सूर्योदय का मार्ग बनाने में अपनी शक्ति लगाई और जैनियों और हिन्दुओं की उस चिरंतन सामाजिक एकता को टूटने से बचाने में तो अपनी शक्ति का उपभोग किया ही, जैन समाज के तीनों सम्प्रदायों को समीप लाने में भी घोर परिश्रम किया। कलकत्ता का वीर शासन जंयती महोत्सव उनकी इस भावना का एक विराट प्रदर्शन ही तो था।

एक स्वच्छ सामाजिक और सामासिक-विशाल राष्ट्रीय समन्वय दृष्टि साहू शान्ति प्रसाद के व्यक्तित्व की विशेषता रही है। इस दृष्टि के लिये उन पर फूल बरसे हों, ऐसा नहीं है तेज जहरीले शूल भी चुभे हैं। हाँ, यह बड़ी बात है, पर बहुत बड़ी बात है यह कि उन शूलों की चुभन में उनके पैर स्थिर रहे हैं और चेहरा स्निग्ध, जैसे वे पहले ही जानते हों कि सुधार की राह शूलों की राह है।

१९५० में दिगम्बर जैन परिषद का वार्षिक अधिवेशन दिल्ली में हुआ। सभापति थे साहू शांति प्रसाद के अग्रज श्री श्रेयांश प्रसाद जैन। इस में साहू जी की उस स्वच्छ सामाजिक और सामासिक-विशाल राष्ट्रीय समन्वय दृष्टि की बड़ी कठोर परीक्षा हुई। १९५० की २६ जनवरी को स्वतंत्र भारत का संविधान देश में लागू हो गया था। यह संविधान लिंग, वर्ण, धर्म वर्ग की समानता-एकता घोषित करता है। इस घोषणा से हरिजन मंदिर प्रवेश का अधिकार पाते हैं। इस अधिकार की कल्पना से जैन-समाज में बड़ी भूकम्पी खलबली मची। यह खलबली इतनी प्रचंड थी कि बम्बई की विधान सभा में यह प्रस्ताव पास हो गया कि बम्बई मंदिर प्रवेश कानून से जैनी मुक्त हैं।

यह भयंकर बात थी, क्योंकि यह जैन समाज और हिन्दू समाज की उस एकता को खंडित करती थी, जिसके विरुद्ध साहू जी गुलाम भारत में लड़ते रहे थे। जैन समाज के कट्टर पंथी नेता पूरे जोर में थे और जैन समाज के सबसे बड़े धर्म नेता मुनि शांति सागर जी के लम्बे अन्न त्याग ने उनके जोर को प्रचंड कर दिया था। साफ साफ कहा जाता था कि यदि दोनों समाजों की एकता मान ली जाती है, तो फिर हिन्दू कोड बिल जैसे निर्णय भी जैन समाज पर लागू होंगे। वातावरण इतना विरोधी था कि जैन समाज की सुधारक संस्था दिगंबर जैन परिषद ने भी अपने मुजफ्फर-नगर-अधिवेशन में हरिजनों के मंदिर-प्रवेश पर साफ साफ कुछ न कर एक गोलमाल प्रस्ताव पास दिया था कि सरकार इस संबंध में कार्यवाही करे, उसमें जैन समाज नेताओं से भी सलाह ले, क्योंकि मंदिरों की पूजा विधि अलग ढंग है। साहू जी सचेष्ट और सन्नद्ध थे दिल्ली-अधिवेशन में यह माया टूटे और सामाजिक एकता का मध्याकाश में प्रदीप्त हो, पर पंथी लोग जानते थे कि इस समय सुधार के हाथी को रोक न पाए, फिर यह कभी कहीं न रुकेगा।

अधिवेशन शाम को था। दिन खबरें मिलती रहीं कि मुनिप्रवर शांति सागर जी की सन्निधि में शाम अधिवेशन को भंग कर डालने योजनाएं बन रहीं हैं। ठट्ठ के आदमियों के और सब प्रचंडता उफने हुए। बात बात में अड़ने लड़ने को तैयार। श्री साहू शांति प्र के तत्वावधान में बना हरिजन मं प्रवेश-प्रस्ताव स्पष्ट, आदेशात्मक, क्रांतिकारी। मैंने अधिवेशन के अध्य श्री श्रेयांश प्रसाद जी से कहा—हरि प्रस्ताव जिस रूप में है, उस पर भयंकर झमेला होगा, इस लिए प्रस्ताव को आज या अभी न लाएँ, कैसा है ? पूरी संजीदगी से बोले हम यह प्रस्ताव पास न करा सकें, फिर परिषद के जीने से ही क्या लाभ साहू शांति प्रसाद जी के रोम रोम छाये जिस विशाल राष्ट्रीय जैन संघ अनुभव मुझे लखनऊ-परिषद में था, यह उसका स्वरूप-दर्शन था।

प्रस्ताव के पेश होते ही टोका टो फिर हल्ला, जोशीले उजड्ड तमतमाती मुखाकृतियां, गालियां ट्रेंड लोगों द्वारा वेदी घेरना, धमकियां, गर्जनाएँ और वेदी पर आना और दिखा दिखा कर आ चढ़ाना, घूंसे उछालना। इन घूं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेहरों के बीच कुछ शान्त चेहरे, इन भूकम्पों के बीच एक दृढ़ निश्चय-प्रस्ताव ज्यों का त्यों रहा। निश्चय की इस दृढ़ता के आधार स्तम्भ थे—साहू शांति प्रसाद जैन, मक्खन और फौलाद के मेल से निर्मित एक व्यक्तित्व। कवि दिनकर ने एक दिन उनके बारे में कहा था—"जात बनिये की, स्वभाव क्षत्रिय का।" बनिया वह, जो बनाये और क्षत्रिय वह जो आन के लिए जूझे। सचमुच साहू शान्ति प्रसाद में दोनों गुण पूरी मात्रा में हैं। उन जैसा आत्म-विश्वास दुर्लभ है।

परिवार का बटवारा हुआ, तो उन्हें वह ढेरी मिली, जिसमें झंझट थे और वे झंझावाती झंझट आप ही आप सुलझ गए। तीन जूट मिलें उन्हें मिलीं। तीनों में शेयर बहुमत तो डालमिया-जैन-ग्रुप का था, पर तीनों की व्यवस्था शेयर अल्पमत के अंग्रेजों के हाथ में थी। इंगलैंड की प्रिवि कौंसिल में यह भारत का अंतिम मुकदमा था। अंग्रेज बनाम भारतीय के रूप में इस का खूब प्रचार हुआ, पर न्यायाधीशों ने जाति से न्याय को अधिक महत्व दिया और मिलों की व्यवस्था साहू शांति प्रसाद को सौंप दी। इस घटना ने साहू जी का भाग्य ही बदल दिया, पर यह अपने सर्वोत्तम को खतरे के हवनकुण्ड में झोंकने का दाव ही तो था।

सुभाष बाबू जब कलकत्ता कारपोरेशन के मेयर थे, तो अलीपुर में १६-१७ एकड़ की एक ज़मीन पर पार्क बनाने का निश्चय हुआ। उस ज़मीन का नाम पड़ा अलीपुर पार्क प्लेस, पर उस पर पार्क न बन सका। बात यह हुई कि उस ज़मीन पर कई सौ झोंपड़ियाँ पड़ी हुई थीं और उनमें वे लोग रहते थे, जिनसे १९२५-२६ में यशस्वी पुलिस कमिश्नर सर टेगार्ट जूझ कर हार गया था, छुरा चाकू ही इनकी भाषा थी—एक से एक नम्बरी।

अनेक मेयर और कई पुलिस कमिश्नर जब भय और प्रलोभन के प्रयोगों से थक गए, तो कारपोरेशन ने इस ज़मीन के बेचने के लिए विज्ञापन दे दिया। सभी उस ज़मीन की कहानी जानते थे, तो किसी ने उस विज्ञापन को नहीं सूंघा, पर साहू शांति प्रसाद ने वह ज़मीन खरीद ली। सबने सुना, तो किसी ने मुंह बनाया, कोई व्यंग से मुस्कराया, पर वह ज़मीन गिने दिनों में खाली हो गई और उस पर उनका सुन्दर मकान बन गया।

पच्चीस वर्ष बहुत होते हैं और कुछ भी नहीं होते। साहू शांति प्रसाद पच्चीस वर्षों में व्यक्ति से एक शक्ति बन गए। बिना अतिशयोक्ति के देश की शक्ति थी यह एक व्यक्ति की शक्ति। १९५५ में मैंने एक दिन घूमते घूमते उनसे पूछा—आपके हाथ में काफी बड़े उद्योग धंधे हैं, फिर आप नए-नए उद्योग-धन्धों की योजनाएं क्यों बनाते रहते हैं? मतलब मेरा यह कि आपका उद्देश्य क्या है?

बोले—"दुनिया में जिन चीजों के मिलने से सुख होता है, वे सब काफी तादाद में मुझे मिल चुकी हैं। मैं दस रुपये कमाऊं या दस करोड़, उनसे मुझे अब और सुख तो नहीं मिल सकता। इस लिए स्पष्ट है कि धन के लिए तो मैं यह सब करूँगा क्यों? बात असल में यह है कि बाहर कुछ साधन इकट्ठे होगए हैं और भीतर अनुभव, तो सोचता हूँ कि देश को परिपूर्णता के लिए जिन नए कामों की जरूरत है, उनमें अपनी शक्ति लगाऊं। शक्ति रहते काम न करना, तो प्रमाद ही है।"

खाद्य मंत्री श्री रफी अहमद किदवई (स्वर्गीय) ने एक बार मुझ से कहा था—शांति प्रसाद खुद भी ऐसी बातों से बचते हैं और दूसरों को बचने का बढ़ावा देते हैं, जिनसे सरकार की माली पालिसी को चोट पहुंचे। एक बार उन्होंने ही कहा था—शांति प्रसाद ने लाखों के लाभ का लोभ जीतकर बाजार में चीनी का हड़कम्प मचने से बचा दिया। समय की बात, वह घटना मेरे सामने घटी थी, इसलिये उसका पूरा हाल मैंने उन्हें सुनाया, तो बोले—'सब सरमायादारों में यह स्प्रिट हो, तो तरक्की की गाड़ी में पर लग जाएं।' यों ही मैंने कहा—'अगर न हो?' बोले—"तब पैदा की जायगी।" अवसर का पूरा लाभ उठाने के लिये मैंने कहा—"क्या डंडे से पैदा करेंगे?" पूरी संजीदगी से बोले—"डंडे से नहीं, दाव से।" दुख है देश में उनके बाद उस दाव का कोई विशेषज्ञ नहीं रहा और इसलिये तरक्की की गाड़ी में पर नहीं उग पाए।

भारतीय चेम्बर आफ कामर्स एंड इंडस्ट्री के अध्यक्ष पद से साहू शान्ति प्रसाद ने जो भाषण दिया, प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने अपना उद्घाटन भाषण देते हुये उसके सम्बन्ध में जो कुछ कहा था, उसका सार यह था कि मुझे उसके सम्बन्ध में एक भी शब्द नहीं कहना है और मैं उसकी विचार-दिशा से पूरी तरह सहमत हूं।

१९५५ में वित्त मन्त्री श्री टी० टी० कृष्णामाचारी ने डालमियानगर का निरीक्षण करने के बाद कहा था—"आइ एम वैरी ग्रेटफुल टु मिस्टर एस० पी० जैन फार ए मोस्ट एन्जाएबिल एण्ड इन्स्ट्रक्टिव डे दैट आई स्पेंटएट डालमिया नगर। दी टाउनशिप रिप्रेजेंट्स टु बी दी सिम्बल आफ राइजिंग टाइड आफ इन्डस्ट्रियलाइजेशन इन इंडिया। मे देअर बी नो लिमिट टु दी एक्सपेंशन आफ दी इन्डस्ट्रियल टाऊन।—मैंने डालमिया नगर में जो अत्यन्त आनन्दमय और मार्ग निर्देशक दिन बिताया, उसके लिए मैं श्री शांति प्रसाद जैन का बहुत आभारी हूँ। यह बस्ती मेरे लिए भारत के उठते हुए औद्योगिक ज्वार की प्रतीक है इसका विस्तार सीमाहीन हो।" उल्लेखनीय बात यह है कि कहते कहते श्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृष्णमाचारी का चेहरा और स्वर दोनों ही आशीर्वाद की मांगलिक भावना से उद्दीप्त हो उठे थे।

साहू शांति प्रसाद ने राष्ट्र के औद्योगिक जीवन को और हिन्दी पत्रकारिता को ऊँचा उठाने में जो कार्य किए हैं, वे एक स्वतंत्र लेख का विषय है। इस समय तो इतना ही कि वे महत्वपूर्ण हैं। उस समय के केन्द्रीय—उद्योग व्यापार—मंत्री श्री मुरार जी देसाई ने डालमियानगर में कहा था—"एटमास्फेयर आफ दिस प्लेस शुड परवेड थ्रु आउट दी कंट्री—यहाँ जो वातावरण है, उसे सारे देश में फैलाना चाहिए।" साहू जी के कार्य को ग्रेट एफर्ट (महान प्रयत्न) कह कर वे सत्पुरुष और सत्कर्म के प्रति आत्मीयता के रस में डूब गए थे—"फार दिस आई कन्वे माई थैंक्स टु ब्रादर शांति प्रसाद जी"—

राज पुरुषों का क्रोध भी हानिकारक है और प्रशंसा भी। यह इतिहास की समीक्षा का प्रश्न है कि राजपुरुषों के क्रोध से अधिक संहार हुआ है या उनकी प्रशंसा से। शायद यह समीक्षा इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि उनके क्रोध से बहुत से व्यक्तित्व प्रदीप्त हुए हैं और प्रशंसा से मूर्च्छित, तो उनकी प्रशंसा ही अधिक संहारक है। यह प्रशंसा शक्ति के शिखर पर चढ़ते व्यक्तित्वों से कहती है तुम मुझे अपनी आत्मा दो. मैं तुम्हें सब कुछ दूंगी—और अक्सर लोग हैं कि यह सब कुछ पाने के लिए अपनी आत्मा की जमानत दे देते हैं।

साहू शांति प्रसाद के सामने भी यह राह थी, पर वे उस पर नहीं चले और उन्होंने उन नीतियों और व्यक्तियों का खुले आम विरोध किया, जिन्हें देश के हितों के विरुद्ध समझा। उनके व्यक्तित्व की जिस क्रान्तिकारी क्षमता का प्रदर्शन गिने दिनों में उद्योग धन्धों की एक नई दुनिया बसाने में हुआ था, जैन समाज को राष्ट्र का समन्वयी अंग बनाने में हुआ था और हिन्दी पत्रकारिता को नई शक्ति देने में हुआ था, उसी का यह भी प्रदर्शन था। कूटनीतिज्ञ चाणक्य और मेक्यावली समान रूप से मानते हैं कि क्षमता-शक्ति के जन्म के साथ विरोध भी जन्म लेता है। समाज में उन्होंने विरोध सहा था, राजनीति में भी विरोध उफना और उसने उन्हें एक अग्नि-परीक्षा में ला बैठाया, हालांकि उन व्यक्तियों को बाद में समाज और शासन में भी लांछित होना पड़ा और उन नीतियों के कुफल भी देश के नव निर्माण की राह में कांटे बन कर उगे, जिनका उन्होंने विरोध किया था।

अग्नि-परीक्षा का मुहावरा हमारे देश की भाषा को सीता का उपहार है। रावण अपना सब कुछ सीता के चरणों में रखने को तैयार था, यहां तक कि मन्दोदरी की जगह उसे पटरानी बनाने को भी, पर सीता की वफादारी राम के साथ अखंड थी इसीलिए वह अशोक वाटिका में ही पड़ी रही और रावण के स्वर्ण महलों में नहीं गई। फिर भी राम ने विजय के बाद जब सीता उनके पास अधमरी-सी आई, तो आगे बढ़कर उन्होंने उत्साह से उसे नहीं लिया, गम्भीरता से पूछा—"सीता क्या तुम पवित्र हो? यदि हां, तो अग्नि परीक्षा दो।" और वह अग्नि-परीक्षा सीता को देनी पड़ी। साहू शांति प्रसाद जी को भी गहरी वफादारी के बावजूद अग्नि-परीक्षा देनी पड़ी है, पड़ रही है।

कुछ दोष युग के होते हैं, कुछ वर्गों के। साहू जी में भी वे होंगे, पर विशेषज्ञ ही नहीं, साधारण नागरिक भी अनुभव करते हैं, आपसी बातचीत में कहते हैं कि इस अग्नि-परीक्षा को ईंधन कहीं और से ही मिला है।

दिल्ली के एक अंग्रेजी दैनिक के दफ्तर में एक दिन कुछ लोग कह रहे थे—एस० पी० और टाइम्स-ग्रुप को तो हम अब खत्म करा ही देंगे और बस उसके बाद जमेगा हमारा रंग। इस अग्नि-परीक्षा में ईंधन और तेल डालने में ही हैं ये लोग, पर इन्होंने शायद का वह श्लोक नहीं पढ़ा, जिसका कि चोर, गीध और सांप इन की कामना कभी पूरी नहीं होती, इसी यह दुनिया बसी हुई है।

१९३९ में हिटलर और स्टालि यानी जर्मनी और इसके गठबंधन में की ज्वाला जब भड़क उठी, तो ओर से रूस और स्टालिन पर लाख बरसा कि उसने सब सिद्धातों को छो कर एक साम्राज्यवादी तानाशाह देश का साथ दिया है। प्रसिद्ध विचा श्री एम०एन० राय ने उन दिनों एक लिखा था और उसमें भविष्यवाणी थी कि मुझे विश्वास है कि एक दिन साम्राज्यवादी तानाशाही को सम करने का श्रेय भी लोग स्तालिन रूस को ही देंगे। मेरे अन्तःकरण में यह अशंसय—दीप प्रज्ज्वलित है कि अग्नि-परीक्षा में साहू जी तिनका स्वर्ण ही सिद्ध होंगे। उनकी वर्तम स्थिरता और संतुलन भी व्यक्तित्व एक स्प्रहणीय चमत्कार ही है।

उस दिन वे खाने की मेज पर लोक सभा के कई प्रभावशाली स और राजस्थान के एक मंत्री भी थे। साहू जी के एक आत्मीय आए कुरसी पर बैठते-बैठते बोले—"मैं अ संत से कल मिला था और आपके भ की बात भी कही थी। उन्होंने है कि शांति प्रसाद का जितना काम अभी वह उससे बहुत ज्यादा बढ़ेगा।

सुनकर साहू जी बहुत जोर से और बोले—"बदनामी भी बढ़ती रहे और काम भी बढ़ता रहेगा।" इस में आत्म विश्वास की जो दीप्ति थी इस स्वर में सहिष्णुता और स्थैर्य का शान्त सन्तुलन था, उसकी ओर सब आदरपूर्ण ध्यान गया और मुझे याद गया कवि दिनकर का वह वाक्य—"ब बनिये की है, स्वभाव क्षत्रिय का।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

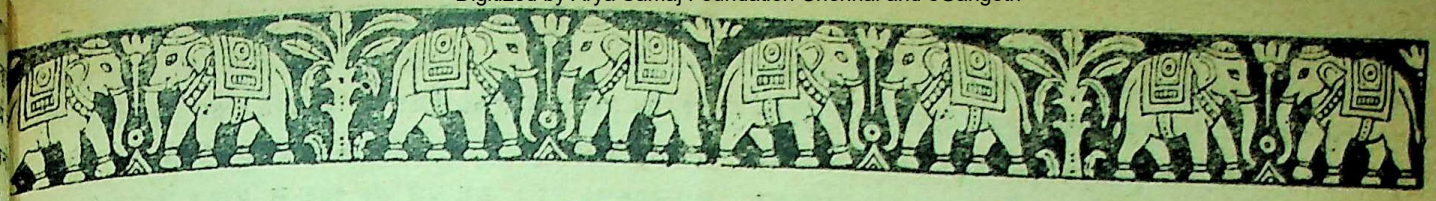

काले पानी की कहानी

श्री उपेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय, सम्पादक 'युगान्तर'

कालेपानी की जेल में पहुँचते न पहुँचते, हम में से जो ब्राह्मण थे, उनके जनेऊ निकाल लिए गए। हिन्दुस्तान की जेलों में इस किस्म का कोई कायदा नहीं, पर कालेपानी की जेल में यही कायदा है। जेल तो जगन्नाथ का क्षेत्र है—जाति भेद और धर्म तो मर कर कभी का भूत बन गया होगा यहाँ, पर मुसलमान की दाढ़ी और सिख की चोटी पर हाथ साफ नहीं किया जाता—बिचारे ब्राह्मणों के जनेऊ से ही दुश्मनी है। अपने जनेऊ उतरवाकर हम भी दूसरे कैदियों के साथ कैदी बन गये।

मज़ा तो यह है कि किसी ब्राह्मण को जनेऊ उतारने से नाहीं करते नहीं देखा! इस दुनिया में जो गिरकर मार खाए, उसे मारने के लिए सभी हाथ ऊँचा उठाते हैं। बहुत दिनों के बाद एक पंजाबी ब्राह्मण राम रक्षा को जनेऊ उतारने में झगड़ते देखा। उसने जेलर से कहा कि अगर जनेऊ न होगा तो वह खाना न खायगा। वह स्याम, चीन, बरमा और जापान सब जगह घूमा था, इस लिए यह नहीं कहा जा सकता कि वह पुराण पंथी सनातन धर्मी था, लेकिन सचाई और अपने हक के लिए उसने जेल के इस कायदे की मुख़ालफत की। कमजोर की बात को कौन सुनता है—उस का जनेऊ निकाल लिया गया—उसने भी खाना-पीना छोड़ दिया। चार दिन तक वह बिलकुल भूखा रहा। पाँचवें दिन से उसके नाक में रबर की नली डालकर पेट में दूध उतारा जाने लगा। उस वक्त हड़ताल की लहर बह रही थी, इसलिए, राम रक्षा जेलवालों से इतना लड़ा था। बरमा से कालेपानी आते हुए रास्ते में तरह तरह की तकलीफों से उसकी तन्दुरुस्ती पहले ही बिगड़ गई थी, अब की बार क्षय रोग दिखाई दिया। थोड़े दिन बाद वह अस्पताल भेजा गया और वहीं मर गया।

जो कुछ हो, मर कर जिन्दा रहना हमें न आया। हम मरे नहीं, बल्कि जेल का अनाज खाकर जीते रहने की हमारी दृढ़ प्रतिज्ञा थी। यह भी कम बहादुरी की बात न थी। मोटे मोटे रंगून के चावल, कच्ची और जली रोटी, जले हुए आलू और छोटे छोटे कंकर मिली दाल खाकर जिन्दा रहने की प्रतिज्ञा करना हम समझते हैं आसान काम नहीं है। फिर हमने बारह बरस इसे खाकर ही गुजारे! वह तरकारी देखकर हमारे देश के भले आदमियों की आँखों में आंसू आए बिना नहीं रह सकते। कलकत्ते से जहाज में बैठकर हम चार दिन में कालेपानी पहुँचे थे। इन चार दिनों में हमें खाने के लिए सूखी चने की दाल मिली थी। चार दिन के भूखों को वह काले पानी का खाना भी पहले दिन तो अमृत जैसा लगा था।

जेल में दाखिल होते ही जेलर साहब ने समझा दिया था कि हम किसी से बातचीत न करें—आपस में भी न बोलें—अगर बोलेंगे, तो सजा पाएँगे, क्योंकि हम 'बमकेस' के आसामी थे। अब काम का नम्बर था। काले पानी टापू में नारियल बहुत पैदा होते हैं। ये सब सरकार की सम्पत्ति है, इसलिए इनका कारोबार सरकारी ही है। जेलखाने में भी नारियल का ही कारोबार होता है। नारियल के छिलकों को कूटना—फिर उसके तारों की रस्सी बनाना। नारियल को कोल्हू में डालकर तेल निकालना, नारियल की खोल के हुक्के तैयार करना, यही सब जेलखाने के काम हैं। इनके अलावा एक बेंत का भी कारखाना है, पर उस में छोटी उमर के लड़के ही काम करते हैं।

बैल की जगह कोल्हू में जुतकर उसे घुमाना और छिलके कूटना ये दो काम बड़े सख्त थे। हम जो आदमी बम केस में गए थे, उनमें से वारीन्द्रकुमार और अविनाश चन्द्र तो कमजोर बीमार से थे, इसलिए उन्हें छिलके से रस्सी बनाने का काम दिया गया, पर हम सब लोगों की तकदीर में छिलके कूटने का काम था। सवेरे उठकर टट्टी से फारिग होकर हम लोगों को जरा-सी गंजी पिलाई जाती थी और इसके बाद लंगोट कसकर छिलके कूटने पर जोत दिये जाते थे हर एक आदमी को बीस नारियलों के सूखे छिलके दिये जाते थे। छिलकों को एक लकड़ी के तखते पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिछाकर लकड़ी की मोगरी से जोर जोर से पीटना पड़ता था। पीटते पीटते उनके ऊपर का बक्कल उतर जाता था, तब उन्हें पानी में भिगोकर फिर कूटना पड़ता था। कूटते-कूटते उनके भीतर की भूसी बिल्कुल झड़कर सिर्फ रेशा ही रह जाता था। इन तारों को धूप में सुखाकर एक सेर का एक बण्डल बनाना पड़ता था।

पहले दिन हमें इस छिलका कूटने के काम को समझने में ही देर लगी। फिर जब उसे कूटने लगे, तब तो कुछ न पूछिए, तमाम हाथ में छाले हो गए। तमाम दिन सिर मारकर किसी तरह आध सेर तार तैयार किए। बलिदान के बकरे की तरह काँपते काँपते जब तीन बजे अपने काम का दाखिला करने गये, तब धमक के मारे अकल ठिकाने आ गई। शुद्ध असंकोच गालियों को हजम करने की तो कभी आदत थी नहीं, पर आज मालूम हुआ कि इस जेल में कड़ी मेहनत के बाद गालियां खाकर जिन्दगी बसर करनी होगी!

गालियों की अजब बहार थी—शरद बाबू की किताबों में पढ़ा था कि हिन्दुस्तानियों की गालियां बड़ी सीधी सादी और हृदय तक असर करने वाली होती हैं, पर मन में विचार आया कि जो लेखक और साहित्य सेवी गालियों पर लिखना चाहे, उसे चाहिए कि कुछ दिन इस कालेपानी की जेल में निवास कर जाय। हिन्दुस्तानी, पंजाबी, पठान, बलोची मिलकर जो अपनी सुमधुर भाषा में गाली देते हैं, वह गाली-साहित्य जिसकी तकदीर में लिखा है, उसके अलावा और कोई उसका मिठास नहीं समझ सकता। सात जन्म तक भी यदि गंदी गालियों के लिए बदनाम हमारे भंगी चमार इस गाली-शास्त्र का अध्ययन करें, तो इतने पारंगत शायद न होंगे। गालियों में भी इतना साहित्य भरा है, यह पहले मालूम न था।

खैर, छिलके कूटकर और कंकर मिली दाल का पानी पीकर किसी तरह दिन बिताने लगे, पर देवताओं के बाद उपदेवताओं की दया से जिन्दगी किरकिरी होने लगी। वार्डर, पेटी आफिसर, टंडेल और जमादारों के मारे नाक में दम था। मामूली कैदी छः सात साल जेल भोगने के बाद अफसर बना दिया जाता था। यह कैदी अफसर बन कर यमदूतों की तरह नाक में दम करते थे। रामलाल जरा बैठा है इसलिए मारो उसके दो घूंसे मुस्तफा आवाज देते ही नहीं खड़ा हुआ, इसलिए उसकी डाढ़ी नोच लो, बकाउल्ला पाखाने से देर में निकला, इसलिए उसकी कमर पर दो डण्डे लगाओ, जिससे पाखाना जल्दी हो, इसी तरह के प्रयोगों से ये लोग जेल की व्यवस्था चलाते थे।

कैदी लोग गले में भारी गोली डालकर और उसके भीतर एक गड्ढा बनाकर उसमें पैसे रखते हैं। कैदियों को तंग करके उनसे पैसे निकलवाना इन लोगों का खास काम था, पर हमारे पास न पैसा था न कौड़ी—हम कहाँ जाएँ? वारीन्द्र बीमार था, इसलिए अस्पताल से उसे १० औंस दूध मिलता था। यह दूध वह खुद न पीकर पेटी-अफसर खुदादाद के मुंह में डालता था। यह खुदादाद बड़ा नमाजी मुल्ला शायद खुदा का असली बेटा ही था। मुछ कतरे मुँह से दूध का स्वाद लेकर दाढ़ी पर हाथ फेरते-फेरते वह कहता—खुदा ने यह क्या अजब चीज पैदा की है।

सबसे बड़ा बात यह थी कि अफसरों की शिकायत करके कौन अपने सिर भूत बुलाए। जहाँ रक्षक ही भक्षक वहाँ की कथा ही क्या, पर करीब पाँच छह महीने बाद नासिक, खुलना और इलाहाबाद से दस-बारह राजनीतिक कैदी और आ पहुंचे। हम सब राजद्रोहियों की तादाद मिलाकर बीस-बाइस हो गई। इसी वक्त एक पुच्छल तारे की तरह नये जेल सुपरिण्टेण्डेण्ट का उदय हुआ। उसके आते ही हम कुछ राजद्रोहियों को कोल्हू में जोतकर तेल निकलवाने का कायदा बनाया। बिचारे उल्लासकरदत्त को सरसों का तेल निकालने के लिए बैल वाले कोल्हू में जोत

सींखचे बोल उठे

दिया। यह कोल्हू हमारे देश के कोल्हू की तरह ही था। बाकी हेमचन्द्र, सुधीरचन्द्र, इन्द्रभूषण को हाथ से चलाने वाले कोल्हू पर लगाया।

हमें कोल्हू में बैल की जगह जोतकर तेल निकालना शुरू किया गया—मजा यह कि बैल भी हमीं और तेल भी हमी! यह काम क्या—बाकायदा कुश्ती थी। आठ-दस मिनट में दम सूख कर जीभ तालू से चिपट गई। एक घण्टे में हाथ पैर निकम्मे हो गए। गुस्से के मारे जेल सुपरिण्टेण्डेण्ट और सब अफसरों का श्राद्ध कर डाला, पर यह सब बेफायदे था। दस बजे खाने के लिए जब नीचे उतरा, तब दोनों हाथों में छाले पड़ गये थे—आँखों के आगे लाल पीले तिरमिरे थे, कानों में झींगर की आवाज थी। उतर कर देखा कि बूढ़े हेमचन्द्र कोने में बैठे हैं। पूछा—भाई साहब, क्या हाल हैं? भाई साहब ने दोनों हाथ दिखाकर कहा 'दारू भूतो मुरारि'—मुरारि लकड़ी हो गए—पर हाथ चाहे पत्थर हों या लकड़ी, बूढ़े हेमचन्द्र की आत्मा का जोर सदा वैसा ही देखा—चाहे जैसी बड़ी तकलीफ हो, पर उन्हें सदा तकलीफें भोगकर आगे का अपना निश्चय करते देखा। जेल में तकलीफों से घबराकर हममें से कोई कुछ कर गुजरने का इरादा करता, तब हेमचन्द्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्र अपने हृदय की पवित्र शक्ति उसमें भरकर दुख सहने के लिए उसे कड़ा कर देते।

इसी तरह दिन भर कोल्हू घुमाकर और रात भर आधे मुर्दे की तरह खड़े रहकर एक महीना काटा।

एक महीने बाद हमारा गिरोह कोल्हू पर से तब्दील किया गया—दूसरा आया। पहले सुपरिण्टेण्डेण्ट ने अविनाशचन्द्र को बीमार और क्षय रोग की सम्भावना होने से कोल्हू से दूर रखा था, पर उसके तब्दील होकर जाते ही दूसरे ने आकर उसे भी कोल्हू पर भेज दिया। इलाहाबाद के 'स्वराज्य' के सम्पादक श्रीयुत नन्दगोपाल को भी कोल्हू घुमाने पर लगा दिया।

नन्दगोपाल पंजाबी खत्री था, लम्बा चौड़ा जवान। राजद्रोह के अपराध में दस साल के लिए कालेपानी में आया था। कोल्हू पर जाकर एडीटर साहब ने एक नया फसाद खड़ा कर दिया। पहले तो बोले—"इतने जोर से मैं कोल्हू नहीं चला सकता।" कोल्हू खूब धीरे धीरे चलने लगा; नतीजा यह हुआ कि दस बजे तक चौथाई भी तेल न निकला।

दस बजे खाना खाने के लिए नीचे आते थे और खाकर मामूली कैदी तो पांच चार मिनट में ही कोल्हू घुमाने चले जाते थे। जेल के कानून के मुताबिक दस से बाहर तक का समय खाने और आराम करने का था, पर कैदी न ठहरते थे, क्योंकि १५ सेर तेल निकालना बड़ा मुश्किल काम था। नन्दगोपाल को यह डर न था। पेटी-अफसर ने आकर उसे झटपट खाकर कोल्हू चलाने को कहा। नन्दगोपाल ने हंसते हुये तन्दुरुस्ती के कायदे कानून समझाकर उसे कहा कि खाना खाकर फौरन काम करने से मेदे की नलियों पर जोर पड़ने से किस तरह हाजमे की ताकत मारी जाती है और उसे जब दस बरस सरकार बहादुर का मेहमान रहना है, किसी तरह से अपनी तन्दुरुस्ती बिगाड़ कर वह सरकार को बदनाम करना नहीं चाहता।

रिपोर्ट जेलर के पास पहुंची। जेलर ने आकर देखा कि नन्दगोपाल डाक्टरों की राय के मुताबिक एक-एक गस्से को बत्तीस-बत्तीस दफा चबाकर धीरे-धीरे गले के नीचे उतार रहे हैं। जेलर साहब ने गरज-गरज कर एडीटर साहब को यह बात समझाई कि अगर वक्त पर काम न हुआ, तो बेत मारे जाएँगे। हँस-हँस कर नन्दगोपाल ने जेलर साहब से कहा—"सरकार बहादुर ने १० से १२ बजे तक का वक्त खाने और आराम करने के लिए मुकर्रिर कर दिया है, इसलिए मैं राज भक्त आदमी सरकार के कानून को किसी तरह नहीं तोड़ सकता; बल्कि यह भी देखता रहूँगा कि आप कहीं सरकार के कानून को न तोड़ दें। कहने की जरूरत नहीं कि जेलर साहब गुस्से में गरजते हुए विदा हुए। खाना खा-पीकर नन्दगोपाल उठे। पेटी-अफसर ने समझा कि शायद अब एडीटर साहब काम पर लगेंगे, पर नन्दगोपाल एक कम्बल बिछाकर मजे से सो रहा। खूब बकने-झकने, पुकारने-चीखने से भी न उठा। सत्याग्रह में वह महात्मा गान्धी से कम न था। बारह बजे उठ कर नन्दगोपाल ने कोल्हू चलाना शुरू किया—करीब दो घण्टे चलाया होगा जब देखा कि सात सेर के अन्दाज तेल हो गया तो बाकी नारियलों को छोड़ कर आप मजे में बैठ गए। अफसर ने कहा—"अभी तो आधा ही तेल निकला है, बाकी आधा कौन निकालेगा?" नन्दगोपाल ने कहा—"मुझे क्या मालूम कौन निकालेगा? मैं आदमी हूँ, कोल्हू का बैल तो हूँ ही नहीं, जो दिन भर कोल्हू चलाऊं। खाने को छः पैसे का भी नहीं देते और तेल निकलवाते हैं १५ सेर।"

जेल के अफसरों में तर्जन-गर्जन शुरू हुआ, पर नन्दगोपाल वैसे ही हँसते मुँह निर्विकार परमपुरुष की तरह बातें कर रहा था। सुपरिण्टेण्डेण्ट ने देखा कि नन्दगोपाल से १५ सेर तेल निकलवाना असंभव है, तो पैरों में डण्डा बेड़ी डाल कर उसे काल कोठरी में अकेला बन्द कर दिया।

इधर कोल्हू चलाते-चलाते अविनाशचन्द्र अधमरा हो गया। दस बजे के बाद उसकी काम करने की ताकत ही न रहती। हमारे साथ वालों में इन्दुभूषण सबसे ताकतवर था। दूसरे कैदियों से कह सुन कर वह अविनाश का बाकी काम करवा दिया करता था।

इसी तरह एक महीना और बीता। जेलर ने नन्दगोपाल से मामले को साफ किया। यह शर्त ठहरी कि चार दिन नन्दगोपाल पूरा काम कर दे, फिर उसे कोल्हू चलाने का काम न दिया जाएगा। नन्दगोपाल भी इस बात पर राजी हो गया और थोड़ा बहुत करके कोल्हू से निकला, पर अधिक दिन नहीं। कुछ दिन बाद फिर उसे कोल्हू में दे दिया। काम करने से फिर उसने इनकार किया—पैरों में बेड़ियां डालकर फिर उसे अकेला कालकोठरी में बन्द कर दिया गया। हुक्म हुआ कि हम सबको फिर तीन दिन कोल्हू चलाना पड़ेगा। एक तो हमारी कैद की कोई मियाद नहीं—बेमियादी कैद, दूसरे रोज कोल्हू चलाने का डर। हम सबने अच्छी तरह समझ लिया कि यहां काम काज का बिना एक अच्छा निपटारा किये काले पानी से कोई जिन्दा वापस देश न जायगा। सजा तो रात दिन है ही फिर अपने आप अपने को सजा क्यों दें? बहुतों ने इस दफा कोल्हू पर काम करने से इनकार कर दिया और सत्याग्रह शुरू हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री सोहनलाल द्विवेदी;

* "एक कविता लिखकर किसी पत्रिका में प्रकाशित करा देना श्रेयस्कर है या एक विद्यालय खोल कर सहस्रों बच्चों को शिक्षा देना ?"
* "एक वार्ता लिखकर रेडियो में प्रसारित करा देना हितकर है या एक अस्पताल खोल कर सैंकड़ों रोगियों को दवा-दारू का प्रबंध करना ?"
* "एक कवि-सम्मेलन में जाकर कविता-पाठ करना लाभदायक है या एक खेत की मेड पर जाकर श्रम से श्लथ किसान का पसीना पोंछना ?"

कविवर पंडित सोहन लाल द्विवेदी आवेश में कह रहे थे। प्रश्नों के साथ-साथ उत्तर भी अपने आप उभर रहे थे। मैं एकटक उनके चेहरे की ओर देख रहा था। सौम्य मुखाकृति के निकट ही बुढ़ापा चुपचाप खड़ा था। अपनी वाणी से राष्ट्रीय चेतना की शंखद्ध्वनि करने वाला युगाधार कवि आज नवनिर्माण की भावना को प्रतिष्ठित करने में संलग्न था। कल्पना लोक से वह रचनात्मक पृष्ठ-भूमि पर उतर आया था। मुझे लगा—जैसे मैं किसी संत के समक्ष बैठा हूं और उसकी अमृत-वाणी रस बरसा रही है। मैं भीग रहा हूं। यह वाणी मुझे ब्रह्मवाक्य-सी अजर-अमर एवं शाश्वत प्रतीत हुई। मन में भाव जगे—इस वाणी को लुटा दूँ, जन-जन में बाँट दूँ, कण-कण में बिखरा दूँ या अजायब घर में रख दूँ कि आने वाली पीढ़ियाँ उसे बुनें, पढ़ें, समझें और वर्तमान पीढ़ी उसपर आचरण करे, उसके दर्शन से प्रेरणा ले। द्विवेदी जी के तीनों वचन मेरे अन्तःकरण में नक्षत्र से चमक उठे, पर उन्हें अजायबघर में रखने की यह कल्पना कैसी ? यह क्यों ?

संतवाणी और अजायबघर ?

तभी आचार्य सेन की ये अमर पंक्तियाँ स्मृति में गूंज उठीं—"मैं संतों की वाणी को-म्युजियम में प्रदर्शन की वस्तु नहीं मानता।" इसी पृष्ठ भूमि में 'कबीर' की प्रस्तावना में लिखा गया आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का यह अमर-वाक्यांश प्रश्न-चिन्ह बनकर सामने आ गया—"यह बात ठीक भी है। जिसे आजकल ऐकेडेमिक आलोचना कहते हैं, म्यूजियम की रुचि को उत्तेजना देती है। आचार्य सेन संतों की वाणी को जीवित मशाल कहते हैं और उनका दृढ़ विश्वास है कि ये वाणियाँ यथा समय भारतवर्ष की और संसार की वाणियों को सुलझा देंगी। ऐसी प्राणमयी वाणी को म्यूजियम में सजाकर नहीं रखा जा सकता।"

कविवर द्विवेदी जी की उक्त-वाणी सचमुच जागृत मशाल थी और जीवित मशाल है। इस मशाल को म्यूजियम के किसी कक्ष में सजा कर नहीं रखा जा सकता। इसे राष्ट्रीय जीवन के उस चौराहे पर प्रकाश-स्तम्भ के रूप में लगा देना चाहिए, जो यह सहस्रों दिग्भ्रांत जलयानों को दिशा-ज्ञान दे सके।

पराधीनता के युग में द्विवेदी जी की वाणी एक प्रकाश स्तम्भ रही है। नव जागरण के पंख जब आकाश में फड़फड़ा रहे थे तभी अपनी राष्ट्रीय कविताओं से उन्होंने उन पंखों को गति, गति को उड़ान और उड़ान को लक्ष्य तक पहुँचने की प्रेरणा दी थी। नगर नगर में उनका स्वर गूँजा। देश में राष्ट्रीयता की भावना को उससे उत्साह मिला। मा-भारती की वंदना में उन्होंने अपना स्वर ही नहीं, शीश भी चढ़ाने की कामना प्रकट की। गांधीवादी अहिंसात्मक क्रांति को उनसे बल मिला। 'भैरवी' का स्वर तत्कालीन राजनीति का ही नहीं, राष्ट्र के शाश्वत उद्बोधन का भी स्वर था। 'युगाधार' के साथ-साथ स्वयं द्विवेदी जी युगधार बन गए। उन्होंने अपनी राष्ट्रीय कविताओं द्वारा राष्ट्रीय जीवन ही नहीं, जन-जन के हृदय को स्पर्श किया। बदले में उन्हें युगपुरुष गांधी का प्यार मिला। राष्ट्रीय क्षेत्र में वे पूजित हुए। फिर कविता के प्रति उनकी यह उपेक्षा क्यों ? कौन-सा ऐसा कारण है कि राष्ट्रीय कवि नव-निर्माण को प्रमुखता देने लगा ?

कुमारी म्युरियल लेस्टर ने राष्ट्र पिता बापू के संबंध में लिखा था—"यह पुरुष मिट्टी के ढेरों से वीर पैदा करता है।"

बात सत्य थी। गाँधी जी ने सत्य को ढाल और अहिंसा को तलवार बनाकर मिट्टी के ढेरों से वीर पैदा किये। जिन साहित्यिकों ने गाँधी के उन वीरों को बलि की प्रेरणा दी, चेतना दी, कहें जिन्होंने उन बलिदीपों में स्नेह डाला कि वे जलते रहें, उनमें कवि सोहन लाल द्विवेदी का स्थान बहुत ऊंचा है। स्वतंत्रता-प्राप्ति तक चेतना का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक कवि, एक नागरिक, एक इतिहास

श्री अमर बहादुर सिंह 'अमरेश'

ोत अपनी चरम-सीमा पर पहुँच ुका था। बापू नहीं रहे। जिस वतंत्रता की उन्होंने परिकल्पना की ी, वह आई, किन्तु उसकी मूर्ति खंडित थी। तन की बात नहीं, आत्मा ें खंडित थी। उसी खंडित आत्मा ा प्रतिबिंब आज भी जन-जीवन ो छिन्न भिन्न किये है। जहाँ गुलाब के पौधे बोये गये थे, वहाँ कालान्तर में करील की झाड़ियाँ उग आईं। ाषा, जातिवाद, प्रान्तीयता, भाई-तीजावाद और पता नहीं कितने-कितने वाद उन करील की कुंजों के ीचे पनपे। सत्य, ईमानदारी, नैतिकता और राष्ट्रीयता ही नहीं, स्वयं भार-ीयता भी व्यक्तिगत स्वार्थों, हितों एवं पश्चिम के अंधानुकरणों की ट्टानों में दब कर कुचल गई। शासक ान्त हो गए। सब कुछ हुआ, पर द्विवेदी जी का वह गांवों में बसने ाला हिन्दुस्तान नहीं सुधरा। शहर ुधरे, शहर में रहने वाले नागरिकों के रिधान बदले, युवतियों के परिवेश बदले, बच्चों के वेश बदले, माताओं के केश बदले, पर पंच परमेश्वर के ाम पर गांवों के सर्वेश नहीं बदले।

जनता दीन हो कर रह गई। समाजवाद की भूल-भुलैया में जन-जीवन भटकता रहा। उसे ठोकरें भी लगीं चोट भी आई, पर उसने आह नहीं की, क्योंकि उसकी आकांक्षा और शक्ति दोनों को नेतृत्व नहीं मिला। सच है, यह नेतृत्व देने की क्षमता सोहनलाल द्विवेदी में नहीं थी, पर इस दृष्टि की तराजू उनके कृतित्व को तोलने के लिए उपयुक्त नहीं है। वह तराजू है यह कि नेतृत्व हीनता और जनता की उस दीन भावना के घोर अंधेरे में भी इन्होंने अपना कर्म जारी रखा और आवाज दी—

ओ लालकिले पर झंडा फहराने वालों,
पहले जवाबदो, मेरे चंद सवालों का!

कवि के इन आक्रोश-पूर्ण स्वरों में जो सामाजिक तड़पन है, हमें कवि के आक्रोश एवं तड़पन की गहराई में जाना पड़ेगा और उस गहराई में जाने से पहले हमें पता लगाना होगा कि उसमें कितना पानी है? उस पानी का स्रोत कहाँ है? स्रोत का माध्यम कौन है? इस पृष्ठभूमि में मुझे राष्ट्रपिता बापू के ये शब्द स्मरण हो आये। जनरल स्मट्स जब जहाज पर चढ़ने लगे तो गांधी जी ने संदेश देते हुए कहा था—"गलत फहमी को और भारत में अव्यवस्था से होने वाले कष्टों को दूर करने के लिए इस समय कुछ भी न उठा रखना चाहिए।"

यह उस समय (१९३२) की बात थी! यह इस समय (१९६५) की भी बात है!

देश की स्थिति इतने जोर का तकाजा कर रही है कि अव्यवस्था से होने वाले कष्टों को दूर करने के लिए इस समय भी कुछ न उठा रखना चाहिए, पर यह कौन करे? क्या सरकार? द्विवेदी जी का साफ उत्तर है—

"मुझे भरोसा नहीं रहा,
अब दिल्ली की सरकार का।"

तब क्या सब हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें और उस अव्यवस्था को सर्व नाश का रूप लेने दें? द्विवेदी जी के मन का, देशभक्ति में डूबे मानस का उत्तर है—'नहीं, यह ठीक नहीं है?'

तब वे क्या करें? क्या बैठे बैठे कविता लिखें! इस प्रश्न के उत्तर में उनकी स्पष्ट दृष्टि का उत्तर है—

कविता, भूखे किसानों का पेट
नहीं भर सकती,
कविता, हल चला कर अन्न
उत्पादन नहीं कर सकती,
कविता, शोर मचाकर राष्ट्र-
निर्माण नहीं कर सकती।

तब? तब उन्होंने सरकार का भरोसा छोड़कर अपने बाहु बल का भरोसा किया। सहस्रों बच्चों को शिक्षा देने के लिए उन्होंने बिंदकी में 'शिशु-भारती' (मॉन्टेसरी शिक्षण स्कूल) की स्थापना की और महिला-अस्पताल के लिए प्रयत्न किया। अब उसकी इमारत भी बन गई है। बिंदकी जैसे छोटे से कस्बे के हृदय में नगरों की-सी चेतना लाने का श्रेय द्विवेदी जी को ही है। कॉलेज की फील्ड से लेकर खेतों की चकबंदी तक में मैंने उन्हें व्यस्त देखा है। यह व्यस्तता, यह परिश्रम, यह लगन पुकार कर प्रजा-तंत्री भारत की जनता से कह रही है जब सरकार से निराशा हो, नेताओं से सही नेतृत्व न मिले, तब भी ज नागरिक हाथ पर हाथ रखकर नहीं बैठते और अपनी शक्ति एवं सूझ से काम लेकर अव्यवस्था के कष्टों को दूर कर व्यवस्था और न्याय के रथ को आगे बढ़ने की राह देते हैं, वे ही प्रजातंत्र के वास्तविक नेता और संरक्षक है।

श्री सोहनलाल द्विवेदी को देख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर, उनकी बातें सुनकर और उनकी संस्थाओं की बात सोचकर मैं सोचने लगता हूँ कि गुलाम भारत में उन्होंने आजादी के सिपाहियों को जिन शब्द-छन्दों से प्रेरणा दी थी उनसे क्या प्रजातंत्र की रक्षक सेना के सिपाहियों-नागरिकों को जिन कर्मछन्दों से प्रेरणा दी है, वे क्या कम महत्वपूर्ण हैं? और क्या इन दोनों छन्दों के सन्दर्भ में रखे बिना हम अपने राष्ट्र के इस जीवन्त-जागृन्त कवि के व्यक्तित्व को ठीक ठीक समझ सकते हैं?

द्विवेदी जी के अभिनन्दन की चर्चा चली, तो उन्होंने आयोजकों से स्पष्ट कह दिया—"मैं नहीं चाहता कि मेरे नाम पर गली-गली एक-एक रुपया वसूल किया जाए। कुछ लोगों ने इसे भी पैसा और सस्ती प्रतिष्ठा कमाने का एक साधन बना रखा है। जिस कवि का अभिनन्दन देश की जनता ने, राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने और युग नेता पंडित जवाहर लाल नेहरू ने किया, उनकी यह इच्छा उचित ही है।

द्विवेदी जी को निकट से देखने में सहज, सरल, आत्मीयता मिलती है और दूर होने पर यह आत्मीयता श्रद्धा में बदल जाती है। नये लेखकों को प्रोत्साहन देने में द्विवेदी जी कभी-कभी तो इतनी श्रद्धा दिखाते हैं कि जैसे वह उनका अग्रज हो। मेरी पुस्तक 'आचार्य द्विवेदी : गाँव में' पढ़ने के बाद उन्होंने लिखा—"अपने अग्रजों के प्रति श्रद्धा अर्पित करके मेरी दृष्टि में तुम स्वयं श्रद्धेय बन गए हो?" मेरा शीश उनके आशीर्वाद से झुक गया। एक दिन बोले—"बताओ, डींग मारने वाले तो बहुत हैं, किन्तु कोई ऐसा कवि भी है, जो शीश कटाने को तैयार हो। ये दूसरों को शीश कटाने का प्रोत्साहन अवश्य देते हैं, मगर स्वयं नहीं कटाते।" मैं विहँस उठा। बोला—"यदि ये ही शीश कटाने लगेंगे, तो प्रेरणा कौन देगा?" द्विवेदी जी हँस पड़े! बो[illegible] "असलियत तो यह है कि हमें प[illegible] ही नहीं है कि कहाँ हम जा रहे [illegible] और कहाँ हमारा देश! जहाँ हम [illegible] वहाँ देश नहीं है और जहाँ देश [illegible] वहाँ हम नहीं हैं। सुनकर मुझे ल[illegible] कि पुरानी पीढ़ी के हीरो ने नई पीढ़[illegible] को बहुत ही महत्वपूर्ण संदेश दे दि[illegible] है यह।

११ मार्च १९६५ को कवि [illegible] वर्षगाँठ थी। मैं सोचता रहा ये [illegible] वर्ष कर्म के, ये ६० वर्ष मर्म के औ[illegible] ये ६० वर्ष धर्म के रहे। यह कर्म, य[illegible] मर्म, यह धर्म, राष्ट्रमय रहा औ[illegible] आज भी कवि के हृदय की धड़क[illegible] अपने राष्ट्र के हृदय की धड़कन [illegible] साथ ही धड़कती है। भारत [illegible] राष्ट्रीय कविता का इतिहास जि[illegible] स्तम्भों पर टिका है, उनमें सोहनला[illegible] द्विवेदी का नाम स्मरणीय है औ[illegible] इस रूप में स्वतन्त्र भारत की आ[illegible] वाली पीढ़ियां सदा उनका अभि[illegible]न्दन करेंगी।

नये लेखकों की पाठशाला

जो लेखक सफलता के ऊँचे शिखर पर पहुँचना चाहता है, उसके लिए आवश्यक है कि वह बहुत सोचे, चिन्तन में गहरा उतरे; चिन्तन से कम बोले—अपने को बखेरे नहीं और बोलने से कम लिखे। मतलब यह कि उत्तम लेखक वह है जो अपना सर्वोत्तम कागज पर उतारता है। उसकी कृतियाँ आमके बौर जैसी न हों, जो हजारों लदी रहती हैं; उन पके आमों जैसी हों, जो गिनती में थोड़े होते हैं, पर जिनके रस की महक से प्रभावित हो, हरेक आदमी आकर्षित आँखों से आम के उस वृक्ष की ओर देखता है। —एक फ्रांसीसी कहावत का सार

वह लेखक सबसे अच्छा लिखता है, जो अपने पाठकों का सबसे कम समय लेकर उन्हें सबसे अधिक रस देता है। —सिडनी स्मिथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बोधनों में भटका हुआ ख़त

श्री रमेश पन्त

मेरे दोस्त और मेरे दुश्मन !

इस पत्र का सम्बोधन न जाने लोगों को कैसा लगेगा, परन्तु तुम्हें तो यह पसन्द आया है न ? अगर यह पूरा सम्बोधन ग्राह्य न भी हो तुम्हें, तो कम से कम आखरी आधे को तो तुम सहज ही ग्रहण कर लोगे न ? क्योंकि कल तुम जितने करीब थे मुझसे, आज उतनी ही दूर भी चले गये हो। जितना प्यार करते थे मुझे-इतनी ही घृणा भी करने लगे हो, जितना विश्वास था मुझ पर-उतना ही अविश्वास भी हो गया है। मेरी जो बातें, आदतें, रुचियाँ तुम्हारी प्रशंसा का विषय होती थीं, वे सब आज उपहास का माध्यम बनकर रह गई हैं। यहाँ तक कि मेरे जिन दोस्तों की तुम भूरि-भूरि प्रशंसा किया करते थे, उनसे अब बातें करना भी तुम्हें गंवारा नहीं। मेरे सूटों का रंग तुम्हें अब फीका लगने लगा है, मेरे विचारों की दृढ़ता, मेरे आदर्शों और विश्वासों की नींव भी तुम्हें किसी पिछली कहानी के परिवेष में पनप रही कोरी कल्पना या भावुकता की एक तरंग मात्र ही लगने लगी है। सच तो यह है कि विगत का तुम्हारा यह दोस्त अब वर्तमान का महज दुश्मन भर रह गया है तुम्हारे लिए, जिसे तुम नीचा दिखाना चाहते हो, उपेक्षा का विषय बनाना चाहते हो, अपने अहं को क्षणिक संतोष देने के लिए, हर क्षण उसके स्वाभिमान को, भावनाओं को, किसी न किसी रूप में ठेस पहुँचा कर, उसे खुद उसकी नजरों में गिरा देना चाहते हो ...।

तुम मुझे कहानीकार कहा करते थे न ! मुझे याद है, मेरी कहानियों के छपते-छपते तुम स्वयं पूरा पढ़कर, सारे मुहल्ले भर में, उसे पढ़ा आते थे, उस पत्रिका की कई प्रतियां खरीद बैठते थे—और अब मेरा जीवन, मेरी बातें, मेरे विचार-सब में तुम्हें कल्पना की गंध आने लगी है। झूठ, ढकोसला, फरेब ही फरेब नजर आने लगा है, यहाँ तक कि विगत का वह सुखद साथ, वह हृदय की अनुभूतियों का आदान-प्रदान, वे हँसी—कहकहों में डूबी शामें, सब कुछ तुम्हें सिर्फ एक कहानी-सी ही लग रही है, कोरी कल्पना से भरी हुई, अवास्तविक !—और, आज भी मैं जो कुछ लिख रहा हूँ वह भी सिर्फ तुम्हें एक कहानी-सी ही लगने लगे तो अधिक आश्चर्य नहीं।—फिर, यह सब तो मैं लिख भी एक कहानी की तरह ही रहा हूं।

कहानी है, बहक गया हूं। संबोधन की बात कर रहा था न ! वहीं से चलूँगा, तुम कोई भी सम्बोधन स्वीकार करो, इससे मुझे अब अधिक मतलब नहीं, मुझे तो सिर्फ यह बताना है कि मैंने क्या स्वीकारा है, यह संबोधन क्यों प्रयोग किया है तुम्हारे लिए ? और यह पत्र क्यों लिख रहा हूं तुम्हें ?

मैं सर्वप्रथम पहिले आधे की ही चर्चा करूंगा क्योंकि अब भी तुम मुझे बहुत याद आते हो, कभी कभी तुम्हें देखकर अचानक एक ललक-सी भर आती है हृदय में। अगर तुम्हारी कोई बुराई सुनता हूँ तो क्रोध आता है। किसी शाम किसी बार में, किसी प्रातः किसी रैस्त्रां में, किसी दोपहर किसी खाने की मेज पर तुम्हारी आकृति मेरी आँखों के आगे घूम उठती है तो अनायास सोचने लगता हूं, न जाने इस समय तुम कहाँ होंगे ? अगर साथ होते तो कितना सुन्दर होता। नित्य प्रति ऐसे बहुत सारे क्षण आते हैं मेरे जीवन में जब कि तुम्हें बहुत पास पाता हूँ और स्वयं ही उल्लसित हो जाया करता हूँ, इसलिए मैंने प्रयोग किया है, पहला आधा सम्बोधन-'मेरे दोस्त', और इसी सम्बोधन के नाते शायद यह पत्र भी लिख रहा हूं।

मेरे दोस्त, अपने अहं की क्षणिक संतुष्टि से हृदय की छटपटाहट और भी अधिक बढ़ जाती है। झूठ के आवरण में सत्य और भी उभर कर सामने आता है। दर्द, संवेदना से ढुलक पड़ता है, सिर्फ दवा से ठीक होता है। इसीलिए कह रहा हूँ कि अहं की क्षणिक तुष्टि सिर्फ अपने

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप को संवेदना मात्र ही देना है, अपनी दवा नहीं। मुझे नीचा दिखाना चाहते हो न? अगर यह नहीं भी स्वीकार करते तो यह तो अवश्य स्वीकारोगे कि अपने आप को मुझसे ऊंचा दिखाना चाहते हो, फिर उस 'ऊँचे दिखाने' को लोगों से प्रमाणित भी करवाना चाहते हो। इसीलिए तुम उन लोगों में रह रहे हो जो तुम्हें दिल से पसन्द नहीं, सिर्फ झूठी वाहवाही की तलाश में उनमें फिरते हो, उन वस्तुओं का प्रयोग करते हो, जो तुम्हें नहीं रुचतीं, तुम्हारे स्वास्थ पर जिनका विपरीत प्रभाव पड़ता है। मेरे सम्बोधन के पहिले भाग-ओ मेरे दोस्त! तुम, मुझसे हर क्षेत्र में आगे बढ़ जाओ, हर डगर में तुम्हें विजय मिले, पर जरा अपने को टटोलो तो सही, जरा एक नजर मुझ पर भी तो डाल देखो, अपने रुह को. क्षणिक सुख, सन्तोष में बहका कर क्यों बर्बादी के रास्ते की तरफ बढ़ रहे हो? उसे पूर्ण तृप्त करो। तुम्हारे दोस्तों के बीच के झूठे, खोखले, कह-कहों, खाली की गई शराब की बोतलों, कोरी जोरदार दलीलों, गहरे रंग के सूटों से मुझ पर कोई असर न होगा, मैं, तुम्हारे लाख चाहने पर भी अपने आपको कभी नीचा, हेय अथवा तिरस्कृत अनुभव न करूंगा। हां, अगर कभी तुम अपने जीवन को ठीक ढंग से सँवारने में सफल रहे, अपने उत्तरदायित्वों को तुमने पहिचान लिया, अपने जीवन के अस्तित्व से परिचित होकर, तुम एक अच्छा सुखद गृहस्थ स्थापित कर सके, चार पैसे हाथ में रोक लिये तो मुझे लगेगा कि तुम मुझसे बहुत आगे बढ़ गये हो।

सोचते-सोचते कभी तुम्हारा दूसरा रूप भी सामने आ जाता है, अचानक तुम्हारे 'हठ वाद' पर ध्यान चला जाता है उसके साथ, मानापमान की तुम्हारी अपनी त्योरी याद आ जाती है; तुम्हारी यह बातें याद आ जाती हैं कि तुम किसी से कुछ भी कह सकते हो, पर किसी की जरा-सी भी सुन नहीं सकते। कोरी, बहशी जिद का दामन पकड़ उठते हो। वर्षों के सम्बन्ध को पल भर में समाप्त कर सकते हो, तो अनायास उस वक्त मुझे अपना प्रयोग किया हुआ दूसरा सम्बोधन उचित लगने लगता है, मेरे दुश्मन! बहुत देर तक वह भी घूमता रहता है मेरे मन और मस्तिष्क में, विगत का तुम्हारा रूप उठता है और वर्तमान में खो जाता है, पहला सम्बोधन सिकुड़ जाता है, दूसरा उभर उठता है, दोस्त-दुश्मन 'प्रिय-अप्रिय'।

यह कशमकश बहुत देर तक चलती रहती है कभी-कभी, फिर एक ऐसा वक्त आ जाता है जब इन दोनों सम्बोधनों में अन्तर्द्वन्द्व हो उठता है। एक दूसरे में दोनों तिरोहित से हो उठते हैं, मैं अनमनस्क-सा होकर एक दुविधा में अपने आप से ही प्रश्न कर उठता हूँ—क्या इन दोनों में से कोई भी सम्बोधन सम्यक् है?

तुम समझ नहीं रहे होंगे, उदाहरण देकर तुम्हें समझाऊँ, सोचते-सोचते जब तुम पर खीझ, गुस्सा अथवा आक्रोष उमड़ पड़ता है तो एक भावना उठती है, तुम्हारे वर्तमान जीवन को देखकर कि तुम्हें एक ऐसी ठोकर लगे अपने इस वातावरण में कि तुम्हें राह दिखने लगे। तुम्हारे तथाकथित दोस्तों से तुम्हें ऐसी ठेस लगे कि तुम वक्त को पहिचान सको, तुम्हें ऐसे अभाव में रहना पड़े कि तुम अपनी वास्तविकता जान सको ....और फिर एकदम न जाने मेरा सारा गुस्सा, क्षोभ, आक्रोष न जाने कहाँ गायब हो जाता है, मुझे ग्लानि-सी होने लगती है। पहला सम्बोधन ढक लेता है दूसरे को, अनायास तुम्हारे अभाव-ग्रस्त जीवन की कल्पना से मैं कांप उठता हूँ, मन ही मन गलती को सुधारने का प्रयत्न-सा करते हुए कहने लगता हूं—भगवान कभी ऐसा मौका न आने दे तुम्हारे जीवन में।

दूसरा उदाहरण दूँ तो शायद पूरी तरह समझ जाओगे। कभी-कभी जब विगत में खो जाता हूँ और तुम्हें बिलकुल अपने पास देखता हूं तो बरबस उन दिनों, उन घटनाओं, उन शामों में बहक जाया करता हूँ जब तुम बिल्कुल मेरे बगलगीर थे तो अनायास एक भावना उदित होती है मन में कि अवश्य ही वे शामें, वे दिन, वे घटनायें तुम्हारे दिल में, मस्तिष्क में भी वैसी ही भरी पड़ी होंगी, वक्त के कुहरे ने उन्हें ढक भर ही तो दिया। फिर सोचते-सोचते हृदय की कोमलतम अभिव्यक्ति की भावुकता मुझ पर आच्छन्न होती जाती है और एक खयाल मेरे मन में उभरने लगता है कि यदि अभी मेरी आकस्मिक मृत्यु हो जाये तो एकदम तुम्हारे हृदय से सारा कुहरा छंट जायेगा। मेरी यादों के सरगम तुम्हारी आँखों से अवश्य मेरे गीतों के आँसुओं की झड़ी लगा देंगे। बहुत देर तक इसी भावना में मैं बहुत-सा सुख एकत्रित करने का प्रयत्न करता हूं किन्तु तभी दूसरा सम्बोधन, पहिले को ढंक लेता है और मैं महसूस करने लगता हूं कि वह तुम्हारा रुदन नहीं, सिर्फ मेरी मौत के साथ सहानुभूति होगी, जो मुझे अपेक्षित नहीं।

शायद अब तुम सब कुछ समझ कर, सम्बोधनों में भटके हुए खत को टुकड़े-टुकड़े कर हवा में बिखेर रहे होंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाकिस्तान युद्ध के पथ पर

मल्लिनाथ ने अमरकोश की 'संजीवनी' नामक टीका में कच्छ का अर्थ 'दलदल वाला प्रदेश' लिखा है। दलदल का यह प्रदेश किस प्रकार 'रन' (गुजराती के 'रन' शब्द का अर्थ है रेगिस्तान) में परिणत हो गया? कहते हैं, पहले कभी यह एक द्वीप था। सिन्धु नदी का रास्ता बदल जाने के कारण यह रेगिस्तान बन गया, परन्तु वर्ष के आधे भाग में अब भी यह पानी से भरा रहता है। भू-रचना का यह परिवर्तन अब भी समाप्त नहीं हुआ है—१८१९ ई० में भारी भूकम्प आया, जिससे रन का पश्चिमी भाग पानी में डूब गया और वह समुद्र का हिस्सा बन गया।

भौगोलिक स्थिति

कच्छ गुजरात का उत्तरी जिला है। कच्छ के उत्तर में सिन्ध (पाकिस्तान) दक्षिण में कच्छ की खाड़ी, पूर्व में बनसकांश और मेहसाना जिला तथा पश्चिम और दक्षिण में अरब सागर है। कच्छ की आबादी है, ६,९७,४४० जिसमें ५,०२,९१७ अर्थात् ७२ प्रतिशत हिन्दू हैं और १,२९,१४८ अर्थात् १८॥ प्रतिशत मुसलमान हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् पहले यह चीफ कमिश्नर के अधीन 'क' श्रेणी का राज्य रहा और १ मई १९६० को पृथक गुजरात राज्य का निर्माण होने पर यह गुजरात का एक जिला बन गया।

यह ठीक है कि पाकिस्तान के इस आक्रमण को अप्रत्याशित नहीं कह सकते। १९५६ में भी कंजरकोट से लगभग १५ मील पूर्व में छाड़बेट पर उसने हमला किया था, परन्तु तब उसे मुंह की खानी पड़ी थी और भारत की स्थायी चौकी छाड़बेट में बन गई थी। तब से राजकोट रेंजर्स महीने में दो बार गश्त लगाती थी। इस बार जब जनवरी के प्रारम्भ में भारतीय पुलिस दल गश्त लगाने गया तो कंजरकोट के पुराने ध्वंसावशिष्ट किले (जो १३०० गज भारतीय सीमा के अन्दर है) के पास—उसकी पाकिस्तानियों से मुठभेड़ हुई। पाकिस्तानी भाग तो गए, परन्तु उनका अतिक्रमण बढ़ता गया।

इस बीच पाकिस्तान ने योजनाबद्ध रूप से इस प्रदेश पर हमला करने की तैयारी की। सुराई से डींग तक सड़क बनाई—जो कंजरकोट के ऐन पास से गुजरती है और जो दसवां हिस्सा छोड़कर शेष सारी भारतीय सीमा के अन्तर्गत है। भारी पैमाने पर उसने शस्त्रास्त्र और सैनिक जमा किये और हमारी गफलत से शह पाकर उसने चुपचाप कंजरकोट पर कब्जा कर लिया। जिस तरह चीन द्वारा हमारी सीमा पर भारी सैनिक जमाव और सिकियांग में सड़क बनाने की जानकारी से काफी अर्से तक भारत सरकार बेखबर रही, कच्छ की सीमा पर पाकिस्तानी तैयारियों के बारे में भी उसी बात की पुनरावृत्ति हुई। बल्कि संसद में कंजरकोट तक सड़क बनाए जाने का भी खंडन किया गया, परन्तु जब मार्च के प्रारंभ में राजकोट रेन्जर्स (भारतीय पुलिस) की अपनी नियमित गश्त के दौरान सिन्ध रेन्जर्स (पाकिस्तानी अर्द्ध सैनिक सीमा पुलिस) से मुठभेड़ हुई तब इस सड़क की भी जानकारी मिली और यह भी पता लगा कि पाकिस्तान ने डींग और कंजरकोट पर कब्जा कर रखा है।

तुरन्त गुजरात सरकार को सूचना दी गई। गुजरात ने केन्द्र को सूचना दी। राजकोट रेन्जर्स को रिजर्व पुलिस की चार कम्पनियों की कुमुक भेजी गई और डींग से कुछ ही गज दूर सरदार चौकी स्थापित की गई, विगोकोट तथा अन्य स्थानों पर भी चौकियां स्थापित की गईं।

९ अप्रैल १९६५ को सरदार चौकी पर जबरदस्त आक्रमण कर दिया। पाकिस्तान ने तोपखाना, मशीनगनों और हथगोलों का खुलकर प्रयोग किया। रात भर घमासान

अपने पढ़ने के कमरे में

युद्ध होता रहा। सवेरा होने पर देखा गया कि हमलावरों की लाशों से सरदार चौकी का पार्श्वर्ती इलाका छितरा हुआ है। जो हमलावर सरदार चौकी तक पहुँच गए थे, वे बन्दी बना लिए गए। गिरफ्तार शुदा व्यक्तियों को पूछताछ के लिये वायुयान से देहली लाया गया। उनसे पता लगा कि पाकिस्तान की नियमित सेना के ३५०० सैनिकों ने आक्रमण में भाग लिया था।

१० अप्रैल १९६५ को भारतीय सेना मोर्चे पर पहुंच गई। उसने सरदार चौकी वापिस ले ली। तब पाकिस्तान ने युद्धविराम के लिए आतुरता दिखाई, परन्तु इधर बातचीत चल ही रही थी कि पाकिस्तान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने २४ अप्रैल को सीमा के चार स्थानों पर एक साथ टैंकों, तोपों, मशीनगनों हथगोलों से इतने बड़े पैमाने पर हमला कर दिया कि उसे 'अघोषित युद्ध' के सिवाय और कुछ नहीं कहा जा सकता।

पाकिस्तान इस समय युद्धोन्माद में ग्रस्त है। उसने अपनी सेना को पूरी लामबन्दी का आदेश दे दिया है। लगता है, चिरकाल से भारत-विरोध की जो कसक पाकिस्तान को चैन से बैठने नहीं देती, उस कसक को पूरा करने का उसने यही अनुकूल अवसर समझा है। उसने आक्रमण का यही समय और यही स्थान जान-बूझकर चुना है।

१५ मई से १५ नवम्बर तक कच्छ का यह प्रदेश समुद्री ज्वार के पानी से भरा रहता है। उसके बाद उस प्रदेश में पहुंचना कठिन हो जाता है। पाकिस्तान १५ मई से पहले-पहले अपनी पूरी शक्ति झोंककर इस प्रदेश के विशिष्ट नाकों पर कब्जा कर लेना चाहता है। भूमि प्रदेश की दृष्टि से पाकिस्तान लाभदायक स्थिति में है। सीमा से केवल १० मील दूर रहीम-की-बाजार रेल स्टेशन है। निकट ही है मलीक (कराची) की छावनी जहां ५? इनफेन्टरी ब्रिगेड रखी जाती है। पाकिस्तान वाले पार्श्व में कई गांव और बस्तियां हैं और कराची से मिलाने वाली सड़कों का जाल है। सीमा के निकट ही बादिन और रादिर में दो हवाई अड्डे हैं। इसके अलावा पाकिस्तान ने महीनों से तैयारी कर रखी है। भारत की ओर लम्बा उजाड़ रेगिस्तान है, सड़कों का सर्वथा अभाव है और निकटतम रेलवे स्टेशन भी ७० मील दूर है।

['दैनिक हिन्दुस्तान' में श्री क्षितीश]

योजना : लक्ष्य और उपलब्धियां

सरकार के विरोधियों की ओर से योजना की व्यापक आलोचना होती है। शासक दल के बड़े-बड़े लोगों की जबान से योजना के बारे में प्रतिकूल टिप्पणियां सुनी जाती हैं। इस लेख में मैं योजना के सम्बन्ध में कुछ चर्चा करूँगा और इस बात पर विचार करूँगा कि देश का तेजी से आर्थिक विकास करने में वह कहाँ तक सहायक हो सकती है। मेरा उद्देश्य सिर्फ आलोचकों को जवाब देना नहीं, बल्कि आयोजना की समस्याओं को सही रूप में पेश करना भी है।

पहले तो यह बता दूँ कि योजना आयोग 'सरकार का पाँचवाँ पहिया' अथवा 'सुपर केबिनट' के जो आरोप लगाये जाते हैं, मेरे विचार में, भ्रान्त धारणाओं पर आधारित हैं।

यदि हम नियोजित विकास चाहते हैं तो इसके लिए योजना आयोग नितान्त आवश्यक है और जहाँ तक योजना की आवश्यकता का प्रश्न है, इस पर अब दो मत नहीं रहे। यहां तक कि वे आलोचक भी, जो हमारे अपने देश में, या लोकतंत्री दुनिया में कहीं भी, नियोजन पर नाक-भौंह सिकोड़ते थे, अब बदल गये हैं। भारत की उपलब्धियों से वे बड़े प्रभावित हुए हैं और अनुभव करने लगे हैं कि गतिशील आर्थिक विकास के लिए आयोजन का होना अनिवार्य है।

योजना आयोग के योगदान को इसी दृष्टिकोण से देखना चाहिए। उसे देश की आवश्यकताओं को आंकना होता है और फिर विकास के लिए प्राथमिकताएँ निर्धारित करनी होती हैं। तभी हम अपने सीमित साधनों से अधिकतम लाभ उठाते हुए कम से कम समय में आत्मनिर्भर विकास का लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं।

यथार्थवादी आयोजन के लिए यह आवश्यक है कि देश में जो कुछ हो रहा है, योजना-निर्माता उस पर निरन्तर सिंहावलोकन करते रहें क्योंकि जो योजनाएँ हम बनाते हैं, हर मन्त्रालय के कामकाज पर उनका प्रभाव पड़ता है। यह देखना योजना आयोग का कर्तव्य है कि मन्त्री लोग स्वीकृत योजनाओं के अनुसार ही कार्य करें और लक्ष्य सही ढंग से पूरे हों। अगर कोई मन्त्रालय पीछे रह जाय तो आयोग को काम रुकने नहीं देना चाहिए, उसे प्रधानमन्त्री से निर्देश अवश्य ही लेना चाहिए।

इसी कारण मेरा यह मत है कि योजना आयोग कभी भी कुशल माध्यम न होता अगर प्रधानमन्त्री उसके अध्यक्ष अथवा वित्त, उद्योग और कृषिमन्त्री सदस्यों के नाते उससे सम्बन्धित न होते।

यह नहीं भूलना चाहिए कि वित्तीय तथा आर्थिक मामलों के अतिरिक्त आयोजना के और भी उद्देश्य हैं। उसे सामाजिक और राजनीतिक लक्ष्यों की पूर्ति भी करनी होगी। उसके सामने देश की सामाजिक और राजनीतिक आवश्यकताओं की तस्वीर निरन्तर रहनी चाहिए। इसीलिए योजना आयोग में कुछ ऐसे सदस्यों की आवश्यकता होती है जो राजनीतिज्ञ हों हालांकि वे केवल मन्त्री ही हो सकते हैं। अन्य सदस्यों में विशेषज्ञों या टेक्नीशियन लेने चाहिएँ।

और फिर, योजना के आगे बढ़ने की रफ्तार के बारे में कुछ बेसब्री पायी जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्म-स्फूर्त के चरण पर कब पहुँचेंगे? क्या गति को बढ़ाया जा सकता है?

विकास की वर्तमान स्थिति को देखते हुए मेरा विश्वास है कि दस वर्षों में हम आत्म-स्फूर्त के चरण पर पहुँच सकते हैं। इस सिलसिले में बेसब्री समझ में आती है, लेकिन यह याद रखना चाहिए कि रफ्तार को बढ़ाना और आत्म-स्फूर्त की दिशा में होने वाली प्रगति को तेज करना सुगम नहीं। आवश्यक साधनों—अर्थ और श्रम—को जुटाने में हमारी मजबूरी तो है ही। आर्थिक साधनों के मामले में—चाहे वे आंतरिक हों या बाहरी—उन्हें उस स्तर तक पहुंचना बड़ा कठिन होगा जो कि बढ़ी हुई गति के लिए आवश्यक हैं। वर्तमान परिस्थितियों में ऐसा करना अपने पर फालतू बोझ और दबाव डालना होगा। और, मेरे अपने विचार में इससे गति धीमी पड़ जाएगी, बढ़ेगी नहीं।

कृषि और भारी उद्योग

यह स्पष्ट है कि भारी उद्योग और कृषि का आपस में सम्बन्ध ही नहीं, वे एक दूसरे पर निर्भर भी हैं। इनकी प्रगति साथ-साथ होनी चाहिए। एक के हित का दूसरे के हित से टकराव नहीं है।

मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि आगामी योजना में प्राथमिकताओं का सही क्रम रहेगा और समन्वित एवं समस्वरित प्रगति की व्यवस्था कर ली जाएगी।

बेरोजगारी

मैं निराशा की उस भावना का उत्तर भी देना चाहूँगा जो इस धारणा से उत्पन्न हुई है कि हर योजना में रोजगार के बढ़ते हुए अफसरों के बावजूद बेरोजगारों की संख्या बढ़ती जा रही है।

पहली बात तो यह है कि जिन आंकड़ों से यह भावना उत्पन्न हुई है मैं उनकी पूर्णता के प्रति संतुष्ट नहीं हूं। इन आंकड़ों में उद्योग और कृषि के विशाल असंगठित क्षेत्र शामिल नहीं होते, इसलिए इन पर पूरी तरह से भरोसा नहीं किया जा सकता।

जहाँ चाहे देख लीजिए, आपको जीवन की आवश्यकताओं पर अधिक खर्चा नजर आयेगा। इसके अलावा आप यह भी देखेंगे कि जीवन की आवश्यकताएँ बढ़ती जा रही हैं। चाहे यह वृद्धि बहुत कम ही क्यों न हो। इससे समृद्धि के बढ़ने की पुष्टि होती है। यह इस बात का सबूत है कि बेरोजगारी बढ़ नहीं रही।

यह मानना ही पड़ेगा कि लोगों को उतना रोजगार नहीं मिल रहा जितनी उनमें काम की क्षमता है। आजादी बढ़ने के साथ उन लोगों की संख्या बढ़ती जा रही है जिनके लिए रोजगार तलाश करने हैं। साथ ही हमें लाखों ऐसे व्यक्तियों के लिए रोजगार के हालात बेहतर बनाने हैं जो आंशिक रूप से काम करते हैं या जिन्हें उनकी जरूरत के मुताबिक रोजगार नहीं मिलता। मैं आश्वस्त हूँ कि इस दिशा में हमने निरन्तर सुधार किया है हालाँकि उसकी रफ्तार धीमी है।

आंशिक रोजगारी की बड़ी समस्या को हम सिर्फ उसी के दायरे में नहीं देख सकते। हमें अपने साधनों के अभाव की पृष्ठभूमि में उसे देखना है। अन्य मामलों की तरह इस मामले में भी यह बुद्धिमानी नहीं कि हम बड़ी-बड़ी आशाएँ लगाएँ। यह सच है कि आजादी के बाद हमने बड़ी-बड़ी उम्मीदें बांधीं थीं कि गरीबी बड़ी तेजी से खत्म कर दी जाएगी। हमारी उपलब्धियों को समझने में यह उच्चाभिलाषाएं बाधक बन रही हैं। अच्छा यह है कि हम अपनी उपलब्धियों को कम आंकें और असफलताओं के प्रति सजग रहें, लेकिन उन्हें इस हद तक बढ़ाने से जिससे सुधार की हमारी कोशिशें रुकें, जनता में निराशा और कटुता उत्पन्न होगी।

अगर हमें राष्ट्र को अधिक फलवान भविष्य की ओर ले जाना है तो हमारे चिन्तन में निराशा और कटुता को कोई स्थान नहीं मिलना चाहिए। हमें यथार्थवादी बनना होगा और जो कुछ प्राप्त किया गया है उसे न तो बढ़ा कर कहें और न घटाकर आँकें। तभी हम तेज और अधिक बड़ी तरक्की के लिए श्रम को बढ़ावा दे सकते हैं।

अगर कोई व्यक्ति बीमार होकर कमजोर हो जाये तो शुरू-शुरू में उसे ठीक होने में वक्त लगेगा। एक बार उसमें कुछ ताकत आ जाय तो ठीक होने की गति तेज हो जाती है, लेकिन बीमारी के बाद शुरू शुरू में उस सब्र से काम लेना होगा।

अपने विकास में हमें यह सबक सीखना है। हो सकता है प्रारम्भ में हमें अपनी राष्ट्रीय आय (प्रति व्यक्ति) दुगनी करने में बीस साल लग जायें, लेकिन उसके बाद उस आय को पुनः दुगनी करने में दस साल से भी कम समय लगेगा। इस बात को मन में रखें तो आप उपलब्धियों को सही रूप में समझ सकेंगे।

इसका यह मतलब नहीं कि अतीत में हमने गल्तियां की ही नहीं, लेकिन वे जानबूझ कर नहीं की गईं, न ही शासन के कर्णधारों की लापरवाही का परिणाम थी। मूल कारण यह था कि सदियों की विदेशी गुलामी के कारण अवसरों के अभाव में हमारा समाज अयोग्य, विशृंखलित और काहिल हो गया था।

['नवभारत टाइम्स' में श्री मोरारजी देसाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक-परिचय

पत्र व्यवहार भाग पांच

श्री जमना लाल बजाज (स्वर्गीय) को गांधी जी ने अपना पांचवा पुत्र कहा था। यह एक घरेलू सूक्ति है; नहीं तो जमना लाल जी अपने स्वतंत्र और पूर्ण रूप में एक राष्ट्र-निर्माता थे। दुःख है कि उनका सही मूल्यांकन इन १७ वर्षों में नहीं हुआ। उनके सुपुत्र श्री रामकृष्ण बजाज ने इस दिशा में एक बहुत ही उपयोगी कार्य किया कि जमनालाल जी का पत्र व्यवहार प्रकाशित करने का कार्य अपने सिर ले लिया। चार भाग प्रकाशित हो गये थे, यह पांचवा भाग है। पहले में राजनैतिक नेताओं से, दूसरे में रियासती कार्यकर्ताओं से, तीसरे में रचनात्मक कार्यकर्ताओं से, चौथे में अपनी पत्नी से और पांचवे में अपने परिवार वालों से जमनालाल जी का पत्र व्यवहार है। सूचना है कि छठे में व्यापारी एवं सामाजिक वर्ग से और सातवें में देशी रियासतों के अधिकारियों से जमनालाल जी का पत्र व्यवहार प्रकाशित होगा और रचनात्मक कार्यकर्ताओं एवं राजनैतिक नेताओं से पत्र व्यवहार के दो खंड और प्रकाशित होंगे। इस प्रकार ६ खंडों में सम्भवतः यह पत्र व्यवहार आएगा।

मैंने कहा है, लिखा है कि गांधी जी अपनी प्रकाशित डायरियों में मरने के बाद भी जीवित हैं। इस पत्र व्यवहार को पढ़कर अनुभव हुआ कि जमनालाल जी इन पत्रों में जीवित हैं—यश रूप में ही नहीं, जीवन स्पर्श के रूप में। बहुत ही विराट व्यक्तित्व था जमनालाल जी का। वे गांधी जी का पब्लिक-सर्विस-कमीशन थे। देश भर से गाँधी जी के काम के आदमी चुनना, उन्हें ट्रेंड करना और काम में लगाना उन्हीं का काम था। श्रीमती रमा रानी जैन ने उन्हें अपने एक लेख में जो 'व्यक्तित्व का शिल्पी' कहा, तो जैसे उनके व्यक्तित्व का एक चित्र ही दे दिया। वे देशी-रियासतों के लिए कांग्रेस के वायसराय थे। कांग्रेस देशी रियासतों में अपनी शाखाओं की स्थापना नहीं करती थी और जमनालाल जी ही वहाँ के प्रश्नों की देखभाल करते थे, यह प्रश्न चाहे व्यक्तिगत हों, चाहे समाजगत। इनके साथ ही वे सबकी समस्याओं का एक लैटरबाक्स भी थे कि जो समस्या किसी से न सुलझे, वह जमनालाल जी को सौंप दी जाय—यह समस्या चर्खा संघ की कोई उलझन हो या किसी के लड़के-लड़की की सगाई। ऐसे थे जमनालाल जी और यह उन्हीं का पत्र व्यवहार है अपने परिवार वालों से। श्री कमलनयन बजाज ने पृष्ठभूमि लिखकर जमनालाल जी की व्यवहार-प्रक्रिया को समझना सरल कर दिया है।

२१४ प्र० की सजिल्द पुस्तक का मूल्य ४ रुपये और प्राप्ति स्थान सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली।

मेरा वकालती जीवन

श्री गणेश वासुदेव मावलंकर अपने ढंग के आदमी थे। वे एक नागरिक का आदर्श थे। उनका प्रयत्न होता था कि जिन आदर्शों की बात हम करते हैं, उन्हें जीवन में आचरण भी करें। लोकसभा के यशस्वी अध्यक्ष होने के पहले वे वकील थे। वकील और झूठ का साथ हमारे देश में सहज हो गया है, पर उन्होंने वकालत में भी सत्य चरण के प्रयोग किये थे। इस पुस्तक में इन प्रयोगों की कथा है। लेखनशैली सरस और संस्मरणात्मक होने से यह रस और भी बढ़ गया है। क्या ही अच्छा हो कि स्वतंत्र भारत के सभी विश्व विद्यालय इस पुस्तक को कानूनी शिक्षा में अनिवार्य कर लें। १६६ पृ० की सजिल्द पुस्तक का दाम ४ रुपये और प्राप्ति स्थान सस्ता साहित्य मंडल नई दिल्ली है।

सच्ची आजादी

महात्मा भगवान दीन बड़े गहरे जीवन शास्त्री थे। विशेष बात यह कि वे जीवन को भीतर तक देखते-परखते थे और उसे विकार से संस्कार की ओर मोड़ते थे। वे बड़े काम के आदमी थे, पर स्वतंत्र भारत ने उनका उपयोग नहीं किया; क्योंकि स्वतंत्र भारत के नेता सिर्फ उनके ही चेहरों को पहचानते हैं, जो तलवे चाटें, परिक्रमा करें या धक्का-मुक्की में दक्ष हों। महात्मा भगवान दीन इन कार्यों में अल्पात्मा थे। वे चले गए, पर अपने पीछे जो साहित्य वे छोड़ गए हैं, वह उनका पूर्ण प्रतिनिधित्व करता है।

उन्हीं के २२ छोटे लेखों का संग्रह है—सच्ची आजादी। विचारों में सरसता है, सबलता है और वे झकझोरते हैं, आगे बढ़ाते हैं। नई पीढ़ी में खूब प्रचार होना चाहिए उसका। १२० पृ० की पुस्तक का मूल्य दो रुपये, प्राप्ति स्थान सस्ता साहित्य मंडल नई दिल्ली।

दो पुस्तकें

'शिक्षा का विकास' श्री भगवान प्रसाद लिखित भारत में शिक्षा के विकास की अध्ययनपूर्ण पुस्तक है और शिक्षाविदों के लिए उपयोगी। 'प्रेमप्रपंच' विश्व विख्यात कलाकार श्री तुर्गनेव के उपन्यास का अनुवाद है। दोनों का मूल्य क्रमशः ३-२ रुपये है और प्राप्ति स्थान उपर्युक्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तार—बम्बई—'साहूजैन'

ध्रांगध्रा—'कैमिकल्स'

आरूमुगनेरी—'कैमिकल्स'

टेलीफोन:—बम्बई—२५१२१८-१९-१.

(तीन लाइन)

ध्रांगध्रा - ३१ एवं ६७

कयालपट्टनम—३०

卐

ध्रांगध्रा कैमिकल वर्क्स लिमिटेड

१५ ए-हार्निमन सर्किल

फोर्ट, बम्बई-१

प्रसिद्ध 'हार्स शू' छाप कैमिकल्स के निर्माता

सोडा ऐश, सोडा बाईकार्ब, केलशियम क्लोराइड,

नमक और इलेक्ट्रोलीटिक कास्टिक सोडा

(९८ प्रतिशत N&OH Purity)

卐

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

ध्रांगध्रा (गुजरात राज्य)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

शिलाओं, पेड़ों की
छाल, जानवरों की खाल
अथवा धातुओं के
टुकड़ों की लिखावटें
सभ्यता के
उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक
नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के
विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण
साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज
आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

ROHTAS

VARUJAN INDUSTRIES

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

मुद्रक—प्रखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स, सहारनपुर में मुद्रित—प्रकाशित
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

नैतिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक
राष्ट्रीय चेतना का प्रेरक मनोरंजक मासिक

को ठीक जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
पर राय बनाने के लिए मासिक आवश्यक है,

'नया जीवन' में
दैनिक-साप्ताहिक-मासिक की इन विशेषताओं का समन्वय है।
आप उसका एक अंक देखकर ही इस के साक्षी हो जाएंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज के एक छोटे पुर्जे पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी
अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज के बिना न
शास्त्र मिलते न साहित्य।
कागज हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है।

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन राम ने क्या कुछ कहा,
कि श्याम भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
राम और श्याम दो सगे भाई,
राम स्वभाव का कड़वा,
श्याम शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित यह साहित्य
आपके पुस्तकालय में न हो तो इसे तुरन्त मंगा लीजिये !

★ जिन्दगी मुस्कराई ४.०० रु०
★ बाजे पायलिया के घुंघरू ४.०० रु०
★ दीप जले शंख बजे ३.०० रु०
★ महके आँगन चहके द्वार ४.०० रु०

(नई स्फुरणा के साथ जीवन को चमकाने वाली चारों पुस्तकें)

★ माटी हो गई सोना २.०० रु०
बलिदान की चेतना से पूर्ण १७ अमर अक्षर चित्रों का संग्रह

★ आकाश के तारे धरती के फूल २.०० रु०
जीवन की गहराई, लोच और गति से भरपूर अनोखी लघु कथाएँ

★ क्षण बोले कण मुस्काए ४.०० रु०
लेखक की विशिष्ट शैली का प्रतिनिधित्व करने वाले
ललित एवं मनोरंजक निबंधों का नव प्रकाशित संग्रह

प्रकाशक:—

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुंड, वाराणसी

विक्रय केन्द्र ३६२०/२१ नेता जी सुभाष मार्ग, दिल्ली—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापित १९५५ शिलान्यास : राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद द्वारा

संस्थापक : मान्य श्री अजित प्रसाद जैन (राज्यपाल केरल)

सेवा निधि किदवई अपंग आश्रम

मूक वधिर विद्यालय

प्रद्युमन नगर : सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

मानव भगवान की अद्भुत रचना है। अनेक रूपा उसकी इस विश्व रचना में कुछ ऐसे मानव-पुत्र भी हैं जिनकी स्थिति एक दागदार मूर्ति जैसी है ! ऐसे मानव- पुत्र ही तो अपंग कहे जाते हैं।

क्या अपंग व्यक्ति हमारी दया और करुणा के पात्र हैं ? शायद नहीं। आखिर हम उन्हें 'बेचारा' मानकर उपेक्षित क्यों समझें। आवश्यक यह है कि वे सामान्य नागरिक की भांति स्वाभिमानी एवं शिक्षित ही न हों, अपितु जीविका-उपार्जन में भी समर्थ एवं तत्पर हों।

इसी पवित्र उद्देश्य से उत्प्रेरित होकर आपकी यह अपनी संस्था १९५५ से कार्यरत है। इस संस्था में गूंगे-बहरे बालक बालिकाएँ अपने व्यक्तित्व के विकास की सभी सम्भावनाओं का अन्वेषण और सम्पादन करते हैं।

संस्था में लगभग ४५ छात्र-छात्राएं तथा ५ प्रशिक्षित अध्यापक हैं। दूर नगरों से आने वाले छात्र-छात्राओं के लिए अलग-अलग, साधन सुविधाओं से पूर्ण दो छात्रावासों की व्यवस्था है, जिनकी देखभाल एक सुयोग्य मैट्रन द्वारा की जाती है। कक्षा ७ तक शिक्षा देने के साथ-साथ लकड़ी का काम, मोमबत्ती निर्माण और सिलाई- कढ़ाई का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

यदि आपकी दृष्टि-सीमा में कोई गूंगा बहरा बालक-बालिका हो, तो कृपया उसे हमारी संस्था के द्वार तक पहुंचा कर अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक दायित्व का पालन कीजिए।

यह संस्था सदैव आपके स्नेह एवं संरक्षण की आकांक्षा करती है। विशेष जानकारी के लिये लिखें।

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दून घाटी

= का =

गौरव

अमिताभ टैक्सटाइल मिल्स लिमिटेड

देहरादून :: उत्तर प्रदेश

श्रेष्ठतम :

★ सूत

★★ हौज़री

★★★ बंटा सूत

निर्माता

अमिताभ ! अमिताभ !! अमिताभ !!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, —ईख की खोज करने वाला—

उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला—
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है!

★

कोशिश कीजिये—

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता—

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए!

बढ़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत

एवं

भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस : चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—११६, ११४, १६०

संचालक
सेठ सुशील कुमार बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरी जानकारी

- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य पाँच रुपये औरसाधारण प्रति का पचास पैसे है। विशेषांक का मूल्य पृथक, जो ग्राहकों को वार्षिक मूल्यमें ही मिलताहै।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और अपनी प्रत्येक रचना पर अन्त में अपना पूरा नाम-पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह प्यार-मान दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें। ३ महाने के भीतर आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाए, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या लिखने की आवश्यक प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीज़ों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक

'नया जीवन' • सहारनपुर • उ० प्र०

नया जीवन

विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

•

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'
निदेशक

अखिलेश
सम्पादक-सचालक

•

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का फालतू समय चैन से काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं!

•

जून १९६५
संचालक

विकास लिमिटेड
सहारनपुर • उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अता-पता

लोकराज्य	प्रो० देवेन्द्र दीपक, राजकीय डिग्री कालेज, सीधी, मध्य प्रदेश	१६३
आँसुओं का जन्म दिन	श्री मधुर शास्त्री ५४, मिन्टो रोड, नई दिल्ली	१६४
लुटने का डर बना रहेगा	श्री मदन शलभ, ४८, कोटला यूसूफ, हापुड़ जिला मेरठ	१६४
राष्ट्र-चिन्तन	स्तम्भ	१६५
लोगों को नेता चाहिए	प्रो० श्री विवेकी राय, डिग्री कालेज गाजीपुर, उत्तर प्रदेश	१७२
अच्छा पुराना लेकर और बुरा पुराना छोड़कर	श्री हरिदत्त शर्मा, 'नवभारत टाइम्स' कार्यालय ७, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली	१७३
मनोविज्ञान की उपलब्धियाँ	श्री वंश गोपाल झिंगरन, प्रिंसिपल डी. एस. टीचर्स ट्रेनिंग कालेज, अलीगढ़	१७६
राजस्थान का यशस्वी साधक	श्री गोविन्द शास्त्री, चूरु (राजस्थान)	१७८
लाल बुझक्कड़	श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय डालमिया नगर, (बिहार)	१८०
गिर कर भी यदि हम सम्भल सकें तो !	श्री देवेन्द्र स्नेही, गुरुकुल कुरुक्षेत्र (पंजाब)	१८३
मील का पत्थर, जिससे हर लम्बे यात्री को काम तो पड़ता है, पर मोह नहीं होता !	श्रीमती प्रमोद दत्ता द्वारा मेजर आर. सी. दत्ता ११, बिहार बटैलियन एन. सी. सी. पटना	१८५
धर्म और मान्यता	× × ×	१८८
प्राचीन ऐतिहासिक गढ़ कन्नौज	श्री फौजदार सिंह, साधना कुटीर, कांटा, चंदौली, वाराणसी	१८९
कालेपानी की कहानी	श्री उपेन्द्र नाथ वन्द्योपाध्याय, सम्पादक 'युगान्तर'	१९३
अपने पढ़ने के कमरे में	स्तम्भ	१९७
पुस्तक-परिचय	स्तम्भ	१९९
नए लेखकों की पाठशाला	स्तम्भ	२००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत वर्ष पहले, जब नई कविता नई कविता के रूप में ढली भी नहीं थी और प्रयोगवाद के पलने में ही निपिल चूस रही थी, देवेन्द्र दीपक की एक कविता मैंने सुनी थी—पपीते के तीन पेड़।

पेड़ में जीवन है, पर अचल जीवन। मुझे उन पेड़ों में जीवन की धड़कन तो सुनाई दी ही थी, पर यह जीवन काफ़ी तेज स्पन्दनों से भी व्याप्त था, जैसे प्रपात का उच्छल जल।

दीपक जी पढ़ते और बढ़ते ही नहीं रहे, चढ़ते भी रहे और अब वे जीवन की जिस चट्टान से बोलते हैं, वहाँ ज्ञान की सूक्तियाँ भी हैं और हृदय की अनुभूतियाँ भी। सूक्तियाँ बुद्धि पर लकीर खींचती-सी और अनुभूतियां हृदय में रस सींचती-सी—उपदेश के आग्रह से दोनों दूर, स्पष्टता से दोनों भर पूर; कहूँ पुरनूर!

वे अपनी बात कहते हैं—हाँ, अपनी बात। इस बात में कहीं उनका अवलोकन होता है, कहीं चिन्तन। यों भी कि कहीं अवलोकन में चिंतन और कहीं चिन्तन में अवलोकन। अपनी कलम के कर्म में वे बौद्धिक भी हैं, हार्दिक भी। दृष्टि उनकी अच्छी है, पकड़ भी ओछी नहीं। अभ्यास की पगडंडियाँ वे पार कर चुके हैं, न्यास की राह उनके पैरों तले है। उनके कथ्य में ध्येय आ गया है, तो देय आया ही।

देवेन्द्र 'दीपक' एक सफल अध्यापक और सरल साहित्यकार—सब मिलाकर प्रतिभाशाली कर्म।

लोकराज्य

(१)

लोक के समुद्र में
पहले व्यक्ति का हो विलय
और तब
व्यक्ति का हो उदय।

(२)

..... ओं जो भी रातें
वे सबकी मुट्ठियों में आएं
सबकी ही इच्छा मिचाएं
कुछ ही खत्तियों में
बंद न कर लिए जाएं।

(३)

दण्ड की बिजली
चमके जब भी जहाँ कहीं
गिरे भी वहीं
दूसरा कोई क्यों
उस मौत को भोगे?

(४)

समृद्धि के परनियाले बादल
देश में जब कभी बरसें
अमीरों के बाग़ ही नहीं,
ग़रीबों के खेत भी स[illegible]

(५)

हाथ, जो अपने दूसरों का होने
क्यों न हथकड़ियां पहनें?
हाथ, जो अपने अपने का करने हों राज
[illegible] पांव शोभा, उनका हो सम्मान।

(६)

साँप जो भी हों
अहिंसा के नाम पर
वे दूध न पीएं
[illegible]
और वे सब बाँबी
बंद कर दिए जाएं।

(७)

[illegible] फूलों को बेचने नहीं,
[illegible] करें,
[illegible] -दान को
[illegible] रहने दें,
[illegible] राक्षस
[illegible] न चूस सकाने दें।

देवेन्द्र दीपक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आंसुओं का जन्म दिन

श्री मधुर शास्त्री

दे रहे हैं अपशकुन उपहार मुझको ;
आज मेरे आंसुओं का जन्म दिन है !

फिर गुलाबी आग दहकेगी चमन में
शोक मेरी हार पर देगा बधाई ,
पीर आएगी लिपट नूतन वसन में
हिचकियों से आज फिर होगी मिलाई ,
गोद फिर देंगे जले अंगार मुझको ;
आज मेरे आँसुओं का जन्म दिन है !

तापसी उन्मन घटा फिर से घिरेगी
व्योम से फिर टूटता तारा दिखेगा ,
फिर नए अरमान पर बिजली गिरेगी
फिर नया इतिहास आवारा लिखेगा ,
रात फिर देगी अधिक अंधियार मुझको;
आज मेरे आँसुओं का जन्म दिन है !

फिर उदासी शाम छाएगी हृदय पर
स्वप्न सब टूटे हुए फिर से जुड़ेंगे ,
दुर्दिनों का दर्द जागेगा समय पर
फिर खुशी के पाँव इस दर से मुड़ेंगे ।
मृत्यु चूमेगी, करेगी प्यार मुझको ;
आज मेरे आसुओं का जन्म दिन है !

★

लुटने का डर बना रहेगा !

श्री मदन शलभ

जो चाहे जयचन्द कहा ले, गद्दारों में नाम लिखा ले
गौरी को घर में बुलवाकर क्या ऊँचा सर बना रहेगा

बांध, बांध कर ऊँचे-ऊँचे
नहर निकालो नदियों से तुम ,
माटी को कंचन में बदलो
तम हर हर घर करदो पूनम ,
चाहे ताजमहल बनवा लो ,
कण कण में हीरे जड़वा लो

पहरेदारी ठीक नहीं, तो लुटने का डर बना रहेगा

चढ़ती ही आती है आंधी—
बढ़ता ही जाता अँधियारा ,
कांप रही है लौ दीपक की—
स्नेह चुका जाता है सारा,
चाहे बातें लाख बना लो ,
ऊषा के सपने दिखला लो

शक्ति बिना कैसे झंझा में दीप अनश्वर बना रहेगा

अनगिन फूल झरे बेमौसम—
काँटों की जब डगरी छानी ,
लाने को मधुमास कर चुकीं—
अनगिन कलियाँ हैं कुर्बानी ,
यह कैसा वसंत है आया
बदलो नहीं बाग की काया

माली, बेतलाओ उपवन में कब तक पतझर बना रहेगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

प्रजातन्त्र के पोषण के लिए

- प्रजा समाजवादी नेता श्री पत्तम थानु पिल्ले सरकार में गवर्नर हो गए।
- श्री अशोक मेहता प्रजा समाजवादी पार्टी का नेतृत्व छोड़ कर कांग्रेस-सरकार के योजना कमीशन के उपाध्यक्ष बन गए।
- क्रांतिमूर्ति श्री कृष्णदत्त पालीवाल स्वतंत्र पार्टी का प्रान्तीय नेतृत्व छोड़कर फिर कांग्रेस में आ गए।
- अब समाचार है कि तेजस्वी संसद-सदस्य श्रीनाथ पै प्रजा समाजवादी पार्टी छोड़कर संयुक्त राष्ट्र संघ के लिए भारतीय प्रतिनिधि मंडल में सदस्य होने वाले हैं और इसी पार्टी के मंत्री श्री प्रेम भसीन भी कहीं कुछ बनने वाले हैं।
- यह खबर भी सत्य का रूप ले रही है कि स्वतंत्र पार्टी की महाशक्ति महाराजा जयपुर स्पेन में राजदूत होने वाले हैं और उनके साथ महारानी गायत्री देवी और डूंगरपुर के महारावल भी पार्टी से हट रहे हैं।

महत्वपूर्ण, उचित और आवश्यक प्रश्न है कि क्या ये सब परिवर्तन केवल पद के लिए हैं ? इस प्रश्न का उघड़ा हुआ रूप है यह कि क्या ये सब लोग पदों के लिए अपने विश्वासों को बेच रहे हैं ? हल्की चर्चाओं में कहा जाता है-हां, यही बात है, ये लोग थक गए हैं और आराम चाहते हैं। यदि ऐसा हो, तो मानना पड़ेगा कि ये मानवीय चरित्र-ह्रास के उदाहरण हैं-मोर्चे से घबराकर भाग आने के दयनीय उदाहरण हैं ये लोग और इनकी निन्दा होनी चाहिए।

मैं इनमें से कई को जानता हूँ और इस प्रश्न पर मैंने बार-बार गहराई से विचार किया है। लगता है कि ये लोग थक गए हैं और आराम चाहते हैं। सत्य यह नहीं है, बल्कि सत्य यह है कि ये लोग थक गए हैं और काम चाहते हैं।

यह थकना क्या ? यह काम क्या ? १९३४-३५ में कांग्रेस के भीतर एक अच्छा तकड़ा समाजवादी ग्रुप बन गया था। १९३६ की लखनऊ कांग्रेस में आचार्य नरेन्द्र देव, जय प्रकाश नारायण, सम्पूर्णा नन्द, यूसुफ मेहर अली मीनू मसानी, अच्युत पटवर्धन जैसे लोगों ने बड़े गौरव-पूर्ण ढंग से अपने को पेश किया था और अध्यक्ष श्री जवाहर लाल नेहरू ने उनमें से चार को अपनी कार्यकारिणी में भी लिया था। १९३७ के आम चुनाव के बाद जब यू० पी० में मंत्री मंडल बना, तो समाजवादी ग्रुप और गांधी वादी ग्रुप में गहरी खाई हो गई थी। स्थिति यहां तक गरम थी कि जवाहर लाल जी भी कांग्रेस में रह सकेंगे या नहीं, यह भी अनिश्चित था।

कशमकश के उस युग में एक घटना हुई कि श्री सम्पूर्णानन्द समाजवादी ग्रुप छोड़कर यू० पी० मंत्री मंडल में आ गए। कुछ लोगों ने खुले आम इसे पदलोलुपता का एक उदाहरण कहा था और बहुत कड़वे होकर इस प्रश्न की चर्चा की थी। बात यह थी कि सम्पूर्णानन्द जी की कलम ने जागरण में बहुत कड़वे होकर गाँधीवाद की आलोचना और समाजवाद का समर्थन किया था। आज भी कोई उन लेखों-टिप्पणियों को पढ़े, तो स्तब्ध रह जाए। वे ही सम्पूर्णानन्द जी अब गांधी वादी मंत्री मंडल में थे, तो आलोचना सहज थी, पर सम्पूर्णानन्द जी का दृष्टिकोण एक भविष्य द्रष्टा राजनीतिज्ञ का दृष्टिकोण था। वे सोचते थे, मानते थे कि युग की परिस्थितियों से मजबूर होकर आज कल-परसों कांग्रेस को अपना लक्ष्य समाजवाद मानना पड़ेगा। यदि समाजवादी कांग्रेस से पृथक होते हैं, तो अपने काम के उस श्रेय से वंचित रहेंगे और कांग्रेस को जो शक्ति देश में प्राप्त हो गई है, उससे दूर होकर भटक जाएंगे, शक्ति हीन रहेंगे।

१९५४ में कांग्रेस ने अपने अवाड़ी-अधिवेशन में प्रसिद्ध गांधीवादी श्री ढेबर भाई की अध्यक्षता में समाजवाद को अपना लक्ष्य मान लिया और सम्पूर्णानन्द जी की बात ठीक निकली कि समाजवादियों को उसका कोई श्रेय नहीं मिला, क्योंकि इससे बहुत पहले ही समाजवादी लोग कांग्रेस से अलग हो चुके थे। इन समाजवादियों के अतिरिक्त उनसे पहले और उनके बाद कुछ लोग कई कारणों से कांग्रेस से अलग हुए। इनमें कुछ कम्यूनिस्ट पार्टी में चले गये, कुछ प्रजासमाजवादी और समाजवादी पार्टी में हैं और कुछ स्वतन्त्र पार्टी में चले गये। इन जाने वालों में जो लोग कम्यूनिस्ट पार्टी में गये, वे ठीक रहे-उन्हें काम करने को एक व्यवस्थित पार्टी की शक्ति और मानसिक सन्तुलन के लिए कम्यूनिज्म का आदर्श मिल गया। फल-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वरूप उनका व्यक्तित्व पनपता चला, पर दूसरों को न मजबूत-व्यवस्थित पार्टी मिली, न कोई आदर्श ही प्रेरणा-दायक। फलस्वरूप उनका व्यक्तित्व झकझोरा गया और धीरे-धीरे वे थकते गए-बेकाम होते गए। श्री जयप्रकाश नारायण ने सर्वोदय की पताका सम्भाल कर अपने को बुद्धिमत्ता पूर्वक इस स्थिति से बचाने का प्रयत्न किया।

इस सम्बन्ध में सबसे करुणाजनक और विडम्बनापूर्ण स्थिति समाजवादियों की हुई। उनके पास मजबूत पार्टी न सही, पर समाजवाद का मजबूत नारा तो था। अवाड़ी में कांग्रेस ने उनका वह नारा भी छीन लिया। आवश्यकता थी कि वे उसी समय अपना संगठन तोड़ कर कांग्रेस में आ जाते और घोषणा करते कि हमारा कांग्रेस से यही मतभेद था। हमारा नारा सफल हो गया, कांग्रेस भटक कर हमारे झंडे के नीचे आ गई, इसलिए हम फिर अपनी मातृसंस्था के साथ सहयोग कर रहे हैं, पर दुर्भाग्यवश उनके नेताओं में ऐसा कोई सूझ का आदमी न था, जो यह पहल करता। नतीजा यह कि वे हथियार छिने, पर उजड्ड सिपाहियों की तरह जंगलों-मार्ग हीन स्थानों पर हल्ला करते हुए घूमने लगे, इस कल्पना में कि हम यों ही दिल्ली पहुँच जायेंगे।

१९३१ में जब कांग्रेस और अंग्रेज सरकार में समझौता हुआ, तो इंगलैंड के राजनीतिज्ञों में ऐसे अनेक थे, जिन्होंने इसे वायसराय इरविन का भोन्दूपन बताया। उन के बाद का वायसराय लार्ड विलिंगडन इस समझौते को तोड़ने पर उतारू था और बहाने की तलाश कर रहा था। यू० पी० में किसानों की हालत खराब थी और यू० पी० कांग्रेस उनके लिए सरकार से कुछ बातें मनवाना चाहती थी, जिनसे किसानों को राहत मिले। वायसराय के इशारे पर यू० पी० के गवर्नर ने उन बहुत मुनासिब बातों को नहीं माना और बड़ा रूखा व्यवहार किया। इस पर सत्याग्रह की बात चली और गवर्नर ने लीडरों को पकड़ कर जेल में बंद कर दिया। साथ ही वे सब बातें मान लीं, जिनके लिए सत्याग्रह हो रहा था और इस तरह किसानों को साथ लेने की कोशिश की।

गान्धी जी ने यह सब विलायत में सुना जहाँ वे गोल-मेज कांफ्रेंस में शामिल होने गये थे। लौटते समय उन्होंने जहाज पर से ही लार्ड विलिंगडन से मिलने का समय माँगा, पर उसने बम्बई में ही उन्हें गिरफ्तार कर लिया—लड़ाई छिड़ गई, यानी कांग्रेस के सिर पड़ गई। जेल से छूटकर यू० पी० कांग्रेस के अध्यक्ष श्री रफीअहमद किदवई ने वक्तव्य दिया कि जिन बातों के लिए हमने सत्याग्रह का ऐलान किया, जब वे बातें सरकार ने मान लीं तो कांग्रेस को अपना सत्याग्रह वापस ले लेना चाहिए था, जो बाहर थे, उन्हें यह बात सूझी ही नहीं। यही हाल समाजवादियों की हुई कि कांग्रेस के समाजवादी हो जाने पर भी वे अलग खड़े रहे और आज तक खड़े हैं-अड़े हैं। यह अड़ जिद की है, लक्ष्यहीन है और इसमें फंसे समझदार और देश भक्त लोग यदि थकान महसूस करें और अपने को दूसरे कामों में लगाने के लिए पहल करें, तो यह कहना उचित नहीं है कि वे पदों के लिए जगह बदल रहे या थक गये हैं और आराम चाहते हैं बल्कि सत्य यही है कि वे उस निष्क्रियता से थक गए हैं और काम चाहते हैं।

निष्क्रियता की यह थकान श्री जय प्रकाश नारायण की आत्मा को भी घेर रही है, पर उसका रूप दूसरा है। उन्हें युगसंत विनोबा जैसा नेता प्राप्त हैं, दादा धर्माधिकारी, धीरेन्द्र मजूमदार, काका कालेलकर, सिद्धराज ढड्ढा, आर्यनायकम्, ढेबर, कृपलानी (राष्ट्र का सबसे दयालु महान पुरुष) रंगनाथ दिवाकर आदि का आदर्श निर्मल मंडल प्राप्त है, त्याग और निष्ठावान कार्य-कर्ताओं का संघ प्राप्त है, गाँधी जी का जीवन-दर्शन प्राप्त है, समाज में आदर प्राप्त है, पर वे घूम रहे हैं चल नहीं पा रहे। उनकी असफलता की कुंजी यह है कि वे विनोबा जी की पदयात्रा का मोह छुड़ाकर उन्हें सेवाग्राम की गान्धी-कुटी में बैठाने में योजना पूर्वक देश का नेतृत्व सम्भालने के लिए तैयार करने में असफल रहे हैं और इस स्थिति में विनोबा को पृष्ठभूमि में रखकर स्वयं नेतृत्व सम्भालने में भी असफल रहे हैं। कहूँ, वे सत्कर्म में रत सत्पुरुष हो हुए हैं, पर क्रांति विधाता युग पुरुष नहीं। सत्य यह है कि गान्धी जी बड़े अभागे नेता थे कि उनकी धरोहर के न उनके शासक शिष्य वफादार सिद्ध हुए, न साधक शिष्य।

यह हुई प्रसंग की बात अब। फिर अपनी बात को पकड़े कि जो लोग आज स्थान बदल रहे हैं, वे निष्क्रियता की थकान से ऊबे लोग हैं और उनकी कर्मशक्ति और भक्ति तकाजा करती है कि वे आराम से न बैठकर काम करें, जिससे देश को लाभ पहुँचे और उनकी शक्ति का सदुपयोग हो।

यहीं एक बारीक सवाल कि ये लोग कांग्रेस छोड़ जिन पार्टियों में गए, वे इतनी समर्थ क्यों नहीं बन सकीं कि ये लोग निष्क्रियता की थकान में फँसने से बच जाते। पहली बात तो यही कि उनके पास कोई जीवन दर्शन नहीं है, जो पार्टी का प्राण होता है और दूसरी बात यह कि उन पार्टियों ने सीधे जनता में काम न करके अपनी शक्ति ऐसे हुल्लड़ों में लगाई जो जनता में कोई गहरी सहानुभूति प्राप्त करने में असफल रहे। रस का श्रोत है जनता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उससे दूर रहकर ये सूख गए।

अब एक पैना-सा प्रश्न कि जो लोग अपने कामों से पार्टियों को प्राणवान नहीं बना सके, वे अब क्या काम करेंगे लौटकर? बात यह है कि काम करने के दो तरीके हैं। एक यह कि आदमी साधना के द्वारा काम करें और एक यह कि साधनों के द्वारा काम करे। साधना के द्वारा काम करने की शक्ति और भावना गान्धी जी के बाद समाप्त हो गई, अब तो सब कोई साधनों के द्वारा काम करना चाहते हैं। कहना चाहिए कि मानस क्रान्तिकारी नहीं रहा, सुधारवादी या लिबरल हो गया है और हम इस तरह काम करना चाहते हैं कि काम तो हो, पर आराम भी हो। लीडर तो हम हैं, पर कार्यकर्ता नहीं। हम डायरेक्टर तो हैं, पर एक्टर नहीं। हम वाद विश्वासी नहीं रहे, पद अभ्यासी हो गये हैं। इसी कारण ये दल शक्तिधर नहीं हो सके और कांग्रेस का संगठन पक्ष भी शक्तिहीन हो गया। इस स्थिति को देखकर पंडित जवाहर लाल नेहरू जी कई बार प्रधानमन्त्री पद छोड़ कर खुले मैदान में आने का इरादा करते थे, साधनों का पथ छोड़कर साधना की पुरानी राह पर आना चाहते थे, पर साधनों का आकर्षण उनके बढ़ते चरण रोक लेता था और वे रह जाते थे मन मसोस कर।

यहीं उपजता है एक हड़कम्पी प्रश्न-फिर इन राजनैतिक दलों का भविष्य क्या है? ये किस शक्ति से पनपेंगे? आज जो स्थिति है, उसमें गैर कम्यूनिस्ट और गैर कांग्रेसी समाजवादी दलों के भविष्य की कोई आशा नहीं है और आने वाला १९६७ का आम चुनाव उनके कई नेताओं को बुरे पाठ पढ़ायेगा। जिनके पास न सोच है, न कर्म है, न लक्ष्य है, वे अखाड़े में खड़े झूमते चाहे जब तक रहें, कुश्ती नहीं मार सकते, यह निश्चित है। तीन दल हैं, जिन पर विचार हो सकता है। कांग्रेस, कम्यूनिस्ट, जनसंघ।

❀ कांग्रेस के पास कोई जीवन-दर्शन नहीं है। सच यह कि पहले भी नहीं था। वह व्यक्तियों में जीवित रही। गाँधीवाद से उसका यों ही सम्पर्क था, गाँधी जी से अधिक था। बाद में जवाहर नीति से उसका यों ही सम्पर्क था, जवाहर लाल जी से अधिक था। हाँ, एक लक्ष्य उसके पास पहले भी था और अब भी है। वह पहले था भारत को स्वतन्त्र कराना और अब है शासन को अपने हाथ में रखना—इसी पर आज यह जीवित है। यह शासन १९६७ के चुनाव के बाद भी उसके ही हाथ में रहेगा, क्योंकि कांग्रेस की सबसे बड़ी शक्ति उसके विरोधियों की अशक्ति है। मैं जनता के हर वर्ग से और क्षेत्र से सम्पर्क रखता हूं और मुझे लगता है कि यदि कांग्रेस के बड़े नेता राज्यों में फैली आपसी फूट को सख्ती से कुचल दें और प्रशासन को चुस्त कर दें, तो अभी कई चुनाव जीतने की परिस्थिति कांग्रेस के पक्ष में है। उसे चुनाव में हराने का दम अभी किसी दल में नहीं है, न हो सकता है।

❀ कम्यूनिस्ट पार्टी का संगठन अच्छा है, उसके पास निष्ठावान कार्यकर्ता है, सुविज्ञ नेता हैं, अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिज्म का जीवन दर्शन है और साम्यवादी देशों की 'सपोर्ट' है। उसके द्वारा बाहर से अधिक अन्दर काम हो रहा है, जिसका एक सिरा राष्ट्रीय है, तो दूसरा अन्तर्राष्ट्रीय। कम्यूनिस्ट पंजा भीतर कहां तक पहुँचा हुआ है और कहाँ कहाँ तक पहुँचा हुआ है, इसे जनता तो क्या पूरी तरह सरकार भी शायद नहीं जानती। यूनियनों में उनका प्रभाव बढ़ रहा है और यह न समझना मूर्खता होगी कि भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी कांग्रेस-शासन का तख्ता उलटने की भरपूर तैयारी कर रही है और चीन की पूरी शक्ति इस काम में उसके साथ है।

प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू तुर्किस्तान गए थे, तो सब जगह घूमे फिरे थे और उनका स्वागत-समारोह भी हुआ था, पर वे तुर्किस्तान से चले कि वहाँ राजपलटी हो गई। जवाहरलाल तब तक रास्ते में ही थे। जब वे दिल्ली के पालम हवाई अड्डे पर उतरे, तो पंडित गोविन्द वल्लभ पन्त ने हँसकर उनसे कहा—"आपने तुर्किस्तान की उथल पुथल को तीन दिन लेट कर दिया।" जवाहर लाल जी ने बड़ी ही अर्थ भरी आँखों से उनकी तरफ देखा। भारत में भी वैसा ही चमत्कार करने की तैयारी में भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी लगी है, क्योंकि चुनाव में जीतकर शासन पा लेने का आशा कम्यूनिस्टों को नहीं है।

❀ जन संघ के पास अपना जीवन दर्शन है-हिन्दू राष्ट्र। विवाद से बचने के लिए कहना चाहिए-हिन्दुत्व प्रधान राजनीति। भारत में हिन्दुओं का सर्वत्र बहुमत है और यदि कोई दल हिन्दुओं को साथ ले सके, तो वह आम चुनाव में निश्चित रूप से बहुमत प्राप्त करके देश का शासन हाथ में ले सकता है। इस दृष्टि से जनसंघ की राजनीति सिद्धान्त रूप से अपने में परिपूर्ण है, पर व्यवहार पक्ष की कठिनाई यह है कि संघ हिन्दू समाज को हिन्दू राष्ट्र के लिए उद्बोधित और उद्वेलित करने में असफल रहा है। इस दृष्टि से जनसंघ की शक्ति आवश्यक बढ़ाव की ओर नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने कहा कि कांग्रेस की सबसे बड़ी-शक्ति विरोधी दलों की अशक्ति है। उसी तरह जनसंघ की चुनाव में अनेक सीटों पर जीत में कांग्रेस से क्षेत्र विशेष की जनता की नाराजी मुख्य कारण रही है। गहरी छानबीन और दूर-दूर तक की ताकझांक से भी ऐसा नहीं लगता कि आम चुनाव में देश व्यापी सफलता पाकर जनसंघ दिल्ली के तख्त पर जल्दी ही आजाए।

इस लम्बे विवेचन का सार यही है कि हमारे देश का नया प्रजातन्त्र स्वस्थ वातावरण में पनपकर समर्थ नहीं हो रहा है, सबल नहीं बन रहा है—बस लड़खड़ाता-सा चल रहा है और जिन्हें बेचैनी है कि वह जिये-पनपे, उनकी जिम्मेदारी है कि वे इस दिशा में गहरे पैठकर कुछ सोचें और पूरी शक्ति से उभर कर कुछ करें। इस प्रजातन्त्र को कांग्रेस ने जन्म दिया है और इस प्रजातन्त्र ने कांग्रेस को इतने वर्षों तक शासन का सुअवसर दिया है, साथ ही यह कि कोई विरोधी दल इस समय शासन सम्भालने की स्थिति में नहीं है, इसलिए कांग्रेस के कर्णधारों की इस सम्बन्ध में विशेष जिम्मेदारी है। समय का तकाजा है कि वे इधर तुरन्त और पूरा ध्यान दें।

हमारे छोटे-से प्रधान मंत्री

जब श्री लाल बहादुर शास्त्री प्रधान मंत्री चुने गए, तो बिना कही और सर्वत्र व्याप्त एक राय यह थी—शास्त्री जी भले और ईमानदार आदमी हैं, पर विश्व-व्यक्तित्व की दृष्टि से वे छोटे हैं, कमजोर हैं।

शास्त्री जी इस राय से परिचित थे और शुरू के सप्ताहों में ही उन्होंने एक बार हँस कर कहा था—"मेरा शरीर शीशे की तरह कमजोर है, पर एक ऐसा शीशा भी होता है, जो गोली लगने पर भी नहीं टूटता।" अपने प्रधान मंत्रित्व के पहले ही वर्ष में शास्त्री जी ने अपनी बात सच करके दिखा दी है। भारत का भाग्य आज शास्त्री जी के हाथ में है, इसलिये आवश्यकता है कि देश की जनता उन्हें समझे, पहचाने; क्योंकि जिसे हम समझते हैं, उसे ही अपना सद्भाव-सहयोग दे सकते हैं।

प्रधान मंत्री बनने के बाद जब राष्ट्रमंडल के प्रधान-मंत्रियों का सम्मेलन लन्दन में हुआ, तो शास्त्री जी उसमें जाना चाहते थे, जाने को तैयार थे; यहाँ तक कि उनके कपड़े भी सिल गए थे, पर मंत्रीमंडल के भीतर रहने वालों ने ही हल्ला मचाया कि अभी तक काममूर्ति महापुरुष श्री जवाहर लाल नेहरू उस सम्मेलन में जाते रहे हैं। शास्त्री जी वहाँ बालक-से लगेंगे, जचेंगे नहीं, जमेंगे नहीं और इंगलैंड के धूर्त राजनीतिज्ञ जाने उनसे क्या कहलवा लेंगे। श्रीमती इंदिरा गांधी और श्री टी. टी. कृष्णमाचारी ने इस विचार का नेतृत्व किया और कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज ने इस नेतृत्व को बल दिया। शास्त्री जी लन्दन नहीं गए और उनकी बीमारी को इस का कारण बताया गया। श्रीमती इन्दिरा गांधी और श्री टी. टी. कृष्णमाचारी लन्दन गए, पर वे अभी लन्दन में ही थे और श्री कामराज मद्रास-भ्रमण ही कर रहे थे कि श्री शास्त्री जी ने बिना किसी से सलाह किए श्री स्वर्ण सिंह को विदेश मंत्री घोषित कर दिया। कुछ वीर-बहादुर खिंचे, कुछ तने पर बोला कोई कुछ नहीं।

इस मौन ने दो बम तैयार किए। एक फटा मद्रास में हिन्दी-विरोधी आन्दोलन के हिंसक रूप में और दूसरा व्यापारी-कांग्रेस-संघर्ष के रूप में, जिसका फल था देश व्यापी अन्न-संकट। दोनों तूफान बड़े थे, पर शास्त्री जी शीतल जल का छींटा पी-शांत हो गए। जब ये तूफान जोरों पर थे, कुछ लोग सोचते थे कि शास्त्री जी अब गए वो गये। ये लोग घड़ी-मुहूर्त तक बताते थे, सबकी ज्योति गत त रही। शास्त्री जी मद्रास के सुनियोजित विद्रोह और धनपतियों के मोह को काबू करने में कमाल कर गए। इस काल में शास्त्री जी ने जिस धैर्य और संतुलन का परिचय दिया, वह इतिहास में वन्दनीय होगा। इसके साथ ही श्रीमती विजय-लक्ष्मी पंडित को लोकसभा में लाकर उन्होंने जिस बुद्धि चैतन्य का परिचय दिया, वह भी स्मरणीय है। वे कितने भारी बोझ में दबे हुए थे, इसका पता विरोधी दलों के अविश्वास प्रस्ताव की बहस से लगता है। कई बार उन्हें दूसरों की भाषा बोलनी पड़ी और जानते बूझते दूध के साथ मक्खी भी निगलनी पड़ी, पर यह सब उन्होंने बड़े धीरज से किया और फल यह हुआ कि उनके विरोधी समझ गए कि शास्त्री जी छोटे हैं, पर हल्के नहीं। इससे मेलकी गांठ लगी और वातावरण में स्थिरता आई।

यहीं आगया चीन के ऐटम बम का धड़ाका। देश के बौद्धिक वर्ग बेचैन हुआ और सबने चाहा कि भारत ऐटम बम बनाने की घोषणा करे, पर शास्त्री जी ने एक बार, दो बार, सौ बार और एक तरह, दो तरह, सौ तरह कहा ना, भारत ऐटम बम नहीं बनाएगा, क्योंकि ऐटम बम युद्ध जीतने का नहीं, मानवता के संहार का अस्त्र है। शास्त्री जी के इस निर्णय का और जिस जोर से उन्होंने अपना निर्णय घोषित किया, उसका संसार के पूंजी वादी और साम्यवादी दोनों खेमों पर जबर्दस्त असर पड़ा। दोनों का ध्यान शास्त्री जी के छोटे तन से हटकर बड़े मन पर आया और इस तरह उनका विश्व-व्यक्तित्व निखार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

★

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया। तटस्थ राष्ट्रों के सम्मेलन में शास्त्री जी गये और वहाँ उनका व्यवहार ऊंचा रहा; उनके साथ संसार का सीधा सम्पर्क हुआ।

तब आया वियतनाम का युद्ध। शास्त्री जी ने शांति की अपील की, पर जब अमरीका ने गैस का प्रयोग किया, तो शास्त्री जी ने खुले शब्दों में उसकी कड़वी निंदा की। चीनी आक्रमण पर अमरीका ने भारत की मदद की थी, इसलिए अमरीका भारत से नाराज हुआ और उसने हमारे मुंह पर यह राजनैतिक चपत मारा कि शास्त्री जी को अमरीका आने का जो निमंत्रण राष्ट्रपति जॉसन ने दिया था, उसे स्थगित कर दिया। यह शास्त्री जी का नहीं, भारत का राष्ट्रीय अपमान था और शास्त्री जी ने अपनी अमरीका यात्रा स्थगित न कर, उस निमन्त्रण को ही रद्द कर उसका करारा और गौरव पूर्ण उत्तर दिया। स्थिति यह थी कि तुम जब हमें बुलाओगे आएंगे, पर स्थिति यह हो गई कि जब हमें आना होगा सोचेंगे। बहुत तकड़ा निर्णय था यह और इससे शास्त्री जी का विश्व-व्यक्तित्व बहुत मजबूत हुआ।

अमरीका की नाराजी स्वाभाविक थी। वह कच्छ पर पाकिस्तानी आक्रमण के रूप में फट पड़ी। यह एक नाजुक घड़ी थी, पर दृढ़ता से मुकाबला किया गया। इंगलैंड के बीच में पड़ने से युद्ध रुका हुआ है, पर शास्त्री जी की रूस यात्रा इस बीच हो गई है और वे अपनी धोती पहनकर वह यात्रा कर आए हैं। यह यात्रा नेहरू जी की किसी भी विदेश यात्रा से अधिक महत्वपूर्ण रही और शास्त्री जी रूस के नेताओं को ही नहीं, जनता को भी मुग्ध करने में सफल रहे।

अब वे अलजीयर्स के अफ्रेशियाई सम्मेलन में जा रहे हैं और राष्ट्रमंडल के प्रधान मंत्री सम्मेलन में भी जाएंगे। देश में शेख अब्दुल्ला कांड से उनकी स्थिति मजबूत हुई है और इस प्रकार शास्त्री जी ने अपना प्रधान मंत्रित्व जिस मुलायम वातावरण में आरंभ किया था, वह अब राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय रूप में मजबूत हो गया है। कच्छ की लड़ाई का परिणाम वह कसौटी है, जिस पर इस मजबूती की परीक्षा हो रही है। हमारी शुभ कामना है, वे इसमें सफल हों।

श्री कामराज कसौटी पर

प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री के बाद कांग्रेस-अध्यक्ष श्री कामराज ही इस समय देश के नेताओं में प्रमुख हैं। सच यह है कि इन दो के हाथों में ही इस समय देश का नेतृत्व है और इनकी सफलता-असफलता पर देश का बहुत कुछ निर्भर है। समय का संयोग देखिए कि श्री शास्त्री जी इस समय कच्छ की कसौटी पर हैं और श्री कामराज कांग्रेस की।

श्री कामराज अपनी कामराज-योजना के घोड़े पर सवार होकर एक दिव्य देवदूत की भांति प्रांतीय व्यक्तित्व से राष्ट्रीय व्यक्तित्व के रूप में आए थे। कुछ केन्द्रीय और कुछ राज्यीय मंत्रियों की पदमुक्ति के रूप में युग नेता श्री जवाहर लाल नेहरू ने उन्हें पूजा-अर्घ्य दिया था और पत्रों तक में यह प्रचारित हो जाने के बाद भी कि श्री लाल बहादुर शास्त्री कांग्रेस के अध्यक्ष होंगे, स्वयं शास्त्री जी ने प्रस्ताव करके भुवनेश्वर-कांग्रेस की अध्यक्षता का तिलक उनके माथे चढ़ाया था। भुवनेश्वर में ही नेहरू जी के बीमार पड़ जाने के बाद भी कामराज जी अधिवेशन में नवीन अभ्युदय का वातावरण बनाये रखने में पूरी तरह सफल हुए थे।

नेहरू जी की मृत्यु के बाद श्री लाल बहादुर शास्त्री को निर्विरोध प्रधान मंत्री बनाकर और श्री प्रताप सिंह कैरों की जगह श्री राम किशन को बैठाकर वे जन-गण-मन में आशा की जोत बन गये, पर केरल में कांग्रेसी विधायकों द्वारा कांग्रेसी मंत्री मंडल के विरुद्ध विद्रोह को वे नहीं रोक सके और गद्दार देश द्रोहियों के रूप में लांछित और कारागार में बन्द चीन परस्त कम्यूनिस्टों के मुकाबले वे चुनाव में कांग्रेस को नहीं जिता सके। इस परिस्थिति ने उनके सामने एक प्रश्न चिन्ह खड़ा कर दिया।

यह प्रश्नचिह्न अब प्रश्नचिन्हों की एक माला बन गया है कि प्रश्नचिह्न ही प्रश्नचिह्न। पंजाब में प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष श्री भगवतदयाल, जो पंजाब-मजदूर-संगठन के भी अध्यक्ष हैं दोनों मोर्चों पर कांग्रेसी मुख्य मंत्री को परेशान कर रहे हैं। उड़ीसा में सन्तुष्ट और असंतुष्ट गुट उलझे हुए हैं। उत्तर प्रदेश में कांग्रेसियों का मल्ल युद्ध ही सार्वजनिक जीवन बन गया है। मैसूर में दो गुटों का झगड़ा अब विद्रोह की सीमा को छू रहा है। बिहार में भी खींचतान कड़वी हो रही है। इन सबका परिणाम यह है कि धीरे-धीरे नहीं, तेजी से १९६७ के चुनावों की सफलता खतरे में पड़ती जा रही है, जिसका अर्थ होगा देश में अराजकता की स्थिति।

हालत कितनी सड़ गई है और स्वार्थका कोढ़ कितनी दूर तक फैल गया है, इसे जानने के लिए और गहरे उतरने की जरूरत है। उत्तर प्रदेश में अक्टूबर में कांग्रेस-संगठन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के चुनाव होने वाले हैं। इसकी मूलशक्ति है कर्मठ सदस्य। जो पचास चवन्नी सदस्य बनाए और १३ रुपये अपने पास से यानी कुल २५॥ रुपये दे, वह कर्मठ सदस्य होता है। यह कर्मठ सदस्य प्रदेश कांग्रेस कमेटी का वोटर है। आविष्कार यह किया गया है कि गुटका नेता अपने एक साथी को २५॥) अपने पास से दे देता है। वह साथी अपने जान पहचान के ५० लोगों के नाम स्वयं ही फार्मों पर लिख और स्वयं ही उनके दस्तखत अंगूठा लगा, वे फार्म दफ्तर में दे आता है और कर्मठ सदस्य बन जाता है। इस बार यह ख्याल है कि अगले चुनाव में मंडल कांग्रेस कमेटियों से भी यह पूछा जाएगा कि किसे एम. एल. ए. बनाया जाए। इसलिए अधिक से अधिक मंडल कांग्रेस कमेटियों पर कब्जा करने की कोशिश भी हो रही है। कोई तीन महीने पहले खुली चर्चा थी कि पन्द्रह सौ रुपये में कांग्रेस की निचली इकाई पर कब्जा हो जाता है, पर अब यह कब्जा मंहगा हो गया है और रेट तीन हजार तक पहुंच गया है। साफ-साफ पूरा संगठन रुपयों से तुल रहा है और समाजवाद के प्रवर्तक खुले आम पूंजीवाद के पैगम्बर बने हुए हैं। जनता यह सब देख रही है और खोई-खोई-सी खड़ी है।

इस संगठन का संचालन और नेतृत्व श्री कामराज के हाथों में है और यह नेतृत्व इस अर्थ में कसौटी पर है कि क्या वे इस कोढ़ को मिटाकर संगठन को शुद्ध-उद्बुद्ध कर सकेंगे?

एक साफ सवाल

इस बारे में एक साफ सवाल है कि कांग्रेस कोई पार्टी है या आन्दोलन? १५ अगस्त १९४७ तक वह आंदोलन थी। उसके बाद आंदोलन समाप्त हो गया और पार्टी उसे बनाया नहीं गया, तो अब न वह पार्टी है, न आन्दोलन?

कांग्रेस का हाई कमांड विचारों में स्पष्ट नहीं है, उलझा हुआ है। यही कारण है कि ढेबर भाई से कामराज तक के अध्यक्ष कांग्रेस के संविधान में पेबन्द लगाते रहे हैं और एक समग्र संविधान नहीं बना सके हैं। सचाइयों की सचाई यह है कि न कांग्रेस आज की परिस्थितियों के अनुसार राष्ट्र को उपयुक्त संविधान दे सकी, न स्वयं अपने को और इसीलिए देश का प्रजातंत्र और कांग्रेस का संगठन दोनों ही रेगिस्तान में सफर कर रहे हैं। पता नहीं यह सफर कब तक चलेगा? राष्ट्रीय परिस्थितियों का फोड़ा पक गया है। पुल्टिस की सफाई बेकार है, जरूरत नश्तर की है। दूसरे शब्दों में जरूरत क्रांतिकारी नेतृत्व की है, जो बुराइयों को प्रहार से दबा दे और अच्छाइयों को प्रचार से जगा दे। कामराज क्या यह कर सकेंगे? सब इस प्रश्न का उत्तर चाहता है और इस उत्तर पर ही सब कुछ निर्भर है।

कच्छ की पृष्ठ भूमि में

कच्छ में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया है। नेता अपना काम कर रहे हैं और सेनापति अपना। पर इससे भी आवश्यक बात यह है कि जनता, जो प्रजातंत्री देश में नेताओं और सेनापतियों से भी ऊपर है, यह समझे कि इस आक्रमण के पीछे क्या रहस्य है।

इस आक्रमण के पीछे तीन हाथ मालूम होते हैं। पहला हाथ है पाकिस्तान के राष्ट्रपति जनरल अय्यूब की महत्वकांक्षा का। थोड़े से घड़े-मढ़े वोटरों के बीच पाकिस्तान में जो आम चुनाव हुआ, आतंक और दमन का दौर दौरा होते भी उसमें अय्यूब का ऐसा विरोध हुआ कि एक बार तो वे हिल ही गए। अब वे कुछ चमत्कार करना चाहते हैं कि जनता का दिल उनकी महत्ता को मान जाए। नेहरू जी के मरने से एशिया अफ्रीका में जो स्थान खाली हुआ, उसे भी वे झपटना चाहते हैं। जिससे सेनापति तो वे हैं ही, संसार उन्हें राजनीतिज्ञ भी मान ले। जिस दिन से पाकिस्तान बना, उसी दिन से वहाँ भारत के विरुद्ध घृणा पैदा करने का काम आरम्भ हो गया था। जनरल अय्यूब ने इस घृणा को और बढ़ाया है। अब यदि वे भारत को चोट पहुँचाएँ, तो इस घृणा को तृप्ति मिलेगी और वह तृप्ति अपने देश में उनका स्थान मजबूत करेगी। अकेले वे यह काम नहीं कर सकते, इसलिए उन्होंने चीन के साथ दोस्ती की पींगें उड़ाई है।

चीन को भारत पर आक्रमण करने के बाद पीछे हटना पड़ा था। चीन भी भारत को अपमानित करना चाहता है, इसलिये उसने पाकिस्तान से साठगाँठ जोड़ी है और वह पाकिस्तान को उसके लिए वैसा ही बढ़ावा दे रहा है, जैसे उसने कभी उत्तरी कोरिया को दिया था और उत्तरी वियतनाम को देरहा है। तो अयूब की महत्वाकांक्षा और चीन की कूटनीति दोनों का इस आक्रमण में हाथ है।

इन दिनों में जो घटनाएं घटी हैं, उनके अध्ययन से यह भी साफ दिखाई देता है कि इसमें तीसरा हाथ अमरीका का है जिसे इंगलैंड का समर्थन भी प्राप्त है। क्या अमरीका भारत का विरोधी है? साफ-साफ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझने की यह है कि राजनीति में कोई किसी का दोस्त या विरोधी नहीं होता। वहाँ दोस्ती भी होती है मतलब से और दुश्मनी भी होती है मतलब से। इंगलैंड ने अपने काम के लिए पाकिस्तान को भारत से अलग रखा था। दूसरे युद्ध के कारण वह कमजोर था, तो अपने साधनों के कारण अमरीका ने उसे अपने प्रभाव में ले लिया, पर अमरीका की असली नज़र है काश्मीर पर और साफ बात है कि वह उसे स्वतंत्र काश्मीर का रूप देकर पूरी तरह अपने हाथ में रखने को बुरी तरह व्याकुल है।

इसका पहला कारण तो यह है कि काश्मीर पर उस का कब्जा हो तो वह चीन, रूस, पाकिस्तान, भारत पर एक साथ निगाह रख सकता है, पर इससे भी बड़ा मतलब यह है कि अगर काश्मीर भारत के हाथ से चला जाए, तो अब जो आकाश मार्ग से हमारा रूस से सम्बंध है, वह न रहे। अब यदि हम पर आक्रमण हो तो रूस की कुमुक ६-७ घंटे में ही हमें मिल सकती है, पर काश्मीर खो देने पर रूस से हमारा सीमा संबंध समाप्त हो जाता है। उस हालत में भारत के पास सिवा इसके कोई रास्ता नहीं कि हम अपनी तटस्थता की नीति को छोड़कर अमरीका के बाड़े में अपना खूँटा खोजें। इसलिए कच्छ के रण में और काश्मीर की सीमा पर हमारे साथ जो शैतानी हो रही है, अमरीका के लिए वह हमारी गरमी देखने का थर्मामीटर है कि हम इस दबाव में आकर अमरीका की बात मान लेते हैं या नहीं? अयूब अमरीका की इस कमजोरी को जानते हैं और इसी लिए वे चीन की चौंपड़ पर अमरीका की गोटों से यह खतरनाक खेल खेल रहे हैं।

हमारे देश का नेतृत्व साफ बात है कि बहुत बुद्धिमत्ता पूर्वक अपने को उत्तेजित होने से बचाकर परिस्थितियों की नाप जोख कर रहा है, बुरी परिस्थितियों के बीच अच्छी परिस्थितियों तक अपनी अंगुलियाँ पहुंचा रहा है। युद्ध की दृष्टि से हम कहाँ हैं? यह महत्वपूर्ण और आवश्यक प्रश्न है और इसका संतुलित उत्तर यह है कि हम इस स्थिति में नहीं हैं कि चीन और पाकिस्तान को एक साथ पीट कर रख दें, पर सांसारिक और सामरिक परिस्थितियाँ ऐसी भी नहीं हैं कि कोई हमें संतरे की तरह जेब में डाल ले।

यह तीसरा जादूगर

अभी तक भारत-पाकिस्तान की राजनीति के पत्ते अमरीका के हाथ में थे। कच्छ में पाकिस्तानी आक्रमण को रोकने के नाम पर इंगलैंड भी बीच में आ गया है। भारत पर कब्जा छोड़ते समय अंग्रेजों का दाव भारत को कम से कम ५-६ हिस्सों में बाटने का था, पर गांधी जी की शहादत, सरदार पटेल की दृढ़ता और नेहरू जी की स्थिरता के कारण वह दाव फेल हो गया। महत्वपूर्ण प्रश्न है कि क्या अब वह अपना दाव नये रूप में चलना चाहता है?

आसाम से बंगाल तक चीन को मिल जाए, जिससे वह तेल चावल पा सके। बदले में इंगलैंड को चीन में माल बेचने की 'मोनापोली' मिल जाए। इस समय भी चीन इंगलैंड का काफी बड़ा बाजार है। काश्मीर आजादी के नाम पर अमरीका को मिल जाए, यों ही कुछ इसे, कुछ उसे और दिल्ली स्वतंत्र होकर भी इतनी कमजोर रहे कि उन पर ही निर्भर करे।

सच क्या है अभी कोई नहीं जानता, पर यह सच सामने है कि भारत इस समय भयानक भेड़ियों के राक्षसी इरादों में घिरा हुआ है। उसके लिए बहुत सावधानी का समय है। ध्यान बटाने वाली हर बकवाद और हर कार्य वाही को क्रूरता से कुचला जाना चाहिए, क्योंकि देश का एक भी कदम इस समय गलत पड़ा, तो हमारा बनता इतिहास बिगड़ जाएगा, इसमें सन्देह नहीं। हरेक भारतीय सब कुछ के लिए तैयार रहे, यही उचित है, यही आवश्यक है।

—कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोगों को नेता चाहिए !

प्रोफेसर श्री विवेकी राय

कल की बात सोच रहा हूं। शहर में कई आदमियों ने मुझे झुक-झुककर बड़े अदब के साथ सलाम किये। इसे मैंने अपने जीवन की एक बहुत बड़ी घटना मानी, परन्तु अब सोच रहा हूं कि वह एक धोखा था। निःसन्देह सूरत शकल से मैं महाराजा नहीं हो गया था और न यह सम्भव है कि किसी विधाता-विधायक अथवा हाकिम हुक्काम से मेरा चेहरा मिलता है जिसके भ्रम में लोगों ने अभिवादन किये, न मेरी पोशाक ही ऐसी रोबीली रही, जिसकी चकाचौंध में सलाम पर सलाम लोग खरचने लगे। कुर्ता फट गया था। सच बात तो यह कि नया सिलवाने के लिए ही शहर में गया था। जब हवाके हलवाह ने पच्छिम की ओर से धौरे-सोकन बादल के हंकड़ते बैलों को नांधकर मूसलधार बूंदों के बीज धरती पर बोना शुरू कर दिया तो बचने के लिए सड़क के किनारे एक खाली बरामदे में घुस गया। बहुत-छोटा-सा बरामदा था। अगर मैं अपने देहाती पैमाने से बताऊँ तो उसमें मुश्किल से तीन चार खटिया भर जगह थी, लेकिन खटिया एक भी नहीं थी। एक टूटा बेंच दक्खिन की ओर दीवार के पास पड़ा था। मैंने बौछारों से बचते हुए अपने को बेंच पर रख दिया और बरामदे का इस प्रकार निरीक्षण करने लगा मानों खरीदने के लिए ही आया होऊं। दीवारों पर चूना लगा था और उसी मेले में किवाड़ पर भी सफेद पोटीन की पालिश लगी थी। किवाड़ बन्द था और बाहर से गोदरेज का एक बड़ा-सा ताला लगा था। बन्द दरवाजे की अगल बगल के जंगले भी भीतर से बन्द थे। किसका मकान है? एक बार मन में आया। मेरी आंखें नाम वाला प्लेट खोज रही थीं, परन्तु उसकी जगह पर टंगा मिला एक छोटा-सा ब्लैक बोर्ड। मेरा कुतूहल बढ़ा। अरे, इस पर तो कुछ लिखा भी है! चश्मा आंख पर चढ़ाकर उस ओर पढ़ने के लिए बढ़ा कि ठीक उसी समय एक रिक्शा आकर रुका।

'आदाब अर्ज !'

मैं ठिठक कर खड़ा हो गया। वे मौलवी साहब थे। उम्र लगभग पचास के थी। टोपी के नीचे सफेद बाल छिपे नहीं थे। पाजामा-शेरवानी सब पर पार्टी के बौछारों की मुहर लगी थी। उनके साथ उनका चौदह-पन्द्रह वर्ष का लड़का था। दोनों में से किस की सूरत अधिक हैरान प्रतीत हो रही थी, कहना कठिन है।

'आचारिया जी नहीं हैं क्या?' उन्होंने मेरी ओर देखकर कहा।

अबकी बार उत्तर देने की स्थिति में मैंने अपने को कर लिया था—

'कोठरी बन्द है। बाहर ताला लगा है।' फिर, न जाने कैसे पूछ बैठा—'कहिए क्या काम है?'

मैंने जाना कि किसी आचारिया अर्थात् आचार्य जी के निवास स्थान पर मैं रुका हुआ हूं और इस मौलाना से इस प्रकार काम पूछ रहा हूं जैसे मैं आचार्य जी का प्राइवेट सेक्रेटरी हूँ। मौलवी साहब ने काफी गिड़गिड़ा कर कहा—

'हुजूर, सात दिन से तमाम स्कूलों की खाक छान रहा हूं। कहीं एडमिशन का डौल नहीं बैठ रहा है। बस खुदा याद आ रहा है। क्या कोई लड़कों को तालीम दिलायेगा? लोग कहते हैं कि बड़े-बड़े एम० एल० ए०, कोतवाल और जज नाक रगड़कर नाकामयाब हो रहे हैं तो तुम किस खेत की मूली हो। सब तरह से आजिज आकर आचारिया जी की खिदमत में आया हूं। अगर एनायत हो जाय तो बेड़ा पार लगे। सुना है शहर में बेसहारे लोगों के एक ये ही हमदर्द नेक इन्सान हैं।'

'नेक इन्सान तो जरूर हैं' इसी बीच

[कृपया देखिए पृष्ठ १६१ पर]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

76291

नई पीढ़ी उस हर धर्म को अधूरा समझती है, जो उसकी आत्मा को ही सन्तोष प्रदान करना चाहता है। नई पीढ़ी अपनी आत्मा स्वस्थ शरीर मन्दिर में प्रतिष्ठापित देखना चाहती है लेकिन अन्यायी शोषण चक्र उसके मार्ग को अवरुद्ध करता है। इसीलिए उसमें खीझ है। नई पीढ़ी कुर्बानी करने से नहीं डरती, उसकी रगों में खौलता हुआ खून है, लेकिन उसे यह तो बताना होगा कि वह अपना गर्म खून किस देवता को अर्पित करे ?

अच्छा पुराना लेकर और बुरा पुराना छोड़कर

श्री हरिदत्त शर्मा

आज का युग अनास्था का युग कहा जाता है। नई पीढ़ी तो एकदम अनास्था और कुण्ठा से मस्त है। ऐसा अकारण ही नहीं है।

जो देश पिछड़े हुए हैं, उनमें तो नई पीढ़ी को अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़नी पड़ रही है। वह अंधकार से घिरी हुई है, इसलिए उसे कोई रास्ता ही नहीं सूझता। धर्म उसके लिए गए बीते दिनों की चीज बन गई है और पुराने आदर्श भी उसे कोई प्रेरणा नहीं देते। इस सम्बन्ध में उसे गलत भी नहीं माना जा सकता, क्योंकि प्राचीन-काल के मनुष्यप्रद धर्म उसकी समस्याओं का समाधान भी नहीं करते। धार्मिक वातावरण में घुटन है और पहले ही अपनी घुटन से परेशान नई पीढ़ी इस पुरानी घुटन को और कैसे ओढ़ ले ? इस पीढ़ी को प्रकाश चाहिए, खुली हवा चाहिए, लेकिन काले अंधियारे के नेता प्रकाश और खुली हवा कैसे दे सकते हैं।

जो देश खुशहाल और उन्नतिशील हैं, उनमें नई पीढ़ी की समस्यायें अपने अस्तित्व की रक्षा की तो नहीं हैं, लेकिन विकास और प्रगति की अवश्य हैं। इन देशों में समृद्धि एक वर्गीय है, इसलिए समृद्ध वर्ग अपनी समृद्धि की रक्षा के लिए ऐसे वातावरण की रचना कर रहा है जिस में से हिंसा और घृणा निकल रही है। उसकी ओर इस घृणा और हिंसा से युद्ध की काली घटायें फैलती हैं और यह घटायें किसी भी समय बरस कर प्रलय कर सकती हैं। समृद्ध देशों की नई पीढ़ी इस वातावरण से ऊब चुकी है और उसे जीवन निस्सार लगता है। जो युवक इस विषाक्त वातावरण को झकझोर कर आगे बढ़ना चाहते हैं, उनके हाथों में हथकड़ियाँ पड़ जाती हैं और पैरों में बेड़ियाँ। इससे नयी पीढ़ी में और भी घुटन बढ़ती है और उस घुटन की अभिवृद्धि अनेक ऐसे रूपों में होती है, जिन्हें पुरानी पीढ़ी के लोग विध्वंस कहते हैं। यहाँ भी पुराने धर्म-दर्शन नई पीढ़ी के सहायक नहीं होते, क्योंकि वे जिस काल में रचे गए थे दुनिया उस काल से बहुत आगे बढ़ गई है। आज का दौर स्पुतनिक का दौर है, इसलिए इन देशों में भी पुराने और निकट भूत के नए आदर्श दोनों पुराने पड़ गये हैं। नई पीढ़ी चौराहे पर खड़ी है और उसे कोई भी राह ऐसी नहीं लगती, जिस पर चल कर वह अपने गन्तव्य और मन्तव्य को पा सके।

दुनिया में अब तक साम्यवादी शिविर ऐसा था, जिस में नई पीढ़ी के सामने एक विशिष्ट लक्ष्य था और अविशि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ष्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक विशिष्ट राह थी। साम्यवादी देशों के शिविर में नई पीढ़ी समाजवाद और साम्यवाद की लक्ष्य प्राप्ति के लिए यत्नशील थी और मार्क्सवादी, लेनिनवादी विचारधारा का सूत्र पकड़ कर वह अपने निर्दिष्ट लक्ष्य की ओर चलता था, लेकिन अब यह शिविर भी खण्ड खण्ड होता जा रहा है। सोवियत संघ और चीनी गणराज्य में अपने अपने राष्ट्रीय हितों को लेकर जो मतभेद हुआ है, उसे उन दोनों देशों ने वैचारिक मतभेद का जामा पहना दिया है। सोवियत संघ अन्तरराष्ट्रीय जगत में साम्यवाद का लक्ष्य जनतांत्रिक प्रणाली अथवा संसदीय परिपाटी से प्राप्त करने के पक्ष में हो गया है और चीनी गणराज्य तीव्र वर्ग संघर्ष की दुंदुभि बजा कर साम्यवाद विस्तार का लक्ष्य पा लेना चाहता है। इन दो बड़ों के वैचारिक मतभेद के साथ-साथ तीसरी राह इटली की कम्युनिस्ट पार्टी लेकर निकली है। वह अन्तरराष्ट्रीय मजदूर एकता पर बल न देकर राष्ट्रीय परम्पराओं और हितों को दृष्टिगत रखते हुए अन्तरराष्ट्रीय साम्यवाद संगठन के बदले राष्ट्रीय साम्यवादी संगठनों पर बल दे रही हैं। इस वैचारिक उथल पुथल में बुद्धिजीवी और श्रमजीवी तकरार भी उभर रहा है। साम्यवादी शिविर का बुद्धिजीवी वर्ग अपनी बौद्धिक भूमिका को श्रमजीवी वर्ग की श्रमिक भूमिका के सामने समर्पित नहीं करना चाहता है।

मतलब यह है कि अब तक अनास्था और कुण्ठा ने पिछड़े हुए देशों और पूंजीवादी शिविर में ही अपनी जड़ें जमायी थी, अब उनकी जड़ साम्यवादी शिविर में जमने लगी है।

यह भी कहा जा सकता है कि पूंजीवादी विचारधारा भी अकेली पड़ गई है और साम्यवादी विचारधारा भी। दोनों एकांगी हो गए हैं। इसका यह भी प्रभाव पड़ा है कि पूंजीवादी शिविर में थोड़ी बहुत पैठ साम्यवादी दर्शन की हुई है और साम्यवादी शिविर में पूंजीवादी विचारधारा का प्रभाव हुआ है। इस तरह से कोई भी नया दर्शन पूर्ण प्रभुत्व में नहीं है। पुराने अध्यात्मवादी दर्शन नई समस्याओं का समाधान न कर सकने के कारण अपना प्रभाव नई पीढ़ी के मानस पर नहीं रख पा रहे हैं। परिणामतः आज का युग, आज का विश्व अनास्था से ग्रस्त है और आपसी आपाधापी तनाव और खींचतान के कारण यह अनास्था ऐसे अजगर का शरीर धारण करती जा रही है जो समूची मानवता को निगल जाना चाहता है।

ऐसी स्थिति में हो तो क्या हो ? पुरानी पीढ़ी के लोग नई पीढ़ी की अनास्थामयी मनोवृत्ति पर खीझ प[illegible] लेकिन उनकी खीझ अरण्य रोदन ही सिद्ध होती है। [illegible] खीझ से या पुराने बने बनाए नुस्खों से काम नहीं [illegible] वाला है। इस दौर में आज की परिस्थितियों के परि[illegible] में गम्भीरमना होकर नए हल खोजने होंगे, नए [illegible] स्थापित करने होंगे, नए जीवन मूल्य प्रतिष्ठापित [illegible] होंगे। विचलित जीवन की कड़ियों को जोड़ना हो[illegible] निश्चय ही यह काम भारी है, बहुत भारी।

इस काम को वे ही मनीषी बखूबी कर सक[illegible] जिन्होंने दुनिया के हर कोने को और उसके दर्शन [illegible] गहरी नजरों से देखा हो, जो आठों दिशाओं में बसे [illegible] देशों की भावनाओं, आकांक्षाओं का मनोवैज्ञानिक [illegible] वैज्ञानिक विश्लेषण रखने की क्षमता रखते हों, जो [illegible] की परम्पराओं में से श्रेष्ठ तत्वों को निकाल कर इस [illegible] युग को प्रगतिशील तत्वों से बांध सकने की क्षमता [illegible] हों और साथ ही जो न केवल दार्शनिक स्तर पर [illegible] करते हों, बल्कि कर्मक्षेत्र के जागरूक तपस्वी भी हों। [illegible] लब यह कि क्रांतदृष्टा भी हों और क्रांतिकारी भी। [illegible] असल अगर देखा जाए तो नए जमाने की विश्व के [illegible] को यह गम्भीरतम चुनौती है। आज की दुनिया में [illegible] की उमंग त्रासग्रस्त है। इसलिए चारों तरफ एक भूख [illegible] हो गई है। वह पेट की भी भूख है, हाड़मांस की भी [illegible] है, मन की भी भूख है, अन्ततोगत्वा शान्ति की भी [illegible] है। तन और मन अद्वैत होकर श्रम, कर्म, कला, सं[illegible] और साहित्य की नित नूतन साधना करना चाहते [illegible] खण्डित व्यक्तित्व अब किसी से सहा नहीं जाता, क[illegible] खण्डित व्यक्तित्व में से रचना का भाव आ नहीं पा [illegible] दुनिया विडम्बना बनती जा रही है। सत्, चित [illegible] आनन्द का जगत तमिस्रा से घिर गया है। प्रीति, [illegible] बन गई है। उसका नाम शेष है, उसका भाव ति[illegible] होता जा रहा है।

नए युग धर्म की अनुभूति के लिए पहली शर्त प्रीति [illegible] होनी चाहिए। आदमी आदमी में जो दूरी आई है [illegible] हो। अहसास हो कि एक व्यक्ति की खुशी दूसरे की [illegible] से किस तरह से जुदा न हो। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का [illegible] जागृत हो। हर आदमी दुनिया की खुशी के लिए [illegible] करे और दुनिया हर आदमी की खुशी के लिए काम [illegible] जाहिर है कि इस विचारभूमि पर स्वार्थ और शोषण [illegible] कोई स्थान नहीं मिलेगा। इस भावभूमि पर किया [illegible] वाला छोटे से छोटा काम भी विश्व बन्धुत्व की भाव[illegible] अनुप्रेरित होगा और इसी भावयज्ञ में एक आहुति हो[illegible]

प्रीति की यह धार, प्रीतिमय कर्म या यज्ञ, मात्र [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से नहीं होने वाला है। जब से मनुष्य अस्तित्व में आया है तभी से कभी थोड़ा कभी ज्यादा वह इस दिशा में सोचता भी रहा है, करता भी रहा है। कहीं कहीं कभी कभी उसने ऐसा भी किया है लेकिन प्रीतिपरक यह कर्म कभी फूल की तरह से पूरा फूला नहीं। निश्चित ही लेनिन ने इस दिशा में एक बड़ा कदम उठाया। दुनिया को शोषण मुक्त होने की राह दिखलायी और अपने यहाँ ऐसा भी प्रयोग किया, लेकिन शोषण के पैरोकारों और काले अँधियारे के नेताओं ने अपने विरोध में कमी नहीं छोड़ी। अब जैसा कि मैंने पहले कहा मार्क्स और लेनिन की क्रान्तिकारी दुनिया भी खण्ड खण्ड होती जा रही है। इसलिए स्वार्थ और शोषण की दुनिया के भी झुकने के आसार दिखाई नहीं देते। यहाँ नये युग धर्म को लाने वाले मनीषियों के सामने एक बहुत बड़ी जिम्मेदारी आती है कि वे स्वार्थ और शोषण को समूल नष्ट करने के लिए अमली कदम उठाएँ, क्योंकि अमली कदम से ही चिन्तन की अनुभूति ज्ञान में परिवर्तित होती है। कर्म से ज्ञान आता है और इस ज्ञान में जब दुबारा अनुभूतिमय कर्म में जुड़ता है, तब ज्ञान विज्ञान बनता है और इस विज्ञान से जब फिर कर्म जुड़ता है तब कर्मफल के दर्शन होते हैं, और फिर उस कर्मफल में से धर्म अथवा दर्शन उजागर होते हैं। यह लम्बी प्रक्रिया है और यह जीवन का सम्पूर्ण समर्पण अथवा आहुति माँगती है।

यह बात उन्हें स्पष्ट रूप से समझ लेने की है कि अब शोषणवादी पद्धति बिलकुल नहीं चलने वाली है। सुख शान्ति का मार्ग प्रशस्त करने वाले सांस्कृतिक मनीषियों को, चाहे वे धर्माचार्य हों, ऋषिमुनि हों, अथवा दार्शनिक हों, यह स्पष्ट कर देना होगा कि हर व्यक्ति को अपना कुछ भी मानने का अधिकार नहीं, जो कुछ भी है वह जनार्दन का है, यानी जनता जनार्दन का है। सांस्कृतिक मनीषी जब यह स्पष्ट करके चलेंगे, तभी उनकी वाणी अपने अनुवर्ती बना पायेगी।

अब तक यह बात स्पष्ट हो गई है कि नयी पीढ़ी तमाम दुनिया में शोषण, अत्याचार, अन्याय और अकर्म से त्रस्त है। उसे वह वातावरण नहीं मिल पा रहा है जिसमें वह यह कह सके कि यह दुनिया मेरी है और मैं उस दुनिया की हूं। जिस दिन उसे यह अहसास हो जाएगा वह सिंह के समान उठ खड़ा हो जायेगा और मनुष्य समाज की किस्मत बन्द दरवाजों को सदा सदा के लिए खोल देगी।

नयी पीढ़ी ऐसी मनःस्थिति में है कि वह जब इस दुनिया को, उसकी हर पर्त को, पूरी तरह से समझ लेना चाहती है, देख लेना चाहती है। छलावे और पाखंड उस पर काम नहीं कर सकेंगे। जिनके मन में नयी पीढ़ी से हमदर्दी है वह इस चीज को समझकर नए युग धर्म की खोज कर सकेंगे। निश्चित ही यह नया युग धर्म पुरानी स्वस्थ परम्पराओं से सम्बन्धित होगा। एक बात और समझ लेने की है कि नई पीढ़ी उस हर धर्म को अधूरा समझती है, जो उसकी आत्मा को ही सन्तोष प्रदान करना चाहता है। नई पीढ़ी अपनी आत्मा स्वस्थ शरीर मन्दिर में प्रतिष्ठापित देखना चाहती है लेकिन अन्यायी शोषण चक्र उसके मार्ग को अवरुद्ध करता है। इसीलिए उसमें खीझ है। नई पीढ़ी कुर्बानी करने से नहीं डरती, उसकी रगों में खौलता हुआ खून है, लेकिन उसे यह तो बताना होगा कि वह अपना गर्म खून किस देवता को अर्पित करे?

उन्हें बतलाइये कि वह खून शोषणहीन समाज की रचना में लगने वाला है तो नए खून के फव्वारे फूट पड़ेंगे। समाज के विकास को उन सांस्कृतिक मनीषियों के उन सिद्धान्तों से जोड़ दीजिये जिन्होंने पीड़ितों, असहायों और निर्धनों की सेवा के लिए अपना जीवन होम किया। फिर देखिए नई पीढ़ी कैसी सृजनशील भावना से उत्प्रेरित होकर आगे बढ़ती है। उसे परेशानी तब होती है, जब समाज की गति उन लोगों के हाथों में होती है जो पुराने अच्छे सिद्धान्तों को अपने शोषणमय, गन्दे नापाक इरादों से जोड़ने की कोशिश करते हैं।

नयी धर्म-भावना या पुराने अच्छे धर्म सिद्धान्तों से पुष्टप्रगतिमय धर्म भावना, लाने के लिये वे ही धार्मिक मनीषी अथवा सन्त काम कर सकेंगे जो नयी पीढ़ी के इस दर्द को समझ कर सारी दुनिया को सारे मानव समाज को उसके चलन को, उसकी प्रगति को, अपनी दृष्टि में रखते हुए धर्म क्षेत्र में पूर्ण विवेक के साथ कूदेंगे। हर दौर में ऐसा ही हुआ है। वेदों के ऋषि, राम, कृष्ण, महावीर, गौतम, ईसा, मोहम्मद, मार्टिन लूथर, कबीर, तुलसी, रामकृष्ण परमहंस, मार्क्स-एंगिल्स लेनिन, विवेकानन्द और रामतीर्थ आदि इसी तौर चले हैं। रास्ता तो पुराना है, देखा भाला है, लेकिन बात समझने की है। मतलब यह है कि नया युग धर्म लाने के लिए प्रीति, विवेक और गहरे अनुसंधान एवं कर्म विधान की जरूरत है। पुराने धर्म लोक को अच्छा पुराना लेकर और बुरा पुराना छोड़कर प्रशस्त करना है और जन सेवा की भावना से उस लोक को आगे बढ़ाना है। तभी-नयी पीढ़ी को ग्राह्य जगह मिल सकती है।

卐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनोविज्ञान की उपलब्धियाँ

—श्री वंश गोपाल झिंगरन

कुछ दिनों पूर्व तक मनोविज्ञान को हमारे जीवन में इतना महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त न था जितना आज के युग में। आरम्भ में मनोविज्ञान का सम्बन्ध मुख्यतः दर्शन (फिलासफी) से था अतः तत्कालीन मनोविज्ञान पर दार्शनिकों की छाप अधिक थी। शनैः शनैः मनोविज्ञान दर्शन के संकुचित क्षेत्र से बाहर निकल कर मानव व्यवहार के विभिन्न क्षेत्रों में प्रवेश करने में समर्थ हुआ और अब भी मनोविज्ञान का क्षेत्र दिन पर दिन व्यापक होता जा रहा है। उदाहरण के लिए शिक्षाविज्ञान, औद्योगिक मनोविज्ञान, मनोचिकित्सा, समाज मनोविज्ञान तथा बुद्धि परीक्षण आदि सभी क्षेत्रों में मनोविज्ञान की उपलब्धियों का भरपूर उपयोग किया जा रहा है।

सर्व प्रथम शिक्षा के क्षेत्र को ही लीजिए। प्राचीन काल में विद्वानों के मतानुसार विद्यार्थी को तथ्यों का ज्ञान करा देना ही पर्याप्त था, किन्तु इस बात पर उनका कभी ध्यान नहीं गया कि बालक की मानसिक क्षमता क्या है? उसकी रुचि और प्रवृत्ति किस प्रकार की है तथा उसकी मानसिक सम्भाव्यताएँ क्या हैं। पैस्टालाजी ने सर्व प्रथम हमारी दृष्टि इस बात की ओर आकृष्ट की कि शिक्षा के क्षेत्र में मनोविज्ञान का प्रयुक्त किया जाना अत्यावश्यक है। अर्थात् शिक्षक को यह जानना आवश्यक है कि वह किस तरह के बच्चों को शिक्षा दे रहा है, उनकी बुद्धि का स्तर क्या है और उनकी रुचि तथा प्रवृत्तियां कैसी हैं। अवश्य इन सभी मानसिक प्रक्रियाओं का मनोविज्ञान द्वारा ही विराट रूप से अध्ययन किया जा सकता है। अतः स्पष्ट है कि शिक्षा शास्त्री को मनोविज्ञान का एक अच्छा ज्ञान होना चाहिये अन्यथा वह एक सफल शिक्षक नहीं बन सकता।

स्मृति तथा नई चीजों के सीखने की योग्यता तथा इनकी प्राप्ति के लिये सर्वोत्तम तरीकों की खोज में मनोविज्ञान ने महत्वपूर्ण योग दिया है। प्रायः इस सिलसिले में प्रयोग तथा परीक्षण के लिये जानवरों का भी उपयोग किया जाता है। रूसी वैज्ञानिक पावलोव ने इस क्षेत्र में अनेक मौलिक प्रयोग किये हैं। मनोविज्ञान की ये उपलब्धियां आधुनिक शिक्षण पद्धति को अधिक सशक्त तथा उपयोगी बनाने में सहायक हुई हैं।

मानव इन्द्रियों द्वारा वाह्यजगत की अनुमति का सूक्ष्म अध्ययन भी मनोविज्ञान द्वारा आधुनिक काल में ही सम्भव हो पाया है। इस क्षेत्र में किये गये अनुसन्धानों के फलों द्वारा ही इस बात का पता लग पाया है कि हमारे नेत्र, कान तथा जिह्वा आदि इन्द्रियां कितनी अधिक संवेदी हैं। उदाहरण के लिये मनोवैज्ञानिक बतलाता है कि प्रकाश की अनुभूति करने में मानव नेत्र के रेटिना के हाशिये का भाग प्रयोगशाला के सबसे बढ़िया यंत्र रेडियोमीटर से भी ३० हजार गुना अधिक संवेदी है।

हमारे कान तो अपने काम में और भी अधिक दक्षता प्रदर्शित करते हैं—यदि ध्वनि की ऊर्जा (एनर्जी) का विचार करें तो हम पायेंगे कि जितनी ऊर्जा के प्रकाश की अनुमति आंख कर सकती है उससे भी १० गुनी कम ऊर्जा की ध्वनि हमारे कान ग्रहण कर सकते हैं। इसी प्रकार सूंघने की क्षमता भी असाधारण रूप से प्रबल पायी गयी है। इस सम्बन्ध में किये गये प्रयोग से पाया गया कि मर्केप्टन नाम के तेज गन्दे पदार्थ का यदि एक खरबवां हिस्सा भी हवा में मौजूद हो तो हमारी नाक को इसका पता चल जायेगा।

इन प्रयोगों के सिलसिले में उन परिस्थितियों की भी खोज की जा सकी है जो हमारी ज्ञानेन्द्रियों की अनुभूति क्षमता को बढ़ाने में सहायक होती हैं। युद्ध काल में रात के अंधेरे में उड़ने वाले पायलट के लिये यह जानना नितान्त आवश्यक होता है कि किन परिस्थितियों में वह दूर तक स्पष्ट देख सकता है तथा किन परिस्थितियों में उसकी दृष्टि को सर्वाधिक बाधा पहुंच सकती है ताकि उन्हीं के अनुसार वह यह निर्णय कर सके कि उसे अपने वायुयान के संचालन में केवल अपनी दृष्टि पर निर्भर रहना चाहिये, या कि नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयं क्रियायंत्रों का सहारा लेना चाहिये। मनोविज्ञान प्रयोगशाला में विद्युत यंत्रों की सहायता से विभिन्न व्यक्तियों के अटैन्शन या अवधान की भी जांच की जा सकती है। उदाहरण के लिये प्रयोग के लिये चुने गये व्यक्ति को आदेश दिया जाता है कि सामने लाल बत्ती ज्योंही जल उठे त्यों ही वह अपने यंत्र का बटन दबा दे। यंत्र में इस बात का प्रबन्ध रहता है कि बत्ती के जलने और बटन के दबाये जाने के बीच में व्यतीत हुए समय को वह अंकित कर लें। इस समय को प्रतिक्रिया समय या रीएक्शन समय कहते हैं। इस तरीके से मोटर ड्राइवर अथवा वायुयान पाइलट आदि के फुर्तीलेपन की जांच की जाती है। यदि इनका रीएक्शन टाइम सामान्य से अधिक हुआ तो निस्सन्देह ये किसी भी वक्त दुर्घटना करा सकते हैं क्योंकि मोटर के सामने यदि कोई लड़का खेलता हुआ अचानक आ निकला तो ब्रेक लगाने में इतना समय लग जायगा कि उसके पहले ही दुर्घटना हो चुकी होगी।

औद्योगिक मनोविज्ञान की उपलब्धियां भी कम महत्व पूर्ण नहीं हैं। पिछली शताब्दी तक उद्योगपतियों का यह विश्वास था कि श्रमिकों से जितने अधिक समय तक काम लिया जायगा, उत्पादन उतना ही अधिक होगा। इसी लिये इन दिनों मजदूर से प्रतिदिन १८-२० घंटे तक काम लिया जाता था, किन्तु मनोविज्ञान की प्रगति के दौरान यह तथ्य स्वीकार किया जाने लगा है कि मजदूर मशीन नहीं है अतः केवल कार्य काल बढ़ाने मात्र से उत्पादन का बढ़ जाना आवश्यक नहीं और ध्यान मनोविज्ञान ने बतलाया कि यदि श्रमिक के स्वास्थ्य की ओर ध्यान दिया जाए, उनकी सुख सुविधा के साधन जुटाए जायें, तो वह कम समय तक काम करने पर भी उतना ही उत्पादन कर लेगा जितना कि इन सुविधाओं से वंचित रहने पर वह १८-२० घंटे में कर पाता।

पुनः कारखाने में कार्य करने की पद्धति का मनोवैज्ञानिक अध्ययन करके यह ज्ञात किया गया कि उस कार्य को अंजाम देने का सबसे अधिक दक्ष तथा कम थकावट लाने वाला तरीका कौन-सा है। तदुपरान्त आधुनिक फैक्टरियों में ये ही तरीके अपनाये गये हैं।

औद्योगिक मनोविज्ञान की इन खोजों का परिणाम है कि आज उद्योग व्यवसाय में लगे मजदूरों को हर तरह की सुविधायें प्रदान की जाती हैं तथा उनके जीवन स्तर को उठाने के हर संभव प्रयत्न किये जाते हैं। इन सुविधाओं के मिलने के फलस्वरूप उत्पादन में भी समुचित वृद्धि हुई है क्योंकि इन परिस्थितियों में श्रमिक की कार्य क्षमता बढ़ जाती है, वह प्रसन्नचित्त अवस्था में अधिक श्रम करने के लिये प्रेरित होता है।

चिकित्सा के क्षेत्र में भी आधुनिक मनोविज्ञान ने मनोविश्लेषण की एक अत्यन्त प्रभावशाली विधि को जन्म दिया है। इस पद्धति द्वारा अचेतन मन में स्थित भावनाओं की जानकारी प्राप्त करना सुलभ हो जाता है। जो सामान्यतः निरर्थक माने जाते है जैसे स्वप्न के अनुभव, नशे में बोले गये शब्द, बैठे-बैठे अनायास हाथ पैर डुलाते रहना। ये क्रियायें वस्तुतः हमारे अचेतन मन में छिपी भावनाओं द्वारा प्रेरित होती हैं।

मनोवैज्ञानिकों के अनुसार हमारी अनेक अवदमित इच्छाएँ अचेतन मन में पहुँच कर तरह तरह के मानसिक विकार उत्पन्न करती हैं जैसे हिस्टीरिया तथा इनके अतिरिक्त अनेक शारीरिक रोग भी इसी कारण उत्पन्न हो सकते हैं, जैसे हृदय की धड़कन, लकवा, अंग का फड़कना दमा आदि। गत महायुद्ध में अनेक सैनिकों को लकवे का आक्रमण हो गया था। मनोविश्लेषण द्वारा ज्ञात किया जा सका कि इसका कारण यह था कि उन्हें युद्ध से घृणा हो गयी थी, किन्तु घर वापस जाने की उनकी इच्छा पूरी होने की कोई सम्भावना न थी। इस इच्छा के अवदमन ने उन्हें लकवे का शिकार बनाया।

अब अवदमित भावनाओं द्वारा उत्पन्न हुई बीमारियों का उपचार मनोविश्लेषण पद्धति की सहायता से आसानी के साथ किया जा सकता है।

अपराध विज्ञान के क्षेत्र में भी मनोविज्ञान ने साहस पूर्ण कदम बढ़ाये हैं। उत्तेजना अपराध की भावना आदि का शारीरिक क्रियाओं पर किस किस्म का प्रभाव पड़ता है इसका भली भांति मनोवैज्ञानिकों ने अध्ययन करके 'लाई डिटेक्टर' जैसे यंत्रों का निर्माण कर लिया है जो अदालत के कटघरे में खड़े व्यक्ति की शारीरिक प्रक्रियाओं द्वारा प्रभावित होकर तुरन्त इस बात का पता देते हैं कि वह व्यक्ति झूठ बोल रहा है या सच। झूठ की पकड़ करने वाला यह यंत्र इतना सही नतीजा देता है कि अमेरिका की अदालतों ने इस यंत्र को कानूनी मान्यता भी प्रदान कर रखी है। इन्टरव्यू आदि के अवसर पर भी अमेरिका के व्यवसाय संस्थान प्रायः इस यंत्र का उपयोग यह ज्ञात करने के लिये करते हैं कि उत्तर देने वाला व्यक्ति प्रश्नों का उत्तर पूर्ण ईमानदारी के साथ दे रहा है या नहीं। कुछ लाई डिटेक्टर अपराध भावना के कारण उत्पन्न होने वाले रक्त दाब का परिवर्तन नापते हैं, कुछ प्रकार की गति का परिवर्तन तथा कुछ त्वचा के वैद्युत प्रतिशोध को नापते हैं। इस यंत्र को और भी अधिक विश्वसनीय बनाने के लिये वैज्ञानिक निरन्तर प्रयत्नशील हैं। ◇

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गोविन्द शास

राजस्थान का यशस्वी साधक

गान्धी की आन्धी ने क्रान्ति को नई दिशा की ओर मोड़ दिया था। सामाजिक वातावरण और जन मानस बाहर भीतर से आन्दोलित हो गया था। प्रत्येक गाँव, हरेक व्यक्ति सोचने को विवश हो गया था। कुछ को गान्धी सब तरह से, सब तरफ से पूज्य थे और कुछ को किसी दृष्टिकोण से, विशेष आयाम से राजस्थान के गांव-गांव में नये विचारों का प्रभाव व्याप रहा था और एक छोटे से गांव में, गाँव से बाहर अपनी साधना में रत ओजस्वी विद्वान भी सामयिक क्रान्ति से अछूता नहीं रह सका और उसने जीवन में व्रत ले लिया खद्दर पहनने का। दिखावे के लिये नहीं, एक सत्य को स्वीकार करने के लिए, नये युग की उज्ज्वलता का स्वागत करने के लिये।

ये थे पूज्यपाद श्री हनुमान शर्मा जो द्विवेदी युग के मौन साधक के रूप में, सभा सम्मेलनों से दूर अपनी प्रतिभा का प्रकाश फैला रहे थे। सामयिक पत्र उनकी दृष्टि से वंचित नहीं रहते थे और यथा सम्भव उनके विचारों का सहयोग किसी न किसी रूप में उनको मिला ही करता था। प्रदर्शन से उनको अतिशय घृणा थी। गान्धी के विचारों को व्यावहारिक रूप देना उनके लिये सुखकर था, उनका आडम्बर पूर्ण उद्घोष प्रीतिकर नहीं। गान्धी के अछूतोद्धार को वे इस रूप में मानने के लिए तैयार नहीं थे कि उनसे बेटी व्यवहार या सहभोज या मन्दिर में प्रवेश करना उन्हें उचित सम्मान देना है। उनके विचारों में उन्हें समाज का अभिन्न अंग माना जाना चाहिए था और इसी सम्बन्ध में "तब और अब" शीर्षक से एक लेख लिखकर वास्तविक अछूतोद्धार की कल्पना की थी। उसी लेख में उन्होंने सिद्ध किया था कि हम अछूतों को अपना अंग मानते हैं। उदाहरणतः कोई भंगिन ठाकुर के यहाँ जाकर यह कहे कि "जजमान ! तुम्हारा जंवाई आया है" तो इससे ठकुरानी बुरा नहीं मानती थी। कितना ममत्व था उनके व्यवहार में ? कितने सुखी थे हम ! इस प्रकार सहसा परिवर्तन करने से सवर्णों की घृणा उभर आने का तथा एक वर्गगत विद्वेष भड़कने का अंदेशा था उनको और आज मैं स्पष्टतः यह कह सकता हूं कि उनके विचार वास्तव में कितने दूरदर्शिता पूर्ण थे।

इस सम्बन्ध में उन्होंने गान्धी के साथ पत्र व्यवहार भी किया था तथा आलोचना भी की थी। परिणाम क्या होता है इसके लिये वे कभी भी व्यग्र नहीं रहे। उनको जो सही दिखाई दिया उसी को माना और उसी को कहा।

शर्मा जी के जमाने में राज्याश्रित होना सम्मान की बात समझी जाती थी और एक अच्छे रईस के यहाँ उनका पूर्ण सम्मान भी था, किन्तु वे इस सबसे निर्लिप्त अलग थलग थे। इतने बड़े रईस के संरक्षक, मार्ग दर्शक और कृपा होकर भी वे ब्राह्मण ही बने रहे। बार प्रार्थना करने पर भी कोई सहा नहीं चाही और आज वे कहने के भौतिक सम्पदा हमारे लिये नहीं गये, किन्तु विचारों का ओज परम्परा में निःसन्देह बहता रहेगा। आश्चर्य होता है कि एक ही इतिहासकार, ज्योतिषी, कर्म-का साहित्याराधक और स्वतन्त्र विचा किस प्रकार बन गया। भूले भटके समकालीन साहित्यिकों से सम्पर्क हूँ तो वे कृपालु आज भी उनकी स्विता को तरोताजा बनाये से दिखते एकबार श्री हरिभाऊ उपाध्याय से का मौका मिला। मैने शर्मा जी परिचय दिया तो झट से उन्होंने "जो सरस्वती में लिखा करते थे" नगण्य-सी है किन्तु उन्होंने जो भी लिखा आत्म चिन्तन के बाद ही लि सत्य लिखा चाहे कटु ही हो।

समाज शर्मा जी का ऋणी है। जब तक जिये सेवा करते रहे। रोज सारे पत्र आते और इतने ही उत्तर पर उन्होंने कभी यह शिकायत नहीं कि इस घर फूंक तमाशे से उन्हें क्या है ? उन्हें यही सन्तोष होता कि वे कुछ कर रहे हैं। ज्योतिष अगाध ज्ञान था उनको। एक बार हनुमान प्रसाद पोद्दार का पत्र जिसमें काशी के विद्वानों ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्केश का योग बताया था। चूंकि पोद्दार जी शर्मा जी के प्रिय व्यक्तियों में थे इसलिये शर्मा जी के भी विचार माँगे गये और उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि व्याधि होगी, पर जीवन अभी और जीना है। आज मैं देख रहा हूँ कि पोद्दार जी हैं और उनकी सेवा का क्रम अनवरत चल रहा है। इसी प्रकार की बहुत-सी भविष्य-वाणियों ने उनके ज्ञान के प्रभाव को सशक्त बना दिया था।

आश्चर्य तो यह कि किसी सेठ या रईस से एक फूटी कौड़ी भी नहीं ली। उन्हें केवल एक ही वस्तु के संग्रह का शौक था और वह था पुस्तकों का। आज उनके पुस्तकालय में १० हजार के करीब पुस्तकें हैं जिनमें हरेक में उनका गौरव छुपा हुआ है। उनके पुस्तकालय में सभी विषयों की सभी भाषाओं की अमूल्य पुस्तकें हैं और तो और ऐसी भाषाओं के दुर्लभ ग्रन्थ हैं जिन्हें शायद वे स्वयम् भी नहीं पढ़ सकते थे। ऐसी पुस्तकें वे दूसरों से सुन समझ लिया करते थे। इन पुस्तकों में शायद अब भी उनकी आत्मा विद्यमान है। कभी जब उन पुस्तकों में से एक पुस्तक कम हो जाती है या किसी का पृष्ठ असावधानी से फट जाता है तो मुझे भय लगता है कि कहीं वे नाराज न हो जाएँ, दुखी न हों।

इतिहास का शोधकर्ता, तन्त्र शास्त्र का जिज्ञासु, कामशास्त्र का विज्ञ अथवा आयुर्वेद का धुरन्धर अब भी भूला भटका हमारे घर आ जाता है और संग्रहालय को देखकर ललचा जाता है। जिस तरह जीवन में त्याग ही करते रहे वैसे ही निर्धन रहे शर्मा जी अन्यथा इस संग्रहालय को सार्वजनिक हित में प्रचारित करने की उनकी योजना अर्थ के कारण पूरी नहीं हो पाई। आज हम लोग यह समझते हैं कि हम भी उनके साथ, उनके संग्रह के साथ न्याय नहीं कर रहे किन्तु विवश हैं। अर्थ का अभाव आज ही उन्हीं दिनों में क्या हुआ है? उन्होंने छोटी मोटी ७०पुस्तकें लिखीं। उस समय में पुस्तकों के विक्रय से पनपना तो आकाश कुसुम की कल्पना करना था, परन्तु वे लिखना और सब तक पहुंचाना चाहते थे। इतिहास में उन्होंने १० वर्ष तक शोध किया और "नाथा वतों का इतिहास" नाम से एक बृहद ग्रन्थ प्रकाशित किया।

यद्यपि यह ग्रन्थ एक सीमित जाति का था, किन्तु इसमें प्रामाणिक रूप में राजस्थान के प्रमुख घटना, काल व व्यौरे संग्रहीत हैं। इस शोध कार्य पर चौमूं नरेश ने सन् १९४० में १० हजार रुपये देने भी चाहे थे, किन्तु अवधूत ब्राह्मण को रु० से अधिक अपनी कृति से प्यार था।

मृत्यु के समय वे "पञ्च महाभूत" नाम से एक विशाल ग्रन्थ लिख रहे थे जिसमें प्राच्य और नव्य विज्ञान के समन्वय के साथ ही एक नई दिशा दृष्टि थी।

आज उनके लैटर हैड्स उस युग की कहानी हैं। जब हिन्दी का प्रचार लोगों का व्रत था। लैटर पैड्स पर छपा है "हिन्दी हितैषी।" हितैषी तो वे प्राणी मात्र के थे किन्तु हिन्दी तो मानों उनके प्राण थी, फिर वह उनसे और वे उससे पृथक रह ही कैसे सकते थे।

इतिहास के प्रकाशित होने के बाद की बात है। विख्यात इतिहासकार गौरी शंकर हीराचन्द ओझा जयपुर आये थे और जयपुर ही से शर्मा जी से मिलने के लिये चौमूँ चल पड़े। संयोग की बात शर्मा जी भी उसी दिन जयपुर से चौमूँ जा रहे थे। खद्दर का हाथ से सिला कुर्ता, पगड़ी और ऊंची धोती, ये उनके वस्त्र थे। भव्य ललाट पर लाल सिन्दूरी रंग का टीका। कितना विचित्र संयोग कि दोनों एक ही डिब्बे में और एक ही सीट पर। गाड़ी चल पड़ी। थोड़ी देर बाद ओझा जी ने पूछा, "चौमूं कितनी दूर है।" संक्षिप्त-सा उत्तर था—"१८ मील"। बात बन्द, पर शायद ओझा जी अपरिचित स्थान के विषय में जानना चाहते थे, इस लिये बात आगे बढ़ाई—आप भी चौमूं ही जायेंगे? फिर वही संक्षिप्त उत्तर "हाँ" विवश ओझा जी ने अपना गन्तव्य-स्थल, परिचय आदि बता दिये किन्तु शर्मा जी ने यही कहा "मैं आपको पहुँचा दूंगा"। वे उन्हें साथ ले गये। गाँव से दूर एकान्त में खूब बातें हुई किन्तु अभी तक रहस्य नहीं खुला। सन्ध्या होने को आई। ओझा जी अधीर हो उठे और अकुला कर बोले "मेरी शर्मा जी से भेंट करा दीजिए"।

"इतनी देर से तो भेंट कर रहे हैं और अब भी अपरिचित ही हैं क्या?" ऐसा था श्री शर्मा जी का ज्ञान और परिहास फिर तो एक भारतीय के घर आया अतिथि देव सदा-सदा के लिये प्रगाढ़ स्नेह बन्धन में बन्ध गया।

शर्मा जी के प्रत्येक कार्य में व्यवस्था और संक्षेप रहता था। जो भी वस्तु जहाँ की हो वह वहीं रहे, यह उनका सूत्र था। नियमितता उनका गुण था इसीलिये ७२ वर्ष की अवस्था में भी वे पूर्ण स्वस्थ थे। प्रातः ३ बजे उठकर रात्रि के १० बजे तक कार्य व्यस्थ रहते थे। उन्होंने स्वयम् के जीवन में ही आदर और त्याग का वैभव भोगा था। जनता का प्रेम और आत्मीयता उन्हें पूर्ण रूप से मिली थी। बड़े-बड़े यज्ञ करवा कर भी, वे उसका एक दाना घर में नहीं आने देते थे। श्रेष्ठ से श्रेष्ठ लेख लिखकर भी पारिश्रमिक की कल्पना नहीं करते थे। पता नहीं क्यों पैसे से उनको घृणा थी और पैसे को उनसे लगाव। जीवन भर पैसा उनके पीछे भटकता रहा और वे उसे ठुकराते रहे। यदि वे चाहते तो राजनीति में भी अपना प्रभाव फैला सकते थे और कोई आश्चर्य नहीं कि उस क्षेत्र में भी वे उसी प्रभुता के साथ चमकते किन्तु राजनीति से अधिक व्यवहारनीति प्रिय थी उनको। वे पुराणों की तरह के रूपक

(कृपया देखिए पृष्ठ १८२ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाल बुझक्कड़

श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय

पुराने जमाने में 'लाल बुझक्कड़' नामक आदमी बहुत मशहूर हुआ है। उसकी बुद्धि के करश्मे से प्रायः सभी लोग परिचित हैं। उन्हीं के सम्बन्ध में जो नवीन अनुसंधान हुआ है, उसका संक्षिप्त सार यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

द्वितीय महायुद्ध के अन्तर्गत शत्रुओं एवं मित्रों द्वारा डुबाए गये अनेक जहाजों के अवशेषों को समुद्र के उदर गह्वर से निकालते हुए बहुमूल्य वस्तुओं के साथ ही एक मुँह बंधा चिकना घड़ा भी प्राप्त हुआ था। उस घड़े में रखे हुए कुछ जीर्ण शीर्ण कागजों का विशेषज्ञों द्वारा आठ दस वर्ष अवलोकन करने के बाद जो तथ्य प्राप्त हुए हैं उनका सार यहां दिया जा रहा है–

ईसा की सातवीं शताब्दी के लगभग जम्बूद्वीप मध्ये अंधेर नगर बहुत सम्पन्न धन-धान्य से परिपूर्ण प्रसिद्ध देश था। वहाँ चौपट्ट वंश का शासन था। उस चौपट्ट वंश की प्रशस्ति बहुत विस्तृत है। वहां कोई भेदभाव न था। रोगी निरोगी एक थाली में ही भोजन करते थे। प्रत्येक वस्तु टके सेर बिकती थी। न्याय की महिमा अपरम्पार थी। यह आवश्यक नहीं कि अपराधी ही दंड पाता था, अपितु जिसके भी गले में फांसी का फँदा ठीक बैठता था, उसी को दंड दे दिया जाता था। राजा भी इस विधान का उल्लंघन नहीं करता था। उसी राज्य में जब ईश्वर-दर्शन की लालसा में निःसंतान राजा ने प्राणोत्सर्ग कर दिए, तब परम्परानुसार उत्तराधिकारी राज्यासन पर अभिसिक्त किया गया। उत्तराधिकारी चुनने की प्रथा प्रजातंत्रात्मक थी। न कोई संघर्ष, न कोई क्षति, न किसी तरह का व्यय, न कोई प्रलोभन। कोई भी ऐरा-गैरा नगर के द्वार खुलने पर जो सबसे प्रथम राजा की अर्थी के सामने आ जाता था, राज्याधिकारी चुन लिया जाता था।

संयोग की बात, प्रातःकाल नगर का द्वार खुला तो अर्थी के सामने लाल बुझक्कड़ आ गए। उसने राज्याधिकार प्राप्त करते ही अपने भाई भतीजे, साले-सुसरे के अतिरिक्त अपनी जात बिरादरी के नाते रिश्ते के, अपने गांव के अधिक से अधिक व्यक्तियों को महत्वपूर्ण पदों पर बिठा दिया। उसकी इस उदारता समक्ष–"अंधा बांटे रेवड़ी घर-घर को दे" कहावत पूर्ण सोलह आने चरि होती थी! उसने नर्तकों, विदूषकों साजिन्दों एवं नक्कालों को सांस्कृति कलाकार के रूप में सम्मानित किया। उज्बकों और अहमकों की बढ़ती प्रतिष्ठा को देखकर बुद्धिजीवी अपने हीन महसूस करते हुए अक्सर कहते कि ईश्वर ने उन्हें क्यों मस्तिष्कविहीन बनाया। अकबर इलाहाबादी के शब्दों में

"बुलबुलों को ये हसरत है
कि हम उल्लू न हुए"

उसी अंधेर नगर में एक ऐसा भी बचा रह गया था जिसे अन्य राज्याधिकारी सनकी एवं खप्ती समझते क्योंकि वह प्रजा के हित को राजा हित समझता था। वह लगातार कई तक राजा को प्रजा की दुःखभरी कहा और आवश्यकताएं सुनाने का प्रय करता रहा, किंतु जब सफलता प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुई तो किसी तरह जान पर खेलकर मेहतर की सहायता से महाराजा के समक्ष उपस्थित होकर गिड़गिड़ाकर बोला--

"अन्नदाता ! जनता के प्रार्थना पत्रों की बोरियां ५१ गाड़ियों में लदी हुई राजप्रासाद के समीप खड़ी हुई हैं। तीन वर्ष से दीनानाथ के आदेश प्राप्त करने का लगातार प्रयास कर रहा हूँ, किन्तु धर्मावतार को क्षणभर का भी अवकाश न होने से असफल वापिस चला जाता रहा हूं। धृष्टता क्षमा। आज किसी तरह चरणारविंदु में उपस्थित होने का उपक्रम कर सका हूं। अतः ... !

महाराजा—(बात काटते हुए) अरे भाई मंत्री जी, तुम भी विचित्र हो। हमें श्वास लेने का तो अवकाश नहीं और तुम कहते हो कि ५१ गाड़ी प्रार्थना-पत्रों से भरी निपटा दें।

मंत्री—दयानिधान ! कुछ वस्त्र पहनते हुए, कुछ कलेवा करते हुए, कुछ रथ में गमन करते हुए अवलोकन कर लीजिए। बून्द-बून्द निकालने से सरोवर भी रिक्त हो जाते हैं।

महाराजा—यह तो ठीक है परन्तु वस्त्र धारण करने का समय तो चित्रकारों ने लिया हुआ है। कलेवा और भोजन हम कभी अपने यहां करते नहीं। रथ में चलते हुए मार्ग में खड़ी जनता के अभिवादन का प्रफुल्ल मुख से प्रत्युत्तर देना पड़ता है। अभी हमें नगर बन्धु के निर्वाचनोत्सव में सम्मिलित होना है। फिर मोचियों खटीकों, चिड़ीमारों और कस्सावों के उत्सवों का अध्यक्ष पद ग्रहण करना है। रात्रि के द्वितीय पहर तक का समय नर्तकियों को दिया हुआ है। ऐसी स्थिति में तुम ही न्याय करो कि हम तुम्हारी उन व्यर्थ की बातों के लिए कहां से समय लाएं ?

मंत्री—दयानिधि! प्राणों का आश्वासन मिले तो निवेदन करने का साहस करूं कि जनता के कष्टों की ओर ध्यान देना भी आपका कर्तव्य है।

महाराजा—(क्रुद्ध होकर) तुम हमें कर्तव्य अकर्तव्य का ज्ञान कराने आए हो ? छोटे मुँह और बड़ी बात। खैर, हम तुम्हें निराश नहीं करना चाहते। तुम हमारे शयनकक्ष में रात्रि के द्वितीय पहर के अन्त में आ जाया करो। तुम्हारी इन समस्याओं को हम सुप्तावस्था में भी हल कर दिया करेंगे।

मंत्री- प्रजावत्सल ! आप शयन करते समय..... ?

महाराजा—अरे भई, तुम समझे नहीं सोते हुए दो चार रात्रि रंगीन स्वप्न न देखे तुम्हारे उलझे हुए पेंच सुलझा दिए। इसमें अन्तर ही क्या पड़ता है?

× × × ×

महाराजा निद्रा में मग्न थे। नासिका से सितार की ध्वनि निकल रही थी कंठ मृदंग का कार्य कर रहा था, तभी नौकर पर दो बोरे लदवाए हुए मंत्री जी उपस्थित होकर पृथ्वी पर बैठ कर निवेदन करने लगे तो उनके आश्चर्य की सीमा न रही। जब महाराजा निद्रावस्था में भी अपना निर्णय चटापट देने लगे।

मंत्री—बाढ़ ग्रस्त ५७५ गाँव पानी में डूबे हुए हैं। अभी तक राज्य की ओर से न पानी निकलवाने का, न भोजन वस्त्र आदि का प्रबन्ध हुआ है।

महाराजा—इन्हें लिख दिया जाय कि स्वयं अपने पाँवों पर खड़ा होना सीखें। राज्य का आश्रय कब तक चाहते रहेंगे। और हाँ, बाढ़ पीड़ित गाँवों के चारों तरफ स्याहीचूस और बोरियाँ लगवा दो। पानी बहुत शीघ्र सुख जाएगा।

मंत्री—दयासागर ! दो प्रदेशों में दुर्भिक्ष पड़ जाने से वहाँ के निवासी पत्नियों को छोड़ कर भाग रहे हैं। माताएँ अपने बच्चों से ग्रास छीन कर खा जाती हैं।

महाराजा—यही तो अपने-पराए को परखने का समय है। पत्नियों को कहो कि वे अपना दूसरा विवाह कर लें और बच्चों को सिखाओ कि जो माँ तुम्हारा ग्रास छीनें, उसे तुम बड़े होकर माँ न समझना।

मंत्री—कृपानिधान ! यमुना पार की बस्तियों में आग लगी हुई है, इसे बुझवाने की आज्ञा प्रदान कीजिए।

महाराजा—केवल ८-९ मास बरसात के रह गए हैं, तनिक धैर्य रखने को कहो, आग बुझा दी जाएगी।

मंत्री—तीन-चार प्रदेशों में डाकेजनी और अपहरण की हजारों घटनाएँ हो चुकी हैं।

महाराजा—डौंडी पिटवा दी जाय कि वे लोग राजधानी में आकर रहने लगें।

मंत्री—प्रजावत्सल ! राजधानी में तो पहले ही चोरियों की भरमार है। दिन दहाड़े लूट खसोट मची हुई है।

महाराजा—कर-विभाग को सूचित किया जाय कि जनता पर अधिक से अधिक कर लगाया जाय। 'न होगा बाँस न बजेगी बाँसुरी।'

मंत्री—यात्रियों के लूट लिए जाने की घटनाएँ अनगिनत हो रही हैं।

महाराजा—अगर रात में होती हैं तो दिन में, अगर दिन में होती हैं तो रात में यात्रा करने का आदेश निकाल दिया जाय और यदि रात दिन होती हैं तो कुछ वर्षों के लिए यात्राएं स्थगित कर दी जायें।

मंत्री—न्यायावतार ! अनुमानतः दो सहस्र पिताओं के प्रार्थना पत्र आए हुये हैं कि उनकी कन्यायें अपहरण कर ली गई हैं।

महाराजा—उनसे जवाब तलब किया जाए कि उन्होंने कन्या उत्पन्न करने का साहस किसकी आज्ञा से किया ?

मंत्री—अन्नदाता ! १५ हजार अभावग्रस्त नवयुवक आत्महत्या करने की स्वीकृति चाहते हैं।

महाराजा—उन्हें तत्काल स्वीकृति प्रदान की जाय। यदि वे अपनी अन्त्येष्टि क्रिया का भार स्वयं वहन कर सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगी राज्य चिकि-
की उपेक्षाओं और
काल कवलित हो

जिम्मे जो राज्य-
के अभिभावकों से

क्षक ! ७५५ नर्त-
ी अनुमति चाहती

राज्य उपाधियों से
व्यय पर विदेशों
हमारे देश का
।

कर-विभाग प्रार्थी
कर, मनोरंजन कर,
ग्रहण-संस्कार-कर,
हैं, अब और कौन-
गाए जाएँ, ताकि
हो सके ।

ाल गर्भ-संस्कार,
कार, छींक-संस्कार
र लगा दिए जाएँ।
के संबंध में फिर

मंत्री—वीर शिरोमणि ! हमारे क्षेत्र में आततायी घुस आए हैं ।

महाराजा—प्रधान सेनापति को आज्ञा दी जाए कि वे उन आक्रमणकारियों को बाइबिल का वह अंश पढ़कर सुनायें जिसमें एक गाल पर चपत लगने पर दूसरा गाल कर देने का उल्लेख है। यदि फिर भी उन्हें दया न आए तो हमारी सेना स्वयं अपनी आँखें बंद करके बैठ जाए। जब हमारी सेना न देखेगी तो आक्रमणकारी स्वयं लज्जित होकर लौट जाएंगे ।

ध्यान रहे, शेर और सांप आँख मिलाने पर ही चोट करते हैं। आँख झपका लेने पर चुपचाप टल जाते हैं ।

मंत्री—देशरक्षक ! सीमा पर अनेक आक्रमणकारियों को सुभाग सिंह ने भून डाला, वह पदोन्नति का प्रार्थी है ।

महाराजा—उस वज्र मूर्ख से जवाब तलब किया जाय कि उसने इतनी गोलियां किसके आदेश से नष्ट कर डालीं ।

मन्त्री-प्रजावत्सल ! पचास प्रांत बन जाने के बाद भी अब हरियानी, बागड़ी, मेवाती, बुन्देलखंडी, मिरजापुरी गोरखपुरी, भोजपुरी, मागधी, मैथिली, रुहेलखंडी—आदि सैंकड़ों स्थानों के शिष्ट मंडल आए हुए हैं। हर ज़िले, तहसील और थाने के निवासी अपनी-अपनी बोली के आधार पर अपना पृथक प्रांत चाहते हैं ।

महाराजा—एवमस्तु ! यह उनका जन्म सिद्ध अधिकार है। हम तो चाहते हैं कि प्रत्येक गाँव स्वतंत्र प्रांत बन जाय ।

मंत्री—देशविभूति ! प्राणों की भिक्षा मिले तो कहने का साहस करूँ कि उस नीति से तो देश छिन्न-भिन्न हो जाएगा।

महाराजा—मंत्री जी ! तुम सठिया गए हो, अन्यथा ऐसी मूर्खतापूर्ण मंत्रणा न देते। देश के छिन्न-भिन्न हो जाने में ही राज्य का हित है। प्रजा छिन्न-भिन्न रहेगी तो वह त्रिकाल में भी राजद्रोह न कर सकेगी। हम उन्हें इच्छानुसार भेड़-बकरियों की तरह हांक सकेंगे ।

बोरियां मगवाएँ या नहीं, मंत्री जी यह निर्णय नहीं कर पा रहे थे कि मुर्गे की बाँग सुनकर महाराजा की तन्द्रा भंग हो गई और वे मुस्कराते हुए शय्या परित्याग करके दैनिक कार्यों में संलग्न हो गए । ▣

का शेष)

भु सम्मित संक्षेप
सी भी सभा में
ीं दिया और न
मारोह में प्रमुख
बिना प्रदर्शन के
उनका व्यवहार
से वे पैसे को भी
साद का कारण
एक प्रसंग याद
हो जाता है कि वे
एक अच्छे धनाढ्य
और शिव मूर्ति की

प्रतिष्ठा करानी थी। गांव से १८ मील की दूरी पर जाना था। उत्सुकता अथवा प्रशिक्षण वश मुझे भी साथ ले लिया। ३ दिन तक व्यस्त रहे। कार्य समाप्त होने पर वापस आना था। सेठ उनके स्वभाव से परिचित था, किन्तु मुझे साथ देखकर उसने सौ के दो नोट तथा एक मुहर दे दी। यह भी साथ में कह दिया कि शर्मा जी से मत कहना। मेरा किशोर मन एक साथ इतने रुपये पाकर झूम उठा, पता नहीं उनको कैसे भनक पड़ गई। डेरे पर आकर उन्होंने पूछा—"तुझे उन्होंने दिया है क्या कुछ ?" मना कर देना बस की बात नहीं थी। टालने की कोशिश की, आखिर उगलना ही पड़ा। रुपये देखकर नाराज होगये। वापस सेठ के पास गये और रुपये देकर आये, तब चैन मिला। मैं रूठ रहा था। वे आये पर मैं बोला नहीं। उन्होंने समझाने के स्वर में कहा—तू इतने रुपयों का क्या करता? रुपये को पाने के लिए इस तरह दौड़ेगा, तो वह दूर भागता जायेगा। जो तुझे जरूरत है, मुझे कह।" मैं चुप हो गया। पीछे जब औरों के मुँह से इस त्याग की प्रशंसा सुनी तो महसूस हुआ कि त्याग में जो आनन्द है वहसंग्रह में नहीं। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिर कर भी, यदि हम सम्भल सकें तो !

—श्री देवेन्द्र स्नेही

ादमी है। किसी
सकता तो किसी
भी नहीं पड़ता।
पने में ही मस्त
है, किन्तु जब भी
आता है तो मन
ास से उसे अपना
ही सीमित परिधि
लों की, लेकिन
ी उसको सम्मान
अधिकारी, पास
सभी उसकी इज्जत
ना किसी उलझन
रही है।

जक आदमी है।
बीमार हो, झट
टर से दवा लाने
कार्ड पर सप्लाई
र कराने हैं, तुरन्त
न में सीट रिजर्व
किल बुक करानी
जाएगा। शादी
ों तरफ दौड़ता
ह है कि वह किसी
ने देता। इन गुणों
क अवगुण भी
मन से मधुर भी
ो उलझाने की
णाम यह है कि
ा कम, निन्दा
पने उक्त अवगुण
लए वह नई-नई
लेता है। 'पीछे
ता हुआ बढ़े जा

रहा है।

श्याम नारायण तन-मन-धन से दूसरों की भलाई करने में सदा तत्पर रहता है। मन से कोमल और मधुर है। ब्रजमोहन को उसी ने नौकरी दिलाई। प्रभुदयाल को मकान नहीं मिल रहा था, उसे ४-५ महीने तक अपने घर का एक भाग रहने के लिये दिया। विधवा राधा के पुत्र को दो वर्ष तक अपनी तरफ से छात्र वृत्ति दी।

अनजान से अनजान व्यक्ति की भी सहायता करने के लिए वह सदा प्रस्तुत रहता है, परन्तु एक बहुत बड़ा अवगुण उसमें भी है। जिससे भी कुछ घनिष्ठता हो जाती है, उससे किसी न किसी बात पर उलझ जाता है। अपनी बात सर्वदा ऊपर रखना चाहता है। बस ऐसे प्रसंग पर ही कुछ ऐसी कठोर बात कह बैठता है, जिससे दूसरा अपने को अपमानित अनुभव करे। यहीं से सम्बन्धों में खिंचाव प्रारम्भ हो जाता है। यह बात नहीं कि श्याम नारायण की भलाई को लोग याद नहीं करते, करते हैं, परन्तु उससे भी अधिक उसके द्वारा किया हुआ अपमान उन्हें याद रहता है। ऊपर से अच्छे सम्बन्धों की औपचारिकता करते हुए भी वे अन्दर ही अन्दर कटे कटे रहते हैं। इस बात से श्याम नारायण को हार्दिक दुख होता है, जो स्वाभाविक है। आखिर जिसकी उसने सब तरह से सहायता की है, उससे कम से कम कृतज्ञता नहीं तो समीपता तो मिलनी ही चाहिए।

ऊपर के तीन रूप तीन होकर भी बात एक ही कहते हैं। जी हाँ, एक ही बात—'मनुष्य को मनवाणी से मधुर होना चाहिए।'

रमेश, मोहन, श्याम नारायण में रमेश अधिक सुखी क्यों दिखाई देता है? इसलिए कि मन और वाणी की सहज मधुरता से दूसरों में उसके प्रति भली प्रतिक्रिया होती है। उसके अभाव में मोहन और श्याम नारायण भरपूर भलाई करने पर भी उस प्रकार की प्रतिक्रिया ग्रहण नहीं कर पाते। वे सब कुछ करके भी बहुत कुछ खो देते हैं, जबकि रमेश अधिक कुछ न करके भी बहुत कुछ पा लेता है।

लीजिए, एक घटना आपको सुनाता हूं:

संत विनोबा भावे ने 'गीता प्रवचन' के १६ वें अध्याय में 'मांसाशन' शीर्षक से लिखा है—"आज यदि हम मांस नहीं खाते तो इसमें हमारा कोई बड़प्पन नहीं। पूर्वजों की पुष्पाई से हम इसके आदि हो गये हैं, परन्तु पहले के ऋषि मांस खाते थे, ऐसा हम यदि पढ़ें या सुनें, तो हमें आश्चर्य मालूम होता है और तुरन्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह प्रश्न हमारे सामने आ खड़ा होता है–'क्या बकते हो ? क्या ऋषि मांस खाते थे ? कभी नहीं, परन्तु मांसाशन करते हुए उन्होंने संयम कर के उसका त्याग किया है। इसका श्रेय उन्हें है। उन कष्टों का अनुभव आज हमें नहीं होता। उनकी पुष्पाई हमें मुफ्त में मिल गई।"

विनोबा जी कुछ वर्ष पूर्व जब पंजाब का दौरा कर रहे थे तो अमृतसर, जालन्धर आदि शहरों में कुछ लोगों ने उन पर 'ऋषियों पर मांसाशन' का दोष मढ़ कर उनकी प्रार्थना सभाओं में खूब हुल्लड़बाजी की और खूब नंगे अपशब्द तथा कटुवचन भी कहे गये। शास्त्रार्थ की चुनौतियाँ भी दी गई। दो स्थानों पर तो सभाओं में इतनी अशान्ति मची कि विनोबा जी सभी लोगों को हाथ जोड़ कर विनम्र और मौन नमस्कार करके बीच में से ही प्रार्थना-सभा से उठकर चले गये।

यात्रा करते-करते जब वे कुरुक्षेत्र पधारे तो तूफान शाँत हो गया था। विनोबा जी की शान्ति और विनम्रता को ही इसका श्रेय था। शाम को प्रार्थना-सभा में अति विनम्र और मधु शब्दों में उन्होंने कहा–"जो लोग 'मांसाशन' के प्रसंग में, मेरे भाव से सहमत नहीं हैं, उनसे मैं हाथ जोड़ कर प्रार्थना करता हूँ कि वे मेरे वास्तविक तात्पर्य को समझने की कृपा करें। फिर भी मेरी बात से सहमत न हों, तो उस प्रसंग को बिल्कुल छोड़ दें। विचारों की स्वतन्त्रता तो सभी को है, उन भाईयों को भी।"

बात क्या हुई ? यही कि यदि हम विचार-स्वातंत्र्य को महत्व दें तो अधिकांश कटु अवसरों को टाला जा सकता है। व्यक्ति से लेकर राष्ट्रों तक के संघर्षों, दुखद प्रसंगों का एक मात्र कारण विचारों के टकराव के प्रति असहनशील होना ही तो है।

यह भी कि दूसरी तरफ से यदि हमारे विचारों के प्रतिकूल, कोई बात कितनी ही उग्रता, कटुता से कही जाय तो भी हम शान्त रहें–आपे से बाहर न हों। अपने और दूसरे के भी सुख के लिए यही आवश्यक है।

जब दूसरा व्यक्ति अपने निम्न स्तर पर उतर कर हमारे अहम् को चोट पहुँचाये, या किसी की अक्षम्य भूल से हमारा आवेश उबल पड़ने को बेचैन हो, उस समय, हाँ उसी समय हम एक ऐसी चट्टान पर खड़े होते हैं, जहां से लुढ़क कर नीचे भी गिर सकते हैं, और चाहें तो ऊपर की शुभ्र चोटियों की ओर भी बढ़ सकते हैं।

विनोबा जी तो सदा शुभ्रशिखरों पर अवस्थित रहते हैं। उनके लिये उपरोक्त आचरण नितान्त सहज है। हम ठहरे दुनियादार और आदत से मजबूर। सम्भलते-सम्भलते भी गिर जाते हैं। आवेग हमारे संपूर्ण आत्म-संयम को तोड़ कर धराशायी कर देता है।

जवाहर लाल नेहरू महान थे, किन्तु थे बड़े आवेगी पुरुष। आवेग पर उनका काबू नहीं था। वही आदत की बात। अपने साथियों का, कर्मचारियों का बहुत बार क्रोध में आकर अपमान कर बैठते थे या जल्दबाजी में दूसरे को नुकसान पहुँचा बैठते थे; किन्तु उनमें एक गुण था जिसका उन्होंने स्वयम् विकास किया था। वे जहां यह अनुभव कर लेते थे कि अमुक व्यक्ति का मेरे द्वारा अपमान या नुकसान हुआ है, वह चाहे छोटा हो चाहे बड़ा, झट उसके पास जाकर क्षमा मांग लेते थे, तुरंत ही क्षति-पूर्ति भी कर देते थे और पाक-साफ हो जाते थे। अंत के कुछ वर्षों में तो उन्होंने अपने आवेग को बीच से ही लौटा लाने की क्षमता भी प्राप्त कर ली थी।

आदत की बात छोड़ भी दें तो भी आवेग अन्ततः मानव की कमजोरी तो है ही। देश रत्न राजेन्द्र बाबू तो अजात शत्रु थे, अपने सौम्य और मृदु स्वभाव के कारण, किन्तु उनके जीवन में भी क्रोध और आवेग के अनेक प्रसंग आते थे। तो सुनिये एक ऐसा ही प्रसंग—

बाबू जी को किसी विदेशी से पत्थर का एक खूबसूरत पेन उपहार में मिला। बाबू जी को उससे बहुत मोह था। उसे सर्वदा अपनी लिखने पढ़ने की मेज पर सजा कर रखते थे। मेज पर लिखने का काम भी वे सदा उसी पेन से किया करते थे। एक दिन उनके एक कर्मचारी से, जब वह मेज की सफाई कर रहा था, पेन नीचे गिर कर टूट गया। बाबू जी को इस बात का पता चला तो उबल पड़े। क्रोध में भरकर नौकर को खूब डांटा-डपटा। उसी आवेश में नौकर को अपने व्यक्तिगत कार्य से हटाकर किसी अन्य कार्य पर जाने का आदेश भी देदिया। यह हुई मानवीय कमजोरी। बाबू जी ने यह सब कर तो दिया, सारी रात सारे दिन बेचैन रहे। राष्ट्रपति जैसे सर्वोच्च पद पर आसीन होते हुये भी, जब तक उन्होंने उस कर्मचारी से अपने व्यवहार की क्षमा न मांगली, उन्हें चैन नहीं मिला। यह हुई उनकी महानता।

गिरकर भी यदि हम संभल सकें, अपने पिछले कार्यों पर पानी फेरकर भी उन्हें पानी देकर और भी अधिक पनपा सकें तो इससे जहां हमें सुख और आनन्द मिलेगा, वहां हम समाज में भी प्रसन्नता और सरलता ला सकेंगे ! मोहन और श्याम नारायण से मैं और क्या कह सकता हूँ !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मील का पत्थर,

जिससे हर लम्बे यात्री को काम तो पड़ता है, पर मोह नहीं होता !

—श्रीमती प्रमोद दत्ता

सबने सुना कि सुरेश की शादी होने वाली है। लोग तरह-तरह की बातें करते हैं। कोई पूछता—कहाँ रहा जा सकता है गिरस्ती बसाए बगैर ? कोई प्रश्न में ही उत्तर देता—तो इतना नाटक क्यों रचा था कि शादी करेगा ही नहीं।

सुरेश की ही बड़ी बहन के शब्दों में यह शादी अत्यावश्यक थी। सच भी था। बाईस वर्ष की आयु में शादी होने पर यदि कोई अठाईस-उनतीस वर्ष का लड़का एकलौता पुत्र—विधुर हो जाए तो क्या वह एकाकी रह पाएगा ? उसके सामने लम्बी चौड़ी जिन्दगी पड़ी है। सुरेश का कहना था कि अगर पच्चीस वर्ष की स्वस्थ लड़की दो-तीन दिन की बीमारी में मर सकती है, वह भी हर उपचार के बाद, तो क्या गारन्टी थी कि वह बीसियों वर्ष जीएगा, पर घर के लोग कहाँ मानते ? क्या परिवार के प्रति वंश के उत्तराधिकार के प्रति उसका कोई कर्तव्य न था ?

दो वर्षों तक सुरेश ने उन्हें और कई लड़की वालों को चक्कर में घुमाए रखा-मानता ही न था। कुछ लोगों का कहना था कि उसका विवाहित जीवन बहुत सुखी था। इसी से वह अपनी पत्नी की स्मृति में यों ही जीवन बिताना चाहता था। कुछ का कहना था कि कहीं उसके वैवाहिक जीवन में कुछ कमी थी, इसीसे वह अपने पुनर्विवाह से डरता था।

जो भी हो, आखिर सुरेश का विवाह ममता से हो ही गया। विवाह के पश्चात उसके लिए तो केवल यही अन्तर हुआ कि अब फिर 'कुक' उससे 'आर्डर' नहीं लेता था। अब फिर पैसे उसी के पर्स में नहीं रहते थे। अब फिर उसे धोबी को आदेश नहीं देने पड़ते थे और अब फिर घर आने वालों के लिए उसे 'होस्टेस' नहीं बनना पड़ता था। दो साल चार माह पश्चात वही क्रम फिर से चल निकला था। असिस्टेंट इन्जीनियर साहब का बंगला फिर से चूड़ियों की झनकार से मुखरित हो उठा था और फिर बंगले के पिछवाड़े रस्सी पर सूखती साड़ियां बंगले को रंगीनी देने लगी थीं।

लोगोंकी आँखें इस अन्तर को जहां-तहां भांपती। वह मिसेज सुरेश, शकुन्तला थीं, शायद इसी से उसे कुन्ती कहा जाता था। पुराना नाम था न ? वह मिसेज सुरेश' केवल इन्टर पास थीं पर यह एम० ए० हैं। वह 'मिसेज सुरेश' सुन्दर थीं, पर यह रूपसी। वह बोलने-चालने वाली थीं, पर यह गम्भीर। वह घरेलू टाईप थीं तो यह साहित्यिक।

एक दिन दीदी माँ से कह रही थीं—"माँ, सुरेश मानता तो नहीं था, पर सच यह है कि ममता बड़ी ही अच्छी लड़की है। मेरे ससुराल वालों से तो उसके घर वालों के बड़े पुराने सम्बन्ध हैं। यह लड़की पच्चीस की होने को आई, पर कोई इसकी बुराई नहीं करता। दादा-दादी से लेकर चाचा-चाचियों और बहन-भाइयों से भरा पूरा घर है, पर क्या मजाल कभी किसी से ऊँचा बोली हो यह लड़की। कुन्ती तो फिर भी कुछ खीझने वाली तबीयत की थी।"

माँ समर्थन करती बोली—"अब क्यों स्वर्ग में बैठी की निन्दा करें, पर वह सच-मुच चिड़चिड़ी तबीयत की थी। जल्दी ही घबरा जाती थी।"

मैं तो जब-जब गई, सुरेश को हर दूसरे-तीसरे दिन यही कहते सुना—"मैं कोई बच्चा तो नहीं हूँ कुन्ती ? तुम तो खाहम्खाह बोलती ही चली जाती हो।" इसीसे माँ जब वह शादी न करने की जिद्द करता था तो मुझे लगता था कि सोचता होगा—फिर वही कच-कच होगी। वैसे हमारे साथ तो बड़ा प्यार करतीं थी। भगवान उसे स्वर्ग में जगह दें, पर सुरेश तो सचमुच उससे कभी-कभी तंग आ जाता था। अब उसके घर भर में शान्ति का राज होगा। विश्वास करना माँ, अगर कुन्ती तीन-चार बच्चे भी छोड़ कर मरती तो भी ममता के आने से उस घर में यही शान्ति रहती।

यह थी बाहर वालों और घर वालों की तुलना, पर जिसका इन दोनों में से एक से निकटतम संबंध था और दूसरी से है क्या-क्या सोचता कौन जान पाती ? लोगों का विचार ही नहीं, दृढ़ विश्वास था कि नई 'मिसेज सुरेश' के घर में

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पति-पत्नी कोई दो साझेदार ही नहीं कि महीने पश्चात रुपए-पैसे का, खर्च-बचत का हिसाब कर लें। वे दो पड़ौसी ही नहीं कि एक-दूसरे के दुःख-सुख में हिस्सा बंटा लें। वे मित्र ही नहीं कि कभी-कभाक एक दूसरे का मन बहलाव कर दें। वे यह सब कुछ होकर भी इस से ऊपर हैं। वे एक दूसरे की विशेषताओं के साथ-साथ कमजोरियों को भी बाहर निकलने का मौका देते हैं। वे एक दूसरे को नियमों-कायदों तक की दीवारें तोड़ डालने पर मजबूर कर देते हैं, क्योंकि वे अपने में कोई आवरण, कोई दूरी नहीं सह सकते।

कदम रखते ही पहली की याद भी घर से बाहर चली गई होगी, पर कोई क्या जाने कि बात इसके ठीक विपरीत थी। सच तो यह था कि ममता के न रहते कुन्ती भी इतनी याद न आती थी पर अब तो बात ही दूसरी थी।

शादी के कुछ ही दिन बाद सुरेश को एक दिन आफिस में कुछ देर हो गई। घर पहुंचा तो कुछ घबराया-सा। बोला-"आज बहुत देर हो गई। तुम्हें बहुत इन्तजार करनी पड़ी। भूख भी लगी होगी।"

"नहीं, भूख का तो अभी तक पता नहीं। मैं 'रीसरक्शन' पढ़ रही थी और अभी भी छोड़ने को मन नहीं चाह रहा है।" यह कह कर ममता ने धीरे-से किताब बन्द की, सैन्टर टेबल पर उसे रखी और उठकर खाने वाले कमरे की ओर चल पड़ी।

न जाने क्यों, सुरेश इस जवाब के लिए अपने को तैयार न कर पा सका। उसके कानों में अपनत्व भरी और उपेक्षा का अभिनय करती वाणी गूंज गई-"देर कहां की? आप तो जल्दी ही आ गए। शाम की चाय के टाईम आ जाते तभी क्या था?"

फिर वह अपने साथ-साथ सहज गति से चलती ममता की ओर देख उसकी तेज चाल को याद करने लगा जो उससे छः कदमों का फासला बनाए खाने वाले कमरे में जा पहुंचती। अपनी कुर्सी पर चुपचाप जा बैठती, मानों सख्त नाराजगी है। खाना खाते समय वह धीरे-से कह देता-"गोभी तो बड़ी अच्छी बनी है" और चूड़ियां झनझनाता एक हाथ कुछ ही क्षण बाद अपने आप बढ़ कर गोभी से उसकी प्लेट भर जाता और पांच-सात मिनट की चुप्पी के बाद एक क्रोध भरी-सी आवाज पूछती-"नौकरी तो करनी है, पर जान तो नहीं देनी। फिर पचपन साल तक नौकरी करनी है तो क्या सेहत का ध्यान रखे बिना हो जायगी?"

उस दिन यह सब नहीं हुआ। उसीने अपना कर्त्तव्य निभाते हुए पूछा-"खाना तुम्हारी पसन्द का तो बनता है न?"

"मैं तो खाने के बारे में बिल्कुल 'फसी' (उपद्रवी) नहीं।" शान्त स्वर में उसका उत्तर था।

'वैसे आज दही-बड़े तो बहुत अच्छे बनाए हैं रामू ने। हाँ बहुत नर्म हैं।"

यह सुनकर चूड़ियाँ भरी कोई कलाई नहीं हिली। अंगूठी का नगीना चमकाता कोई हाथ आगे नहीं बढ़ा। उसकी प्लेट में एक दो, तीन "बस...बस ना" कहने पर चौथा बड़ा किसी ने नहीं डाला। फिर भी वह निराश नहीं हुआ। सोचा-नवेली है। शायद कुछ दिनों में उसी तरह करेगी और उस आशा के साथ-साथ उसी घड़ी से वह घर से बाहर निकली लौट आई। सुरेश उसे हर पल छाया-सी बनी ममता के साथ-साथ घूमते देखता। उसे लगता कि एक दिन वह घूमती छाया, जो उसी की पत्नी की है, वही बोली भी बोलेगी जो उसकी पहली पत्नी बोला करती थी। इसी प्रतीक्षा में उसने [illegible] तो क्या, महीने बिता दिए, पर [illegible] कोई अन्तर न था। साल भी बीत [illegible] थे। एक नन्हें-मुन्ने के मिमिया कर [illegible] ने अब तुतली बातें आरम्भ कर दी [illegible] पर वह छाया अभी भी घूमती [illegible] धुँधली नहीं हो पाई, उलटे अमिट [illegible] गई लगती थी।

दूर पर अब ममता साथ नहीं [illegible] थी। राजेश अब नर्सरी में पढ़ता जो [illegible] सुरेश को जिस दिन घर लौटना था, [illegible] दिन सर्किट हाऊस में उसके चीफ-इं[illegible] नियर साहब आ गए और उसे एक [illegible] और रुकना पड़ा। दूसरे दिन भी [illegible] के सात बजे से पहले न पहुंच सका।

सुरेश ने बताया कि 'लास्ट मो[illegible] पर रुकना पड़ा। फोन की लाईन [illegible] थी, इसी से बता भी नहीं सका तो [illegible] शान्त उत्तर मिला-"मैं समझ गई [illegible] कि कोई काम आ पड़ा होगा।"

ऐसे अवसरों पर जो प्रायः आते [illegible] रहते, सुरेश का मन होता कि वह [illegible] शान्ति की मूर्ति की पूजा करे। श्रद्धा [illegible] उठती उसके प्रति जिसने उसके जीवन [illegible] कोई हलचल नहीं उठाई। यहाँ तक [illegible] ड्राईंग रूम में लगी उसकी व कुन्ती [illegible] फोटो, जो दीदी ने उठवा दी थी, [illegible] लौटाकर वहीं रख दी गई थी, पर [illegible] जाने क्यों, इस सबके होते भी वह [illegible] उठता कि वही आवाज फिर सुन [illegible] उस दिन उसने स्वयं से वही वार्तालाप [illegible] दोहराया जो उसमें और कुन्ती में ऐसे [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवसर पर हुआ था—

'ऐसी क्या जरूरत आ पड़ी थी कि घर वालों के मरने-जीने तक की भी फिक्र न रही ? कल रात भर फोन करती रही कि शायद लाईन ठीक हो जाए। सुबह पाँच बजे वाली बस से संतराम को भेजा था, वह भी मर गया वहीं जाकर। दोपहर दो बजे तक तो लौट सकता था न पर····· ?"

"सुनो भी ! मैंने ही उसे रोक लिया था। सोचा, हम सभी दो-तीन बजे तक पहुँच जाएँगे। वैसे भी रोड खराब होने से बस चार पाँच से पहले नहीं पहुँचती। साठ मील का चक्कर·····।"

"ज्यादा बातें बनाने की कोई जरूरत नहीं। मुझे यह सब सुनने की मुसीबत भी नहीं पड़ी। बस एक बात कहे देती हूँ कि आगे से तुम जानों, तुम्हारे मेहमान। चाहे दीदी हों चाहे जीजा जी, मैंने जान नहीं दे देनी। न ही 'हार्ट ट्रबल' मोल लेनी है न 'हाई ब्लड प्रैशर'। मैं किसी के पीछे घर नहीं रहूँगी।"

'चुप भी करो। कहीं दीदी सुन लें तो?"उसने गुस्से से कहा—"सुन लें! क्या करूँ फिर ? सुबह उनसे भी तो कहा था कि चलो हम ही बस से चले जायें तो बोलीं–रास्ता बड़ा खराब है और सुरेश भी डाँटेगा। खराब रास्ते की फिक्र में जान भी देते फिरें और डाँट भी खाएँ।"

उसने मुस्करा कर पूछा था–'थके हुए, खराब रास्ते से आए लोगों का यही सत्कार होता है क्या ? न चाय का कप, न कुछ खैर-खैरियत। बस नाराजगी !" और अगले ही क्षण उसका उल्लसित स्वर रसोई-घर में जा गूंजा था। वह बहुत प्रसन्न थी कि वे सकुशल घर लौटे हैं।

आज कुन्ती होती या ममता उस जैसी बन जाती तो साफ कहती–"बच्चे की पढ़ाई के पीछे मैंने 'नखसनैन' नहीं लगानी। आगे से जो बताए दिन लौट कर नहीं आए तो साफ कहे देती हूँ मैं इसे माँ के पास भिजवा दूंगी और दूर पर साथ जाना शुरू कर दूंगी। ऐसे टेढ़े-मेढ़े रास्ते, उस पर जंगली इलाका ! बस जान पर ही बनी रहती है। वक्त पर नहीं पहुचो तो चैन कैसे मिले ?"

अपनी डायरी में, कुछ दिन पश्चात, सुरेश ने लिखा था–"आज तुम्हें गए छः साल हो गए हैं। छः साल दो माह और पाँच दिन तुम मेरे साथ रहीं। उस छोटी-सी अवधि में जो कुछ तुमने दिया, वह छः जन्म भी भूलना मेरे लिए संभव नहीं। इसी कारण इन छः सालों में भी तुम साथ ही रही हो।"

लेखिका

ममता बहुत ही अच्छी है। बड़ी गम्भीर, शान्त,स्नेह करने वाली और मेरी हर सुख-सुविधा का ध्यान रखने वाली है, मेरे मान को निभाने वाली, मेरी 'पोजीशन' का सदा ध्यान रखने वाली है, पर, सुनो न एक भेद की बात कि मैं, जो उसे पूज सकता हूँ, बराबर से भी बढ़ कर मान दे सकता हूं, उसे अपने से महान मान सकता हूँ, पर कितनी कोशिश करके भी, कितना चाह कर भी उसे अपना एक हिस्सा नहीं बना पाता।

जानती हो, क्यों? उसकी गम्भीरता, उसका आदर्शवाद उसके और मेरे बीच में परदा बन कर पड़ा रहता है। न वह बिगड़ती है, न मैं बिगड़ने का साहस बटोर पाता हूँ। न खुल कर हँसती है, न मैं खिलखिला पाता हूँ। न वह साधारण है, न मैं असाधारणता खोकर उसकी नजरों में गिरना चाहता हूं। उसका तो स्वभाव ही होगा और मैं एक मुखौटा लगाए घूमता फिरता हूं।

कई बार सोचता हूं कि उससे कह दूँ–"ममता पति-पत्नी कोई दो सांझेदार ही नहीं कि महीने पश्चात रुपए-पैसे का, खर्च-बचत का हिसाब कर लें। वे दो पड़ौसी ही नहीं कि एक-दूसरे के दुःख सुख में हिस्सा बँटा लें। वे मित्र ही नहीं कि कभी-कभाक एक दूसरे का मन बहलाव कर दें। वे यह सब कुछ होकर भी इससे ऊपर हैं। वे एक दूसरे की विशेषताओं के साथ-साथ कमजोरियों को भी बाहर निकलने का मौका देते हैं। वे एक दूसरे को नियमों-कायदों तक की दीवारें तोड़ डालने पर मजबूर कर देते हैं, क्योंकि वे अपने में कोई आवरण, कोई दूरी नहीं सह सकते। वे दो शरीर एक आत्मा जो ठहरे। इसीसे वे एक दूसरे के अस्तित्व को बनाए ही नहीं रखते उसमें घुल-मिल भी जाते हैं।"

मैं उसकी गम्भीर मुद्रा देख कुछ भी कहने का साहस नहीं बटोर पाता। मैं नहीं चाहता कि उसकी कसौटी पर खरा न उतरूँ। इसी से एक प्रेमी-पति होने के बजाय मैं कर्त्तव्य-शील पति बन गया हूँ। लगता है उससे किसी ने (हो सकता है माँ या दीदी ने) कहा होगा कि तुम मुझे रोकती-टोकती थीं, जो उनके विचार में मुझे अच्छा नहीं लगता था। शायद इसी से वह आदर्श पत्नी की फिक्र में है। अब तुम्हीं कहो कि उससे कैसे कहूँ कि ममता महीने में एक दिन तो कुन्ती बन जाया करो।

मैं उसे नहीं कह सकता कि मैं उस दिन के लिए तरस गया हूं जब कोई मेरे सुस्त चेहरे की ओर देख कर पूछे–"सर में दर्द है क्या ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नहीं !" मैं कहूं।

"तो फिर मनहूस-सी सूरत क्यों बना रक्खी है ?"

"मतलब ?" मैं मुस्करा कर पूछूं।

"चुपचाप बैठे हो न ?"

"मालकौंस गाऊं ?" मैं मुस्कराता ही पूछता हूं पर कोई खिलखिलाती पूछे—"पूरे खानदान में भी किसी ने यह राग गाया था कि तुम्हीं दोपहर दो बजे गाने लगे।" और दो आवाजें अपनी उन्मुक्त चहक से दीवारों को गुंजा दें।

ऐसा नहीं होगा अब। इसीसे तो यह तड़प है। सच मानना, मान-मनौतियों के बिना पैंतीस-छत्तीस का ही मैं बूढ़ा हो गया लगता हूं। कुन्ती, मैं इन्सान हूं न ? इसीसे देवताओं की इस नगरी में—जहाँ चलने वालों के पांव ऊँची-नीची ठोस धरती पर नहीं, वरन् आदर्शों की पवन में ही चलते हैं, जहाँ हाड़-माँस के पुतले के साथ-साथ सुख-दुख की लम्बी लम्बी धूप-छांह छाया नहीं चलती. मैं एकाकी पड़ गया हूं। यहाँ ये पंक्तियाँ—"मेरे प्रियतम तुम आज मुझे घनघोर वर्षा की रात्रि में मिले हो। मन बातों से भरा पड़ा है। कहीं एकान्त न पा सकी थी, इसी से न कह पाई थी, पर आज तो देखा न ! वर्षा की बूंदों की झालरों ने परदा टाँग दिया है। आओ, इस पार बैठ कर दो बातें करलें," भी किसी की पलकें आर्द्र नहीं कर सकती, गिरा नहीं सकती। देवताओं की नगरी है न ? इसीसे मैं कमजोर मानव कभी-कभी पलायन चाहने लगता हूं।

लगता है मानव में अहम् बड़ा प्रबल है। इसी से तुम्हारे कारण मेरे अहम् को बड़ी तृप्ति मिलती थी। उसका पोषण होता था। मैंने भर पेट खाया है या नहीं ? मैं ठीक से सोया हूं कि नहीं ? मैं घर से बाहर क्या क्या मौजें मनाता रहा, जो समय पर नहीं लौटा ? मैं रेडियो पर बज रहे किसी बड़े ही अच्छे गीत को ध्यान से क्यों नहीं सुन रहा ? मैं सर दर्द को छिपा तो नहीं रहा ? क्या किसी से कोई बात हुई है जो मुंह फुलाए बैठा हूं ? आदि आदि अनगिनत प्रश्न अब मुझ से पूछे जाते थे, तो मेरे अहम् को बल मिलता था। तब मैं किसी के लिए सोचने का विषय था और मैं जानता था कि कोई मेरे लिए चिन्तित है।

अब जानती हो, हलचल से दूर अनन्त शान्ति में मैं क्या बन गया हूं ? मुझे लगता है मैं 'मील का पत्थर' बन गया हूँ जिससे हर लम्बी यात्रा वाले को काम तो पड़ता है, पर मोह नहीं होता। उसे छोड़ कर आगे बढ़ने में दोनों ओर के यात्रियों को कभी उदासी का अनुभव नहीं होता। इसीसे मुझे हर 'मील के पत्थर' से सहानुभूति हो गई है। मुझे मेरे जीवन के सुन्दर और महत्वपूर्ण छः साल, दो माह और पाँच दिन वाली तुम जहाँ कहीं भी हो, मुझ 'मील के पत्थर' की इस बात पर विश्वास करना है। अभी जब कभी अपने अहम् को पुष्ट करना जरूरी समझता हूं तो तुम्हें याद कर लेता हूँ। तुमसे अपनी कल्पना में दो बातें कर लेता हूं। अच्छा, तो इस समय विदा।

धर्म और मान्यता

कुछ मान्यतायें ऐसी होती हैं जो धर्म से स्वीकार की जाती हैं और कुछ मान्यतायें ऐसी जो धर्म को रूप देती हैं। दोनों प्रकार की मान्यताओं में सत्य, श्रद्धा, विश्वास. तत्परता और संयम की अनिवार्य आवश्यकता है। सत्य, अहिंसा और सदाचार आदि गुणों के बिना मान्यतायें और धर्म केवल बन्धन हैं जो मनुष्य को जकड़ कर आगे बढ़ने से रोकते हैं।

धर्म और मान्यताओं के बिना मानव जीवन का समुचित विकास नहीं होता। किसी भी देश के बड़े से बड़े महापुरुष ने अपने धर्म और मान्यताओं को किसी भी अवस्था में नहीं छोड़ा है। अपने ज्ञान या अज्ञान से आवेश या अहं के आधीन होकर जो धर्म और मान्यताओं के मार्ग में बुद्धि भेद उत्पन्न करता है उसका कार्य प्रशंसा के योग्य नहीं है और वह अपने यश, मान तथा परम पद को हल्का कर देता है।

धर्म को जो मारता है उसे धर्म मार देता है। धर्म की जो रक्षा करता है उसकी धर्म रक्षा करना है। यह उचित है कि कर्म-कुशल और बुद्धिमान पुरुष धर्म के दम्भ या पाखण्ड को न मानकर उसके सार को व्यवहार में लाते रहें। धर्म और मान्यताओं के सत्य-मार्ग पर चले बिना कोई बड़ा नहीं होता। यह और भी अधिक महानता है कि मनुष्य उस मार्ग पर चलकर महानता की स्थापना करे, पर अपने को तथाकथित धर्मात्मा न माने पाखण्ड से अलग रहे।

बुद्धि और विचारपूर्वक हृदय की पवित्रता और कर्म के सत्य से सांस्कृतिक मान्यताओं और धर्म को धारण करना भारतवर्ष की विशेषता रही है और जब तक रहेगी तब तक वह अमर एवं यशस्वी रहेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा हर्ष ने उसे अपनी राजधानी बनाया था। बौद्ध मठों और देव-मन्दिरों का भारत प्रसिद्ध केन्द्र भी तो उसे ही माना गया था!

आधुनिकता की ओर तेजी से बढ़ते इस युग में जहां आज भी हमारे प्राचीन आदर्शों का परिपालन होता है,

उसी ऐतिहासिक कन्नौज नगरी की एक संक्षिप्त-सी झाँकी यहां प्रस्तुत है।

प्राचीन ऐतिहासिक गढ़ कन्नौज

श्री फौजदारसिंह

आधुनिक कन्नौज की प्राचीनता, विशालता, वैभव एवं गौरवपूर्ण गाथाओं से इतिहास के पृष्ठ भरे पड़े हैं। इस नगर का भाग्याकाश सम्राट हर्षवर्धन के युग में प्रदीप्त हो उठा था। चीनी यात्री ह्वेन सांग ने अपने वर्णन में इसका उल्लेख किया है कि सम्राट ने एक विदेशी यात्री का बड़ा ही आदर सम्मान किया। यह नगर उस समय उत्तरी भारत के नगरों में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता था। यही कारण था कि हर्ष ने इसे अपनी राजधानी बनाया। इसकी समता मौर्य तथा गुप्त युगों में उच्च स्थान प्राप्त पाटलीपुत्र से की जाती थी। नगर की रचना को देख चीनी यात्री अत्यन्त प्रभावित हुआ था। यह स्थान हिन्दू तथा बौद्ध धर्मावलम्बियों का एक प्रधान केन्द्र समझा जाता था। इसका ज्ञान तो यहाँ स्थित मन्दिरों तथा बौद्ध मठों से ही होता है।

उस समय लगभग सौ बौद्ध मठ तथा दो सौ देव मन्दिर यहाँ विद्यमान थे, जिसमें दस हजार से अधिक हीनयान तथा महायान शाखा के भिक्षु निवास करते थे। साधुओं की संख्या भी कई सहस्र थी। नगर की सुरक्षा व्यवस्था पूर्ण थी। स्वच्छ जल के कुंड तथा सुन्दर उपवन भी थे। यहाँ के घर बड़े ही स्वच्छ, सुघर एवं आनन्द प्रद थे। यह परम्परा आज भी विद्यमान है।

वस्तुतः इस नगर को उन्नतिशील बनाने का एक मात्र श्रेय सम्राट हर्षवर्धन को ही है। इस सम्बन्ध में उसने जो सबसे महत्वपूर्ण कार्य किया, वह धर्म-महोत्सव था। इस उत्सव में बीस राज्यों

अपने भारत को जानिये

के राजा तथा सामन्त सम्मिलित हुये थे तथा देश के प्रसिद्ध विद्वान, ब्राह्मण तथा श्रमण उपस्थित थे। इसमें बुद्ध जी की एक पूर्ण स्वर्णकार प्रतिमा स्थापित की गई थी, जो तीन फिट ऊंची थी। एक अलंकृत हाथी पर रख कर उसका जलूस भी निकाला गया था। जलूस समाप्त होने पर हर्ष ने प्रतिमा की पूजा की और एक भोज दिया। उसके पश्चात धार्मिक वाद विवाद प्रारम्भ हुआ। ह्वेनसांग ने महायान सम्प्रदाय के गुणों की पूर्ण समीक्षा की। उपस्थित विद्वानों को चुनौती दी, परन्तु किसी को विरोध का साहस न हुआ। इस प्रकार १८ दिनों तक चीनी यात्री का निर्विरोध भाषण हुआ। ह्वेनसांग को हर्ष ने उपहार देना चाहा, किन्तु उसने स्वीकार नहीं किया।

यह स्थान कलकत्ता से दिल्ली जाने वाले ग्रान्ड ट्रंक रोड पर कानपुर से लगभग ५२ मील पश्चिमोत्तर तथा फर्रूखाबाद जनपद के फतेहगढ़ मुख्यालय से ३३ मील दक्षिण पूर्व में स्थित है। लखनऊ से फर्रूखाबाद जाने वाली पूर्वोत्तर रेलवे लाईन के स्टेशन कन्नौज से तथा समीपस्थ बाजार मकरन्द नगर से मुख्य कन्नौज नगर की दूरी लगभग ३ मील है। यहाँ से नगर तक जाने का मार्ग पक्का है एवं यातायात के साधन भी सुलभ हैं। मुख्य नगर तक जाने का इक्के, ताँगे आदि का किराया केवल १९ नया पैसा है। रेलवे स्टेशन अथवा बाजार से ज्यों ही पर्यटक दल प्रस्थान करने को प्रस्तुत होता है, त्योंही इक्के-ताँगे वालों की मृदु वाणी से कर्ण कुहर गूंज उठते हैं—तुम आओ बाबूजी! हम कन्नौज चल रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम ज्यादा मत देना, केवल तीन आना ही तो दईहौना' आदि।

तांगे पर सवार होते ही २०-२५ मिनट में कन्नौज नगर का मुख्य प्रवेश-द्वार सम्मुख दिखाई देने लगता है। यह द्वार प्रस्तर स्तम्भों से निर्मित है, जिसके ऊपर मोटे अक्षरों में इत्र की विशेषतायें लिखी हैं। मुख्य प्रवेश द्वार से प्रविष्ट होते ही नगर का सुगन्ध पूर्ण वातावरण मन-मस्तिष्क को बलात् अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। सड़कें भी स्वच्छता से पूर्ण हैं। ऐसा लगता है कि प्राचीन आदर्शों का परिपालन आज भी हो रहा है। ग्रीष्म ऋतु में यहां की सड़कें जल पूरित होती हैं, जिससे वायु मण्डल तर हो उठता है। नगर का चौक सायं बिजली के प्रकाश से दीप्त होता रहता है। दुकानें सजी हुई एवं क्रमानुसार पक्ति बद्ध हैं। यहाँ के अधिकाँश भवन प्राचीन ईंटों से ही निर्मित हुए हैं। इनके देखने से नगर की अत्यन्त प्राचीनता का परिचय मिलता है।

—: प्राचीन गढ़ :—

नगर के समीप उत्तर पूर्व की ओर कन्नौज का प्राचीन गढ़ स्थित है। लगभग ३०० फीट लम्बे १०० फीट चौड़े तथा ५० फीट ऊंचे तल पर निर्मित अतीत के गौरव का स्मरण दिखा रहा है। नींव में लगी हुई ईंटें इसके प्राचीन होने का पुष्ट प्रमाण प्रस्तुत कर रही हैं। १९५५ ई० में इस गढ़ की खुदाई का कार्य प्रारम्भ किया गया था। खुदाई में इसके अन्तर्गत अनेक महत्वपूर्ण कलात्मक वस्तुएँ प्राप्त हुई थीं, जिनमें से कुछ उल्लेखनीय मूर्तियाँ भी हैं। इनमें नृत्य मुद्रा में हनुमान की मूर्ति, गणेश जी की मूर्ति नृत्य मुद्रा में सर्पों के साथ, शिव पार्वती के पाणिग्रहण के समय की मूर्तियाँ तथा विष्णु भगवान की अनेक रूपों वाली मूर्तियाँ जिसमें एक पशु रूप में उल्लेखनीय मूर्ति है उपलब्ध हुई हैं।

ये सभी मूर्तियाँ जो खुदाई में प्राप्त हुई हैं एक कमरे में सुरक्षित रखी हुई हैं। उत्खनन के अवसर पर उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री कन्हैयालाल माणिक लाल मुंशी स्वयं पधारे थे एवं खुदाई कार्य का निरीक्षण भी किया था। किले के अन्तर्गत प्राचीन भवनों के भी उदाहरण खुदाई में उपलब्ध हुये हैं जिसकी नींव में प्राचीन ढंग की छोटी-छोटी ईंटें लगी हुई हैं। इससे ही किले की प्राचीनता एवं विशालता का अनुभव होता है। ये भवन लगभग सैकड़ों फीट की गहराई में विद्यमान हैं। इसके ऊपर सुरक्षा की दृष्टि से टीन के छप्पर लगा दिये गये हैं जो आज भी सुरक्षित हैं।

गौरी शंकर का मन्दिर

यह मन्दिर भी प्राचीन गढ़ के समीप ही स्थित है। इसमें शिव और पार्वती जी की मूर्तियां विद्यमान हैं। इनके अवलोकन से उस समय की जन-भावनाओं का पता चलता है। साथ ही यह भी ज्ञात होता है कि प्राचीन युग में लोग अपने इष्टदेव के प्रति कितनी श्रद्धा और भक्ति रखते थे। प्रचीन काल में कन्नौज नगर गंगा नदी के तट पर ही स्थित था, किन्तु अब पुण्य सलिला भगवती भागीरथी ने अपना मार्ग परिवर्तित कर लिया है। अब वर्तमान नगर से गंगा की दूरी दो-तीन मील हो गई है। यहाँ के सम्बन्ध में एक किंवदन्ती प्रचलित है कि यदि गंगा में पानी बढ़ाव से जब यहाँ के गौरी शंकर की मूर्ति डूबेगी तो आधी काशी डूब जाएगी। जो हो, अभी तक ऐसी स्थिति नहीं आ पाई है।

क्षेमा देवी का मन्दिर

कहा जाता है कि यह जयचन्द्र की कुलदेवी हैं। इनका मन्दिर धरातल से लगभग ४० फीट ऊंचे टीले पर स्थित है और मन्दिर के ऊपरी भाग पर नीम के एक विशाल वृक्ष की छाया है। यहां यह भी कथा प्रचलित है कि जब संयोगिता अपने इष्ट देवी की पूजा के लिये आई थी तो यहीं से पृथ्वीराज ने उसे उड़ा लिया था और विवाह किया था, किन्तु ऐतिहासिक तथ्यों के दृष्टिगत करने से विरोधाभास भी प्रतीत होता ऐतिहासिक प्रमाणों से ऐसा पता है कि स्वयंवर के समय स्वयं संयो ने पृथ्वीराज की स्वर्ण मूर्ति को जो के वाह्य भाग में निर्मित थी जो डाला था और पृथ्वीराज जो वहीं थे संयोगिता को घोड़े पर लेकर गये थे। जो भी हो, इतनी सत्यता मात्रा विद्यमान है कि पृथ्वीराज अपहरण के पश्चात ही संयोगिता के विवाह किया था।

प्राचीन मस्जिद

प्राचीन गढ़ के पार्श्व भाग में विशाल मस्जिद है जो ५० फीट टीले पर निर्मित है। नीचे से ऊपर के लिए सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। में लगे हुए प्रस्तर खंड अत्यन्त मजबूत हैं। इसके देखने से ही यह होता है कि उस युग के लोग निर्माण की मात्रा में कितने कुशल वैसे देखने में मस्जिद निर्माण की हिन्दू शैली की प्रतीत होती है। का ऊपरी भाग गुम्बदाकार है एवं प्रवेश द्वार तथा भीतरी भागों में लिपि में प्रशस्ति वाक्य लिखे गये हैं।

राजगिरि

यह स्थान कन्नौज से तीन दक्षिण पूर्व की ओर स्थित है। यहां चन्द्र के किले के भग्नावशेष अब भी में राजपूत राज्य की समाप्ति का दिला रहे हैं।

इत्र का कारखाना

वर्तमान समय में भी कन्नौज इत्र के लिए विश्व में प्रसिद्ध हो चुका यहां की भूमि बड़ी ही उर्वरा है पैमाने पर गुलाब की कृषि होती गुलाब के फूलों से ही इत्र निर्माण कार्य होता है इसके लिए यहाँ कई बड़े कारखाने हैं। कन्नौज अपने इत्र व्यवसाय के लिये सर्व प्रसिद्ध नगर है यही कारण है कि कन्नौज नगर की वीथियां सड़कें सुगन्धि पूर्ण हैं। कोई भी वहाँ एक बार जाकर हृदय पटल प्राचीनता की अमिट छाप लेकर लौटता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[पृष्ठ १७२ का शेष]

आकर बेंचपर बैठ गये दो सज्जनों में से एक ने कहा, 'मगर दिल से सबका काम नहीं करते हैं।'

इन दो सज्जनों में से एक सज्जन खादी का कुर्ता पहने हुये थे और मास्टर प्रतीत होते थे और दूसरे सज्जन गृहस्थ टाइप के थे। उक्त बात गृहस्थ से लगने वाले महाशय ने कही थी। मास्टर जी बोले—

'जरूर, काम करने में बहुत ढीले हैं! देखिये न, मुझे ही आज बुलाया था। मेरा तबादला गांव पर से चार-पांच मील दूर हो गया है। चौथे दिन आया था कि रोकवा दीजिये।'' पर अब कहां खोजूं! चलूं शायद जिला परिषद में ही हों।'

'अजी जनाब, मैं तो वहीं से आ रहा हूं। वहां नहीं हैं।'

मौलवी साहब ने कहा और फिर मेरी ओर देखकर पूछा—'कुछ आपको मालूम है?'

जब मैंने बता दिया कि मैं तो वर्षा से रक्षा के लिए यहां रुक गया हूं तो सब लोग बरसते पानी में चल पड़े। कुछ दूर जाकर गृहस्थ टाइप के सज्जन लौट आये और बोले—

'मेरी, हाजिरी हो जाय।'

और ब्लेक बोर्ड के ऊपर से चाक उठा कर पुराने ढंग की लिखावट में लिखा कि 'रामदरस आये थे' फिर स्वयं मुझसे बोले—समझिये कि एक लड़का है हाई स्कूल फेल। चाहता हूं कि कहीं मास्टरी भी लग जाये तो वह किसी प्रकार खाने पीने का निकसार कर ले। यह बड़ा भारी नेता है। कलक्टर के साथ बैठता है। चाहेगा तो काम चुटकी बजाकर हो जायगा।'

'मगर अब तो मास्टरी भी योग्यता मुसार मिलती है?' मैंने कहा।

'''तो अब वोट भी योग्यतानुसार दिया जायगा। खिलवाड़ नहीं है। बत्तीस गांव का सरदार हूं...।' कहते हुए सरदार महाशय चले गये।

मैंने मन में सोचा कि नेतागिरी भी बुरी बला है और ब्लेक बोर्ड की ओर बढ़ कर उस पर लिखावटों की नुमायश देखने लगा। कहीं केवल हस्ताक्षर हैं। कहीं नमस्ते है। कहीं कुछ आदेश है। एक सज्जन लिखते हैं, 'सदर हास्पीटल जा रहा हूं। साली जी आयी हैं। पेट खराब हो गया। तुरन्त चले आइये। बड़े डाक्टर से कह कर जल्दी काम करा दीजिये।' उसके नीचे लिखा है, 'आप मिले नहीं। मेरा काम नहीं हुआ, तो फाँसी लगा लूंगा।' एक सज्जन ने नाम, पता तो नहीं, पर एक रहस्यमय वाक्य लिख छोड़ा है—'सच है कि किसी नेता के साथ रात भर रही तो सुबह उठते ही देख लो कि धड़पर गरदन है या नहीं।' इसके नीचे संक्षेप में लिखा है, ३० बोरी''और''अनिवार्य—पी०' मैंने समझा यह सीमेंट का मामला है। उसी समय याद आया कि दो बोरी सीमेंट के बिना ही मेरा एक जबरदस्त काम रुका हुआ है। अनेक प्रयत्न करने के बाद भी ब्लाक से मेरी अर्जी खारिज हो गयी।

मुझे क्या मालूम कि बिना नेता के कोई काम नहीं होता, लेकिन यहां कठिनाई थी कि आचार्य जी से मेरा कोई परिचय नहीं था।

पानी अभी बरस ही रहा था। मैं मन ही मन परिचय का नक्शा बना रहा था कि एक कार आकर रुकी। मैं खम्भे के पास दौड़ गया।

'आचार्य जी हैं?' एक टोपीवाले सज्जन ने पूछा।

'नहीं बाहर गये हैं।' मैंने उत्तर दिया।

'कबके गये हैं?'

'मुझे ज्ञात नहीं।'

'कबतक आयेंगे?'

'मुझे ज्ञात नहीं!'

'आप कबसे यहां हैं?'

'जब से पानी बरस रहा है।'

'इस बीच कहीं से उनके बारे में कुछ पता लगा।'

'नहीं'

'आप कौन हैं?'

'एक मुसाफिर'

'यानी आप आचार्य जी के बारे में कोई इन्फार्मेशन नहीं रखते हैं।'

'जी।'

कार आगे बढ़ गयी तो झोला कन्धे में लटकाये एक सज्जन दाखिल हुए और ऊपर की वार्ता से भी विस्तृत प्रश्नोत्तर हुए। ये भी गये। कीमती बरसाती में हड़पड़ करते एक अफसर टाइप सज्जन आये। वही हाल फिर हुआ और एक दो तीन चार बार फिर इसी प्रकार आदमियों की पूछताछ का सामना करना पड़ा तो मैं घबरा उठा। मालूम हुआ कि बकबक करते जान निकल जाएगी। उधर पानी थमता नहीं था। ओफ, पानी बरसते में यह हाल है तो साधारण समय में क्या हाल होगा। मैंने कुछ जोर से कहा, यह नेता कैसे जीता है।' और ठीक उसी समय एक भड़कीली पोशाक में चश्मा टोपी वाले सज्जन ने प्रवेश किया। मेरा खून सूख गया। कहीं ये ही आचार्य जी न हों, परन्तु आगन्तुक ने नमस्ते के साथ जब आते ही पूछा, आचार्य जी हैं।' तो जान में जान आयी। अब कम बकझक करने के लिये मैंने एक युक्ति निकाली—

'नहीं, कलक्टर साहब के यहां सुबह के ही गये हैं।'

'कब तक आयेंगे।'

'ठीक साढ़े चार बजे।' मैंने उत्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया और एक रोब छा गया।

उसी व्यक्ति को चुप देखकर मैंने ही पूछा—कहिए कहाँ से आना हुआ और क्या काम है ?

'आप भी क्या किसी काम से बैठे हैं ?' उन्होंने उत्तर देने की जगह पूछा।

'हाँ, सीमेंट के लिए सप्लाई अफसर को चिट्ठी लिखानी है।' मैंने कहा।

'तो, हम आप हमराही हैं। साहब, मत पूछिये कि क्या काम है। गत वर्ष परीक्षा के सिलसिले में छुरेबाजी की एक घटना हो गई और मेरे खास चाचा का लड़का फंस गया। तीन वर्ष से फेल होता था। गत वर्ष पास हो गया होता, पर यह आफत आ गई। अब केस सेशन सुपुर्द है। रोज आचार्य जी के यहाँ आता हूँ कि जज साहब से चलकर कह दें। रोज टाल देते हैं। कहते हैं कि आज यह काम है, वह काम है। पूरा चार सौ बीस आदमी है। वोट के समय तो पानी की तरह बोलता है, पर मतलब निकल जाने पर बात भी नहीं करता। अब की बार हारेगा। हम लोगों को तो घृणा हो गयी है, पर क्या करें ? मतलब आने पर गदहे को भी बाप कहना पड़ता है।'

इसी समय एक बड़ी पगड़ी, लम्बे तिलक और चौड़े किनारे की धोती पहने पंडित जी ने प्रवेश किया। बोले—

'कहिए, आचार्य जी उपस्थित नहीं हैं क्या ?'

'कलक्टर साहब के यहाँ गये हैं।' मेरे साथ वाले सज्जन बोले।

'जब आऊं', कलक्टर साहब के यहाँ गये हैं, डिप्टी साहब के यहां दावत है, फलां जगह मीटिंग है···नेता की पूंछ बने है···।'

पंडित जी बिगड़ उठे और उसी ताव में जेब से एक रद्दी कागज निकाल कर सारा ब्लेक बोर्ड साफ कर लिखने लगे—

'महाशय,

आप तो गूलर के फूल हो गये, पर कुछ ख्याल है ? मेरा सब सामान वादे के मुताबिक मिल जाना चाहिए, नहीं तो आप जानें आपका काम जाने। अब से फिर नहीं आऊंगा।

रा० ना० तिवारी'

बहुत पुचकार के बाद ब्रह्मकोप शांत हुआ तो तिवारी जी ने बताया कि आचार्य जी के कहने पर ही उन्होंने अपने लड़के की शादी एक जगह की थी। पाँच हजार का तिलक छोड़ कर स्वराजी ढङ्ग से किया, पर एक भी वादा पूरा नहीं हुआ।

'नेता और वादा ?' मेरे साथ के सज्जन ने व्यंग किया।

'तो हम कोरे पंडित ही नहीं हैं। तमाम नेता गिरी निकाल देंगे !'

पंडित जी पैर पटकते और जोश में कुछ तेजी से छाता खोलकर चले गये। मेरे साथ के सज्जन ने बताया कि पंडित जी के बिगड़ने का कारण शादी के अतिरिक्त एक और भी है। पंडित जी का दामाद इण्टरव्यू में छँट गया जब कि आचार्य जी ने कहा था कि लखनऊ में करा देंगे।

पानी अब कुछ रुक गया था। देर काफी देर हो गई थी, पर प्रसन्नता थी कि यह दुर्लभ नाटक देखने को मिला। साथ ही वह सीमेंट वाला काम भी मन में बुद कर रहा था। मेरे साथ के महाशय घबराकर चले गये। मैं अब जा सकता था, परन्तु स्थान का प्रभाव मेरे ऊपर हो गया था। हटते नहीं बनता था। इच्छा होती थी बिना काम के भी यहां आकर हाजिरी बजाता रहूँ। लगभग दस मिनट तक मैं विविध-विचारों में खोया रहा। इतने में खड़क···खड़क झन्न् शब्द हुआ। मैं चौंक कर खड़ा हो गया। सिकड़ी ताले के नीचे लटक रही थी और दोनों किवाड़ खुल गये ! लुंगी बांधे एक भव्य मूर्ति मुस्करा रही थी और मैंने निश्चित रूप से समझ लिया कि और कोई नहीं स्वयं आचार्य जी हैं—

'तो आप भीतर ही हैं ? प्रणाम।

'जरा एक फाइल रही। बहुत दिनों पर उठाया—सोचा देख डालूं।' और ताला खोल कर सिकड़ी पुनः किवाड़ में लगाते हुए उन्होंने कहा—'आपको क्या चाहिए ? जाइये, परसों १० बजे आइयेगा।'

उस दिन को खोया हुआ गिन, जिस दिन अस्ताचल को जाता हुआ सूर्य तेरे हाथ से कोई अच्छा काम किया गया न देखे।

—स्टेनफोर्ड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

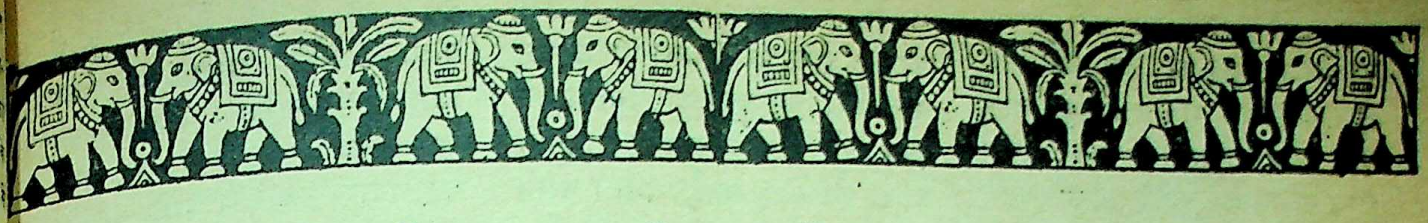

काले पानी की कहानी

श्री उपेन्द्रनाथ वन्द्योपाध्याय, सम्पादक 'युगान्तर'

(गतांक से आगे)

जेल के हुक्कामों ने भी भयानक शक्ल बनाई। जेलखाने भर में सत्याग्रह एक आनन्दोत्सव था। सजा की पहली किश्त में चार दिन सिर्फ चावल का पानी खाने को दिया गया और सात दिन डंडा बेड़ी डाली गई। जेल के कायदे के मुताबिक चार दिन से ज्यादा किसी को यह खाने को नहीं दिया जाता, पर अफसरों ने हममें से नन्दगोपाल, होतीलाल और उल्लासकरदत्त को तेरह दिन गंजी ही खिलाई। सन् १९१३ में जब सर रेजिनाल्ड क्रेरर कालापानी देखने गये, तब नन्दगोपाल ने उनसे यह शिकायत की थी, पर जेल के अफसरों ने सजा देकर रजिस्टर में लिखी ही नहीं थी। जेलर ने साफ कह दिया कि इसे यह सजा नहीं दी गई। इस लिए नतीजा कुछ नहीं। जेलर के खिलाफ कैदी की शिकायत नहीं सुनी जाती।

सजा के बाद सजाओं का नम्बर शुरू हुआ। तरह तरह की बेड़ियां पहनाकर हमें अलग अलग कोठरियों में बन्द किया गया। इसमें भी एक बात थी। मामूली कैदी जब कोठरी में बन्द किये जाते हैं तब वे खाने पीने के लिये नीचे आते हैं—दूसरे कैदियों से बातें भी कर लेते हैं, पर हमारे लिये हुक्म हुआ कि जो कोई हमसे बातें करेगा वही सजा पायेगा। इसलिये इसे मूक-कारावास कहना चाहिए। हममें से कई तो तीन महीने से भी अधिक इन कोठरियों में रहे।

कइयों की तन्दुरुस्ती खराब होने लगी। एक तो कालेपानी में वैसे ही मलेरिया बना ही रहता है-बुखार खांसी और उस पर प्लीहा शुरू हुई। शायद जेल के विधाताओं ने भी हमारी हालत की तबदीली करना जरूरी समझा। इसलिये हममें से कुछ को चुनकर कारोनेशन उत्सव के काम के लिए जेलखाने से बाहर सैटलमैण्ट पर भेजा। बारीन्द्र कुमार तो गये मिस्तरी के पास गारा सानने, उल्लासकर गया ईंट बनाने—कोई भेजा गया लकड़ी काटने और कोई रिक्सा गाड़ी खींचने, पर यहां तो उल्टी गंगा थी। जेल से ज्यादा आफत हुई बाहर। जेल का काम चाहे जितना सख्त था, लेकिन एक तो खाने को पूरा मिलता था दूसरे बरसात औरधूप से बचे थे, पर बाहर जाकर वह कुछ न था। सवेरे ६ से १० तक और शाम को १ से ४॥ तक कड़ी मेहनत करनी पड़ती थी। चाहे बरसात हो या धूप उसके सिवा इस टापू में जोंक बहुत हैं—वे लिपट कर खून चूसने लगती हैं। जेलखाने से बाहर काम करते हुए कितने आदमियों ने घबराकर भागने की कोशिश की—इसका कोई ठिकाना नहीं।

इस पर आफत यह कि पूरा खाने को नहीं मिलता। कैदियों की खुराक चोरी होकर बाजार-बाजार और गांव—गांव बिकती है। मामूली कैदी से लगाकर यूरोपियन अफसर तक इस चोरी को अच्छी तरह जानते हैं।

जेल से बाहर बीमारों के चार अस्पताल हैं, पर उनके असिस्टेण्ट सर्जन बंगाली हैं। इसलिए किसी भी राजनीतिक कैदी को उनमें भेजने की मनाही थी। बीमार होने पर हमें वापस जेल में आना पड़ता था। चढ़े बुखार में अपना सामान सिर पर रखे दस मील बेड़ी पहने आना, कितना कठिन है, इसे बिना भोगे कोई नहीं समझ सकता। फिर जेल में जाकर ही कौन-सा इलाज हो जाता है। दिन रात के २४ घण्टे इस कोठड़ी में पड़े रहो और छोटी कोठड़ी के कोने में रखे हुए एक गमले में पाखाना पेशाब करा करो।

सोचा था कि जेल से बाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकलने में सुख होगा, पर जिसकी तकदीर में सुख का लेश नहीं, उसे सुख नहीं मिल सकता। खूनी डाकू और लुटेरे कालेपानी में आकर हलका काम पा सकते हैं—कोई लिखने पढ़ने पर, कोई पहरे पर, कोई दूसरों से काम लेने पर मुकर्रर हो सकता है, पर हम थे राजनीतिक कैदी। बाहर से हारकर हम सब एक एक करके वापस जेल में लौट आए।

इस समय एक दुख की घटना हो गई। इन्दु भूषण ने आत्म-हत्या कर ली। उसका मजबूत शरीर कठोर काम में कभी नहीं घबराया, पर वह बेइज्जती और गालियों से पागल हो जाता था। वह कहा करता था कि—जिन्दगी इस तरह बिताना मेरे लिए असम्भव है। एक दिन रात को अपना कुरता फाड़ कर उसने रस्सी बनाई और खूंटी से बाँधकर गले में फन्दा डाल लिया। जेल सुपरिण्टेण्डेण्ट सुबह आठ बजे आए। उस दिन जेलर के साथ जो पहरे वाले भीतर घुसे थे उनका कहना था कि लाश के गले में एक लिखा हुआ कागज का टुकड़ा भी लटक रहा था पर बाद में उस कागज का कहीं भी पता न लगा। बाद में जेलर से दरयाफ्त किया था, लेकिन उन्होंने साफ ना ही कर दी। इन्दुभूषण के भाई ने हिन्दुस्तान में उसकी मौत की जांच के लिए सरकार से कहा। अण्डमन के कमिश्नर उस जाँच के लिए मुकर्रर हुए और उन्होंने उस मामले को मटियामेट कर दिया।

इस वक्त जितने कैदी बाहर गये थे, वे काम की और बीमारी की वजह से वापिस आने लगे। उल्लासकरदत्त भी आया। उसे धूप में बैठ कर ईंट बनाने का काम दिया गया था। वहां के अस्पताल के जूनियर मैडिकल आफिसर ने कहा था कि उल्लासकर से धूप में बैठकर काम न होगा, पर बंगाली डाक्टर की बात गोरा ओवरसियर क्यों मानने लगा। १३ मास उल्लासकर से धूप में बैठकर ईंटें ही बनवाई गयी। उसने काम से इन्कार कर दिया, इसलिए वापस जेल में आया। यहां वह सात दिन डंडा बेड़ी डालकर खड़ा रखा गया, पर सात दिन क्यों, पहले ही दिन वह बुखार में बेहोश हो गया और अस्पताल भेजा गया। रात को उसका बुखार १०६ डिगरी तक बढ़ गया। सबेरे बुखार उतरा, पर फिर वह उल्लासकर न था। कड़ी से कड़ी तकलीफों में जिसके मुंह से उफ न निकली, वह उल्लासकर पागल होगया।

जेलखाने की सच्ची तस्वीर, हमारी आंखों के सामने नाचने लगी। जिन्दा रहकर वापिस जन्मभूमि लौटने की इच्छाओं पर पानी फिर गया। कोई फांसी पर लटक कर मरेगा तो कोई पागल होकर मरेगा। जब आखिर मौत है तब इतना दुख ही क्यों? सबने मिल कर निश्चय किया कि जब तक हमारे काम काज की सहूलियत न हो, तब तक कोई काम न करेगा। इधर से हमने अल्टीमेटम दिया, उधर से हुक्कामों ने भी हम पर अपना वार करना शुरू किया।

खाली लड़ाई शुरू हो गयी। इससे कुछ पहले ही बंगाल के एक राजनीतिक मुकद्दमे में ननिगोपाल तथा तीन चार और आदमी जेल में दाखिल हुए। ननिगोपाल लड़का ही था, पर उसे कोल्हू चलाने का सबसे बड़ा काम दिया गया। वह भी सत्याग्रह में शामिल हो गया। हम सब सत्याग्रही कैदियों को एक न्यारे ब्लाक में बन्द करके चुन-चुन कर पठान पहरेवाले हम पर मुकर्रिर किये गये। खाना हमें बहुत ही कम मिलने लगा और इस बात पर कड़ी नजर रखी जाने लगी कि हम आपस में बोला न करें। पाखाने में जाकर किसी से बात न करें। इसलिए सामने पहरे वाला खड़ा रहता, पर बार-बार ज्यादा कड़ाई से बन्धन भी टूट जाता है और कायदे कानून पर किसी तरह की भक्ति नहीं रहती। डर दिखाकर कानून बनवाने की कोशिश तो कानून की मजाक है।

हमने तीन चीजें चाहीं—अच्छा खाने पहिनने को, काम की कमी और आपस से मिलने की सहुलियत। बीच-बीच में चार-चार पाँच-पाँच कोठरियां छोड़कर हम सब कैद किये गये। इसलिये पहले धीरे-धीरे बातें करते थे। अब जोर जोर से बोलते, चिल्ला चिल्लाकर बातें करते। हम हथकड़ियों से झुलाये गये थे, लेकिन मुंह तो खुला था। इसी तरह हमारा सत्याग्रह चला। इसी वक्त हमारा पुराना सुपरिन्टेन्डेन्ट तबदील होकर आ गया। उसकी सलाह से चीफ कमिश्नर ने हममें से कुछ को हल्का काम देने का नियम बनाया।

करीब दस बारह आदमियों को नारियल के पेड़ों के पहरे वाले बना कर भेजा। नारियल के पेड़ सरकारी चीज हैं, वे चोरी में जायें, यह देखना ही पहरे वाले का काम था। काम बहुत ही हल्का था, पर सबको रखा गया दूर-दूर, ताकि एक दूसरे से मिल न सकें।

जेलखाने के भीतर सत्याग्रह वैसे ही चलने लगा। नन्दगोपाल और ननिगोपाल को एक दूसरी तरफ की जेल में तब्दील किया गया। तब वहाँ जाकर ननिगोपाल ने खाना पीना छोड़ दिया। सबको हलका काम देने का जो वादा था, वह पूरा न किया गया। इसलिए जिनको बाहर भेजा गया था, उन्होंने भी सत्याग्रह फिर शुरू कर दिया। महीने भर के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाद जब वापस जेल में आये तब देखा कि सत्याग्रह बहुत कुछ टूट गया है। नाउम्मेद होकर बहुतों ने फिर काम शुरू कर दिया है। चार दिन खाना पीना छोड़ने के बाद ननिगोपाल को वापस जेल में ले आये। सत्याग्रह के हामी यही ननिगोपाल, बारीन्द्र कुमार बने रहे। सजा पर सजा खाते-खाते एक के बाद एक-अन्त में सबने सत्याग्रह छोड़ दिया, पर अकेला ननिगोपाल डटा रहा।

दिन बीतने लगे-बिना खाये पीये ननिगोपाल सूखकर कांटा हो गया। जब उसे ४ दिन बिना खाये पीये बीत गये थे, तब भी हथकड़ी कसकर उसे कड़ी से लटका रखा था। उसकी आत्मा ने इस बार फिर कोई खास रुह फूंकी और बहुत से कैदी खाना पीना छोड़ बैठे। हुक्कामों के लाख छिपाने पर भी इन्दुभूषण की हत्या, उल्लासकर का पागल होना और ननिगोपाल का भूखा रहना हिन्दुस्तान के अखबारों में छपा। अखबारों के लिखने की वजह से गवर्नमेंट ने डाक्टर्यूकिस को जाँच करने के लिये भेजा। त्यूकिस साहब ने क्या जाँच की, सो वे ही जानें, पर उल्लासकर को काले पानी से मद्रास के पागलखाने में भेजा गया। ननिगोपाल को भी समझा बुझाकर खाना खिलाया गया। सत्याग्रह का पहला अध्याय यहीं खत्म होता है।

कुछ दिन बाद हम लोगों को फिर जेल से बाहर काम पर भेज दिया गया। किसी तरह से दिन गुजरने लगे, पर थोड़े ही दिन बाद सुना कि जेलखाने में गड़बड़ हो रही है। तंग होकर ननिगोपाल फिर सत्याग्रह कर बैठा। उसका जांघिया जबरदस्ती उतार कर नारियल का जांघिया पहनने के लिए दिया गया था, पर उसे फेंककर वह नंगा ही बैठ गया। और बोला—

"मां के पेट से हम नंगे ही आये हैं और नंगे ही वापस जायेंगे।" यह मन्त्र वह जपने लगा और पूरा सत्याग्रह शुरू कर दिया।

लड़का कहीं पागल तो नहीं, यह फिक्र सबको हुआ, पर मालूम हुआ कि पागल नहीं हुआ। उसके सामने यही सवाल था कि जिस कानून और अदालत को अंग्रेजों ने अपनी मर्जी से बना लिया है, उसे वह क्यों माने-जिस बात में उसकी राय नहीं उसे वह न मानेगा। जिस काम के करने को आत्मा गवाही नहीं देती, उस काम को सिर्फ जान बचाने के लिए ही वह क्यों करे। जान बचाने में जहाँ आफत है, वहां जान की कीमत ही क्या है। भगवान ने जिसके दिल पर आजादी की मुहर लगा दी है—कड़ी से कड़ी तकलीफ और बड़े से बड़ा हुक्म भी जिसे पराधीन नहीं कर सकता-वह जीव कितना अमूल्य है, इसे भुक्तभोगी ही समझ सकते हैं।

इधर हमारी हालत भी गिरी। हिन्दुस्तानी और खासकर बंगाली अखबारों में कालेपानी के कैदियों की चर्चा चली। सब हुक्कामों ने मन में निश्चय कर लिया कि अखबारों के पास हम सब यह चिट्ठियाँ भेज कर छपवा रहे हैं। बस हम पर जाल बनाने शुरू किये गये। एक दिन सवेरे ही चारों तरफ से घेर कर पुलिस तलाशी लेने लगी। एक आधी चिट्ठी और एक दो किताब के अलावा हमारे पास कुछ न मिला, पर हम जेल में भेजे गये। तरह तरह की अफवाहें क्या उड़ रही हैं, उन्होंने भले आदमी की तरह कहा—मैं कुछ नहीं जानता, इण्डिया गवर्नमेंट का जैसा हुक्म मिला वैसा किया।

खैर, इसका हमारे पास जवाब ही क्या था, पर कुछ दिन बाद मालूम हुआ कि हम लोगों से बातचीत करने के अपराध में बाहर के कई आदमियों को सजायें हुई हैं। पुलिस ने न मालूम कहाँ से एक गवाह पैदा कर लिया, जिसने ग्रामोफोन की सुइयाँ और लोहे के टुकड़े इकट्ठे कर के साबित कर दिया कि हम लोग बम बनाने की कोशिश कर रहे थे। नारायणगढ़ में बम से लाट साहब की ट्रेन उड़ाने की कोशिश में पुलिस ने अदालत से जब कई आदमियों को सजा दिलाई थी, तभी से हम पुलिस की महिमा अच्छी तरह जानते थे। इसीलिए हुक्कामों से कहा कि अगर हमारे खिलाफ कोई एतराज है तो उसकी गुपचुपी तसखीश न करके खुली अदालत में मुकदमा क्यों नहीं चलाते? पर इसका हमें कुछ भी जवाब न मिला।

कुछ महीने बाद सर रेजिनाल्ड क्रेडक साहब कालेपानी की सैर

सींखचे बोल उठे

करने आये। हमने सोचा कि इनसे अपनी सब बातें कहेंगे-जरूर कुछ न कुछ किनारा होगा ही। उनसे बातें शुरू करते न करते, चीफ कमिश्नर ने कहा-जब तुम्हें जेल से बाहर काम पर भेजा गया था-तब तुम राजद्रोह की सलाहें कर रहे थे।

हमने कहा-अगर आपको यही ख्याल था तो जब आपसे कहा था, उस वक्त भले आदमी की तरह 'मालूम' नहीं क्यों कह दिया था? इस पर भी अगर आपको हमारे खिलाफ सुबूत मिले हैं तो खुली अदालत में केस क्यों नहीं चलाते? सर रेजिनाल्ड ने मुसकराते हुए कहा-क्या समझते हैं, ऐसी बातें खुली कचहरियों में साबित नहीं हुआ करतीं।

ननिगोपाल ने अपनी तमाम कहानी कही। सर रेजिनाल्ड ने थोड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में जवाब दिया-तुम सरकार के दुश्मन हो। तुम्हें जान से मार देना ही अच्छा था।

ननिगोपाल बोला-अगर इसे ही आप अच्छा समझते हैं, तो कायदे कानून और अदालतों का झूठा बाग लगाने की क्या जरूरत थी? मुसलमान बादशाहों की जबान ही कानून था, वैसे ही आपके राज में भी है, पर वे सीधी तरह करते थे और आप लोग कायदे कानून की टट्टी की ओट में शिकार खेल रहे हैं।

बात यहीं खत्म हो गई, पर जो जुल्म गुजर रहे थे उनका क्या करें? दुनिया में अनाथों का जो नाथ है, बिना उसके देखे कोई काम नहीं होता। मालूम होता है इस बार उस दीनानाथ का भी सिंहासन हिल उठा था।

जियादती के मारे, एका करके सबने फिर काम छोड़ दिया। सत्याग्रह शुरू हुआ। सजा देते देते जब जेल के हुक्काम थक गये, तब उन लोगों को मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया, जिनकी सजायें तमाम उम्र की न थीं। यह काम डिप्टी कमिश्नर लूइस साहब पर पड़ा। अदालत से एक दिन पहले वे सत्याग्रह की वजह मालूम करने जेल में आये।

हम लोगों पर जैसी-जैसी ज्यादतियाँ की गयी थीं, उन सबको सुनकर उन्होंने कहा कि आप लोगों के मामले में पोर्टब्लेयर के किसी हुक्काम का हाथ नहीं है, इण्डिया गवर्नमेण्ट का हुक्म है कि आप लोगों के साथ मामूली कैदी से कुछ भी अच्छा सुलूक न किया जाये।

लेकिन मामूली कैदी को जितनी सहूलियत है, उतनी भी हमें नहीं। अगर मामूली कैदी लिखना पढ़ना जानता हो, तो उस जेल के दफ्तर में कोई अच्छा काम मिल जाता है—अगर वे पढ़ना लिखना न जानते हों, तब कैदियों पर छोटे अफसर बना दिये जाते हैं। इन सब कामों के लायक होने पर हमें कोल्हू के बैल की जगह जोतकर तेल निकालना ही अच्छा समझा गया। दूसरे कैदियों को पांच साल जेल में रहने के बाद जेल से बाहर काम मिलता है और बारह आने महीना जेब खर्च दिया जाता है, पर हमारे लिये तमाम उम्र भर जेल में रहने की व्यवस्था थी। यद्यपि जो कुछ हमने कहा, उसका जवाब लूइस साहब ने यह दिया कि-"इण्डिया गवर्नमेण्ट के हुक्म के मुताबिक हो रहा है, इसमें हम अपनी तरफ से कुछ नहीं करते।"

हम में से एक ने कहा—"साहब, तमाम बुरा करने का इख्तियार आप को और इन्डिया गवर्नमेंट को है, पर कुछ भला करने का क्या जरा भी इख्तियार नहीं है?"

साहब ने हंस कर कहा—"मैं क्या करूं, आखिर जेल का अदब रखना ही पड़ेगा।"

एक ने कहा—"तो मतलब यह है कि इंसाफ हो चाहे गैर इंसाफ, आप को तो जेल का अदब रखना है।"

साहब ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। बात वे पहले से ही अच्छी तरह जानते थे, पर वे भी तो गवर्नमेण्ट के नौकर ही थे। इसलिये किसी की एक महीना, किसी की दो महीना और किसी की छः महीना सजा बढ़ाकर चले गये। आगे चलकर एक दफे और यही लूइस साहब हमसे मिले थे-उस वक्त उन्होंने उल्लासकर दत्त के लिये कहा था-उल्लासकर के समान उच्च हृदय लड़के बहुत कम देखने में आये, पर यह सबसे ज्यादा भावुक है। जिस उल्लासकर के लिये साहब के यह ख्याल थे, उसी को अपनी नौकरी बनाई रखने के लिये सजा भी दी।

आहन कानून के अदब को बनाये रखने के लिए सजा दी जाती है-लेकिन आखिर सजा ही सरकार का मकसद हो गया। हम लोगों की देखादेखी मामूली कैदियों में भी सत्याग्रह शुरू हो गया। जेल के काम काज में फर्क आने लगा, अफसरों ने देखा कि कुछ न कुछ करना चाहिए।

एक दिन एकाएक हम राजनीतिक कैदियों में से सात आठ मियादी कैदियों को हिन्दुस्तान की जेल में भेज दिया और जो जेलर बिना गाली के बात नहीं करता था वह भले आदमी की तरह आकर सत्याग्रह छोड़ने के लिये कह कर बोला—मियादी कैदी हिन्दुस्तान की जेलों में भेज दिये जायेंगे और जो कालेपानी में रहेंगे उनके साथ अच्छा बर्ताव किया जायेगा।

हमने कहा—"तथास्तु, पर अगर दो महीने में भी आपके काम में कोई विशेषता न दिखाई दी, तो फिर मजबूरन हमें खुद व्यवस्था करनी पड़ेगी।

इस तरह दोनों तरफ से सुलहनामे पर दस्तखत होकर काम शुरू हुआ। सत्याग्रह का दूसरा अध्याय यहीं समाप्त होता है।

थोड़े दिन बाद अलीपुर के बारीन्द्र, हेमचन्द और नासिक के सावरकर भाई और जोशी को छोड़ कर बाकी राजनीतिक कैदियों को हिन्दुस्तान की जेलों में भेज दिया गया और सत्याग्रह कुछ दिन के लिये शान्त हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत, रूस और अमरीका

बजट अधिवेशन के अंतिम दिन हमारे प्रधान मंत्री ने संसद में वक्तव्य दिया था कि सोवियत रूस और भारत के बीच जो मित्रतापूर्ण संबंध रहा है उसे और भी मजबूत करने की आशा लेकरवे रूस के लिए प्रस्ताव कर रहे हैं। उन्होंने यह भी कहा था कि 'हमारे संकट की घड़ियों में सोवियत रूस हमारे साथ रहा।' इसमें सन्देह नहीं कि साधारणतः सोवियत रूस का व्यवहार हमारे साथ मैत्रीपूर्ण रहा है. यद्यपि चीनी आक्रमण के समय में एक दोस्त याने भारत और एक भाई याने चीन के बीच विभेदात्मक नीति अपनाने की कमजोरी से वह बच नहीं सका। यह सही है कि कश्मीर के प्रश्न पर रूस ने सुरक्षा परिषद् में अपने विटो का व्यवहार हमारे पक्ष में किया, लेकिन यह कहना वास्तविकता से दूर है कि 'रूस हमारे संकट की घड़ियों में हमारे साथ रहा।'

अमरीकी सहायता

हमारा घोर संकट काल था १९६२ की वह शरद् ऋतु, जब हिमालय के उस पार से चीनी सेनाओं ने नेफा अंचल में अचानक आक्रमण कर दिया। उस समय रूस हमारी मदद के लिए खड़ा नहीं हुआ और न रूस से किसी भी तरह की मदद की आशा जवाहरलाल नेहरू ने की। उन्होंने फौरन अमरीका से सामरिक मदद की अपील की और वह चट मिली भी। उस संकट काल में रूस अगर हमें कोई सामरिक सहायता न दे सका तो उसमें उसका कोई दोष भी क्या। पहली बात तो यह है कि अपने दोस्तों को मुसीबत के समय मदद देने के लिए उसके पास अतिरिक्त सामरिक सामग्री नहीं; फिर भारत को उस समय सामरिक सहायता देने का अर्थ होता अपने कम्युनिस्ट भाई पर प्रहार करना। ऐसा करना उसके लिए संभव नहीं था, और न है। यद्यपि रूस और चीन के बीच विश्व कम्युनिस्टवादी आन्दोलन के नेता बनने की होड़ चल रही है और मध्य एशिया में भी अपना-अपना स्वार्थ लेकर दोनों में तनाव है। इसके अलावा 'लौहकपाट' के पीछे जो यूरोपीय देश हैं, उनके साथ भी रूस का संबंध सुविधाजनक नहीं है।

इधर कुछ दिनों से पाकिस्तान रूस के साथ गठबन्धन की चाल चल रहा है। इसलिए इसमें आश्चर्य भी क्या था कि कच्छ के रन के सम्बन्ध में

अपने पढ़ने के कमरे में

पाकिस्तानी रवैये के विरुद्ध रूस ने कोई स्पष्ट विचार व्यक्त नहीं किया। हर देश की विदेश नीति उसके राष्ट्रीय हितों को लेकर बनती है। जहां तक सोवियत रूस की बात है, भारत के साथ उसका मित्रतापूर्ण सम्बन्ध उस समय तक बना रहेगा, जब तक उसके राष्ट्रीय हितों और सम्मान को हमारी वजह से धक्का नहीं लगेगा। अन्तरराष्ट्रीय विवादों में कोई स्पष्ट दृष्टिकोण अपनाने से सोवियत रूस इस समय लाचार है। सामूहिक नेतृत्व के जरिये अभी कुछ दिन पहले ही रूस एक शक्तिशाली और व्यक्तित्वपूर्ण नेता को हटाने में सफल हुआ है। वर्तमान सोवियत नेताओं में से कोई भी व्यक्तिगत तौर पर ख्रुश्चेव की भांति विदेशों में सम्मान नहीं प्राप्त कर सकते इसलिए यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में सोवियत रूस अभी कुछ समय तक वह महत्वपूर्ण भूमिका अदा नहीं कर सकता, जैसा पूर्व में किया करता था।

अतएव भारत को यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि किसी भी संकटकाल में उसे केवल पश्चिमी देशों से ही सामरिक सहायता मिल सकती है। यह ठीक है कि अभी पाकिस्तान की ओर से हमें सर्वाधिक खतरा नजर आ रहा है, लेकिन हम कहेंगे कि इसके लिए भी हमारे वर्तमान शासक ही कुछ हद तक दोषी हैं जो गफलत की नींद सो रहे थे। हमें आज भी सबसे बड़ा खतरा कम्युनिस्ट चीन की ओर से है। पाकिस्तान की ओर से खतरा हम इसलिए भी महसूस करते हैं कि चीन उसका साथ दे रहा है, लेकिन सभी दृष्टिकोणों से यह तय है कि पाकिस्तान और चीन का गठबन्धन अधिक दिनों तक नहीं टिक सकता।

अमरीका के साथ खुलेआम उलझने से चीन अब तक बराबर कतराता रहा है। वह वास्तविकता को जानता है और उलझने का क्या अंजाम होगा, उसे मालूम है। वियतनाम में आज जो कुछ हो रहा है उससे यह बात स्पष्ट हो गयी है। दूसरी ओर चीन के साथ पाकिस्तान मतलब का समझौता कर सकता है, मगर अमरीका से मिल रही विपुल वित्तीय सामरिक सहायता से वंचित हो जाने की मूर्खता वह नहीं कर सकता। अगर इन सबके बावजूद चीन के साथ पाकिस्तान की आशनाई चलती रही तो पश्चिमी देशों की विशेषकर अमरीका की पूरी मदद भारत को मिलेगी। कुछ अस्थायी मतभेद हो सकते हैं लेकिन हमें यह नहीं नजर

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

अन्दाज करना चाहिए कि लोकतांत्रिक भारत और लोकतांत्रिक पश्चिमी देशों के बीच कितना अधिक साम्य है।

पाकिस्तानी रवैये के प्रति अमरीकी रुख और भारतीय प्रधान मंत्री की अमरीकी यात्रा को लेकर मगज मारने से कोई लाभ नहीं। वियतकांग छापामारों के विरुद्ध की जानेवाली अमरीकी कार्रवाइयों की लगातार घोर निन्दा कर हमने अमरीकी सरकार और अमरीकी जनता की भावनाओं पर जो चोट पहुँचायी है, उस पर भी हमें सोचना चाहिए। विश्व में शांति बनाये रखने के लिए हमारा जरा-सा प्रयास भी अपना अलग महत्व रखता है किन्तु विश्व शांति स्थापना के जोश में हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अमरीका और केवल अमरीका की वजह से पूरा दक्षिण-पूर्व एशिया कम्युनिस्ट शिविर के पंजों में जाने से बचा हुआ है। वैसी स्थिति में भारत के लिए जो खतरा आता उसका हम स्वतः अन्दाज कर सकते हैं।

हममें से कुछ इस बात को नहीं महसूस करते कि दक्षिणपूर्व एशिया में अमरीका जो भूमिका अदा कर रहा है वह चीनी आक्रमण को मद्दे नजर रखते हुए हमारे हित में है। हम इसे अस्वीकार नहीं कर सकते कि दक्षिण पूर्व एशिया में अमरीका एक उद्देश्य लेकर लड़ रहा है, जो न सिर्फ उसके हित में है, बल्कि समस्त लोकतांत्रिक देशों के हित में परमावश्यक है। सम्प्रति भारत और अमरीका के बीच चाहे, जैसा भी सम्बन्ध हो, किन्तु दोनों ओर से जरा-सा प्रयास करने पर यह संबंध तुरन्त ही मित्रतापूर्ण हो सकता है। इससे दोनों देश लाभान्वित हो सकेंगे, साथ ही स्वतंत्रता और लोकतंत्र की रक्षा हो सकेगी।

—'नवजीवन' में श्री आचार्य कृपलानी

खूब पहचाना

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात सन् '५८ या '५९ की है। मैं आकाशवाणी दिल्ली की ओर से एक रिकार्डिंग यूनिट के साथ एन. ए. एस. कालेज, मेरठ की रजत-जयंती की रेडियो-रिपोर्ट तैयार करने के लिए मेरठ गया हुआ था। मेरठ मेरे लिए घर जैसी ही जगह है; फिर भी वहाँ अनेक ऐसे व्यक्ति हैं जिनसे दुआ-सलाम तो है, मगर जान-पहचान नहीं है। ऐसे व्यक्तियों में मिलने-भेंटने का एक अच्छा तरीका यह है कि उन्हें देखते ही खूब चौड़ी मुस्कान से उनका स्वागत करो और आगे बढ़कर तपाक से हाथ मिलाओ। इसी तरीके की बदौलत मैंने एकदम भूले-बिसरे व्यक्तियों को भी कभी नाराज नहीं होने दिया है और हमेशा बड़े विश्वास के साथ मैं इसका प्रयोग करता आया हूँ।

मुझे कालेज की उस भीड़ में अनेक जाने-अनजाने चेहरे दिख रहे थे और मैं इसी नुस्खे के बल पर आराम से चहलकदमी करता हुआ फिर रहा था, कि तभी सामने से बढ़िया-सा सूट पहने हुए एक नौजवान सज्जन आये और "हलो दुष्यन्त!" कहकर मेरे सामने खड़े हो गये।

"हलो!" मैंने 'ओ' की ध्वनि को खींचते हुए लम्बी सी मुस्कराहट होठों पर लाने की कोशिश की और तपाक से उनकी तरफ हाथ बढ़ा दिया।

उन्होंने मेरा बढ़ा हुआ हाथ अपने हाथ में ले लिया और अपनी ओर ताकती हुई मेरी दृष्टि को भाँप कर वे बोले, "क्यों, पहचान नहीं रहे हो तुम?"

उनका 'तुम' कहना और इतनी संकोच-रहित भाषा का प्रयोग करना मुझे उलझन में डाल गया। अतः मैं दिमाग पर जोर डालता हुआ अपने स्कूल और यूनिवर्सिटी-जीवन के सारे दोस्तों को एक बार याद करने की कोशिश करने लगा।

कुछ पल इसी तरह खड़े-खड़े गुजर गये। मैं चाहता तो उसी तरह मुस्कान को फैलाते हुए उनसे बाल-बच्चों तक की खैर-खैराफियत पूछ सकता था, पर उनका बोलने का ढंग और आवाज इतनी परिचित लग रही थी कि मैं उनको ठीक-ठीक याद कर पाने की पूरी कोशिश करने लगा।

आखिर कुछ रुककर जब उन्होंने फिर यही कहा- "तुम पहचान नहीं पाये!" तो मैंने भी आजमूदा नुस्खे को आगे कर लिया और तत्काल उन्हें बाहों में भरकर सीने से लगाते हुए कहा, "प्यारे, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में इतने दिन साथ-साथ गुजारे हैं भला तुम्हें नहीं पहचानूंगा, पर यार! यह याद नहीं आ रहा- तुम मेरे साथ पढ़ते थे या एक साल सीनियर थे।

"खूब पहचाना!" उन्होंने 'खूब' पर जोर देकर मेरी बाहों से मुक्त होते हुए मुस्करा कर कहा, "हम लोग हिस्ट्री में एक ही क्लास में बैठते थे फर्क इतना-सा है कि तुम विद्यार्थियों के बीच डेस्कों पर बैठते थे और मैं ब्लैकबोर्ड के पास टेबुल पर।"

मेरे काटो तो खून नहीं था। दुष्यन्त याद आ गया कि जिन सज्जन को नवयुवक देख कर मैं अपना क्लासफेलो समझ बैठा था वे तो असल इलाहाबाद विश्वविद्यालय के भूतपूर्व लेक्चरर डा० पाण्डे थे; जो बी. ए० तक हमारे प्राचीन भारतीय इतिहास के 'सेमिनार-क्लासेज' लिया करते थे। बाद में विश्वविद्यालय छोड़ कर वे मेरठ के उक्त कालेज में इतिहास विभाग के अध्यक्ष होकर चले गये थे।

डा० पाण्डे ने मुझे तत्काल [illegible] कर दिया, पर मुझे आज भी उस घटना को याद करके अपने [illegible] हंसी आती है।

—'धर्मयुग' में श्री दुष्यन्त [illegible]

नया [illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक-परिचय

'विश्लेषण'

'विश्लेषण' पंजाब हिन्दी साहित्य अकादमी के तत्वावधान में प्रकाशित होने वाली शोध, समीक्षा एवं साहित्य सम्बन्धी त्रैमासिक पत्रिका है। यह इसका प्रथम अंक है।

पत्रिका के सम्पादक डा. जयनाथ नलिन ने 'मंगल कार्य का अनुष्ठान' नामक सम्पादकीय में पत्रिका के उद्देश्य सम्बन्धी 'अपनी बात' को इन शब्दों में प्रस्तुत किया है—"पंजाब के जागरूक साहित्यकार और पाठक हिन्दी साहित्य सृजन के क्षेत्र में वर्षों से एक भारी अभाव का अनुभव कर रहे थे। वह अभाव था एक समीक्षा पत्रिका का। ऐसी पत्रिका जो समस्त भारत में निर्मित श्रेष्ठतम हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक परिचय पंजाब को करा सके और पंजाब में रचे गए हिन्दी साहित्य की सन्तुलित, व्यवस्थित और सांगो पांग विवेचना करके उसे प्रकाश में ला सके तथा उसके रचयिताओं को प्रकाश भी दिखा सके। 'विश्लेषण' साहित्य के इसी अभाव की पूर्ति और इसी मांग का उत्तर है।.....'विश्लेषण' ने पंजाब-निर्मित हिन्दी साहित्य के प्रचार, प्रसार, विवेचन और पथ प्रदर्शन का उत्तरदायित्व पूरा करने के लिए जन्म लिया है।"

पत्रिका के इस प्रथम अंक की सामग्री को देखकर यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि डा० नलिन का यह दावा गलत नहीं है। आज भी पंजाब में सैंकड़ों की संख्या में हिन्दी के अमूल्य ग्रन्थ अनेक ग्रंथागारों में भरे पड़े हैं। इनमें कुछ तो ऐसे हैं जिनके प्रकाश में आने से हिन्दी साहित्य में इतिहास की चिंतन दिशा बदल सकती है, पर ये साहित्य ग्रन्थ गुरुमुखी लिपि में होने के कारण सामान्य हिन्दी पाठकों की पहुँच से दूर हैं। पंजाब में रचित इस अमूल्य साहित्य को प्रकाश में लाने का जो गंभीर उत्तरदायित्व 'विश्लेषण' ने लिया है, उसकी आंशिक पूर्ति तो अदायगी की इस पहली किश्त में ही हो गई है।

डा० जयभगवान गोयल एवं श्री यशपाल गुलाटी के 'गुरु प्रताप सूरज की प्राकृतिक सुषमा' तथा 'पंजाबी सूफी काव्य में प्रतीक योजना' नामक शोधपूर्ण लेख पत्रिका के उद्देश्य के सर्वथा अनुरूप हैं। आचार्य विनय मोहन शर्मा का 'तुकाराम बुआ की 'अस्सल गाथा' की हिन्दी भाषा' लेख हिन्दी भाषा के विकास के अध्ययन की एक नयी दिशा प्रस्तुत करता है। काश! लेख की गंभीरता के अनुरूप इसके मुद्रण में भी गंभीरता या सावधानी बरती जाती तो कितना अच्छा होता। मैथिलीशरण गुप्त पर डा० इन्द्रनाथ मदान का लेख उनके निर्भीक मौलिक चिंतन एवं अतलदर्शी समीक्षा दृष्टि का परिचय देता है। अन्य सभी लेख विविध विषयों पर उच्च कोटि के अनुसंधान परक एवं समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत करते हैं।

'साहित्य के शिखर' स्तम्भ के अन्तर्गत सद्यः प्रकाशित पुस्तकों की समीक्षाएँ प्रस्तुत की गई हैं। समीक्षाएँ सुन्दर हैं। यह दूसरी बात है कि समीक्षित पुस्तक सुन्दर हो न हो—उतनी सुन्दर जितने उच्चता की गरिमा से युक्त शिखर होते हैं। कुछ के सन्दर्भ में तो साहित्य शिखर पर खड़े समीक्षक की समीक्षा-दृष्टि को तलहटियों की गहराइयों में झांकना पड़ा है।

कुल मिलाकर 'विश्लेषण' का यह अंक काफी सुन्दर बन पड़ा है। डा० जयनाथ नलिन जैसे यशस्वी साहित्यकार के सम्पादन से इस पत्रिका की गरिमा बढ़ी है। इस अंक को देखकर यह आशा बंधती है कि उनके निर्देशन में यह पत्रिका हिन्दी साहित्य को अभिनव प्रकाश, प्रेरणा और प्रगति देते हुए अपने उदय का प्रयोजन सफल करेगी।

प्रकाशक—पंजाब हिन्दी साहित्य अकादमी
विश्वविद्यालय प्रांगण, कुरुक्षेत्र
वार्षिक मूल्य ५.०० रुपये
एक प्रति का मूल्य २.५० रुपये

—राजकुमार शर्मा

सुधियों की रिमझिम में

यह श्री कैलाश चन्द्र अग्रवाल द्वारा रचित सन् १९४७ से दिसम्बर १९६४ तक के श्रेष्ठ गीतों का संकलन है। गीतों में गेयता, अनुभूति की सहज एवं मार्मिक अभिव्यक्ति तथा मधुरता मिलती है। पिंगल की दृष्टि से गीत खरे हैं। भावों की दृष्टि से प्यार भरे हैं।

कुछ पंक्तियां नमूने के लिये प्रस्तुत हैं—

"मैं न लिखता गीत, लिखवाता अगर कोई न मुझसे"
'मैं न करता प्रीत, शरमाता अगर कोई न मुझसे"

× × ×

तुम मेरे गीतों की लय हो।
छन्द तुम्हारी छवि के पोषक,
चरण तुम्हारी गति के द्योतक,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम मेरी अनुभूति सुकोमल,
तुम जीवन का धन अक्षय हो ॥

× × ×

"तुम छविमय प्रतिमा-सी सुन्दर।
तुम चलती मराल रुक जाते,
स्वागत में युग दृग झुक जाते;
तुम इतनी गम्भीर कि मुझको, उच्छृंखल-सा लगता सागर।"

× × ×

"कहने भर के लिये गीत यह मेरे
लेकिन इन पर अधिकार तुम्हारा है।"

कैलाश जी विद्वान हैं किन्तु आपके गीतों में विद्वत्ता का प्रदर्शन नहीं है। इस संग्रह के कुछ गीत आकाश वाणी से प्रसारित हो चुके हैं। ८० पृष्ठ की सुन्दर जिल्दवाली इस पुस्तक का मूल्य है तीन रुपया तथा प्राप्ति स्थान है-
आलोक प्रकाशन, मण्डी बाँस, मुरादाबाद
—धर्मपाल 'बर्ष

श्री अज्ञेय

कुछ समय पूर्व जापान जाने का अवसर मिला, तब हिरोशिमा भी गया और वह अस्पताल भी देखा जहाँ रेडियम-पदार्थ से आहत लोग वर्षों से कष्ट पा रहे थे। इस प्रकार प्रत्यक्ष अनुभव हुआ—पर अनुभव से अनुभूति गहरी चीज है, कम से कम कृतिकार के लिए। अनुभव तो घटित नहीं हुआ है। जो आँखों के सामने नहीं आया, जो घटित के अनुभव में नहीं आया वही आत्मा के सामने ज्वलन्त प्रकाश में आता है, तब वहाँ अनुभूति-प्रत्यक्ष हो जाता है।

तो हिरोशिमा में सब देखकर भी तत्काल कुछ लिखा नहीं, क्योंकि इसी अनुभूति-प्रत्यक्ष की कसर थी। फिर एक दिन वहीं सड़क पर घूमते हुए देखा कि एक जले हुए पत्थर पर एक लम्बी उजली छाया है—विस्फोट के समय कोई वहाँ खड़ा रहा होगा और विस्फोट से बिखरे हुए रेडियमधर्मी पदार्थ की किरणें उससे नष्ट हो गयी होंगी—जो आसमान से आगे बढ़ गयीं उन्होंने पत्थर को झुलसा दिया, जो उस व्यक्ति पर अटकीं उन्होंने उसे भाप बनाकर उड़ा दिया होगा। इस प्रकार समूची ट्रेजेडी जैसे पत्थर पर लिखी गई·····

उस छाया को देखकर जैसे एक थप्पड़-सा लगा। अवाक् इतिहास जैसे भीतर कहीं सहसा एक जलते हुए सूर्य-सा उग आया और डूब गया। मैं कहूं कि उस क्षण में अणु-विस्फोट मेरे अनुभूति प्रत्यक्ष में आ गया—एक अर्थ में मैं स्वयं हिरोशिमा के विस्फोट का भोक्ता बन गया।

इसी में से वह विवशता जागी : भीतर की आकुलता बुद्धि के क्षेत्र से बढ़ कर संवेदना के क्षेत्र में आ गयी···फिर धीरे-धीरे मैं उससे अपने को अलग कर सका, और अचानक एक दिन मैंने हिरोशिमा पर कविता लिखी—जापान में नहीं, भारत लौटकर रेलगाड़ी में बैठे-बैठे।

वह कविता अच्छी है या बुरी, इससे मुझे मतलब नहीं है। मेरे निकट वह सच है, क्योंकि वह अनुभूति-प्रसूत है, यही मेरे निकट महत्त्व की बात है। मैं कहूँ कि कृतिकार या कवि जब सत्य से ऐसा भीतरी साक्षात् करता है तब मानो वह एक बलि-पुरुष की तरह देवताओं का मनोनीत हो जाता है और काव्य-कृति ही उसका आत्म-बलिदान है, जिसके द्वारा वह देवताओं से उऋण हो जाता है। यही देवता से उऋण होने की छटपटाहट वह विवशता है जो लिखाती है—फिर वह ऋण-परिशोध तत्काल हो जाये या वर्षों बाद, यह दूसरी बात है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तार—बम्बई—'साहूजैन'

धांगधा—'कैमिकल्स'

भारूभुगनेरी—'कैमिकल्स'

टेलीफोन—बम्बई—२५,२२,८,९६,१०

(तीन लाइन)

धांगधा—३१ एवं ६७

कयालपट्टनम—३०

卐

धांगधा कैमिकल वर्क्स लिमिटेड

१५ ए-हार्निमन सर्किल

फोर्ट, बम्बई—१

प्रसिद्ध 'हार्स शू' छाप कैमिकल्स के निर्माता

सोडा ऐश, सोडा बाईकार्ब, केलशियम क्लोराइड,

नमक और इलेक्ट्रोलीटिक कास्टिक सोडा

(९८ प्रतिशत N&OH Purity)

卐

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

धांगधा (गुजरात राज्य)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

शिलाओं, पेड़ों की छाल, जानवरों की खाल अथवा धातुओं के टुकड़ों की लिखावटें सभ्यता के उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

ROHTAS

SHRI JAIN INDUSTRIES

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक—प्रखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स, सहारनपुर में मुद्रित—प्रकाशित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

कृतिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक
ा राष्ट्रीय चेतना का प्रेरक मनोरंजक मासिक

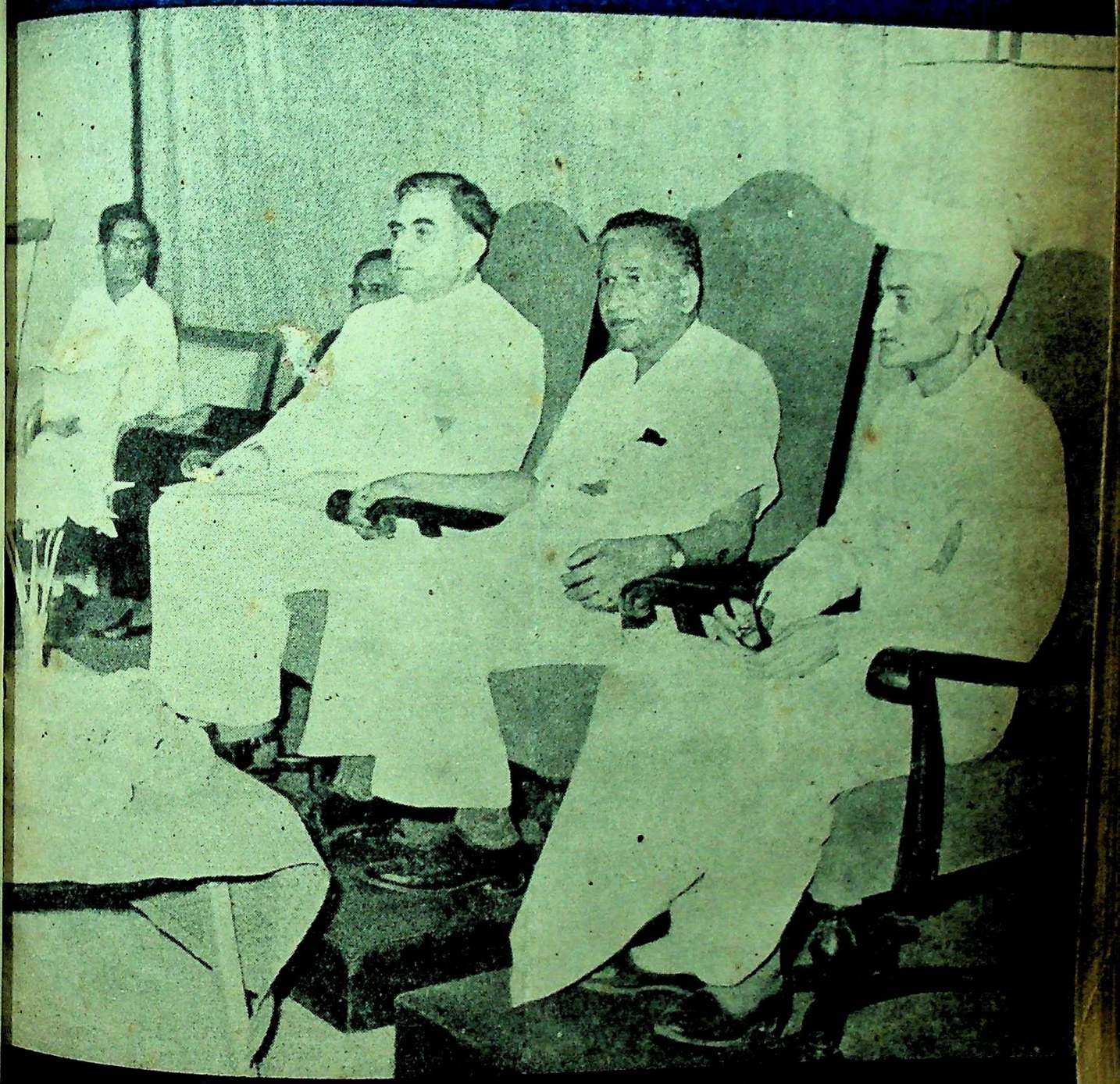

नेता को ठीक जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
नेता को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
मों पर राय बनाने के लिए मासिक आवश्यक है, -

'नया जीवन' में
दैनिक-साप्ताहिक-मासिक की इन विशेषताओं का समन्वय है
आप उसका एक अङ्क देख कर ही इस के साक्षी हो जाएंगे

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज़ के एक छोटे पुर्जे पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी।
अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है।

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज़ के बिना न
शास्त्र मिलते न साहित्य।
कागज़ हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित यह साहित्य
आपके पुस्तकालय में न हो तो इसे तुरन्त मंगा लीजिये !

★ जिन्दगी मुस्कराई ४.०० रु०
★ बाजे पायलिया के घुंघरू ४.०० रु०
★ दीप जले शंख बजे ३.०० रु०
★ महके आँगन चहके द्वार ४.०० रु०

(नई स्फुरणा के साथ जीवन को चम. न वाली चारों पुस्तकें)

★ माटी हो गई सोना २.०० रु०
बलिदान की चेतना से पूर्ण १७ अमर अक्षर चित्रों का संग्रह

★ आकाश के तारे धरती के फूल २.०० रु०
जीवन की गहराई, लोच और गति से भरपूर अनोखी लघु कथाएँ

★ क्षण बोले कण मुस्काए ४.०० रु०
लेखक की विशिष्ट शैली का प्रतिनिधित्व करने वाले
ललित एवं मनोरंजक निबंधों का नव प्रकाशित संग्रह

प्रकाशक:—

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुंड, वाराणसी

विक्रय केन्द्र ३६२०/२१ नेता जी सुभाष मार्ग, दिल्ली—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दून घाटी

= का =

गौरव

अमिताभ टैक्सटाइल मिल्स लिमिटेड

देहरादून :: उत्तर प्रदेश

श्रेष्ठतम :

★ सूत

★★ हौज़री

★★★ वंटा सूत

निर्माता

अमिताभ ! अमिताभ !! अमिताभ !!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापित १९५५ शिलान्यास : राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद द्वारा

संस्थापक : मान्य श्री अजित प्रसाद जैन (राज्यपाल केरल)

सेवा निधि किदवई अपंग आश्रम

मूक वधिर विद्यालय

प्रद्युमन नगर : सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

मानव भगवान की अद्भुत रचना है। अनेक रूपा उसकी इस विश्व रचना में कुछ ऐसे मानव-पुत्र भी हैं जिनकी स्थिति एक दागदार मूर्ति जैसी है ! ऐसे मानव- पुत्र ही तो अपंग कहे जाते हैं।

क्या अपंग व्यक्ति हमारी दया और करुणा के पात्र हैं ? शायद नहीं। आखिर हम उन्हें 'बेचारा' मानकर उपेक्षित क्यों समझें। आवश्यक यह है कि वे सामान्य नागरिक की भांति स्वाभिमानी एवं शिक्षित ही न हों, अपितु जीविका-उपार्जन में भी समर्थ एवं तत्पर हों।

इसी पवित्र उद्देश्य से उत्प्रेरित होकर आपकी यह अपनी संस्था १९५५ से कार्यरत है। इस संस्था में गूंगे-बहरे बालक बालिकाएँ अपने व्यक्तित्व के विकास की सभी सम्भावनाओं का अन्वेषण और सम्पादन करते हैं।

संस्था में लगभग ४५ छात्र-छात्राएं तथा ५ प्रशिक्षित अध्यापक हैं। दूर नगरों से आने वाले छात्र-छात्राओं के लिए अलग-अलग, साधन सुविधाओं से पूर्ण दो छात्रावासों की व्यवस्था है, जिनकी देखभाल एक सुयोग्य मैट्रन द्वारा की जाती है। कक्षा ७ तक शिक्षा देने के साथ-साथ लकड़ी का काम, मोमबत्ती निर्माण और सिलाई- कढ़ाई का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

यदि आपकी दृष्टि-सीमा में कोई गूंगा बहरा बालक-बालिका हो, तो कृपया उसे हमारी संस्था के द्वार तक पहुंचा कर अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक दायित्व का पालन कीजिए।

यह संस्था सदैव आपके स्नेह एवं संरक्षण की आकांक्षा करती है। विशेष जानकारी के लिये लिखें।

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–
उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है !

★

कोशिश कीजिये–

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए !

खड्डियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत
एवं
भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस: चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—३१६, ३६४, १६०

संचालक
सेठ सुशील कुमार बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरी जानकारी

- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे है। विशेषांक का मूल्य पृथक, जो ग्राहकों को वार्षिक मूल्य में ही मिलता है।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और अपनी प्रत्येक रचना पर अन्त में अपना पूरा नाम-पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण !
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह प्यार-मान दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें। ३ महाने के भीतर आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाए, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या लिखने की आवश्यक प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीज़ों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक

नया जीवन' * सहारनपुर * उ० प्र०

नया जीवन

विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'
निदेशक

अखिलेश
सम्पादक-संचालक

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का फालतू समय चैन से काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें !

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं !

जोलाई १९६५

संचालक

विकास लिमिटेड
सहारनपुर • उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अता-पता

एक नेपथ्य, दो स्वर — श्री किरण शंकर

जीवन में काँटे होते हैं, काँटे ही काँटे नहीं मगर — श्रीमती राज मेहता, एम. ए.
खिजराबाद (ईस्ट) जि० अम्बाला

धरती और अम्बर का रिश्ता — श्री जसविन्द्र 'अशान्त'
१८७ ए, माडल टाउन, यमुनानगर (अम्बाला)

राष्ट्र-चिंतन — स्तम्भ

प्रजातन्त्र प्रश्नों के बीहड़ में — श्री राज राजेश्वर
द्वारा, श्री सुशील वैरागी, मनासा (म. प्र.)
जि० मन्दसौर

अपने पढ़ने के कमरे में — स्तम्भ

हम बहाना क्यों बनाते हैं ? — अखिलेश

हम इतिहास से शिक्षा लें ! — कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

मैं न दुराग्रही हूं, न अन्धविश्वासी — श्री मुरार जी देसाई
भू० पू० केन्द्रीय वित्त मंत्री,
१, विलिंगडन क्रिसेंट, नई दिल्ली

टेनिस का बल्ला और तम्बाकू की पीक — डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी
शीतला गली, आगरा

हिन्दी परिषद् के इक्कीसवें अधिवेशन में — प्रो० श्री कृष्णचन्द
२०२, आर्यपुरी, मुजफ्फरनगर

यह एक औघड़ कलाकार — कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

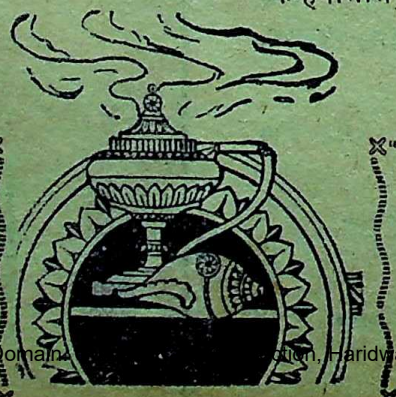

मुख पृष्ठ

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय (कुरुक्षेत्र पंजाब) के प्रांगण में आयोजित हिन्दी परिषद् के इक्कीसवें वार्षिक अधिवेशन में मंच पर आसीन—स्वागताध्यक्ष श्री विनयचन्द्र शर्मा, अध्यक्ष—डा. रामकुमार (बीच में) और उद्घाटनकर्ता श्री सूर्यभान (उप कुलपति)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक नेपथ्य :: दो स्वर

श्री किरण शंकर

[१]

सीमा पर कोई ऐटम गिराए,
बे टूट जाएँ,
सब गड्डमगड्ड होजाए
और मेरी झोंपड़ी तिनकों में बिखर जाए,
मुझे स्वीकार है;
क्योंकि सीमा बांधती है,
बाँटती है,
व्यक्ति को भी, राष्ट्र को भी,
हाँ, पर यह ऐटम प्यार का हो,
पर यदि शत्रुता से
कोई सीमा पर फेंके डला,
मैं बन जाऊँ, उसके लिए बला
और तोड़ कर ही रहूँ
उन उंगलियों को,
जिन्होंने फेंका यह डला।

[२]

सीमा पर लड़ेंगे हमारे सिपाही,
करेंगे दुश्मनों के दाँत खट्टे,
मेरा विश्वास है,
पर यदि तोड़कर नाका,
धकेल कर सिपाहियों को
घुस आए दुश्मन देश में,
तब भी मुझे गम नहीं।
मैं बैठा हूँ अपनी छत पर,
ईंट, पत्थर और गरम तेल लिए।
आएगा जो दुश्मन,
अपनी जीत के गीत गुनगुनाता,
कर दूँगा मैं उसका ढेर—
यह तो क्या,
उसकी खबर भी
घर न पहुँचेगी।
मोर्चे टूट जाते हैं,
पर गलियां कब टूटी हैं?
मुझे याद हैं
लेनिनग्राद की गलियाँ;
मोर्चों का विजेता हिटलर
जहाँ पस्त होगया था!

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन में कांटे होते हैं, कांटे ही कांटे नहीं मगर !

श्रीमती राज मेहता, एम. ए.

卐

तुमने न मुझे प्रिय, पहचाना !

जीवन में काँटे होते हैं, काँटे ही कांटे नहीं मगर ,
उलझनें हुआ ही करती हैं, लेकिन मिल जाती साफ डगर ,
तुम कांटों में ही उलझ गए—
और बन्द किया आना जाना ;
तुमने न मुझे प्रिय पहचाना !

अंधियारी रातें होती हैं, होती है एक अमावस भी,
जलती मौसम भी होती है, होती है शीतल पावस भी,
तुम लू-लपटों में उलझ गए ,
और भूल गए रसमय गाना ;
तुमने न मुझे प्रिय पहचाना !

जीवन पर्वत-पगडंडी है, इसमें उद्गति है, अवनति है ,
यह ऐसा छन्द नहीं जिसमें केवल यति है, न कहीं गति है ,
तुम यति में ऐसे उलझ गए ,
बस भूल गए उद्गति पाना ;
तुमने न मुझे प्रिय पहचाना !

◇

धरती और अम्बर का रिश्ता

श्री जसविन्द्र 'अशान्त'

धरती और अम्बर का रिश्ता, तोड़ो लाख नहीं टूटेगा ,
इसीलिए अम्बर को देखो, तो धरती का गान न छोड़ो ,
माटी का सम्मान न छोड़ो !

उड़े कल्पना पंख खोलकर अम्बर के तारों को चूमें ,
गीत बावरा होकर चाहे सागर के ज्वारों को चूमे ,
मगर धरा की सतह छोड़कर, कितना ऊँचा उठ पाओगे ?
सपनों का संसार बसाकर नग्न सत्य का ज्ञान न छोड़ो ;
जीवन की पहचान न छोड़ो !

मधुशाला में आकर मधु का पान न करना ठीक नहीं है,
पा भावों से भरा खजाना, दान न करना ठीक नहीं है,
मगर हलाहल अभी शेष है जीवन के इस पैमाने में,
मादकता से प्यार करो, पर थोड़ा-सा विषपान न छोड़ो,
संघर्षों की तान न छोड़ो !

जमना तट पर बजे बांसुरी राधा बन बावरिया डोले ,
कान्हा प्रीत भरी घड़ियों में राधा के घूंघट को खोले ,
मगर धरा पर दुख-दुर्योधन का भी वास अभी बाकी है ,
बांसुरिया की तान उठाओ रणभेरी का मान न छोड़ो ;
परिवर्तन का [illegible] न छोड़ो !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

श्री लालबहादुर शास्त्री

हमारे प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री के छोटे-से 'आकार' में बसे बड़े-से 'प्रकार' की पहली झांकी दुनिया को मिली थी चीन का परमाणु बम-विस्फोट होने पर शास्त्री जी की इस घोषणा से कि भारत बम नहीं बनाएगा। दूसरी झाँकी मिली थी अमरीका के राष्ट्रपति द्वारा शास्त्री जी को अमरीका यात्रा के लिए दिया निमंत्रण स्थगित करने पर। शास्त्री जी ने उस निमंत्रण को स्थगित न कर रद्द ही कर दिया, पर अमरीका के साथ होने वाली कनाडा यात्रा को स्थगित न कर वे यात्रा पर गए और इस तरह ऐसी कूट-नैतिक टंगड़ी मारी कि अमरीका का दम्भ आसमान ताकता नजर आया।

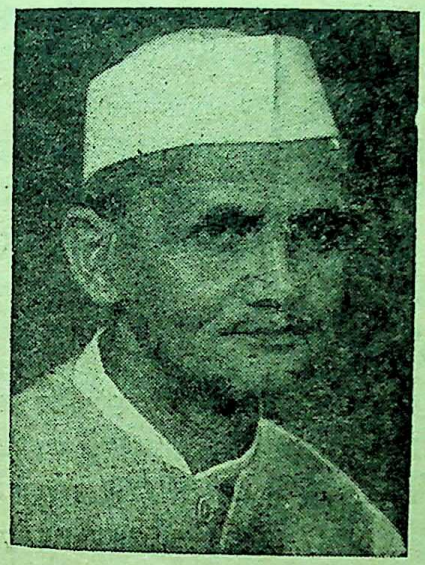

प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री

रूस की यात्रा में उनका व्यक्तित्व प्रदीप्त हुआ और लन्दन के राष्ट्र-मण्डलीय प्रधान मंत्री सम्मेलन में तो वह भभक ही उठा। जब वे लन्दन गए, कच्छ पर पाकिस्तान का आक्रमण हो चुका था और इंगलैंड के प्रधान मंत्री श्री हैराल्ड विल्सन के प्रस्ताव पर युद्ध रुका हुआ था, समझौते की बात हो रही थी। पाकिस्तान के नादिर शाह जनरल अयूब साहब फैसला नहीं चाहते थे और दुनिया भर के देशों में सम्पर्क साधकर हाथ पैर मार रहे थे, पर शास्त्री जी ने एक ही वाक्य में उनकी जाड़ में जम्बूड़ फंसा दिया था कि पहली जनवरी १९६५ वाली स्थिति आने तक कोई फैसला नहीं हो सकता।

शास्त्री जी को पिघलाने के लिए इंगलैंड, अमरीका और चीन के कर्णधार अपने अपने ढंग पर आँच दे रहे थे, पर लाल बहादुर शास्त्री, जवाहर लाल नेहरू न थे कि किसी की इश्किया मुस्कराहट देखते ही नम हो जाएं। लाल बहादुर जी में प्यार की बौछार और क्रोध की हुँकार को शान्त-संतुलित रहकर सहजाने का अद्भुत धैर्य है। न उन्हें भड़काया जा सकता है, न बहकाया जा सकता है, न बहलाया ही। उनकी दृढ़ता सफल हुई और लन्दन के लॉन पर स्वयं आगे बढ़कर जनरल अयूब उनके पास आए और कच्छ का समझौता हो गया। पाकिस्तान की फौजें पीछे हट गईं, क्षेत्र खाली हो गया और आगे की बात का रास्ता खुल गया, जिसके बहुत महत्वपूर्ण नतीजे भी हो सकते हैं। कच्छ का समझौता शास्त्री जी के विश्व व्यक्तित्व-शिखर का निर्माण है, राष्ट्रीय नेतृत्व के उज्ज्वल भविष्य का शिलान्यास है और खेल की भाषा में यह उनका 'शार्ट कॉर्नर गोल' है। इस समझौते के बाद जब शास्त्री जी यूगोस्लाविया गए, तो वहाँ के राष्ट्रपति मार्शल टीटो उनका स्वागत करने स्वयं हवाई अड्डे पर आए—अन्तर्राष्ट्रीय शिष्टाचार की दृष्टि से वहां के प्रधान मंत्री का आना ही काफी था।

कच्छ का यह महत्वपूर्ण समझौता

कच्छ का यह समझौता हमारे देश की स्वतन्त्रता के पिछले अठारह वर्षों की सर्वोत्तम घटना है, सबसे महत्व-पूर्ण सफलता है और आवश्यकता है कि हम इसे समझें। कच्छ समझौते की पहली अहम बात यह है कि यह सम-झौता खुशामद से, दबकर, दोस्तों के दबाव से या डर कर हमने नहीं किया, बल्कि हमने अपनी ताकत से पाकिस्तान को मजबूर किया कि वह लड़ाई की राह छोड़कर समझौते की बात पर आए।

जब कच्छ पर पाकिस्तान ने चढ़ाई की, वहाँ हमारी कोई सैनिक तैयारी नहीं थी, हम पूरी तरह बेखबर थे। इसके खिलाफ पाकिस्तान ने बाकायदा तैयारी की थी। कच्छ की सरहद के पास उसकी छावनी थी, उसने सड़क बना ली थी, जिससे वह मोर्चे पर सैनिक और रसद आसानी से भेज सकता था। भारत को ये सब सुभीते प्राप्त नहीं थे। वह आक्रमण चीनी युद्ध-पद्धति पर हुआ था कि विरोधी को अपने अनुकूल स्थान पर लड़ने को मजबूर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

करो। चीन ने इसी पद्धति से कोरिया के युद्ध में अमरीकी सेनाओं को परेशान कर दिया था।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन सब से बढ़कर बात यह कि उधर बिना सूचना का फौजी आक्रमण था, जिसमें ३५०० सैनिक थे और इधर सीमा पुलिस थी, जिसमें एक सौ पच्चीस सिपाही थे। देशभक्ति, साहस और कौशल का यह एक ऐतिहासिक चमत्कार ही है कि उन १२५ सिपाहियों ने उस फौज को पसीने दिला दिए। जनरल अय्यूब को आशा थी कि शाम तक पूरा कच्छ का रण ले लेंगे,, पर हुआ कुछ और ही कि वे कुछ मील ही अन्दर घुस पाये। भिन्नाकर उन्होंने अमरीकी टैंक भेज दिये, जो उन्हें बड़ी ताकत रूस से लड़ने के लिए दिये गये थे, पर हमारे सिपाहियों ने उनके दो टैंक बेकार कर दिए अपने अचूक निशाने से। तब तक हमारी फौज भी पहुंच गई और जीती हुई जमीन पाकिस्तानियों से छीनने लगी।

बहुत शानदार झड़पें हुईं। पाकिस्तान सीमा के दूसरे स्थानों पर कूद फांद कर रहा था और एक दिन उसने लद्दाख के साथ भारत को जोड़ने वाली सड़क को अपनी भौगोलिक स्थिति का फायदा उठाकर काट देने की कोशिस की। भौगोलिक स्थिति यह है कि सड़क निचाई में है और पाकिस्तान की सैनिक कारगिल-चौकी ऊंचाई पर है। यह ऊंचाई बीहड़ है, खड़ी है, दुर्गम है। सैनिक विशेषज्ञों की राय थी कि कोई शांतिकाल में भी सड़क से चौकी पर चढ़ना चाहे, तो ५॥ घंटे में चढ़ सकता है, पर भारत के जाँबाज़ सैनिक गोलियों की जान लेवा बौछार में भी कुल ढाई घंटे में ऊपर चढ़ गए और उन्होंने पाकिस्तान की दो चौकियों पर कब्जा कर लिया। बड़ी फिटफिटी हुई पाकिस्तान की और इसी पृष्ठ भूमि में कच्छ का समझौता हुआ।

इसका श्रेय हमारी सेनाओं के रण कौशल और रक्षा मन्त्री श्री यशवंत राव चह्वान को है और दोनों ही देश के अभिनन्दन के पात्र हैं। श्री चह्वाण ने इस अवसर पर जिस निराकुल, शाँत और दृढ़ भाव से रणनीति का संचालन किया, उसने समझने वालों के लिए उनके व्यक्तित्व का एक नया और अति उज्ज्वल रूप खोल दिया है। जब सेनाएं जीतती हुई आगे बढ़ रही हों और उन्हें अन्तिम विजय में अखंड विश्वास हो, तब उन्हें समझौते की बात कह कर रोकना और असंतुष्ट न होने देना असाधारण सहृदयता, सामर्थ्य और कौशल की मांग करता है और हमारे प्यारे रक्षामन्त्री ने यह मांग पूरी तरह पूरी की है, इसमें सन्देह नहीं।

सुरक्षा मन्त्री श्री यशवन्तराव चह्वाण

कच्छ समझौते की जिस बात पर गहरे रूप में हमारा ध्यान जाना चाहिए, वह यह है कि चीन की चतुरता, अमरीका की नाराज़ चुप्पी और पाकिस्तान की उद्दण्डता ने हमें युद्ध की जिस ज्वालामुखी में धकेल दिया था, हमारे प्रधान मन्त्री श्री शास्त्री जी उसमें से हमें पूरी प्रतिभा के साथ निकाल लाए हैं और यह कोई साधारण बात नहीं है—इतिहास इसे सदा सम्मान के साथ स्मरण करेगा।

नादान दोस्तों का महापाप

कच्छ के इस समझौते के समय और उसके बाद संयुक्त-समाजवादी दल और जनसंघ, इन दो विरोधी दलों ने जो कुछ किया, वह अधिनायक देशों में तो गोली मारने के ही लायक समझा जाता, पर हमारे प्रजातन्त्री देश में भी घोर निन्दा के लायक है। इन दलों ने इस तरह हाय-हाय मचाई और प्रदर्शन किये कि जैसे देश की बड़ी बेइज्जती हो गई इस समझौते से।

इस समझौते में सीमा के कुछ हिस्से पर कि जिसकी अभी हदबंदी नहीं हुई है और जो अब आपसी बातचीत से तै होने वाली है, पाकिस्तान पुलिस को भी गश्त करने की छूट दी गई है, जबकि भारतीय पुलिस उस हिस्से पर भी और पूरे इलाके पर भी गश्त करेगी। साथ ही यह भी तै हुआ है कि यदि आपस में समझौता न हो, तो पंच के द्वारा फैसला किया जायगा कि खूँटे कहां गड़े? इन बातों के इन लोगों ने बड़े बड़े अर्थ निकाले हैं और लन्तरानी के लच्छे यहाँ तक पहुँचा दिये हैं कि शास्त्री-सरकार इसी

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरह काश्मीर का मामला भी पंच को सौंप कर काश्मीर को खो देगी। कोई पूछे इन अक्ल के बदहाजमे वालों से कि क्या काश्मीर का सवाल कोई सीमा का सवाल है? नहीं है, तो फिर उसे पंच को सौंपने की बात ही कहाँ उठती है?

देश का दुर्भाग्य है कि श्री श्यामा प्रसाद मुकर्जी के बाद देश के विरोधी दल नेतृत्व की दृष्टि से दिवालिया हो गए हैं और उनके नेता बहुत छोटी हैसियत के हैं—जिला या प्रदेश स्तर के। उनका विश्वास हो हल्ले में है और उनका दृष्टिकोण नकारात्मक है—सरकार का विरोध करो। इस समझौते पर मर्सिया पढ़ते समय वे यह भूल गए कि वे जनता से उत्साहित होने का, अपने देश के प्रति गौरव अनुभव करने का एक स्वर्ण अवसर छीन रहे हैं और इस तरह देश के दुश्मनों की ही मदद कर रहे हैं। ये विरोध के नशे में यह भी भूल गए कि सेना के संबन्ध में किस भाषा में बात करना उचित है और सीमा पर सेना को राजनैतिक नियंत्रण से मुक्त खुली छूट देने के नारों का क्या अर्थ होता है? राजनैतिक नियंत्रण की शिथिलता ने ही भारत के पड़ौस में चारों ओर सैनिक अधिनायकता को जन्म दिया है, जोश में उन्हें इसका भी ध्यान नहीं रहा और न इसका ही कि सेना में असंतोष और आकांक्षा को जन्म देना तो सुगम है, पर उसे शान्त-संतुलित करना नहीं।

इनके लिए यही कहना उचित होगा कि-भगवान इन्हें सुमति दे, जिससे ये यह समझ सकें कि हकूमत के जिस रस गुल्ले को चाटने के लिए ये लोग आकुल हैं, वह इस तरह हाथ में नहीं आती—उसकी राह दूसरी ही है।

गोवा का प्रश्न

१९ दिसंबर १९६१ को गोवा में पुर्तगाली शासन का अन्त हुआ था और १९६२ में वहाँ भी सारे देश की तरह आम चुनाव हुए थे। महाराष्ट्र गोमांतक दल, प्रजा समाजवादी दल, यूनाइटेड गोवंस और कांग्रेस इन चार पार्टियों ने चुनावों में भाग लिया। दूसरे विश्व युद्ध के विजेता चर्चिल आम चुनाव में हार गए थे। गोवा को पुर्तगाल की ४०० वर्ष की गुलामी से मुक्ति दिलाने वाली कांग्रेस भी इस चुनाव में चारों खाने चित आई। उसे ३० सीटों में से १ पर विजय मिली। गोवा को महाराष्ट्र में विलीन करने की इच्छुक पार्टी महाराष्ट्र गोमांतक दल को १४ सीटें मिलीं, प्रजा समाज वादी को २, यूनाइटेड गोवंस को १२ और निर्दली को १ सीट मिली। दोनों प्रजा समाजवादी महाराष्ट्र गोमांतक दल में मिल गए और इस तरह वे १६ हो गए और उन्होंने ही मंत्री मंडल बनाया।

महाराष्ट्र गोमांतक दल की मांग है गोवा को महाराष्ट्र में और दमन, दीव को गुजरात में मिला दिया जाए और इस तरह गोवा का विलीनीकरण हो। यूनाइटेड गोवंस गोवा को स्वतन्त्र राज्य के रूप में रखना चाहते हैं। दोनों में रस्सा कशी है। स्व० प्रधानमंत्री नेहरू की नीति थी, समस्याओं को सुलझाने के झंझट में मत पड़ो, उन्हें बस सामने से हटा दो। उन्होंने निर्णय दिया कि दस वर्ष तक गोवा को ज्यों का त्यों रखा जाये और इसके बाद गोवा की जनता की राय ली जाए।

मामला टल गया, पर यह तो अनिश्चित स्थिति है और अनिश्चित स्थिति में पूरी उन्नति नहीं हो सकती, इस लिए यह प्रश्न उठा और नये प्रधानमन्त्री श्री शास्त्री जी के सामने आया। उन्होंने गोवा के मुख्यमंत्री श्री दयानन्द बन्दोड़कर के साथ सलाह कर यह राय दी कि श्री बंदोड़कर अपने मंत्री मंडल का त्यागपत्र दे दें, विधान सभा भंग कर दी जाए, राष्ट्रपति का शासन लागू हो और छह महीने बाद आम चुनाव हो कि गोवा की जनता क्या चाहती है? श्री बन्दोड़कर अपनी पार्टी से सलाह करें, शास्त्री जी अपने साथियों से और तब पार्लियामेंटरी बोर्ड निर्णय करे।

पत्रों में इस निर्णय के प्रकाशित होते ही मैसूर में आग लग गई। वहाँ के मुख्यमंत्री श्री निजलिंगप्पा ने त्यागपत्र की धमकी दे मारी, वक्तव्य पर वक्तव्य छपे कि गोवा तो मैसूर में मिलना चाहिए। मैसूर की जनता भी भड़क उठी, पत्थर चले, शीशे टूटे—हाय हाय! प्रधानमंत्री ने कहा—चुनाव में मैसूर में मिलने की भी बात का प्रचार हो सकता है और अभी तो प्रस्ताव है, निर्णय तो पार्लियामेंटरी बोर्ड ही करेगा। फिर भी उत्तेजना बनी रही और बंगलौर में काँग्रेस महासमिति का जो अधिवेशन हुआ, उसमें केन्द्र के नेताओं की मोटरों पर खूब पत्थर फेंके गए और काले झंडे दिखाये गए। पार्लियामेंटरी बोर्ड को अब इस पर निर्णय करना है और देश उस निर्णय को सुनने की प्रतीक्षा में है।

समस्या का स्वरूप यह है कि यूनाइटेड गोवंस पार्टी कैथोलिक ईसाइयों की पार्टी है। ये लोग पुर्तगाली हकूमत के समर्थक थे और उससे लाभ उठाते थे। ये गोवा की पृथक सत्ता चाहते हैं। गोमांतक दल में हिन्दू बहुमत है और वह विलय चाहता है। मैसूर वाले हल्ला चाहे जितना करें, असल में वे गोवा का एक खास टुकड़ा चाहते हैं, पर परेशानी यह है कि कोई राजनैतिक दल उनका समर्थक नहीं है और वे आशा करते हैं कि १० वर्ष यों ही स्थिति

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहे, तो समर्थक बना लेंगे। चुनाव में गोमांतक दल की जीत निश्चित है और सचाई यह है कि विलय ही गोवा की समस्या का हल है। सात लाख की मनुष्य गणना का कोई स्वतन्त्र राज्य हो, यह सात करोड़ संख्या वाले उत्तर प्रदेश-मध्य प्रदेश जैसे राज्यों के रहते एक मजाक ही है। गोवा की समस्या पर शास्त्री जी ने जो रुख लिया है, उससे यह स्पष्ट हो गया है कि वे समस्याओं के बस्ते बांधकर रखने में विश्वास नहीं करते, उन्हें हाथों हाथ सुलझाने में विश्वास रखते हैं।

बंगलौर ने क्या कहा ?

बंगलौर में कांग्रेस महासमिति का जो अधिवेशन हुआ उसे इस अर्थ में ऐतिहासिक महत्व प्राप्त हुआ कि उसने १९६१ के चुनाव के बाद की स्थिति को अभी से स्पष्ट कर दिया। आज की स्थिति यह है कि श्री कामराज संगठन के अध्यक्ष हैं और श्री शास्त्रीजी शासन के। दोनोंमें सद्भावना और विश्वास है और दोनों मिलकर गाड़ी चला रहे हैं। दिसंबर में कांग्रेस के अगले अध्यक्ष का चुनाव होगा। उसमें यदि कोई ऐसा आदमी चुना जाए, जिससे यह सामंजस्य बिगड़े, तो इसका अर्थ होगा कि उत्तर-प्रदेश और पंजाब में कांग्रेस-संगठन और कांग्रेस शासन में जो जूता पैजार हो रहा है, वह केन्द्र में भी आरंभ हो जाए। इस लिए सोचा गया कि कांग्रेस के अध्यक्ष आगे भी कामराज जी हों और शासन के अध्यक्ष शास्त्री जी।

इसमें बाधा यह थी कि १९५९ में हैदराबाद कांग्रेस में यह प्रस्ताव पास हुआ था कि कोई पदाधिकारी एक बार से अधिक पद पर न रहे। बंगलौर में महा समिति ने यह संशोधन कर दिया है कि विशेष परिस्थिति में कार्य-समिति किसी को दूसरी बार भी पदाधिकारी होने की स्वीकृति दे सकती है। इससे श्री कामराज का मार्ग साफ हो गया है।

इस संशोधन का एक दूसरा पहलू भी था, जो बहुत ही महत्वपूर्ण है। नेहरू जी की मृत्यु के बाद बहुत लोगों का ख्याल है कि पार्लियामेंट की कांग्रेस पार्टी में श्री मुरार जी देसाई का निश्चित बहुमत था और यदि खुला चुनाव होता, तो मुरारजी भाई जीत जाते-प्रधान मंत्री होते, पर श्री कामराज ने चुनाव से इंकार कर दिया और थोड़े से मेम्बरों से बातचीत कर 'आम राय' को शास्त्री जी के पक्ष में घोषित कर दिया।

प्रश्न यह था कि संगठन के सदस्यों की मानसिक स्थिति अब क्या है ? क्या वे चुनाव के बाद अपना प्रधान मंत्री बदलना चाहते हैं ? बंगलौर में हैदराबाद प्रस्ताव के संशोधन पर मुरारजी भाई ने जो भाषण दिया, उसमें अपनी आत्मा की पूरी शक्ति उंडेल दी। उसकी मूल प्रेरणा यही थी कि लोग भय प्रलोभन से बचकर कहें कि हाँ, हम नेतृत्व में परिवर्तन चाहते हैं। सदस्यों ने भाषण को पसंद किया, पर साफ है कि उस पर हाँ नहीं की और इंकार कर दिया। मुरारजी का निमंत्रण बहुत तेजस्वी था पर शास्त्री जी के आकर्षण ने बाजी मार ली।

कहूँ, निर्विरोध प्रधान मंत्री चुना जाना शास्त्री जी के लिए इंट्रेंस की परीक्षा थी, तटस्थता सम्मेलन की यात्रा इंटर की परीक्षा थी, रूस-कनाडा-लन्दन की यात्रा बी. ए. की परीक्षा थी, तो बंगलौर की परीक्षा एम. ए. की परीक्षा थी और इसमें वे टॉप कर गए। शास्त्री जी ने कई रूपों में अपनी कला का प्रदर्शन किया। पहला यह कि अपने निश्चित बहुमत जानने के बाद भी उन्होंने मुरारजी भाई को मनालिया कि मतदान न हो, प्रस्ताव सर्व सम्मत रहे। दूसरा यह कि गोवा के प्रश्न पर भड़की हुई मैसूर की जनता के सामने कच्छ-गोवा के प्रस्ताव न लाकर कूटनैतिक ढंग से ताकत की कुश्ती को दाव की कुश्ती में बदल दिया। तीसरा यह कि बिना हाथ उठवाये ही गोवा के चुनाव की बात पर किसी न किसी रूप में सब की सहमति ले ली।

तो बंगलौर ने कहा कि श्री कामराज १९६६ में भी कांग्रेस के अध्यक्ष होंगे और श्री शास्त्री १९६७ में भी प्रधान मंत्री। दोनों का अभिनन्दन, पर इस निवेदन के साथ कि कांग्रेस और देश की आन्तरिक परिस्थितियां इतनी नाजुक हैं कि उन्हें तुरन्त न सम्भाला जाए, तो यह सम्भव है कि शासक दल के रूप में कांग्रेस के अंतिम अध्यक्ष श्री कामराज और अंतिम प्रधान मंत्री श्री शास्त्री जी हों। कामना है कि वे समय की परिस्थितियों को आंकें और वे शंखधर और चक्रधर सिद्ध हों।

—कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप साधारण स्तर की पत्र-पत्रिकाओं के पाठक होते तो मैं आपको साधारण बुद्धिवादी मान लेता, किन्तु जब आप 'नया जीवन' जैसी स्तरीय पत्रिका के पाठक और नियमित पाठक हैं तो मैं आपको अपने वर्गीकरण के अन्तर्गत जागरूक बुद्धिवादी मानता हूँ। यही कारण है कि मुझे यह सब लिखने को विवश होना पड़ रहा है। इस बात की आपसे क्षमा मैं नहीं मांगूँगा।

बड़ी सपाट बात करनी है आपसे। किसी भी प्रजातंत्र की नाप जोख उसके बुद्धिवादियों को आधार बना कर ही की जाती है। भारतीय प्रजातंत्र की सुरक्षा के लिये हम सभी ठेकेदार हैं और यदि इस प्रजातंत्र को हमने प्रश्नों के बीहड़ में इसी प्रकार भटकने दिया, या इन प्रश्नों का हम असाधारण बुद्धिवादी भी कोई उत्तर नहीं दे पाये तो मैं इसे एक अशुभ शकुन मानता हूँ। हमारा भटकना निश्चित है।

सवेरे उठकर मैं ब्रश लेकर दातून कर रहा हूं कि मेरे पड़ौसी एक कुम्हार आते हैं। तीसरे दर्जे का एक सुलझा हुआ व्यक्तित्व। परेशान हैं। बाजार में गये थे, दही लाने के लिये। शाम को सत्यनारायण भगवान का पूजन करवाना है, पंचामृत के लिये दही चाहिए। हाथ में खाली बर्तन है और अनाप शनाप गालियां बक रहे हैं। कहते हैं सारा बाजार छान मारा, मन माँगे पैसे देने को तैयार हूं पर कहीं दही नहीं मिल रही है। कैसा राज्य आया है। दादा परदादाओं ने जितनी मंहगाई नहीं देखी, उतनी हम देख रहे हैं। सत्य भगवान के पूजन को भी इस राज्य में दही मिलना कठिन हो गया।" उसी समय अपने हल बैल लेकर मेरा दूसरा पड़ौसी किसान खेत की ओर जा रहा है उसका साला बेटा भैंस की नंगी पीठ पर बैठा है। हाथ में ४०० रुपयों का ट्रान्जिस्टर है और उस पर लता मंगेशकर पूरी आवाज में गा रही है। मैं—इस देश का एक बुद्धिवादी—अवाक हूँ। कोई उत्तर मेरे पास कुम्हार काका के प्रश्न का नहीं है। मुंह मांगे पैसे देने पर भगवान की पूजा को दही नहीं मिल रहा है और भैंस की पीठ पर अबोध पीढ़ी ट्रांजिस्टर बजाती हुई खेत पर जा रही है।

एक पुरबिया मेरा पड़ौसी है। कम्बल बनाता है। सारे देश में उसके कम्बलों की मांग है। प्रसिद्ध कम्बल हैं उसके। भीषण गर्मियों में पसीना पसीना हो रहा है। कंधे पर अंगोछा पड़ा है। हाथ में अधजली बीड़ी का अद्धा और मुँह पर अनाप-शनाप अपशब्द। कहता है—"बेचारों को कम्बल चाहिये। अच्छा चाहिये। अब देख लो, सारा बाजार रौंद दिया है, लाई के लिये इमली के बीजे, चीयें चाहियें। सड़ी-सी चीज है। दो कौड़ी को कोई नहीं पूछता था। आज तीन रुपया किलो देने को तैयार हूँ तो भी कहीं नहीं मिल रहे हैं। कम्बल बनाऊं कैसे और ग्राहकों के पुरखों को रोऊं कैसे। इतनी मंहगी चीज लगानी पड़ती है और फिर जब कम्बल की कीमत २८ या ३० रुपया मांगता हूं तो सामने वाले की नानी मर जाती है। क्या जमाना आया है। न खाने को अनाज, न जलाने को लकड़ी, न पीने को दूध, घी को तरस रहा हूं, लाई के लिए कूंगचे मिलते नहीं है, भाई! ऐसा काल तो कभी नहीं देखा था। कैसा राज आया है। बात बात का काल।"

उसी समय उसका लड़का आकर उसके पांव छूता है। टैरेलिन की पतलून और टैरेलिन की ही कमीज। घुटी हुई दाढ़ी। हाथ पर टिटोनी घड़ी और जेब में विल्सन का कलम। कालेज के दूसरे साल में पास हो गया है। बाप-बेटे दोनों एक दूसरे से लिपट जाते हैं। मैं कभी बाप को देखता हूं कभी बेटे को। उसी समय ५ रुपये किलो का आम पाक बाजार से मंगवाया जाता है और पुत्र के परीक्षा में पास होने की खुशी में सारे मुहल्ले में बंटवा दिया जाता है और दोनों बाप बेटे अपने नये बन रहे मकान पर कारीगरों को हिदायत देने रवाना हो जाते हैं। मकान भी ऐसा वैसा नहीं, चूने का पक्का बन रहा है।

प्रजातन्त्र: प्रश्नों के बीहड़ में

—श्री राज राजेश्वर

१६ रुपये थैला देकर काले बाजार की सीमेंट खरीदी है और शानदार हवेली खड़ी हो रही है। मैं—इस देश का एक बुद्धिवादी—अवाक हूं। यह सब क्या हो रहा है? कैसे हो रहा है? क्यों हो रहा है?

आज लग्न का सबसे व्यस्त दिन है। गली गली दूल्हे और दुल्हनें दिखाई पड़ रही हैं। न बैंड वालों को फुरसत, न घोड़ा घोड़ी वालों को। पण्डितों की तो पूछो ही मत। बड़ी ही कठिनाई से पण्डितजी आते हैं पौन घण्टे में जैसे तैसे मंत्र वंत्र बोल बोल कर भांवर करा जाते हैं। ऐसे पण्डित प्रवर भी आज शाम और कल सवेरे तक चालीस-चालीस, पचास-पचास रु. गिरा लेंगे जिनको अपना नाम भी सही लिखना नहीं आता है। संस्कृत का पूरा श्लोक तो बड़ी मुश्किल बात है। हर शादी में एक प्रीति भोज, एक दावत और एक पार्टी। इधर गेहूँ का भाव आसमान पर, सौ रुपया क्विंटल भी दर्शन दुर्लभ। किसान के पास जाओ तो सीधा-सा जवाब देगा कि बरसात ही कम हुई, पैदा ही कहाँ हुआ? और व्यापारी के पास जाओ तो हंस कर व्यंग्य करेगा, कहेगा "ये सरकार अक्ल तो गिरवी रखे बैठी है। न धंधा करती है न करने देती है। अनाज बाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही कहां आया जो मैं आपको गेहूँ दूं। माफ करो बाबा।" इस पर तुर्रा यह कि तहसीलदार महोदय भी परमिट नहीं दे रहे हैं। फिर भी दावत हुई और आसानी से सिर्फ दो हजार आदमी गेहूँ और चने के पकवान डकार गये। पत्तल पर से उठते ही हर आदमी गाली बकता है, चिढ़ता है, खीजता है, कैसा राज आया है न खानेको शक्कर, न गेहूँ। न हुकुम न परमिट। दावत में स्वयं तहसीलदार शामिल हैं। मैं-इस देश का बुद्धिवादी—अवाक् हूँ। परेशान हूँ।

भोपाल से रेल में चढ़ने के लिये टिकिट घर पर जाकर एक एडवोकेट खड़े हुए। भारी भीड़। गाड़ी छूटने में केवल १५ मिनट शेष हैं। टिकिट का क्यू चींटी की चाल चल रहा है। वकील साहब का नम्बर आने में कम से कम भी ५ घण्टे लगेंगे। सामान गाड़ी में रखा जा चुका है। यात्रा जरूरी है। कल जरूरी मामले की पेशी है। भाग कर सीधे प्लेट फार्म पर आये और गार्ड महोदय से कह कर गाड़ी में बैठ गये। गार्ड ने कह दिया है कि गाड़ी चलने पर टी० टी० आयेगा और टिकिट बना देगा। वकील साहब के साथ कोई २५-३० लोग और इसी तरह बैठे हैं। मैं देख रहा हूँ। सारी रात गाड़ी चली। बड़ी सुबह एक टी० टी० ने आकर वकील साहब को जगाया और टिकिट मांगा। टी० टी० ने सारी बात सुन कर कहा "चलो गार्ड साहब से रूबरू हो जाईये। वे सर्टिफिकेट दे देंगे तो मैं केवल टिकट बना दूंगा वर्ना आपको डबल चार्ज देना होगा।" वही गार्ड, वही वकील और वही गवाह। अब गार्ड साहब हैं कि एक कुटिल मुस्कराहट के साथ वकील साहब को पहिचानने से भी ना कर देते हैं। टी० टी० डबल चार्ज की रसीद फाड़ देते हैं और वकील साहब विवश हैं कि बटुआ खोलें और रुपया गिन दें। मैं इस देश का बुद्धि वादी अवाक हूं, परेशान हूँ। कहिये क्या इलाज है?

गाँव के पास ही कहीं से एक स्वामी जी मारे भागे आ गये। अखाड़ा लगा, एक कमेटी बनी और महायज्ञ की घोषणा हो गई। ढोल नगाड़े बजने लगे। जाने कहाँ कहाँ से पण्डित सूरमा आ कर वेद मंत्र बोलने लगे और वेदियाँ रच कर आहुतियाँ शुरू हो गई। भीड़ का मेला कोई पचास हजार साठ हजार तक आ पहुँचा। आखिरी दिन भण्डारा हो रहा है, गंगा जल भरा जा रहा है और साँझ सवेरे एक लाख लोगों का खाना बन रहा है। शुद्ध घी स्वामी जी के चरणों पर डाला जा रहा है। स्वाहा हो रहा है। मैंने देखा कि हर राजनैतिक पार्टी का नेता उस मंच पर स्वामी जी के साथ बैठ कर सामने की भीड़ को अपनी बात कह रहा है। अपना-अपना कन्वैसिंग हो रहा है। कोई आजादी को गाली देता है, तो कोई सरकार को कोस रहा है कोई गांधी को भारत के देश के लिए वरदान कह रहा है तो नेहरू को गौ हत्यारा कह रहा है। कोई सीमा समस्या के लिए शास्त्री सरकार को कायर कह कर चीख रहा है। आरोप लगाया जा रहा है कि हमारे सिपाही बिना गोला बारूद और जूतों के बर्फ पर भेजे जा रहे हैं। भीड़ सुन रही है। स्वामी जी सबको आशीर्वाद दे रहे हैं। मैं यज्ञ कमेटी के लोगों से हिसाब की बात करता हूँ तो मुझे धर्म-विरोधी और गद्दार कहा जा रहा है। स्थानीय मदरसे के लिए चन्दा माँगने वालों को दुतकारा जा रहा है और सिपाहियों का गोला बारूद कुछ चोरी चोरी और कुछ सरेआम वेद मंत्रों के साथ डकारा जा रहा है। मैं-इस देश का बुद्धिवादी-अवाक् हूँ। परेशान हूँ। बताईये क्या करूं।

कल फूड इन्स्पेक्टर ने जांच पड़ताल के दौरान एक ग्वाले का पानी मिला दूध पकड़ लिया। दूध वालों में भगदड़ मच गई। दोषी ग्वाला हर राजनैतिक पार्टी के स्थानीय छोटे बड़े नेता के गांव पपोल आया। सौ रुपये का नोट हर दलाल और हर तिकड़मी के हाथों में फूड इन्स्पेक्टर के दरवाजे से चार बार लौट आया है। न वह रिश्वत लेगा न सेम्पल वापस करेगा। उसने निश्चय कर लिया है कि वह ग्वाले को न्याय के सुपुर्द कर देगा। नगर के सभी राजनैतिक और सामाजिक कार्यकर्ता अब पड़े हैं फूड इन्स्पेक्टर के तबादले के लिये सरकार के पीछे। उनका कहना है कि यह फूड इन्स्पेक्टर गरीबों का गला काट रहा है। उनकी रोजी रोटी से मखौल कर रहा है। मैं-इस देश का बुद्धिवादी परेशान हूं, अवाक हूं।

न्यायाधीश महोदय का तबादला हो गया। सारे नगर के लोगों ने उनको भावभीनी विदाई दी। लोगों ने भाषण दिये और विदाई समारोहों में उनके गुण गाये। ज्यों ही मजिस्ट्रेट ने गांव छोड़ा कि वे ही चारण भाट उसे रिश्वत-खोर और कसाई कह कर रोज बरोज गालियां दे रहे हैं। मैं इस देश का बुद्धि वादी परेशान हूं, अवाक् हूं।

मैं सोचता हूँ कि मेरी ही तरह हर बुद्धिवादी इस प्रजातंत्र में एक न एक प्रश्न के आगे खामोश है, अवाक् है। सारा ही प्रजातंत्र घिरा हुआ है प्रश्नों के बाहड़ में। न आगे राह दिखाई पड़ती है न पीछे लौटा जा सकता है। जो मार्ग हमारे पूर्वजों ने प्रशस्त किया था, उस पर भी प्रश्नों और प्रतिप्रश्नों की थूहर उग आई है। प्रश्न यह है कि हमारी खामोशी के कारण ये प्रश्न पैदा हो रहे हैं या इन प्रश्नों की पैदाईश के कारण हम बुद्धिवादी खामोश हैं। बुद्धिवादियों का एक बड़ा प्रतिशत इस समय किंकर्तव्य विमूढ़ है भगवान जाने आने वाली पीढ़ी के लिये इस बीहड़ में मार्ग कौन बनायेगा?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय की पाबन्दी

कोई भी काम उसके निर्धारित समय पर ही करना उचित होता है किन्तु हमारे देश में शायद इस समय की पाबन्दी पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता। सभा-सम्मेलनों में अक्सर देखा जाता है कि वे प्रायः सभी निर्धारित समय पर प्रारम्भ नहीं होते। उसमें भी आधे घण्टे की देरी को तो कोई देरी शायद मानी ही नहीं जाती।

यह तो हुआ सभा-सम्मेलनों का हाल। शादी विवाहों में भोजन के न्योतों का हाल इससे भी गया बीता होता है। वहां तो एक घण्टे की देरी को भी देरी नहीं माना जाता।

अभी हाल हीकी घटना एक व्यक्ति ने बताई। भोजन का न्योता था १०॥ बजे का। वे वहाँ पहुँचे १ बजे, किन्तु वहाँ कोई भोजन की तैयारी नहीं थी। २॥ बजे तक रुक कर वे बिना भोजन किये वापस आ गये, क्योंकि उन्हें ३ बजे काम पर जाना था। बाद में पता चला कि वहां ४ बजे भोजन हुआ।

अब देखिये, इसमें कितना समय व्यर्थ गया। फिर बार बार जाने आने की भी कठिनाई का सामना करना पड़ता है।

यह तो हाल हुआ नागरिक जीवन में समय की पाबन्दी का। अब देखें सरकारी कार्यालयों का क्या हाल है।

एक व्यक्ति ने जिला कचहरी का हाल बताया। वह ठीक १०॥ बजे से वहां किसी काम से गया था। साहब वहाँ १२॥ तक नहीं आये थे। जब वे आये तब भी तुरन्त उनसे भेंट नहीं हो सकी वे काम में लग गये। फिर घण्टे भर तक चाय की छुट्टी रही। बाद में जब साहब से भेंट हुई, तब उन्होंने कहा कि अब बहुत देरी हो गई है, अब यह काम नहीं हो सकता। उस व्यक्ति के यह बताने का अधिकारी पर कोई परिणाम नहीं हुआ कि वह १०॥ बजे से आया हुआ है। उसके कारण देरी नहीं हुई है।

इस घटना में, सम्भव है कि, कुछ अतिशयोक्ति हो, किन्तु इतना तो स्पष्ट है ही कि वहाँ के भी कार्यों में देरी होती है जिसका फल नागरिकों को भोगना है, जब कि उनका कोई दोष नहीं होता।

अभी अभी राजस्थान सरकार ने एक आदेश जारी करके देरी से आने वाले सरकारी कर्मचारी को दण्ड देने की घोषणा की है। इसमें यह भी कहा गया है कि इसके लिये वेतन की वार्षिक वृद्धि अधिक से अधिक तीन वर्ष तक रोकी जा सकती है।

सरकारी कर्मचारियों को समय पर कार्यालय आने के लिये बाध्य करने के उद्देश्य से जारी किया गया राजस्थान सरकार का आदेश प्रशंसनीय है, किन्तु सवाल यह उठता है कि उनका देरी से आना या न आना देखेगा कौन? उसके लिए अधिकारी को समय पर या समय से पूर्व कार्यालय जाना पड़ेगा।

अपने पढ़ने के कमरे में

अक्सर यह देखा जाता है कि सरकारी कार्यालयों के कर्मचारी तो समय पर आ ही जाते हैं, किंतु अधिकारी समय पर नहीं आते और जब तक अधिकारी नहीं आते, तब तक वहाँ काम शुरू नहीं होता।

अब सवाल यह है कि अधिकारियों के आने के समय की पाबन्दी की देख भाल कौन करेगा?

जनता अवश्य ही इसकी ओर देख सकती है और कुछ दोष दिखाई देने पर शिकायत कर सकती है, किन्तु अधिकांश लोग ऐसे कदम उठाने में डरते हैं।

इंगलैण्ड जैसे देशों में समय की पाबन्दी का जो वर्णन सुनने को मिलता है, वह बड़ा आश्चर्य जनक है। जहाँ कोई सभा है, वहाँ समय के पाँच मिनट पहले तक कोई दिखाई नहीं देगा। पाँच मिनट के अन्दर धड़ाधड़ मोटरें आकर सभा भर जायगी और ठीक समय पर सभा का काम शुरू हो जायेगा।

काश कि हमारे भारत में भी लोग ऐसी ही समय की पाबन्दी रखना सीखें।

('कर्मवीर' में श्री सम्पादक)

कौन ज्यादा गप्पी है?

यह आम धारणा पाई जाती है कि स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक गप्प लगाती हैं, परन्तु ब्रिटिश समाज-शास्त्री कुमारी मार्गरेट किलवर ने इस समस्या की शोध करके यह निर्णय किया है कि पुरुष न केवल बड़े गप्पी होते हैं, वरन् गप मारने में स्त्रियों से कई गुना अधिक बढ़े-चढ़े होते हैं।

कुमारी किलवर ने गप्पबाजी का एक विशेषज्ञ की रीति से अध्ययन किया है। उनकी आयु २९ वर्ष की है। वे एक अनुभवी, प्रशिक्षित, पर्यवेक्षक के रूप में इस विषय पर अपने विचार प्रकट करती हैं। वैज्ञानिक शोध के उद्देश्य से उन्होंने पूरे छः मास तक होटलों, भोजनालयों, थियेटरों, दूकानों, बस यात्रियों की पंक्तियों, रेलगाड़ियों और भीड़ में कान लगाकर लोगों की बातें और कानाफूसियां सुनी हैं।

सब मिलाकर उन्होंने २५० वार्तालाप सुने हैं। उनमें से आधे स्त्रियों और पुरुषों की बातचीत के रंग-ढंग में कोई परिवर्तन हो गया है। उन्होंने नोट किया कि उनके सुने हुए संपूर्ण १२५ पुरुष वार्तालाप कुल मिलाकर २७५५ मिनट तक जारी रहे। इस काल में गप्पबाजी १८५० मिनट तक रही। १२५ नारी वार्तालाप २५०० मिनट तक जारी रहे। उनमें गप्पबाजी ने ७०२ मिनट से अधिक नहीं लिए।

पुरुष व्यर्थ मूर्खतापूर्ण बातें करने में स्त्रियों की अपेक्षा इतना अधिक समय क्यों नष्ट करते हैं? कुमारी किलवर की धारणा है कि मूलतः पुरुष अपने आपको अधिक असुरक्षित समझते हैं। अपनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शोध के अन्तर्गत कुमारी किलवर स्पष्ट रूप से प्रकट करती है कि मुझे और किसी वस्तु से नहीं केवल वास्तविक और सच-मुच की गपशप बकवाद, कानाफूसियों व्यर्थ की बातें, और निराधार लोक प्रवादों के सुनने में ही दिलचस्पी थी। उन्होंने पता लगाया कि पुरुष और स्त्रियां दोनों इकट्ठे मिलकर शायद ही गप्पबाजी करते हों, परन्तु १३ वर्ष से लेकर १९ वर्ष की आयु तक के लड़के-लड़कियां इसके अपवाद हैं। पुरुष, जब दूसरे पुरुषों के साथ होते हैं तब शीघ्र ही दिल खोल कर गप्पबाजी आरम्भ कर देते हैं।

यह गप-शप प्रायः पदों या वेतन वृद्धि के सम्बन्ध में या सुने-सुनाए हंगामों गुलगपाड़ों या चालबाजियों आदि के सम्बन्ध में होती है। फिर यह भी मालूम हुआ कि चिन्ता और परेशानी के अवसरों पर गप्पबाजी और अधिक बढ़ जाती है।

पुरुषों के मन भाते विषय अपनी नौकरियों या पद अपने सहकारी, अपने स्वामी, अधिकारी या दूसरे लोग मैं-तू होते हैं। स्त्रियों के अधिक प्रिय विषय होते हैं। घरेलू जीवन, स्त्री-पुरुष सँबंधी समस्याएं, बाल-बच्चों के दुखड़े, वस्त्र-परिधान और रुपये पैसे के झगड़े। उनकी बातों में पुरुषों की चर्चा क्वचित ही होती है।

पुरुष स्त्रियों से अधिक बकवाद क्यों करते हैं? इसका एक कारण यह है कि स्त्री अधिक उन्नतिप्रिय बनती जा रही है, वह समता की दौड़ लगाने लगी है। यह बात पुरुषों को खलती है। मनुष्य अपना महत्व और उच्चता बनाए रखने के लिए दूसरों के सामने धौंस जमाने लगता है।

स्त्रियां पुरुषों की चर्चा इस कारण कम करती हैं क्योंकि उनमें पुरुषों के प्रति दिलचस्पी कम होती जा रही है और अब उनमें अपनी श्रेष्ठता का भाव उत्पन्न होने लगा है। वे इतनी प्रगल्भ होती जा रही हैं कि पुरुषों को अपने सामने कुछ समझती ही नहीं। कुमारी किलवर ने इस बात पर विशेष रूप से ध्यान दिया कि पुरुष अपने वार्तालाप में कई गुना अधिक असावधान होते हैं, वे जल्दी ही अधिक बेतकल्लुफ हो जाते हैं और अपनी घरेलू बातें सबके सामने कहने लगते हैं, जबकि कितनी ही बकवादिनी होते हुए भी स्त्रियों में किसी अंश में गोपनीयता रहती ही है।

['हिन्दुस्तान' में श्री संतराम]

चरित्र और तप

पाटलिपुत्र का सामंत स्थूलिभद्र। सौन्दर्य और प्रेम का उपासक। नगरवधू कोशा के नूपुरों में बंधा हृदय, मदिरा के चषकों में लहराता यौवन। सुनिद्य सुन्दरी कोशा और सामंत स्थूलिभद्र, पाटलिपुत्र में एक दूसरे के पर्याय बन गये।

किन्तु, अन्त में विवेक ने ठोकर मारी और स्थूलिभद्र में विराग जगा। नगरवधू कोशा की अट्टालिका से उठकर वह एक जैन सन्त के आश्रम में जा बैठा। ध्यान, धारणा और समाधि में लीन उसका जीवन परिवर्तित हो गया।

चातुर्मास आया तो जैन संत ने अपने शिष्य को व्रत निर्वाह हेतु भयंकर स्थानों में भेजना प्रारम्भ किया—एक को नागराज की बाँबी के निकट, दूसरे को सिंह की गुफा में और स्थूलिभद्र को कोशा की अट्टालिका में।

स्थूलिभद्र अतीत की प्रेयसी के निकट चार मास रहा—पावस की झड़ियाँ, कोशा की अट्टालिका और स्थूलिभद्र। किन्तु, वह सच्चे अर्थों में विरागी हुआ था। उसका मन कमल वासना पंक में भी अलिप्त रहा।

शिष्यों के लौटने पर जैन सन्त ने कहा, 'स्थूलिभद्र सर्वश्रेष्ठ है, उसकी तपस्या वंदनीय है।'

सिंह की गुफा से लौटे शिष्य ने दंभ से ओंठ सिकोड़े, 'स्थूलिभद्र ने क्या तपस्या की। ऐसा तप तो मैं सहस्र बार कर सकता हूँ।'

जैन सन्त मौन रहे। अगले चातुर्मास उन्होंने दम्भी शिष्य को कोशा की अट्टालिका भेजा।

शिष्य गया और पहली ही रात नगरवधू के विलासबाणों से विध कर निरीह हो रहा। तप से उद्धत योगी वाराँगना के चरणों में प्रणय की भिक्षा मांगने लगा।

कोशा ने निर्दय स्वर में आज्ञा दी, 'इस रूप का पान करना चाहते हो तो शुल्क दो।'

'मैं अपरिग्रही शुल्क कहाँ से लाऊं?' तपस्वी ने निरीह स्वर में कहा।

'सुना है नेपाल देश का शासक भिक्षुओं को नेपालकम् बांटता है। तुम जाकर वही ला दो।'

कामार्त तपस्वी गहन वनों को पार करके नेपाल गया और वहां से नेपालकम् रत्नजटित कम्बल ले आया।

नगरवधू सरोवर में स्नान कर रही थी। तपस्वी नेपालकम् लिये सीधे सरोवर की ओर गया। कोशा ने कठिन परिश्रम से लाये उस वस्त्र को लिया और उपेक्षा पूर्वक उससे अपने पैरों का मैल पोंछने लगी।

'देवि, मैं कितने प्रयत्न से तुम्हारे लिए यह वस्त्र लाया और तुम इससे मैल पोंछ रही हो। तपस्वी का स्वर करुण हो उठा।'

'उचित ही तो कर रही हूँ।' कोशा सरल भाव से मुस्करा दी, 'मलिन वस्त्र से मैल पोछना क्या अनुचित है।'

'मलिन वस्त्र।'

'हां, मलिन वस्त्र। इसमें एक तपस्वी के दुखांत जीवन का समस्त मल निहित है। एक तपस्वी ने अपने उज्ज्वल चरित्र को भ्रष्ट कर इसे पाया है। क्या अब भी तुम इसकी मलिनता नहीं देख पाये?'

तपस्वी मौन रह गया।

('भारती' में श्री नरेशचन्द्र मिश्र)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम बहाना क्यों बनाते हैं ?

◇ अखिलेश ◇

दस का घंटा बजे काफी देर हो चुकी थी और लाजपत भाई के आने का कोई सवाल उठता ही न था; क्योंकि वे उनमें हैं, जो दस बजे की जगह हमेशा साढ़े नौ बजे ही अपने 'बॉस' को जा नमस्ते करते हैं। फिर भी लड़के ने आकर कहा कि वे आए हैं, तो कहना पड़ा कि भेज दो उन्हें यहीं। और थोड़ी ही देर में अपनी आदत के अनुसार पैरों से धम धम जमीन कूटते-से वे आकर खड़े हो गये, जैसे आदमी न हों, कोई लम्बा सतून हो।

मैंने एक बार उनकी तरफ देखा और एक बार दीवार पर टिक टिक करती घड़ी की तरफ, तब पूछा—'मेरी घड़ी खराब है या सूरज की रफ्तार में कोई उथल-पुथल हो गई है, जो श्रीमान जी इस समय अपने चक्कर से बाहर हैं ?"

बोले—"भाई, न आपकी घड़ी में कोई खराबी है, न सूरज की रफ्तार में कोई उथल पुथल है, पर आपसे बहाना क्या बनाना, सच बात यह है कि कभी यह भी जी चाहता है कि बहाना बनायें, सो बात कुछ न थी और आदत के मुताबिक आँख ठीक साढ़े छह बजे खुल गई थी, पर आज जाने क्या बात हुई कि आँख के साथ मन नहीं खुला और यों पड़े रहे जैसे लम्बी नौकरी के बाद पेंशन मिलने का आज पहला दिन हो। सात बजे श्रीमती जी ने आवाज दी तो हम दम साध गये और जब नौबत हिलाने डुलाने पर पहुंची तो कह दिया कि आज तबियत ठीक नहीं है।"

"तबियत ठीक नहीं है ? क्या बात है ?" उन्होंने घबराकर पूछा, तो उनकी यह घबराहट हमें बड़ी सुहावनी लगी और हमारी आँखें, जो थोड़ी बहुत ताक झाँक कर रही थी, उससे भी बाज आई और पूर्ण सुषुप्ति का आनन्द लेने लगीं।"

"वाह साहब, वाह, यह भी खूब रही कि वे बेचारी परेशानी में अस्त व्यस्त और आप समाधि में मगन—बड़े कठोर हैं आप ?" मैंने कहा, तो बोले—"दूसरे की परेशानी में आनन्द लेना बहुत गहरी फिलासफी की बात है पर इसे आप जैसे लोग नहीं समझ सकते। जी हाँ, इसे समझने के लिए राजनीति शास्त्र और प्रेमशास्त्र के गहरे ज्ञान की जरूरत है।"

"दूसरे की परेशानी में आनन्द लेना बहुत गहरी फिलासफी की बात है ? खैर यही सही, पर जरा मुझे भी तो समझाइए अपनी यह फिलासफी !" मैंने कहा, तो बोले लाजपत भाई—"हांजी, फिलासफी की यह गहरी बात है कि इसमें उतरो तो उतरते जाओ पृथ्वी से पाताल तक और फिर भी हाथ में रहे ओर ही और छोर का कहीं पता न चले, पर चाहो, तो झट पूरी बात इस तरह समझ में आ जाए, जैसे सामने फुदकती मेंढकी मुट्ठी में आ जाती है। लो, गहराइयों में मत उतरो और यह बताओ कि थकामान्दा लीडर जल्से में भारी भीड़ देखते ही ताजा हो, क्यों चहकने लगता है ? और पसीने में लथपथ नर्तकी 'वंसमोर' की तालियाँ सुनते ही क्यों थिरक उठती है ? अरे भाई सौ, बातों की एक बात यह है कि आदमी जीता है अपनी अक्ल से, अपने पुरुषार्थ से, पर अपनी सफलता आँकता है इस बात से कि दूसरों की उसमें कितनी दिलचस्पी है, दूसरे उसकी कितनी चर्चा करते हैं, तो बस जब श्रीमती जी ने चौंककर, तड़क कर, परेशान होकर हमारा हाल चाल पूछा, तो हमें अपने बारे में उनकी गहरी दिलचस्पी दिखाई दी और बस हमारा बहाना खुशबू से महक उठा और हम आठ बजे तक यों करवटें बदलते रहे, जैसे करवट बदलना ही जीवन का परम सुख हो। अब कहो, यह फिलासफी तुम्हारी समझ में आई या नहीं ?"

मैं लाजपत भाई की तरफ देख ही रहा था कि सामने की खिड़की से हमारे पड़ोसी वकील साहब की भीम गर्जना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुनाई दी—"क्यों बे नालायक, तुझे कॉलिज भेजा, आर्ट में ग्रेजूएट होने के लिए, पर तू हो गया बहानेबाज़ी में ग्रेजूएट कि आज, कल, परसों, रोज़ नया बहाना और रोज़ नया बहाना क्या, बस बहाना ही बहाना। सच बता, तेरे दिल में क्या है? तू इस घर में रहना चाहता है या नहीं!"

उनकी डाट-फटकार पूरी हुई, तो मैंने लाजपत भाई से कहा—"जाइए, अच्छा भाग्य है आपका कि बहाना करने पर भी ऐसी डाट-फटकार नहीं पड़ी आप पर। धन्यवाद दीजिए ईश्वर को कि हमारी भाभी जी वकील साहब की तरह गरम नहीं हैं।"

"जी, आपकी भाभी जी कुम्हार के आवे की तरह गरम हों या आलू बुखारे की तरह नरम, मुझ पर डाट पड़ ही नहीं सकती।"

"क्यों? आप पर डाट क्यों नहीं पड़ सकती?"

"जी, मुझ पर डाट इसलिए नहीं पड़ सकती कि मैं बहाना करता हूं, बहाने बाजी नहीं और लो, लगे हाथों इन दोनों का फर्क भी समझ लीजिए कि बहाना है एक कला, एक आर्ट और बहाने-बाजी है एक ऐब—एक लत, जैसे कबूतर-बाज़ी या पतंग बाज़ी।"

"लाजपत भाई, यह तो आपने बड़ी बारीक बात कही, पर ज़रा इसकी व्याख्या तो करो, जिससे पूरी बात दिल में इस तरह फिट हो जाये, जैसे चौखटे में तस्वीर।"

"इस बात की व्याख्या? व्याख्या करने की ज़रूरत नहीं, क्योंकि वह लोक-कथा में पहले से ही सुरक्षित है।

लीजिए सुनिए—बूढ़ा चौधरी हरबंसा कुछ तो जला मिराड़ था ही, पर जब से उसे टाइफाइड हुआ और भी चिड़-चिड़ा होगया था। बहू-बेटों पर रोज़ तना रहता, बड़बड़ाता, कोसता और भाग जाने की धौंस देता। बहू बेटे भले थे; मनाते, खुशामद करते और बैठा लेते, पर बहानेबाज़ी की तरह धौंसबाजी रोज की बात होगई, तो एक दिन बहू बेटे भी ऊब गये, उन्होंने साफ कह दिया कि तुम्हें रहना हो तो रहो और जाना हो तो जाओ।

अब कोई रास्ता न था। हरबंसा लाठी टेकता खेत की मेंढ पर जा बैठा। भरोसा था कि सबके साथ घर से उसका भी खाना आएगा, पर नहीं आया। सबने खाया, वह भूखा रहा और यों ही शाम हो गई। उसे पक्का भरोसा था कि उसे भी घर चलने को कहा जायेगा, पर बेटे उसके पास से निकले और इशारा तक न किया। रात की भूख और अकेलापन उसके सामने घिर आया और तब उसने सामने से जाती अपनी भूरी भैंस की पूँछ पकड़ ली और कहने लगा—"ना, भूरी, ना, तू क्यों मुझे घसीट रही है। मैं यहीं मर जाऊंगा, पर इनके घर न जाऊंगा। अरी, कह रहा हूँ कि छोड़ दे मुझे; मैं उस घर में जाने से मरना ही ठीक समझता हूँ।" और बस यों ही कहते-कहते वह घर में घुस आया।

हाँ जी, घुस आया, पर बताओ भाई, यह कोई बहाना है कि भैंस की पूँछ खुद पकड़ ली और कहने लगे—छोड़ दो, छोड़ दो।

चन्दरसैन को तो जानते हो? हाँ हाँ, वही जो हमारी गली के नुक्कड़ वाले मकान में ऊपर रहता है। रोज घर में लड़ता और पत्नी को जहर खाने की धौंस देता। एक दिन पत्नी ने कहा—"मेरे भाग्य में जब विधवा होना लिखा ही है, तो तुम देर न करो, आज जरूर जहर खालो।" चन्दरसैन तमकता-धमकता बाजार गया और एक पुड़िया हाथ में लिए लौटा। किसी ने उससे बात न की, तो अपने कमरे में जा लेटा। रात तक जब उसके पास कोई न आया तो उठकर आया और पुड़िया को आग में फेंक कर बोला—'बहुत तेज जहर लाया था, पर जा, इसलिये नहीं खाया कि तुझे रंडापा काटना मुश्किल हो जायेगा।' सुनकर सब हँस पड़े। क्या मतलब इस हँसी का? यही कि बूढ़ा हरबंसा, वैसा जवान चन्दरसैन, दोनों ही तुक्के को तीर कहने वाले हैं। टाँय-टाँय फिस्स। बहाना वह, जो तीर की तरह निशाने पर बैठे, जैसे हमारा बैठा!"

बहाना माने बहा देना। हरद्वार में देखा है, लोग शाम को पत्ते के दोने में दिया जलाकर उसे गंगा में बहा देते हैं। दौना पानी में रखा कि सामने से चला। मसला, समस्या, गाँठ, पेंच जो सामने है, वह सामने न रहे, सामने से बह जाये, तब है बहाना।

लाजपत भाई की बात सुनकर मैंने कहा—"आप तो, मालूम होता है बहाने की कला के आचार्य हैं?"

सुनकर बोले—"ना, आचार्य तो इस कला का एक बन्दर!"

"बन्दर? क्या कहा कि बहाने की कला का आचार्य था एक बन्दर? वह कैसे?"

पुरानी कहानी है कि एक तालाब के किनारे एक पेड़ था और उस पर एक बन्दर रहता था। तालाब में एक मगरमच्छ भी रहता था। दोपहर को वह पानी से निकल किनारे पर लेट जाता और बन्दर से बात करता रहता। दोनों में गहरी दोस्ती हो गई। मगरमच्छ ने एक दिन अपनी इस दोस्ती की बात अपनी मगरमच्छी से कही। अरे साहब, वह तो सुनते ही होट चाटने लगी, चपक्के लेने लगी और बोली—मैं बन्दर से बन्दर का कलेजा खाने को बेचैन हूँ और तुम रोज बन्दर से बातें छोंकते हो? (कृपया देखिये पृष्ठ २१७ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

◇ श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

हम इतिहास से शिक्षा लें !

३० अप्रैल १९४३

मेरी डायरी के पन्ने पर लिखा है—"आज रायबहादुर साहब के घर गया था। तबियत उनकी ठीक न थी, तो भीतर अपने कमरे में ही बुला लिया मुझे। अंग्रेज सरकार के दाहिने हाथ हैं रायबहादुर। उनका तन-मन ही नहीं, आत्मा तक अंग्रेज-परस्त है। वे पूरी ईमानदारी से मानते हैं कि अंग्रेज-सरकार न हो, तो भारत उजड़ जाए। उन की बातचीत घूम फिर कर जिले के पुराने कलक्टरों पर आ जाती है। यहाँ तक कि उनकी स्मृति के सन्-सम्वत् भी कलक्टरों के साथ ही नत्थी हैं। यह गाड़ी तब खरीदी थी, जब ग्रांट साहब कलक्टर थे और कोठी का यह हिस्सा तब बनवाया था, जब कुक साहब कलक्टर थे।

उन्हें सबसे ज्यादा खुशी तब होती है, जब वे कहते हैं—उस दिन जिले भर के बड़े लोग कलक्टर के यहाँ हाजिर थे। रामलीला की बात चल रही थी और कलक्टर साहब गरम हो रहे थे। राय बहादुर को उन्होंने डाँटा, राय साहब··· को उन्होंने झिड़का। मुझसे बर्दाश्त न हुआ, तो मैंने उन्हें गरमाया और साफ कह दिया कि कलक्टर साहब, हम लोग आपके दोस्त हैं, दास नहीं। हमारी एक हैसियत है, पोजीशन है, इज्जत है, हम उसे बेचने के लिए आपके बंगले पर नहीं आते। हममें कई आदमी तो ऐसे हैं, जिनके पान का खर्चा आपकी तनखाह से ज्यादा है। बस एकदम ठंडा पड़ गया कलक्टर और 'वैल रायबहादुर—वैल राय बहादुर' करने लगा।

'वैल राय बहादुर' का उच्चारण वे इस तरह करते हैं, जैसे वे रायबहादुर न हों और स्वयं कलक्टर हों। सचाई यह है कि वे अंग्रेजमय होकर जी रहे हैं और चौबीस घंटे रायबहादुर रहते हैं; यहां तक कि उनकी पत्नी भी उन्हें रायबहादुर ही कहती है। उनके पास बैठकर मैंने सोचा—जिस दिन अंग्रेज भारत से जायेंगे, रायबहादुर साहब को न खाने में स्वाद आयेगा, न पूरी नींद आएगी, जाने कितने दिन खोये-खोये-से रहेंगे।

कमरे की सजावट को देखते हुए मेरा ध्यान इस बात पर गया कि तस्वीरों के साथ ही सुन्दर और कीमती सुनहरे चौखटों में जड़े उनके सात उपाधि-पत्र और प्रमाण-पत्र भी लगे हुए हैं। उपाधियां उन्हें मिली हैं सम्राट की तरफ से और प्रमाण पत्र दिये हैं हिज ऐक्सीलेंसी गवर्नर ने। मुझे लगा कि ये चौखटे ही इनके जीवन भर की कमाई हैं। मन में प्रश्न उठा—आखिर ये हैं क्या? उत्तर मिला—ये इनकी राजभक्ति के उपहार हैं।

बहुत भीतर से प्रश्न उमड़ा—और यह राजभक्ति क्या है? देशद्रोह! और तब उसकी यह व्याख्या—१८५७ के राष्ट्रीय स्वातंत्र्य विप्लव में जिन लोगों ने देश द्रोह किया, उन्हें इनाम में जमीदारियाँ मिली, ताल्लुके मिले और राजभक्ति की सनदें मिलीं। उन सनदों को दिखा दिखाकर इन लोगों ने पिछली पौनी शताब्दी तक अंग्रेज सरकार से अपने लिये अच्छे पद, अपने बेटों के लिये अच्छी नौकरियाँ और दूसरे लाभ वसूल किये। अंग्रेज-सरकार से भारत की गुलामी का समर्थन पाने के लिये अपनी कूटनीति से इन्हें समाज में चौधरी बना दिया; ऐसे चौधरी, जो आम जनता को नगण्य और दब्बू बनाकर स्वयं अग्रण्य बने रहें।

यही समय आज भी चल रहा है और राय बहादुर साहब ने जिस शान से इन सनदों को शीशे में लगा रखा है, उससे यह बात एकदम स्पष्ट है कि राय बहादुर और उनके दूसरे साथी यह मान कर जी रहे हैं कि यही समय अनन्त काल तक चलता रहेगा—भारत के पैरों में गुलामी की बेड़ियां सदा यों ही पड़ी रहेंगी। कितने अंधे हैं ये कि नहीं देखते कि वह समय भी आ रहा है, जब ये उपधि-पत्र और सनदें छपाने की—शान से दिखाने की नहीं, छिपाने की—देख कर लज्जित होने की चीज हो जाएंगी और सम्भव है ये प्रमाण पत्र ही इस बात के भी प्रमाण पत्र माने जाएं कि इन देश द्रोहियों में से किसे कितना दंड दिया जाए। मनुष्य इतिहास को बार बार भूलता है, इसीलिए तो इतिहास अपने को बार बार दोहराता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३० जुलाई १९४७

मेरी डायरी के पन्ने पर लिखा है—"आज सुबह ही सुबह एक भारी-भरकम आवाज सुनकर मैंने अपनी कोठरी का द्वार खोला, तो देखा राय बहादुर साहब खड़े हैं, एकदम टिपटाप—मंजे सजे। अभिवादन कर उन्हें भीतर लिया, तो बोले—एक खास मतलब से तुम्हें इस समय तकलीफ दी है, कलम उठाओ और मुख्यमंत्री पंडित गोविन्द वल्लभ पन्त के नाम मेरी तरफ से पत्र लिख दो कि मैं अपना राय बहादुरी का खिताब वापस कर रहा हूँ।

मैंने उनकी तरफ भौंचक हो देखा, तो बोले—ये सब गुलामी की निशानियां हैं और अब भगवान की दया से हमारा देश आजाद हो रहा है तो कौन इस मरे सांप को गले में डाले फिरे।

जरा चुप रहे और नई जमीन पर अपने उखड़ते पैर जमाते हुए-से बोले—तुम तो जानते हो कि मैं हमेशा ही आजाद दिमाग का आदमी रहा हूं और जब जिले भर के बड़े आदमी कलक्टर के सामने कांपा करते थे और उसक बूट चाटते थे, मैं देश की बात पर उसे डाट दिया करता था।

फिर जरा चुप रहे और गहराई से लड़खड़ाकर छड़ी के सहारे टिकते हुए-से बोले—तुम तो जानते हो कि जब महात्मा गान्धी जी यहां आये, तो मैंने उनकी थैली के लिये काफी रुपये दिये थे। बड़े आदमियों की एक मीटिंग में कलक्टर ने मुंह चढ़ा कर पूछा—"वैल राय बहादुर, तुमने गांधी को दौलत दिया ?" मैंने तड़ाक से कहा—हां, दौलत भी दिया और उनका दर्शन भी किया। गुर्राकर कलक्टर बोला "किस माफक वैल राय बहादुर ?" मैंने भी गुर्राकर ही कहा—इस माफक कि वे हमारे देश के नेता हैं और हमारे देश की आजादी के लिए तप कर रहे हैं। सुनकर कलक्टर तो ठंडा हुआ ही, दूसरे खुशामदी रईस भी झक हो गये।

यह भूमिका पूरी कर राय बहादुर साहब असली पुस्तक पर आ गये-भैया, पत्र इस तरह लिखना, जिससे यह मालूम पड़े कि मैं हमेशा ही देश के साथ रहा हूं।

मैंने उनके मतलब का पत्र लिखकर उनके पास पहुँचाने का वादा किया और वे चले गये। दोपहर को मैं उन्हें पत्र देने गया, तो मुझे भीतर ही बुला लिया उन्होंने। उनका बड़ा कमरा लिप-पुत गया था और दूसरे कमरों में लिपाई-पुताई हो रही थी। बोले—यह सब १५ अगस्त के लिये करा रहा हूँ। उस दिन बहुत शानदार रोशनी करूंगा। अरे भाई, यह दिन तो बड़े भाग्य से आया है। उनका कमरा आज नये ढंग से सजा था और पंचमजार्ज की जगह गाँधी जी की तस्वीर लगी हुई थी। सहसा मेरा ध्यान इस बात पर गया कि आज वे उपाधि-पत्र और प्रमाण-पत्र भी दीवार पर नहीं थे वहाँ से हटा दिये गये थे।

घर लौट कर मैंने अपनी १९४३ की डायरी देखी, जिसके ३० अप्रैल १९४३ के पृष्ठ पर लिखा है—कितने अंधे हैं ये कि नहीं देखते कि वह समय भी आ रहा है, जब ये उपाधि-पत्र और सनदें छपाने की-शान से दिखाने की नहीं छिपाने की, देखकर लज्जित होने की चीज हो जायेंगी।

पढ़ कर मन विचारों से भर गया और मुंह से निकल पड़ा—हे भगवान, कुल चार साल और तीन महीने बाद ही वह समय आ गया कि उन उपाधि-पत्रों और सनदों को छिपाया जा रहा है और वापस किया जा रहा है। मनुष्य समय की गति को कितना कम जानता-पहचानता है !"

रायबहादुर और खानबहादुर के इन प्रमाण-पत्रों को प्राप्त करने में जाने कितने लोगों ने अपनी कीमती जिन्दगियां खत्म कर दीं और जाने कितनों ने लाख की राख बना दी, पर १५ अगस्त का सूरज निकलने से पहले ही ये प्रमाण-पत्र रद्दी के कागज का टुकड़ा हो गये। किस में कितना तत्व है और किसे हम कितना महत्व दें, इसे आँकने में मनुष्य बार-बार चूकता है और बार-बार ठोकर खाता है।

भारत की स्वतन्त्रता के बाद क्या हमने, भारतवासियों ने यह समझ लिया है कि किसमें कितना तत्व है और किसे हम कितना महत्व दें ? बटवारे के बाद जो लोग हमारे नगर में आ बसे, उनमें एक सरदार जी भी हैं। इस तरह के लोगों में कुछ आँसुओं के नद थे, तो कुछ दहकते अंगार। जिस हालत में और जो कुछ देख-भोगकर वे लोग आये थे, उसमें यही स्वाभाविक था, पर वे सरदार जी न नद थे, न अंगार; एक शान्त जन थे। सेवा का कार्य करते-करते ही उनसे परिचय हुआ और घनिष्टता हो गई।

एक दिन बातों-बातों में बोले—"कान पकड़कर दो कसमें खाई हैं। पहली यह कि बड़ा मकान कभी नहीं बनाना और दूसरी यह कि रुपये कभी नहीं जोड़ने। बस, इज्जत आबरू के साथ जरूरतें पूरी होती रहें, यही ठीक है।"

क्यों, ऐसी कसमें क्यों खाई आपने ? मैंने पूछा तो बोले—"एक-दो नहीं, बाईस कमरों का मकान बनवाया था और रुपयों से चबच्चे भर दिये थे, पर क्या हाथ लगा ? एक झपट्टे में सब कुछ चला गया। हालात ने जो सबक पढ़ाया है, उसे याद रखना ही ठीक है।"

सुनकर उनकी शांति का रहस्य हाथ आ गया और उनके दिमागी सन्तुलन के प्रति मन में आदर का भाव भी पैदा हुआ—खूब आदमी है। कुछ दिन बाद मैं दिल्ली गया, तो स्टेशन पर सरदार जी मिले और मेरठ तक साथ रहे। दूसरी तीसरी बार भी ऐसा ही हुआ, तो पूछा—क्या बात है ? बोले—"क्या बताऊं, मोटर लाइसेंस के चक्कर में चक्कर काट रहा हूँ और रुपये की जो हड़क दब गई थी, वह फिर उभर आई है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कुछ दिन बाद देखा कि कोठियाँ उनकी बन गई और नई पासबुक भी काफी भारी है। पास बुक को भारी करने में वे अकेले नहीं हैं-हम सब इसी काम में तो जुटे हुए हैं। सौ वाला हजार, हजार वाला लाख और लाख वाला लाखों जोड़ने में लगा हुआ है। इस काम में हम सब इस तरह डूब गये हैं कि न मर्यादा रही, न सीमा रही, न औचित्य रहा, न पाप-पुण्य का विचार रहा और न देश का हित रहा। हम खाने की और चिकित्सा की चीजों में मिलावट करके भी रुपया बनाने में नहीं झिझकते और देश का रहस्य दुश्मनों के हाथ बेचकर रुपया कमाने में भी। नतीजा यह कि समाज के पूरे ढांचे पर यह चरमराहट छा गई है। परमात्मा और भारत माता, दोनों की जगह पास बुक आज भी है।

और यह सब कब हो रहा है? तब, जब कि देश समाजवाद का लक्ष्य घोषित कर चुका है और उसकी तरफ कई बड़े-बड़े कदम उठा चुका है—कहें, काफी आगे बढ़ चुका है। जो लोग पासबुक की पूजा में जुटे हुए हैं, क्या वे समझते हैं कि लोकतंत्री समाजवाद को वे समाप्त कर देंगे? या देश इस लक्ष्य को छोड़ कर कोई दूसरा लक्ष्य स्वीकार करेगा, जिसमें पासबुक देखकर ही मनुष्य का महत्व आंका जाएगा? न, यह बात नहीं है और बात यह है कि पुराने राय बहादुरों, खान बहादुरों ने जैसे उन उपाधि-पत्रों और सनदों को अमर मान लिया था, वैसे ही आज के धन-प्रेमियों ने इन पासबुकों को अमर मान लिया है। वे लोग जैसे यह भूल गये थे कि एक ऐसा दिन आने वाला है, जब ये सनदें प्रदर्शनीय नहीं, अदर्शनीय हो जायेंगी, वैसे ही ये पासबुक प्रेमी भी यह भूल रहे हैं कि शीघ्र ही एक दिन आने वाला है, जब ये पासबुकें भी उन सनदों की तरह मंडनीय नहीं, दंडनीय हो जायेंगी। यही नहीं, शायद यह भी कि इन पासबुकों का आकार-प्रकार देख कर ही यह निर्णय होगा कि किसे किस आकार-प्रकार का दण्ड दिया जाए।

समय का तकाजा है कि हम इतिहास से शिक्षा लें और यह न भूलें कि हम इतिहास की बात नहीं सुनते, इसी से बार बार वह बेचारा अपने को दोहराने के लिए मजबूर होता है। ❀

(पृष्ठ २१४ का शेष)

मगरमच्छ ने कहा—पगली वह तो मेरा दोस्त है। सुनते ही मगरमच्छी आसनपाटी लेकर पड़ गई। न खाना; न पीना, न बोल, न चाल, न प्यार न प्रीत!

मगरमच्छ ने बन्दर के पास जाकर कहा—"तुम्हारी भाभी ने खाना पीना छोड़ दिया है और कहा कि तुम रोज देवर जी के घर जाते हो, पर एक दिन उन्हें अपने घर नहीं लाये। वे क्या सोचते होंगे कि ये कितने घटिया लोग हैं!"

बन्दर भाभी के घर जाने को तैयार हो गया और मगरमच्छ की कमर पर जा बैठा। पूरे पानी में पहुँचकर मगरमच्छ ने कहा-तुम्हारी भाभी ने तुम्हारा कलेजा खाने को बुलाया है। माफ करना, मैं उसके गुस्से से मजबूर हूं यार!

सुनकर बन्दर हंसा, बोला—"तुम भी पूरे बेवकूफ हो। यह बात मुझ से वहाँ क्यों नहीं कही। मेरा कलेजा तो वहीं पेड़ की खोखर में रक्खा है, अब भाभी को मैं क्या दूंगा, तुम्हारा सिर?"

मगरमच्छ उसकी बातों में आ गया और किनारे पर लौट आया। बन्दर कूद कर पेड़ पर चढ़ गया और मगरमच्छ से बोला, "भाग बेवकूफ, अब यहां कभी मत आना।

अब कहो वह बन्दर बहाना-कला का आचार्य था या नहीं कि घर आई मौत लौट गई और वह मौत के घर से लौट आया। इसकी बारीकी समझो और बारीकी यह है कि धूर्त मगरमच्छ को बन्दर की बात का विश्वास कैसे आ गया? बात यह थी कि बन्दर ने अपनी बात इतने गहरे आत्म विश्वास से कही कि मगरमच्छ का संशय उसमें दब गया। तो बहाने की कला का मूल सूत्र ही यह है कि रोज बहाना मत करो हमेशा एक ही तरह का बहाना मत करो और जब करो, तो पूरे आत्म-विश्वास से करो कि वातावरण में संशय के अंकुर फूट ही न सकें।

यह तो हुआ मूल सूत्र और लो, यह है बहाने का मनोविज्ञान कि जब हम सत्य का सामना नहीं कर सकते तो बहाने की आड़ ले लेते हैं। इसे यों समझो कि तुमने मुझसे पाँच रुपये मांगे। सत्य यह है कि मेरे पास नहीं हैं या मैं देना नहीं चाहता, पर कहता हूं यह कि अलमारी की चाबी मेरी पत्नी के पास है और वह कहीं गई हुई है।

"तो फिर यह तो झूठ है लाजपत भाई!" मैंने कहा, तो बोले-"पोप का वचन है कि झूठ बद है, बहाना बदतर है, झूठ भयंकर है, पर बहाना भयंकरतर है, क्योंकि बहाना सुरक्षित झूठ है। साफ है कि इससे हमें बचना चाहिए, पर सचाई यह है कि कभी यह भी जी चाहता है कि हम बहाना बना दें। •

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं न दुराग्रही हूँ, न अंधविश्वासी

जो लोग अर्से से सार्वजनिक जीवन में हैं, उनके बारे में तरह-तरह की बातें चल पड़ती हैं। यद्यपि वे सब तारीफ में नहीं होतीं, फिर भी उनसे बचा नहीं जा सकता। मैं भी इसका अपवाद नहीं। इसमें शिकायत की भी कोई बात नहीं है। फिर भी जब जनता के दिमाग में किसी के बारे में कुछ बड़े वहम हो जाएँ, तब उनका खण्डन होना ही चाहिए।

मैं अपनी ही बात कहूँ कि बहुत से लोगों की मेरे बारे में यह गलत धारणा है कि मैं विचारों में कट्टर और हठी हूं। ऐसा भी कहा जाता है कि मैं समझौतावादी नहीं हूँ। ये बातें मेरे मूल स्वभाव के प्रतिकूल हैं और इसीलिए मैं इन आरोपों का प्रतिकार करना चाहूँगा।

मैं मानता हूं कि ऐसी कुछ बातें होती हैं जिन पर समझौता सम्भव है, जरूरी और लाभदायक भी होता है, किन्तु जहाँ सचाई अथवा नैतिकता का सम्बन्ध हो, वहाँ समझौते का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

मैं यह भी मानता हूँ कि सत्य और नैतिकता के ऊँचे आदर्शों की तत्काल प्रतिष्ठा करने का आग्रह करना भी व्यर्थ है। यह व्यावहारिक भी नहीं होगा, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि कोई व्यक्ति सत्य और नैतिकता का पालन करना ही छोड़ दे या उनके विपरीत आचरण करता जाए। यदि सत्य और नैतिकता का पालन करना ही हठ और कट्टरता है, तो मैं सहर्ष अपने को दोषी मानूँगा।

अगर किसी के सामने नए तथ्य प्रस्तुत किए जाएँ और वह विचारों में परिवर्तन की आवश्यकता भी महसूस करे, किन्तु झूठी प्रतिष्ठा या किसी अन्य कारण से ऐसा न करे तो निश्चय ही वह दुराग्रही कहा जाएगा। गलत सिद्ध हो जाने के बाद भी अपनी बात पर अड़े रहना भलमनसाहत नहीं।

कट्टरता से ही हठ उत्पन्न होता है और असामाजिक दृष्टिकोण का परिणाम है दुराग्रह, किन्तु यह भी मानना पड़ेगा कि सामाजिकता और समझौते की भावना की भी कुछ मर्यादाएं और सीमाएं हैं। खासकर जब सचाई, नैतिकता और जनहित के प्रश्न एक दूसरे से जुड़े हुए हों।

अगर मेरी यह कथित कट्टरता और हठवादिता के उदाहरण दिये जाएं, तो मैं उन्हें निराधार ही समझता हूं। हठवादिता तथा कट्टरता को मैं गलत समझता हूं क्योंकि इससे झूठ और कठमुल्लापन को बढ़ावा मिलता है। किसी तरह का दुराग्रह प्रगति में बाधक और सत्य की खोज में रुकावट डालता है।

एक बार दो मित्रों से बातचीत के दौरान उन्होंने कहा—आप हठी और दुराग्रही हैं। मैंने पूछा—कैसे? पहले तो उन्होंने कहा कि आपने हमारी बात ही नहीं सुनी। मैंने कहा एक घण्टे से भी अधिक समय तक धीरज के साथ आपकी बातें सुनता रहा हूं और सवाल-जवाब भी करता रहा हूं। इस पर उनका कहना था कि बात तो आपने जरूर सुनी, किन्तु हमारे विचारों को स्वीकार नहीं किया। इस प्रकार उन्होंने यह स्वयं स्वीकार कर लिया कि उनका पहला आरोप गलत था। तो क्या सिर्फ इसलिए कि वे अपने तर्कों से अपनी बात मुझसे न मनवा सके, मैं हठी हो गया? ऐसा होने पर भी मेरे विरुद्ध अपना आरोप वापस न लेकर वे खुद ही हठी और दुराग्रही साबित हो गए।

मेरे खिलाफ इसी तरह से गलत बातें फैलाई गईं।

ऐसी ही बात उस वक्त हुई जब एक समाचार पत्र के सम्पादक मुझ से मिले। मैंने उनसे पूछा कि आप मुझे दुराग्रही क्यों मानते हैं? नशाबंदी के बारे में मैं दृढ़ संकल्प हूं, क्या इसलिये मैं दुराग्रही हूं? मेरे दुराग्रही होने के बारे में वे कोई दलील न दे सके। अगर नशाबंदी के अपने विचारों के कारण मुझे दुराग्रही कहा जा सकता है, तो उन्होंने स्वीकार किया कि नशाबंदी के खिलाफ वे भी अपने विचारों पर दृढ़ हैं। उन्होंने खुले दिल से स्वीकार किया कि मुझ पर दुराग्रही होने का आरोप नहीं लगाया जा सकता।

अगर कोई यह बताए कि मैंने कब दुराग्रह किया, तो मुझे यह जानकर प्रसन्नता ही होगी। तब या तो मैं आत्म सुधार कर लूंगा या उस आरोप का खण्डन कर दूंगा।

उदाहरण के रूप में स्वर्ण नियन्त्रण आदेश को ही लीजिए। मैंने इस आदेश में कोई फेर-बदल करने या इसे

◇ श्री मोरारजी देसाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रद्द करने से इनकार कर दिया। मैं समझता हूँ कि मेरे दुराग्रही होने की बातें इसीलिये फैलीं। इस तरह तो चाहे कोई समझे या न समझे, कोई भी व्यक्ति जनहित के काम पर दृढ़ रहता है, तो उसे किसी न किसी हद तक लोग दुराग्रही ही समझेंगे।

ध्यान रहे कि स्वर्ण नियंत्रण आदेश लागू करने से पहले पूरे चार साल तक मैंने उसके हर पहलू पर विचार किया। साथ ही मैंने तीन बार स्व० प्रधानमन्त्री से भी उस पर ब्योरेवार तथा बारीकी से विचार किया और उनकी पूर्ण स्वीकृति प्राप्त की। मंत्रिमंडल ने भी उसे अपना आशीर्वाद दिया।

मैं आपको यह भी बताना चाहूंगा कि यह आदेश जारी होना क्यों जरूरी हुआ। सोने की तस्करी, सोने की जमाखोरी और सोने के आभूषणों का प्रलोभन हमारे देश के लिये बड़े हानिप्रद सिद्ध हो रहे थे। सोने का तस्कर व्यापार अब करीब ५० करोड़ का है और हमारी समृद्धि के साथ-साथ एक सौ करोड़ रुपये तक पहुँच सकता है। हमारे देश में सोना बहुत ज्यादा मिकदार में तो होता ही नहीं, इसलिये लोगों की माँग बहुत मुश्किल से पूरी हो पाती है चाहे वह आभूषण के लिये हो या काले धन को सोने में लगाने के लिये अथवा सरकारी मुद्रा के स्थायित्व पर विश्वास न होने के कारण बचत की सुरक्षा के लिए।

अगर हम सोने की तस्करी इतनी बड़ी मात्रा में होने देते हैं, तो क्या हम अपने देश की अर्थव्यवस्था को अपार हानि नहीं पहुंचा रहे हैं? क्या हम विदेशी मित्रों द्वारा भारत के विकास के लिये दी जा रही विदेशी मुद्रा के बड़े भाग को ऐसा करके नष्ट नहीं कर रहे? जब हमारे देश में उद्योग और कृषि पर अधिकाधिक धन लगाये जाने की जरूरत है, तब सोने की तस्करी को हम किस तरह सहन कर सकते हैं? हमारे साधन सीमित हैं और हमें गरीबी को दूर करने के लिए सतर्कता और बुद्धिमत्तापूर्वक उनका इस्तेमाल करना है। सोने के जेवरों में रुपए को बर्बाद करना सही किस्म के पूंजी विनियोग से उसे वंचित करना है। जो लोग सोना खरीदते हैं, वे उस ब्याज से भी वंचित हो जाते हैं जो दूसरी जगह पैसा लगा कर पा लेते। यहीं तक नहीं, नए-नए फैशन के जेवर बनवाने के चक्कर में २५ फीसदी का नुकसान उन्हें ऐसे ही हो जाता है और जेवरों का बनाने वाला जो बीच में खा जाता है वह अलग है।

सोना आड़े वक्त में काम आएगा, यह तर्क भी कोई माने नहीं रखता। आज आपको बैंक सुविधाएँ उपलब्ध हैं और जीवन बीमा का लाभ प्राप्त है। आप यह मानेंगे कि सोने को बेचने पर कम मूल्य मिलता है और बार-बार की गढ़ाई में उसकी शुद्धता नष्ट हो जाती है और खोट बढ़ता जाता है।

दूसरी तरफ जीवन बीमा में न केवल भविष्य के लिए सुरक्षा की गारण्टी है, बल्कि कर्ज की सुविधाएँ भी मिलती हैं। शेयरों में धन लगाने का अच्छा डिवीडेण्ड मिलता है जो अक्सर पूंजीगत लाभ हो जाता है। बैंकों में जमा किया गया धन भी सुरक्षित होता है और वाजिब ब्याज देता है। बैंक वक्त जरूरत पर कर्ज भी देते हैं।

इस प्रकार आज की स्थिति में सोने का जमा करना व्यक्ति तथा राष्ट्र के लिए अहितकर और अलाभकर है।

इस पृष्ठभूमि में मैं इस नतीजे पर पहुंचा कि देश में सोने की तस्करी और सोने में रुपया लगाने की प्रवृत्ति को रोकना जरूरी है। स्वर्ण नियन्त्रण कानून के पीछे यही मुद्दा था।

इससे कुछ पेशेवर सुनारों को नुकसान पहुँचा, यह जुदा बात है। अगर स्वर्ण तस्करी से ही उनका धन्धा चलता है तो हमारी हमदर्दी के वे बिल्कुल मुस्तहक नहीं हैं। वे चाँदी के आभूषण क्यों नहीं बनाने लग जाते? इसके अलावा उन्हें दूसरे व्यवसायों में लगाये जाने की योजनाएँ भी तैयार की जा चुकी हैं।

किसी भी सूरत में देश के व्यापक हितों के सामने उनकी रक्षा की चीख पुकार स्वीकार नहीं की जा सकती। तस्करी हमेशा के लिए रोकना जरूरी है। स्वर्ण नियन्त्रण आदेश की धाराओं में न तो किसी किस्म की ढील ही दी जा सकती है और न उसे खत्म ही किया जा सकता है, क्योंकि ऐसा करना राष्ट्र के हित में न होगा।

कोई सार्वजनिक कार्यकर्ता अपनी शोहरत को राष्ट्रहित में ऊपर नहीं रख सकता। ऐसा करना अपने कर्तव्य से विमुख होना होगा। इसलिए मैंने राष्ट्र की आर्थिक स्थिति को खतरे में डालने के बजाए बदनाम होना ज्यादा मुनासिब समझा।

अगर सरकार इस आदेश को दृढ़ता से लागू करती और जहाँ आवश्यक होता सख्ती भी बरतती, तो मुझे विश्वास है कि इसके खिलाफ आन्दोलन अपने आप खत्म हो जाता। यह आन्दोलन कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित था, राष्ट्रव्यापी नहीं। यह कदम असंदिग्ध रूप से अच्छा है, लोग धीरे-धीरे इसकी अच्छाइयों को पहचान लेते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरी इस मुद्दे की वकालत हठधर्मी बिल्कुल नहीं कही जा सकती। एक जनसेवक के नाते ही मैंने इस 'ब्लैक-मेकिंग' के सामने झुकने से इनकार कर दिया और मैं कर्तव्य-पथ से विमुख न हुआ। इस समस्या पर विचार करने का यही एक रास्ता है।

ज्योतिष सम्बन्धी मेरे झुकाव के बारे में जो मनगढ़न्त कहानियाँ चलती हैं, अब मैं उनकी तरफ आता हूँ।

यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि संपूर्ण राष्ट्रकर्म सिद्धान्त के अनुसार चलता है। इसलिए मैं ज्योतिष को एक विज्ञान के रूप में ही मानता हूँ। हर चलते फिरते ज्योतिषी के बारे में मैं नहीं कह सकता कि उसकी भविष्यवाणियां बिल्कुल सच होती हैं। दरअसल सही भविष्यवाणियां तो होती हैं लेकिन एक अध्ययन से अधिक उनका कोई मूल्य नहीं।

हमारा प्रारब्ध हमारे संचित कर्मों का ही फल है। अगर आपका कर्म के चिरन्तन सिद्धांत में विश्वास हो तो यह भी मानना होगा कि भाग्य अपरिवर्तनीय और अपरिहार्य है। आधुनिक भौतिक विज्ञान भी बताता है कि क्रिया और प्रतिक्रिया समान और विरोधी हैं। इस संसार में सब कुछ नित्य है केवल उसके रूप और गुण में ही परिवर्तन होता है। इसलिए यह बात तर्कसंगत है कि कोई अच्छा ज्योतिषी सही भविष्यवाणी कर सकता है।

प्रश्न यह है कि कल क्या होगा, यह जान लेने से क्या कुछ लाभ है? कोई बुरी भविष्यवाणी आतंकित और हतोत्साहित कर देती है। यह भी याद रखें कि चलते-फिरते भविष्यवक्ता झूठी भविष्यवाणी करके लोगों के मन में व्यर्थ का भय पैदा कर देते हैं।

इस सम्बन्ध में मैंने यह दृढ़ नियम बना रखा है कि किसी भी ज्योतिषी से भविष्य के बारे में कभी नहीं पूछता और उससे यह भी अपेक्षा नहीं रखता कि वह मेरे भविष्य के बारे में कुछ बताएगा और प्रमाणपत्र तथा पुरस्कार के रूप में उसे कुछ देता भी नहीं हूं।

मैं किसी ज्योतिषी से मिलने से इन्कार भी नहीं करता। वह जो कुछ कहता है सुन लेता हूं, किन्तु उससे शुभ मुहूर्त नहीं निकलवाता। अशुभ ग्रहों की शान्ति वगैरह के बारे में भी मेरी कोई दिलचस्पी नहीं है। मैं अपनी कार्यविधि निश्चित करने में उनकी भविष्यवाणियों से तनिक भी प्रभावित नहीं होता। ज्योतिष विज्ञान में विश्वास रखने वालों के लिए मेरे विचार से यही सबसे अच्छा मार्ग है।

इस मिथ्या निन्दक अफवाह का मैं दृढ़ता के साथ खण्डन करता हूं कि मैं ज्योतिषियों को निजी सलाहकार के रूप में रखता हूं।

अपने सिद्धान्त से न डिगने वाले व्यक्ति को आम तौर पर आग्रही कहते हैं। मुझे मालूम है कि कुछ लोगों की नजर में मैं आग्रही व्यक्ति बन गया हूं, मुझे इससे कोई परेशानी नहीं होती और यहां मेरा मकसद अपना बचाव करने का नहीं है।

इस लेख में मैं पाठकों तक अपने कुछ विचार पहुंचाना चाहता हूं, ऐसे विचार जो मेरे लिए अत्याज्य हैं। कोई तदनुसार मेरी ही तरह सोचने विचारने लगे अथवा ऐसा न हो, इसकी चिन्ता मुझे नहीं है। मैं इतना जरूर सोचता हूँ कि अपनी मान्यताओं के सम्बन्ध में लोगों को जानकारी करा देनी चाहिए।

पहले निरामिष आहार के सवाल को ही लें। जन्म से ही मुझे निरामिष आहार का संस्कार मिला और आगे चलकर मैंने उसे समझ-बूझकर अंगीकार भी किया। आप यह मानेंगे कि इस देश में बहुत से समुदायों में निरामिष भोजन की परम्परा है। मैं भी ऐसी परम्परा का व्यक्ति हूँ।

जब मैं बड़ा हुआ तो इस पर काफी विचार भी किया और यह निश्चय किया कि मुझे निरामिष-भोजी रहना चाहिए। मेरे मन में यह बात बैठ गई कि अपना जीवन बनाए रखने के लिए ईश्वर के पैदा किए हुए दूसरे जीवों का खात्मा करना आत्मिक विकास में बाधक है।

अहिंसा को सभी धर्मों में महत्व दिया गया है। गौतम बुद्ध और भगवान महावीर ने इसका उपदेश बहुत पहले दिया था और गांधी जी ने भी हमें यही सिखाया। इसकी आधारभूत विचारधारा यह है कि किसी भी जीव को त्रास नहीं देना चाहिए। अगर मैं अपनी खुशी के लिए या अपनी खुराक के लिए किसी जीव का खात्मा करूं, तो मेरा खात्मा करके खुशी हासिल करना या अपने को बनाए रखने का यत्न करना किसी के लिए उचित ही माना जायगा।

हिंसक जानवर अपने भोजन के लिए दूसरे प्राणियों या जानवरों को मारते हैं। ऐसे भी जानवर और पक्षी हैं जो जड़ी-बूटी खाकर पलते हैं। यदि आप शरीर के भीतर के अवयवों के आधार पर तुलना करें तो यह देखेंगे कि मनुष्य की शरीर-रचना जड़ी-बूटी खाकर रहने वाले जानवर जैसी है। यह बड़े महत्व की बात है। प्रकृति ने मनुष्य को शाकाहारी ही बनाया है। किसी हिंसक जानवर और मानव के दाँतों में स्पष्ट रूप से भिन्नता है। जिनकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदत मांस खाने की है उनसे मैं विवाद में उलझना नहीं चाहता। किसी भी आदमी को मनचाहा भोजन करने की पूरी छूट है। अगर किसी को अमुक प्रकार का ही भोजन पसन्द है तो इस विषय में सही-गलत का सवाल नहीं उठता। वैसे दुनिया में मांस खाने वालों की तादाद ज्यादा है और भारत में भी निरामिष भोजी कम संख्या में हैं।

फिर भी मेरी पक्की धारणा है कि ज्यों-ज्यों आदमी आत्मिक विकास की ओर बढ़ता है त्यों-त्यों उसकी प्रवृत्ति निरामिष भोजन की होती जाती है। पुराने जमाने में हमारे कुछ ऋषि भी मांसभोजी थे, पर ज्यों-ज्यों उनका दार्शनिक दृष्टिकोण व्यापक होता गया, त्यों-त्यों अनायास ही उनका झुकाव शाकाहार की ओर हुआ।

शाकाहारियों में कुछ लोग ऐसे भी हैं जो दुध यह सोच कर नहीं पीते कि किसी का प्रकृतिदत्त अंश हम क्यों लें। कुछ लोग ऐसा ही सोचकर रेशम या चमड़े की चीज ग्रहण या धारण नहीं करते। ऐसे लोगों को मैं अपने से ऊंचा उठा हुआ मानता हूं।

थोड़ी चर्चा अनशन के विषय में भी कर दूं। आज के जीवन में अनशन का क्या स्थान और उपयोग हो सकता है इस विषय में गांधी जी बहुत कुछ कह चुके हैं। मैं केवल अपना मत व्यक्त कर रहा हूँ।

मैं इस पक्ष में नहीं हूं कि अगर कोई किसी कामको अपने तई करना नहीं चाहता तो उससे अपने मन की कराने के लिए अनशन किया जाय। ऐसा तभी करना उचित है जब किसी को गलती की ओर से मोड़ना हो, ऐसी गलती की ओर से जिससे समाज का नुकसान होने वाला हो।

यदि लोगों में अमनचैन बनाये रखने के लिए अनशन किया जाय, या किन्हीं मामलों में लोगों की उत्तेजना शान्त करनी हो या उपद्रव दबाने के लिए सरकार द्वारा बड़े पैमाने पर कराया जाने वाला गोली-चालन बन्द कराना हो, तो उसके लिए अनशन किया जा सकता है।

ऐसा अनशन भी उन्हीं के लिए उपयुक्त हो सकता है जो वैसा करने के अधिकारी हों अर्थात् अनशन के सैद्धान्तिक पहलू से भली भांति परिचित हों और उसके औचित्य-अनौचित्य को समझते हों। जो भी अनशन करे उसका विचार एकमात्र यह रहना चाहिए कि मैं लोगों की भलाई के लिए अनशन कर रहा हूं। यदि अनशन का वांछित परिणाम न हो तो भी उसके आत्मबल में कमी नहीं आनी चाहिए। अपने प्राण गँवाने के लिए भी उसे खुशी से तैयार रहना चाहिए।

मैंने १९५६ में अहमदाबाद में अनशन किया था। इसका उद्देश्य महागुजरात सम्बन्धी आन्दोलन का प्रतिकार करना नहीं था। भावना केवल यह थी कि अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए लोग हिंसा का सहारा न लें। विधान की सीमा के भीतर किये जाने वाले आन्दोलन के जवाब में अनशन करना उचित नहीं होता।

मुझे ऐसा लगा था कि समाज विरोधी लोगों के उकसाने से अहमदाबाद की जनता हिंसा की ओर जा रही है। अगर मेरा अनशन न हुआ होता तो शायद हिंसा भड़क गई होती और पुलिस को गोली चलानी पड़ती। अपनी गोटी लाल करने के इच्छुक नेताओं ने ऐसा वातावरण उत्पन्न कर रखा था कि निरीहों को गोली खाकर प्राण गंवाने पड़ते।

अगर लोगों ने मेरे प्रति सहानुभूति न दिखाई होती और मुझे जान भी गंवानी पड़ी होती तो इसके लिए मुझे ग्लानि नहीं होती। घटनाओं से यह साबित हो गया कि उस अनशन से अहमदाबाद और गुजरात के शेष भाग एक बड़ी बला से बच गए। अगर मेरी मौत हो गई होती तो वह और गुणकारी सिद्ध हुई होती, ऐसा मेरा विश्वास है। किस भावना से मैंने अनशन किया था, वह इससे जाहिर हो जाती है। जिसको अपने किसी लाभ की ख्वाहिश नहीं रहती वह अगर कष्ट झेलता है तो लोगों पर क्लेश सहन का प्रभाव अधिक समय तक बना रहता है। आज के जीवन में भी यह सत्य है और इसका मोल बहुत बड़ा है।

मैं जो टीके का विरोध करता हूं उसके मूल में भीतर की पुकार है। मैं यह पसन्द नहीं करता कि किसी जीव का खात्मा करके या उसे कष्ट पहुँचाकर जो वस्तु प्राप्त की गई हो, उसके उपयोग द्वारा अपने लिए सुख-चैन या सेहत की खरीद करूं। आप जानते ही हैं कि टीके की दवा के लिए जानवरों को कितना कष्ट पहुंचाया जाता है। जिस तरह मैंने सामिष भोजन का परित्याग कर दिया है, उसी तरह टीके से भी मुझे परहेज है। मैं ऐसी कोई दवा नहीं लेता जिसमें जीवतत्व हो। इस तरह की दवा ग्रहण करना उन सिद्धान्तों के प्रतिकूल है, जिनको मैं विशेष महत्व देता हूँ। प्राण जाने की हालत में भी मैं उसे छूना तक नहीं चाहूँगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे बारे में जो यह कहा जाता है कि पश्चिमी चिकित्सा-पद्धति का विरोधी हूँ, उसमें खास जोर नहीं है। चिकित्सा की पाँच मुख्य पद्धतियां हैं—आयुर्वेद, यूनानी, होमियोपैथी, एलोपैथी और प्राकृतिक चिकित्सा। मैं प्राकृतिक चिकित्सा का कायल हूं। वैसे थोड़ी कसर है, क्योंकि इसमें भी यथेष्ट आस्था नहीं जमी है और जहाँ चीर-फाड़ की ही जरूरत होती है वहां यह कारगर नहीं होती। किसी अंग को निकालने का सवाल लें। इसका हल प्राकृतिक चिकित्सा में नहीं है। करीब तीन बार मुझे आपरेशन कराना पड़ा है, क्योंकि प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा मेरी तकलीफ का निवारण सम्भव नहीं था।

ऐसा ही और बातों में होता है, इस सम्बन्ध में भी मन की मौज या आग्रह मात्र से काम नहीं चल सकता। फिर भी यह तो मानना ही पड़ता है कि विशेष प्रकार की आस्था नीरोग होने के मामले में काम करती है। अगर विश्वास की कमी है, तो रोग निवारण अनिश्चित-सा रहेगा। किसी दवा या चिकित्सा में रोगी को जितना विश्वास रहता है, उतना ही लाभ भी उसे पहुँचता है। सरकार को सभी पद्धतियों को बढ़ावा देना चाहिए। यह लोगों पर छोड़ देना चाहिए कि वे कौन-सी पद्धति अपने लिए चुनते हैं।

विभिन्न जातियों, प्रान्तों और धर्मों के लोगों में विवाह सम्बन्ध होना चाहिए या नहीं, इस विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है। मैं जाति पांति की भावना से रहित समाज का निर्माण चाहता हूँ। राष्ट्रीय एकीकरण की भी सख्त जरूरत है। अतः उक्त प्रकार का वैवाहिक संबंध होना चाहिए। फिर भी इसमें दिखावा नहीं रहना चाहिए। महत्व स्वाभाविक इच्छा का है।

दो धर्मों को मानने वाले पक्षों में विवाह सम्बन्ध तभी अच्छी तरह निभ सकता है जब प्रत्येक को अपने धर्माचरण की स्वतंत्रता रहे।

दकियानूसी की बातें खत्म होती जा रही हैं और [illegible] दृष्टिकोण के सामने पुराने रीतिरिवाजों का भी अन्त [illegible] रहा है। मिश्र विवाह अगर हो और पति तथा पत्नी अपनी धार्मिक मान्यता के अनुसार आचरण करते हुए भी सुखी सहजीवन बिता सकें, तो देश में एकता को बढ़ावा मिलेगा और हमारे सामाजिक जीवन को नया पोषण प्राप्त होगा।

मैंने अनेक बार पैदाइश रोकने के नकली तरीकों की खिलाफत जोरों से की है। इससे औरतों की सेहत गिरती है और देश के नैतिक स्तर को आघात पहुँचता है। जो कृत्रिम साधन अपनाए जाते हैं, उनमें से अधिकतर नुकसानदेह हैं।

इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि आबादी की बेहिसाब वृद्धि रोकने के खयाल से परिवार नियोजन आवश्यक है, पर जिस लक्ष्य तक हम पहुँचना चाहते हैं उसकी प्राप्ति आत्मसंयम और नियमित आचरण से हो सकती है।

मेरा कुछ ऐसा लक्ष्य नहीं है कि मैं इस विषय में अपने विचारों का प्रचार करने का अभियान जैसा चलाऊं। देश के बहुत से लोग कत्रिम रीति से पैदाइश रोकने की हिमायती हैं। मैं स्वतः इसके पक्ष में प्रचार नहीं कर सकता, पर उनका विरोध भी नहीं करूंगा जो नकली तरीकों का अपनाया जाना पसन्द करते हैं। जिन दिनों मैं वित्तमंत्री था, पैदाइश कम करने के विषय में किये जाने वाले प्रचार के लिये बड़े परिमाण में रकम मंजूर करने में हिचकता नहीं था।

संक्षेपतः मैं इस मत का हूं कि दूसरों के विचारों के प्रति सहिष्णु रहना चाहिए। अगर कोई अपने मत को छोड़ना नहीं चाहता तो उसे औरों के मत का आदर करना भी सीखना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टेनिस का बल्ला और तम्बाकू की पीक

डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी
एम. ए., पी-एच. डी., डी. लिट्

एक वकील साहब मेरे ऊपर बहुत कृपा करते हैं। वह मुझ से अवस्था में काफी बड़े हैं। इस कारण मैं उन्हें अपना मित्र नहीं, बल्कि कृपालु ही कहता हूं। वह सैण्ट जौन्स कालेज आगरा के भूतपूर्व प्रिंसिपल श्री डैवीज के बड़े ही प्रशंसक हैं। प्रशंसक ही क्या, उनके उपासक हैं, भक्त हैं और अपने आपको उनका शिष्य कहते हुए परम गर्व का अनुभव करते हैं। डैवीस साहब का स्मरण करके वह आज भी पुलकायमान हो जाते हैं।

वह डैवीस साहब के लड़के के साथ प्रायः क्रिकेट खेला करते थे। एक दिन उन्होंने दो घण्टे तक गेंद फेंकी और उनके लड़के को खूब क्रिकेट खिलाई। खेल के बाद वे बोले कि मिस्टर इनाम में टेनिस की दो गेंदे दो। लड़के ने अपनी माता के बक्स में से दो गेंदे निकाल कर उन मित्र (अब वकील साहब) को दे दी। दो दिन बाद मिसेज डैवीज ने गेंदों के विषय में पूछताछ की। लड़के ने तुरन्त कह दिया कि उसने गेंदें ली थी और अपने अमुक दोस्त को क्रिकेट खिलाने के बदले दे दी थी। उनकी माता ने 'ठीक है' कह कर बात समाप्त कर दी।

वकील साहब के ऊपर इस घटना का बहुत ही गहरा प्रभाव पड़ा। उनका कहना है कि इस तरह बिना पूछे चीज निकाल लेने के कारण उनके ऊपर कई बार कड़ी फटकार पड़ चुकी थी। उन्होंने प्रण किया कि चाहे जो कुछ हो, वह हमेशा सच बात ही कहा करेंगे।

अगले वर्ष वह अपने कालेज के टैनिस कैप्टेन निर्वाचित हुए। निर्वाचन के दूसरे ही दिन उबरौय कारखाने का एक एजेन्ट एक ऐंन्टायरेंट बल्ला उन्हें भेंट करने पहुँचा। बल्ला देखकर वह बोले कि उन्हें बल्ले की आवश्यकता नहीं थी। यह तो आपकी भेंट है। यह बल्ला तो कैप्टेन का ही होता है। यह तो वर्षों से चला आने वाला दस्तूर है। बस आप आर्डर हमको ही दीजिये।

अगले दिन, वह बल्ला लेकर डैवीज के पास पहुंचे और उन्होंने कच्चा चिट्ठा कह सुनाया। डैवीज साहब ने उनकी पीठ ठोंकी और चपरासी के हाथों बल्ला वापिस भिजवा दिया।

शाम को ही श्रीमती डैवीज की ओर से एक गोल्ड मैडिल बल्ला उनको भेंट किया गया। यह था सचाई का पुरस्कार और ईमानदारी के लिए प्रोत्साहन।

उनकी इस बात को सुनकर मैंने कहा—"भाई साहब! तब तो आपके प्रिन्सिपल साहब आप लोगों का बहुत ध्यान रखते थे। आपकी हर बात सुनते थे और साथ ही अच्छे कामों के लिए प्रेरणा भी देते रहते थे। आज कहाँ हैं उन जैसे सहृदय प्रिंसिपल अथवा अध्यापक। इनाम दे कर अपने छात्रों को सदाचरण की प्रेरणा देने की बात क्या किन्हीं महानुभाव के दिमाग में आती भी है?" उनका कहना है कि यह तो कुछ भी नहीं है। श्री डेवीज अपने छात्रों को अपने परिवार का सदस्य, अपना मित्र, अपना हितैषी, न मालूम क्या क्या समझते थे? एक बार उन्होंने एक ईसाई छात्र को टैनिस की टीम में रख दिया, जब कि उससे कहीं अधिक अच्छा खेलने वाला एक हिन्दू छात्र रह गया। वकील साहब का कहना है कि उन्होंने प्रिन्सिपल साहब से साफ साफ कह दिया कि वह पक्षपात कर रहे थे।

श्री डेवीज ने कहा—"अच्छा जाओ तुम्हारी बात पर विचार किया जाएगा।" शाम को श्रीमती डेवीज ने उन्हें चाय पर बुलाकर पूछा—"क्यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मि०—तुम साहब से नाराज हो ?"

"नहीं साहब ! जो बात थी, वह मैंने कह दी। मै तो साहब को देवता समझता था, पर अब ईसाई समझने लगा हूँ।"

"नहीं, साहब को बहुत दुःख है। अगर तुम उनको माफ कर दो, तो वह तुम्हारे सामने आ सकते हैं। वह अन्दर बैठे हैं।" वकील साहब का कहना है कि मैंने साहब के पैर पकड़ लिए तथा गुरु और शिष्य ५ मिनट तक अपने आनन्दाश्रु बहाते रहे। दोनों के हृदय सर्वथा निर्मल हो गये। डेविज साहब आज दिन तक वकील साहब को अपना मित्र मानते हैं और वकील साहब की नजर में तो श्री डेवीज का स्थान न मालूम कितना ऊंचा है ! वह आज भी अपने पुराने प्रिन्सिपल साहब अथवा गुरुदेव की बात के पीछे अपनी जान देने को तैयार हैं। जो लोग भारत के आर्ष-ऋषियों और उनके शिष्यों की गाथाओं को कपोल कल्पित समझते हैं, हमारा उनसे निवेदन है कि वे किसी दिन हमारे वकील साहब के सामने श्री डेविज की चर्चा करके देखें। उनका नाम ले लेने भर से वकील साहब गद्गद् हो जाते हैं। वह बार-बार यही कहेंगे कि डेविस अपने कालेज के छात्रों को अपना बालक समझते थे। वह प्रत्येक छात्र की बालक की भांति फिक्र रखते थे। परन्तु साथ ही, हरेक की हरेक बात सुनने और मानने को तैयार रहते थे।

स्वतन्त्र राष्ट्र के नागरिकों की धारा भी स्वतन्त्र होती है। वह स्वच्छन्दतापूर्वक बहती रहती है तथा आवश्यकतानुसार अपना मार्ग बदलने को तैयार रहती है। उनमें विचार स्वातंत्र्य, मन की दृढ़ता, ईमानदारी एवं सचाई के प्रति लग्न एवं अपनी धारणाओं के प्रति आस्था आदि सभी सद्गुण होते हैं। इसके विपरीत, परतन्त्र देश के नागरिकों की मनोवृत्ति भी पराधीन हो जाती है। मानसिक दासता के फलस्वरूप उनकी सद्वृत्तियां सर्वथा कुण्ठित हो जाती हैं। हमारा देश यद्यपि राजनीति की दृष्टि से स्वतन्त्र है तथापि मानसिक दासता से उसका पूरी तरह छुटकारा नहीं हो पाया है। फलतः हमारे विचार अभी भी बिना प्रयास के नीचे की ओर चले जाते हैं। ऊपर की ओर उठने की चर्चा ही चर्चा है।

मैं आपको अपने देश के एक उच्च शिक्षा प्राप्त महानुभाव की बात सुनाता हूं। वह अपनी बैठक में अपने पुत्र को कुछ पढ़ा रहे थे। उनके मुंह में पान था और उन्हें पीक करने की आवश्यकता हुई। उन्होंने तकिया हटाकर दीवाल के सहारे 'पिच' कर दी। कहने की आवश्यकता नहीं है कि उनके उस तकिये के पीछे का हिस्सा कितना गंदा हो रहा था, तथा उसके पीछे कितनी पीकें आंसू बहा रही थी। आप कह सकते हैं कि उनको पीकदान अथवा उगालदान रखना चाहिए। मैं भी आपसे सहमत हूँ। वह भी पीकदान को और उसके इस्तेमाल को जानते होंगे-परन्तु क्या करें, आदत से लाचार हैं। एक वे ही क्या, हममें न मालूम कितने लोग उनकी तरह चारों ओर दीवालों पर, किवाड़ों पर, कोनों में, सड़क पर, चबूतरे पर पान को थूक देते हैं अथवा तम्बाकू खाकर पीक कर देते हैं। हमारे बालक अगर हमारी यह आदत देख कर थूक-थूक कर स्वर्ग को भी नरक बनाने के अभ्यस्त हो चले हैं, तो इसमें आश्चर्य की अथवा बुरा मानने की बात ही क्या है ?

हमारे इन भारतीय भाई का एक और किस्सा सुन लीजिए। एक बार वह अपने कार्यवश कहीं बाहर गये। साथ में उनका पुत्र भी था। दोनों पिता-पुत्र एक होटल में ठहरे। पिता जी ने होटल वाले को अपने कारखाने का माल कुछ सस्ते दामों में दे दिया और होटल में रहने के किराए की आधी रकम देकर पूरी रकम की रसीद लिखा ली और इस प्रकार १५ रुपये बचा लिए। इन महानुभाव ने १५ रुपया बचाकर तीन काम किए-(क) अपने कारखाने का १५ रुपया नुकसान किया (ख) ग्राहक की नजर में कारखाने की साख को गिराया, क्योंकि कर्मचारियों के द्वारा ही मालिक अथवा दूकान को आंका जाता है तथा (ग) अपने लड़के के सम्मुख धोखा धड़ी का आदर्श प्रस्तुत किया। यही कुँवर साहब यदि अपने पिता जी को बेईमान अथवा चार सौ बीस समझने लगें तथा अवसर पाकर अस्तबल में ही दुलत्ती झाड़ उठें, किंवा अधूरा इन्तजाम करने के कारण कभी जेलयात्रा करने को विवश हों तो आप ही बताइये, यह जिम्मेदारी किसकी होगी। पुत्र पर, हम पर, आप पर, समाज पर अथवा पूज्य पिता जी पर ?

आप एक बात और समझ लें कि यह महानुभाव उस कैंडे के आदमियों में हैं जो हमेशा यह समझते हैं कि लड़कों में बिल्कुल अक्ल नहीं है, उनकी राय में नवयुवकों से बात ही नहीं करनी चाहिए और साथ ही दिन रात इस बात की शिकायत करते रहते हैं कि जमाना बहुत बिगड़ गया है और लड़के लड़कियां बड़े ही चालाक बन गये हैं।

आप हमारे भारतीय मित्र का नाम-पता न पूछिए। आप तो केवल यही समझ लीजिए कि वह कहीं आप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के ही आस-पास है। हमारा कहना है कि हमारे समाज की प्रायः यही दशा हो गई है। हम दूषित वातावरण में रहते हैं। हमारे चारों ओर कूड़ा पड़ा रहता है और मन के भीतर मैल भरा रहता है। हम अपना घर भले ही साफ कर लेते हैं, परन्तु साथ ही यह भी करते हैं कि घर के मलबे को सड़क पर फेंक देते हैं। हम मुंह में राम का नाम रखते हैं, परन्तु साथ ही बगल में छुरी भी रखते हैं। हम समाज तथा देश का अहित करके भी अपने छोटे-छोटे स्वार्थों में लिप्त बने रहते हैं। हम लोग आज पान-बीड़ी की रिश्वत खाकर मालिक का लाखों रुपये का नुकसान करने के आदी हो गये हैं। जिस हांडी में खाते हैं, उसी में छेद करना हम अपने पुरुषार्थ की सफलता मान बैठे हैं।

ये उपर्युक्त घटनाएँ हमारे सम्मुख कतिपय निष्कर्ष प्रस्तुत करती हैं। यथा–

(१) बालक देखकर सीखता है। वह जो देखता है वही करता है, तथा जो सुनता है वही करता है। हम यदि चाहते हैं कि हमारे बालक अच्छे नागरिक बनें, वे उच्च आदर्शों के अनुसरण की प्रेरणा प्राप्त करें, तो हमारा कर्तव्य है कि उनके सम्मुख उच्च आदर्श प्रस्तुत करें, हम स्वयं वे ही काम करें, जिन्हें हम अपने बालकों के द्वारा कराना चाहते हैं। तकिए के पीछे पीक करने वाला पिता यदि यह चाहता है कि उसका पुत्र [illegible] तो हमारे विचार से वह बबूल के पेड़ बोकर आम खाने की इच्छा करते हैं। इसी प्रकार होटल का आधा किराया देने वाले पिता जी को यदि अपने लड़के तथा समाज से शिकायत है, तो हमारा निश्चित मत है कि वह छलनी में दूध दोहने के बाद उसके फैल जाने का शिकवा कर रहे हैं।

(२) गुरुजनों को चाहिए कि 'प्राप्तये षोडशे वर्षे पुत्र मित्रवदाचरेत्' वाली बात याद रखें। उन्हें चाहिए कि वे अपने छात्रों को अपना पिता जी से समझें तथा उनकी हरेक बात को समझने की चेष्टा करें, उनके प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करें तथा उनकी अच्छी बातों एवं भली आदतों की कद्र करें। जहां अपनी भूल हो, तुरन्त स्वीकार कर लें। आप देखेंगे कि आपके शिष्य भी उसी तरह आपकी इज्जत और याद करेंगे, जिस प्रकार हमारे वकील साहब अपने प्रिन्सिपल श्री डेवीज के प्रति श्रद्धा प्रकट करते हुए नहीं अघाते हैं।

(३) बालक का स्वतन्त्र व्यक्तित्व होता है तथा वह एक वृक्ष की भांति उन्मुक्त वातावरण में विकसित होना चाहता है। गुरुजनों एवं माता पिता को चाहिए कि वे एक कुशल माली की भांति बालक की देख-रेख ही करें। बालक को मिट्टी का लौंदा समझ कर उसे चाहे जिस सांचे में ढालने का प्रयत्न न करें। बालक एक कोरे कागज का टुकड़ा नहीं है जिसके ऊपर चाहे जो कुछ लिखा जा सकता है।

(४) हमारा कर्तव्य है कि हम आत्म - निरीक्षण करें और अपने व्यवहार को नैतिक एवं शिष्ट बनाएं। इसके अतिरिक्त अपने नवयुवक समाज की सहानुभूति प्राप्त करने का पूरा प्रयत्न करना चाहिए। अपने बालकों की बात अगर हम नहीं सुनेंगे, तो कौन सुनेगा? श्री डेवीज की भांति हम यदि अपने बालकों के सम्मुख अपनी भूल स्वीकार नहीं करेंगे तो फिर हमारे बालक अपनी भूल स्वीकार करने का पाठ कहां पढ़ेंगे?

हमारे देश के कर्णधारों के ऊपर देश के भावी नागरिकों के निर्माण का गुरुतर दायित्व है। उन्हें नवयुवकों - नवयुवतियों का विश्वास प्राप्त करना है। विचारणीय प्रश्न केवल एक है। हमें श्री डेवीज जैसे आदर्श अध्यापक से शिक्षा लेनी है अथवा तकिए के पीछे पान की पीक करने वाले, एक कम्पनी का नुकसान करके अपने १५ रु० बचा लेने वाले पिता के रास्ते पर चलना है।

हमारे बालक ही हमारी आशा हैं, वे ही देश के भावी कर्णधार हैं। वे आज एक बहुत बड़े चौराहे पर खड़े हैं। वे किस ओर बढ़ें, यह हमें तय करना है। इस दिशा निर्देशन के ऊपर ही हमारे देश की नागरिकता एवं नैतिकता के स्वरूप निर्भर हैं और वही हमारी भावी संस्कृति का मानदण्ड होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी परिषद के

प्राध्यापक श्री कृष्णचन्द्र

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में सम्पन्न भारतीय हिन्दी परिषद के इक्कीसवें अधिवेशन से लौटकर मन कुछ खिन्न-सा है। रह-रह कर वहाँ के दृश्य, हिन्दी के महारथियों के दर्शन तथा वार्तालाप की याद आ रही है और इससे भी अधिक याद आ रही है डा० शम्भू नाथ सिंह से सुने हुए गीतों की कुछ कड़ियाँ—

और कहाँ तक ले जाओगे मन मेरे,
छूट गए बन्धन सब, छूट गए घेरे।

इससे भी गहरी एक और लकीर—

किसी ने लिखी आँसुओं से कहानी,
किसी ने पढ़ा, किंतु दो बूंद पानी।
वरण के चरण पर मधुर पुष्प कितने,
हवा ने चढ़ाए, लहर ने बहाए,
समय की शिला पर मधुर चित्र कितने,
किसी ने सजाए, किसी ने मिटाए।

बड़े आग्रह से मैंने गीत सुनाने के लिए कहा था उनसे। बी. ए. के दिनों में बस्ती से आए हुए एक मित्र ने ये दो पंक्तियाँ सुनाई थी। तभी से मन पर पत्थर की लकीर-सी बन गई थी। लखनऊ में एक बार डाक्टर साहब कवि-सम्मेलन में आए थे। हस्ताक्षर संकलन का शौक मुझे तब बहुत था। उनके आगे कापी कर दी। संयोग की बात, उन्होंने ये ही दो लाइनें लिख दी। मन बड़ा भर आया, जब उसी गीत को फिर सुना। डाक्टर साहब बता रहे थे कि एम. ए. में था तब लिखा था यह गीत। फिर उन्होंने 'टेर रही प्रिया तुम कहाँ' भी सुनाया। मन कहीं दूर बहुत दूर चला गया। लगा जैसे गीत की इन दो एक पंक्तियों ने मन की गहराई का कोई द्वार खोल दिया हो और मन न जाने कहाँ कहाँ विचरने लगा? शब्दों की ओर ध्यान नहीं, अर्थ की ओर भी नहीं, ध्यान केवल उस अनथाही गहराई—अनजाने लोक में। गीत बन्द हुआ, तभी मन लौट आया फिर भौतिक वातावरण में।

ऐसा ही हुआ उस समय, जब डा० रामकुमार वर्मा से बातचीत करने का अवसर मिल गया। बहाने तो कई थे। बात शुरू हुई चारुमित्रा से। वास्तव में मैं इस अद्भुत, पर अत्यन्त स्वाभाविक सृष्टि पर तभी से मुग्ध था, जब कि मैंने इण्टर में 'विजय पर्व' पढ़ाना प्रारम्भ किया था। बड़ी सशक्त और मार्मिक रचना लगी थी मुझे।

मैंने कहा—डाक्टर साहब! वह आपका गीत—

छू लो तो मैं हार मान लूं,
ना कहकर तुम हंस देते हो,
कैसे मैं इन्कार मान लूँ?

इण्टर में, काव्य कुसुम में डाक्टर साहब के परिचय में इस गीत की केवल ये दो ही पक्तियाँ उद्धृत थीं। बहुत खोजीं शेष पंक्तियाँ, लेकिन मिली ही नहीं। दो एक मित्रों से जिक्र भी किया, लेकिन बेकार। डाक्टर साहब कहने लगे—"वह गीत छपा ही नहीं किसी संकलन में।" मैंने आग्रह किया यदि आप बुरा न मानें, तो सुनाएँ, बड़ी इच्छा है। कहने लगे "याद कहां है?" मैंने कहा—थोड़ा बहुत जो भी हो। बोले—"अच्छा लो।" लेकिन एक ही अंश सुना पाए फिर कुछ क्षण शांत-फिर दो तीन पंक्तियाँ सुनाई। कहने लगे—"संग्रह निकलने वाला है, उसमें यह आएगा।"

बात चली फिर आधुनिक कविता पर। बोले—"छन्दों पर अधिकार करने के बाद ही तो उन्हें तोड़ोगे या ढालोगे अपनी मर्जी के मुताबिक या वैसे ही कर लोगे? इस कदर अराजकता फैल रही है कि कुछ कहते नहीं बनता। हमारे ही शिष्य जो अब हमारे 'कुलीग' सहकर्मी भी हैं अजीब तमाशा किए हुए हैं। पश्चिम ने जो मौनवाद तथा उच्छृंखलता बेकार समझ कर छोड़ दी, यहां के लोग उसे अत्याधुनिकता समझ कर अपनाए हुए हैं। निराला की जूही की कली तथा शेफालिका छन्दों की दृष्टि से आज भी एक चीज है। इस युग के एक बहुत बड़े कथाकर से भी उन्हें बड़ी जबरदस्त शिकायत है। कहने लगे—"आज जो वे लिख रहे हैं, क्या उनसे यही अपेक्षित है? उसकी बेटी, लड़के, लड़के की बहू जब पढ़ेंगी, तब क्या न सोचेंगी कि कितनी मौत अतृप्ति है हमारे इन बुजुर्गवार के मन में? 'शेम टु हिम' (धिक्कार है उसे) डाक्टर साहब के चेहरे से घृणा पूरी तरह व्यक्त हो रही थी। उन कथाकर महोदय की 'धर्मयुग' में प्रकाशित एक बहुचर्चित कहानी को लेकर ही उन्होंने यह सब कहा था।

मुझे लगा, डाक्टर साहब की कुछ सीमाएं हैं, मर्यादाएँ हैं, जिनसे बाहर निकलना उन्हें सह्य नहीं है।

डा. रामकुमार वर्मा तथा डा. शम्भू नाथ सिंह से वार्तालाप करने पर मुझे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक बात लगी, जिसका अनुभव मैंने पहले भी कई बार किया था। यदि आप किसी साहित्यकार के निकट, उसके जागरूक, सहृदय तथा निष्पक्ष पाठक के रूप में अपना परिचय दे सकें, तो फिर पद प्रतिष्ठा के सारे व्यूहों को तोड़कर बिल्कुल एक ही धरातल पर आप उससे मिल सकते हैं। मैंने यह भी अनुभव किया कि पाठक से बढ़कर साहित्यकार को और कोई सम्बन्ध प्रिय नहीं होता।

यह सब अधिवेशन के बाहर की बात हुई। अधिवेशन की बात—समय आठ बजे का था उद्घाटन का। साढ़ेआठ बजे सुनाई पड़ा कि कुछ देर हो गई है मुख्य अतिथि के आने में। दो तीन मिनट में ही वे पधारने वाले हैं। बड़ा भव्य हॉल

इक्कीसवें अधिवेशन में

था एजूकेशन कॉलेज का। मंच भी बड़ा कलात्मक सजा हुआ था, लेकिन भारतीय हिन्दी परिषद का पट बड़ा ही भद्दा लगा। एक मामूली-सी असावधानी से मंच की भव्यता में एक फूहड़पन का धब्बा लग गया।

पंद्रह बीस मिनट बाद ही पधारे श्री सूर्य भानु उपकुलपति कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, डा. रामकुमार वर्मा अध्यक्ष परिषद् तथा डा. विनयमोहन शर्मा इस धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र में एकत्रित युयुत्सवों के नहीं, अपितु विद्वज्जनों के स्वागताध्यक्ष एवं यहाँ के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष। सरस्वती वन्दना से प्रारम्भ हुआ। वन्दना की आलोचना करना संस्कारों के कुछ अनुकूल नहीं है, वर्ना समारोह के उपयुक्त उसे नहीं माना जा सकता। सबसे पहले डा. विनयमोहन शर्मा ने स्वागताध्यक्षीय भाषण पढ़ा, कुरुक्षेत्र की महिमा से पूर्ण। फिर उपकुलपति महोदय ने जिन्हें परिषद की कृपा से दूसरा 'रोल' करना पड़ा था, भाषण से पहले चुटकी ली कि जिस परिषद् के सभापति एक विख्यात नाटककार हों, वहां भूमिका का यह परिवर्तन स्वाभाविक ही था। बड़ा बढ़िया मजाक था। प्रधानमंत्री श्री कल्याण मल लोढ़ा ने परिषद का संक्षिप्त इतिहास और गतवर्ष का विवरण दिया। फिर उठे डा. वर्मा सभापति का भाषण पढ़ने के लिए। आधुनिक समस्याएं, हिन्दी भाषियों और प्रेमियों का कर्तव्य, साहित्यकारों का दायित्व।

एक बात कुछ अखरी कि इन प्रकाशित भाषणों को भी बिना अटके केवल एक ही महोदय पढ़ पाए और वे थे उपकुलपति। वैसे यह कोई विशेष बात नहीं है, पर कभी-कभी छोटी बातें भी विशेष लगती हैं। डा० रघुवंश प्रबन्ध मंत्री ने सन्देश पढ़े। जन-गण-मन से आज का समारोह समाप्त हुआ।

सबसे पहली प्रतिक्रिया हुई इस बात की कि भाषण पढ़े क्यों गये? भाषणों का छपकर बटने के बाद भी पढ़ना जहाँ विषय की सीमा में रहने के लिए आवश्यक है और कथ्य को समेटने में सुविधाजनक है वहाँ भाषणकर्ता के आत्मविश्वास की कमी को भी न चाहते हुये व्यक्त कर देता है। मंच से भाषण का पढ़ा जाना और प्रत्येक का उसको छपे भाषण से मिलाते हुए पढ़ना ऐसा ही है, जैसे डिक्टेशन लेने के बाद स्टेनो मिला रहा हो या प्रूफ रीडिंग की ट्रेनिंग दी जा रही हो। इस परम्परा की सार्थकता भले ही थोड़ी बहुत हो, पर इसमें स्वाभाविकता तथा प्रभाव कहाँ दिखाई पड़ता है?

एक बात और, भाषण तो छपा हुआ है ही, फिर भी पढ़ लेंगे फुर्सत में समझा भी जा सकता है। इन प्रकाशित महिमा स्त्रोत और परिश्रमपूर्वक लिखे गये निबन्ध या शोधपत्रों को पढ़ते हुए मिलाने में क्या तुक है? और यहाँ बात याद आई मुजफ्फरनगर सम्मेलन की। १९६२ में आगरा विश्व विद्यालय हिन्दी प्राध्यापक सम्मेलन में आये थे आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी उद्घाटन करने के लिए। डेढ़ घंटे तक मंत्रमुग्ध रखा था उन्होंने अपनी भाषण कला से, विचार प्रवाह से तथा व्यक्तित्व के सहज उच्छलन से। बाद में बोले—"भाषण छपा हुआ था, लेकिन उसका पार्सल कहीं रह गया।" पार्सल तो था और वहीं पर था, लेकिन उन्होंने भाषण के बाद बंटवाया था। छपे हुए भाषण को पढ़ने में भाषण की स्वाभाविकता, हावभाव का वह स्वाभाविक और मार्मिक प्रभाव, श्रोताओं से सीधा और सहज तथा आवश्यक सम्पर्क कहां रह पाता है।

भोजन के पश्चात चार बजे विचार गोष्ठी शुरू हुई-डा० ब्रजेश्वर वर्मा की अध्यक्षता में मध्ययुगीन भारतीय भक्ति-साहित्य की मूलभूत एकता। यहाँ भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशित भाषण तेरह पृष्ठ था। अध्यक्ष बनाने के लिए आभार प्रदर्शन से लेकर अधिक समय लेने तक की क्षमा-याचना के साथ छपा हुआ। आश्चर्य होता है कि यह सब भी छपा हुआ!" एक मित्र बोले—"आदि और अन्त भी नहीं बोल सकते बिना पहले लिखे हुए!" वाणी में उनकी आक्रोश था। मैंने कहा—"यह शिष्टता का स्थायी प्रकाशन बन जाएगा।" सभी प्रांतीय भाषाओं के साहित्य में उपलब्ध समान तत्वों का उल्लेख था। सामयिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में विशिष्ट और महत्वपूर्ण था यह सब।

कुछ हास्य की पुट भी लग गई, जब कुरुक्षेत्र के महिमा प्रसंग में एक और बात जोड़ते हुए डा० ब्रजेश्वर वर्मा बोले कि डा० विनय मोहन शर्मा से कुरुक्षेत्र की महिमा की एक बात तो छूट ही गई। यहीं पर राधा और माधव की 'भृंग कीट' जैसी भेंट हुई थी। सूर के 'राधा माधव भेंट भई' की ओर संकेत था उनका। सुनकर डा० नगेन्द्र बोले—"वह जगह और बतला दीजिए कि कहां हैं?" लोग हंस पड़े। डा० वर्मा ने कहा—"वे दो स्थान हैं। एक तो डा० नगेन्द्र का हृदय और...।" तभी श्रोताओं में से आवाज आई—"दूसरा आपका।" डा० वर्मा हँस कर बोले—'हां, मेरा भी समझ लीजिए।" पढ़ने का ढंग रोचक था। पौन घण्टे के बाद किताब-मतलब-छपा भाषण समाप्त हुआ। कोई विशेष बोरियत नहीं हुई।

फिर उठे डा० हरवंश लाल शर्मा, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, अलीगढ़ विश्व-विद्यालय, विषय का प्रवर्तन करने। उनके हाथ में भी सात आठ टाइप किये पृष्ठ थे। इस दूसरे भाषण के लिए लोग तैयार नहीं थे। इसी बात को भाँप कर वे बोले कि डा० ब्रजेश्वर वर्मा ने अध्यक्षीय भाषण के अतिरिक्त विषय का विस्तार से वर्णन—विवेचन किया है, निष्कर्ष निकाले हैं, कुछ विशेष कहने को रह नहीं गया और इसके बाद उन्होंने पढ़ना और समझाना शुरू कर दिया—'तदपि कहे बिनु रहा न कोउ'।

और मुझे यह देखकर बड़ा दुख हुआ कि डा० शर्मा के निबन्ध को, जिसकी वे बीच बीच में व्याख्या भी कर देते थे, जो कि मूल से बहुत बड़ी हो जाती थी, लोगों ने सुना ही नहीं। कानाफूसी के अतिरिक्त बातचीत भी शुरू हो गई। दो एक बार तो ऐसा लगा कि शायद बीच में ही बन्द कर देना पड़े लेकिन डा० शर्मा तथा डा० वर्मा के दो तीन बार कहने सुनने पर जैसे तैसे निबन्ध पूरा हुआ। पढ़ने का ढंग भी प्रभाव शाली नहीं था, फिर श्रोता भी तो इस मूड में नहीं थे। कोई अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा।

मैं सोचता रहा कि इन पूर्व लिखित मुद्रित या टंकित निबन्धों को सुनने के लिए ही यह अखिल भारतीय अधिवेशन होता है? यह सब तो घर बैठे भी हो जाता; क्योंकि परिषद् की क्षीण काय त्रैमासिक पत्रिका—हिन्दी अनुशीलन—का पेट भरने के लिए भी इन सबको छाप देते हैं, जो प्रत्येक सदस्य को मिल जाती है। बस इतना-सा काम? केवल दर्शन और यह श्रवण? न कोई चर्चा, न कोई विमर्श ही। यह तो परिषद की सजीवता के लक्षण नहीं हैं। नाम विचार गोष्ठी और केवल कुछ तथ्यों का संग्रह मात्र या किसी समस्या की ओर उँगलि-निर्देश, बस! उसके भले बुरे के विषय में कुछ भी पूछना-गछना नहीं। जो लिख लाओ उसे बिना श्रोता का ध्यान किये पढ़े जाओ। यह क्या?

एक आयोजन और भी था—पुस्तक प्रदर्शनी का। बहुत-सी पुस्तकें। न मालूम किस दृष्टिकोण से उनका चयन किया गया था? नवीनतम प्रकाशन भी पूरे नहीं। किसी काल या धारा विशेष से सम्बद्ध साहित्य का भी संग्रह नहीं। अत्यंत परिचित और पुराने ग्रन्थों के साथ-साथ अत्यन्त सामान्य ग्रन्थ भी। आयोजन लगता था जैसे स्कूल के बच्चों के लिए हो, लेकिन फिर भी दो एक ग्रन्थ देखने को मिल ही गए। अधिकांश डाक्टर—लेखक ललक कर यही देखते थे कि हमारा ग्रन्थ भी है या नहीं और 'उसके' हमसे अधिक तो नहीं हैं।

विचार गोष्ठी के बाद जलपान, मतलब चायपान। फिर डा० ब्रजेश्वर वर्मा को सूझा, क्यों न यहीं शेष गोष्ठी भी हो जाए। समस्या वही कि वक्ता अधिक, श्रोता कम नहीं, पर समय कम। दक्षिण भारत के एक विद्वान अच्छा बोले। फिर गुरुमुखी लिपि में उपलब्ध हिन्दी साहित्य की वकालत बड़े जोरदार शब्दों में डा. जयभगवान गोयल ने की। श्री मनोहरलाल गौड़ का भाषण भी। एक बात और दिखाई पड़ी। जब कोई अल्प ख्यात अप्रसिद्ध विद्वान भाषण दे या निबन्ध पढ़ें, तब विशिष्ट लोग कानाफूँसी, हँसी-मज़ाक, धीरे-से ही सही करते रहें, वातावरण की गम्भीरता को अपनी वाक् पटुता से सरस और कभी-कभी हल्का बनाएँ। लगे कि अपनी खीझ उतार रहे हैं। यह हिन्दी आलोचना और शोध के सिद्ध और प्रसिद्ध महारथियों के भावों के सम्मान के अनुकूल मुझे नहीं लगा।

भोजन के बाद लोक-सांस्कृतिक कार्यक्रम। बिना सांस्कृतिक कार्यक्रम के अधिवेशन या उत्सव कैसा? यह अच्छा रहा कि लोकगीत-गायकों के द्वारा ही यह सम्पन्न हुआ, क्योंकि फैशन में 'नीचे से हेयर' तक डूबी हुई आधुनिकाओं द्वारा ग्रामीण नारियों का अस्वाभाविक अभिनय देखने की बोरियत से बचे। यह ठीक है कि उत्तर प्रदेश से आए हुए लोगों को कुछ विशेष नहीं लगा, लेकिन दक्षिण भारत—महाराष्ट्र तथा बंगाल से आए हुए विद्वानों के लिए मनोरंजन तथा लोक जीवन के ज्ञान की चीज थी ही। वैसे विश्वविद्यालय बन्द होने

नया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण भी छात्र-छात्राओं द्वारा किए जा सकने वाले कार्यक्रम नहीं हो सके।

मैं सोचता रहा कि क्यों न एक कवि-गोष्ठी का आयोजन हो गया? डा० रामकुमार वर्मा, डा० शम्भूनाथ सिंह, डा० जगदीश गुप्त, अजित कुमार इत्यादि तो नये पुराने युग के विख्यात कवि थे ही। कुछ रस भी आता और दृष्टिकोण को समझने में भी सहायता मिलती। एक बात और. अब हमारे यहां कवि-सम्मेलन प्रायः मंचीय सफलता को ही दृष्टि में रख कर जन साधारण के लिए आयोजित किये जाते हैं। क्यों न इस अखिल भारतीय हिन्दी परिषद की ओर से इस स्तर पर एक कवि-सम्मेलन का आयोजन किया जाए कि सभी धाराओं और विचार प्रवाहों की आधुनिकतम गति से हिन्दी के विद्वान भी परिचित हो सकें। 'हिन्दी' के अन्तर्गत केवल शोध और आलोचना ही तो नहीं आती।

अगले दिन सुबह को नगर भ्रमण का आयोजन। दो बसें मिल गईं। सूर्य-कुण्ड मंदिर, गीतास्थान, ज्योतिसर इत्यादि का दर्शन। कुरुक्षेत्र सत्पुरुष पाण्डव, असत्पुरुष कौरव और महापुरुष कृष्ण की स्मृति भूमि है। मन हजारों वर्षों के इतिहास चक्र पर चढ़ जाने कहां से कहां घूम गया। हँसी-मजाक, व्यंग-विनोद के छींटे। बस जब उछलती कूदती जा रही थी, तब डा० जगदीश गुप्त से न रहा गया, बोले—"उछरत सरग परत पातारा।" इस यात्रा में डा० रामकुमार वर्मा का श्रद्धातिरेक से माथा झुकाना, चरणामृत पीना, प्रसाद लेना बड़ा भला लगा। पुराने अवशेषों को वे बड़े आदर से देख रहे थे। मैं सोचता रहा—हमारे संस्कारों की जड़ कितनी गहरी है?

लौटकर चाय के बाद निबन्ध गोष्ठी जमी। श्री देवेन्द्रनाथ शर्मा हिन्दी विभागाध्यक्ष पटना विश्वविद्यालय ने हिन्दी शोध की ह्रासोन्मुख स्थिति का बड़ी स्पष्टता तथा दृढ़ता से विश्लेषण किया। मन की बात कही उन्होंने। वे कह रहे थे कि एक विश्वविद्यालय से 'तुलसी और भारतीय संस्कृति' तथा दूसरे से 'भारतीय संस्कृति और तुलसी', कहीं 'आचार्य चतुरसेन शास्त्री के कथा साहित्य का विवेचनात्मक अध्ययन' तो कहीं 'चतुर सेन के कथा साहित्य का मूल्यांकन', एक जगह 'तुलसी का सामाजिक दर्शन' तो दूसरी जगह 'तुलसी का समाज-दर्शन'। कहीं महाकवि निराला—जीवनी और काव्य' 'निराला और उनका काव्य,' कहीं सूर्यकांत निराला—व्यक्तित्व और कृतित्व', तो कहीं 'निराला और उनका साहित्य'। चार विश्वविद्यालयों में 'हिंदी कविता में राष्ट्रीय भावना' 'हिन्दी काव्य में राष्ट्रीयता' 'हिन्दी काव्य में राष्ट्र भावना का विकास', और 'हिन्दी में राष्ट्रीय कविता'। दो विश्व विद्यालयों में 'हिन्दी उपन्यासों में नारी' और 'हिन्दी उपन्यास में नारी चित्रण' पर उपाधियां मिल चुकी हैं। और अब दो अन्य विश्व विद्यालयों में 'हिन्दी उपन्यास में नारी' और 'हिन्दी उपन्यासों में नारी चित्रण' पर कार्य हो रहा है। पुनरुक्ति तथा गिरते हुए स्तर का बड़ी स्पष्टता से पर्दाफाश किया उन्होंने। डा० इन्द्रनाथ मदान ने कहा कि शोध के स्तर के गिरने के दो कारण हैं—एम. ए. के बाद सीधा पी-एच.डी.। बीच में कुछ और बना लें, तो काम काबू में आ सकता है। फिर परीक्षक के लिए केवल ५० रु०। इतने पैसों में आठ सौ पृष्ठ तक के महाग्रन्थ का मूल्यांकन कहां सम्भव है?

हुआ प्रतिवाद इसका। ५० या २०० रु० का प्रश्न नहीं है। प्रश्न अपने उत्तरदायित्व को निभाने का है। जिन विश्वविद्यालयों में ५० रु० शुल्क है, वहां से भी अच्छे शोध ग्रन्थ निकले हैं तथा जिनमें १०० रु० या ज्यादा है, वहां से भी लचर माल निकलता है, तो यह कोई बात नहीं। फिर बोले डा० नगेन्द्र। संख्या या परिमाण में वृद्धि के साथ गुण में कमी आना सहज है। इस तरह से अपनी शोध के विषय में नहीं कहना चाहिए। दस हजार पृष्ठों में से यदि दो हजार भी काम के निकलते हैं, तो भी सन्तोष प्रद हैं वैसे स्तर गिर रहा है ही। श्री देवेन्द्र नाथ शर्मा ने कहा कि वे आठ हजार पृष्ठ जानते हुए भी क्यों बेकार लिखवाये जाएँ? क्यों न दो हजार ही लिखवाये जाएँ। बाहर वाले क्या कहेंगे, इस भय से सच्ची बात जबान पर भी न लाई जाए। यदि अन्दर कुछ नहीं है, तो बाहर वालों की प्रशंसा से कब तक पेट भरा जाएगा? और यदि अन्दर कुछ है, तो बाहर वालों के बनने से क्या कुछ बनता बिगड़ता है? यह तो निरा पलायन है। काफी उत्तेजक रही गोष्ठी। वास्तव में अधिवेशन अब शुरू हुआ है, ऐसा लगा।

हिन्दी शोध के हितैषियों द्वारा बड़ी प्रशंसा हुई श्री देवेन्द्र नाथ शर्मा की। हिन्दी शोध के बड़े बड़े महारथियों के मन में भी ऐसी दुर्बलता होगी, यह मैं पहले नहीं सोचता था। इस निर्मम तटस्थतापूर्ण आत्म निरीक्षण को आत्म-हीनता या क्षोध को अनुत्साहित करने का प्रोपैगण्डा नहीं माना जा सकता।

अधिवेशन का मतलब केवल देशभर में फैले हुए हिन्दी प्रेमियों में से कुछ को एक मंच पर एकत्र करना—साथ-साथ खाना-पीना, घूमना-फिरना तथा वैयक्तिक स्वार्थों की सिद्धि के लिए—तुम हमें अपने यहाँ परीक्षक बनवाना, हम तुम्हें अपने यहाँ बनवा देंगे—सम्पर्क बनाने से अधिक कुछ और भी होना चाहिए, सामूहिक उपलब्धि के लिए कुछ ज्वलंत समस्याओं का निरूपण और समाधान ही नहीं, अपितु उन निष्कर्षों तथा सुझावों को लागू करना चाहिए। इस अधिवेशन में कोई सुझाव या प्रस्ताव नहीं आया। किसी समाधान की खोज या खोज का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई सामूहिक प्रयास नहीं हुआ। केवल पूर्व लिखित या प्रकाशित भाषण-निबन्धों का पाठ ही इसकी कृतार्थता थी। विचार विमर्श या चर्चा की आवश्यकता अनुभव की गई, तभी तो समय कम होने के बावजूद थोड़ा-सा समय वाद-विवाद के लिए रखा ही गया, लेकिन फिर भी ऐसा लग रहा था कि औपचारिकता की पूर्ति हो रही है, बस। बार-बार प्रवर्तक महोदय का यह कहना कि वक्ता महोदय केवल दो-तीन मिनट में ही अपनी बात समाप्त करें, विचार-विमर्श के उपयुक्त वातावरण बनने में बाधक था।

मजे की बात यह थी कि इसी समय एक गोष्ठी और चल रही थी दूसरे कक्ष में। अध्यक्ष थे डा. बंशीधर विद्यामार्तण्ड। मुसीबत थी श्रोताओं की। कभी यहाँ, कभी वहाँ। डा. नगेन्द्र ने चुटकी ली। जब लोग उठ कर दूसरी गोष्ठी में चलने लगे, तो बोले—"अरे, विद्वान् तो सब यहाँ हैं, आप वहां कहाँ जा रहे हैं?" डा. नगेन्द्र की सजीवता बड़ी भली लगी। ऐसे ही जब वाद-विवाद छिड़ने को हुआ संस्कृत में अन्त्यानुप्रास और तुक को लेकर, तो डा. साहब ने मजा लेते हुए कहा—"विवाद भी संस्कृत में हो, तो अच्छा।" सब लोग हँस पड़े, लेकिन सँस्कृत निष्ठ उसके लिए भी लंगोटा कस कर तैयार थे।

खाने के बाद एक गोष्ठी—महत्व-पूर्ण गोष्ठी 'आधुनिक कविता और रस'। सभानेत्री डा. सावित्री सिन्हा रीडर हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय। प्रवर्तक डा. आनन्द प्रकाश दीक्षित। लम्बा भाषण। रस सिद्धान्त की श्रेष्ठता तथा सामर्थ्य, और आधुनिक कविता को ढँकने की उसकी चेष्टा का उल्लेख। यह गोष्ठी भी बड़ी उत्तेजक और विचार-पूर्ण रही। डा. शम्भूनाथसिंह ने आधुनिक कविता के लिए रस को अनावश्यक बताया। कई सज्जन बोले, डा. जगदीश गुप्त नई कविता के पक्षधर भी, कवि भी। डा. नगेन्द्र द्वारा रस सिद्धान्त में वर्जित रस-पाश और रसचक्र का उन्होंने उल्लेख किया। नयी कविता को फँसाने की चेष्टा का भी उल्लेख किया। डा. गुप्त के विचार से नई कविता रस के अन्तर्गत नहीं आती। एक उदाहरण दिया उन्होंने। ये रसवादी आलोचक इस पाश में नई कविता के हिरण को फँसाना चाहते और खुश होते हैं—कि अहा! देखो यह आया, वह फँसा। डा. गुप्त के विनोदी व्यक्तित्व तथा हलके से व्यंग्य के पुट ने वातावरण को सरस बना दिया। डा. नगेन्द्र ने इसमें और भी वृद्धि की जब उन्होंने नई कविता की जय बोली।

अन्त में उठे डा. नगेन्द्र, डा. शम्भूनाथ सिंह और डा. जगदीश गुप्त का विरोध करते हुए। कल्पना के द्वारा भाव की अनुभूति को वे रस मान[illegible] तथा कविता से रस का अनिवा[illegible] सम्बन्ध बताते हैं। बोले—अब नई कवि[illegible] वाले निर्णय कर लें कि नई कविता [illegible] बनना चाहती है? रस पाश की [illegible] करते हुए वे बोले—यदि फँसाना ही है, [illegible] किसी गेंडे को फंसाएँगे, हिरन का [illegible] फँसाना? डा. जगदीश गुप्त की [illegible] मोटी श्याम देह पर यह मजाक खूब [illegible] था। तभी किसी ने कहा—"यह [illegible] नहीं फसेगा।" किसी और ने आ[illegible] लगाई—'गेंडे को फंसाने के लिए [illegible] नहीं, खाई खोदनी पड़ेगी।" डा. जग[illegible] गुप्त बोले—'अरे, यह यायावर गेंडा है' गम्भीरता और व्यंग्य मिश्रित इसी वा[illegible] वरण में यह गोष्ठी समाप्त हुई।

अब समापन समारोह। डा० [illegible] कुमार वर्मा ने नए सभापति [illegible] हरबंश लाल शर्मा को बीड़ा दि[illegible] हिन्दी वालों की परस्पर नेहमयी परम्[illegible] आभार प्रदर्शन और धन्यवादों के [illegible] लग गए। कुरुक्षेत्र विश्व विद्यालय [illegible] विशेषतः उसके हिन्दी विभाग की [illegible] क्षमता, अतिथि-सत्कार की आत्मी[illegible] तथा प्रत्येक सुविधा को जुटाने की तत्प[illegible] विभाग के सभी प्राध्यापकों की [illegible] निश्चित ही भूलने योग्य नहीं हैं। [illegible] पद्मसिंह शर्मा कमलेश की भाग दौड़ [illegible] प्रबंध कुशलता का चित्र भी काफी [illegible] तक मन पर रहेगा।

जो काम अपनी खुदी को बिल्कुल अलग रख कर अपने निजी सुख दुख, नफे नुकसान और जीत हार का बिल्कुल खयाल न करते हुए सिर्फ फर्ज समझकर किया जावे उससे करने वाले को पाप नहीं लगता।

—गीता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री बसंतसिंह 'भृंग'

यह एक प्रौढ़ कलाकार

◇

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

◇

"हमारे भृंग जी बहुत पहुँचे हुए आदमी हैं भाई साहब, एकदम चाक-चौबन्द-चौकस।"

१९४० की बात है शायद, जब सनातन जी ने एक युवक का परिचय कराया। परिचय में ऊंचाई का इशारा था, गहराई का संकेत, पर आँख फाड़कर देखने पर भी न ऊंचाई ही दिखाई दी, न गहराई ही, साधारण ही साधारणता दिखाई दी और वह भी फूहड़पन को छूती-छूती-सी। कोई नकशा नहीं बना, तो रंग उसमें क्या भरते ?

फिर दो-चार मुलाकातें उड़तीं-सी और यह राय—हंसता खूब है यह आदमी और हंसता क्या है, हँसी बखेरता है, जैसे उसे रखने की इसके पास जगह नहीं और उसके खत्म हो जाने का इसे खतरा नहीं।

फिर और मुलाकातें, तो ध्यान टिका आंखों पर कि देखता है, तो जैसे कलेजे तक झांकता है। सच यों कि तागू; चोर का सगा, तो डाकू का मौसेरा भाई—चोर की शक्ति है दूसरे की अबोधता, डाकू की शक्ति है दूसरे की कम हिम्मती और तागू की शक्ति है अपना हस्त कौशल। इन सबके साथ मुंहफट—बेबाक। सब मिलाकर पहला प्रभाव यह कि देहात का साधारण युवक है, न पहुँचा हुआ, न चाक-चौबन्द-चौकस।

कई साल बाद 'नया जीवन' में छापने को डाक में एक कहानी आई। लेखक बसन्तसिंह भृंग। अच्छा तो श्रीमान जी कहानी भी लिखते हैं, यह यों सोचा, जैसे यह कोई वाहियात बात हो—कम से कम यों कि अनधिकार चेष्टा है यह, पर कहानी पढ़ी, तो हाथ पैर ठण्डे। अन्ध विश्वास की किंवदन्तियों में, भारत के प्राचीन शास्त्रों में और पश्चिमी विज्ञान की खोजों में सोना बनाने के सम्बन्ध में जो कुछ कहा गया है, वह सब उस कहानी में। मैं सोचता रह गया—यह आदमी कहाँ से कहाँ तक फैला है ? सचमुच पहुँचा हुआ, सचमुच चाक-चौबन्द-चौकस, जैसे अबोध-सा चित्रकार और विशाल चित्रपट। कोई देखे, तो हँसे, पर तूलिका के चमत्कार उंगलियों के सधाव और रंगों के सामंजस्य पर ध्यान दे, तो मुग्धता में फँसे।

गाँधी की आंधी के तूफानी दिन—सन् १९२० और १८५७ के स्वतंत्रता तूफान की जन्मभूमि मेरठ का रामना गाँव। वह जन्मा कि जैसे तूफान पर चढ़ा आया। पिता मास्टर, वेतन सात रुपये मासिक, पर तूफानी स्वभाव कि मारपीट में मास्टर। जमीदार गांव के हिटलर, ये भी कैसर विलहैल्म से कम नहीं, जो अकड़ा, पिटा। रिकार्ड है कि एक बार में उन पर सत्ताईस मुकदमे चल रहे थे, पर जेल गए १९३० के स्वतन्त्रता-आन्दोलन में ही। ऐसे आदमी के घर की क्या दशा होगी ? बेटे बसन्त ने जब दर्जा तीन पास कर मदर्से को नमस्कार किया, तो घर के बर्तन भी गिरवी रखे हुए थे। शिखरों में ईर्ष्या थी, घृणा थी, क्रोध था, ज्वाला थी, पर शिखरों की नींव में कहीं ममता, सौजन्य, सहृदयता का नन्हा श्रोत भी था, जो खंडहरों को भवनों में बदलता रहता। यह श्रोत एक अकथ रहस्य है और इसी लिए यह एक गहरा-पैना प्रश्नचिन्ह है कि बर्बादी की उस आंधी में घर-द्वार-धरती साहूकार के पेट में जाने से कैसे बच गई ?

अब बसंत चरवाहा था—गाय चराता, गीत गाता और कुछ खोजता-सा रहता। गाँधी आश्रम वालों ने बुनाई का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्कूल खोला, तो उसमें जा बैठा और चरवाहे से बुनकर होगया। अध्यापक ने 'कविता कौमुदी' दी और आशीष भी। कपड़े का ताना बाना तो नहीं, पर कविता का ताना-बाना करता रहा—सैकड़ों कविताएं कंठ होगईं।

पढ़ना चाहिए, एक दिन सोचा और सरधना जा, पांचवे दर्जे में भरती होगया। पाँचवे दर्जे में पढ़ता, सातवें दर्जे को हिन्दी पढ़ाता। जल्सा हुआ तो पहली कविता लिखी, पढ़ी। इनाम मिला, पर प्रधानाध्यापक नाराज होगए, क्योंकि अभी तक वहाँ वे ही एकमात्र कवि थे। बसंत पढ़ाई छोड़ कर घर आगया, खेती करने लगा।

एक दोस्त ने उर्दू मिडिल पास किया। उसकी किताबें उठा लाया। पढ़ा उर्दू में, पास किया हिन्दी में और मिडलची हो गया। एक अध्यापक के पास 'विशेष योग्यता' का पाठ्य पढने लगा। दो महीने में ही अध्यापक ने कहा—"तुझे क्या पढ़ाऊं तू तो पहले ही पढ़ा हुआ है।' अब नई धुन सवार हुई—पढ़ना, पढ़ना, पढ़ना। टट्टी में भी पुस्तक साथ रहती। पुस्तकालय पाँच मील पर हो या सात मील पर, जाना, पढ़ना, पुस्तकें लाना और यों सब विषयों की सवा सात हज़ार से अधिक पुस्तकें पढ़ीं। यह आगया १९३८।

१९३९ में क्रांतिकारी दल से सम्पर्क हुआ। पहला डाका एक क्रांतिकारी के घर, उसकी ही देख रेख में डाला। ओह, कैसी पीढ़ी थी वह कि न आपा, न परिवार; बस देश ही देश दीखता था आदमी को। पुलिस की निगाह पड़ी, तो फरारी आरंभ। लुका छिपी में आयुर्वेद का अध्ययन किया, परीक्षाएं पास कीं और यहाँ आ गया १९४२। लुका छिपी का अनुभव था, पर खुले आम जत्था ले कर यात्रा आरम्भ हुई। गिरफ्तारी हुई, तो चलने से इंकार, सिपाही तीन मील कंधों पर लाद कर लाए-डेढ़ साल की कैद।

जेल से लौटकर चिकित्सा का कार्य आरम्भ, पर हर समय रोग का ही ध्यान, यह भी कोई जीवन है ? औषधालय बन्द, मैट्रिक परीक्षा पास, फर्स्ट डिवीजन में और अब पंचायत इंस्पेक्टर—यह है १९४९। काम की प्रक्रिया में मतभेद, १९५२ में त्यागपत्र दे, अपने घर और तब से हस्तिनापुर में खेती का काम। यों बसन्तसिंह भृंग एक चरवाहा, एक बुनकर, एक पाठक, एक डाकू, एक क्रान्तिकारी, एक वैद्य, एक राजकर्मचारी और एक किसान, पर असल में किसान, क्योंकि जन्म में उसके कृषि, तो कर्म में उसके कृषि, रहन-सहन में, बातचीत में उसके कृषि और इस तरह उसका १९६५ में प्रकाशित –'बढ़ते चरण, किरकते पाँव' काव्य भारत के किसी किसान का पहला काव्य। यों, यह प्रकाशन, हमारे साहित्य की, हमारे राष्ट्र की एक स्मरणीय घटना !

इसकी भी कथा है—काव्य की परिभाषा पढ़ी और धीरोदात्त आदर्श नायक पर मन न टिका। तब 'कामायनी' में विचार का विकास देखा, सर्वत्र व्याप्त जीवन तत्व पर मन्थन हुआ और राहुल सांकृत्यायन से मिलकर मानव से ध्यान मानवता पर आ टिका। काव्य की रूप-रेखा बनी और सृष्टि रचना, जीव विज्ञान, मनोविज्ञान, काम विज्ञान, मानव समाज का विकास, शरीर-क्रिया विज्ञान, दर्शन, विज्ञान, समाज शास्त्र और शासन पद्धतियों का अध्ययन किया; यानी जीवन के जन्म और विकास का आमूल चूल अध्ययन। इस सबके बाद भविष्य का चिंतन किसुखी मानवता का मार्ग क्या है ? परिणाम यह कि सब झंझटों की जड़ शासन है और शासनमुक्त समाज ही मानवता की मंजिल है। इस सब में दस वर्ष लगे। जाने कितने वर्ष और लगते, पर खपरैल से गिर कर जो देह की रीढ़ टूटी, उसने आत्मा की रीढ़ मजबूत करदी। बाहरी रूप में कहें यह एक अपाहिज का काव्य है, जो १९५२ से पूरे तीन साल खाट पर पड़ा रहा, पर आंतरिक रूप में कहें, तो यह एक आत्मनिष्ठ भारतीय का काव्य है, जिसके लिये वैभव नगण्य और भय अग्रगण्य है।

बसन्तसिंह भृंग, जिसका मानस बसन्त की सुषमा से, जीवन सिंह की निर्द्वन्दता से और स्वभाव भृंग की आवारगी से ओत-प्रोत है। कहूँ एक साधारण आदमी, जिसके जीवन में सब कुछ असाधारण है। स्वर्गीय सनातन जी के शब्दों में—एक पहुँचा हुआ और चाक-चौबन्द-चौकस इंसान, जो सोना बनाने की बातें करते-करते स्वयं पीतल से सोना बन कर उभरती जिंदगियों के लिये सोना बनने की कला का जीवंत पाठ होगया।

उसके बेहुस्न चेहरे पर मेरे हज़ारों हसीन चुम्बन।

अगर हम जीवन-पथ पर फूल नहीं बखेर सकते, तो कम से कम उस पर हम मुस्कानें तो बखेर सकते हैं।

—चार्ल्स डिकेन्स

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : आरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक

ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल

फोर्ट, बम्बई – १

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

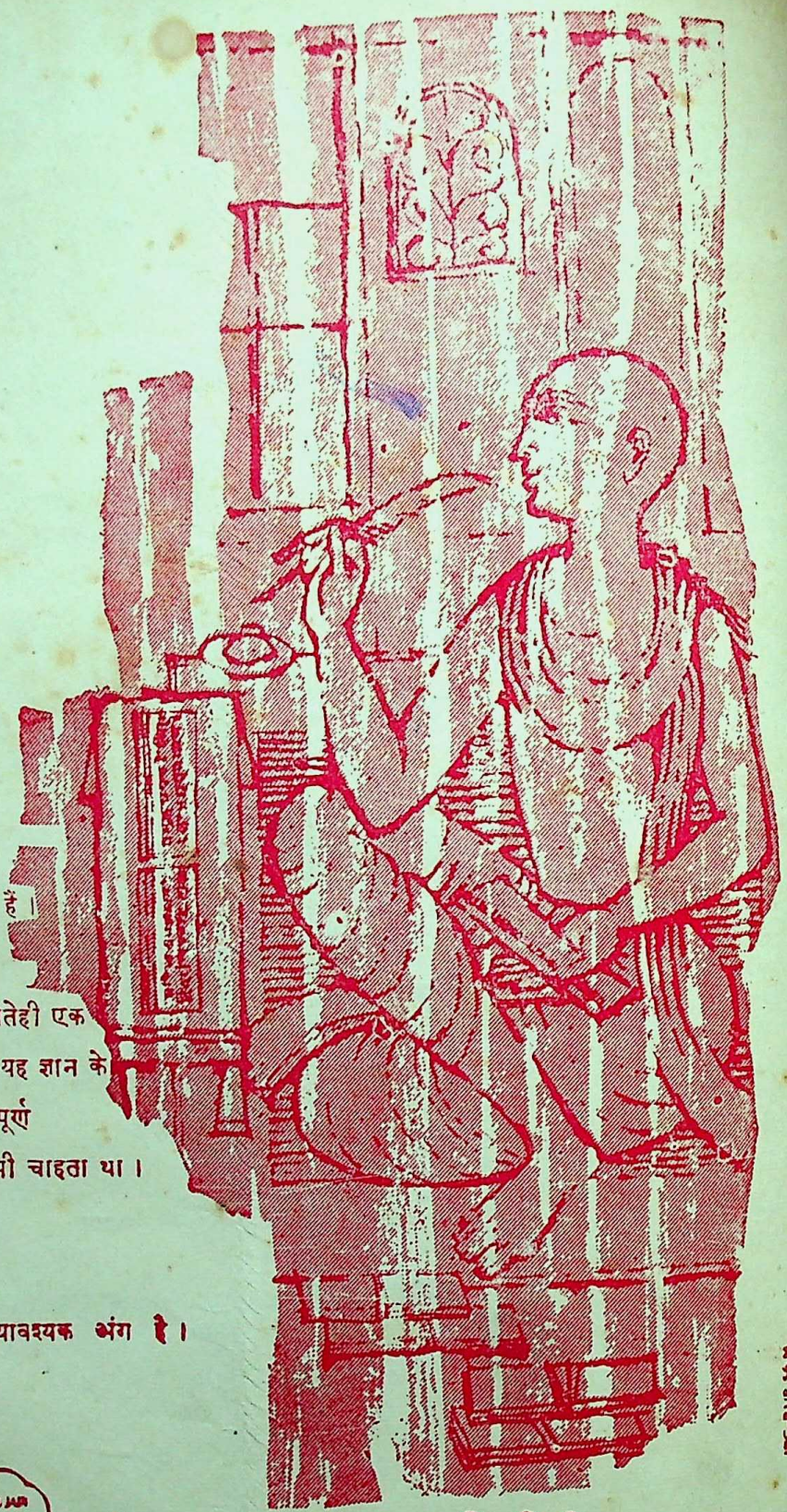

शिलाओं, पेड़ों की छाल, जानवरों की खाल अथवा धातुओं के टुकड़ों की लिखावटें सभ्यता के उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

ROHTAS

VAIL JAIN INDUSTRIES

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

मुद्रक—अखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स, सहारनपुर में मुद्रित-प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

सांस्कृतिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक
तथा राष्ट्रीय चेतना का प्रेरक मनोरंजक मासिक

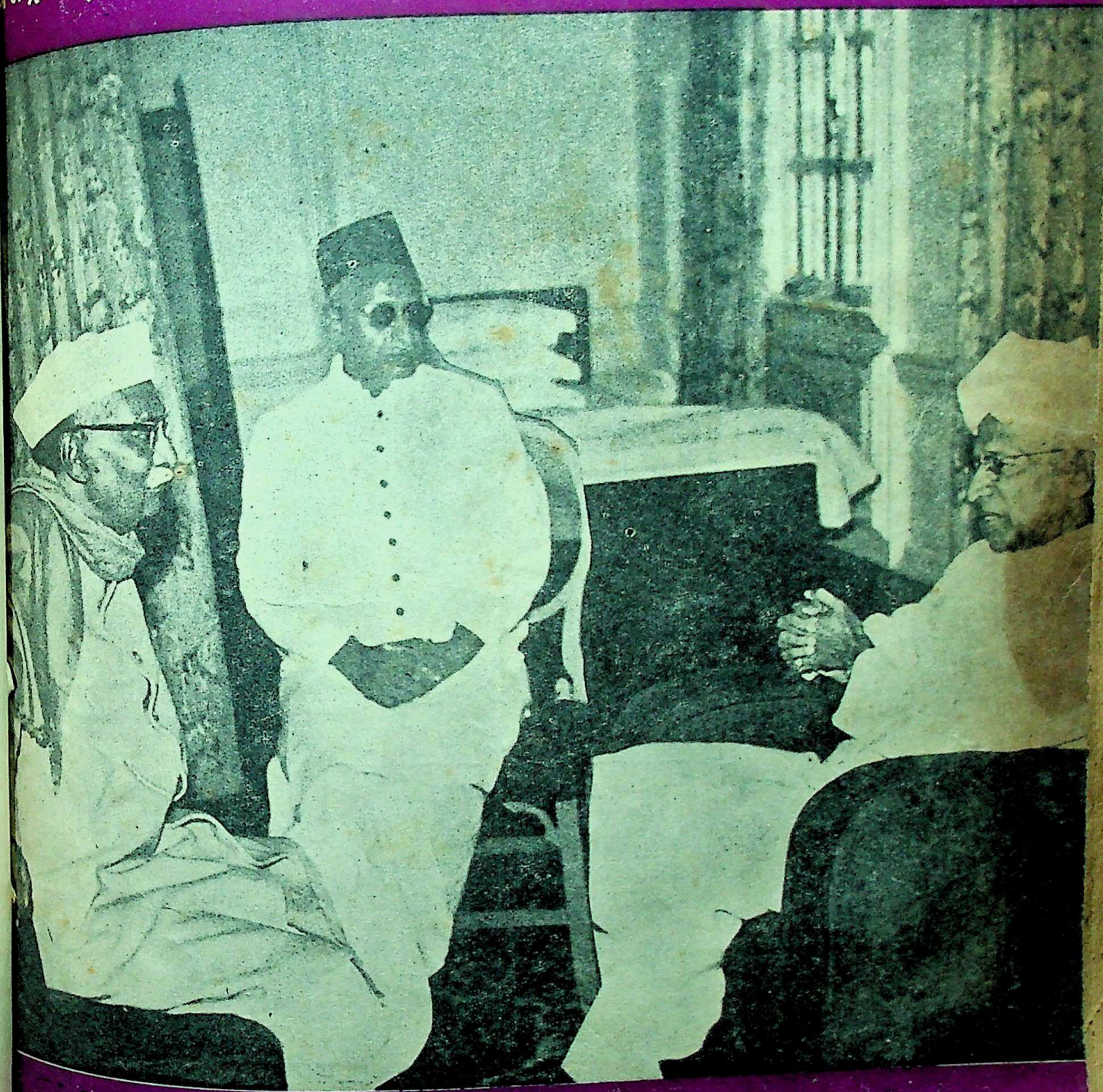

दुनिया को ठीक जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
दुनिया को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
[illegible] के लिए मासिक आवश्यक है.

'नया जीवन' में
दैनिक-साप्ताहिक-मासिक की इन विशेषताओं का समन्वय है
आप उसका एक अङ्क देख कर ही इस के साक्षी हो जाएंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज के एक छोटे पुर्जे पर महात्मा गांधी ने आश्रम के एक रोगी को रात में दी गई एक हिदायत लिखी थी। अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है।

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज के बिना न
ज्ञान मिलते न साहित्य।
कागज हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागजों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारपुनर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याद रखिए

छोटा परिवार
सुखी परिवार

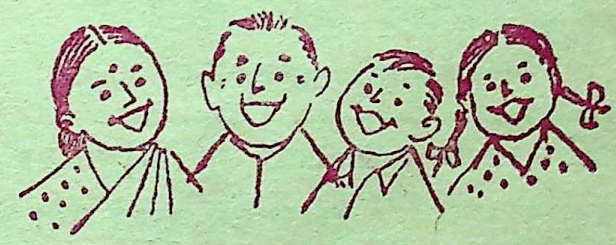

बच्चों को अच्छी शिक्षा, अच्छा भोजन और एक स्वस्थ जीवन मिलना चाहिए। इसलिए, बुद्धिमान माता-पिता उतने ही बच्चे पैदा करने का निश्चय कर लेते हैं, जितनों की वे ठीक से परवरिश कर सकते हैं।

संतति निग्रह के अनेक तरीके प्रचलित हैं लेकिन सबसे नया तरीका 'लूप' है। यह तरीका आसान है और बरसों तक कामयाब रहता है। इसके अलावा यह मुफ्त मिलता है।

'लूप' के बारे में एक प्रशिक्षित डाक्टर से सलाह और जानकारी प्राप्त करने के लिए कृपया अपने निकटतम :

परिवार कल्याण नियोजन केन्द्र

से सम्पर्क कीजिए।

डीए ६५/२१५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित यह साहित्य
आपके पुस्तकालय में न हो तो इसे तुरन्त मंगा लीजिये !

★ जिन्दगी मुस्कराई ४.०० रु०
★ बाजे पायलिया के घुंघरू ४.०० रु०
★ दीप जले शंख बजे ३.०० रु०
★ महके आँगन चहके द्वार ४.०० रु०

(नई स्फुरणा के साथ जीवन को चमकाने वाली चारों पुस्तकें)

★ माटी हो गई सोना २.०० रु०
बलिदान की चेतना से पूर्ण १७ अमर अक्षर चित्रों का संग्रह

★ आकाश के तारे धरती के फूल २.०० रु०
जीवन की गहराई, लोच और गति से भरपूर अनोखी लघु कथाएँ

★ क्षण बोले कण मुस्काए ४.०० रु०
लेखक की विशिष्ट शैली का प्रतिनिधित्व करने वाले
ललित एवं मनोरंजक निबंधों का नव प्रकाशित संग्रह

प्रकाशक:—

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुंड, वाराणसी

विक्रय केन्द्र ३६२०/२१ नेता जी सुभाष मार्ग, दिल्ली—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापित १९५५ — निर्माता : राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद द्वारा

संस्थापक : मान्य श्री अजित प्रसाद जैन (राज्यपाल केरल)

सेवा निधि किदवई अपंग आश्रम

मूक वधिर विद्यालय

प्रद्युमन नगर : सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

मानव भगवान की अद्भुत रचना है। अनेक रूपा उसकी इस विश्व रचना में कुछ ऐसे मानव-पुत्र भी है जिनकी स्थिति एक दागदार मूर्ति जैसी है ! ऐसे मानव- पुत्र ही तो अपंग कहे जाते हैं।

क्या अपंग व्यक्ति हमारी दया और करुणा के पात्र हैं ? शायद नहीं। आखिर हम उन्हें 'बेचारा' मानकर उपेक्षित क्यों समझें। आवश्यक यह है कि वे सामान्य नागरिक की भांति स्वाभिमानी एवं शिक्षित ही न हों, अपितु जीविका-उपार्जन में भी समर्थ एवं तत्पर हों।

इसी पवित्र उद्देश्य से उत्प्रेरित होकर आपकी यह अपनी संस्था १९५५ से कार्यरत है। इस संस्था में गूंगे-बहरे बालक बालिकाएँ अपने व्यक्तित्व के विकास की सभी सम्भावनाओं का अन्वेषण और सम्पादन करते हैं।

संस्था में लगभग ४५ छात्र-छात्राएं तथा ५ प्रशिक्षित अध्यापक हैं। दूर नगरों से आने वाले छात्र-छात्राओं के लिए अलग-अलग, साधन सुविधाओं से पूर्ण दो छात्रावासों की व्यवस्था है, जिनकी देखभाल एक सुयोग्य मैट्रन द्वारा की जाती है। कक्षा ७ तक शिक्षा देने के साथ-साथ लकड़ी का काम, मोमबत्ती निर्माण और सिलाई- कढ़ाई का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

यदि आपकी दृष्टि-सीमा में कोई गूंगा बहरा बालक-बालिका हो, तो कृपया उसे हमारी संस्था के द्वार तक पहुंचा कर अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक दायित्व का पालन कीजिए।

यह संस्था सदैव आपके स्नेह एवं संरक्षण की आकांक्षा करती है। विशेष जानकारी के लिये लिखें।

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–
उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है !

★

कोशिश कीजिये–

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए !

खड्डियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत
एवं
भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस : चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—३१६, ३६४, १६०

प्रबन्धक
सेठ कुलदीप चंद बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रूरी जानकारी

- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य पाँच रुपये औरसाधारण प्रति का पचास पैसे है। विशेषांक का मूल्य पृथक, जो ग्राहकों को वार्षिक मूल्यमें ही मिलताहै।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और अपनी प्रत्येक रचना पर अन्त में अपना पूरा नाम-पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह -मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह प्यार-मान दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें। ३ महाने के भीतर आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाए, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या लिखने की आवश्यक प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीज़ों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक

नया जीवन' * सहारनपुर * उ० प्र०

नया जीवन

विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'
निदेशक

अखिलेश
सम्पादक-संचालक

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का फालतू समय चैन से काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं!

अगस्त १९६५
संचालक

विकास लिमिटेड
सहारनपुर · उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुक्रमणिका

नए युग के सूरज से दीपक का निवेदन !

नए सृजन की बाधाओं से !

राष्ट्र चिन्तन

मेरा जीवन

हम नागरिक चेतना के प्रति सचेष्ट रहें !

हमारे प्रजातन्त्र की रक्षा के लिये

मेरा जीवन : कुछ पथचिन्ह

शान्ति का प्रयत्न हरदम,
पर हथियार का जवाब हथियार से

राष्ट्र की रक्षा और जनदायित्व

जीवन के झरोखे से

पर्वतारोहण के दो रहस्यमय प्रसंग

हमारे सैनिकों के हाथों में
मातृभूमि की आन पूरी तरह सुरक्षित है

हम चाकर रघुवीर के

पढ़ने के कमरे में

श्री ज्वालाप्रसाद ज्योतिषी, एम. पी.
१२३, साउथ एवेन्यू ; नई दिल्ली २३५

श्री सीताराम अग्रवाल
५८, चाह कयाल, हापुड़, मेरठ २३६

स्तम्भ २३७

श्री स० का० पाटिल
रेलवे मंत्री, भारत सरकार, नई दिल्ली २४१

श्री भगवानसिंह, आई. ए. एस.
३३, अलीपुर रोड़, दिल्ली—६ २४६

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' २४८

पद्म भूषण श्री सूर्यनारायण व्यास
विक्रम कार्यालय, उज्जैन २५२

प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री
नई दिल्ली २५४

जनरल करियप्पा; नई दिल्ली २५७
(दैनिक 'नव जीवन' लखनऊ के सौजन्य से)

स्तम्भ २५८

डा० हरिदत्त भट्ट 'शैलेश' २६०
दून स्कूल, देहरादून

श्री य० ब० चौहाण २६१
सुरक्षा मंत्री, भारत सरकार, नई दिल्ली

श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय २६२
डालमिया नगर (बिहार)

स्तम्भ २६४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नये युग के सूरज से दीपक का निवेदन

श्री ज्वाला प्रसाद ज्योतिषी

◇

झपक कर नयन दीपक ने कहा—
ओ बन्धु, थक कर सो रहे अब हम !
सुबह आई । उगो नभ में
विजय के रश्मि-ध्वज बन तुम !
बनी जैसे, दुखों की रात हमने काट दी भाई ,
ये खाई थी बहुत गहरी
अन्धेरी और लम्बी भी ।
उसे ज्यों त्यों है हमने पाट दी भाई !
किसे क्या ज्ञात, हमने स्नेह प्राणों का
अजी, कितना जलाया है ?
तपिश औ' सिद्दतों के बाद कितनी
आज का यह प्रात पाया है !
दहकती रात का ध्वज धर
कंधे पर रात भर दौड़े !
कसकती बेड़ियां हमने बजा
आनंद के स्वर को उठाया है ।
अन्धेरा फिर कभी दीखे,
हमें फिर से बुला लेना !
कसम तुमको हमारे स्नेह की,
दुख में न तुम हमको भुला देना !
अन्धेरे में पले थे हम, अन्धेरे में रहे,
इसका नहीं कुछ गम !
सहन पर कर नहीं सकते जरा-सा भी
हमारी भूमि पर अन्धेर होना हम !
जरा आवाज दे देना दहकती रश्मियों की ;
कब्र से भी तब अरे हम दौड़ आएंगे ।
जला कर प्राण फिर अपने अन्धेरे को भगाएंगे !
नये युग के नये सूरज ,
विदा हम हो रहे हैं तुम न यह समझो !
तुम्हारी हर किरण के तार पर हम
जागरण के गीत गाएंगे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सृजन की बाधाओं से—

श्री सीताराम अग्रवाल

◇◇

कलंकित निशाओं,
सुहासिन सजीली—
नवेली दुल्हन को
कफ़न मत उढ़ाओ;
सजन से मिलन के
सुनहले सपन को
भरम मत बनाओ।

विषैली हवाओं,
स्वजन हैं सगे हैं-
परस्पर लड़ा कर
इन्हें मत मिटाओ;
सृजन के हवन की
सुहानी तपन को
जलन मत बनाओ।

असत आस्थाओं,
विलासी सुरों के,
विनाशी सदन को
न नन्दन बताओ;
सितम पर पड़े
देश भी आवरण को
न कह धर्म, गाओ!

विकल वासनाओं,
उमंगती फसल पर
किरन की मचल पर
क़हर मत गिराओ;
अधूते जहन पर
नशीले ज़हर की
परत मत चढ़ाओ।

पतित कल्पनाओं,
पतन की घिनौनी
अंधेरी गली को
चमन मत बताओ;
कली से भ्रमर के
पतित आचरण को
अधिक मत सराहो।

गलत मान्यताओं,
प्रबल अजगरों की
पतित लालसा पर
सुमन मत चढ़ाओ;
हबस के बुतों की
रसीली गरज को
नियम मत बताओ।

अधम आत्माओं,
श्रमिक के निचोड़े
हुए रक्त को, मधु
बता पी न जाओ;
बिलखते नयन की
दलित के रुदन की
हँसी मत उड़ाओ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

काश्मीर की धरती पर खड़े होकर राष्ट्रपति डा० राधा कृष्णन ने कहा—"मैं देख रहा हूं कि तनातनी और उत्पात के बावजूद कश्मीर के लोग एक जुट रहे हैं और वे समझते हैं कि पाकिस्तानी घुसपैठिये लोगों की हालत सुधारने की नीयत से यहां नहीं आए—हमला और अत्याचार करने आए हैं। लोगों ने अच्छी तरह उनका सामना किया है। मैं उन्हें बधाई देता हूँ।"

"सेना ने अपनी परम्परा के अनुसार बड़ी दृढ़ता प्रदर्शित की है। कुछ परिस्थितियों में हमला ही बचाव का सर्वोत्तम उपाय होता है और हमारी सेना उसी को अपनाने का प्रयत्न कर रही है। हमें किसी भी समय और किसी भी प्रकार के हमले का सामना करने को तैयार रहना चाहिए। हम बेखबर न रहें।"

◇

राष्ट्रपति के पास खड़े होकर रक्षामंत्री श्री यशवंत राव चह्वाण ने कहा—"यहाँ मैंने जवानों और अफसरों में जो हौसला देखा, उससे मेरा दिल बहुत खुश हो गया। उन्होंने घुसपैठियों को बहुत अच्छा पाठ पढ़ाया। हम अमन चाहते हैं, पर जो हमारे देश के साथ हथियार से काम लेना चाहते हैं, उनको हथियार से जबाब देना हमारा फर्ज है और हम यह जवाब सदा देते रहेंगे। पूरा हिन्दुस्तान काश्मीर की जनता के साथ है, जवानों के साथ है और वे अपना काम पूरी हिम्मत से करते रहेंगे, इस बारे में मेरे मन में कोई शक नहीं है। भारत की आजादी और भारत की जमीन पूरी तरह ठीक रखना हमारा काम है और इसके लिए जितनी कीमत देनी होगी हम देंगे, देते रहेंगे, यही भरोसा मैं आपको देना चाहता हूँ।"

◇

लोकसभा में खड़े होकर प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने कहा—"काश्मीर में स्थिति गम्भीर और संकटपूर्ण है, पर मैं विश्वस्त हूं कि सरकार पाकिस्तान की चुनौती का जमकर और सफलता पूर्वक मुकाबला करेगी। मेरी सरकार इस समय अग्नि परीक्षा में से गुजर रही है, पर यह निश्चित है कि वह इस अग्नि परीक्षा में से और भी उज्जवल और शक्तिशाली होकर निकलेगी।"

प्रभु को लाख-लाख धन्यवाद

काश्मीर में जो कुछ हुआ, उसकी एक आस्तिक भारतीय के मन में समग्र अभिव्यक्ति है—प्रभु को लाख लाख धन्यवाद।

कहावत है जबर्दस्त मारे और रोने न दे। काश्मीर में वही होने वाला था। पूर्ण विवरण और विश्लेषण अगले अंक में पढ़ेंगे हमारे पाठक; यहाँ संकेत में इतना कि पाकिस्तानी गुरिल्ला सैनिक उत्तम शस्त्रों के साथ काश्मीर में चुपचाप घुस आए इस धूर्त इरादे के साथ कि वे वहाँ राजनीतिज्ञों की हत्या कर देंगे, पुलों को तोड़ देंगे, एक साथ हजारों जगह आग लगा देंगे और इस तरह काश्मीरी जीवन की व्यवस्था को चौपट कर देंगे। पाक रेडियो से सारे संसार में इसे भारत की गुलामी के विरुद्ध काश्मीरी जनता की क्रांति घोषित कर देगा और काश्मीर क्रांति परिषद की कल्पित संस्था को मान्यता देगा। उसके निमंत्रण पर जनरल अयूब काश्मीर पधारेंगे और रेडियो पर भाषण देंगे। इस भाषण में काश्मीर को आजाद कराने के लिए अल्लाह का शुक्रिया होगा, वीरों को बधाई होगी और भारत को धमकियां भी। काश्मीर में जब यह हो रहा होगा, भारत भर में भी कम्यूनिस्ट और पाकिस्तानी पंचमांगी दंगे करा देंगे। इस परेशानी में अमरीका बीच में पड़ेगा और पाकिस्तान-हिन्दुस्तान को समझाकर पूरे काश्मीर को स्वतंत्र राज्य बना देगा और शेख अब्दुल्ला विजय मुकुट पहन कर प्रधान मंत्री बनेंगे। चीन द्वारा लद्दाख पर कब्जा।

> ये मेनन नहीं है, ये चह्वाण है,
> ये स्पीकर नहीं है, ये एक आन है,
> 'हटो, और हटो' इसका नारा नहीं,
> 'बढ़ो, और बढ़ो' इसकी यह शान है!
> लड़ेगा जो इससे वो पिस जाएगा,
> अड़ेगा जो इससे वो पिट जाएगा,
> कोई जाके कह दो ये अय्यूब से—
> अड़ेगा जो इससे वो मिट जाएगा!!

योजना सही थी, पर कहावत है कि चोर, साँप और राक्षस इनकी मनोकामना पूरी नहीं होती, इसी से यह दुनिया अभी तक बसी हुई है। एक अपढ़ दूधिये ने पहाड़ी दर्रा पार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते हुए चार पाकिस्तानियों को देखा उनकी हरी सलवारों से उसे शक हुआ। उसने पुलिस में खबर दी और हमारी पूरी मैशीनरी चौंककर काम में लग गई। स्थिति यह है कि पाकिस्तानी सैनिकों को खोज खोज कर मारा-पकड़ा-भगाया जा रहा है और दूसरे सैनिक घुस पैठ न कर सकें, इसलिए पाकिस्तानी कब्जे वाले काश्मीर में ५ चौकियों पर हमारी सेना ने कब्जा कर लिया है और वे आगे बढ़ रही हैं। सारे देश में हमारी सरकार के निर्णय और कार्य की प्रशंसा की गई है और राह चलते अनपढ़ लोग तक अपनी खुशी प्रकट करते दिखाई देते हैं। गंभीर प्रश्न है कि पाकिस्तान इस पर क्या चुप रहेगा? हमारे राष्ट्रपति ने कहा है कि हमें किसी भी समय किसी भी तरह के हमले के लिए तैयार रहना चाहिए और हमारे रक्षा मंत्री ने कहा है कि हम तैयार हैं।

उनको लाख-लाख प्रणाम

काश्मीर की रक्षा करने और भारत की शान कायम करने में हमारे जो सैनिक और अफसर शहीद हो गए हैं, उनकी स्मृति में लाख लाख प्रणाम-पुष्प अर्पित हैं।

उनको लाख-लाख बधाइयाँ

काश्मीर की इस घटना का एक महत्वपूर्ण पहलू है काश्मीरी आम जनता का सेना से हार्दिक सहयोग और पाकिस्तानी घुस पैठियों से रुखा असहयोग। ये आम काश्मीरी मुसलमान हैं और इनके रवैये से यह साबित हो गया है कि भारत की आम जनता अच्छे देश की अच्छी जनता कहलाने की हकदार है और आम मुसलमान के बारे में जो लोग यह सोचते हैं कि वह पाकिस्तान - भारत की टक्कर में पाकिस्तान का तरफदार होगा, वे आँखों की बीमारी के पूरी तरह शिकार हैं। इन लोगों को लाख-लाख बधाइयाँ।

कोई गलत फहमी न हो, इसके लिए यह कहना जरूरी है कि काश्मीर में पाकिस्तान परस्त लोग हैं, काश्मीर के घुस पैठियों को उनका पूरा सहयोग मिला है, मिल रहा है। ये लोग खुले आम घूम रहे हैं और गद्दारी कर रहे हैं, इसका कारण सरकार की लापरवाही नहीं, कूटनीति है, पर हमारे ध्यान में यह बात रहनी चाहिए कि पाकिस्तानी घुस पैठियों का सफाया करने के बाद हमें इनक भी इसी तरह चुन-चुन कर सफाया करना है। जिस देश के लोग गद्दारों का सफाया करने में झिझकते हैं, वे ज्यादा दिन आजादी का आनन्द नहीं ले सकते। साथ ही यह भी निश्चित है कि जो हकूमत गद्दारों को ज्यादा दिन जेल से बाहर रहने देती है, उसके कर्णधारों का अंत महलों में नहीं, जेलों में ही होता है। हम नरम हों भलों के लिए, गरम हों बदमाशों के लिए; राष्ट्र के फलने-फूलने का यही मार्ग है—सिर्फ यही मार्ग।

इसी प्रसंग में यह बात भी—

श्री राम मनोहर लोहिया हिन्दुस्तान-पाकिस्तान का एक संघ बनाना चाहते हैं और श्री जय प्रकाश नारायण दोनों में सद्भाव स्थापित करना चाहते हैं। संघ की बात भी अच्छी है और सद्भाव की बात भी, पर इनकी पूर्ति कोई भावष्य का नेता करेगा; आज के नेताओं के भाग्य में तो पाकिस्तान की धूर्ततापूर्ण दुश्मनी को झेलना ही लिखा है। कल की बात सोचना बुरा नहीं, पर जीना आज में ही ठीक है और हम जिस आज में जी रहे हैं, उसमें हमें पाकिस्तान से जमकर टक्कर लेनी है।

इस टक्कर में हमारी आजादी और इज्जत दोनों दाव पर लगे हुए हैं। इसमें सफलता पाने के लिए एक तो वह काम है, जो हमारी सरकार कर रही है पूरी योग्यता से, पर दूसरा काम है यह कि हम देश के भीतर जो गद्दार तत्व हैं उन्हें कुचल दें, पूरी ताकत से, पूरी निर्दयता से। इन गद्दारों में कुछ बेवकूफ हैं, कुछ बदमाश हैं। बदमाश गद्दारी का नमूना अलीगढ़ विश्वविद्यालय में दिखाई दिया था और बेवकूफ-बदमाश गद्दारी का मिला जुला नमूना दिखाई दिया अलीगढ़ विश्वविद्यालय के पुराने छात्रों के सम्मेलन में, जो लखनऊ में हुआ। इसे बुलाया डा० सैयद महमूद जैसे पुराने-नये कांग्रेसी मुसलमानों ने अपनी लीडरी पर पालिश करने के ख्याल से, पर इस पर कब्जा कर लिया लीगोस्प्रिट के मुसलमानों ने। बेवकूफों को समझाया जाना चाहिए और बदमाशों को दफनाया जाना चाहिए।

आसाम में साम्प्रदायिकता की स्थिति विस्फोटक है। वहां दस बरस से पाकिस्तानी मुसलमान गैर कानूनी रूप में घुसते आ रहे हैं। इनकी संख्या हजारों-लाखों में है। देश भर में इसका विरोध हुआ, संसद में इस पर हल्ला मचा, पर स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने किसी की नहीं सुनी और अतिथियों का स्वागत करते रहे। आज काश्मीर जिस घुसपैठ का शिकार है, उसकी मनोवैज्ञानिक भूमिका आसाम की घुसपैठ में है, इससे इंकार नहीं किया जा सकता।

इस समय उन सबको बाहर निकालना शायद संभव नहीं, पर पाकिस्तान की सीमा से मिला हुआ इलाका उन मुसलमानों से विहीन होना चाहिए, यह कोई साम्प्रदायिक बात नहीं है और यदि निकट भविष्य में ही हम अभिनन्दन-पत्र के साथ अपना

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

आसाम पाकिस्तान को नहीं देना चाहते, तो यह पट्टी खाली होनी चाहिए। इस प्रश्न पर आसाम के जिन मुसलमान विधायकों ने त्याग-पत्र दिया, उनका नाम बेवकूफ गद्दारों में लिखा जाना चाहिए और १९६६ के चुनाव में उन्हें दूर रखा जाना चाहिए।

इसके साथ ही उदयपुर में जिस हिन्दू साम्प्रदायिकता का प्रदर्शन हुआ पूरी ताकत से उसे कुचला जाना चाहिए। मैं जानता हूं, मेरी भाषा गरम है, मैं उसके लिए क्षमाप्रार्थी हूं. पर इस निवेदन के साथ कि देश इस समय ताकतवर चीन और पाकिस्तान के साथ युद्ध में और धूर्त अमरीका और ब्रिटेन के षडयन्त्रों में उलझा हुआ है। इस समय लल्लों-चप्पों की भाषा और विचार दृष्टि देश के हित में नहीं है। हमें युद्ध काल की सन्नद्धता में ही इस समय जीना होगा।

शाबाश जनसंघ

जनसंघ ने १६ अगस्त को लोक सभा के सामने जो प्रदर्शन किया, वह हमारे देश के प्रजातंत्री १८ वर्षों के इतिहास का एक अपूर्व प्रदर्शन था। किसी ने कहा, उसमें लाख आदमी थे, किसी ने कहा डेढ़ लाख, पर इस बात से किसी ने भी इंकार नहीं किया कि लालकिले से यह जलूस चला और ८ मील दूर लोकसभा भवन के सामने जब पहुँचा, तो उसका दूसरा सिरा लालकिले पर ही था और तब भी काफी आदमी पंक्ति में आने से बचे हुए थे। इस प्रकार यह जलूस आठ मील से ज्यादा लम्बा था।

इस जलूस ने कम्यूनिस्टों के प्रदर्शन का रिकार्ड पूरी तरह तोड़ दिया। कम्यूनिस्ट प्रदर्शन के बाद पत्रों में कई वक्तव्य छपे थे कि लोगों को दिल्ली की सैर के नाम पर बहका कर लाया गया और प्रदर्शन के बाद किसी ने उनकी बात नहीं पूछी। किराया-खर्चा देकर ५--७ लाख आदमियों को देशभर से दिल्ली लाना आज की हालत में किसी पार्टी के लिए कोई मुश्किल काम नहीं, पर मनुष्यों की संख्या ही इस जलूस की विशेषता न थी।

जलूस में सब लोग ५-५ और ७-७ की संख्या में क्रमबद्ध होकर ८ मील चले और फिर अनुशासित रूप में सड़क पर बैठ कर उन्होंने भाषण सुने। दोनों काम किराये के आदमी नहीं कर सकते। जलूस का अनुशासन उसकी विशेषता थी और इसी अर्थ में मैं कहता हूं कि शाबाश जनसंघ, तुमने एक नमूना दिया कि प्रजातंत्र में किस प्रकार के शान्त-संतुलित प्रदर्शन होने चाहिएं।

दिल्ली बची, पटना जला

समाजवादी पार्टी के नेता श्री राममनोहर लोहिया ने पहली अगस्त को 'भारतबन्द' का नारा दिया था कि उस दिन कच्छ समझौते के विरोध में सारे देश में हड़ताल हो। बाद में उन्होंने एक वक्तव्य में कहा था कि भारत बन्द हो न हो, दिल्ली बन्द तो उस दिन होगा ही। इसका अर्थ उस समय यह समझा गया था कि रविवार होने के कारण दिल्ली में नियमानुसार बाजार बन्द रहेंगे ही, डाक्टर लोहिया का संकेत उसी ओर है।

बाद की कानाफूसियों में सुना गया कि डा० लोहिया ने उस दिन दिल्ली में सौ जगह आग लगाने की योजना बनाई थी। जो गुप्तचर विभाग को पता चल जाने से असफल हो गई। पता नहीं इसमें कितनी सचाई है, पर पटना में डा० लोहिया की पार्टी ने पथराव-आगजनी के जो प्रदर्शन किए, उनसे यह कानाफूसी बल पाती है।

डाक्टर लोहिया विद्वान आदमी हैं, इसलिए उनसे देश को यह पूछने का अधिकार है कि आपके आंदोलन की सीमा क्या है? प्रजातन्त्र में शान्त-अनुशासित प्रदर्शनों की स्वतन्त्रता है, पर क्या डाक्टर लोहिया के प्रजातन्त्र में हिंसात्मक उपद्रवों की भी स्वतन्त्रता है?

डाक्टर लोहिया एक मरियल राजनैतिक दल के नेता हैं, हकूमत की कुर्सी उनसे लाखों कोस दूर है. इसलिए संभव है वे इस पर हाँ कहें, पर प्रश्न यह है कि क्या भारत की प्रजातन्त्री सरकार भी इस पर हाँ कहना चाहती है? वह हाँ नहीं कहना चाहती, तो उससे एक राष्ट्रीय पत्रकार और १९२०से १९४७ तक भारत की स्वतन्त्रता के एक साधारण स्वयं सेवक के रूप में मेरा नम्र प्रश्न है कि जिन उपद्रवों में स्टेशन फुँकते हैं और जनता का जीवन अस्त व्यस्त किया जाता है, उनमें पुलिस की गोली से कुल दो आदमी क्यों मरते हैं, दो सौ चार सौ का वध पागल कुत्तों की तरह क्यों नहीं होता?

मानवीय दृष्टि से डा० लोहिया के साथ मेरी सहानुभूति है; क्योंकि वे एक हताश महत्वाकांक्षी हैं। १९६१ में उन्होंने कहा था कि "चुनावों में मुझे कहीं हरियाली नहीं दीखती।" तो जिस नेता को चुनावों में पतझड़ दीखती है, जिसमें जनता के जीवन में उतरने की क्षमता नहीं और जो क्रांति करने में भी असमर्थ हैं, वह उपद्रव के सिवा और क्या करेगा बेचारा?

डाक्टर लोहिया को भारत सरकार ने गिरफ्तार किया है, यह ठीक ही है, पर इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि कानून उनके साथ साफ साफ बात करे और वही व्यव-

★

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हार करें, जो एक साधारण नागरिक के साथ ऐसी स्थिति में किया जाता है। भारत सरकार की पकड़ो-छोड़ो नीति ने देश में उपद्रवों को बहुत प्रोत्साहन दिया है, क्योंकि इससे लीडरी पर नई पालिस की सस्ती प्रवृत्ति को काफी बढ़ावा मिलता है।

हमारी विदेश नीति बदले !

देश में ऐसे राजनीतिज्ञ और राजनैतिक दल हैं, जो भारत की विदेश नीति को पसन्द नहीं करते, उसे बदलना चाहते हैं। दलों में जन संघ मुख्य है और राजनीतिज्ञों में राजाजी और कृपलानी जी। ईमानदारी प्रशंसनीय है कि वे इसे खुले आम कहते हैं, पर यह बात अभी आम आदमी के लिए एक रहस्य ही है कि विदेश नीति बदलने का अर्थ क्या है ?

आज तक भारत तटस्थ है। इसका अर्थ है कि न वह अमरीका के ग्रुप में है, न रूस के। भारत की नीति नकारात्मक नहीं है। वह दोनों के गिरोह-ग्रुप में नहीं है, पर दोनों का मित्र है। दोनों ने उसे मित्र माना है और उसके निर्माण में और संकट में सहायता दी है। यह भारत की तटस्थता की सफलता है, फिर तटस्थता नीति का विरोध क्यों है ?

इसके उत्तर में उफन कर कहा जाता है कि जो लोग अमरीका के पैसे खाते हैं, उसके हाथ में खेलते हैं, वे ही तटस्थता के विरोधी हैं। मेरी राय में यह हल्की और ओछी उक्ति है। राजाजी जैसे लोग यह महसूस करते हैं कि भारत को साफ-साफ अमरीका के ग्रुप में होना चाहिए क्योंकि हम दोनों प्रजातन्त्री हैं और चीन के मुकाबले पर अमरीका-इंगलैंड ही हमारी वास्तविक मदद कर सकते हैं। कहना चाहिए कि भारत की स्वतंत्रता को जो खतरा पैदा होगया है, उसके कारण ही ये लोग अमरीका की ओर रुझान रखते हैं। यह बात ठीक है, पर इससे भी गहरी बात यह है कि अमरीका-समर्थक लोग यह महसूस करते हैं कि हमारी तटस्थता की नीति देर-सबेर भारत को कम्यूनिस्ट देश बना देगी और इसे ये लोग देश की संस्कृति के लिए घातक समझते हैं।

प्रजातंत्र और नैतिकता के सिद्धांतों का तकाजा है कि हम इन लोगों की नीयत पर शक न करें और मतभेद में भी उस पर विचार करें।

इसके साथ ही एक नम्र निवेदन मैं अमरीका-समर्थकों से भी करना चाहता हूं कि १९४७ से १९६५ तक एक बात बिना कहे भी स्पष्ट है कि अमरीका हमारी दोस्ती के लिए लालायित है, पर वह इसकी कीमत में हमसे काश्मीर चाहता है। उसकी कूटनीति है कि स्वतंत्र काश्मीर उसके हाथ में हो। आज जो काश्मीर का एक भाग पाकिस्तान के हाथ में है, वह इसलिए कि अंग्रेज कूटनीति ने जब कबायलियों की चढ़ाई के रूप में काश्मीर पर कब्जा करने का दाव फेंका, तो रसैल हैट नामक अमरीकी ने आगे बढ़कर चुपचाप कबायलियों की कमान अपने हाथ में लेली और इस तरह दोनों कूटनीतियां जब टकराई, तो माउंटबैटन ने मामला सुरक्षा परिषद में फँसवा दिया। बाद में साधन संपन्न अमरीका पाकिस्तान पर छा गया और अंग्रेज-प्रभाव खत्म हो गया।

इसके साथ ही काश्मीर का जो दूसरा भाग हमारे हाथ में है, वह भी इसलिए कि रूस ने बार बार सुरक्षा परिषद में 'वीटो' का उपयोग करके अमरीका की कूटनीति के दांत तोड़ दिये और हमारी ऐतिहासिक मदद की। आज काश्मीर में जो कुछ हो रहा है, क्या उसमें अमरीका की कूटनीति नहीं है ? इस प्रश्न पर हाँ कहना मुश्किल है। इस स्थिति में भारत की विदेश नीति के उन आलोचकों को, जो भारत को अमरीका के साथ बांधने की बात सोचते हैं, ईमानदारी के साथ खुले आम कहना चाहिए कि भारत काश्मीर अमरीका को सौंपकर उसकी दोस्ती खरीदे; भारत का इसी में हित है और भारत के लिए यही उचित है। क्या वे यह साहस करेंगे ?

स्वयं मेरी अपनी धारणा १५ वर्षों के निरन्तर चिन्तन से यह बन गई है कि देश की विदेशनीति के कारण नहीं, स्व० प्रधान मंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू की अस्वस्थ गृहनीति के कारण देश उस रास्ते चल पड़ा है, जो कम्यूनिज्म के चौराहे पर जा पहुँचता है और यदि नया नेतृत्व उसे बदलने में असफल रहा, तो देश में कम्यूनिस्ट क्रांति के भीतरी बाहरी प्रयत्न किसी दिन एक ऐतिहासिक चमत्कार के रूप में सफल हो जाएंगे।

समाजवादी या सर्वोदयवादी गृहनीति ही देश को इस खतरे से बचा सकती है, जो जन प्रशिक्षण पर पूरा ध्यान दे, प्रशासन को चुस्त और परिश्रमी बनाए, विषमता के एक बड़े भाग को तुरन्त तोड़कर रख दे, जन शक्ति का पूरा उपयोग करे, धन शक्ति को सीमित करे और इस तरह जन-जन को स्वतंत्रता का अनुभव कर गौरव की भावना और श्रम की साधना से अनुप्राणित कर दे।

मैं आग्रहपूर्वक देश के राजनैतिक विचारकों का ध्यान विदेश नीति की जगह देश की बीमार गृहनीति पर केन्द्रित करना चाहता हूं। विदेश नीति देश का फोटो पेश करती है, पर गृहनीति उसे स्वास्थ्य-सौन्दर्य प्रदान करती है। आश्चर्य है कि हम देश से अधिक दिलचस्पी विदेश में लेते हैं और स्वास्थ्य को भूल कर सुन्दर फोटो के लिये परेशान हैं।

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

★

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाटिल शब्द सुनते ही कानों में एक और शब्द गुनगुनाता है पटेल और तब आती है एक गूंज, जैसे किसी चट्टान की टंकार हो, तो सदोबा कान्ह जी पाटिल हमारे देश का एक शक्तिशाली व्यक्तित्व। वे सामने हों, तो गठन पर ध्यान जाता है, पर यह ध्यान केन्द्रित होता है उनके स्कन्ध-ग्रीवा प्रदेश पर और लगता है उन पर जिम्मेदारियों का बोझ है—जिम्मेदारियाँ उठाने की शक्ति है उनमें। उनका व्यक्तित्व स्वनिर्मित है और यहाँ है उसके निर्माण की प्रक्रिया कि दूसरे भी प्रेरणा लें—

मेरा जीवन

— श्री स० का० पाटिल —

मेरे विगत ४५ वर्षों के सार्वजनिक कार्य पर निर्णय देना दूसरे लोगों का काम है, लेकिन कुछ ऐसी व्यक्तिगत बातें, जिनका ज्ञान दूसरे लोगों को होना जरूरी नहीं है, मेरे जैसे सार्वजनिक व्यक्ति के हर भले-बुरे कार्य की पृष्ठभूमि की निर्माता है। मस्तिष्क के कुछ रुझान; कुछ उग्र रुचियाँ और अरुचियाँ तथा आदतें इस व्यक्तिगत अनुभव की ही उपज हैं। इनकी तर्कसंगत व्याख्या करना मुश्किल होगा, लेकिन ये जैसी भी हों; इन से मुक्त नहीं हुआ जा सकता। आत्म-विश्वास की मात्रा ही मनुष्य के हर भले-बुरे कार्य की आधार होती है। यदि आत्म-विश्वास हो तो एक साधारण मनुष्य अप्रत्याशित काम कर सकता है। यदि आत्म-विश्वास न हो तो मनुष्य के लिए जीवन में सही मानी में कुछ भी कर पाना असंभव होगा।

सावन्तवाड़ी राज्य के एक छोटे-से गाँव के एक साधारण परिवार में मेरा जन्म हुआ। यह रियासत इस समय महाराष्ट्र के रत्नागिरि जिले का भाग है। यह गांव कस्बे से कई मील दूर है। जब मैं केवल १० वर्ष का था तभी दुर्भाग्य से मेरे पिता का देहावसान हो गया। यदि ईश्वर ने थोड़ा-सा भी आत्मविश्वास देने की कृपा न की होती तो मैं निश्चय ही आज जैसी हैसियत में नहीं होता। अपने ८० प्रतिशत देशवासियों की भांति मैं भी एक किसान होता और मेरा जीवन किसी न किसी दिन प्राकृतिक क्रम में साधारण तरीके से समाप्त हो लेता। वह एक ऐसा अन्त होता जिसके लिए, एक कवि के शब्दों में, 'न कोई आंसू बहाता, न कोई सम्मान देता और न कोई प्रशस्ति-गीत गाता।'

मुझे प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए भारी संघर्ष करना पड़ा। प्राथमिक विद्यालय की खोज में मुझे गांव-गांव भटकना पड़ा, लेकिन मेरा आत्म-विश्वास कायम रहा और एक दिन मैं एक ऐसे छोटे कस्बे में पहुंच गया जहाँ मेरे लिए माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने की संभावना उज्ज्वल थी। इसी आत्म-विश्वास में मुझे विद्यालय से कालेज में पहुँचा दिया। यह वास्तव में बड़ा कठोर संघर्ष था, पर ईश्वर की कृपा से आत्मविश्वास ने कभी मेरा साथ नहीं छोड़ा और मैं एक दिन बम्बई में पहुंच कर एक कालेज में प्रविष्ट हो गया।

फिर महात्मा गांधी और उनके अहिंसक असहयोग का जमाना आया। गांधी जी चाहते थे कि छात्र विद्यालयों से बाहर निकल आएँ। यह उनके १९२० ई० के सत्याग्रह का एक अंग था। जब उन्होंने बम्बई के छात्रों के सामने भाषण किया तो हजारों छात्र प्रभावित हो उठे। मेरे लिए वह अत्यन्त बेचैनी का दिन था। मैं गांधी जी के आह्वान की लहर में सहज ही बह गया। मेरे आत्म-विश्वास ने, उस समय मुझे एक नयी दिशा की ओर प्रेरित किया। इसी दिशा ने अंत में मेरा समूचा जीवन ही पलट दिया। इस प्रकार मैंने स्वयं को २० वर्ष की अल्प आयु में ही राजनीति में पाया। अब मैं विश्वास पूर्वक कह सकता हूं, जो मैं नयी पीढ़ी से हर समय कहता ही आया हूं कि आत्मविश्वास हो, तो हम संसार में कुछ भी कर सकते हैं यह न हो, तो हम कुछ भी नहीं कर सकते।

दूसरी बात मैं नयी पीढ़ी को यह बतलाना चाहता हूँ कि वे हर काम के लिए विचार और कर्म की गम्भीरता को ग्रहण करें। मैं यह बात किसी अहंकारी भाव से नहीं कह रहा हूँ। काफी हद तक अपने सार्वजनिक कर्तव्यों के प्रति अनुभूत इसी गम्भीरता के कारण मुझे सफलता मिली है। पत्रकारिता हो या राजनीति, मैंने अपने कर्तव्यों व दायित्वों को गंभीरता से ग्रहण किया है। जब मैं छोटा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था, तब अपने स्कूल और कालेज में मैं वाद-विवाद सभाओं में काफी भाग लिया करता था। इस साधारण कार्य के प्रति भी मैं गम्भीर रहता था। मैं अपने दीर्घ व्यक्तिगत अनुभव के आधार पर तरुणों को, जिन्हें अभी अपना जीवन ढालना है, यह कहने का अधिकारी हूं कि उन्हें अपने काम गम्भीरता से करने का गुण शुरू से ही विकसित करना चाहिए।

मैं अपनी पीढ़ी को बहुत भाग्यशालिनी मानता हूं। इसके नायक महान नेता रहे हैं। मुझे स्मरण है कि जब मैं छोटा बच्चा था, तब स्कूलों और कालेजों के छात्र लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के पीछे कितने दीवाने थे? इस महान देश भक्त का दर्शन मात्र स्वराज्य का संदेश और उस युवा पीढ़ी को प्रेरणा देता था। जब गांधी जी छात्रों से बलिदान की माँग करते थे, तब मैंने लड़कों और लड़कियों को आंसू बहाते देखा है। पिछले कुछ दशकों में हमारे राष्ट्रीय अनुशासन के उच्च आदर्श हमारे इन नेताओं के प्रभाव के ही कारण थे। अन्य कौन-सी पीढ़ी तिलक, गांधी और नेहरू जैसे नेताओं की समकालीनता पर गर्व कर सकती है? हमारी राष्ट्रीय प्रेरणा के स्रोत गांधी जी के अलावा मेरे जीवन को बनाने और मुझे वर्तमान ढांचे में ढालने वाले व्यक्ति सरदार वल्लभ भाई पटेल थे।

यदि मेरी स्मरण शक्ति ठीक है तो सरदार से मेरी पहली भेंट १९३२ की कराची कांग्रेस के बाद हुई थी जिसमें सरदार अध्यक्ष थे। उस समय से लेकर उनके निधन तक, २० वर्षों की अवधि में, मैं उन्हें अपना निर्देशक और पथप्रदर्शक मानता रहा।

इस देश में यह राय आम प्रतीत होती है कि सरदार वल्लभ भाई पटेल कुछ कठोर प्रकृति के और तेज मिजाज थे। अनेक लोग उन्हें 'भारत का लौह पुरुष' कहते हैं। इसमें संदेह नहीं कि वह लौह पुरुष थे इस दृष्टि से कि चुस्त और कठोर प्रशासन के लिए उन पर निर्भर रहा जा सकता था, लेकिन मनुष्य के रूप में, वह उन लोगों के लिए जिन्हें उनके निकट सम्पर्क का सौभाग्य मिला, बहुत विनम्र और स्नेहशील थे। अपने व्यक्तिगत मित्रों और अनुयायियों के बारे में कोई बात होने पर वह कई बार भावाभिभूत हो जाया करते थे। सरदार को लोगों का चयन करके उचित स्थान पर लगाने की विलक्षण बुद्धि प्राप्त थी। फालतू बातों ने उन्हें कभी आकर्षित नहीं किया। जब वह एक बार व्यक्ति को कसौटी पर परख कर खरा समझ लेते थे तो फिर उस पर अकूत विश्वास करते थे और जो चाहते वह उससे करा लेते थे। सरदार के चरित्र की इस विशिष्टता पर आचरण करने की मेरी हमेशा चेष्टा रही है।

४५ वर्षों से अधिक लम्बे सार्वजनिक जीवन में मेरा यह अनुभव रहा है कि मधुर स्वभाव रखने से काम ज्यादा और बेहतर किया जा सकता है। मैंने इसे अपने जीवन का नारा बना लिया है। जब भी कभी मुझे तरुणों से मिलना होता है तो मैं उनसे कहता हूं कि वे जो कुछ करें, 'मुस्कराहट' के साथ करने की आदत डालें। मुस्कराता हुआ चेहरा और संतुलित मिजाज सार्वजनिक व्यक्ति की सबसे बड़ी संपदा है। विनोद-बुद्धि शायद ईश्वर का उपहार है। सभी मतभेदों को दूर करने के लिए मुस्कान के प्रयोग के सबसे बड़े उदाहरण महात्मा गाँधी हैं। कभी कभी तो मैं यह सोच बैठता हूं कि वह जब ज्यादा क्रुद्ध होते थे तो ज्यादा हँसते थे। इस विषय में हर व्यक्ति महात्मा गाँधी नहीं हो सकता, लेकिन उनसे सीख अवश्य सकता है।

सार्वजनिक विवाद हमेशा ही दुःखद होते हैं और उस समय और भी दुखद हो जाते हैं जब उनका प्रभाव अनेक लोगों की सुख-समृद्धि पर पड़ता है। विवादों का अन्त करने को कोई तैयार नुस्खा नहीं है, लेकिन यदि मनुष्य स्वयं को दूसरे की स्थिति में रखकर परखने की आदत डाल ले तो इन विवादों का दुष्प्रभाव काफी हद तक दूर हो जाए।

हर व्यक्ति को अपना निजी मत बनाने का अधिकार है। यह संभवतः उसका बुनियादी अधिकार है, लेकिन बुनियादी अधिकार को भी किसी दूसरे के बुनियादी अधिकार के आड़े आने का हक नहीं है। मैंने अपने जीवन में इसका एक उपचार खोज निकाला है और वह है, 'समिति बुद्धि'। यह मेरा आविष्कार नहीं है। यह सबसे अधिक व्यापारिक परामर्श है, खास तौर से उच्च पदों पर आसीन लोगों के लिए। जब लगभग आधा दर्जन व्यक्ति एक मेज के चारों ओर बैठ जाते हैं तो समझौते की भावना के बगैर काम नहीं चल सकता। अंत में जो भी फल निकलेगा, वह एक व्यक्ति की बुद्धि की नहीं; अपितु एक समिति बुद्धि की उपज होगा।

अगर कोई विचित्र-बुद्धि प्राणी सर्वाधिक मित्रों वाले व्यक्तियों की प्रतियोगिता आयोजित करे तो मैं उसमें शामिल होने को तैयार हूं और बहुत सम्भवना है कि मुझे उसमें प्रथम पुरस्कार मिले। मैं यह बात आत्म-प्रशंसा के रूप में नहीं कह रहा हूँ। मैं मैत्री में विश्वास रखता हूँ। इससे जीवन जीने योग्य बनता है। अधिकाधिक मित्र बनाने की इस प्रवृत्ति से मुझे सुख और शाँति दोनों मिले हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

★

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री भगवान सिंह आई० ए० एस० हमारे देश के उन प्रशासनीय अधिकारियों में हैं जो शासन की कुर्सी पर रहते भी देश के सामाजिक तथा राष्ट्रीय प्रश्नों में गहरी दिलचस्पी रखते हैं। वे उनमें नहीं हैं जो सरकारी 'फाइलों के डिस्पोजल' मात्र को ही अपने कार्य की सीमा मानते हैं। वे उनमें हैं जिनकी आँखों की पुतली में निर्माण का बिन्दु रहता है। श्री भगवान सिंह अपने कर्तव्य के प्रति सदा सजग हैं और चाहते हैं कि सभी देशवासी इसी प्रकार सजग रहें। इस दिशा का उनका एक चिन्तन यहाँ प्रस्तुत है, इस विश्वास के साथ कि उनके ये विचार पाठकों को प्रकाश देंगे और उज्ज्वल कर्म की प्रेरणा भी!

हम नागरिक चेतना के प्रति सचेष्ट रहें!

अभी पिछले दिनों जापान में हुए ऑलम्पिक खेलों की बात है। भारतीय टीम के दो खिलाड़ी सिगरेट पीते हुए खेल के मैदान से गुजर रहे थे। एक ने सिगरेट पीने के बाद जलता हुआ टुकड़ा यूँ ही मैदान में फेंक दिया। एक जापानी नागरिक ने, जो उन्हें देख रहा था, सिगरेट का टुकड़ा उठाया और बुझाकर दूर कूड़े के पात्र में डाल आया।

यह एक छोटा-सा उदाहरण है, जिससे नागरिक दायित्व के अभाव तथा नागरिक दायित्व की सजगता का आभास होता है।

किसी भी राष्ट्र का विकास उसकी नागरिक भावना पर निर्भर करता है, किन्तु एक ऐसे देश में जहाँ शासन पद्धति प्रजातांत्रिक हो, वहाँ नागरिक भावना का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। इसके अभाव में प्रजातन्त्र के असफल होने का खतरा बना रहता है। आधुनिक राष्ट्रों में प्रजातन्त्र प्रणाली सर्वाधिक सफल उन्हीं राष्ट्रों में हुई है, जहां नागरिक अपने दायित्व निभाते हैं तथा शासन में पूर्ण निष्ठा से भाग लेते हैं।

आप जानते हैं कि शासन के प्रयत्नों के फलस्वरूप नागरिकों को बहुत-सी सुविधाएँ तथा लाभ पहुँचते हैं, जिसके बदले में शासन द्वारा नागरिकों से सेवा कार्य लेने तथा नागरिक कर्तव्यों का पालन करने की अपेक्षा करना भी न्यायोचित है, जैसे शान्ति कायम रखने के लिए कानून का पालन करना और कानून का उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध प्रशासन को सहयोग देना, जिससे कानून का पालन किया और करवाया जा सके। कानून का पालन करने के लिए प्रत्येक को विवश किया जा सकता है, किन्तु कानून तोड़ने वाले के विरुद्ध अन्य नागरिकों का सहयोग प्राप्त करना उनकी नागरिक चेतना पर निर्भर करता है।

श्री भगवानसिंह, आई. ए. एस.

ऐसे बहुत से कार्य हैं, जो केवल कानून द्वारा नहीं कराये जा सकते जैसे निर्वाचन के समय मतदान में भाग लेना तथा नागरिकों को मतदान में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना तात्कालिक राजनीतिक तथा आर्थिक समस्याओं का अध्ययन करना तथा उनका निदान खोजने की चेष्टा करना आदि, किंतु एक प्रजातंत्रीय राष्ट्र के नागरिकों में इन सब गुणों का होना बहुत आवश्यक है।

हमारी बहुत-सी समस्याएं नागरिक दायित्वों के न समझने के कारण जन्म लेती हैं। भारत जैसे देश में जहाँ भांति-भांति के लोग, भांति-भांति की भाषाएँ तथा अनेक धर्म हैं, वहाँ नागरिकों को सहिष्णुता के प्रति सदैव सजग रहना चाहिए। दूसरे के मत, भाषा तथा धर्म का आदर किये बिना हमारा सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक जीवन सुचारु रूप से नहीं चल सकता। किसी बात का विरोध करने के लिए हम अपना संयम खोकर हिंसा तक पर उतारू हो जाते हैं।

पिछले दिनों भाषा संबन्धी तथा उससे पहले साम्प्रदायिक झगड़ों में उपद्रवियों ने रेलगाड़ियों, बसों डाकखानों आदि को जो सार्वजनिक सम्पत्ति के भाग हैं, करोड़ों रुपयों की क्षति पहुंचाई। वे यह भूल गए कि करों द्वारा दिये गये हमारे धन से ही इनका निर्माण हुआ है और क्षति का बोझ अन्ततः हमारे ही ऊपर आकर पड़ेगा। हमारे प्रिय प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने अभी पिछले दिनों कहा था: प्रजातन्त्र में हम प्रदर्शन या वोट द्वारा विरोध कर सकते हैं, किन्तु हमें विरोध के लिए हिंसा को नहीं अपनाना चाहिए। हिंसा प्रजातन्त्र की जड़ें काटती है। अतः सामाजिक व्यवहार में हिंसा और उपद्रव को स्थान नहीं होना चाहिये, किन्तु इसका यह अर्थ भी नहीं, कि जब देश पर किसी शत्रु देश का आक्रमण हो, तब भी हम अहिंसा की ही बात करें। ऐसे समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रत्येक हृष्टपुष्ट नागरिक को राष्ट्र की सेवा में अपने को प्रस्तुत करना चाहिए। वे सशस्त्र सेना में भर्ती होकर देश की रक्षा करें। अनेक देशों में संकट के समय अनिवार्य सेवा घोषित कर दी जाती है, किन्तु मेरे विचार में इस बात की आवश्यकता नहीं पड़नी चाहिए। नागरिकों में राष्ट्रीय चेतना का उद्वेलन स्वतः होना चाहिए। तभी किसी देश का स्वतन्त्र और जीवित रहना सम्भव है।

इस सन्दर्भ में गत महायुद्ध का एक उदाहरण याद आ रहा है। जब जर्मनी इंग्लैंड पर अपने बम बरसा रहा था, तब एक दिन उसके बम एक अस्पताल पर भी गिरने लगे, जिसके फलस्वरूप अस्पताल की छत टूट-टूट कर बिस्तरों पर लेटे बीमारों पर गिरने लगी। कितने ही बीमार ऐसे थे, जो बिस्तर से उठ कर इधर-उधर भाग कर अपने को बचाने में असमर्थ थे। उस अस्पताल में जो नर्सें कार्य करती थीं, उन्होंने ऐसे मरीजों को बचाने के प्रयत्न में गिरती हुई छतों के पत्थरों को अपने ऊपर झेला और इस प्रकार कई नर्सों ने तो प्राण भी गंवा दिए। अन्ततः जीत इंग्लैंड की हुई और इसका एक कारण था अपने दायित्वों के प्रति नागरिक चेतना।

यह बताने की आवश्यकता नहीं कि शासन-व्यवस्था का अधिकांश व्यय करों से आता है। सेना शिक्षा निर्माण आदि के कार्य इसी पर आधारित हैं। करों द्वारा बिना धन प्राप्त किए व्यवस्था नहीं चल सकती और व्यवस्था के अभाव से क्या हो सकता है उसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है। शासन व्यवस्था से थोड़ा बहुत समाज और व्यक्ति सभी को लाभ होता है। अतः उसके बदले में शासन को कर देना कानून सम्मत है ही साथ ही, यह नागरिकों का नैतिक उत्तरदायित्व भी है।

जो नागरिक खाद्य पदार्थों तथा दवाइयों आदि के व्यापार में संलग्न हैं, इनसे यह आशा की जाती है कि वह इन वस्तुओं में किसी प्रकार की मिलावट न होने दें। कई बार इन चीजों में मिलावट के कारण भयंकर दुष्परिणाम हुए हैं। एक बार किसी स्कूल के सैंकड़ों छात्रों की दशा इस लिए चिन्ताजनक हो गई कि उन्होंने जो भोजन किया था, उसमें किसी अन्य वस्तु की मिलावट थी। ऐसे ही एक बार एक पिता अपने बीमार बेटे के लिए बाजार से इन्जैक्शन लाया और इन्जैक्शन लगते ही उनके पुत्र ने प्राण छोड़ दिए। कारण —इन्जैक्शन नकली था। ऐसे जघन्य अपराधों को क्षमा नहीं किया जा सकता। जो व्यक्ति ऐसे कुकर्म करते हैं उनके सम्बन्ध में अन्य नागरिकों को बिना किसी हिचकिचाहट के अधिकारियों को सूचित करना चाहिये।

नागरिकों को देश की राजनीतिक तथा आर्थिक समस्याओं के प्रति सजग रहना भी उतना ही आवश्यक है जितना अन्य सामाजिक समस्याओं के प्रति। असामाजिक विघटनकारी, साम्प्रदायिक तत्वों से भारत जैसे देश के, जो धर्म निरपेक्षता की घोषणा कर चुका है नागरिकों को सावधान रहना चाहिए। ऐसा न करने से देश की एकता पर आंच आती है। हमारे देश में शिक्षा का प्रसार पाश्चात्य देशों की अपेक्षा कम है। जनता के अधिकांश भाग के अशिक्षित होने के कारण प्रतिक्रियावादी तत्व इसका लाभ भी उठा जाते हैं इसलिए उत्तरदायी नागरिकों का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे देश में एक ऐसा वातावरण पैदा करें जिससे राष्ट्र की समस्त शक्ति एक सूत्र में पिरोई जा सके।

जहाँ तक आर्थिक समस्या का प्रश्न है, वह विभिन्न देशों में नागरिकों को विभिन्न प्रकार के आचरण करने के लिए विवश करती है। भारत जैसे देश में जहाँ स्वतन्त्रता के पश्चात निर्माण तथा अन्य विकास कार्य तेजी से चल रहे हैं, नागरिकों से यह अपेक्षा की जाती है कि अपने खर्चों में कमी करें तथा बचे हुए धन को राष्ट्रीय योजनाओं में लगाएँ। आबादी की निरन्तर वृद्धि के कारण विकास योजनाओं के सम्मुख जो संकट आ गया है उस ओर भी नागरिकों का ध्यान जाना चाहिए। परिवार नियोजन के महत्व को स्वीकार किये बिना आर्थिक प्रगति के पथ पर हम तीव्रता से आगे नहीं बढ़ सकते। उदाहरण के लिए यदि दिल्ली को ही लिया जाए तो आप देखेंगे कि यहाँ की आबादी में दो लाख के करीब की वृद्धि प्रति वर्ष हो जाती है। आबादी की इस तेज रफ्तार के आगे भोजन, स्वास्थ्य, शिक्षा परिवहन मकान आदि की योजनाएँ काफी पिछड़ जाती हैं। इस कारण नागरिकों को सामूहिक रूप से उतनी सुविधायें नहीं मिल पातीं जितनी कि अपेक्षित हैं। अतः नागरिकों के सुखी जीवन के लिए परिवार नियोजन तथा आबादी का विकेन्द्रीयकरण भी आवश्यक है। जहाँ तक परिवार नियोजन का सम्बन्ध है, नागरिकों को इस ओर स्वतः प्रेरित होना चाहिये।

नागरिक दायित्वों का क्षेत्र व्यापक है। इसे किसी प्रकार की सीमा रेखाओं में नहीं बांधा जा सकता। इसके समुचित ज्ञान के प्रसार के लिए पब्लिक स्कूलों से यह आशा की जाती है कि वह विद्यार्थियों में उत्तरदायित्वों को स्वीकार करने की भावना पैदा करें तथा नागरिक चेतना के प्रति सचेष्ट रहें ताकि अपने भावी जीवन में वे समाज तथा राष्ट्र को सुन्दर बना सकें तथा शासन में पूर्ण योग्यता, इच्छा तथा निष्ठा से भाग ले सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे प्रजातन्त्र की रक्षा के लिए

—कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

❀ शताब्दियां आईं और चली गईं।

❀ प्यास जागती रही, जलती रही, बुझी नहीं।

❀ एक की ही प्यास गजब है, फिर यह करोड़ों की प्यास और करोड़ों क्या, एक पूरे विशाल राष्ट्र की प्यास।

❀ यह प्यास अखंडता की, जिसे हमारी राजनीति ने बहुत ही अर्थगर्भ नाम दिया-चक्रवर्तित्व।

❀ चक्र यानी पहिया, जिसके चारों ओर लकड़ी का एक स्थूल घेरा, मजबूत लोहे की पट्टी से आवृत्त कि उसे सड़क की रगड़ से सुरक्षित रखे, बीच में चारों ओर फैले आरे, जो फिर एक गोलाकार दृढ़ खोल में जड़े, यह है चक्र।

❀ चारों ओर का घेरा क्या? वह हुई पृथक अस्तित्व रखने वाले राज्यों को बिखरने से बचाने वाली राष्ट्र-वृत्ति बीच के आरे हुए छोटे-छोटे राज्य और बीच का खोल हुआ सांस्कृतिक एकता की भावना, जो इन छोटे-छोटे राज्यों को अपनी सीमित स्वतन्त्रता का उपभोग करते हुए भी पारस्परिक लड़ाई-विद्वेष से दूर रखे।

❀ करोड़ों भारतीयों की शताब्दियों तक जागती, जलती प्यास कि कोई महा-पुरुष जन्मे जो टुकड़े-टुकड़े से छोटे राज्यों में बँट-बिखरते भारत को अखंडता के चक्र में बाँध दे।

❀ बुद्ध ने इतिहास में सब से पहले इस प्यास की तृप्ति देने का प्रयत्न किया और राजनैतिक एकता की भूमिका के रूप में सामाजिक और सांस्कृतिक एकता की सिद्धि के लिए चक्र को धर्मचक्र के रूप में अपने महान संकल्प का प्रतीक बनाया।

❀ उनके बाद के सन्त भी राष्ट्र की अखंडता को चोट पहुँचाने वाले विभेदों पर चोट मारते रहे। इन में कबीर की चोट सबसे करारी चोट थी।

❀ यह सब भारत की अखंडता के बीज को भावनात्मक एकता के आँचल में सुरक्षित रखने का अत्यन्त दूरदर्शितापूर्ण संकल्प था।

❀ भारत की अखंडता, जिसका पहला स्वप्न ऋषिवर अगस्त्य ने देखा था और जिसकी सिद्धि राम के हाथों हुई थी और भारत की अखंडता, जो कृष्ण के लाख प्रयत्न के बाद भी उनके ही सामने मची आपसी तू तू मैं मैं की यादवी में बिखर गई थी।

❀ विक्रमादित्य और अशोक, चाणक्य और चन्द्रगुप्त, अकबर और औरंगजेब शिवाजी और टीपू सुल्तान इस बिखराहट को समेट कर खोई अखंडता को अपने ढंग पर फिर से स्थापित करने के प्रयत्न ही तो थे।

❀ भारत का यह चक्रवर्तित्व ही करोड़ों की प्यास थी।

❀ अंग्रेजों का अभिनन्दन कि उन्होंने अपने स्वार्थ के लिये ही सही, भारत की अखंडता स्थापित की और हुतात्मा शहीदों और बलिपंथी स्वयंसेवकों के मस्तक पर चन्दन, कि १५ अगस्त १९४७ को अंग्रेज भारत से चले गये और भारत में स्वतन्त्रता का सूर्योदय हुआ।

❀ अंग्रेजों की कूटनीति का यह चमत्कार था कि भारत का नेतृत्व उस स्वतन्त्रता को बटे हुये रूप में स्वीकार करने पर विवश हुआ और भारत के नेतृत्व का यह चमत्कार था कि वह ग्वालियर इंदौर-बड़ौदा के मराठे राज्यों, हैदराबाद-जूनागढ़-रामपुर-भोपाल के मुसलमान राज्यों, कोचीन त्रावणकोर मैसूर के दक्षिणी राज्यों और जयपुर जोधपुर-बीकानेर-उदयपुर के राजपूत राज्यों को आत्मसात करने में सफल हुआ।

❀ इससे भी बढ़कर वह फ्रांस से पाण्डीचेरी-चन्द्र नगर और पुर्तगाल से गोवा-दमन-दीव के उन भागों को भी वापस ले सका, जिन्हें लेने में अंग्रेजों की ताकत सौ वर्षों से भी अधिक समय में भी असफल रही थी।

❀ १५ अगस्त १९४७ को भारत में जिस चक्रवर्तित्व की स्थापना हुई, वह कांग्रेस-पार्टी का चक्रवर्तित्व था और इतिहास की मसखरी के क्या कहने कि कांग्रेस ने प्रथम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गवर्नर जनरल के रूप में जिस पुरुष को उस चक्रवर्तित्व का प्रतीक बनाया, उसका नाम ही था चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य।

❀ कांग्रेस पार्टी का यह चक्रवर्तित्व दो वर्ष पांच महीने चला और तब २६ जनवरी १९५०को नए संविधान के रूप में जनता का अपना चक्रवर्तित्व हो गया—

पार्टियों के हाथ में जनता की नहीं, जनता के हाथ में पार्टियों की बागडोर आ गई।

इस तरह राम के समय स्थापित और कृष्ण के समय विश्रृंखलित भारत की अखंडता का प्रतीक चक्रवर्तित्व जिस संविधान के द्वारा स्थापित और संरक्षित है, उसकी विशिष्टता के प्रति कौन शिष्ट न होगा, पर जब मैं देखता हूँ कि उस संविधान में पिछले पन्दरह वर्षों में सतरह संशोधन हुए हैं और अभी कई संशोधन सम्भावित हैं, तो मन में अनेक प्रश्न-चिन्ह तीखे होकर सामने आ जाते हैं, जिनमें मूर्धन्य प्रश्न है, ऐसा क्यों ?

भारतीय जीवन दर्शन के महापंडित श्री सम्पूर्णानन्द ने इस प्रश्न का यह उत्तर दिया है—

हमारे संविधान में कई दोष हैं। न तो उसका आधार भारतीय समाज का जीवन है, न उस पर भारतीय विचारकों के निष्कर्षों का कोई प्रभाव पड़ा है। जिन लोगों को उसके बनाने का श्रेय है, वे अच्छे वकील तो थे, परन्तु भारतीय होते हुए भी जनता से बहुत दूर थे। उसके हृदय स्पन्दों का उनको पता नहीं था। स्वातंत्र्य संग्राम से वे दूर थे और राष्ट्र पर सर्वस्व होम करने वाले कार्यकर्ताओं का उनको कभी सम्पर्क नहीं हुआ। गांधी जी उनके लिए पहेली थे। उनकी बातें इन विद्वानों की समझ में अव्यावहारिक थीं। अतः विभिन्न देशों के संविधानों में उनको जो अच्छा लगा, काट छांट कर एकत्र कर दिया। इसमें और की इतनी बातें भरी हैं कि काम में बाधा पड़ती है।

गान्धी जी क्या चाहते थे ? इस प्रश्न का उत्तर है यह—

❀ "गान्धी जी चाहते थे कि संविधान भी उन सिद्धान्तों पर बने, जिनका प्रतिपादन भी बने महाभारत के शांतिपर्व में और शुक्र ने शुक्रनीति में किया है। उनकी अभिलाषा थी कि उसके द्वारा रामराज्य, धर्मराज्य स्थापित होना संभव हो, परन्तु संविधान में इन चीजों की झलक भी नहीं देख पड़ती, भारतीय विचारों की परछाई भी नहीं पड़ने पाई है।"

इसी दिशा का एक और विचार है—"स्वराज्य प्राप्ति के बाद पाश्चात्य संविधान की नकल करना हमारे लिए आवश्यक नहीं था। हमको चाहिए था कि प्रत्येक प्रश्न पर विचार करके भारतीय परम्पराओं के आधार पर उसको सुलझाते। इस प्रकार हम जगत के सामने लोकतंत्र का नया और स्वस्थ रूप रख सकते थे। ऐसा न करके भूल की। अब हमको वे सब कठिनाइयां झेलनी पड़ रही हैं, जो पश्चिमी संविधानों की अनुषंगी हैं। हमने ब्रिटेन की नकल तो की, परन्तु हमारे यहां वह पर्यावरण नहीं है, जिसमें ब्रिटेन का शासन वृक्ष फला-फूला।"

महत्वपूर्ण बात है यह पर्यावरण। हरेक देश की आबहवा अपने अलग ढंग की होती है। तभी तो हरेक देश का वृक्ष हरेक देश में नहीं पनपता। हमारे विशाल देश में तो अलग-अलग क्षेत्रों की आबहवा अलग अलग ढंग की है। लीची का फल कुछ स्थानों में पनपता है, तो संतरे का कुछ में और लौकाट सिर्फ एक ही क्षेत्र में होता है। भारत के पर्यावरण को पिछले युग में सबसे अधिक दो महान पुरुषों ने समझा। एक थे गाँधी जी, दूसरे थे रवीन्द्रनाथ, पर संविधान के निर्माताओं ने दोनों को अछूता बनाकर संविधान से दूर रखा।

वे पश्चिम की चमक, शब्दों की दमक और कानूनी बारीकियों की रमक में ऐसे रमे कि यह भी भूल बैठे-"लोकतन्त्र शासन की कुछ विशेषताएं हैं, जो उसको अन्य व्यवस्थाओं से पृथक करती है, परन्तु लोकतन्त्र किसी विशेष प्रकार की शासन व्यवस्था का ही नाम नहीं है। वह विशेष प्रकार की मनोवृत्ति का प्रतीक है। यदि यह मनोवृत्ति ढीली हो, तो अच्छे से अच्छा लोकतांत्रिक संविधान देर तक टिक नहीं सकता। ऐसा लगता है कि हमारे देश में इस मनोवृत्ति की कमी है और हमारे संविधान की सबसे घातक भूल यही है कि वह उस मनोवृत्ति को न पैदा करता है न बढ़ावा ही देता है। देश में फैली आज की विश्रृंखलता का यही रहस्य है।

यह विश्रृंखलता अब अराजकता की ओर बढ़ने लगी है और कौन सहमत न होगा कि अराजकता का वातावरण प्रजातंत्र के लिए हमेशा खतरनाक होता है। केन्द्रीय संचार एवं संसद कार्य मंत्री श्री सत्यनारायण सिंह ने अपने एक भाषण में बड़े मौके के दो सूत्र दिए हैं। पहला यह कि हमें नियंत्रित प्रजातन्त्र और निरंकुश प्रजातंत्र दोनों से बचना चाहिए और दूसरा यह कि जहाँ प्रजातंत्र कमजोर है, वहीं हिटलर भी पैदा होता है।

प्रजातन्त्र को निरंकुश होने से न्यायालय, विरोधी दल और समाचार पत्र बचाते हैं और इनके साथ प्रशिक्षित लोकमत। हमारे देश में न्यायालय बहुत अच्छी स्थिति में हैं और वे योग्यता और ईमानदारी से काम कर रहे हैं, पर विरोधी दल, समाचार पत्र और प्रशिक्षित लोकमत तीनों ही अस्वस्थ हैं। विरोधी दल बटे-बिखरे हैं और राष्ट्रीय नेतृत्व की दृष्टि से दीन दशा में हैं, समाचार-पत्र स्वतन्त्रता के वर्षों में शरीर की दृष्टि से जितने समर्थ हुए हैं, अधिकांश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आत्मा की वाणी की दृष्टि से उतने ही असमर्थ भी हो गये हैं और जनमत को प्रशिक्षित करने का मुख्य काम न पत्रों ने ही सही ढंग से किया है न राजनैतिक दलों ने ही। फलस्वरूप हमारा प्रजातन्त्र निर्बल है और उसको सबलता के लिए आवश्यक है कि हम अब संविधान में नए पैबन्द लगाने का परिणामहीन कार्य बंद कर, नई संविधान सभा के द्वारा नया संविधान बनाएँ, जो हमारी परिस्थितियों और परम्पराओं के अनुकूल हो, अठारवें स्वतन्त्रता दिवस का यही सबसे पहला तकाजा है।

(२)

- १५ अगस्त १९४७ की आधी रात।
- घटे बजे कि स्वतंत्रता का गौरव देश पर बरस पड़ा।
- स्वतंत्र देश के नागरिक के रूप में मैंने कुछ व्रत लिए।
- राष्ट्रीय पत्रकार के रूप में मैंने कुछ संकल्प किए।
- उनमें एक संकल्प यह भी था कि दस वर्ष तक मैं नेहरू सरकार का समर्थन अंधविश्वास के साथ करूंगा।
- तह में यह विवेक था कि एक नई सरकार को शासन प्रक्रिया समझने के लिए इतना समय मिलना ही चाहिए।
- पहली प्रेस कान्फ्रेंस में जब नेहरू जी ने कहा—हम भूलों से नए पाठ पढ़ेंगे, तो मुझे बेहद खुशी हुई थी।
- मैंने अपनी पूरी शक्ति, पूरी योग्यता और पूरी आत्मीयता से सरकार का समर्थन किया।
- श्री गोविन्द वल्लभ पन्त ने मेरे समर्थन को आक्रामक आत्मविश्वास से पूर्ण कहा था और संयुक्त पार्टियों के खाद्य आन्दोलन के बाद मुख्य-मंत्री श्री सम्पूर्णानन्द ने कहा था—"प्रभाकर जी ने बौद्धिक रूप से आंदोलन की पसलियां तोड़ दीं और प्रशासन ने उसे गिरा लिया।"
- चीनी आक्रमण के बाद प्रधानमंत्री नेहरू जी की सराहना भी मुझे प्राप्त हुई थी और नए प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री की प्रशंसा भी मुझे प्राप्त हुई है।

स्पष्ट है कि मैं आज भी—संकल्प के दस वर्ष बीतने पर भी—कांग्रेस-सरकार का समर्थक हूं, इस विवेक के साथ कि सैनिक डिक्टेटरी के सिवा अभी उसका कोई विकल्प नहीं है, पर मेरे मन में यह बात भी स्पष्ट है कि इस सरकार के हाथों में हमारे जिस नए प्रजातंत्र का सरक्षण और पोषण है, वह धीरे-धीरे खतरे में पड़ता जा रहा है और इसका मुख्य कारण यह है कि हमारा संविधान हमारे देश की परिस्थितियों के अनुरूप नहीं है।

१९५७ का चुनाव समाप्त होते न होते मेरे मन में पहली बार यह बात आई थी कि भारत ने अपनी प्रगति के लिए व्यवस्था का जो ढांचा तैयार किया है, उसमें कहीं न कहीं कोई भारी भूल है। श्री श्याम सुन्दर लाल कक्कड़ एक देश भक्त उच्च राज्याधिकारी हैं। भारत के निर्माण में उनकी पदगत ही नहीं, व्यक्तिगत भी आस्था है। वे नम्बर एक नागरिक, नम्बर एक प्रशासक और नम्बर एक विचारक हैं। वे प्रश्नों पर इस गहराई से विचार करते हैं कि कई बार मन में आया कि वे अफसर न होकर सम्पादक होते, तो देश का अधिक लाभ होता।

उन्हीं दिनों एक दिन उनके साथ भोजन करते-करते मैंने पूछा—"कक्कड़ साहब, क्या आपको लगता है कि राष्ट्र की प्रगति का जो ढांचा हमारे बड़ों ने बनाया है, वह ठीक चल रहा है?"

"क्यों?" बहुत गम्भीरता से उन्होंने मुझे घूरा, तो मैंने कहा—"इस चुनाव में मुझे अनुभव हुआ है कि हमारे राष्ट्रीय ढांचे की जड़ में घुन लग गया है और भविष्य में यह चरमराकर गिर पड़ेगा। आप तो उस ढांचे के भीतर हैं, क्या आपको ऐसा नहीं लगता?"

वे चुपचाप खाना खाते रहे। मैंने समझा, अपनी पद-मर्यादा के कारण मेरे प्रश्न पर कुछ कहना नहीं चाहते। थोड़ी देर बाद वे बोले—"अभी-अभी मैंने एक किताब पढ़ी है 'दस डाउनिंग स्ट्रीट।' इसमें इंगलैंड के प्रधानमंत्रियों का वर्णन है। इसे पढ़कर एक सूत्र हाथ आया है कि अपने वर्तमान में हरेक युग भविष्य को जितना बुरा समझता है, वह उतना बुरा कभी नहीं होता।" मैं चमत्कृत हो उठा। यह मेरे प्रश्न का अर्थ गर्भ और कलात्मक उत्तर था, नए चिंतन का प्रेरक।

उन्हीं दिनों एक पुस्तक प्रकाशित हुई—'विनोबा के साथ सात दिन।' इसमें श्री-मन्नारायण जी ने विनोबा जी के साथ हुए विचार विमर्श की रिपोर्ट दी थी। मैं उसमें यह पढ़कर उत्फुल्ल हो उठा कि विनोबा जी का दृढ़ मत है कि भारत में चुनावों की जो प्रणाली चालू है, वह ठोस और स्वस्थ लोकतंत्र के विकास में योग नहीं दे सकती। विनोबा जी इस बात के लिए बहुत उत्सुक हैं कि जहां तक मुमकिन हो इस तरीके को मूलतः बदल देना चाहिए। यह काम तुरन्त हाथ में लेना चाहिए, ताकि १९६२ के आम चुनाव एकदम दूसरे और ज्यादा तर्क संगत आधार पर हो सकें। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि चुनावों की प्रणाली में परिवर्तन करने के लिए भारतीय संविधान में भी तबदीली करनी पड़ेगी।

श्रीमन्नारायण जी ने इसी प्रसंग में लिखा था—'विनोबा जी की राय में दलगत प्रणाली पर आधारित संसदीय लोकतंत्र भारतीय स्थितियों के अनुकूल नहीं। वह एक तरह के मिश्रित लोकतंत्र या सर्वोदय समाज की प्रणाली को तरजीह देते हैं। विनोबा जी पंचायत प्रणाली के आधार पर जनता द्वारा बेरोकटोक चुनी गई लोकप्रिय सरकार को ज्यादा पसंद करेंगे। पंचायत प्रणाली की बुनियाद ही दलीय सरकार की प्रणाली से भिन्न है।

इस अध्ययन से मेरा ध्यान ग्रा-- पंचायतों की ओर गया और मैंने ग्रा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंचायतों की स्थिति का अध्ययन करने के लिए तीन महीने गहरा परिश्रम किया। पंचायतों में राजनैतिक दलों के दर्शन नहीं मिले, पर राजनैतिक दलों के नेताओं के जो गुर्गे गांव-गांव फैले हैं उनकी गुटबंदियाँ सब जगह मिलीं। साफ साफ यह कि मुझे रोशनी नहीं, अन्धेरा ही दिखाई दिया। भाग्य से पंचायतों के एक आदर्शवादी ऊँचे अफसर का सत्संग मिला, तो मैंने उनसे अपनी आशंका बताई। उनका मन आशा से भरा हुआ था। उन्होंने कहा-"पंचायतों के द्वारा क्रांति हो रही है, गांव आगे बढ़ रहे हैं और आप जिस फ्रेस्ट्रेशन-शिथिलता और भ्रष्टाचार से परेशान हैं, प्रजातंत्र के आरंभ में वह तो एक बार होता ही है-शीघ्र ही स्वस्थस्थिति आजाएगी।"

कक्कड़ साहब की राय मेरे सामने थी, उसी ऊंचाई के एक दूसरे अफसर की यह राय भी मिल गई, पर मेरी राय में जो छेद हो गया था, वह नहीं भरा और १९६२ के आम चुनाव हो गए। इस दूसरे चुनाव के अनुभवों ने मुझे परेशान कर दिया, क्योंकि क्या शासक दल और क्या विरोधी दल, दोनों में कहीं प्रजातंत्री मनोवृत्ति का नाम भी नहीं था। भाग्य से उन पंचायत प्रशासक का उन्हीं दिनों फिर सत्संग मिला, तो मैंने उनके नए अनुभव पूछे। बोले-"स्थिति अच्छी नहीं है, क्योंकि प्रजातंत्र का पालन पोषण जिन लोगों के हाथ में है, वे स्वयं प्रजातंत्री नहीं हैं।"

मुझे उनकी नई सम्मति के बाट से अपनी पुरानी सम्मति का समतोल देख कर संतोष मिला, पर चिंता बढ़ गई। विद्वान राजनीतिज्ञ श्री सम्पूर्णानन्द के उन्हीं दिनों अनुभव प्रकाशित हुए, तो उनमें भारतीय संविधान की अभारतीयता का चित्रण तो था ही, यह स्पष्ट सम्मति भी थी-'मेरी राय में उसे (भारतीय संविधान को) एक बार रद्द करके पूरा का पूरा बदलना होगा। हमारा संविधान १९५० में लागू हुआ था और इस समय तक उसमें १७ संशोधन हो चुके हैं-कई संशोधनों पर इस समय प्रतिवर्ष संशोधन करना पड़े, उसकी राष्ट्रीय अनुपयोगिता में सन्देह करना व्यर्थ होगा।

कानून शास्त्री, विचारक और अनुभवी राजनीतिज्ञ श्री श्रीप्रकाश जी ने एक बहुत गहरी और दूरदर्शी दृष्टि से इस प्रश्न पर विचार किया है-"जैसी स्थिति है उस में हमें इस बात के लिए तैयार रहना पड़ेगा कि केन्द्र में एक दल का शासन रहे और भिन्न भिन्न प्रदेशों में दूसरे दलों का।" केरल इसको प्रमाणित कर रहा है। अब नई संविधान परिषद बैठाना आवश्यक है, जो विगत १८वर्षों के अनुभवों को ध्यान में रख कर नया संविधान तैयार करे जिससे कि वर्तमान स्थिति का सामना भी किया जा सके और हम अपनी एकता भी बनाए रहें।

यदि हमको यह विश्वास हो, जैसा मुझे है कि इंगलैंड की द्विदल प्रथा हमारे यहां कार्यान्वित नहीं हो सकती, क्योंकि हम छोटे-छोटे साम्प्रदायिक और राजनैतिक गिरोहों में सदा विभक्त होते जाना पसंद करते हैं और हमें विशेष व्यक्तियों से प्रेम हो जाने के कारण श्रद्धा-भक्ति के साथ उनसे आसक्त होकर हम उनके गुट-विशेष में सम्मिलित हो जाते हैं, तो हमें ऐसा संविधान बनाना होगा, जिसमें दलगत शासन न होकर राष्ट्रीय शासन की स्थापना हो सके। हमारे मंत्री मंडल में एक ही दल के लोग न रहें, सारे देश और समाज के हित की कामना करने वाले सभी समुदायों और सम्प्रदायों के उत्तमोत्तम व्यक्ति आ सकें। यह हमारी आन्तरिक प्रकृति के अनुकूल होगा। हां, शासनका आधार लोकतंत्रात्मक ही बना रहे।

दूसरों के अनुभवों से लाभ उठाना-बुद्धिमानी है, तो हम देखें "फ्रांस ने भी इंगलैंड की ही प्रथा की नकल की थी, पर वह सफल नहीं हुआ। सौ वर्षों के प्रयत्नों के बाद और दूसरे विश्वयुद्ध में पराजय का कलंक माथे पर लेने के बाद उसने भी अब अपने यहाँ राष्ट्रीय मन्त्री मंडल स्थापित किया है। हमारी प्रकृति फ्रांसीसियों की प्रकृति से मिलती-जुलती है।

जर्मनी का अनुभव भी इसका समर्थन करता है-"फ्रांस और आस्ट्रिया से लड़कर १८७१ में प्रिंस बिस्मार्क ने जर्मनी को और अधिक शक्तिशाली बनाया। जब वे जर्मनी का संविधान बनाने लगे, तो उस समय के विद्वानों ने उनसे कहा कि आप क्यों परेशान हो रहे हैं। इंगलैंड का संविधान है ही, तो उसी को हम भी अपना लें।

राष्ट्र नेता बिस्मार्क ने उत्तर दिया-जर्मन लोग अंग्रेज नहीं हैं। दोनों की प्रकृति और परम्परा में भेद है। इसलिए हमें अपना संविधान अपने अनुरूप बनाना होगा। इसी कारण उनका बनाया संविधान लगभग पचास वर्ष तक सफलता के साथ चलता रहा।"

संविधान का प्रश्न दलों या वादों का नहीं, एक राष्ट्रीय प्रश्न है और इस पर इसी व्यापक दृष्टि से विचार होना चाहिए। मद्रास के उद्योग मंत्री श्री आर. वेंकटारमण ने बंगलौर-महासमिति के अधिवेशन में एक प्रस्ताव भेजा था कि संविधान में परिवर्तन कर संसदीय प्रणाली की सरकार के स्थान पर अमरीका की तरह राष्ट्रपति शासनकी अमरीकी प्रणाली जारी की जाए। पत्रकारों से उन्होंने कहा कि यदि आज की सरकारी प्रणाली जारी रही, तो १९६७ के चुनावों में अराजकता पैदा हो सकती है और १९७० तक आम गड़बड़ी फैलाना निश्चित है। विधायकों ने जनता की आशा पूरी नहीं की है। केरल में यह प्रणाली पूरी तरह फेल हो गई है और उत्तर प्रदेश, मैसूर, उड़ीसा और पंजाब में भी कोई अच्छा हाल नहीं है।

इस विवेचन की पृष्ठभूमि में यह स्पष्ट है कि अपने उगते-उभरते प्रजातंत्र को वर्तमान संविधान के द्वारा हम और आगे नहीं ले जा सकते-बिखरने से नहीं बचा सकते। इसलिए आवश्यक है कि नया प्रजातंत्र की रक्षा के लिए हम नया संविधान तैयार करें, जिसमें दोषों का दमन, मतभेदों का शमन और सद्वृत्तियों का पोषण करने की क्षमता हो।

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री सूर्यनारायण व्यास, अपने विषय-ज्योतिष के देश प्रसिद्ध विशेषज्ञ; ग्रीनविच की वेधशाला में जिनका हस्तामलक ज्ञान देखकर वहाँ के महामना चकित रह गए और देश में भी जिनकी भविष्य वाणियों की सिद्धि देखकर अनेक की अनास्था आस्था में परिणत हुई !

श्री सूर्यनारायण व्यास, एक व्यक्तित्व, तो स्वयं अपनी ही श्रमनिष्ठा का विधान; ऐसा फौलाद कि वाजिद अली शाह के उत्तराधिकारियों के वातावरण में भी, जिसका स्वाभिमान नहीं बिखरा, कहूँ, जो उसमें रहकर भी निखरा ही निखरा।

श्री सूर्यनारायण व्यास, विद्वत्ता और कर्म, अकड़ और नम्रता, विद्वान और साहित्य का एक सलोना संगम, जिन्होंने देह-साधना करते देश-आराधना की कभी उपेक्षा नहीं की और जो एक बार मिलने के बाद हमेशा याद आने का जादू भी जानते हैं।

मेरा जीवन ◈ कुछ पथचिन्ह

— श्री सूर्यनारायण व्यास —

जीवन में घटनाएँ होती ही रहती हैं और कभी-कभी वे मोड़ देने वाली भी सिद्ध होती हैं। मैं अध्ययन-क्रम से क्षणिक मुक्ति पाकर काशी से उज्जैन आया और एक सप्ताह के अन्दर ही माधव कालेज में संस्कृत का अध्यापक बना दिया गया। यह १९१९ की बात है, सफलता पूर्वक १ वर्ष मैंने यह कार्य किया। जन्मतः स्वाभिमानी प्रकृति का रहा, इसलिए कालेज के क्लर्कों की प्रवृत्तियां मुझे अप्रिय लग जाती थीं। एक बार ऐसी स्थिति आई कि मैंने सहसा त्याग-पत्र दे दिया। प्रिंसिपल आपटे मेरे प्रति स्नेह रखते थे। उन्होंने त्याग-पत्र स्वीकार नहीं किया। मुझे समझाते रहे, परन्तु मैंने रहना स्वीकार नहीं किया। फिर भी उन्होंने १ वर्ष तक उस स्थान पर दूसरे व्यक्ति को अस्थाई रखा, पर मैं नहीं गया।

उस समय मेरे समक्ष और कोई कार्य नहीं था, किंतु अपना मार्ग बनाता रहा, अविचल रहा।

१९२१ में सहसा जीवन में एक मोड़ आया, राष्ट्रीयता की प्रवृत्ति ने मुझे आकर्षित किया और रंग चढ़ता गया। सार्वजनिक प्रवृत्तियों में भाग लेने लगा। धीरे-धीरे नगर की अनेक सभा-संस्थाएँ मेरे साथ जुड़ीं और सूत्र संचालन हाथ में लेना पड़ा। अध्यक्ष पद और मन्त्रीत्व का मोह मुझे कभी नहीं हुआ। विश्वस्त-प्रामाणिक जनों को कार्य देकर मैं संचालन करता रहा। वह समय जिन्होंने देखा है, वे आज भी नहीं भूले होंगे कि उज्जैन राजनीतिक, सामाजिक और साहित्यिक चेतना का गढ़ बनता जा रहा था। देश के आंदोलनों का पर्याप्त प्रभाव यहां पड़ा था, ५-५, १०-१० हजार के जुलूस निकलते थे, खादी चर्खा की बाढ़ आ रही थी। देशी राज्य में यह कैसे हो रहा है, इस पर सब को विस्मय भी होता था, पर लोगों में जोश आ रहा था। ये समाचार जब पत्रों में प्रकाशित होते, तो दूसरों पर भी असर होता था। प्रतिदिन प्रातः प्रभात फेरियाँ नगर में घूमती थी। महिलाओं की प्रभात फेरी भी थी। आज के कई नेता और मिनिस्टर तक दूसरे कार्यों में लगे हुए थे और मिलने पर कहते थे कि प्रभात फेरियों की प्रेरणा ऐसी होती है कि 'अपना काम धन्धा छोड़—आप लोगों के साथ हो जाएँ !'

आंदोलन बढ़ता रहा, ऊपर के दबाव से ग्वालियर स्टेट के (माइनॉरिटी)—शासन को विवश हो ऑर्डिनेंस भी निकालने पड़ते थे, ४ आर्डिनेंस निकालने पर जोश जारी ही रहा। फिर १९३० में देश में सत्याग्रह छिड़ा। नमक कानून तोड़ने की बात खड़ी होगई, मैं कुछ साथियों को लेकर अजमेर सत्याग्रह में गया। मुझे आज भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह दृश्य याद है, जब हमारी टोली को शहर के फूल मालाओं से लाद दिया था, ट्रेन पर हजारों की भीड़ जुड़ गई थी और ट्रेन के डिब्बे को फूलों का डिब्बा बना दिया था, अजमेर जाने पर कुछ दिनों के बाद ही मुझे कैम्प का संचालन सूत्र सुपुर्द कर दिया गया। दो सौ से ऊपर स्वयं सेवक और २५-३० स्वयं सेविकाओं के संचालन का भार लेना पड़ा। विदेशी कपड़ों की दूकानों पर हमारा पिकेटिंग जारी हुआ, उस समय मेरे साथी श्री बालकृष्ण कौल (जो इस समय राजस्थान के वित्तमन्त्री हैं) तथा भोपाल के स्व० बिठ्ठलदास बजाज थे, कई दिनों तक यह क्रम चला, किन्तु सरकार हमें पकड़ने को तैयार नहीं थी। नसीराबाद जाकर भी सत्याग्रह किया, नमक कानून तोड़ो, पर गिरफ्तारी नहीं हुई। थोड़ी-सी चकमक जरूर हो जाती थी।

सन ३१ में मैं उज्जैन लौट आया और अपना काम आरम्भ किया। इस समय क्रांतिकारी विचारों ने पर्याप्त प्रभावित किया, अनेक योजनाएँ बनी, कुछ युवकों ने साहस के कार्य भी किए, राष्ट्र-यज्ञ-कलैंडर के प्रकाशन की भी एक घटना हुई, जो लाहौर कांग्रेस में वितरित हुआ था और उसकी आय भगतसिंह के केस में दी गई थी। इसके बाद वह कलैंडर प्राप्त हुआ और उसके चित्र निर्माता को सर्विस से हाथ धोना पड़ा।

इन्हीं दिनों श्री गणेश शंकर विद्यार्थी के संकेत पर एक फरार क्रांतिकारी को अपने यहाँ सुरक्षित रखने का अवसर आया। यह व्यक्ति दिल्ली के गडौदिया डकैती केस का प्रमुख अभियुक्त था, (सरदार भगतसिंह को छुड़वाने के लिए यह डकैती हुई थी)। वह भाई महीनों मेरे यहाँ रहा, किन्तु उसके मित्र के यहाँ उसके पत्र व्यवहार से सुराग लगाकर उज्जैन में उसे पकड़ा गया। इस सिलसिले में १९३४ में मेरे घर की ६ घंटे तक तलाशी हुई। पचासों पुलिस वालों ने मकान घेर लिया था। यह घटना भी स्वतन्त्र विवरण चाहती है। मुझे विद्रोही-व्यक्ति के रूप में समझा जाता था। इंदौर रेजिडेंसी-दफ्तर के कागजों में मुझे 'खतरनाक' का प्रमाण पत्र मिल गया था।

सहसा घटना ने नया मोड़ लिया। १९३४ में ग्वालियर नरेश महाराजा सिंधिया की राजकुमारी विवाह के ठीक एक मास बाद स्वर्गवासिनी हो गई। राजमाता और किशोर महाराजा ग्वालियर से कुछ दिनों परिवर्तन के लिए उज्जैन आए। एक रोज सहसा जिला कलक्टर ने मुझे सूचित किया कि राजमाता मुझसे मिलना चाहती हैं। महल से गाड़ी आई और मैं मिला। ग्वालियर राज्य परिवार से यह पहली भेंट थी। ज्योतिष सम्बन्धी जो कोम था, वह कर दिया। एक सप्ताह के बाद पुनः महल से पत्र मिला कि किशोर महाराजा मुझसे मिलना चाहते हैं। पहली ही भेंट में हम लोगों का जो स्नेह सम्बन्ध स्थापित हुआ, वह महाराजा की मृत्यु तक निरन्तर स्थायी रहा, बढ़ता ही चला गया। १९३४ में वे मेरे घर पर भी आए। फिर तो धीरे धीरे अनेक राजों महाराजों से सम्बन्ध होते गए और देश के बड़े से बड़े और छोटे १५० से अधिक राज्यों से मेरा घनिष्ट सम्बन्ध हुआ, किन्तु स्वतन्त्र, स्वाभिमानी वृत्ति की रक्षा करते हुए ही यह चला। खादी पहने हुए ही मेरा महलों में प्रवेश था। आज भी मैं खादी ही पहनता हूं और विचारों में कोई अन्तर नहीं आया—न सिर झुकाया, न हाथ ही पसारा। अपने लिए कभी मेरी जबान खुली ही नहीं।

मैं 'विक्रम' मासिक चलाने लगा था। मेरे सम्पादकत्व और प्रकाशकत्व में ८ वर्ष यह पत्र प्रकाशित हुआ। महाराजा ग्वालियर से घनिष्ट-स्नेह सम्बन्ध रहते हुए भी जब उनके यहाँ युवराज का जन्म हुआ, विक्रम को पाँच हजार रुपये का चैक भेजा गया, किन्तु कुछ घन्टों ही वह मेरे टेबल पर रहा होगा। दोपहर की डाक से ही वह वापस कर दिया गया। पत्र के लिए रुपया लेने का साहस संचित न कर पाया। जब विक्रम का पुनर्जन्म हुआ; तब यह कहानी चैक के आने से—वापस जाने तक की (पत्र व्यवहार सहित) 'विक्रम' में प्रकाशित कर दी थी।

मेरे परम स्नेही श्री सिद्धिनाथ माधव आगरकर (संपादक स्वराज्य) स्वर्गीय का मुझे राजनीति की ओर मोड़ने में बड़ा हाथ रहा, संपूर्ण समर्थन भी रहा। उनके जैसा चरित्र निष्ठ और नीतिमान व्यक्ति मुझे अन्य नहीं मिला। मैं हिन्दी कविता और संस्कृत कविता लिखा करता था, मराठी-गुजराती भाषा भी जानता था। मेरे स्नेही श्री भानुदास जी शाह (स्वर्गीय) के सहयोग से मैंने गुजराती के प्रसिद्ध उपन्यास—सरस्वती चन्द्र के दूसरे भाग का अनुवाद भी किया था। जब मैं आगरकर जी के सम्पर्क में आया, (उसका श्रेय भी स्व० शाह साहब, को ही है) तब मराठी की पुस्तक 'मानसोपचार शास्त्र' का बहुत-सा अनुवाद भी किया था। महीनों श्री आगर कर जी और मैं घण्टों साथ बैठा करते थे, जब 'कर्मवीर' खण्डवा से आरम्भ हुआ, हम कुछ समय साथ ही रहे। 'कर्मवीर' में लेखन से व्यवस्था तक आगर कर जी करते थे। उन्होंने मुझे भी 'कर्मवीर' में लिखने के लिए प्रेरित किया। फिर तो लेख, कविता, संवाद, रिपोर्ट बराबर लिखता रहा। महीनों 'कर्मवीर' के और बाद में 'स्वराज्य' के व्यंग्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कॉलम भी लिखा करता था। काशी से 'जागरण' (साप्ताहिक) निकाला। शिवपूजन जी (स्वर्गीय) सम्पादक थे। तब भी बराबर व्यंग-विनोद के १-२ कॉलम लिखता रहा। इधर मेरा ज्योतिष का स्वतन्त्र काम भी ठीक चल रहा था। राजों-महाराजों-रईसों में भी मेरा पर्याप्त प्रवेश होगया था, नेताओं और कार्यकर्ताओं से भी स्नेह-सम्बन्ध रहता था। मध्य भारत की राजनैतिक प्रवृत्तियों का प्रेरणा-केन्द्र आगरकर जी का घर ही था और वहाँ मेरा स्थान प्रमुख था।

सन् १९३७ की बात है। आगरकर जी उज्जैन आए हुए थे। दो चार दिनों के बाद उनका इन्दौर जाने का प्रोग्राम तय हुआ। मैं आगरकर जी को अपनी कार में लेकर इन्दौर छोड़ने गया। देवास से कुछ ही आगे बढ़े होंगे कि सहसा आगरकर जी ने कहा—'अब एक बार आपको यूरोप का प्रवास जरूर कर लेना चाहिए।'

मैंने बतलाया कि मैं भी उत्सुक अवश्य हूं, पर सुविधा की प्रतीक्षा कर रहा हूं।

हम चर्चाओं में ही इन्दौर पहुँच गए, आगरकर जी को अपने एक अस्वस्थ आप्तजन से मिलना था। मैंने उन्हें वहाँ छोड़ा और मैं अपने एक मित्र के घर चला गया। जैसे ही अचानक उनके घर पहुँचा तो वे देख कर हर्ष-विभोर होगए। कहने लगे—"देखो, आत्मा की पुकार गलत नहीं होती, मैं आपसे मिलने के लिए आज बड़ा बेचैन होरहा था। जब मैंने कारण पूछा, तो बतलाया कि इन्दौर नरेश महाराजा होल्कर का एक तार स्विटजरलैंड से आया है और उन्होंने पूछा है कि पंडित जी से पूछ कर तुरन्त जवाब दो कि क्या वे मिलने के लिए यहाँ आ सकेंगे? मैंने आपसे बिना पूछे ही उत्तर तो दे दिया कि आ जाएँगे, पर यह चिंता हो रही थी कि कहीं उन्होंने आपको भी तार न दिया हो और आप मना न करदें, तो मेरी स्थिति बिगड़ जाएगी।"

यह सुनकर मैं तो एक बार विस्मित ही रह गया। मैंने मित्र को आश्वस्त किया कि मैं अवश्य यूरोप जाऊँगा, आप चिंता न करें। मित्र के पास से लौटकर जब मैं पुनः आगरकर जी से मिला तो सारी घटना सुनाई। वे भी आश्चर्य चकित रह गए। कुछ घण्टे पूर्व ही जो स्वप्न लिया जा रहा था, वह इतनी जल्दी साकार हो जाएगा, यह भला कैसे सोचा जा सकता था? ठीक एक महीने बाद मैं यूरोप चला गया और चार महीने तक स्विट-जरलैंड, ऑस्ट्रिया, इंग्लैंड, फ्रांस, रोम और जर्मनी की यात्रा करता रहा।

जीवन में इसी प्रकार कई आकस्मिक घटनाएँ घटी हैं, और अनायास अवसर उपलब्ध हुए हैं।

१९४० में मेरे एक निकट स्नेही बाबू पूनमचन्द से (जो आगर कर जी के बचपन के ही साथी हैं) काश्मीर जाने की बात हुई। मई में जाने का कार्यक्रम बन गया। बाबूजी का साथ होगा, यह मेरे लिए बड़ा समाधान था। चर्चा कर के बाबूजी अपने घर विदा हुए। कोई आधे घण्टे के बाद ही मुझे महाराजा रतलाम का तार मिला कि—"कार भेजी है, आप तुरन्त आजाइए, आवश्यक कार्य है।"

मैं रतलाम गया तो महाराजा ने बताया कि अत्यंत महत्व का कार्य है, इसलिए आपका काश्मीर जाना परमावश्यक है। सारी स्थिति समझ कर रतलाम से ही काश्मीर जाना पड़ा, न घर पर सूचित कर सका, और न बाबू पूनमचन्द जी को ही। एक रोज पहले जो सोचा था, वह इस तरह सहसा दूसरे दिन ही पूर्ण होगया। वास्तव में कितनी विचित्र घटना है।

मेरा जीवन ऐसी विचित्र घटनाओं से भरा हुआ रहा है। १९४१ में महू और इन्दौर के साहित्यिकों ने पहली बार निश्चित किया कि महू में मध्य भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन किया जाय। संगठन हुआ, जोर शोर से तैयारियाँ हुईं और मुझे प्रथम अध्यक्ष बनाने का निर्णय किया। जब प्रतिनिधि मण्डल मेरे निकट आया, तो मैं बहुत संकोच में पड़ गया। स्वीकार कहने का साहस नहीं कर सका, पर वे लोग नहीं माने। बड़े-बड़े पोस्टर भी छप गए थे। मैंने अनुरोध किया कि यह सारा व्यय मैं दे दूँगा, मेरा नाम निकाल दिया जाए, पर कौन सुने! चारों ओर से दबाव डाला गया और विवश महू जाना पड़ा। निःसंदेह सम्मेलन बहुत सफल हुआ। यह पहला सम्मेलन था, लोगों में पूरा उत्साह था। इसी में प्रथम बार उज्जैन में विश्वविद्यालय स्थापित करने का प्रस्ताव हुआ। सम्मेलन का वर्ष भर में जैसा कार्य बढ़ा, हुआ, उस पर अखिल भारतीय हिं. सा. सम्मेलन को भी ईर्षा हो सकती थी। पूरे मध्य भारत में प्रवृत्तियाँ हुईं।

पहली बार अखिल भारतीय हिं. सा. सम्मेलन की कार्यकारिणी की बैठक हुई। उस में मान्य टंडन जी, अमरनाथ झा आदि आए। विश्वविद्यालय के लिए चर्चा हुई। ग्वालियर राज्य ने भी अपने प्रतिनिधि भेजे। सारे प्रदेश में विश्वविद्यालय दिवस मनाया गया और १० हजार हस्ताक्षर लिए गए। ग्वालियर राज्य ने विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए एक कमेटी बनाई, जिसमें सर राधाकृष्णन, अमर नाथ झा आदि पाँच व्यक्ति थे। रिपोर्ट तैयार हुई, महाराजा से मेरे निजी सम्बन्ध उत्तम थे ही, बराबर प्रयास रहा और महाराजा ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए ५० लाख रुपये देने की घोषणा की। यह विश्वविद्यालय आज उज्जैन में स्थापित है। इसकी स्थापना में आगे चलकर मध्य भारत बन जाने पर कई अड़चनें आईं। बड़ा बांका इतिहास है, स्वतन्त्र विवरण की अपेक्षा रखता है, किन्तु सभी कठिनाइयों को पार कर आज यह चल रहा है, मेरे लिए यही संतोष की बात है।

१९४२ में हरिद्वार में हिंदी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन हुआ। मैं कभी कल्पना भी नहीं कर सकता था कि उसमें मेरा कोई स्थान हो सकता है, पर एक रोज सहसा मा.राजर्षि टंडन जी का तार मिला कि "मुझे उसकी 'विज्ञान परिषद' की अध्यक्षता करनी होगी, नहीं कहना न होगा।" विवश हो स्वीकृति देनी पड़ी. पर इधर मेरी पुत्री का विवाह निश्चित होगया था, कार्य व्यस्तता में भाषण लिखने का अवसर ही नहीं मिला। चार दिन पूर्व हरिद्वार जाना पड़ा, वहाँ एकांत गंगा तट पर बैठ कर भाषण लिखा। मुझे कल्पना भी नहीं थी, पर उस भाषण की पत्रों में, विद्वज्जनों में पर्याप्त प्रशंसा हुई।

पुत्री की शादी से निवृत्त होकर १९४२ के आंदोलन में लग गया। अनेक गुप्त प्रवृत्तियां हुईं, गुप्त रेडियो स्टेशन संचालित किया, बुलेटिन निकले और खतरों से खेल होता रहा। अवश्य ही प्रकट में नहीं आया, किन्तु उस प्रवाह से कैसे दूर रह सकता था?

आगे चलकर जीवन में पुनः नया मोड़ आया। विक्रम संवत् के दो हज़ार वर्ष बीतने को थे, विचार आया कि यह संवत् की द्वि-सहस्राब्दी देशव्यापी मनाई जाए। प्रवृत्तियाँ आरंभ हुईं। इस कार्य में मुझे स्व० सर मनुभाई महता, श्री के. एम. मुंशी, श्रीमती हंसा महता से बहुत सहयोग मिला। देश में सर्वत्र स्वागत हुआ, हिंदू महासभा के तत्कालीन अध्यक्ष-वीर सावरकर ने भी इस कार्य में देश को प्रेरित किया, किंतु हिन्दू महासभा के समर्थन मिलने से ही मिया जिन्ना बिगड़ पड़े। उन्होंने विरोध किया, पर इसकी उत्तम प्रतिक्रिया ही हुई। महाराजा ग्वालियर से मेरी चर्चा हुई और उन्होंने इस समारोह के लिए नेतृत्व स्वीकार कर लिया। एक लाख रुपया भी दिया।

देश भर में अनेक सभा-संस्थाएँ संगठित हुईं और सारे देश में यह समारोह हुआ, ग्वालियर में भी पाँच लाख रुपये संग्रहीत हुए। अनेक आयोजन हुए और इसी प्रसंग पर विक्रम विश्व विद्यालय की स्थापना की घोषणा हुई। विक्रम कीर्ति मंदिर की स्थापना, विक्रम स्मृति ग्रन्थ का प्रकाशन तथा विक्रम स्मृति स्तम्भ की योजना स्वीकार की गई। विक्रम-स्मृति ग्रन्थ हिन्दी, मराठी और अंग्रेजी में प्रकाशित हुए। यह २००० पृष्ठों का महत्व पूर्ण प्रकाशन है। विक्रम कीर्ति-मंदिर की स्थापना के लिए १९५१ में राष्ट्रपति के द्वारा शिलान्यास हुआ, पर अब मध्य भारत का निर्माण हो चुका था और यह कीर्ति-मंदिर राजनीति के चक्कर में फंस गया। व्यक्तिशः इसके लिए बहुत संघर्ष का सामना करना पड़ा, वर्षों उलझन रही, किन्तु अन्ततः यह विक्रम कीर्ति मंदिर आज ५ लाख रुपये के व्यय से उज्जैन में निर्मित हो गया है। महाराजा ग्वालियर की स्थिति पलट जाने के कारण 'स्मृति स्तम्भ' का कार्य स्थगित हो गया, तथापि विक्रम द्विसहस्राब्दी सारे देश में बहुत उत्साह से मनाई गई, अनेक ग्रन्थ प्रकाशित हुए, मेरे सहयोग से फिल्म भी बनी, तथा देश में विक्रम के नाम से अंकित अनेक सभा-संस्थायें स्थापित हुई। यह सफलता कोई कम संतोषजनक नहीं है।

इस सफलता से मुझे बहुत साहस और सम्बल मिला। अब मैंने विश्व कवि कालिदास को राष्ट्र-कवि के रूप में स्वीकार करने के लिए देश व्यापी प्रयास आरम्भ किया। वैसे कालिदास स्मृति मनाने का कार्य उज्जैन में १९३२ से ही चल रहा था। स्व० पद्मसिंह जी शर्मा उज्जैन पधारे थे और उन्होंने इस सम्बन्ध में अधिक प्रेरणा दी। उसके बाद मैंने इस प्रवृत्ति को उज्जैन से बाहर भी बढ़ाना आरम्भ किया। जनता से बहुत उत्साह जनक सहयोग मिला। देश के विभिन्न भागों में ७४० से अधिक स्थानों पर महाकवि की स्मृति का उत्सव मनाना आरम्भ हुआ। इसमें गुजरात ने अधिक सहयोग दिया। रेडियो से भी सहयोग प्राप्त हुआ। हमारा प्रयास रहा कि शासन इसका महत्व समझे और इसे मान्यता दे। प्रयास किए गए। विभिन्न प्रांतीय सरकारों से लिखा पढ़ी हुई। मध्य प्रदेश (पुराना) और उत्तर प्रदेश के शासन-शिक्षा विभागों ने अपनी समस्त शिक्षा संस्थाओं को प्रेरित किया और हजारों शिक्षा संस्थाओं में प्रतिवर्ष महोत्सव मनाया जाने लगा।

उज्जैन में हम लोग विशाल रूप में मनाया ही करते थे। शासन से भी बराबर लिखा-पढ़ी चलती रहती थी। राज्य सभा के सदस्य श्री कृष्णकांत व्यास जी के द्वारा राज्य सभा में हमने प्रस्ताव रखवाया, मित्रवर गोपी कृष्ण जी विजयवर्गीय (भू. पू. मुख्य मन्त्री मध्य भारत) जो कालिदास परिषद् के सदस्य भी हैं—ने योग्यता पूर्वक प्रस्ताव पर राज्य सभा में चर्चा उठाई, सदस्यों की अनुकूलता रहने पर भी शिक्षा मंत्रालय द्वारा अनुकूलता नहीं मिली और प्रस्ताव को वापिस लेना पड़ा। मुझे इससे खेद हुआ। मैंने विचार किया कि विदेशों में यह प्रयास हो,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और सफलता मिले, तो हमारे देश में उचित प्रभाव होगा। रूस में कालिदास परिषद् की सदस्या श्रीमती कमला-रत्नम् भारतीय राजदूतावास में थीं। उनसे लिखा-पढ़ी की और श्रीमती रत्नम् ने वहाँ के विद्वानों, लेखकों और शासकों से प्रयत्न कर १९५६ में बहुत विशाल समारोह आयोजित किया और स्वयं भी बहुत भाग लिया। इसमें संदेह नहीं कि महाकवि कालिदास की स्मृति मनाने में रूस ने जो कार्य किया, वैसा आज तक भी हमारे देश में नहीं हो पाया। बहुत बड़े पैमाने पर वह आयोजन हुआ। भारतीय राजदूत भी उसमें सम्मिलित हुए, कालिदास पर पहला डाक टिकिट निकला, कालिदास का साहित्य रूसी में अनुवादित कर १० लाख की संख्या में प्रकाशित किया। नाटक, श्लोकों का पाठ आदि भी किया और टेलिविजन पर सारे देश में इसका प्रसारण हुआ। जब यह समाचार हमारे देश में हमने सर्वत्र प्रचारित किया, चित्र आदि प्रकाशित हुए। इससे प्रभावित होकर हमारे प्रदेश (मध्य प्रदेश) के शासन ने १९५५ में समारोह करना स्वीकार किया। उस वर्ष अवश्य ही उज्जैन का आयोजन अद्भुत हो गया। स्वयं राष्ट्रपति जी इसमें सम्मिलित हुए। मेरे व्यक्तिगत प्रयास से राष्ट्रपति जी ने डाक टिकट निकालने की डाक विभाग में प्रेरणा की। वर्ष भर बाद भारत सरकार ने दो डाक टिकट प्रकाशित भी किये। उस समिति में मैं भी सदस्य था। १९५९ में हमारे प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू भी समारोह में आये, तथा दोनों वर्ष देश के सभी भागों से विद्वान भी सम्मिलित हुए।

मध्य भारत बनने पर मैंने एक और प्रयास किया कि धारा नगरी के महाराजा भोज का भी स्मृति दिवस धारा नगरी में मनाया जाए। आरम्भ में उपेक्षा ही हुई, किन्तु प्रयत्न जारी रहे। निःसंदेह श्री श्रीनारायण जी चतुर्वेदी (तत्कालीन-डायरेक्टर एज्यूकेशन) ने सुझाव को स्वीकार कर उसे आगे बढ़ाया; यद्यपि शिक्षा विभाग मौन हो गया तब से धारा नगरी में प्रतिवर्ष यह समारोह तीन दिनों तक होता जारहा है। इसमें मुझे यह समाधान है कि मेरी सोची और प्रारम्भ की हुई प्रवृत्तियाँ चल रही हैं। एक कार्य और चल रहा है। उसमें थोड़ा गतिरोध अवश्य आ गया है। वह है महाकवि कालिदास का भव्य स्मारक-निर्माण, जिसके लिए भूमि प्राप्त हो चुकी है और इसे क्षण तक मेरे पास (बैंक में) पौने दो लाख रुपये की धनराशि भी जमा है। मैं चाहता हूं कि यह स्मारक विश्व कवि की कीर्ति के अनुरूप बन जाए, मुझे तब वास्तविक समाधान अनुभव होगा।

यह तो सर्व विदित है कि भारत के प्रथम राष्ट्रपति जी की मुझ पर असीम कृपा रही है। [प्रथम और द्वितीय राष्ट्रपति के साथ लेखक का चित्र मुख पृष्ठ पर देखें—सम्पादक] १९२७-२८ में उनकी अध्यक्षता में स्थापित इतिहास परिषद् का मैं भी सदस्य था और उनसे पत्र व्यवहार भी रहता था, किन्तु १९५० में सर्व प्रथम मेरा प्रत्यक्ष परिचय हुआ था। इसका श्रेय स्व० गोस्वामी गणेश दत्त जी को है। मैंने उस समय आने जाने का किराया नहीं लिया, तो गोस्वामी जी के मन में बहुत सद्भावना हो गई थी। इसके बाद १२ वर्ष तक राष्ट्रपति जी के निकट स्नेह का अधिकारी बनता गया, परंतु कभी अपने लिए एक भी शब्द मैंने नहीं कहा। अकस्मात् १९५८ में जब मुझे 'पद्म भूषण' का अलंकार मिलने की सूचना मिली, मैं विस्मित हो गया। मैं सोच नहीं सका कि यह कैसे संभव हुआ? बाद में मुझे राष्ट्रपति-भवन के अपने मित्रों से पता चला कि यह राष्ट्रपति जी का ही अनुग्रह था। जिस रोज यह अलंकार मिलता है, 'एटहोम' के समय लोग क्रम से राष्ट्रपति जी का आभार मानते हैं, पर मैं तो राष्ट्रपति जी के निकट ही ठहरता था, मुझे इस औपचारिकता में रुचि नहीं थी। रात्रि को जब राष्ट्रपति जी के निकट गप शप के लिए पहुँचा, तो स्वयं राष्ट्रपति जी ने मुझे बधाई दी। मैंने निवेदन किया—बाबूजी, मेरे लिए तो इस शासकीय सम्मान से अधिक गर्व इस बात का है कि आपकी मुझ पर असीम कृपा है। इसका मूल्य मैं अधिक मानता हूं।

विक्रम विश्वविद्यालय ने १९६३ में मुझे 'डॉक्टर ऑफ लेटर्स' की सम्मानपूर्ण उपाधि दी। मुझे इसका तब भान हुआ, जब एक रोज पूर्व सीनेट की मीटिंग हुई और वहाँ यह प्रस्ताव सर्वानुमत पारित हुआ। उसके एक वर्ष पूर्व जबलपुर विश्वविद्यालय में ऐसा ही प्रस्ताव हुआ था। मैं दोनों की सीनेट का सदस्य भी हूं, परन्तु जबलपुर आज तक जा ही नहीं सका हूं और विक्रम विश्वविद्यालय में एक प्रकार से अलिप्त-भाव से रहता हूं। काशी विश्वविद्यालय का पी-एच. डी. का कई वर्ष से परीक्षक भी रहता हूँ और राजस्थान विश्वविद्यालय भी डॉक्टरेट का परीक्षक बना लेता है। पता नहीं यह अहंसुकी कृपा कैसी हो रही है? प्रयत्न करके कुछ प्राप्त करना मेरा स्वाभिमान कभी स्वीकार नहीं कर सकता, किन्तु आकस्मिक घटनाएँ जीवन में बराबर होती रही हैं, यह ईश्वर की कृपा ही समझता हूं, अपनी योग्यता का सुफल नहीं। ◇

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शांति का प्रयत्न हरदम, पर हथियार का जवाब हथियार से!

—प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री

आजादी आने के बाद हमने मुल्क के आर्थिक ढांचे को, यहां की माली हालत को बदलने की, कोशिश की और उसमें लगे रहे हैं। जहां एक तरफ मुल्क बढ़ा है, उसने तरक्की की है, वहां दूसरी तरफ हमारे लिए मुश्किलें भी आई हैं और लोगों को कठिनाइयां भी उठानी पड़ी हैं। दूसरे देशों पर निर्भर करने की बात है उसमें कुछ कमी लाने की कोशिश की है। जो कुछ कि पिछले २०० सालों में अंग्रेजी जमाने में हम नहीं कर सके थे, उसको हमने पिछले १५ वर्षों में पूरा करने की कोशिश की है। चाहे, हमारे वे बड़े-बड़े कल और कारखाने हों या हमारे लिए पेट्रोल और तेल, जिसका कि यहां नाम-मात्र भी करीब-करीब नहीं था। आज उसकी खानों को हम नये तरीके से बढ़ा रहे हैं और अपनी पेट्रोल की शक्ति को पैदा कर रहे हैं। जहां बिजली और पावर कुछ थोड़े से शहरों की चीज थी, आज हम उसे कस्बों में ले जा रहे हैं, बल्कि हमारी कोशिश है कि हम उसे गांव-गांव तक पहुंचायें और आज बहुत काफी गांवों में, अलग-अलग सूबों में बिजली गई है और पहुंची है। हमारी कोशिश इस बात की है कि अपने यहां हम स्टील बनाएँ और पैदा करें, जो कि अब भी हमें काफी मात्रा में बाहर से मंगाना पड़ता है। बड़ी-बड़ी मशीनें, जो आज हम बाहर से मंगाते हैं, उनको भी हम कायम करना चाहते हैं और आज हमारी कोशिश है कि चाहे वह सीमेंट का कारखाना हो, चाहे वह कपड़े की मशीनें हों, हम अपने देश में बनाएं ताकि हम दूसरे देशों पर बहुत समय तक के लिए निर्भर न करें और जहां तक हो, अपनी शक्ति और ताकत को खुद बढ़ाएं।

जैसा मैंने आपसे कहा, इसके लिए हमें अपने बड़े-बड़े प्लान अपनी बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनानी पड़ी और उन योजनाओं के जरिए हमने करोड़ों और अरबों रुपए अपने देश में लगाए। उसका थोड़ा असर यह भी था कि हमें कुछ अपने रुपयों को, अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए, जिसे डेफिसिट फाइनेंसिंग (घाटे की अर्थ व्यवस्था) कहते हैं, यानी नोट छापकर अपनी जरूरत को पूरा करना, वह भी हमें करना पड़ा और आज भी उसके लिए हमारे सामने एक सवाल है कि हम अपना बड़ा प्लान, अपनी चौथी पंचवर्षीय योजना, जो हम बनाने जा रहे हैं, उसे हम किस तरह चलाएं, कैसे उसके रुपये को, उसकी जरूरत को, पूरा करें जिससे कि हम 'डेफिसिट फाइनेंसिंग' में न पड़ें। जैसा आप जानते हैं, २१,५०० करोड़ रु० का चौथा जो हमारा प्लान है, हमारी जो योजना है, वह हम उस बात को ध्यान में रखकर, २१,५००करोड़ रु० की बात को ध्यान में रखकर बनाना चाहते हैं। हमने बनाया भी है और उसकी आखिरी मंजूरी जल्दी होने वाली है, मगर यह हम जरूर चाहते हैं कि इस योजना के लिए हमें 'डेफिसिट फाइनेंसिंग' न करना पड़े। हमें नोटों को छापकर अपनी जरूरत को पूरा न करना पड़े, इसलिए हमारा इरादा है कि उसको हम पूरी तरह से बचाएँगे और हम नहीं बढ़ाएंगे, लेकिन यह और भी ज्यादा जरूरी है कि अपने देश की कृषि की हालत को, खेती की पैदावार को हम ज्यादा बढ़ाएं।

मेरी राय में आज अगर हमारे लिए कोई सबसे बड़ा और जरूरी काम है, तो अपनी खेती की पैदावार को बढ़ाना और अपने देश में ज्यादा गेहूं और चावल पैदा करना है, क्योंकि अगर बाहर के देशों से आप अनाज मंगाते रहे और करोड़ों और अरबों रुपया बाहर भेजते रहे, तो उसका एक जबर्दस्त असर हमारी आर्थिक हालत पर पड़ेगा। हम एक कमजोरी की हालत में बने रहेंगे और अगर अनाज की कमी रहती है, तो उसके दाम भी बढ़ते हैं और जब अनाज का दाम बढ़ता है जैसा इस समय है, तो वह मुसीबत लोगों की जनता की बहुत बढ़ जाती है। अनाज ज्यादा से ज्यादा पैदा करना नामुमकिन नहीं है। हमारे पास काफी शक्ति है, हमारे पास किसानों की इतनी बड़ी संख्या है, हमारे पास साधन हैं. उनको हम इस्तेमाल करेंगे और पूरी लगन से, मेहनत से इस बात के लिए जुट जाएंगे और हम अपनी खेती की पैदावार को बढ़ाएँगे, तो फिर हमें कौन रोक सकता है कि हम अपनी जरूरत को पूरा न कर सकें। इसलिए मैं चाहता हूं और यह जो हमारा अगला प्लान है, वह खेती-कृषि को प्राथमिकता देगा और उसके लिए हमें जो भी खर्च करना पड़ेगा, हम उसको करने की कोशिश करेंगे।

हम चाहते हैं कि धीरे-धीरे अनाज के बंटवारे के सिलसिले में, उसकी खरी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दारी में, प्रदेश की, सूबे की सरकार और केन्द्रीय सरकार इस काम को अपने हाथ में लें, लेकिन आज की स्थिति में वह पूरा कर सकना सरल बात नहीं है। मगर आज की स्थिति में और जो हालत इस समय खास तौर से अपने देश में पैदा हो गई है इसमें से जो व्यापारी वर्ग हैं, उनसे भी इस बात की दर्खास्त करना चाहता हूं, इस बात की अपील करना चाहता हूं कि उन्हें अपनी जिम्मेदारी को समझना है और अपनी जिम्मेदारी को निभाना है। मैं कोई वैसा नहीं कहता लेकिन आज जैसी जरूरत देश में है और जिस खास हालत में हम आ गए हैं, उसमें जो काम करने वाले हैं अनाज के बंटवारे का या खरीदारी का उन पर एक बड़ा बोझा है और सरकार उसमें उनकी मदद कर सकती है, तो हम उसमें भी तैयार हैं। हम बातचीत करना चाहते हैं, हम रास्ता निकालना चाहते हैं, जिसमें सरकार अपने काम को करे और वह अपने काम को पूरी तरह से अंजाम दें।

आप जानते हैं, मैं अभी कुछ पिछले महीने डेढ़ महीने में कई देशों में बाहर गया। जहां एक तरफ मैं सोवियत यूनियन और युगोस्लाविया गया, वहां दूसरी तरफ मैं कनाडा और युनाइटेड किंगडम में गया और बीच में यूनाइटेड अरब रिपब्लिक भी गया। आप देखेंगे कि इन देशों में बड़े प्रेम के साथ हमारा स्वागत हुआ, लेकिन जो हमारी बातें हुईं, वह बातें बहुत लाभदायक और बहुत अच्छी हुईं। आप यह भी देखेंगे कि हमारा सम्बन्ध, हमारा मेल चाहे एक विचारधारा के देश हों, चाहे दूसरे विचार धारा के देश हों, चाहे बीच में रहने वाले देश हों, हमारा, एक परस्पर का मेल, हमारे ताल्लुकात, हमारे सम्बन्ध सभी से अच्छे हैं और यह हमारी नीति आज की नहीं, पहले की है। हम सारी दुनिया में मेल और मोहब्बत चाहते हैं। हम सारी दुनिया में सुलह और शान्ति चाहते हैं और इसलिए बराबर हमारा यह हल रहा है कि जो कुछ भी हम उसके लिए कर सकें, पूरी तरह से करने की कोशिश करें।

विएटनाम

हम अभी जानते हैं कि आज दुनिया में एक खतरा-सा बना हुआ है। कुछ पता नहीं चलता कि किस समय क्या हालत पैदा हो। आज एक बड़ा सवाल विएटनाम का आ गया है। कोई नहीं जानता कि किस वक्त वहां क्या हालत बने और दुनिया किस भंवर में पड़ जाए। हमने कोशिश की और हम चाहते हैं कि विएटनाम का मामला शान्ति के साथ हल हो, सभी देश आज चाहते हैं कि वहां शान्ति हो। मैं सोवियत यूनियन गया, वहां भी देखा कि वे पूरी तरह से शान्ति चाहते हैं, मगर हम चाहते हैं कि आज जो कोशिश हम करते हैं, तो चीन के रहने वाले भाई हमारी टीका-टिप्पणी करते हैं, हमें बुरा भला कहते हैं। मैं अभी बेलग्रेड गया, तो उसकी कड़ी आलोचना चीन के पत्रों में हुई और चीन के नेताओं ने की।

लेकिन जहां तक तमाम देश जो आज शान्ति और सुलह चाहते हैं, जैसा मैंने कहा सोवियत यूनियन, जो आज पूरी तरह से शान्ति चाहता है, आज यूरोप और अमरीका के सारे देश यह कहते हैं कि वे सुलह पसन्द करेंगे, लेकिन एक देश है, जो चाहता है कि न वियतनाम में शांति रहे और न भारत में शान्ति रहे और वह चीन है। हमें इस बात का रंज है कि हम बाहर के देशों की ओर तो देख रहे हैं और दुनिया की बातों को भी देख रहे हैं, लेकिन आज हमारा देश भी एक खतरे के अन्दर है। आज चीन इस बात में दिलचस्पी लेता है कि भारत में झगड़ा बना रहे, संघर्ष रहे और हमारी तरक्की और उन्नति में बाधा पड़े। हमारा देश एक आजादी पसन्द देश है, लेकिन आज उनको यह नहीं भाता कि हम अपने ढंग से अपने देश को चलाएं और अपनी तरक्की हम अपने रास्ते से करें।

अभी थोड़े दिन पहले कच्छ पर हमला हुआ और उस कच्छ के हमले का हमने मुकाबला किया, लेकिन यह बात हमारे मन में थी और हमने कहा भी कि अगर कच्छ से पाकिस्तान अपनी फौजों को हटा ले, कच्छ को पूरी तरह से खाली कर दे तब हम बातचीत करने को तैयार होंगे और वह बात जो हमने कही उसे हमने किया। पाकिस्तान आज कच्छ में कहीं नहीं है। उसकी फौजें नहीं हैं, उसकी पुलिस नहीं है, उसकी जो चौकियाँ थीं वे आज कहीं नहीं हैं। जो हमारा पूरा अधिकार, सिविल अधिकार हमारा कच्छ पर था वह हमें प्राप्त है। उसमें जैसा आप जानते हैं उसके बाद हमने एक समझौता किया और इसीलिए किया कि हम अपनी तरफ से जहां तक हो शान्ति को बिगड़ने न दें और दुनिया में एक बवंडर पैदा न करें। हमने उसे माना और उस बारे में कुछ बातें आगे बढ़ने वाली थीं, कुछ बातें होने वाली थी, लेकिन इसी बीच में कश्मीर पर हमला पाकिस्तान ने किया। मैं इसे समझ बूझ कर कहता हूं। यह कहना कि वहां आजाद कश्मीर से लोग चले आ रहे हैं, यह बात बिल्कुल गलत है। यह सब पाकिस्तान की मदद से, उसकी सहायता से और उसकी पूरी जिम्मेदारी से आज कश्मीर में रेडर्स आ गये हैं और—उन्होंने इस बात की शायद ख्वाहिश की थी कि वह कश्मीर में एक क्रांति-सी पैदा कर देंगे और वहां के लोगों को उभार देंगे।

मुझे इस बात का बड़ा ताज्जुब है कि जहां एक तरफ हमने शान्ति के रास्ते को पकड़ा और मेल और दोस्ती का हाथ बढ़ाया वहां दूसरी तरफ हमें यह देखने को मिलता है कि कश्मीर पर हमला किया जा रहा है। मैं जानता हूं कि पाकिस्तान का उसको बढ़ाने का पूरा इरादा है। हम इस हालत में क्या करें ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा रास्ता साफ है। मैं यह पूरी तरह से समझता हूं कि अब हमारे लिए बात-चीत करने का कोई गुंजाइश नहीं है, उसे हम सोच भी नहीं सकते हैं। कश्मीर में हजार हम चाहें, हमारा दिल चाहे कि हम वहां पर शान्ति बनाये रखें लेकिन जब इस तरह हमला हो तो एक सरकार के नाते हमारा क्या जवाब हो सकता है, सिवाय इसके कि हम हथियारों का जवाब हथियारों से दें।

मुझे कोई शक नहीं है कि आज कश्मीर के रहने वाले बहादुरी से, हिम्मत से इस मौके का सामना कर रहे हैं। आज कश्मीर में रहने वाले मुसलमान, हिन्दू और सिख सब पूरी तरह से ये जो रेडर्स आ रहे हैं इनका उन्होंने मुकाबला किया है और उनके अन्दर आज यह पूरी भावना है कि ये रेडर्स, जो हमलावर हैं, इनको कश्मीर से पूरी तरह हटा देना है और मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि आज हमारी कश्मीर की सरकार, सादिक साहब जो वहां के चीफ मिनिस्टर हैं, उस सूबे के लीडर हैं उन्होंने और उनके साथियों ने बड़ी मजबूती से बड़ी दिलेरी से, बड़ी बहादुरी से पिछले १०-१५ दिनों के अन्दर काम किया है। मैं इसके लिए कश्मीर की सरकार को बधाई देना चाहता हूँ और कश्मीर में रहने वाले अपने तमाम भाइयों और बहनों को भी बधाई देना चाहता हूं कि हिम्मत से उन्होंने काम किया है। मेरा विश्वास है कि आप सब की तरफ से मैं यह कह सकता हूँ कश्मीर के रहने वालों से कि हमारा दिल उनके साथ है, हमारा तन मन-धन उनके साथ है, हम पूरी तरह आज उनके साथ हैं।

हमारी फौजें वहां जुटी हैं, हमारी पुलिस वहां मौजूद है और जो वहां आए हैं उनको एक-एक को चुनकर वहां से हटा देना चाहते हैं और निकाल देना चाहते हैं और निकालेंगे, इसमें कोई शक नहीं और इसीलिए आज एक बड़ी जिम्मेदारी, जो एक बड़ा संकट हमारे ऊपर आया है उसके लिए हमको और आपको सबको तैयार रहना होगा।

आज आराम का वक्त नहीं है। आज त्याग का, बलिदान का, कुर्बानी का जो भी रास्ता हो वह हमें अख्तियार करने के लिए तैयार रहना होगा। यह आज थोड़े दिन की बात नहीं है कि वह चन्द दिनों के लिए आए और चले जाएँगे। जैसा हमने कहा कि हम नहीं जानते कि क्योंकि आज उनके मन में यह बात आ गई है कि वह कश्मीर को लें, हथियारों के जरिये लें, तो फिर उनको भी अपनी इज्जत की बात शायद मन में रहेगी, लेकिन हमारे अपने देश की मर्यादा की, हमारे देश की शान की भी कुछ मांग हैं और मैं आपकी तरफ से यह कहने वाला हूँ और कहना चाहता हूं कि कश्मीर का एक टुकड़ा भी पाकिस्तान को मिलने वाला नहीं है।

अन्त में मैं इतना ही निवेदन करूंगा कि आज देश में हमारे लिए एकता की जरूरत है, मेल की जरूरत है। सारे देश को आज यह अनुभव करना है, आज यह महसूस करना है कि आज देश की सुरक्षा और उसकी हिफाजत का सवाल है और उसमें हमारे ऊपर यह बोझा है कि हम अपने तमाम अन्तरों को, मतभेदों को, तफरकों को जो भी हमारे अन्दर है उनको हम मिटाएँ। आज इस बात की जरूरत नहीं है कि हम आन्दोलन चलाएँ, एजीटेशन करें। आज इस बात की जरूरत नहीं है कि हम हड़तालें करें और स्ट्राइक्स चलाएँ। यह समय ऐसा है जिसमें हर एक अपनी मुसीबत और कठिनाइयों को बर्दाश्त करे। देश के साथ कंधे से कंधा मिलाकर हमें आगे बढ़ना होगा और आज जो हमारे ऊपर खतरा है उसको मिटाना होगा। इसलिए मेरा यह निवेदन है देश के तमाम रहने वाले भाइयों से कि हम आपस में मेल और एका रखें, क्योंकि अगर देश के अन्दर गड़बड़ी हुई, तो हम सरहद की हिफाजत और रक्षा कैसे कर सकेंगे? इसलिए अपनी फौजों को मजबूत बनाना है और हमारी फौजें, हमारे सिपाही आज जिस बहादुरी, जिस हिम्मत और जिस बलिदान और त्याग से काम कर रहे हैं उसके लिए हम सब अनुगृहीत हैं और हम उनका शुक्रिया अदा करते हैं। अगर उनकी ताकत को मजबूत करना है, उनको बलवान बनाना है, तो फिर आज हम सब देश के अंदर शान्ति रखें, मेल रखें, धर्म और मजहब के नाम पर न लड़ें, साम्प्रदायिकता की बात को न लायें और अपने छोटे-मोटे दूसरे जो झगड़े हैं उन में भी इस समय न पड़ें। तो मुझे विश्वास है, मुझे भरोसा है कि आज हमारे देश के रहने वाले भाई और बहन मेरी इस बात को गंभीरता से सुनेंगे और अगले महीनों में इस तरह चलेंगे जिसमें सारा देश शान्त रहे और हम मजबूती के साथ अपनी सरहदों की हिफाजत में लगे रहें और जो हमारे मुकाबले में आए हैं, उनको हम हरायें, उनको हम हटायें।

आज झंडे की रक्षा और हिफाजत का सवाल है। इसकी शान बनाए रखनी है, इसे कायम रखना है। हम रहें या न रहें, लेकिन यह झण्डा रहना चाहिए, देश रहना चाहिए और मुझे विश्वास है कि यह झण्डा रहेगा। हम और आप रहें या न रहें, लेकिन भारत का सिर ऊँचा होगा। भारत दुनिया के देशों में एक बड़ा देश होगा और शायद भारत दुनियाँ को कुछ दे भी सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र की रक्षा और जनदायित्व

◇ जनरल के० एम० करियप्पा ◇

देश की शक्ति को केवल सशस्त्र सेनाओं की शक्ति से ही नहीं मापा जा सकता। सशस्त्र सेनाओं की शक्ति के सतत रूप में प्रभावकारी होने के लिए निम्न चार तत्व अनिवार्य हैं :—

१—कठिनतम परिस्थितियों में अधिकतम साहस;

२—आर्थिक स्थिरता;

३—यथासंभव औद्योगिक आत्म-निर्भरता तथा

४—शारीरिक, मानसिक और नैतिक दृष्टियों से पौरुष संपन्न जनता।

इन परिस्थितियों में देश शक्तिशाली होने का दावा कर सकता है। युद्ध तथा इसी प्रकार के अन्य संकटों के समय भयातुर जनता देश की आन्तरिक शांति और सुव्यवस्था के लिए शत्रु की गोलियों तथा बमों की अपेक्षा अधिक खतरनाक सिद्ध होती है। इस भयातुरता से बचने के लिए आवश्यक है कि देश का प्रत्येक नागरिक अपने मनोबल को ऊंचा बनाये रखे।

प्राथमिक आवश्यकताएँ

प्रत्येक राष्ट्रीय संकट के समय लोगों को इन बातों का ध्यान रखना चाहिए:—

१—संकट के कारणों को सही ढंग से समझना;

२—निराधार एवं भ्रमपूर्ण अफवाहों को प्रोत्साहन न देना, तथा इस प्रकार की अफवाहें फैलाने वालों के बारे में निकटतम पुलिस थाने को सूचित करना;

३—स्थिति के विषय में परस्पर सही सूचनायें देना;

४—यातायात-नियमन, रोशनी बुझाने तथा खाद्य-पदार्थों और बिजली के संरक्षण के विषय में सरकारी आदेशों का पूर्ण रूप से पालन; तथा

५—प्राथमिक चिकित्सा, अग्निरोध तथा असामाजिक कार्य करने वाले नागरिक सुरक्षा को संकट में डालने वाले गुंडों को पकड़ने में स्थानीय अधिकारियों की सहायता करना।

सहायक सेवायें

पिछले महायुद्ध के समय यह हिसाब लगाया गया था कि प्रथम पंक्ति में मोर्चे पर लड़ने वाले प्रत्येक सिपाही के पीछे चालीस व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। केवल पीछे खड़े रहने के लिए नहीं, वरन् पीछे के क्षेत्रों में रह कर सैनिक की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए इन चालीस व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। ये आवश्यकतायें हैं—जहाज चलाना अस्पताल का प्रबंध, अन्न उगाना, कारखानों में काम करना, यातायात, डाक व तार तथा वेतन बांटने वाली सेवायें, सुविधायें पहुंचाना आदि। राष्ट्रीय संकट के समय प्रत्येक नर-नारी को यह सोचना चाहिए कि वह स्वयं सिपाही है, तथा उसे अपने कार्य-क्षेत्र में अनुशासित एवं निष्ठा पूर्ण ढंग से कार्य करते रह कर देश सेवा करनी है।

साहस व स्वास्थ्य

जनता को प्रारम्भिक पराजय और पतन का सामना, साहस, आत्मविश्वास तथा अपनी सेना में विश्वास के साथ करना चाहिए, तथा यह विश्वास रखना चाहिए कि यदि प्रत्येक व्यक्ति अपनी समूची शक्ति लगा कर अपने कार्य पर डटा रहेगा तो हमारी विजय अन्ततः सुनिश्चित है। व्यक्तिगत आराम और सुविधा का स्थान कर्तव्यपालन से पहले नहीं, पीछे है। लोगों को शारीरिक दृष्टि से अपने आपको स्वस्थ और सुदृढ़ बनाये रखना चाहिए, जिससे कि वे संकट के समय भारी काम कर सकें।

विद्यार्थियों की भूमिका

प्रत्येक शिक्षा-संस्था में प्रतिदिन विद्यार्थियों को नवीनतम स्थिति की संक्षिप्त जानकारी दी जानी चाहिए। चुने हुए विद्यार्थियों को अवकाशकाल में ग्रामों और नगरों की जनता के बीच जाकर संकट की सही स्थिति का स्पष्टीकरण तथा घरेलू स्थिति अथवा युद्ध मोर्चे के विषय में फैली हुई भ्रान्तियों का निवारण करना चाहिए।

व्यापारियों का दायित्व

व्यापारियों को चोरबाजारी, खाद्यान्नों तथा कमी से मिलने वाली जनता के नित्य प्रयोग की वस्तुओं का संग्रह करके संकट कालीन परिस्थितियों का अनुचित लाभ नहीं उठाना चाहिए।

प्रत्येक व्यक्ति को प्रसन्न रहना चाहिए तथा ईमानदारी के साथ यह अनुभव करना चाहिए कि वह अपने देश को अपनी शक्ति का श्रेष्ठतम अंश समर्पित कर रहा है, जिससे संकट शीघ्र ही दूर हो सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जी, झल्ली वाले से लेकर कवि की साधना तक!

श्री विष्णु प्रभाकर

श्रीनगर की एक शाम और मौत से जूझता दिसम्बर, १९४७ का वह ठिठुरता महीना।

राज्य की अतिथि-शाला में अनेक कवि और लेखक ओवरकोट के कालरों को बराबर ठीक करते हुए अपने कांपते शरीर में गीतों से ऊष्मा पैदा करने का प्रयत्न कर रहे थे। अंगीठी में आग रह रह कर भभक उठती थी, ऐसे ही जैसे शत्रु के आक्रमण से वह सुनहरी वादी विचलित हो उठी थी।

सहसा द्वार पर दस्तक हुई। खोल-कर देखता हूं कि गरम किरन और ऊंची सलवार पहने गठे हुए बदन का एक ठिगना, पर थका-थका सा वृद्ध सामने खड़ा है। उसका मुख झुर्रियों से भरा हुआ है, लेकिन भीतर उसकी आंखों का प्रकाश बिखरा पड़ा है। उसका मस्तक विशाल है, कान बड़े-बड़े हैं और दाढ़ी छोटी है जो एक साथ प्रतिभा, देहातीपन और दृढ़ता के प्रतीक हैं। उसके जूते भोंडे हैं जिनमें मोटी-मोटी कीलें और तरनाल जड़े हुए हैं। कुछ पूछूं कि इससे पूर्व ही उसके पीछे से बलराज साहनी की भानजी उषा बोल उठी—'कवि आसी हैं। अब्बास साहब से मिलने आये हैं।'

विस्मित, विमूढ़, मैं उसकी ओर देखता रह गया। यह कवि। कविता के छन्द भी क्या कमल की तरह कीचड़ से जन्म लेते हैं, लेकिन दो क्षण बाद ही जब मैंने उसे कविता पढ़ते सुना तो मुझे लगा, मानो पुरातन पुरुष का यौवन लौट आया हो। मानो शापग्रस्त ययाति पुरु का ओज पाकर रोमन योद्धा की तरह उत्तेजित हो उठा हो। उस सन्ध्या को और फिर बोनफायर के समय कवि आसी से कितनी ही कविताएं सुनीं। न फारसी जानता हूं, न कश्मीरी, इसलिए मूल का रस मेरे लिए अप्राप्य रहा, लेकिन कुछ कविताओं का भावार्थ आज भी स्मृति पटल पर अंकित है। कभी उसने गाया

जीवन के झरोखे से

था—

तब मेरे दिल में दर्द था।

मेरा दिमाग महबूबा के हुस्न में फंसा था।
ऐसी हालत में मेरे हाथ में महबूबा की
तरफ से कीचड़ पहुंची और अमीरी
गरीबी में बदल गयी।

मैंने कीचड़ से पूछा, तू जन्नत से आई है।
तेरी सुगन्ध से मैं मस्त हो गया हूं।
उसने कहा—लोगों के पांव में पड़ी हुई
थी, हवा के रुख से उठती गिरती थी।
मैं नाचीज कीचड़ थी, लेकिन कुछ मुद्दत
फूल के पास बैठी रही हूँ।

खुदा के महबूब ने मुझ पर मेहरबानी की।
उसके हुस्न ने मुझ पर असर किया
वरना मैं तो वही खाक हूं
जो कि थी।

कश्मीर छोड़ो आन्दोलन में कवि को जेल जाना पड़ा था। वहां उसका दिल वतन के दर्द से और भी टीस उठा, और उसने व्याकुल होकर आकाश में स्वच्छन्द विचरते हुए कौवे से पूछा—

ए कौवे, बता मेरा वतन
आजाद हुआ कि नहीं
दुश्मन अपना जहाज लेकर
चला गया कि नहीं
मेरे कानों पर जुल्म का भारी बोझ है
बता फौलाद का फंदा टूटा कि नहीं।

मजदूर को सम्बोधित करते हुए उसने जो कविता लिखी, उसमें भी यही आग है, लेकिन उस आग में भस्म करने की शक्ति है तो आशा के स्वर भी हैं—

ए मजदूर तेरी मेहनत से यह संसार बना
हुआ है,
यह जालिम कितनी देर और तेरे आंसुओं
से अपने हाथ धोते रहेंगे।

आंधी और बिजलियों से न डर,
तेरे साहस से नदियां अपना रुख बदल देंगी
और जंगल हिल जायेंगे

अब वक्त आ गया है कि ताजेशाही
मजदूर के सिर पर हो।

अपनी प्रसिद्ध कविता 'खिताब नौजवान कश्मीर' में उसने कितने विश्वास से पुकारा—

ए युवक उठ और देश के उजड़े हुए गुलों
को समेट कर एकत्रित कर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये एक ही वाटिका के फूल हैं, एक ही
जल पीकर खिले हैं
ए नौजवान सावधान, कहीं इस एकता
को छोड़कर 'आसी' अर्थात
पापी न बन जाना।
जो पौधा मेरे गले के खून से सींचा गया है
तुझे मेरी कसम तू उसके फल खा।

कई दिन बाद फिर भीराक दल की पटरी पर अचानक उनसे मुलाकात हो गयी। वह मेरे सामने वाली पटरी पर ऐसे खड़े थे मानो किसी की राह देख रहे हों। पास जाकर मैंने नमस्कार किया—पूछा—किसकी राह देख रहे हैं।

वह मुस्कराये। बोले—मजदूरी की।

मैं अचकचा कर उनकी ओर देखने लगा। मुस्कान और गहरी हो आयी। भुरियों से अठखेलियां करती हुई मुस्कान में न जाने क्या था, मैं आलोड़ित हो आया। वह बोले—जनाब, आप हैरान क्यों हो रहे हैं, मैं मजदूर हूं। झल्ली ढोता हूं।

अचरज से मैंने उनकी ओर देखा-वह मजदूर है, लेकिन अभी उस दिन अतिथिशाला में मैंने किसकी कविता सुनी थी। इन्हीं की। यह कवि भी हैं और मजदूर भी, लेकिन मेरा मन मजदूर को कवि स्वीकार करने के लिए शायद तब भी प्रस्तुत नहीं था। इसलिए अनायास ही पूछ बैठा—आप कविता कब करते हैं?

सहज भाव से उन्होंने कहा—मैं कविता नहीं करता।

—तो ?

वह बोले—वह उमड़ती है और जब छन्द फूटते हैं तो ठेकेदार की दूकान में बैठकर उन्हें कागज पर उतार लेता हूं।

और उन्होंने दूकान की ओर इशारा किया, जो उस समय मजदूरों से भरी हुई थी और वे जोर जोर से किसी बात को लेकर ठेकेदार से झगड़ रहे थे। मैंने पूछा—आपको यह शोर परेशान नहीं करता ?

उसी निःसंग भाव से उन्होंने कहा—यह शोर मुझे शक्ति देता है। जनाब, मैं मजदूरों का कवि हूं। मजदूर हूं।

और वह हंस पड़े। उनका पूरा नाम बहुत दिन बाद जान पाया। अब्दुल सत्तार आसी का जन्म १९ वीं शताब्दी के अन्त में (१८९४) एक ग्वाले के घर में हुआ था। यह ग्वाले गोधन ही नहीं पालते, मजदूरी भी करते हैं, लेकिन साधारण मजदूरों से वे कुछ अच्छे होते हैं। इसी कारण अब्दुल सत्तार को मदरसे में जाने का अवसर मिल गया। उसने फारसी पढ़ी। आरम्भ में फारसी में ही कुछ कविताएं भी लिखीं, लेकिन जब कश्मीर में जागृति की लहर आयी, तब कवि ने अपनी मातृभाषा को अपने विचारों का वाहन बनाया। यद्यपि यौवन कभी का बीत चुका था, लेकिन आजादी की तड़प ने उसकी ऊष्मा को नहीं मरने दिया। देखते-देखते 'आसी' का नाम आजादी के मतवालों के दिल और दिमाग पर छा गया। जो 'आसी' पहले इश्क और मोहब्बत के नग्मे गाता था, वह अब आजादी के गीत गाने लगा। उसकी कविता में कल्पना की रंगीनी नहीं है, अलंकारिता भी नहीं है। है केवल शोषित और उपेक्षित की इच्छाओं और भावनाओं की अभिव्यक्ति और उसी से वे प्राणवान हो उठी हैं।

उन्होंने लम्बी उम्र नहीं पायी। ५४ वर्ष की उम्र में (सन् १९५० में) वह सचमुच स्वर्ग चले गये, लेकिन मेरा विश्वास है कि उन्हें अब भी वतन का गम है और वह पुकार कर कह रहे हैं—

जो पौधा (आजादी) मेरे गले के खून से
सींचा गया है।
तुझे मेरी कसम, तू उसके फल खा।
खबरदार तुझे कोई धोखा न दे।
पछता मत मजबूती से रह
क्योंकि तुझे जामे जमशेद पीना है।

कवि की आँख, एक लाजवाब दीवानगी में घूम--घूमकर भूतल से स्वर्ग और स्वर्ग से भूतल तक को देख लेती है और ज्यों ही कल्पना अनजानी चीजों की शक्लों को साकार बनाने लगती है, कवि की कलम उनको मूर्तिमान करने लगती है और हवाई शून्य को यहीं का घर और नाम दे देती है।

—शेक्सपियर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

◆ डा. श्री हरिदत्त भट्ट 'शैलेश'
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर्वतारोहण के दो रहस्यमय प्रसंग

१—१९५० की बात। विश्व-विख्यात पर्वतारोही तेनसिंह 'बंदर-पूंछ' पर चढ़ कर लौट रहे थे। उतरते-उतरते एक दिन 'डोडीताल' में डेरा डाला।

वे धूप में लेटे हुए थे। और धूप से बचने के लिए टोप सिर पर रखा था। लेटते ही नींद आ गई लेकिन बीच में ही एकाएक आंखें खुली। टोप भारी-भारी सा लगा।

यह क्या ? तेनसिंह कुछ विस्मित। ऊपर हाथ फेरा तो बाप-रे-बाप—एकदम टोप दूर जा पटका।

टोप पर कुंडली मार कर सांप भी धूप का मजा ले रहा था।

जब दल के साथियों को यह घटना मालूम हुई तो सब हैरान।

बाद में किसी ने कहा कि सांप जिसके सिर पर बैठता है वह या तो राजा बनता है या एकाएक विश्व-विख्यात हो जाता है।

१९५३ में एवरेस्ट पर विजय प्राप्त कर यह रहस्य रहस्य ही रह गया।

× × × ×

२—१९६४ की बात। हम लोग जांवली गढ़वाल (लगभग बाईस हजार ऊंची चोटी) अभियान के सिलसिले में बेस कैंप (आधार शिविर) के लिए उपयुक्त स्थान की ढूंढ में थे।

लगभग चौदह हजार चढ़ने के बाद लोघगाड के किनारे नीचे तेरह हजार की ऊंचाई पर एक लंबा-चौड़ा-सा मैदान दिखाई दिया। बर्फ से भरा, पर कहीं कहीं साफ।

पूरा दलबल उसी ओर बढ़ गया। बर्फ में फिसलते-लुड़कते नीचे वहां पहुँच गए। इतनी ऊंचाई पर इतना सुन्दर स्थान। सभी खुशी से नाच उठे।

मार्ग-दर्शक गौरसिंह ने बताया—"यह हुरी वालों की जांवली है।" 'हुरी' उस इलाके में अन्तिम बस्ती लगभग साढ़े आठ हजार की ऊंचाई पर।

वहाँ से यहां तक पहुंचने में पूरे सात दिन लग गए थे। अनेक कठिनाइयां। भयंकर समस्याएं। कोई रास्ता नहीं बस, घाटियों, जंगलों, पहाड़ियों को पार करना, कभी उतरना, कभी चढ़ना।

कभी नौ हजार की ऊंचाई पर तो कभी चौदह हजार की। कहीं कोई तारतम्य नहीं।

इसीलिए इस चोटी पर अभी तक किसी ने चढ़ने का प्रयत्न नहीं किया था। हम लोग ही इधर पहली बार आए थे और हुरी के पांच आदमियों को मार्ग दर्शक के रूप में साथ लाए थे। तीन बोझी और थे।

'हुरी वालों की जावली' सभी को बेहद पसन्द आई। नीचे लोघगाड। लोघगाड़ के उस पार श्री कंठ और गंगोत्री की दो चोटियां। दांई ओर मच्छधार की चोटी। सभी गद्‌गद् हो गए।

इसी बीच गौरसिंह ने लोघगाड़ के उस पार कुछ नीचे एक और मैदान दिखाया—'झालावालों की जांवली'।

दल के नेता ने जब वहां नजर डाली तो उन्होंने सभी से कहा—'वहीं, लोघगाड़ के पार उस मैदान में हमारा 'बेस कैंप' स्थापित होगा, क्योंकि वहां से जांवली साफ दिखाई देगी। 'हुरी वालो की जांवली 'से जांवली दिखाई नहीं देती।

लेकिन मैंने साफ इन्कार कर दिया "हमयहीं डेरा डालेंगे, वहां नहीं। 'बेस कैंप' के लिए यही जगह ठीक है—नहीं जाएंगे।"

दल के नेता ने अपनी बात पर जोर देते हुए कहा—देखिए वहां बहता पानी है, जगह कुछ नीचे भी है 'बेस कैंप' के लिए बिलकुल ठीक किन्तु मेरी समझ में बात कुछ जमी नहीं। मुझे न-जाने क्यों झक सवार हुई मैंने फिर जिद की। हम तो यहीं डेरा डालेंगे, चाहे कुछ हो जाय।

यद्यपि पर्वतारोहण में नेता की हर बात माननी पड़ती है परन्तु न-जाने उस दिन क्या हो गया। मैं बिलकुल अकड़-सा गया। न-जाने कैसे, सारे सदस्य भी मेरी तरफ हो गए। सबने मेरी बात का समर्थन किया।

दल के पहले तो कुछ नेता बड़बड़ाए पर सुलझे हुए व्यक्ति ठहरे, जाने-माने पर्वतारोही। उन्होंने ज्यादा बुरा भी नहीं माना और मेरी बात भी मान ली।

फलतः 'हुरी वालों की जांवली' में ही हमारा 'बस कैंप' स्थापित होने लगा—इसी बीच भयंकर गड़गड़ाहट-ऐसी आवाज कि सब स्तम्भित हो गए—देखते क्या हैं कि लोघगाड के उस पार 'झाला वालों की जांवली' के ऊपर भयंकर 'हिमस्खलन'(एवलांच) बर्फ का पहाड़-का-पहाड़ गड़गड़ाता हुआ लुड़कता नीचे-उस मैदान में इधर-उधर।

हम लोगों की बोलती बन्द। अगर वहाँ चले जाते तो बाप रे-बाप, क्या हो जाता।

किस अज्ञात शक्ति ने हमें वहां जाने से रोका, आज तक समझ नहीं पाया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे सैनिकों के हाथों में मातृभूमि की आन पूरी तरह सुरक्षित है !

◇ रक्षामंत्री श्री यशवंत राव बलवंत राव चह्वाण ◇

हम अपनी स्वाधीनता की अठारहवीं वर्षगांठ मना रहे हैं, लेकिन हमारा आज का पवित्र दिन जम्मू और काश्मीर की दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं से कुछ दूषित हो गया है। आप लोगों को याद होगा कि स्वाधीनता के शीघ्र बाद भी भारतीय सेनाओं ने बड़ी बहादुरी के साथ जम्मू और काश्मीर की रक्षा की थी, जबकि पाकिस्तान की सक्रिय सहायता से निर्दय कबीले उस सुन्दर क्षेत्र को रौंद रहे थे और जिससे वहाँ की जनता को भारी कष्ट उठाना पड़ रहा था। जम्मू और कश्मीर की रियासत ने भारत में शामिल होना स्वीकार कर लिया था और हमारी सेनाओं के साहस, शौर्य और निष्ठा ने कश्मीर की जनता को बड़ी भयानक स्थिति से बचा लिया था।

आज हम देखते हैं कि पाकिस्तान ने फिर उसी लालच और घृणा की भावना से प्रेरित होकर एक नया अभियान शुरू किया है। जब उसने देखा कि जम्मू और कश्मीर को और अन्य तरीकों से नहीं हथियाया जा सकता है तो उसने अब घुसपैठ और ध्वंसात्मक कार्रवाई का एक नया अभियान शुरू कर दिया है। उसकी ये सभी कोशिशें बुरी तरह नाकामयाब रहीं। आज हमारी रक्षा सेनाएँ घुसपैठ करने वाले सशस्त्र पाकिस्तानियों को गिरफ्तार कर रही हैं और

रक्षा मंत्री श्री चह्वाण

इस कार्य में उन्हें वहाँ की जनता का पूरा सहयोग मिल रहा है।

पाकिस्तान की यह कार्रवाई अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार के विरुद्ध तो है ही, साथ-साथ इससे दोनों देशों के बीच युद्ध-विराम समझौते का उल्लंघन भी होता है। हमें आशा है कि पाकिस्तान अभी भी समझदारी से काम लेगा और ऐसी कार्रवाइयों से दूर रहेगा, पर मुझे इस बात में संदेह नहीं है कि हमारी सुरक्षा-सेनायें घुसपैठ तथा धमकियों के इन पैंतरों का हमेशा की तरह साहस और सावधानीपूर्वक सामना करेंगी और कश्मीर में शान्ति और सुरक्षा को नष्ट करने वाले नए प्रयत्नों को कुचल देंगी।

इस कार्य में लगे हमारी सुरक्षा सेनाओं के प्रत्येक सिपाही को हमारे समस्त राष्ट्र का संपूर्ण और ठोस समर्थन प्राप्त है और देश की सीमाओं के एक जागरूक प्रहरी तथा क्षेत्रीय निष्ठा की कर्तव्य परायणता के लिए राष्ट्र उनका आभारी है।

हम भारतवासी शांति के पुजारी हैं, किन्तु हमारे पड़ौसी के रुख के कारण हम अपनी सीमा की रक्षा में तनिक भी ढील नहीं बरत सकते। कुछ ही मास पूर्व हमारी सेनाओं को एकाएक कच्छ के रन में पाकिस्तानी

(कृपया देखिए पृष्ठ २६३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम चाकर रघुवीर के

—श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय

"बलीराम ज्ञान-बावला हो गया है।"

"नहीं जी, वह सनक गया है।"

"अरे यार! वह हुकूमत के नशे में अन्धा हो गया है।"

"अबे यारो! क्यों बेचारे की खिल्ली उड़ाते हो, वह तो वजारत पर लात मारकर ईश-भक्ति में लीन हो गया है। मैं स्वयं उसके-यमुना किनारे दर्शन करके आया हूँ।"

"भाई! गीदड़ गिरा झेरे में तो वही विश्राम सही। दर असल औरंगजेब ने उसे हिन्दू होने के नाते वजारत से निकाल दिया था। तब मजबूरन-बहता हुआ खरबूजा कृष्णार्पण सन्यास ले लिया। जोरू न जाँता अल्लाह मियाँ से नाता।"

"क्या बात करते हो चौधरी! भगवान् से डरो, व्यर्थ में क्यों उसकी धार्मिकता में छिद्र निकालते हो। तुम भी तो तहसील की अर्दली से निकाल दिये गये हो। तुम्हें भी कौन रोने-धोने वाला है? तनिक सन्यास लेकर दिखाओ न। मालूम हो कि दूसरों के छल-छिद्र निकालना जितना आसान है, उतना ही स्वयं अमल करना कितना कठिन है?"

"सन्यास ले मेरा जूता!"

"तो चौधरी! दूसरे में रखने निकालने से क्या लाभ! खुद कुछ करते-धरते बनता नहीं, दूसरों के लिए जहाँ सुई न समाये वहाँ मूसल रखने को तैयार।"

"अबे यारो! तुम तो बातों-बातों में लड़ मरने को तैयार हो गये। जरा-सी बात को अफसाना बना डाला।"

वास्तविक बात क्या है, इसका किसी को पता न था। निकली ओठों-चढ़ी कोठों वाली कहावत चरितार्थ हो रही थी। यार लोग तिलकी तेलन और राई का पहाड़ बनाने से नहीं चूकते। जिस दिल्ली में बाजार के किनारे आकाश की तरफ उँगली उठाकर खड़े होने पर भीड़ जमा हो जाए, उसी दिल्ली में फिर यह तो औरंगजेब के एक हिन्दू वजीर का मुआमला था। लोग-बाग चे-मे गोईयां करने से क्यों चूकते? और औरंगजेब भी कौन? जो अपने भाइयों की लाशों पर पाँव रखते हुए राज्यासन पर बैठा था; जिस ने अपने बाप के जाहो-जलाल को चूर-चूर करके उसे बन्दी बना लिया था; जिसने अपनी मजहबी दीवानगी में अनेक मन्दिर विध्वंस करा दिये थे; जिसने धर्म द्वेष के कारण हिन्दुओं पर जजिया कर लगा दिया था; जिसने अपना-शासनकाल विद्रोहियों से लोहा लेते-लेते समाप्त कर दिया; उसी औरंगजेब के हिन्दू वजीर बलीराम के सम्बन्ध में-तरह तरह के बतंगड़ फैल रहे थे और स्वयं औरंगजेब इस घटना से उसी तरह अनभिज्ञ था, जिस प्रकार चीनी तैयारियों से नेहरू मंत्री मंडल। यह ऐतिहासिक घटना-डाक्टर सैय्यद महमूद की जबाने मुबारिक से सुनिए—

शाहन्शाह औरंगजेब का पेशकार यानी चीफ सेक्रेटरी एक हिन्दू बलीराम नामी था। दीवान बलीराम का एक बड़ा दिलचस्प किस्सा है जिसे यहाँ नकल करना दिलचस्पी से खाली न होगा।

वाकिया यह है कि जून की गर्मियों में एक दिन शाहन्शाह औरंगजेब ने बलीराम को किसी खास जरूरत से तलब किया। बलीराम चांदनी चौक देहली में रहते थे। चांदनी चौक से लाल किले तक आने में जितनी उजलत (जल्दी) मुमकिन थी की गई, लेकिन इस दरमियान में शाहन्शाह किसी दूसरे काम की तरफ मुतवज्जः (व्यस्त) हो गये, और दीवान बलीराम की मौजूदगी का एहसास उनके दिल से जाता रहा। बलीराम एक घण्टे तक दरवाजे पर इसी इन्तजार में बैठे रहे कि इजाजत हो तो दाखिल हूँ, लेकिन औरंगजेब ने कोई तवज्जह नहीं की। इस पर बलीराम के दिल को ठेस लगी और वह किले से बाहर चले गये। घर पहुँचकर उन्होंने अपना मालो-मताज गुर्बा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में (सम्पत्ति आदि गरीबों में) तक्सीम कर दिया और खुद जोगी का भेस धारण करके जमना के किनारे जा बैठे। चन्द घण्टों के बाद जब औरंगजेब को बलीराम का ख्याल आया और उनके मुतल्लिक दरियाफ्त किया तो उनसे बलीराम का दिलचस्प किस्सा कहा गया। चाहिए तो यह था कि अपनी मुलाज़मत का चार्ज दिये बगैर इस तरह फरार हो जाने पर शहन्शाह फौरन बलीराम की गिरफ्तारी का वारण्ट जारी करते, लेकिन इसके खिलाफ शाहन्शाह खुद अपने महबूब पेशकार से मिलने के लिए प्यादः(पैदल) रवाना हो गए। उन्होंने अपने हमराह शाही तबीब(हकीम) और एक पालकी भी ले ली, ताकि-अगर बलीराम के दिल में कुछ फतूर आ गया हो, तो उसका इलाज किया जाए। जमुना के किनारे पहुंच कर औरंगजेब ने बलीराम को गहरे मुराकिब (समाधिस्थ) में पाया। खड़े होकर उससे मुखातिबत (वार्तालाप) का इन्तजार करने लगे। जब बलीराम ने आँखें खोली, तो शहन्शाहे हिन्द ने उन्हें इन अल्फाज के साथ मुखातिब किया—

"तुमने बीस साल तक निहायत ईमानदारी और वफादारी के साथ मेरी खिदमत की है। यह मेरी दिली ख्वाहिश है कि तुम इस राज की खिदमत अंजाम देते रहो। अगर तुम्हें इस बात का सदमा पहुंचा है कि तुम एक घण्टे तक धूप में मेरा इन्तजार करते रहे और मैंने तुम्हारी तरफ तवज्जः न की, तो बराए-करम मुआफ कर दो। यह बातें बाज़ औकात गैर इरादी तौर पर भी हो जाती हैं। बादशाह और रियाया की मिसाल बाप और बेटे की है। इसलिए तुम्हें इन गलतियों का ख्याल न करना चाहिए और अगर तुम बीमार हो तो मेरे तबीब मौजूद हैं और यह पालकी भी है, जिसमें तुम्हें आराम से घर पहुँचा दिया जाएगा।"

बलीराम मुस्कराया और जवाब दिया—"शहन्शाहे-आलम! जब मैं आपकी मुलाजमत में था, तो मैं एक घण्टा आपकी खिदमत में खड़ा रहा और आप मुखातिब न हुए, लेकिन अब जब मैंने हकीकी मालिक की खिदमत शुरू कर दी, तो हुजूर खुद मेरे पास पाप्यादः तशरीफ लाये हैं।" इस जवाब पर औरंगजेब हक्का-बक्का रह गया और बलीराम को खुदा की इबादत के लिए वहीं छोड़कर आहिस्ता से वापिस हो गया।

स्वामी रामतीर्थ ने क्या स्वानुभव व्यक्त किया है—

भागती फिरती थी दुनिया जब तलब रखते थे हम,
अब हमें नफरत हुई तो बेक़रार आने को है। ●

(पृष्ठ २६१ का शेष)

आक्रमण को रोकने के लिए जाना पड़ा था। जिस गति से हमारी सेनाओं ने कच्छ के रन में पहुँच कर आक्रमण को रोका, वह निस्संदेह प्रशंसनीय है। वहाँ कुछ समय तक लड़ाई हुई, उसमें हमारे वीर सैनिकों ने और अफसरों ने अपनी वीरता और युद्ध-कौशल का बहुत ही अच्छा परिचय दिया।

इसी तरह, जब पाकिस्तान ने लेह के मार्ग-संचार में बाधा पहुँचाने की धमकी दी, उस समय कारगिल क्षेत्र में हमारे अफसरों और जवानों ने बड़े ही साहस का परिचय दिया और उस धमकी को वहीं खत्म कर दिया। इन मोर्चों पर हमारे अफसरों और जवानों ने जिस साहस और शौर्य का परिचय दिया, वह वास्तव में भारतीय सेना की उच्च और सच्ची परम्परा के अनुकूल था। इन मोर्चों तथा अन्य स्थानों पर जिन सैनिकों ने वीरगति पाई, उनके परिवारों को मैं अपनी हार्दिक सम्वेदना भेजता हूँ।

आज हमारे पड़ौसियों के ऐसे शत्रुतापूर्ण रुख की वजह से देश के सामने एक बड़ा कर्तव्य है। हम सारे देश की आर्थिक दशा सुधारने में लगे हुए हैं, फिर भी देश की सुरक्षा क्षमता को सुदृढ़ बनाने सम्बन्धी प्रयत्नों को भी ढीला नहीं कर सकते। रक्षा की शक्ति आधुनिक हथियार, अच्छी ट्रेनिंग और ऊंचे हौंसले पर निर्भर है। पहली दो बातों का प्रबन्ध हम अपनी रक्षा योजना में कर रहे हैं। जहाँ तक हौंसले का सवाल है, अपने दौरों में मैंने अपनी स्थल, जल और वायुसेना के जवानों को निकट से देखा है और मुझे पूरा भरोसा है कि हमारी मातृ-भूमि की आन उनके हाथों में पूरी तरह सुरक्षित है।

आइए, हम सभी लोग फिर से संकल्प करें कि देश ने हमें जो काम सौंपे हैं, उन्हें हम पूरा करेंगे। आज हम अपने इस वायदे को फिर से दोहराएँ कि हम हर तरह के त्याग के लिए तैयार रहेंगे और हम अपनी समस्त शक्ति से देश की अमूल्य स्वाधीनता और सुरक्षा की रक्षा करते रहेंगे। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनोखी अमरीकी महिला

अमरीका के न्यूजरसी नामक नगर में एक ऐसी महिला रहती है जिसके चमत्कार ने बड़े-बड़े वैज्ञानिकों, मनोवैज्ञानिकों तथा जासूसों तक को आश्चर्य में डाल रखा है। इन महिला का नाम फ्लोरेन्स स्टर्नफ्लस है। इनके बारे में प्रसिद्ध है कि यह अन्धकारमय अतीत, अपरिचित वर्तमान और अनिश्चित भविष्य को इस सरलता से देख-जान सकती है मानो इन्होंने कोई फिल्म देखी हो। फ्लोरेन्स ने अपनी इस चमत्कारी शक्ति से अब तक हजारों खोये हुए लोगों, चुराई हुई वस्तुओं और गुम हुए कागज-पत्रों का सही-सही और ठीक पता बता कर कितने ही दुखी एवं परेशान लोगों का कल्याण किया है।

फ्लोरेन्स का हर काम कितनी ही विलक्षण घटनाओं से जुड़ा हुआ है। अमरीका की पुलिस ही नहीं, वहाँ का

अपने पढ़ने के कमरे में

जासूस विभाग भी कितनी ही दुर्घटनाओं में फ्लोरेन्स की सहायता ले चुका है।

गत वर्ष एक महिला रहस्यमय ढंग से लापता हो गई। एक पखवाड़े की जी तोड़ कोशिश के बाद भी जब पुलिस उस महिला का अता पता मालूम करने में विफल रही तो एक अधिकारी फ्लोरेन्स से मिला। फ्लोरेन्स ने उस महिला से सम्बद्ध कोई भी वस्तु लाने को कहा और वस्तु प्राप्त होने पर फ्लोरेन्स ने बताया कि अमुक उद्यान में उस विशेष स्थान पर पत्थरों के पीछे पत्तियों में छुपा उस महिला का शव पड़ा है। इतना ही नहीं, उन्होंने यह भी बताया कि वह ऐसे वस्त्र पहने है। उसकी जेब में दस डालर हैं और फिर उन्होंने उद्यान का पूरा रेखा चित्र बनाकर उस अधिकारी को दिया। पुलिस को महिला का शव भी मिल गया और दस डालर भी।

आश्चर्य की बात यह है कि फ्लोरेन्स ने न उस मृतक महिला को कभी देखा था और न उस उद्यान को। इतना ही नहीं, पुलिस उद्यान का कोना-कोना पहले छान चुकी थी, पर तब उसने पत्तियाँ उठाकर नहीं देखी थीं।

६९ वर्षीय फ्लोरेन्स की इस प्रतिभा का बड़े बड़े वैज्ञानिक मनोविश्लेषणशास्त्री तथा अन्य लोग परीक्षा ले चुके हैं और इस विषय में सभी एक मत है कि इस अद्वितीय महिला के पास यह विलक्षण शक्ति है। पर वह कैसे जान लेती है, इस का कोई उत्तर उनके पास नहीं। स्वयं फ्लोरेन्स का कहना है कि वह न आध्यात्मवादी है और न जादूगरनी। न उन्हें ज्योतिष का ज्ञान है और न उन्होंने कभी आत्माओं से वार्तालाप किया है। भूत और प्रेत आत्माओं की चर्चा करने पर तो इस आयु में भी उनको झुरझुरी चढ़ जाती है। वह तो बस संबद्ध घटना को चित्र रूप में देखती है और उसी के आधार पर वह उसके विषय में बता देती है।

अमरीकी टेलीफोन विभाग ने केवल फ्लोरेन्स को अपने नाम के आगे 'साइक' लिखने की सुविधा दी है। टेलीफोन डायरेक्टरी में केवल उनके नाम के साथ यह शब्द छपा होता है। फ्लोरेन्स के लिए टेलीफोन विभाग ने अपना नियम क्यों तोड़ा, इसकी भी एक रोचक घटना है। हुआ यह कि इस टेलीफोन अधिकारी के कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण कागज गुम हो गए। अधिकारी ने फ्लोरेन्स से सहायता मांगी और फ्लोरेन्स ने उन्हें बता दिया कि वे पत्र गलती से दूसरी फाइल में लग गये हैं। वह फाइल अमुक रैक में रखी है और वे सब कागज मिल गये। इस चमत्कार के बाद फ्लोरेन्स को टेलीफोन विभाग ने यह सुविधा प्रदान कर दी जो इससे पूर्व अन्य किसी को नहीं मिली थी।

(बच्चन श्रीवास्तव 'नवभारत टाइम्स' में)

स्वतन्त्रता और उन्नति

स्वतन्त्रता किसी से बंधी रहने वाली वस्तु नहीं है। यह बहुत ही महंगी चीज है और अनायास लुप्त हो जाने वाली। उसका खो देना बहुत आसान है, पर खोने के बाद फिर पाना बहुत कठिन।

हमारे देश में, जहां कि मत-स्वातंत्र्य हमेशा से स्वीकार किया गया है, एवं जहाँ लोग अपने विश्वास, विचार एवं परम्परा के अनुसार अनेक धर्म एवं मतों के अनुयायी हैं। स्वतन्त्र रहने के लिए, अन्य देशों की अपेक्षा, जहाँ कि केवल कानून का हुक्म मानना ही लोग अपना धर्म समझते हैं, अधिक बुद्धिमानी, त्याग और तपस्या की जरूरत है।

स्वतन्त्रता को कायम रखने एवं इसे दृढ़ बनाने के लिए हमें अपना चरित्र बहुत निर्मल एवं सर्वांगपूर्ण बनाना होगा। स्वतन्त्र देश में कोई भी, कैसे भी मूर्खतापूर्ण विचार प्रकट कर सकता है एवं मूर्खता तथा पशुतापूर्ण कार्य कर सकता है। ऐसे कार्यों का फल किसी व्यक्ति को ही नहीं, सारे राष्ट्र को भोगना पड़ता है। और गलत कहने वाला या गलत करने वाला मनुष्य कैसा बनता जाता है यह प्रत्येक मनोवैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक व्यक्ति जानता है। अतः व्यक्ति अथवा राष्ट्र के लिए, किसी भी दृष्टि से, सोचा गया कोई भी गलत विचार अथवा उठाया गया कोई भी गलत कदम किसी भी तरह कल्याणकारी नहीं है।

स्वतन्त्रता उन्हीं की चेरी होकर रहती है जो स्वतन्त्रता चाहते हैं और जो स्वतन्त्रता को दुनिया की प्रत्येक वस्तु से अधिक मूल्यवान समझकर चाहते हैं, जो स्वतन्त्रता का सौदा नहीं करते और जिनकी स्वतन्त्रता की चाह को कोई अन्य आकर्षण कम नहीं कर सकता। यही नहीं, स्वतन्त्रता की चाह उन्हें काहिल होने से रोकती है। स्वार्थ लालच बेहूदापन और हल्की आलोचना करने की इच्छा उनसे पूर रहती है। स्वतंत्रता उनके पास रहती है जो स्वतन्त्रता के लिए जीते हैं, जिनके निजी कार्य भी स्वतन्त्रता को दृढ़ करते हैं, जो स्वतंत्रता के लिए अपना खजाना लुटाते भी नहीं हिचकते और आवश्यकता पड़ने पर बिना किसी पशोपेश के अपनी जानतक दे देते हैं। (स्वामी कृष्णानंद 'आरोग्य' से)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : श्रीरमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक

ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल

फोर्ट, बम्बई – १

टेलीफोन : २५१२१८-१९-२०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

शिलाओं, पेड़ों की छाल, जानवरों की खाल अथवा धातुओं के टुकड़ों की लिखावटें सभ्यता के उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक—अखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स, सहारनपुर में मुद्रित-प्रकाशित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

सांस्कृतिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक
राष्ट्रीय चेतना का प्रेरक मनोरंजक मासिक

घटनाओं को ठीक जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
घटनाओं को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
उनके पर राय बनाने के लिए मासिक आवश्यक है,

'नया जीवन' में
दैनिक-साप्ताहिक-मासिक की इन विशेषताओं का समन्वय है
आप उसका एक अंक देख कर ही इस के साक्षी हो जाएंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज़ के एक छोटे पुर्जे पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी।
अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है।

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज़ के बिना न
शास्त्र मिलते न साहित्य।
कागज़ हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है।

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित यह साहित्य
आपके पुस्तकालय में न हो तो इसे तुरन्त मंगा लीजिये !

★ ज़िन्दगी मुस्कराई ४.०० रु०
★ बाजे पायलिया के घुंघरू ४.०० रु०
★ दीप जले शंख बजे ३.०० रु०
★ महके आँगन चहके द्वार ४.०० रु०

(नई स्फुरणा के साथ जीवन को चमकाने वाली चारों पुस्तकें)

★ माटी हो गई सोना २.०० रु०
बलिदान की चेतना से पूर्ण १७ अमर अक्षर चित्रों का संग्रह

★ आकाश के तारे धरती के फूल २.०० रु०
जीवन की गहराई, लोच और गति से भरपूर अनोखी लघु कथाएँ

★ क्षण बोले कण मुस्काए ४.०० रु०
लेखक की विशिष्ट शैली का प्रतिनिधित्व करने वाले
ललित एवं मनोरंजक निबंधों का नव प्रकाशित संग्रह

प्रकाशकः—

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुंड, वाराणसी

विक्रय केन्द्र ३६२०/२१ नेता जी सुभाष मार्ग, दिल्ली—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के सूर्य वंश, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–
उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है !

★

कोशिश कीजिये–

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुज़फ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए !

खड़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत

एवं

भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस: चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—११६, ११४, १६०

प्रबन्धक
सेठ कुलदीप चंद बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन की सफलता ही आजादी है !

आजादी का मतलब सिर्फ एक राजनीतिक लक्ष्य को प्राप्त कर लेना ही नहीं है बल्कि उसका कहीं ज्यादा मतलब हमारे अपने जीवन से है। हम अपना जीवन अपनी इच्छा के अनुसार कैसे बिताएं; कैसे हम अपने आप को गरीबी और निष्क्रियता के दलदल से ऊपर उठाएं।

देश को आगे बढ़ने के लिए नीति निदेशक–सिद्धान्तों को हमारे संविधान में एक पवित्र स्थान दिया गया है। और इन्हीं सिद्धान्तों का पालन करने के लिए ही हमने अपनी पंचवर्षीय योजनाओं में एक आदमी की दैनिक जीविका को अर्थ और विज्ञान का सम्बल प्रदान करने की कोशिश की है।

पिछली तीन योजनाओं में कृषि पैदावार खाद्यान्न और व्यावसायिक फसलों – दोनों का उत्पादन बढ़ा है। औद्योगिक उत्पादन तिगुना हुआ है, जबकि बिजली का उत्पादन पांच गुना हो गया है।

सभी स्तरों पर शिक्षा सुविधाओं का विस्तार हुआ है। प्राइमरी स्तर (६ से ११ वर्ष की आयु में) पर अब करीब ८० प्रतिशत बच्चे स्कूल जाते हैं जबकि १९५१ में यह संख्या केवल ४० प्रतिशत थी। अधिकाधिक स्वास्थ्य की देख-भाल और मलेरिया जैसी बीमारियों के विरुद्ध अभियानों के परिणामस्वरूप अब जीवन-आयु की सम्भावनाएं ३२ से बढ़ कर ५० वर्ष पहुंच गई हैं।

योजना में ही समृद्धि है

इसी के लिए श्रम — इसी के लिए बचत कीजिए

डीए ६५/२१९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापित १९५५ — शिलान्यास : राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद द्वारा

संस्थापक : मान्य श्री अजित प्रसाद जैन (राज्यपाल केरल)

सेवा निधि किदवई अपंग आश्रम

मूक वधिर विद्यालय

प्रद्युमन नगर : सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

मानव भगवान की अद्भुत रचना है। अनेक रूपा उसकी इस विश्व रचना में कुछ ऐसे मानव-पुत्र भी हैं जिनकी स्थिति एक दागदार मूर्ति जैसी है ! ऐसे मानव- पुत्र ही तो अपंग कहे जाते हैं।

क्या अपंग व्यक्ति हमारी दया और करुणा के पात्र हैं ? शायद नहीं। आखिर हम उन्हें 'बेचारा' मानकर उपेक्षित क्यों समझें। आवश्यक यह है कि वे सामान्य नागरिक की भांति स्वाभिमानी एवं शिक्षित ही न हों, अपितु जीविका-उपार्जन में भी समर्थ एवं तत्पर हों।

इसी पवित्र उद्देश्य से उत्प्रेरित होकर आपकी यह अपनी संस्था १९५५ से कार्यरत है। इस संस्था में गूंगे-बहरे बालक बालिकाएँ अपने व्यक्तित्व के विकास की सभी सम्भावनाओं का अन्वेषण और सम्पादन करते हैं।

संस्था में लगभग ४५ छात्र-छात्राएं तथा ५ प्रशिक्षित अध्यापक हैं। दूर नगरों से आने वाले छात्र-छात्राओं के लिए अलग-अलग, साधन सुविधाओं से पूर्ण दो छात्रावासों की व्यवस्था है, जिनकी देखभाल एक सुयोग्य मैट्रन द्वारा की जाती है। कक्षा ७ तक शिक्षा देने के साथ-साथ लकड़ी का काम, मोमबत्ती निर्माण और सिलाई- कढ़ाई का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

यदि आपकी दृष्टि-सीमा में कोई गूंगा बहरा बालक-बालिका हो, तो कृपया उसे हमारी संस्था के द्वार तक पहुंचा कर अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक दायित्व का पालन कीजिए।

यह संस्था सदैव आपके स्नेह एवं संरक्षण की आकांक्षा करती है। विशेष जानकारी के लिये लिखें।

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दून घाटी

= का =

गौरव

अमिताभ टैक्सटाइल मिल्स लिमिटेड

देहरादून :: उत्तर प्रदेश

श्रेष्ठतम :

★ सूत

★★ हौज़री

★★★ बंटा सूत

निर्माता

अमिताभ ! अमिताभ !! अमिताभ !!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिक धन कमायें : अधिक धन बचायें

देश के सर्वांगीण विकास के लिए

और

उसको समृद्ध एवं सुदृढ़ बनाने के लिए

अधिक से अधिक बचाइये

तथा

अपनी बचत

१–१२ वर्षीय राष्ट्रीय सुरक्षा पत्र,

२–१० वर्षीय सुरक्षा जमा पत्र,

३–१५ वर्षीय वार्षिकी खाता,

एवं

४–पोस्ट आफिस सेविंग बैंक

योजनाओं में लगायें ।

इस प्रकार

आयकर रहित ब्याज प्राप्त करने के साथ

देश को मजबूत बनाइये

विशेष जानकारी के लिए :—

जिला संगठन कर्ता, राष्ट्रीय बचत योजना से मिलिए ।

सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरी जानकारी

- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य पाँच रुपये औरसाधारण प्रति का पचास पैसे है। विशेषांक का मूल्य पृथक, जो ग्राहकों को वार्षिक मूल्यमें ही मिलताहै।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और अपनी प्रत्येक रचना पर अन्त में अपना पूरा नाम-पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह प्यार-मान दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें। ३ महाने के भीतर आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाए, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या लिखने की आवश्यक प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीज़ों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक

नया जीवन' * सहारनपुर * उ० प्र०

नया जीवन

विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

•

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

निदेशक

अखिलेश

सम्पादक-संचालक

•

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का फालतू समय चैन से काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं!

•

सितम्बर १९६५

संचालक

विकास लिमिटेड
सहारनपुर • उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अता-पता

उन्हें प्रणाम ! २६७

नए जागरण का स्वागत !

काश्मीरी घुसपठ । सतह से तह में २६९
जागते रहना मुसाफिर, यह ठगों का ग्राम है २७५
तेरी अदा तो देखली, अब मेरी अदा भी देख २७७
अब जिगर थाम के बैठो मेरी बारी आई २७९
लाल बहादुर इन दि हॉट वाटर नाउ २९२
श्री लाल बहादुर शास्त्री सर्वोच्च शिखर पर २९५
तटस्थता टूटी, पर यह फिर न जुड़े २९७

पाकिस्तानी फौज के हथियार
जब १९५६ में हमारे जवानों ने छीन लिए थे !

युद्ध, मशीनें और मानव

हम पक्के इरादे से आगे बढ़ें,
इस भरोसे और इरादे के साथ
कि हम दुश्मनों को मुल्क से भगाकर ही दम लेंगे !

श्री सीताराम गुप्त, कर्मचारी राज्य बीमा
निगम, हाथी बाबू का बाग,
स्टेशन रोड, जयपुर २९८

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' २९९
" " ३०५
" " ३०७
" " ३०९
" " ३१२
" " ३१५
" " ३१७

श्री महावीर त्यागी
केन्द्रीय पुनर्वास मन्त्री, नई दिल्ली ३२४

श्री हरीश अग्रवाल
द्वारा, 'नवभारत टाइम्स', नई दिल्ली ३२७

स्वर्गीय प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ३३०

卐

कविता में करो शत्रु के संहार की बातें
सुनने दो कथाकार से अंगार की बातें
कर लेंगे किसी और समय प्यार की बातें
इस वक्त करो तोप की, तलवार की बातें

—रामावतार त्यागी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हें प्रणाम

- पहला प्रणाम उन्हें, जो अपने महान देश को सम्मान के आसन पर बैठाने के लिए समर्पित हो गए।
- दूसरा प्रणाम उन्हें, जो उन समर्पित आत्मीयों को खोकर उन पुण्य प्रतिमाओं में परिणत हो गए, जिनके मस्तक पर गौरव का तिलक है, पर जिनके कलेजे में सदा के लिए विरह का घाव है।
- तीसरा प्रणाम उन्हें, जो अपने महान देश को सम्मान के आसन पर बैठाने के लिए समर्पण को प्रस्तुत हो युद्ध में जूझे और अब विजयी हो अपने ठिकानों पर लौट रहे हैं।
- चौथा प्रणाम उन्हें, जिन्होंने उचित समय पर उचित निर्णय लिया और देश को वीर नेतृत्व से अभिषिक्त कर सम्मानित किया।
- पाँचवा प्रणाम विरोधी राजनैतिक दलों के कर्णधारों को, जिन्होंने शासक दल को अशर्त सहयोग दे, हमारे बाल प्रजातन्त्र के इतिहास में दलीय स्वार्थ से राष्ट्रीय स्वार्थ की श्रेष्ठता का पहला स्वस्थ उदाहरण प्रस्तुत किया।
- छठा प्रणाम उन्हें, जिन्होंने वीर वाहिनी सेना की सफलता के लिए असैनिक सहयोग दिया।
- सातवाँ प्रणाम उन्हें, जिन्होंने राज्याधिकारी और राज्यकर्मचारी के रूप में असाधारण सन्नद्धता के साथ आन्तरिक व्यवस्था को युद्धस्तर पर स्थापित करने—निभाने में रात दिन श्रम किया।
- आठवाँ प्रणाम उन्हें, जिन्होंने श्रेष्ठ नागरिक धर्म के अनुसार राज्याधिकारियों को आन्तरिक व्यवस्था की पूर्णता में सहयोग दिया।
- नौवाँ प्रणाम उन्हें, जो सामान्य जन होते भी उत्साहित रह, देश के वातावरण को उत्साहमय रखने में सहयोग देते रहे।
- दसवाँ प्रणाम उन्हें, जो दुश्मन—देश के निवासी होते हुए भी मौन भाव से यह मानकर कि उनका देश अन्याय कर रहा है—हमारे देश को अपना हार्दिक समर्थन देते रहे।
- ग्यारहवाँ प्रणाम उन्हें, जो पाकिस्तान के बर्बर नागरिक आक्रमणों में अकारण मृत्यु और कष्टों का शिकार हुए और इस प्रकार जिन्होंने देश की विजय को देशवासियों के लिए कीमती धरोहर बना दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नए जागरण का स्वागत

श्री सीताराम गुप्त

जाग रही है नई भावना, जाग रहा उत्साह नया,
आज देश की धरती पर इस नए जागरण का स्वागत !

जिनका झटका खाकर अपने
अधिक सुदृढ़ हो गए कदम,
गिरि शिखरों पर राष्ट्र शक्ति का
ऊँचा लहराया परचम,

संकट का सामना जिन्होंने हँस कर करना सिखलाया,
सीमा के तूफानों द्वारा नव परिवर्तन का स्वागत !

जुटे रहे हम मेहनत करते
नई बहारें लाने को,
नव निर्माणों से धरती पर
खुशहाली फैलाने को,

भटक गए थे, किन्तु राह से हम संगठन, एकता की,
जिसने हमको एक बनाया उस नवीन प्रण का स्वागत !

नई चेतना अब जागी है,
ग्राम-नगर में, घर-घर में,
खड़ा हुआ मुक्ति की वन्दना—
करता राष्ट्र एक स्वर में,

उस क्षण का स्वागत, जो जन-जन में भर दे विश्वास नया,
जो काया-परिवर्तन कर दे उस नव जीवन का स्वागत !

卐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

शास्त्री, चौहान, नन्दा को प्रणाम ,
चौधरी, अर्जुन, सोमन को सैल्यूट !
टुकड़े-टुकड़े कर दिया झूठा घमंड ,
सदरे पाकिस्तान हैं अब एक ठूंठ !!

काश्मीरी घुसपैठ : सतह से तह में!

अगस्त १९६५ के आरम्भ में कई सौ या कई हजार पाकिस्तानी गुरिल्ले सीमा लांघ कर काश्मीर में घुस आए और अब भारत की सेना उनका सफाया करने में लगी हुई है। यह खबर घर घर पहुँच चुकी है, पर जरूरत इस बात की है कि इस खबर के बुर्के में जो चेहरे छिपे हैं, हम उन्हें देखें, पहचानें और यह जानें कि उनके दिमाग में क्या धुन है ?

इस बुर्के में पहला चेहरा है चीन का। भारत १५ अगस्त १९४७ को क्या आजाद हुआ, एशिया-अफ्रीका के गुलाम देशों की आजादी का झरना ही फूट पड़ा—छोटे छोटे उपनिवेश धड़ाधड़ आजाद हुए। भारत के प्रति उनका सम्मान स्वाभाविक था। फिर भारत में जो औद्योगीकरण हुआ और संसार में प्रधान मंत्री नेहरू ने जो हवा बाँधी, उस से भी यह सम्मान बढ़ा। इस सबसे भारत एशिया की सबसे बड़ी शक्ति बन गया। चीन का नेतृत्व हिटलर की तरह महत्वाकांक्षी है। उसके दिमाग का नक्शा यह था कि वह एशिया और अफ्रीका का नेतृत्व करे और उसे कम्यूनिस्ट बनाए और रूस अमरीका यूरोप का नेतृत्व करे और उसे कम्यूनिस्ट बनाए। इस तरह सारी दुनिया कम्यूनिस्ट हो जाये।

उभरता हुआ भारत उसके इस सपने की राह का रोड़ा था, पर जवाहर लाल नेहरू का व्यक्तित्व तप रहा था और चीन की ताकत भी अधूरी थी, इस लिए चीन के दूरदर्शी नेताओं ने भारत को हड़पने की एक लम्बी योजना बनाई। हमारे जवाहर लाल इंसान के रूप में 'ए वन' थे पर कूटनीतिज्ञ और प्रशासक के रूप में 'फोर्थ क्लास' थे। विनोबा जी ने उन्हें लोकदेव—जनता का देवता—ठीक ही कहा। हमारे देश के देवता पुजारियों के सामने सदा सर्व शक्तिमान रहे हैं, पर महमूद गजनवी की गदा के सामने वे यों बिखर गए, जैसे बिखरने को तैयार ही बैठे थे। जवाहर लाल को पंचशील और सह-अस्तित्व का प्रवर्तक घोषित कर चाऊ एन लाई ने तिब्बत से भारत की फौजें हटवा दीं और इस तरह तिब्बत में कत्ले आम करने का लाइसेंस तो ले ही लिया, पर चीन की सीमा भी भारत से मिला दी।

यह चीन की लम्बी योजना का पहला अध्याय पूर्ण हुआ। इसके बाद उसने लद्दाख और नेफा में धीरे-धीरे पैर बढ़ाने शुरू किए और भारत की सीमा पर सड़कों का जाल बिछाना भी। देश के पत्रों में और संसद में भी इसकी गरम चर्चा हुई और प्रश्न का रूप यह बना कि यह चीन का अतिक्रमण (सीमा लांघना) है या आक्रमण ? यह प्रश्न देश के कम्यूनिस्टों ने पैदा किया, क्योंकि वे पूरे जोर से कहते रहे कि यह आक्रमण नहीं, साधारण अतिक्रमण ही है। श्री जवाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाल नेहरू और श्री कृष्णा मेनन ने भी इस तरह वक्तव्य दिए कि चीन की चाल में जो भयंकरता थी, वह जनता के सामने न आ सकी। जब राजनीतिज्ञ इस प्रश्न में उलझे हुए थे, एक राष्ट्रीय पत्रकार के नाते मेरे मन में यह प्रश्न उठा कि यह अतिक्रमण हो या आक्रमण, आखिर चीन का उद्देश्य क्या है? वह चाहता क्या है? साफ साफ यों कि क्या चीन आक्रमण करके भारत के असम-बंगाल वाले चावल-पैट्रोल के भाग को हड़पना चाहता है या वह यों ही छेड़छाड़ कर रहा है?

१९५९ की दूसरी छमाही में मैं सेना की अनेक छावनियों में घूमा, अनेक सैनिक अफसरों से मिला, अनेक राजनीतिज्ञों से मैंने बातचीत की, राजनीति के कई ऊंचे विद्वानों के भी मैं सम्पर्क में आया और भारतीय प्रशासन के ऊंचे अफसरों से भी मैंने टोह ली। जिन दिनों मैं यह अध्ययन कर रहा था, प्रधानमन्त्री नेहरू बार-बार यह कह रहे थे कि चीन के साथ युद्ध का कोई खतरा नहीं है। कम्यूनिस्ट पार्टी भी इस बात को कोई महत्व नहीं देना चाहती थी, पर प्रजासमाजवादी दल और जनसंघ इस विषय को बहुत महत्व दे रहे थे और उन्होंने पूरी ताकत से इसे पार्लियामेंट में उठाया। नेहरू जी आन्दोलन से प्रभावित होते थे, इसलिए उन्होंने पार्लियामेंट में श्वेतपत्र प्रकाशित किया, जिसमें हजारों मील धरती चीन द्वारा कब्जा लेने की बात स्वीकार की गई थी और भूतपूर्व स्थल सेनाध्यक्ष श्री नागेश को गवर्नर के पद पर नियुक्त करने और नेफा क्षेत्र की सेना के सपुर्द करने की घोषणा भी थी।

मैंने इस सारी जानकारी को चिंतन की चासनी में पकाकर एक धारणा बनाई और उसे दैनिक 'हिन्दुस्तान' में प्रकाशित कर दिया। उस लेख का एक टुकड़ा इस प्रकार है—

"लोकसभा की इस बहस का सबसे अच्छा पहलू था प्रधानमंत्री का तेजस्वी भाषण, जिसमें उन्होंने शांति से समझौता और दृढ़ता से मुकाबला करने की घोषणा की, परन्तु इस बहस का सबसे बुरा पहलू यह था कि इसमें यह प्रश्न उठाया ही नहीं गया कि चीन का यह आक्रमण किस ढंग का है, उसका उद्देश्य क्या है और उस उद्देश्य को विफल करने के लिए उपाय क्या है?"

* * *

"भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी यह विश्वास नहीं करती कि कभी चुनाव के द्वारा वह कांग्रेस की तरह भारत का शासन पाएगी। उसकी सफलता का तरीका तो यही हो सकता है कि जब कभी भारत का केन्द्रीय शासन कमजोर हो, तब वह देश में विद्रोह कर दे, तोड़ फोड़ मचा दे, जनता में अस्त-व्यस्तता फैलादे और अस्त-व्यस्तता की उन घड़ियों में उसे किसी कम्यूनिस्ट देश की फौजी मदद मिल जाए, तो शासन सत्ता पर उसका कब्जा हो जाए।"

* * *

"तो दूरवर्ती योजना यह मालूम होती है कि चीन भारत की सीमा पर ऐसा स्थान बना लेना चाहता है कि जहाँ से समय पर वह अपनी फौजों को भारत में सुविधापूर्वक और तुरन्त भेज सके। कम्यूनिस्टों का विश्वास है कि प्रधानमंत्री नेहरू के बाद ऐसा समय आएगा, जब भारत का केन्द्र कमजोर पड़ जाएगा और राज्यों के शासन भी। उनके विश्वास का कारण यह है कि कांग्रेस अपने पोपले मुटापे के कारण, अपनी आन्तरिक गुटबन्दियों के कारण, उच्चतम नेताओं की कमजोरी और शासन लिप्सा के कारण कमजोर होती जा रही है और दूसरे राजनैतिक दल उचित रूप में पनप नहीं रहे हैं। इसलिए उस समय कोई भी पार्टी राज्यों में या केन्द्र में निश्चित बहुमत में नहीं रहेगी और सारा शासन मेंढकों की तराजू हो जाएगा। बस, देश में कम्यूनिस्ट शासन स्थापित करने का—प्रजातंत्री भारत को कम्यूनिस्ट देश बनाने का वही उपयुक्त समय होगा।"

* * *

'इस पृष्ठभूमि में हम देखें, तो हमारी समझ में आ जाएगा कि कम्यूनिस्ट और दूसरे नेताओं का यह कहना कि चीन भारत में युद्ध नहीं होगा, ठीक होकर भी गलत है। यह तो ठीक ही है कि इस समय चीन भारत में युद्ध हो, तो वह विश्वयुद्ध हो जायेगा और उसमें चीन की चैन भी खत्म हो जाएगी, पर कूटनीति के बल से बिना युद्ध के ही यदि चीन की विजय हो जाए और कहने को यह भी अवसर रहे कि यह तो भारत का निजी मामला है, तो क्या चीन को कुत्ते ने काटा है कि वह भारत से युद्ध छेड़े।"

२० अक्टूबर १९६२ को जब चीन ने भारत पर आक्रमण किया, तो लगा कि चीन भारत के साथ सीधे युद्ध में उतर आया है, पर २० नवम्बर १९६२ को चीन पीछे हट गया बिना किसी समझौते की बातचीत के। बात यह थी कि राज्यों के पुनर्गठन पर भारत में जो झगड़े हुए उनसे नेहरू जी परेशान हुए और उन्होंने एक शोर मचा दिया भावात्मक एकता का। इस शोर से ऐसा लगा कि देश की एकता खतरे में है। उससे भारत के कम्यूनिस्ट चौंके। सेनाओं में और सीमाओं में भी उन्होंने थोड़ा-सा बगावती काम किया था। उसे उन्होंने बढ़ा-चढ़ा कर आँका और भारत में कम्यूनिस्ट क्रांति का उपयुक्त समय मान लिया। उन्होंने चीन को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिपोर्ट भेजी कि आ जाओ, समय ठीक है। जवाहर लाल विश्व की राजनीति में बढ़चढ़ कर बोल रहे थे और संसार के तीन मसीहाओं में—कनैडी, ख्रुश्चेव, नेहरू माने जाते थे। इससे भारत की प्रतिष्ठा में भी चार चाँद लग रहे थे। चीन के एशियायी नेतृत्व की आकांक्षा इससे कुलमुला रही थी।

बस, वह चढ़ आया, पर भारत की जनता ने अटूट एकता का प्रदर्शन किया, ब्रिटेन-अमरीका ने तुरन्त भारी मदद भेजी विश्व का कम्यूनिस्ट बहुमत उसके विरुद्ध रहा और इससे प्रभावित होकर रूस ने चीन पर भारी दबाव डाला और इस तरह चीन को पीछे हटना पड़ा। पीछे हटकर भी चीन लाभ में रहा, क्यों कि इस आक्रमण से विश्व के प्राँगण में भारत की आवाज़ हल्की पड़ गई और पंडित जवाहर लाल नेहरू भीतर से टूट गए। इस नुकसान के साथ भारत को यह लाभ भी हुआ कि वह उस अवास्तविक वातावरण से बाहर निकल आया, जिसमें वह रह रहा था।

इस आक्रमण के बाद चीन कहाँ रहा? यह महत्वपूर्ण प्रश्न है और इस प्रश्न का समाधान पाना ही सबसे जरूरी है। चीन ने भारत को कम्यूनिस्ट बनाने का इरादा नहीं बदला, हाँ अपना दाव बदल दिया। चीन की सफलता का सबसे बड़ा दाव है भारत के भीतर अशाँति पैदा करने वाले तोड़-फोड़िये। भारत के कम्यूनिस्टों की औकात चीन ने देख ली और भाँप लिया कि इनके हाथ छोटे हैं। इसलिए उसने बड़े हाथों की तरफ हाथ बढ़ाया और पाकिस्तान से दोस्ती करली। इन बड़े हाथों को हम समझें।

१९५७ के चुनावों का विश्लेषण करते हुए मैंने अपने लेख में लिखा था—

"मुसलमान किधर गये? मुसलमान बस मुसलमान हो गए। यदि कांग्रेस उमीदवार मुसलमान हुआ, तो वे सम्मिलित रूप से उसके साथ रहे, पर जहाँ हिन्दू कांग्रेसी के मुकाबले स्वतंत्र मुसलमान उमीदवार हुआ तो वे उसके हो गए। कहीं कहीं पुराने मुस्लिम लीगी नेता कम्यूनिस्ट बनकर सामने आए और आम मुसलमान को भड़काने में सफल हो गए। मालूम हुआ कि मुसलमान में भड़कने की वृत्ति अब भी काफी वर्तमान है और पाकिस्तान के निर्माण से भी उसने कुछ सीखा नहीं है।"

* * *

"इस विषय में एक गंभीर रहस्य यह है कि भारत का मुसलमान शासन के प्रति और हिन्दू समाज के प्रति अविश्वासी हो गया है। १९४७ के साम्प्रदायिक दंगों ने उसे 'डिमारलाइज़्ड' कर दिया है और उसके भीतर एक भय बैठ गया है।"

* * *

पार्लियामेंट के एक मुसलमान उमीदवार ने कानोंकान प्रचार किया कि जैसा कत्लेआम पहले हुआ था, कश्मीर के कारण फिर हो सकता है। तुम मुझे वहाँ भेज दोगे, तो मुझे उसकी खबर रहेगी और मैं वक्त से पहले तुम्हें खबरदार कर दूंगा। इस प्रचार का यह असर हुआ कि उन्हें डेढ़ लाख वोट मिले। क्या यह चिंता की बात नहीं?

* * *

चीन ने पाकिस्तान से दोस्ती करके हिन्दुस्तानी मुसलमान और हिन्दुस्तानी कम्यूनिस्ट पार्टी के बीच का पहाड़ तोड़ दिया। यह पहाड़ था इस्लाम। कम्यूनिस्ट धर्म को नहीं मानते और मुसलमान धर्मजीवी हैं। अब शिक्षित मुसलमान सोचता है—जब इस्लामी राज्य पाकिस्तानी कम्यूनिस्ट चीन का दोस्त हो सकता है तो मैं कम्यूनिस्ट क्यों नहीं हो सकता? इस चिंतन ने दोनों के मिलन की असंभवता को संभवता में बदल दिया है। इसे हम यों देखें कि केरल में सारी राजनीति जातियों में बटी हुई है और वहाँ के मुसलमानों पर मुस्लिम लीग का अखंड प्रभाव था, पर पिछले चुनाव में साफ तौर पर इस प्रभाव में कम्यूनिस्ट पार्टी ने काफी हिस्सा तोड़ लिया है।

इस बड़ी बात के साथ छोटी बात भी है, पर निहायत खतरनाक कि पाकिस्तान हिन्दुस्तान के मुसलमानों में रिश्तेदारियाँ हैं और उनके कारण आना जाना है। इस आने जाने में जासूसी के बहुत अच्छे मौके हाथ आते हैं।

इस सबके साथ आजाद कश्मीर के नाम पर चीन अपने दोस्त पाकिस्तान से मिलकर हिन्दुस्तान में कभी भी डले फेंक सकता है और सैनिक कार्यवाही कर सकता है, जैसी कि अब काश्मीर में हो रही है। इस प्रकार यह साफ है कि काश्मीर की पाकिस्तानी घुसपैठ में बुरके में पहला चेहरा चीन का है, जिसका उद्देश्य भारत में कम्यूनिस्ट हुकूमत कायम करना है, जो नाममात्र को स्वतन्त्र हो, पर पूरी तरह चीन के इशारों पर चले और इस तरह चीन के ६० करोड़ और भारत के ४० करोड़ आदमियों की ताकत के सहारे चीन रूस और अमरीका दोनों को आँख दिखा सके।

(२)

कश्मीर में पाकिस्तानी घुसपैठ की सतह अब हमारे सामने है और यहां से हम उसकी तह में उतरते हैं। कच्छ के रन में पाकिस्तान का डिक्टेटर अयूब बड़े सपने लेकर उतरा था, पर अपने टूटे टैंक लेकर लौटा। वहाँ उसकी सेना तो पिटी ही, राजनीति भी पिट गई और अपनी जनता के सामने उसकी बड़ी फिटफिटी हुई। उसकी जन्मकुंडली का शनिश्चर है विदेशमंत्री भुट्टो। वह चीन परस्त आदमी है और इतनी ताकत पकड़ गया है कि अयूब जकड़न में है। इस हालत में वह पब्लिक की निगाहों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी गिर जाए, तो फिर जानता है कि प्रजातन्त्री देश में तो कुरसी ही देनी पड़ती है, पर डिक्टेटरी में कुरसी और सिर दोनों देने पड़ते हैं। मेरी आत्मा कहती है कि पाकिस्तान में उस गोली का निर्माण आरम्भ होगया है, जो अयूब का सीना चूमकर उसे उसी तरह पदच्युत करेगी, जैसे उसकी गोली ने जनरल इस्कन्दर मिर्जा का सीना चूमकर उससे दस्तखत करा लिए थे।

तो कश्मीर में पाकिस्तानी आक्रमण अपनी पोजीशन बचाने के लिए अयूब का विवश प्रयास है और इसमें चीन उसका सहायक है जो लोग कश्मीर में घुस आए हैं वे पाकिस्तानी सैनिक हैं और उनको घुसपैठ कला का प्रशिक्षण दिया है चीनी जनरलों ने।

लम्बी सीमा सामने होते भी कश्मीर को ही इसके लिए क्यों चुना? और इस आक्रमण के लिए यही समय क्यों चुना? यह महत्वपूर्ण प्रश्न है। कश्मीर पर यह आक्रमण नौ अगस्त को हुआ है और नौ अगस्त शेख अब्दुल्ला की सबसे पहली गिरफ्तारी की तारीख है। शेख अब्दुल्ला दक्षिण में नजरबन्द हैं, पर हमारी सरकार को स्वर्गीय प्रधान मन्त्री श्री जवाहर लाल नेहरू शराफत का सर्टीफिकेट पाने की धुन वसीयत में देगए थे, इसलिए शेख के लेफ्टीनेन्ट काश्मीर में खुले आम हुड़दंग मचाते रहे और पाकिस्तान की मदद से जहाँ-तहां विस्फोट करते रहे।

ये लोग ९ अगस्त को काश्मीर भर में जल्से जुलूस करने की तैयारी कर रहे थे। शेख अब्दुल्ला के भीतर शेखचिल्ली की आत्मा का निवास है और उसकी छूत उसके लेफ्टीनेन्टों को भी लगी है। ये सब उंगली मारकर आस्मान के तारे तोड़ने के प्रोग्राम बना रहे थे—जलूस में हजारों आदमी होंगे और जल्सों में काश्मीर की जनता टूट पड़ेगी और हम विश्व को दिखा देंगे कि सारा काश्मीर शेख के साथ है और काश्मीर की आजादी चाहता है। जैसे १९६२ में देश के कम्यूनिस्टों ने चीन को रिपोर्ट भेजी थी कि हुजूर, चीनी फौज के गोला फेंकते ही हिन्दुस्तानी फौज के जवान अपने अफसरों को मार डालेंगे और आपका स्वागत करेंगे, और देश की जनता द्वार द्वार पर आरती उतारेगी—जिन्दाबाद बोलेगी, वैसी ही रिपोर्ट शेख के लैफ्टीनेन्टों ने पाकिस्तान को भेज रखी थी।

इस पृष्ठ भूमि में योजना यह बनी कि पाकिस्तानी फौज के १॥-२ हज़ार आदमी सादे कपड़ों में शस्त्रों सहित सीमा पार कर काश्मीर के पहाड़ों-जंगलों में छिप जाएं और ९ अगस्त को जो जलूस निकले, छिपे-छिपे उनके पीछे-पीछे चलें और ठीक मौके पर मैशीन-गनों, राइफलों से गोली वर्षा आरम्भ कर शान्ति की घोषणा कर दें। कुछ लोग काश्मीर के नेताओं की हत्या करदें, पुल वगैरह तोड़ दें और कुछ लोग काश्मीर रेडियो पर कब्जा करलें। दुनिया में कहा जाए कि काश्मीरी जनता ने काश्मीर क्रांति परिषद के नेतृत्व में भारत की गुलामी के खिलाफ क्रांति कर, अपने को आज़ाद कर लिया है। इसी समय चीन लद्दाख पर अपना झण्डा फहरादे, पाकिस्तान तुरन्त क्रांति परिषद की सरकार को मान्यता दे दे और उसके निमन्त्रण पर जनरल अयूब १५ अगस्त को काश्मीर आ पहुंचें और रेडियो पर तकरीर फरमाएँ; जिसमें हिन्दुस्तान की सरकार को काफी धमकियाँ हों। हाय, बेचारों ने तकरीर भी तैयार करली थी और पहनने के लिए रौबीला सूट भी छांट लिया था, पर बेचारों की किस्मत धोखा दे गई कि काश्मीर के देहाती आदमियों ने घुसपैठियों की खबर भारत की फौज को देदी और जलूसों में जनता की भीड़ ही नहीं हुई, जिसमें वे छिपकर चलते। इतिहास ने अपने को दोहराया। २५ अक्तूबर १९४७ को कायदे आजम जिन्ना कराची से ऐपटाबाद आगए थे कि कबायलियों की चढ़ाई से जीते हुए कश्मीर में वे ईद मनाएँगे, पर भारतीय फौजों के जा पहुँचने से उनकी उमीदों पर पानी फिर गया था। १४ अगस्त १९६५ को जनरल अयूब भी श्रीनगर रेडियो से भाषण देने के सपने देख रहे थे, पर काश्मीरी जनता और भारतीय फौजों ने उनकी उमीदों पर पानी फेर दिया। और शेख अब्दुल्ला? पहली बार वे जिन्ना के सपनों का महल ढाने वालों में थे, पर इस बार वे उनमें थे, खुद जिनका महल खील-खील हो गया था।

एक प्रश्न पार्लामेंट में भी उठाया गया है, पत्रों में भी और प्लेट फार्मों पर भी कि काश्मीर में केन्द्रीय सरकार की खुफिया पुलिस है, सेना की खुफिया पुलिस है, राज्य की खुफिया पुलिस है, फिर हजारों आदमी सीमा लाँघकर कैसे घुस आए? उस प्रश्न के पीछे एक लम्बी सुरग है और उस पर ऐसा पर्दा पड़ा है, जिसे राजनयिक कारणों से हमारी सरकार नहीं उठा सकती। वह पर्दा अमरीका की लिप्सा का है।

मैं पिछले १५-१६ वर्षों में निरन्तर काश्मीर के प्रश्न का अध्ययन करता रहा हूँ और मुझे कभी भी यह एहसास नहीं हुआ कि काश्मीर में पाकिस्तान की दिलचस्पी अपने लिए है। मुझे हमेशा यही ऐहसास हुआ कि काश्मीर में असली दिलचस्पी अमरीका की है और पाकिस्तान सिर्फ अमरीका का औजार है। अमरीका काश्मीर को भारत पाकिस्तान से स्वतन्त्र कर स्वयं अपने प्रभाव में रखना चाहता है, जिससे वह एक साथ भारत, चीन, पाकिस्तान और रूस पर निगाह रख सके और ये सब उस की तोपों की ज़द में रहें।

हमारा ध्यान इस बात पर जाना चाहिए कि भारत सरकार के वक्तव्यों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब यह स्पष्ट था कि भारत लौटते ही शेख अब्दुल्ला की गिरफ्तारी निश्चित है, तब भी शेख भारत क्यों लौटा ? मेरे मन में बहुत दिनों से एक शीर्षक घूम रहा है-नेता जिन्ना की भूमिका में, अभिनेता शेख अब्दुल्ला। जिन्ना की सफलता यह थी कि वह इस बात को ताड़ गया था कि अंग्रेज जब भी भारत से जायेंगे, उसे बाँटकर ही जायेंगे। इस लिए मेरा काम उस दिन के लिए तैयार रहना है। इसी तरह शेख अब्दुल्ला भी यह ताड़ गया है कि अमरीका काश्मीर को लेकर हटेगा, तो मेरा काम उसका विश्वास पात्र बना रहना है। जानने वाले जानते हैं शेख दोनों बार अमरीकी दबाव के कारण ही जेल से छोड़ा गया था और आज भी वह उसी के विश्वास में खूबसूरत टी सैट में चाय पी रहा है।

तो काश्मीर की पाकिस्तानी घुसपैठ के बुरके में जहाँ चीन का चेहरा है वहाँ अमरीका का चेहरा भी है। चीन ने हमें तोला है कि क्या भारत में काश्मीर और दूसरे राज्यों में-उसके एजेंट आन्तरिक गड़बड़ी पैदा करने की स्थिति में है ? हमारा ध्यान इस बात पर जाना चाहिए कि घुसपैठ से कुछ दिन पहले अलीगढ़ में उपद्रव हुआ, फिर उसके नाम पर कई जगह गरमी पैदा की गई और ठीक घुसपैठ के साथ ही और भी २-३ जगह साम्प्रदायिक उपद्रवों का आयोजन हुआ। खुशी की बात है कि चीन-पाकिस्तान के कुछ एजेंटों के अलावा सारे देश की जनता देश के साथ रही और इस तरह चीन की आशा पूरी नहीं हुई।

अमरीका जब तब कश्मीर के मामले में भारत पर दबाव डालता रहता है। इस बार भी उसने तोला कि क्या इस आक्रमण से हम घबराकर उसे बुलाने को हैं ? भारत ने इसका जवाब दिया-"नहीं, हम इस चुनौती के लिए तैयार हैं।" घुसपैठ के इस बुरके में अमरीका का चेहरा पहचानने के लिए वह बात साफ साफ कही जानी चाहिए, जिसे पार्लामेंट और प्रेस-प्लेटफार्म पर पूछे जाने पर भी भारत सरकार अपनी मर्यादा के कारण नहीं कह पाई है। वह बात यह है कि ये घुसपैठिये घुसे कैसे काश्मीर में ?

काश्मीर में एक युद्ध बन्दी रेखा है। उसके इधर का काश्मीर भारत के कब्जे में है और उधर का काश्मीर पाकिस्तान के कब्जे में। इस रेखा पर सुरक्षा परिषद् के ४५ प्रेक्षक सैनिक देखभाल करते हैं। इनका सेनापति जनरल निम्मो अमरीका-परस्त है। कोई छिपाने की बात नहीं कि वह पाकिस्तान-पक्षपाती है। पाकिस्तान के सैनिक जब उस रेखा का उल्लंघन करते हैं, तो फौजी वर्दी पहनकर तो आते नहीं, सादे वेश में आते हैं। इसकी जब उससे शिकायत की जाती है, तो वह कहता है कि जिस निर्णय के अनुसार हम तैनात हैं, उसमें हमें सैनिक अतिक्रमण रोकने को कहा गया है, नागरिक अतिक्रमण रोकने को नहीं। बरसों से सैनिक-नागरिक की बहस होरही है और ३ हजार अतिक्रमण हो चुके हैं। इस बार जो पाकिस्तानी गुरील्ले आए हैं, वे उसकी इसी धूर्ततापूर्ण लापरवाही से आए हैं। इस बात को समझकर ही हम काश्मीरी घुसपैठ के बुरके में अमरीका का चेहरा पहचान सकते हैं।

इस चेहरे की ओर भी साफ पहचानने के लिए यह जानना आवश्यक है कि कच्छ की लडाई के समय भारत की सेनाओं ने कारगिल क्षेत्र की दो पाकिस्तानी चौकियों पर कब्जा कर लिया था और समझौते के समय भारत ने इस वादे पर उन्हें खाली किया था कि सुरक्षा परिषद के प्रेक्षक भारतीय सड़क की रक्षा करेंगे। यह वादा नहीं निभाया गया और भारत की सेनाओं को उन पर फिर कब्जा करना पड़ा।

इस सिलसिले में हमारा ध्यान इस प्रश्न पर भी जाना चाहिए कि चीन के साथ दोस्ती गठबंधन करने पर भी पाकिस्तान को अमरीकी सहायता क्यों मिलती रही ? जनरल अय्यूब ने कहा था—"पाकिस्तान अमरीका और चीन के बीच दोस्ती की कड़ी बन सकता है।"

इस पृष्ठभूमि में क्या यह कल्पना करना अस्वाभाविक है कि अमरीका और पाकिस्तान के कर्णधारों के बीच यह वाक्य तैर रहा है-'पाकिस्तान को आसाम मिल जायगा और अमरीका को पूरा काश्मीर और चीन का विशाल बाजार। इस हालत में चीन लद्दाख लेले तो हमारा क्या बिगड़ता है ?'

इस लम्बे विवेचन के बाद हम कहाँ पहुँचे ? यहाँ कि काश्मीर का प्रश्न हम सबके जीवन मरण का प्रश्न है ? इस लिए हम सब अपनी दलबंदियों और गुट बंदियों को स्थगित कर संकट के प्रति एकाग्र हों, एकात्म हों और समस्या को न हल्के हाथों लें, न हल्के दिमाग़ों। लोक सभा में जैसा कि श्री कृष्णा मैनन ने कहा-"भारत को फिर से जीतने के लिए यह पहला कदम उठाया गया है।" हमारा काम नम्बर एक है यह कि हम इस कदम को तोड़ दें, जिससे दूसरा कदम कभी न उठे, कभी न उठे। ○

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

जागते रहना मुसाफिर, यह ठगों का ग्राम है

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८ अगस्त १९६५

बदबूदार खबरों से ७ अगस्त तक के अखबार भरे पड़े थे। ये सड़ी हुई खबरें थी डींगी लीडरों के अनशनों की, कांग्रेस में झूठे मेम्बरों की भरती की, साम्प्रदायिक आग जलाने की धूम-धाम की, बगावत और आन्दोलन का भेद न समझने वाले प्रदर्शनों की, सार्वजनिक सम्पत्ति की तोड़-फोड़ और फूंक-फांक के विरुद्ध चलने वाली गोलियों की, अपने भविष्य की झोंपड़ी में स्वयं आग लगाने वाले छात्रों के उपद्रवों की, प्रजातंत्र के पावन मन्दिर विधान भवनों के उच्छृंखल हंगामों की, संतों और महन्तों के जल मरने के ऐलानों की, नेतृत्व के लिए चालू रस्साकसी की, दलबंदियों और गुटबंदियों की और भ्रष्टाचार कांडों की; जैसे भारत में ही भारत का दर्शन असम्भव घोषित हो रहा हो और यह व्यष्टि का देश हो, समष्टि की शून्यता ही इसका राष्ट्रीय उद्घोष हो।

तब ८ अगस्त के अखबार में खबर आई काश्मीर में पाकिस्तानी घुसपैठ की, भारतीय सैनिकों के साथ मुठ भेड़ की और बड़े पैमाने पर तोड़-फोड़ करने वाली पाकिस्तानी योजना की। इस खबर की सनसनी पुरानी खबरों की बदबू को चीरती हुई चली गई, जैसे फीके मुंह में लाल मिर्च लग जाए, पर यह लाल मिर्च दो-तीन दिन में ही बारुद बन गई इस खबर से कि यह कोई मामूली घुसपैठ नहीं है, यह तो काश्मीर पर पूरा कब्जा पाने की कूटनैतिक हिटलरी योजना है, जिससे उसने चेकोस्लोवाकिया पर कब्जा कर लिया था। संक्षेप में यह कि घुसपैठिये पाकिस्तानी सेना के ट्रेंड सैनिक और अफसर हैं और उनका उद्देश्य काश्मीर के नेताओं की हत्या करना, रेडियो पर कब्जा करना और कल्पित काश्मीर क्रांतिकारी परिषद के नाम से काश्मीर की स्वतन्त्रता घोषित करना है और यह भी इस तरह कि यह सब काश्मीरी जनता का ही विद्रोह मालूम हो—पाकिस्तान का इसमें कहीं नाम न आए। काश्मीर पुलिस के सुपरिटेंडेंट सैयद वली शाह डिप्टी इंस्पैक्टर जनरल ख्वाजा गुलाम रसूल, डिप्टी सुपरिन्टेंडेंट अब्दुल अजीज और इंसपैक्टर मुहम्मद शरीफ ने खबर मिलते ही इन लुटेरों को पकड़ने का अभियान शुरू किया। इनके साथ ही हमारी सुरक्षा सेना इन हजारों घुसपैठियों की सफाई में जुट गई और काश्मीर की जनता ने घुसपैठियों के खिलाफ जी जान से सेना की मदद की। घुसपैठियों को बताया गया था कि काश्मीरी जनता भारत से जली बैठी है। वह तुम्हारा स्वागत करेगी हलवा-परांवठा खिलाएगी और एक सप्ताह में ही तुम काश्मीर-फतह का सेहरा बांधे लौटोगे, पर यहाँ कुछ और ही मिला, तो घुसपैठिये जल उठे और गाँवों को जलाने लगे। इससे जनता और भी फुंकार उठी और उन लुटेरों को लेने के देने पड़ गए और उनमें सैकड़ों मारे गए और काफी पकड़े गए।

१३ अगस्त १९६५

काश्मीर की स्थिति काबू में है, गृह मंत्री श्री गुलजारी लाल नन्दा ने घोषणा की और सचमुच श्री नगर के बाजारों में सदा की तरह खरीद फरोख्त हो रही थी पर उसी दिन रात में दूरदर्शी प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने रेडियो पर देश की जनता से कहा—

"तोड़-फोड़ की कार्यवाई करने वालों से कोई मुरौवत नहीं बरती जाएगी। बेशक काश्मीर में हमें सतर्क रहना पड़ेगा, क्योंकि यह मुमकिन है कि ज्यादा गड़बड़ी पैदा करने की कोशिस की जाए। XXX अब हमारे सामने ज्यादा महत्व का सवाल इन हमलावरों और उनकी गतिविधि का नहीं है, क्योंकि हम अच्छी तरह जान हैं कि उनसे कैसे निपटा जाएगा।

असली सवाल हमारे साथ पाकिस्तान के सम्बन्धों का है। XXX पाकिस्तान अगर हमारी भूमि के किसी हिस्से को ताकत के जोर से हथियाने की सोचता है, तो वह बड़ी भूल में है। ताकत का जवाब ताकत से दिया जाएगा और उसका हमला कभी सफल न होगा। XXX हम यह न भूलें कि निरंतर सतर्कता ही आजादी की कीमत है। यह समय खतरनाक है, पर बहुत कुछ कर दिखाने का समय भी तो है।"

काश्मीर में सैनिक और नागरिक स्तर पर 'बहुत कुछ कर दिखाने का काम शुरू हो गया। पाकिस्तान स्वीकार ही न करता था कि इस घुसपैठ में उसका षडयंत्र है, पर जो घुसपैठिये पकड़े गए, वे काश्मीरी भाषा जानते ही न थे, जब यह बात देशी विदेशी पत्रकारों के सामने आई, तो पाकिस्तान का झूठ खील खील हो गया। इस स्थिति का कूटनीतिक लाभ उठाकर और पवित्र लोकमत की प्रचंडता से प्रभावित होकर प्रधान मंत्री श्री शास्त्री ने लोक-सभा में घोषणा की कि २० अगस्त को कच्छ समझौते के सिलसिले में भारत पाकिस्तान के विदेश मंत्रियों का जो सम्मेलन दिल्ली में होने वाला था, वह स्थगित कर दिया गया है और भारतीय सेना को काश्मीर की रक्षा के लिए सभी आवश्यक कदम उठाने के आदेश जारी कर दिए गए हैं। घुसपैठियों की हत्या-गिरफ्तारी का काम तेज हो गया और उनसे ढेरों शस्त्र बरामद हुए।

२० अगस्त १९६५

अखनूर क्षेत्र में बारूदी सुरंग के ऊपर से भारतीय बस गुजरी, तो विस्फोट हो गया और गिरफ्तार घुसपैठियों के पास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से कई वायरलैस मिले, तो स्पष्ट हो गया कि पाकिस्तान ने काश्मीर में गड़बड़ी मचाने के लिए किस हद तक तैयारी की थी।

इस सम्बन्ध में हिन्दुस्तानी और पाकिस्तानी काश्मीर के बीच १९४९ में बनी ४० मील लम्बी युद्ध विराम रेखा की देख रेख करने वाली सुरक्षा परिषद की सैनिक टुकड़ी के कमांडर जनरल निम्मो ने राष्ट्र-संघ को जो रिपोर्ट भेजी, वह पाकिस्तान और उसके हिमायतियों के दबाव पर प्रकाशित नहीं की गई, पर उस रिपोर्ट के आधार पर राष्ट्र संघ के सेक्रेटरी जनरल ऊथाँत ने जो वक्तव्य तैयार किया, उसमें जम्मू-काश्मीर में सशस्त्र हमलावरों की घुसपैठ का बढ़ावा देने के लिए पाकिस्तान की कड़ी आलोचना की और उसके कार्य को युद्ध विराम समझौते का उल्लंघन बताया। काश्मीर में दंगा भड़काने के लिए हमलावरों को हथियार बंद और प्रशिक्षित करने का आरोप पाकिस्तान पर लगाने के बाद ऊथाँत ने यह भी कहा कि युद्ध विराम रेखा पर हाल की लड़ाई में पाकिस्तान ने अपनी नियमित सैनिक टुकड़ियों का भी इस्तेमाल किया।

यह वक्तव्य भारत और पाकिस्तान के प्रतिनिधियों को दिखाया गया, पर राष्ट्र संघ में घोषित नहीं हुआ। इससे पाकिस्तान की उद्दंडता बढ़ी और उसने छम्ब क्षेत्र में युद्ध विराम रेखा के उस पार से हमारी दो चौकियों पर हमला किया, जिसे तोड़ दिया गया, पर सूचना मिली कि उधर की तरफ पाकिस्तानी फौजी सरगर्मियां काफी तेज हो रही हैं। इस पर हमारे प्रधान मंत्री ने 'न्यूयार्क टाइम्स के सम्वाददाता से कहा—"यदि पाकिस्तान ने आक्रमण जारी रखा, तो भारत अपनी रक्षा ही नहीं करेगा, बल्कि जवाबी हमला भी करेगा। भारत अब अपने क्षेत्र से पाकिस्तानियों को हटाने में ही नहीं लगा रहेगा, वह युद्ध बन्दी रेखा के उस पार भी जाएगा।"

उसी दिन श्रीनगर में काश्मीर के मुख्यमंत्री श्री सादिक ने कहा—"युद्ध विराम रेखा फिर से निश्चित की जाए और वह भी इस ढंग से कि भारत पर उधर से हमले का खतरा न रहे।"

इसके साथ ही रक्षामंत्री श्री चह्वाण ने लोक सभा में कहा—"पाकिस्तानी सेना ने युद्ध विराम रेखा पर जितने आक्रमण किये, सबको बेकार कर दिया गया। रेखा पर हमारे सब ठिकाने दुरुस्त हैं और जरूरत पड़ी, तो हम उसे पार करने में भी कोताही न करेंगे।"

शास्त्री-सादिक-चह्वाण के इन वक्तव्यों ने स्पष्ट कर दिया कि हमारे नेता निर्णय ले चुके हैं और वह निर्णय उपचार का नहीं, प्रसार का है, हटने का नहीं, डटने का है, समझाने का नहीं, भगाने का है।

घुसपैठियों की संख्या का अनुमान उनके उपद्रवों को देखते हुए १५०० से बढ़कर ५००० तक पहुँच गया था, पर उनकी पिटाई भी पुलिस, सेना और जनता द्वारा इतनी तकड़ी हो रही थी कि वे धड़ाधड़ मर रहे थे, पकड़े जा रहे थे। मरने वालों की संख्या ८०० तक पहुंच गई थी, पर पकड़े जाने वाले अपने अफसरों को कोस रहे थे कि हमें बहकाया गया था कि काश्मीरी जनता हमें हाथों हाथ लेगी, पर यहाँ तो हरेक हमारे मुँह पर थूकता है।

पार्लामेंट भवन में घुसपैठियों से मिले शस्त्रास्त्रों की जो प्रदर्शनी हुई, उसमें ऊंचे दर्जे के हथियार, गोला बारूद, सिगनल और संचार उपकरण पाकिस्तान के इस झूठ का भंडा फोड़ करने में कामयाब रहे कि पाकिस्तान के सैनिक नहीं, काश्मीर में तो स्वतन्त्रता के योद्धा ही लड़ रहे हैं।

घुसपैठिये निराश होकर गाँवों में आग लगाने और लूटमार करने पर उतर आये और सीमा पार भागने भी लगे। फौजी कुत्तों ने उनके सफाये में काफी शानदार काम किया। कच्छ समझौते के समय कारगिल क्षेत्र की दो पाकिस्तानी चौकियां भारतीय सेना ने खाली कर दी थी इस वादे पर कि हमारी लद्दाख-सड़क की देखभाल-रक्षा की जिम्मेदारी सुरक्षा परिषद् के सैनिक लेंगे, पर यह जिम्मेदारी उन्होंने नहीं निभाई, तो भारत की सेना ने पाकिस्तानी सेना को पीटकर उन चौकियों पर फिर कब्जा कर लिया।

जब युद्ध क्षेत्र में हमारे सैनिक जूझ रहे थे, भारत के बटे-बिखरे-हताश और नपुंसक नेतृत्व का शिकार विरोधी दल लोकसभा में भारत-सरकार के विरुद्ध अविश्वास-प्रस्ताव की नटलीला दिखा रहे थे। इस दृष्टि से भारत का प्रजातंत्र बहुत ही अभागा है कि भारत की हर गली में किसी न किसी विरोधी दल का साइनबोर्ड लटका दीखता है, पर न उन में जान है, न ज्ञान है।

इसके विरुद्ध जनता जोश में है और होश में भी। सब जगह शांति है, उत्साह है और एकता है। अखिल भारतीय सीरत कमेटी के उपाध्यक्ष सरदार खेली-लुल्ला ने पाकिस्तानी हमलावरों से लड़ने के लिए दस लाख मुसलमान देने का प्रस्ताव किया है। इस वक्तव्य ने उस भावना की पहली झाँकी दी, जिससे भारतीय मुसलमानों के दिल दिमाग भरे हुए हैं। बीकानेर के मुसलमानों की सभा में जो भाषण हुए, वे पाकिस्तान के प्रति क्रोध से पूर्ण थे। श्री सोहनलाल वर्मा ने नया नारा दिया—'माला नहीं, भाला!' सचमुच नारों के इतिहास में यह नई फसल है। देश की आत्मा नई फुरेरी ले रही है, यह शुभ चिन्ह है। प्रधानमंत्री ने राज्य सभा में इशारा दिया—"काश्मीर में यह पाकिस्तान की कोई छोटी-सी कार्यवाही नहीं, इसके पीछे गंभीर और गहरे मनसूबे हैं। इसलिए हमारे पास सिवा इसके कोई विकल्प नहीं कि हमलावरों का सफाया करने के लिए हम पूरी तरह कारगर कार्यवाई करें और जितनी दूर जाना पड़े जाएँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्षा मन्त्री चह्वाण लोक सभा में अपनी सीट पर खड़े हुए, तो खामोशी अमावस के अन्धेरे की तरह गहरी हो गई और उनके बोल सुने, तो उत्साह की गड़गड़ाहट से गुम्बद गूंज उठा। बोल थे—"भारत की सुरक्षा सेनाएं काश्मीर में दो स्थानों पर युद्ध विराम रेखा को पार कर पाकिस्तानी कब्जे के काश्मीर में दो ठिकानों पर जम गई हैं। यह कार्यवाई पाकिस्तान के घुसपैठियों और अधिक प्रवेश को रोकने तथा घुसे हुए हमलावरों को पूरी तरह से बाहर निकालने के लिए की गई है।

कच्छ पर जिन दिनों पाकिस्तानी आक्रमण हुआ ही हुआ था और हमारी सीमा पुलिस एक चौकी से पीछे हटी थी तो संसद में श्री प्रकाशवीर शास्त्री ने कहा था—"चह्वाण साहब, कभी कोई शुभ समाचार भी दे दिया करो।" चह्वाण की घोषणा सुनकर श्री नाथ पै ने कहा—"यह शुभ समाचार है।" इस शुभ समाचार से खुशी तो सारे देश में हुई, पर श्रीनगर में तो उत्साह की बाढ़ ही आ गई। हमारी सेना जिन्दाबाद के नारों से घाटी गूंज उठी और लोग खुले स्थानों में हाथ में हाथ डाल नाचने लगे। पाकिस्तान के इस धूर्ततापूर्ण दावे के खिलाफ कि काश्मीर में कश्मीरी बगावत कर रहे हैं, यह एक शानदार प्रदर्शन था। यह खुशी चाँदनी रात में रात की रानी के वृक्ष की तरह महक उठी, जब महामहिम राष्ट्रपति और रक्षामन्त्री भी श्रीनगर जा पहुंचे।

हमारे राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन समान रूप से बौद्धिक और हार्दिक मानव है। उनके इन शब्दों में भारत के हृदय की वाणी थी—"भारत उनके साथ शांति से रहना चाहता है, जो स्वयं भी शांति चाहते हैं, पर जो हमें ताकत की धमकी देते हैं, भारत उन्हें ताकत से ही जवाब देगा।" इन शब्दों में जो नारा फूटता है, वह है—शांति के बदले शांति, ताकत के बदले ताकत। राष्ट्रपति ने इन शब्दों में भारत की बुद्धि की वाणी थी—"कुछ परिस्थितियों में हमला-आक्रमण ही बचाव का सर्वोत्तम उपाय होता है और हमारी सेना उसी को अपनाने का प्रयत्न कर रही है।" इन शब्दों से जो नारा फूटता है, वह भारत की प्राचीन पटेबाजी का नारा है—पीछे हटकर बच, आगे बढ़ कर मार! भारत की सेना १९६२ के चीनी आक्रमण में पीछे हटकर बच चुकी थी, अब टिथवाल क्षेत्र में आगे बढ़कर मार रही थी।

रक्षामन्त्री चह्वाण के शब्द तो जादू में पगे हुए ही थे—'भारत की आजादी और भारत की जमीन पूरी तरह ठीक रखना हमारा काम है और उसके लिए जितनी कीमत देनी होगी, उतनी देंगे, यही भरोसा मैं भारत के लोगों को देना चाहता हूं।"

और यह भरोसा सच निकला कि हमारी सेनाएं उड़ी के क्षेत्र में भी युद्ध विराम रेखा पार कर पाकिस्तानी कब्जे के काश्मीर में घुस गई। सीमा के पार कारगिल में तीन और टिथवाल में तीन पाकिस्तानी चौकियां हमारे हाथ में आ गई और युद्ध घमासान जारी रहा। हमारी सेना इस सिद्धान्त पर चल रही थी—कोई नया घुसपैठिया काश्मीर में आने न पाये और जो आ गया है, वह जाने न पाये। मजेदार बात यह कि जब अपनी चौकियों को वापस लेने के लिए पाकिस्तानी फौज जूझ रही थी और उन पर जमी रहने के लिए भारतीय फौजें और इसके साथ ही काश्मीर भर में घुसपैठियों से भी मुठभेड़ें हो रही थीं, काश्मीर में सब जगह शांति थी, श्रीनगर के बाजार खुले हुए थे और मस्जिदों में अजान नमाज में भी कोई फर्क न था।

या अली! जय बजरंग बली! बारह हजार छह सौ फुट ऊंची चोटियों पर यह कैसी गूंज है? रक्षामंत्री चह्वाण ने लोकसभा में बताया कि भारतीय सेनाओं ने सैंकरिल, बुरजी, पथरा, लेड वाली गली, कन्नार की गली, सावन पथरी जेबार और बिदौर की चौकियों के साथ हाजी पीर दर्रे पर भी कब्जा कर लिया है। पाकिस्तानी घुसपैठिये इसी दर्रे से काश्मीर में घुसे थे।

आओ मेरे कलेजे से लग जाओ प्यारे। झूम झुमैया झूम! यह श्रीनगर के बाजार में आज कौन-सा त्योहार मनाया जा रहा है? यह हाजी पीर दर्रे की फतह का त्योहार है, यह अय्यूब-भुट्टों की चंडाल चौकड़ी के मनसूबों की कुरबानी का त्योहार है। उसी में नौजवान नाच रहे हैं, एक दूसरे को चूम रहे हैं।

और ये कौन हैं, जो इन घड़ियों में सिसक-सिसक कर अपना दुख बखान रहे हैं? ये उन १४ गाँवों के निवासी हैं, जिन्हें भारतीय सेना ने अभी-अभी मुक्त किया है। काश्मीर के निर्माण मन्त्री श्री गुलाम रसूल इन गांवों में गए, तो गांव वाले बुरी दशा में मिले। आजाद काश्मीर के नारे लगाने वाले पाकिस्तान ने इनके लिए कभी कुछ नहीं किया। न रोजगार, न चिकित्सा, सहायता। पिछले १८ वर्षों में इन्होंने कभी भूलकर भी चीनी और मिट्टी का तेल नहीं देखा। ओह, नीरस और अन्धेरी जिन्दगी आजाद काश्मीर माने गुलामी का जंगली जेलखाना!! काश्मीर के मुख्यमन्त्री ने इन लोगों को संदेश भेजा है—"गुलामी के दिन दूर हुए। अब आप भी काश्मीर की बढ़ती हुई समृद्धि के हिस्सेदार होंगे!"

पाकिस्तानी घुसपैठियों की हिम्मत टूटने लगी, वे जंगलों में जाकर छिपने लगे। पकड़े जाने पर रोते-रोते एक ने कहा—"हमें कहा गया था कि तुम चलो, हम बड़ी फौज लेकर आरहे हैं, पर आया कोई नहीं और न यहीं किसी ने हमें माला पहनाई। हम में से बहुतों को जबर्दस्ती भरती किया गया था और इंकार करने पर पीटा गया था। हम में बहुत से ऐसे हैं जिनके बच्चों के लिए रोटी और जानवरों के लिए चारा लाने वाला भी कोई नहीं बचा।" और अन्त में उसके मुंह से कराह निकली—"खुदा उन कम्बख्तों को गारत करे!" ○

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

★

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेरी अदा तो देख ली, अब मेरी अदा भी देख !

१ सितम्बर १९६५

भारतीय फौजों ने जीते हुए क्षेत्र में अपने मोर्चे मजबूत कर लिए और बढ़ाव जारी रखा। पैंकरी, ढक्कर, लुंडा और मेडी गली इन चार चौकियों पर भी हमारा कब्जा हो गया। 'उड़ी पुंछ के पूरे क्षेत्र में पाकिस्तानियों का सफाया जारी रहा। पाकिस्तान के लोग डींगिया डिक्टेटर जनरल अयूब की तरफ इस तरह देखने लगे, जैसे हर आंख उनसे पूछ रही हो—यार, जब तुम्हारी अन्दरूनी हालत यह थी, तो खामखाह इतनी फूँफाँ क्यों कर रहे थे ?

जनरल भीतर ही भीतर कसमसाया, उसने अपनी उखड़ी-सी मूंछों को पोमेड-वैसलीन का हाथ लगा चिकनाया और अपने दोस्त चीन से मशवरा किया। दोस्त ने कहा—"हिन्दुस्तानी फौज को उस जगह एक तक़ड़ा झटका दो, जो तुम्हारे लिए उस इलाके में सबसे ज्यादा सुविधा-जनक हो और हिन्दुस्तान के लिए सबसे ज्यादा असुविधाजनक।" डींगिया डिक्टेटर ने नक्शा देखा और छम्ब के क्षेत्र में सुबह ही सुबह बख़्तरबन्द गाड़ियों अमरीकी पैटन टैंकों के साथ उसने पाकिस्तानी फौज को हमारी सीमा में धकेल दिया। छम्ब का यह इलाका उसके लिए सचचुच शालामार बाग और हमारे लिए करौन्दे की झाड़ियों का भयावना जंगल था। बात यह थी कि इस सारे मोर्चे में सिर्फ इसी जगह समतल जमीन थी, जिस पर पाकिस्तान अपने भूत जैसे टैंकों को उतार सकता था।

अमरीकी पैटन टैंक दूसरी बड़ी लड़ाई के अन्त में बने थे। इनके ऊपर मोटी फौलादी चादर चढ़ी हुई थी, जिसे गोला नहीं तोड़ सकता था। हरेक टैंक का वजन ८० टन था, उस पर चारों तरफ मार करने वाली तोपें लगी हुई थीं, जिन्हें टैंक के भीतर बैठा चालक बटन दबाकर चलाता रहता था। हथियार क्या, मौत का दानव ही समझा जाता है यह पैटन टैंक और इसी लिए अमरीका ने ये पाकिस्तान को दिये थे कि इनसे वह रूस के दिमाग ठिकाने लगा सके। १-२-१० नहीं, पूरे ७० टैंक लड़ाई में उतारे गए और दूसरे भयंकर शस्त्र अलग।

६ बजे फौजों को मोर्चे पर तैनात कर जनरल अयूब ७ बजे नहाने के लिए अपने बाथरूम में गए, तो अमरीका की बनी चीनी नांद में लेटे लेटे जब गुनगुने पानी में गुल गुली कर रहे थे, अचानक उनकी मुट्ठियाँ बन्ध गईं, भौहें चढ़ गईं, कंधे उभर गए और झटके के साथ वे नान्द में बैठ गए और चुटकियां उन्होंने मसल दीं। उनके मन में विचार आया—आज शाम को रिपोर्ट मिलेगी कि हिन्दुस्तानी भेड़िये बबर टैंकों को देखते ही भाग खड़े हुए और भागते हुओं को हमारी फौजों ने कुचल दिया। बड़े चले थे हाजी पीर पर कब्जा करने। अब तीन दिन में काश्मीर से भागते नजर आएंगे। चलो १५ अगस्त को नहीं, तो कोई बात नहीं, पर १५ सितम्बर को तो मैं श्रीनगर पहुँच ही जाऊंगा।

वे नहा निमट फौजी सूट में सजे अपने बड़े कमरे में आए, तो उनके प्राइवेट सेक्रेटरी ने कहा—"हुजूर छम्ब में बुरी तरह पिटाई हुई !"

जनरल अय्यूब नशे में थे। झूमकर बोले—"शाबाश ! पिटाई के लिए तो मैंने वो स्कीम ही बनाई थी डीयर ! तो हमारे टैंको ने काफिरों को कहाँ तक कुचल दिया ? वाह, अब पता चलेगा हिन्दुस्तान के उस नाटे खाँ (शास्त्री जी) को आटे दाल का भाव !"

प्राइवेट सेक्रेटरी का उतरा चेहरा एक दम झटक गया। बुझी-सी आवाज में उसने कहा—"हुजूर, हिन्दुस्तानी उड़ाकों ने पहले ही झपाटे में हमारे कई टैंक तोड़ दिये !"

जनरल अय्यूब की दहाड़ से कमरा काँप उठा—"नालायक ! गधा !! पाजी !!! टैंक तोड़ने का क्या मतलब। टैंक कोई मिट्टी का खिलौना है कि कोई उसे तोड़ दे। तुमने मालूम होता है दिल्ली रेडियो सुना है—झूठ, गप्प और कुफ्र के सिवा क्या है दिल्ली में ? लेकिन तुमने दुश्मनों का रेडियो सुना क्यों ?" और वे आप ही आप बुदबुदाये—"दिल्ली के दाने अब मैं अच्छी तरह भूनकर ही हटूंगा।"

"हुजूर, दिल्ली की नहीं, अपनी ही खबर है।" प्राइवेट सेक्रेटरी ने सकपकाई-सी आवाज में कहा, तो डिक्टेटर गंभीर हो गया—"मोर्चे के कमांडर से वायरलैस मिलाओ।"

"क्या खबर है मोर्चे की ?"

"हुजूर, हिन्दुस्तानी उड़ाकों ने हमारे टैंक तोड़ दिये, यह एक ताज्जुब की बात है। गोले तो उनके [illegible] री निशाना भी बेजोड़ है और अफवाह यह भी है कि हिन्दुस्तानी सिपाही अपने जिस्म पर बमों की पेटी लपेटकर टैंकों के नीचे घुस गए और दियासलाई लगाली। इससे टैंकों की चैन गल गई, उनमें आग लग गई और वे मरे भैंसों की तरह मैदान में ठस्स खड़े रह गये। हुजूर, मोर्चे को आगे तक देखकर मैं पूरी रिपोर्ट आपको दूंगा।"

शाम तक की रिपोर्ट यह थी—हिन्दुस्तान के २८ हवाई जहाजों ने जवाबी हमला किया, हमारे दस अमरीकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैटन टैंक पूरी तरह टूट गए और तीन को काफी नुकसान पहुँचा। जब अय्यूब साहब यह रिपोर्ट पढ़कर उदास हो रहे थे, दिल्ली में प्रधानमंत्री शास्त्रीजी घोषणा कर रहे थे—"पाकिस्तान ने पूरे पैमाने पर आज जो हमला किया है, हम निश्चित रूप से उसका डटकर मुकाबला करेंगे और हमारा देश पाकिस्तान की चुनौती को स्वीकार करेगा।"

सुबह डींगिया डिक्टेटर अय्यूब का नारा यह था—

सुनो ऐ सरफरोशी,
दीनों ईमां ने पुकारा है,
सुनो ऐ गाज़ियो,
कूए शहीदा ने पुकारा है,
सदा मिल्लत ने दी है,
आज कुरआँ ने पुकारा है,
कमाने वक्त से बनकर
कज़ा का तीर चलना है
हमें कश्मीर चलना है !

सुबह का यह जोशीला नारा डूबते सूरज की शाम को यों हो गया—

इश्क के मकतब में मेरी
आज बिस्मिल्लाह है !
मुंह से कहता हूँ अलिफ
दिल से निकलती आह है !!

राष्ट्रसंघ के सेक्रेटरी जनरल ऊथांत जनरल निम्मो से बातें कर चुके थे और अमरीका के इस वादे के बावजूद कि पाकिस्तान हमारे फौजी सामान का इस्तेमाल भारत के खिलाफ नहीं करेगा, उसका इस्तेमाल सबके सामने था, पर यह सवाल भी अहम है कि वादा टूटने का ज्यादा दर्द था या अजेय कहे जाने वाले टैंकों के टूटने का ?

जब भैंसे को मौत पुकारती है, वह हाथी से जा टकराता है, यह पुरानी कहावत है और अनुभव ने सैंकड़ों बार इसकी सचाई की गवाही दी है, पर छम्ब में उस दिन यह हिन्दी पलक मारते उर्दू बन गई और हाथी को मौत ने [illegible]

अमरीकी सेबरजैट विमान हवाई हाथी ही तो है और उसके मुकाबले बंगलौर में बना शुद्ध भारतीय नैट विमान मामूली भैंसा, पर भारत मा के सपूत हमारे स्क्वैड्रन लीडर नौजवान ट्रैंपर कीलर ने अपने नैट पर झपटते जैट से कन्नी काट कर अपने को उसके पीछे किया और वह हाथी मुड़े मुड़े कि कीलर ने उसके पुट्ठे पर राकेट दे मारा। कभी देखा है रामलीला में दशहरे के दिन बांस की खपच्चियों पर कागज चढ़े रावण को जलते ? बस वही हालत हुई उस सेबर जैट की—बेचारा आकाश में ही जल कर राख होगया।

और यह क्या है ? हाँ जी, यही मोटी-छोटी-सी लम्बी ओखली-सी ? यह पुरानी—आउट आफ डेट—विमान भेदी तोप है।

और यह क्या है ? हाँ जी, यही पुराने लोहे के कबाड़ी ढेर-सा ? यह इस पुरानी तोप से जमीन पर गिराया सेबर जैट अमरीकी विमान है।

"वार में और प्यार में सब कुछ जायज है। तुम भी चाहे जो कह सकते हो, पर भला कहीं ऐसी तोपों से सैबर जैट भी टूटे हैं।" एक विदेशी पत्रकार ने कहा, तो भारत के सैनिक ने उत्तर दिया—"इस ढेर को उलटिये-पलटिये, तो आप सैबर जैट के अंग-भंग की बात स्वयं मान लेंगे।" और सचमुच थोड़ी देर में वह मान गया, पर आश्चर्यमुग्ध और स्तब्ध ! "सचमुच यह एक चमत्कार है !!"

काश्मीर घाटी में घुसपैठियों का सफाया जारी रहा, छम्ब में घमासान लड़ाई जारी रही, हाजी पीर दर्रे और उड़ी पुंछ के इलाकों में भारत के जांबाज आगे बढ़ते रहे। इसके साथ ही संसार के राजपुरुषों की चिन्ता प्रकट होती रही और इस घमाघसी में सुनाई पड़ी राष्ट्र-संघ के महासचिव ऊथांत की शान्ति-अपील—"दोनों राष्ट्र तुरन्त लड़ाई बन्द करें।"

हमारे प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने रेडियो पर कहा—"जो लोग अमन चाहते हैं, उनको हमेशा हमारा समर्थन मिलेगा, लेकिन जो असली हालत है, उससे आँख बन्द नहीं की जा सकती। सिर्फ लड़ाई बन्दी-युद्धविराम-शांति नहीं ले आता। हम एक के बाद एक युद्ध-विराम और सुलह करते जाएँ और फिर इस बात का रास्ता देखें कि अब पाकिस्तान फिर कब अगली फौजी कार्रवाई शुरू करता है। यह अब कभी नहीं हो सकता !"

इन पंक्तियों के लिए इतिहास शास्त्री जी को सदा सम्मान से स्मरण करेगा; क्योंकि उनके ये शब्द एक नये युग के आगमन की शंख ध्वनि हैं। अन्तरिम सरकार के आते ही यदि गाँधी युग समाप्त होगया था, तो इस युद्ध के आते ही नेहरू युग समाप्त होगया। गांधी का युग आदर्श का युग था, तो नेहरू का युग कल्पना का युग रहा और यह अब आया—यथार्थ का युग !

श्री करंजिया ने शास्त्री जी से पूछा—"पाकिस्तान के इस हमले को देखते हुए क्या यह कहना ठीक है कि १९४८ का युद्धविराम समझौता समाप्त होगया है और युद्धविराम रेखा भी अब कोई नहीं रही ?"

शास्त्री जी ने उत्तर दिया—"यह बात तो स्पष्ट है कि पाकिस्तान ने युद्ध-विराम रेखा का जरा भी सम्मान नहीं किया और इस तरह से समझौते और रेखा दोनों को ही समाप्त कर दिया है।"

भारत के बटवारे के लिए जिम्मेदार संस्था मुस्लिम लीग के अध्यक्ष श्री मुहम्मद इस्माइल ने बहुत साफ शब्दों में पाकिस्तानी आक्रमण की निन्दा की, भारत के प्रत्याक्रमण का पूरा समर्थन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया और कहा—"हरेक मुसलमान और हरेक देशवासी मातृभूमि की प्रतिष्ठा के लिए सन्नद्ध रहे।" इस वक्तव्य की ध्वनि है कि इस लड़ाई ने मुसलमानों को आत्मनिरीक्षण का गहरा निमंत्रण दिया है और वे आत्मनिरीक्षण कर रहे हैं।

आल इंडिया मुस्लिम मजलिस-ए-मुशावरात ने भी कहा—"हमें अपनी पाक जमीन से हमलावरों को निकाल फेंकना है और आज यही हमारा सबसे बड़ा फर्ज है।" इन्दौर के मुस्लिम नेताओं ने भी यही कहा और अजमेर के आम मुस्लिम जलसे में भी गहरा क्रोध प्रकट हुआ।

पाकिस्तानी टैंक टूटते रहे, सैबरजैट विमान गिरते रहे, लड़ाई इंच-इंच के लिए होती रही और हमारी सेनाएँ पैर बढ़ाती रहीं, पैर जमाती रहीं।

सेक्रेटरी जनरल ऊथांत के पत्र के उत्तर में प्रधान मन्त्री श्री शास्त्री जी ने बड़े मार्के की बात कही—"आपको पहले पाकिस्तान से पूछना चाहिए कि क्या वह अपनी सेनाएँ हटाने, घुसपैठियों को वापस बुलाने और फिर कभी नई घुसपैठ न होने देने की गारंटी करने को तैयार है?

यह आई चौंका देने वाली खबर कि चीन के उपप्रधान मंत्री मार्शल चेन यी अचानक कराची पहुंचे हैं और सैनिक अफसरों से उन्होंने महत्वपूर्ण बातचीत की है। इसके साथ ही यह खबर कि पाकिस्तान ने युद्धविराम रेखा का सम्मान करने के सम्बन्ध में कोई आश्वासन देने से साफ इंकार कर दिया है।

सम्भावनायें गरमा गई हैं, पर सेना में अथाह उत्साह है, जनता में अथाह विश्वास है। ◇

अब जिगर थाम के बैठो मेरी बारी आई !

६ सितम्बर १९६५

सुबह ही सुबह सूरज उग रहा था, उभर रहा था; हाँ, आसमान का सूरज उग रहा था, कुदरत के कायदे से रोज की तरह !

नई बात कि आज दो सूरज उग रहे थे एक साथ और दोनों एक साथ उभर रहे थे।

"दो सूरज भी कभी कहीं उगे हैं, उभरे हैं—पागल हुए हो ?"

पागलपन की नहीं, होश की बात है कि उस दिन एक साथ दो सूरज उगे—एक आसमान का सूरज और दूसरा इतिहास का सूरज। हाँ, हमारे देश के इतिहास में वह दिन एक नए अध्याय के आरम्भ का दिन था। कहूँ, पाकिस्तान-भारत-संघर्ष में हम बचाव की नीति छोड़ कर चढ़ाव की नीति आरम्भ कर रहे थे।

बचाव क्या ? चढ़ाव क्या ? बचाव, जिसे युद्धशास्त्र में आजकल 'डिफेंसिव पालिसी' कहते हैं और चढ़ाव, जिसे आजकल 'अफेंसिव पालिसी' कहते हैं। सुबह ही सुबह हमारी सेनाओं ने अमृतसर, गुरुदासपुर और फीरोजपुर की तरफ से पाकिस्तानी पंजाब में प्रवेश किया— लाहौर पहुँचने के लिए। हमारे गुप्तचरों की रिपोर्ट थी कि छम्ब में पाकिस्तानी टैंकों के पिट जाने से जनरल अयूब की जो हवा पाकिस्तानी जनता की निगाहों में उखड़ गई है उसे फिर से जमाने के लिए उन्होंने अमृतसर के रास्ते हिन्दुस्तानी पंजाब पर आक्रमण करने का हुक्म दे दिया है।

अब हमारे सेनाध्यक्षों के सामने प्रश्न था कि वे इस नये मोर्चे पर पाकिस्तानी फौजों के आक्रमण की प्रतीक्षा करें और जब वह आक्रमण हो, तो उसे छम्ब के आक्रमण की तरह पीछे धकेलने की कोशिश करें, यह बचाव रणनीति उचित है या यह चढ़ाव नीति कि आगे बढ़कर आक्रमण करें और दुश्मन को आक्रमण का मौका न दें बचाव नीति अपनाने के लिए मजबूर करदें ?

स्थल सेनाध्यक्ष श्री चौधरी, वायु सेनाध्यक्ष श्री अर्जुनसिंह और जलसेनाध्यक्ष श्री सोमन जिन्दाबाद ! उनका निर्णय आक्रमण के पक्ष में था। वे बचाव की रणनीति के विरुद्ध थे, चढ़ाव की रणनीति के प्रति उद्बुद्ध थे। उनकी निश्चित राय थी, हमें मार सहनी नहीं चाहिए, मार करनी चाहिए। उनके हौसले उछल रहे थे !

हाँ, उछल रहे थे सेनाध्यक्षों के हौसले, पर प्रजातंत्री देशों में निर्णय शक्ति की कुंजी सेनानायकों के नहीं, जननायकों के हाथ में होती है। राष्ट्रनीतिनायक श्री लालबहादुर शास्त्री, रणनीति नायक श्री यशवन्त राव चह्वाण और गुप्तनीतिनायक श्री गुलजारी लाल नन्दा की जय कि उन्होंने राष्ट्र को अनिर्णय से निर्णय की स्थिति में ले आए। सचमुच प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के जीवन का वह महान क्षण था, जब उन्होंने लाहौर की ओर बढ़ने के लिए स्वीकृति दी। वह जुए के दाव पर सर्वस्व लगाने का क्षण था, वह चिड़िया की आँख पर अर्जुन के एकाग्र होने का क्षण था, वह तख्त या तख्ता के लिए अपने को समर्पित करने का क्षण था और अणु और विराट की अद्वैत घोषणा का क्षण था। उस क्षण का शतशत अभिनन्दन, उस क्षण का शतशत नववन्दन !

अब पताका जनरल चौधरी के हाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में थी। जनरल चौधरी हमारे प्यारे [illegible] स्थल सेनाध्यक्ष, टैंकों की संचालन कला में विश्व के छह प्रमुख विशेषज्ञों में एक और जिनके बारे में दुनिया में चर्चा होती है कि स्वेज नहर से इधर के क्षेत्रों में उन की जोड़ का कोई सेनापति नहीं। यह बड़ी प्रशंसा है, पर मुझे लगता है कि यह उनकी पूर्ण प्रशंसा नहीं, उनकी पूर्ण प्रशंसा है यह कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सबसे पहले अध्यक्ष श्री उमेश बनर्जी उनके दादा थे और इस तरह देश सेवा उनका पेशा नहीं, खानदानी संस्कार है।

इतिहास को चमत्कार-प्रदर्शन का पुराना शौक है। श्री उमेश बनर्जी ने २७ दिसम्बर १८८५ को अपने भाषण में कांग्रेस का क्या उद्देश्य है, इस प्रश्न के उत्तर में कहा था—

१—समस्त देशप्रेमियों के हृदय से प्रत्यक्ष मैत्री व्यवहार द्वारा वंश, धर्म और प्रान्त सम्बन्धी सम्पूर्ण पूर्व-दूषित संस्कारों को मिटाना और राष्ट्रीय एकताओं की समस्त भावनाओं का पोषण और परिवर्धन करना।

२—उन तरीकों और दिशाओं का निर्णय करना, जिनके द्वारा भारत के राजनीतिज्ञ देशहित के कार्य करें।

यह क्या इतिहास का चमत्कार नहीं कि उन्हीं का वंशधर ६ सितम्बर १९६५ को, यानी उनके कथन से ७९ साल ८ महीने और १० दिन बाद वंश, धर्म, प्रान्त के पूर्व-दूषित संस्कारों से मुक्त सेना के अध्यक्ष रूप में राष्ट्रीय एकता की समस्त भावनाओं का पोषण-परिवर्धन करते हुए देशहित के लिए आगे बढ़ रहा था और महान राष्ट्र गुरु गोविन्द सिंह के उत्तराधिकारी वायुसेनाध्यक्ष श्री अर्जुन सिंह आकाश में उनके संरक्षण का कार्य कर रहे थे।

जनरल चौधरी व्यूह रचना के महा पंडित हैं। वे सिंडासी के फलकों की तरह दुश्मन को इस तरह घेरते हैं कि वह कहीं करवट न ले सके, जैसे हमारे [illegible] में दबा दरांत से बिनार देती है। जनरल चौधरी की यह व्यूह रचना हैदराबाद पुलिस-ऐक्शन और गोवा-विजय में यशस्वी हो चुकी थी। इस बार भी उन्होंने अमृतसर, गुरुदासपुर और फीरोजपुर का त्रिशूल बना तीन तरफ से लाहौर को घेरने के लिए सेना को आगे बढ़ाया—'या अली ! या बजरंग बली !'

पाकिस्तान की जो सेना अमृतसर में घुसने को हुक्म की इंतजार कर रही थी, उससे हमारी सेना की टक्कर पहले ही कदम पर हुई, पर घंटे भर में ही हमारे जवानों ने उसे भूनकर रख दिया और आगे बढ़े। बाप रे, हमारे जवानों की चाल ! उनके कदम थे या जीते-जागते राकेट !! टन, टन, टन, टन, टन, टन, टन, टन, टन, ये बजाए मुगलपुरा की घड़ी ने सुबह के नौ, इन पर घंटों की आवाज किसने सुनी ? मुगलपुरा वालों ने ? राम का नाम लो, वे होश में कहाँ थे ? वे तो पाकिस्तानी शासकों को कोसते हुए इधर उधर भाग गये थे या फिर घरों में दुबके बैठे थे। फिर किसने सुनी इन घंटों की आवाज़ ? यह आवाज सुनी भारतीय फौजों के जवानों ने, जो लैफ्टराइट करते तूफानी वेग से अमृतसर-मुगलपुरा के बीच के १२ मील क्षेत्र को पार कर ३ घंटे में ही यहां आ पहुँचे थे।

धड़ाम !

यह फेंका पाकिस्तानी तोप ने गोला।

धड़ाम ! धड़ाम !! धड़ाम !!!

यह आग बरसाई हमारी सेना ने और मच गई घमासान—घचाघच ! फका फक !! तड़ातड़ !!!

टन, टन, टन, टन, टन, टन, टन, टन, टन, टन, टन; घड़ी की बड़ी सुई १२ पर और छोटी ११ पर आई कि पाकिस्तानी तोपें मरे साँप की तरह कसमसाकर खामोश हो गईं और लाहौर को बचाने वाली पहली चौकी पर तिरंगा फहराने लगा—विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झंडा ऊंचा रहे हमारा !

रात भर हमारे जवानों ने मोर्चे की तैयारी की है और सुबह ६ बजे से वे बराबर एक ताकतवर घोड़े की रफ्तार से चल रहे हैं, इसलिए उन्हें आराम करना चाहिए अब। कहिए है न आपकी यही राय ?

ठीक है आप की राय, पर इसे मन में रखिए और १९६१ में लौटिए। गोवा में पुर्तगाल के साथ हमारी सेनाएं लड़ाई में उतरीं, तो पश्चिम के धूर्त राजनीतिज्ञों ने निश्चिन्ततापूर्वक तै किया कि पुर्तगाली फौजें १५ दिन तक भारत की सेनाओं को उलझाये रखेंगी और तब तक हम सुरक्षा परिषद से युद्ध बंदी का आदेश भिजवा देंगे। बस फिर धागा हमारे हाथ में होगा और हम काश्मीर की तरह गोवा की भी कठपुतली नचाने लगेंगे, पर सेनाओं ने तीसरे दिन का सूरज निकलने के साथ पंजिम में लहराता पुर्तगाली झंडा नीचे गिरा दिया और अपना तिरंगा फहरा दिया। इसीलिए पश्चिम के राजनीतिज्ञों ने गोवा विजय को गति की विजय—रफ्तार की फतह कहा था।

इस गति, इस रफ्तार की वीर वाहिनी क्या मुगलपुर में आराम कर सकती है ? नहीं, वह आगे बढ़ी और पहले झपाटे में लाहौर रेडियो के रूप में झूठ उगलती जनरल अयूब की एक जीभ को काटकर खामोश कर दिया और शाम के ६ बजते न बजते लाहौर को द्वार पर फैली इच्छोगिल नहर के किनारे जा डेरा डाला। लाहौर का हवाई अड्डा भी अब हमारी सेना के प्रभाव क्षेत्र में था।

दूसरी ओर से बढ़ते हुए हमारे सैनिक दस्ते अपनी सीमा से १२ मील कसूरमंडी जा पहुंचे और उस पर कब्जा कर लिया। दुनिया के इतिहास में बेजोड़ बात यह थी कि कसूर भारतीय सेना के, यानी कसूर के दुश्मन के कब्जे में था, पर सबसे

(कृपया देखिए पृष्ठ २८९)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तटस्थता टूटी, पर यह फिर न जुड़े !

– कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' –

एक बनिया, एक ब्राह्मण, एक नाई !

लोक कथा है कि तीनों एक साथ सफर कर रहे थे। तीनों को चलते-चलते प्यास लगी, पर न कोई कुआं, न प्याऊ, न बावड़ी। तभी दिखाई दिया गन्ने का खेत। बनिये ने एक गन्ना तोड़ा। तब ब्राह्मण और नाई ने भी एक-एक।

खेत जाट का था। जाट ने दूर से देखा और सोचा–मैं अकेला हूँ, ये तीन हैं। इन्हें कुछ कहूँ और ये तीनों पिल पड़े, तो पसलियां मुलायम कर देंगे, पर न कहूं, तो तीन गन्नों का नुकसान तो है ही, रिवाज भी बुरा पड़ता है। सड़क किनारे का खेत ठहरा, लोग देखा देखी में ही चट जाएंगे तुझे।

उसने कुछ सोचा और आगे बढ़कर पास आया। बनिए और ब्राह्मण को नमस्कार कर नाई से उसने कहा–ये हमारे पंडित जी हैं, जन्म मरण इनके बिना हमारा सधता नहीं और ये हैं हमारे लालाजी कि बेटी का ब्याह हो या पोते का मुंडन; बही पे अंगूठा टेका और रुपये बाँध लाये, पर क्यों बे नाई के ! तूने मेरा गन्ना क्यों तोड़ा? जाट ने भांप लिया कि दाव निशाने पर है, यानी बनिया ब्राह्मण दोनों तटस्थ हैं। बस हक देखा न धक, धमाके के साथ घूँसा एक नाई की कमर में जड़ा और गन्ना छीन कर हाथ में ले लिया।

अब वह बनिए की तरफ बढ़ा–लाला, बखत-बेबखत, समय-असमय रुपये जरूर दे देते हो, पर सौ के सवा सौ लिखाते हो और भारी सूद का डंक अलग मारते हो। घर में बिमारी सिमारी हो या फसल धोका दे दे और रकम न पहुँचे, तो कसाई की तरह कुड़की ले आते हो। दया लिहाज तो जैसे तुम्हारी घूंटी में नहीं पड़े–जाट ने बीच में ही ब्राह्मण की ओर देखा और जाँच लिया कि वह तटस्थ है फिर भी उसे पक्का करते हुए जाट ने अपनी बात पूरी की—पंडित जी हमारे पूज्य हैं, पर क्यों बे मोटे, तूने मेरा गन्ना क्यों तोड़ा ? और झटके से लाला का हाथ पकड़ लिया। धमाके की जरूरत ही न पड़ी, गन्ना आप ही छुट पड़ा।

अब उसने घूरा पंडित जी को–ब्राह्मणा, किसी का जवान लड़का मर जाए, तब भी तू अपनी दछना (दक्षणा) नहीं छोड़ता, तो क्या मेरा गन्ना मुफ्त का माल है? ब्राह्मण समझदार था। उसने जाट का हाथ बढ़ने से पहले ही अपना हाथ बढ़ाकर गन्ना वापस कर दिया और तीनों प्यासे के प्यासे ही आगे बढ़ गये।

कहानी पूरी हुई, पर पूरी होते होते वह क्या बात कह गई। ऊपर-ऊपर वह हंसी थी और जरा गहराई में वह जाट की होशियारी थी और उन तीनों की कायरता की भी बात थी, पर बात उससे बहुत गहरी थी। वह भारतीय जातियों की तटस्थता की बात थी। ब्राह्मण बनिये और नाई से तटस्थ था, बनिया ब्राह्मण और नाई से तटस्थ था और नाई ब्राह्मण और बनिये से तटस्थ था। जातियों की यही तटस्थता आगे चल कर समुदायों की तटस्थता हो गई कि वैष्णव शाक्य से तटस्थ था तो शाक्य जैन से। यही वह तटस्थता थी, जिसने लुटेरों को भारत में घुसने की प्रेरणा दी, बाद में पठानों मुगलों की यही सत्ता स्थापित करने की जगह दी, थोड़े से अंग्रेजों को विशाल देश पर कब्जा दिया और अन्त में देश का बटवारा करा दिया।

हमारे दूर के इतिहासों में संतों ने इस तटस्थता पर चोटें की। सबसे करारी चोट थी कबीर की और नये इतिहास में गाँधी जी ने उसे समाप्त करने में अथक प्रयत्न किया, जिसमें कुछ सफलता भी मिली, पर यह हमारी नसों में इस तरह उतर गई है कि हमारा सूत्र संस्कार ही बन बैठी। इस तटस्थता के दो रूप हैं—एक राष्ट्रगत, एक व्यक्तिगत।

पहले विश्व युद्ध में स्विटजरलैंड ने घोषणा की कि वह युद्ध में तटस्थ रहेगा—न इगलैंड के पक्ष में, न जर्मन के। वह दोनों पक्षों के आक्रमण से सुरक्षित रहा, पर दूसरे महायुद्ध में तटस्थता की घोषणा करने वाले देशों को भी हिटलर ने रौंद डाला और इस तरह विश्व की राजनीति में तटस्थता प्रभाव शून्य हो गई, पर १५ अगस्त १९४७ को स्वतन्त्र होने पर भारत ने अपने को तटस्थ घोषित किया तो वह संसार का एक आश्चर्य ही था। उस समय साफ-साफ संसार दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिस्से में बंट गया था अमरीका पक्षपाती और रूसपक्षपाती या साम्यवादी खेमा और गैर साम्यवादी खेमा ! अमरीका और रूस दोनों ने हमारे निर्णय को शक की नजर से देखा और दोनों ने हमें खूब तपाया। कोरिया, कांगो, हंग्री के मामलों में हमारी खूब परीक्षा हुई. पर हमें सर्टीफिकेट मिला भारत पर चीनी आक्रमण के समय जब अमरीका राष्ट्रपति के प्रतिनिधि श्री हैरीमैन ने कहा कि भारत की तटस्थता विश्व शाँति में सहायक है और रूस को चीन के साथ मिलने से सिर्फ उसने ही रोक रखा है। भारत की तटस्थता को उसके साथ और उसके बाद स्वतन्त्र होने वाले एशियाई अफ्रीकी देशों ने भी स्वीकार किया और इस तरह विश्व की राजनीति में तटस्थता का महल फिर स्थापित कर दिया। भारत में ऐसे राजनीतिज्ञ हैं जो भारत की तटस्थता का विरोध करते रहते हैं, पर भारत की जनता में स्वतन्त्रता के बाद जिस तटस्थता की रचना हुई है लगता है कि उसकी तरफ न उनका ध्यान है न उनका, जो तटस्थता के समर्थक हैं भारत की तटस्थता पर लाख बहस संभव हो, पर इस पर कोई बहस नहीं हो सकती कि भारतीय जनता की यह तटस्थता हमारे प्रजातन्त्र के लिए तेज जहर है कि हम उसे समझें।

१९३० के स्वतन्त्रता आन्दोलन से भी पहले की बात है कि श्री हरविलास शारदा (स्व०) ने केन्द्रीय असेम्बली में शारदा बिल पेश किया, जिसके अनुसार १४ वर्ष से कम उम्र की लड़की और १६ वर्ष से कम उम्र के लड़के का विवाह दंडनीय अपराध माना गया। पुराण पंथियों ने इसका घोर विरोध किया और अंग्रेज सरकार का समर्थन भी इसे नहीं मिला, पर बहस के आखरी दौरान में, देश भर में इतने जल्से इसके पक्ष में हुए, कि यह धूमधाम से पास हो गया। उल्लेखनीय बात यह है कि इन जलसों के पीछे कोई संगठन न था, जनता की सहज प्रेरणा थी।

शारदा एक्ट के बनते ही बिना किसी आन्दोलन के देश के नगर-नगर में शारदा एक्ट कमेटी बन गई, जिनका काम कानून तोड़ने वालों के खिलाफ मुकदमें चलाना था। मैं अपने जिले की कमेटी का मंत्री था और आज भी याद करके छाती फूलती है कि दूर गांवों तक के लोग खबरें देने आते थे। देश भर में ४०० से अधिक मुकदमें पहले दौर में चले और वह कानून अपने उद्देश्य में सफल हो गया।

इसके विरुद्ध स्वतन्त्र भारत की पार्लियामेंट में कानून पास हुआ, पर कहीं कोई हरकत नहीं हुई और वह बस किताब में छप कर ही रह गया। दहेज आज भी उसी तरह लिया जारहा है जैसे गुलाम भारत में अफगानिस्तानी पठान अपना सूद वसूल किया करता था।

१९३४ में बिहार में भूकम्प आया तो सारा देश उठ खड़ा हुआ। शहर तो शहर, कस्बा भी कोई नहीं बचा, जिस में चन्दा कमेटी नहीं बनी। बिहार में जनता का कार्य देखकर इंगलैंड का राजनीतिज्ञ फेनर ब्राकवे ब्रेल्स फेल्ड ने कहा था कि जनता ने जिस तरह प्रलय को सहा और सेवा का सहयोग दिया उससे स्पष्ट हो गया कि भारत एक महान देश है और वह अधिक दिन गुलाम नहीं रह सकता।

कहीं महामारी फैलती थी, झट से बादल बन जाता था। मेरी जन्म भूमि देवबन्द में प्लेग फैला, तो मैं अकेला घर से निकला, पर शाम तक मेरे दल में १६ आदमी हो गये। जाने कितने मुर्दे ढोये पर पाँच दिन ऐसे बीते कि तीन हजार बीमार हमारे हाथों में थे। शहरों की बात छोड़िये, कस्बों तक में सेवा समितियाँ थीं, जो वहाँ के मेलों-ठेलों का प्रबन्ध किया करती थीं, पर स्वतन्त्र भारत में न वे दल रहे, न समितियाँ हो—बस चुनाव में वोट माँगने वाली पार्टियां ही रह गईं, जो न जनता के पास कभी प्रशिक्षण के लिए ही आती हैं, न संरक्षण के लिए ही। जनता की दिलचस्पी का, तटस्थता का भी यह हाल है कि स्थानीय बोर्डों के चुनाव में बहु सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र में एक वोट कांग्रेसी को, एक जनसंघी को और एक निर्दलीय को दे देती है जिससे किसी का भी बहुमत नहीं हो पाता और बोर्ड मेंढ़कों की तराजू बन जाते हैं।

हालत कितनी खराब है, उसका अनुमान इधर की कुछ घटनाओं से लगता है। श्री प्रतापसिंह कैरों की हत्या दिल्ली से सतरह मील दिन दहाड़े उस ग्रांट-ट्रंक रोड पर हो गई जो २४ घंटे और तीस दिन और बारह महीने में पलभर को भी खाली नहीं रहती। हत्यारे बन्दूक लिए सुबह से ही सड़क पर बैठे रहे और जब हत्या हुई तो चारों तरफ काफी आदमी थे, पर किसी ने हत्यारों का पीछा नहीं किया। हत्या के थोड़ी देर बाद एक राज्य के मिनिस्टर अपनी कार में बैठे हत्यास्थल से गुजरे, पर भीड़ देखकर भी नहीं रुके और किसी अभिनेत्री का प्रोग्राम देखने लुधियाना चले गये।

देहरादून के सबसे प्रसिद्ध बाजार में दो बदमाशों ने वहां के एन. सी. सी. के संचालक युवक को घेर लिया और छुरे से उस पर वार किया। वह बहादुर आधा घंटे तक उनसे लड़ता रहा, पर अन्त में बदमाश सफल हो गये और उसे वहीं कत्ल करके चले गये। इस आधे घंटे में एक सौ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पचास से अधिक आदमी गोल बाँधे मदारी के तमाशे की तरह यह कांड देखते रहे और कमाल यह कि कोतवाली वहां से पचास साठ गज पर थी, पर किसी ने दौड़कर वहां जाना भी गवारा नहीं किया।

उत्तर प्रदेश के एक स्टेशन पर युवक भाई अपनी युवती बहिन के साथ रेल में चढ़ा, तभी उसे कुछ लोगों ने गाड़ी से नीचे खींच लिया और खुले प्लेटफार्म पर हाकी स्टिकों और भाले-चाकुओं से मारने लगे। वह चिल्लाता रहा, पर न भरी रेल में से कोई उतरा, न कोई रेल कर्मचारी ही पास आया। हत्यारे उसे खींचकर स्टेशन से बाहर ले गये और पास के खेत में जाकर उसका सिर काट दिया।

ये घटनायें मर्मभेदी हैं, पर अनोखी और विरल नहीं हैं। आम तौर पर देश की आम जनता में आस-पास की घटनाओं के प्रति और आगे बढ़कर देश की समस्याओं के प्रति यही तामसी तटस्थता ज्यादा है और उसका दृष्टि-कोण बन गया है—"अरे कौन झगड़े में पड़े।"

लोकोक्ति है कि एक आदमी की चीख पुकार सुनकर जब पड़ौसी दौड़ गये, तो उस आदमी ने कहा—मेरी छाती पर बेर रखा है, इसे मेरे मुंह में दे दो, जिससे मैं खा सकूं इसे! मालूम होता है अब हम इससे भी आगे बढ़ गये हैं और हमारा हाल तो वह है जो भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने अपने भारत दुर्दशा नाटक में एक हास्य पात्र से कहलाया है—

बन्दर की तरह धूम मचाना नहीं अच्छा।
मर जाना, पर उठकर कहीं जाना नहीं अच्छा॥
सिर भारी चीज है इसे तकलीफ हो, तो हो।
पर जीभ बेचारी का सताना नहीं अच्छा॥

मतलब यह कि जब कोई चीखे, तो उसके पड़ौसी दौड़ कर जायेंगे ही नहीं। यह स्थिति बुरी है, पर सच है। अभी-अभी कुछ दिनों पहले एक शिक्षित महिला ने दिनमान' के संपादक को पत्र लिखा—"हमारे प्रेटर कैलाश में आज सभी घरों में अंग्रेजी में नाम पट लगे हुए हैं जैसा मेरे अपने घर के सामने भी है। मैं चाहती हूं कोई आकर इसे मिटा दे और हिन्दी में नाम पट कर दे।XXXभले ही नाम बदलवाने के पैसे वसूल कर ले।"

यह पत्र जलता हुआ प्रतीक है देश व्यापी जीवित जनता की उस तटस्थता का जो मुर्दों की तटस्थता को चैलेंज करने में जुट पड़ी है। देश के अस्पताल बूचड़ खाने बन रहे हैं और अधिकांश डाक्टरों की मनो दशा लालच और लापरवाही से व्याप्त है, पर सहते हैं सब, बोलता कोई नहीं। यही हाल सारे सामाजिक जीवन का है, पर महत्व-पूर्ण प्रश्न तो यह है कि तटस्थता की इस बाढ़ में क्या प्रजातन्त्र टिका रह सकता है?

× × × ×

ठीक है, तटस्थ जनता में डिक्टेटरी पनपती है, प्रजातन्त्र टिका नहीं रह सकता। भाग्य की ही बात है कि इस तटस्थता को तोड़ने में जब हमारे देश का शासन, प्रशासन, शासक दल, दूसरे राजनैतिक दल, सर्वोदय नेता और दूसरे सामाजिक कार्यकर्ता असफल रहे तो भाग्य के वरदान की तरह भारत पाकिस्तान का युद्ध उमड़ पड़ा। युद्ध के इस वातावरण ने जनता के मानस को उद्बोधित किया, भावनाओं को प्रेरित किया और उसे देश के साथ एकाग्र बनाकर खड़ा कर दिया। अब हर नागरिक चौकन्ना हुआ, दूसरे चेहरों को खुफिया पुलिस के ऊँचे, सावधान अफसर की तरह देखता है कि इनमें कोई पाकिस्तान का जासूस तो नहीं है? वह देखकर ही नहीं रुकता, अगर किसी पर उसे सन्देह हो तो उसका हाथ थामता है और उसे कोतवाली ले जाता है। हाथ थामते समय वह भले ही अकेला हो, पर कोतवाली पहुंचने तक एक उत्तेजित समूह हो जाता है।

चीन के आक्रमण के साथ यही चमत्कार हुआ था, पर आक्रमण के बीच में धन की वसूलयाबी में, शासक-मण्डल और शासक दल की शिथिलता में जनता के उत्साह का चमत्कार डूब गया था और आक्रमण समाप्त होने के बाद तो इस प्रश्न पर किसी ने विचार भी नहीं किया था कि इस चमत्कार को जीवित-जागृत रखना चाहिए। इस बार स्थिति में अन्तर है। शासक-मण्डल प्रशासक-मण्डल, शासक दल और दूसरे दलों में अवसर की तीव्र प्रतिक्रिया है जिसने सामाजिक जीवन के सारे ढांचे को जो चुस्ती से चरमरा रहा था, चुस्ती से भरपूर कर दिया है; यहाँ तक कि चिर आलोचित पुलिस तन्त्र भी सन्नद्ध हो गया है। इसी कारण चीन के आक्रमण के बाद जहाँ जनता में उत्तेजना थी, वहाँ पाकिस्तानी आक्रमण के बाद उत्साह है। चीनी आक्रमण के बाद देश के कवि फुदक उठे थे—और हरेक ने ऐकिंग तक पहुँचने का नारा दिया था। इस बार वह फुदक कहीं नहीं है, पर जनता में हर जगह सन्नद्धता है, यह बहुत बड़ी बात है।

युद्ध अस्थायी चीज है, वह समाप्त होगा और तब देश के नए नेतृत्व की परीक्षा होगी कि वे इस उत्साह को काम में लगाकर इसे रचनात्मक रूप देता है या पुराने नेतृत्व की तरह इसकी उपेक्षा कर उसे निराशा और अवसाद में बदलने का विध्वंसात्मक रूप देता है। यह परीक्षा इस युद्ध की परीक्षा से भी अधिक महत्वपूर्ण होगी, इसमें सन्देह नहीं। उचित है कि वह अभी से इसकी तैयारी करें! ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाकिस्तानी फौज के हथियार जब १९५६ में हमारे जवानों ने छीन लिए थे !

—श्री महावीर त्यागी, केन्द्रीय पुनर्वास मंत्री

फीरोजपुर के पास ही सतलुज नदी का पुल है जिस पर से लाहौर को पक्की सड़क जाती है। हिन्दुस्तान के बंटवारे के बाद हुए समझौते के अनुसार उस पुल के पार भी कुछ हद तक हमारी भूमि है—वहाँ तक पाकिस्तानी पुलिस हिन्दू और सिख शरणार्थी परिवारों को पहुंचाकर हमारी पुलिस के सुपुर्द कर देती थी।

अठारह मार्च १९५६ की रात को लगभग आठ बजे कमांडर-इन-चीफ ने सूचना दी (उन दिनों मैं सुरक्षा संगठन-मंत्री था), 'जनरल गुरुबख्श सिंह का टेलीफोन आया है कि पाकिस्तानी सेना लाहौर से हमारी ओर चढ़ाई कर रही है और बहुत से मोटर-ट्रकों की रोशनी दिखाई दे रही है। यदि वे सचमुच आक्रमण करते हैं तो उस हालत में हमारे लिए क्या हुक्म है, क्योंकि पाकिस्तान की सीमा के अन्दर हमें गोली चलाने की मनाही है।

मैंने कह दिया—'यदि तुम्हारी शक्ति काफी हो तो गोली का जवाब गोली से दो और उनको अपनी सीमा से बाहर करो। लड़ाई लड़ते समय सीमा नहीं देखी जाती जैसा चाहे करो। यदि वह हमारी सीमा में आ सकते हैं तो हम भी उनकी में जा सकते हैं।'

उसने बड़े उत्साह से कहा, 'हमें अपने मिनिस्टर पर गर्व है और मैं वादा करता हूं कि दुश्मन के दांत खट्टे करके दम लूंगा।'

फिर मैंने जनरल गुरबख्श सिंह से सीधा टेलीफोन किया तो पता चला कि नदी के परले पार ५० फीट रेत की एक पट्टी थी और उसके बाद एक बहुत चौड़ा और पक्की चिनाई का बांध था जो रेत के मैदान से लगभग १२ फीट से भी अधिक ऊंचा था। जनरल गुरबख्शसिंह ने जल्दी-जल्दी नाव में बिठाकर, काफी संख्या में अपने सैनिक नदी की पार वाली रेती में पहुँचा दिये थे। पाकिस्तान की ओर से जैसे ही गोली चलना

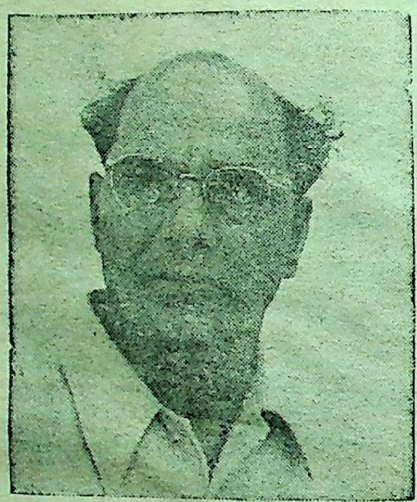

श्री महावीर त्यागी

आरम्भ हुआ, हमारी सेना ने भी गोली चलाना आरम्भ कर दिया।

कई घंटों तक यह आसमानी आतिशबाजी जारी रही, पर चूंकि दोनों सेनाओं में ऊंचा बांध था, इस लिए कोई भी सैनिक घायल नहीं हुआ। थोड़ी देर बाद शत्रु के कुछ आदमी बांध के एक कोने पर चढ़ आये। हमारे सैनिकों का ध्यान उस कोने की ओर गया तो उनको मार भगाया, पर इस बीच में पाकिस्तान की दूसरी टुकड़ी ने उस बांध के दूसरे कोने पर चुपके से एक मशीन-गन स्थापित कर दी और तड़ातड़ गोली-वर्षा आरम्भ हो गयी।

रात के लगभग ११ बजे जनरल ने मुझे सूचना दी, "गजब हो गया, हमारी फौज घिर गई, क्योंकि हम उनके पास न तो गोली-बारूद ही पहुँचा सकते हैं, न सैनिक भेज सकते हैं, न अपने घायलों को मरहम पट्टी के लिए उठा सकते हैं। दुश्मन ने बांध के ऊपर चढ़कर अपनी मशीन-गन ऐसे स्थान पर स्थापित कर ली है कि सारी नदी गोली की बौछार से ढक गई है। अब हमारी किश्ती भी नहीं चल सकती ?"

यह सुनकर मेरा कलेजा धड़क उठा—सैकड़ों सैनिक काम आ जायेंगे तो जवाहर लाल को क्या मुँह दिखाऊंगा। मैंने जनरल से कह दिया "यदि तुम सब काम आ गये तो मैं दिन निकलने से पहले ही आत्महत्या कर लूंगा, पिस्तौल भरे बैठा हूं।"

जनरल ने कहा, "आप घबराइए नहीं, मैं अभी आधे घंटे में रेती पर पहुंचकर आपको वास्तविक परिस्थिति की सूचना देता हूं।"

दो घंटे हो गये, पर कोई सूचना नहीं मिली। बस, अपने कमरे में इधर-उधर टहलता रहा। थोड़ी देर बाद घंटी बजी—"बधाई है।"

मैंने पूछा, "क्या हुआ ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने बताया, "मैंने रेती पर पहुँचकर आवाज लगाई, कोई है जो इस मशीनगन का मुंह बंदकर सके।"

किसी ने कहा—लान्सनायक सुन्दर सिंह यह काम कर सकता है क्योंकि पाकिस्तान से अपने परिवार को साथ लाते हुए जब वह भारत जा रहा था तो कई जगह उसने लुटेरों और हत्यारों का सामना किया था।

सुन्दर सिंह ने सामने आकर सलाम झाड़ा और कहा, "मुझे छह बम दे दीजिए, मैं मशीनगन का मुंह बन्द कर दूंगा।" उसे छह हथगोले (हैंड ग्रेनेड) दिये गये और वह पुल के पास से बाँध पर चढ़ा और दुश्मन की गोलियों की वर्षा के नीचे वह बिल्ली की चाल से बाँध के साथ-साथ हाथ-पैरों के सहारे डेढ़ सौ गज तक रेंगता हुआ वहाँ पहुँचा जहाँ मशीनगन लगी हुई थी और खड़े हो कर एक बम ऐसे फेंका कि ठीक मशीनगन के ऊपर जा फटा।

मशीनगन चलाने वाले तीनों सैनिक काम आ गये।

वह फिर छलांग मारकर तीन बार ऊपर गया और तीनों काम आए पाकिस्तानियों के कालर में हाथ डाल कर घसीटता हुआ हमारी ओर की रेती में आ कूदा।

अपनी सफलता के नशे में फिर खड़ा-खड़ा दुबारा बाँध की छत पर चला और एक लाइट मशीनगन, दो बेनगन और कारतूसों के दो बक्स अपनी ओर उठा लाया। फिर क्या था? हमारी सारी सेना बांध के ऊपर चढ़ गई।

बांध के दूसरी ओर पाकिस्तानी सेना ने खाइयां खोद रखी थीं और उन्हें छिपाने के लिए सूखे फूंस से ढांप रखा था। हमारे सैनिकों को भी अपनी सफलता का नशा चढ़ गया था। टाट की बोरियों में मिट्टी पत्थर भरकर और पैट्रोल में डुबोकर रस्से से चारों ओर घुमाना शुरू किया और फिर घूमती हुई बोरियों में माचिस लगाकर पाकिस्तानी सेना की ओर फेंक दिया।

सारा जंगल (दो मील तक) सूखे बीड पूलों से लदा पड़ा था। सब में आग लग गई। हमारे सिपाहियों ने भागते हुओं का पीछा कहां तक किया यह लिख नहीं सकता, पर इतना बताये देता हूं कि लाहौर का बाजार बन्द हो गया था!

पाकिस्तान ने भी यह नहीं बताया कि कितने आदमी काम आये और हमने भी यह कहकर टाल दिया कि ऊंची-ऊंची घास में हमें पता नहीं लगा कि कोई मरा या नहीं। हाँ, कुछ लोग भागते तो मालूम पड़े थे। हम लोगों ने उस भगोड़ी सेना के सैंकड़ों हथियार अपने कब्जे में कर लिए।

पाकिस्तान सरकार का कहना था कि हमने पाकिस्तान की सीमा के भीतर से हथियार इकट्ठे किये हैं। हमारा कहना था कि पाकिस्तान ने बांध के ऊपर चढ़कर हमारी सेना पर आक्रमण किया था। तो सेना ने बांध पर से मार भगाया। वे जल्दी में हथियार छोड़ गये तो हमने इकट्ठे कर लिए।

हाँ, यह लिखना भूल गया कि रात के ११ बजे जब हमारी सेना पाकिस्तानियों के हमले का जवाब दे रही थी, मैंने जवाहरलाल जी को जाकर बता दिया था कि यदि आवश्यक हुआ तो सेना को पाकिस्तान की सीमा में घुसने पर जो पाबन्दी है उसको मैंने हटा दिया है और पुल के परले पार जो हमारी भूमि है वहाँ तक तो सेना अवश्य ही जायगी। मुझे डर था कि यदि हमारी सेना पाकिस्तान की सीमा में घुस गई तो अन्तर राष्ट्रीय समस्या उत्पन्न हो जायगी। अच्छा ही हुआ कि सेना को बहुत दूर तक जाने की आवश्यकता न पड़ी।

यों तो जवाहरलालजी की चोरी-चोरी से ये सब काम कर रहा था, पर उनका और मेरा रिश्ता तो मियां-बीबी-सा था कि आपस में चाहे जितनी वायदेखिलाफी करो और चाहे जितनी चकमेबाजी, गलतफहमी नहीं हो सकती थी, पर थे जवाहर लाल जी अव्वल नम्बर के कश्मीरी-बताओ या न बताओ, वह सारी बात ताड़ जाते थे।

दस-पन्द्रह दिन के अन्दर-अन्दर पाकिस्तान सरकार से यह समझौता हो गया कि जो हुआ सो हुआ, अब दोनों पक्ष उसे भूल जायें और पाकिस्तान की जो मशीनगन और राइफलें हमारे हाथ लगी हैं वे वापस कर दी जायें।

मुझे बुलाकर जवाहरलाल जी ने आज्ञा दे दी कि सब हथियार वापस कर दो। मैंने जनरल गुरुबख्श सिंह को टेलीफोन किया।

'जिन राइफलों पर आग से जलने के निशान हों, उन्हें अलग कर लो और बाकी सब हथियार वापस कर दो।'

उसने कहा, 'मशीनगन तो हमारी जम्मू-कश्मीर पैदल पल्टन की चौथी बटालियन की मेस में तोहफे के रूप में रखी जायगी, जीते हुए हथियार वापस नहीं हुआ करते। हमारी सारी सेना अपनी वर्दी-पेटी तो दे सकती है, पर शत्रु से जीते हुए शस्त्र वापस नहीं हो सकते।

मैं फिर जवाहर लाल जी के पास गया। उसी दिन दो घंटे बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाकिस्तानी जनरल हथियार लेने के लिए हुसैनीवाला आने वाले थे। जवाहर लाल जी को बस जनरल गुरुबख्श सिंह की बात सुनायी तो वे आग बबूला हो गये। बोले—

'क्या मतलब ?···पागल है तुम्हारा जनरल ? दो सरकारों के बीच कोई नीति का निर्णय हो और एक जनरल उसकी अवहेलना करे, यह कभी हो सकता है ? आप उसको कहिए कि वह चार्ज छोड़कर इस्तीफा दे दे। हथियार वापस करने पड़ेंगे।

मुझे जल्दी थी और डर था कि कहीं टेलीफोन की लाइन ठीक न हुई और जनरलों की बातें शुरू हो गयी तो फजीहत हो जायगी।

सारी बात तो मैं बता नहीं सकता। 'डिफेंस मिनिस्ट्री' करना किसी सच्चे ईमानदार और गांधी-वादी का काम नहीं है—सोलहों आना देश-भक्त होना आवश्यक है—उसके बाद सौ खून माफ होते हैं। मेरे पाठकगण आज के बाद मेरा विश्वास नहीं करेंगे। मैंने गुरुबख्श सिंह को कह दिया कि—

'तुम पाकिस्तानी जनरल को सैनिक गार्ड आफ आनर दो, लंच दो और खूब बढ़िया बोतलें उनकी मेज पर सजा दो और जितने भी सैनिक अफसर आयें, उनका बड़े प्यार से सत्कार करो। कुछ कव्वाली सुनाने का इन्तजाम भी कर दो और अपने अफसरों में से कुछ ऐसे उर्दू बोलने वाले, कि जिन्हें खूब चढ़ाने की आदत हो छाँट लो कि जिनके कन्धों पर ऊंचे पदों के बिल्ले लगे हों ताकि वे साथ बैठकर खाना खा सकें। इस तरह से शाम के चार बजा दो। मैं तुम्हारे कमांडर-इन-चीफ से सलाह करके अंतिम निर्णय बताऊंगा कि मशीन-गन का क्या किया जाय।

उसने ऐसा ही किया। सेना के बड़े अफसरों ने मुझे यही राय दी कि जीते हुए शस्त्र वापस नहीं हुआ करते, यह तो सेना के गौरव चिन्ह होते हैं, पर जब सरकारी हुक्म है तो वापस करने पड़ेंगे।

यों तो जवाहर लाल जी ने मुझ से कह दिया था कि 'तुम्हारा जनरल जाना चाहता है तो जाने दो', पर मुझे उनकी यह कमजोरी मालूम थी कि जिस पर कभी गुस्सा करते थे, वह भाग्यवान होता था क्योंकि उसको बहुत जल्दी कोई न कोई इनाम उस गुस्से के बदले में मिल जाया करता था। उन्होंने कमांडर-इन-चीफ को बुलाकर समझाया कि वे गुरुबख्श सिंह को नेक सलाह दें और वे मशीनगन वापस करवा दें।

जब मैंने जनरल गुरुबख्श सिंह को टेलीफोन किया तो उसने कहा, 'हुजूर, मुझे कमांडर-इन-चीफ का हुक्म आ गया है और मैं मशीनगन वापस कर रहा हूं, पर मैं अपनी सेना को मुंह दिखाने लायक नहीं रहूँगा और टेलीफोन पर बात करते-करते उसका गला भर आया।

मुझे भी बहुत परेशानी हुई लानत है ऐसी 'मिनिस्ट्री' पर, बिना मुझ से सलाह लिये इस प्रकार का फैसला पाकिस्तान के साथ क्यों किया गया ?

पर भगवान ने मुझे एक वरदान दे रखा है। वह यह कि असीम संकट के समय मुझे एक अक्ल का झोंका आ जाता है। बस, मैंने गुरुबख्श सिंह से कह दिया।

'देखो, दो रसीदें टाइप करके रखो कि १८ मार्च १९५६ की रात को जो मशीनगन हमने बांध के कोने पर लगायी थी और उसके साथ हमारी जो राइफलें हिन्दुस्तानी सेना के हाथ लगी थीं, वे सब वापस पायीं—हस्ताक्षर—जनरल, पाकिस्तानी सेना। बांध हमारी भूमि में है उस पर मशीनगन लगाने की बात पाकिस्तान लिखित रूप में स्वीकार नहीं कर सकता, क्योंकि हम उसको यू.एन.ओ. में पेश कर सकते हैं कि इन्होंने लड़ाई बन्द के समझौते को तोड़ा है।

खुशी के मारे मेरा जनरल उछल पड़ा। बोला—मैं समझ गया, थैंक यू सर।

बस, यह तरकीब चल गयी। खाना खिलाने के बाद हथियार सब गिना दिये और रसीदें हस्ताक्षर के लिए सामने पेश कर दीं। हमारे ही एक दूसरे अफसर ने एक रसीद उठा कर उसे पढ़ना शुरू किया और बहुत देर बाद कुछ सोचते हुए बोला, क्या इस पर ये हस्ताक्षर कर देंगे ?'

ऐसे होते हैं यह फौजवाले? देखने में सब सीधे लगते हैं पर होते हैं अव्वल नम्बर के। 'देर तक क्यों पढ़ी' कहकर पाकिस्तानी जनरल ने भी नशे के अन्धकारको पार करके उसे ध्यान से पढ़ा और बोला, अरे, हथियार-वथियार छोड़ों, हम तो दोस्ती करने आये थे।

फिर सबसे हाथ मिलाकर चले गये। अगले दिन मैंने जवाहरलाल जी को बता दिया कि किस तरकीब से इज्जत बची। जवाहर लाल जी बहुत खुश हुए। मेरे लान्स नायक सुन्दर सिंह को उसकी बहादुरी पर 'अशोक-चक्र' दे दिया, पर जनरल गुरुबख्श सिंह तो अब रिटायर हो गये हैं, वे भी बधाई के पात्र हैं। हमें अपनी सेना और जवानों पर सचमुच बहुत मान और गर्व है। ◇

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन् १६७७ ई० के बाद की बात है। शिवाजी गोलकुण्डा के सुलतान अबुहुसेन का स्वागत-सत्कार ग्रहण कर रहे थे। सुलतान अपने इस अद्वितीय अतिथि के आतिथ्य में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर रहा था।

एक दिन शिवाजी ने गोलकुण्डा के प्रमुख लड़ाकू हाथी का विशाल डीलडौल और साज-सज्जा देखकर आश्चर्य प्रकट किया। सुलतान अबुहुसेन ने उनसे पूछा, "क्या आपके पास कोई लड़ाकू हाथी नहीं है, महाराज ?" शिवाजी ने क्षणभर सोचा, फिर अपने पीछे खड़े सैनिकों की तरफ इशारा कर कहा, "है तो ! मेरे पास तो हजारों लड़ाकू हाथी हैं।"

अबुहुसेन ने व्यंग्य के इस सत्य को हृदयंगम नहीं किया। इस के बावजूद वह उस लड़ाकू हाथी की कई शौर्य कथायें सुनाने लगा जिनमें अतिश्योक्तियों के साथ कई गर्वोक्तियां भी शामिल थीं।

शिवाजी अपने मेजबान की बातें मौन सुनते रहे। जब हद हो गई तो उन्होंने पीछे खड़े यश जी को सामने बुलाया और अबुहुसेन से कहा, "जरा आपके हाथी की थोड़ी जोर-आजमाई हमारे हाथी के साथ हो जाए !" अबुहुसेन हक्का-बक्का रह गया। मगर शिवाजी के आग्रह करने पर वह राजी हो गया।

महावत ने हाथी को कोंच-कोंच कर बेहद क्रुद्ध किया। इसी बीच तलवार खींच कर यश जी भी सामने आ गए थे। हाथी चिंघाड़ कर यश जी पर झपटा। यश जी ने फुर्ती से हाथी का दांव बचाया और उलट कर एक ऐसा करारा हाथ हाथी की सूंड पर मारा कि हाथी की सूंड कट कर नीचे गिर पड़ी। हाथी दर्द से चिंघाड़ता हुआ मैदान से भाग खड़ा हुआ। यश जी शान्त, निःसंग भाव से शिवा जी के पीछे जाकर वापस खड़े हो गए।

युद्ध, मशीनें और मानव

—श्री हरीश अग्रवाल

अपने पड़ोसी भारत पर ही पाकिस्तान द्वारा थोपे गये युद्ध से विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र में अनेक बातें सामने आई हैं, जिनमें प्रमुख बात यह है कि भारतीय सैनिक अपनी युद्ध-कुशलता और वैज्ञानिक विधियों के सहारे दुश्मन पर हावी हुआ और अनेक मोर्चे जीतने में सफल हुआ। इस युद्ध में यह बात सोलह आने सच बैठी है कि युद्ध मशीनें नहीं, मशीन चलाने वाले जीतते हैं।

भारत और पाकिस्तान की लड़ाई में, जमीन और हवा की लड़ाई में कुछ तथ्य सामने आये हैं। इन दोनों प्रकार की लड़ाइयों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता, क्योंकि दोनों एक दूसरे पर निर्भर करती हैं। यदि जमीन पर दुश्मन हम पर हमला करता है तो हमारे वायु सैनिक अपने विमानों से हमला करके हमारी रक्षा कर सकते हैं। इसी प्रकार उड़ते विमानों को जमीन से उपयुक्त आदेश मिल सकते हैं।

लेकिन अब आधुनिक युद्धों और प्राचीन युद्धों में परिवर्तन आ गया है। अब नए-नए प्रकार की युद्ध मशीनें और हवाई जहाज बन गए हैं जो सैनिकों के काम आते हैं। अब लड़ाइयाँ आधुनिक टैंकों, तोपों, बख्तरबन्द गाड़ियों, राकेटों, प्रक्षेपास्त्रों से लेकर ध्वनि से तेज चलने वाले बमवर्षकों से लड़ी जाती हैं।

यह बात निर्विवाद है कि युद्ध के साथ शस्त्रास्त्रों में प्रगति हुई है और पुराने अस्त्रों के स्थान पर नए अस्त्र आये हैं। इन नए अस्त्रों के निर्माण में विज्ञान का महत्वपूर्ण योग रहा है। हमारे देश ने स्वर्गीय श्री नेहरू के नेतृत्व में सैनिकों के लिए विज्ञान का महत्व बहुत पहले समझ लिया था, इसीलिए रक्षा-मंत्रालय ने रक्षा विज्ञान व विकास संगठन की स्थापना की। १९६२ में हुए चीनी आक्रमण के बाद हमारे रक्षा वैज्ञानिकों में नया जोश आया और वे हमारे सैनिकों के अधिक निकट आए और उनकी समस्याओं को सुलझाने का यत्न किया।

रक्षा के लिए पंचवर्षीय योजना

चीन और पाकिस्तान के आक्रमणकारी रवैये को देखते हुए १९६४-६५ में ५० अरब रुपये की एक पंचवर्षीय रक्षा योजना चालू की गई। इस योजना के अनुसार हमारी फौजों को आधुनिक जामा पहनाया जा रहा है और उनको मजबूत बनाया जा रहा है। इसके अनुसार एक आधुनिक व पर्याप्त रूप से संतुलित ४५ स्क्वाड्रन की वायु सेना खड़ी की जाएगी, जिसमें लड़ाकू, लड़ाकू-बमवर्षक, बमवर्षक, टोही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा हैलीकोप्टरों को मिलाकर मालवाही विमान होंगे।

विमानों की गति

अब युद्ध में विमानों का महत्व बहुत बढ़ गया है, खास तौर से इन विमानों का जो ध्वनि से तेज चल सकते हैं और दुश्मन की मार से बच सकते हैं। ये विमान उड़ते भी ६० हजार फुट की ऊंचाई तक हैं। जो विमान ध्वनि की गति अर्थात् ७६० मील घण्टे की गति से उड़ते हैं, उन्हें ट्रांसोनिक विमान कहते हैं। जो विमान ध्वनि से दुगनी गति से उड़ते हैं, उन्हें मैक-२ कहते हैं और जो तिगुनी गति से उड़ते हैं, उन्हें मैक-३ कहते हैं। मैक-२ गति का विमान एच. एफ.-२४ जून, ६१ में बना था, इसका नाम 'मारुत' रखा गया।

नैट का कमाल

पाकिस्तानी विमानों के छक्के छुड़ाने में हमारा नैट विमान बड़ा कारगर सिद्ध हुआ। यह विमान भी बंगलूर में ही बनाए जाते हैं। मिस्टीयर को मिला कर नैट विमानों की इन्टरसैप्टर स्क्वाड्रनें बनाई गई हैं अर्थात् ये दुश्मनों पर मार करती हैं। एक स्क्वाड्रन में १६ विमान तथा आठ विमान सुरक्षित रहते हैं। हमारे पास कैनबरा की ४ बमवर्षक स्क्वाड्रन तथा हंटर्स आदि की १० लड़ाकू बमवर्षक स्क्वाड्रन है।

पाकिस्तान को अमरीकी सहायता के अन्तर्गत अनेक प्रकार के आधुनिक और अतिस्वन विमान मिले हैं। इनमें प्रमुख लड़ाकू बमवर्षक स्टरफाइटर (एफ-१०४) और सेबर जैट (एफ-८६) हैं। पाकिस्तान के पास सेबर जेट की चार और स्टरफाइटर की एक स्क्वाड्रनें हैं। सेबर जेट और स्टरफाइटर विमानों में साइडविंडर प्रक्षेपास्त्र भी होते हैं, जो हवा से हवा में ही मार करते हैं। इस प्रक्षेपास्त्र में खूबी यह है कि यह अपने लक्ष्य गर्मी को ताड़ कर उस के पीछे-पीछे चलता है और उसको बेध देता है, लेकिन मालूम होता है कि पाक चालक इन प्रक्षेपास्त्रों को इस्तेमाल ठीक से नहीं कर पाए, क्योंकि वे अपने लक्ष्यों को बेध नहीं पाए। एक बार विमान से छोड़े जाने के बाद साइडविंडर अपने लक्ष्य-विमान की पूंछ का पीछा करता है।

बमवर्षक विमान

पाकिस्तान को जो बी-५२ और बी-५८ बमवर्षक विमान मिले हैं वे पर्याप्त रूप से आधुनिक हैं। पहले प्रकार के बमवर्षक की गति ६०० मील प्रति घण्टा और दूसरे की १,३०० मील प्रति घण्टा है। ये दोनों ५० से ६० हजार फुट की ऊँचाई पर उड़ान कर सकते हैं। बी-५८ प्रथम अतिस्वन बमवर्षक हैं, जिसकी गति-ध्वनि की शक्ति से दुगनी है।

बमवर्षक विमान इलैक्ट्रोनिक यन्त्रों से लैस रहते हैं। बादल या रात्रि के अन्धकार में लक्ष्यों पर बमबारी करने में यन्त्र बड़े सहायक होते हैं। इनके संचालन के लिए दो, तीन या अधिक विमान कर्मचारियों की आवश्यकता होती है। इन में विमानचालक नैवीगेटर यानी मार्ग-दर्शक, बम का निशाना साधने वाला एक तोपची और एक इलैक्ट्रोनिक अफसर शामिल होते हैं। वायु सेनाओं का मुख्य साधन बमवर्षक विमान ही होता है।

राकेटों का प्रयोग

पाकिस्तान ने अपने आक्रमण में राकेटों का भी खुलकर प्रयोग किया है और यहाँ तक कि नगरों और घनी बस्तियों पर उन्हें गिराया है। राकेट में एक लाभ यह है कि यह अपने आपमें अस्त्र और बारूद होता है। राकेट के साथ एक लंचर होता है जो लक्ष्य बांधता है। हमला करने के लिए इसमें बहुत साधारण यन्त्र होते हैं और बहुत कम शक्ति की जरूरत होती है। राकेट हल्का होता है और इसे विमानों में प्रयुक्त किया जाता है। जमीन पर जहां परम्परागत तोपखाना इस्तेमाल नहीं होसकता, वहाँ राकेट लंचर इस्तेमाल होता है।

थल सेना के अस्त्र

थल सेना के अस्त्रों में टैंक, तोपें, बख्तरबन्द गाड़ियां, राइफलें, मशीनगनें आदि हैं। पाकिस्तान ने प्रमुख रूप से अमरीकी पैटन टैंकों का इस्तेमाल किया, जिसे संसार में सबसे शक्तिशाली समझा जाता है। इसका नाम एम-४६ पैटन होता है, जिसका वजन ४७ टन होता है और इसमें ९० मिलीमीटर की ताप लगी होता है।

टैंकों की खूबी यह है कि लड़ाई के लिए इसमें बारूद होती है, यह स्वचालित होता है, सैनिकों की इसमें सुरक्षा हो सकती है और इससे कोई धक्का नहीं लगता। इस समय पाकिस्तान के पास पैटन और शर्मन टैंक हैं। इनके अलावा शैफी और कोपासे टैंक भी हैं। हमारे पास शर्मन, सेंचुरियन (ब्रिटिश) तथा ए एम एक्स (फ्रेंच) हैं। पैटन की मार १० मील तक होने के बावजूद वे हमारी सेनाओं के सामने नहीं टिके।

अन्त में यह मानना होगा कि हमारे सैनिकों की जीत उनके वैज्ञानिक व तकनीकी प्रशिक्षण के कारण ही हुई है। कुछ समय पहले हमारे सेनाध्यक्ष जनरल चौधरी ने सैनिकों की एक सभा में सेना के लिए विज्ञान के महत्व पर बल देते हुए कहा था, 'युद्ध केवल मशीनें नहीं जिता सकतीं उनको प्रयोग करने और उनसे शत्रु को अधिकतम क्षति पहुँचाने में मानव मस्तिष्क ही सर्वोपरि बैठता है।' ○

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

(पृष्ठ २८० का शेष)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शान्ति पूर्वक अपना काम करने को कह दिया गया था और सब अपना काम कर रहे थे। यह वो सेना थी, जो कोरिया और कांगो में शान्ति-सेवा कर चुकी थी, पर यह वो सेना थी, जिसने ६ और ७ सितम्बर के इन्हीं दो दिनों में पाकिस्तान के २० विमान तोड़े थे, २४ टैंकों का ढेर कर दिया था दो टैंक सुरक्षित रूप में पकड़ लिए थे और ढेरों हथियार कब्जे में कर लिए थे। प्रधानमंत्री श्री शास्त्री के द्वारा १५ अगस्त को लालकिले पर किए उस उद्घोष का कि 'शांति का प्रयत्न हर दम पर हथियार का जवाब हथियार से, यह साकार रूप ही तो था।

तीसरी ओर से बढ़ते हुए हमारे सैनिक दस्ते स्यालकोट की बड़ी छावनी की ओर बढ़े जा रहे थे, इंच इंच पर पाकिस्तानी सैनिकों से जूझते, उनके घमंड के निशान अमरीकी हथियारों को तोड़ते और उन्हें यह सबक सिखाते कि हिन्दुस्तान शांति के कबूतर ही नहीं उड़ाता, अपने जांबाज उड़ाके भी उड़ाता है।

हमारे एक नौजवान उड़ाके ने उड़ाकों के बलिदानी इतिहास में गुलाब का दूसरा पौधा रोप दिया, जो सदा-सदा महकता रहेगा। दूसरे महायुद्ध में अंग्रेजों ने अपने पानी के लड़ाकू जहाज प्रिंस आफ वेल्स पर डेढ़ फुट मोटी इस्पात की चादर चढ़ा कर मान लिया था कि इसे कोई नहीं तोड़ सकता, पर एक जापानी जवान ने पूरी ऊंचाई और पूरी तेजी से अपना पतला जहाज प्रिंस आफ वेल्स की ईंधन भट्टी के गोले में, जिससे ऊंची लपटें निकल रही थी, झोंक दिया। भट्टी का गोला फट गया और उस पर बम्बार्डमेंट कर जापानी उड़ाकों ने उसे डुबा दिया। जलती आग में अपना जहाज फेंकते समय जापानी उड़ाका जानता था कि वह बैंगन की तरह भुन जायगा, पर देश के लिए उसने खुशी-खुशी इसे सहा और उड़ाकों के इतिहास में गुलाब का एक पौधा रोप दिया।

लाहौर के हवाई अड्डे पर राडार यन्त्र लगा हुआ था। हमारे हवाई जहाजों के उधर को उड़ते ही राडार यन्त्र सिखाये हुए तोते की तरह चिल्लाने लगता था और हवाई अड्डे के रक्षक सावधान हो जाते थे—हमारे जहाजों को लौटना पड़ता था। उस दिन हमारे पाँच हवाई जहाज उधर बढ़े, तो राडार चिल्लाया। हवाई जहाज लौट पड़े, पर अचानक ४ वर्ष पहले ही भारत की वायुसेना में भरती हुआ तरुण उड़ाका गांधी लाइन से निकल कर लौट पड़ा और निशाना साधकर उसने अपना जहाज चीखते राडार पर फेंक दिया। राडार टूट गया, पर गांधी? उसके शरीर की धज्जियाँ उड़ गईं, पर क्या इन्हीं धज्जियों ने उड़ाकों के इतिहास में गुलाब का दूसरा पौधा नहीं रोपा, जो हमेशा खुशबू देता रहेगा? इसके बाद हमारे उड़ाकों ने लाहौर के हवाई अड्डे की पसलियां इस तरह मुलायम की कि वह हमारी फौजों का फरमाबरदार हो गया और जब लाहौर से अमरीकी सरकार ने अपने ६२० नागरिकों को हमारी फौजों के गल घोटू घेरे में फंसे लाहौर से निकालने का फैसला किया, तो भारत से अनुरोध किया कि वह हमारी मदद करें। मतलब यह कि जनरल अय्यूब के घमण्ड का झंडा लाहौर अब हमारी कैद में है और बिना हमारे हुक्म के न कोई वहाँ जा सकता है, न वहां से आ सकता है।

प्रधानमंत्री श्री शास्त्री ने इस आक्रमण का संकल्प सूत्र रचा—"काश्मीर को हड़पने की पाकिस्तानी इच्छा को सदा के लिए समाप्त करना हमारी इस रक्षात्मक कार्रवाई का उद्देश्य है।"

काश्मीर के क्षेत्रों में लड़ाई जारी रही और हमारी सेना नई-नई चौकियों पर कब्जा करती रही, पाकिस्तानी हथियारों को समेटती रही और सैनिकों को गिरफ्तार करती रही। छम्ब के क्षेत्र में पाकिस्तानी सेना का दम टूट चला था और वह पीछे हट रही थी। भारत की हवा बंध गई थी, पाकिस्तान की उखड़ गई थी और दुनिया का लोकमत इस बात में हमारे साथ था कि झगड़ा पाकिस्तान ने शुरू किया है।

यह कैसी गूंज है? लड़ाई की हार से कुढ़ कर पाकिस्तानी डिक्टेटर के हुक्म से उसके हवाई जहाज अमृतसर के शांत नागरिकों पर बम बरसाने आ रहे हैं। लो, वे सामने ही दिखाई देने लगे खूंखार बाज-से; पर यह आवाज कैसी है? यह धड़ाका कहाँ हुआ? यह भारत की विमान तोड़क तोप ने गोला छोड़ा और हमारे हवा बाजों ने उन पर चोट की। पाकिस्तान के तीन हवाई जहाज लोहे की ढेरी बनकर धरती पर आ गिरे। ये अमृतसर के मकानों की छतपर कौन खड़े हैं? ये भारत के नागरिक हैं, जो बिना डरे हवाई युद्ध देख रहे हैं। यह प्रभु का कैसा चमत्कार है कि भारत सहसा भय-मुक्त होकर खड़ा हो गया है?

चीनी आक्रमण के समय भी जनता उठ खड़ी हुई थी और इस पाकिस्तानी आक्रमण के समय भी जनता उठ-उभरी है, पर क्या दोनों बार की मनःस्थितियों में कोई दीखने लायक फर्क है? हाँ, बहुत बड़ा फर्क है कि तब जनता उत्साहित थी, अब सन्नद्ध है। इस सन्नद्धता को हम हाथ पर रखे सन्तरे की तरह इस बात से देख सकते हैं कि इस खबर के फैलते ही कि अमृतसर पर पाकिस्तान ने आक्रमण की चेष्टा की है, पूरे उत्तर भारत में ब्लैक आउट आरम्भ हो गया और इसकी व्यवस्था नागरिकों ने अपने हाथ में ले ली। इसके बाद जब यह खबर उड़ी कि पाकिस्तान अपने छाता सैनिक भारत में उतार रहा है, तो शहरों कस्बों में ही नहीं, गाँव-गांव में नागरिकों ने रातभर पहरा देने के लिए टोलियाँ बना लीं। अब कोई छोटा गांव भी ऐसा नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, जहां पहरे का प्रबन्ध नहीं है और ब्लैक आउट नहीं होता।

विद्वानों-बौद्धिकों की क्या राय है इस आक्रमण पर ? मेरे मन में यह प्रश्न नहीं उठा; क्योंकि अंग्रेजों की गुलामी को पूरे एक युग बीतने पर इस वर्ग के अधिकांश लोग मानसिक गुलामी से ग्रस्त और मानसिक लीनता से त्रस्त हैं। पिछले १५ वर्षों में हमारे विश्वविद्यालयों में डाक्टरेट के लिए जो शोध प्रबंध लिखे गए हैं, उनके शीर्षक पढ़कर ही कोई मान लेगा कि इन पालतू जीवों की दिलचस्पी फालतू विषयों में उलझी हुई है और जीवन के उचित साधन पाकर भी ये जीवन से दूर हैं। हां, भारत की जनता में मेरी अटूट आस्था है और १९३४ से ही मैं बराबर उसे 'अच्छे देश की अच्छी जनता' कहता-लिखता रहा हूं। मेरे मनमें यह प्रश्न उठा कि भारतीय सेना के आक्रमण पर जनसाधारण की प्रतिक्रिया क्या है !

आक्रमण के दिनों में ही गुघाल का देहाती मेला था। उसमें पचास हजार से अधिक देहाती आते हैं। मैं देहाती लोगों की पचास से अधिक टोलियों के साथ थोड़ी-थोड़ी देर रहा। मुझे यह देखकर खुशी हुई कि उनकी बातचीत का विषय युद्ध था और वे भारत के आक्रमण से उत्फुल्ल थे। एक देहाती ने फूलकर कहा—"भाई, एक बात है अक (कि) म्हारा (हमारा) यों खुटासिंह (शास्त्री जी) निकला खूब।"

दूसरे ने कहा—"पाकिस्तान म्हारे (हमारे) गात में रोज जक्सन(इंजेक्शन) की सुई चुभावै था। अर (और) म्हारा जुहारलाल था भला आदमी। बस वो अपना गात रोल कै (सहलाकर) चुप होजा था, अक कौण सौहरे लुच्चे के (सुसरे बदमाश के) मुंह लगे, पर अब कै कुरसी पै बैठा था लाल बहादुर। उसने सुई के बदले फाली घुसेड़ दी अर पुच्छा (और पूछा) अक भाई, तेरे दुख तो नी (नहीं) होरा (हो रहा है)। यह है जनता की प्रतिक्रिया।

लाहौर के मोर्चे पर लड़ाई ने घमासान रूप ले लिया और भारतीय वायुसेना ने रावलपिंडी के पास वाले चकलाला, लाहौर के पास पाकिस्तान के सबसे बड़े हवाई अड्डे सरगोध, डेराबाबा नानक और सुलेमकी हेडवर्क्स पर हवाई हमले किये और दुश्मन के १८ विमान गिराये, १६ टैंक और तोड़े। हमारे साथ पाकिस्तान ने भी अपने कई पुल खुद तोड़े, जिससे हमारी सेना आगे न बढ़ सके।

कलकत्ते के पास वायुसेना-अड्डे पर पाकिस्तान ने हमला किया तो हमारी तोपों ने उसके तीन हवाई जहाज मार गिराये। इस आक्रमण लड़ाई को पूर्वी क्षेत्र में भी फैला दिया। जोधपुर पर भी आक्रमण हुआ और इस तरह हमारी राजस्थानी सीमा भी गरम हो गई। भारत के मानस पर इस विस्तार का क्या प्रभाव पड़ा ? सुरक्षा परिषद की बैठक में जाते हुए लन्दन में भारत के शिक्षा मंत्री श्री छागला ने कहा—"हम भारत-पाकिस्तान युद्ध में किसी बाहरी देश का हस्तक्षेप पसन्द नहीं करते !" क्या यह भय की वाणी है ? ना, यह अभय का उद्घोष है।

अमरीका के नाज और पाकिस्तानी घमंड के शिखर से टैंक और तोड़े गए, भारत में उतरे छाता-सैनिक पकड़े जाते रहे और घमासान लड़ाई जारी रही। ऊथांत को लिखे पत्र में जनरल अयूब ने जिस घड़ी कहा कि काश्मीर में जनमत-संग्रह का फैसला हुए बिना युद्ध विराम नहीं होगा, ठीक उसी घड़ी में भारतीय फौजों ने राजस्थान की सीमा पार कर पाकिस्तान के गदरा शहर पर कब्जा कर लिया और हैदराबाद सिंध की ओर कदम बढ़ाया।

सुरक्षा-परिषद में अमरीका और इंगलैंड अपने लाड़ले पाकिस्तान की तरफदारी में शर्मनाक दावपेंच खेलते रहे। भीतर ही भीतर यह भी प्रयत्न हुआ कि भारत को आक्रमणकारी घोषित कर उस की निंदा की जाए, पर पर्दे के पीछे रूस के वीटो का जूता देखकर वे सहम गये, जो पहले भी ४ बार उनपर पड़ चुका है। इस मामले में इन दोनों देशों ने निर्लज्जता और झूठ के वे सब रिकार्ड तोड़ दिये, जो हिटलर ने कायम किये थे।

पलभर में चमेली के खिले, महकते, खूबसूरत फूल की तरह और पलभर में यों सख्त कि जैसे लोहे का स्टैच्यू हो; ये हैं भारत के मनमोहन रक्षामंत्री श्री यशवंत राव चह्वाण। उन्होंने लोकसभा में कहा—"हमारा उद्देश्य पाकिस्तान की भूमि पर कब्जा करना नहीं है। हमारा उद्देश्य है पाकिस्तानी ताकत के उस घमंड को तोड़ना, जो उसे हम पर बार-बार आक्रमण करने को उकसाता है।" श्री चह्वाण ने एक ही वाक्य में जैसे भारत की पूरी रणनीति का सार दे दिया। वे इस मामले में सरदार पटेल की प्रतिमूर्ति हैं कि कम बोलना, अर्थ गंभीर बोलना और इस तरह बोलना कि भाषा कड़ी न हो, तब भी भावों की दृढ़ता उस में पूरी तरह प्रतिध्वनित हो।

पाकिस्तानी सेना की रीढ़ है उसकी आर्मर्ड डिवीजन, जो अमरीका के ताकतवर हथियारों से लैस है। हमारी स्थल सेना और नभ सेना ने अपने रण कौशल से पाकिस्तान को मजबूर किया कि वह एक के बाद एक अपनी ताकत के पुर्जे बाहर निकाले और हम उसे तोड़कर रख दें, जिससे वह लंगड़ी हो जाए और फिर नए आक्रमण का हौसला बरसों उसमें न रहे। हमारी सेना में जो तेजी है, उससे वह पाकिस्तान में झपाटे के साथ रावलपिंडी तक भी बढ़ सकती है, पर हमारे अनुभवी सेनापति जानते हैं कि दूसरे महायुद्ध में जर्मनी ने एक झपाटे में बेलजियम नार्वे स्वीडन और फ्रांस को गिरा लिया था और दूसरे झपाटे में रूस में वह १५०० मील से ज्यादा भीतर घुस गया था, पर नतीजा क्या हुआ ? उसकी सेना चारों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरफ बिखर गई और एक के बाद एक सारे जीते स्थान उसे खाली करने पड़े। यह सच है कि अपने देश की सेना आगे बढ़े, तो जनता खुश होती है, पर लड़ाइयों की रणनीति चट्टानों जैसे आधारों पर बनाई जाती है, सस्ती भावुकता पर नहीं! अपनी सेना के रण कौशल और रणनीति की सफलता को हम इस कसौटी पर कस कर सही सही समझ सकते हैं कि उसने ७ दिन की लड़ाई में पाकिस्तान के दो डिविजन टैंकों में से एक डिविजन को पूरी तरह नष्ट कर दिया उसके ११४ टैंक तोड़कर—जी हां १६० टैंक तोड़कर, जिन्हें रूस को फतह करने के लिए पाकिस्तान को दिया गया था और जिन्हें यमराज के भैंसे की तरह भयानक समझा गया था।

इस काम से अमरीका के सेना विशेषज्ञ अचम्भे में भौंचक रह गये है कि भारत की वह गोली क्या है, जिसने हमारे टैंकों को प्लास्टिक का खिलौना बना दिया है। इस बात से जनरल अयूब की प्रतिष्ठा मिट्टी में मिल गई है और सेना में उसके विरुद्ध विद्रोह की, उसे गिरफ्तार कर गोली से उड़ाने की खबरें उड़ने लगी और इसीलिए उसने वायुसेना के प्रधान सेना पति नूर खां को पदच्युत कर असगरखां को कमान सौंप दी है।

पाकिस्तानी आक्रमण को धन्यवाद कि पंजाब और उत्तर प्रदेश के कांग्रेस-संगठन और शासन पक्षों की जो धमा चौकड़ी किसी भी प्रयत्न से नहीं रुक रही थी, वह आप ही आप रुक गई और दोनों जगह सहयोग से काम करने की घोषणा हुई। इसके साथ ही पंजाबी सूबे के लिए आमरण अनशन और जीवित जल मरने की संत फतहसिंह की जिस घोषणा से देश क्षुब्ध था, वह भी वापस लेली गई और सन्त फतह सिंह ने भारत सरकार को पूरा सहयोग देने की घोषणा की। यह लोकतंत्र के संरक्षक लोकमत की महान विजय थी।

दूर के इशारों में कहा गया कि भारत लड़ाई नहीं रोकता, तो अमरीका अपनी आर्थिक मदद रोक लेगा। यह इशारा तब हुआ, जब पाकिस्तान का डिक्टेटर सेंटो, नाटो-सेना संधि संगठनों के द्वार जा रोया कि मैं मर रहा हूं, तुम कब काम आओगे।

यह इशारा बहुत करारा था, पर इशारे के जवाब में इशारा दिया गया कि १९४९ में जब नेहरू जी वाशिंगटन गये, तो प्रेजीडेंट ट्रूमैन ने कहा था कि भारत अमरीका की कुछ शर्तें मानें, तो अमरीका १० लाख टन गेहूं देने को तैयार है। भारत में उस समय अकाल जैसी हालत थी, पर नेहरू ने कहा—राजनैतिक शर्तें मानकर अपनी आजादी रहन रखने की जगह भारत भूखों मरना पसंद करेगा। इस संकट में नेहरू के बाद का नेतृत्व इससे भी ऊपर पहुंचा-उठा इसमें संदेह नहीं।

१२ सितम्बर १९६५

जय जयंतो चौधरी! उत्तर में स्यालकोट अंचल, उससे दक्षिण में डेरा बाबा नानक अंचल, लाहौर मोर्चे के तीन अंचलों के दक्षिण में फिरोजपुर अंचल और उसके दक्षिण में सिंध में बादमेर-गादरा अंचल, इस प्रकार पश्चिमी पाकिस्तान में हमारी सेना सात अंचलों में बढ़ रही थी।

इसके साथ ही काश्मीर के उड़ी पुंछ क्षेत्र में हमारी सेना उत्तर में उड़ी से और दक्षिण में पुंछ से आगे बढ़ रही थी। दोनों क्षेत्रों में लड़ाई जान-जान की बाजी लगाकर लड़ी जा रही थी। लड़ाई में कमजोरी देखकर पाकिस्तान अपनी पेशावर की ताकत भी लाहौर में ले आया था और उसने अनगिन सिपाहियों के साथ अनगिन हथियार भी झोंक दिये थे।

१३ तारीख की शाम को एक झंडा बहुत उदास था और एक झंडा गर्व से फरफरा रहा था। यह उदास झंडा पाकिस्तान का था और यह फरफराता झंडा भारत का था। बात यह थी कि आज उड़ी और पुंछ की बढ़ती फौजें घेरा पूरा कर आपस में आ मिली थीं और इस तरह १५० वर्गमील के घेरे में पाकिस्तान का कब्जा टूट गया था, खत्म हो गया था। यह एक बड़ी पराजय थी, यह एक बड़ी विजय थी, पर इससे भी बड़ी पराजय पाकिस्तान को और विजय भारत को मिली थी लाहौर मोर्चे पर। भारत की सेना ने घमासान लड़ाई में पाकिस्तान की सबसे अधिक ताकतवर बख्तरबन्द डिविजन को चकनाचूर कर एक महान और निर्णायक विजय प्राप्त की थी।

इस युद्ध में पाकिस्तान के दो कमांडर मारे गए और चौदह अफसर पकड़े गए, जिनमें दो लै० कर्नल, छह मेजर और छह दूसरी रैंक के हैं। टूटे टैंकों की बात रोज की थी, पर आज ५२ टैंक टूटे और एक अटूट रिकार्ड कायम हुआ। इसके साथ ही आज तो वह गजब हुआ, जो कभी दुनिया की किसी लड़ाई में नहीं हुआ था कि पाकिस्तान के ३० टैंक हमारी सेनाओं ने छीन लिए सही सलामत। मोर्चे पर एक लतीफा आज आम सैनिक के मुंह पर था—"चलो भाई, हथियारों की कमी का खतरा तो रहा नहीं, क्योंकि उनकी भरपूर सप्लाई का ठेका तो हमारे दोस्त पाकिस्तान ने ले लिया है।"

हमारी सेनाओं ने पाकिस्तानी सेनाओं को किस बुरी तरह मसला, इस का पता दूसरे दिन चला, जब हल्का-सा बचाव करने के अलावा उन्होंने कहीं भी कोई प्रत्याक्रमण नहीं किया। इसका लाभ उठाकर हमारी सेना ने अपने मोर्चे अच्छे स्थानों पर जमा लिए और वे आगे बढ़ गईं। प्रधानमंत्री श्री शास्त्री ने चेतावनी दी कि पूर्वी क्षेत्र में छेड़छाड़ जारी रही तो इधर भी जवाबी हमला किया जायगा और हमारे दार्शनिक राष्ट्रपति डा. राधाकृष्णन ने एक ही वाक्य में हमारे आक्रमण का जीवनदर्शन कह दिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि "पाकिस्तान की सैनिक तानाशाही ने जो संघर्ष हम पर थोप दिया है, उसमें लोकतन्त्र का तकाजा है कि हमारी जीत हो, अन्यथा एशिया में स्वाधीनता का दीपक बुझ जाएगा।"

राष्ट्रसंघ के सेक्रेटरी जनरल ऊ थांत पाकिस्तान होकर दिल्ली आ गये। लड़ाई बन्द करने का उनका निवेदन जनरल अय्यूब ने ठुकरा दिया था और हमारे प्रधानमंत्री क्या उत्तर देते हैं इसकी तरफ दुनिया की निगाहें लगी हुई थी। कहूं, हमारी कूटनीति कसौटी पर थी और शास्त्री जी ने यह कहकर उसे खरा सिद्ध कर दिया कि हम युद्ध विराम के लिए तैयार हैं, यदि पाकिस्तान भी तैयार हो! इस उत्तर को सुनकर ऊ थांत विस्मय विमुग्ध रह गये और उन्होंने तिरछी आँखों और तिरछी मुस्कराहटों शास्त्री जी की तरफ देखा, जैसे बिना कहे ही कह रहे हों—यार, दीखते तो तुम यूं ही हो, पर हो घाघ! शास्त्री जी ने ऐसी बारीक मुस्कराहट फेंकी, जैसे बिना कहे ही कह रहे हों—यार, जो चाहे समझ लो।

राजधानी के राजनीतिज्ञ पत्रकार श्री रघुवीर सहाय ने दो वाक्यों में परिस्थिति का बड़ा ही परिपूर्ण चित्र खींच दिया—"यह सिर्फ ब्लैक आउट और खाइयों का अभ्यास ही नहीं, यह एक नई संकल्प शक्ति और निभ्रांति के युग में पदार्पण भी है" और "भारत को हर शर्त पर शांति ही चाहिए, ऐसा न होकर इस बार स्थिति यह है कि भारत को अपनी ही शर्तों पर शांति चाहिए।"

२४ घंटों में भारतीय सेना ने पाकिस्तान के और २४ टैंक तोड़ दिये और २१ मील लम्बी स्यालकोट-पसरूर लाइन पर कब्जा कर लिया और रेलों का आना जाना रोक दिया। इससे पाकिस्तान की फौजी सप्लाई में बाधा पड़ गई। अब हमारी सेना लाहौर की गर्दन पर बैठी हुई थी। पाकिस्तान के २८७ टैंक टूटने और ३८ हमारे कब्जे में आने पर अमरीका के युद्ध विशेषज्ञ इस परिणाम पर पहुंचे कि पाकिस्तान अब प्रतिरोध की शक्ति के अन्त पर आ पहुंचा है और उसका दम उखड़ रहा है। हमारे सैनिकों ने इस उखड़ते दम पर गहरी चोटें की और इच्छोगिल नहर को बर्की कस्बे से होकर पार कर लिया। इसका अर्थ था कि नहरी-पानी विवाद में भारत से प्राप्त ८० करोड़ रुपये से पाकिस्तान ने जो लाहौर में मेजिनो लाइन बनाई थी, उसमें भारतीय सेना ने बड़ी दरार डाल दी।

टूटे हुए पाकिस्तानी टैंकों की संख्या ३९१ पर पहुँच गई। इसका अर्थ हुआ कि पाकिस्तान टैंक शक्ति से हीन हो गया क्योंकि कुल ४०० टैंक उसके पास थे। इसके साथ ही उसके ६४ विमान नष्ट हुए। अपनी स्थिति को जनरल अयूब समझ रहे थे और इस स्थिति को भी कि बाहरी मदद के बिना अब वे नहीं टिक सकते, अपने दोस्तों के सामने वे गिड़गिड़ा रहे थे। सुरक्षा-परिषद युद्ध विराम के लिए आदेशात्मक प्रस्ताव तैयार कर रही थी और इसी पर उनकी निगाह लगी थी कि वातावरण में एक बिजली कौंध गई और लगा कि चीन मैदान में आ रहा है।

लाल बहादुर इन दि हॉट वाटर नाउ!

पाक-चीन साठ गाँठ!

ब्रिटेन चिन्तित!

अमरीका परेशान!

सुरक्षा परिषद युद्ध रोकने का आदेश दे!

१ सितम्बर १९६५ के अखबार इन शीर्षकों से थरथरा रहे थे।

क्या आज कोई नई बात हुई थी?

हाँ, चीन ने भारत को तीन दिन का अल्टीमेटम दे दिया था कि भारत ने सिक्किम की सीमा पर चीन की हद में घुसकर कुछ निर्माण किये हैं, चीनी और हिन्दुस्तानी प्रतिनिधि मिलकर उनकी जाँच करें—उन्हें तुड़वादें, जिन ३-४ तिब्बतियों को भारत में जबर्दस्ती रोक रखा है उन्हें वापस किया जाए और भारत के सिपाही चीन की जो भेड़ें उठा ले गये हैं, उन्हें वापस करें—उनमें एक भी कम न हो। यदि ये बातें न मानी गई, तो भारत को गम्भीर परिणाम भुगतने होंगे।

चीन को नेहरू जी ने बेशर्म दुश्मन कहा था। भारत के देहातों की कहावत है—लुच्चा सबसे उच्चा, तो यह सच है कि इस अल्टीमेटम से जो लहर भारत और संसार में फैली, वह भय और आतंक की लहर थी, पाकिस्तान के रेडियो पर एक प्रवक्ता ने कहा—लाल बहादुर इन दि हॉट वाटर नाउ! लाल बहादुर अब गरम पानी में यानी परेशानी में है।

गोल गुम्बद गूंज उठा, खुशी से, गर्व से, तालियों की गड़गड़ाहट से जब प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर ने संसद में कहा—"मौके का नाजायज फायदा उठा कर अगर चीन ने भारत पर हमला किया तो हम पूरी ताकत से उसका मुकाबला करेंगे। चीन और दूसरे भी यह बात साफ-साफ जान लें कि हम धमकी के सामने झुकने वाले नहीं हैं और अपनी आजादी तथा राष्ट्रीय अखंडता की रक्षा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिए हमारा संकल्प और हौसला पक्का है।"

एक वाटरप्रूफ कपड़ा होता है, एक शेमप्रूफ स्वभाव होता है। लगता है शास्त्री जी का व्यक्तित्व घबराहट प्रूफ है। काम का बोझ हो या परेशानियों का अम्बार, वे स्वस्थ मन से काम करते रहते हैं। दूसरों की बात को शांति से सुनने की और उन्हें अन्त तक सन्तुष्ट करने की वृत्ति भी उनमें अथक है। उनके दोनों स्वभावों का समन्वित रूप देश के सामने आगया, जब उन्होंने बताया कि हमने चीन को जवाब दे दिया है कि सब आरोप मन गढन्त हैं, फिर भी हम सम्मिलित जाँच के लिए तैयार हैं; क्योंकि हम चीन को लड़ाई में कूद पड़ने का कोई बहाना नहीं देना चाहते, जिसकी वह तलाश कर रहा है।

भय और अभय छूतिया होते हैं। शास्त्री जी की स्थिरता से भय की लहर धीमी पड़ गई, पर चीन का भारत पर नया आक्रमण ही संसार के चिन्तन का विषय था। क्या चीन युद्ध में कूदेगा? कूदेगा, तो उसके क्या फल होंगे? इस चिन्तन को पीकिंग रेडियो ने राह दिखाई; क्योंकि वह बराबर पाकिस्तान से कह रहा था कि उसे सुरक्षा-परिषद के युद्धविराम प्रस्ताव को ठुकरा देना चाहिए। भारत के राजनीति-चिन्तक इस परिणाम पर पहुँचे कि चीन चाहता है कि, युद्ध बन्द न हो, भले ही इसके लिए उसे लद्दाख सिक्किम में जूझकर आसाम के क्षेत्र में पाकिस्तान को नया मोर्चा खोलने के लिए अपनी सहायता देनी पड़े। यदि पाकिस्तान इतनी हिम्मत न करे और अपने को अकेला-असहाय महसूस कर सुरक्षा परिषद के सामने घुटने टेक दे, तो कम से कम ऐसी स्थिति पैदा की जाए, जिससे युद्ध विराम उस स्थिति में हो, जब पाकिस्तान का हाथ ऊंचा दिखाई दे रहा हो। पाकिस्तान इतना पिट चुका था कि उसे अब मरने से बचाने के लिए 'इज्जत से' बैठाना अनिवार्य था कि वह दम्भ से कह सके—इनके कहने से मान गया, नहीं तो—

सुरक्षा परिषद में प्रस्ताव पास हो रहा था और भारत के उत्तर ने बौद्धिक दृष्टि से चीन को संसार के सामने दिवालिया कर दिया था, खास कर शास्त्री जी के इस प्रश्न ने कि भारत द्वारा बनाये सैनिक संस्थान भारत की सीमा में हैं या तिब्बत की? यदि भारत की सीमा में हैं, तो चीन कौन है उनके बारे में पूछने वाला? और यदि वे तिब्बत की सीमा में हैं, तो किसी जांच की या भारत के सैनिकों की उन्हें तोड़ने के लिए क्या जरूरत है—चीन उन्हें खुद ही क्यों नहीं तोड़ देता?

चीन उलझ गया था अपने ही जाल में, इसलिए उसने भारत को दिए अल्टीमेटम में ७२ घंटे यानी तीन दिन की मोहलत बढ़ा दी। रक्षामंत्री श्री चह्वाण ने रेडियो पर देश को आश्वासन दिया कि पाकिस्तानी आक्रमण की तरह ही हमारी बहादुर सेनायें चीनी आक्रमण का भी मुकाबला करेंगी। सरकारी स्तर पर चीनी आक्रमण के बारे में जो कुछ कहा गया, उसमें यह बात बहुत अर्थ बोधक और प्रेरक थी कि आक्रमण करने पर चीन को पता चलेगा कि यह १९६२ नहीं १९६५ है। हमारे उप राष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन साहब का रेडियो भाषण बहुत शानदार था। उसमें एक बड़े राष्ट्र की ऊंचाई-गहराई थी और वह इतनी आत्मीयता से पूर्ण था कि सुनते सुनते यह नहीं लगा कि यह हमारे शासक की वाणी है, बल्कि लगा कि खानदान का बुजुर्ग हमसे बात कर रहा है। कहूं, वह दिमाग की नहीं, दिल की आवाज थी। उसका निष्कर्ष वाक्य था—"हम चीन की चुनौती का पूरी ताकत से मुकाबला करेंगे और दुनिया को गुलाम बनाने का उसका सपना कभी पूरा नहीं होने देंगे।"

चीनी सेना हमारी सीमा तक बढ़ आई थी और गोली चलाकर भड़काने की कार्रवाई कर रही थी। सिक्किम में हमारे राजनैतिक अधिकारी श्री अवतार सिंह ने कहा—"स्थिति बहुत ही नाजुक है।" हाँ, स्थिति नाजुक थी, पर भारत के जननेता और सेनानायक भयहीन मुद्रा में चीन को नया पाठ पढ़ाने के लिए उत्सुक तो नहीं, पर प्रस्तुत थे। जनता का मनोबल भी संतुलित था, भय की लहर उतर गई थी। उसकी प्रतिध्वनि श्री केशवदेव मालवीय की रेडियो वाणी में अपने पूरे जलाल के साथ सुनाई दी—"चीन ने आक्रमण किया, तो ऐसा कड़खा बजेगा कि चीन याद करेगा और दुनिया देखेगी।"

२० सितम्बर १९६५

सुरक्षा परिषद ने प्रस्ताव के रूप में भारत और पाकिस्तान को आदेश दिया कि वे २२ सितम्बर को दोपहर १२॥ बजे तक युद्ध बंद कर दें। यह आदेश पाकिस्तान के लिए ही था; क्योंकि भारत तो ऊथाँत के पत्र पर ही युद्ध विराम की स्वीकृति दे चुका था। प्रस्ताव पर २१ ता० की रात तक भी पाकिस्तान का जवाब नहीं मिला था। २२ की सुबह ही अमरीका की धूर्तता और पाकिस्तानी पक्षपात का अंतिम जाल हम पर फेंका गया कि ऊथांत ने हमारे प्रधान मंत्री को संदेश दिया कि पाकिस्तान युद्ध विराम न करे, तब भी भारत युद्ध रोक दे १२॥ बजे और पाकिस्तान इस पर भी गोली चलाये, तो भारत की सेना जवाबी गोली दाग सकती है। यह प्रस्ताव पाकिस्तानी डिक्टेटर को यह मौका देता था कि वह जनता से कहे कि जब भारत मोर्चे पर से भाग गया, हम तब हटे। शास्त्री जी ने तुरन्त उत्तर दिया—यह हरगिज नहीं हो सकता।

पाकिस्तान ने इसके तुरन्त बाद युद्ध विराम मान लिया और तब २२ सितम्बर १९६५ की रात में ३॥ बजे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध विराम हुआ। अब दोनों देशों की सेनाएं अपने अपने उस स्थान तक लौट जाएंगी, जहाँ वे ५ अगस्त १९६५ को थीं।

हमारे सैनिक अभियान का उद्देश्य था पाकिस्तान की फौजी ताकत का तोड़ डालना और उसमें बहुत दूर तक सफल रहे। पाकिस्तान को ४७१ टैंक खोने पड़े, जिनमें ३८ हमारे कब्जे में हैं और ७० विमान। इसमें सन्देह नहीं कि उसका सैनिक ढांचा चरमरा गया है और उसके सामने यह सवाल खड़ा हो गया है कि वह चीन की शरण ले या उसे छोड़कर फिर अमरीका के पैर पूजे।

चीन ने पीकिंग रेडियो पर अपना दिल बहलाया, यह कह कर कि भारत के सैनिक हमारी सीमा से हटते समय अपने ठिकानों को तोड गये हैं, इसलिए हमारी बात पूरी हो गई है।

प्रधानमंत्री श्री शास्त्री ने संसद में युद्ध विराम का विवरण देते हुए साफ कहा है कि वे चीन की ओर से सतर्क हैं और सीमा-सेनाओं को साफ आदेश है कि वे हमलों का पूरा जवाब दें और हमलावरों को मार भगाएं।

युद्ध लाभ का व्यापार अब संसार भर में कहीं नहीं रहा, फिर भी यह भारत के लिए वरदान सिद्ध हुआ कि इससे सुस्ती में चुस्ती आई, हमारा राष्ट्रीय आत्म विश्वास जागा और सैनिक, शासक और नागरिक के रूप में हमने ऐसे अनुभव पाए, जो हमें आगे संजीवनी का काम देंगे। कामना है कि हमारा देश उन अनुभवों से लाभ उठाने में सफल हो।○

श्री लाल बहादुर शास्त्री सर्वोच्च शिखर पर!

जुलाई १९६५ के 'नया जीवन' में कांग्रेस महासमिति के बंगलौर-अधिवेशन का विश्लेषण करते हुए मैंने लिखा था—

"निर्विरोध प्रधान मंत्री चुना जाना शास्त्री जी के लिए इंट्रेंस की परीक्षा थी, तटस्थता-सम्मेलन की यात्रा इंटर की परीक्षा थी, रूस-कनाडा-लंदन की यात्रा बी ए. की परीक्षा थी, तो बंगलौर की परीक्षा एम. ए. की परीक्षा थी और इस में वे टाप कर गए।"

भाग्य का चमत्कार है कि इस उल्लेख के तीसरे महीने में ही शास्त्री जी युद्ध का निर्णय और नेतृत्व कर डाक्टरेट भी पा गए और प्रतिष्ठा के सर्वोच्च शिखर पर पहुंच गये। यह शिखर था कांग्रेस दल द्वारा प्रधान मंत्री होते हुए भी राष्ट्र पुरुष के पद पर प्रतिष्ठित होना। यह अभिषेक १६ सितम्बर १९६५ को उस समय हुआ, जब एक बैठक में संसद के सभी दलों के नेताओं ने सब तरह के मतभेदों को भुलाकर शास्त्री जी को अपना अशर्त सहयोग देने का वचन दिया। इस क्षण ने शास्त्री जी की वाणी को राष्ट्र की वाणी बना दिया और उन के व्यक्तित्व को राष्ट्र का व्यक्तित्व। शास्त्री जी ने भी इसे खूब निभाया कि सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव पर अपनी सरकार का निश्चय सब दलों के नेताओं से परामर्श करने के बाद ही घोषित किया और इस तरह उस निर्णय को राष्ट्र का सर्व सम्मत निर्णय बना दिया। इस घटना ने हमारे देश के प्रजातंत्र को बहुत उत्तम स्वास्थ्य और बहुत बड़ा बल दिया और इसके लिए इतिहास उनकी वन्दना करेगा।

अपनी उसी टिप्पणी के अंत में मैंने लिखा था—

"बंगलौर ने कहा कि श्री कामराज १९६६ में भी कांग्रेस के अध्यक्ष होंगे और श्री शास्त्री १९६७ में भी प्रधानमंत्री। दोनों का अभिनन्दन, पर इस निवेदन के साथ कि कांग्रेस और देश की आंतरिक परिस्थितियां इतनी नाजुक हैं कि उन्हें तुरन्त न संभाला जाए, तो यह भी संभव है कि शासक दल के रूप में कांग्रेस के अंतिम अध्यक्ष श्री कामराज और अंतिम प्रधानमंत्री श्री शास्त्री जी हों। कामना है कि वे शंखधर और चक्रधर सिद्ध हों।"

पाकिस्तानी संग्राम और चीनी चेलेंज की संयुक्त ज्वाला में शास्त्री जी शंखधर भी सिद्ध हुए और चक्रधर भी। ताजमहल भारत राष्ट्र की आत्मा के सौन्दर्य का प्रतीक है और हल्दीघाटी जुझारु सामर्थ्य की। जवाहरलाल ताज महल के प्रतिनिधि थे और सरदार पटेल हल्दीघाटी के, पर जब श्री लाल बहादुर शास्त्री २३ सितम्बर १९६५ को रात में ८॥ बजे रेडियो पर बोल रहे थे मैं सोच रहा था लाल बहादुर जी के एक फेफड़े में ताजमहल का और दूसरे फेफड़े में हल्दीघाटी का निवास है और उनके व्यक्तित्व में जवाहर लाल और सरदार पटेल का समन्वय है।

हमने केवल युद्धविराम स्वीकार किया है और सुरक्षा-परिषद के प्रस्ताव में जो और बातें हैं, उन पर हमें गंभीर विचार करना है, यह कहकर शास्त्री जी ने जो कूटनैतिक पासा फेंका है, वह उनके शरीर की तरह ही छोटा, पर उनके व्यक्तित्व की तरह ही बड़ा है।

१९३० में गाँधी जी ने जवाहरलाल जी के बारे में कहा था—"जहाँ उनमें वीर योद्धा की तेजी है, वहाँ एक राजनीतिज्ञ का विवेक भी है ××× राष्ट्र उनके हाथ में सुरक्षित है।" ५ अगस्त से २३ सितम्बर १९६५ तक के संघर्ष ने राष्ट्र पिता के इन शब्दों को राष्ट्रनायक शास्त्री जी के मस्तक पर भी लिख दिया है, इसमें संदेह नहीं।

—कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

★

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२२ अक्टूबर १९६२ को भारत की सीमा पर बर्बर चीनी आक्रमण के समय तत्कालीन प्रधान मंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू द्वारा आकाशवाणी पर राष्ट्र को दिया गया सन्देश हमें आज भी संकल्प की प्रेरणा देने में समर्थ है !]

हम पक्के इरादे से आगे बढ़ें, इस भरोसे और इरादे के साथ कि हम दुश्मनों को मुल्क से भगा कर ही दम लेंगे !

श्री जवाहरलाल नेहरू

"मैं बहुत दिनों बाद आपसे रेडियो पर बोल रहा हूं, लेकिन इस वक्त मैंने बोलना जरूरी समझा, क्योंकि एक अहम हालत है और हमारी सीमा पर जबर्दस्त हमले चीनी फौजों ने किये हैं और करने जा रहे हैं। ऐसी हालत उठी है जिसका हमें पूरी ताकत से मुकाबला करना है। हम इस देश में अमन-पसन्द हैं और शांति के तरीकों के आदी हैं। हम नहीं आदी हैं लड़ाई की जरूरियात के। इसी वजह से और भी वजूहात हैं जो हम शांति के रास्ते पर चल रहे हैं। जब लद्दाख पर पांच बरस हुए, हमला हुआ था, उस वक्त भी हमने कोशिश की कि कोई शांति का तसफीया हो जाए और ऐसा कोई रास्ता मिले। सारी दुनिया में हम शांति चाहते थे और जाहिर है, अपने मुल्क में भी चाहते थे। हम जानते हैं कि आजकल के जमाने में लड़ाई कितनी भयानक है और हमने पूरी तरह से कोशिश की कि कोई ऐसी लड़ाई, जो दुनिया को डुबो दे, वह न हो, लेकिन हमारी कोशिशें हमारी सरहद पर कामयाब नहीं हुई, जहाँ एक बहुत ताकतवर और बेशर्म दुश्मन जिसको जरा फिक्र न शांति की थी, न शांति के तरीकों की, उसने हमको धमकी दी और उस धमकी पर अमल भी किया। इसलिए वक्त आ गया है कि हम इस खतरे को पूरी तौर से समझें और बावजूद इसके कि मुझे पूरा इतमीनान है कि कोई ताकत ऐसी नहीं है जो हमारी आजादी को हमसे छीन सके, आखिर में, जिस आजादी को हमने इतनी मुसीबत से, मेहनत से और त्याग से हासिल किया और बाद बहुत जमाने के जबकि हमारा मुल्क औरों की गुलामी में था, लेकिन इस आजादी को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और मुल्क के हर हिस्से को मुल्क में रखने के लिए हमें पूरी तैयारी करनी है, कमर कसनी है और उस खतरे का सामना करना है जो इस वक्त सबमें बड़ा खतरा हमारे सामने आया है, जब से हम आजाद हुए हैं। मुझे कोई शक नहीं कि हम कामयाब होंगे और हर और चीज का उसके बाद में नम्बर है, क्योंकि सबमें अव्वल चीज हमारे मुल्क की आजादी है और हमें तैयार होना चाहिए। हर चीज को हम इस पर न्योछावर कर दें।

एक बात मेरी राय में तय है और वह यह कि आखिरी नतीजा इस मुकाबले का हमारे हक में होगा और कोई हो नहीं सकता। जब हिन्दुस्तान जैसा मुल्क अपनी आजादी के लिए लड़ता है। हमें एक जबर्दस्त मुल्क का सामना करना है, जो बहुत जाब्तों में नहीं पड़ता। हमें उसका सामना मजबूती से करना है, अपने ऊपर भरोसा करके।"

लड़ाई लम्बी चलेगी

"यह झगड़ा मालूम नहीं कितने दिन चले, लम्बा हो सकता है। हमें उसके लिए अपनी तैयारी करनी है, दिमाग से और दिल से, अपने ऊपर भरोसा हमें करना है क्योंकि मुझे इत्मिनान है कि हमारे भरोसे से और अपनी तैयारियों से हम आखीर में जीतेंगे और कोई नतीजा हो नहीं सकता।"

"तो हम पक्के इरादे से आगे बढ़ें, इस भरोसे और इस इरादे से कि हम अपने मुल्क से, जो लोग उस पर हमला करके आए हैं, उनको हटा देंगे। हमें इस वक्त करना क्या है? सबसे पहले तो अपने दिल को और दिमाग को मजबूत करना है और एक लोहे की तरह से बनाना है और मुल्क की ताकत को एक तरफ लगाना है, यानी उसका सामना करने को जो मुसीबत हमारे ऊपर आई है। हमें नए तरीके से काम करने हैं, जो कि तेजी से हो सके और हल्के-हल्के जैसे अब होते हैं, वो न रहें। हमें अपनी फौजी ताकत बढ़ानी है, लेकिन फौजी ताकत काफी नहीं है, इसके पीछे मुल्क का सारा काम है, इण्डस्ट्री है, खेती है और मैं सबों से दर्खास्त करूंगा, जो हमारे काम करने वाले भाई-बहन हैं कि इस मौके पर अपनी पैदावार बढ़ायें, कोई हड़ताल वगैरह न करें। गाँवों में, खेतों में और कारखानों में, दोनों जगह हमें अपनी पैदावार खूब बढ़ानी है। इस मौके पर कोई कौम के खिलाफ, मुल्क के खिलाफ या खुदगर्जी की कार्यवाही बर्दाश्त नहीं हो सकती है, जबकि मुल्क खतरे में है।

हम एक बड़ा बोझा उठाना है, हम सबों को, चाहे हमारा पेशा कुछ भी हो। आजादी की कीमत पूरे तौर से देनी होती है और कोई कीमत जरूरत से ज्यादा नहीं है, जबकि हमारे मुल्क की आजादी और हमारे लोगों की आजादी का सवाल हो। मैं आशा करता हूँ कि सब हमारे मुल्क के दल जो हैं, पार्टियां हैं और गिरोह हैं, वे सब मिल जायेंगे और अपने आपस के झगड़ों को बन्द करेंगे। इस वक्त मौका आपस की बहस और झगड़े का नहीं है। हम सबको मिलकर सामना करना है खतरे का, जो मुल्क के सामने आया है। बोझा बहुत हमारे ऊपर आने वाला है। हमें अपना पैसा बचाना है और उसको सेविंग्स में, पोस्ट आफिस में, 'बाण्डस' में देना है ताकि हमारे पास रुपया आए अपनी रक्षा के लिए और जो चीजें हम बनानी हैं, उनके लिए। अगर कोई कीमत बढ़ती है, तो हमें उसे रोकना है। यह बहुत नामुनासिब बात है, गलत बात है, कोई आदमी मुल्क के खतरे के वक्त अपना खुद फायदा उठाने की कोशिश करे।

अव्वल चीज यही है कि हम सारे अपने दिमाग को दिल को मजबूत करके ढालें आजादी के लिए। हमारी जो ताकत है, वह मजबूत हो और हम जोरों से काम करें।

"हम नहीं कह सकते कि कितना वक्त इसमें लगेगा। जब तक हम नहीं जीतें, हम इस लड़ाई को चलायेंगे, क्योंकि कुछ भी हो, हम कभी सर नहीं झुका सकते, दुश्मन के हमारे सामने। हमें कोशिश करनी है, घबराना नहीं है। घबराये हुए लोग कुछ ठीक काम नहीं कर सकते। घबरायें हम क्यों? हमारे पीछे एक बड़े मुल्क की ताकत है। इसमें हमें खुश होना है, इस ताकत को हमें आज का जो सबसे बड़ा काम है, उसमें लगाना है, यानी भारत की आजादी और उसकी जमीन कोई छीन न सके और जो उस पर हमला करे, उसको हटाना है। इस वक्त हमें उसका सामना मजबूती से करना है। महज अफवाहों पर आप यकीन न कीजिए और जिनके दिल कमजोर हों, न उनका कीजिए। हमारा इम्तिहान है। मुमकिन है, हम कुछ जरा ढीले से हो गये थे। हमें सख्त हो जाना है।

एक बात और, हमने अब तक इस नीति पर अमल किया था कि किसी फौजी गिरोह में नहीं जायेंगे-दोस्ती सबों से करेंगे। अब भी वही हमारी पालिसी रहेगी, क्योंकि बुनियादी पालिसी छोड़ देना, किसी दिक्कत से, ठीक नहीं है, बल्कि उसे रखने से ही हम कामयाब होंगे। मैं आपसे चाहता हूँ कि आपका और हमारे देश का भला हो और हम लोग हमेशा अपना सिर ऊंचा रखें और पूरा इतमीनान रखें अपने देश के भविष्य में। जयहिन्द!" ○

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर
साहूपुरम् में
डाकखाना : आरमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक
धांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल
फोर्ट, बम्बई – १

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

शिलाओं, पेड़ों की छाल, जानवरों की खाल अथवा धातुओं के टुकड़ों की लिखावटें सभ्यता के उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

ROHTAS

SARAJAN INDUSTRIES

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक—अखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स, सहारनपुर में मुद्रित-प्रकाशित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

सांस्कृतिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक
राष्ट्रीय चेतना का प्रेरक मनोरंजक मासिक

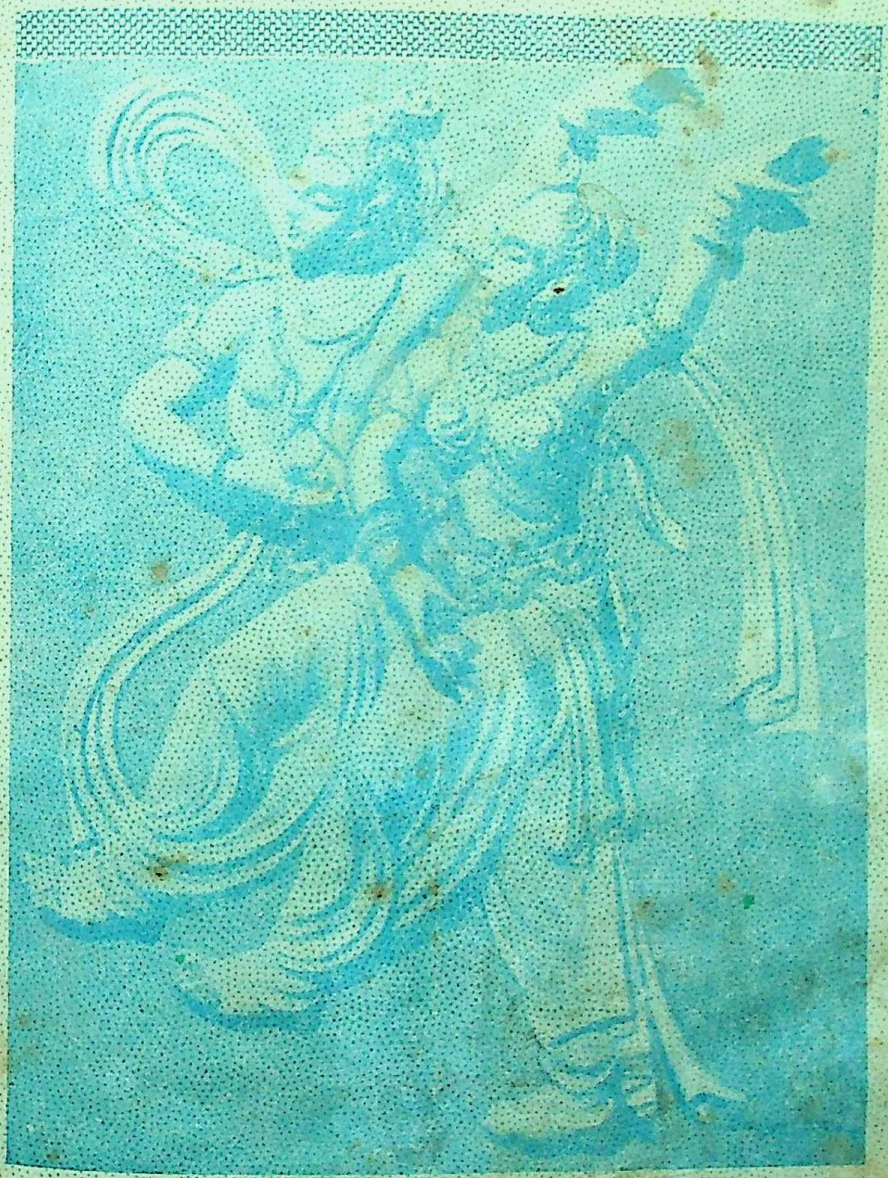

[illegible] ठीक जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
[illegible] के लिए साप्ताहिक [illegible] है,
[illegible] बनाने के लिए मासिक आवश्यक है,

'नया जीवन' में
दैनिक-साप्ताहिक-मासिक की इन विशेषताओं का समन्वय है।
आप उसका एक अंक देख कर ही इस के ग्राहक हो जाएंगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज के एक छोटे पुर्जे पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी।
अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है!

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज के बिना न
शास्त्र मिलते न साहित्य।
कागज हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागजों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हमें अपने सारे भेद-भाव भूल कर, एक होकर, संकट का मुकाबला करना है"

— लाल बहादुर शास्त्री

- सब भाई-भाई की तरह रहें;
- अपने पड़ोसी के जान-माल और धर्म की रक्षा करें;
- न अफ़वाह सुनें, न फैलायें.

विजय अवश्य हमारी होगी

•

डी ए ६५/३०७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–
उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।
आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है !

★

कोशिश कीजिये–
कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!
श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–
अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,
शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं
तीनों को सदा ध्यान में रखिए !
खड़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत
एवं
भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के
निर्माता—
लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स
सहारनपुर : उत्तर प्रदेश
रजिस्टर्ड आफिस : चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—३१६, ३६४, १४०

प्रबन्धक
सेठ कुलदीप चंद बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दुस्तान

जहाँ करोड़ों लोग शांति के एक सूत्र में बंधे हैं।
जहाँ अनेक धर्म और सम्प्रदाय एक संस्कृति में गुंथे हैं।

ऐसा उदार और मिला-जुला है हमारा यह भारतीय समाज। इसे सुरक्षित रखने के लिए कौन अपना सर्वस्व न्यौछावर करने में पीछे रह सकता है। याद रखिए, इस समाज में जो आपका स्थान है, वही है आपके पड़ौसी का।

एक महान देश हमारा
एक महान राष्ट्र

DA 65/F4

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित यह साहित्य
आपके पुस्तकालय में न हो तो इसे तुरन्त मंगा लीजिये !

★ जिन्दगी मुस्कराई ४.०० रु०
★ बाजे पायलिया के घुंघरू ४.०० रु०
★ दीप जले शंख बजे ३.०० रु०
★ महके आँगन चहके द्वार ४.०० रु०

(नई स्फुरणा के साथ जीवन को चमकाने वाली चारों पुस्तकें)

★ माटी हो गई सोना २.०० रु०
बलिदान की चेतना से पूर्ण १७ अमर अक्षर चित्रों का संग्रह

★ आकाश के तारे धरती के फूल २.०० रु०
जीवन की गहराई, लोच और गति से भरपूर अनोखी लघु कथाएँ

★ क्षण बोले कण मुस्काए ४.०० रु०

लेखक की विशिष्ट शैली का प्रतिनिधित्व करने वाले
ललित एवं मनोरंजक निबंधों का नव प्रकाशित संग्रह

प्रकाशक:—

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुंड, वाराणसी

विक्रय केन्द्र ३६२०/२१ नेता जी सुभाष मार्ग, दिल्ली—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापित १९५५ शिलान्यास : राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद द्वारा

संस्थापक : मान्य श्री अजित प्रसाद जैन (राज्यपाल केरल)

सेवा निधि किदवई अपंग आश्रम

मूक वधिर विद्यालय

प्रद्युमन नगर : सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

मानव भगवान की अद्भुत रचना है। अनेक रूपा उसकी इस विश्व रचना में कुछ ऐसे मानव-पुत्र भी हैं जिनकी स्थिति एक दागदार मूर्ति जैसी है ! ऐसे मानव- पुत्र ही तो अपंग कहे जाते हैं।

क्या अपंग व्यक्ति हमारी दया और करुणा के पात्र हैं ? शायद नहीं। आखिर हम उन्हें 'बेचारा' मानकर उपेक्षित क्यों समझें। आवश्यक यह है कि वे सामान्य नागरिक की भांति स्वाभिमानी एवं शिक्षित ही न हों, अपितु जीविका-उपार्जन में भी समर्थ एवं तत्पर हों।

इसी पवित्र उद्देश्य से उत्प्रेरित होकर आपकी यह अपनी संस्था १९५५ से कार्यरत है। इस संस्था में गूंगे-बहरे बालक बालिकाएँ अपने व्यक्तित्व के विकास की सभी सम्भावनाओं का अन्वेषण और सम्पादन करते हैं।

संस्था में लगभग ४५ छात्र-छात्राएं तथा ५ प्रशिक्षित अध्यापक हैं। दूर नगरों से आने वाले छात्र-छात्राओं के लिए अलग-अलग, साधन सुविधाओं से पूर्ण दो छात्रावासों की व्यवस्था है, जिनकी देखभाल एक सुयोग्य मैट्रन द्वारा की जाती है। कक्षा ७ तक शिक्षा देने के साथ-साथ लकड़ी का काम, मोमबत्ती निर्माण और सिलाई- कढ़ाई का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

यदि आपकी दृष्टि-सीमा में कोई गूंगा बहरा बालक-बालिका हो, तो कृपया उसे हमारी संस्था के द्वार तक पहुंचा कर अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक दायित्व का पालन कीजिए।

यह संस्था सदैव आपके स्नेह एवं संरक्षण की आकांक्षा करती है। विशेष जानकारी के लिये लिखें।

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द्र बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने आपको और अपने परिवार

को

चेचक

से बचाइये !

परिवार के सब सदस्यों को

हर तीन साल बाद टीका लगवाते रहिए

अधिक जानकारी के लिए अपने स्वास्थ्य अधिकारी से पूछ-ताछ कीजिए

राष्ट्रीय चेचक उन्मूलन कार्यक्रम, स्वास्थ्य मंत्रालय, भारत सरकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रूरी जानकारी

- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य पाँच रुपये औरसाधारण प्रति का पचास पैसे है। विशेषांक का मूल्य पृथक, जो ग्राहकों को वार्षिक मूल्यमें ही मिलताहै।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और अपनी प्रत्येक रचना पर अन्त में अपना पूरा नाम-पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह प्यार-मान दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें। ३ महीने के भीतर आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाएं, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या लिखने की आवश्यक प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीज़ों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता—'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक

नया जीवन' • सहारनपुर • उ० प्र०

नया जीवन

विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

•

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

निदेशक

अखिलेश

सम्पादक-संचालक

•

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमागी ऐय्याशों का फालतू समय चैन से काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें य!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं!

•

अक्तूबर १९६५

संचालक

विकास लिमिटेड
सहारनपुर • उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

अता-पता
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़ाई छिड़ी	श्री ब्रज किशोर 'नारायण' कच्ची तालाब, नया यारपुर, पटना-१	२९९
अमृतसर : वह रात : यह रात	कुमारी वीरेन्द्र सिन्धु, एम. ए. भगतनिवास, प्रद्युम्ननगर, सहारनपुर	३००
लो, यह चौथा सपना भी टूट गया	कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'	३०१
हम फिर राम की युद्ध नीति पर पहुँचे	,, ,,	३०४
इस युद्ध में हमें नेता मिला	,, ,,	३०६
हमारा प्रचारतन्त्र सुव्यवस्थित हो	,, ,,	३११
युद्ध के सम्बन्ध में जनता के कुछ प्रश्न	,, ,,	३१४
कश्मीर में युद्ध के सात दिन	श्री बलराज साहनी, बम्बई	३२५

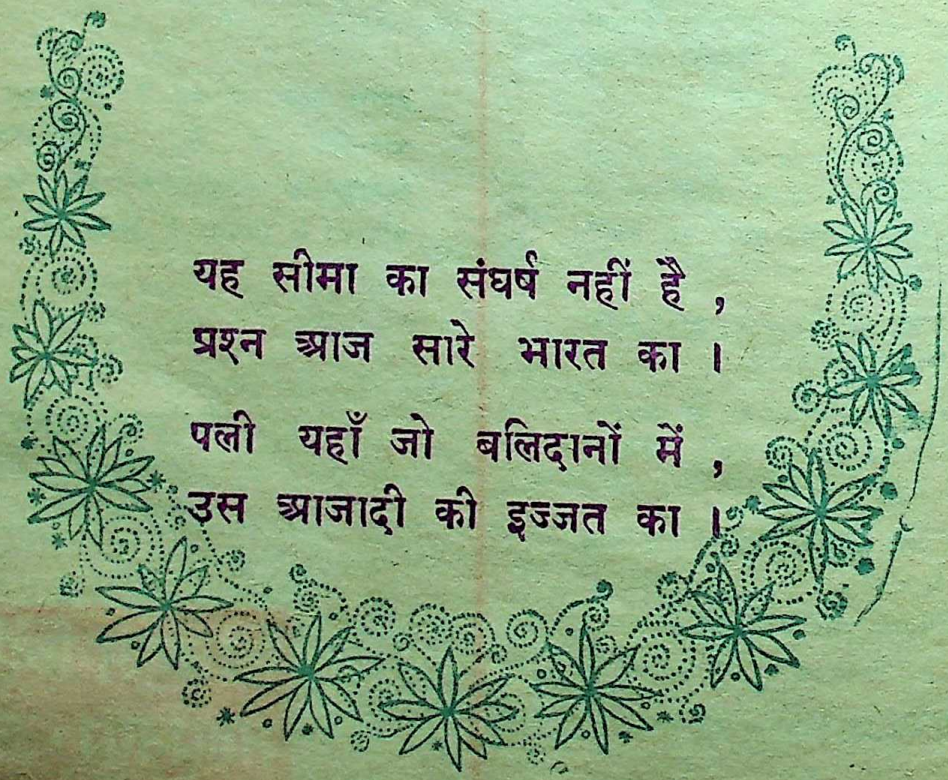

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लड़ाई छिड़ी

श्री ब्रज किशोर 'नारायण'

◇

पिछले दिनों
हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में
जैसे ही लड़ाई छिड़ी !
और, हमारी साहसी सेना
दरिन्दे दुश्मन से भिड़ी !
कि ढाका से उसके जंगी लाट साहब ने
घनघोर घोषणा की कि
वे भारत का अभिमान
चुटकी बजाकर चूर-चूर कर देंगे !
और पिण्डी से उसके विदेश-मन्त्री ने
भिण्डीनुमा ऐलान किया कि
वे हजार सालों तक
जंग जारी रखेंगे !
और, पन्द्रह दिनों में
जितना कुछ गँवा दिया है
उसी हिसाब से
हजार बरस तक की भी तैयारी करेंगे !!
उसके सदर साहब तो
दो क़दम और आगे आए !
और, फरमाया कि
वे टहलते हुए ही
दिल्ली तक पहुंच जाएँगे !
और, हमें भी उनकी इस बात पर
उस चूहे की याद आई
जिसने अपनी चहकदार चुहियों के सामने
बड़ी कड़ी कसम खाई थी कि
वह जो भी हो
वह भी हर हालत में
दिल्ली तक जरूर पहुंच जाएगा !!
और, उस पर जिस हालत का हादसा गुजरा
उसे कौन नहीं जानता ?
और गीदड़ों-अनाड़ियों के
उधार लिये गए अभेद्य पैटन टैंकों
और जबरजंग सेबर जेटों पर
हमारे जाँ बाज शेरों ने
जो क़हर बरपा की
उसका लोहा कौन नहीं मानता ???
मगर, उधर दुश्मन का एक दोस्त
जो उत्तर में बैठा है
और, अपनी उतर चाल पर ऐंठा है कि
जो चिनगारी अमरीका ने
उसे जलाने के लिए सौंपी थी
उसे उसने भारत के ज्वालामुखी में ही
खत्म करा दिया !
और पाकिस्तानी लाशों से ही
अपना गहरा गड्ढा
बात की बात में भरा लिया !
भारत की इस अकल्पित जीत से
अगर किसी को सबसे
करारी हार हुई
तो हमारे पुराने आका—ब्रिटेन की हुई !
क्योंकि, उसने इस देश के दो टुकड़े
इसलिए कराए थे कि
एक न एक दिन इसकी हस्ती ही मिट जाएगी !
और, अहिंसा से आजादी लेने की गोटी
देखते ही देखते
बुरी तरह पिट जाएगी !!
मगर, दुश्मनों के साथ-साथ
उसे भी शायद
यह याद नहीं रहा कि
भारत के तिरंगे के नीचे
अशोक-चक्र में जो सिंह हैं
उनका मूक
मगर गम्भीर गर्जन क्या है ?
वह है :—
"सत्यमेव जयते !
सत्यमेव जयते !!
सत्यमेव जयते !!!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध के मोर्चों पर बहुत लोगों ने लिखा है, [illegible] अधिकतर पत्रकार थे, इसलिए उनकी लिखाई प्रायः विवरण बन कर रह गई है, विवरण; जिसमें बौद्धिक जानकारी की प्रबलता है, हृदय का स्पर्श नहीं—यह साहित्यकार का कार्य है।

यहाँ प्रस्तुत है एक उदीयमान साहित्यकार का लिखा मर्मस्पर्शी रिपोर्ताज। हाँ, उदीयमान साहित्यकार, जिसका जन्म ही बलिदानों के मेले में हुआ और जिसने लोरियां ही बलिदान की नहीं सुनी, बलिदान में जीवन जिया, बलिदान को भोगा-सहा—कुमारी वीरेन्द्र सिन्धु; जीवित शहीद सरदार अजीतसिंह, सरदार किशनसिंह, सरदार भगतसिंह, सरदार कुलबीरसिंह और सरदार कुलतारसिंह की परम्परा में नवीन मुक्तामणि—जिसकी कलम में रक्त और अनुरक्ति की झिलमिल आभा है और जिसका भविष्य उसे पुकार रहा है।

•

अमृतसर :: वह रात :: यह रात

कुमारी वीरेन्द्र सिन्धु, एम. ए.,

लेखिका

१५ अगस्त १९४७ के बाद की पीढ़ी को देश के स्वाधीनता संग्राम में भाग लेने का कोई अवसर नहीं मिला। न उसने अपनी आंखों से उस महान संघर्ष को देखा ही है। पुरानी पीढ़ी ने दम घोटने वाले गुलामी के बोझ को राष्ट्र के कंधों से उतार कर फेंक दिया। स्वतंत्रता की बहुमूल्य थाती हमारे हाथों में सौंपने के लिए उस पीढ़ी ने तप, त्याग और बलिदान का सहारा लिया।

यह प्रश्न मानसिक संकीर्णता का बोधक होगा कि देश को स्वतन्त्रता अहिंसा से मिली या हिंसा से? मेरा जन्म ऐसे परिवार में हुआ, जो तीन पीढ़ियों तक हिंसात्मक क्रांति की होली जलाता रहा। मेरे परिवार से देश भर के हिंसात्मक क्रांतिकारियों का पारिवारिक सम्बन्ध रहा। स्वाभाविक है कि मैंने इस क्रांति के पुरोहितों को बहुत पास से देखा, जाना पहचाना। वे कैसे थे क्या कहूं यहाँ? इतना अवश्य कि उनका स्मरण भी जीवन में बगावत की चिनगारियां उठा देता है। निश्चय ही वे लोग देश के लिए सर्वस्व समर्पण करने वाले वीर थे और इतिहास उनकी वंदना से कभी बाज नहीं आयेगा।

इस धारा के साथ ही अहिंसा की वह धारा है, जिसमें दादा भाई नौरोजी, गोखले, तिलक, सी. आर. दास जैसे देशभक्त हैं और जिसकी पूर्णता जवाहर लाल नेहरू और गांधी जी में हुई है। गांधी जी तो इस धारा के विश्व-अवतार ही हो गए। ऐतिहासिक ढंग पर दोनों के कामों की नाप जोख हो यह उचित है, पर एक को उठाकर कोई दूसरे को गिराने का प्रयत्न करे, तो यह कठमुल्लापन ही होगा।

हाँ, यह कहना यथार्थ का उद्घोष ही है कि स्वतन्त्रता पाने के बाद नई पीढ़ी के मानस को न अहिंसात्मक ढंग से ही दीक्षित किया गया, न हिंसात्मक ढंग से ही। उसे यह बताया ही नहीं गया कि बलिदानों से ही स्वतंत्रता की देवी रीझती है और वे यह न भूलें कि स्वतन्त्रता को सुरक्षित रखने के लिए सदैव नए बलिदानों के लिए तैयार रहना चाहिये। इस वास्तविकता को सदैव पीछे धकेला गया। इसी का परिणाम यह हुआ कि विदेशों के सम्पन्न नगरों से आने वाला फैशन और राष्ट्र की नसों में विष फैलाने वाले आलस्य, विलासिता और अनुशासनहीनता के दुर्गुण ही मानों हमारे राष्ट्रीय जीवन के मूल सूत्र बनगये,

(कृपया देखिए पृष्ठ ३२१)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

अगस्त भारत का मुहूर्त मास है।

"मुहूर्त मास ? कैसा मुहूर्त मास ?"

ऐसा मुहूर्त मास कि इस महीने में भारत अपने इतिहास के नये अध्याय का आरम्भ करता है।

"नया अध्याय ? कैसा नया अध्याय ?"

ऐसा नया अध्याय कि १ अगस्त १९१९ को तिलक महाराज इस संसार से विदा हुए थे और गाँधी जी का नया अध्याय आरम्भ हुआ था। फिर अगस्त में 'भारत छोड़ो' का नारा लगा था और १९४२ की महान क्रांति का अध्याय आरम्भ हुआ था। तब आया था १५ अगस्त कि स्वतन्त्रता का आरम्भ हुआ था और अब आया ५ अगस्त १९६५ से आरम्भ होने वाला भारत - पाकिस्तान युद्ध, जिसने हमारे देश के इतिहास को ऐसा मोड़ दिया कि युगों तक उसका प्रभाव ताजा रहेगा और वह प्रभाव हमारे देश को नया जीवन देने में समर्थ होगा।

"क्या है वह नया मोड़ और क्या है उसका प्रभाव ?"

ठीक है, उस मोड़ को और उस प्रभाव को समझने की जरूरत है; क्योंकि हम उसे समझ कर ही उसका सदुपयोग कर सकते हैं और न समझें तो स्वयं हमारे द्वार आया वरदान निराश होकर लौट भी सकता है। तो आइये, इस युद्ध के अर्थों और फलितार्थों की गहराई में उतरें।

लो, यह चौथा सपना भी टूट गया !

卐

❀ काश्मीर कुदरत का सपना है-एक हसीन और दिलचस्प सपना।

❀ ऐसा सपना कि उसे देखकर बहुतों के मन में नए-नए सपने जाग उठते हैं।

❀ ऐसे सपने कि उन्हें देखने के बाद फिर कुछ और दिखाई ही नहीं देता —सावन के अंधे को हरा हरा सूझता है।

❀ काश्मीर के बारे में ऐसा नशीला सपना हमारे नए इतिहास में सबसे पहले काश्मीर के महाराज सर हरिसिंह ने देखा था।

❀ वह सपना था काश्मीर-का किंग कैन्यूट बनने का, किंग कैन्यूट, जिसे वहम हो गया था कि मेरा हुक्म कोई नहीं टाल सकता। इसी वहम में एक दिन वह समुद्र के किनारे सिंहासन बिछा जा बैठा और उसने समुद्र को हुक्म दिया कि वह आगे न बढ़े, पर समुद्र ने थोड़ी ही देर में उसे अपने ज्वार की लपटों में लपेट लिया।

इस घोषणा के बाद भी कि पाकिस्तान की सत्ता मुस्लिम लीग को और हिन्दुस्तान की सत्ता कांग्रेस को सौंपी जाएगी, यह साफ नहीं था कि इन राजा-नवाबों का क्या होगा ? ये लोग इंगलैंड के बादशाह से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुई पुरानी संधियों के भरोसे सपने देख रहे थे कि वे अब हिन्दुस्तान की सरकार के साथ नई संधि कर ज्यों के त्यों रह जाएँगे। २५ जुलाई १९४७ को वायसराय लार्ड माऊंट बैटन ने हिन्दुस्तान के राजा नवाबों से अपने महल में जो सामूहिक मुलाकात की उसमें साफ कह दिया कि राजा लोग भारत-संघ में इस समय सम्मिलित न हुए, तो यह सुनहरा मौका उन्हें फिर कभी न मिलेगा।

राजा-नवाबों को अपनी संधियां याद आ गईं, तो माऊंटबैटन ने कहा—१५ अगस्त के बाद इंगलैंड के बादशाह के प्रतिनिधि-वायसराय-के रूप में मैं उनकी ओर से मध्यस्थता नहीं कर सकूंगा। इसके साथ ही यह कह कर उन्होंने राजा नवाबों की वीरता की भंडांस भी ठन्डी कर दी कि आपके पुराने हथियार बेकार हैं।

माऊंट बैटन के प्रेस-सचिव ऐलन कैम्पवेल जानसन ने इस सभा को ऐसे पुश्तैनी गडरियों की सभा कहा था, जो अपनी भेड़ों को खोकर बड़ी दयनीय स्थिति में पड़ गए हैं। इन्हीं में एक गडरिया था काश्मीर का महाराजा, जिसे 'निर्णय न कर सकने की पुरानी बीमारी' थी। १९२५-२६ में यह एक पैरिस परी से खेलता रहा और जब उसने इनसे अपना अधिकार मांगा, तो यह भारत भाग आया। उस स्त्री ने वायसराय से शिकायत की। अखबारों में खूब पगड़ी उछली और बड़ी मुश्किल से यह गद्दी से गिरते-गिरते बचा। अब यह पैरिस-परी की जगह हकूमत-परी के इश्क में मुब्तिला था और अनिर्णय में झूल रहा था। संघ प्रवेश की अन्तिम तारीख से तीन दिन पहले सितम्बर १९४७ में इसने भारत और पाकिस्तान से समझौता किया कि काश्मीर अभी ज्यों का त्यों रहेगा—न भारत में मिलेगा, न पाकिस्तान में, यानी काश्मीर का किंग कैन्यूट मैं ही रहूंगा, वह मेरे ही इशारों पर नाचता रहेगा।

२३ अक्टूबर १९४७ को हजारों पाकिस्तानी कबायलियों और फौजियों ने मुजफ्फराबाद और दोमेल पर खून खराबी के साथ कब्जा कर लिया और वे राजधानी श्रीनगर से कुल ३५ मील रह गए। २५ अक्टूबर की रात में महाराजा ने घबराकर भारत में काश्मीर प्रवेश-पत्र पर दस्तखत कर काश्मीर छोड़ दिया और इस तरह उनका सपना टूट गया।

(२)

उनका सपना जब पूरे जलाल पर था, तभी एक नए सपने का जन्म हो गया था। यह सपना पाकिस्तान के गवर्नर जनरल कायदे आजम मुहम्मद अली जिन्ना का सपना था कि इस बार की ईद खारे समुद्र की बड़बड़ाती लहरों के किनारे कराँची में नहीं, फलों फूलों और बर्फीले, हरियालियों से लहराते काश्मीर में मनाई जाए।

उधर भड़काए हुए कबायली और सधाये हुए फौजी काश्मीर में घुसे और इधर कायदे आजम उड़कर ऐबटाबाद के राजभवन में आ बैठे। उनकी देह ऐबटाबाद में थी, पर आत्मा डल झील में सजे हुए शिकारे पर सैर कर रही थी। सपना ही तो था आखिर।

इस सपने की रीढ़ माऊंट बैटन की धूर्ततापूर्ण राजनीति थी—कहूं इंगलैंड की धूर्ततापूर्ण राजनीति। माउंट बैटन जब जून में काश्मीर गए, तो महाराजा से कह आए थे कि वे बिना अपनी प्रजा का मत लिए न भारत में शामिल हों, न पाकिस्तान में। एक महत्वपूर्ण बात यह है कि काश्मीर में सरदार पटेल की बहुत दिलचस्पी नहीं थी। वे केन्द्रित थे हैदराबाद में, क्योंकि हैदराबाद की जनगणना फ्रांस के बराबर—पौने दो करोड़—थी और वह हमेशा के लिए भारत के पेट का फोड़ा बन सकता था। महाराजा के यथास्थिति समझौता करते ही सरदार के रियासती सचिवालय ने कश्मीर से हाथ खींच लिया था और साफ कह दिया था कि काश्मीर का पाकिस्तान में शामिल होना भारत में गलत नहीं समझा जाएगा।

जिन्ना इस बात से परिचित थे और इस बात से भी कि भारत के स्थल सेनाध्यक्ष लाकहार्ट अंग्रेजी राजनीति के अनुसार भारत द्वारा फौजी कार्यवाही का समर्थन न करेंगे और न लार्ड माउंट बैटन ही। जिन्ना की भांप ठीक थी, दोनों ने उपदेशों के अम्बार लगा दिए, पर कबायलियों के आक्रमण और संघ के प्रवेश पत्र पर हस्ताक्षर होते ही सरदार शेर की तरह बिफर गया। उसने माउंटबैटन की एक नहीं सुनी और लाकहार्ट से छीन कर काश्मीर की कमान जनरल करिअप्पा को सौंप दी। २७ अक्टूबर की सुबह ही सुबह प्रथम सिख बटालियन के तीन सौ सिपाही जब श्रीनगर के हवाई अड्डे पर उतरे, तो पाकिस्तानी कबायली श्रीनगर से कुल चौबीस मील दूर थे।

जिन्ना का सपना उसके घमंड की टंकोर से झन्ना उठा और उसने स्थानापन्न सेनापति जनरल ग्रेसी को हुक्म दिया—पाकिस्तान की फौजी ताकत के साथ काश्मीर पर टूट पड़ो। फौजी अनुशासन के अनुसार ग्रेसी ने कहा—सर्वोच्च सेनापति के आदेश के बिना मैं युद्ध आरम्भ नहीं कर सकता। जिन्ना ने इतने जोर से दाँत भींचे कि उनका हड़ोंच चेहरा कंकाल की तरह डरावना हो उठा। जनरल ग्रेसी के बुलावे पर सर्वोच्च सेनापति सर आचिनलेक कराची से एबटाबाद आए। उन्होंने जिन्ना की कैंची से ही जिन्ना के हुक्म की पतंग काट दी। उन्होंने समझाया कि कायदे आजम जूनागढ़ के नवाब द्वारा अपनी रियासत को पाकिस्तान में शरीक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने पर बार बार कह चुके हैं कि प्रजा के धर्म और मत की उपेक्षा कर शासक को किसी भी देश में शरीक हो जाने का अधिकार है। काश्मीर के राजा प्रवेश-पत्र पर हस्ताक्षर कर चुके हैं, इसलिए भारत की कठिनाई वैधानिक है। फिर पाकिस्तान से फौज में भारत ताकतवर है। युद्ध में पाकिस्तान की हार निश्चित है। जिन्ना ने सोच कर, डरकर और अंग्रेजी राजनीति का इशारा पाकर अपना हुक्म रद्द कर दिया और इसके साथ ही उनके सपने का लैम्प बुझ गया।

(३)

वायसराय माऊंट बैटन को स्वतंत्र भारत का गवर्नर जनरल बनाये रखने का प्रस्ताव सरदार पटेल का था—प्रस्ताव ही नहीं, आग्रह कि उनकी बात न मानी जाए, तो वे रियासती विभाग सम्भालने से साफ इन्कार कर देंगे। सरदार का यह एक मनोवैज्ञानिक दाव था। देशी राजा–नवाबों का सदी से ज्यादा का संस्कार था वायसराय को ईश्वर मानने का, भाग्य विधाता जानने का, उसके हाल में दरवाजे से कुरसी के पास तक सिर झुका कर, काँपते हुए चाल साध कर जाने का और उसकी वाणी को अपने भाग्य का आदेश मानने का। सरदार की भांप गजब थी। उसने राजा-नवाबों की इस कायर वृत्ति का और माऊंटबैटन के प्रभाव का पूरा उपयोग किया। कहूं, माऊंटबैटन ने राजा–नवाबों के दम्भ की पतंगें काट दी, सरदार ने उन पतंगों को लूट लिया और वी० पी० मेनन ने उन लुटी पतंगों को ठीक-ठिकाने लगा दिया।

क्या माऊंट बैटन ने यह काम दान खाते में किया ? उसने सरदार के सहारे से मुग्ध और भले-भोले इंसान जवाहर लाल को पाकिस्तान के साथ लम्बी लड़ाई के भय से क्षुब्ध करके काश्मीर में पाकिस्तानी फौजों को मानो रौन्दती भारतीय फौजों के कदम रोक दिए और काश्मीर प्रश्न को सुरक्षा-परिषद् में उलझा इंगलैंड–अमरीका के हाथ में सौंप दिया। जिन्ना को दिये अंग्रेजी इशारे का यही फलितार्थ था। अंग्रेज कूटनीति ने पाकिस्तान का ढोल इसलिए बनाया था कि उसके खोल की पोल में वे बैठेंगे, पर अपने साधनों के सहारे अमरीका ने युद्ध-जर्जर इंगलैंड को उस पोल से धकेल कर वहां अपने को प्रतिष्ठित कर लिया और इस तरह काश्मीर अमरीका की कूटनीति में जा उलझा।

काश्मीर का प्रश्न जब सुरक्षा परिषद में पेश हुआ, तो बहस में भाग लेने के लिए भारत का प्रतिनिधि मंडल गया। भले भोले लोकदेव नेहरू ने शेख अब्दुल्ला को काश्मीर के प्रधान मंत्री और मुसलमान होने के रूप में उस प्रतिनिधि-मंडल का नेता घोषित कर दिया। भीतर ही भीतर इसका विरोध हुआ और शेख की अपात्रता नेहरू जी को बताई गई, तो उन्होंने श्री गोपाल स्वामी आयंगर को शेख का जमादार बना दिया, पर गोपाल स्वामी का कोई राजनैतिक कैरियर नहीं था, इसलिए शेख पूरी तरह उद्धत रहा। अमरीका के चाणक्यों ने उसे खूब तौला और राय बनाई कि आदमी शेखी खोरा है और चंग पर चढ़ाया जा सकता है। फलस्वरूप शेख अब्दुल्ला के दिमाग में एक नए सपने का बीज डाला गया। इसके कुछ महीने बाद अमरीकी उपराष्ट्रपति स्टीवेंसन या निक्सन ? भारत आए और कई दिन काश्मीर भी रहे। इन दिनों में सपने के उस बीज को जमाया गया, सींचा गया। वह सपना आजाद काश्मीर के सुलतान बनने का सपना था, जो अमरीका के धन से लहलहायेगा। शेख की गोरी पत्नी ने भी इस सपने को खाद दिया और शेख उस सपने में डूब गया। उसने कैडिलक कार खरीद ली और सुलतानी चोगा सिला लिया।

भीतर ही भीतर तैयारियां होती रहीं और जब शेख विद्रोह का झंडा फहराने ही वाला था, बख्शी गुलाम मुहम्मद ने नेहरू जी के कान में सब कुछ कह दिया। नेहरू जी की मानवता मित्र के इस विश्वासघात से तिलमिला उठी। सचाई यह कि उनका मानस अस्तव्यस्त हो गया और उन्होंने यह मामला रफी अहमद किदवई को सौंप दिया। रफी साहब ने श्री अजित प्रसाद जैन को काश्मीर भेजा और उनकी जांच-रिपोर्ट मिलते ही शेख अब्दुल्ला को गिरफ्तार करा लिया। यों अमरीकी अमृत पीने वाला शेख का सपना आसमान से धरती पर आ गिरा, खील-खील हो गया, पर लक्षणों से पता चलता है कि उस सपने की प्रेतात्मा अब भी शेख के दिमाग में मंडराती रहती है।

(४)

कई साल नजरबन्द रह शेख जेल से छूटे, बाहर आते ही भड़भड़ाये और फिर जेल गए-बरसों मुकदमा चलता रहा। खर्च करोड़ तक पहुंच गया। वे गद्दारी में पदच्युत हुए थे, उनके उत्तराधिकारी बख्शी भ्रष्टाचारी में पदच्युत हुए। इसी बीच चीनी आक्रमण के समय अमरीका ने हमारी सहायता की थी, हम पर उनका ऐहसान था। उनका इशारा आया. नेहरू के नाम शेख ने पत्र लिखा, मुकदमा वापस ले लिया गया, जिस जज के सामने शेख अभियुक्त के रूप में बरसों खड़े हुए थे, उसने अपने सोफे पर बैठा शेख को चाय पिलाई। उन्हें जेल भेजने वाले बख्शी खुले आम उन्हें आलिंगन में बांधे दिखाई दिए और वे अपने प्यारे दोस्त पंडित जवाहर लाल नेहरू से मिलने दिल्ली आए, तो विदेश मंत्रालय के अफसरों ने हवाई अड्डे पर उनका स्वागत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया उनके गले में हाथ डाल नेहरू जी ने फोटों खिंचवाया और किस्सा कोताह वे काश्मीर के मसले को निमटाने के लिए पाकिस्तान गए।

वे पाकिस्तान में राष्ट्रपति अयूब से बातें कर ही रहे थे कि नेहरू जी स्वर्ग सिधारे। शेख लौट आए और आजाद काश्मीर के नारे लगाते रहे—काश्मीर में अपनी स्थिति मजबूत करते रहे। तब हज करने गए। वहां फिर अयूब साहब से मिले और चीन के प्रधानमंत्री चाऊ-एन-लाई से भी। लौटे कि नजरबन्द हो गए, पर इसी बीच जनरल अयूब के दिमाग में काश्मीर का नया सपना जाग गया। [illegible] के बाद अगस्त १९६५ के दूसरे सप्ताह में गुरिल्ला युद्ध शैली में प्रशिक्षित कई हजार पाकिस्तानी सादे वेश में, पर भयंकर शस्त्रों से लैस होकर काश्मीर में घुस आए कि वे वहां मारकाट मचा देंगे, काश्मीरी जनता उनका साथ देगी, स्वागत करेगी और १५ अगस्त को अयूब साहब श्रीनगर में होंगे।

सपना इन्द्रधनुषी था, पर काश्मीरी जनता और भारतीय सेना के वीरों ने उसे पहले काश्मीर के नगरों—गांवों—जंगलों में रौन्दा और तब हाजी पीर दर्रा, छम्ब, स्यालकोट, लाहोर, कसूर में उसका जनाजा निकाल दिया। काश्मीर में पहले भी सपने टूटे थे और दफनाए गए थे, पर अयूब साहब का सपना तो कुछ यों टूटा और दफनाया गया कि वे जीते जी ही उसके साथ में लेट गए।

होमर ने कहा था—सपने भगवान द्वारा भेजे जाते हैं। काश्मीर ने होमर की बात का प्रतिवाद न कर उसे यों कह दिया है—सपने भगवान द्वारा भेजे जाते हैं और शैतान के द्वारा भी। यह मनुष्य का काम है कि वह भगवान और शैतान के सपनों का भेद जाने, उन्हें ठीक-ठीक पहचाने और अपने लिए भगवान के भेजे सपने ही चुने। ◇

हम फिर राम की युद्ध नीति पर पहुँचे!

५ अगस्त १९६५ से २३ सितम्बर तक हम पाकिस्तान, चीन, इंगलैण्ड और अमरीका के साथ एक युद्ध लड़ चुके हैं। हां, हां, युद्ध लड़ तो रहा था पाकिस्तान ही, पर ये सब अपने ढंग पर उसकी मदद कर रहे थे और कहावत है कि दुश्मन का दोस्त दुश्मन तो हमें इन सबकी दुश्मनी का समुद्र एक साथ पार करना पड़ा।

१९६२ में हम चीन से बुरी तरह पिट चुके थे और उस पिटाई में हमारा पानी उतर गया था। वह पिटाई परिस्थितियों की थी, पर पानी उतरे का क्या मोल? ठीक है हम भी अपना मोल दुनियां की निगाहों में खो चुके थे और इसी लिए अमरीकी हथियारों से समृद्ध और चीनी रण-शिक्षा से सन्नद्ध पाकिस्तान का डिक्टेटर एकदम निश्चिन्त था कि इस झपाटे में पूरा काश्मीर तो वह ले ही लेगा, काफी पंजाब भी ले लेगा। साथ ही लद्दाख का तोफा अपने प्यारे दोस्त चीन को भेंट कर देगा और इस धमाधसी में हमारी पानी उतरी फौज पानी पानी हो जायेगी। इस हालत में मौका लगा तो वह घूमता-घूमता दिल्ली भी जा टिकेगा।

इरादे हसीन थे, इरादे बुलन्द थे, पर हाजी पीर दर्रे पर छम्ब के इलाके में लाहौर, स्यालकोट के मोर्चों पर हमारी फौजों ने उचित समय पर नेतृत्व का उचित निर्देश पा, पाक का कलेजा इस तरह चाक किया कि वह क्या, उसके दोस्त भी अवाक रह गये। हम विजय वर लाये, पराजय दुश्मन के सिर धर आये और यों हमारा दशहरा उल्लास की आग में रावण का बाग फूंकते बीता। हम नशे के ऐसे खुमार में थे कि किसी को कुछ शुमार ही न करते थे।

पहले प्यार का नशा रंगीन होता है, तो पहली विजय का नशा संगीन होता है, दोनों ही तल्लीन करते हैं। हम भी तल्लीन थे कि सदा की तरह, रावण को फूकते समय हमारे मन में यह प्रश्न नहीं उठा कि क्या हम सदा की तरह ही रावण को फूंक रहे हैं? दीवाली की रोशनी से जब नशा घटाटोप से झिलमिल हो चला, तो आवश्यक भी है और उचित भी कि हम इस प्रश्न पर विचार करें, क्योंकि यह एक ऐसा राष्ट्रीय प्रश्न है, जो राष्ट्र को दिशाबोध का ऐसा दीप दे सकता है, जो सदियों तक दिमागों में जलकर राह को रोशन करता रहे।

एक दशहरा वह था, जब कि सचमुच का हाड़मांस का, रावण मरा था और एक दशहरा है १९६५ का। इन दोनों के बीच में एक सुरंग है, जिसके ऊपर से युग-युगों के मुसाफिर चलते-जाते रहे हैं, पर जिसने दोनों दशहरों को जोड़ दिया है। राम ने हमारे राष्ट्र को अपने जीवन से नई दृष्टि दी थी—हमारा लक्ष्य यदि उचित है, न्यायपूर्ण है और पथ फिर भी उसे नहीं मानता, हमारे साथ अन्याय पर उतारू है तो हमें उससे युद्ध करना चाहिए, इस विश्वास के साथ कि हमारे विरोधी के साधन भले ही हम से प्रबल प्रचंड हों, न्यायबल के कारण विजय हमारी ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगी। इसी का प्रतिध्वनि सूत्र है—सत्यमजयते। यहीं राम अवतारी पुरुष हैं। रामदृष्टि का नया अवतरण करने वाले। दूसरे शब्दों में यह दृष्टि है विजय के लिये युद्ध।

इसके जाने कितने युगों बाद कृष्ण हुए। उनकी भी महाकृति एक युद्ध ही है-पर दृष्टि राम से भिन्न है—शायद इसलिये कि राम जन्म से राजा थे, कर्म से-राजा थे, पर कृष्ण जन्म से जन-साधारण थे, कंस के आतंक में पले-पुसे थे। बाद में उन्होंने उत्तर प्रदेश से दूर सौराष्ट्र में एक छोटे-से राज्य की स्थापना की थी, वे द्वारकाधीश बने थे। फिर प्रकृति का भेद भी था कि राम स्वभाव से योद्धा थे और कृष्ण स्वभाव से कलाकार और विचारक। इन दोनों बातों के साथ परिस्थितियों का भी भेद था। दोनों युद्धों के केन्द्र में नारी थी, एक में सीता दूसरे में द्रोपदी, पर पहले में दो अलग-अलग प्रदेशों के विरोधी थे और दूसरे में देश के एक ही वंश के दो विरोधी थे।

इस अन्तर का यह प्रभाव था कि राम आरम्भ से अन्त तक युद्धरत थे, पर कृष्ण अन्त तक युद्धों को रोकने में प्रयत्नशील थे। ये प्रयत्न पूरी तरह और बुरी तरह असफल रहे और कृष्ण को युद्ध का नेतृत्व करना पड़ा। युद्ध में विजय मिली, पर यह विजय सर्वनाश जैसी थी। पूरे राष्ट्र का ढाँचा चरमरा गया था। लोग रामायण की तरह ही महाभारत को भी युद्ध-काव्य मान लेते हैं, पर असल में महाभारत संसार का सबसे महान युद्ध-विरोधी काव्य है। उसे पढ़ते-पढ़ते पाठक जब अन्त में पहुँचता है, तो उसकी आत्मा उल्लास में नहीं, अवसाद में डूब जाती है और उसका रोम-रोम युद्ध की कुरूपता से भर उठता है।

युद्ध का जो सर्वसंहारी अन्त हुआ उसे राजनीतिज्ञ अर्जुन ने आरम्भ में ही पूरपूर भांप लिया था और सफल कह दिया था—भैक्ष्य मपीह लोके—इस युद्ध से तो भिक्षा मांग कर जीवन-निर्वाह करना अच्छा है। कृष्ण हकबका गये थे अर्जुन की बात सुनकर: क्योंकि स्वर्ग का प्रलोभन, आत्मा की अमरता का विश्वास और लोकापवाद का भय तीनों अस्त्र अर्जुन के अवसाद से टकरा कर बेधार होगये थे, युद्ध को पुण्य कर्म सिद्ध करना असम्भव होगया था।

तब कृष्ण ने युद्ध के सम्बन्ध में अर्जुन को उसके निमित्त से राष्ट्र को एक नई दृष्टि दी थी, सुख दुख को समान मान कर, लाभ हानि का विचार छोड़कर, हार जीत की चिन्ता से मुक्त होकर युद्ध किया जाये, तो योद्धा को कोई पाप नहीं, यह थी वह नई दृष्टि—

सुख दुःखे समे कृत्वा
लाभालाभौ जया ज्वयौ
ततो युद्धाय युज्यस्व नैव
पाप भावाप्स्यसि

अर्जुन इस पर भी अपनी बात पर अड़ा रहा था, पर जब कृष्ण ने अपनी व्यष्टि में विराट समष्टि का प्रदर्शन कर सम्मोहन का प्रदर्शन किया, तो अर्जुन अभिभूत हो उठा, तन कर खड़ा होगया और वह युद्ध हुआ, १९६५ तक भी जिसका कोई जोड़ नहीं, पर यह हुआ क्या? यह हुआ कि राम ने युद्ध लड़ा था विजय के लिये, कृष्ण ने युद्ध लड़ा आन के लिये। अभी तक युद्ध एक साधन था, अब वह अपने में साध्य हो गया। हमारी राष्ट्रीय युद्ध-दृष्टि ही बदल गयी।

इस युद्ध-दृष्टि को हम इतिहास के चश्मे से देखें—

एक गिरोह चूडावत सरदारों का, एक शक्तावत सरदारों का, दोनों क्षत्रिय, पर बहस यह कि सेना के हरावल-अग्र-भागी पक्षों में चलने का अधिकार किसे मिले? महाराज ने निर्णय दिया—किले में शत्रु घुस बैठा है द्वार बन्द हैं, जो किले में पहले पहुंचे, वही हरावल में चलने का अधिकारी। अब दोनों बढ़े उस किले की तरफ। कहीं से रास्ता काट कर चूडावत सरदार किले के द्वार पर जा पहुंचा और हाथीवान से कहा—हूलो हूलो हाथी कि द्वार टूट गिरे। हाथीवान ने रानों से हाथी की गर्दन मसमसाई, पैरोंके अगूठे से कानों की बिलबिलियाँ गुदगुदाई और हाथों से सिर को धकेला दे एक लम्बा हुंकारा दिया। हाथी झपटा, पर किवाड़ों को टकराते रुक गया।

शक्तावत सरदार भी आ पहुंचा था, पल भर की देर भी असह्य थी। हाथी पर बैठा चूडावत सरदार चिल्लाया—"क्या बात है? हाथीवान ने कहा—"ठाकुर, किवाड़ों पर पैनी कीलें लगी हैं। इसी से हाथी रुक गया है।" सरदार हाथी की पीठ से कूद कर नीचे आ गया और उन खूनी कीलों से कमर लगाकर खड़ा हो गया—"लो, अब तो कीलें नहीं हैं, हूलो पूरे दम से हाथी!" हाथीवान हिरहिराया, तो सरदार चिल्लाया—"नमक हरामी मत करो, हूलो हाथी!" हाथी का भारी मस्तक सरदार की छाती पर पड़ा और छाती कीलों से छलनी हो गई, पर किवाड़ चरमरा कर टूट गिरे।

शक्तावत सरदार ने यह देखा। बात बिगड़ गई थी। उसने झट तलवार से अपना सिर काट अपने हाथों से उसे किले में फेंक दिया—"किवाड़ कोई तोड़े, भीतर तो पहले हम ही पहुंचे।" यह क्या है। यह है बात के लिये बलिदान, आन के लिये कुर्बानी। इस वृत्ति का अर्थ है मृत्यु के प्रति अभय, जीवन के प्रति निर्लिप्तता। कहूं आगे बढ़कर मृत्यु का वरण। राणा प्रताप इसी वृत्ति के प्रतीक हैं। समझौते की विजय नहीं, अनझुके ललाट की पराजय पसंद। राणा जानते थे कि दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

के तूफान पर फतह पाना असंभव है, पर वे मानते थे कि उस तूफान से टकराते हुए मिट जाना तो संभव है। अरे, हम आदमी की तरह आजादी से जी नहीं सकते तो आदमी की तरह आजादी से मर तो सकते हैं।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस वृत्ति को समझाने के लिए रणथम्बौर सर्वोत्तम है। भामाशाह दिल्ली के बादशाह का भगोड़ा रणथंबौर के राजा हमीर की शरण में आगया। बादशाह नाराज़ हुए। उसने अपना भगोड़ा वापस करने की हिदायत भेजी पर हमीर तैयार न हुए, बादशाह पूरी ताकत के साथ चढ़ दौड़ा और उसने रणथम्बौर को घेर लिया। खूब खांडा बजा, पर नतीजा क्या हुआ? जब खाने की कमी आ गई, और हमीर के साथ भामाशाह और बचे हुए सैनिक बादशाह की सेना पर टूट पड़े, बड़ी घमासान मची, वीरता के इतिहास में शानदार अध्याय जुड़ गया, पर इस युद्ध का उद्देश्य क्या था? विजय? राम का नाम लो। न सौ कोस पर विजय थी, न लाख कोस पर, यह तो शतप्रतिशत मृत्यु का वरण था, जिससे स्वर्ग में स्थान सुरक्षित होता है। इस युद्ध का उद्देश्य था युद्ध में मरण, असंशयात्मा होकर जानते बूझते स्वेच्छा भाव से मृत्यु का वरण—एक दुल्हन की तरह।

आदर्श की दृष्टि से यह बहुत बड़ी बात थी, पर इस बात से राष्ट्रशक्ति की समग्रता खंडित हो गयी थी, महमूद गजनवी की राक्षसी बाढ़ को रोकने के लिये जब सरहद का राजा जूझ रहा था, सोमनाथ के क्षेत्र वाले उसकी बातों को इस तरह सुन रहे थे, जैसे वह कोई विदेशी इतिहास की पुरानी कहानी हो। बात भी ठीक है। जब जूझना और वीरगति पाना ही लक्ष्य हो, तब राष्ट्र की शक्ति की समग्रता के अंकुर किस क्षेत्र में फूटें? फिर अतीत में विक्रमादित्य और चन्द्रगुप्त इसके अपवाद थे। तो बाद को इतिहास में केवल छत्रपति शिवाजी का ही नाम आता है, इसके बाद तो हमारे वीरों की हालत शिकारी कुत्तों जैसी हो गई कि हम उनके लिये झपटें जिनके हाथ में हमारी जंजीर है। हम आत्म-प्रेरणा के नहीं, अपने मालिक की सिसकारी के योद्धा रह गये।

स्वतंत्रता के बाद गोवा में पुर्तगाल पर हमने फतह पाई थी, इसमें संदेह नहीं, पर वहां ताकत के उपयोग से पहले ही हमारा दाव सफल हो गया था। इस लिये गोवा में हमारी विजय खुशी की एक फुरैरी बन कर ही रह गई थी और विजय के लिये युद्ध की भावना का राष्ट्रव्यापी स्पन्दन नहीं हुआ था। फिर १९६१ के दिसम्बर में गोवा कांड हुआ और १९६२ के अक्टूबर में चीनी आक्रमण हो गया। उसकी पराजय से भारत का राष्ट्रीय मन ऐसा पराभूत हुआ कि गोवा की प्रेरणा एकदम समाप्त हो गई। इस दृष्टि से ५ अगस्त १९६५ से २३ सितम्बर १९६५ तक चीन समर्थित पाकिस्तान के साथ जो युद्ध हुआ, वही नये युग के आगमन का प्रतीक बन पाया। इसमें नेताओं की और सेनाओं की समन्वित युद्ध-दृष्टि थी—विजय के लिये युद्ध, विजय के ही लिये युद्ध। निश्चय ही, यह युद्ध भारत में उद्भूत नहीं, भारत पर आरोपित था। कहूं भारत का आक्रमण नहीं, प्रत्याक्रमण ही था यह, पर इसका उद्देश्य बचाव नहीं था, विजय था और इसकी रणनीति रक्षात्मक होकर भी आक्रमणात्मक थी।

इसमें हम विजयी हुए और यह विजय हमारे लिये ही नहीं, सारे संसार के लिये एक चमत्कार की तरह कौंधने वाली हुई। कहूं, अब हमारे लिये युद्ध एक विचार नहीं, एक प्रहार है, एक साध्य नहीं, एक साधन है और अब भारत कल्पना के अवास्तविक वातावरण से निकल, अपनी विजय-यात्रा का आरम्भ कर रहा है। दीपावली ज्योति का पर्व है, पर उचित है कि अब हमारे मन में एक ज्योतिर्मय ज्वाला और ज्वालामय ज्योति का जागरण हो। ◇

इस युद्ध में हमें नेता मिला!

"देश में कोई नेता नहीं है और दुर्भाग्य है कि गाँधी जी के बाद हमारा देश नेता से विहीन हो गया है!"

दर्द और कुढ़न से भरी आवाज में आचार्य कृपलानी ने लोकसभा में यह वाक्य तब कहा था, जब प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू सामने अपनी कुर्सी पर बैठे हुए थे। नेहरू जी ने एक खास मुद्रा से कृपलानी जी की तरफ देखा था, जैसे बिना कहे ही कह रहे हों—"अरे बूढ़े, मेरे रहते हुए तू यह क्या कह रहा है?"

तभी एक कांग्रेसी सदस्य मुखर हो उठे थे मसखरी की मुद्रा में—"कृपलानी जी, आप हैं तो देश के नेता, फिर देश को नेता-विहीन क्यों कहते हैं?" सुनकर काफी लोग हंस पड़े थे, पर ठहाकेदार हँसी के बाद भी कृपलानी जी ने कहा था—"मैं? मैं तो अपने घर का भी नेता नहीं हूँ, क्योंकि मेरी पत्नी भी कांग्रेस में है। मैं सिर्फ अपना नेता हूँ, पर यह सच है कि देश में कोई नेता नहीं है और देश गाँधी जी के

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाद नेता विहीन हो गया है !"

कई ने कहा था—"कृपलानी जी फ्रस्ट्रेशन-हताशा का शिकार हैं।"—परसच यह है कि कृपलानी जी ने उस समय के सबसे बड़े सत्य की उद्घोषणा की थी ! यह बुरी बात थी कि देश नेता विहीन था, पर यह सच बात थी कि नेहरू जी के रहते भी देश नेता विहीन था। इसका अर्थ हम यों समझें कि नेता कौन होता है ? नेता किसे मानती है जनता ? हजारों सैंकड़ों भेड़ों को गडरिया हाँकता है, पर क्या गडरिया भेड़ों का नेता होता है ? जेलर सैंकड़ों कैदियों को अनुशासन में रखता है, पर क्या वह कैदियों का नेता होता है ?

ठीक है, न गडरिया भेड़ों का नेता होता है, न जेलर कैदियों का, तो प्रश्न यह है कि नेता कौन होता है ? जनता अपना नेता किसे मानती है ? जनता जन-जन का समूह होता है, पर कोई बिखरी हुई चीज नहीं होती जनता। उसका एक सामूहिक मानस होता है ! इस मानस की एक सामूहिक आशा होती है, चाह होती है, पर कमजोरी यह है कि एक जन जैसे अपनी आशा को, चाह को प्रकट कर सकता है वैसे जनता अपनी आशा को, चाह को प्रकट नहीं कर सकती। यहीं उसे नेता की जरूरत है ? तो नेता वह है जो जनता की आशा को भाषा और आकांक्षा को आकृति दे सके।

जर्मन एक वीर जाति है। पहले युद्ध में जर्मनी की हार हुई और उस पर वर्सेलीज संधि की सूरत में घोर अपमान जनक शर्तें लादीं गईं। जनता की सामूहिक आशा थी यह हालत बदले। जनता की सामूहिक आकांक्षा थी इस संधि को तोड़ा जाये। हिटलर ने इस आशा को भाषा दी, इस आकांक्षा को आकृति देने का बीड़ा उठाया और वह नेता हो गया। भारत को १८५७ के बाद अंग्रेजों ने राक्षसी दमन से हौसला-पस्ती में पटक दिया और शस्त्र-विहीन कर उसके इरादों के भी पंख काट दिये। जनता की आशा थी आजादी, आकांक्षा थी आजादी। दादा भाई नौरोजी और तिलक ने उस आशा को भाषा दी। वे जनता के नेता हो गये। गाँधी जी ने उस आकांक्षा को आकृति दी; वे जनता के नेता हो गये; इस कार्य में जो उनके साथ थे वे भी प्रदीप्त हुये।

नेता कौन होता है ? नेता वह होता है जो अपना बुद्धि जनता को दे और बदले में उनकी श्रद्धा को ले। श्रद्धा का चिर संगी है विश्वास। वह उसके साथ ही आता-जाता है। जन जन चाह कर, प्रयत्न कर भी जो नहीं कर पाते, उसे जो कर पाये वही जन-जन का नेता होता है। नेता का पद से बहुत कम सम्बन्ध होता है। गाँधी जी १९२० से १९४५ तक एक ही वर्ष पद पर रहे, पर नेता पूरे समय वे ही रहे; क्योंकि जनता के विश्वास पर उनका ही अधिकार रहा। इसके विरुद्ध पाकिस्तान में लियाकत अली साहब के बाद कई प्रधान मंत्री हुए, पर कोई जनता का विश्वास न जीत सका, बस जनता विश्वासहीन हो गई। जहाँ की जनता विश्वासहीन हो जाती है, वहाँ प्रजातन्त्र नहीं टिक सकता। पाकिस्तान में भी प्रजातन्त्र टूट गया। डिक्टेटरी आ गया।

श्री लालबहादुर शास्त्री के प्रधानमंत्री बनने के समय भारत की भी यही हालत थी। जनता विश्वास-हीन हो गई थी, किसी नेता में उसका विश्वास नहीं था। प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के दो उपार्जन थे। पहला आकर्षण, दूसरा विश्वास। १९५७ तक जनता का विश्वास था कि जवाहरलाल सब कुछ कर सकता है, पर ५७ और ६२ के बीच यह विश्वास खंडित हो गया था—"जवाहरलाल बेचारा क्या करे कोई उसकी सुनता नहीं।" इस बारीक बात पर हमारा ध्यान नहीं गया कि १९६२ के आम चुनाव में नेहरू जी को सवा लाख वोट कम मिले थे। मैंने नेहरू जी के निर्वाचन क्षेत्र में चुनाव के बाद घूमकर उसका अध्ययन किया था और उस पर एक लेख लिखा था। जब उसके दो टुकड़े मैंने नेहरू जी को सुनाए, तो वे खोई-खोई आँखों से देखते रह गये थे। बात यह थी कि उस निर्वाचन क्षेत्र में बागों पर टैक्स लगा दिया गया था। बागों के लिये देहातों में मंदिर जैसी भावना है, इसलिए उसका गहरा विरोध हुआ था, पर उसे अनसुना कर दिया गया था।

जलसे में जब नेहरू जी आए, तो लोगों ने अपना दुख नेहरू जी से कहा। नेहरू जी ने भरे जलसे में उस टैक्स को बेहूदा बताया और दूर कराने का वादा किया। एक नोट भी उन्होंने यू. पी. सरकार को भेजा, पर टैक्स न हटा। वे काफी दिन बाद फिर एक जलसे में गये तो लोगों ने कड़वे होकर अपनी बात कही। नेहरू जी ने गुस्से में भर कर वादा किया—"इसे हटना चाहिए और हटेगा।" उन्होंने फिर नोट भेजा, पर टैक्स ज्यों का त्यों रहा। नेहरू जी के निर्वाचन-क्षेत्र में, मैं भूलता नहीं हूँ तो सात विधान सभाई सीटें थीं। इनमें चार पर कांग्रेस हार गई थी और नेहरू जी को भी सवा लाख वोट कम

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिले थे। तभी तो मैंने कहा कि जनता में नेहरू जी के प्रति आकर्षण अन्त तक रहा, जनता उन्हें देवता मानती रही, पर उसका विश्वास खंडित हो गया था। चीनी आक्रमण ने तो उस विश्वास के धुर्रे ही उड़ा दिये थे। श्री लाल बहादुर शास्त्री के प्रधान मन्त्री बनने के समय भारत की जनता विश्वास हीनता की इसी स्थिति में थी।

लाल बहादुर जी के सर्व सम्मति से प्रधान मन्त्री चुने जाने पर जनता का विश्वास फिर झिलमिलाया और श्री प्रतापसिंह कैरों की पदच्युति और श्री रामकिशन के सर्वसम्मति से मुख्य मन्त्री चुने जाने पर इस विश्वास ने पैर जमाये, पर उत्तर प्रदेश की राजनीति, उड़ीसा की उथल-पुथल और अनाज की गड़बड़ी में वे पैर फिर डगमगा गए। तब आया अमरीकी निमन्त्रण के स्थगित होने का मामला। उस पर शास्त्री जी ने अमरीकी प्रेज़ीडेन्ट के मुँह पर झाँपड़ मारा, उससे लोग खिले। तब विदेश-यात्राएँ, कच्छ का मामला और बंगलौर का अन्तर्द्वन्द; इन्होंने विश्वास की सूखी बेल पर पानी दिया और उसे सरसाया कि आगया भारत-पाकिस्तान युद्ध!

५ अगस्त १९६५ से २३ सितम्बर १९६५ तक के ३९ दिन। इनका पूरा स्वरूप-चित्र "नया जीवन" के पिछले अङ्क में दिया गया है, पर उन दिनों में जो कुछ हुआ, उसके अर्थों और फलितार्थों का पहला विश्लेषण सूत्र यही है कि देश में नेता विहीनता की जो भावना व्याप्त थी, वह झटके के साथ समाप्त हो गई और देश ने अपनी आशा को भाषा और आकांक्षा को आकृति देने वाला नेता श्री लाल बहादुर शास्त्री जी के रूप में पा लिया।

यह आशा क्या थी? यह आकांक्षा क्या थी? दुष्टता का दानव जनता का दम घोट रहा था—देश में सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक भ्रष्टाचार उसका जीवन दूभर कर रहा था और चीन-पाकिस्तान की उद्दंडता उसके आत्म-गौरव को लूट रही थी। वह अनुभव कर रही थी कि देश के नेता दब्बू हैं और देश की इज्जत गवाँ कर वे अपनी कुरसियाँ बचा रहे हैं, पर जनता की मजबूरी यह थी कि नेताओं को चुनाव में वोट देकर कुर्सियों से नीचे पटकने की ताकत उसके हाथ में थी, पर उन्हें वह हटा दे तो कुर्सियों पर किन्हें बैठाये। इस प्रश्न का उत्तर उसके पास न था, क्योंकि विरोधी दलों में न शानदार व्यक्तित्व था, न शानदार प्रोग्राम। फिर वह क्या करे?

कुढ़न है, परेशानी है, पर प्रश्न का उत्तर तो नहीं है। जो सामने है, उससे मन नहीं मिलता और जिससे मन मिले, ऐसा कोई आस-पास नहीं, दूर पार भी नहीं, फिर वह क्या करे? उफ, फिर वही प्रश्न, जैसे सिर पर पत्थर आ पड़े। भुक्त भोगी जानते हैं, जब पत्थर सिर से आ टकराता है, तो सिर भिन्ना जाता है, कुछ सूझता ही नहीं। इसे ही कहते हैं विचार-रिक्तता, जिसमें प्रजातंत्र मुर्झा जाता है, सूख जाता है और डिक्टेटरी के जन्म लेने की संभावना पनप उठती है। जनता इसी विचार रिक्तता के शिकंजे में फंस गई थी, क्योंकि उसकी आकांक्षा मसमसाकर मर रही थी, आकृति न पा रही थी। सचमुच बड़ी बुरी हालत थी और जो उसे समझ रहे थे, वे अपनी ही समझ का त्रास सह रहे थे।

ऐसे ही वातावरण में हमारी सेनाओं ने पाकिस्तानी कब्जे के काश्मीर में प्रवेश किया और हाजी-पीर दर्रे पर कब्जा कर लिया। विचार रिक्तता से रूखे जनमानस में रस की पहली फुहार फूटी—"हमारी सेना ने विजय पाई।" इसमें हमारी शब्द महत्वपूर्ण था, क्योंकि पिछले १८ साल की निराशाओं से देश में जनता (जन-भावना) का अभाव-सा हो चला था, जन था, जनता न थी—व्यष्टि का भाव था, समष्टि की भावना न थी। कहूं, हरेक अपने लिए सोच रहा था, अपने लिए जी रहा था, अपने लिए कर रहा था। इस 'हमारी' में सामूहिकता का सूर्योदय था, यह बड़ी बात थी।

इसी वातावरण में अपने छह दर्जन पैटन टैंक लेकर पाकिस्तान अचानक हमारे क्षेत्र में घुस पड़ा। पाकिस्तान का डिक्टेटर बेफिक्र था कि इस दाव से काश्मीर ले लेगा, क्योंकि छम्ब का मोर्चा उसके अनुकूल था और हमारी स्थल सेना वहाँ तुरन्त न पहुंच सकती थी। यह नेतृत्व की कठिन परीक्षा थी और नेतृत्व उसमें सफल हुआ, उसने वायु सेना को आक्रमण करने की आज्ञा दी। "पवन दूत अतुलित बल-धामा" हनुमान चालीसा में इसका पाठ लाखों ने किया था, पर इसका दर्शन पहली बार छम्ब में ही हुआ और हमारे वीरों ने टैंकों को खिलौने की तरह तोड़ कर रख दिया। विचार रिक्तता के रूखे जन मानस में रस की जो पहली फुहार आई थी "हमारी सेना ने विजय पाई" वही रस की धार बन गई—"हमारे देश की हमारी सेना ने विजय पाई।" यह सोई देशभक्ति के जागरण का शंख-नाद था। सारा देश अपनी सेना के पीछे खड़ा हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब आया ६ सितम्बर कि हमारी सेना तीन तरफ से लाहौर की ओर बढ़ चली और इच्छोगिल नहर के किनारे लाहौर के द्वार जा टिकी। अब हम पूर्ण युद्ध की लपटों में थे पर विचार रिक्तता से ग्रस्त जनता की तरह नहीं. सफल देश की सबल और जीवन-जाग्रन्त जनता की तरह। जोधपुर पर दो लाख पौंड के १६६ बम पड़े, पर जनता यों अड़ी रही, जैसे कबड्डी खेल रही हो। अमृतसर में तो पाकिस्तानी बमबारों और 'बमान तोड़क तोपचियों में हाकी मैच ही जैसे जम गया कि वे आये और नीचे गिराये। जवान जागा, तो किसान जागा और जवान क्या, किसान क्या, देश का हर इन्सान जागा।

यह राष्ट्रीयता की मशाल का पूरी लौ में जल उठना था। मशाल प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के हाथ में थी और जनता उनके पीछे थी। बरसों बाद जनता को उसका नेता मिल गया था, जो उसकी आशा को भाषा और आकांक्षा को आकृति दे रहा था, अब जनता नेता विहीन न थी, विचार-रिक्तता ग्रस्त न थी, पस्त न थी, स्वस्थ थी, व्यस्त थी, जरा भी अस्तव्यस्त न थी। वह विजय का, उत्साह का आनन्द लूट रही थी और अपना सब कुछ लुटा रही थी। वह किसी के साये में थी और उसे सहारा दे रही थी। राष्ट्रीयता का गोवर्धन उठ गया था और दुश्मनों के हौंसले पस्त थे।

तब आया चीन का अल्टीमेटम प्रलयंकर। यह एक तूफान के आने की सूचना थी। हमारा उभरता नेतृत्व कठिन कसौटी पर आ गया था और जनता झल्ला गई थी इस प्रश्न से कि क्या यह इसपर खरा उतरेगा? निश्चय ही वातावरण भय से भर उठा था आशंका से ग्रस्त था। वीर शिरोमणि हमारे कमांडर जनरल चौधरी के मुंह से निकल पड़ा—"हे भगवान, क्या हमें इसी वक्त चीन से निबटना होगा?" स्वर में चिन्ता थी, पर हमारे नेता श्री लालबहादुर शास्त्री ने बकौल श्री करंजिया इस चिंता पर मुस्कराहट का मुलम्मा चढ़ाकर कहा—"जनरल साहब, आपको तो खुश होना चाहिए कि अब आपको एक के बजाय एक साथ दो ताज पहनाए जायेंगे।"

इस उत्तर की ऊँचाई हम ठीक ठीक नहीं समझ सकते, यदि यह याद न करें कि चीनी आक्रमण की सूचना देश को देने के लिए जब प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू लोकसभा में आए तो उनका प्यारा और खूबसूरत चेहरा मर्मान्त पीड़ा की रेखाओं से इस तरह खिंचा हुआ था जैसे वे कोई तिड़का हुआ स्टेच्यू हों। उसे देखकर सदस्य व्यथित हो उठे थे, क्योंकि यह उस आदमी का चेहरा था. जिसे व्यक्तिगत साहस में हम अपने इतिहास का बेजोड़ आदमी मानते रहे थे और जो सचमुच वैसा था।

१९४७-४८ में शास्त्री जी उत्तर प्रदेश में गृहमंत्री थे। चारों ओर साम्प्रदायिक हड़बौंग मचा हुआ था और जिलों जिलों से लोग उनसे मिलने आ रहे थे—व्यक्ति भी, शिष्ट मडल भी। ३ नवम्बर १९४७ की बात है, वे १० बजे अपने दफ्तर में आकर बैठे और दिनभर लोगों से मिलते रहे. उनकी बातों के नोट्स लेते रहे, कार्यवाही के आदेश देते रहे और शाँत रहे। मैं उनके कमरे से उठकर दूसरों के पास चला जाता और घंटों बाद लौटता तो उन्हें उसी तरह काम में लगा देखता। कई चक्करों के बाद जब मैं रात में ११ बजे उनके कमरे में गया, तो वे एक डेपूटेशन से बात कर रहे थे और दो डेपूटेशन से बात करना बाकी था। मैंने एक मित्र से कहा—हमारे शास्त्री जी 'श्रम प्रूफ' हैं-श्रम उन्हें थकाता नहीं है, पर इस युद्ध ने बताया कि वे 'भय प्रूफ' और 'चिन्ता प्रूफ' भी हैं। उनके चेहरे की सादगी, उनके मन का संतुलन ज्वालामुखी के बीच भी ज्यों के त्यों रहते हैं।

इस सादगी पे कौन
न मर जाये ऐ खुदा।
लड़ते हैं मगर हाथ में
तलवार नहीं है॥

हमारी सेना, हमारी जनता इस सादगी पर कुर्बान हो गई है और एक के खून और दूसरे के पसीने ने मिल कर ऐसी नदी बहाई कि पाकिस्तानी सेना की ताकत और डिक्टेटर की इज्जत दोनों उसमें डूब गए और चीन के हौसलों की उछलती लहरें जहाँ की तहाँ बर्फ-सी जमकर रह गई। युद्ध विराम हो गया और जनता का मन प्रश्नों से भर उठा—हमारी सेना अपने स्थान पर लौट आएगी तो हमारे जवानों की शहादत का हमें क्या मोल मिला? यह प्रश्न कितनी गहराइयों में था, कितना व्यापक था, और जनता किस सीमा तक जागृत थी, इसका पता मुझे २३ सितम्बर की शाम को (जिस रात में साढ़े तीन बजे युद्ध विराम लागू होने वाला था) लगा; जब एक रेड़ी पर नमकीन और बर्फी बेचने वाले साधारण श्रेणी के युवक ने जो इन्हीं शब्दों में यह प्रश्न पूछा। मैं तब तक अपने में साफ नहीं था कि सही जवाब देता, पर वह उद्विग्न था—"वाह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहब, यह अच्छी युद्ध बन्दी रही, यही करना था तो फिर लड़ने ही क्यों गये थे ?"

यह जनता की आशा थी, जनता की आकांक्षा थी, क्या नेता ने इसे भाषा दी ? आकृति दी ? हाँ, शास्त्री जी ने साफ कह दिया कि पाकिस्तानी सेना छम्ब से हटेगी तो हमारी सेना लाहौर से हटेगी, पर हाजीपीर दर्रा तो हमारे काश्मीर का हिस्सा है, उससे हटने का सवाल ही नहीं उठता। जनता ने महसूस किया कि उसका बैंक बैलेंस पहले से बढ़ गया है और उसका यह सोचना, महसूस करना ही इस युद्ध की सबसे बड़ी कमाई है, युद्ध की उपलब्धि नम्बर एक है। कमाई की इस बही के ऊपर के पेज पर लिखा है—देश को नेता मिल गया। इसी शीर्षक का ऊपरी शीर्षक है—और विध्वंसक विचार-रिक्तता में राष्ट्रीयता का दीपक जल उठा।

यह एक बड़ी उपलब्धि है, पर एक व्यापक उपलब्धि भी है। इसकी व्यापकता के कई रूप हैं जिन्हें संक्षेप में हम यों गिनें—

१. प्रधान मन्त्री श्री शास्त्री जी, ग्रह मन्त्री श्री नन्दा, रक्षामन्त्री श्री चह्वाण, कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज, स्थल सेना अध्यक्ष जनरल चौधरी, वायु सेना अध्यक्ष श्री अर्जुनसिंह, जल सेना अध्यक्ष श्री सोमन, प्रजातन्त्री राष्ट्रीय नेतृत्व के इन विविध स्तम्भों में अथाह तालमेल रहा और इस तालमेल पर हमारे राष्ट्रपति के आशीर्वाद की छाया रही।

२. प्रधान मन्त्री ने विरोधी दलों के नेताओं को अपने साझीदार की तरह विश्वास में लिया और उन नेताओं ने उस विश्वास के गौरव को अनुभव कर पूर्ण उत्तरदायित्व का परिचय दिया। हमारे उभरते प्रजातन्त्र के इतिहास की यह एक प्राण पोषक घटना थी।

३. १९६२ के चीनी आक्रमण के समय जनता में भी उत्साह उमड़ा था, वह भीड़ का उत्साह था और पाकिस्तान युद्ध के समय जो उत्साह उमड़ा, वह प्रशिक्षित टोली का उत्साह था। पहले में उभार अधिक था, दूसरे में गहराई और व्यवस्था। नागरिक आक्रमणों के समय उसकी अग्नि परीक्षा हुई और वह खरा उतरा। हवाई आक्रमणों के समय जनता ने जिस अभय, साहस, सन्तुलन एकता का सहज परिचय दिया, उसमें वह इंगलैंड, जर्मनी और रूस की प्रशिक्षित जनता के दर्जे की ही जनता सिद्ध हुई, उससे घटिया नहीं, जरा भी घटिया नहीं।

४. चीनी आक्रमण के समय जवानों और अफसरों के बीच काफी गहरी खाई खुद गई थी। १९६२-६३ में स्वयं मैंने सौ से अधिक जवानों से बातचीत की थी और उन्हें अपने अफसरों के विरुद्ध क्रुद्ध पाया था; एक वाक्य कई के मुख से सुना था—अब की बार फायरिंग का हुकुम हो तो पहली गोली अफसरों को मारेंगे, तब दुश्मनों को।" इस युद्ध में यह खाई तो भर ही गई, जवानों और अफसरों में ऐसी गहरी दोस्ती होगई जिसे इश्किया रिश्ता कह सकते हैं। इसका श्रेय हमारे स्थल सेना अध्यक्ष जनरल चौधरी को है जिन्होंने पद सम्भालते ही इस दिशा में प्रयत्न आरम्भ कर दिये थे और अफसरों को ऐसे निर्देश दिये थे, जो एकता के उद्घोष हों। उनमें उपरी टोली की भाषा सीख लेना और उनके जातीय एवं घरेलू उत्सवों में शामिल होना भी था। इस युद्ध में अफसर जवानों के साथ जूझे, जैसे वे भी जवान ही हों, अफसर नहीं। कई बार वे जनरलों से विशेष आग्रह करके जवानों के साथ रहे। इसी कारण हमारे शहीद अफसरों की संख्या संसार भर के अफसरों की शहादत के अनुपात से अधिक रही। निश्चय ही उनकी शहादत ने जवानों, अफसरों को एक छेद के भिन्न-भिन्न अंगों की तरह जोड़ दिया। वे धन्य हुए, उनसे देश धन्य हुआ, क्योंकि उनके साहस और बलिदान का ही यह फल है कि आज पाकिस्तान राष्ट्रीय हौंसले में घाटा खा गया और भारत उस ऊंचाई पर पहुँच गया है कि अब अकेले ही दुश्मनों से लड़ने का दम रखता है। हमारे नेता की जिम्मेदारी नम्बर एक यह कि जनता और जवान का यह दम अब हमेशा बना रहे, बढ़ता रहे। इसके लिये आवश्यक है कि हमारा नेता जनता की दृष्टि में आदर्श बना रहे।

यह एक बारीक बात है कि आम आदमी के सामने लालबहादुर शास्त्री अपने गांव के पंच, थाने के थानेदार, प्रमुख बी.डी.ओ. और इसी तरह के अफसर, सहकारी समितियों के डायरेक्टर, मंडल कांग्रेस के कार्यकर्ता और विधायक अंग के रूप में हो रहते हैं प्रधान मंत्री के रूप में नहीं। इसलिये आवश्यक है कि आज के वातावरण का लाभ उठाकर इस पूरे ढाँचे को कस दिया जाये, जिससे दृढ़तापूर्वक जनता को त्रास देने वाली दुष्टताओं का दमन और संजीवनी सुचिताओं का पोषण हो सके। ○

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

हमारा प्रचारतन्त्र सुव्यवस्थित हो

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९४८ की बात है।

मैं मसूरी में था। शाम को एक दिन घूमने निकले, तो परिवार का छोटा बालक अस्वस्थ था। उसके लिए एक टोकरी वाला साथ ले लिया। बालक टोकरी में बैठ गया और टोकरी वाले किशोर ने टोकरी कंधे लगाली। रास्ते में हमने चाय पी, तो टोकरी वाले किशोर को भी पिलाई। हमने चाट खाई, उसे भी खिलाई। हमने मिठाई ली, उसे भी दिलाई। घर लौटे, तो घड़ी देखी। उसके बारह आने बैठते थे। मैंने उसे एक रुपया देकर प्यार से थपथपा दिया। बड़ा भोला-सा, सलोना-सा किशोर था वह।

लौटते समय उसका चाचा भी साथ हो गया था। उसने पहाड़ी भाषा में अपने चाचा को हमारे सद्व्यवहार की बात बताई, तो वह बोला—"यह विधवा माँ का इकलौता पुत्र है। मैं इसे साथ ले आया था कि कहीं काम पर लगा दूँगा, पर जहाँ भी रखा, दो-तीन दिन बाद हटा दिया। आप इसे अपने पास ही रख लें।"

हमें काफी दिन मसूरी रहना था, हमने उसे रख लिया। वेतन छह रुपये महीना और खाना। नाम उसका महीसुर। दूसरे दिन उसे नये कपड़े पहनाये, तो उसके पैरों में भयंकर ऐक्जिमा देखा। डाक्टर के पास लेगया, इलाज कराया, ठीक हो गया, अब महीसुर बहुत खुश। कोई एक महीने बाद मैं हजामत बनवाने गया, तो वह भी साथ था। भौंचक-सा दुकान की सजावट देखता रहा। तब उसने अपने पूरे सिर पर हाथ फेर कर नाई से पूछा—"बाल काटने—मतलब, सिर पर मैशीन फेरने—का कितना?

नाई ने कहा—"चार आना।" तब महीसुर ने कान से गुद्दी तक उगली फेर कर पूछा—"इसका—मतलब, अंग्रेजी बाल काटने का—कितना?" नाई ने कहा—"छह आना।"

महीसुर उछल-सा पड़ा—"हाय राम, तन्नक-तन्नक बाल काटने का छह आना और पूरे बाल काटने का चार आना।" हम सब उसके भोलेपन पर हंस पड़े। कुछ दिन बाद हम मसूरी से नीचे जाने लगे, तो अलग होने को वह तैयार नहीं हुआ, रोने लगा। उसके चाचा ने भी कहा, तो साथ ले आए।

घर आते ही हमने मुरेली का टेबिल-फैन चलाया, तो महीसुर चमत्कृत हो उठा, बोला—"बाबू जी, पानी!" और पंखे के चारों ओर नाचता-सा घूमने लगा—"पानी है बाबू जी।"

मुझे अजीब-सा लगा—"कहां है पानी महीसुर बेटा?" पंखे के पास कान लगा कर बोला—"बोलता है बाबूजी!" बड़ी देर में समझ में आया कि पंखे की भीनी आवाज में इसे पहाड़ी झरनों की झां-झां का आभास हो रहा है। भाव-विभोर हो, मैंने उसे गोद में खींच लिया और तब कई बार पंखे को चलाकर-बन्दकर उसे समझाया कि पानी नहीं, इसकी आवाज है। मोटर बस भी उसने पहली बार मसूरी में ही देखी थी। बहुत दिनों तक वह उसे रेल कहता रहा, बाद में समझाने पर 'पों-पों' कहने लगा था।

इतना भोला था महीसुर। सहारनपुर आने के एक महीने बाद ही उसने अंग्रेजी बाल कटा लिए और तीन महीने बाद वह बिना मुझ से कहे एक दिन कहीं चला गया। पांच महीने बाद एक दिन शाम को वह मुझे मिला, तो शराब पिये हुए था और पंजाबी होटल में काम करता था। मैं दुख से धक रह गया उसे देख कर कई दिन मैं उसकी ही बात सोचता रहा। चिन्तन ने अब उसे भारत की भोली जनता का प्रतीक बना दिया था, चौंका देने वाला और उद्बोधक।

इसके कुछ दिन बाद मैं प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू से मिला, तो मैंने उन्हें महीसुर की बात सुनाई। आरंभ में खूब हँसे, फिर गंभीर हो गए। मैंने निवेदन किया—देश की जनता ऐसी ही भोली है। हम उसमें चाहे जैसे संस्कार बो सकते हैं। हमारे लिए यह वरदान है, पर वह खतरा भी है कि हम चूक जाएं, तो कोई दूसरा उसे अपने साथ लेले, बुरे विचारों में ढकेल दे। इसलिए राष्ट्रीय प्रचारतंत्र को जागृत और जीवंत होना चाहिए, जो इस अच्छे खेत में अच्छे बीज बो सके-पनपा सके।

वे सहमत थे, जैसाकि उनका स्वभाव था, हर अच्छी बात को पसन्द करना, उन्होंने इसे भी पसन्द किया, पर हुआ कुछ नहीं और हमारी अबोध जनता शहरी तौर पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पश्चिम की अंधी नकल में बह गई और दोहरी तौर पर उदासी के घेरे में रह गई। फलस्वरूप देश में राष्ट्रीय चरित्र के विकास का जो यज्ञ गान्धी जी ने रचा था, यही नहीं कि वह आगे नहीं बढ़ा, जो हुआ था वह भी नष्ट हो गया। कहें, राष्ट्रीय चरित्र के विकास को गहरा धक्का लगा।

भारत की जनता के जीवन स्रोत बहुत गहरे हैं और इसी कारण अब भी वे सूखे नहीं हैं, हम उसे अच्छे देश की अच्छी जनता कह सकते हैं। १९६२ में भारत पर चीनी आक्रमण के समय भारत की जनता ने जिस धैर्य, साहस विवेक और एकता का प्रदर्शन किया, वह इंगलैंड की प्रशिक्षित जनता के स्तर से नीचे का तो नहीं था। उसे देखकर देश के नेता भावमुग्ध, संसार के नेता आश्चर्य-मुग्ध रह गए थे और हमारा खूंखार दुश्मन स्तब्ध।

उस धैर्य, साहस, विवेक और एकता के दर्शन अब दुर्लभ हो गए हैं और हमारे नेता पूछते हैं जनता का वह जोश कहां गया? यह प्रश्न कहता है कि हमारे नेता उस जोश के दर्शन से पहले भी अन्धेरे में रहे थे और बाद में भी अन्धेरे में ही भटक रहे हैं। अवाड़ी कांग्रेस के अध्यक्ष कोई साहब बहादुर या महापुरुष नहीं, श्री उच्छंग राय नवलशंकर ढेबर थे। वे शुद्ध गांधीवादी सत्पुरुष हैं—एक-दम जनता के आदमी, महान ढेबर नहीं, श्री ढेबर भाई, पर अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कई पेज इस बात पर रंगे थे कि जनता में जोश क्यों नहीं है?

बरसों हमारे देश में दो प्रश्नों पर बहस हुई है—जवाहरलाल के बाद कौन? और जनता में जोश क्यों नहीं? दूसरे प्रश्न का उत्तर जनता ने पलक मारते दे दिया था और पहले प्रश्न का उत्तर दे दिया स्वयं उन्होंने जो उससे परेशान थे। यह क्या बात हुई? यह बात हुई यह कि हमारा बौद्धिक वर्ग जड़ से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर बैठा है और रस मिलता है जड़ से, तो जड़ से कटकर वह आत्मिक रूप से सूख गया है और इसीलिए वह सूखे प्रश्नों में उलझा रहता है।

राजनीति ही नहीं, साहित्य का भी यही हाल है। बरसों हमारे साहित्यिक इस प्रश्न पर गम्भीर गोष्ठियां जोड़ते रहे कि क्या हमारे साहित्य में गतिरोध है? अब उन्हें एक नया विषय मिल गया है नई-पुरानी कविता का और धड़ाधड़ गोष्ठियाँ हो रहीं हैं इस पर अंग्रेजों ने धूर्ततापूर्ण कूटनीति से हमारे इतिहास के आरम्भ को बुद्धकाल से जोड़ दिया था और इस तरह हमारे लाखों साल के इतिहास को बट्टेखाते लिख उसका आरम्भ युद्धकाल से मान लिया था। अब ऐसे लोग हैं, जो हिन्दी की कविता का वास्तविक आरम्भ १९५० से मानते हैं—इससे पहले जो कुछ है घास-कूड़ा और ऐसे लोग भी हैं, जो पूरी नई पीढ़ी को, उसके सृजन को बुद्धि का व्यायाम कहते हैं और बट्टे खाते लिखते हैं।

यह तो था ही, इस युद्ध में एक नया मजाक हुआ कि राष्ट्र के महान साहित्यिक उद्बोधक साहित्य सर्जना का अपना सहज काम छोड़ बयान बाजी पर उतर आये—उन्होंने भी राजनीतिज्ञों की तरह युद्ध के सम्बन्ध में लेख-गीत न लिखकर बयान दिये और इस तरह अप्रत्यक्ष और अकथित रूप से यह सुख अनुभव किया कि देश में मिनिस्टरों की तरह ही उनकी भी आवाज है। हाय रे, जीवन की विडम्बना कि आवाज के बादशाह घड़े में मुंह देकर अपनी आवाज की ऊँचाई का गर्व अनुभव कर रहे थे। जब कलाकार अपने केन्द्र में पतित हो जाता है; तो इस तरह के सांग भरकर ही उसकी आत्मतुष्टि का साधन बन जाता है। इसी स्थिति में यदि हमारे देश का प्रचार तन्त्र खंडित है और प्रजातन्त्र अस्वस्थ है, तो यह उचित ही है।

यह क्यों? यह इसलिए कि प्रजातन्त्र जीवन का कोई जड़ ढांचा नहीं, एक सजीव मनोवृत्ति है—एक जहनियत है। इंगलैंड का सबल प्रजातन्त्र वहां के संविधान से नहीं, वहां की आदतों परम्पराओं से अनुप्राणित है। इस प्रजातन्त्र के दो पोषक तत्व हैं—पहला प्रचारतन्त्र, दूसरा प्रहारतन्त्र। प्रचारतन्त्र से समाज में सहिष्णुता की, सहयोग की, समन्वय की मनोवृत्ति पनपती है और प्रहारतन्त्र असहिष्णुता, असहयोग और विघटन की प्रवृत्तियों का अवरोध करता है। माली गुलाब की क्यारी में खाद देता है, जल सींचता है और जो घास-फूस उग आए, उसे काट फेंकता है। प्रचारतन्त्र है खाद देना, सींचना और प्रहारतंत्र है उस घासफूंस को काटना, जो उस खाद-सिंचन का दुरुपयोग कर गुलाब को बढ़ने से—फूलने से रोकता है। यदि प्रचारतन्त्र देश में कमजोर हो, तो निश्चय ही समाजविरोधी तत्व इतने बढ़ जाते हैं कि प्रगति रुक जाती है, गतिरोध उत्पन्न हो जाता है। वही स्थिति आज देश में है। हमारे भावनाशील गृहमन्त्री श्री गुलजारी लाल नन्दा ने प्रहारतन्त्र की ओर इधर खूब ध्यान दिया है, पर प्रचारतन्त्र अब भी खंडित है, अस्वस्थ है।

केन्द्र में सूचनामन्त्री हैं, सब राज्यों में सूचनामन्त्री हैं और उनके सूचना-विभाग हैं। हरेक दूतावास में भी एक प्रचारकक्ष है। इन पर देश का करोड़ों रुपया प्रतिसाल व्यय होता है। इस तरह हमारे देश का प्रचारतन्त्र देश से विदेश तक फैला हुआ है, पर कितने आश्चर्य और दुख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की बात है कि स्वतन्त्रता के १८ वर्षों में एक भी ऐसा सूचना मंत्री नहीं आया, जिसके दिमाग में प्रचार का वास्तविक चित्र हो, वह प्रचार विधि के क्रम-विकास से परिचित हो, जनता की मनोवृत्तियों के साथ राष्ट्र की प्रवृत्तियों को जोड़ने की जिसमें सूझ और बेचैनी हो, जो विचार और भावना का सही उफान उठा सकता हो या विचार और भावना के गलत उफान को रोक सकता हो और अपने विभाग को सही समय पर सही निर्देश दे सकता हो।

जब मन्त्रियों का यह हाल है, तो सूचना-विभाग के निर्देशकों-डायरेक्टरों एवं डायरेक्टर जनरलों का क्या हाल होगा? धड़ा-धड़ पन्ने रंगे जाते हैं, मासिक-साप्ताहिक प्रकाशित होते हैं, पर कोई नहीं देखता कि उनमें क्या छप रहा है और जो छप रहा है उसका क्या उपयोग है? एक राज्य के सूचना-निदेशक से, जो मेरे पुराने मित्र हैं, मैंने एक बार पूछा—आपकी प्रकाशन-नीति क्या है? बोले—"हमारी प्रकाशन नीति है आल राइट–आल राइट।" मेरी कुछ समझ में नहीं आया, तो बोले—'हमारी प्रकाशन नीति है अपने मन्त्री जी को बेवकूफ बनाना।' मैं और भी उलझ गया तो उन्होंने समझाया–"टाइटिल ऐसा हो हमारे प्रकाशन का कि मंत्री जी उसे कुछ देर जरूर इस तरह देखें, जैसे वे छपाई कला के विशेषज्ञ हों और उसे उलटें, तो सामने ही स्वयं उनका बड़ा चित्र छपा मिले, जिसके नीचे हमारा लिखा उनका वक्तव्य हो। उसे वे दबी आँखों से देखें, जैसे देख न रहे हों और पन्ने उलटें। आगे उनके द्वारा किसी उद्घाटन आदि का छोटा चित्र हो, बस इसके बाद वे जल्दी पन्ने उलटें और कहते जाएं—"आल राइट, आल राइट।"

इन मन्त्रियों और विशेषज्ञ निदेशकों की भीड़ में मुझे एक ही आदमी ऐसा मिला, जिसके मन में प्रचारतंत्र का स्वरूप चित्र था और जो उसे साकार करने में योजना-पूर्वक जुटा हुआ था, पर जिसे अज्ञों ने काम नहीं करने दिया। वे थे श्री भगवतीशरण सिंह, तब उत्तर प्रदेश के सूचना-निदेशक और अब हिमाचल के डवलपमेंट कमिश्नर। विदेशी दूतावासों में तो ऐसे-ऐसे लोग प्रेस-अटैची बनाए गए हैं, जिनका प्रचार से इतना भी सम्बन्ध नहीं, जितना अचार से। कच्छ में पाकिस्तानी आक्रमण के समय अमरीका के विशाल विश्वविद्यालय कैलीफोर्निया में जो पाकिस्तानी छात्र पढ़ते हैं, उन्हें पाकिस्तानी दूतावास के प्रेस अटैची ने कच्छ पर पाकिस्तान का आक्रमण होते ही पढ़ने और बांटने के लिए काफी साहित्य दिया, पर भारत के विद्यार्थियों को भारत के दूतावास ने पत्र लिखने पर भी साहित्य, पत्रों का उत्तर भी नहीं दिया।

दो बातों पर हमारा ध्यान जाना चाहिए कि भारत की जनता महीसुर की तरह अबोध है और सत्य उसके पास न हो, तो असत्य को पकड़ कर भी वह भड़क उठती है। यह भड़क कितनी भयंकर होती है यह हम राज्यों के पुनर्गठन पर महाराष्ट्र और गुजरात की जनता के खूनी संघर्ष में, हिन्दी के नाम पर मद्रास के विध्वंसक उपद्रवों में और गोवा के तथाकथित प्रश्न पर मैसूर के पथराव में देख चुके हैं, पर इन से हमारे प्रचारतन्त्र ने कोई पाठ नहीं पढ़ा और न १९६२ के चीनी आक्रमण से। नतीजा यह सामने है कि न भारत की जनता के पास ही नए भारत का कोई चित्र है, न विदेश की जनता के पास ही।

भारत की जनता के लिए अच्छे प्रचारतंत्र की आवश्यकता इसलिए भी है कि वह मूलतः बहुत अच्छी है, सत्य को समझना और गृहण करना चाहती है। क्या हमारे देश के कर्णधारों में किसी ने भी इस बात पर ध्यान दिया है कि हिन्दी के प्रश्न पर जिस क्षेत्र में घोर विध्वंसक उपद्रव हुए, उसी में कुछ दिन बाद हुए उपचुनाव में उपद्रवों का नेतृत्व करने वाली संस्था द्रविड़-मुनेत्र-कड़गम का उमीदवार काफी वोटों से हार गया और कांग्रेस का उमीदवार जीत गया। भारत पाकिस्तान युद्ध के समय तो जनता ने अपनी एकता, उत्साह और साहस से यह सिद्ध कर दिया है कि वह इंगलैंड–अमरीका की प्रशिक्षित जनता से भी अधिक उत्तम और देश है और हमारा प्रजातन्त्र ठीक हो, तो वह देश के लिए युद्ध भी कर सकती है।

जिसे भड़काया जा सकता है, उसे समझाया भी तो जा सकता है, पर समझाये कौन, जिनके हाथ में देश का प्रचारतंत्र है, वे उसके स्वरूप, कार्य, विधान और प्रभाव से परिचित ही नहीं हैं। भारत के अंग्रेज गवर्नर जनरल लार्ड माउन्ट बैटन ने एक बार अपने कर्मचारियों से कहा था कि सरदार पटेल भारत के रियासती मन्त्री भी हैं और सूचना मन्त्री भी, पर दुख है कि वे रियासती मंत्री को इतना अधिक महत्व देते हैं कि उनका सूचना मंत्री गौण हो गया है। इस कथन के इतने दिनों बाद भी हमारे सूचना मंत्रियों की दृष्टि में प्रचार का कार्य फालतू है। इसीलिए उनके विभागों में पालतू आदमी भरे हुए हैं और उनके काम का ढंग टालतू है। क्या इस युद्ध के बाद भी इधर ध्यान दिया जाएगा और प्रजातंत्र की यह मांग पूरी की जाएगी कि हमारा प्रचारतंत्र सुव्यवस्थित हो? ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युद्ध के सम्बन्ध में जनता के कुछ प्रश्न

भारत-पाकिस्तान-युद्ध के सम्बन्ध में जनता के मन में कई प्रश्न हैं, जो उसे आकुल करते हैं, वह उनका समाधान जानना चाहती है। उसके मन की क्यों पैनी है और देश के राजनैतिक चिंतकों का कर्तव्य है कि वे इस पैनी क्यों को मुलायम करें। प्रजातंत्री देश में प्रश्न जनता का अधिकार है और समाधान शासकों और विचारकों का उत्तरदायित्व है।

इन आकुल प्रश्नों के बीच में विश्वास की एक शान्त दीपशिखा भी है, जिसमें कहीं कम्प नहीं। वह यह कि ४५ करोड़ मानव इस बात में विश्वस्त हैं कि इस युद्ध में भारत के नेताओं ने निर्णय करने में और भारत की सेनाओं ने संघर्ष करने में कमाल किया है और इस युद्ध से भारत की शान संसार में बढ़ी है। जनता का मन नेताओं और सेनाओं के प्रति सम्मान से भरपूर है। इसका स्पष्ट अर्थ हुआ कि जनता के प्रश्न मूल के सम्बन्ध में नहीं, विस्तार (डिटेल्स) के सम्बन्ध में हैं, यानी वे अनास्था के कुतर्क नहीं, आस्था की लहरें हैं। वे हमारे राष्ट्र के सुजीवन के चिन्ह हैं, कुजीवन के नहीं। अब हम प्रश्नों पर आयें।

पहला प्रश्न यह है कि चीन का अल्टीमेटम आने पर अमरीका ने हमारी मदद करने का निश्चय किया और चीन से साफ कह दिया कि यदि वह हमला करेगा, तो अमरीका अपनी पूरी ताकत से उस पर चोट मारेगा। इसका मतलब होता है कि अमरीका हमारे साथ है, पर इस लड़ाई में अमरीका ने पाकिस्तान का खुले आम पक्ष लिया और हमलावर होते हुए भी उसके खिलाफ एक शब्द नहीं कहा, बल्कि उल्टे हम पर ही दबाव डाला, तो प्रश्न यह है कि अमरीका हमारा दोस्त है या पाकिस्तान का? और वह हमारे साथ है या पाकिस्तान के?

हमारी जनता का दिमाग धार्मिक-नैतिक है, पर यह दुनिया है राजनैतिक। धर्म-नीति में एक शब्द का एक ही अर्थ होता है, एक विषय में एक आदमी की एक ही राय होती है, पर राजनीति में एक शब्द के कई अर्थ होते हैं और सच तो यह है कि कोई अर्थ होता ही नहीं, जैसा मौका हो, वैसा अर्थ लगा लिया जाता है। इसी तरह हर आदमी की हर विषय में अलग राय होती है, यानी कोई राय होती ही नहीं, जब जैसा मौका हो, वैसी राय बना ली जाती है। इसके साथ ही यह कि धर्म-नीति में मित्रता का अर्थ होता है सिर्फ मित्रता और शत्रुता का अर्थ होता है सिर्फ शत्रुता, पर राजनीति में मित्रता और शत्रुता का कोई अर्थ नहीं होता। बात यह है कि धर्म देखता है औचित्य के चश्मे से, यानी क्या उचित है और क्या है अनुचित, पर राजनीति देखती है मतलब-फायदे के चश्मे से कि किस में मतलब सिद्ध होता है, किस में हमारा फायदा है। कहें, धर्म-नीति है आदर्शवादी और राजनीति है व्यवहारवादी। अमरीका हमारा दोस्त है या पाकिस्तान का और वह हमारे साथ है या पाकिस्तान के, इस प्रश्न का उत्तर भी हमें इसी यथार्थ की रोशनी में खोजना पड़ेगा।

पहली बात यह है कि भारत और पाकिस्तान में फर्क है। भारत एक स्वतन्त्र विचार का देश है, जो अमरीका, रूस, फ्रांस, जापान, चीन की तरह संसार में अपनी स्वतंत्र आवाज रखता है, पर पाकिस्तान अमरीका का पिछलग्गू देश है, जो अमरीका के लाभ की दृष्टि से अपनी नीति बनाता है। उदाहरण के लिए पाकिस्तान में अमरीका के हवाई अड्डे हैं और पाकिस्तान अमरीकी सैनिक संगठनों में बंधा हुआ है। कहें, पाकिस्तान अमरीका का पालतू कुत्ता है और भारत ऐसा देश है, जो समय पर अमरीका को डाट भी देता है। भारत आज जो कुछ है, स्वयं है, पर पाकिस्तान आज जो कुछ है वह अमरीका की ही मदद से है। पाकिस्तान की ताकत अमरीका की ताकत है, पर भारत की ताकत सिर्फ भारत की ताकत है, जो अमरीका के इशारों पर नहीं नाच सकती। इसीलिए अमरीका ने दिल खोलकर पाकिस्तान को सैनिक सहायता दी है इसका सही मतलब है कि अमरीका ने अपनी एक फौजी शाखा को मजबूत किया है।

यदि यह बात है, तो फिर अमरीका ने पंचवर्षीय योजनाओं में कर्ज और दान के रूप में भारत की इतनी मदद क्यों की है? सचमुच यह एक अहम सवाल है, पर कहा तो कि राजनीति में एक बात में एक राय नहीं होती। एशिया में दो नये देश उठ रहे हैं—एक भारत दूसरा चीन। भारत प्रजातन्त्री है और चीन साम्यवादी। अमरीका सब कुछ बर्दाश्त कर सकता है, पर संसार में साम्यवाद की बढ़ती बर्दाश्त नहीं कर सकता। हालत यह है कि भारत में प्रजातन्त्र टूट जाए, तो एशिया-अफ्रीका को साम्यवादी होने से कोई नहीं रोक सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमरीका का नारा है कि साम्यवाद के जरिये जनता को जो आराम-सुविधा अपनी आजादी डिक्टेटरी के पास गिरवी रख कर मिलती है, वह प्रजातन्त्र के जरिए पूरी आजादी का आनन्द देते हुए भी जनता पा सकती है। साम्यवादी इसे झूठ कहते हैं। अब अगर भारत में प्रजातंत्र सफल होता है, तो एशिया-अफ्रीका के नये-उभरते देश उस रास्ते पर चलेंगे और इस तरह प्रजातन्त्र का फैलाव होगा, पर यदि भारत में प्रजातंत्र असफल होता है और चीन अपने निर्माण में साम्यवादी डिक्टेटरी के ढंग से सफल हो जाता है तो एशिया-अफ्रीका के देशों के पास कोई चारा नहीं, सिवाय इसके कि वे साम्यवाद को अपनायें। इस हालत में अमरीका चीन के मुकाबले भारत की सफलता चाहता है और इसीलिए पंचवर्षीय योजनाओं में वह भारत का मददगार है।

तजुर्बा यह है कि गरीबी और अव्यवस्था में साम्यवाद पनप उठता है, क्योंकि जनता यह सोचने लगती है कि खाना-कपड़ा-मकान मिले, भले ही व्यक्तिगत आजादी छिन जाये। अमरीका की मदद भारत को इस हालत में फंसने से बचाने के लिए है, पर अमरीका यह मदद देते हुए भी यह नहीं चाहता कि भारत इतना ताकतवर होजाए कि फिर उसे अमरीका की जरूरत ही न रहे, परवाह ही न रहे। इसीलिए अमरीका ने भारत को कभी सैनिक मदद नहीं दी, निर्माणात्मक ही मदद दी।

जब चीन ने भारत पर चढ़ाई की तो उसे अमरीका ने रोकने के लिए दिल खोलकर भारत की मदद की, जैसे बिना कहे ही कह दिया कि तुम ऐसे मौकों पर सदा हमारा भरोसा कर सकते हो, यानी फौजी ताकत के मामले में तुम हमारे सहारे ही रहो, यही ठीक है। इस बार भी भारत-पाकिस्तान युद्ध में अमरीका की मदद पाकिस्तान के साथ रही और भारत के साथ अमरीका ने इन्साफ नहीं किया। यहाँ तक कि युद्धविराम होने पर भी उसका रुख हमारे खिलाफ ही है, पर जब चीन ने अल्टीमेटम दिया, तो अमरीका ने चीन से साफ कह दिया कि हम पूरी ताकत से भारत का साथ देंगे और जरूरत पड़ी, तो एटम बम का इस्तेमाल भी करेंगे। चीन के पीछे हटने में यह भी एक कारण हुआ। अब तक जो कुछ कहा उसका मतलब है कि अमरीका पाकिस्तान को खरीदने में उसे अपना हथियार बनाये रखने में उसके साथ है, पर चीन को एशिया-अफ्रीका में न बढ़ने देने में भारत के साथ है, यानी किसी के साथ नहीं, अपने मतलब के, अपने फायदे के साथ है।

'पात केले के पात में, पात पात में पात' की तरह राजनीति की बात में भी बात उलझी रहती है। यहाँ भी इस बात में से एक नई बात उभर आई है और जनता के मन को परेशान करती है। वह बात यह है कि जब पाकिस्तान को अमरीका अपना पालतू कुत्ता बनाना चाहता है, तब वह पाकिस्तान और साम्यवादी चीन की दोस्ती कैसे बर्दाश्त कर रहा है? सवाल बड़े काम का है और सही जगह पर है, पर कहा तो कि राजनीति में दोस्ती-दुश्मनी बेमाने शब्द होते हैं और विश्वास का कोई अर्थ नहीं होता। इस हालत में अमरीका कैसे विश्वास कर सकता है पाक का? स्टालिन के बारे में मशहूर है कि वह किसी काम पर एक जासूस को भेजता था, तो उस जासूस की जासूसी के लिए दूसरा जासूस भेजता था और दूसरे पर तीसरा। पूरी राजनीति पर अविश्वास का भूत सवार रहता था, क्योंकि धोका देना ही जिसका जीवन धर्म हो, वह धोका खाने के भय से कैसे बच सकता है? तो अमरीका भी पाकिस्तान का विश्वास नहीं कर सकता और वह इस क्षेत्र में बिलकुल अपनी निजी, जो सौ फीसदी उसकी हो, ऐसी जागीर चाहता है। बिना लाग-लपेट के वह कश्मीर चाहता है और इस चाह की पूर्ति में पाकिस्तान उसका हथियार है।

एक मिनट के लिए भी मेरे मन में कभी यह बात नहीं आई कि काश्मीर का मसला, पाकिस्तान का मसला है। सौ फीसदी वह भारत और अमरीका का मसला है। थोड़े से शब्दों में यों समझें कि कबायलियों ने १९४७ में जो चढ़ाई काश्मीर पर की उसका नेता अमरीकी रसैल हैट था, पर भारत की फौजों ने उसे पीट भगाया और तब मामला सुरक्षा परिषद् में गया, तो क्या यह कोई छिपा राज है कि वहां उसे अमरीका ने ही नहीं सुलझाने दिया और उसने भारत पर इस बारे में हमेशा जोर डाला कि वह काश्मीर को छोड़ दे।

क्या अमरीका भारत से लेकर पूरा काश्मीर पाकिस्तान को देना चाहता है? ना, वह आजाद काश्मीर चाहता है। आजाद काश्मीर शब्द सब की जबान पर है, पर इसका मतलब बहुत कम लोग समझते हैं। अंग्रेजों ने हिन्दू मुसलमानों के बीच अपनी कला से दुश्मनी के ऐसे बीज बोये कि साथ रहना असंभव हो गया। तब वह जज बनकर बीच में आ बैठा और इस तरह देश का बटवारा भी हो गया और उसे बुराई भी नहीं मिली कि उसने बटवारा कराया। काश्मीर के बारे में वही दाव अमरीका का है। काश्मीर के मामले में अभी तक सुरक्षा परिषद् की सवा सौ से ज्यादा मीटिंग हो चुकी हैं। उनमें जो जहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उगला गया है और बहसें हुई हैं, उनसे काश्मीर अब पाकिस्तान की भी प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया है और भारत की भी। अमरीका का मकसद भी यही था। वह चाहता है कि किसी दिन जज बनकर बैठे और दोनों से कहे कि तुम भी छोड़ो काश्मीर, तुम भी छोड़ो काश्मीर, उसे आजाद मुल्क बना दो और इस तरह वह काश्मीर को अपने साये में लेले। युद्ध की दृष्टि से काश्मीर लेकर वह चीन, रूस, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, भारत और तिब्बत पर एक साथ नजर रख सकता है और काश्मीर को ऐसी मजबूत छावनी बना सकता है कि एशिया-अफ्रीका को असर में रख सके।

उसकी इस चाह के पूरा होने में भारत ही रुकावट है। भारत ने अभी तक उसकी कोई बात नहीं चलने दी है, पर अमरीका बराबर उस पर दबाव डाल रहा है। उसके फौजी दबाव का साधन पाकिस्तान है और चीन-पाकिस्तान दोस्ती उस पाकिस्तानी दबाव को वजनदार बनाती है, इसलिए अमरीका ने चीन पाकिस्तान दोस्ती के बाद भी पाकिस्तान को अपनी गोद से अलग नहीं किया है। चीन के इशारे और ट्रेनिंग पर पाकिस्तान ने काश्मीर पर जो यह नया हमला किया, उसे अमरीका के अब तक के सबसे वजनदार दबाव के रूप में ही हमें देखना चाहिए और गौरव अनुभव करना चाहिए कि हम उसे पूरी सफलता से तोड़ सके। चीनी अल्टीमेटम के बाद यह खतरा पैदा हो गया था कि अमरीका के पालतू कुत्ते पाकिस्तान की जंजीर कहीं चीन के हाथ में न चली जाए। इसीलिए अमरीका ने उस अल्टीमेटम को तोड़ने में हिस्सा लिया।

चीन अल्टीमेटम देने के बाद भी क्यों नहीं लड़ा? इस सवाल का जवाब यहीं खोजा जा सकता है। चीन का लाभ इसमें है कि पाकिस्तान कमजोर हो। इसीलिए उसने अपने पिट्ठू भुट्टो को बढ़ावा देकर पाकिस्तान को भारत से भिड़ा दिया। पाकिस्तान को अमरीकी हथियारों की जो ताकत मिली थी, वह चीन के इस दाव से आधी टूट गई। अमरीका ने तभी लड़ाई बन्दी की पेशकश की, जिससे पाकिस्तान और ज्यादा कमजोर न हो और स्यालकोट लाहौर के पतन के कलंक से बच जाए। चीन यह नहीं चाहता था, इसलिए उसने पाकिस्तान का दिल बढ़ाने को अल्टीमेटम दिया।

यह पाकिस्तान की अग्नि परीक्षा थी। भुट्टो लड़ाई बन्दी नहीं चाहता था और समझता था कि चीन की मदद से हम बढ़ी हुई भारत की फौजों को पीछे धकेल कर भारत में घुस जाएं और इस तरह अपनी खोई हुई इज्जत बचाले। उसका दाव सही था, पुरानी जगह पर ऐसा होता, तो पाकिस्तान में भुट्टो की इज्जत बहुत बढ़ जाती और वह पिस्तौल की गोली से अय्यूब को पटक मारता, क्योंकि लड़ाई बन्दी न मानने से पाकिस्तान अमरीका से पूरी तरह कट जाता और पाकिस्तान पूरी तरह चीन के असर में होता। अय्यूब दाव खेल गया और भुट्टो को बाहर भेजकर उसने लड़ाई बन्दी मानली और पाकिस्तान को अमरीका से बंधा रहने दिया। इस हालत में चीन से किस लिए लड़ता? और क्यों अपनी हवा उखड़वाता?

फिर इसकी जरूरत भी क्या थी, क्योंकि चीन पाकिस्तान पर यह एहसान रखने में तो कामयाब हो ही गया कि मैं अल्टीमेटम न देता, तो भारत की फौजें मुज़फ्फराबाद लेकर पूरे आजाद कश्मीर पर कब्जा कर लेती और स्यालकोट-लाहौर भी खतरे में पड़ जाते। चीन का यह एहसान पाकिस्तान पर और भी जोर से लदता और चीन लड़ाई बन्दी का पूरा यश लूटने की कोशिश करता, पर प्रधान मन्त्री शास्त्री चीनी अल्टीमेटम से पहले ही जब सुरक्षा परिषद के महामन्त्री ऊथांत भारत आए थे तो उनको उन्होंने लड़ाई बन्दी की स्वीकृति दे दी थे। इसने चीन को डींग मारने का मौका नहीं दिया। हाँ, इस घटना से चीन भारत की ताकत को तोल सका और यह भी समझ सका कि किसी एक के हाथ में मुल्क की बागडोर रहना ठीक नहीं। इसी सबक से उसने इन्डोनेशिया के डिक्टेटर सुकर्ण का तख्ता उलट कर वहां कम्युनिस्ट पार्टी की हकूमत कायम करने की कोशिश की, पर वह दाव भी उसका उल्टा पड़ा—वहां वह बुरी तरह पिट गया। अब देखना यह है कि अमरीका भारत पर कूटनीति का दबाव डालकर पाकिस्तान को खुश करने की जो कोशिश कर रहा है, उसमें वह सफल होता है या उसे फिर से फौजी मदद देकर भारत से लड़ने के लिए तैयार करता है। हर हालत में पाकिस्तान और भारत चीन की दोस्ती बनी रहेगी और अमरीका उसे तोड़ने की कोशिश नहीं करेगा, क्योंकि अमरीका रूस और चीन की एकता नहीं चाहता। इस समय रूस अमरीका चीन के विरोध में एक जगह हैं, पर कल अमरीका को रूस के विरुद्ध चीन से दोस्ती की जरूरत हुई, तो पाकिस्तान उसके बिचौलिये का काम कर सकेगा न। कहा तो कि कूटनीति में दोस्ती दुश्मनी बेकार शब्द हैं।

(२)

अमरीका हमारे साथ है या पाकिस्तान के? और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीन अल्टीमेटम देने के बाद युद्ध में क्यों नहीं कूदा ? इन दो प्रश्नों के बाद भारत-पाकिस्तान-युद्ध के सम्बन्ध में तीसरा महत्वपूर्ण प्रश्न, जो जनता के मन में अकुलाता है, यह है कि इंगलैंड भारत के खिलाफ क्यों है ? यह प्रश्न महत्वपूर्ण इसलिए है कि इंगलैंड ने खुले आम भारत के मुकाबले पाकिस्तान का साथ तो दिया ही, भारत के विरुद्ध इतना जहर भी उगला कि बात मतभेद से बढ़कर दुश्मनी तक पहुँच गई। भारत की जनता का मन इङ्गलैंड के लिए कितनी गहरी कड़वाहट से भरा है, इसका पता देश भर में गूंजी इस मांग से लगता है कि भारत को राष्ट्र-मण्डल से अलग हो जाना चाहिए। खुशी की बात है कि इस कड़वाहट में दुख की दीनता नहीं, क्रोध का पैनापन ही है। क्रोध का यह पैनापन लोकसभा के तेजस्वी सदस्य श्री भगवत झा आज़ाद की वाणी में फूट पड़ा था—"भारत को राष्ट्रमण्डल से निकल जाना चाहिए, पर देश के नेता राष्ट्र मण्डल में रहना ठीक समझें, तो उन्हें इंगलैंड को राष्ट्र मण्डल से निकाल देना चाहिए। राष्ट्र मण्डल सब सदस्यों का है, वह इंगलैंड की जागीर नहीं है।"

क्या यह क्रोध एक उफान है ? या इस क्रोध की जड़ गहरी है ? हाँ, इस क्रोध की जड़ गहरी है। इंगलैंड ने धूर्तता से भारत पर कब्जा किया, फिर उस की अर्थ-व्यवस्था को उजाड़ा और अपने ढंग पर पूर्ण सफल भारतीय वस्त्र-उद्योग को तहस-नहस कर उसे मांचेस्टर का बाजार बनाया, गांव-गांव फैली पंचायत व्यवस्था को भंग किया और शिक्षा व्यवस्था को तोड़ फोड़ कर विदेशी भावना, विदेशी जीवन पद्धति की ओर उसे ढकेला, बरसों उसे नादिरशाही दमन से पीसा, निःशस्त्र कर उसे हताशा में जकड़ा, साम्प्रदायिक तनाव को पैदा कर, बढ़ा कर देश के टुकड़े किये और तब कहीं भारत स्वतन्त्र हो पाया। स्वाभाविक था कि भारत के मन में इङ्गलैंड के प्रति दुश्मनी होती, अंग्रेज जाति के प्रति उसके मन में घृणा उफनती, वह उससे कोई सम्बन्ध न रखता, पर भारत एक महान संस्कृति का पिता है। यह संस्कृति प्रेम की है, सहयोग की है, सद्भाव की है, क्षमा की है। इसलिए भारत एक सहयोगी मित्र की तरह इङ्गलैंड के नेतृत्व में चलने वाले राष्ट्र मण्डल का सदस्य होगया—इङ्गलैंड की मित्रता में बंध गया।

भारत की स्वतन्त्रता की घोषणा होने पर जब प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू राष्ट्र मण्डल के प्रधान मन्त्री सम्मेलन में पहली बार लन्दन गए तो, एक भोज में श्रीमती इन्दिरा गांधी पूर्व प्रधान मन्त्री श्री विंस्टन चर्चिल के पास बैठी थी कि चर्चिल ने उनसे पूछा—"भारत के लोग अंग्रेजों के बारे में कैसा महसूस करते हैं ?" श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा—"बहुत अच्छा महसूस करते हैं, वहां एक भी आदमी ऐसा नहीं, जिसके दिल में किसी एक भी अंग्रेज के लिए दुश्मनी का ख्याल हो।" चर्चिल ने कहा—"तब मानना पड़ेगा कि भारत एक महान देश है।" पाकिस्तान-भारत युद्ध में अंग्रेजों के दुर्व्यवहार से भारत की इसी महानता को चोट पहुंची है और इसीलिए इंगलैंड के प्रति भारतीयों के क्रोध की जड़ गहरी है। यह कहना भी सही होगा कि इंगलैंड के प्रति जैसा क्रोध भारत में इस समय है, वैसा पहले कभी नहीं हुआ था और इसके साथ ही यह भी कि भारत मानसिक ऊंचाई के जिस धरातल पर आज है, वैसी ऊंचाई पर भी वह अंग्रेजी राज्य के इतिहास में और उसके बाद के १८ वर्षों की स्वतन्त्रता के समय में भी कभी नहीं पहुंचा था।

इस विवेचन के बाद वह प्रश्न और भी पैना हो उठता है कि इंगलैंड भारत के विरुद्ध क्यों है ? वह हमसे दुश्मनी क्यों कर रहा है ? प्रश्न के सामने आते ही सामने आ गई है एक लम्बी बैरक। यह सहारनपुर जेल की सात नम्बर बैरक है—१९३० के आजादी आंदोलन में मैंने इसी बैरक में अपनी सजा भुगती थी। मेरे जाने के कुछ दिन बाद बैरक के शुद्धि-कर्मचारियों (भंगी भाईयों) में अदला बदली हुई, तो एक शानदार व्यक्तित्व हमारी बैरक में आया—ठोड़ी से दोनों गालों पर चढ़ी हुई राजस्थानी ढंग की दाढ़ी, सिर पर करीने से बंधा साफा, बदन में राजस्थानी ढंग की बगल बंदी, पैरों में घुटनों तक की कसी हुई धोती और चिकना देशी जूता। मैंने देखा कि देखता ही रह गया। ओह, यह उदयपुरी राजपूत, पर वह तो भंगी था।

पांच-सात दिन बाद उसे छह महीने की सजा हो गई और उन्होंने अपने कपड़े बदल कर जेल के कपड़े पहन लिये, पर उसका बाँकपन ज्यों का त्यों रहा—तब भी एक शानदार व्यक्तित्व। इसका किस्सा यह था। १९१४ की लड़ाई में वह भरती हो गया था और पूरी लड़ाई नौकरी करता रहा था। लड़ाई के बाद इतने रुपये उसके पास थे कि उसकी हैसियत में वह कुबेर का भंडार ही था। घर से दूर कहीं उन्होंने एक दुकान खोल ली थी, अपने को जमा लिया था और यों ही बारह साल बीत गए थे। बुढ़ापा आया, तो घर याद आया और पसारा समेट कर गाँव आ गया था। रुपये पास थे, इरादा था कि जमीन खरीद कर खेती करूंगा।

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गांव राजपूतों का था और उनकी निगाह में आशाराम की यह ऊंची उठी जिन्दगी नगण्य थी, उनके लिए गण्य थी यह बात कि वह भङ्गी है और उसे गाँव में भङ्गी की तरह ही रहना चाहिए। एक दिन आशाराम अपने पूरे जलाल में छतरी लगाए, ठाकुरों की चौपाल के बाहर से निकला, तो एक कड़क ने उसके कान झनझनाए—"क्यों बे भङ्गी के, चार पैसे अण्टी में होगए, तो नवाब ही समझने लगा अपने को। सुन ले कान खोल कर, अगर तुझे इस गांव में रहना है, तो भङ्गी की तरह रह, यह नवाबी बन्द कर।"

आशाराम का दिमाग फौजी था, फिर चार पैसे पास थे—इससे भी बढ़कर यह कि वह बारह साल भङ्गी की तरह नहीं, एक राजपूत की तरह रह चुका था। उसे यह कड़क कैसे सुहाती, झिड़क कर उसने कहा—"तुम लोग बनते तो हो राणा प्रताप, पर आता नहीं तुम्हें बात करना भी!"

सुनकर सब भिन्ना उठे और भिन्नाकर मुखिया ने कहा—"अबे, अब तेरे दिन अच्छे हैं, तो ज़बान भी बन्द कर और छतरी भी।" झल्लाकर आशाराम ने कहा—"ज़बान भगवान ने दी है और छतरी मैंने नकद खरीदी है, इसलिए न जबान बन्द होगी, न छतरी।"

इस बातचीत के बाद मुखिया जी ने थानेदार से बातचीत की और १५-२० दिन के बाद चोरी के इलज़ाम में आशाराम पकड़ा गया और उसे छह महीने की सख्त सज़ा होगई। वही सजा वह हमारे साथ काट रहा था। भारत-पाकिस्तान-युद्ध में अंग्रेजों का रुख देख कर आशाराम मुझे बार-बार याद आया और बार-बार मैंने सोचा—उस गांव के राजपूत जितने दकियानूस थे, उतने ही दकियानूस हैं ये अंग्रेज और उन राजपूतों की निगाह में आशाराम की जो पोजीशन थी, वही पोजीशन भारत की है इन अंग्रेजों की निगाह में। ये राजपूत आशाराम को जिस तरह रहते देखना चाहते थे, उसी तरह भारत को देखना चाहते हैं अंग्रेज और उनकी इच्छा के विरुद्ध चलने पर जैसे उन राजपूतों ने आशाराम को अपने षडयन्त्रों में फंसाया था उसी तरह उनकी इच्छा के विरुद्ध चलने पर ये अंग्रेज भी भारत को अपने षडयन्त्रों में फंसा रहे हैं।

विस्तार में झांकें और गहराईयों में उतरें, तो बात हाथ आये। भारत अंग्रेजों का गुलाम था और उनकी इच्छा थी कि वह हमेशा गुलाम रहे। १८५७ के विप्लव के बाद उन्होंने इस बारे में कोई कोशिस बाकी न छोड़ी थी, पर भारत ने हिंसात्मक और अहिंसात्मक क्रांतियों की ऐसी झड़ी लगाई कि अंग्रेज भारत की स्वतंत्रता स्वीकार करने के लिए मजबूर होगए। कहें, वे भगतसिंह से झंझोड़े गए और गांधी से पिटे, पर अंग्रेज जल्दी हार मानने वाले न थे। उन्होंने यह आजादी इस तरह स्वीकार की कि पाकिस्तान तो बना ही, पर यह व्यवस्था भी करदी कि हैदराबाद और भोपाल मुस्लिम राज्य के रूप में, त्रावणकोर-कोचीन दक्षिणी राज्य के रूप में, ग्वालियर, बड़ौदा, इन्दौर मराठा राज्य के रूप में, भरतपुर जाट राज्य के रूप में और पटियाला सिख राज्य के रूप में स्वतन्त्र रहने की कोशिश करें, यानी भारत दो ही नहीं, कम से कम छह टुकड़ों में बंटे और इस तरह आजाद होकर भी हमेशा हमारे सहारे रहें, पर ये सब राज्य भारत में लीन होकर गये और इस तरह गांधी जी से पिटे अंग्रेजों को सरदार पटेल ने पीट धरा।

इन राज्यों के साथ ही फ्रांसीसी प्रदेश पांडीचेरी और पुर्तगाल प्रदेश गोवा भारत की छाती के पुराने शूल थे, पर प्रधान मन्त्री श्री नेहरू काश्मीर के मामले में उलझने पर भी फ्रांसीसी प्रदेश को बातचीत से और पुर्तगाली प्रदेश को ताकत से भारत का अंग बनाने में सफल हो गए। स्वेज नहर के मामले में भी नेहरू जी ने अंग्रेजी आक्रमण का शानदार मर्दन किया। काश्मीर के प्रश्न को सुरक्षा परिषद में भेजना भले ही निर्णय शक्ति की कमी का इशारा दे, पर सुरक्षा परिषद में पूरी ताकत लगा कर भी अंग्रेज-अमरीकी काश्मीर को नहीं हड़प सके। इसका श्रेय नेहरू जी की इच्छा शक्ति को ही है। इस तरह अंग्रेज नेहरू जी से भी पिटे।

सबसे अन्त में प्रधानमन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने अपनी सैनिक शक्ति से अंग्रेजों-अमरीकियों के पोष्य पुत्र पाकिस्तान को काश्मीर से लाहौर तक मसल कर और राजनीतिक षडयन्त्रों को कुचल कर तो वह पिटाई की कि पिटाई का एक नया रिकार्ड ही कायम होगया। इस हालत में अंग्रेज भारत से खुनसें नहीं, तो क्या हुलसें? भारत लाख उन्नति करे, परन्तु अंग्रेजों की निगाह में तो गुलाम भारत का ही नक्शा है, जैसे साधन सम्पन्न होने पर भी राजपूत-ठाकुरों की निगाह में आशाराम भङ्गी ही था। उसके गौरव गर्व से जैसे वे भिन्ना गए थे, वैसे ही अंग्रेज भारत से भिन्नाए हुए हैं। उनकी आत्मा मसमसाकर, तड़फ कर उनसे पूछती है—भारत सिर झुकाकर, हाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बांध कर सामने हाजिर क्यों होता ? रस्सी जल गई, उसके बट बाकी हैं। ऐसा मालूम होता है कि इन बेकार बटों को बखेरने का काम भाग्य ने श्री लाल बहादुर शास्त्री को सौंपा है। अंग्रेज समय को परखने में संसार में बेजोड़ माने जाते हैं। उनका और उनके अभिभावकों—अमरीकियों का भला इसी में है कि वे नेहरू के भारत को भूल जायें और शास्त्री के भारत को पहचानें। ऐसा नहीं, तो राष्ट्र संघ को नष्ट करने का कलंक उनके सिर पर लगेगा और उसका नतीजा यह होगा कि संसार की महाशक्ति इंगलैंड पिछले दो युद्धों में विजेता होकर भी अमरीका का एक पिछलग्गू देश तो रह ही गया है, तीसरे युद्ध में हार कर एक भिखारी देश हो जायेगा। भारत विनाश की ज्वालामुखी में जलने का समय पार कर चुका है और अब उसका समय विकास की उज्ज्वल-मुखी में पलने का है, इसे जो समझ लेगा संसार में सिर्फ वही सुखी रहेगा। यही प्रकृति का विधान है और यही परमेश्वर की इच्छा है।

बस एक प्रश्न और है, जो जनता के मन में कसमसाता रहता है—हमारी फौजों ने लाहौर पर कब्जा क्यों नहीं किया ? जनता का चुलबुला और उत्साही मन महसूस करता है लाहौर पर तिरंगा फहर जाता, तो पाकिस्तान की नाक जड़ से कट जाती, जो रबड़ की बना लेने पर भी इतिहास को सदा दिखाई देती रहती।

इस प्रश्न का सही उत्तर प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री, रक्षामंत्री श्री यशवंतराव चौहान और स्थल सेनाध्यक्ष श्री जयंत चौधरी ही दे सकते हैं, पर पत्रकार का भी एक काम अपने ढंग पर राष्ट्रीय घटनाओं का अध्ययन करना है। उसी दृष्टि से मैं इस प्रश्न का उत्तर दे रहा हूँ।

हमारे नेताओं की दुविधा के कारण हमारी सेना ने लाहौर पर कब्जा नहीं किया, यह इस बारीक प्रश्न का मोटा उत्तर है। हमारी सेना की पहली टोली पाकिस्तानी सेना को धकेल कर, इच्छोगिल नहर के पार चली गई थी, पर उसे वापस बुला लिया गया। इस बात का फायदा उठा कर पाकिस्तान ने इच्छोगिल नहर का पुल तोड़ दिया। इसकी कीमत हमें बाद में देनी पड़ी। यह बात साफ है कि ६१९२ के चीनी आक्रमण की तरह तो नहीं, पर हाँ, काफी बुरी हद तक हमारे देश का गुप्तचर विभाग असफल रहा और ६ सितम्बर १९६५ को हमारी सेनाएं तीन तरफ से जब सीमा पार कर पाकिस्तान में घुसीं, तो उनके पास आगे के क्षेत्र की साफ तस्वीर नहीं थी। पाकिस्तान की फौजों को हमारी फौजों ने बुरी तरह तोड़ा, इससे देश में कुछ ऐसा वातावरण बन गया है कि जैसे पाकिस्तानी फौजें घास फूस ही थीं। यह गलत बात है। पाकिस्तानी फौजें इंच इंच पर लड़ीं और खूब लड़ीं, हमारे सैनिकों की देशभक्ति उनसे तेज थी। उसने उन्हें ऐसा बल दिया कि पाकिस्तान की दानवी शक्ति के दाँत टूट गये। फिर यह तो बात अब साफ ही है कि पाकिस्तान का युद्ध तैयारी असाधारण महत्व की थी। उसकी सीमा-सुरक्षा की तुलना हम जर्मनी-फ्रांस के बीच फ्रांस द्वारा बनाई सुरक्षा पंक्ति-मेजिनों लाईन और जर्मनी द्वारा बनाई सिगफ्रिड लाईन की मजबूती से कर सकता है। उसने हर सीमा ग्राम को किले का मजबूत रूप दे रखा था। लाहौर को तो पाकिस्तान की सड़क के पिल बाक्सों द्वारा, इच्छोगिल नहर द्वारा, उसके उस पार की किलेबन्दी द्वारा और इन सबसे बढ़कर इस पार के ग्रामीणों को सैनिक शिक्षण और शस्त्रास्त्र देने के द्वारा अजेय बना दिया था।

तब क्या हमारे नेताओं की दुविधा पाकिस्तानी ताकत के कारण थी ? ना, यह बात नहीं है। पहली दुविधा तो यह थी कि हमारे नेता पाकिस्तानी जनता को किसी तरह त्रास-दुख नहीं देना चाहते थे, क्योंकि उनका यह उचित विश्वास था कि युद्ध पाकिस्तानी जनता के साथ नहीं, शासकों के साथ है। यह बात न होती, तो लाहौर स्यालकोट क्षेत्रों में जितनी ताकत हमने लगाई, उससे आधी ताकत में हम बड़ा पाकिस्तान यानी पाकिस्तानी पूरा बंगाल जीत सकते थे और निश्चय ही वहां की हिन्दू मुसलमान जनता हमारी फौजों का स्वागत करती, पर हमारा उद्देश्य पाकिस्तान को जीतना नहीं, अपने कश्मीर को और उसके साथ ही भारत के दूसरे काफी बड़े हिस्से को पाकिस्तान के राक्षसी मुंह में जाने से बचाना था।

समझने और वेद-कुरान की तरह कंठ करने लायक बात यह है कि कच्छ पर चढ़ाई करने के लिये प्रेजीडेंट अय्यूब ने अपनी सेना की जो व्यूह रचना की थी, दुनिया भर में उसके नारे लगाये थे और उन नारों से अपना नाम संसार के सबसे बड़े कमान्डरों में लिखाने की कोशिस की थी। यह कोशिस कामयाब भी हुई थी और माना जाने लगा था कि पाकिस्तान का एक सिपाही भारत के तीस सिपाहियों के बराबर है। इसी कामयाबी के नशे में प्रेजीडेंट अय्यूब अपने टैंक लेकर छम्ब के मैदान में कूदे थे। पहले ही झपाटे में वे भारत के हिस्से का भी काश्मीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ले लेंगे, इसमें शक करने को तो वे कुफ्र समझते ही थे, पर उन्होंने इसकी भी तारीख तय करदी थी कि भारत के पंजाब का कौन-सा शहर किस तारीख को ले लिया जाए। अमृतसर की ८ तारीख थी, लुधियाना की ९ और जमना तक आजाने से कम की बात तो वे सोचते ही नहीं थे। निहायत हैरान मुस्कराहट के साथ उनके बोल थे—"मौका लग गया, तो टहलते-टहलते हम दिल्ली भी चले जाएंगे।"

इंगलैंड और अमरीका के महापुरुष—जांसन और विल्सन—इस योजना से परिचित थे, इसकी सफलता में विश्वास रखते थे और भारत के प्रधानमंत्री दांतों में तिनका दबाये उनके द्वार पर गिड़गिड़ाते हुए आयेंगे, इसके सपने भी देखते थे। तभी तो हमारी सेना के पाकिस्तान में घुसने की खबर सुनते ही खबर है कि विल्सन ने गुस्से में आपा भूल कर अपनी उंगलियों के नाखून अपने ही दांतों से चबा डाले।

इस विश्वास का आधार क्या था? इसका आधार था अमरीकी पैटन टैंकों और सैबरजैट विमानों की राक्षसी ताकत। पाकिस्तान की बेहूदी गुर्राहटों का भी आधार यही ताकत थी। इसलिए हमारे शासकों और सैनिकों ने अपनी युद्धनीति बनाई इस ताकत को तोड़ देना। यदि हमारी फौजें लाहौर में घुस जातीं, तो पाकिस्तानी ताकत बची रह जाती, क्योंकि लड़ाई बंदी तो होनी ही थी। हमारी फौजों ने मीठे न्यौते देकर उस ताकत को अपनी तरफ बुलाया, खूब तोड़ा और पाकिस्तान की हालत उस मिस्त्री जैसी कर दी, जो अरड़ा कर ऊँची पैड से गिर पड़ता है।

फिर लाहौर पर पहले ही झपाटे में कब्जा करने का मतलब होता, वहां के १५ लाख बाशिंदों के भोजन का प्रबन्ध करना, जो आसान न था। इससे बचने का उपाय यह था कि हम क्रूरतापूर्वक शहरी इलाकों पर बम बरसाते और बाशिन्दों को डराकर कबजो करने से पहले भगा देते, पर शहरियों-ग्रामीणों पर आक्रमण हमारी रणनीति के विरुद्ध था। यह रणनीति कोरी भगवाई न थी, इसकी जड़ें बहुत गहरी थीं और यही नीति किसी दिन भारत-पाकिस्तानको एक करेगी—अखंड भारत को जन्म देगी, इसमें मुझे जरा भी संदेह नहीं है।

बारीक बात यह है कि हमारी इस नीति के कारण हमारे लिये लाहौर से ज्यादा स्यालकोट का महत्व था। पहले तो स्यालकोट पाकिस्तान की सबसे बड़ी छावनी है। उसके पतन का, उस पर तिरंगा फहराने का अर्थ होता पाकिस्तान की फौज का मिट्टी पलीत होना। दूसरे स्यालकोट से ही छम्ब में लड़ रही पाकिस्तानी फौजों को ताकत मिलती थी, जो पूरे काश्मीर को जीत कर पंजाब में घुसने की तैयारी में थीं। यह रहस्य भी अभी आम आदमी नहीं जानता कि लड़ाई बन्दी से इंकार करके फिर १२ घण्टे बाद प्रेजीडेन्ट अयूब ने लड़ाई बन्दी पर हां क्यों की? बात यह हुई कि उसकी इंकार सुनते ही नेताओं ने फौजों की रफ्तार तेज करदी और नतीजा यह हुआ कि २३ सितम्बर १९६५ को प्रेजीडेंट अयूब लड़ाई बन्दी न मानते, तो सोने से पहले स्यालकोट पर तिरंगा लहराने की खबर सुनते।

इस मामले का कीमती पहलू यह है कि हमारी फौजों की बनावट आक्रमणात्मक नहीं, रक्षात्मक है। हमारे देश के एक भी आदमी ने कभी यह नहीं सोचा था कि हमारी फौजें किसी दूसरे देश की जमीन पर लड़ेंगी। इसलिए हमारी फौजों ने नगर-प्रशासन-यूनिट बनाने की बात कभी सोची भी नहीं थी और हम बड़े नगर लाहौर पर कब्जा कर लेते, तो परेशानी में फंसते। हमारी फौजों के दो डिवीजन वहाँ उलझे रहते। चीन के रुख का पता नहीं था, इस हालत में इतने अधिक सैनिकों को उलझाये रखना युद्ध की दृष्टि से उचित न होता। यही दुविधा थी, जिसने लाहौर के मस्तक पर तिरंगा नहीं फहरने दिया। इस पृष्ठ-भूमि में इस प्रश्न का कि लाहौर पर हमारी फौजों ने कब्जा क्यों नहीं किया? सही उत्तर यह है कि हमारे शासकों-सेनाध्यक्षों ने अपनी दूरदर्शिता के कारण ऐसा करना लाभदायक नहीं समझा।

गुलाम और आजाद में यही फ़र्क है कि गुलाम मरने के लिए जीता है मगर आजाद जीने के लिए मरता है, गुलाम की जिन्दगी मौत के बराबर है मगर आजाद की मौत भी जिन्दगी है।

—अज्ञात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमृतसर : वह रात : यह रात

(पृष्ठ ३०० से आगे)

राष्ट्रीय चरित्र का विकास नहीं हो पाया।

हमारे प्रजातन्त्र-रूपी शिशु पर दो बार दुश्मनों को चोट पहुंचाने का साहस मिला ही, इसलिये कि हमने स्वतन्त्रता के मूल्य को नहीं पहचाना, और हम उसके नशे में मदहोश होकर झूमने को हो थे कि हमारे पड़ोसी चीन ने हमें चुनौती देकर सतर्क कर दिया। हम चेत गये और हमने यह अनुभव किया कि शान्ति की शुभ-कामना से ही हम अपनी बहुमूल्य धरोहर को सुरक्षित नहीं रख सकते। जिस स्वतन्त्रता को पाने के लिए रक्त की धाराएं बहीं थीं, फांसी के रस्सों को चूमा गया था और जेल की कालकोठरियों को आबाद किया गया था, उसकी सुरक्षा के लिये नए बलिदानों की आवश्यकता है और सुरक्षा की तैयारी ही उसे बचा सकती है।

५ अगस्त १९६५ को पाकिस्तान ने कश्मीर में घुसपैठिये सैनिक भेज कर और फिर भारत पर खुले आम विशाल आक्रमण करके हमारी उस चेतना को जैसे कसौटी पर ही रख दिया। खुशी की बात है कि देश इस जांच में खरा उतरा और उसने सिद्ध कर दिया कि उसे स्वतन्त्र रहने का अधिकार है।

जिस युद्ध को हमने अभी-अभी लड़ा है, वह युद्ध केवल रण-क्षेत्र में ही नहीं था। उसका क्षेत्र मन्दिरों, मस्जिदों, खेतों में काम करते हुए किसानों तथा मासूम बच्चों के सिरों तक आ पहुंचा था। युद्ध क्या है और स्वतन्त्र देश की जनता को युद्ध में कैसा व्यवहार करना चाहिए? इस बात को अब भारत का बच्चा-बच्चा अच्छी तरह समझ गया है और यह छोटी कमाई नहीं है।

९ अक्तूबर १९६५ को जब मैंने अमृतसर से लाहौर जाने वाली ग्रैंड ट्रंक रोड पर युद्ध से पहले की बाघा सीमा रेखा को पार किया और युद्ध ग्रस्त क्षेत्र के भयानक दृश्यों को देखा तो बस देखती ही रह गई। सीमा रेखा पर बने (पाकिस्तानी) सरकारी भवन, अब भवन न रह कर मिट्टी के ढेर बन चुके हैं। अगर कहने को कुछ बचा भी है, तो केवल खंडहर, जिनकी छतें न जाने कहाँ गई और दीवारें छलनी हो चुकी हैं।

हम लाहौर की ओर आगे बढ़ रहे थे, परन्तु मेरे मस्तिष्क में वे खंडहर ही घूम रहे थे। दूसरों की हड़पने की प्यास के लिए राष्ट्र अपने को बर्बाद करने पर किस प्रकार तुल जाते हैं, यही सोच रही थी। पाकिस्तान को इस शैतानी भरे व्यवहार से क्या मिला? मुंह तोड़ जवाब, हार पर हार। तो हारने के ही उसने अपना और हमारा इतना नुकसान किया? मैं चारों ओर बड़े गौर से देख रही थी, सड़क के दोनों ओर के पेड़ जल कर या टूट कर नष्ट हो चुके हैं, फसलें प्रायः सूख चुकी हैं, सड़क का रंग काला स्याह पड़ गया है और बिजली के खम्भे टूटे पड़े हैं। यह हमारे दुश्मन पड़ौसी का विध्वंस है, फिर भी यह सब देखकर मुझे अत्यन्त दुःख हुआ। विज्ञान के नशे ने मनुष्य को अन्धा बना दिया है, वह प्रकृति से भी टक्कर लेने लगा है। प्राकृतिक और अप्राकृतिक ऐसा क्या बचा है, जिस पर पिछले दिनों लड़े जाने वाले युद्ध की छाप न लगी हो? टूटे हुए टैंक, जली हुई मोटर गाड़ियां, जीवित और नष्ट हुए बम; क्या न था वहाँ? मनुष्य की बर्बरता, क्रूरता, पाशविकता, सत्ता हड़पने की लालसा क्या इस सब की कोई सीमा नहीं है? दुश्मन का खून करना और देश के लिए खून देना मेरे परिवार का जीवन धर्म रहा है, पर कोई आदर्श तो सामने हो? कोई लक्ष्य तो हो? न शांत रहना, न रहने देना यह तो कोरी पशुता है!

मैं इन्हीं विचारों में खोई हुई थी, वह रास्ता मुझे कुछ परिचित-सा लग रहा था, जैसे उसके साथ मेरा कोई विशेष संस्मरण-सम्बन्ध जुड़ा हुआ हो। इन विचारों में उलझे-उलझे मुझे ध्यान आया कि अब से १८ वर्ष पूर्व भी मैं इसी सड़क से गुजरी थी। तब हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का बटवारा हुआ था। एक देश के रहने वाले दो देशों में विभाजित हो रहे थे। मैं उस समय ७-८ वर्ष की अबोध बालिका थी, फिर भी मुझे अच्छी तरह याद है कि हम लोग केवल पहने हुए वस्त्रों के साथ निकल आये थे। अपना युग-युगों का जमा-जमाया घर छोड़ कर, जिसमें सब कुछ था, पर जो हमारा होकर भी हमारा न रहा था! जिस ट्रक में मैं थी, उसमें मेरे परिवार के अतिरिक्त बहुत-सी स्त्रियां और बच्चे भी थे। दिन भर खाने को कुछ न मिलने के कारण हम भूख से बिलख रहे थे। खाने की तो बात अलग, वहां तो पानी भी न मिल सका था। पानी की एक-एक बोतल, जो एक जोहड़ से भरी गई थी, वही हमारी जीवन-निधि थी, जिसे लेकर सब चले आ रहे थे, ईश्वर से यह प्रार्थना करते हुए कि किसी तरह हमारी जान बच जाए और हम भारत की सीमा में प्रवेश कर जायें। मांगने पर भी एक घूंट से अधिक पानी कभी नहीं मिला। कोई बच्चा भूख से तड़प कर रोने को होता, तो उसे यह कहकर डराया जाता—"मुसलमान आ जाएंगे।" सुनकर बच्चे सहम जाते। इसी तरह सहमें-सहमें, भूखे प्यासे, दबे बुचे। इसी रास्ते से हम आधी रात बीते अमृतसर की ऐतिहासिक पवित्र नगरी में पहुंचे थे, जहाँ सबने सुख की साँस ली कि अब हम सुरक्षित हैं, पर मैं अपने में खोई-खोई सोच रही थी कि क्या हम सचमुच सुरक्षित हैं? इतने वर्षों के बाद भी क्या अमृतसर की पवित्र नगरी सुरक्षित है? मेरा मन दुख से भर उठा था अपने ही इस प्रश्न से कि कहाँ सुरक्षित हैं? और क्यों सुरक्षित नहीं हैं? हरेक युग में कुछ मनुष्यों पर पशुता क्यों सवार हो जाती है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी नगरी में रात काटने के बाद मैं फिर उसी ओर जा रही थी, जिधर से १८ वर्ष पहले आई थी। इसीलिए मुझे वह रास्ता कुछ जाना-पहचाना, पहला परिचित-सा लग रहा था।

कार के रुकने से मेरी तन्द्रा टूटी। सामने तिरंगा झंडा बड़ी शान से लहराता हुआ नजर आया। मन खुशी से झूम उठा; अपने जवानों की बहादुरी पर गर्व हो आया। वह है सामने इच्छोगिल नहर, झंडे से कोई दो सौ गज की दूरी पर। धन्य हैं वे वीर, जो मातृभूमि की इस पताका को लिए यहाँ तक आ पहुंचे हैं। यह लाहौर का मोर्चा है। लाहौर; जिसका ध्यान आते ही हर पंजाबी का कहीं भी रहते दिल लहर उठता है। फिर मेरे लिए तो लाहौर स्मृतियों का ताज महल है; क्योंकि लाहौर की ईंट-ईंट तायाजी-सरदार भगत सिंह-के कारनामों से जड़ी हुई है। मुझे लगता ही नहीं कि वे या उनके बहादुर साथी फाँसी चढ़ गए। मुझे लगता है जेब में पिस्तौल डाले वे लाहौर में और देश भर में घूम रहे हैं और कह रहे हैं—लो, अब तो समझ लो देश-वासियों, कि आजादी उसकी है जो जान पर खेले, जो जान-जान की बाजी लगाए! इधर-उधर अपने देश के वीरों को देखकर मुझे लगा कि इन्हीं में कहीं हैं तायाजी और उनके साथी।

एक वे थे, जो आजादी के लिए जान पर खेल गए और एक वे हैं, जो आजादी के लिए जान पर खेल रहे हैं। मेरे मन में एक विचार आया, जिससे मेरी आत्मा में एक बिजली-सी कौंध गई—एक दिन था जब भारत की आजादी पागलों की कल्पना थी और एक दिन है जब भारत-पाकिस्तान की फिर से एकता—एकात्मता—पागलों की कल्पना है। देखते-देखते शहीदों के खून ने पहली कल्पना को सफल कर दिया, तो क्या किसी दिन देखते-देखते-हारजीत की कड़वाहट के बिना ही—दूसरी कल्पना भी सफल होगी। समझदार हंसेंगे ही कि यह स्वप्न है, पर विश्व का कौन-सा महान यथार्थ है, जो कभी कल्पना-स्वप्न न था?

सड़क के किनारे पर डोगराई गाँव है। गाँव क्या, अब तो सुनसान है; जंगल जैसा सन्नाटा है वहाँ। हमारे बहादुर जवान तथा सशस्त्र पुलिस ही तो है वहां। गाँव में एक भी पाकिस्तानी नहीं बचा, न बच्चा, न जवान, न बूढ़ा, कोई भी तो नहीं। हाँ, गाँव के ऊपर भारी संख्या में कौवे उड़ रहे थे और जोर-जोर से कांव-कांव कर रहे थे। शायद वह सूना-पन, वह उजड़ा हुआ गाँव उन्हें भी खल रहा था। काश, मानव ने पशु-पक्षियों से-ही मिल कर रहना सीखा होता। वह पक्षियों से ही सहयोग सीख लेता, परन्तु आज का मानव तो मानवता को हड़पने की ही बात सोचता है। आज मूल्य सत्ता का है, न कि मानवता का। जिसकी लाठी उसकी भैंस के वातावरण में ही जी रही है आज की दुनिया। मैं सोचने लगी—क्या संस्कृति, सभ्यता, मनुष्यता के नारे झूठे हैं और सचाई है सिर्फ पशुता? यदि नहीं, तो अय्यूब जैसे लोग शक्ति के केन्द्र में कैसे आ जाते हैं? शायद प्रकृति उन्हें उठाकर—गिराकर पशुता से मनुष्यता को श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रशिक्षण देती है हमें। हमारे वीर धन्य हैं, जिन्होंने अय्यूबशाही के दाँत तोड़ कर प्रकृति के पाठ को प्रदीप्त किया।

वहीं पर सड़क के किनारे पिल-बॉक्स भी देखा जिसके साथ सटी हुई कैन्टीन थी, ताकि किसी को यह सन्देह भी न होने पाए कि यह लड़ाई के लिये तैयार किया गया मोर्चा है। पाकिस्तान ने पिछले १८ वर्षों में भारत के साथ युद्ध करने की तैयारी में, जो शक्ति लगाई, यदि उसका एक अंश भी आपसी सम्बन्धों में औचित्य एवं माधुर्य बनाए रखने में लगता तो यह नर-संहार क्यों होता? इतिहास पाकिस्तानी शासकों को मानवता का शत्रु क्यों कहता? मन में प्रश्न उठा—असफलता की करारी चोट खाकर क्या पाकिस्तान को कुछ होश आया? मन का ही उत्तर था—नहीं!

हम गाँव के भीतर एक घर में गए, जहाँ हमारी पुलिस के सशस्त्र सिपाही बैठे थे। घर का सब सामान बिखरा पड़ा था, छतें गिरी हुई थीं, बर्तन, किताबें, कपड़े, फर्नीचर सब अपनी कहानी स्वयं कह रहे थे। घर का कोना-कोना अपनी बर्बादी पर रो रहा था। मैंने अनुभव किया कि अपने घरों को छोड़ते हुए घरवालों के दिलों पर क्या बीती होगी। अब से १८ वर्ष पहले हम भी तो इसी तरह अपने भरे घरों को छोड़ कर आए थे। मुझे वह भयंकर रात कभी नहीं भूलेगी, जिस रात हमने अपने घर से रोते हुए विदा ली थी। घर की एक एक चीज हमें अपनी ओर खींच रही थी हम उन सबके मोह में बिलख-बिलख कर रोये थे। मेरी उस समय की अमूल्य निधि मेरी गुड़िया, उसके वस्त्र तथा खिलौने भी उसी भरे घर में रह गए थे। मैं कई महीने तक उसे न भूल सकी थी, कई बार उसे याद करके रोई भी थी कि न जाने अब कौन खेलता होगा उससे? इस घर को देखकर मुझे ये सब पुरानी घटनाएँ याद हो आईं। मैंने सोचा—इन लोगों ने भी उसी तरह रो-रो कर अपने भरे घरों को छोड़ा होगा और कितने बच्चों की गुड़ियाएं रह गई होंगी। इस सबके लिए दोषी कौन है?

साफ बात है कि किसी भी देश की जनता लड़ना नहीं चाहती—लड़ते हैं सिर्फ राजनीतिज्ञ। जनता अधिक है राजनीतिज्ञ कम, पर कितनी विचित्र बात है कि अधिक लोग संसार में थोड़े लोगों के अधीन हैं? ऐसा क्यों है? ऐसा कब तक रहेगा?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी उधेड़-बुन में उलझा हुआ था मेरा मस्तिष्क कि हम वापस सड़क पर आ पहुंचे। पाकिस्तान की सत्ता हड़पने की लालसा को खत्म करने के लिए हमारे जवानों ने जिस बहादुरी से उसके दांत तोड़े हैं, उस पर मुझे गर्व हुआ। इच्छोगिल नहर के पास लहराते हुए तिरंगे झंडे को दूर से ही मैंने प्रणाम किया, भारत मा की रक्षा के लिए बैठे सजग प्रहरियों को प्रणाम किया, और प्रणाम किया उन वीर शहीदों को जिन्होंने मातृभूमि की रक्षा के लिए लड़ते-लड़ते अपने प्राण न्यौछावर कर दिए।

उल्लास और वेदना की मिश्रित अनुभूति मन में लिए जब हम वापिस चले, तो दोपहर के ३ बज चुके थे। वर्की जाने का समय न था, वापिस लौटने तक रात हो जाने के भय से हमने उधर जाने का विचार स्थगित कर दिया और हम एक दूसरे मोर्चे की ओर बढ़े। यह मोर्चा, इच्छोगिल नहर से पूर्व की ओर इच्छोगिल ग्राम में है। इसी ग्राम के नाम पर हमारे सैनिकों ने नहर का नाम इच्छोगिल रख दिया है। यह गाँव पाकिस्तान का था। यहाँ पर पंजाब की सबसे अधिक लड़ाकू रेजीमेंट सात ने तीन दिन तक डटकर आमने सामने संगीनों से युद्ध किया और पाकिस्तानियों को इच्छोगिल नहर के पार खदेड़ कर ही चैन लिया। अब इस गांव में हमारे बहादुर जवान बड़ी शान से बैठे हैं। दुश्मन की हिम्मत नहीं कि फिर इधर बढ़ने की चेष्टा करे। हम इस मोर्चे की ओर बढ़ रहे थे। रास्ते में दो भारतीय गाँव, ककड़ और रानियां आए, जो एक घन्टे की सूचना देकर खाली करा दिये थे। उस कच्ची सड़क पर दिन रात मोटर गाड़ियां चलने से बेहद धूल उठ चुकी थी। धूल? नहीं, वह तो हमारी मातृभूमि की पवित्र रज है, जिसके कण-कण की रक्षा के लिए हमारे अनेकों वीरों ने अपने प्राणों को बलिवेदी पर होम दिया। हमारी राष्ट्रीयता के सत्य का एक पहलू है यह कि भारत की भूमि का हरेक कण भारत है और दूसरा पहलू है यह कि भारत का हरेक जन भारत है। इस युद्ध ने इस सत्य को पूरी तरह प्रकाशित कर दिया। तभी तो इंच-इंच भूमि के लिए हमारे वीरों ने खून का फाग खेला है।

दिन ढलने से पहले सूर्य गहरा लाल होता जा रहा था, उस तेज लाली में उड़ती हुई धूल ऐसी लग रही थी, मानो होली का गुलाल, उड़ रहा हो। गुलाल तो था ही वह, पर होली का नहीं, स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए रक्त से खेली गई होली का गुलाल, जिसके रंग में रंगा है आज पंजाब का प्रत्येक घर। एक हल्का-सा झटका अनुभव हुआ, कार रुक गई। सामने दिखाई दिया इच्छोगिल ग्राम। बाहर निकल कर देखा कि हमारे जवान एक नल पर नहा रहे हैं, कुछ मालिश कर रहे हैं, जैसे कालिज के विद्यार्थी छुट्टी की मूड में हों। हम उनके पास पहुंचे, तो उनकी बात-चीत से उनको अत्यन्त प्रसन्न पाया। उनके चेहरों से अदम्य साहस स्पष्ट झलक रहा था। मैं यह सब देखकर चकित रह गई। है कहीं मृत्यु का भय? कुछ ही फर्लांग की दूरी पर दुश्मन ताक लगाये बैठा है—हर समय आक्रमण की संभावना है और ये लोग इतने शांत, इतने प्रसन्न? विश्वास हो गया कि जो लोग मृत्यु के मुख में भी इतने निर्द्वन्द रह सकते हैं, वे ही अपने देश की मृत्यु को पीछे धकेल सकते हैं।

हमारे साथ भूतपूर्व ब्रिगेडियर सरदार गुरवचन सिंह बल भी थे। रेजीमेन्ट सात पंजाब के कर्नल जसवन्त सिंह जी से पुराना परिचय होने के कारण हमें उनसे बात करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। कर्नल साहब कहीं थोड़ी दूरी पर थे, उनके आने में कुछ देर लगी। इस बीच, हमें जवानों से बात-चीत करने का अवसर प्राप्त हुआ, जो मेरे लिए बड़ी बात थी। हर जवान जलता अंगारा था, हर जवान खिला कमल। सचमुच भारत एक महान सेना का पिता है और उसका सम्मान सुरक्षित है। कर्नल साहब तेज कदम रखते हुए हमारी ओर आ रहे थे। उनके चलने के ढंग से ही उनके वीर व्यक्तित्व का बोध हो रहा था। वे हमारे और करीब आ गए। उनके चेहरे से ही उनकी हिम्मत, सूझबूझ स्पष्ट झलक रही थी। उनसे बात-चीत करने पर उनकी शिष्टता का गहरा बोध हुआ। धृष्ट वीरता अधिनायकता का प्राण है, पर प्रजातंत्र की आत्मा है शिष्ट वीरता कि दुश्मन के लिये चट्टान, पर अपने नागरिकों के लिये एक पारिवारिक इंसान। गहरे आत्मगौरव की अनुभूति से मन गरिमा से भर भर उठा। उनके बायें हाथ पर बंधी हुई पट्टी इस बात की द्योतक थी कि कर्नल साहब ने स्वयं आगे बढ़ कर दुश्मनों को खदेड़ने में सहयोग दिया है; यानी वे अपने क्षेत्र के दर्शक नहीं, कृषक हैं। इस युद्ध की यह भी एक बड़ी विशेषता रही है कि इसमें नेतागिरी नहीं हुई, बल्कि यह सहयोग और समानता की छाया में लड़ा गया है। अधिकारियों ने केवल आदेश ही नहीं दिया, बल्कि सिपाहियों से आगे बढ़ कर उनका नेतृत्व किया और साहस बढ़ाया है। कर्नल साहब का जख्मी हाथ अपनी कहानी खुद कह रहा था।

जहां कर्नल जसवन्त सिंह कुशल सेनानी, एक बहादुर जवान, नेतृत्व में निपुण, गुण-सम्पन्न योद्धा हैं, वहीं वे एक सफल गीतकार और गायक भी हैं। वे स्वयं देश प्रेम के गीत लिखते हैं और अपने सुरीले कंठ से जवानों को सुनाते हैं। निश्चय ही जवानों के अदम्य साहस की कुञ्जी हैं वे गीत। कर्नल साहब से स.गुरवचनसिंह जी ने पाकिस्तानी जवानों के नैतिक चरित्र के बारे में पूछा, तो उन्होंने बताया कि वैसे तो हर रेजीमेन्ट से दूसरी कुछ न कुछ भिन्न होती ही है, पर यहां तो स्थिति यह है कि अब भी शत्रु के सिपाही कहते हैं—"हम गोली चला रहे हैं," पर जब हम सशस्त्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सावधान होकर मुकाबिले के लिए तैयार हो जाते हैं, तो वे कहते हैं—"ऐसे ही कुछ न कुछ निर्णय कर लीजिए, हम भी बाल बच्चेदार हैं, हम पर रहम कीजिए।" संस्मरण सुनते ही पाकिस्तानी सेना के महाबली शस्त्रास्त्रों के बावजूद पराजय की कुञ्जी मेरे हाथ लग गई। पाकिस्तानी सैनिक दुकानदार हैं, हमारे सैनिक जुझारु वीर हैं—विजय या मौत ही उनका नारा है।

दूसरा प्रश्न था—"क्या वे फिर लड़ेंगे?" कर्नल साहब ने गंभीर मुद्रा में उत्तर दिया—"पाकिस्तानी सेनाओं में लड़ने का साहस अब नहीं रहा, फिर भी यदि लड़ने के लिए आदेश मिले, तो कुछ न कुछ करना ही पड़ेगा, पर यह निश्चत है कि वे जीत नहीं सकते।" उनके अडग विश्वास, गहन आस्था, अनूठे साहस और देश प्रेम पर हृदय प्रसन्नता से भर उठा। ऐ मेरे देश के साहसी वीरों, तुम्हारी बहादुरी ने इस राष्ट्र के जन-जन और कण-कण को गौरव की अनुभूति प्रदान की है।

शहीद शिरोमणि श्री यतीन्द्रनाथ दास के अनुज प्रसिद्ध क्रांतिकारी श्री किरणचन्द्र दास ने, जो युद्ध-ग्रस्त क्षेत्रों को देखने, अपने बहादुर सैनिकों को बधाई देने और जनता का उत्साह बढ़ाने के लिए कलकत्ता से आए थे, कर्नल साहब से कहा—"यह युद्ध केवल पंजाब का नहीं, सारे भारत का है। पंजाब की सीमा पर लड़े जाने वाले मोर्चों में पूरे भारत के जवानों का सहयोग है। जिस बहादुरी से आपने दुश्मनों का सामना किया, उसके लिए मैं अपनी तथा बंगाल की ओर से हार्दिक बधाई देता हूं।" उत्तर में कर्नल साहब ने कहा—"इसी कारण तो हमें सफलता मिली कि पूरा देश हमारे साथ है, यही वह प्रेरणा है, जिससे मोर्चे पर खड़े जवानों का साहस बढ़ता है।" कर्नल साहब ने जिस शिष्टता और अनुभूति की गहराई के स्वर में यह बात कही, वह एक अश्रुत स्वर था। वह मेरी आत्मा में रम गया और मेरा विश्वास है कि मैं उसे कभी नहीं भूल सकती?

युद्ध पशुता है। अस्त्र न देवता का शृंगार है, न मानव का आचार। हाथ में शस्त्र लेकर मानव क्या करता है? मानव का मर्दन ही तो! क्या यह क्रूरता नहीं है? हमारे सैनिक भी तो ५ अगस्त १९६५ से २३ सितम्बर तक शस्त्र सन्नद्ध हो, मानवों का मर्दन ही करते रहे हैं, तो क्या हम उस कार्य को अपना अभिवादन दें? कर्नल साहब के प्रति सम्मान में डूबे-डूबे भारतीय नारी की सहिष्णुता, कोमलता, दयालुता ने मुझे टोका।

मैंने कर्नल साहब और उनके साथियों के चेहरों पर गहरी नजर डाली। उनमें कहीं क्रूरता न थी। मन जरा ठिठका, तो एक प्रश्न उभरा—क्या वे मानव थे, जिनका मर्दन हमारे सैनिकों ने किया?

ना, वे मानव नहीं थे, दानव थे, क्योंकि वे दूसरों की स्वतंत्रता, शांति और सम्मान को लूटने के लिए आगे बढ़े थे। हमारे सिपाहियों ने मानव मर्दन का क्रूर कर्म नहीं, दानव दलन का देवकर्म ही किया है। शुंभ-निशुंभ का वध कर दुर्गा राष्ट्रदेवी हुई थी, तो स्वतंत्रता के भक्षकों का दलन कर हमारे सैनिक भी राष्ट्र-वीर हो गए हैं। तभी तो युद्ध के समय, जो क्रूर थे, वे युद्ध के बाद भाई और पिता की तरह ममतालु हो रहे थे! कर्नल साहब ने चाय पीने का आग्रह इस पारिवारिकता की भावना से किया कि सभी भाव विभोर हो गए। हमारे सैनिक राष्ट्रीय चरित्र के उत्तम नमूने हैं और उनमें वे सभी गुण हैं, जो एक मनुष्य को श्रेष्ठ मनुष्य बनाते हैं। तभी तो देश के नर-नारी उनका सम्मान करते हैं, उन्हें प्यार करते हैं।

दिन ढल गया, सूर्य विदा लेने को ही था कि हमने उन वीरों से विदा ली, जो मातृभूमि की रक्षा के लिये प्राण हथेली पर रखे उस गाँव में बैठे हैं। तीन दिन के भयंकर युद्ध में शहीद होने वाले बहादुरों को मन ही मन श्रद्धांजलि अर्पित करके हमने इच्छोगिल गाँव को पीछे छोड़ा। इच्छोगिल; वह गाँव जहाँ आमने-सामने तीन दिन लगातार युद्ध हुआ, जहाँ हमारे अनेकों वीर वीरगति को प्राप्त हुए, पर जहाँ हमारे वीरों की संगीनों ने दुश्मनों से उनके युद्धोन्माद की पूरी कीमत वसूल कर छठी का दूध याद दिला दिया। आश्चर्य यह कि हमारे पहुँचने तक न कोई पत्रकार ही गया था, न कोई नेता ही। लाहौर सैक्टर में यदि सचमुच कोई युद्ध-क्षेत्र देखने योग्य है, तो वह है इच्छोगिल गाँव; क्योंकि यह पता वहीं चलता है कि हमारे बहादुरों ने कितनी कठिनाइयां सही हैं। वहाँ जाने के लिए पक्की सड़क तक नहीं हैं। ऐसे ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर जीवन मरण की अठखेलियां कौन कर सकते हैं? वही जिन्हें देश से, मातृभूमि से, उसके एक-एक कण से असीमित प्यार हो, जिन्होंने स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए जीने और मरने का व्रत लिया हो, जिन्होंने अपना नाम दीवानों और सिरफिरों में लिखवाया हो और जो देश के लिए हर समय मर मिटने को तैयार हों।

इन्हीं विचारों के सूत्र में बंधी-बंधी जब मैं अमृतसर पहुंची तो रात्रि के आठ बज चुके थे। वही अमृतसर, जिसमें अठारह वर्ष पहले भी मैं रात्रि के समय ही पहुंची थी। तब मैं इतनी छोटी थी कि मेरे मस्तिष्क में था भय और पेट में थी भूख, पर आज मस्तिष्क भरपूर हो रहा था अपने बहादुर जवानों को देखकर, उनकी शौर्य भरी गाथाओं को सुनकर देश के विचारों से और ये विचार इतने ताजे, आनन्दवर्धक, रसपूर्ण थे कि भूख पर भी छा गए थे—एक अद्भुत तृप्ति थी मुझ में।

अपनी मातृभूमि को, आज के नेताओं को, सीमा पर खड़ी सेनाओं को मेरे शत्-शत् प्रणाम्। ☐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कश्मीर में युद्ध के साथ

बलराज साहनी

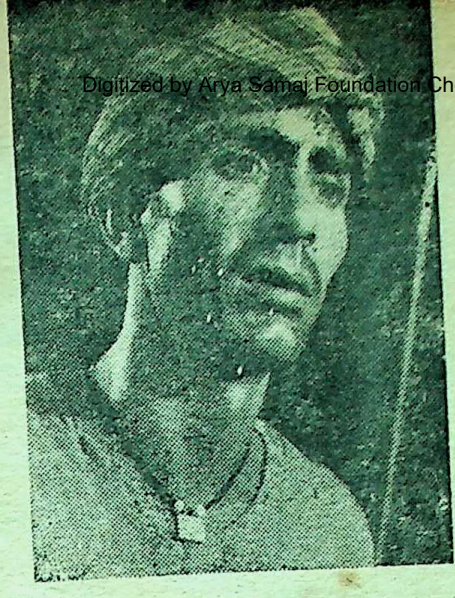

बलराज साहनी को मेरा प्यार--मान भरा नमस्कार ;
क्या इसलिए कि वे एक सफल अभिनेता हैं ?
ना, इसलिए कि उनमें अपने सुविचारित लक्ष्य के लिए,
बिना किसी का समर्थन पाये अकेलम-अकेल चलने की शक्ति है—
कहूँ, वे उनमें हैं, जो बने हुए नहीं, बनाये हुए पथ पर चलते हैं।

उनमें इकरार है उन बातों के लिए, जिन्हें वे मुनासिब समझें;
और इंकार है उन बातों के लिए जिन्हें वे नामुनासिब समझें ;
तभी तो वे भरी जवानी में हरेक माल छह आना बाजार में बैठकर
भी कभी सस्ते नहीं हुए और अपनी आब बचाकर-बढ़ाकर रह सके।

इस लेख में उन्होंने युद्धकाल में कश्मीर की एक झाँकी दी,
पर इतना ही नहीं, एक महत्वपूर्ण चश्मा भी हमें दिया कि
हम कश्मीर को एक हसीन सैरगाह ही नहीं,
राष्ट्रीय संस्कृति के एक तीर्थ के रूप में भी देख सकें।
बलराज साहनी को मेरा प्यार—मान भरा नमस्कार !

◇

मैं पाँच सितम्बर १९६५ को कश्मीर पहुँचा और तेरह सितम्बर को वहाँ से लौट आया। उन दिनों पाकिस्तान से भारत का युद्ध जारी था और लोगों का खयाल था कि कश्मीर आना-जाना आसान नहीं है। उनका खयाल था कि कश्मीर का सारा जीवन खतरे में है और वहां असाधारण परिस्थितियाँ हैं। शायद इसी कारण मेरे मित्रों के लिए यह बात आश्चर्य का विषय बन गई। मेरे दोस्त प्रायः मुझ से पूछते हैं—

"बलराज जी, सुना है, आप कश्मीर गए हुए थे ?"

"जी हाँ।"

"क्या वहां जाकर फंस गए थे या जानबूझकर इन्हीं दिनों गए थे ?"

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* मैं कहता हूं—न मैं फँसा था और न जान-बूझकर इन दिनों गया था। मेरे मित्र प्रभात मुखर्जी कश्मीर के महान कवि गुलाम अहमद 'महजूर' के जीवन पर एक फिल्म बना रहे हैं। मैं उनकी सहायता कर रहा था, क्योंकि कवि 'महजूर' मेरे मित्र थे।

* सन् १९३८ में जब मैं शान्ति निकेतन में काम करता था, तो मैंने त्रैमासिक 'विश्वभारती' में एक लेख लिखकर गुरुदेव का इस अनोखे कवि के जीवन तथा इसकी कविता से परिचय कराया था। इसके बाद दोनों कवियों का आपस में पत्र-व्यवहार हुआ और गुरुदेव टैगोर ने 'महजूर' की कविता को बहुत ऊंचा स्थान दिया। इस सम्बन्ध में पहली बार प्रभात और मैं पिछले जून में कश्मीर गए थे। हम दोनों गांव-गाँव घूमकर उन व्यक्तियों से मिले थे, जो 'महजूर' के जीवन के बारे में कुछ भी बता सकते थे। हम उनकी धर्मपत्नी से भी मिले थे। 'महजूर' साहब के फरजन्द मुहम्मद अमीन, जो 'कश्मीर कल्चरल अकादमी' में काम करने वाले जाने माने विद्वान हैं, हमारे संग-संग ही रहे थे। अतः हम काफी जल्दी सामग्री जुटाने तथा पटकथा को रूप देने में सफल हो गए थे। लिखने का बाकी काम कश्मीरी लेखकों के जिम्मे था। हम उन्हें कह आए थे कि जब वे पटकथा को रूप देने में सफल हो गए थे। लिखने का बाकी काम कश्मीरी लेखकों के जिम्मे था। हम उन्हें कह आए थे कि जब वे पटकथा का कश्मीरी तथा उर्दू रूप तैयार कर लें, तो हमें सूचना दे दें। इस सम्बन्ध में तीन सितम्बर को उनका तार आया और चार तारीख को मैं बम्बई से और प्रभात कलकत्ता से चल पड़े।

* मेरे मित्र हैरान होकर देखने लगते हैं। उन्हें विश्वास नहीं होता कि मैं सच बोल रहा हूँ। भला उस स्थिति में, जब कि हजारों की संख्या में पाकिस्तानी घुसपैठिये कश्मीर में घुसे हुए थे और पाकिस्तान-हिन्दुस्तान का आपस में युद्ध छिड़ चुका था, यह कैसे सम्भव हो सकता था कि किसी को फिल्मी कार्य करने के अनुकूल निश्चित और निर्विघ्न वातावरण मिल सके ?

* हकीकत यह है कि न केवल हमने कार्यक्रम के अनुसार अपना कार्य पूरा किया, बल्कि सैर-सपाटे भी किये और दो दिन मैं 'टूरिस्ट कान्फरेन्स' की सलाहकार समिति का प्रतिनिधि भी बना, जिसमें भाग लेने के लिए दिलीपकुमार को आना था, परन्तु वह किसी शूटिंग की वजह से नहीं आ सके थे। उनके स्थान पर मुझे प्रतिनिधि बनना स्वीकार करना पड़ा। कश्मीर टूरिस्ट विभाग की अखिल भारतीय सलाहकार समिति में बहुत बड़े-बड़े लोग शामिल हैं और उनमें से बहुत से लोग छह तथा सात सितम्बर को इसकी बैठक में भाग लेने के लिए आए थे। कश्मीर के पर्यटन और प्रसारण मन्त्री श्री तारिक की अध्यक्षता में इस समिति की बैठकें हुईं। किसी तरह की कोई अड़चन कश्मीर के जीवन में कहीं भी दिखाई नहीं दी। सब काम सदा के समान जारी थे।

* दूसरे दिन शाम को साढ़े चार बजे जब हम कान्फरेन्स से बाहर आए, तो हमें समाचार मिला कि आधा घण्टा पूर्व श्रीनगर हवाई अड्डे के ऊपर पाकिस्तानी हवाई जहाजों ने हमला किया है। कितना नुकसान हुआ, इसकी खबर उस समय किसी को नहीं थी। जब मैं कार में अपने घर की ओर जा रहा था, तो हवाई अड्डे की दिशा में मैंने धुएं का काला अम्बार-सा आकाश की ओर उठता देखा। बाजारों में लोगों की भीड़ें लग गई थीं और और लोग भी मेरी तरह धुएं का कारण जानना चाहते थे। मुझे गत महायुद्ध के अपने लन्दन के दिन याद आ गए। पहले-पहल, दिन-दहाड़े जर्मनी के हवाई हमले शुरू हुए थे। लोग इसी तरह दफ्तरों और घरों से निकल आते थे और आसमान की ओर देखने लगते थे, क्योंकि यह उनके लिए एक नया और अनोखा अनुभव था। मैं भी कार छोड़ कर सड़क पर टहलने लगा। पांच बजे की खबरों में ऐलान कर दिया गया कि हवाई अड्डे को कोई नुकसान नहीं पहुँचा; केवल संयुक्त राष्ट्र का एक विमान बरबाद हुआ है, जिसके उत्तर स्वरूप पाकिस्तान का एक सैबर जेट गिरा लिया गया है। मुझे यह देखकर बड़ा आनन्द आया कि ठीक लन्दन के नागरिकों की तरह यहां भी लोग पुनः अपने कामों में व्यस्त हो गए, जैसे कुछ हुआ ही नहीं था।

मैं वहां उक्त कान्फ़रेन्स में ही सम्मिलित नहीं हुआ, बल्कि मैंने एक बारात में शामिल होने का लुत्फ़ भी उठाया। बम्बई के 'कश्मीर आर्ट एन्ड क्राफ्ट एम्पोरियम' में काम करने वाले एक मुसलिम नवयुवक के साथ मेरे परिवार का बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। यहां यह बताना भी असंगत नहीं होगा कि मेरी पैदाइश तो पंजाब की है, पर मेरे बचपन और मेरी जवानी का बहुत सा हिस्सा कश्मीर में गुजरा है। कालिज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की शिक्षा पूरी करके मैं कुछ अरसा वहां अपने पिता जी की एजेन्सियों का काम भी करता रहा हूँ। उन दिनों श्रीनगर के बाजारों में दुकान-दुकान घूम कर कपड़ों के आर्डर भी मैंने लिये हैं। श्रीनगर में हमारा अपना मकान है और हमारा खानदान कई पुश्तों से रियासत की प्रजा गिना गया है। इस तरह कुछ हद तक मैं कश्मीरी भी हूँ। अभी मुहम्मद ने बम्बई से रवाना होने के पूर्व हमारे घर आकर मुझे अपनी शादी का निमन्त्रण दिया था, क्योंकि उसे मालूम था कि सितम्बर के आरम्भ में मेरे श्रीनगर जाने की सम्भावना है। शादी पांच तारीख को थी। उसी सुबह प्रभात और मैं श्रीनगर पहुँचे। वह इतवार का दिन था। बम्बई की व्यस्तताओं के बीच मुझे शादी की बात भूल-सी गई थी। अब जब अकस्मात याद आ गई, तो प्रभात और मैं, दोनों ने शादी में शामिल होने का निश्चय कर लिया। बाकी दोस्तों-मित्रों से मिलने-जुलने का प्रोग्राम एक दिन पीछे जा पड़ा।

प्रभात श्रीनगर के बाजारों और गलियों में कभी पैदल नहीं घूमा था। उन गलियों और बाजारों में घूमे मुझे भी लगभग पच्चीस बरस हो गए थे। चुनांचे हम अमरीकदल से ५वें पुल जैनाकदल तक पैदल ही गए। छुट्टी का दिन होने की वजह से अब सब ओर खूब रौनकें थीं। मेरी फिल्म 'हकीकत' हाल में ही श्रीनगर में छह सप्ताह चल चुकी थी। फिल्म अभिनेता को इस प्रकार बाजार में पैदल घूमते देखना, खास तौर पर नौजवान तबके के लिए, अच्छी खासी शगल की बात थी। वह रौनक कभी मैं भूल नहीं पाऊंगा। सितम्बर की कुछ कुछ तीखी और कुछ-कुछ ठण्डी धूप में कश्मीर में सेब पकते हैं और उन्हीं की तरह कश्मीरियों के गोरे-गोरे हसीन चेहरे भी सुर्ख-से हो जाते हैं। कश्मीरी पण्डित और मुसलमान युवतियाँ, सिख, हिन्दू, मुसलमान सबके और सूफी की तरह सहज-स्वभाविक ढंग से चल-फिर रहे थे कि रह-रह कर हमारे मन में अपने भारतीय होने का गरूर उफनता था। किसी के चेहरे पर लेशमात्र भी भय या तनाव नहीं था।

दीवारों और खम्बों पर जगह-जगह पाकिस्तानी घुसपैठियों से पब्लिक को सचेत करने वाले इश्तहार लगे हुए थे। हम खड़े होकर उन्हें पढ़ते। एक विज्ञापन पर शुरू में 'महजूर' की एक कविता की चार पंक्तियां लिखी हुई थीं, जिनका भावार्थ है—"मस्जिद, मन्दिर, गुरुद्वारा, सब भिन्न-भिन्न इमारतें हैं, पर दरवाजा सबका एक ही है।"

हमारे दिल स्वाभिमान से भर आए, क्योंकि 'महजूर' कुछ विशेष रूप से हमारा था, हम उस पर फिल्म जो बना रहे थे। एक ऐसे कवि पर आधारित, जो मृत्यु के उपरांत भी लोगों के दिलों में निवास करता है। एक अन्य स्थान पर 'महजूर' ने कहा है—'ओ मेरे प्यारे वतन कश्मीर! जब संसार पर एक नए युग का सूरज उदय होगा, उसकी पहली किरण तुम्हारे ही ऊंचे और सुन्दर ललाट को चूमेगी और उसका प्रतिबिम्ब सारे संसार पर पड़ेगा।"

'महजूर', उसके सुन्दर कश्मीर और वहां के निवासी कश्मीरियों को वही जान-पहचान सकता है, जिसने उनकी सभ्यता और संस्कृति को जानने की कोशिश की हो, उनके साहित्य तथा दर्शन की परम्पराओं का ज्ञान प्राप्त किया हो। यह परम्परा हमें बताती है कि धर्म के नाम पर एक दूसरे से लड़ना झगड़ना कश्मीरियों के स्वभाव से बाहर की चीज है।

आज से बहुत समय पूर्व कश्मीर में इस्लाम के सूफी तथा हिन्दुओं के वेदान्त-दर्शन का ऐसा मुकम्मल संगम हुआ कि इसकी दूसरी मिसाल हिन्दुस्तान जैसे उदार और सर्वग्राही देश में भी शायद ही कहीं अन्यत्र मिलती होगी। इस संगम के प्रतीक हैं लल्लेश्वरी तथा शेख नूरदीन। दोनों उच्च कोटि के कवि और चिन्तक थे। उनका दर्शन उनके काव्य में प्रतिफलित हुआ, जो आज के युग में भी कश्मीर के प्रत्येक नागरिक की जबान पर है, चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान। लल्लेश्वरी को प्रायः लल्लदेव के नाम से याद किया जाता है तथा शेख नूरदीन को नूंद ऋषि के नाम पर। नूंद ऋषि के मजार पर हर साल मेला लगता है और हजारों की संख्या में हिन्दू और मुसलमान सांझे रूप में इसमें सम्मिलित होते हैं।

उसके बाद यह परम्परा, हब्बा खातून, यरनीयाल, रसल मीर, परमानन्द तथा अन्य अनेक कवियों की रचनाओं में प्रकट हुई है, जो कश्मीरियों के लिए केवल पुस्तकीय महत्त्व ही नहीं रखती, बल्कि उनके दिलों में मचलने और ओठों पर रहने विरसा बन गयी है। इन कवियों के गीत आज भी कश्मीर के घर-घर गाए जाते हैं। गुलाम अहमद 'महजूर' इसी शृंखला की एक नवीन कड़ी है। उसने पुराने प्यालों में नयी शराब भर कर अपने अवाम को पिलाई कश्मीरियों में सांझी राष्ट्रीयता के भाव उत्पन्न किये, स्वतंत्रता की भावना जगाई; जिसके परिणामस्वरूप 'महजूर' को जेल यात्रा भी करनी पड़ी।

जब इनसान इस परम्परा को समझ लेता है, तो हैरानी नहीं होती कि किस प्रकार १९४७ में, उसके बाद इस बार १९६५ में कश्मीरियों ने पाकिस्तान के जनूनी हमले का मुंह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ोड़ जवाब दिया, अपने प्राणों की आहुति देकर शत्रु के नापाक इरादों को असफल कर दिया। हमारे स्वतंत्रता के आन्दोलन, गैर साम्प्रदायिक और धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण तथा लोकतंत्र के सिद्धांतों पर कश्मीरियों को सदैव आस्था रही है। पाकिस्तान का धार्मिक हठवादितापूर्ण, घृणास्पद तथा प्रतिक्रियावादी दृष्टिकोण उन्हें कभी पसन्द नहीं आया और न हो यह बीसवीं सदी के किसी सही दिमाग आदमी की समझ में आ सकता है। धर्म प्यार सिखाता है और कश्मीरी लोग कलाकारों तथा हुनरमन्दों के मानव प्रेम का बहुत बड़ा मूल्य चुकाने वालों में हैं।

पाकिस्तान ने इसलाम के पवित्र नाम का आसरा लेकर कश्मीर में ऐसी जलील हरकतें की हैं कि हमेशा के लिए अपने आपको कश्मीरी जनता की नजरों में गिरा लिया है। श्रीनगर में पाकिस्तानी रेडियो लोग सुनते हैं। मैं भी सुनता था। पाकिस्तानी रेडियो हर रोज कुछ इस प्रकार की खबरें सुनाता था--"आज श्रीनगर शहर में हिन्दुस्तानी फौज के तीन बड़े तेल के जखीरों को आग लगा दी गई और उन्हें तबाह कर दिया गया। आग की लपटें शहर के हर हिस्से से दूर-दूर के मकामात से भी दिखाई दे रही थीं। मुजाहिदों ने श्रीनगर शहर के दो पुल, जो हिन्दुस्तानी फोज के लिए बड़ी जबरदस्त अहमियत रखते थे, बारूदी सुरंगें लगा कर उड़ा दिए। इसके बाद मुजाहिदों के एक दस्ते ने हिन्दुस्तानी फौज की एक हिफ़ाजती टुकड़ी पर अचानक हमला कर दिया और पचास सिपाहियों को मौत की नींद सुला दिया।" हर रोज ऐसे प्रसारण किए जाते थे, जिनमें सच्चाई का अंश शून्य के बराबर होता था। कश्मीरी जनता पर ऐसे प्रसारणों का क्या प्रभाव पड़ता होगा, यह अनुमान लगाना मुश्किल नहीं है। लोग इन खबरों पर हंसते भी थे, पर साथ ही उन्हें शरम भी आती थी कि दुनिया में ऐसे भी लोग हैं, जो एक तरफ अपने आपको दीन-ए-इसलाम का 'मुजाहिद' कहते हैं और दूसरी तरफ झूठ के इतने पहाड़ खड़े करते हैं। पाकिस्तान ने इस बार कश्मीर में फौजी पहलू से ही मार नहीं खाई, नैतिक रूप से भी अपनी सारी इज्जत खो दी है। इस नियति को भी कोई टाल नहीं सकता कि पाकिस्तान के सफेद झूठों का परदा एक दिन फाश होगा, जब पाकिस्तान के अवाम को पता चलेगा कि जिन घुस पैठियों को दिन-रात मुजाहिद का दर्जा दिया जा रहा था, वे वास्तव में पाकिस्तानी फौज के भाड़े वाले मासूम सिपाहियों के अतिरिक्त और कोई नहीं थे। कश्मीर में बगावत तो क्या होती, एक कश्मीरी भी इन आक्रमणकारियों की हिमायत के लिये तैयार न हुआ, बल्कि घुसपैठियों को मारने तथा पकड़ने में कश्मीरी अवाम ने सरकार की भरपूर मदद की। खुद पाकिस्तान में पाकिस्तानी रेडियो और पाकिस्तानी हुकूमत की क्या इज्जत रह जाएगी।

आज जब मैं अपने मित्रों को बताता हूं कि कश्मीर में मैंने सहज-साधारण और सामान्य हालत देखे, मैंने देखा कि वे घुसपैठियों को उसी तरह अपने देश का दुश्मन समझ रहे हैं, जिस तरह सारा हिन्दुस्तान समझता है, मैंने देखा कि वे जरा भी घबराये हुए नहीं और उन्हें अपनी सरकार पर पूरा विश्वास है, मैंने देखा कि वहां सभी काम पहले की तरह शांत भाव से हो रहे हैं, तो मेरे कुछ मित्रों को आश्चर्य होता है। इससे स्पष्ट होता है अभी हमें कश्मीर और कश्मीर के लोगों के बारे में, उनकी कला और संस्कृति के बारे में बहुत कम ज्ञान है। अभी तक हम कश्मीर को सिर्फ एक सैरगाह के रूप में देखने की आदत नहीं छोड़ सके। हमें यह कमी जल्दी से जल्दी दूर करनी चाहिये। तभी हम कश्मीरी जनता के उन ऐतिहासिक कारनामों के महत्व को समझ सकेंगे, जो उन्होंने पहले १९४७ के पाकिस्तानी आक्रमण के समय और अब १९६५ के आक्रमण के समय दिखाया है। तभी हम भली प्रकार समझ सकेंगे कि कैसे इस संकट की बेला में कश्मीरियों में सबसे पहली पंक्ति में खड़े होकर हमारी राष्ट्रीय एकता की, हमारे धर्मनिरपेक्षवाद की और हमारे लोकवादी और समाजवादी आदर्शों की रक्षा की है। ▣

> जैसे जिन घरों में सामग्री बहुत भरी रहती है, उनमें चूहे भी हो सकते हैं, उसी तरह जो लोग बहुत खाते हैं, वे रोगों से भरे होते हैं।
>
> —डायोजिनीज़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : आरमुगनेरी
(तिन्नेवेली ज़िला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक

ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स--

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल

फोर्ट, बम्बई – १

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रजिस्टर्ड नं० एल-७१७

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

शिलाओं, पेड़ों की छाल, जानवरों की खाल अथवा धातुओं के टुकड़ों की लिखावटें सभ्यता के उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज़ आज के जीवन का अन्यावश्यक अंग है।

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar
मुद्रक—अखिलेश ओर विकास प्रिंटिंग प्रेस, सहारनपुर मुद्रित-प्रकाशित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

सांस्कृतिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक
तथा राष्ट्रीय चेतना का प्रेरक मनोरंजक मासिक

...नया को ठीक जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
...को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
'नया जीवन' में
दैनिक-साप्ताहिक-मासिक की इन विशेषताओं का समन्वय है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज के एक छोटे पुर्जे पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी।
अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है!

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज के बिना न
ज्ञान मिलते न साहित्य।
कागज हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाज देश की सुरक्षा तथा समृद्धि के प्रति जागरूक हो !

विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी एक साप्ताहिक नवम शिक्षा प्रसार पर्व समूचे प्रदेश में मनाया जा रहा है। वास्तव में ऐसे पर्वों से प्राथमिक स्तर पर ६-११ वर्षायु के बच्चों की उचित शिक्षा के प्रति पर्याप्त जन-चेतना सम्भव है। प्रदेश की वर्तमान शिक्षा योजना में प्राथमिक शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। सभी बच्चों को साक्षर बनाने की दिशा में शिक्षा विभाग वर्तमान योजना के प्रारम्भ से ही अधिक सचेष्ट है। फलतः द्वितीय योजनान्त अर्थात् ३१ मार्च १९६१ तक जहां ६ से ११ वर्ष तक के स्कूल जाने वाले बालक-बालिकाओं का प्रतिशत क्रमशः ६५ तथा १९ था वहां ३१ मार्च १९६५ को वह क्रमशः ९९ तथा ५२ प्रतिशत तक पहुँच गया है जब कि योजना पूर्ति का अभी समय शेष है।

तृतीय पंच वर्षीय योजना के अन्त तक अखिल भारतीय स्तर पर स्कूल जाने वाले बालक तथा बालिकाओं का लक्ष्य क्रमशः ९७ तथा ६३ प्रतिशत निर्धारित किया गया है। यह हर्ष की बात है कि विशिष्ट योजनाओं एवं सम्मिलित प्रयासों के फलस्वरूप बालकों की शिक्षा के क्षेत्र में यह प्रदेश अखिल भारत वर्षीय उपलब्धियों से आगे बढ़ चुका है। हमारा लक्ष्य एवं प्रयास मार्च १९६६ तक ६५ प्रतिशत बालिकाओं को स्कूल प्रवेश कराने का है।

यह बात सत्य है कि बालिकाओं की शिक्षा की दिशा में प्रगति अधिक सन्तोषप्रद नहीं है। शासन उनकी शिक्षा के लिए सचेष्ट है और विशेष सुविधाएँ दे रही है जैसे अध्यापिकाओं को ग्रामीण भत्ता, आवासग्रह, सेवा कालीन प्रशिक्षण एवं छात्रवृत्ति, लेखन तथा पाठ्य-सामग्री का निःशुल्क वितरण, स्कूल माताओं की व्यवस्था आदि। बालिकाओं की शिक्षा कक्षा १० तक निःशुल्क है। यदि अपने नवोदित राष्ट्र एवं लोकतन्त्रात्मक राज्य व्यवस्था को सुदृढ़ तथा प्रगतिशील बनाना है तो हमें बालकों के सदृश्य बालिकाओं को शिक्षा की ओर भी तत्परतापूर्वक ध्यान देना होगा। वास्तव में भावी सन्तान को योग्य नागरिक बनाने की मूल शक्ति एक शिक्षित नारी में ही निहित है।

आज की भूमिका में राष्ट्र को सब प्रकार से शक्तिशाली बनाने की आवश्यकता है और इसके लिए ज्ञानार्जन अनिवार्य है। अतएव इसके एक मात्र साधन पाठशाला को सुदृढ़ तथा साधन-सम्पन्न बनाने के लिए समाज का सहयोग आवश्यक है। मिश्रित विद्यालयों के अतिरिक्त कन्या विद्यालयों में बच्चों को नित्यप्रति नियमपूर्वक स्कूल भेजना, साज-सज्जा तथा पठन-पाठन सम्बन्धी सामग्रियों की पूर्ति, निःशुल्क मध्यान्ह-जलपान की व्यवस्था, भवन-निर्माण एवं उसकी मरम्मत करना आदि अनेक ऐसे कार्य हैं जो स्थानीय जन समुदाय के साधन के अन्तर्गत हैं केवल इन और उनकी सद्भावना और आकर्षण की बात है।

सचमुच एक स्कूल का विकास उसके स्थानीय जनसमुदाय के शिक्षा एवं संस्कृति का प्रतीक यदि कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। अब समय आ गया है कि स्कूल तथा समाज के बीच किसी प्रकार की दूरी नहीं रह गई है अतः दोनों का पारस्परिक योगदान सुनियोजित होना स्वाभाविक है।

स्कूल बच्चों की शिक्षा के साथ-साथ सामुदायिक केन्द्र के रूप में विकसित हो। समाज की निरक्षरता दूर हो और वह देश की सुरक्षा तथा समृद्धि के प्रति जागरूक हो।

शिक्षा प्रसार विभाग उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–
उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है!

★

कोशिश कीजिये–

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए!

लड़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत

एवं

भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस: चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—३१६, ३६४, १६०

प्रबन्धक
सेठ कुलदीप चंद बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापित १९५५ शिलान्यास : राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद द्वारा

संस्थापक : मान्य श्री अजित प्रसाद जैन (राज्यपाल केरल)

सेवा निधि किदवई अपंग आश्रम

मूक वधिर विद्यालय

प्रद्युमन नगर : सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

मानव भगवान की अद्भुत रचना है। अनेक रूपा उसकी इस विश्व रचना में कुछ ऐसे मानव-पुत्र भी हैं जिनकी स्थिति एक दागदार मूर्ति जैसी है ! ऐसे मानव- पुत्र ही तो अपंग कहे जाते हैं।

क्या अपंग व्यक्ति हमारी दया और करुणा के पात्र हैं ? शायद नहीं। आखिर हम उन्हें 'बेचारा' मानकर उपेक्षित क्यों समझें। आवश्यक यह है कि वे सामान्य नागरिक की भांति स्वाभिमानी एवं शिक्षित ही न हों, अपितु जीविका-उपार्जन में भी समर्थ एवं तत्पर हों।

इसी पवित्र उद्देश्य से उत्प्रेरित होकर आपकी यह अपनी संस्था १९५५ से कार्यरत है। इस संस्था में गूंगे-बहरे बालक बालिकाएँ अपने व्यक्तित्व के विकास की सभी सम्भावनाओं का अन्वेषण और सम्पादन करते हैं।

संस्था में लगभग ४५ छात्र-छात्राएं तथा ५ प्रशिक्षित अध्यापक हैं। दूर नगरों से आने वाले छात्र-छात्राओं के लिए अलग-अलग, साधन सुविधाओं से पूर्ण दो छात्रावासों की व्यवस्था है, जिनकी देखभाल एक सुयोग्य मैट्रन द्वारा की जाती है। कक्षा ७ तक शिक्षा देने के साथ-साथ लकड़ी का काम, मोमबत्ती निर्माण और सिलाई- कढ़ाई का प्रशिक्षण भी दिया जाता है।

यदि आपकी दृष्टि-सीमा में कोई गूंगा बहरा बालक-बालिका हो, तो कृपया उसे हमारी संस्था के द्वार तक पहुंचा कर अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक दायित्व का पालन कीजिए। यह संस्था सदैव आपके स्नेह एवं संरक्षण की आकांक्षा करती है। विशेष जानकारी के लिये लिखें।

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

जिसकी लाखों प्रतियाँ बिक चुकी हैं—

विद्यार्थियों, राजनैतिक व्यक्तियों, सरकारी कर्मचारियों, एवं सैनिकों तथा प्रत्येक भारतीय के लिए आज की पाठ्य-पुस्तक

'जवाहरलाल नेहरू के अन्तिम चरण'

(सैण्ट्रल लायब्रेरी कमेटी, पंजाब द्वारा स्वीकृत)

पत्र सं० पी. आर. डी. लायब्रेरी–६५/५०८३५ दिनांक २ दिसम्बर १९६५

लेखक—
प्रयोध्याप्रसाद दीक्षित, आई. ए. एस.

मूल्य—
तीन रुपया मात्र

प्रकाशक—रतन चन्द धीर

सरस्वती प्रकाशन, देहरादून :: उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रूरी जानकारी

- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे है। विशेषांक का मूल्य पृथक, जो ग्राहकों को वार्षिक मूल्य में ही मिलता है।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और अपनी प्रत्येक रचना पर अन्त में अपना पूरा नाम-पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह प्यार-मान दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें। ३ महीने के भीतर आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाए, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या लिखने की आवश्यक प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीजों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक

'नया जीवन' * सहारनपुर * उ० प्र०

नया जीवन

विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

•

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'
निदेशक

अखिलेश
सम्पादक-संचालक

•

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमागी ऐय्याशों का फालतू समय चैन से काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं!

•

नवम्बर १९६५
संचालक

विकास लिमिटेड
सहारनपुर • उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अता-पता

सिर गिने जा रहे हैं भुजाओं की खोज है ! —श्रद्धेय श्री माखनलाल चतुर्वेदी
खण्डवा, म० प्र० ३३१

ये मेरे देश के सेनानी, सीमा की करते निगरानी ! —श्री राम शरण मिश्र
इस्लामिया इन्टर कालेज, सहारनपुर ३३[illegible]

बधाई ! —श्री अमर बहादुरसिंह 'अमरेश'
गांधी नगर, रायबरेली ३३२

भारत के मुसलमान;
१८५७ के स्वतन्त्रता युद्ध से भारत-पाकिस्तान युद्ध तक —कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' ३३३

हम लड़ रहे हैं, एक महान आदर्श के लिए —श्री यशपालसिंह, एम. ए; एम. पी.
४०, साउथ एवेन्यू, नई दिल्ली ३४३

आज के विद्यार्थी; जब कल कर्म-क्षेत्र में होंगे —श्री कैलाश प्रकाश जी
शिक्षा एवं वित्त मन्त्री, उ० प्र०, लखनऊ ३४५

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जब उज्जैन आए थे —पद्मभूषण श्री सूर्यनारायण व्यास
'विक्रम' कार्यालय, उज्जैन ३४८

हमारी व्यूह-रचना और बहादुरी;
जिनसे भारत दुश्मनों के नापाक मनसूबे रौंद सका ! श्री रतन लाल जोशी
सम्पादक 'हिन्दुस्तान' दैनिक
पो० बाक्स नं० ४०, नई दिल्ली ३५२

मानव दानव बन रहा है ! श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय
डालमिया नगर (बिहार) ३५७

सींखचे बोल उठे ! —स्तम्भ ३५९
(अमर शहीद सरदार भगतसिंह का एक पत्र
जो उन्होंने अपने पिता जी को जेल से लिखा !)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिर गिने जा रहे हैं, भुजाओं की खोज है !

◇

अपनी पीढ़ी के दादा, श्री माखनलाल चतुर्वेदी

◇

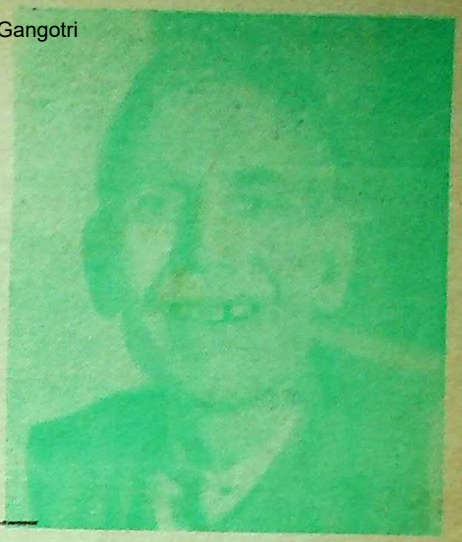

आज देश को पुनः ऐसे तरुणों की जरूरत है —

जो अपने आगे-पीछे, दाएं-बाएं, चारों ओर उमड़े हुए संकटों की दुर्दमनीयता को अपने अजेय और उच्छृंखल भुजदंडों में बेझिझक पीसकर उनके रसों से निर्मित सोमरस पीने वाले देवताओं की तरह सतेज, सशक्त और प्राणमय बनें;

जिन नौजवानों की चौड़ी पेशानियों पर अपनी लाल उंगलियों में विजय-पराग भरकर सफलता स्वयं विजय-तिलक अंकित करे;

जिनके नेत्रों से अपने पथ साफ देख लेने की दुविधाहीन आभा बिखर रही हो;

जिनके हृदय और मस्तिष्क से हिलोरें मारता हुआ प्रलय डोल रहा हो और जिनके गुरुतर संकटों में अटल रहने वाले अंगूठों की ठोकरों से युग बेइख्तियार आगे बढ़ता चला जाए !

उस देश का भविष्य अन्धकारमय नहीं कहा जा सकता, जिसमें राणाप्रताप और हमीर जैसे आत्मभिमानियों, खुदीराम, कन्हाईलाल, मगनलाल, भगतसिंह, अशफाक, बिस्मिल और आजाद जैसे बलिपन्थियों और अब्दुल हमीद, भूपेन्द्रसिंह, आशाराम त्यागी और कीलर जैसे साहसियों की परम्परा जीवित हो।

जिस देश का बलि-पथ साम्प्रदायिक कीचड़ से कभी कलुषित न हुआ हो, उस देश की अखंडता कभी विभाजित नहीं की जा सकती।

आज देश को वे नौजवान चाहिएं, जिनकी वीरता, जिनके साहस, जिनकी अपराजेयता और जिनकी अनुशासनप्रिय शक्तिशीलता पर नेताओं को अभिमान हो।

जाँ-निसार नौनिहालों की ऐसी टोलियों की मौजूदगी में किस आततायी का शस्त्र इतना बलवान हो सकता है, जो निर्बलों, अबलाओं, बालकों, वृद्धों अथवा आश्रितों की ओर ताना जा सके या देश की स्वाधीनता को खंडित कर सके !

वह समय आ गया है, जब जिले-जिले, गांव-गांव और घर-घर शक्ति-पूजा और सीमा रक्षा के पथ पर आगे बढ़ने वाले तरुण अपना निर्माण करें।

गायकों के गीतों में, शूरों के शस्त्रों में, तरुणों के निश्चय में और दिशाओं की गूंज में, एक ही बात हो कि हम अमर हैं, हम अजेय हैं, हम कोटि-कोटि हैं और हमारी मुट्ठियों में हमारी आकांक्षाओं की पूर्ति का बेझुका विश्वास सुरक्षित है।

आज अर्थात् वर्तमान उसका है, जिसके सर पर कफन हो, जो अशक्तता को पीढ़ी में न देख सकता हो, जो नरमुंडों के धड़ पर रहने और धड़ से हटने को खेल समझता हो और आजमा कर देख लेना चाहता हो कि वह पुराना गुलाम है या नये युग का स्वतन्त्र इन्सान।

उठो तरुणों ! देश में, समाज में, घरों में, मुहल्लों में, गांवों में, नगरों में और प्रान्तों की सीमाओं में सिर गिने जा रहे हैं, भुजाएँ ढूंढी जा रही हैं। तुम गति से आगे बढ़ो और सावधानी से आसपास देखते चलो। बाहर शत्रु है, किन्तु भीतर देश-द्रोही भी हैं। उनके गालों पर चाँटा मार दो, जो देश की जय तो बोलें, किन्तु जिनका ईमान वीरों द्वारा किये जा रहे बलिदान के प्रति सच्चा न हो, जिनके दिल उसकी जय न बोलते हों !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये मेरे देश के सेनानी, सीमा की करते निगरानी !

— श्री रामशरण मिश्र —

पर्वत की चोटी बरफानी,
चलती है हवायें तूफानी,
निशि वासर गिरता है पानी,
जहां कहीं नहीं है आसानी,
ये मेरे देश के सेनानी !
सीमा की करते निगरानी !!

निज अन्तर में उत्साह लिए,
बढ़ चले समर की चाह लिए,
ये समर विजेता बलिदानी,
परखेंगे दुश्मन का पानी,
जो कर बैठा है नादानी !
ये मेरे देश के सेनानी !!

एक लड़ने का अरमान लिए,
हाथों में अपनी जान लिए,
एक अमिट, अभय वरदान लिए,
अधरों पर नव मुस्कान लिए,
हर अदा है जिनकी सरदानी !
ये मेरे देश के सेनानी !!

मसला न इन्हें है प्राणों की,
दौलत, पत्नी, सन्तानों की,
क्या अदा है इन दीवानों की,
क्या हिम्मत है मस्तानों की,
होती है लखकर हैरानी !
ये मेरे देश के सेनानी !!

इस अदा से लड़ने जाते हैं,
दुश्मन भी होश गंवाते हैं,
बिजली की तरह झपटते हैं,
दुश्मन को पकड़ पटकते हैं,
हो चीनी या पाकिस्तानी !
ये मेरे देश के सेनानी !!

पर्वत पर लड़ना भारी है,
दुश्मन की गोलाबारी है,
ये वीर वहीं जुट जाते हैं,
दुश्मन को मार गिराते हैं,
देते हैं अपनी कुर्बानी !
ये मेरे देश के सेनानी !!

हे देश के वीरो धन्य हो तुम,
भारत रणधीरो धन्य हो तुम,
भारत के सिंह सपूत हो तुम,
दुश्मन को मौत के दूत हो तुम,
जालिम को मिटा दो शैतानी !
ये मेरे देश के सेनानी !!

बधाई

यह धरा बधाई देती है,
आकाश बधाई देता है,
भारत के बच्चे-बच्चे का—
विश्वास बधाई देता है।

हम बहा पसीना रहे यहाँ,
तुम खून बहाते हो अपना,
यह खून पसीने से भीगा
इतिहास बधाई देता है।

— श्री अमर बहादुरसिंह, 'अमरेश'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

भारत के मुसलमान;

१८५७ के स्वतंत्रता युद्ध से भारत पाकिस्तान युद्ध तक

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

१८५७ में अंग्रेजों के खिलाफ आजादी की जो लड़ाई लड़ी गई, उसमें हिन्दू-मुसलमान एक साथ थे। इसमें कई बार अंग्रेजों के पैर उखड़े, पर हमारी कई कमजोरियाँ थीं, उनकी कई खूबियाँ थीं कि वे उखड़ कर जम गए, हम जम कर उखड़ गए। नतीजा यह कि जीत उनके साथ रही, हार हमारे हाथ आई।

अंग्रेजों ने जीत के बाद अपना दबदबा बैठाने के लिए फांसियाँ लगा दीं, मार पीट और बलात्कारों का तूमार बाँध दिया, जमीन-जब्ती और लूटमार की आंधियाँ उठा दीं और बन्दूक-तलवार ही नहीं, बड़ा चाकू तक लाइसैंस की पाबन्दी में कस दिया।

चारों ओर सन्नाटा छा गया, पर अंग्रेज बेवकूफ न थे कि बेफिक्र हो जाते और मान लेते कि बगावत हमेशा के लिए दफना दी गई। उन्होंने ताड़ लिया कि हिन्दू-मुसलमानों में एका रहा तो बगावत की ज्वालामुखी कभी भी फट पड़ेगी।

अंग्रेजों के आने के समय मुसलमान दिल्ली की हकूमत के मालिक थे और १८५७ की बगावत बादशाह बहादुर शाह के नाम से और उनके ही सुनहरे चाँद सितारे वाले झण्डे के नीचे उठी थी, इसलिए अंग्रेज का दिमाग मुसलमानों के खिलाफ खूंख्वार हो रहा था। बगावत के बाद इसीलिए मुसलमानों को हिन्दुओं से ज्यादा मिलना पड़ा-ज्यादा कीमत देनी पड़ी।

अंग्रेजों ने मुसलमानों को दुश्मन नम्बर एक मानने, उन्हें मुल्क में बेअसर करने और हिन्दुओं को यह पट्टी पढ़ाकर कि हमने तुम्हें मुसलमानों की गुलामी से बचाकर आराम-इज्जत की जिन्दगी दी है, अपने नजदीक लाने की पालिसी अपनाई।

हिन्दुओं को बढ़ावा मिलता रहा, मुसलमान नजर अन्दाज होते रहे। मुसलमान इससे काफी मुलायम पड़े, पर अंग्रेज कुछ सालों में ही इस नतीजे पर पहुंचे कि हिन्दुओं में भीतर ही भीतर गरमी बढ़ रही है और उनका हमेशा अंग्रेज परस्त बने रहना मुमकिन नहीं है।

इसके साथ ही वे इस नतीजे पर पहुँचे कि मुसलमान को हमेशा दबाये रखने की पालिसी भी ठीक नहीं है, क्योंकि यह उन हिन्दुओं को ज्यादा ताकतवर बनाती है, जिन्होंने पांच से ज्यादा सदियों तक मुसलमान हकूमत के खिलाफ कहीं न कहीं बगावत जारी रखी और उन्हें चैन से नहीं बैठने दिया।

एक अजब बात भी अंग्रेजों ने भांप ली कि हिन्दुओं के शास्त्री-पंडित जहाँ देश के मामलों से—राजनीति से दूर रहे, वहाँ मुसलमानों के मौलवी-उलेमा देश के मामलों में, राजनीति में उलझे रहे। कहें, अंग्रेजों के हमेशा जानी दुश्मन रहे।

१८५७ की बगावत, उसके बाद के दमन और उसके बाद के बर्ताव से अंग्रेज और मुसलमानों के बीच जो काफी चौड़ी खाई हो गई थी, उसे पाटने के लिए अब एक बिचौलिये की जरूरत थी।

वायसराय अपने गवर्नरों की मार्फत इसकी खोज कर रहे थे। १८७० में यह खोज उस सूबे में पूरी हुई जिसे यू० पी० कहा जाता है और इस खोज का सेहरा लैफ्टीनेंट सर जान स्ट्रैची

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को मिला कि उन्होंने उस बिचौलिये को युद्ध में मारे जाने पर इसी युद्ध के बीच खोज निकाला।

वही बिचौलिया बाद में सर सैयद अहमद के नाम से विख्यात हुआ और सर जान स्ट्रैची ने उस समय यू० पी० की राजधानी इलाहाबाद में २९ एकड़ जमीन लेकर राजभवन के पास ही अपने खर्चे से वह मकान बनाकर सर सैयद को दिया, जिसे बाद में पंडित मोतीलाल ने खरीद कर आनन्द भवन का ऐतिहासिक नाम दिया।

सर सैयद जब सर जान स्ट्रैची से मिलने इलाहाबाद जाते थे, इसी मकान में ठहरते थे। सर सैयद ने अंग्रेजी मदद से मुसलमानों की उस पीढ़ी को पैदा किया, जो बागी मौलानाओं के असर से निकल कर अंग्रेजों के साये में पनपने लगी। जो कुछ यहाँ तक कहा उसे समेट लें और समझ लें कि १८५७ में मुसलमान हिन्दुओं के साथ कन्धे से कन्धा मिलाये खड़े थे, पर उसके बाद ही अंग्रेज ने उन्हें हिन्दुओं से अलग करने की कोशिसें कर शुरू दी थीं।

१८८५ में कांग्रेस कायम हुई और राज भक्ति के तराने गाते और गवर्नरों से उद्घाटन कराते कराते ही उसमें गरमी आने लगी। यह गरमी १९०६ में खुले आम तब फूटी, जब अंग्रेजों ने बंगाल का बटवारा किया और उसके विरुद्ध बहिष्कार आन्दोलन की धूम मची। इससे चौंक कर, इसमें हार कर अंग्रेजों ने मुसलमानों को हिन्दुओं से तोड़ने की अपनी कोशिसें और भी तेज कर दी।

१९०९ में बंगाल का बटवारा रद्द किया गया और १९११ में मेरी जन्मभूमि देवबन्द में कृष्णलीला के जलूस पर हिन्दु-मुस्लिम दंगा हुआ, जिसमें मूर्ति की रक्षा करते हुए पंडित राधेलाल वाशिष्ठ की आहुति हो गई।

१९१४ से १९१८ तक अंग्रेज पहले जहाँ अमरीका में गदर पार्टी ने देश को आजाद कराने की कोशिस की, वहाँ देवबन्द के मौलाना महमूदुल हसन साहब और उनके शिष्य मौलाना हुसैन अहमद मदनी ने अरब में पहली आजाद हिन्द गवर्नमेंट बनाई, जिसके राष्ट्रपति राजा महेन्द्र प्रताप चुने गए।

इस बीच अंग्रेज बराबर हिन्दू-मुसलमानों के बीच दीवार खींचने, अलहदगी पैदा करने और कड़वाहट लाने की कोशिस करते रहे। हिन्दू-मुसलमानों के अलग-अलग चुनाव की नीव तो १८८८ में ही सर आकलैंड कालविन ने उत्तर प्रदेश में डाल दी थी, पर उसे पूरी सूरत दी लार्ड मिंटो ने। आज के ज़माने में हम यह सुनकर हैरान हो सकते हैं कि मिंटो की शासन सुधार योजना में एक मुसलमान तीन हजार रुपये आमदनी होने पर भी वोटर हो जाता था, वहाँ एक गैर मुसलमान-हिन्दू, सिख पारसी आदि तीन लाख रुपये साल आमदनी होने पर ही वोटर हो सकता था। रुपये में ही भेद नहीं था, पढ़ाई में भी था। एक मुसलमान ग्रेजुएट होने के तीन साल बाद वोटर बन सकता था, पर एक गैर मुसलमान ग्रेजुएट होने के तीस साल बाद ही वोटर बन सकता था। तीन हजार से तीन लाख की और तीन साल मे तीस साल की तुलना का मार्मिक आनन्द लीजिए। यह मुसलमान और गैर मुसलमान भी अंग्रेजों की खास ईजाद थी। भारत में उस समय छत्तीस करोड़ आबादी थी, जिसमें मुसलमान साढ़े चार करोड़ के लगभग थे, पर साढ़े चार करोड़ का अपना नाम था मुसलमान और बाकी सब थे गैर मुसलमान। १९१० से १९१८ तक, अब मांटेग्यू-चैम्सफोर्ड योजना के अनुसार सूबों में नई कौंसिलें बनीं, अंग्रेज सरकार अपनी 'लड़ाओ और हकूमत करो' की पालिसी का ताना-बाना बुनती रही, पर अंग्रेजों की बेवकूफी से और भारत के भाग्य से अमृतसर के जलियाँ वाला बाग में हुए हत्याकांड की गरमी में संसार भर के मुसलमानों के खलीफा के साथ तुर्किस्तान में हुए अन्याय की गरमी के मिल जाने से गांधी जी के झण्डे तले हिन्दू-मुसलमान इस तरह एक होकर मुल्क की आजादी के लिए जुट पड़े कि दो दर्जन सालों में खड़ी की गई अंग्रेजों की सब दीवारें टूट कर खील खील हो गई और अंग्रेज अफसर परेशान हो गए, यहाँ तक कि वायसराय लार्ड रीडिंग के हाथ पैर फूल गए।

मुझे उस समय का एक नजारा अब भी याद आ जाता है, तो मैं ख्यालों की गहराईयों में डूबने-उतरने लगता हूं। मेरे कस्बे की जुमा-मस्जिद में ही जलसे हुआ करते थे और दाढ़ियों की भीड़ में चन्दन लिपे मस्तक भी काफी चमचमाया करते थे, पर एक दिन कमाल हो गया। हम लोग अपने मन्दिर में शाम की आरती कर रहे थे, कुछ घड़ियाल बजा रहे थे। बाहर सड़क पर जाता एक मुसलमान नौजवान मन्दिर के चौक में आ गया और मन्दिर के चबूतरे के नीचे खड़ा होकर देखने लगा। बूढ़े बाबा भूदत्त ने उससे कहा—"ऊपर आ जाओ भाई, अल्लाह ईश्वर सब एक ही हैं।" वह जूता निकाल ऊपर आ गया और बापरे, हममें से एक ने अपनी घड़ियाल उसकी ओर बढ़ाई, तो वह लेकर उसे हमारी तरह बजाने लगा। जोश जैसे बरस पड़ा और ऐसी आरती गूंजी कि कम से कम मैंने तो फिर कभी नहीं सुनी। हां, उन्हीं दिनों अखबारों में यह भी छपा कि कई शहरों के मन्दिरों में मुसलमान ने नमाज पढ़ी और हिन्दुओं ने उनके लिए आसन बिछाये।

इस तरह १८५७ से १९२२ तक हिन्दू मुसलमान मुल्क के मामले में एक साथ खड़े थे, पर अंग्रेज उन्हें भिड़ाने के लिए बराबर कोशिस कर रहे थे। कांग्रेस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी थी और मुस्लिम लीग थी। दोनों के दफ्तर और प्रेजीडेंट सेक्रेटरी अलग-अलग थे, पर दोनों एक दूसरे के कितनी नज़दीक थीं, इसका पता इससे चलता है कि ६ अक्तूबर १९१७ को इलाहाबाद में कांग्रेस महा समिति और मुस्लिम लीग की कौंसिल की एक इकट्ठी बैठक हुई, जिसमें वायसराय और भारत-मंत्री के पास कांग्रेस-लीग-योजना के समर्थन में एक डेपूटेशन भेजने की बात तै हुई थी।

१९२३ से १९४७ तक

गांधी जी का असहयोग और मुसलमानों की खिलाफत-तहरीक आपस में मिलकर एक तूफान बन गए थे और वायसराय लार्ड रीडिंग उससे परेशान हो गया था—"चारों तरफ मुल्क में आग है और समझ नहीं पड़ता कि क्या किया जाए ?"

यह तूफान बारडौली सत्याग्रह की सूरत में अंग्रेजी हकूमत पर फट पड़ने ही वाला था कि गांधी जी ने सत्याग्रह रोक दिया, उस पर खुद ही पाबन्दी लगा दी। यह क्यों ? यह इसलिए कि ५ फरवरी १९२२ को गोरखपुर जिले के चौरीचौरा कस्बे में कांग्रेस जलूस की जोशीली भीड़ ने एक थानेदार और इक्कीस पुलिस सिपाहियों को खदेड़ कर थाने में बन्द किया और आग लगा दी, जिसमें जलकर वे सब मर गए। मद्रास-बम्बई में भी हिंसा हो चुकी थी। इसलिए १२ फरवरी १९२२ को सत्याग्रह रोक दिया गया। गांधी जी पर इसके लिए खूब गालियां पड़ीं, पर वे अपनी बात पर जमे रहे।

वायसराय गांधी जी से डरा हुआ था और उन्हें वह "निहायत मुतफन्नी" मानता था कि जाने कब क्या कर बैठें। इसके साथ ही वह जनता पर सत्याग्रह के फेल होने का दिमागी असर भी डालना चाहता था। इसलिये सत्याग्रह वापस लेने पर भी उसने १३ मार्च १९२२ के दिन गांधी जी को गिरफ्तार कर छह साल के लिये जेल भेज दिया।

अब अंग्रेज अपने मोर्चे पर था। गांधी जी के मोर्चे की सबसे बड़ी ताकत हिन्दू-मुसलमानों की एकता थी। उसने इस पर ही चोट की और हिन्दू-मुसलमान दंगों को अपना मोर्चा बनाया। २४ अगस्त १९२३ को सहारनपुर में पहला बड़ा दंगा हुआ, जिसकी खबर ने देश भर को चौंका दिया। इसमें लाठियां चलीं, छुरे घोंपे गये, आदमी जलाये गये और लूट हुई। महामना मदन मोहन मालवीय और श्रीमती सरोजिनी नायडू उसकी जांच करने आये और 'हिन्दुस्तान टाइम्स' की हैडलाइन में खबर छपी।

इसके बाद तो दंगा हिन्दू-मुसलमान त्यौहारों का एक हिस्सा हो गया कि दंगा हो-न-हो, पर उसका खतरा जरूर पैदा हो—ज़रूर पैदा किया जाए। दिल्ली, नागपुर, गुलबर्ग, लखनऊ, शाहजहाँपुर, इलाहाबाद, कलकत्ता और हुस्नाबाद में तकड़े दंगे हुए। ये दंगे किस तरह कराये जाते थे, इनमें सरकारी अफसरों और सरकार परस्तों का क्या पार्ट होता था ? इस पर एक शोधप्रबंध-थीसिस—लिखी जा सकती है। यहाँ बस इतना ही काफी होगा कि ये दंगे इस सफाई से कराये गये कि मुसलमान उपद्रवी और हिन्दू डरपोक होते चले गये और हिन्दू-संगठन एवं लीग के प्लेटफार्मों पर सारा सार्वजनिक जीवन फिरका परस्ती के जहर से भर गया, जैसे देश और आज़ादी की बात करना ही बेकार हो और इसी माहौल में गांधी जी अपेंडिसाइटिस के आपरेशन के २३ दिन बाद ५ फरवरी १९२४ को जेल से छोड़ दिये गये, जैसे अंग्रेज ने उन्हें ललकारा कि लो जादूगर जी, अब दिखाओ अपना सत्याग्रह और खिलाफत का तमाशा।

मौलाना मुहम्मद अली भावुक थे—हवा के साथ बहने वाले और उनके बड़े भाई मौलाना शौकत अली मतलब परस्त। फिर उन्होंने अपनी अंग्रेज टाइपिस्ट से शादी कर ली थी। इन दोनों मलंगों को राष्ट्रीयता के सूत्र में बांधने का श्रेय गांधी जी को नहीं, दोनों की माता श्रीमती बी अम्मा को था—"बोली अम्मा मुहम्मद अली की, जान बेटा, खिलाफत पै देदो" यह गाना उन दिनों गली गली गूंजा करता था। उनके मरते ही ये दोनों भाई साम्प्रदायिकता में बह गए। कहना चाहिए, गांधी जी के हिन्दू मुस्लिम-एकता गढ़ की पहली दीवार मौ० मुहम्मद अली ने ही तोड़ी। १९२३ की कोकोनाड़ा-कांग्रेस के सभापति की कुरसी से इस मनहूस ने यह कहने की जुरअत की थी कि हरिजनों को हिन्दू-मुसलमानों में आधा आधा बांट दिया जाए, इससे दोनों में मेल हो जायेगा। मौ० शौकत अली की शान खिलाफत कमेटी के चन्दे पर ही थी, इसलिए खलीफा के खत्म होने पर भी अपनी जिन्दगी के आखिर दिन तक वे अपना दफ्तर चलाते रहे और इस दफ्तर की रौनक के लिए फिरकापरस्ती की हवा जरूरी थी। इस तरह अली बन्धुओं ने अंग्रेज की ललकार के अंगारों को सबसे पहले हवा दी और मुसलमानों को फिरकापरस्ती के मैदान में उतरने का पहला इशारा दिया।

अंग्रेज की यह ललकार अपने पूरे जलाल में ९-१० सितम्बर १९२४ को कोहाट में सुनाई दी, जहाँ हिन्दुओं की मारकाट नहीं, पूरे तौर पर कत्ले आम हुआ। १९४७ में तो भगदड़ और शरणार्थी शब्दों को सभी जान गए, पर पहली भगदड़ कोहाट में ही मची थी। एक स्पेशल ट्रेन चार हजार हिन्दुओं को कोहाट लाई थी। इनमें से छब्बीस सौ आदमी रावलपिंडी में महीनों रहे थे और बाकी दूसरी जगहों में शरणार्थी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैम्पों की तरह जनता ने अपने दान से इनका पालन-पोषण किया था। हैडमास्टर लाला नन्दलाल ने इस हत्याकांड की जो रिपोर्ट लिखी थी, उसे कोई आज भी पढ़े, तो कांप उठे।

दूसरा दंगा कटारपुर-हरिद्वार का था। इसमें हिन्दुओं ने गोरक्षा के नाम पर मुसलमानों का विध्वंस किया था, पर बदले में सरकार ने पंचपुरी के ऐसे ऐसे प्रतिष्ठित और निर्दोष लोगों को दंड दिया कि हिन्दुओं के हौंसले पस्त हो गए। चार को फांसी, छह को काला पानी और पचास से अधिक लोगों को लम्बी सजाएं दी गई थीं।

गांधी जी ने इस स्थिति से दुखी होकर इक्कीस दिन का उपवास किया। देश भर के सब धर्मों के नेताओं की एकता परिषद हुई और उसके बाद सर्वदल सम्मेलन भी हुआ पर अंग्रेज का डमरू बजता रहा और साम्प्रदायिक बन्दर अपना खूनी नाच नाचता रहा। मई १९२५ में गांधी जी ने कलकत्ता की एक आम सभा में कहा—"मैंने अपनी अयोग्यता स्वीकार करली है। मैंने मान लिया है कि इस रोग की औषधि बताने वाले वैद्य की विशेषता मुझमें नहीं है। मैं तो नहीं देखता कि हिन्दू या मुसलमान मेरी औषधि को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं। इसलिए आजकल इस समस्या की ही उड़ती-सी चर्चा करके संतोष करना आरम्भ कर लिया है।"

१९२६ में दंगों का बाजार गरम रहा और सबसे भयंकर दंगा अप्रैल में कलकत्ता में हुआ। इसमें ११० आदमी दो मुठभेड़ों में मरे और ९८३ सख्त घायल हुए। १९२७ में भी दंगों का ही साल रहा। लाहौर और नागपुर के दंगे सबसे तकड़े थे। पहले में २७ और दूसरे में २९ आदमी मरे। सरकार ने भी एकता- सम्मेलन किया और कांग्रेस ने भी, पर तूफान में कोई कमी नहीं आई और अंग्रेज का दांव पूरी तरह कामयाब रहा।

कामयाबी आदमी को साहस से भर देती है। अंग्रेज और आगे बढ़े और वायसराय लार्ड इर्विन ने ८ नवम्बर १९२७ को घोषणा की कि साइमन कमीशन भारत जाकर जांच करेगा कि देश में क्या शासन सुधार हो। डा० अंसारी की सदारत में कांग्रेस का जो सालाना जलसा मद्रास में हुआ, उसमें साइमन कमीशन का बायकाट करने का फैसला हुआ और ३ फरवरी १९२८ को जब साइमन कमीशन बम्बई आया, तो उस दिन सारे हिन्दुस्तान में हड़ताल रही। बम्बई में काले झन्डे दिखाए गए। पूरे पांच साल दंगों की खूनी होली खेलने के बाद यह राष्ट्रीयता की पहली लहर थी। मद्रास, कलकत्ता और दिल्ली में भी बायकाट हुआ। 'साइमन लौट जाओ' के नारे गूंज उठे। मद्रास में तो इतना ज़ोर रहा कि पुलिस की गोली से तीन आदमी मर गए।

लखनऊ में बायकाट का जलूस तूफानी था और खास बात यह हुई कि पुलिस ने जवाहरलाल नेहरू और गोविन्द वल्लभ पन्त को बुरी तरह पीटा। लाहौर का बायकाट सब को पीछे छोड़ गया और पुलिस के डंडों की मार लाला लाजपत राय पर पड़ी, जिससे बाद में उनकी मृत्यु हो गई। इससे देश में फिर राष्ट्रीयता की हवा बँधी। इसी बीच सरदार भगतसिंह ने असेम्बली में बम फेंक दिया और बटुकेश्वर दत्त के साथ वे गिरफ्तार हो गए। इस घटना ने उस हवा को गरम कर दिया और यतीन्द्रनाथ दास के बलिदान ने भड़का दिया। लाहौर कांग्रेस जवाहरलाल की सदारत में हुई और गांधी जी ने नमक सत्याग्रह शुरू कर दिया। देश में राष्ट्रीयता का तूफान उठ खड़ा हुआ और गांधी इरविन समझौते के रूप में ४ मार्च १९३१ के दिन अंग्रेजी सरकार को घुटने टेकने पड़े। दंगे इस बीच आश्चर्यजनक रूप में दबे रहे। अंग्रेजों ने १९३० की गोलमेज कांफ्रेंस में सर शफात अहमद खान के सिर लीडरी का मुकुट रख मुसलमानों को उभारने की कोशिस की, पर सर शफात शरीफ आदमी थे। वे एक हद से आगे न बढ़ सके। १९३१ की दूसरी गोलमेज कांफ्रेंस में अंग्रजों ने डाक्टर अम्बेदकर के सिर हरिजनों की लीडरी का मुकुट बांधकर और सिखों को बढ़ावा देकर हिन्दुओं की राष्ट्रीय शक्ति को सदा के लिये तोड़ने की गहरी कोशिस की और कम्यूनल अवार्ड के रूप में हरिजन सीटों को मुसलमानों की तरह अलग कर दिया। इस पर गाँधीजी ने जेल में आमरण अनशन कर दिया। वायसराय लार्ड विलिंगडन चाहता था कि गांधी जी मर जाएं—उसने उनके दाह संस्कार का भी प्रबन्ध कर दिया था, पर डाक्टर अम्बेदकर गांधी जी की मौत का कलंक अपने सिर लेने को तैयार न हुये और अंग्रेजों को कम्यूनल अवार्ड वापस लेना पड़ा।

इस नाकामयाबी ने अंग्रेजों का ध्यान फिर मुसलमानों की तरफ़ खींचा। कहा जाता है कि चर्चिल ने मुहमद अली जिन्ना से बात की, जो १९२० में गांधी जी के चमकने पर इंगलैंड चले गए थे और वहीं वकालत करते थे। जिन्ना हिन्दुस्तान आ गए और उन्होंने मुस्लिम लीग को अपने हाथ मे ले लिया। १९३५ में अंग्रेजों ने नये सुधार लागू किए और १९३६ में आम चुनाव हुए। कांग्रेस ने अपने इतिहास की सबसे बड़ी भूल की कि अपने मुसलमान उम्मीदवारों को मुस्लिम लीग के टिकट पर खड़े होने की छूट देदी और इस तरह मुसलमानों को खुद जिन्ना की गोद में फेंक दिया। रफी अहमद किदवई जैसे कुछ ही मुसलमान कांग्रेस के टिकट पर खड़े हुए।

चुनाव के बाद कांग्रेस-लीग का गठबन्धन न हो सका और यहीं से जिन्ना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की जिन्दगी का नया रूप उभरा। उसने कांग्रेस मन्त्री मंडलों को बराबर हिन्दू मंत्री मंडल कहकर विरोध किया और जब १९३९ में दूसरा युद्ध शुरू हो जाने पर कांग्रेस मंत्री मंडलों ने इस्तीफा दिया, तो जिन्ना ने सारे देश में मुक्ति दिवस मनाया। देश के मुसलमान, जो १९२३ से १९२७ तक के दंगों में कांग्रेस से और हिन्दुओं से टूट गए थे, तोड़ दिये गए थे, वे १९३०, १९३२ के आजादी-आन्दोलन में जो कुछ कुछ कांग्रेस के साथ रहे और दंगाई तूफान से दूर रहे, उसका श्रेय कांग्रेस को नहीं, मौलाना हुसैन अहमद मदनी, मौलाना अता उल्ला बुखारी, मौलाना अहमद सईद, मौलाना किफायतुल्ला मुफ्ती और हबीबुर्रहमान जैसे बुजुर्गों को है। सरहद में मुसलमान पूरी तरह कांग्रेस के साथ रहे और इस का श्रेय सरहदी गांधी खान अब्दुल गफ्फार खां को है। मुक्ति दिवस से पता चला कि बाकी आम मुसलमान का झुकाव अब जिन्ना की ओर हो चला है। इसी माहौल में १९४० में मुस्लिम लीग के लाहौर जलसे में पाकिस्तान की मांग पहली बार उठाई गई।

१९४२ में कांग्रेस ने अंग्रेजों के खिलाफ, जब वे लडाई में फंसे हुए थे एक ऐसी क्रांति की, जो फ्रांस और रूस की क्रांतियों से भी महान थी। इसने अंग्रेजी ताकत की नसें तोड़ दीं, पर हिन्दुस्तान के मुसलमानों पर इसका क्या असर हुआ? १९४५ में जो आम चुनाव हुए, उन्होंने इसका जवाब दिया कि अब मुसलमान पूरी तरह जिन्ना के साथ हैं—सरहद के मुसलमान अब भी कांग्रेस के साथ थे। केन्द्रीय असेम्बली में मुस्लिम लीग की सौ फीसदी जीत हुई और इससे जिन्ना के हाथ काफ़ी मजबूत हो गये।

अंग्रेजों की हालत दूसरी लड़ाई में खस्ता हो चुकी थी और उनमें १९४२ की महाक्रांति को दुबारा झेलने की ताकत न थी, इसलिए वे राजनीति से कूटनीति पर आए। पहले स्वराज्य की बात करने क्रिप्स आए, फिर पैथिक लारेंस, अलेक्जैंडर और क्रिप्स। हिन्दुस्तान को तीन हिस्सों में बांटकर, जिससे एक हिस्से में मुसलमानों को पूरा बहुमत मिल जाए, भारत को अखंड रखने की कोशिश हुई। एक बार जिन्ना इस पर राजी हो गए, पर फिर हट गए और अपने ट्रेंड नेशनल गार्डों के द्वारा सारे देश में खूनी दंगों की धूम मचा दी। इन दंगों ने १९२३-२७ के दंगों को भी मात कर दिया। अंग्रेजी कूटनीति का चमत्कार था और जिन्ना उससे लाभ उठा रहे थे।

देश के मुसलमान बिना पाकिस्तान का मतलब और नफा-नुकसान समझे उनके साथ थे। यह इतिहास का एक अजब तमाशा था कि एक ऐसा आदमी जिसका मजहब से कोई मतलब न था, मजहब का छोटा पैगम्बर बना हुआ था। हिन्दू-मुसलमानों के बीच अंग्रेज ने गरम पानी की जो नदी बनाई थी, वह अब खून की नदी हो गई थी। पाकिस्तान उधर के पंजाब, सरहद, सिंध और बंगाल के कुछ हिस्से में बनने वाला था, पर उसका भूत पूरे हिन्दुस्तान के मुसलमानों के सिर पर सवार था और हिन्दुस्तान से उनके दिल दिमाग का कोई रिश्ता बाकी न बचा था। १८५७ में जिस तरह हिन्दु-मुसलमान अंग्रेजों को खत्म करने के लिए जूझे थे, मुसलमान १९४७ में उसी तरह हिंदुओं के खिलाफ जूझ रहे थे। १४ अगस्त १९४७ को उन्हें पाकिस्तान मिल गया और १५ अगस्त को हिन्दुस्तान भी आजाद हो गया।

१९४७ से १९५२ तक

१५ अगस्त १९४७ को जब बटवारे के साथ भारत आजाद हुआ, भारत के ९९ फी सदी मुसलमानों का दिल तो दिल, दिमाग भी भारत की बात सोचने से दूर था, इस हद तक कि भारत की याद दिलाने पर उन्होंने मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद जैसे इस्लामी आलिम और शेखुल हिन्द मौलाना हुसैन अहमद मदनी जैसे इस्लामी संत की खुले आम तौहीन की थी। सचाई यह है कि अंग्रेज ने मुसलमानों के दिलों में १९२३ से १९२७ तक और उसके बाद भी हिन्दूद्रोह की जो आग पैदा की थी, जिन्ना ने उसी पर पाकिस्तान के मोह की पालिश कर दी थी। ज़हर इतना तेज़ चढ़ा हुआ था कि १४ अगस्त की रात को मुसलमान अगर किसी जादू से भारत के तमाम हिन्दुओं को कत्ल कर सकते, तो वे इसमें ज़रा भी गुरेज़ न करते!!!

बात यह थी कि अक्ल के साथ वे अपने कुल रिश्ते तोड़ चुके थे। यू० पी० के मशहूर कांग्रेस लीडर श्री खलीकुज्जमा साहब भी लीग में चले गये थे। एक दिन अचानक लखनऊ के स्टेशन पर मिल गये। बातें हुईं, तो मैंने कहा—"खलीक साहब, अक्ल यह सोच कर हैरान है कि अगर पाकिस्तान बन ही गया, तो सिन्ध, बिलोचिस्तान, सीमा प्रान्त, उधर के पंजाब और बंगाल के मुसलमान लीडरों को हकूमत की अबसे ज्यादा कुर्सियाँ मिल जायेंगी, पर यू० पी० के मुसलमान तो कुछ भी न रहेंगे, इस हालत में समझ में नहीं आता कि आप उन्हें इस आग में क्यों धकेल रहे हैं, जिसमें आज भले ही दूसरे जल रहे हों, पर कल तो खुद वे जलेंगे?

सुन कर खलीक साहब मुस्कराये। मुझे बरसों बाद भी उनके मीसी की रेखों से रंगे दांत याद आते हैं, जो एक दम चमक उठे थे। उनका जवाब था—"जनाब, यह दलील तो बहुत दिन हुए घिस चुकी है। कोई नई बात पाकिस्तान के खिलाफ आपके दिमाग में आई हो, तो फरमाइए।"

उनकी बात सुनकर मेरा जी दुखी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो गया था और मरे हुए दिल से मैंने कहा था—"खलीक साहब, नई समझें या पुरानी, दलील तो यही है, पर ऐसा मालूम होता है कि इसका मतलब मैं नहीं, वक्त ही समझायेगा।" वे ज़रा नाराज़ हो गए थे और मैं सलाम कर लौट आया था। जो मुसलमान भारत में रह गए थे, उनके लिए तो समझ का यह वक्त आज़ादी के साथ ही आ गया था, पर जो पाकिस्तान को जन्नत समझ वहाँ चले गए थे उनके लिए ज़रा देर में आया। जिनका इशारा होते ही हिन्दू युवतियां उठा ली जाती थीं, उन्होंने अपनी जवान बेटियों के नंगे जलूस अपनी आँखों से देखे। जिनकी आँख तिरछी होते ही भीड़ की भीड़ अधमरी हो जाती थी, उन्होंने अपने जवान बेटों के उभरे सीने अपनी आँखों छुरों से छलनी हुए देखे और जिन्होंने दूसरों के घर जलाए थे, उन्होंने अपने घरों को आग की लपटों में भभकते देखा—कल तक जो शेरे बबर बने हुए थे, उनकी हालत चूहों से भी बदतर हो गई, क्योंकि उनके पीछे अंग्रेजी सरकार के अफसरों की जो ताकत थी वह टूट गई थी, प्रमुख मुसलमान पाकिस्तान चले गए थे और शरणार्थी हिन्दुओं के साथ पाकिस्तान में जो कुछ हुआ था, उसका और १९२३ से १९४६ तक अंग्रेज की चालों और जिन्ना के इशारों पर भारत के मुसलमानों ने जो कुछ हिन्दुओं के साथ किया था उसका भी बदला लेकर भारत के हिंदुओं ने अपना फर्ज नम्बर एक मान लिया।

एक संस्मरण मुझे इस बारे में हमेशा याद आता है क्योंकि उससे मुझे मसले को समझने में सबसे पहली रोशनी मिली थी। अपने जिले में साम्प्रदायिक शांति कायम करने में मैं ज़िला-अधिकारियों के साथ सबसे प्रमुख हिस्सा ले रहा था। एक दिन खबर आई कि हिन्दू शरणार्थी चकरौता रोड़ पर मुसलमान किसानों के ईख के खेतों को उजाड़ रहे हैं। सिटी-मैजिस्ट्रेट श्री श्याम सुन्दरलाल कक्कड़ अपनी जीप में मेरे पास आए—"चलो, चकरौता रोड चलते हैं।"

हम दोनों गए, रिपोर्ट ठीक थी। सैकड़ों शरणार्थी गन्ने उखाड़ने में जुटे थे और खेतों के मालिक मुसलमान डरे हुए खेतों से दूर खड़े थे। कक्कड़ साहब ने उन्हें समझाया कि न तुम शरणार्थियों से लड़ो, न डरो, इन्हें खुद तोड़ कर गन्ने दिया करो, बस फिर न तुम उजड़ोगे, न तुम्हारे खेत। वे उन्हें लेकर शरणार्थियों के पास गए और उन्होंने मुसलमान मालिकों के हाथों से शरणार्थियों को गन्ने दिलाये। लौटते समय मैंने कहा—"कक्कड़ साहब, मैं तो सोच रहा था कि आप शरणार्थियों को काफी झाड़ेंगे, क्योंकि वे गन्ने खाने के लिए नहीं, खेत उजाड़ने के लिए जुटे हुए थे, पर आपने एक भी बात नहीं कही।"

कक्कड़ साहब गम्भीर हो गए, तब बोले—"कन्हैया लाल जी, इस मसले की जड़ें गहरी हैं, इसलिए यह दमन से नहीं, शमन से सुलझेगा और शमन थोड़ा समय लेता है।" ज़रा रुक कर बोले—"जड़ की बात यह है कि आम हिन्दू यह महसूस करता है कि वह दो गुलामियों से एक साथ आज़ाद हुआ है, एक अंग्रेज की गुलामी, दूसरी मुसलमान की गुलामी। यह अंग्रेज के आर्ट की कामयाबी है कि उसने मुल्क का बटवारा कर दिया, पर बुराई अपने सिर नहीं ली।"

कक्कड़ साहब की बात सुन कर मैं रोशनी में नहा गया। कक्कड़ साहब देशभक्त अफसर हैं, यह तो तभी से जानता था, जब १९४२ में उन्होंने प्रचंड कलक्टर श्री लायड को गान्धी जी के लिए हल्की बात कहने पर अपनी नौकरी को खतरे में डालकर भी खुले आम डाट दिया था, पर यह मैंने उसी दिन जाना कि वे प्रशासक ही नहीं, विचारक भी हैं।

इस प्रसंग में एक बड़ी गहरी और बारीक बात कि देश के हिन्दुओं में उस समय हिंसा का जो तूफान उठा हुआ था, गांधी जी उससे पीड़ित थे और अपनी आत्मा की पूरी ताकत से उसका शमन करने में लगे हुए थे। नोआखाली और बिहार में गान्धी जी ने उन दिनों जो तप किया, वैसा तप इस देश की जमीन पर कभी पहले भी हुआ है, मुझे इस में शक है। गान्धी जी की नज़र बहुत दूर थी। वे भारत में अमन कायम करने के बाद पाकिस्तान जाने वाले थे, जिस से वहां से आए हिन्दू शरणार्थी फिर वहां जाकर बस सकें। मेरी निजी जानकारी है कि रेल मंत्री श्री गोपाल स्वामी आयंगर ने दिल्ली के स्टेशन मास्टर से कहा था, दो ट्रेन की तैयारी रखो, पता नहीं गान्धी जी कब शरणार्थियों को लेकर चलने को कह दें।

प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू अपनी इंसानियत के कारण उस मारकाट से बेचैन थे। मुझे श्री फिरोज गांधी ने बताया था कि एक दिन वे रात में दो बजे अपने कमरे के बाहर तेजी के साथ घूम रहे थे जब उनसे कहा गया कि वे अब सो जाएँ, नहीं तो उनकी तन्दरुस्ती पर बुरा असर पड़ेगा, तो तड़फती-सी आवाज में उन्होंने कहा—"सारे देश में आग लगी हुई है, मैं कैसे सोजाऊं?" मैंने अक्सर सोचा है नेहरू जी के इस एक ही वाक्य में क्या पूरे दशरथ विलाप का दर्द नहीं समाया हुआ है। इस दर्द की जड़ यह थी कि सरकारी मैशीनरी इस आग को बुझाने का काम कर रही थी, उस पर सरदार पटेल का कब्जा था और नेहरू जी इस मामले में सरदार को शक की निगाह से देखते थे। क्या इस शक में कुछ दम था? या यह शक बेबुनियाद था?

सरदार पटेल सिद्धान्तों-असूलों के नहीं, व्यवहार अमल के आदमी थे। उनका दृष्टिकोण—नुकते निगाह—हर मामले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में यह था कि देश का फायदा किस बात में है। गांधी जी सिद्धान्त के कारण चाहते थे कि मुसलमान अब भी भारत में ही रहें, पर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के नेता सिद्धान्त के ही कारण चाहते थे कि वे अब भारत में न रहें। सरदार पटेल दोनों के बीच में पूरी मजबूती के साथ खड़े थे और फतेहपुरी मस्जिद से जब मुसलमानों ने सशस्त्र आक्रमण किया, तो यह मजबूती थोड़ी कड़वी भी हो गई थी। सरदार के साथ इंसाफ करने के लिए सरदार की मजबूती को समझने की गहरी जरूरत है।

सरदार गांधी जी की इस बात को भक समझते थे कि हिन्दू शरणार्थी जो पाकिस्तान से आगए हैं, वे फिर पाकिस्तान में जा कर बस सकते हैं, पर सरदार गांधी जी से इस बात में सहमत थे कि बटवारे के बाद भी मुसलमानों के ज्यों के त्यों भारत में बसे रहने में ही भारत की शान है। इसके साथ ही सरदार यह मानते थे कि पहले अंग्रेज और फिर जिन्ना के कारनामों से मुसलमानों में हिन्दू द्रोह के नाम पर उपद्रवीपन के जो कांटे पैदा होगए हैं, उन्हें पूरी तरह इसी समय झाड़ दिया जाये, जिस से भविष्य में वे शांत नागरिक बन कर रहें और भारत में भीतरी शांति के लिए खतरा न बन सकें। जो लोग यह समझते या कहते हैं कि मुसलमानों के विरोधी थे सरदार, वे गलत फहमी में हैं। वे न किसी के विरोधी थे, न किसी के दोस्त। वे सिर्फ पहले भारत के सेवक थे और बाद में शासक हो गए थे। उनके निर्णय सुन्दर शासन की दृष्टि से होते थे और यह सच है कि आरम्भ में मुसलमानों का जो हिंसक दमन हुआ, उस से वे सहमत थे। दिल्ली में ८६ घन्टे का कर्फ्यू लगने के बाद मुसलमानों का जो मर्दन हुआ, वह योजनापूर्वक हुआ था, पर समझने लायक बात यह है कि इस मर्दन की [illegible] दिमाग में थी और उस तक पहुंचते ही उन्होंने उस चक्र को रोक दिया था।

इस मर्दन ने मुसलमानों का वह नशा उतार दिया, जो अंग्रेजी और लीगी शराब पीकर चौबीस वर्षों में चढ़ा था। डरकर कुछ उसके प्रति अपनी वफादारी के कारण चले गए। बाकी करोड़ों यहीं रह गए, पर वे बेफिक्र न थे कि अब यहीं रह सकेंगे, क्योंकि हिन्दुओं का एक मजबूत तबका, जिसमें पाकिस्तान द्वारा बर्बाद किये शरणार्थी भी शामिल थे अब भी उन्हें भगाने की कोशिस कर रहा था। गांधी जी इस कोशिस के खिलाफ अकेले लड़ रहे थे। इसी कुढ़न में उनकी हत्या हुई, पर उनकी हत्या ने मुल्क की फिज़ा ही बदल दी। आम हिन्दू फिरकापरस्ती की गरम गंदगी से काफी ऊपर उठा और मुसलमानों को भी यह धीरज मिला कि कुछ उनके खिलाफ हैं तो क्या, कुछ उनके साथ भी तो हैं।

दिमागी तौर पर भारत के मुसलमान गांधी जी के बलिदान के बाद कहां थे? यह एक अहम सवाल है, पर बेतुका सवाल है, क्योंकि पाकिस्तान वे गये नहीं थे और भारत में ही रह रहे थे, पर इससे भी बढ़कर असली प्वाइंट यह है कि वे तेज़ दौड़ते-दौड़ते अचानक किसी पत्थर से सिर टकरा जाने वाले आदमी की तरह थे, जो इतना भिन्ना जाता है कि कुछ सोच ही नहीं सकता। वे दूसरों की उंगली पकड़े, बातों में उलझे, बिना समझे बूझे एक भयानक जंगल में आ गए थे और अब वह भी उनके साथ न था, जिसके भरोसे वे इस बीहड़ बियाबान में आ उलझे थे। दुविधा फैसला करने वाले दिमाग का फालिज है। वे इस फालिज का शिकार थे और 'जिस विध राखे साइयां' की हालत में जी रहे थे। कांग्रेस और कांग्रेस सरकार के बारे में न उनमें कोई गहरा लगाव था, न कड़वा लगाव। हकूमत के साथ जैसा रवैया आम आदमी का होता है, वैसा ही आम मुसलमान का था।

मौलाना आज़ाद अब उनके केन्द्र बिन्दु थे, पर दुर्भाग्य यह कि मौलाना न प्रचारक थे, न प्रहारक थे, एकान्त प्रिय शानदार विचारक थे। वे कांग्रेस और मुसलमानों को जोड़ने में असमर्थ थे। यह काम मौलाना हुसैन अहमद साहब मदनी कर सकते थे, पर हमारे नेता जवाहर लाल में न आदमी की खूबियों को न पहचानने की योग्यता थी, न उनसे काम लेने की। सचाई यह कि उनका सिर्फ अपने में विश्वास था और अपने बाद जलसों की भीड़ में या सरकारी अफसरों में। बाद में उनका ध्यान मौलाना मदनी की तरफ गया भी था और उन्होंने कर्वे और राधाकृष्णन को भारतरत्न बनाने के बाद [मैं इनका महत्व कम नहीं आंकता, पर मौलाना मदनी के ऐतिहासिक काम और कठोर तप को देखते हुए, तो ये उनके सामने भारतमाता के मृगछौने ही थे] उन्हें पद्मभूषण का तोहफा पेश किया था, जिसे मौलाना ने यह कह कर उन्हें ही लौटा दिया था कि "मैं तो एक मामूली वालिंटियर हूं और जिस माहौल में पला हूं, उसमें सेवा के बदले में कुछ लेना ही नहीं, चाहना भी गैर मुनासिब समझा जाता है।"

इसी हालत में भारत का नया संविधान लागू हुआ, जिसमें धर्म निरपेक्षता-सेकुलरिज्म और सब शहरियों को एक दर्जे की आज़ादी के साथ बराबरी के हकूक दिए गये। इसका आम मुसलमान पर कोई खास असर नहीं पड़ा और जब १९५२ के चुनाव हुए तो आम मुसलमान किस हालत में था, इसका पता इस बात से चलता है कि १०-१५ निश्चित मुसलमानों का एक डेपूटेशन मौलाना आजाद से मिला और पूछा कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मौलाना ने हल्की-सी गरमी से कहा—"गान्धी जी की शहादत के बाद भी आपके दिल में यह सवाल है ?"

आने वालों ने कांग्रेस सरकार की कुछ शिकायत की, जो मौलाना ने पूरे जोर से कहा—"लाख शिकायतें हों, हरेक हिन्दुस्तानी मुसलमान का फर्ज है कि वह कांग्रेस का साथ दे।" इसका खूब प्रचार हुआ और मुसलमानों ने कांग्रेस का पूरा साथ उस चुनाव में दिया। चुनाव के बाद चुनाव के बारे में जो राय बनी, उसमें सभी ने यह माना कि इस चुनाव में मुसलमान और हरिजन कांग्रेस की सबसे बड़ी ताकत रहे।

१९५३ से पाकिस्तान युद्ध तक

अंग्रेजों की धूर्तता और जिन्ना की जालसाजी में फंस कर भारत के मुसलमानों ने जो रंगीन सपने देखे थे, १९५२ के आम चुनाव होने तक उनके रंग पूरी तरह उड़ चुके थे। इसके साथ ही १९४७ के फिरकेवाराना हड़बोंग में जिस सन्नाटे ने उनके दिमाग की नसों को सुन्न कर दिया था, उसका असर भी कम हो चला था। इन दोनों बातों का नतीजा यह था कि उन्होंने अब अपनी हालत पर गौर करना शुरू कर दिया था। उनके भीतर उनकी हालत के बारे में जो दिलचस्पी पैदा हुई थी, उसकी एक गहरी वजह चुनाव में फिरकेवाराना पार्टियों का गन्दा प्रचार भी था। खुले आम जलसों में कहा गया था—अगर हमारे हाथ में हुकूमत की बागडोर आयेगी, तो हम मुसलमान-ईसाईयों को हुकूमत के खास औहदों पर नहीं रखेंगे, फौजों में नहीं घुसने देंगे, उन्हें नम्बर दो का शहरी बनकर रहना पड़ेगा और साफ साफ यह कि हम हिन्दूराष्ट्र कायम करेंगे। मुसलमान, ताकत से भारत पर सदियों तक हुकुमत कर चुके थे, और अंग्रेजी हुकूमत में भी वे ऊंची हालत में रखे गए थे, इसलिए इन नारों से उनका चौंकना सही था, सोचना मुनासिब था।

क्या सोचा उन्होंने ? किस नतीजे पर पहुंचे वे ? सोचा उन्होंने रात-दिन, पर किसी नतीजे पर वे नहीं पहुँचे। किसी नतीजे पर उन्हें पहुंचाने के लिए किसी लीडर की ज़रूरत थी और लीडर उनके पास न था। उनके नाम पर अलग अलग राज्यों में जो मुसलमान मिनिस्टर बने हुए थे, वे इस बारे में बेकार थे। वे तो मुसलमानों के मन से दूर थे ही, मुसलमान भी उनके मन से दूर थे—वे मुसलमानों की बेचैनी और दर्द को महसूस न करते थे। कांग्रेस भी इस बारे में अपनी जिम्मेदारियाँ महसूस न कर सकी। नतीजा यह हुआ कि भारत के मुसलमान किसी नतीजे पर न पहुंचे और इस गहरी सोच विचार का नतीजा यही होकर रह गया कि मुसलमानों में मुसलमानीपन का ख्याल फिर जागा और जम गया। साफ-साफ यों कि भारत के मुसलमान भारत के शहरी की तरह नहीं, मुसलमान की हैसियत में सोचने लगे।

यह बात खुले तौर पर दिखाई दी १९५७ के चुनाव में। १९५२ के चुनाव में मुसलमान और हरिजन कांग्रेस की सब से बड़ी ताकत थे, भरोसा थे, पर १९५७ के चुनाव में मुसलमान कांग्रेस से टूट गए। मार्च १९५७ में मैंने चुनाव के नतीजों की उलट पलट करते हुए लिखा था—

> "मुसलमान किधर गये ? मुसलमान बस मुसलमान हो गए। यदि कांग्रेसी उम्मीदवार मुसलमान हुआ, तो वे सम्मिलित होकर उसके साथ रहे, पर जहाँ हिन्दू कांग्रेसी के मुकाबले स्वतंत्र मुसलमान उम्मीदवार हुआ, तो वे उसके साथ हो गए।
>
> पार्लियामेंट के एक मुसलमान उम्मीदवार ने कानों कान प्रचार किया कि जैसा कत्लेआम पहले हुआ था, काश्मीर की वजह से फिर हो सकता है। तुम मुझे वहाँ भेज दोगे, तो मुझे उसकी खबर रहेगी और मैं वक्त से पहले तुम्हें खबरदार कर दूंगा। इसे मुसलमानों के १ लाख वोट मिले।

क्या हम यह कहें कि भारत का मुसलमान साम्प्रदायिकता-फिरकेवाराना ज़हनियत—का शिकार है ? मेरा जवाब है हां और ना।

इस गोलमाल जवाब को समझने के लिए यह समझना होगा कि हिन्दू पार्टियों की खास नज़र इस बात पर रही कि मुसलमान न जीतें। उन्होंने कांग्रेस के मुसलमान उम्मीदवारों को हराने के लिए निस्बतन ज्यादा कोशिसें कीं, पर अगर कहीं आज़ाद मुसलमान उम्मीदवार से कांग्रेसी हिन्दू के हारने का खतरा ताकतवर हो उठा, तो उन्होंने अपने उम्मीदवार को बैठा कर, हराकर भी कांग्रेसी हिन्दू को जिताने में भरपूर हिस्सा लिया।

इस चुनाव में एक अहम बात यह थी कि मुसलमानों ने कहीं-कहीं हरिजनों के साथ मिलकर भारत की राजनीति में अपने को नई सूरत में खड़ा करने की कोशिस की, पर इसमें उन्हें कामयाबी नहीं मिली। मुस्लिम लीग ने मुसलमानों की इस चाह का फायदा उठाया कि अलग-अलग सूबों में अलग-अलग नामों से मजहबी ढंग की जमायतें खड़ी की और इस तरह मुसलमानों को मुसलमान की हैसियत से एक आल इंडिया ताकत की सूरत में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बांधने की कोशिस की। यह कोशिसें लम्बे अर्से तक जारी रहीं और केरल में कांग्रेस मुस्लिम लीग का जो गठजोड़ कम्यूनिस्टों के खिलाफ हुआ, उसने इन कोशिसों को काफी ताकत दी। हिन्दू फिरकापरस्तों की अक्लमंदी से एक दो दंगे हुए। उनमे भी ये कोशिसें तेज हुई और ऐसा लगने लगा कि मुस्लिम फिरकापरस्ती की आग फिर लहकेगी। सबसे खतरनाक बात यह थी कि मुसलमान किसी भी पोलिटिकल पार्टी की तरफ नहीं झुक रहे थे या कोई भी पोलिटिकल पार्टी उनका दिल जीतने की कोशिस न कर रही थी। दंगों से जो जहरीली फिजा बनी, उसका फायदा उठाने के लिए एक बार मुस्लिम लीग की कढ़ी में जोरदार उबाल आया और पूरे देश में मुस्लिम लीग की शाखायें कायम करने का ऐलान भी अखबारों में हुआ, पर १९६२ के चुनाव ने बताया कि वह एक उबाल ही था। इस चुनाव में भी आम मुसलमान अलग थलग ही रहा, जैसे वह अपनी सही जगह की तलाश कर रहा था और वह जगह उसके हाथ न आ रही थी।

इसी बीच में भीतर ही भीतर एक नई गाँठ लग गई, जिसकी कहानी दीवान श्री चमनलाल की जबानी इस तरह है—"नेहरू जी दूरन्देश नेता थे। उन्होंने भारत पर चीनी चढ़ाई से १६ महीने पहले जनरल बांगी सैन को नेफा और लद्दाख की फौजी तैयारियों को देखने के लिए भेजा, लेकिन बदनसीबी से लद्दाख में उनकी जांच पूरी होने से पहले ही उनका तबादला कर दिया गया। इसका नतीजा यह हुआ कि जनरल सैन सिर्फ नेफा के बारे में ही रिपोर्ट दे सके। उन्होंने रिपोर्ट के साथ नक्शे भी लगाये और यह सिफारिश की कि पहाड़ों पर लड़ने वाले दो डिवीजन ट्रेंड किये जायें। यह रिपोर्ट गुम हो गई। हमारी निजी जानकारी है कि यह रिपोर्ट पाकिस्तान के हाथों में पहुंच गई और पाकिस्तान ने चीन को दे दी। इसका नतीजा यह हुआ कि चीन को हमारी कमजोरी का ठीक ठीक पता चल गया और उसने हमारे कमजोर मोर्चों पर धावा बोल दिया। यह गद्दारी की एक दुखदायी कहानी है क्योंकि चीन पाकिस्तान की दोस्ती यहीं से आरम्भ होती है।"

चीनी चढ़ाई की एक वजह यह भी थी कि सूबों के नए बटवारे पर भारत में बड़े तकड़े दंगे हुए थे, भाषाओं के मसले पर खूंरेजी जम कर हुई थी और तमाशा पसन्द नेताओं ने हाय एकता हाय एकता की ऐसी नुमायशी फूंफाँ मचाई थी कि लगता था भारत खील खील हुआ जा रहा है। रक्षामंत्री श्री कृष्णमेनन के बर्ताव से फौजों में नाराज़ी थी और तीनों कमांडरों के इस्तीफे से वह बाहर भी फूट आई थी। इस सबकी जमीन पर चीन के भारतीय दुमछल्लों ने रिपोर्ट दी थी कि चीन की चढ़ाई होने पर फौजें बगावत कर देंगी और देश भर में दंगे हो जायेंगे। चीन के लिए यह एक मुबारक खुश खबरी थी, क्योंकि भारत को जीतना नहीं, कम्यूनिस्ट बनाना ही उसका मकसद मालूम होता है, पर सब खबरें झूठ निकलीं और चीन को अपना-सा मुंह लेकर लौटना पड़ा।

इस नाकामयाबी के बाद चीन ने धीरे-धीरे पाकिस्तान को अपनी दोस्ती के जाल में फंसाया, क्योंकि चीन को उसके इशारे पर दंगे-फिसाद करने वाले लोगों की भारत में जरूरत थी और यह जरूरत पूरी करने में उसके कम्यूनिस्ट पिट्ठू नाकामयाब रहे थे। चीन का खयाल था कि पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के मुसलमानों में घर घर रिश्तेदारियाँ हैं, उनमें आना जाना है और हिन्दुस्तान के मुसलमान वहाँ की जिन्दगी में अलग-थलग खड़े हैं, उनमें अपने काम के आदमी पैदा करना आसान होगा। ऐसी बातों को एक और एक दो की तरह तो नहीं बताया जा सकता, पर यह सच है कि चीन पाकिस्तान दोस्ती के बाद भारत के मुसलमानों में पाकिस्तानी जासूस तैयार करने का काम मुस्तैदी से होता रहा और उनके ही जरिये हिन्दुओं में भी ऐसे आदमियों पर डोरे डाले गये। एक मोटा अन्दाज है कि पांच हजार से दस हजार तक ऐसे गद्दार भारत में इस बीच जरूर तैयार हुए। उन्होंने अपनी रिपोर्ट दी और भारत में कई जगह अपने नमूने भी दिखाये। कौन कह सकता है कि पाकिस्तानी चढ़ाई में इन रिपोर्टों का कितना हाथ था, पर कौन कह सकता है कि इनका कोई हाथ न था? पाकिस्तानी घुसपैठ का नारा ही यह था कि भारतीय काश्मीर के मुसलमान भारत की गुलामी के खिलाफ बगावत कर रहे हैं और अपने घुसपैठियों को उन्होंने यही पढ़ाया था कि भारत की जनता तुम्हें हलवा-परांठा खिलायेगी।

यह है ५ अगस्त १९६५ और यहीं से शुरू होती है भारत के मुसलमानों की नई कहानी। काश्मीर में पाकिस्तानी फौजियों के हथियार बन्द घुसपैठ शुरू होते ही खबर आई कि एक मुसलमान दूधिये ने ही घुसपैठियों की पहली रिपोर्ट पुलिस को दी—जिससे उसके खिलाफ कार्यवाही शुरू हो सकी। दूसरी खबर आई कि काश्मीरी मुसलमानों का रुख देख कर घुसपैठिये परेशान हैं और तीसरी खबर आई कि उस बेरुखी से चिढ़कर वे गांवों में आग लगा रहे हैं। ६ सितम्बर से पाकिस्तान भारत में खुली लड़ाई शुरू हो गई और १६ सितम्बर को देश के सब राजनैतिक दलों ने प्रधान मंत्री श्री शास्त्री को अपना बेशर्त सहयोग देने का वायदा किया। इन दलों में मुस्लिम लीग भी थी।

इसके बाद मोर्चों से मुसलमान बहादुरी के कारनामों की जो खबरें आई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने हवा का रुख ही पलट दिया। सबसे बड़ा काम कि अब्दुल हमीद की बहादुरी और शहादत ने, भारत के मुसलमानों को वे बोल दिये, जो १९२० के बाद कभी सुनाई न दिये थे। यह कहना ज्यादा मुनासिब होगा कि १९४७ के दंगों में भारत के मुसलमानों की जो आवाज़ सो गई थी, वह जाग उठी, जो दिल सुस्त हो गया था, वह चुस्त हो गया और चन्दे में, जलसों में, ऐलानों में वे भारत के दूसरे लोगों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाये खड़े दिखाई दिये। मुझे बार बार यह सोचना पड़ा कि मैं १९२० में हूं या १९६५ में? सचाई यह है कि मुल्क के मामलों में मुसलमानों की जैसी साफ, सच्ची और गहरी आवाज़ इन दिनों सुनाई दी, वह १९२० के बाद कभी कहीं सुनाई न दी थी। अन्धेरा अचानक फट गया था, सवेरा हो गया था और हिन्दू-मुसलमान, सिख पारसी सब एक साथ खड़े हिम्मत और उमंग से गा रहे थे—'झंडा ऊंचा रहे हमारा' और सचमुच झंडा बड़ी शान से फहरा रहा था।

यह क्या था? क्या यह मुसलमानों का वक्ती-सामयिक जोश भर था? एक फिरकापरस्त हिन्दू ने मुझसे कहा—"यह हमारी फौजों की जीत और पाकिस्तानी फौजों की हार का नतीजा है, इसमें कोई गहराई नहीं है।" यह राय और भी बहुतों की होगी, पर ये सब खोखले हैं, पोपले हैं और इतिहास की रफ्तार से वे बहरे हैं। इस मौके पर भारत के मुसलमान में जो देशभक्ति उभरी, फली-फूली, उसकी नींव कई बरसों से मजबूत हो रही थी।

इसकी पहली ईंट रखी थी शायरे इनक़लाब जोश मलीहाबादी ने। उनके दोस्त सर इस्कन्दर मिर्जा पाकिस्तान के राष्ट्रपति हो गए थे और उन्होंने जोश साहब को कहा था कि वे पाकिस्तान के शहरी बन जाएं, तो उन्हें १३ हजार रुपये महीना मिला करेंगे। जोश साहब ने वह बात मान ली थी—"आखिर भाई, मुझे भी तो अपने बाल-बच्चों के लिए कुछ करना है।"

कराची में उन्हें जमीन का एक टुकड़ा मिल भी गया था पर तभी मिर्जा का बंडल अय्यूब ने लपेट दिया और जोश साहब के सपने भी टुकड़े-टुकड़े हो गए। न पाकिस्तान की पब्लिक ने उन्हें इज्जत दी, न पाकिस्तान के शायरों ने उन्हें कन्धों उठाया, न अय्यूब शाही ने उनका पत्ता अपने गमले में जमने दिया। भारत के दोस्तों को उन्होंने खतों में लिखा—"जोश अब जिन्दा कहाँ है? यहाँ तो उस बेचारे की लाश घूम रही है।"

यह तो हुई शायर की कहानी। अब लीडरों की सुनिये। भाई गुलाम अनवर साबरी एक मशायरे में पाकिस्तान गए थे। वहाँ उन्हें खलीकुज्ज़मा साहब भी मिले। काफी बातें हुई, पर आखिर में कहा—"प्रभाकर से मेरा सलाम कहना और कहना कि उनकी बात समझ में तो आई, पर बहुत देर में आई।" पाकिस्तान के बनाने वालों का जब यह हाल था, तो उनका क्या हाल होगा जो शरणार्थी बन कर पाकिस्तान गये थे? उनके दिल दिमागों की हालत सचमुच खराब थी और उस हालत की चर्चा भारत के मुसलमानों की आम चर्चा थी। इस हालत का पाकिस्तान में तब मंडा फूटा, जब जनरल अयूब के नये चुनाव में ये लोग खुलकर मिस फातिमा जिन्ना के झण्डे का बांस थाम कर खड़े होगये और भारत के मुसलमानों की वह चर्चा सब से गर्म तब हुई, जब चुनाव के बाद उनमें से हजारों को अयूब के सिपाहियों ने खुले आम गोलियों से भून दिया और उनकी लाशें कई दिनों तक मुहल्लों में पड़ी सड़ती रही। भारत-पाकिस्तान लड़ाई होने के वक्त यह सब भारत के मुसलमानों के ज़हन में था और यही सब उस देशभक्ति की नींव थी जो इस मौके पर मुसलमानों में फूट पड़ी थी। वह कोई सामयिक आवेग-वक्ती असर न था, न वक्ती दिखावा ही था। वह एक गहरी सोच-विचार का नतीजा था। भारत के नेताओं की और खासकर हिन्दुओं की यह जिम्मेदारी है कि वे मुसलमानों को प्यार-इज्जत से गोद में लें और इस तरह उस वरदान को—नियामत को—आंचल में समेटें जो कुदरत ने बरसाया है। इस लड़ाई ने भारत को जो कई बड़े इनाम दिये हैं, यह भी उन्हीं में एक है कि १८५७ में जिस तरह हिन्दू-मुसलमान आज़ादी पाने के लिए एक जुट खड़े थे, भारत-पाकिस्तान-युद्ध ने उन्हें आजादी की रक्षा के लिए भी उसी तरह एक जुट खड़ा कर दिया है। महसूस न करने पर बड़ी चीजें भी घटिया हो जाती हैं, यह देश के लोगों को इस समय गहराई से सोचना चाहिए और खुद-बखुद उपजी एकता की बेल को हमदर्दी और होशियारी से सींचना चाहिए। इस युद्ध का नारा है—मुसलमानों, हिन्दुओं को सीने से लगा लो और हिन्दुओं, मुसलमानों को सीने में समा लो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९६२ के चुनाव के बाद हमारी पार्लियामेन्ट में राजनीति के जो नये दीपक जले, यशपालसिंह उनमें एक चमकदार दीपक हैं।

कुछ लोगों में चरित्र होता है, कुछ में संगठन-शक्ति होती है, कुछ में विद्वत्ता होती है, कुछ में माता-पिता का उपार्जन (कैरियर) होता है, कुछ में भाषण शक्ति होती है, कुछ में लेखन की कला होती है और कुछ में परिश्रम होता है, पर यशपालसिंह में चरित्र, संगठन शक्ति, विद्वत्ता, पैत्रिक उपार्जन, भाषण-लेखन कला और अथाह परिश्रम शक्ति का संगम है—इन सबके साथ अपने काम के प्रति ईमानदारी। उन्होंने पार्लियामेन्ट के काम में जैसी दिलचस्पी ली, जितना परिश्रम किया, वह दुर्लभ है और पिछले तीन चुनावों में जो लोग चुने गये, उनमें किसी एक के काम की यशपालसिंह के अकेले के काम से तुलना करना कठिन है। यही कारण है कि वे लोक-सभा की विभूति माने जाते हैं और सभी उन्हें आत्मीयता की दृष्टि से देखते हैं। उन्हीं का एक लेख यहाँ प्रस्तुत है, जो सबल-विचारोत्तेजक है।

हम लड़ रहे हैं एक महान आदर्श के लिए !

श्री यशपाल सिंह, एम. ए., एम. पी.

मैं वीर शिरोमणि स्वर्गीय मेजर रणवीरसिंह के अस्थि-कलश को श्रद्धांजलि अर्पित करने गया था। भारत-पाक संघर्ष में वीर-गति प्राप्त करते समय इस नवयुवक की आयु केवल सत्ताईस वर्ष की थी। दुश्मन के गोले से इसकी छाती के बाएँ हिस्से में पांच इंच का घाव हो गया था। जवानों ने इस अमर शहीद को गिरते हुए संभालना चाहा, लेकिन मेजर रणवीरसिंह ने कहा कि मुझे संभालने में समय बर्बाद न करो, बल्कि बांई तरफ से दुश्मन के ऊपर गोलाबारी करो। यह थी इस भारत सपूत की वीरता-धीरता, जिसने हंसते-हंसते मातृभूमि की रक्षा के लिये अपने प्राण उत्सर्ग किए।

इसी भावना वाले हमारे लाखों नौजवान मोर्चों पर डटे हैं। ये हमारे देश की सीमा के जागरूक पहरेदार हैं, जो हर वक्त जीवन को हथेली पर लिए हुए मर मिटने को तैयार हैं, ताकि हमारी कौम जीवित रह सके। इनकी आँखों में नींद नहीं है। भूख प्यास भी इन्हें सताती नहीं है। इनमें से प्रत्येक का आदर्श मेजर आशाराम त्यागी और हवलदार अब्दुल हमीद है। हरेक के मन में यही उमंग है कि हमें अपना जीवन देकर भी भारत मा की लाज बचानी है।

इन वीरों की भावना का अभिनन्दन, लेकिन अकेली सरकार या अकेली सेना ही पैंतालीस करोड़ लोगों की रक्षा नहीं कर सकती। भारत का हर नागरिक, हर नवयुवक देश की रक्षा कर जाति के भविष्य को उज्ज्वल बना सकता है। यदि हमारे देश का प्रत्येक व्यक्ति उज्ज्वल चरित्र होगा, तो हमारा मुल्क भी चाँद की तरह रोशन रहेगा। जिसका शरीर हिमालय की भांति सुदृढ़ होगा, वही हिमालय की रक्षा कर सकेगा। जिसका चरित्र चट्टान की तरह मजबूत होगा, वही विजयश्री प्राप्त कर सकेगा। यह वसुन्धरा वीरभोग्या है। राज्य सुख का उपभोग वीर रणबांकुरे कर सकते हैं, जिनकी छाती में संयम का लोहा होता है, जिनकी आँखों में देश भक्ति का तेज होता है और जिनकी भुजाओं में अकाल पुरुष का बल होता है।

भारत इस समय संसार का सबसे बड़ा जनतंत्र है, इसी से हमारा उत्तरदायित्व भी बड़ा है। हमारी जमहूरियत को फेल करने के लिए पाकिस्तान, इस्लाम खतरे में है, का नारा लगाकर दुनिया की आँखों में धूल झोंकने की बेकार कोशिस कर रहा है। वह सभी को गाली दे सकता है, मस्जिदों और गिरजाघरों को अपने नेपाम (अग्नि) बमों से शहीद कर सकता है, लेकिन हमारी जिम्मेदारी तो बहुत पाकीजा है। हमें इस्लाम की प्रतिष्ठा भी कायम रखनी है और हमारे लिए मस्जिदों और गिरजाघरों की अज़मत भी उसी तरह लाज़िम है, जिस तरह मन्दिरों और गुरुद्वारों की। हमारे सेक्युलरिज्म की बुनियाद गीता माता की इस आज्ञा में है—"ये अपि अन्यदेवता-भक्ताः यजन्ते श्रद्धयान्विताः"—जो किसी भी रूप में, किसी भी देवता की श्रद्धा से पूजा करता है, वह मेरा अपना है। जिस इस्लाम का नाम गलत ढंग से इस्तेमाल करके पाकिस्तान अपना उल्लू सीधा करना चाहता है, उस इस्लाम से आज पाकिस्तान लाखों कोस दूर है। अगर आज रसूले अकरम का ज़माना होता, तो अम्बाला के कैथड्रल को खाक में मिलाने वाले इन पाकिस्तानी हुक्मरानों को मरते दम तक कोड़े लगाने की सज़ा मिलती !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत, पाकिस्तान के लिए एक चुनौती है और आदर्श भी। यह चुनौती इस मानी में कि धर्मान्धता और नागरिक की स्वतन्त्रता का अपहरण करने वाले साम्यवाद के खेमों के बीच में खड़ा धर्म निरपेक्ष जनतंत्र का यह सुदृढ़ गढ़ उसकी अधार्मिक और धर्म के नाम पर लोगों को ठगने-धोखा देने की चाल को बेनकाब कर रहा है और आदर्श वह इस रूप में है कि इस धर्म निरपेक्ष जनतन्त्र की छत्र छाया में पनपते हुए सभी धर्मों, जातियों, वर्गों और भाषाओं के लोगों को देखकर पाकिस्तान चाहे तो बहुत बड़ा सबक सीख सकता है। अपने धर्म में सच्ची आस्था होने का यह अर्थ हरगिज नहीं कि दूसरे के धर्म से या दूसरे धर्म वालों से घृणा की जाये या उन्हें जीने न दिया जाये और उनके पूजा-स्थानों, इबादतगाहों को नष्ट किया जाये। भारत के सभी धर्मों, जातियों और प्रदेशों के जवानों ने मातृभूमि की रक्षा के लिए प्राणोत्सर्ग करके पाकिस्तान ही नहीं, सारी दुनिया को यह बता दिया है कि सच्ची देश-भक्ति, हुब्बुलवतनी किसे कहते हैं। उसका सम्बन्ध इन्सानियत से है, किसी मज़हब से नहीं। इसी लिए भारतीय सेना के किसी भी जवान की वीरता किसी दूसरे की वीरता से कम नहीं कही जा सकती।

पाकिस्तान रेडियो ने कई बार इस बात का झूठा प्रचार किया कि भारत के लोग भूखे हैं, बेरोज़गार हैं, आपस में लड़ते-झगड़ते हैं और उनके पास काफी तादाद में अच्छे हथियार भी नहीं हैं। अगर उसकी बात सच मानली जाये, तो हमारे वीरों के कार्य का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है; क्योंकि यह सब कमियां होने पर भी भारतीय जवानों ने उसकी रीढ़ तोड़ने में जो सफलता प्राप्त की है, वह संसार के देशों की वीरता के इतिहास में स्मरणीय है। अगर पाकिस्तानी प्रचार को आंशिक सत्य भी कहा जाये, तो इस युद्ध के कारनामों में भारतीय जवानों की वीरता की उस परम्परा की झलक मिलती है, जिसमें सब कुछ त्रुटियाँ और कमियाँ होने पर भी संकट के समय एक होने और मातृभूमि की रक्षा के लिए हँसते-हंसते प्राण न्योछावर करने—जूझने की अद्भुत क्षमता है। भारत की जनता ने और जवानों ने सिद्ध कर दिया है कि आधे पेट खाकर, आपस में लड़-झगड़ कर और कम हथियार होने पर भी वे दुश्मन के लिए फौलादी चट्टानों की तरह मजबूत साबित हो सकते हैं। शेर कभी ज्यादा नहीं खाता, पर वह अधभूखा-सा भूखा रहकर भी गीदड़ों के झुंडों को खत्म कर सकता है। शायद पाकिस्तान इस बात को भूल जाता है कि हम उस महाराणा प्रताप की संतान हैं, जिसने अट्ठाईस साल तक दरख्तों की छाल चबाकर भारत माता की अखंडता की रक्षा की थी।

यदि हम भारतीय वीरों की परम्परा पर दृष्टि डालें, तो स्पष्ट हो जायेगा कि हमारे देश के वीरों ने सदा आगे बढ़कर शत्रु का मुकाबला किया है। दुश्मन के वारों को अपनी छाती पर [illegible] प्रताप, शिवाजी और टीपू ने कभी जवानों को आगे कर स्वयं पीछे रहने का काम नहीं किया। उसी परम्परा को निभाते हुए हमारे वीरों ने इस बार भी अगुआ बन कर दुश्मनों के छक्के छुड़ाए हैं। यही कारण है भारत-पाक संघर्ष में जहाँ पाकिस्तान के जवान अधिक मरे और अफसर कम, वहीं उसके मुकाबले में भारत के अफसर अधिक शहीद हुए हैं और जवान कम। हमारी सेनाओं की सफलता का यही राज़ है। हर टुकड़ी के साथ एक अफसर था, जो उसे अपने साथ लेकर आगे बढ़ता था। इस हालत में भला कौन किसी से कम रह सकता है?

जहाँ तक अस्त्र-शस्त्रों का सम्बन्ध है, दुनियाँ जानती है कि पाकिस्तान को अमरीका से मिले हुए पैटन और शेरमान टैंक, सैबरजेट तथा सुपरसैनिक बमबाज और लड़ाकूयान, रिकाइलेस तोपें, मशीनगनें आदि के मुकाबले में भारत के पास ऐसे तकड़े युद्धास्त्र नहीं थे, पर यह हमारे जवानों के शौर्य-वीर्य का ही करतब था कि उन्होंने इस विषमता या कमी की पूर्ति अपने हौंसलों से, साहस से, मर मिटने की तमन्ना से की और दुश्मनों को धूल में मिला दिया। **जहाँ तक भारत का सम्बन्ध है, उसने यह साबित कर दिया है कि लड़ाई में हार जीत लोहे और फौलाद की तादाद या वजन से नहीं, बहादुरों की वीरता से होती है। जिस तरह एक एक भारतीय यान चालक ने अपने छोटे विमान नैट से कई कई सैबर जैटों और सुपर सैनिकों का सफलता पूर्वक मुकाबिला किया, जिस तरह मामूली तोपों से भारतीय जवानों ने पैटन और शेरमान टैंकों की धज्जियाँ उधेड़ी और जिस तरह स्वयं ग्रेनेड छाती से बाँध कर टैंकों के साथ खुद शहीद हो गए, जिस तरह एक यान चालक ने अपने हवाई जहाज के साथ गोता मार कर शत्रु के रडार केन्द्र को नष्ट कर दिया—वह सब हमारे जवानों की असाधारण और अद्भुत वीरता का ही तो परिचायक है। ऐसे दिल गुर्दे और हौंसले वाले वीरों के सामने लोहा और फौलाद कब तक टिक सकते हैं।** "क्रिया सिद्धिः सत्वे भवन्ति महतांनोपकरणे" [सफलता का आधार आत्मा का बल है, बाहरी उपकरण नहीं]। भारत की सच्ची वीर परम्परा, एकता, संगठन-शक्ति और देश पर मर मिटने की तमन्ना—कामना का ऐसा समन्वय इतिहास में पहली बार ही देखने को मिला है, यह कुछ कम गौरव की बात नहीं।

अपने जवानों की प्रशंसा करना ही काफी नहीं है। हमें उनके प्रति अपने कर्त्तव्यों को भी ध्यान में रखना है। पहले भारत के लाल विदेशियों की सेना में रोज़ी कमाने जाते थे और उन्हीं के स्वार्थों की रक्षा के लिए, जिससे वे कहें, लड़ते थे, पर आज भारत स्वतंत्र है। उसकी रक्षा हममें से प्रत्येक का कर्तव्य है, धर्म है। इस धर्म को निभाते हुए भारत मा का जो सपूत शहीद होता है, उसकी कीर्ति रक्षा तो इतिहास करता है, पर उसके

(कृपया देखिये पृष्ठ ३५१)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे उनमें नहीं हैं, जो केवल चलम चल में विश्वास करते हैं, वे उनमें हैं जो व्यक्ति और राष्ट्र के जीवन में नई छलाँग देखना चाहते हैं। साथ ही वे उनमें भी हैं जो वैसा देखना चाहते हैं वैसा करना भी चाहते हैं और उसे सभी से कराना भी।

उत्तर प्रदेश के शिक्षा एवं वित्त मंत्री श्री कैलाश प्रकाश उन्हीं विशिष्ट राजनैतिक प्रतिभाओं में हैं, जो अपने विभाग को चलाने मात्र में ही विश्वास नहीं करते, उसके माध्यम से व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के जीवन में एक नई क्रांति उत्पन्न करने का प्रयास करते हैं। उनके चिन्तनों में नए और मौलिक विचार हैं, तो विचारों में साकारता लाने की योजनायें भी हैं। देश की नई पीढ़ी पर उनकी नजर गहरी है, इस अर्थ में कि यह पीढ़ी निखार पाये।

प्रदेश तथा देश के विशिष्टों में होते भी कैलाशप्रकाश जी के जीवन का शृंगार उनकी सादगी है। विभाग और विचार में ऊपर उठकर भी व्यवहार में हम उन्हें चौधरी की चौपाल पर ही बैठा पाते हैं। अपने घरेलू सेवक से बात करें या मित्रों-परिचितों के बीच में हों, हर दशा में उनका अपनत्व ही छलकता है। पद में वे लाख कुरसी वाले हों, बैठने में उन्हें मजा आता है खाट पर ही; वह खोरड़ी हो तो और भी। देश की नई संकटपूर्ण परिस्थितियों में उन्होंने नई पीढ़ी को यह नया उद्बोधन दिया है।

—अखिलेश

आज के विद्यार्थी;

जब कल कर्म-क्षेत्र में होंगे !

श्री कैलाश प्रकाश

शिक्षा एवं वित्त मंत्री, उत्तर प्रदेश

●

आप सभी जानते हैं कि देश इस समय संकट की स्थिति से गुजर रहा है। संकट ऐसा है, जिसे हम कह नहीं सकते कि वह कब तक चलेगा। चीन और पाकिस्तान हमारे दो प्रमुख पड़ौसी हैं। पिछले अनुभव ने हमें बताया है कि उनकी बातों पर और उनके आश्वासनों पर भरोसा नहीं किया जा सकता। इस संकट का सामना करने के लिए हमें कुछ विशेष कदम उठाने हैं, हमें तैयार होना है। इस तैयारी के दो पहलू हैं:—

१—सैनिक तैयारी २—नागरिक तैयारी

कुछ वर्ष पूर्व तक हम सैनिक तैयारी पर अधिक व्यय करने के पक्ष में नहीं थे। हमारा विश्वास था कि यदि अन्य देशों के प्रति हमारी सद्भावना है, उनके प्रति हम कोई अनुचित व्यवहार नहीं करते तो कोई कारण नहीं कि वे हमारे देश पर आक्रमण करें, किन्तु अब स्थिति बदल गई है। कुछ वर्ष पूर्व हिन्दी-चीनी भाई-भाई का नारा लगाने वाले चीन ने हमारे देश पर आक्रमण किया। कुछ समय पूर्व हमारी ओर से कोई उत्तेजनात्मक कार्यवाही हुये बिना ही पाकिस्तान ने हमारे देश पर आक्रमण किया। यह बात स्पष्ट हो गई है कि अपनी महत्वाकांक्षाएँ पूरी करने के लिए भी हमारी शान्तिपूर्ण नीति से क्षुब्ध हो कर हमारे पड़ौसी ये देश कभी भी हमारे देश पर आक्रमण कर सकते हैं। इसी लिये यह नितान्त आवश्यक हो गया है कि सैनिक दृष्टि से हमारा देश मजबूत बने। इसलिये अब हमें अपना जीवन स्तर उन्नत करने के लिये भी उत्पादन करना है और देश को सैनिक दृष्टि से मजबूत बनाने के लिए भी। देश की जन-संख्या को देखते हुये पहली जिम्मेदारी ही काफी बड़ी थी, किन्तु वर्तमान स्थिति में यह दूसरी जिम्मेदारी तो और भी महत्वपूर्ण हो गई है।

अमरीका, इंगलैंड, रूस आदि अन्य देशों के साथ हम मित्रता का व्यवहार करते रहे और ये देश भी हमारे साथ मित्रता का व्यवहार करते रहे। हमारे विकास कार्यों में ये देश विभिन्न प्रकार की सहायता भी देते रहे, किन्तु पाकिस्तान

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा हमारे देश पर किये गये आक्रमण के समय इन देशों की दृष्टि भी कुछ बदल गई। यह बात स्पष्ट हो गई कि अन्य देशों द्वारा मिलने वाली सहायता का आधार तथा-कथित मित्रता और न्याय से अधिक राजनीति है। महत्व-पूर्ण बातों में सहायता के लिये अन्य देशों पर निर्भर करके हम अपने देश की स्वतंत्रता की रक्षा अधिक समय तक नहीं कर सकते। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि हमारे लिये अपने पैरों पर खड़ा होना नितान्त आवश्यक हो गया है।

पुराने ज़माने में केवल फौजें लड़ती थी। जब तक अपनी फौज पराजित नहीं होती थी तब तक शत्रु आगे बढ़कर नागरिकों को हानि नहीं पहुँचा सकता था। अब स्थिति बदल गई है। मोर्चे पर अपनी फौजें वीरता के साथ लड़ती रहें और शत्रु की फौजों को आगे न बढ़ने दें। तब भी शत्रु हवाई जहाजों से गोलाबारी करके नागरिकों को हानि पहुंचा सकता है। पुराने ज़माने में एक आदमी अपने परिश्रम द्वारा मोर्चे पर लड़ने वाले दो आदमियों की आवश्यकता पूरी कर सकता था, पर अब तीस से पचास तक आदमी कारखानों खेतों आदि में परिश्रम करें तब मोर्चे पर लड़ने वाले एक सिपाही की आवश्यकतायें पूरी होती हैं। कुछ युद्ध विशेषज्ञ तो मानते हैं कि ९९ आदमी घरेलू मोर्चे पर ठीक तरह से अपना काम करें, तो एक सैनिक युद्ध के मोर्चे पर लड़ सकता है। इस प्रकार अब युद्ध का मोर्चा प्रत्येक नगर, प्रत्येक ग्राम हर कारखाना और हर खेत खलियान भी है। इस प्रकार जब तक सैनिक मोर्चे के साथ साथ नागरिक मोर्चा भी बहुत मजबूत न हो तब तक देश के लिये अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिये भली भांति लड़ सकना सम्भव नहीं हो सकता। नागरिक मोर्चे के दो उत्तरदायित्व हैं।

१—नागरिक, अपनी आवश्यकतायें पूरी करने के लिये उत्पादन कर सकें।

२—नागरिक, सेना की आवश्यकतायें पूरी करने के लिये भी उत्पादन कर सकें।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारी सेना ने पाकिस्तान के आक्रमण का सामना करने में अद्वितीय कार्य किया है। इतिहास में उस कार्य का उल्लेख निश्चय ही स्वर्ण अक्षरों में होगा। दूसरे महायुद्ध के बाद जितनी वैज्ञानिक उन्नति हुई, उन सब का लाभ उठा कर अमरीका ने पैटन टैंक और सैबर जैटों से अपनी सेना को तैयार किया था। इन शस्त्रों को संसार अपराजेय मानता था। इनकी तुलना में हमारी सेना के टैंक और लड़ाकू जहाज पुराने या कम अच्छे थे। फिर भी हमारी सेना ने पैटन टैंकों और सैबर जैटों को एकदम तोड़ दिया और उन्हें परास्त किया। यह बात इतिहास सदा याद रखेगा।

अब प्रमाण मिल रहे हैं कि पाकिस्तान जिस दिन बना था, उसी दिन से हमारे खिलाफ लड़ने की तैयारी करता रहा। उसे साम्यवादी देशों से लड़ सकने योग्य बनाने के नाम पर विदेशी सैनिक सहायता भी अरबों रुपये की मिली। फिर भी हमारी सेना ने अपने दृढ़ संकल्प और वीरता के बल से पाकिस्तान की फौजों को परास्त किया। यह देश के लिये कम गौरव और कम गर्व की बात नहीं है।

देश की जनता ने भी अपने ढंग से बहुत कार्य किया और वह कार्य समझदारी और नियंत्रण के साथ किया। बहुत कुछ शासन के आदेश की प्रतीक्षा किये बिना भी किया। पूरा देश पारस्परिक भेद-भाव भुला कर फौलाद की चट्टान की तरह डट गया, जिस से टकराकर पाकिस्तान के मनसूबे चूर चूर होगये, किन्तु संकट अभी समाप्त नहीं हुआ है और अभी हमें बहुत कुछ करना शेष है।

अभी तक भी जनता नागरिक क्षेत्र के मोर्चे तथा सामरिक क्षेत्र के मोर्चे के पारस्परिक सम्बन्ध को पूरी तरह समझ नहीं पाई। दोनों का यह सम्बन्ध उसे समझाना होगा।

चिन्ता की बात यह कि युद्ध विराम होते ही जनता का उत्साह भी कम होने लगता है। यही बात चीनी आक्रमण के बाद भी हुई थी। चीनी आक्रमण के समय देश में जागृति और उत्साह की जो लहर आई थी, वह बनी रहती, तो आज हमें अन्न के लिये इस सीमा तक विदेशों पर निर्भर न करना पड़ता। स्पष्ट है कि अन्न के सम्बन्ध में आत्मनिर्भर हुए बिना ही अधिक समय तक अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सकते।

दूसरी चीजें बढ़ाई जा सकती हैं, किन्तु भूमि बढ़ाई नहीं जा सकती। विकास के साथ-साथ कृषि के लिये उप-लब्ध भूमि में तो कमी ही होगी, क्योंकि ज्यों ज्यों कार-खाने, सड़कें, नहरें आदि बनेंगी, कृषि के लिये उपलब्ध भूमि में कमी होती जायेगी। यह बात दूसरी है कि हम बन्जर भूमि को खेती योग्य बनाकर खेती के लिये उपलब्ध भूमि में कुछ वृद्धि करने का प्रयत्न करें, पर यह वृद्धि कोई अनन्त तो होगी नहीं।

समस्या का हल केवल यही है कि हम वैज्ञानिक साधनों का उपयोग करके फी एकड़ भूमि की उपज बढ़ायें। मैक्सिको में एक विशेष गेहूँ एक एकड़ में अस्सी मन होता है, जबकि हमारे देश में गेहूँ की उपज का औसत फी एकड़ केवल बारह-पन्द्रह मन है। इसी प्रकार और देशों में भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गेहूँ, चना, मक्की; चावल आदि की फी एकड़ उपज हमारे देश से कई गुना अधिक है।

फी एकड़ उपज में वृद्धि वैज्ञानिक साधनों को उपयोग में लाकर ही हो सकती है। सर्व साधारण तक यह वैज्ञानिक जानकारी पहुँचाने का उत्तरदायित्व प्रसार-अध्यापकों तथा उन विद्यालयों का है, जहाँ कृषि-अध्ययन का विषय है।

वैज्ञानिक साधनों के बारे में जानकारी रेडियो तथा प्रचार के अन्य साधनों द्वारा जनता तक पहुँचाने का प्रभाव एक सीमा तक ही होता है, अगर प्रसार अध्यापक और कृषि विद्यालय अपने यहां वैज्ञानिक साधनों का उपयोग करके उस क्षेत्र के किसानों के खेतों की अपेक्षा प्रति एकड़ अधिक अन्न उत्पन्न करके दिखायें तो किसान शीघ्र ही उन वैज्ञानिक साधनों को अपना लेगा। उन्नति के जो साधन किसान को बताये जाते हैं उन पर पूर्ण विश्वास उसे तब ही होता है, जब उन साधनों का उपयोग करके उसके सामने उपज बढ़ा कर दिखादी जाय।

इस समय विद्यालयों में पढ़ने वाले बच्चों और नौजवानों में भी उत्साह की कमी नहीं है। संकट काल में उन्होंने तरह तरह से देश की सहायता की। उन्होंने सुरक्षा कोष के लिये चंदा दिया, घायल सैनिकों के लिये रक्त दिया और उत्साह के साथ सिविल डिफैंस और फर्स्ट एड की ट्रेनिंग ली। कुछ स्थानों पर तो उन्होंने बड़ी जिम्मेदारी के साथ पुलिस के काम में भी हाथ बटाया, किन्तु यह कार्य स्थायी रूप से चलने वाले नहीं हैं। आवश्यकता इस बात की है कि विद्यार्थियों को समझाया जाये कि देश को मजबूत बनाने के लिये आज सब से आवश्यक बात यह है कि खाद्य समस्या हल हो, खाद्य के मामले में हम स्वावलम्बी हों। यदि प्रत्येक छात्र एक पौधा खाद्य-सामग्री पैदा करने के लिये लगाये और स्वयं उसकी रक्षा करे, तो बहुत काम हो सकता है। मुझे विश्वास है कि अगर विद्यार्थी समझ जायें कि स्कूल में, घर में, खेत में, यहां तक कि गमले में अन्न या साग-सब्जी उगाना देश को मजबूत बनाने में सहायता देना है, तो यह निश्चय ही वह कार्य कर दिखायेंगा। शिक्षा के क्षेत्र में इन कार्यों का महत्व शैक्षिक दृष्टि तथा चरित्र-निर्माण और अनुशासन की दृष्टि से कम नहीं है, क्योंकि जिसमें निर्माण की भावना जागी, विध्वंस का विचार उससे दूर भागा। फिर जिस छात्र के मन में यह भावना हो कि वह देश के लिये कुछ काम कर रहा है, वह अपने को कभी बखेर ही नहीं सकता।

विद्यार्थी का सर्वश्रेष्ठ दान श्रम और बुद्धि का ही हो सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि वह अपने श्रम और अपनी बुद्धि का दान खाद्य-पदार्थों के उत्पादन के लिये दे। हमारे देश में खाद्यान्न तरह-तरह से नष्ट भी हो जाते हैं। उसे नष्ट होने से बचाने के लिये भी विद्यार्थी आवश्यक जानकारी का प्रचार तथा अन्य उपयोगी कार्य कर सकते हैं। इस से उनमें जो आत्म गौरव जागेगा, उससे उनमें पढ़ने का उत्साह भी निश्चय ही बढ़ेगा। जिन विद्यालयों में इन्टर, बी० एस-सी०, एम० एस-सी० आदि में कृषि की कक्षायें चल रही हैं, वे कृषि सम्बन्धी वैज्ञानिक जानकारी के प्रसार और डिमोन्स्ट्रेशन के बड़े महत्वपूर्ण केन्द्र बन सकते हैं।

नागरिक क्षेत्र में देश की सुरक्षा के लिये जो दूसरा अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य आवश्यक है वह है कुछ न कुछ बचाने की आदत डालना। इसमें अपना लाभ तो है ही कि भविष्य के लिये शक्ति बचती है, पर यह देश की भी सेवा का एक मुख्य काम है। देश का उत्पादन बढ़ाने के लिये जो धन व्यय किया जाता है, उसके फलस्वरूप उपभोग वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि होती है। इस प्रकार पूंजी में जो जनता के पास सामान खरीदने के लिये है और उस सामान में जो खरीदे जाने के लिये उपलब्ध है एक संतुलन बना रहता है, किंतु देश की सुरक्षा को मजबूत करने के लिये सैनिक तैयारी पर जो धन व्यय होता है, उसके फलस्वरूप उपभोक्ता सामग्री में वृद्धि नहीं होती। इस प्रकार जनता के पास सामान खरीदने के लिये जो धन होता है, उसमें और उपलब्ध सामग्री में संतुलन बिगड़ जाता है और चीजों की कीमत बढ़ती चली जाती है। चीजों की कीमत बढ़ने का क्रम अगर बराबर चलता रहे, तो हमें बहुत समय तक आक्रामक देश से लड़ने में कठिनाई होती है। कीमतों का बढ़ना रोकने का एक महत्वपूर्ण उपाय यह है कि जनता अल्प बचत योजना को अपनाये। अल्प बचत योजना द्वारा जो धन सरकार के पास पहुंचता है, वह उत्पादन बढ़ाने और देश की सुरक्षा को मजबूत करने में लगाया जाता है। इस दिशा में भी अध्यापक और विद्यार्थी महत्वपूर्ण कार्य कर सकते हैं मुझे विश्वास है कि इन दो कार्यों के लिये यदि हमारे देश के अध्यापक और छात्र निष्ठापूर्वक परिश्रम करें, तो निश्चय ही हमारे देश में नवयुग का सूर्योदय होगा और थोड़े ही समय में हमारा देश अपराजेय बन जायेगा। इसका अर्थ है कि आज की पीढ़ी को काम करने के लिये कल जो भारत मिलेगा, वह आज के भारत से अधिक मजबूत, अधिक समृद्ध और अधिक व्यवस्थित होगा। क्या नवयुवकों के लिये यह कोई साधारण बात है?

卐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया जा रहा था। १९५८ का यह प्रथम – शासकीय–समारोह जिन्होंने देखा है वे इसे कभी भुला नहीं सकते। शोध पत्र और भाषण-माला के लिए मैंने देश के विभिन्न भागों के कालिदास-साहित्य के मर्मज्ञ विद्वानों को साग्रह आमंत्रित करवाया था और विशिष्ट पुरुषों को प्रति दिन की अध्यक्षता के लिए बुलवाया था।

ऐसा सुगठित-सुव्यवस्थित समारोह सतत ७ रोज शायद जहां सम्पूर्ण सांस्कृतिक-वातावरण बन गया था, वहां शासकीय-आयोजन में नाटक, नृत्य, रूपक के द्वारा सर्व साधारण जनता का आकर्षण प्रस्तुत होगया था। अभिनय कालिदास-साहित्य पर आधारित-पूर्णतः संस्कृत-भाषा में ही हुए, फिर भी १५-२० हजार जनता मुग्ध बन दर्शक बनी रही।

जिस रोज शासकीय आयोजन का आरम्भ हुआ, तब सभी आरम्भिक भाषणों, स्वागत-प्रवचनों में शासकीय गुण-गाथाएं गुंफित थी, ३० वर्ष से जिस संस्था ने इस परम्परा को पोषित-परिवर्द्धित किया

राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद जब

१९५८ के नवम्बर मास में कालिदास–स्मृति–महोत्सव–पर्व के समय उद्घाटन के लिए उज्जैन में महामहिम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र बाबू पधारे थे और दो दिन तक उज्जैन में निवास किया था। इस वर्ष कालिदास - समारोह म० प्र० शासन की ओर से मनाया जा रहा था। इसके पूर्व २९–३० वर्ष से कालिदास-परिषद की ओर से मनाया जाता था। बाबू जी परिषद् की प्रवृतियों से सुपरिचित थे, समय-समय पर संदेश भी भिजवाए थे, कालिदास स्मृति-मन्दिर की अपील पर अपना समर्थन भी प्रदान किया था। इस बार यह स्मृति पर्व शासकीय-स्तर पर हो रहा था। शासन ने परिषद् के प्रस्ताव को स्वीकार कर आयोजन आरम्भ किया था। परिषद् के अनुरोध पर शोध पत्र-चर्चा और भाषण-माला का आयोजन विक्रम-विश्व विद्यालय के तत्वावधान में ही अन्यत्र हुआ हो। पूरे सप्ताह भर सम्मिलित रहकर देश के सु-विदित भाषा-शास्त्री श्री सुनीति कुमार चटर्जी ने अन्तिम दिवस की अध्यक्षता करते हुए कहा था कि 'भारत-वर्ष के ३०० वर्षों के इतिहास में ऐसा सांस्कृतिक-आयोजन शायद ही कभी हुआ हो' मानों उज्जैन में उस समय विक्रम के समय के नवरत्न और विद्वत्सभासद एकत्रित हो गए हों और उज्जैन का भव्य-अतीत वर्तमान बनकर प्रत्यक्ष हो गया हो! एक अपूर्व-अद्भुत-वातावरण बन गया था। रूस, चीन, ईराक, ईरान, जर्मन, फ्रेंच प्रतिनिधि भी यहाँ सम्मिलित हो गए थे। जहाँ उज्जैन के किसी होटल पर भी कालिदास का नाम अंकित नहीं मिलता था, वहाँ इस बार उज्जैन का प्रत्येक नागरिक और सड़क का तांगे वाला भी कालिदास के नाम से सर्वथा परिचित हो गया था। विश्व-विद्यालयीन-आयोजन में उसका 'एक शब्द' में भी संकेत तक नहीं किया गया। इन औपचारिक-भाषणों के समाप्त होते ही जब मान्य राष्ट्रपति ने अपना उद्घाटन-प्रवचन आरम्भ किया, तब प्रथम अंश में ही कालिदास-परिषद् और व्यक्तिशः मेरा भी उल्लेख किया। राष्ट्रपति के भाषण का यह संकेत सुनकर प्रांत के प्रधानों को सम्भवतः अपनी भूल विदित हुई, तब अन्त में धन्यवाद वितरण के अवसर पर विवश हो परिषद का स्मरण कर मार्जन करना पड़ा।

दूसरे दिन राष्ट्रपति का कार्य-क्रम महाकालेश्वर-दर्शन का था, मैं साथ में था ही। जब दर्शन कर वापस हो रहे थे, मैं अपने भारती-भवन के द्वार पर पुष्प-माला लिए प्रस्तुत था। भारती-भवन मंदिर के निकट ही उत्तर-भाग में है, उसी के सामने से मार्ग है। मार्ग के दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उज्जैन आए थे !

पद्मभूषण श्री सूर्यनारायण व्यास

और बहुत बड़ा जन-समूह जुड़ा हुआ था। कार आगे बढ़कर जब इधर आई और इस प्रकार फूल माला लिए मुझे सहसा मध्य में ही खड़ा देखा तो कार को क्षण भर रोक दिया। माला स्वीकार करते हुए बाबू जी ने पूछा कि यहाँ कैसे ? मैंने निवेदन किया कि 'यही निवास स्थान है।' अपार भीड़ थी, रुकने का अवकाश भी नहीं था। जय ध्वनि के साथ कार आगे मंद गति से बढ़ती गई, पीछे मैं भी अपनी कार से साथ हो लिया।

राष्ट्रपति जी अपने आवास-स्थल पहुंच गए और मैं समारोह-स्थल पर शोध-पत्र के कार्य-क्रम में लग गया। इस बीच मैं राष्ट्रपति जी के निकट नहीं पहुंच सका। दोपहर के समय कलक्टर ने मुझे सूचना दी कि राष्ट्रपति जी स्मरण कर रहे हैं। मैं पहुँच गया तो अन्य चर्चाओं के पश्चात् राष्ट्रपति जी ने बतलाया—"संध्या के समय महाकालेश्वर में सांध्य-पूजा में सम्मिलित होना चाहता हूँ और वहाँ से निवृत्त होकर एक घंटा आप के स्थान पर रुकूंगा। सभी से मिलना भी चाहता हूं वहाँ से कालिदास समारोह में आप को साथ ले कर जाना है।" प्रकाशित और वितरित प्रोग्राम की एक प्रति भी मुझे उन्होंने दी।

जब स्वयं बाबू जी ने मेरे स्थान पर पधारने की बात कही, तो क्षण भर के लिए हर्षाश्चर्य चकित ही हो गया। बाबू जी की मेरे प्रति कितनी असीम-अनुग्रह-कृपा-भावना और अपनों के प्रति आत्मीयता है। मुझ जैसा अकिंचन यह सोच भी नहीं सकता था कि विशाल-राष्ट्र का यह देवता, एक अकिंचन की कुटी पर पधार सकता है! मैं निवेदन करने का तो साहस भी संचित नहीं कर सकता था। उसके विपरीत स्वयं बाबू जी ने कार्य-क्रम ही निश्चित कर दिया था। निःसंदेह बाबू जी की मुझ पर असीम कृपा रही है। कारण प्रस्तुत कर मुझे दिल्ली बुलवाया है। अपने निकट ही ठहराया है। पारिवारिक मानकर ममत्व प्रदान किया है। कई बार वापिस होने के लिए ली हुई रेलवे टिकिट और रिजर्वेशन वापिस किये गए हैं और रुकने को विवश बनाया है। आत्मीय जनों में स्वीकार कर मुझे भाग्यशाली बनाया है। इस बार स्वयं घर पर आने और परिवार के लोगों से मिलने की भावना व्यक्त की, मेरे लिए तो यह भावना ही कुबेर की निधि मिलने जैसी थी।

मैं बड़े धर्म-संकट में पड़ गया। एक कठिन समस्या मेरे सामने खड़ी हो गई। मैं बाबू जी के स्वास्थ्य की स्थिति से पूर्णतः परिचित था। शायद कोई दूरस्थ-व्यक्ति यह विचार न कर अपने सौभाग्य पर गर्व अनुभव करता, बाबू जी के स्वास्थ्य की उतनी चिन्ता न कर अपना महत्व प्राप्त करने की दृष्टि से बाबू जी को कष्ट देने का दुस्साहस भी कर गुजरता और बाबू जी सौहार्द्र वश कष्टों की पर्वाह किए बिना, अपने जनों को धन्य बना देने को तैयार हो जाते। जापान यात्रा में सम्राट के राज प्रासाद की कई सीढ़ियां चढ़ गए थे, बाद में उसका दुष्परिणाम भी हुआ था। उज्जैन में मैंने बाबू जी को महा कालेश्वर-मन्दिर की सीढ़ियाँ चढ़ने उतरने का कष्ट न हो, इसलिए सरल-मार्ग की सुविधा योजित की थी। १९५१ में इसी मन्दिर की सीढ़ियाँ चढ़ने-उतरने के कारण उसमें प्रभावित होने-उपचार लेते हुए देखा था। ऐसी अवस्था में मैं यह कैसे साहस कर सकता था कि अपना महत्व पाने के लिए बाबूजी

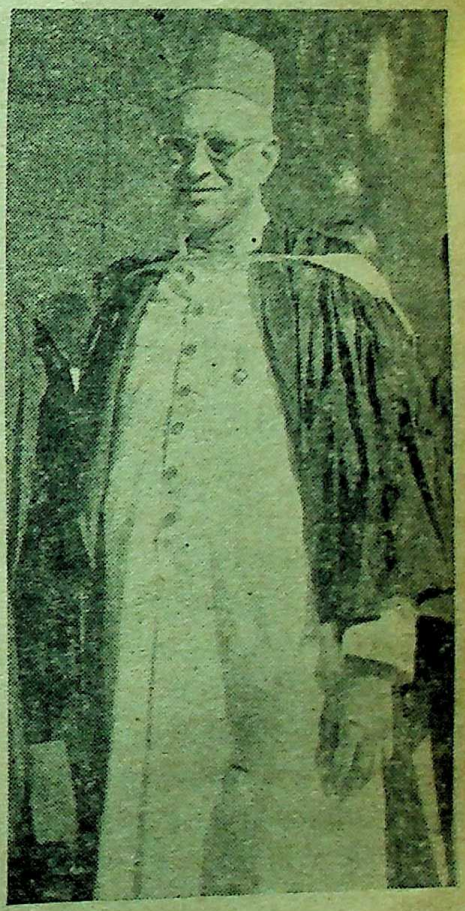

लेखक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के वयोवृद्ध - शिथिल - शरीर और स्वास्थ्य के साथ स्वार्थ-व्यवहार करूं ? राष्ट्र की महती-विभूति के स्वास्थ्य की चिन्ता और उसका महत्व हमारे छोटे-से स्वार्थ से कई गुना कीमती होता है।

मैंने विनय पूर्वक निवेदन किया—'बाबू जी, यह कार्यक्रम मेरे जीवन के लिए तो अत्यन्त महत्वपूर्ण ही है। आप मुझे अत्युक्त गौरव प्रदान कर ऐतिहासिक घटना बना रहे हैं। मेरे लिए इससे अधिक और कौन सा सौभाग्य होगा, जबकि राष्ट्र-देवता स्वयं घर को पुनीत कर मुझे कृतार्थ करें, किन्तु अपने स्वार्थ के लिए आपके स्वास्थ्य की जो इस महान राष्ट्र की निधि है—उपेक्षा करूँ तो यह मेरे लिए बड़ी कृतघ्नता होगी। मैं जानता हूँ कि मेरे घर की सीढ़ियाँ चाहे थोड़ी ही हों, आपके लिए सुगम नहीं होंगी, श्वास पर उनका अवश्य दुष्प्रभाव होगा। इस लिए मैं बहुत डर रहा हूँ। साहस नहीं कर पा रहा हूँ कि कैसे कार्यक्रम का स्वागत करूँ ?'

बाबू जी को सीढ़ियों की कल्पना नहीं थी, जब यह पता चला तो वे क्षण भर सोच में पड़ गए और पूछा—

"ऐसा कोई मार्ग निकल सकता है कि सीढ़ियाँ न चढ़ते हुए सभी से मिलना संभव हो सके ?"

मैंने निवेदन किया—"अवश्य हो सकता है, आप ऊपर न चढ़ें, मैं नीचे के प्रांगण में सभी को दर्शनों के लिए एकत्रित कर दूंगा।"

इस मध्य-मार्ग पर बाबू जी सहमत हो गए और मुझे बहुत बड़ा समाधान मिल गया। इसके पूर्व जो प्रोग्राम बना था, शासकीय-व्यवस्था की दृष्टि से पहिले ही वितरित हो चुका था। अब उसमें थोड़ा परिवर्तन कर दिया गया। मैं बाबू जी से विदा ले कर घर लौटा और परिवर्तित प्रोग्राम के अनुसार व्यवस्था की।

शाम को राष्ट्रपति जी ने महाकालेश्वर में दर्शन किए, सांध्य-पूजा में भाग लिया। वहां पूजा होने तक खड़े रहना पड़ा। फलस्वरूप श्वास-क्रिया पर प्रभाव भी पड़ा। मन्दिर से बाहर होते ही मुझे बतलाया—"आपने बहुत ठीक किया। इतने थक जाने पर जरा भी चढ़ना-उतरना शायद सहना कठिन होता।"

मेरे मन में बड़ा समाधान हुआ, कि मैं बाबू जी को श्रम सहने से बचा सका।

१५ मिनट के पश्चात् ही भारती भवन (घर) के समक्ष सभी पहुँच गए। कार्यक्रम यद्यपि प्रचारित करने से बचाया गया था, फिर भी बहुत बड़ी तादाद में नर-नारी एकत्रित हो गए थे। बाबू जी घर पर पहुँच कर 'कार' से उतरे, साथ में मध्य प्रदेश के गवर्नर मान्य पाटसकर साहब तथा मान्य डॉ. काटजू साहब भी थे। बाबू जी मेरे परिवार के सभी लोगों से यथा क्रम मिले। हर एक से बातें कीं, विशेष रूप से शिशु-समुदाय से बहुत स्नेह-पूर्वक मिले। श्रीमती ज्ञानवती जी साथ में थी ही, वे सभी से परिचय करवाती जा रही थीं।

यह क्षण मेरे जीवन का सर्वाधिक मूल्यवान बन गया। यह कभी भुलाया नहीं जा सकता। एक महान विभूति का, किसी अकिंचन के प्रति यह कितना ममत्व पूर्ण विशाल-व्यवहार था। शासकीय नियम-व्यवस्था को एक ओर रख, अपनों के प्रति किस हद तक आत्मीय-भावना उनमें रहती थी। मुझे तो अपने निजत्व के बन्धन में सदैव के लिए आबद्ध और चिर-ऋणी बना लिया था। १२ वर्ष के समय में अधिक ही निकट आता गया, अन्त तक अधिक विश्वास और कृपा का पात्र बना रहा।

अपने यहाँ सीढ़ियां न चढ़ने देकर जो व्यवस्था की थी, उसकी चर्चा बाबू जी ने कई लोगों से की थी और सराहा था। जब १९६१ में राष्ट्रपति ने अन्तिम बार पंचमढ़ी प्रवास किया, मुझे भी अपने निकट बुलवा लिया था। एक सप्ताह तक उनकी सेवा में रहने का अवसर मिला। उस समय भी निज जनों से इसी घटना का स्मरण कर चर्चा की। बोले—"लोग तो यह प्रयत्न करते हैं कि किसी तरह उनसे मैं मिल सकूँ और तरह-तरह की बातें पैदा कर राष्ट्रपति-भवन तक पहुँचने का प्रयास करते हैं। इसके विपरीत व्यास जी को मैंने जब-जब बुलवाया, वे तभी आए हैं। मैं अधिक बुलवाना भी चाहता तो मेरे मन में यह संकोच सदैव बाधक बन जाता कि ये मुझसे आने-जाने का व्यय तक नहीं लेते हैं। संयोगवश उज्जैन जाना हुआ और मैं स्वयं इनके घर जाना और घण्टे भर ठहरना चाहता था, तो व्यास जी ने मेरे स्वास्थ्य की स्थिति को निकट से जानने के कारण, मेरे हित में, अपने यहां की सीढ़ियां चढ़ने के श्रम से मुझे बचाया। काश, यदि व्यास जी ने कार्यक्रम को स्वीकार कर लिया होता तो महाकालेश्वर की सीढ़ियां चढ़ने-उतरने के बाद व्यास जी के यहां की सीढ़ियां चढ़ने में मेरी मुश्किल ही बन जाती। व्यास जी मेरी हालत के जानकार हैं। इसलिए स्वयं ही सम्भाल लिया। मेरे मन पर उनकी इस बात का बड़ा असर पड़ा है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबू जी ने ऐसी ही बहुत-सी बातें अपने निजी पत्र में मुझे भी लिखी थीं। उनके अनेक पत्र आज भी मेरे पास निधि की तरह सुरक्षित हैं।

बाबू जी ने कहा था कि मैं किराया तक नहीं लेता, यह बात अवश्य ही ठीक है, परन्तु इसमें बड़प्पन की बात नहीं थी, क्योंकि मैं बाबू जी के लिए मन, वचन और कर्म से १९२१ से ही हार्दिक श्रद्धा, आस्था रखता आ रहा था। मैं उनके किसी आदेश या सेवा को अपने लिए सौभाग्य का विषय समझता रहा हूँ और कर्त्तव्य समझता रहा हूँ कि मैं किसी भी सेवा के लिए पात्र समझा जाऊँ! किराया लेना तो व्यवसाय या सौदे में दाखिल होता और मेरी आत्मा इसके लिए कभी गवाही नहीं दे सकती थी, परन्तु इसी कारण कई बार बाबू जी चाहते हुए भी बुलवाने में बड़ा संकोच अनुभव करते रहते थे। आज तो यह सब इतिहास की घटना ही बन गई। लगता यही है कि अभी भी बाबू जी राष्ट्रपति भवन में हैं। उनकी मधुर स्मृति दिल में, आंखों में तस्वीर बनी हुई है, बनी रहेगी। क्या उनकी असीम कृपा और आत्मीयता को विस्मृत कर सकता हूँ?

१९२१-२२ से मेरा सम्बन्ध रहा है, परन्तु १९५० में प्रत्यक्ष-दर्शन और चर्चा का प्रसंग आया था। तब से १९६३ तक बराबर निकट से निकट तक आता गया और पिछले ७-८ वर्षों में तो उस पवित्र-परिवार का एक अङ्ग ही बन गया था। आज भी श्री मृत्युंजय बाबू (बाबू जी के ज्येष्ठ पुत्र) वही सद्भाव-स्नेह लिए हुए हैं। बाबू जी राष्ट्रपति भवन में जब अकेले खाना खाते तो उनके कक्ष में ही भोजन की व्यवस्था हो जाती थी, पर जब मैं राष्ट्रपति भवन में होता, वे विशेष रूप से मेरे कारण ही भोजन कक्ष में आ जाते थे। यही नहीं, मेरे कमरे तक पहुँच कर मुझे साथ लिवा जाते। मैं बहुत ही संकोच में दब जाता।

१२ वर्ष की सैकड़ों मधुर और ममत्वपूर्ण-स्मृतियां मेरे हृदय पर अंकित हैं और वे बातें जो अकेले में मेरे और बाबू जी के बीच खुले हृदय और आत्म-विश्वास के साथ होती थीं, जिनका मैं अकेला साक्षी हूं, क्या कभी विस्मृत हो सकती हैं? प्रकाश में आने का प्रश्न ही प्रस्तुत नहीं हो सकता। कैसे पवित्र और विशाल हृदय के महामानव थे वे। सचमुच ऐसी विभूति को वरण कर महान राष्ट्र का राष्ट्रपति-पद धन्य हो गया था। ऐसी विभूतियां बार-बार थोड़े ही आती हैं? बाबू जी का चाहे शरीर अदृश्य हो गया है, परन्तु वे सदैव अमर हैं, अमर रहेंगे।

नास्ति तेषां यशः काये
जरा मरणजं भयम्।

हम लड़ रहे हैं एक महान आदर्श के लिए!

(पृष्ठ ३४४ का शेष)

परिवार और आश्रित जनों के भरण-पोषण, शिक्षा-चिकित्सा आदि की जिम्मेदारी हम सब पर है, जो बच गए हैं और उन्हीं के त्याग, शौर्य एवं बलिदान के कारण बचे हैं। सरकार इस दिशा में जो कुछ करे, उसके अतिरिक्त जन साधारण को भी इन शहीदों के ऋण से उऋण होने के लिए अपने कर्त्तव्य का पालन करना है। किसी शहीद के कुटुम्ब-परिजन को कोई असुविधा या अभाव न हो, इसकी चिन्ता हम सबको करनी है। मुझे प्रसन्नता है कि भारत की जागृत जनता इधर उचित ध्यान दे रही है।

एक और बात की ओर भी मैं शासन और देशवासियों का ध्यान दिलाना चाहूँगा। वह यह कि हमारे जवानों की वीरता पर गर्व करने के साथ ही, हमें इस बात को भी न भूलना चाहिए कि हमारे पास जितने ही अधिक अच्छे हथियार होंगे हमारे जवानों की वीरता के सुपरिणाम भी उतने ही अधिक होंगे, **विजय की खुशी और अपने जवानों की अद्भुत वीरता के गर्व में हम यह न भूल जायें कि अभी हमें और भी बड़ी अग्नि परीक्षाओं से गुजरना है। भारत की स्वतन्त्रता और समृद्धि को फूटी आँखों भी न देख सकने वाले अनेक शत्रु हम पर गिद्ध दृष्टि लगाए बैठे हैं। उनसे न जाने कब और कितनी बार हमें अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए लड़ने को मजबूर होना पड़े। इसके लिए हमें अपने जवानों के स्वास्थ्य, प्रशिक्षण और युद्ध सज्जा की ओर अधिकाधिक ध्यान देना है। हमें विदेशों की सहायता पर निर्भर न रहकर स्वावलम्बी होना है। हम अपने बल बूते पर अपनी रक्षा के लिए कटिबद्ध हों, हमें एक चीज भी बाहर से न मंगानी पड़े, यह हमारा कौल होना चाहिए और इसके लिए जो भी त्याग करना पड़े, अपना निजी काम समझकर आनन्द से, गर्व से करना ही चाहिए। स्वाभिमान, साहस और आत्म विश्वास से हम अपनी रक्षा की बड़ी से बड़ी लड़ाई लड़ सकते हैं।**

आज भारत या एशिया का ही नहीं, समूचे विश्व का इतिहास नई करवट ले रहा है। प्रसन्न हों हम कि हमारा देश अग्नि-परीक्षा में से गुजर रहा है; क्योंकि कुन्दन बनने का और कोई उपाय नहीं है। हमें आगे बढ़ते जाना है। चीन हो या पाकिस्तान, कोई भी हमें प्रगति के इस मार्ग से हटा नहीं सकता। मुकाबिला कितना भी बड़ा या कड़ा क्यों न हो, संघर्ष कितना भी लम्बा क्यों न हो, विजय निश्चित रूप से हमारी ही होगी; क्योंकि हम दूसरों की जमीनों के टुकड़े छीनने को नहीं, संसार को सुख-शांति देने वाले एक महान आदर्श के लिए लड़ रहे हैं। •

राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद जब उज्जैन आए थे! ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

★ अभिमन्यु के चक्रव्यूह की पुराण कथा ने लोक कथा बनकर व्यूह रचना की सामरिक कला को भारत के विशेषज्ञों तक घरेलू बातचीत का विषय बना दिया ।

★ १९१४–१९१८ और १९३९–१९४५ के दो विश्व युद्धों में भी सामरिक व्यूह रचना की प्रवर्धमान चर्चा विश्व भर में हुई ।

★ १९६५ में कच्छ में पाकिस्तान ने जो आक्रमण किया, उसकी व्यूह रचना जनरल अयूब ने बहुत दिल से बनाई थी और उसे उन्होंने सपनों की इन्द्र-धनुषी डोर में इस तरह गूंथा था कि सैंकड़ों शेख चिल्ली मुंह छिपा कर शहरों से जंगलों में भाग गये थे ।

★ इंगलैंड के बीच में पड़ने से इस व्यूह रचना को कसौटी पर तो ज्यादा नहीं कसा जा सका, पर प्रेजीडेंट अयूब ने इस व्यूह रचना पर एक शानदार किताब लिखकर और उसे अपनी प्रचार शैली के बल पर दुनिया में दमका कर बिना जाँच पड़ताल के ही 'ससार के महान जनरल' की पगड़ी अपने ही हाथों अपने सिर बांध ली थी ।

★ इस पगड़ी में वे कुछ ऐसे फबे कि इंगलैंड-अमरीका के सेना विशेषज्ञ यह मान बैठे कि एशिया में व्यूह रचना का कोई माहिर है, तो वह हमारा प्यारा जनरल अयूब खान ही है ।

★ आँखा-आँखियों और कन-मुहियों में यह भी उन्होंने कह-मान लिया कि व्यूह-रचना की इस बाढ़ में भारत खरगोश की तरह लुढ़क-पुढ़क जायेगा ।

★ इसी व्यूह रचना के बल पर जनरल अयूब ने घुसपैठ से आरम्भ कर दिल्ली के लाल किले में चाय पीने तक पंज हफ्ती प्रोग्राम बनाया ।

★ इस व्यूह रचना की सफलता में न जनरल अयूब को शक था, न चाऊ-एन-लाई को, न प्राइम-मिनिस्टर विल्सन को और न प्रेजीडेंट जॉनसन को ।

★ ६ सितम्बर १९६५ को इस व्यूह रचना की किस्मत में पहली तरेड़ आई, जब भारतीय फौजें तीन मोर्चों से भारत–पाकिस्तान की सीमा रेखा को पार कर पाकिस्तान में घुस गईं—इससे पहले ही वे हाजी पीर दर्रे पर कब्जा कर घंटा–शंख बजा चुकीं थीं ।

★ अब जनरल अयूब की व्यूह रचना, भारत के जनरल चौधरी की व्यूह रचना के सामने थी और दोनों में गोला गोली ही नहीं, कुन्दा कुन्दी हाथापाई और गुत्थमगुत्थी तक बात पहुँच रही थी, पर उसकी असली परख हुई खेमकरन के मोर्चे पर ।

★ खेमकरन, जो भारत की व्यूह रचना के लिए क्षेमकरण और पाक की व्यूह रचना के लिए क्षय करण एक साथ सिद्ध हुआ ।

★ उसी का सरस-सजीव चित्रण श्री रतनलाल जोशी की कलम से, जिन्होंने युद्ध पर ऐसी–इतनी सामग्री हिन्दी पाठक को दी, जैसी–जितनी किसी दूसरे ने नहीं दी ।

★ व्यूह रचना के सर्जक को सैल्यूट, तो व्यूह रचना के प्रदर्शक को नमन ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारी व्यूह-रचना और बहादुरी;

जिन से भारत दुश्मनों के नापाक मनसूबों को रौंद सका !

श्री रतन लाल जोशी

खेमकरन में पाकिस्तान के सपनों का कब्रगाह है। पाकिस्तान के वर्तमान शासकों की उम्मीदें वहाँ दफन हैं। इतिहास ने इस कब्रगाह पर जो शिलालेख लिख रखा है, वह यह है—'यहां एक तानाशाह का वह सपना चिरनिद्रा में सो रहा है जो उसके जीवन का सारा गौरव, यश और सम्मान खा कर भी भूखों मर गया--जो पाकिस्तान की कीर्ति का कफन बन कर यहां मिट्टी में मिल गया है।'

इच्छोगिल नहर के किनारे-किनारे जब भारतीय सेना पाकिस्तानी सेना के दांत खट्टे करती हुई उसकी युद्ध-सामग्री स्वाहा कर रही थी, तो पाकिस्तान के व्यूह-रचना विशेषज्ञों ने अनुमान लगाया कि पाकिस्तान की सेना ने भारतीय सेना के बढ़ाव को रोक दिया है। भारतीय सेना लाहौर पर कब्जा नहीं करना चाहती थी। अतः आगे बढ़ने के बजाय वह लाहौर के आंचल में ही जम कर बैठ गई। पाकिस्तान के सेनानियों ने इसे भारतीय सेना की थकान समझा और उसे घेरने के लिये कसूर से अपना सर्वश्रेष्ठ आर्मर्ड डिवीजन तेजी से खेमकरन की तरफ आगे बढ़ाया। इस डिवीजन पर पाकिस्तान को इतना विश्वास था कि उसके सेनाध्यक्षों ने चार दिन में अमृतसर पहुंचने को ध्रुव सत्य मान लिया था। ब्रिटेन के पत्रों में इस विश्वास की प्रतिध्वनियां प्रकाशित हुईं।

जैसे ही कसूर से पाकिस्तान का यह आर्मर्ड डिवीजन आगे बढ़ा, पाकिस्तान के रेडियो से फील्ड मार्शल अयूब खां ने घोषित किया—"पाकिस्तान ने भारत को बार-बार चेतावनी दी थी कि कश्मीर जिसका है, वह उसके हवाले कर दो, मगर भारतीय नेता न्याय और सौजन्य की भाषा नहीं, दंड की भाषा ही समझते हैं। सदियों से हिन्दू जाति को गुलामी की जो आदत है, उसकी सबसे बड़ी लाचारी यही है कि वह सीधे नहीं मानती।"

दूसरे सवेरे, पाकिस्तान के 'इमरोज' में छप गया कि "भारत को पानीपत की जो प्यास रहती है, वह पूरी होगी। पाकिस्तान एक तरह से इतिहास के तकाजे को ही पूरा कर रहा है, मगर सिखों से हमारी कोई दुश्मनी नहीं। हम उन्हें अपना मित्र मानते हैं और हिन्दू साम्राज्यवाद से उन्हें मुक्त कराने की भरसक कोशिस करना चाहते हैं। हम सिखों के देव स्थानों को कोई नुकसान नहीं पहुँचायेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस गगनचुम्बी आत्मविश्वास के साथ पाकिस्तान ने अपना फर्स्ट आर्मर्ड डिवीजन खेमकरन की तरफ आंधी की तरह अग्रसर किया।

लगता है, पाकिस्तान से भी ज्यादा शायद ब्रिटेन को इस फर्स्ट आर्मर्ड डिवीजन की 'अजेयता' में विश्वास था।

ताजा सूचना के अनुसार प्रथम खेप में ही पाकिस्तान ने इस डिवीजन को १५० टैंकों से लेस करके भारतीय सीमा में उतारा था। वास्तव में, एक तेज बर्छे की तरह पाकिस्तान का यह 'क्रेक' डिवीजन भारतीय सीमा में आ लगा। भारत के पास इस समय टैंकों का ऐसा जमाव नहीं था। कारण कि उसे अपने टैंक काफी फासले से लाने पड़ते थे। अतः आगे बढ़कर सामना करने के बजाय भारतीय सेनाध्यक्षों ने पीछे हटकर अपनी सुविधा के स्थान से लड़ना ही बुद्धिमत्ता समझी।

वास्तव में, इस समय भारतीय सेनाध्यक्षों के सामने दो बड़े गम्भीर तकाजे थे। पहला तकाजा था कि पाकिस्तान के इस 'क्रेक' डिवीजन को आगे बढ़ने से रोका जाए। दूसरा इस डिवीजन को खत्म कर पाकिस्तान के सारे हौसले पस्त कर दिये जायें। मगर जितना सैन्यबल भारतीय कमाण्डरों के पास इस अंचल में था, उससे सम्मुख-युद्ध में ये दोनों उद्देश्य पूरे नहीं हो सकते थे। साथ ही, पाकिस्तान को आक्रमण का लाभ देना और स्वयं केवल सुरक्षा की लड़ाई लड़ना भी भारतीय सेनाध्यक्षों को उपयोगी नहीं जंचा।

अतः यही तय किया गया कि भारतीय सेना पीछे हटे और दूज के चांद का-सा व्यूह बनाकर पाकिस्तान के आगे बढ़ रहे दस्ते को तीन तरफ से दबोचे। निर्णय पर तत्काल अमल हुआ। आगे की टुकड़ियां धीरे-धीरे दायें-बायें फैलने लगीं और उनकी अग्निवर्षा पाकिस्तान के उस 'क्रेक' डिवीजन को द्वंद्व युद्ध में उलझाने लगीं। दर-असल, यह एक आवरण था, जिसकी आड़ में, भारतीय दस्ते जो बीच में थे पीछे हटकर दायें-बायें गोलाकार अपने व्यूह का निर्माण कर रहे थे।

यहां यह कह देना बड़ा आवश्यक है कि आगे की जिन टुकड़ियों ने पाकिस्तान के प्रचण्ड आर्मर्ड डिवीजन को रोकने की जिम्मेदारी ली थी, उन्होंने पाकिस्तानी सेना पर ऐसी जमकर गोलाबारी की कि पाकिस्तान ने उससे निपटने के लिये अपने लड़ाकू हवाई जहाजों का आह्वान किया। इन टुकड़ियों के इस शौर्य पर खुद सेनाध्यक्ष आश्चर्य मुग्ध थे।

लेफ्टिनेंट बिहारीसिंह के जिम्मे वह अग्रिम टुकड़ी थी, जिसके कन्धों पर यह दायित्व था कि वह नाले को पारकर पाकिस्तान की बढ़ती आ रही सेना को रोके। नाले के दोनों किनारे ऊंचे टीलों जैसे थे और चारों तरफ क्वांर कार्तिक की सघन हरियाली छाई हुई थी। लेफ्टिनेंट बिहारीसिंह ने रात के अन्धेरे में नाला पारकर उस पार शत्रु की घात में बैठने की योजना बनायी। उनकी टुकड़ी के दो घायल जवानों ने इस योजना के अमल का विवरण यों दिया है—

"लेफ्टिनेंट साहब का हुक्म मिलते ही हम नाले को पार करने लगे। शत्रु करीब सात मील दूर लगता था, किन्तु उसकी बख्तरबन्द गाड़ियां काफी नजदीक आ गई थीं। हम जंगल में छिप गये। गाड़ियां आईं और नाले को पार कर खेमकरन की तरफ बढ़ने लगीं। जैसे ही वे उस पार पहुँचीं, हमारी पिछली टुकड़ी ने उन्हें चैलेंज किया। दोनों तरफ से गोलीबार शुरू हो गई। शत्रु की इन बख्तरबन्द गाड़ियों को ऐसे सामने की आशंका नहीं थी। उनके गुप्तचरों ने उन्हें सूचना दी थी कि मैदान खाली है। इसका समर्थन उनके जासूसी विमानों ने भी किया था, मगर स्थिति विपरीत साबित हुई। गाड़ियां पीछे लौटने लगीं। लेफ्टिनेंट साहब ने हमें हुक्म दिया कि हम आगे बढ़कर बख्तरबन्द गाड़ियों पर फायर करें, मगर वे दस बीस गाड़ियां नहीं थीं, पूरा एक काफिला था। वे दो भागों में बंट गई। आधी गाड़ियां नाले के उस पार हमारी टुकड़ी की आग का जवाब आग से देती रहीं और बाकी की आधी गाड़ियां नाले को पार करने लगीं।

"यहीं हमारे लेफ्टिनेंट साहब उन पर झपटे। गिनती के सैनिक ही हमारे साथ थे, किन्तु हमने गिन-गिन कर उन गाड़ियों को चकनाचूर किया। दोनों तरफ की फायर के बीच में फंसी इन गाड़ियों के मेजर ने आखिर उचित यही समझा कि हथियार डाल दें।"

पाकिस्तान की बख्तरबन्द टुकड़ी के हथियार डालते ही उसके दूसरे आधे भाग ने भी आत्म-समर्पण कर दिया। मैदान हमारे हाथ रहा, किन्तु यह संघर्ष न तो कोई संघर्ष था और न कोई हमारी योजना का वांछित अंग ही। ये बख्तरबन्द गाड़ियां पाकिस्तानी गुप्तचरों की गलत सूचना से भ्रांत होकर स्वयं ही समाप्त होने के लिये हमारी सेना की तरफ चली आई थीं, किन्तु इससे दो बातों का हमें लाभ हुआ। पहला यह कि हथियार डालने वाले पाकिस्तानियों से हमें पाकिस्तान के 'फर्स्ट आर्मर्ड डिवीजन' के बारे में काफी सूचना मिल गई। दूसरे, पाकिस्तान का यह आर्मर्ड डिवीजन किधर जाने का इरादा रखता है, यह भी हमें ज्ञात हो गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन नवीन सूचनाओं से लाभ उठाते हुये हमारी सेना ने अपनी सारी व्यूह-रचना बदली। चन्द्राकार व्यूह इन्हीं सूचनाओं के आधार पर बनाया गया था।

लेफ्टिनेंट बिहारीसिंह की टुकड़ी की पहली मुठभेड़ पाकिस्तान के फर्स्ट आर्मर्ड डिवीजन से दिन के अढाई बजे के करीब हुई। पाकिस्तान के 'क्रेक' डिवीजन को अपनी 'अजेयता' पर अडिग विश्वास था। भारत विजय का मिशन लेकर वह कसूर से रवाना हुआ था। उसे यह भी ज्ञात था कि सारी दुनिया की नजरें उसके ऊपर टिकी हुई हैं। इसके साथ फील्ड मार्शल ने उसे 'अहले-इस्लाम का अलमबरदार डिवीजन' कहकर प्रोत्साहित किया था और जनरल मूसा का वह आदेश भी उसने शिरोधार्य कर रखा था, जिसमें उन्होंने कहा था—"यह इस्लाम का कारवां है। इस्लाम का कारवां, इतिहास गवाह है, कभी कहीं रुका नहीं है। हिन्दुस्तान का इतिहास इस ज्वालामुखी से परिचित है। बाढ़ पर बाढ़ आई है और हिन्दुस्तान पर छा गई है। शेरों, फरिश्तों को जलन है तुम्हारी खुशनसीबी पर कि तुम्हें कुफ्र को फना करने का ऐसा दुर्लभ मौका मिला है बढ़ो कुचल दो काफिरों को और अमर हो जाओ इस्लाम के इतिहास में।"

खेमकरन के इस युद्ध में जो पाकिस्तानी सिपाही बन्दी बनाये गये हैं, उनके पास कुरान की आयतें लिखी हुई मिलीं, जिन्हें स्वयं पाकिस्तान की सरकार ने आर्ट पेपर पर छपवा कर वितरित किया था। कुछ सैनिकों की कलाइयों पर भी आयतें लिखी हुई थीं। गंडे-ताबीज तो करीब-करीब सबके पास मिले। हमला करते वक्त पाकिस्तान के ये सैनिक धीरे-धीरे इन आयतों को बोलते जाते थे। कुछ सैनिकों की तो मशीनगनों और राइफलों में भी ताबीज बंधे थे। हमारे अफसर कहते हैं कि पाकिस्तानी अफसर भी इस अंध-विश्वास से मुक्त नहीं थे।

पाकिस्तान का 'विख्यात' फर्स्ट आर्मर्ड डिवीजन जब हमारी अग्रिम टुकड़ियों पर झपटा, तो उसे यह ज्ञात नहीं था कि वह भारत की उस सेना से भिड़ा है, जो सदियों की भारतीय शौर्य-परम्परा को अपने रक्त में उतार कर रणक्षेत्र में उतरती है। भारतीय जवानों की गोलाबारी से इस डिवीजन की अग्रिम पंक्ति को छठी का दूध याद आ गया। फौरन हवाई प्रोटेक्शन की मांग हुई और वह तत्काल पूरी की गई।

लेफ्टिनेंट बिहारीसिंह की टुकड़ी ने तीन बार शत्रु की पंक्ति को तोड़ा। एक जवान की जबानी यह शौर्य प्रसंग इस प्रकार है—

"पाकिस्तानियों ने 'या अली' और 'अल्लाहो अकबर' के गगनभेदी घोष के साथ दस-बारह मिनट ऐसी भीषण गोलाबारी की कि चारों तरफ आग ही आग नजर आने लगी, मगर हमारे जवानों का हौसला एक इंच भी कम नहीं हुआ। हमने भी आग का जवाब आग से दिया। हमारे लेफ्टिनेंट साहब खूंखार चीते की तरह यहां वहां जवानों को प्रोत्साहित करते हुये झपट्टे मार रहे थे। ऐसा अचूक निशाना उनका था कि जहां गोला फेंकते वहां मैदान साफ हो जाता था। दोनों तरफ मौत का मुंह खुला हुआ था। लेफ्टिनेंट बिहारीसिंह को अचानक एक गोला लगा, बायीं जांघ पर और वे नीचे गिर पड़े, मगर जमीन पर पड़े-पड़े ही वे बराबर फायर करते रहे और हमसे कहते रहे—'शाबास पट्ठो, मारो, बढ़ने नहीं पाए दुश्मन!' चार-पांच मिनट बाद ही उनको दो गोलियां और लगीं, मगर फिर भी वे होश में थे और बराबर कमान करते रहे। हमने बड़ी कोशिश की कि उन्हें डेरे में ले जाएं, किन्तु वे नहीं माने। उनके सारे शरीर से रक्त के फव्वारे छुट रहे थे जब हमने उन्हें फिर उठाया तो वे बेहोश थे और कह रहे थे—मुझे आगे ले चलो, शाबास जवानों! ...जनगणमन अधिनायक भारत-भाग्य-विधाता—जय...जय हे!'

हमने उन्हें पानी पिलाया, मगर वे आखरी घूंट पीते-पीते स्वर्गवासी हो गए। उनके अन्तिम शब्द थे—'जय... जय...जय हे!' अपने प्यारे अफसर के पैरों को हमने चूमा और उनकी मृत्यु का बदला लेने के लिये हम फिर दुश्मन पर टूट पड़े।"

पाकिस्तानी सेना कसूर से आगे बढ़कर, खेमकरण की बराबरी से होती हुई, 'असल उत्तर' नाम के छोटे-से गांव के पास जा लगी। भारतीय सेना पहले ही पीछे हट गई थी। अतः सिर्फ नाम मात्र का ही सामना पाकिस्तानी सेना के लिए बाकी बच गया था। हां, तीन टुकड़ियां ऐसी जरूर तैनात कर दी गई थीं, जो लड़ते-लड़ते पीछे हटते हुए, पाकिस्तान के आर्मर्ड डिवीजन को 'असल उत्तर' की दिशा में सीधे ले आयें। उद्देश्य यह था कि पाकिस्तान के इस फर्स्ट आर्मर्ड डिवीजन पर भारतीय सेना को आक्रमण करने की पहल मिले और वह ऐसे स्थान पर मिले, जो भारतीय सेना की पसन्द का हो। नहीं तो भारतीय सेना के पीछे हटने का कोई लाभ ही नहीं था। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह जरूरी था कि पाकिस्तान को फुसला कर 'असल उत्तर' के मैदान में खींच लाया जाए।

पाकिस्तानी सेना भारतीय टुकड़ियों का पीछा करती हुई सीधे खेमकरन से चार मील बगल में बसे 'असल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर' तक चली आई। यह पाकिस्तानी सेना की विजय-यात्रा थी। पाकिस्तान के रेडियो से खबरें प्रसारित हो रही थीं कि पाकिस्तान का 'टाइगर डिवीजन' भारतीय फौजों का पीछा दबाता हुआ भारत की सीमा में तेजी से आगे बढ़ रहा है। इतना ही नहीं, रेडियो पाकिस्तान ने यह भी प्रचारित किया कि 'भारतीय सेना घेर कर खत्म कर दी गई है और लड़ाई का फैसला हो चुका है।'

आठ सितम्बर १९६५ की यह बात है। पाकिस्तान में जगह-जगह जल्से हुए और फील्ड मार्शल अयूब खां ने अपने साथियों सहित 'नमाज-ए-शुकराना' पढ़ी। मजारों पर दिये जलाये गये और काफिरों को हमेशा के लिए फना करने के लिए दुआयें मांगी गई, पर जैसे ही पाकिस्तानी सेना 'असल उत्तर' के निकट आई कि हमारे एक अग्रिम दस्ते ने उस पर फायर किया। लड़ाई शुरू हो गई। हमारा आक्रमण इतना तीव्र और मारक था कि पाकिस्तान की आर्मर्ड बटालियन लड़खड़ाने लगी। पहले तो उसे भारतीय आक्रमण की आशंका नहीं थी। दूसरे, भारत की तोपें ऐसी गोलाबारी कर सकती हैं, उसने कभी सोचा ही नहीं था। तीसरे, उसके अफसरों ने पीछे हटती भारतीय टुकड़ियों का पीछा करने के सिवाय और कोई भावी योजना ही नहीं बनाई थी।

'असल उत्तर' में भारतीय जवान पाकिस्तानी टैंकों के लिए तैयार बैठे थे। खंदकों, बंकरों और खेतों में जवानों ने अपने हथियारों को साथ रखा था। ईख के खेतों में टैंकों को जगह-जगह छिपाया गया था। मोर्चे को जितना लम्बा-चौड़ा किया जा सकता था, किया गया था। एक ब्रिगेडियर के शब्दों में व्यूह-रचना बिल्कुल पाकिस्तान के झण्डे पर अंकित हिलाल और सितारे के माडेल पर थी। असली मार करने वाली सेना चन्द्राकार दोनों तरफ काफी दूर तक फैली हुई थी और उसके आगे पाकिस्तान के राष्ट्रीय ध्वज पर अंकित 'हिमालय की गोद में सितारे' की तरह आगे की टुकड़ियां ऐसी लड़ाई लड़ती थीं मानों मुख्य सेना वही हो। यों, भारत के पास पाकिस्तान से टैंक कम थे और जो थे, वे भी पैटन टैंकों की भांति आधुनिक नहीं थे, संख्या में भी भारतीय जवान पाकिस्तानी सिपाहियों की अपेक्षा कम थे।

भारतीय सेना की पहली मुठभेड़ पाकिस्तान की पांचवीं आर्मर्ड ब्रिगेड के साथ हुई। भारत की अग्रिम टुकड़ी ने पाकिस्तान के टैंकों पर ऐसे कस-कस कर निशाने लगाए कि पैटन टैंकों की धज्जियां उड़ने लगीं। अपनी गोलाबारी को शिथिल देख पाकिस्तानी कमांडरों ने हवाई ताकत को भी भारतीय जवानों पर उड़ेला; मगर भारतीय तोपचियों के आगे पांचवीं आर्मर्ड ब्रिगेड ज्यादा नहीं ठहर सकी। भारतीय जवानों ने उसे पीछे ढकेल दिया।

भारतीय गोलाबारी के इस बढ़ते दबाव को रोकने के लिए तब मेजर जनरल नासिर अहमद ने चौथी आर्मर्ड ब्रिगेड को आगे बढ़ाया। दोनों आर्मर्ड ब्रिगेड संयुक्त शक्ति से भारतीय सेना पर झपटी। घमासान अग्निवर्षा होने लगी। चौबीस घण्टे के अन्दर पाकिस्तान की इन दो ब्रिगेडों ने सात भीषण हमले भारतीय सेना पर किये।

मेजर-जनरल नासिर अहमद ने भारतीय सेना को इस प्रकार चुनौती के संघर्ष में उलझा कर ब्रिगेडियर शमीम की कमान में तीसरी रिजर्व्ड रेजिमेंट भारतीय सेना को घेरने की गरज से बायें उत्तर दिशा में भेजी। इस रेजिमेंट को यह जिम्मेदारी सौंपी गई कि वह युद्धरत भारतीय सेना से बचकर पट्टी की तरफ बढ़ जाये और पीछे से भारतीय सेना को दबोचे, किन्तु भारतीय कमांडर काफी सजग और चौकन्ने थे। उन्होंने उधर बढ़ रही पाकिस्तानी रेजिमेंट के मार्ग को, एक नाले का पुल उड़ा कर, अवरुद्ध कर दिया। लाचार, यह तीसरी रेजिमेंट भी पहली दो ब्रिगेडों के साथ मिल गई। भारतीय कमांडरों ने यहां जो निर्णय लिया, वह सौ मन सोने में तौलने लायक निर्णय था। उन्होंने सारी अग्रिम टुकड़ियों को पीछे हटने का हुक्म दिया। टुकड़ियों के पीछे हटते ही पाकिस्तान के आर्मर्ड ब्रिगेड भी तेजी से आगे बढ़े और विजय-गर्व में वे ऐसे मदांध रहे कि सीधे भारतीय टैंकों की फायर-रेंज में आ गए।

ब्रिगेडियर ने कहा कि इस साल पंजाब में ईख की फसल शानदार हुई थी, मगर वह अकेले पंजाब के लिए नहीं थी, सारे भारत के लिए थी। ऊंचे-ऊंचे गन्नों में हमारे टैंक ऐसे छिपे पड़े थे, माना वहां ईख के सिवाय और कुछ नहीं हो।

जैसे पाकिस्तानी टैंक हमारी फायररेंज में आये, हमारे तोपचियों ने एक क्षण भी नष्ट नहीं किया। दायें-बायें और सामने से गोलों की ऐसी वर्षा उन्होंने की कि पाकिस्तान के टैंक पैट्रोल के कनस्तरों की भांति धू-धू कर जलने लगे।

भारत-पाक-संघर्ष का यह दौर, असल में, टैंक-युद्ध ही था। इस क्षेत्र में ध्वस्त और विकलांग पड़े टैंकों के समूह और इस युद्ध का विवरण, दूसरे महायुद्ध के समय अल-अलामीन में मित्र-राष्ट्रों और जर्मनों के ऐतिहासिक टैंक-युद्ध की याद दिला देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमरीका ने पाकिस्तान को पैटन का सब से नया माडल एम. ४८ दे रखा है। इन पैटनों का वजन ८० टन और रफ्तार ३० मील प्रति घण्टा है। इनमें ९० मिली-मीटर की तोप लगी रहती है। अमरीका की फौजें इन्हीं टैंकों से लैस हैं। अतः जब भारतीय गोलंदाजों के कौशल से ये 'अजेय' कहे जाने वाले टैंक मिट्टी के कच्चे घड़ों की भांति टूटे तो यह स्वाभाविक था कि अमरीका चिन्तित हो जाये।

पैटन टैंक की सबसे बड़ी खूबी यह है कि उसमें निशाने के लिए टेलिस्कोप की व्यवस्था है। इस व्यवस्था में निशाना चूकने का कोई सन्देह ही नहीं रहता। प्रेजीडेंट कैनेडी को काफी दूर से ऐसी ही राइफिल से मारा था, जिसमें निशाने की टेलिस्कोपिक व्यवस्था थी. किन्तु असल में. यह टेलिस्कोपिक व्यवस्था ही पाकिस्तान के लिए भारी पड़ गई। पाकिस्तान के टैंक-संचालकों को बिना टेलिस्कोप के निशाना साधने का अभ्यास नहीं था और दिमाग भी उनके इतने तेज नहीं हैं कि टेलिस्कोपिक निशानेबाजी में वे वांछित प्रवीणता हासिल कर सकें। अतः जब तक पैटन का संचालक—गोलंदाज अपनी टेलिस्कोपिक रेंज देखने में व्यस्त रहता था, तब तक भारत के टैंकों से गोले निकल चुके होते थे। इस प्रकार हर दस गोलों में पाकिस्तानी गोलंदाज दो गोले पिछड़ जाता था और सम्मुख युद्ध में दो गोले काफी बड़ा महत्व रखते हैं।

पाकिस्तानियों का दावा था कि हर एक पैटन टैंक तीन सेंच्यूरियनों के बराबर है। यह दावा काफी अंशों में सही भी था, किन्तु उसके साथ यह शर्त भी है कि ये तीन सेंच्यूरियन पाकिस्तान के पैटन एम-४८ की टेलिस्कोपिक रेंज में आ जायें। भारत की सबसे बड़ी हिकमत यही रही कि उसने पाकिस्तानी गोलंदाजों को निशाना नहीं साधने दिया और पहले ही फायर कर दिया।

दरअसल, सवाल जितना सैनिकों के कौशल-शौर्य एवं शक्ति का है. उतना टैंकों का नहीं है। भारतीय जवानों ने अपने मनोबल और ताकत से पाकिस्तान के पैटन टैंकों को नष्ट किया है। पाकिस्तानी सैनिकों का साहस और कौशल भारतीय जवानों के मुकाबले दुर्बल रहा, इसलिए वे मार खा गये।

'असल उत्तर' में पाकिस्तानी टैंक पहले हमारी पंक्तियों पर दायें से आए। यही हमारी योजना थी। पहले दिन ही हमने पाकिस्तान के २१ टैंक नष्ट कर दिए। फिर पाकिस्तान ने बायें से आक्रमण किया, जिसे हमारे जवानों ने बड़ी वीरता से पीछे ढकेल दिया और दुश्मन के २२ टैंक खत्म कर दिये।

भारतीय टैंक डिवीजन की कमान ब्रिगेडियर टी. के. त्यागराज के जिम्मे थी। बिगेडियर त्यागराज ही खेमकरन युद्ध के 'हीरो' माने जाते हैं।

जब दो रोज तक पाकिस्तान के पैटन खूब पिटे, तो फील्डमार्शल अयूब खां ने एयर-मार्शल अशगर खां को रिटायरमैंट से वापस बुलवाया। एयर-मार्शल अशगर खां को रिटायरमेंट से इसलिए वापस बुलाया गया था कि वे हवाई युद्ध की भांति टैंक-युद्ध में भी निष्णात है।

अशगर खां के आते ही पाकिस्तान ने टैंक-युद्ध में अपनी शैली बदली। अभी तक पाकिस्तान के मेजर जनरल नासिर अहमदखां और ब्रिगेडियर शमीम की व्यूहरचना यह थी कि एक साथ ज्यादा-से-ज्यादा टैंकों की सामूहिक शक्ति से भारतीय सेना पर आक्रमण किया जाये। भारत की व्यूह-रचना इसके एकदम विपरीत थी। भारतीय ब्रिगेडियर त्यागराज ने अपने टैंकों को काफी दूर-दूर बिखेर कर रखा था। नतीजा यह हुआ कि भारतीय टैंकों को जहाँ घूम फिर कर गोले दागने की सुविधा ज्यादा थी, वहाँ पाकिस्तान के टैंक एक जगह ही एक दूसरे से बांधे जैसे रहे और इस प्रकार एक झुंड में रहने के कारण उन की हालत उन भेड़ों-जैसी हो गई थी, जिन्हें ढूंढ़-ढूंढ़ कर मारने की तकलीफ नहीं उठानी पड़ती।

पाकिस्तान के मेजर-जनरल नासिर अहमद की दूसरी गलती यह रही कि टैंक युद्ध को उन्होंने भैंसा-दंगल बना दिया, जिसमें दो भैंसे आमने-सामने लड़ते रहें। टैंक-युद्ध में धारावाहिक आक्रमण ही सफलता देता है। भारत की ओर से आगे के आक्रमण को और तीखा करने के लिए पीछे दायें और बायें से भी आक्रमण की लगातार हिलोरें उठती थीं और उस एक जगह खड़े पाकिस्तानी टैंकों के जमघट पर छा जाती थीं।

एयर-मार्शल अशगर खां के आते ही पाकिस्तान के टैंक भी भारतीय टैंकों की तरह दूर-दूर बिखर गए और उन्होंने भी धारावाहिक आक्रमणों का मार्ग अपनाया, किन्तु इस बार फिर प्रमाणित हो गया कि मशीन और व्यूह रचना की अपेक्षा सैनिक के साहस, शौर्य और शक्ति का ही महत्व सर्वोपरि है। एयर-मार्शल अशगर खां की नवीन व्यूहरचना को हमारे जवानों ने कुचल कर रख दिया।

अब्दुल हमीद ऐसा ही जवान था जिसने पाकिस्तान के सारे घमंड को अपनी निशानेबाजी से चूर कर दिया।

(कृपया देखिए पृष्ठ ३६०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव दानव बन रहा है

◇ श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय

लकड़ बग्घा—कुछ सुना भेड़िया भाई !

भेड़िया—वोह क्या भाई जान ?

लकड़ बग्घा—यही कि इंसान जानवर बनते जा रहे हैं ?

भेड़िया—यह तो बहुत अशुभ और आपत्तिजनक सूचना है भाई जान।

लकड़ बग्घा—यही तो, जबसे समाचार सुना है मारे आत्म-ग्लानि के रोम-रोम विकल हो रहा है।

भेड़िया—लेकिन यह बेपर की उड़ाई किस गप्पी ने।

लकड़ बग्घा—सिवाय हज़रते इंसान के ऐसी गप और कौन हांक सकता है।

भेड़िया—हज़रते-इन्सान ने ? कौन-से इन्सान ने ? सुना है इनमें तो मज़हब, ज़ात-पाँत, पेशा, ऊंच-नीच हजारों किस्म के इन्सान होते हैं।

लकड़ बग्घा—हाँ भाई, उन्हीं हजारों में एक लेखक किस्म का इंसान होता है। उसी की यह कारस्तानी है।

भेड़िया—लेखक ! यह किस बला का नाम है ?

लकड़ बग्घा—बला न कह कर इसे दुनिया के लिए बवाले-जान समझिए। साँप के काटे का इलाज है, लेकिन इसके काटे की कोई दवा नहीं।

भेड़िया—क्या लेखक इंसानों में इतना खतरनाक होता है ?

लकड़ बग्घा—हाँ भाई ? यही लेखक अपनी नोके-कलम से समृद्धिशाली राष्ट्रों को श्मशान बना देता है। वही सुख शान्ति के उपासकों को रक्त लोलुप बना देता है। इसने संसार में मानव एवं पशु-वध कराया है कि उनकी हड्डियों को एकत्र किया जाय तो—हिमालय की ऊँचाई भी मांद पड़ जाये।

भेड़िया—ऐसा खौफ़नाक होता है यह लेखक ? तब तो इसकी परछाईं से भी बचना चाहिए !

लकड़बग्घा—मेरे भाई ! जैसे पाँचों उँगलियाँ एक समान नहीं होतीं, उसी प्रकार सभी लेखक भयानक नहीं होते। इनमें हजारों ऐसे भी हुए हैं और मौजूद हैं, जिन्होंने संसार की अनेक यंत्रणाएँ सहकर भी विश्व को सुख-शान्ति का पाठ पढ़ाया है। मानव ही नहीं, संसार के समस्त प्राणियों को सुखी बनाने के प्रयास किये हैं. लेकिन जैसे समुद्र मोतियों एवं अनेक दुर्लभ वस्तुओं का आगार होते हुए भी कुछ जन्तुओं द्वारा विषम बन जाता है, उसी प्रकार कुछ उच्छृंखल उद्दंड लेखक अपने नोके-कलम से काँटे बिछाते रहते हैं। उद्यानों को उजाड़ने, हरे-भरे जंगलों को रेगिस्तान बनाने में सलग्न रहते हैं।

भेड़िया—तो भाई जान ! इस लेखक ने ऐसी क्या बात लिख दी जो आपके दुश्मनों की तबियत इतनी बेचैन हो उठी ?

लगड़बग्घा—अरे भाई, यही कि इंसान जानवर होता जा रहा है !

भेड़िया—यह तो अच्छी बात है भाई जान ! अगर सभी इंसान जानवर हो जायें तो हम जानवरों को जान का खतरा भी न रहे और अपनी संख्या में भी बढ़ोतरी होगी।

लकड़बग्घा—यही तो समझ का फेर है मेरे भाई। इंसान इतनी उन्नति कैसे कर सकता है कि वह जानवर बन सके। इन्सान जब इन्सान का खाना छोड़ सकेगा तभी तो जानवर बन सकेगा। जानवर कितना ही भूखा हो, वह अपनी जात के जानवर को नहीं खाता। सिवाय, मछलियों और सांपों के। सो हम इन्हें जानवर जाति से पृथक समझते हैं किन्तु इंसान तो इंसान का मज़हब, देश, प्रांत जात-पांत, ऊंच-नीच आदि के नाम पर संहार करता आया है। यह कदापि जानवर नहीं बन सकता।

भेड़िया—सुना है, कोई इंसानों में 'डारविन' हुआ है जो कहा करता था कि जानवर ही उन्नति करते-करते इंसान बनते जा रहे हैं।

लकड़बग्घा—बात तो उसने ठीक ही कही थी, परन्तु कहने का ढंग भ्रामक था। वास्तविक घटना यह है कि जो जानवर अपने सजातियों से जूता-पैज़ार रखते थे, या अपने ही सजातियों का भक्षण करने लगे थे, उन कुत्ते, बन्दरों, साँपों, मछलियों को हमारे पूर्वजों ने जाति बहिष्कृत कर दिया था। उन्हीं कुछ बहिष्कृतों एवं असन्तुष्टों में से कुछ ने 'इंसान जाति' नामक पृथक पार्टी बना ली थी। वही असन्तुष्ट गिरोह प्रतिहिंसा पर उतारू हो गया और अपने सजातियों के अतिरिक्त हमारे जानवर समाज के संहार के लिए भी नित नये उपाय सोचने लगा।

भेड़िया—बड़े भाई ! बेअदबी माफ़, हम भी तो कम रक्त लोलुप नहीं हैं।

लकड़बग्घा—मेरे भोले भाई ! हम केवल क्षुधा-निवारण के लिए किसी का प्राण लेते हैं और वह भी सजातीय का नहीं, किन्तु इंसान तो व्यर्थ में संहार के लिए तत्पर रहता है और वह इतना अन्धा है कि अपना पराया उसे कुछ भी नहीं सूझता।

भेड़िया—तो भाई जान आपके कहने का निष्कर्ष यह निकला कि जानवर जब पतनोन्मुखी होता है तब इंसान कहलाता है और इंसान कभी जानवर बनने की क्षमता नहीं पा सकता।

लकड़बग्घा—बेशक।

भेड़िया—तब आजकल इंसान क्या बनता जा रहा है ?

लकड़बग्घा—दानव !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी जिन्दगी को यों ही हँसते-खेलते न्यौछावर करने वाले आज़ादी के दीवाने किस तरह अपने जीवन के प्रति निस्पृह हो जाते हैं— उसी की एक तस्वीर मिलती है उस खत से जो शहीदाने वतन सरदार भगतसिंह ने जेल से अपने पिता सरदार किशनसिंह को उस समय लिखा, जब उन्हें मालूम हुआ कि सींखचों के बाहर वे अपने बेटे के लिए सरकार के सामने किसी प्रकार की सफाई देने की कोशिस कर रहे हैं। पत्र में उन्होंने कहा कि मेरी जिन्दगी इतनी कीमती नहीं है, जितनी आप खयाल करते हैं और जिसे असूलों की कुर्बानी की कीमत पर बचाया जाए ! सरदार भगतसिंह का वह खत उन्हीं के शब्दों में यहाँ प्रस्तुत है—

सींखचे बोल उठे

"मुझे यह जानकर बहुत हैरानी हुई कि आपने स्पेशल ट्रिब्यूनल को मेरी सफाई में एक दरखास्त पेश की है। यह खबर इतनी दुखदायी थी कि मैं उसे खामोशी से बरदाश्त नहीं कर सकता। इस खबर ने मेरा सारा सकूने कल्ब खत्म कर दिया है। मैं यह समझ नहीं सकता कि मौजूदा हालात में और इस मरहले पर आप किस तरह इस किस्म की दरखास्त दे सकते हैं।

आपका बेटा होने के नाते मैं आपके वालेदाना जज़बात और अहसासात का पूरा एहतराम करता हूँ, लेकिन इसके बावजूद मैं समझता हूं कि आपको मेरे साथ मशवरा किए बगैर मेरे बारे में कोई दरखास्त देने का हक न था। आप जानते हैं कि सियासी मैदान में मेरे खयालात आपसे बहुत मुख्तलिफ हैं। मैं आप की रजामन्दी या नारज़ामन्दी का ख्याल किए बगैर हमेशा आज़ादाना काम करता रहा हूं।

मुझे यकीन है कि आपको यह बात याद होगी कि आप इब्तदा से मुझे इस बात का कायल करने की कोशिस करते रहे हैं कि मैं अपना मुकदमा संजीदगी से लड़ूँ और अपनी सफाई बाकायदा पेश करूं, लेकिन आपको यह भी इल्म है कि मैं हमेशा इसकी मुखालफत करता रहा हूं। मैंने कभी अपनी सफाई पेश करने की ख्वाहिश जाहिर नहीं की और न ही मैंने कभी इस बात पर संजीदगी से गौर किया है। यह बात महज़ एक मुबहम-सा नजरिया थी या मेरे पास अपने इस इकदाम के जवाज़ में पेश करने के लिए कोई दलाइल थे। यह एक ऐसी बात है जिस पर हम इस वक्त बहस नहीं कर सकते।

आप जानते हैं कि इस मुकदमें में हम एक वाजै पालीसी पर चल रहे हैं। मेरा हर इकदाम उस पालीसी, मेरे असूलों और हमारे प्रोग्राम के साथ मुताबकत खाता हुआ होना चाहिए। आज हालात बिल्कुल मुखतलिफ हैं, लेकिन अगर सूरते हाल इसके सिवाय कुछ और होती तो भी मैं आखरी आदमी होता जो सफाई पेश करता। इस सारे मुकदमे में मेरे सामने एक ही ख्याल था और वह यह कि हमारे खिलाफ जो संगीन इलजामात आयद किए गए हैं, उनके बावजूद हम उसकी तरफ से मुकम्मल तौर पर अदम तवज्जही बरतें। मेरा यह नजरिया रहा है कि तमाम सिपाही वर्करों को ऐसी हालत में अदम तवज्जही बरतनी चाहिए और उनको जो सख्त से सख्त सजा दी जाए वह उन्हें खन्दा पेशानी से बरदाश्त करनी चाहिए। इस सारे मुकदमें के दौरान हमारी पालीसी इस असूल के मुताबिक रही है। हम ऐसा करने में कामयाब हुए हैं या नहीं, यह फैसला करना मेरा काम नहीं। हम खुदगर्जी को छोड़कर अपना काम करते हैं।

वायसराय ने लाहौर साजिश केस आर्डीनेंस जारी करते हुए उसके साथ जो बयान जारी किया था, उसमें उसने कहा था कि इस साजिश के मुलजिम अमनों अमान और कानून को खत्म करने की कोशिस कर रहे हैं। इससे जो सूरते हाल पैदा हुई उसने हमें मौका दिया कि हम अवाम के सामने यह बात पेश करें कि हम अमनों अमान और कानून खत्म करने की कोशिस कर रहे थे या हमारे मुखालिफ ? इस बात पर इख्तलाफात हो सकते हैं। शायद आप भी उन लोगों में से एक हैं जो इस बात से इख्तलाफ रखते हैं, मगर इसका यह मतलब नहीं कि आप मेरी तरफ से ऐसे इकदामात मेरे साथ मशवरा किए बगैर ही अख्तियार करें। मेरी जिन्दगी इतनी कीमती नहीं है जितनी आप खयाल करते हैं। कम से कम मेरे लिए यह इतनी कीमती नहीं कि इसे असूलों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुर्बानी करने की कीमत पर बचाया जाए। मेरे और साथी भी हैं जिनके मुकदमें इतने ही संगीन हैं जितना कि यह मेरा मुकदमा। हमने एक मुश्तरका पालीसी इख्तियार की है और उस वक्त तक हम शाना बशाना खड़े रहेंगे। हम आखरी वक्त तक शाना बशाना खड़े रहेंगे। हमें इस बात की परवाह नहीं कि हमें इन-फरादी तौर पर इस बात की कितनी कीमत अदा करनी पड़ती है!

पिता जी, मैं बहुत तशवीश महसूस कर रहा हूँ। मुझे डर है कि कहीं आप पर नुक्ता चीनी करते हुए या इससे भी बढ़कर आप के इस कदम की मुजम्मत करते हुए मैं तहजीब के दायरे से बाहर न निकल जाऊँ और मेरे अलफाज ज्यादा सख्त न हो जायें, मगर मैं साफ-साफ अलफाज में अपनी बात कहूंगा—अगर कोई और शख्स मेरे साथ इस किस्म का सलूक करता तो मैं उसे गद्दारी से कम ख्याल न करता, मगर आपकी हालत में बस इतना ही कहूंगा कि यह एक कमजोरी थी बदतरीन किस्म की कमजोरी।

यह एक ऐसा वक्त था जब हम सब का इम्तहान हो रहा था और पिता जी, मैं यह कहना चाहता हूँ कि आप इस इम्तहान में नाकाम रहे हैं। मैं जानता हूँ कि आप इतने ही अच्छे मौहिब्बेवतन रहे जितना कोई शख्स हो सकता है। मैं जानता हूं आप ने अपनी सारी जिन्दगी हिन्दुस्तान की आजादी के लिए वक्फ कर दी है मगर इस अहम मरहले पर आपने ऐसी कमजोरी क्यों दिखाई? मैं यह बात समझ नहीं पाया।

आखिर में मैं आप को अपने दीगर दोस्तों और मेरे मुकदमे में दिलचस्पी रखने वाले आम लोगों को यह बता देना चाहता हूं कि मैं आपके इस इकदाम को पसन्दगी की निगाह से नहीं देखता। मैं आज भी हरगिज-हरगिज सफाई पेश करने के हक में नहीं हूँ। अगर अदालत हमारे चन्द साथियों की तरफ से सफाई वगैरह के बारे में पेश की गई दरख्वास्त मंजूर कर लेती तो भी मैं कोई सफाई पेश न करता। भूख हड़ताल के दिनों में मैंने ट्रिब्यूनल को जो दरख्वास्त दी थी और उन दिनों मैंने जो इन्टरव्यू दिया उसके गलत माइने लिये गये और अखबारों में यह शाया कर दिया गया कि मैं अपनी सफाई पेश करना चाहता हूँ, हालांकि मैं किसी भी मौके पर सफाई पेश करने के लिये रजामन्द नहीं था। आज भी मेरे ख्यालात वही हैं जो उस वक्त थे। ब्रुस्टल जेल में कैद मेरे साथी इस बात को मेरी तरफ से गद्दारी और धोखा तसव्वुर कर रहे होंगे। मुझे उनके सामने अपनी पोजीशन साफ करने का भी मौका नहीं मिलेगा।

मैं चाहता हूं कि इस सिलसिले में जो पेचीदगियां पैदा हो गई हैं उनके बारे में लोगों को हकीकत का इल्म हो जाये। इसलिए मैं आपसे दरख्वास्त करता हूँ कि आप जल्दी यह चिट्ठी शाया करदें।"

हमारी व्यूह-रचना और बहादुरी.....

[पृष्ठ ३५७ का शेष]

वे अपनी जीप में रिकायललेस गन लगाये अपने जवानों को प्रोत्साहित करते हुए आंधी की भांति पाकिस्तान के टैंकों पर झपट रहे थे। इसी बीच उन्होंने देखा कि पाकिस्तान का एक टैंक उनका पीछा दबा रहा है। वे चौकन्ने हो गये और जैसे ही वह पैटन टैंक उनकी रेंज में आया उन्होंने एक ही गोली से उसे स्वाहा कर दिया। मगर पलक झपकते ही दूसरा पैटन उन पर लपका। अब्दुल हमीद ने हाथ ऊपर नहीं उठाये और एक गोली में उसे जलती भट्टी बना दिया। अपने साथियों की यह दुर्गति देख, दूर से दो टैंक और हमीद की ओर बढ़े। हमीद ने एक को तो ठप्प कर दिया, किन्तु दूसरे का एक गोला सीधा उन पर फूटा और वे वीरगति को प्राप्त हो गये। अंतिम सांस लेते-लेते तक अब्दुल हमीद अपने जवानों को आर्डर करते रहे। उनकी अंतिम आज्ञा थी—'मारो, बढ़ो.....बढ़ो!'

लांस-नायक रतिराम भी इसी युद्ध में शहीद हुए। लांस-नायक को एक नाले के पार शत्रु को रोकने का काम सौंपा गया था। पाकिस्तान के क्रेक डिवीजन की अग्नि-वर्षा सावन की झड़ी के समान आगे बढ़ती आती थी, लांस-नायक रतीराम के सामने आते ही उसे उसी तेजी से पीछे लौटना पड़ता था। रतीराम जहाँ अड़े बैठे थे, वहीं शहीद हो गये, मगर उन्होंने जीते-जी दुश्मन को एक इंच भी आगे नहीं बढ़ने दिया।

मेजर जे० सी० पाँडे भी इन्हीं हुतात्माओं की श्रेणी को अलंकृत करते हैं। वे मद्रास रेजिमेंट में थे। छोटी-सी उम्र में ही उनके भीतर सैन्य-नेतृत्व और साहसी रणकौशल ऐसी आभा में चमका कि स्वयं उनके अफसर उनकी प्रतिभा पर चकित थे।

जवानों के इसी शौर्य ने खेमकरन का दुर्धर्ष युद्ध जीता है। खेमकरन में भारत की विजय समस्त संसार में समादृत हुई है, राष्ट्र को उसने तन कर खड़े होने की अदम्य शक्ति दी है और संसार को एक नवीन दर्शन कि भारत अपनी शौर्य-परम्परा में पूर्ववत महान है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : आरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक

धांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल

फोर्ट, बम्बई – १

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

शिलाओं, पेड़ों की छाल, जानवरों की खाल अथवा धातुओं के टुकड़ों की लिखावटें सभ्यता के उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

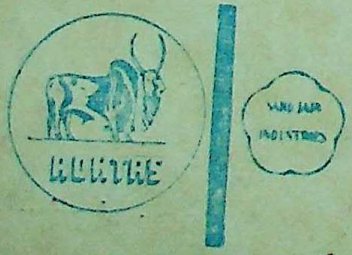

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमियानगर (बिहार)

मुद्रक— [illegible] द्वारा [illegible] में मुद्रित—प्रकाशित
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवजीवन

धार्मिक, सामाजिक, नैतिक और राजनैतिक
राष्ट्रीय चेतना का प्रेरक मनोरंजक मासिक

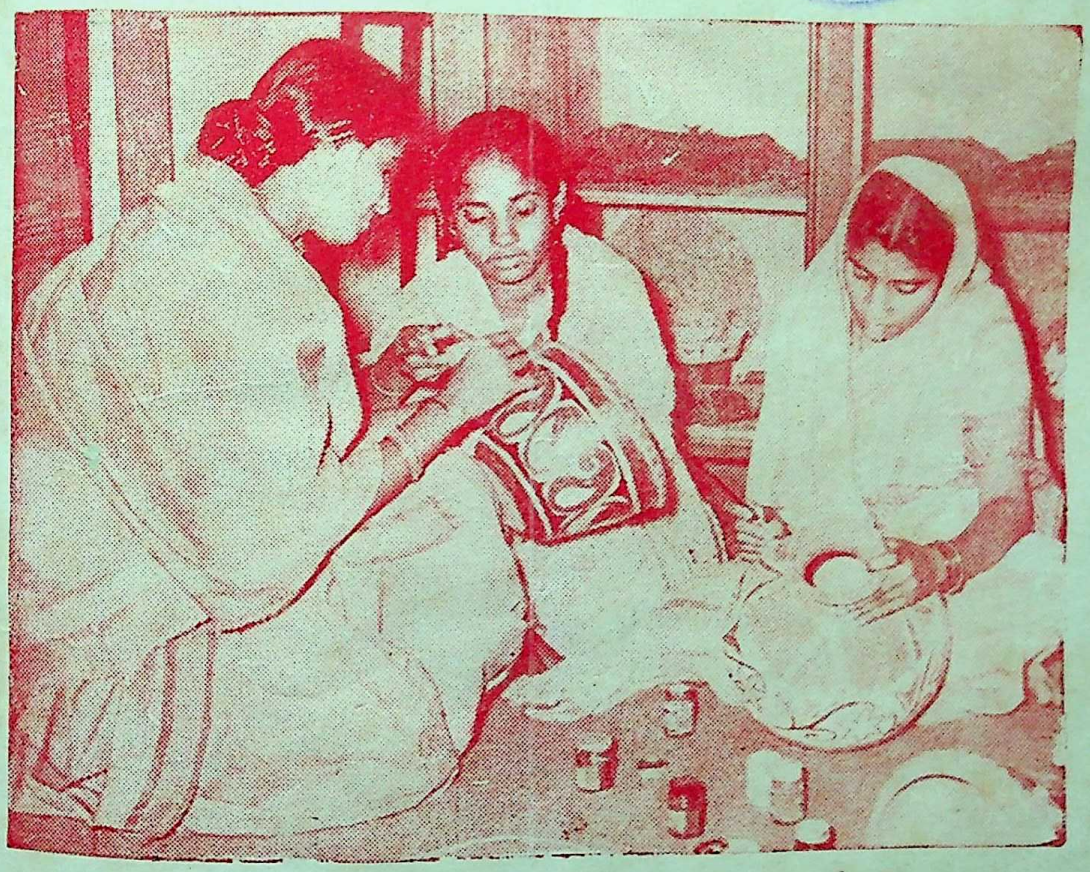

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज़ के एक छोटे पुर्ज़े पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी।
अब यह पुर्ज़ा एक कीमती संस्मरण है।

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्ज़ा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज़ के बिना न
शास्त्र मिलते न साहित्य।
कागज़ हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन राम् ने क्या कुछ कहा,
कि श्याम् भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
राम् और श्याम् दो सगे भाई,
राम् स्वभाव का कड़वा,
श्याम् शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० काहली

जिसकी लाखों प्रतियाँ बिक चुकी हैं—

विद्यार्थियों, राजनैतिक व्यक्तियों, सरकारी कर्मचारियों, एवं
सैनिकों तथा प्रत्येक भारतीय के लिए आज की पाठ्य-पुस्तक

'जवाहरलाल नेहरू के अन्तिम चरण'

(सैण्ट्रल लायब्रेरी कमेटी, पंजाब द्वारा स्वीकृत)
पत्र सं० पी. आर. डी. लायब्रेरी-६५/५०८३५ दिनांक २ दिसम्बर १९६५

लेखक—
अयोध्याप्रसाद दीक्षित, आई. ए. एस.

मूल्य—
तीन रुपया मात्र

प्रकाशक—रतन चन्द धीर

सरस्वती प्रकाशन, देहरादून :: उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साकेत साहित्य सदन

प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

मुख्य केन्द्र—६२, हलवासिया मार्केट, हजरतगंज, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

हमारा सदन :

१. पाठ्य पुस्तकें—बेसिक, मान्टेसरी, जूनियर हाई स्कूल, कालेज एवं डिगरी कक्षाओं के कार्स तक।

२. उपन्यास, कहानी एव नाटक—उपन्यास, नाटक, कहानी, संस्मरण, रेखाचित्र, रेडियो नाटक, हास्य रस प्रधान साहित्य तथा फीचर आदि।

३. साहित्यिक पुस्तकें—खण्ड काव्य, महा काव्य, समालोचना, हिन्दी अंग्रेजी कोष एवं अनुसन्धान सम्बन्धी ग्रन्थ।

४. बाल साहित्य—बालोपयोगी अनुपम पुस्तकें।

५. विकास साहित्य—विकास आयुक्त द्वारा स्वीकृत साहित्य विशेषतः (कृषि एवं पशुपालन तथा सहकारी योजना साहित्य)।

का

एक वृहत् भण्डार है।

कृपया हमारे सदन में पधारिए अथवा पत्र द्वारा आदेश भेजिए।

व्यवस्थापक—साकेत साहित्य सदन, लखनऊ उ. प्र.

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–
उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है !

★

कोशिश कीजिये–

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए !

खड़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत

एवं

भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस : चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—३१६, ३६४, १६०

प्रबन्धक
सेठ कुलदीप चंद बिंदल
तार—'टैक्सटाइक्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दुस्तान

हिन्दुस्तान को अपने कारखानों में काम करने वालों पर गर्व है। वे दिन रात देश के विकास और सुरक्षा के लिए जरूरी सामान तैयार कर रहे हैं। वे समझते हैं कि लड़ाई भले ही बन्द हो गयी हो, हमारी आज़ादी को अब भी खतरा हो सकता है। हमारे कारखानों के कर्मचारी देश की सेवा में जुटे हुए हैं। सोचिये! आप देश के लिए क्या कर रहे हैं?

एक महान देश हमारा
एक महान राष्ट्र

डीए ६५/एक८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज़रूरी जानकारी

- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे है। विशेषांक का मूल्य पृथक, जो ग्राहकों को वार्षिक मूल्य में ही मिलता है।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और अपनी प्रत्येक रचना पर अन्त में अपना पूरा नाम-पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएँ स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएँ और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह—मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह प्यार-मान दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें। ३ महीने के भीतर आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाए, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या लिखने की आवश्यक प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीजों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक

'नया जीवन' • सहारनपुर • उ०प्र०

नया जीवन

विचारों का विश्वविद्यालय

वार्षिक—१६४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत वार्षिक

•

कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

निदेशक

अखिलेश

सम्पादक-संचालक

•

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का क़ानून समय चैन से काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैख़ाना हर समय खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और नव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएँ!

•

दिसम्बर १९६५

संचालक

विकास लिमिटेड

सहारनपुर • उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अता-पता

विद्यार्थियों के प्रति — श्री देवेन्द्र दीपक, राजकीय डिग्री कालेज, जगदलपुर म० प्र० — ३६३

यह सत्य न भूलेगा यह मन। — कुमारी सुभाषा मिश्र, ३, मीराबाई मार्ग, लखनऊ — ३६४

एक सड़क, एक शाम, एक दर्शक; राष्ट्रीय जीवन की एक उत्तम प्रदर्शिनी ! — कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' — ३६५

श्रीमती उर्मिला शास्त्री; जिनके ज्वलंत त्याग की कहानी ही शेष है। — श्री रामशरण विद्यार्थी, आनन्द मठ, मेरठ सदर — ३७३

लोकतान्त्रिक नेतृत्व का आधार — श्री जगजीवन राम, ७, रायसीना रोड, नई देहली — ३७७

पूर्वजों के आदर्श ही नई पीढ़ी के निर्माता। — युग सन्त की विनोबा भावे — ३८०

बेबात की बात, पर बात में बात। — प्राध्यापक श्री कृष्ण चन्द्र, एस० डी० कालेज, मुजफ्फरनगर — ३८२

क्या वे दिन हवा हुए, जब अतिथि के मिल जाने को अहोभाग्य, और न मिलने को दुर्भाग्य माना जाता था ? — श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय, डालमियानगर (बिहार) — ३८५

चार पतीले; बारह सब्जी — श्री इन्द्र 'वारिज', जैड-३, मॉडल टाउन, देहली ९ — ३८९

कल्पना एवं यथार्थ का कुशल शिल्पी : खलील जिब्रान — श्री अशोक अग्रवाल, रेवती कुंज, रेलवे रोड, हापुड़ (मेरठ) — ३९०

मुक्तक — श्री शशिकर, सीताराम श्यामनारायण पथ, चक्रधरपुर (बिहार) — ३९१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्यार्थियों के प्रति

डॉ. लीलाधर 'शिष्य'

इधर क्यों खड़े हो उदास
क्यों मलीन हो गया यह चेहरा
अंधकार में
भटकन में
डूबे ही कंठ कंठ
लो, मैं यह तुम्हारे हेतु
सेतु बना हूँ—
मेरे सीने पर पांव रखकर
निर्भीक और निर्द्वंद्व होकर
उतर जाना तुम पार
क्योंकि, तुम्हें खोलना है
ज्योति का यह द्वार।
और यह लो, पसारो हाथ
तुम्हें देता हूँ कुंजी
जिसे पूँजी समझ मैंने सहेजा है,
मैंने सहेजा है।
मेरी कठोरता पर कभी कभी तुम गुर्राते हो
मन ही मन कुछ कह सुन जाते हो,
लेकिन मैं कठोर हूं
यह मेरी एक विवशता है—
मेरी कठोरता सीपी की कठोरता है,
जो कुछ भी सहना है मुझको ही सहना है
तुम्हें तो बस मोती-सा पलना है।
मैं जानता हूं, अनुमानता हूं
मेरी उक्तियां, झिड़कियां
तनी-तनी भृकुटियां
कभी-कभी तुम्हें शूल-सी लगी हैं
लेकिन मुझे शूल तो बनना ही था,
क्योंकि मेरी रक्षा-परिधि में
तुम्हें फूल जो बनना ही था।
लेकिन जब कभी तुम
मौलिकता की साँस हिय में भरकर
उठाकर शीश आते
किन्तु श्रद्धा से डरते-डरते
किसी छंद के नए अर्थ बतलाते
तब मेरा हृदय खुशी से गोल हो जाता
और मैं अपने में बड़ा बेमोल हो जाता।
मैं नींव बन नीचे रहूंगा
लेकिन तुम सीढ़ियां चढ़ना
हर दिवस बढ़ना
हर रात बढ़ना
आसमान छूना

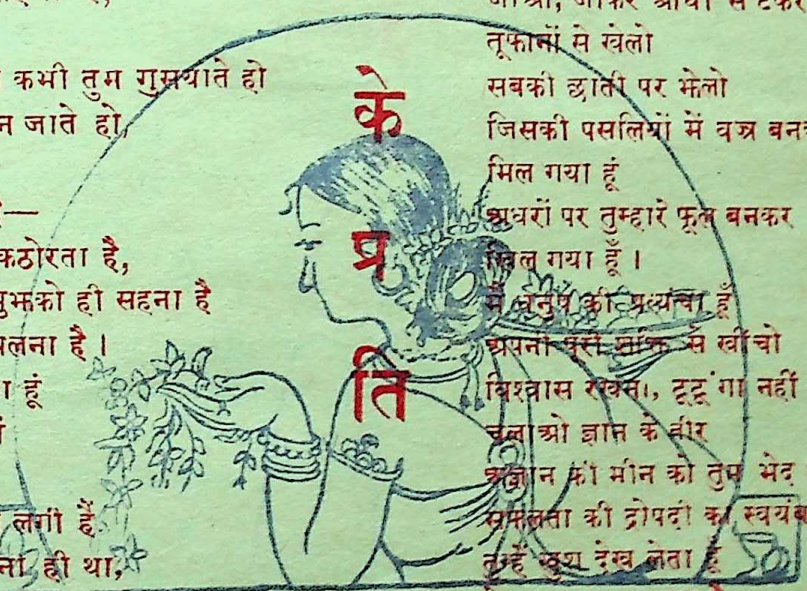

★

तुम गर रुकोगे तो
नींव में गड़ी गड़ी मेरी अस्थियों में दर्द होगा।
यह दुनियां एक गहरा कुआं है
लो, मैं रज्जू बन लटका हूं—
निश्चिंत होकर तुम
अपने-अपने पात्र भर लो
अपनी फुल बगिया का सिंचन करलो।
मेरी आत्मा के अंशज हो तुम
मेरी आत्मा के वंशज हो तुम
मेरा अर्जन हो तुम
मेरी कविता हो तुम
मेरा सर्जन हो तुम।
रक्षा कवच की भांति
मेरा आशीष तुम्हारे साथ,
जाओ, जाकर आंधी से टकराओ
तूफानों से खेलो
सबकी छाती पर झेलो
जिसकी पसलियों में वज्र बनकर
मिल गया हूं
अधरों पर तुम्हारे फूल बनकर
खिल गया हूँ।
मैं धनुष की प्रत्यंचा हूँ
अपनी पूरी शक्ति से खींचो
विश्वास रखना, टूटूंगा नहीं!
चलाओ ज्ञान के तीर
अज्ञान की मीन को तुम भेद डालो
समस्या की द्रोपदी का स्वयंवर रचेगा।
तुम्हें जब देख लेता हूं
मेरा मन झूम उठता है,
तुम्हें ग़मगीन जब देखूं
मेरा मन सूख जाता है।
मैं साधना हूँ,
तुम सिद्धि बन जाना,
मैं नयन हूं,
तुम दृष्टि बन जाना,
विजय का स्तम्भ हूँ मैं,
तुम विजय का केतु बन जाना।
हथेली पर विजय कर 'आज' रख लेना,
मानस-पिता हूं,
मेरी लाज रख लेना
मेरी लाज रख लेना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह सत्य न भूलेगा यह मन

कुमारी सुभाषा मिश्र

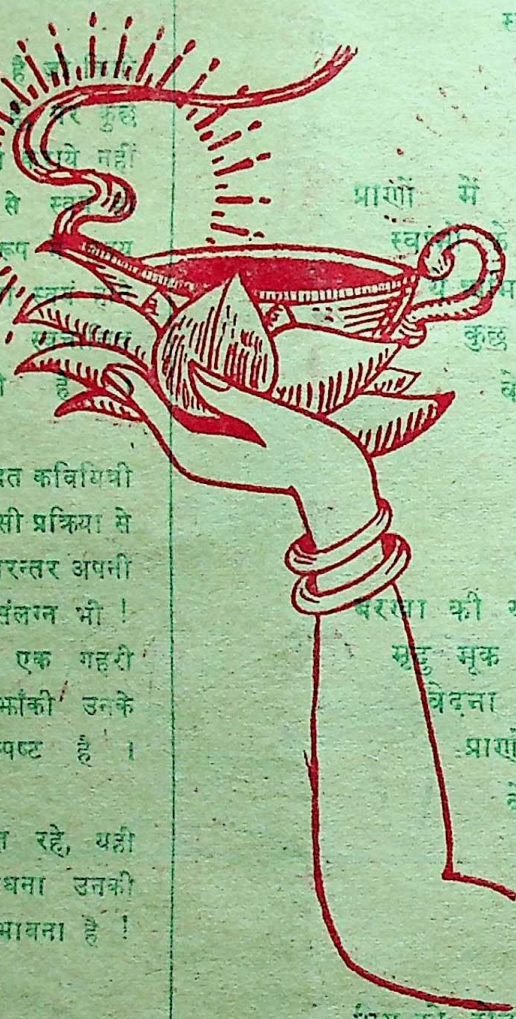

कुछ कार्य ऐसे होते हैं [illegible] से करा लिए जाते [illegible] कुछ ऐसे भी होते हैं [illegible] नहीं जाते, सहज [illegible] से [illegible] जाते हैं। काव्य रूप [illegible] के भावों का उमड़ [illegible] वाली जीवन की [illegible] प्रक्रिया ही तो है।

हिन्दी जगत की नवोदित कवयित्री कु० सुभाषा मिश्र इसी प्रक्रिया से प्रभावित हैं और निरन्तर अपनी काव्य-साधना में संलग्न भी। उनके व्यक्तित्व में एक गहरी दृष्टि है, जिसकी झाँकी उनके काव्य में भी स्पष्ट है।

उनकी साधना सतत रहे, यही कामना है और साधना उनकी सिद्धि बने, यही भावना है!

झिर झिर के मधु भरे शब्द,
प्रेरणा घोलते प्राणों में,
स्पन्दित हो तिर-तिर जाते हैं,
प्रणयी के आशान्वित मन में॥

इन अलस उनींदी पलकों में,
स्वप्नों के तार-तार उलझे।
इन मुक्ता रजत कणों से मिल,
जो बिखर-बिखर से हैं उठते।

प्राणों में है आकुलता-सी,
स्वप्नों के जाल अभी मन पर,
[illegible] सत्य के भ्रम से हैं,
कुछ भूल गये कुछ अधभूले॥

वे दाह प्रबल, वे तृष्णाएं,
जो तृषा बढ़ाने आयी थीं,
चाहतीं संजोना वे घड़ियां,
जो मुझको छलने आई थीं॥

बरखा की यह मादक फुहार,
मृदु मृक पास से सहलाती,
वेदना व्यथा के बन्धन से,
प्राणों को मुक्ति दिला जाती॥

वे दर्दीले दिन, घन छाहें,
आत्मा में घुलती जाती-सी,
शीतल बयार मनुहारों से,
बोझिल मन को दुलराती-सी॥

प्रिय को होना न कभी अपना,
अनचाहा ही वरदान बने,
इस क्रूर नियति के हाथों में,
मानव मन बस उपहास बने॥

मरुथल के सपनों में डूबे,
मेरे प्राणों के यह सावन,
यह सत्य न भूलेगा यह मन,
अब और न भटकेगा यह मन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

एक सड़क, एक शाम, एक दर्शक; राष्ट्रीय जीवन की एक उत्तम प्रदर्शिनी !

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

(१)

मसूरी की माल रोड पर एक शाम, जैसे एक प्रदर्शिनी। मसूरी की माल रोड पर हर शाम, जैसे एक प्रदर्शिनी।

चतुर दुकानदार अपने प्रदर्शन कक्ष —शो-रूम— को रोज बदलता रहता है, जिस से ग्राहक आकर्षित हों और जब भी वे आएं, पुरानी हो कर भी दुकान उन्हें नई दिखाई दे—नूतनता के प्रति मन का आकर्षण सहज है।

तो मसूरी की माल रोड पर एक शाम, जैसे एक प्रदर्शिनी। मसूरी की माल रोड पर हर शाम, जैसे एक प्रदर्शिनी।

हां, प्रदर्शिनी, जो अपनी रूप-सज्जा बदलती रहती है—मई-जून में एक रूप, जुलाई-अगस्त-सितम्बर में दूसरा रूप, अक्तूबर-नवम्बर-दिसम्बर में तीसरा रूप, जनवरी-फरवरी में चौथा रूप, मार्च-अप्रैल में पांचवा रूप और मई-जून में फिर वही रूप—यों नित-नवेली है अलबेली मसूरी की एक शाम, जैसे एक प्रदर्शिनी।

मई-जून में मेले-जैसी रेलपेल, जुलाई-अगस्त-सितम्बर में वर्षा की झड़ियों में भीगी, जैसे सद्यस्नाता एकाकिनी रूपसी, अक्तूबर-नवम्बर-दिसम्बर में शान्त, सौम्य, सुसज्जिता वधु-सी जनवरी-फरवरी में हिमोज्ज्वला महारानी और मार्च-अप्रैल में नव-यौवन की ऊष्मा से पुलकिता—यों नित-नूतन मसूरी की एक शाम !

यह है मई, १९६५ की एक शाम। कोई डिपो और तोप टिब्बे की ऊंचाईयों पर ठहरा है या हैपीवेली और कैमिलसबैक रोड की तराइयों में और या फिर कहीं गहराइयों में, शाम होते ही पक्षियों की तरह उतर कर या बिल-वासियों की तरह उभर कर सब माल रोड पर आ जाते हैं और पिक्चर पैलेस से लाइब्रेरी तक की मील-सवा मील लम्बी सड़क पर घूमने लगते हैं।

मैं भी उस सड़क पर घूम रहा हूं। चारों ओर अनजाने-अनपहचाने चेहरे हैं, पर बीच-बीच में जाने-पहचाने भी मिल जाते हैं और पता चल जाता है कि कौन-कौन परिचित इस वर्ष आए हैं और कहां ठहरे हैं ? तो शाम की यह प्रदर्शिनी परिचय गोष्ठी भी है और सुहावनी सैर भी।

हां, सुहावनी सैर और लुभावनी सैर भी। लुभावनी इस अर्थ में कि यहां घूमता हर चेहरा चिकना है। मैं देख रहा हूं उन चेहरों को और सोच रहा हूं कि यदि इस बात पर सर्वेक्षण किया जाए कि यहां आने से पहले किसी नारी ने कम-से-कम कितनी देर दर्पण-व्यायाम किया है, तो सम्भवतः पचीस मिनट का आंकड़ा तैयार हो—यों अपवाद तो सवा घंटे यानी पचहत्तर मिनट के भी होंगे। तभी तो जूड़ों, लिपस्टिकों, काजलों, पाउडरों, ब्लाउजकटों और साड़ी-परिधानों की प्रदर्शिनी है मसूरी के माल रोड की शाम।

शृंगार-सज्जा और नारी-जैसे पर्यायवाचक हैं—एक को दूसरे से अलग करना सम्भव नहीं। शृंगार-साधना जैसे नारी की विशेष योग्यता हो गई है, पर क्यों ? मन में चिन्तन की चांदनी छिटक आई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है—नारी में श्रृंगार की भावना क्यों है ? मैं घूम रहा हूँ, मुझ से ज्यादा घूम रहा है मेरा मन और मैं तो अभी मसूरी की सड़क पर ही हूँ, पर वह पहुंच गया है समाज-व्यवस्था के आदिकाल में। समाज अभी नहीं बना, परिवार भी नहीं बना; नर-नारी जंगल में उन्मुक्त। देह की मांग नर को नारी के निकट लाती है। मांग की पूर्ति पर भी नर उन्मुक्त है, पर नारी बंधनयुक्त है—तब उसका मातृत्व; संतान उसकी गोद में है। कृषि का अभी आविष्कार नहीं हुआ। फल, कन्द-मूल और मांस ही भोजन। भूखी नारी गोद में बालक लिए एक फल-वृक्ष के नीचे। बालक को पत्तों की शैया पर सुला, वह मीठे फल तोड़ने वृक्ष पर चढ़ती है और फल तोड़ने-खाने लगती है। तभी बालक की चीख कानों में जाती है। वह नीचे झांकती है, देखती है, भेड़िया उस के बालक को पंजों से उथल-पुथल रहा है। वह लुढ़कती-पुढ़कती-सी नीचे आती है और पाती है मृत, रक्त-लथपथ, अधखाया शव। वह तड़फती है, बिलखती है, पर कर कुछ नहीं पाती।

समय बीत जाता है। फिर एक नर-देह की मांग से अभिभूत हो, उसके पास आता है। मांग की पूर्ति का परिणाम नारी जानती है और चाहती है कि यह नर सदा उसके ही पास रहे, उसकी संतान का संरक्षण करे। नारी नर के भोजन-निवास का प्रबंध अपने सिर लेती है और निश्चिन्त हो जाती है। इस निश्चिन्तता में एक दिन चिन्ता की चिनगारी आ बैठती है कि वह देखती है कि नर, जो अब उसकी दृष्टि में उसका अपना है, एक दूसरी नारी के साथ प्रणय-क्रीड़ा में अनुरक्त है। वह उस नई नारी से अपने को श्रेष्ठ-सुन्दर सिद्ध करना चाहती है और भोजन की व्यवस्था कर जंगल से लौटते समय वह अपने बालों में फूल लगा आती है कि नर उसी से आकर्षित हो, उसी में अनुरक्त रहे। मैं सोच रहा हूँ, स्वयं अपने से पूछ रहा हूं—क्या नारी में श्रृंगार की भावना और ईर्ष्या की वृत्ति उसी जंगली जीवन का संस्कार नहीं है ? प्रश्न की गूंज अभी हल्की नहीं होती कि जीवन के एक अत्यन्त सूक्ष्म बिन्दु पर मेरा ध्यान जा टिकता है—नर-नारी का सहवास प्रकृति के द्वारा एक विशेष समय के लिए नियत था; क्योंकि वह संतानोत्पत्ति का निमित्त है पर सम्भवतः उस ईर्ष्या से उद्वेलित हो नारी ने पहली बार प्रकृति के उस नियम को लांघा होगा और सहवास को संतानोत्पत्ति के निमित्त की जगह नर के मनोरंजन का निमित्त बनाया होगा, जिससे वह नर को निरन्तर उससे ही प्राप्त होता रहे और देह की मांग उसके नर को दूसरी नारी के निकट जाने के लिए उद्वेलित न करे।

विचार का बिन्दु और भी सूक्ष्म हो चला—उसका गर्भ उसकी सफलता में बाधक हुआ होगा और तब आगे चलकर उसने एक और नारी का अपने साथ निवास और सहवास एक समझौते के रूप में स्वीकार कर लिया होगा, जो और आगे चलकर बहुपत्नी प्रथा का कारण बना होगा। चिन्तन भाव-विभोर हो उठा, इस विचार से कि नारी ने अपनी संतान की रक्षा के लिए कितने प्रयत्न किये हैं, कितना सहा है।

चिन्तन का चक्र घूम कर अपनी जगह टिका, तो नयन जागे। मैं मसूरी की माल रोड पर घूम रहा हूँ और मेरे आसपास हैं सुसज्जिता सुअलकृता नारियों के अनेक चेहरे, नर-चेहरों के साथ। नयनों के साथ बुद्धि सहयोग करने लगती है, देखने की क्रिया में विचार का भी समावेश हो जाता है कि वर्गीकरण कर सके—

सामने ही है एक रीछ-नर। रीछ-नर ? हां, है तो नर, पर नजर पड़ते ही रीछ का बोध होता है अंगों का बेडौल विन्यास देखकर। उसके साथ है एक राजहंसिनी ? राजहंसिनी ? हां, है तो नारी ही, पर नजर पड़ते ही राजहंसिनी का बोध होता है अंगों का सुडौल विन्यास देख कर।

जरा चले कि सामने ही है एक सींकिया सिंह। सींकिया सिंह ? हां, है तो नर, पर नजर पड़ते ही बोध होता है सींकिया पहलवान का कि कहीं मांस नहीं और बस हड्डियों के ढांचे पर खाल का बुर्का-सा चढ़ा। उसके साथ है एक हस्तिनी। हस्तिनी ? हां, है तो नारी ही, पर नजर पड़ते ही हस्तिनी का बोध होता है कि कहीं गदर की लूट में मांस के थुवे लाद लाई हो।

नमूने इतने कि लेख लेखमाला बन जाए, पर छोड़िए विस्तार को और समझिए यों कि ऐसे जोड़े, जिन्हें देखकर याद आ जाएं। मसखरे शायर की लाइनें—

काग की चोंच में अंगूर, खुदा की कुदरत।
हूर की गोद में लंगूर, खुदा की कुदरत॥

और ऐसे जोड़े भी, जिन्हें देख कर याद आ जाए राष्ट्रकवि कालिदास का 'श्रद्धा-विश्वास सपिणौ' कि जैसे जीवित श्रद्धा और विश्वास साथ जा रहे हों, एक-दूसरे के अनुरूप एक-दूसरे में रचे-पचे।

मैं घूम रहा हूं मसूरी की माल रोड पर और देख रहा हूँ आसपास घूमते जोड़ों को, अब तन पर नहीं, ध्यान उनके मन पर केन्द्रित है मेरा। जाने कितने विचार हैं, कहूं विचार ही विचार हैं जिनमें सुख-दुख भरे नर-नारियों के जीवन चालू फिल्म की तरह आ-जा रहे हैं। टिकना मुश्किल हो रहा है, पर टिकना तो है ही, लो टिक गए पांव इस सूत्र को थामे—मानव की इस प्रदर्शिनी में सुख के इन्द्रधनुषी स्वप्नों में डूबे नवयुवा भी हैं और अनुभवों के दुस्वप्नों में डूबे वयस्क भी। मिलावट का जोर है आज; बाजार की चीजों में ही नहीं, जीवन के बीजों में भी मिलवाट है। तभी तो रंगीन स्वप्नों में आरम्भ होने वाले जीवन कितनी जल्दी बेरंग हो जाते हैं आजकल ?

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिन्तन जागृत है, पर अवलोकन मौ तो सुप्त नहीं। मैं देख रहा हूं नए जोड़ों में कुछ हैं, जो चलते-चलते धीरे-से एक-दूसरे का हाथ छू लेते हैं जैसे महाकवि अकबर के शब्दों में—'इससे अगर बढ़ो, तो शरारत की बात है।' पर वे भी हैं, जो बिना कहे ही कहते हैं—'अरे, यह तो कोई शरारत नहीं' और हाथ में हाथ लिए चलते हैं, जैसे जीवन में कहीं भी पृथकता इन्हें असह्य हो। इन्हीं के साथ यह दृश्य भी—तरुण-तरुणी बातों में डूबे जा रहे हैं। तरुण का हाथ तरुणी के कंधे पर है, पर दोनों में किसी को चिन्ता नहीं, जैसे वे इस ठेलम-ठेल भीड़ में भी अकेले हों। क्या यह भी एक तरह की समाधि नहीं है? है, पर क्या यह अन्त तक निभ जाएगी, भंग न होगी?

बड़ा मर्मस्पर्शी प्रश्न है और मैं उस के पीछे वैसे ही दौड़ चला हूं, जैसे कभी स्वर्णमृग के पीछे राम दौड़े थे। दीखता है, पर निशाने पर नहीं टिकता। इस दौड़ में हाथ आता है एक सूत्र—हमारे राष्ट्र के प्यार में पूजा का तत्व अद्भुत रूप में समन्वित था, जैसे मिष्ठान्न में केवड़ा। नारी कामिनी और भामिनी दोनों रूपों में घर में आई थी, पर पश्चिम के प्रवाह में बह कर, देश के इस वर्ग में, जो मसूरी की माल रोड पर मेरे आसपास गतिशील है, पूजा का तत्व क्षीण हो चला है और नारी भामिनी कम और कामिनी अधिक हो गई है। महक उसकी घटी है, चहक उसमें बढ़ी है। कहूँ, वह नर के विकास का शक्ति-स्रोत थी, अब उसके विलास का अनुरक्ति स्रोत हो चली है। हमने क्या पाया, क्या खोया? शायद हम उस व्यापारी की तरह जी रहे हैं, जो कभी अपने कारोबार का चिट्ठा नहीं बांधता और उस दिन तक अपने पुर्जों पर काम छोड़े निश्चिन्त रहता है, जिस दिन तक वे उसे दिवालिया होने की घोषणा पर दस्तखत करने को नहीं कहते।

मसूरी की माल रोड पर मैं घूम रहा हूं और यह सब देख-सोच रहा हूं। सपनों में हम कहीं से कहीं जा जुड़ते हैं और यही बात मन की है। कई साल पहले इसी सड़क पर घूमने के बाद एक चिन्तन कलम ने कागज पर उतारा था। मन उस पर जा टिका। उसके अक्षर यों थे—

सृष्टि के विकासक्रम में नारी एक दिन अपनी नग्नता से सकुचाई वह अपने उन्मुक्त अंगों को ढकने की ओर प्रवृत्त हुई और कटि प्रदेश में केले का पत्ता या लताजाल लपेटने से आरम्भ कर धीरे-धीरे सिर से पैर तक पूरम्पूर ढकने वाले बुर्के तक जा पहुंची।

यहां तक बढ़ उसे लगा कि और आगे जाने का पथ नहीं है। वह ठहरी, पर ठहरना विश्राम भले ही हो, ठहरे ही रहना मनुष्य के स्वभाव के विरुद्ध है। वह सदा ठहरा नहीं रह सकता, चलना उसकी प्रकृति है। हां, आगे चलना सभव न हो आगे का पथ न सूझे, तो वह पीछे चलेगा, पर चलेगा अवश्य।

नारी भी ठहर न सकी, पीछे मुड़ चली। उसके खलीफाए-आज़म की गद्दी के ठीक सामने तुर्किस्तान में अपना बुर्का फाड़ फेंका, तो जौहर की ज्वाला से प्रदीप्त दुर्गों के देश भारत में अपना घूंघट उलट दिया। भुजाओं को ढकने वाली आस्तीनों पर ही कैंची न चली, कंधे भी खुल गए। बोझ सहने से इंकार कर सिर ने साड़ी-ओढ़नी को नीचे सरका दिया तो कंठ ही बंधन क्यों सहता?

गर्मियों में पहाड़ों पर, राजधानी में विदेशी अतिथियों के स्वागत-भोजों में और क्लब-पार्टियों में देखता हूँ कि नारी अब वक्षस्थल की उन्मुक्तता के लिए अकुलाहट अनुभव कर रही है। वह कभी बगल की ओर से इस अकुलाहट का संकेत करती है, तो कभी कंठ की ओर से और कहीं पेट की ओर से। जम्फर-ब्लाऊजों के कट जो काम नहीं कर पाते, उसे वह नए रूप-रंग की बाडियों के निर्माण से पूरा कर लेती है। ये नवीन निर्माण अपनी ऊंची उठान में जैसे घोषित करते हैं कि यह पावन प्रदेश गोपनीय नहीं, दर्शनीय ही है।

वस्त्रों की सूक्ष्मता समझदार है। वह कहती है—मैं इस दर्शनीयता की भी रक्षा करूँगी और नग्नता का लांछन भी न लगने दूंगी। यह सब देख कर मन पूछता है— इस दिशा में नारी का यही अन्तिम कदम है या वह अभी और आगे बढ़ेगी?

नग्नता का अर्थ है मर्यादा का अनुभव। इस अभाव को पुष्ट कर रही है सजावट की वृत्ति। यह वृत्ति विदेश के असंतुलित प्रभाव और सिनेमा नटी के असंस्कृत अनुकरण से ओत-प्रोत है। इस तरह कुरुचि ही हमारी अभिरुचि बनती जा रही है।

मसूरी में फैशन, चंचलता और उच्छृंखलता का इतना जोर दिखाई दिया कि सोचना पड़ा—कोई वारांगना यदि यहां आए और सात दिन तक निरंतर घूमती रहे, तो अपने प्रति जिज्ञासा की उस सृष्टि में उसे शत-प्रतिशत निराशा मिलेगी, क्योंकि वह बेचारी कितनी ही सजे, भड़कीले वस्त्र पहने, क्रीम, पाउडर-लिपस्टिक के तूफान उठाए, केश-कलाप में विदेशी सूचीपत्रों में छपे सब चित्रों को मात कर दे, मुसकराती चले इतराती फिरे, पर यहां भीड़-की-भीड़ घूमती बहू-बेटियों में वह अपना पृथक अस्तित्व सिद्ध कर ही नहीं सकती। विचार का यह दूसरा कोना है कि पवित्र बहू-बेटियों के सम्बन्ध में मेरा यह सोचना कितना निन्दनीय है!

इसी चिन्तन के कोई दस वर्ष बाद मैं मसूरी की उसी माल रोड पर सन्ध्या के समय घूमते-घूमते अपनी दृष्टि को सूक्ष्मता की अंतिम सीमा तक ले जा, सोच रहा हूँ—नारी नग्नता की उस लालसा में क्या इन वर्षों में और आगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बढ़ी है ? मेरा अवलोकन और तुलनात्मक चिन्तन इस प्रश्न पर 'हां' नहीं कहता; हां, प्रयत्न करने पर भी 'हां' नहीं कहता और तब मैं अपने को अपने ही एक नए प्रश्न के सामने खड़ा पाता हूँ—क्या भारत की नारी कुरुचि के प्रवाह में बहते-बहते सुरुचि के तट जा टिकी है ?

मेरा ही प्रश्न मुझ में गूंज रहा है और मैं देख रहा हूं अपने आसपास आती-जाती तरुणाइयों को, जिनके वस्त्र उनकी देह से चिपके हुए हैं। इन तरुणाइयों में युवक हैं, युवतियां हैं। वस्त्रों की चुस्ती इस सीमा तक है कि कभी-कभी सोचना पड़े कि वस्त्र खाल के ऊपर हैं या भीतर ? जानता हूँ कि ऊपर ही हैं, पर इतने सटे कि कटि के पूर्व-पश्चिम के उभार-उतार एक दम साफ दिखाई दें। कहूँ, ऊंचे वर्ग की रुचि ने मोड़ लिया है, पर वह स्वस्थ नहीं है और उसका रोग है प्रदर्शन की सस्ती वृत्ति।

देख रहा हूं क्या और दीख रहा है क्या? देख रहा हूँ मसूरी की मालरोड पर घूमते नर-नारियों को, पर दिखाई दे रहे है मुझे भारत के लगभग छह लाख ग्राम, जिनमें भारत के कोई तिरासी प्रतिशत नागरिक रहते हैं। गांधी जी ने कहा था—'असली भारत गांवों में बसता है।' कवि ने उसी भाव को छन्द में गाया था—'भारत माता ग्रामवासिनी।'

मैं देख रहा हूं उन गांवों को और सोच रहा हूं यह कि मसूरी की माल रोड पर घूमते इन लोगों को, वैभव के इस प्रदर्शन ने—वेश-विन्यास की इस समृद्धि ने, क्या असली भारत के, ग्रामवासिनी भारतमाता के समीप पहुँचाया है ? मेरा ध्यान भंग हो रहा है, मेरे अन्तःकरण में कांटे-से चुभ रहे हैं यह सोच कर कि स्वतन्त्रता के इन वर्षों में नगरों और ग्रामों का भेद बढ़ा है, नागरिकों और ग्रामवासियों के बीच की दूरी बढ़ी है और यह दूरी दो देशों में व्यापार करने वाले साझीदारों की नहीं है, युगसंत विनोबा के शब्दों में—'नगर भारतीय जीवन के कैंसर हैं—कैंसर जो भोजन का रस देह को सीधे न देकर अपने में खींच लेता है और फिर उस रस का विष बना कर पूरी देह में बिखेरता है। कांटे और गहरे चुभ गए हैं, चुभन भी और तीखी हो गई है और मैं अधमरा-सा हुआ जा रहा हूं, क्योंकि १५ अगस्त, १९४७ का बंटवारा मैंने देखा है और उसकी तेज आग झेली है, पर मैं देख रहा हूं कि उससे भी बड़ा यह बटवारा मेरे देश को घेर रहा है।

इस घेरे को कौन तोड़े ? इससे उसे कौन बचाए ? यह कौन है, जो मेरे साथ लग लिया है ? इसकी देह की पावन गंध मेरी जानी-पहचानी है, यह कौन है ? ओह, गांधी जी हैं ये ! कह रहे हैं—"मैंने अमीरों को गरीबों की तरह रहना सिखाया था, पर मेरे बाद जवाहरलाल ने गरीबों को अमीरों की तरह रहना सिखा दिया। यह वृत्ति अब शहरों से आगे बढ़ गांवों में भी जा पहुंची है। श्रम की श्रद्धा को यह चूसती है और पलक मारते धनवान बनने की सटोरिया वृत्ति को यह पोसती है, जिससे आचरण दूषित होता है। इसका जीवन सूत्र है—जो हम नहीं हैं, वह हम दिखाई दें। यानी हम चाहे लाख कुरूप हों, पर हमारा फोटो सुन्दर बने।"

बापू मैंने कहा—इसका अर्थ तो यह हुआ कि आपकी राय में हमारे देश का सर्वोत्तम वर्ग, जो समाज के स्वरूप का मुखर प्रतिनिधि और प्रखर प्रदर्शक है, बनावटी जीवन जी रहा है ?

"और क्या ?" पूरी दृढ़ता से उन्होंने कहा—"यह बनावटी जीवन ही उन सारी कुरूपताओं और विशृंखलताओं की जन्म-स्थली है, जिनसे समाज आज त्रस्त है।"

लेकिन बापू, मैंने जिज्ञासा से कहा—यह क्यों न मानें कि यह समाज के ऊंचे रहन-सहन का, उभरते जीवन-स्तर का प्रतीक है ?

मैंने देखा, वह उदास हो गए। डूबे-से स्वर में बोले—इस स्तर के लोग हैं कितने ? मुश्किल से दस-बारह प्रतिशत होंगे, तो लगभग दो दशकों में जो जीवन-स्तर दस-बारह प्रतिशत को ही प्राप्त हो सका है, उसे प्राप्त करने के लिए क्या देश के पूरे नागरिकों को एक शताब्दी की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी ? यदि हां, तो क्या जनता में इतनी लम्बी बर्दाश्त होगी ?"

देश के नागरिकों में समाज-पद्धति के विरुद्ध सहिष्णुता हो या नहीं, पर मुझे लगा कि मेरी देह में बहते रक्तकण विद्रोह की ऊष्मा से उफन उठे हैं। मैं गांधी जी की ओर मुड़ा, पर वहां कोई न था, तो क्या मैं अपने अन्तर्यामी से ही बात कर रहा था ?

(२)

मैं फिर घूमने लगा था मसूरी की माल रोड पर, यों ही अन्यमनस्क-सा बोर्डों को पढ़ते-देखते। यह सामने लिखा है—पद्मिनी-निवास। आँखों ने पढ़ा कि दिल चौंका और मेरी स्मृतियों में नाच गई एक हसीना और बांकी मनमोहिनी। १९५८ में वह इसी भवन में रहती थी। अंग्रेजी जीवन के दिलदादा लोगों का रंगमहल था हैकमैन होटल और उसकी नूरजहां थी वह नारी। कपूरथला के बूढ़े राजा के साथ जब वह नाचती, तब लगता कि दो युग साथ थिरक रहे हैं। किसी राजा की रानी थी वह, पर लोग कहते थे कि राजा साहब किसी दूसरे के साथ विदेश में रम रहे हैं और यह यहां अपने अभाव को भाव की चाप दे रही है। राजा साहब के साथ मैं भी एक बार इस भवन में कुछ देर बैठा था; बड़ी शानदार सजावट थी इसकी। इस बार भी उस मकान में जाने का अवसर मिला था मुझे। अब यह रंगमहल नहीं, किराए का मकान हो गया है। कमरे वे ही हैं, पर तुलनात्मक दृष्टि से वातावरण उखड़ा-उखड़ा-सा, जैसे उजड़े हुए सामन्ती युग का उखड़ा हुआ खेमा हो ! मैं पढ़ता रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद्मिनी-निवास और तुलना करता रहा इस भवन के दोनों रूपों की। सहसा बिजली-सी कौंध गई मेरे मन में—युग के प्रवाह में भूमि पर कब्जा रखने वाले सामन्त—राजा जमींदार—वह गए, पर भूमा—धनबाहुल्या—पर कब्जा रखने वाले श्रीमंत क्यों रह गए? अतीत वर्तमान में झलक आया—सामंतों के पास अधिकार थे, उपहार न थे। उनमें ग्रहण था, अर्पण नहीं, शोषण था, पोषण नहीं। वे जीवन के किसी भी अंश में रचनात्मक न थे और पूरे तौर पर युग-क्रांति के विरोधी थे। फिर वे स्वतः पोषित व्यक्तित्व न थे, अंग्रेजी सत्ता के व्यक्तित्व की छाया थे कि उसके हटते ही गिर गए। इसके विरुद्ध श्रीमंतों के पास अधिकार थे, तो उपहार भी थे। उनमें ग्रहण था, तो अर्पण भी था, शोषण था, तो पोषण भी। वे जीवन के अनेक अंशों में रचनात्मक थे और छिपे तौर पर ही सही, युग-क्रांति के पोषक थे। फिर वे स्वतः पोषित व्यक्तित्व थे, अंग्रेजी सत्ता की छाया न थे कि हटते ही गिर जाते। सबसे बढ़ कर यह कि युग की उथल पुथल में जिन के हाथों सत्ता आई वे उनके द्वारा पोषित थे। यों सामन्तों के बहते भी श्रीमन्त युग के प्रवाह में टिक गए और उस प्रवाह की एक विशेषता बन गए। इस विशेषता का नाम पड़ा—मिश्रित अर्थव्यवस्था कि समाजवादी शासन भी और निजी उद्योग भी। विश्व के राजनीतिक इतिहास में एक नया प्रयोग। बहुत बड़ी बात हुई यह, पर इस बात का अर्थ क्या था? इस बात का अर्थ था यह कि व्यक्ति की स्वतन्त्रता सुरक्षित है प्रजातन्त्री ढंग पर और उसकी यह स्वच्छन्दता कि अपनी साधन-शक्ति के सहारे वह समष्टि का शोषण कर सके, नियन्त्रित है समाजवादी ढंग पर। सचमुच यह बहुत बड़ी बात थी, पर अनुभव कहता है कि श्रीमन्त वर्ग ने प्रजातन्त्र का उपहार तो हाथ बढ़ा कर ग्रहण किया, पर समाजवाद का विचार कानून की जड़-भाषा में ही स्वीकार किया।

मैंने आगे बढ़ने के लिए पद्मिनी-निवास का बोर्ड एक बार फिर पढ़ा ही था कि सुना—नमस्कार! देखा कि ... .के राजा साहब सामने खड़े हैं। साधारण पतलून-बुश शर्ट और हाथ में छड़ी। कभी इसी मसूरी में अपनी रिक्शा में चला करते थे, जिसके रिक्शाकुली राज्य-चिन्ह की वर्दी में होते थे और एक बावर्दी कर्मचारी आगे-आगे दौड़ता था—हटे, हटे!! एक राजसी कड़क होती थी उसकी आवाज़ में, पर आज राजा साहब अकेले ही खड़े थे मेरे सामने।

बातों में जाना-एक होटल में ठहरे हैं। पूछा—कोई आदमी साथ नहीं लिया? बोले—'राज्य न रहे और फिर भी कोई राज-भवन पर झण्डा फहराए, तो एक मजाक ही है।" वह फिर भीड़ की नदी में बह चले। उनका अर्थगर्भ वाक्य मेरे भीतर गूंजता रहा—"राज्य न रहे और फिर भी कोई राज-भवन पर झण्डा फहराए, तो एक मज़ाक ही है।" पहले इसी सड़क पर उन्हें सितारों में चाँद की तरह असाधारण बन घूमते देखा था; आज सितारों में सितारे की तरह साधारण बन घूमते देखा और मन में आया, यह सूत्र—मुझे जन-जन की विशिष्टता सदा मान्य है, पर जन की विशिष्टता केवल तभी, जब वह जन-जन द्वारा अनुमोदित हो। चलते-चलते मन में आया—पैदायशी पदों की प्रतिष्ठा को पलक मारते पद-लुंठित देख कर भी जो लोग क्षण-भंगुर पदों की प्रतिष्ठा के दर्प में फूले फिरते हैं, वे कितने अबोध हैं?

मैं भी अब माल रोड की भीड़ में था। भीड़, जिसमें हरेक का अपना परिपूर्ण व्यक्तित्व है, पर जिसमें हरेक भीड़ के विराट व्यक्तित्व का एक अंश मात्र भी है। कहें, दोनों में भिन्नता भी है, अभिन्नता भी। वेदान्त की भाषा में यही नर नारायण का अद्वैत है और उपनिषद की भाषा में यही है—'पूर्णमदः पूर्णमिदं' कि यह भी पूर्ण है, वह भी पूर्ण है। पूर्ण से पूर्ण का प्रसार है और पूर्ण से पूर्ण लेकर जो बचता है, वह भी पूर्ण है।

मैं मसूरी की माल रोड पर और आगे बढ़ा ही था कि आवाज आई—"रिकसा चाहिए बाबू।" यह रिक्शा वाले की आवाज थी, जिसे सुनते बरसों बीत गए, पर आज कानों को यह आवाज सहज न लगी, वह कुछ चौंके-से इसे सुनकर। क्यों? क्या बात है? आप ही पूछा अपने से यह प्रश्न, पर कोई उत्तर न मिला—क्यों, क्या बात है? कान स्मृतियों का टेप रिकार्डिंग सुनने लगे। तब मिला उत्तर—१९४५ तक मसूरी अंग्रेजों की सैरगाह थी और अंग्रेजों के मानस-पुत्र राजा-जमीदार, हिन्दुस्तानी अफसर और दूसरे काले साहब जो आते थे, मानसिक रूप से वे भी अंग्रेज ही होते थे, तो रिक्शा वालों का सम्बोधन था—साहब, साहब बहादुर, पर १९६५ में न साहब सुनाई दिया, न साहब बहादुर, सुनाई दिया—बाबू, बाबू साहब!

बाबू और बाबू साहब! चिन्तन की चांदनी छिटक आई है मन में—तिलक के वातावरण में अंग्रेज और अंग्रेजियत से गहरी घृणा पैदा हुई थी, जिसे सावरकर-जैसे क्रांतिकारियों ने पुष्ट किया था। बाद में गांधी जी ने इस घृणा की भूमि में अहिंसा की खाद दे कर उस में भारतीयता की पौध रोप दी थी, पर स्वतन्त्रता का उदय होते ही भारत से अंग्रेज की विदाई के बाद अंग्रेजियत का जो तुमार उठा, उसने एक बवंडर की तरह हमारे राष्ट्रीय जीवन को घेर लिया। भारत में अंग्रेजियत के पहले खलीफा सर सैयद थे। उन की आत्मा अपनी कब्र में सचमुच अपनी सफलता के गीत गुनगुना रही होगी कि जीवन में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं, तो मरने के बाद ही सही मेरा मिशन रहा तो कामयाब ही !

पर यह रिक्शा वाला ? यह जन-साधारण का, भारत के देहात का प्रतीक है और इस का सम्बोधन कहता है कि भारत का शिक्षित और शहरी नागरिक लाख 'ऐंग्लो इंडियन' हो गया हो, भारत का देहाती नागरिक अभी 'इंडियन' ही है। मन में खुशी की एक किरण फूट पड़ी, पर ? तभी एक पर, एक लेकिन ने सिर उठाया—पर ये रिक्शा वाले तो अंग्रेजी समय से मसूरी का अंग हैं ? प्रश्न में गहराई है और गहराई अपने में उतारती है, तो कहां पहुंचा निरीक्षण ? कहां पहुंची पूछताछ ?

उत्तर प्रदेश के सीमावर्ती जिले हैं टिहरी, उत्तर काशी, चमोली, इन्हीं से आते हैं ये रिक्शा चलाने वाले। यातायात के साधन नहीं थे उद्योग-धन्धों का नाम नहीं था, एक समय भी भोजन मिल जाए तो गनीमत—सचमुच बुरी हालत थी। राजा का राज था, पटवारी ही पुलिस मिनिस्टर था कि जब जिसे चाहता, पकड़ कर बेगार में धांग देता। १९६५ में तो महंगाई शब्द भारत के हरेक नागरिक का शब्द है, पर युगों तक यह शब्द इन स्थलों की जनता का ही अपना शब्द था। नीचे के लोग जब रुपए के बाईस सेर गेहूँ खरीदते थे, इन स्थानों में—ढुलाई की -कठिनाई के कारण- रुपए में दो सेर आटा बिकता और जिस शीरे को नीचे कोई चार आने मन भी न पूछता था, वही यहां चार रुपए मन भी दुर्लभ था।

जीना मुश्किल था। इस मुश्किल में के लिए गर्मी आते ही इन स्थानों के किशोर-नवयुवक पहाड़ों से उतर आते थे और शहरों में बर्तन मांजने की नौकरी घर-घर करते थे। युवक-प्रौढ़ मसूरी में रिक्शा चलाते थे सर्दी आने पर जब कई किशोर और युवक अपने अंग्रेजी बालों में तेल लगाए, साफ कपड़े पहने और अंटी में डेढ़-सौ से चार सौ रुपए तक बांधे घर लौटता था, तब वह पड़ोसियों की नजर में होता था ग्वालियर का राजकुमार और इंदौर का सर सेठ हुकुमचन्द !

अब वे बर्तन मांजने वाले शहरों में दुर्लभ होते जा रहे हैं, यह मैं जानता था अपने अनुभव से, पर जाना मसूरी में कि रिक्शा चलाने वाले भी दुर्लभ होते जारहे हैं। रिक्शाओं की संख्या काफी कम हो गई है और रिक्शा चलाने के लिए भी वे पुराने ट्रेंड लोग नहीं, घटिया किस्म के ही आदमी नीचे उतरे हैं। यह क्यों ?

इस क्यों के चिन्तन में हमारे खिलते राष्ट्र की एक आनन्द और उत्साह को सींचने वाली तस्वीर उभरती है। पहाड़ी जिलों का यह गरीब और असहाय डिवीजन-नौ हजार तीन सौ बत्तीस मील का है और इस के दो हज़ार तीन सौ वर्गमील में बन हैं। १९६० से पहले इस क्षेत्र के अभिशप्त गांवों का जीवन निराश, अन्धकार और दुर्गति का जीवन था। अन्धकार इस लिए इस रूप में कि न 'आज' में कुछ था न 'कल' की सम्भावना में। उफ, जीवन का यह कैसा चित्र है कि उसमें अच्छी सम्भावनाओं की कोंपलों का उगना ही बन्द हो जाए। भाग्य के नाम पर जाने कब से लोग यों ही जी रहे थे और वे मानते थे कि उन्हें सदा यों ही जीना है। हाय रे, यहां जीने का अर्थ था न मरना। हर की पैड़ी जैसे छोटे-छोटे खेतों को गोद कर जो कुछ मिल जाता, बस उससे ही सांस चलती रहती। सांस, जिस में कोई खुशबू नहीं, जिन्दगी जिसमें कोई अहल-बहल नहीं, उथल-पुथल नहीं," हेर-फेर नहीं और इन सब का विचार भी नहीं।

एक दिन अनहोनी बात हुई। नीचे से कुछ सरकारी आदमी ऊपर चढ़ आए और छोटी-छोटी सम्पत्तियों में अपना सामान रख इधर-उधर घूमने लगे। वनों का सर्वेक्षण होने लगा और उस काम में इस क्षेत्र के लोगों को भी साथ में लगाया गया। पुराने राजा के समय की तरह इन्होंने इसे अपनी उदास जिन्दगी की मजबूरी समझी, पर शाम को जब काफी पैसे हाथ में लिए ये घर लौटे, तब वह मजबूरी मजदूरी हो गई। ये पैसे पत्र, तार और रेडियो-सन्देश बन कर घर-घर पहुंचे और थके सांसों में ताजगी की पहली खनकी आई। इस ताजगी ने फेफड़ों को चौंकाया, कलेजे को थपथपाया, हृदय को गुदगुदाया और आशा को सरसाया।

जिस क्षेत्र का जीवन ही अन्धकार था, उसी में अठारह स्थानों पर बिजली योजनाएं आरम्भ हो गईं। १९६५ में ५० नई योजनाओं पर विचार हो रहा है। गृह-उद्योग के रूप में ऊनी गलीचे, चमड़े के सामान, मिट्टी के बर्तन, लोहे की चीजें, सिलाई, हौजरी आदि आरम्भ हो गए और इन्हें लोकप्रिय बनाने के लिए ११ केन्द्र चल पड़े।

बद्रीनाथ जाने के लिए बनने वाली सड़क जोशी मठ तक पहुंच गई, जिस से यात्रियों और घुमक्कड़ों की संख्या में बढ़ोतरी हुई, इस क्षेत्र को नई रौनक मिली और सड़कों का जाल सैंकड़ों मील में फैल गया। कहूँ, चारों ओर गति ही गति आ गई, रोजगार बरस पड़ा, भाग्य का भूत भाग चला, कर्म में श्रद्धा जागी और अनास्था में आस्था जागी कि हमारा जीवन भी शीघ्र ही सुविधा, उपयोगिता और आनन्द से भर उठेगा। 'बाबू जी, घर में ही मन चाहा काम मिल जाए तो बाहर कौन जाए?" एक रिक्शा वाले ने इस प्रश्न में जैसे सारी स्थिति खोल कर रख दी। दूसरे ने व्याख्या की—"अजी, उस काम में बादशाहत है। बन्धा काम, बन्धी तनखा, यहाँ तो गुलामी है।"

टटोला मैंने—फिर तुम यहां आए ही क्यों भैया ? उत्तर था—'पुराने लोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा नहीं रहे थे, हम ने सोचा चलो हम ही शहर की सैर कर आएं. पर बाबू जी, तजर्बा अच्छा नहीं रहा।' एक ने कहा—मौसम में यहां आने की चाट पड़ गई है, जैसे अफीम खाने की आदत हो जाती है कि समय पर न खाओ, तो गात टूटने लगता है, पर बाबू जी, बिना मजे की चाट ज्यादा दिन नहीं चल सकती।" मैंने दो टुक बात कही—'फिर ये रिक्शाएं कौन चलाएगा, भैया ? उत्तर भी दो टुक था—"अजी, कौन चलाता, इन रिक्शाओं को पड़ी-पड़ी रोएगी अपनी किस्मत पर।"

मेरा मन चमत्कृत हो उठा और मुझे याद आ गया १९४८ में लिखा अपना रिपोर्ताज—पहाड़ी रिक्शा। उसका अन्तिम अंश इस प्रकार है—

'अनेक वर्षों से मैं रिक्शा चलाने वालों को दया का पात्र समझता रहा हूँ, पर सत्य यह है कि रिक्शा में बैठने वाले ही दयनीय हैं। मन नई दिशा में मुड़ चला है—अहिंसा की छाया में। एक रोगी भी हमारी दया का पात्र है और एक डाकू भी। दवा और दण्ड समाज की दया ही तो है ! तब पेट के लिए बोझ ढोने को विवश मजदूर और पैसे के गर्व में मनुष्य से एक बोझ बनने वाला यात्री, दोनों ही दया के पात्र हैं और हमारी दया का अनुरोध है कि यह प्रथा बन्द हो।"

मैं सोच रहा हूँ, ग्रहों की गति का अध्ययन कर ज्योतिषी भी भविष्यवाणी करते हैं और राष्ट्रीय घटनाओं का रुख देखकर पत्रकार भी, पर ग्रहों के ज्ञान और घटनाओं के रुख से अपरिचित यह मजदूर, जो भविष्यवाणी कर रहा है कि समता का सूर्योदय होने वाला है और मनुष्य पर से मनुष्य का बोझ उतरने वाला है, क्या उसमें युग की वाणी ही प्रतिध्वनित नहीं है ?

(३)

"यस डार्लिंग; आई थिंक सो !"

स्वर इतना मीठा कि कानों में मिश्री घुले। सुना, तो शब्दभेदी बाण की तरह आंखों ने उसका पीछा किया। स्वरूप इतना सलोना कि हर बाप उस का जन्म अपने घर चाहे। पति भी स्वस्थ-सुन्दर, ऐसा युगल कि देख कर मन में आप ही आप आशीष उपजे—दोनों हिन्दी भाषी, पर दोनों अंग्रेजी में बतियाते जा रहे थे।

अंग्रेजी बोलना इनकी मजबूरी नहीं है, अंग्रेजी बोलना इनकी जरूरत नहीं है, अंग्रेजी बोलना इनकी आदत नहीं है, क्योंकि मैं देख रहा हूँ कि अंग्रेजी का टप्पा देकर वे शीघ्र ही हिन्दी पर आ जाते हैं। फिर यह अंग्रेजी है क्या ?

सर्दियों की मौसम, मिटपरियों का बाड़ा, रात का समय; जिनके पास फटी-पुरानी गुदड़ी, वे सबकी निगाह में शानदार।

१९३० से १९४५ तक का समय, देश की जेलों में गांधी के कैदियों की भरमार; उनमें जिनकी पत्नियां भी जेल में, वे दूसरे कैदियों में शानदार।

१९४८-४९ का काल, लीडरों की कृपा से प्राप्त लाइसेंसों द्वारा खरीदे पिस्तौल का पट्टा समय-असमय जिनके कंधों पर वे अपने गांव में शानदार।

आजकल का समय, रिक्शा में बैठे स्टेशन जा रहे हों या पैदल सब्जी मंडी, बजता ट्रांजिस्टर जिनके पास, वे सारी भीड़ में शानदार !

और मसूरी की मालरोड पर जो जोड़े बेहद मामूली अंग्रेजी में गिटपिटाएं, वे अपनी निगाहों में दूसरों से शानदार !

इस शान का जड़ कहां है ? बादशाही हुकूमत के दिनों शाही खानदान के लोगों की एक श्रेणी थी और जनता की एक श्रेणी, जिसकी न कोई आवाज. न रुतबा। बादशाहों को ऐसे लोगों की जरूरत थी, जो जनता के दिलों में जनका रौब गालिब रखें और राजकाज में भी मददगार हों। तब दरबारियों, अमीर-उमराओं की एक श्रेणी बनी। उसका मुंह बादशाहों के कान तक पहुंचता था और बादशाहों की आंख उन तक, इस लिये ये बादशाहों की भाषा बोलते थे और बादशाहों का ही वेश पहनते थे कि नगण्य जनता में नहीं अग्रगण्य शाही वर्ग में दिखाई दें, शुमार हों।

बादशाहों के बाद अंग्रेज आए। अंग्रेज शासक श्रेणी, जनता शासित श्रेणी। अंग्रेजों को भी ऐसे आदमियों की जरूरत थी, जो जनता के दिलों में उनका रौब गालिब रखें और राजकाज में भी मददगार हों। तब अफसरों, रावों-खानों-सरों और बाबुओं की एक श्रेणी बनी। ये भी अंग्रेजी की भाषा बोलते थे और अंग्रेजी वेश पहनते थे कि नगण्य जनता में नहीं, अग्रगण्य साहबों में दिखाई दें, शुमार हों।

गांधी जी ने अंग्रेजों की हुकूमत के विरुद्ध विद्रोह किया, तो उनकी नकल को भी नहीं बख्शा और भारतीय भूषा-भाषा को महत्व देने की प्रवृत्ति पैदा की। अंग्रेज चले गए, गांधी जी की हत्या हो गई और उनके उत्तराधिकारी जवाहर लाल नेहरू देश के सर्वे-सर्वा हुए। उन्होंने अंग्रेजी को संरक्षण दिया, पर अंग्रेजियत पर चोट की कि बन्द गले का कोट और चूड़ीदार पाजामे को गांधी कैप के साथ राष्ट्रीय वेश घोषित किया।

१५ अगस्त से पहले जवाहरलाल दूर से देखते थे भीड़ को, आकर्षित करते थे भीड़ को, पर मानसिक सन्निधि में रहते थे गांधी जी की, इसलिए प्रभावित होते थे गांधी जी से, पर १५ अगस्त के बाद जवाहरलाल दूर से देखते थे भीड़ को, आकर्षित करते थे भीड़ को, पर मानसिक सन्निधि में रहते थे पूर्णतया अंग्रेजी वातावरण में पले-पुसे इसलिए प्रभावित होते थे उनसे ही। इन अफसरों ने कहा—'यह वेश कष्टदायक है, विदेशों के लायक नहीं।' सहज था कि नेहरू प्रभावित हों। वह प्रभावित हुए और उन्होंने निर्णय दिया कि अंग्रजी कोट का संस्कारित रूप बंद गले का ऊंचा कोट और शुद्ध अंग्रेजी पतलून राष्ट्रीय वेश माना जाए।

यह है १९५६ ! हरिद्वार में गंगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहर की शताब्दी मनाई जा रही है। स्मृति भी कहाँ से कहां जा कूदती है। बड़ा ही भव्य, विशाल और शानदार मण्डप, गंगा की दो धाराओं के बीच मैदान में बना। वातावरण मनोरम और मुख्य अतिथि गंगा जल की तरह ही पवित्र और सात्विक हमारे राष्ट्रपति श्री राजेन्द्रप्रसाद।

उत्सव के बाद नौका जलूस का कार्यक्रम था। उत्सव के स्थान से नौका-स्थान कोई तीन-चार सौ गज था। राष्ट्रपति मंच से वहाँ जाने को उठे, तो देखा कि वह बंद गले का कोट और पेंट पहने हुए हैं। मैं प्रणाम कर साथ होगया। पुराने कार्य-कर्ताओं से राजेन्द्र बाबू राष्ट्रपति होने के बाद भी घरेलू ढंग से मिला करते थे। इधर उधर की बात के बाद मैंने कहा—"बाबू जी, आज तो आप पूरे साहब हो रहे हैं।" बात में विरोधी का व्यंग्य न था बालक का कौतुक ही था, फिर भी बाबू जी संकुचित हो उठे—सादगी उनकी आदत नहीं, जीवन का धर्म थी। बोले—"जवाहरलाल कहते हैं यही ठीक है।" स्वर में विवशता थी, सफाई का भाव था। मैं प्रणाम कर अलग हुआ, वह नाव में चढ़े।

और यह कौन है जो मेरे पास आ खड़ा हुआ? यह लांड्री मैन मिस्टर अरोड़ा, कहते हैं—"पहले दो आदमी कपड़े धोते थे और दो प्रैस करते थे, पर अब प्रैस के लिए तीन भी कम हैं; अक्सर खुद खड़ा होना पड़ता है।"

क्यों? क्या प्रैस वाले पूरा काम नहीं करते? उनका उत्तर है—जी, यह बात नहीं, बात असल यह है कि अब पतलूनें बहुत आने लगी हैं और उनकी 'क्रीज़' ठीक रखने के लिए ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है।

क्या? पतलूनें ज्यादा क्यों आने लगी हैं अब अरोड़ा जी? उनका उत्तर है—"बाबू जी अंग्रेजों के बाद तो हिन्दुस्तान में हरेक ही अंग्रेज हो गये हैं!" ठीक है, जब सत्यमूर्ति बाबू राजेन्द्रप्रसाद भी प्रभावित हो गए, तो दूसरों को अंग्रेजी रहन-सहन से अपनी श्रेष्ठता का बोध क्यों न हो? वैभव और शान की प्रदर्शनी मसूरी की माल रोड पर पति-पत्नि अंग्रेजी में बतियाना क्यों न बड़ी बात मानें?

लो, यह आ गया लाइब्रेरी चौक, जिसे नई दिल्ली का कनाटप्लेस या पुरानी दिल्ली का चाँदनी चौक माना जाता है। 'सर्वदेव नमस्कारं केशवं प्रति गच्छति—आप किसी भी देवता को नमस्कार करें, वह पहुंचता है कृष्ण को ही, तो मसूरी में कोई कहीं ठहरे, पर शाम को एक बार लाइब्रेरी चौक जरूर पहुंचता है।

लाइब्रेरी चौक? हां यहाँ एक विशाल लाइब्रेरी है। नीचे पांच-छह दुकानें ऊपर एक हाल में लाइब्रेरी, जिस में हजारों पुस्तकें, लम्बे बरामदे में बैठक और वाचनालय, ट्रस्ट कमेटी की बैठक का एक कमरा। १९ वीं शताब्दी के ढलाव में स्थापित हुई थी यह लाइब्रेरी। संस्थापक अंग्रेज बन्धु का प्रभावशाली फोटो भीतर के कमरे में लगा है। दुकानों से कई हजार रुपये साल किराया आता है, तो जीवित है लाइब्रेरी, पर चलती नहीं। जीवन नहीं—एकदम कब्रिस्तान का-सा सन्नाटा, एकदम स्यापे के बाद का उदास वातावरण। यही बात है कि सब कुछ है, पर जीवन नहीं; जैसे किसी मुर्दा लाइब्रेरी का यह ममी-मन्दिर हो।

मुर्दा लाइब्रेरी? जिसके पास आपके स्थायी साधन है, उत्तम भवन है, शानदार फर्नीचर है, हजारों पुस्तकें हैं, वह मुर्दा लाइब्रेरी क्यों है? सचमुच कुतुहल वर्द्धक प्रश्न है, पर इतिहास का मजाक भी तो कोई चीज है? लाइब्रेरी जब स्थापित हुई अंग्रेजों और अंग्रेज-परस्तों के मजे मीर का रंग-महल था मसूरी, तो अंग्रेज द्वारा स्थापित लाइब्रेरी में पुस्तकें आईं अंग्रेजी की। उस समय के लोग लाइब्रेरी में आते, बैठकर पढ़ते या सदस्य बन कर पुस्तकें घर भी ले जाते। प्रति सीजन आठ दस हजार पुस्तकें पढ़ी जाती थीं। हरेक यात्री लाइब्रेरी और हैकमैन होटल में कुछ देर बैठना मान-मर्यादा की बात समझता था; जैसे यह अभिरुचि का एक मापदण्ड हो, पर अब वे अंग्रेज नहीं हैं, वे अंग्रेज परस्त भी कुछ मर गए, कुछ बिखर गये और उनके विरह में लाइब्रेरी सूख रही है, जैसे यह उनकी विधवा हो।

मैं लाइब्रेरी के सामने खड़ा हूँ और देख रहा हूं एक चलती-जाती सूरत को। पैरों में चूड़ीदार पाजामा, देह में नीची शेरवानी, सिर पर गाँधी कैप, आँखों पर चश्मा, हाथ में छड़ी और कश्मीरी कलर; ये चले जा रहे हैं श्री पुष्करनाथ तनखा। ओह, यह जा रहे हैं तिलक पुस्तकालय, जो इनकी निष्ठा और लगन का प्रतीक है। जन-शासन की सहायता से बना सुन्दर हाल, चिन्तनशील पाठकों के लिए एकांत कमरा, छोटा-सा आफिस और साथ के स्वच्छ बाथरूम। हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी की हजारों पुस्तकें और अनेक सामयिक पत्र सब कुछ स्वस्थ, व्यवस्थित और प्रेरणाप्रद।

एक किनारे पर लारी, दूसरे पर तिलक पुस्तकालय; एक मुरझाती बेल—भारत से अंग्रेजों और जाती अंग्रेजी की प्रतीक, दूसरा लहलहाता वृक्ष, उभरती राष्ट्रभाषाओं का—राष्ट्रीयता का प्रतीक। मन में आया—राष्ट्र अपने ही सांसों जीवित रहता और अपने ही हृदय की धड़कनों से स्पंदित होता है। मानता हूँ आक्सीजन का भी उपयोग है, पर मरते हुए मनुष्य के लिए, उभरते हुए मनुष्य के लिए नहीं।

मसूरी की माल रोड की शाम अब अपनी गुलाबी चुनरी उतार कर काली चादर ओढ़ रही थी सलमे-सितारे जड़ी और मैं अपने निवास की ओर लौट रहा था यह सोचते हुए कि यहां की शाम राष्ट्रीय जीवन की एक उत्तम प्रदर्शिनी है, जिसमें हम राष्ट्रीय जीवन के उभरते और बिखरते तत्वों को एक साथ देख रहे हैं। ○

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीमती उर्मिला शास्त्री

जिनके ज्वलन्त त्याग की कहानी ही शेष है !

श्री रामशरण विद्यार्थी

युगों की वन्दिनी नारी को परदे से बाहर निकाल कर राजनैतिक आन्दोलन में प्रमुख भाग लेने के लिए क्षेत्र में ला खड़ा करने का श्रेय उर्मिला जी को ही था। उन्होंने थोड़े समय ही में दिन-रात घनघोर परिश्रम कर मेरठ के बच्चों, स्त्रियों और पुरुषों में इस प्रकार का नवजीवन संचार कर दिया, सोती हुई सिंहनियों में वह तेज भर दिया, स्वाधीनता की वह नवीन लहर चला दी कि मेरठ की रण देवियों ने १९३० के आजादी के युद्ध में एक अभूतपूर्व सुसंगठित कार्य कर दिखलाया। पूज्या श्रीमती कस्तूरबा गांधी तक को श्रीमती उर्मिलाजी तथा उनकी सहेलियों की सेवाएँ देख कर कहना पड़ा था कि 'मेरठ की महिलाओं ने जैसा कार्य कर दिखाया है वैसा उन्होंने भारत में दूसरी जगह कहीं नहीं देखा।' वास्तव में मेरठ की नारियों का उस समय का नारा था :

हम जाग उठीं, सब समझ गईं
अब करके कुछ दिखला देंगी,
हां, विश्व-गगन में भारत को
फिर एक बार चमका देंगी !

उर्मिला जी का जन्म भारत के स्वर्ग प्रदेश काश्मीर की राजधानी श्रीनगर में २० अगस्त सन् १९०९ को हुआ था। उनके पिता स्वर्गीय श्री ला० चिरंजीतलाल जी स्वामी दयानन्द के पक्के भक्त थे। पहले वे एक बैंक के मैनेजर थे, परन्तु कुछ दिन बाद नौकरी छोड़ स्वतन्त्र व्यवसाय ठेकेदारी करने लगे। इस व्यवसाय में उन्होंने बहुत धन पैदा किया। उर्मिलाजी उनकी द्वितीय कन्या थीं। आपकी बड़ी बहन श्रीमती सत्यवती मलिक का हिन्दी साहित्य क्षेत्र में गौरवपूर्ण स्थान रहा है। आपने केवल हिन्दी मिडिल तक ही स्कूलों में पढ़ा, पर घर पर रहकर स्वयं पढ़ने-लिखने का अभ्यास बढ़ाती रहीं। धीरे-धीरे कुछ अंग्रेजी सीखी तथा संस्कृत का भी अभ्यास किया, पर विशेष कर धार्मिक ग्रन्थों का अच्छा अध्ययन किया। साथ ही पंजाब विश्वविद्यालय की हिन्दी की सबसे ऊंची परीक्षा 'प्रभाकर' पास की और बाद में उन्होंने इंट्रेंस परीक्षा भी पास की। कुछ दिन तक वे आर्य कन्या पाठशाला श्रीनगर की मुख्याध्यापिका रहीं। उस पाठशाला की आपने साधारण स्थिति से उन्नति कर उसे आदर्श विद्यालय बना, बहुत ऊंचे दर्जे तक पहुँचाया। आप अवैतनिक काम करती थीं। फिर भी उस पाठशाला में आप इस लगन और प्रेम से कार्य करती थीं कि वहां का काम आपने विवश ह कर ठीक उस दिन प्रातः काल छोड़ा था, जिस दिन सन्धा को आपका विवाह होने वाला था।

उर्मिलाजी में देश की लगन प्रारम्भ ही से थीं। स्वदेशी की पक्षपातिनी भी आप हो गई थीं, जिसका श्रेय सेठ जमनालाल बजाज जी को था। खादी की उपयोगिता पर सेठ जी की बातें सुनकर आपने प्रण किया था कि खद्दर या स्वदेशी के सिवा दूसरी चीज न लूंगी। सन् १९२९ में मेरठ कालेज के प्रोफेसर श्री पण्डित धर्मेन्द्रनाथ जी श्रीनगर पधारे और उनका एक व्याख्यान खादी के महत्व पर वहां बड़ी धूम-धाम से हुआ। लोगों पर उसका खूब असर पड़ा। सहृदया श्रीमती उर्मिला जी पर तो व्याख्यान का ऐसा कुछ जादू हुआ कि वे उसी समय से खादी की पूर्ण भक्त बन गईं। इतना ही नहीं, बल्कि जिसके स्वर से आप में यह परिवर्तन हुआ, उसके स्वर में अपना स्वर मिलाने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए आपने उस स्वरकार के साथ अपना चिर सम्बन्ध भी जोड़ लिया। ६ अक्तूबर सन् १९२९ को श्रीनगर में जात-पांत के झूठे बन्धन को तोड़ प्रोफेसर धर्मेन्द्रनाथ जी के साथ आपका विवाह संस्कार हो गया। विवाह के बाद आप मेरठ आईं।

आर्य समाजी पिता की विदूषी पुत्री होने से समाज-सेवा की धुन आप में पहले ही से थी। विवाह के बाद अपने पति के पास मेरठ आते ही सामाजिक-सुधार के कामों में हाथ डाल दिया। मेरठ में आने के दो मास बाद ही महिला-उत्थान के लिए आपने अपना कार्यक्षेत्र तैयार कर लिया।

आपके उद्योग से जनवरी १९३० में, आपकी अध्यक्षता में, स्त्रियों की एक बड़ी कान्फ्रेंस मेरठ में हुई, जिस में स्त्रियों पर होने वाले सब प्रकार के अत्याचारों पर विचार हुआ और प्रस्ताव पास हुआ कि पुरुष की मृत्यु के बाद उसकी विधवा का सब प्रकार से अधिकार होना चाहिए। गुरुकुल-वृन्दावन की जयन्ती के अवसर पर आर्य महिला कान्फ्रेंस हुई थी। उसकी अध्यक्षा भी उर्मिलाजी ही थीं। उस कान्फ्रेंस में भी आपने स्त्रियों पर होने वाले कानूनी अत्याचारों के विरुद्ध जोरदार आवाज उठाई थी।

शिवरात्रि के अवसर पर एक बार उर्मिलाजी अपने पति धर्मेन्द्र जी के साथ अनूपशहर गईं। बुलन्दशहर जाने वाली सड़क बहुत ही खराब थी। उर्मिलाजी ने शास्त्री जी से इस बात की शिकायत की कि सरकार इस सड़क को सुधरवाती नहीं। शास्त्री जी ने हंसते हुए कहा—सरकार के पास स्वास्थ्य, शिक्षा, सड़कों के सुधार आदि के लिए काफी रुपया बचता ही नहीं जो वह इधर ध्यान दे—रुपयों का अधिकांश तो सेना के खर्च में ही लग जाता है। इस बात का उर्मिलाजी के हृदय पर गहरा असर पड़ा। उन्हें निश्चय हो गया था कि जब तक भारत में इस नीति की समर्थक सरकार मौजूद रहेगी, तब तक समाज-सुधार या धर्म-सुधार के कोई भी काम सफल नहीं हो सकते। पहले तो ऐसी सरकार के ही सुधार का प्रयत्न करना चाहिए। बस उसी समय से आपके कार्य की धारा दूसरी ओर—राजनीतिक कार्यों की ओर – मुड़ गई।

मेरठ में नौचन्दी का मेला जिस शान और ठाठ का होता है, वह सारे भारत में प्रसिद्ध है। दूर-दूर से लोग मेला देखने आते हैं और लाखों रुपयों का विलायती माल मेलों में बिकता है। इस मेले से प्रायः एक सप्ताह पहले मेरठ की महिलाओं की एक सभा हुई। उर्मिलाजी ने खादी के महत्व पर उसमें जोशीला व्याख्यान दिया और उपस्थित स्त्रियों से अपील की कि आगामी मेले में विलायती कपड़े पर पिकेटिंग होना चाहिए। उस समय तक भारत के किसी भी स्थान में विलायती कपड़े की पिकेटिंग प्रारम्भ नहीं हुई थी और न विलायती कपड़ों पर स्त्रियों को धरना देने की महात्माजी की आज्ञा ही निकली थी। बात की बात में ३० स्त्रियों ने वालंटियरों में अपने नाम लिखा लिए। उर्मिला जी ने इन महिला-स्वयंसेविकाओं को साथ ले नौचन्दी के मेले में विलायती कपड़ा बेचने वालों की दुकानों पर धरना प्रारम्भ कर दिया। चौदह-चौदह घन्टे तक पिकेटिंग हुई, सारा मेरठ शहर इन स्त्रियों के परिश्रम पर हैरान और आश्चर्य चकित रह गया। इस धरने का परिणाम भी आश्चर्यजनक हुआ, ८० फी सदी विलायती कपड़े की बिक्री उसी समय बन्द हो गई। इससे तो उर्मिला जी का नाम मेरठ में बच्चे-बच्चे की जबान पर हो गया था।

सारे हिन्दुस्तान में सबसे पहले मेरठ ही में एक अनुभवी नव-वयस्का देवी का साधारण समय में ऐसी असाधारणता का सफल परिचय देना उसकी मौलिक बुद्धि और उसके उज्ज्वल भविष्य का पता देता था। लोगों का खयाल था कि मेले में काम करने के कारण इन महिलाओं को कम-से-कम एक सप्ताह विश्राम करना आवश्यक होगा, पर यहां तो "राम काज कीन्हें बिना मोहि कहां विश्राम" की लगन थी।

नौचन्दी का मेला समाप्त होने के बाद ही महिला सत्याग्रह समिति का संगठन हुआ। उर्मिला जी सत्याग्रही दल की कैप्टन चुनी गईं और सात स्त्रियों की वार कौंसिल—सत्याग्रह समिति की कार्यकारिणी सभा बनाई। सबसे पहले मेरठ शहर में विलायती कपड़ा बेचने वालों पर धरना दिया गया। तीन-चार दिनों की पिकेटिंग का ही ऐसा सराहनीय प्रभाव पड़ा कि ६–७ दुकानदारों ने विलायती कपड़ा गठरियों में बांधकर रख दिया और उन पर कांग्रेस की मौहर लगवा ली। विलायती कपड़ा बिकना बन्द हो गया, यहां तक कि विलायती सूत का बना देशी कपड़ा भी मेरठ के बाजारों में मुश्किल से दिखाई पड़ता। जिन लोगों ने मेरठ महिला दल की इस जत्थेदार को अपनी ड्यूटी करते, विदेशी कपड़े की होलियां जलाते और मेरठ कपड़े बाजार में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त करते देखा, वह आश्चर्य से दांतों तले उंगली दबा गये, किन्तु इसके कुछ ही दिनों बाद पं० मोतीलाल जी की आज्ञा से पुनः धरना बैठाया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस बार सात मुसलमान दुकानदारों को छोड़कर शेष सभी ने अपने विदेशी और विदेशी तार के कपड़ा पर कांग्रेस की मुहर लगा कर उसे वर्ष भर के लिए ताले में बन्द करवा लिया था।

इस प्रकार मेरठ की महिलाओं ने विलायती कपड़े पर विजय प्राप्त कर विलायती माल के बहिष्कार का आन्दोलन भी अपने हाथ में लेकर चलाया। उसमें भी उर्मिला जी का नेतृत्व काम कर रहा था। महात्मा गांधी की गिरफ्तारी के उपलक्ष में ५ मई सन् १९३० को प्रातः काल प्रायः पांच बजे पौन मील लम्बा जलूस मेरठ में निकला। लोगों में उत्साह और जोश का समुद्र उमड़ रहा था। जलूस का मार्ग ४-५ मील लम्बा था, स्त्रियों की संख्या तीन हजार से कम न थी। उर्मिला जी जत्थेदार के रूप में बड़ी जिम्मेदारी से काम कर रहीं थीं। जलूस समाप्त होने पर जब सब स्त्रियां थक कर वापस लौटीं तो यह निश्चय हुआ कि आज का दिन उपवास और व्रत का पवित्र दिन है। अतः सारा दिन खादी तथा चरखे के प्रचार में बीतना चाहिए। उस दिन शहर भर में ३४ सभाएँ हुई, २२०० आदमियों से ६ घण्टे के भीतर खादी के प्रतिज्ञा-पत्रों पर हस्ताक्षर कराए गए। शहर का कोना-कोना गांधी जी के सन्देश से गूंज उठा। उस दिन शहर में जो विराट सार्वजनिक सभा हुई उसमें उर्मिला जी का बड़ा ही ओजस्वी भाषण हुआ।

शहर में कार्य करने के साथ-साथ उर्मिला जी शहर से बाहर के देहातों में जिले के कस्बों और गावों में तथा पड़ौस के दूसरे जिलों में भी जाकर काम करती थीं। इन्हीं दिनों मुजफ्फरनगर, देहरादून हरिद्वार के पास बहादुरपुर की बड़ी-बड़ी भारी सभाओं में शामिल हुई और जोरदार भाषण दिए। कभी-कभी तो आपको दिन भर में इतना अधिक बोलना पड़ता था कि गला बैठ जाता था, तब दवा के बल पर भी निरन्तर बोलती रहती थी।

उर्मिला जी का बढ़ता हुआ प्रभाव तथा कार्य सरकार की आंखों में खटक रहे थे। इसी समय कश्मीर से उनके पिता जी का बुलावा उर्मिला जी के लिए आया था। वे अपना सामान कश्मीर जाने के लिए तैयार भी कर रहीं थीं। उसी समय एकाएक १६ जौलाई १९३० को मेरठ जिले के प्रसिद्ध नेता पंडित प्यारेलाल शर्मा गिरफ्तार कर लिए गए। यह सुन कर उर्मिला जी के हृदय में खलबली मच गई। सत्याग्रह मार्ग की पथिक बहन उर्मिला काश्मीर यात्रा स्थगित कर कारागार की यातनाओं का आलिंगन करने के लिए स्वाधीनता पथ पर ही चलने को तैयार हो गईं।

शर्मा जी को गिरफ्तारी के उपलक्ष में बधाई देने के लिए दूसरे दिन १७ जुलाई को सन्ध्या समय बड़ी भारी सभा हुई। १० हजार की उपस्थित जनता में आपने अपना प्रभावशाली भाषण दिया। "कल का चमकता सूर्य न जाने किस-किस के लिए हथकड़ी लावेगा, यह काली रात न जाने किस-किस को समेट लेगी?"—इन अन्तिम शब्दों से आपने अपना ओजस्वी भाषण समाप्त किया।

रात में आपने भाषण दिया था और आपके कहे अनुसार वास्तव में सूर्य निकलने के पहले ही १८ जौलाई

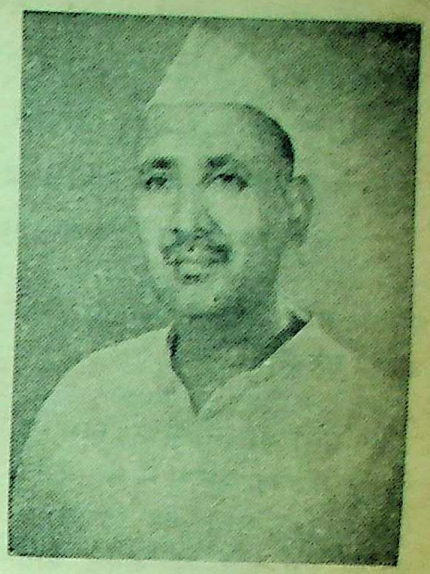

राष्ट्रीय साधक
श्री रामशरण विद्यार्थी

को प्रातःकाल पाँच बजे आप को गिरफ्तार करने के लिए पुलिस पहुंच गई। महात्मा गांधी की जय करती व प्रसन्न मन से हंसती हुई आप पुलिस की कार में बैठ कर जेल पहुँच गईं। गिरफ्तारी के दूसरे ही दिन १९ जुलाई को आप के मुकदमे का फैसला भी सुना दिया गया। पिकेटिंग आर्डिनेन्स में छः मास की सजा आप को दे दी गई।

श्रीमती उर्मिला देवी के हृदय में जैसा उत्कट देश प्रेम था, परमात्मा की कृपा से वक्तृत्वकला भी वैसी ही ओजमय थी। आप बड़ी भावुक वक्ता थीं, आपके चमत्कारिक भाषण बड़े हृदय स्पर्शी होते थे। एक बार मेरठ में वेश्याओं की एक सभा थी। आप उसमें डेढ़ घण्टे तक बोलती रहीं। वेश्याओं पर आपके भाषण का ऐसा प्रभाव पड़ा कि उनकी आँखों में आँसू बहने लगे। परिणाम यह हुआ कि वेश्याओं ने भविष्य में शराब न पीने और निरन्तर खद्दर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी नश्वर काया हमारे बीच भले ही अब न हो, पर उनके कृत्यों की महिमा और भावना का गौरव सदा ही हमें पुलकित-प्रेरित करता रहेगा ! त्याग, तपस्या और बलिदान का जो दीप उन्होंने स्वयं जलकर भी जलाया था, वही बाद में जन-जागरण की ऐसी जीवित-सी मशाल बन गया, जिसने एक नहीं, भारत की अनेक बहनों और भाइयों को राष्ट्रीय एवं सामाजिक जीवन की नई दिशा दी और उस पर निरन्तर चलने की प्रेरणा भी।

पहनने तथा चर्खा कातने की प्रतिज्ञा कर ली।

उर्मिला जी ने मेरठ नागरिक और राजनैतिक जीवन में एक क्रांति पैदा कर दी थी। वह बिजली के समान वेग गति से अथक कार्य करती थीं। साथ ही अपने मधुर और कोमल स्वभाव से सब को मोहित कर लेती थी। स्त्रियों और विद्यार्थियों में तो उनका विशेष प्रभाव था ही, साथ ही जन साधारण पर भी वे जादू का असर रखती थीं।

१९३७ के लगभग एक महिला दस्तकारी स्कूल मेरठ में कायम किया। उसके लिए अध्यापिकाओं के वेतन आदि का बोझ केवल अपने ऊपर लिया और जो कुछ बन सका, अपने घनिष्ठ साथियों से चन्दा किया। स्कूल ने थोड़े दिन के भीतर ही बहुत उन्नति की। सरकारी विभाग से दस्तकारी की परीक्षाएँ जारी हो गई और सरकारी सहायता भी मिलने लगी। १९४२ में उर्मिला जी के स्वर्गवास के बाद वह स्कूल उनके ही नाम पर उनके स्मारक के रूप में "उर्मिला दस्तकारी स्कूल" के नाम से कर दिया गया और यह स्कूल आज भी मेरठ में चल रहा है।

१९४१ के आरम्भ में गांधी जी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह की योजना देश के सामने रखी। जो लोग सबसे पहले व्यक्तिगत सत्याग्रह करते हुए जेलों में गए, उनमें मेरठ नगर में उर्मिला जी प्रमुख थीं। छोटे-छोटे अपने दोनों बच्चों को, जिनकी उम्र क्रमशः पांच वर्ष और तीन वर्ष की थी, घर पर अकेले छोड़कर जाते हुए मातृ-हृदय में जो वेदना हुई होगी, उसकी कल्पना की जा सकती है, परन्तु उन्होंने चेहरे पर शिकन न आने दी और हंसते-हंसते जेल चली गईं। ६ मास की सजा काटकर जब वे वापस आईं तो उनका स्वास्थ्य खराब हो रहा था, पर उन्होंने उसकी चिंता नहीं की और फिर काम में लग गईं। बीमारी की दशा में सार्वजनिक कामों में लग जाना बहुत ही घातक सिद्ध हुआ। कुछ दिन बाद ही डाक्टरों ने निदान करके कैंसर रोग बतलाया। प्रो० धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री उर्मिला जी को लेकर पटना चले गए। वहां आपरेशन बिना क्लोरोफार्म के हुआ और उर्मिला जी ने उफ तक नहीं की तो वह सर्जन तथा अस्पताल के दूसरे डाक्टर हैरान रह गए। अगले दिन वह यूरोपियन सर्जन अपनी पत्नी और बाल बच्चों के सहित वार्ड में उनसे मिलने आया और उन्हें उस आपरेशन का हाल तथा उर्मिला जी की राजनैतिक संघर्ष में और उनके जेल आदि की कथा बड़े उत्साह से सुनाई गई। इसके पश्चात उर्मिला जी को इलाज के लिए लाहौर ले जाया गया, जहां तक भी सम्भव था, सब प्रकार से इलाज किया गया, परन्तु सफलता न हुई और अन्ततः ६ जुलाई १९४२ के दिन लाहौर में उनका स्वर्गवास हो गया।

उनका हृदय कितना भावुक था, इस का परिचय उनके जीवन के अन्तिम क्षणों से मिलता है। अन्तिम दिनों में उन्होंने बार-बार इच्छा प्रकट की कि "मैं एक बार काश्मीर जाकर बरफ से ढकी हुई चोटियों को देखना चाहती हूं। कितना अच्छा हो कि मेरी खाट चिनार के वृक्षों के बीच डाल दी जाए। अच्छा, यदि यह सम्भव न हो तो मुझे हरिद्वार ही ले चलो, वहाँ हिमालय उन्मुक्त गङ्गा के एक बार दर्शन करना चाहती हूं।" आदि-आदि उनके उद्गार थे।

प्राकृतिक सौन्दर्य के दर्शन के लिए उन का हृदय मृत्यु की घड़ी में भी तरस रहा था। उर्मिला जी अपने छोटे से जीवन-काल में जब केवल ३३ वर्ष की युवती ही थी, देश-प्रेम की अदम्य अग्नि लिए चली गईं। वह देश-प्रेम केवल कर्तव्य समझ कर ही नहीं, अपितु भारत को "सौन्दर्य" मानकर भी करतीं थीं। वास्तव में उर्मिला जी आदर्श क्रांतिकारी देश-प्रेमिका के साथ-साथ ज्वलन्त त्याग, बलिदान और प्रेम की सुन्दर प्रतिमा थीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोकतान्त्रिक नेतृत्व का आधार

श्री जगजीवन राम

•

यहाँ पर नेतृत्व पर सिर्फ राजनैतिक अर्थ में विवेचन करने का है; यहाँ नेतृत्व से अर्थ केवल मात्र राजनैतिक नेता से है आध्यात्मिक या धार्मिक नेतृत्व से नहीं। आधुनिक युग में राजनीति का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो गया है और इसके प्रभाव की सीमा में सब कुछ समा जाता है—विशेषतः सब कुछ जिसका सम्बन्ध सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था से है, तथापि यहां पर सिर्फ राजनैतिक नेतृत्व का ही प्रसङ्ग है।

समाज के व्यवस्थित गठन के पूर्व से ही लोगों को नेतृत्व की आवश्यकता रही है। परित्राण के लिए, अभ्युत्थान के लिए। एक युग था जब नेतृत्व व्यक्तिगत धैर्य, शौर्य और प्रत्युत्पन्नमतित्व पर निर्भर करता था। लोग उसे अपना नेता अङ्गीकार कर लेते थे जिसकी व्यक्तिगत शूरता पर इतना भरोसा होता था कि सङ्कट के समय में वह उन्हें त्राण प्रदान कर सकेगा, उनके टोले को सुव्यवस्थित रख सकेगा और उनकी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति में उनका मार्गदर्शक एवं सहायक बन सकेगा। तब तक नेतृत्व को हथियाने का युग नहीं आया था, पर नेतृत्व का सेहरा बांध दिया जाता था उसके सर जो वीर होता था। वह लोकतन्त्र का युग नहीं था, पर था उससे मिलता-जुलता। फिर एकाधिपत्य का युग आया। वहां नेतृत्व वंशानुक्रम से उत्तराधिकार के रूप में ही मिल जाता था।

कुछ सामाजिक एवं शासनिक व्यवस्थायें ऐसी रही हैं, जिनमें नेतृत्व विकसित नहीं होता है, बल्कि समाज के ऊपर लादा जाता है। उत्तराधिकार, तिगड़मबाजी से प्राप्त किया हुआ नेतृत्व, सामन्तवाद, एकतंत्रवाद तानाशाही व्यवस्था के नेतृत्व जनता पर लदे हुए नेतृत्व ही समझे जाते हैं। कुछ नेतृत्व इनसे भिन्न भी होते हैं। ऐसा समझा जाता है कि लोकशाही में, प्रजातन्त्र में नेतृत्व का विकास होता है। प्रजातन्त्र में नेतृत्व जनता में से ही निखरता है, वह उनकी भावनाओं, आशाओं और आकांक्षाओं का प्रतीक हुआ करता है। तिकड़मबाजी आधुनिक राजनीति का एक अङ्ग समझा जाने लगा है। प्रजातांत्रिक प्रणाली को भी तिकड़मबाजी से अछूता नहीं रखा जा सका है। प्रजातन्त्र में भी तिकड़मबाजी से प्रजा के ऊपर नेतृत्व थोपा जा सकता है। ऐसे उदाहरणों का अभाव नहीं है। जहां इस प्रक्रिया से नेतृत्व बनता है वहां प्रजातन्त्र चन्द व्यक्तियों के हाथ का खिलौना बन जाता है और उसकी काया भले ही प्रजातन्त्र-सी आभासित होती रहे, उसकी आत्मा तानाशाही बन जाती है।

ये तो कुछ सिद्धान्त हैं जो नेतृत्व के अभ्युदय का निरूपण मात्र करते हैं। इसकी पृष्ठभूमि में भारतीय नेतृत्व का विश्लेषण किया जाय, तो इसे दो भागों में बांटा जा सकता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व का युग और स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त का युग। स्वतन्त्रता संग्राम के समय नेतृत्व में जिन गुणों की अनिवार्यता समझी जाती थी, आज के नेतृत्व में वह अनिवार्यता नहीं रही। स्वतन्त्रता के पूर्व हम उत्पीड़ित थे दासता से और दासता से उत्पन्न विविध यातनाओं से, निर्बलताओं, कुभावनाओं से। त्रसित थे इन सबसे। मुक्त होना चाहते थे स्वाधीनता के बन्धनों से। आकांक्षा करते थे एक सुन्दर भविष्य की। उस भविष्य की जिसमें रोग, शोक नहीं होगा, दुःख-दैन्य नहीं होगा, असमानता और अन्याय नहीं होगा। उस युग का नेतृत्व गया ऐसे हाथों में जो लोगों को इन त्रासों से त्राण दिलाने के लिए दीवाने थे, जिनका साहस और उत्साह अदम्य था, जो मातृ-भूमि की स्वतन्त्रता की वेदी पर सर्वस्व आहुति देने में तनिक भी सङ्कोच नहीं करते थे।

असहयोग और सविनय अवज्ञा के आन्दोलन लोगों को निडर बनाने के प्रथम चरण थे। उनके भीतर से त्रास की भावना को तिरोहित कर उसके स्थान पर शक्ति, साहस और विश्वास को स्थापित करना था। उसको बताया गया कि "स्वराज्य हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है।" हमारे अधिकार की ओर से हमारी दृष्टि न हटे, वह हमारा केन्द्र-बिन्दु रहे, इसके लिए सतत प्रयत्न की आवश्यकता थी। लोग तो उस युग में इतने आंतरिक रहते थे कि अपने जन्मसिद्ध अधिकार के उल्लेख मात्र का भी साहस नहीं कर पाते थे, पर महात्मा गांधी ने एक जादू फूंका। उनके सहयोगियों ने उनके मिशन को आगे बढ़ाया। फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या था, भारत के माटी के मूरतों में जोश आया। विस्मय विमुग्ध विश्व ने देखा एक जाग्रत, अनुप्राणित, उद्धत, उद्वेलित भारतीय राष्ट्र-भय से मुक्त, शंका से रहित, अटल विश्वास लिए अपने स्वर्णिम भविष्य में। महात्मा गांधी ने स्वतन्त्रता-संग्राम के लिए अहिंसा का अस्त्र प्रदान किया था, पर उन्होंने भी कभी इसमें द्विविधा को स्थान नहीं दिया कि हिंसा भी भीरुता से श्रेयस्कर है। स्वाभाविक था कि उस समय का नेतृत्व निर्भयता से पूर्ण त्याग, तपस्या से ओतप्रोत और पद लोलुपता से रहित होता। हुआ भी वैसा ही था। पराधीनता का भय अधिक था, आशा की किरणें क्षीण थीं। इसलिए निर्भयता और त्याग ही नेतृत्व के निर्णायक कसौटी थे।

स्वतन्त्रता के बाद के युग का प्रभात नई भावनाओं, नई आशाओं, नई उमङ्गों और उज्ज्वल भविष्य का संदेश लेकर आया। भय तिरोहित हुआ और पदार्पण हुआ निर्भयता का। भारतीय जनता ने देखा कि उनके भाग्य के विधाता वे ही लोग बने जो उनके दुःख-सुख के साथी बनने वाले प्रतीत होते रहे थे।

ये नये शासक उनके अपने ही थे, उनमें विजातीयता के उद्रेक की भी आशङ्का नहीं थी और आखिर भारतीय जनता के चयन किये हुए प्रतिनिधि भी तो थे। यह क्या कम महत्व की बात थी कि बुभुक्षित भिखारी अपने गांव या क्षेत्र के प्रभावशाली लक्ष्मीपति के समकक्ष अपना प्रतिनिधि निर्वाचित करने के अधिकार से विभूषित हो चुका था। इन सब क्रांतिकारी परिवर्तनों ने जन-मानस को पूर्ण रूप से आश्वस्त कर दिया और न मालूम कितनी आशायें, आकांक्षायें, सुखद सपने उन मानस पर उड़ान भरने लगे। अविद्या और अज्ञान के अन्धकार के कारण उनकी दृष्टि सम्यक् थी कहां जो वे वस्तु-स्थिति का निदर्शन कर पाते। अतः उनकी अभिलाषाओं को परिधि के भीतर रखना सम्भव हो ही नहीं सकता था।

कहने का तात्पर्य यह है कि ऐसी स्थिति में नेतृत्व के आचरण में परिवर्तन अनिवार्य-सा दीखने लगा। अब नेतृत्व का आधार बना जनता का भय नहीं, बल्कि उनके सुखद सपने। जनता ने स्वतन्त्रता संग्राम के नेतृत्व में अपना विश्वास विचलित नहीं होने दिया। कारण भी था, विषम परिस्थितियों से देश को स्वतन्त्र कराने का श्रेय भी तो इसी नेतृत्व को था। देश की स्वतन्त्रता की उपलब्धि-अहिंसा के मार्ग से हुई थी जो विश्व के इतिहास में एक अभिनव प्रयोग था। क्रांति और शांति की उपलब्धियों में बड़ा अन्तर होता है। क्रांति की उपलब्धियों के सहचर होते हैं नवीन सृजन; शान्ति की उपलब्धियों के सहचर होते हैं सुधार, सुधार तब कहीं नया सृजन।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद सुधार और सृजन का युग आरम्भ हुआ। शोषित भारत के बुभुक्षितों को क्षुधा की ज्वाला हुँकार रही थी—आज भी हुंकार रही है। वेहद्दी सामाजिक और आर्थिक परम्परा की शृंखला में जकड़ा साधारण नागरिक चीत्कार कर रहा था—आज भी चीत्कार कर रहा है। मांग रहा था समता और न्याय का अपना जन्मसिद्ध अधिकार; मानव की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति का अवसर। स्वतन्त्र भारत के नेतृत्व के लिए यह महान चुनौती था। नेतृत्व ने इस चुनौती को स्वीकार किया।

जवाहरलाल नेहरू स्वतन्त्रता संग्राम के अद्वितीय योद्धा थे और थे भारत की कोटि-कोटि जनता के हृदय के सम्राट। महात्मा गांधी के कतिपय अद्भुत गुणों को उन्होंने अपनाया था। भारतीय जनता के साथ एकरूपता स्थापित कर लेना उनका विलक्षण गुण था। उन्होंने देश को आह्वान किया, लड़ने को एक महान लड़ाई जो विश्व में अद्वितीय होगी—एक महान सामाजिक आर्थिक क्रांति के लिए, जिसमें मिटाई जा सके देश की दीनता, बुभुक्षा, वैषम्य और अन्याय। उन्होंने नारा दिया "समाजवाद" का, "लोकतांत्रिक समाजवाद" का।

स्वतन्त्रता संग्राम का नेतृत्व विदेशी सरकार को निष्कासित करने के आधार पर बना था। सामाजिक-आर्थिक प्रश्नों पर नेतृत्व एक मन-प्राण नहीं था। परस्पर विरोधी मान्यताओं में विश्वास करने वाला था यह नेतृत्व। फलस्वरूप समाजवाद की ओर इसका चरण मंथर गति से ही अग्रसर होता रहा, पर जवाहरलाल के व्यक्तित्व ने इस नेतृत्व के प्रति जनमानस को अधिकांशतः सन्तुलित ही रखा।

प्रश्न ऐसा उठता रहता है—क्या नेतृत्व ने जनता की आशाओं की उपेक्षा की। क्या जनता नेतृत्व के प्रति उदासीन है? क्या अन्तरिक्ष से नेतृत्व के प्रति सङ्कट के बादल उठते हुए दृष्टिगोचर होने लगे हैं? इन प्रश्नों के उत्तर भिन्न-भिन्न लोगों द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार के दिये जायेंगे, भिन्न-भिन्न कारणों से।

स्वतन्त्रता संग्राम के समय नेतृत्व का आधार स्वाभाविक रूप से था सत्ता से संघर्ष, त्याग, कष्ट-सहिष्णुता, पारस्परिक प्रेम और सौहार्द्र। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद नेतृत्व के कन्धे पर सरकार का, शासन का उत्तरदायित्व आ पड़ा। सत्ता उसके हाथ आई। स्वतन्त्रता संग्राम के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभी सैनिक सत्ता पर समान रूप से अधिकार पा नहीं सकते थे। फिर सत्तारूढ़ होने वाली राजनीति बननी ही थी, बनने लगी। राजनीति जब सत्ता हथियाने वाली बनती है तो दल, गुट, जमात बनने लगते हैं, बनने लगे। आदर्श के आधार पर कम और व्यक्ति पूजा के आधार पर अधिक। फलतः राजनीति के क्षेत्र में दरार उमड़ने लगी। सत्ता हथियाने के उद्देश्य से मतभेदों को बढ़ाने वाले भी आगे आये। गर्हित आलोचना, समालोचना, सत्ता राजनीति के अङ्ग बनने लगीं। ये आलोचनायें सौजन्य की परिधि का उल्लंघन करने लगीं। जनता नेतृत्व के आचरणों और व्यवहारों के प्रति अधिक जागरूक होने लगी।

ऐसा प्रश्न भी उठता है कि वर्तमान युग में आदर्श और सिद्धान्त का महत्व है या व्यक्ति का। लोकतांत्रिक प्रणाली में दोनों का महत्व है। जहां सही अर्थ में लोकतांत्रिक प्रणाली का मूल दृढ़ होगया होता है वहां आदर्शहीन, सिद्धान्तहीन व्यक्ति को कोई प्रश्रय मिल नहीं पाता। लोकतांत्रिक व्यवस्था में व्यक्तित्व का विकास सिद्धान्त और आदर्श से अभिसिंचित हो कर ही होता है। सिद्धान्तों और आदर्शों को व्यक्तिगत जीवन में उतार करके। प्रजातन्त्र में जनता के विश्वास के साथ अधिक दिनों तक खिलवाड़ करने का अवसर मिलना सम्भव नहीं होता है। अतः विकसित प्रजातन्त्र में व्यक्तिवाद के लिए गुञ्जायश नहीं होती। प्रजातन्त्र में तो सही नेतृत्व उसी का दामन पकड़ता है जो जनता के साथ एकरूपता स्थापित कर सकता है, जो जन-मानस को प्रभावित और उद्वेलित कर सकता है, जो उनकी आशाओं और आकांक्षाओं का प्रतीक बन जाता है। जिस दिन देश के करोड़ों अशिक्षित, अर्धशिक्षित, शोषित, दलित, तथाकथित पिछड़े हुए लोग जाति और धर्म के विषैले विभेदों से मुक्त होकर लोकशाही की शक्ति और सत्ता को परख लेंगे, उस दिन तिकड़मबाजी से उनका नेता बनने की धृष्टता कोई नहीं कर पावेगा, क्योंकि तब वे अधिकार की रक्षा अपने मन-प्राण से करेंगे और नेतृत्व उसी के हाथ सुपुर्द करेंगे जिसे वे अपना सबसे बड़ा हिमायती और हितचिंतक समझेंगे। इसलिए आज इस बात की सबसे अधिक आवश्यकता है कि लोकतांत्रिक प्रणाली को दृढ़ बनाया जाए।

लोकतंत्र में नेतृत्व किसी वर्ग, वर्ण या व्यक्तियों के गुट की बपौती नहीं हुआ करता। अपने कर्तव्यों और अधिकारों के प्रति जनता की सतत जागरूकता ही अवांछनीय और अनिष्टकारी प्रवृत्तियों से लोकतंत्र की रक्षा कर सकती है। यह तभी संभव है जब जनता को उनके अधिकार और दायित्व का सम्यक् ज्ञान कराया जाय और उन्हें उनके प्रति सतर्क रखा जाय। लोकतंत्र की जड़ को मजबूत करने के लिए शिक्षा, समृद्धि और सुरक्षा अनिवार्य है। नागरिक स्वतंत्रता और समानता की वायु में लोकतंत्र का वृक्ष बढ़ता है। उन सभी परम्पराओं का अन्त जो व्यक्ति की स्वतंत्रता को अवरुद्ध करती हैं और विषमता को प्रश्रय देती हैं, लोकतन्त्र को दृढ़ बनाता है। इन उपादानों से लोकतंत्र जब दृढ़ और चैतन्य बन जाता है तब नेतृत्व के अनुभवहीन, अवांछनीय या सत्ता लोलुप हाथों में जाने की आशंका नहीं रहती है।

चैतन्य लोक तन्त्र में नेतृत्व की आवश्यकता आदेश देने के लिए नहीं, अनुरोध करने के लिये होती है। नेता अनुरोध करता है, शासक आदेश देता है। अनुरोध उसी नेतृत्व का कारगर होता है जो तिकड़मबाजी से नेतृत्व को नहीं हथिया बैठा है बल्कि जिसे जनता ने अपना प्रेम और विश्वास देकर अपना अगुआ बनाया है। लोकतंत्र में जब तिकड़मबाज व्यक्ति या गुट नायकत्व पर कब्जा करता है तो लोकतांत्रिक प्रणाली के लिए खतरा पैदा होता है; तानाशाही के पनपने की आशंका होती है।

लोकतंत्र में आलोचना का महत्वपूर्ण स्थान है। सत्तारूढ़ दल को अपने कर्तव्य पथ से विचलित होने से रोकने का काम विरोधी दल का होता है—समालोचना द्वारा—विरोध द्वारा। आलोचना या विरोध सृजनात्मक ही होना चाहिए। विरोध जितना लोकतांत्रिक प्रणाली के लिए हितकर है चाटुकारिता उतना ही उनके लिए अनिष्टकर है। लोकतंत्र के लिए वह दुर्दिन समझना चाहिए जब सत्तारूढ़ दल के लोग, विरोधी दल के लोग या कोई भी नागरिक भय से या दबाव से अपने हृदय के भावों को व्यक्त करने में घबड़ाने लगे। वैसी हालत में भी तानाशाही के खतरे की आशंका होने लगती है।

लोकतंत्र में नेतृत्व के निर्णय का आधार जनतांत्रिक प्रणाली से उनके द्वारा जिनको जनता ने वैसी सामर्थ्य प्रदान की है निर्वाचित करना ही है, जिसमें जनता को यह आश्वस्ति मिल सके कि नेतृत्व उनके विश्वास और प्रेम का अधिकारी है। जहां नेतृत्व के निर्णय में जनतांत्रिक प्रणाली की अपेक्षा की जाती है वहां नेतृत्व के प्रति जनता में आदर और सम्मान के अभाव का दृष्टिगोचर होना स्वाभाविक है यह भी लोकतंत्र के लिए हितकर नहीं। ◇

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर्दों के आदर्श ही नई पीढ़ी के निर्माता

— युगसन्त श्री विनोबा भावे —

आखिर भारत को किसने बनाया ? देखिये, इतिहास में बड़े-बड़े चमत्कार देखने को मिलते हैं। आजकल इतिहास कितना रद्दी लिखा जाता है ! कहते हैं, 'अकबर के राज्य में तुलसीदास हुए।' अब इसे क्या कहा जाए ? अकबर के राज्य में तुलसीदास हुए या तुलसीदास के राज्य में अकबर ? गौतम बुद्ध के बाद उत्तर हिन्दुस्तान में तुलसीदास जैसा महान् पुरुष हुआ ही नहीं। उसने घर-घर में प्रवेश किया। सारा हिन्दुस्तान डाँवाडोल हो गया था। उसे तुलसीदास की रामायण ने बचाया। इतना महान् कार्य उन्होंने किया। इसलिए अकबर के राज्य में तुलसीदास हुए, यह कहना ठीक नहीं है। अकबर भी एक अच्छा राजा हुआ। उसने राज्य व्यवस्थित चलाने और प्रजा को सुखी रखने के लिए विशेष प्रयत्न किया, किन्तु तुलसी दास जी उसके राज्य का क्या वर्णन करते हैं ? वे लिखते हैं कि "लोक-मर्यादा टूट रही है और दुनिया त्रिताप से दग्ध होती जा रही है। प्रजा 'पाखण्डरत' हो गई है। अपने-अपने रङ्ग में रङ्गी है। इसलिए भगवन्, आपको अवतार ग्रहण करना होगा।" यानी अकबर का राज्य अच्छा था, फिर भी 'नैतिक मूल्य' नष्ट होते जा रहे थे।

आखिर 'अच्छे राजा' के मानी क्या है ? किसी किसान के राज्य में बैल सुखी था, लेकिन था वह बैल ही न ? किसान उससे सलाह-मशविरा तो करता न था। खेत में क्या बोया जाय, इसका निर्णय वह स्वयं ही करता, फिर बैल को बुलाता कि 'वृषभराज ! चलिये काम करने ! फिर भी बैल खुश था। किसान उसे भरपेट भोजन देता। उसी के विपरीत एक दूसरा किसान था, जो बैल को भरपेट खाने को नहीं देता था। इसलिए उस बैल की दृष्टि से यह बैल सुखी था, बात इतनी ही है। वैसे ही अकबर और अन्य राजा लोग भी थे। उनके नामों का पाठ मैं करना नहीं चाहता। आवश्यकता ही क्या है कि उनके नाम लेकर उन्हें अमर बना दिया जाय ? उनके राज्य में प्रजा बैल थी। इस तरह 'अकबर का राज्य अच्छा था' इसके मानी यही हुआ कि अन्य राजाओं के राज्य की अपेक्षा अकबर के राज्य में प्रजा विशेष सुखी थी और कुछ नहीं। वैसे नैतिक दृष्टि से उस समय प्रजा अधःपतित हो गई थी, यह शिकायत तुलसीदास जी करते और कहते हैं कि "राम का अवतार हो रहा है। वह विजयी अवतार है। जगत् में अब विजय होगी।" आश्चर्य है कि हिन्दुस्तान के कम-से-कम १५-२० करोड़ लोग जिससे प्रभावित हैं, उसे आज के इतिहासकार कहते हैं कि वह अकबर के राज्य में हुआ।

तुलसी दास जी की बात छोड़िये। वे महान् ही थे, लेकिन अकबर भी बहुत बड़ा बादशाह था। मुसलमानों की दृष्टि से तो वह और भी बड़ा था, लेकिन मुसलमान उसके बारे में कितना जानते हैं, यह देखिए। बात सन १९४७ की है। मैं मेव लोगों के बीच पुनर्वासन का कार्य कर रहा था। दिल्ली से ३०-४० मील पर एक शहर है नूह। मैं वहाँ पहुँचा और एक सभा में बोल रहा था। श्रोता सभी मुसलमान ही थे। भाषण में उदाहरण देने के लिए मैंने उनसे पूछा : "क्या आप लोगों ने अकबर बादशाह का नाम सुना है ?" उन्होंने कहा : 'नहीं।' मैंने फिर पूछा : "सिर्फ अकबर नाम भी सुना है या नहीं ?" बोले : "हाँ, सुना है, अल्ला हो अकबर !" अरबी में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माना कि श्रेष्ठ कार्य करने में मेहनत पड़ती है। मेहनत शीघ्र समाप्त हो जाती है, परन्तु कीर्ति सदा अमर रहती है; जबकि नीच काम में, चाहे उसके करने में आनन्द भी मिलता हो, आनन्द शीघ्र समाप्त हो जाता है, लेकिन दुष्कर्म का कलंक हमेशा लगा रहता है।

—जॉन स्टुअर्ट

'अकबर' के मानी है श्रेष्ठतम। 'अल्ला श्रेष्ठतम है' इतना वे जानते थे, बाकी बादशाह वगैरह कुछ नहीं जानते थे। मतलब यह कि दिल्ली से ३०-४० मील पर अकबर बादशाह के बारे में कोई जानकारी नहीं, यह हाल है पर लोग 'कबीर' कहने पर जानते हैं, 'तुलसीदास' कहने पर जानते हैं। लोगों को इतनी अक्ल है कि किसका नाम याद रखा जाय और किसका भुला दिया जाए।

कहने का सारांश यह कि भारत को आचार्यों ने बनाया। शङ्कराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य निम्बकाचार्य, वल्लभाचार्य, विष्णुस्वामी और उनकी परम्परा में हुए साधु-सन्त, ज्ञानेश्वर, तुकाराम, रामदास, नामदेव, तुलसीदास, कबीर, नानक आदि असंख्य नाम हैं! इन सत्पुरुषों की अखण्ड वर्षा ही होती रही है हमारे भारत देश पर!

मैं बंगाल में घूम रहा था तो पूरे बंगाल में एक ही नाम सुना 'चैतन्य महाप्रभु' का। वहाँ अनेक राजा हुए, राज्य क्रान्तियाँ अनेक हुईं। कितने ही आये और कितने ही गये। कौन पूछता है उन्हें? पर ज्ञानदेव महाराज को लीजिए! कितने गुण गाये जायँ उनके? उन्हें ज्ञानी कहें या योगी? भक्त कहें या साहित्यकार? कवि कहें या भाष्यकार या धर्माचार्य? क्या कहा जाय? वे महान् थे, किंतु ज्ञानेश्वरी में वे कितने लीन और नम्र होगए। ज्ञानेश्वर ने ज्ञानेश्वरी किस तरह लिखी? तो कहते हैं कि भाष्यकार शंकराचार्य को पूछ-पूछ कर लिखी!

और शंकराचार्य! भारत भ्रमण करने पैदल निकल पड़े—केरल से कश्मीर तक! मैं श्रीनगर गया था। यों ही वह २७०४ मीटर ऊंचाई पर बसा है। फिर वहां शंकर पहाड़ और भी एक हजार फुट ऊँचा है। मैं वहाँ पहुंचा था। उस पहाड़ पर शंकराचार्य ने समाधि लगाई थी, ऐसा वहाँ के मुसलमान हमें याद दिला रहे थे। फिर मैं असम गया। वहाँ कामाख्या देवी का मन्दिर है। वहाँ वालों ने भी मुझे बताया कि शंकराचार्य वहाँ आये थे और वहाँ के विद्वानों से चर्चा की थी। कहाँ असम, कहाँ कश्मीर और कहाँ केरल! ऐसे ही आचार्यों ने भारत को बनाया है।

कुछ लोग कहते हैं कि अंग्रेजों ने भारत को एकता बनाई, लेकिन यदि अंग्रेजों को एकता बनाने की अक्ल होती तो वे बर्मा को भारत से अलग न करते, लंका को भारत से पृथक न करते और हिन्दुस्तान तथा पाकिस्तान के रूप में देश को दो भागों में बँटने न देते।

सारांश, हमारे देश में प्राचीन काल से आज तक आचार्यों की परम्परा चालू है। हमारा देश उन्होंने बनाया, जनता उन्होंने बनायी, नैतिक मूल्य उन्होंने टिकाये। हमें वेद के बारे में आदर है। उसमें वे कहते हैं: 'येना नः पूर्वेपितरः परज्ञाः'—हमारे पूर्वज परज्ञ थे, उन्हें अनुभव था। ऐसे कितने ही प्राचीन परज्ञ, ब्रह्मवेत्ता पूर्वज हो गये हैं। उनके नाम तो नहीं गिनाते, पर हो गये, यह अवश्य कहते हैं।

मैं कहना यह चाहता हूँ कि आप लोगों ने उन्हीं का नाम धारण किया है। कोई आप से पूछे कि अपने पूर्वजों का नाम बताइये, आप विष्णु शास्त्री का पिता कृष्ण शास्त्री ऐसा मत बताइए। मूल ब्रह्मदेव से ही प्रारम्भ कीजिये। हम ब्रह्मदेव, वशिष्ठ, बादरायण, शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, कबीर, नानक, ज्ञानदेव, तुकाराम, रवीन्द्रनाथ, गांधी अरविन्द के वंशज हैं ऐसा बताइए। तब आपको पता चलेगा कि स्वराज्य के बाद आपका क्या 'फंक्शन' है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बुराइयों के प्रति हमारे देश में एक वृत्ति है, जिसे कहते हैं—'अजी सब चलता है'—'बस, यों ही सब चलता है।' नैतिकता का निर्माण करने वाले भी जब स्वयं कसौटी पर कसे जाते हैं, तो अपने स्थान से हिल जाते हैं और गलत काम भी कर लेते हैं—मन को समझा कर कि 'अजी, सब चलता है—बस, यों ही सब चलता है।'

वृत्ति के इस विपरीत प्रवाह में भी कुछ लोग होते हैं जो सद्वृत्तियों का ही बीजारोपण करने का प्रयास करते हैं, भले ही उनका यह प्रयास सरिता की विपरीत दिशा में नौका चलाना हो! उन्हीं में तो हैं प्राध्यापक श्री कृष्णचन्द्र, जो योग्यता एव निष्ठा के साथ अध्यापन कार्य ही नहीं कर रहे हैं, अध्यापन के माध्यम से नई पीढ़ी को नए ढाँचे में ढालने के लिए सदा तत्पर हैं; उत्सुक हैं, प्रयत्नशील हैं!

मामूली बात भी गैर मामूली बन जाती है, जब वे कोरे कागज पर अपनी कलम रख देते हैं। लीजिए, उसी कलम का एक नमूना कृष्णचन्द्र जी के इस लेख में यहाँ प्रस्तुत है!

बेबात की बात :: पर बात में बात

— प्राध्यापक श्री कृष्णचन्द्र —

मित्र आते ही बोल पड़े, "कुछ नहीं यार! अजीब तमाशा है।"

मैंने पूछा—"क्या हुआ? खैरियत तो है?"

बोले—"हुआ क्या? हर आदमी स्वार्थ में इतना अन्धा होगया है, उसे कुछ सूझता ही नहीं।"

मैंने मजा लेते हुए कहा, "सूझता कैसे नहीं? किस काम को करने से कौन-सा काम हो सकता है, अगर यह इच्छा है तो उसकी पूर्ति किस प्रकार ऐसे ढङ्ग से हो कि किसी को मालूम भी न पड़े और काम भी हो जाए, यह सब जोड़-तोड़ क्या बुद्धू कर सकता है? और आप कहते हैं कि उसे कुछ सूझता ही नहीं।"

वे बरस पड़े, मेरी 'टोन' को न समझ कर—"तुम भी यार बहक जाते हो। बात पूरी सुनी नहीं कि लेक्चर झाड़ना शुरू कर दिया। मेरा मतलब यह था कि स्वार्थ के अतिरिक्त कुछ सूझता ही नहीं।"

मैंने बात को चलाने के लिए कहा, "अच्छा! यह बताओ कि हुआ क्या?"

बोले—"कुछ नहीं, सिनहा से बातें होरही थीं। कहने लगा कि दुनिया में रहकर दुनिया के ही रास्ते से चलना चाहिए और चलना पड़ता भी है।"

मैंने कहा—"तो?"

मित्र ने सिनहा की बात चालू रखते हुए कहा—"और जो नहीं चलते, उन्हें दुनिया घास नहीं डालती।"

बात को पूरी सुनने की नीयत से मैं बोला—"अच्छा फिर·····"। मित्र ने कहा, तो कहने लगे सिनहा, "अब तुम ही देखो अपने को! 'मॉरलिटी' के चक्कर में कहीं भी नहीं पहुंच पाए और देखो वह क्या था एक मामूली स्कूल मास्टर ही तो, आज प्रिंसिपल बना बैठा है।"

मैंने कहा—ठीक तो है यह सब बनने के लिये तो 'गट्स' और 'पुश' चाहिए ही, तुम्हें क्या परेशानी है इसमें?"

मित्र बोले, 'मुझे क्या परेशानी होती? लेकिन यह कहना कि जो यह सब नहीं कर पाते 'मारलिटी' के चक्कर में पड़े रहते हैं और सड़ते रहते हैं।"

मैंने कहा, "ठीक तो है।"

बोले, 'क्या ठीक है? दस जगह दुम हिलाने और बीस जगह दुत्कारे जाने पर यदि एकाध जगह टुकड़ा पड़ भी गया, गिड़गिड़ाहट को देखकर या तरस खाकर तो इसका मतलब यह कि उन्नत हो गये! जगह-जगह घूम कर विष्टा खाने वाला सूअर भूखे सुकरात से ऊपर चढ़ गया?"

इस बार मैं चुप रहा। मुझे इस तर्क से सन्तुष्ट होते देख बोले, "अब तुम ही बताओ!"

मैंने कहा, "अच्छा बाबा! आखिर बात हुई क्या?"

सिनहा और अपने बीच हुई बात को उन्होंने 'रिप्रोड्यूस' (फिर से कहते हुए) करते हुए कहा।

सिनहा बोले, "आप—मेरे यह मित्र—मारलिस्ट बनते हैं।"

मैंने कहा, "तो इसमें क्या बुरी बात कह दी उन्होंने?"

मित्र बोले, "जानते हो क्यों 'मॉरलिस्ट' कहा उन्होंने?"

मैं बोला, "नहीं तो, बताओ जरा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोले, "सिनहा सिफारिश लेकर आये थे कि उनके बच्चे को मैं 'हाईएस्ट मार्क्स' दे दूँ। कापियाँ मैं देख चुका था। मैंने कहा कि यह नहीं हो सकता।"

सिनहा बोले, "क्यों, क्या बात है?"

मित्र ने कहा, "जो निर्णय एक बार ले लिया, ले लिया गया।"

बोले—"परिवर्तन हो तो सकता है पुनर्विचार करके।"

मित्र ने कहा, "नहीं, अब नहीं, और इस नीयत से तो एक दम नहीं कि इसको 'हाईएस्ट मार्क्स' देने हैं। तब वे चट से बोल पड़े—बड़े मॉरलिस्ट बनते हो।"

मित्र का रोष बढ़ गया, "अच्छा अब मैं मॉरलिस्ट हो गया? जब तुम्हारे लड़के को दो महीने फ्री पढ़ाया तब मारलिस्ट नहीं था और आज क्योंकि मैं तुम्हारे लड़के के मार्क्स नहीं बढ़ा रहा हूँ तो मारलिस्ट होगया।"

थोड़ा देर सिनहा इस तर्क से अप्रतिभ हो गये? कुछ देर बाद बोले, "दुनिया में ऐसे काम चलता नहीं है।"

मित्र फिर टूट पड़े ऊपर, "कैसे? इस प्रकार कि आठ विद्यार्थियों के साथ अन्याय करके मैं तुम्हारे लड़के को सबसे अधिक अङ्क दे दूँ। इसलिए कि उनकी कोई सिफारिश नहीं है और तुम हरेक अध्यापक के पास जा कर यह व्यावहारिकता और दुनिया में रहने का नुस्खा पढ़ा कर, अङ्क बढ़वाने के लिए दौड़ते फिरते हो? यदि मैं अन्याय नहीं करता, यदि मैं किसी को उचित अङ्क देता हूँ तो मैं 'मारलिस्ट' हूँ?"

सिनहा से कोई उत्तर इस बात का नहीं बन पड़ा, मित्र कहते चले गये, "मैं मारलिस्ट हूँ यह सौभाग्य तो मुझे प्राप्त नहीं हुआ। हाँ, यह सब मैं नहीं कर पाता, क्योंकि करना नहीं चाहता। जब तुम्हारे बच्चे को दो महीने मैंने फ्री पढ़ाया था, तब मैं दुनियादार हो गया था। क्यों?"

सिनहा के पास कोई जवाब नहीं इसका।

मित्र कहते ही जा रहे थे, "जिस मित्रता या मानवता के वशीभूत होकर मैंने उसे पढ़ाया था, उसी मानवता के एक अंश न्याय के वशीभूत होकर मैं यह नहीं कर सकता। अब तुम जिसे मॉरलिटी कह रहे हो, वह तब भी थी और आज तो तुम्हें दिखाई पड़ ही रही है। अन्तर केवल इतना ही है कि उस समय यह तुम्हारे पक्ष में थी, इसलिये तुम्हें हर्ष हुआ था और आज यह विपक्ष में पड़ रही है तुम इसे इसलिए कोस रहे हो। संयोग से यदि तुम्हारा काम निकल जाए तो ठीक, वरना मैं 'मारलिस्ट'! क्या अच्छी कसौटी है तुम्हारी?"

मैं यह सब सुन रहा था। मैंने कहा, "आपने तो उसे तर्क के द्वारा धराशायी कर दिया, फिर क्या मलाल रह गया?"

मित्र का आक्रोश अभी शेष था। बोले, "मलाल का सवाल नहीं, सवाल दृष्टिकोण का है।"

मैंने पूछा, "कैसे?"

बोले, "जब मैं तुम्हारे साथ संस्था के काम से बाहर जाता हूँ और अनापशनाप फिजूलखर्ची करने के लिये अपनी अनिच्छा प्रकट करता हूं, झूठे सच्चे बिल बना कर पैसा ऐंठने की बात का विरोध करता हूं तब तो तुम मुझे किसी और कड़वी गाली के अभाव में 'मारलिस्ट' कह कर कुढ़ते हो। जब तुम्हारे किसी काम के लिए बाहर जाता हूं और ठीक प्रकार तथा कम से कम खर्च करता हूँ तब तुम्हें प्रसन्नता होती है। तुम सबसे कहते फिरते हो—भई, आदमी बहुत भला है, दोस्ती निभाना जानता है। ये दुहरे मूल्य क्यों हैं? क्या ये सिद्ध नहीं करते कि हमारे लिए दूसरे के चरित्र की कसौटी हमारे अपने स्वार्थ-उचित और अनुचित स्वार्थ होते हैं, जिनके पूरे होने पर कोई भी आदमी भला और ठीक, और न होने पर 'मारलिस्ट' आदर्शवादी। आखिर यह सब क्या है?"

मैंने कहा—"आप की बात बिलकुल ठीक है, लेकिन दुनिया तो यही चाहती है।"

मित्र का आक्रोश फिर जागा, "दुनिया का नाम क्यों लेते हो?"

मैंने कहा, "और किसका लें? क्या दुनिया यह नहीं चाहती है?" मित्र ने समझाया, "नहीं। दुनिया नहीं, भाई मेरे। केवल वह या वे व्यक्ति जो स्वार्थ में अन्धे हैं। अच्छा देखो। तुम्हारे भाई की भी कापी है उसी कक्षा में और सिन्हा के लड़के की भी। अब यदि सिन्हा का 'ख्याल' रखते हुए मैं उसके लड़के को अधिक अङ्क दे दूँ, जबकि कापी इतने अङ्क नहीं मांगती, तब ऐसी स्थिति में, ठीक है, मैं सिन्हा का भला कर दूँगा, लेकिन तुम्हारे भाई का क्या होगा? न केवल बुरा ही, अपितु अन्याय भी। तो इस संकट के समय में जो विवेक मुझे संतुलित रखता है उस पर लांछन कैसे सहन कर लूँ।

इस निष्ठा से मैं भी प्रभावित हुआ। मैंने कहा, "हाँ! बात तो ठीक है।

मित्र फिर बोले, 'और सुनो। प्रायः हम कहते हैं—अजी हटाइये, क्यों सर खपायें? कौन है जो अपना काम ईमानदारी से कर रहा है?" मैं कहता हूँ, ठीक है, लेकिन जरा एक और पहलू देखिये। घर में मरीज मरणासन्न है। डाक्टर को बुलाने जाते हैं। वह नहीं आता यह सोचकर—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हटाओ यार ! कौन जाये रात के दो बजे। यहाँ तो रोज ही एक न एक·····। आपको मना करा देता है कि बाहर गये हुये हैं। जब सत्य मालूम पड़ेगा तो कितना रोष आयेगा आपको ? और उसकी यह लापरवाही कितनी महंगी पड़ेगी ? या वह लोभ में फंसकर आपके घर के बर्तन भांडे बिकवाने का हिसाब कर दे तो क्या आप तब भी यह कह कर ही टाल देंगे कि चलो कौन काम करता है ईमानदारी से, जो उसीको हम कोसें ? मैं कहता हूँ तब आप यह नहीं सोच सकेंगे। जब आप दूध में पानी मिला हुआ पकड़ लेते हैं और गाली गलोच और कभी कभी मार पीट करने तक को तैयार हो जाते हैं तब रिश्वत लेकर आपने जो एक निर्दोष को मौत के घाट उतार दिया या जेल में ठूँस दिया तब वह कैसे आपको छोड़ सकता है ?

और सुनो ! कक्षा में गप्प मारने वाला और सालभर में केवल डेढ़सौ लेक्चर देने वाला प्रोफेसर फिर यह क्यों कहता फिरता है कि साहब प्राइमरी में क्या पढ़ाते हैं मास्टर लोग ? उचित अनुचित के निर्णय का विवेक दूसरों के ही सम्बन्ध में क्यों जाग उठता है ? खुद काम करते हुए क्यों नहीं यह विवेक दिखाई पड़ता है ? और यह सब सुनकर मैं निरुत्तर हो गया।

मित्र आगे बोले—"सुनो और ! एक मित्र आये प्रयोगात्मक परीक्षा लेने के लिये। सिफारिशों का ताँता बंध गया। सबकी सुनी, पर्चे भी ले लिये। मैं साथ था; पूछा, "यह सब क्या भई ?" बोले, छोड़ो भी यार ! मेरा जाता क्या है ? अगर किसी का भला हो जाये तो।"

मित्र कह रहे थे कि उनसे नहीं रहा गया। बोल पड़े, "क्या कहने हैं इस भले की 'परिभाषा' के। बाबा जी ने तुम्हें दुकान पर बिठाया कि माल खरीदो और तुम बेचने वालों को खुश करने के लिये उनके मनमाने पैसे दे रहे हो। भले ही चीज दो कौड़ी की हो। खूब दुकानदारी चलाओगे तुमतो ! और बाबा जी तो चौपट ही हो जायेंगे; तुम्हारी इस उदारता के कारण ! परीक्षक साथी बोले, "यार ! मैं कर ही कब रहा हूँ ?"

मित्र ने सोचा, चलो कुछ प्रभाव तो पड़ा, उनकी इस बहस का और उन्होंने, देखते-देखते सारे पुर्जे, जिन पर रोल नम्बर्स लिख कर दिये थे परीक्षार्थियों के सिफारिश करने वालों ने, नोच कर फेंक दिये। बोले, "अब तो खुश।"

आश्चर्य कि मित्र फिर भी खुश नहीं, "तो वे लोग धोखे में रहेंगे ?" नम्बर आने पर पूछेंगे नहीं आपसे ?

बोले, "कौन मिलता है ?"

मित्र बोले, "यदि मिल जाये तो !"

परीक्षक मित्र बोले, "कह दूँगा भई, क्या कहूँ पन्द्रह थे, बीस कर दिये, पाँच थे दस हो गये। भले ही वहाँ स्वयं ही बीस आ रहे हों या दस ही आ रहे हों।

मित्र ने फिर कहा, "तो भई, पर्चे लिये ही क्यों थे ? कह देते, भई, जो हो सकेगा, हो जायेगा, हाँ। अन्याय नहीं होगा।" परीक्षक साहब ने दलील दी, "यार ! कोई आदमी आये और उसे टका-सा जवाब दे दिया जाये, यह कहाँ की सभ्यता है ?"

मित्र बरस पड़े, "तो सभ्यत यह है कि आदमी को धोखे में रखा जाये ! धोखा देना सभ्यता है और यदि कहीं इस सभ्यता का उद्घाटन हो जाये तब ! उसकी प्रतिक्रिया का अनुमान भी लगाया है कभी ?

परीक्षक मित्र के पास उत्तर नहीं रहा, बोले—"यार ! तुम तो 'मारलिस्ट' हो ! यथार्थवादी और व्यवहारिक बनो।

मित्र कब चूकने वाले थे, "अच्छा तो, मतलब यह है कि झूठी दिलासा दो और फिर विश्वासघात करो। यह यथार्थ है, यह दुनियादारी है। और मारलिटी यह है कि आप नम्रतापूर्वक स्पष्ट कहदें—भई ! मैं नहीं कर सकता। क्या कहने हैं आपके और आपकी इन मान्यताओं के ? परीक्षक मित्र भी इस प्रकार आहत होने पर अपना संतुलन खो बैठे और जैसा कि प्रायः होता है तर्क के द्वारा पराजित होने पर व्यक्तिगत स्तर पर उतर कर व्यंग्य करने लगे ! बोले, "यार ! अब तुमसे कौन दिमाग मारे ? तुम तो न जाने किस दुनिया की बात करते हो ?"

मित्र ने कहा, "फिर तो धोखा देना, झूठ बोलना मुँह पर कुछ और, पीछे कुछ और, ये बातें हैं इस दुनिया की ! तब तो बनी रहे यह दुनिया और बने रहो तुम, जो इसको धारण किये फिरते हो।"

सब तरफ से निरुत्तर होकर परीक्षक मित्र अपनी शिष्टता के लबादे को फेंक कर बोले, कि तुम तो बुद्धू हो।

मित्र ने कहा, "मैं बुद्धू ही अच्छा हूँ, क्योंकि किसी के मुँह से कौर नहीं छिना लेता, जब कि मुझे कब्ज होरहा है, क्योंकि मैं तुम्हारे लिए दूसरों को धोखा नहीं दे सकता ! मैं बुद्धू हूँ 'मारलिस्ट' हूँ, और तुम 'पुर्शिगनेचर' के हो, गट्स के आदमी हो, क्योंकि तुम गिड़गिड़ा कर, पेट दिखाकर, दांत निकाल कर एकाध टुकड़ा मांग लाते हो। समय देखकर बदल भी जाते हो। अपनी जबान बदल लेते हो। धन्य है तुम्हारा जीवन, लेकिन मुझे मेरा यही जीवन बना रहे। धूर्त, भिखमंगा, विश्वासघाती होने से बुद्धू होना कहीं लाख दर्जे बेहतर है, समझे ?" ○

नया जीवन

★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या वे दिन हवा हुए,

जब अतिथि के मिल जाने को अहोभाग्य, और न मिलने को दुर्भाग्य माना जाता था ?

• श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय •

वे जमाने लद गये जब मेहमाँ नवाज़ी कुल की मर्यादा समझी जाती थी। कुलीन लोग भोजन के समय घर के बाहर किसी अतिथि की प्रतीक्षा किया करते थे और अतिथि मिल जाने पर अपना अहो भाग्य समझते थे। न मिलने पर बेमन भोजन कर लेते थे। आतिथ्य-सत्कार के अनेक उदाहरण हमारे पुराणों-इतिहास ग्रन्थों में भरे पड़े हैं और हम सीने-ब-सीने ऐसी अनेक कथाएँ सुनते आ रहे हैं कि लोगों ने अपना सर्वस्व न्योछावर करके ही नहीं; प्राणोत्सर्ग करके भी अतिथि-सत्कार की परम्परा को निभाया है, लेकिन इस जमाने को क्या कहा जाये कि पत्र-पत्रिकाओं में—कार्टूनों में एवं-कहानियों द्वारा—मेहमानों को टालने के ऐसे-ऐसे अनुभूत उपाय एवं कारगर नुस्खे किसी ऐरे गैरे मेहमानों को भगाने के लिए ही नहीं, अपनों को भी टालने के लिए तजवीज किये जाते हैं। गांव से माँ-बाप के आगमन की सूचना मिलते ही मकान में ताला लगाकर बहू रानी मायके सिधार गईं और श्रीमान जी किसी धर्मशाला में जा पड़े और जब—माँ-बाप के खिसकने की सूचना मिल गई तो हँसते-किलकते घर चले आये, लेकिन इसी ज़माने में अब भी ऐसे अनेक मेहमाँनवाज़ पाये जाते हैं जो अतिथि-सत्कार-परम्परा को निभाये जा रहे हैं।

मेरे बाल-सखा बाबू मक्खनलाल जैन भारत-विभाजन के बाद लुट-लुटाकर लाहौर से अपने गांव ज़िला आगरे के कुर्रा चित्तापुर में रहने लगे थे। कई वर्षों से उनसे मुलाकात नहीं हुई थी। अत आगरा जाने का संयोग बना तो उनके गांव जाने को भी दिल मचल पड़ा। गाँव जाने के लिए कुछ रास्ता बस से और ८-१० मील ताँगे से। ताँगा क्या था, छकड़ा था। उसका मघानुमाँ घोड़ा आगे चलने की बजाय पीछे हटने और दुलत्तियाँ फेंकने में अधिक दिलचस्पी रखता था। पहियों में रबड़ के एवज लोहे का हाल था। चूँकि शाम घिर आई थी और बस स्टेशन पर खड़े हुए २-३ ताँगों में वही बेहतर नज़र आया, अतः उसी पर सूट केस और बिस्तरा लादकर रवाना होना पड़ा। कुर्रा जाने पर मालूम हुआ कि नहर का रास्ता सुविधा जनक था, किन्तु रात्रि में नहर का फाटक खुला मिले या नहीं, इसी आशंका से मुझे दूसरे लम्बे रास्ते से ताँगे वाला ले गया। रास्ता इतना ऊबड़-खाबड़ और ऊँचा-नीचा था कि कोचवान और मैं दोनों ही ताँगे को सँभालते हुए मार्ग तय करते रहे। दो-तीन मील चलने के बाद ताँगे वाला एक गाँव में किसी काम से रुका तो एक ग्रामीण ने मुझसे पूछा—

"कहाँ ते आये हो, कहाँ जाओगे बाबू जी ?"

पहले तो मैं चुप रहा, मगर जब इसरार बढ़ा तो बतलाना पड़ा। सुनकर बोला—"अजी बाबू जी ! कुर्रा तो यहाँ ते ५-६ कोस है। वहाँ जाने को अब टैम नाँय रहो। रात को इहाँ रुकनो पड़ेगो, दिन निकरबे पै जानो ठीक रहेगो।"

मैंने जवाब दिया—नम्बरदार जी ! मैं आपकी आज्ञा पालने में असमर्थ हूँ, क्योंकि मुझे कल ही वहाँ से वापिस होना लाज़िमी है।

वह मुस्कराते हुए बोला—"अजी बाबू जी ! इन शहर बारी बातन में हमें नाँय बहकाओ। हम इन शहर बारेन के चकमान कूँ खूब जानत हैं। हमारे दो छोरा आगरा में पढ़ते हैं। छुट्टीन में जब वे आवे हैं ऐसी-ऐसी घिस्सापट्टी देवे है कि सुनो तो बाबू जी, हैरान रह जाओ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सों बाबू जी, तुम्हें या टैम हूं हरगिज नाय जाने दूँगो। या माँऊ चार-पांच दिनन से एक बघेरी (व्याघ्री) न जाने कहाँ से आन लगी है। कई भैंसियान कू खाय गई है। दो-तीन आदमी भी चबाये डारे हैं। बुरो मानो या भलो बाबू जी, उजाड़ में नाय खड़े, घर में खड़े हो। ऐसे खतरा में मैं हरगिज़ हरगिज़ नाँय जाने दूंगो।" यह कहकर वह मेरा बिस्तरा-ट्रंक उठाने को उद्यत हुआ तो मैं बहुत घबराया कि नाहक इस गैर शाइराना माहौल में मुझे रात गुज़ारनी होगी।

'डूबते को तिनके का सहारा' उक्ति के अनुसार मैंने भी सोचा कि शायद इस कृत्रिमता से छुटकारा मिल जाये। तनिक रूखे ढंग पर जवाब दिया—" मुझे कोई व्याघ्री चबा जाये या लकड़बग्घा खा जाये, आपको इससे क्या वास्ता? आप नाहक मुझे परेशान न कीजिए, मैं अभी जाऊंगा?" वह सुनकर खिसियाना-सा हो गया। फिर भी सहमते हुए बोला—"यह अच्छी बात नाँय है बाबू जी! रात के बखत घर के दरवज्जा से जा रहे हो, कोई कहा कहेगो! खैर, तुम्हारी मर्जी। नैक ठहरों, हूं थोड़ों सो दूध ले आऊं।" दूध और शर्बत उन दिनों मुझे सूट नहीं करते थे और अँधेरा समीप होता जा रहा था। अतः मैंने उसको नमस्कार कहकर ताँगा आगे बढ़वाया। ताँगे वाले ने आगे बढ़ने पर मुझसे कहा—"बाबू जी, यह तुम्हीं थे जो बात मनाय लियो। नहीं तो यह रात के बखत अपने दरवज्जा के आगे ते कोई को भी नाँय निकरने दे हैं। अपनी बैठका में आये-गये को सुलावे हैं, भोजन करावे हैं और जो बन पड़े खातर तवज्जा करके जाने दे हैं।" पूछने पर मालूम हुआ वह गाँव का मुखिया था।

मार्ग भटक जाने पर दूसरे गाँव के किसानों ने अपने खेतों में होकर न केवल ताँगे ही को जाने दिया, बल्कि थोड़ी-थोड़ी दूर साथ चलकर रास्ते पर भी लगाते गये।

राम-राम करके गिरते-पड़ते दोस्त के यहाँ रात के दस बजे पहुँचा तो देखते ही समूचा परिवार खिल उठा। थोड़ी देर में रसोई की तरफ नज़र गई तो देखा भाभी पूरियाँ तल रही है और भतीज-बहू दूसरी कढ़ाई में रबड़ी घोट रही है। मैंने कहा—भाभी, आप खाना क्यों बना रही हैं? आप तो जानती ही हैं कि सूर्यास्त के बाद मैं भोजन नहीं करता।

भाभी मुस्कराते हुए बोलीं—लाला, आप व्यर्थ में ही मन चलायमान कर रहे हैं। किसने कहा कि ये पूरियाँ आपके लिये तली जा रही हैं। ये तो ताँगे वाले के लिये बनाई जा रही हैं।

मैंने आश्चर्य चकित होकर कहा—ताँगे वाले के लिए पूरी और रबड़ी, उसने

> **गृहस्थ का अर्थ है कि घर पर शत्रु भी आवे तो उसका आदर-सत्कार करे जैसे पेड़ अपने काटने वाले को भी छाया देता है। अतिथि-सत्कार में चूकने वाला पतित होता है। —मनु**

तो मुँह माँगा किराया लिया है। भोजन की बात तो उससे नहीं ठहरी है।

भाभी पूरी तलते हुए अपने मखसूस अन्दाज़ में बोली—लाला जी! वह मेरे देवर को लेकर आया है। वह पूरी रबड़ी ही नहीं खायेगा, इनाम भी पायेगा।

और सचमुच भाभी ने उसे आसन पर बिठा कर स्वयं अपने हाथ से भोजन परोसा। भोजन कराने के बाद उसे चारपाई और बिछावन भी दिया।

मैंने यह सीन देखा तो कहा—"भाभी मुझसे तो यह ताँगे वाला ही अच्छा रहा। ज़ालिम किस मजे से तुम्हारे परोसने की अदा देखता रहा और पूरी रबड़ी चट करता रहा और मैं भूखा प्यासा बैठा हुआ कुढ़ता रहा।" भाभी पहले मुस्काई, फिर व्यंग्य पूर्ण मुद्रा बना कर बोलीं—"अच्छा हुआ जो कुढ़ते रहे। जितना तुमने मुझे जलाया है उतना तुम भी कुढ़ो। मालूम तो हो कि तड़पने में क्या स्वाद है। हमें लाहौर से आये चार बरस हो गये, तुमने हमारी सुध भी न ली। श्यामा के विवाह तक में न आये। पुरुष बड़े स्वार्थी निर्मोही होते हैं।

मैं सचमुच खिसयाना-सा हो गया, कोई जवाब देते न बना और क्षमा माँगने को उद्यत हुआ तो मेरे मित्र बोले—"इस समय चुप रहने में ही खैर है। भरी बैठी है। रोज कई-कई बार याद करती थी, हर वक्त तुम्हारे गुण बखानती रहती थी। एक बार पड़ोसन ने ताना मार दिया कि हमें भी तो दिखाओ अपना लछमन देवर। हमने तो कभी तुम्हारी अड़ी भीड़ में उसे नहीं देखा।"

मित्र की बात सुन कर जी चाहा कि भाभी के पावों में सर रख कर खूब रोऊँ, परन्तु साहस न बटोर सका। प्रातः उठा तो देखा भाभी हँसती-किलकती फिर रही है। न कोई उलाहना, न कोई शिकवा। कई रोज़ बहुत लाड़-प्यार से ठहराया; खिलाया-पिलाया। जब चलने लगा तो ताँगे के पहियों पर पानी डालने के बजाय आँखों में आँसू भरे कमरे में चली गई।

* * *

मेहमाँनवाजी का ज़िक्र छिड़ने पर जब मैंने गांव के उक्त मुखिया का किस्सा सुनाया तो साथियों में से एक पंजाबी—जो कि भारत-विभाजन से पूर्व रावलपिण्डी ज़िले के किसी गांव के निवासी थे, कहने लगे—"कुछ इसी से मिलता-जुलता वाक़िया हमारे साथ भी हुआ था। हम तीन व्यक्ति थके-माँदे, भूखे-प्यासे, घोड़ों पर लदे हुए घोड़ों को बढ़ाये जा रहे थे। रात घिर आई थी। गाँवों का कच्चा और कुढब्बा रास्ता तय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने में घोड़े पसीने-पसीने हो रहे थे। फिर भी हम उन्हें तेज़ चलने को मजबूर कर रहे थे। एक खेत के पास से गुजरे तो खेत में से एक ११-१२ वर्ष के लड़के ने हमें रुकने को कहा। हम ने उसकी बात पर कोई ध्यान न देकर घोड़ों को एड़ दे कर और भी तेज कर दिया, तो वह अपनी जंगली ज़बान में ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगा। हम अभी ५०-६० गज़ ही चले होंगे कि दो जवान हाथ में लाठियाँ लिये रास्ता रोके हुए खड़े थे। हम उनकी इस हरकत से डर-से गये। रास्ते में चोर-उचक्कों का जो अन्देशा था, वही सामने देखकर हम काँप उठे। उनकी जंगली बोली भी हम नहीं समझ पा रहे थे। पसोपेश में थे कि हमारे मुन्शी ने जो उनकी ज़बान और रीति-रिवाज से परिचित था, बतलाया कि—ये कह रहे हैं कि "रात घिर आई है, ऐसी हालत में हम आगे हरगिज नहीं बढ़ने देंगे। राजी-खुशी मानो तो अहसान होगा। वर्ना हम लाठी के बल पर भी रोकेंगे। जो भी हमारे यहाँ रूखा-सूखा मयस्सर है, वह खाकर दिन निकलने पर जाना होगा।"

लाचार हमें उनके घर जाना पड़ा। वे लोग मुसलमान थे। वह समूचा गाँव ही जङ्गली जाति के मुसलमानों का था। हमें हिन्दू जानकर न जाने कब उन्होंने पास के गाँव से हिन्दू हलवाई बुलवा लिया। हमारे लिए हिन्दू ढंग से हलवा-पूरी, साग बनवाये। रात को मलाईदार दूध पिलाया। गरमा-गरम बिस्तरों पर लेटते ही हम गाढ़ी निद्रा में सो गये। सुबह ही नित्य कर्म से निवृत्त हुए तो सरसों का लज़ीज साग, आलू के परांठे और मक्खन से भरपूर लस्सी का गिलास हमारी प्रतीक्षा में थे। चलते समय उनकी बूढ़ी माँ ने हमारे सरों पर हाथ फेरते हुए जो कहा, उसका आशय था कि पुत्रों! जब कभी इस गाँव से गुजरो, हमें अपनी छवि दिखाने जरूर आना। अपनी इस बूढ़ी माँसी और अपने इन भाइयों को भूल न जाना।

* * *

बात से बात पैदा होती है। मेहमाँ-नवाज़ी के ज़िक्र चलने पर मुझे और कई घटनाएँ स्मरण हो आईं।

सन् १९२५ में मुझे कुछ ऐतिहासिक शोध-खोजने के लिए जोधपुर राज्य के सोजत परगने में जाना पड़ा। कतई अनजानी जगह। न कोई ठहरने का ठिकाना, न कोई ढंग का भोजनालय। १०-१२ मील ऊँट पर चढ़ कर वहां पहुंचा। रानें मूसल हो गई थीं और कमर में लचका आ जाने से वह तीन-तीन बल खा रही थी। भूख की वजह से अधमरा हो रहा था। ठौर-ठिकाने की खोज में इधर-उधर भटक रहा था कि

> अनीचा का फूल सूंघने से मुर्झा जाता है, मगर अतिथि का दिल तोड़ने के लिए आतिथेय की एक निगाह ही काफी है।
>
> —तिरुवल्लुवर

एक हम उम्र युवक (श्री तेजमल सिंघी) से सामना हो गया। उसने न जाने कैसे मेरे अन्तरंग की बात भाँप ली। साधन-हीन होते हुए भी उसने मुझे एक स्वच्छ एवं आराम देह कमरे में ठहरवाया। उन दिनों मुझे सकरे-निखरे का विचार था। अतः समीप की एक वाटिका में रसोई का प्रबन्ध कर दिया और इच्छा-नुसार रसोई बनवा सकूँ, इसके लिए एक रसोइये का प्रबन्ध कर दिया। काम तो दो रोज़ का था, किन्तु उन्होंने १०-१२ दिन रोके रक्खा। वहां की जैन समाज के अग्रगण्य वकील साहब से मेरा परिचय करा दिया। अफसोस कि मुझे उन वकील साहब का नाम स्मरण नहीं आ रहा है। उनकी वात्सल्य मूर्ति पुत्री ने पर्दे में रहते हुए भी भाई जैसा स्नेह दिया। १०-१२ रोज के बाद किसी तरह उनसे आज्ञा लेकर बैलगाड़ी में सवार हुआ तो तेजमल सिंघी ने एक आह भरकर कहा—

परदेसी की प्रीत रैन का सुपना।
कोई रखो कलेजा काढ़ न होवे अपना॥

तेजमल की सिसकी सुनी तो मुझे भी रुलाई आई। गाड़ी से कूद कर उनसे लिपट गया और वह मेरी कोली भरे स्वयं भी गाड़ी में बैठ गये और मुझे स्टेशन तक पहुँचाये बिना वापिस न लौटे।

* * *

सन् १९३२ की बात है। मैं अपनी "राजपूताने के जैन वीर" पुस्तक लिख चुका था। उसके लिए कुछ चित्रों की तलाश थी और इच्छा थी कि पुस्तक छपने से पूर्व कोई महत्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध हो सके तो बात बने। उन्हीं दिनों राजस्थान के नेता श्री जयनारायण व्यास (जो कि स्वराज्य मिलने पर राजस्थान के मुख्यमंत्री भी रहे) दिल्ली आए हुये थे। उन्हें राजस्थान के इतिहास का अच्छा ज्ञान था। परिचय होने पर बहुत आत्मीयता से पेश आये और पुस्तक प्रेस में देने से पूर्व मुझे एक बार पुनः उदयपुर जाने का मशविरा दिया। साथ ही वहां के इतिहास में रुचि रखने वाले 'श्री मास्टर बलवन्त सिंह मेहता के नाम पत्र लिख दिया। उदयपुर जाकर मैं धर्मशाला में सामान रख कर और दैनिक कार्यों से निवृत्त होकर मेहता जी के यहां पहुंचा तो पत्र पढ़ने से पूर्व ही पूछा—"सामान कहां है और इतनी देर कहां रहे? ट्रेन तो अमुक समय पर आती है?" मेरा उत्तर सुनते ही मेरा सामान उठवा लाये और छोटा-सा घर होते हुए भी अपना अध्ययन-कक्ष मेरे लिए निश्चित कर दिया। यथा शक्य आवश्यक इतिहास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बन्धी सामग्री एवं चित्र उपलब्ध किए। मुझे १५ रोज़ तक रोके रहे। स्वयं अपने हाथ से मेरे स्नान के लिए पानी भरते। मैंने कहा कि जब नौकर है तो आप कष्ट क्यों करते हैं सुन कर बोले—हम अभी इतने नहीं गिरे हैं कि अपने अतिथि को नौकरों पर छोड़ें। उनके सत्कार और स्नेह के आगे मैं पानी-पानी हो जाता था। आयु में बड़े होते हुए भी बहुत विनयी एव सौम्य थे। विदा होते समय अपने आंगन में लगे हुए पेड़ से पपीता तोड़ कर ५ रुपए से मुझे तिलक किया। स्टेशन छोड़ने आए तो मैं टिकिट लेने गया और उन्होंने सामान उठाकर ट्रेन में रख दिया। उनके इस वात्सल्य को देख कर मेरी आंखें छलछला आईं तो मुझसे गले मिल कर बोले—अपने बड़े भाई को क्या इतना सम्मान भी न दोगे? मैं चरणरज लेने को झुका तो बाहों में समेटते हुए बोले—"गोयलीय! मुझे इतना न पिघला कि स्टेशन पर तमाशा बन जाऊँ!"

* * *

उन दिनों दिल्ली में अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी हो रही थी। भारत के कोने-कोने से जन-समूह दिल्ली पहुंच रहा था। अक्सर लोग अपने रिश्तेदारों, मित्रों, परिचितों आदि के यहां ठहरते थे और ठाठ से प्रदर्शिनी एवं दिल्ली के दर्शनीय स्थानों की सैर करते थे। दिल्ली के दैनिक पत्रों में लेखों, कविताओं एवं कार्टूनों-द्वारा इन सैलानियों के आगमन के कारण उत्पन्न परेशानियों का उल्लेख किया जाता था और उनको टरखाने के अमोघ उपाय भी बतलाये जाते थे।

तभी ट्रेन में सफ़र करते हुए एक देहल्वी सज्जन से परिचय हुआ। वार्तालाप के सिलसिले में उन्होंने फर्माया—

'अभी आप प्रदर्शनी देखने दिल्ली तशरीफ़ ले गये या नहीं।" मैंने अर्ज़ किया—'अभी तक तो इत्तफ़ाक नहीं हुआ। अलबत्ता देखने की इच्छा ज़रूर है।"

तभी वे चहक कर बोले—"ज़रूर देखिए साहब, देखने की चीज है। आप मेरे गरीबखाने पर ठहरने की मेहरबानी फरमाएं। कोई खास दिक्कत नहीं होने पाएगी।" और तुरन्त जेब से अपना बिजिटिंग कार्ड निकाल कर मुझे दे दिया। मैंने जवाबन अर्ज़ किया—आपकी इस दावत के लिए बहुत-बहुत शुक्रिया। मैं तो रहने वाला ही दिल्ली का हूँ। वहीं मेरी कई रिश्तेदारियां हैं, मित्र वर्ग हैं। मुझे अफसोस है कि आपके इस निमन्त्रण का मैं लाभ नहीं उठा सकूँगा।"

वे आजिज़ी से बोले—जनाबे आली! वहां तो आप जाते ही रहते हैं। अब की बार मुझे खिदमत का मौका बख्शिए। यह मुमकिन है कि मेरे यहां आपको वे सहूलियतें मयस्सर न हों, जिनके आप आदी हैं। मगर फिर भी मेरी इल्तिज़ा कबूल फर्माएं। आपको थोड़ी-सी ज़हमत तो होगी। मगर मेरे गरीबखाने की रौनक बढ़ जायेगी।"

मैंने सकुचाकर निवेदन किया—आप ख़ाकसार को नाहक शर्मिन्दा कर रहे है मैं तो कांटों में ही पला हूँ। बहुत घटिया स्तर का मज़दूर हूं। तकलीफ़ और ज़हमत का तो ज़िक्र ही बेसूद है। मैं तो धर्मशालाओं और प्लेट फार्मों पर पड़ रहने का आदी हूँ। आप ही बतलायें आप अपने घर को छोड़कर या रिश्तेदारों के यहां न जाकर किसी दूसरी जगह ठहरने का साहस कर सकते हैं?

बार-बार असमर्थता प्रकट करने पर भी उनका आग्रह बढ़ता ही गया। जितना-जितना मैंने टालने का प्रयास किया, वे उतना ही अधिक आग्रह करते रहे, और उनके इस भद्र स्वभाव और आग्रह को देखकर मुझे शक होने लगा कि कहीं ४२० किस्म का आदमी तो नहीं है। चूंकि मुझे रास्ते में उतरना था, अतः किसी तरह पीछा छुड़ाकर मैंने चैन की सांस ली, लेकिन वे बातों-बातों में मेरा दिल्ली का पता और वहां पहुंचने की तारीख मालूम कर चुके थे।

दिल्ली पहुँचा तो मेरे अनन्य मित्र लाला नन्हेमल जैन बोले—भाई, एक सज्जन सीताराम बाजार से कई रोज़ से टेलीफोन पर तुम्हें दरियाफ्त करते रहे हैं। आज वे स्वयं भी आये थे। तुम अमुक नम्बर पर उनसे बात करलो।

टेलीफोन किया तो बिगड़ गये—"हज़रत ऐसे भी क्या मिजाज़? आखिर हम भी आदमी हैं कुछ हक हमारा भी है। मैं गाड़ी भेज रहा हूं, सीधी तरह से तशरीफ़ ले आयें, वर्ना भूख हड़ताल की नौबत आने वाली है।"

मैंने उन्हें किसी तरह से मनामनू कर प्रसन्न कर लिया कि उनके यहां लंच ज़रूर लूंगा।

दरे-दौलत पर जाकर मालूम हुआ कि अच्छे रईस हैं। कारोपरेशन के मेम्बर हैं। अतिथि सत्कार उनकी हॉबी है। मित्र बनाने का शौक है।

* * *

अब आप एक बीती घटना अलीगढ़ यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर और उर्दू-साहित्य के ख्याति प्राप्त लेखक हज़रत अहमद सिद्दीकी साहब की ज़बाने मुबारक से सुनिए—

"एक दिन गर्मी इन्तहा पर थी। लाइब्रेरी से निकलकर दहकती धूप तेज़ लू में घर वापिस जा रहा था। सड़क पार की तो किनारे पर लगे हुए एक लम्बे चौड़े पेड़ के नीचे बैठा हुआ एक आदमी नज़र आया। जिस्म पर केवल एक मैली फटी हुई लुंगी थी। छतरी संभालता, झक्कड़ों से बचाता हुआ जल्द-जल्द वहां से गुज़रा। गौर से यह देखने की न जरूरत समझी, न हिम्मत पड़ी कि कौन शख्स था और वहां बैठा क्या कर रहा था। कुछ ही दूर निकला था कि ख्याल

(कृपया देखिये पृष्ठ ३९२)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार पतीले : बारह सब्जी

श्री इन्द्र 'वारिज'

卐

अरे! आप तो सुन कर चौंक उठे। क्या कहा? यह असम्भव है। नहीं हो सकता। लगता है आप अभी भी चौदहवीं सदी में विहार कर रहे हैं। भला क्यों नहीं हो सकता? आज कल तो विज्ञान और अनुसन्धान का युग है। इस युग में असम्भव कुछ भी नहीं। सभी कुछ हो सकता है. जैसे चन्द्र लोक में निवास के लिए प्लॉट खरीदे जा सकते हैं, मनुष्य पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगा सकता है, एक म्यान में दो तलवारें भी समा सकती हैं, दूध पानी ही नहीं, कीड़े और चींटियाँ भी निकल सकती हैं, भाई की गर्दन भाई ही काट सकता है, एक पेट भरने के लिए अनेकों पेटों पर छुरा चलाया जा सकता है, स्वार्थवश धर्म को नीलाम किया जा सकता है और इतना ही नहीं, चाँदी के चन्द सिक्कों की झङ्कारों में चकाचौंध हो कर राष्ट्र के साथ गद्दारी भी की जा सकती है। फिर भला चार पतीलों में बारह सब्जियां क्यों नहीं हो सकतीं?

क्या कहा? आपने देखा नहीं। बात ऐसी नहीं है। देखा तो आपने सब कुछ है मेरे दोस्त, मगर अपनी नजरों से नहीं, चश्मे के एङ्गिल से। तब भला आपको कैसे नजर आता। कारण कि नफी-नफी मिल कर जमा (−+−=+) हो जाते हैं। तब आपके बनावटी चश्मे में वह बनावटी बात कैसे दिखाई दे सकती है?

हाँ, एक बात और है कि—है अन्दाज अपना-अपना। आँखें साफ रखिए और नजर तेज, तो सब कुछ देख सकते हैं आप।

क्या कहा? मैंने कहाँ और कैसे देखा? भाई मेरे, इसके लिए तो मेरे पास उत्तर नहीं, प्रश्न है—कहाँ नहीं देखा? उत्तर है—यत्र-तत्र-सर्वत्र।

क्यों? क्या हँसी आ गई आपको? अच्छा, तो फिर यह राज बता ही देते हैं हम आपको। हाँ, लेकिन एक शर्त है कि आप इस राज को सुन कर मुझे किसी होटल का खानसामा या बैरा मत समझ लिए।

तो अब आप सुनने के लिए तैयार हो जाइए. लेकिन सुनने से पहले आप अपने नेत्र, कान और मस्तिष्क—तीनों के द्वार खुले रखिए अन्यथा आप फिर कहेंगे—भाई अपनी तो कुछ समझ में नहीं आया।

आप होटलों पर जाते होंगे। मैं भी जाता हूँ। यहाँ होटलों से मेरा तात्पर्य अशोका, व्हाइट हाऊस या इण्डियाना जैसे होटलों से नहीं है। बस, साधारण खाना खाने वाले होटल या कहूं कि 'शरीफ' आदमियों के होटल। इन होटलों पर जब बैरा आपके खाने का आर्डर लेने आता है तो पूछता है कि आप कौन-सी 'स्पेशल' सब्जी खाओगे? जब आप उससे पूछते हैं कि कौन-कौन सब्जियाँ बनी हैं, तब वह इनके नामों की ऐसी झड़ी लगाता है जैसे संस्कृत के दो पंडितों में शास्त्रार्थ होने पर संस्कृत श्लोकों की झड़ी लगती है। शेष सुनने वालों को कुछ समझ ही नहीं आता कि वे क्या कह रहे हैं। बस, ऐसी ही स्थिति यहाँ भी होती है। वास्तव में कभी-कभी तो ऐसा भी होता है कि उसने क्या-क्या सब्जियाँ बतलाईं, यह पता ही नहीं चलता और बस यों ही कोई आर्डर देना पड़ता है। अब प्रश्न उठता है कि वह वास्तव में जितनी सब्जियाँ बताता है क्या वहाँ उतनी ही सब बनी होती हैं?

इस बात को जानने के लिए मैंने आंकड़े एकत्र किए, उनका विश्लेषण किया और तब कहीं निर्णय पर पहुँच पाया हूं। आप जानते हैं यह अनुसन्धान का युग है और अनुसन्धान आँकड़े एकत्र किए बिना नहीं होता।

हाँ, तो मैंने क्या पाया? बैरा दस-पन्द्रह सब्जियों के नाम बता देता है, किन्तु जहां से वह सब्जियां लाता है वहां तो चार-पांच ही पतीले होते हैं। तो फिर ये इतनी सब्जियाँ कहां से आती होंगी, शायद आप जानने को उत्सुक होंगे। वहां यह होता है मेरे दोस्त कि आलू, पालक, मटर और पनीर—इन सब को अलग-अलग बना लिया जाता है। टमाटर भी साथ रखे हैं। बस, फिर आप चाहे जो सब्जी मांगिए, तैयार मिलेगी। उदाहरणार्थ, आलू-मटर, आलू-पालक, आलू-टमाटर, मटर-पनीर, आलू-पनीर, मटर-पालक, पनीर-पालक, मटर-टमाटर, आलू-मटर-टमाटर आदि। आज कल साधारणतया 'स्पेशल' सब्जी में दो सब्जियाँ ही मिलकर बनाई जाती हैं और वे लगभग इन्हीं में से किन्हीं न किन्हीं दो के मेल से बनती हैं। बस, आप कोई सब्जी माँगिये, इन्हीं में से मिला कर बना दी जाएँगी और साहब खुश हो जायेंगे। क्यों, ठीक कहा न मैंने?

हाँ, तो अब समझ आया आपको? फिर नहीं कहना कि ऐसा नहीं हो सकता। अब आप मान गए होंगे कि यह विज्ञान और अनुसन्धान का युग है, होटल वाले भी अनुसन्धान करते हैं, यहां सब कुछ सम्भव है! ◇

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो कुछ तुम हो, तुम वही सिखाओगे, जान कर ही नहीं, अनजाने भी। जो कुछ तुम हो, वही तुम पर हर वक्त सवार है और ऐसा गरज रहा है कि उसके खिलाफ तुम जो कुछ कहते हो, उसे मैं सुन ही नहीं सकता।

—एमर्सन

◆ श्री अशोक अग्रवाल

कल्पना एवं यथार्थ का कुशल शिल्पी: ख़लील जिब्रान

"लोग मुझे पागल समझते हैं कि मैं अपने जीवन को उनके चाँदी-सोने के कुछ टुकड़ों के बदले नहीं बेचता।

और मैं इन्हें पागल समझता हूं कि ये मेरे जीवन को बिक्री की एक वस्तु समझते हैं।"

ये शब्द कहे थे एक बार महाकवि खलील जिब्रान ने बहुत अधिक विक्षिप्त होकर।

इस प्राणवान किन्तु भाग्यहीन महाकवि का जन्म ६ जनवरी, १८८३ ई० को लेबनान के बशरी नगर में हुआ था। आपके परिवार की बहुत ही नामी एवं सम्पन्न ईसाई परिवारों में गिनती होती थी। इनके पिता संकीर्ण विचारों के न थे जिसका स्पष्ट प्रभाव आपके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर पड़ा। भ्रमण के शौकीन होने के कारण वे समय-समय पर विभिन्न देशों की यात्रायें किया करते थे। एतदर्थ खलील जिब्रान को दस वर्ष की अल्प आयु में ही अमरीका, बेल्जियम एवं फ्रांस इत्यादि देशों का भ्रमण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस भ्रमण से आपका बौद्धिक ज्ञान बहुत बढ़ गया। आपकी माता का नाम था—कलीमा रहीमी जो कि एक विदुषी महिला होने के साथ-साथ सरल स्वभाव की थी। यह स्पष्ट है कि खलील जिब्रान का जीवन बचपन से ही तप कर खरा कंचन बन गया था, पर इस भौतिक युग के रजकण जिसकी परछाई भी न छू पाये।

खलील जिब्रान का व्यक्तित्व, क्रान्तिकारी विचारों से बना था। रूढ़ीवाद, धार्मिक अन्धविश्वास एवं संकीर्ण विचारों से इनको घोर घृणा थी। इन्होंने इन सभी की कटु आलोचनाएँ की और अपनी रचनाओं में धार्मिक एवं सामाजिक अव्यवस्था के खिलाफ युद्ध छेड़ दिया, जिसका परिणाम उन्हें भुगतना पड़ा। सन्त सुक्रात की भांति पग पग पर विष पिया, परन्तु शिव की भाँति कंठ में ही पचा लिया। धर्म एवं धार्मिकों के खिलाफ लिखने से उन्हें पादरियों का रोष सहना पड़ा। जागीरदारों और अधिकारी वर्ग का कोपभाजन बनना पड़ा। इनको जाति से बहिष्कृत कर दिया गया। प्रत्येक वह पथ जिस पर इन्हें गुजरना था काँटों से रोप दिया, परन्तु यह महाकवि लहूलुहान पगों से हंस-हंस कर उन रास्तों पर से गुजरा। सभी आपदायें झेलीं।

लेबनान देश को जहाँ यह गर्व रहेगा कि उसने एक ऐसे महापुरुष को जन्म दिया जिसे विश्व के महाकवियों की नामावली में श्रेष्ठ स्थान मिला, वहीं उसके आंचल पर एक बदगुमा दाग भी रहेगा—इस महापुरुष एवं महाकवि का मूल्य तत्कालीन समाज के पोषकों ने चुकाया। उन्हें न केवल अपमानित करके एवं दुख देकर बल्कि देश से भी निष्कासित करके, परन्तु खलील जिब्रान एक संत थे। उनके जीवन पर इन कटुताओं का अधिक प्रभाव नहीं पड़ा। वे १९१२ ई. में संयुक्त राज्य अमरीका चले गये और न्यूयार्क में स्थायी रूप से रहने लगे। इतने अपमानों पर भी आप महान देश भक्त थे। उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देशवासियों के अपने प्रति अत्याचारों को देखते हुये भी उन्होंने राष्ट्र वन्दना की। वे अपने देश के लिये सदा लिखते रहे। आप ईसाई धर्म के अनुयायी थे, किन्तु जीवन भर पादरियों एवं उनके अन्ध-विश्वासों के सदा कट्टर विरोधी रहे।

खलील जिब्रान न केवल एक संत पुरुष और महाकवि थे, वरन् एक कुशल चित्रकार एवं मनस्वी दार्शनिक भी थे। उनके चित्रों में कल्पना एवं यथार्थ का अनुपम सामंजस्य मिलता है। उनके चित्रों की संयुक्त राज्य अमरीका, फ्रांस और इंग्लैंड में अनेक प्रदर्शनियां हुई। तत्कालीन जनता एवं प्रसिद्ध चित्रकारों ने आपकी चित्रकला से बहुत प्रभावित होकर आपकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

खलील जिब्रान फ्रांसीसी, अंग्रेजी और अरबी के विद्वान थे। अरबी एवं अंग्रेजी पर तो उन्हें अधिकार प्राप्त था। आपका कवि जीवन अत्यन्त ही अल्प आयु से प्रारंभ हुआ। केवल १२ वर्ष की अल्पायु में ही आपने अरबी में लिखना प्रारम्भ कर दिया था। जिब्रान ने लगभग पचीस पुस्तकें लिखीं और वे सभी आपके ही द्वारा बनाये गये चित्रों से सुसज्जित हैं। आपके प्रशंसकों एवं पाठकों का केवल इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि उनकी पुस्तकों के अनुवाद लगभग ३० भाषाओं में हो चुके हैं। भारतीय भाषाओं में हिन्दी, गुजराती, मराठी और उर्दू में उनकी बहुत-सी पुस्तकों के अनुवाद हुये हैं, जो कि सभी अत्यन्त लोकप्रिय हुये।

खलील जिब्रान की कल्पना-शक्ति अद्भुत थी। उस दृष्टि से हम उन्हें जर्मन महाकवि गेटे एवं विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर के समक्ष रख सकते हैं। आपकी प्रचुर कल्पना शक्ति का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

"एक बार मैंने अपनी मुट्ठी कुहरे से भरी। फिर जब उसे खोला तो कुहरे को एक कीड़ा बना पाया।

मैंने दुबारा मुट्ठी बन्द की, खोली तो वहाँ कीड़े की जगह एक चिड़िया थी।

मैंने उसे फिर बन्द किया और खोला तो मेरी हथेली पर एक आदमी खड़ा था, जिसका चेहरा शोकातुर था और दृष्टि ऊपर की तरफ।

अन्तिम बार मैंने फिर मुट्ठी बन्द की और फिर उसे खोला तो वहाँ कुहरे के सिवाय कुछ न था।

परन्तु इस बार मैंने एक अत्यन्त मधुर एवं रसीला गीत सुना।"

श्रीमती बारबेरा यंग ने आपकी पुस्तक 'रेत और झाग' पर टिप्पणी करते हुये कहा था—"अंग्रेजी साहित्य में इस पुस्तक के समान कहावतों की और दूसरी पुस्तक नहीं है। इस पुस्तक में ऊंचाई, गहराई और विशालता के ही तीन परिमाण नहीं हैं, उसमें चौथा परिमाण समयहीनता का भी है जो कि अनन्त या असीम का ही दूसरा नाम है।

जिब्रान ने उस में वही काम किया जो कि उसने प्राफ्ट' में किया था। जीवन और मृत्यु के बीच की बातों को हमें दिखाया है, पर इनके ढंग जरा भिन्न हैं।"

वास्तव में रेत और झाग अमूल्य रत्नों की खान हैं, जिसमें चमक धमक तो है ही, जिन्हें इस खूबसूरती से तराशा गया है कि अनायास ही उन्हें प्राप्त करने के लिये मन ललचा उठता है। इन अनमोल कहावतों में उस व्यक्ति की आत्मा है जिसने बुराई के साथ सदा संघर्ष किया, जिसने यथार्थ के प्याले में अनुभव के आँसू पिये। यह केवल एक कोरे उपदेशक की सूक्तियाँ नहीं, वरन एक महाकवि की उक्तियाँ हैं जिन्होंने जीवन की कटुताओं को बहुत निकट से देखा व परखा।

इस पुस्तक के साथ एक कहानी भी जुड़ी है। कवि को कोई कहानी अथवा कोई बात कहने से पहले भूमिकारूप में एक दो वाक्य, सूत्र या सूक्ति कहने की आदत थी और वे ये सूक्तियाँ कागज के रद्दी फटे टुकड़ों, थियेटर के कार्यक्रमों के कागजों, सिगरेट की डिब्बियों के गत्तों तथा फटे हुये लिफाफों पर लिखी हुई होती थी। वे उनको असावधानी से इधर-उधर फेंक दिया करते थे, परन्तु श्रीमती बारबेरायंग उन्हें सावधानी से इकट्ठा करती और पूजा की वस्तु के समान सम्मान पूर्वक संभाल कर रखती। उन को ऐसा करते देख मजाकवश खलील जिब्रान कहा करते थे—"अच्छा तुम अपना काम कर रही हो, परन्तु ये तो रेत और झाग हैं जिन्हें तुम मूर्खतावश इकट्ठा करती हो।" फिर भी श्रीमती बारबेरायंग ने उन सूक्तियों की पांडुलिपि तैयार की और जब वह छपी तो साहित्य में तहलका-सा मचा। इतने सारे अमूल्य रत्न पहले कभी एक साथ इकट्ठे न हुये थे। जिब्रान उन्हें 'कहावतों की पुस्तिका" कहा करते थे।

उनकी कुछ सूक्तियों का अवलोकन कीजिये—

- कांटों को ताज बनाने वाले हाथ भी आलसी हाथों से अच्छे हैं।
- कुहरे से ढका हुआ पर्वत पहाड़ी नहीं है और वर्षा में खड़ा हुआ बबूल का वृक्ष रोता हुआ बेंत का वृक्ष नहीं है।
- वाणी का गीत मधुर है, पर हवा का गीत स्वर्ग का पवित्र स्वर है।
- सिर्फ गूंगे ही बातूनों से ईर्ष्या करते हैं।
- सत्य को जानना तो सदा चाहिये, पर उसको कहना कभी कभी चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* अपराध क्या है? या तो वह आवश्यकता का दूसरा नाम है, या किसी बुराई का लक्षण।

* किसी चीज को कुरूप न कहो, सिवाय उस भय के जिसकी मारी कोई आत्मा स्वयं अपनी स्मृतियों से डरने लगे।

* मैं ही आग हूं, मैं ही कूड़ा करकट, मेरी आग मेरे कूड़े को जला कर भस्म कर दे तो मैं अच्छा जीवन पा जाऊंगा।

* जब तुम सूर्य की ओर पीठ फेर लेते हो तब तुम अपनी परछाई के सिवाए और क्या देख सकते हो?

उपेक्षाओं और अभावों में भला यह महाकवि अधिक उम्र न पा सका। अड़तालीस वर्ष की आयु में आप एक मोटर-दुर्घटना में बुरी तरह घायल हो गये, और १० अप्रैल, १९३१ का वह अभागा दिन न्यूयार्क ने देखा, जब महाकवि उनके देखते देखते पंच तत्व में लीन हो गये। तमाम विश्व में कुहासा-सा छाया। दो दिन तक आपके दर्शनों के लिये झुंड के झुंड हज़ारों आदमियों के आते रहे। उनका शव उनकी अपनी जन्मभूमि लेबनान लाया गया, जहाँ बड़ी शान और राजसी सम्मान के साथ उनके अपने नगर के एक गिरजाघर में दफना दिया गया।

क्या वे दिन हवा हुए.....

[पृष्ठ ३८८ का शेष]

आया कि दरख्त के पास से गुज़रते हुए कुछ आवाज़ सुनी थी, जिसका मैंने कुछ ख्याल नहीं किया और यह सोचता हुआ आगे बढ़ गया कि कोई फकीर होगा और उसने पैसे मांगे होंगे। कुछ दूर जाने के बाद—भूख और मौसम दोनों की सख्ती और ज्यादा महसूस हुई तो फकीर का भी ख्याल आया कि मालूम नहीं उस पर क्या गुजर रही होगी। बेमन से वापिस लौटा, जेब से कुछ पैसे निकाले और उस शख्स के पास आकर कहा—"यह लो, तुम्हारी आवाज़ अच्छी तरह नहीं सुन सका था।"

करीब से देखा तो मालूम हुआ कि वह रोटी के चन्द टुकड़ों पर उबली हुई तरकारी और साग खा रहा था। मुझे देख कर खड़ा हो गया और बड़े एतयाद लेकिन इन्कसार से कहा—"मियाँ! अल्लाह आपको अच्छा रक्खे। आपको धोखा हुआ। मैंने कुछ माँगा नहीं था। खाने का वक्त था, मैं खा रहा था आप भी शायद भूखे गुज़ार रहे थे। मुँह से निकल गया—मियाँ खाना हाज़िर है। आपके लायक यह साग और सूखी रोटी न थी, लेकिन बाप-दादा की डाली हुई आदत को क्या कहूं। खाना खाते वक्त किसी को पास देखता हूं तो इस तरह की बात मुँह से निकल ही जाती है। कोई शरीक हो जाता है तो दिल खुश हो जाता है। नहीं होता, तब भी एक तरह की तस्कीन मिलती है। मज़दूरी में जो पैसे मिल जाते हैं, उससे गुज़र हो जाती है। उसका शुक्र है। मेहनत मजदूरी से सारा काम चलाता रहता हूँ। पैसे आप अपने पास रखें।"

मैं निहायत शर्मिन्दा हुआ और उस मजदूर के फकीरे-गयूर (निर्धनता के स्वाभि- मान) के मुकाबले में अपने तमाम मुनासिब और मरातब (उचित साधनों) पर लानत भेजता हुआ घर पहुंच गया। ◇

★ मुक्तक ★

कौन मेरा दोस्त है
कौन मेरा दुश्मन ?
सुलझा हुआ मन दोस्त,
उलझा हुआ दुश्मन !

◇ श्री शशिकर ◇

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : आरमुगनेरी
(तिन्नेवेली ज़िला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक

ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स--

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल

फोर्ट, बम्बई – १

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रजिस्टर्ड नं० एल-७१०

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

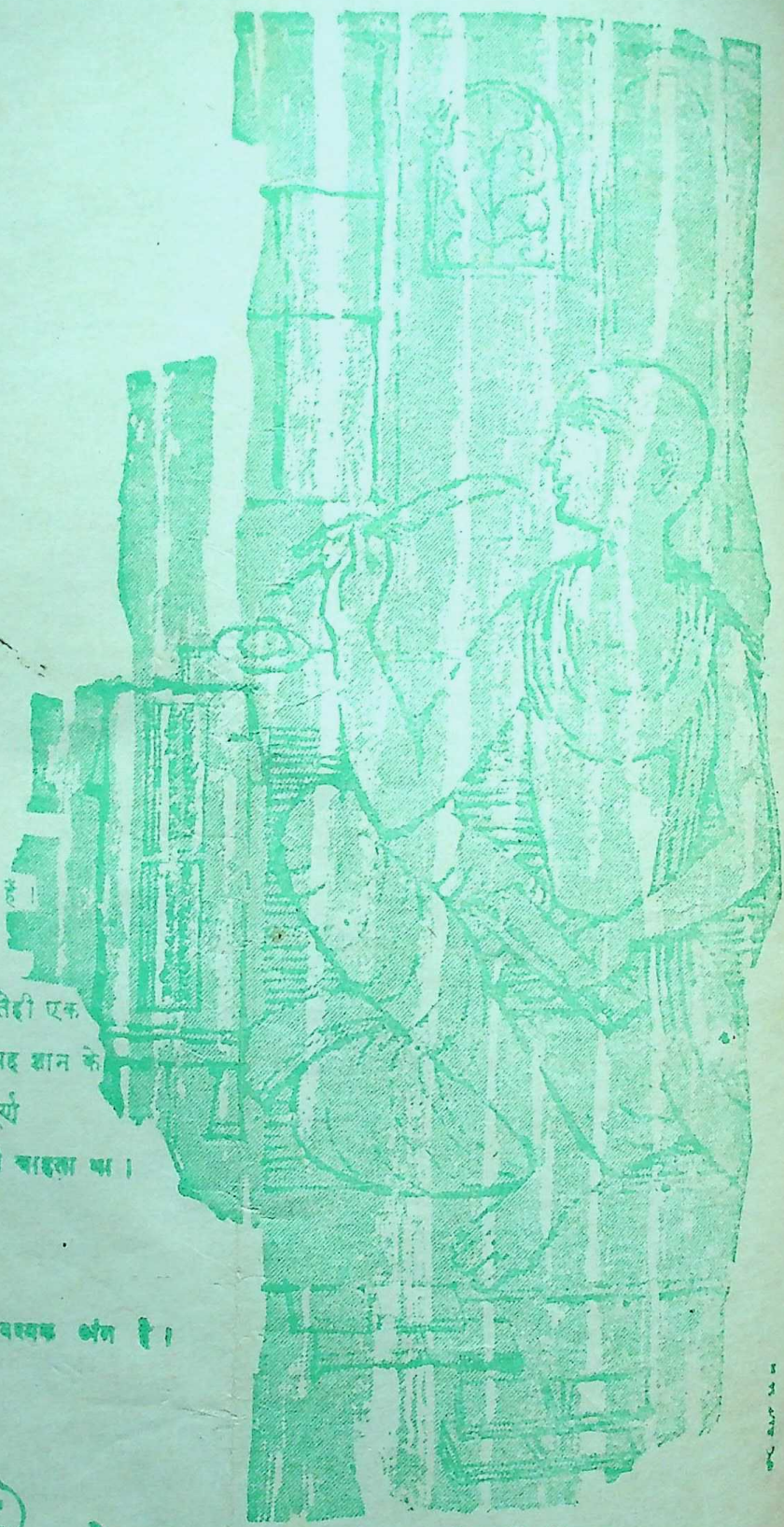

शिलाओं, पेड़ों की
छाल, जानवरों की खाल
अथवा धातुओं के
टुकड़ों की लिखावटें
सभ्यता के
उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक
नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के
विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण
साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज
आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

ROHTAS

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमियानगर (बिहार)

मुद्रक—अखिलेश [illegible] में मुद्रित-प्रकाशित
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

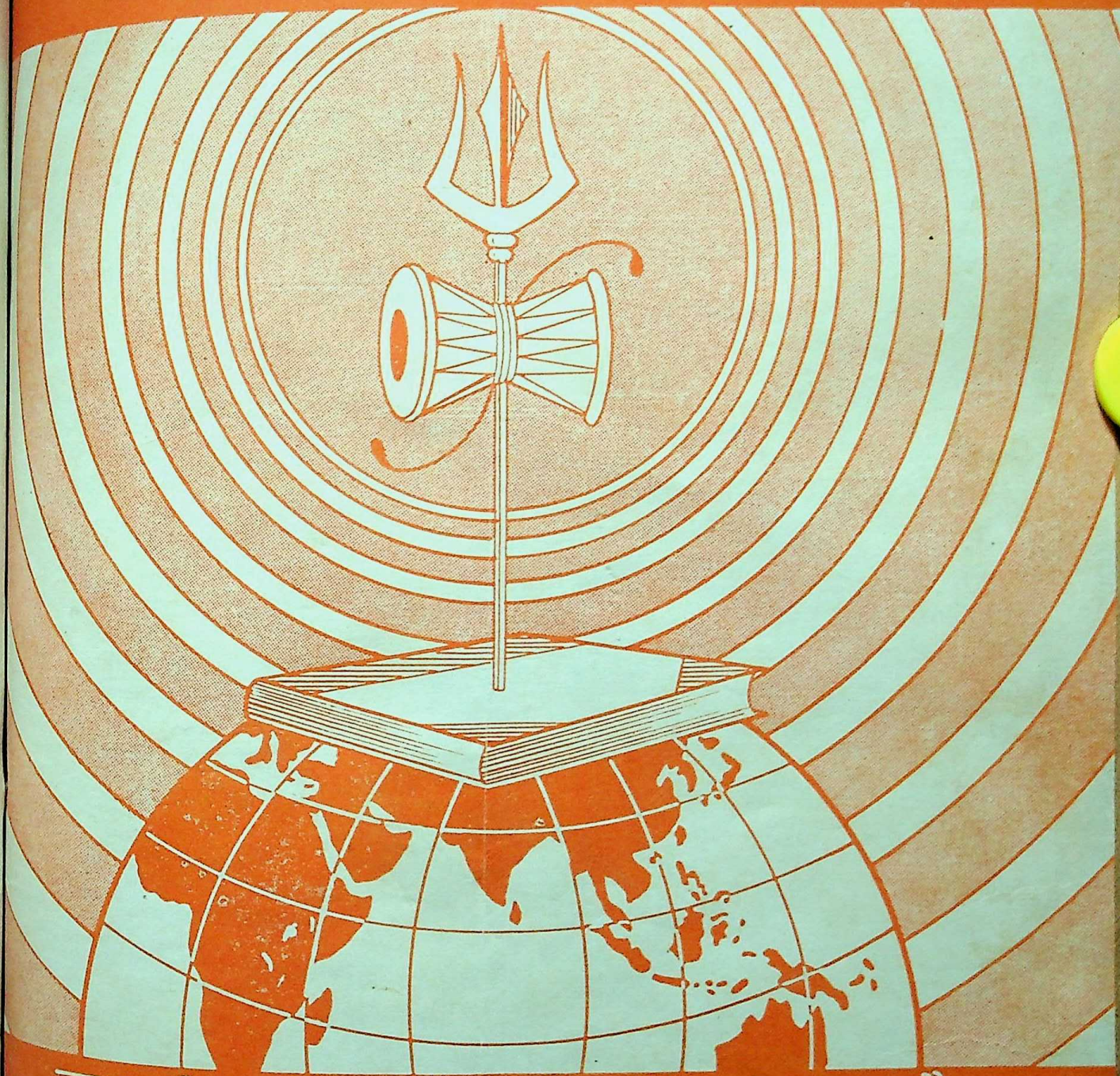

चालू दुनिया को जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
चालू दुनिया को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
जाने समझे पर राय बनाने के लिए मासिक आवश्यक है,

'नया जीवन' में

दैनिक, साप्ताहिक, मासिक की इन सभी विशेषताओं का समन्वय है।
अनेक पत्र पढ़ने वालों के लिए आवश्यक, न पढ़ने वालों के लिए अनिवार्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज़ के एक छोटे पुर्जे पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी।
अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है!

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज़ के बिना न
शास्त्र मिलते न साहित्य।
कागज़ हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसकी लाखों प्रतियाँ बिक चुकी हैं—

विद्यार्थियों, राजनैतिक व्यक्तियों, सरकारी कर्मचारियों, एवं सैनिकों तथा प्रत्येक भारतीय के लिए आज की पाठ्य-पुस्तक

'जवाहरलाल नेहरू के अन्तिम चरण'

(सैण्ट्रल लायब्रेरी कमेटी, पंजाब द्वारा स्वीकृत)

पत्र सं० पी. आर. डी. लायब्रेरी-६५/५०८३५ दिनांक २ दिसम्बर १९६५

लेखक—
अयोध्याप्रसाद दीक्षित, आई. ए. एस.

मूल्य—
तीन रुपया मात्र

- "अन्तिम चरण" को प्रकाशित करके श्री रतन जी ने एक महान कार्य किया है।
  —श्रीमती इन्दिरा गाँधी
  प्रधान-मन्त्री भारत सरकार
- प्रत्येक व्यक्ति के हाथ में "अन्तिम चरण" हो यही श्री नेहरू जी को सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।
  —गुलजारी लाल नन्दा
  गृह-मंत्री-भारत सरकार
- "अन्तिम चरण" के प्रकाशन से श्री नेहरू का व्यक्तित्व उभरा है।
  —पद्म-भूषण सेठ गोविन्द दास
- एक-एक हिन्दुस्तानी को "अन्तिम चरण" पढ़नी चाहिए।
  —पद्म-भूषण सूर्यनारायण व्यास
- नेहरू-जीवन का इतिहास ही "अन्तिम चरण" के बिना अधूरा है।
  —कामरेड रामकिशन
  मुख्य-मंत्री—पंजाब

नोट—इस पुस्तक की समस्त आय पंजाब सुरक्षा-कोष में जमा हो रही है।

पंजाब में एकमात्र वितरक :

इंग्लिश बुक शाप :: सैक्टर २२ पी., चण्डीगढ़

प्रकाशक—रतन चन्द धीर

सरस्वती प्रकाशन, देहरादून :: उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साकेत साहित्य सदन

प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

मुख्य केन्द्र—६२, हलवासिया मार्केट, हजरतगंज, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

हमारा सदन :

१. पाठ्य पुस्तकें—बेसिक, मान्टेसरी, जूनियर हाई स्कूल, कालेज एवं डिगरी कक्षाओं के कोर्स तक।
२. उपन्यास, कहानी एवं नाटक—उपन्यास, नाटक, कहानी, संस्मरण, रेखाचित्र, रेडियो नाटक, हास्य रस प्रधान साहित्य तथा फीचर आदि।
३. साहित्यिक पुस्तकें—खण्ड काव्य, महा काव्य, समालोचना, हिन्दी अंग्रेजी कोष एवं अनुसन्धान सम्बन्धी ग्रन्थ।
४. बाल साहित्य—बालोपयोगी अनुपम पुस्तकें।
५. विकास साहित्य—विकास आयुक्त द्वारा स्वीकृत साहित्य विशेषतः (कृषि एवं पशुपालन तथा सहकारी योजना साहित्य)।

का

एक बृहत् भण्डार है।

कृपया हमारे सदन में पधारिए अथवा पत्र द्वारा आदेश भेजिए।

व्यवस्थापक—साकेत साहित्य सदन, लखनऊ उ. प्र.

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दून घाटी

= का =

गौरव

अमिताभ टैक्सटाइल मिल्स लिमिटेड

देहरादून :: उत्तर प्रदेश

श्रेष्ठतम :

★ सूत

★★ हौज़री

★★★ बंटा सूत

निर्माता

अमिताभ ! अमिताभ !! अमिताभ !!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : आरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक

ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल

फोर्ट, बम्बई – १

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित यह साहित्य
आपके पुस्तकालय में न हो तो इसे तुरन्त मंगा लीजिये !

★ ज़िन्दगी मुस्कराई ४.०० रु०
★ बाजे पायलिया के घुंघरू ४.०० रु०
★ दीप जले शंख बजे ३.०० रु०
★ महके आँगन चहके द्वार ४.०० रु०

(नई स्फुरणा के साथ जीवन को चमकाने वाली चारों पुस्तकें)

★ माटी हो गई सोना २.०० रु०
बलिदान की चेतना से पूर्ण १७ अमर अक्षर चित्रों का संग्रह

★ आकाश के तारे धरती के फूल २.०० रु०
जीवन की गहराई, लोच और गति से भरपूर अनोखी लघु कथाएँ

★ क्षण बोले कण मुस्काए ४.०० रु०
लेखक की विशिष्ट शैली का प्रतिनिधित्व करने वाले
ललित एवं मनोरंजक निबंधों का नव प्रकाशित संग्रह

प्रकाशक:—

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुंड, वाराणसी

विक्रय केन्द्र ३६२०/२१ नेता जी सुभाष मार्ग, दिल्ली—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–
उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है।

★

कोशिश कीजिये–

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए!

लड़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत

एवं

भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के साथ-साथ अब अनेक नवीन एवं आकर्षक डिज़ाइन में छींटों का भी निर्माण होने लगा है।

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस : चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—३१६, ३६४, १६०

प्रबन्धक
सेठ कुलदीप चंद बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

फरवरी १९६६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरी जानकारी

- महीने के अन्त में महीने का अङ्क प्रकाशित होता है। अगले महीने की ७ तारीख तक भी पिछले महीने का अंक न मिले, तो कार्ड लिखें।
- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य है पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और प्रत्येक रचना पर अपना पूरा पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से बुक पोस्ट द्वारा वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह चाह रखते भी प्यार-मान ही दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें। तीन महीने में आलोचना हो जाए और अंक पहुँच जाए, यह प्रयत्न रहता है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार मे दोनों की सुविधा के लिए ग्राहक-संख्या लिखने की प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीज़ों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक—नया जीवन
सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

नया जीवन

देहातों और नगरों के लिए
विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

प्रधान संपादक
कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

संपादक-संचालक
अखिलेश

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का फालतू समय चैन और खुमारी में काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् का निर्माण करने का श्रम की भूख जगाएं!

फरवरी १९६६

स्वामी संस्थान

विकास लिमिटेड
सहारनपुर · उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुक्रम

हारे हुए व्यक्ति के नाम

आने वाला युग

बाँसुरी के बजैया के आगे झुक रहा माथ

राष्ट्र चिन्तन

विश्व चिन्तन

राष्ट्र दर्शन

आर्थिक-सामाजिक क्रांति की ओर

पद्मश्री गोपालप्रसाद व्यास और मैं

सवाल नई पीढ़ी का नई पीढ़ी से

पतझर की शाम

पुण्य प्रतीक और पुण्य प्रदीप

राष्ट्रीय नेतृत्व का अभाव

जयपुर : किसने क्या कमाया

पुस्तक परिचय

चुम्बन और चाबुक

सन्तों, धोखा कासों कहिए

अपने पढ़ने के कमरे में

श्री जयकुमार 'जलज'
गवर्नमेंट कालेज, बरेली, (मध्य प्रदेश) ४३

श्री आचार्य शशिकर
प्र. सम्पादक : शबरी, चक्रधरपुर ४३

श्री देवेन्द्र 'दीपक'
राजकीय महाविद्यालय, जगदलपुर (म. प्र.) ४४

सम्पादकीय ४५

श्री दीनदयालु शास्त्री
जस्साराम मार्ग, हरिद्वार ४६

सम्पादकीय ५१

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' ५३

डा. पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'
विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र, पंजाब ५७

श्री जयदत्त पन्त, द्वारा नवभारत टाइम्स ५९
७, बहादुरशाह ज़फर मार्ग, नई दिल्ली

सुश्री हेमलता ६१
३५२ सरदारपुरा, जोधपुर, राजस्थान

श्री कृष्णा मूर्ति दिवाकर ६२

श्री रिषभ दास राँका, संपादक 'जैन जगत' ६४
लक्ष्मी महल, पेटीट रोड, बम्बई-२६

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' ६७

स्तम्भ ७१

श्री जगदीश चावला, ७२
के. २/१४१ देहरादून रोड, सहारनपुर

प्रोफेसर श्री विवेकी राय ७३
डिग्री कालेज, गाजीपुर, उ. प्र.

स्तम्भ ७६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हारे हुए व्यक्ति के नाम

—श्री जय कुमार 'जलज'

तुम थकान से समझौता करके बैठे हो
पलक - पाँवड़े मुरझाते होंगे मंजिल के ।

सौ सौ ब्याह हुए असफलता के तो लेकिन
अभी सफलता विवश कुँआरी ही बैठी है
पथ की धूल सिंदूरी स्वेद - मुकुट माथे पर
ऐसे पहुंचो सहज तुम्हारी ही बैठी है
बढ़ी हुई बारात न पथ से लौटाओ तुम
स्वर उड़ कर आते हैं लाज भरी पायल के ।

तुम आँधी के पाँवों से चल कर तो देखो
ऐसा बादल कौन तुम्हारी राह न छोड़े
आसमान की तरह हृदय को फैलाओ तो
ऐसी धरती कौन तुम्हारी छाँह न ओढ़े
यह पहाड़ जो अपराजेय दिखाई देता
शीश झुकाता आया है सम्मुख घायल के

तुम थक कर बैठे तो पीछे के सब राही
इस डग पर आकर अनजाने रुका करेंगे
जो माहोल बना दोगे इस डग पर तुम
उस में ही कितनों के साहस चुका करेंगे
बिन सोचे बढ़ जाओ रुकने वाले, पीछे
तुतलाते राही आते हैं संभल संभल के ।

आने वाला युग

श्री आचार्य शशिकर

●

आज हम जैसे
कलकत्ता से बम्बई
करते हैं सफर,
ठीक वैसे
आने वाले युग में
भारत से अमेरिका
होगा सफर ।

आने वाले युग में
भारत अमेरिका
या किसी देश की
होगी नहीं हस्ती
प्रान्त से बढ़कर ।

आज जैसे हम
भारत से अमेरिका
करते हैं सफर,
ठीक आने वाले युग में
भूलोक से अन्यलोक
होगा सफर
और
लोक यात्रा की
संज्ञा होगी
विदेश यात्रा ।

रूस अमेरिका
या कोई देश
यदि कभी लड़े
तो कहलाएगा
गृह युद्ध ।
जो करेंगे
रूस अमेरिका की बात
होगा संकीर्णता का
पक्षपात ।

सम्हलो ! सम्हलो !!
साथियों.....
देखो आने वाले युग का
सूरज कितना महान !

आने वाला युग
तुमसे एकता की
कर रहा है माँग
अब भी समय है
विश्व के वासियों
करो समय की पहचान !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाँसुरी के बजैया के आगे झुक रहा माथ !

श्री देवेन्द्र 'दीपक'

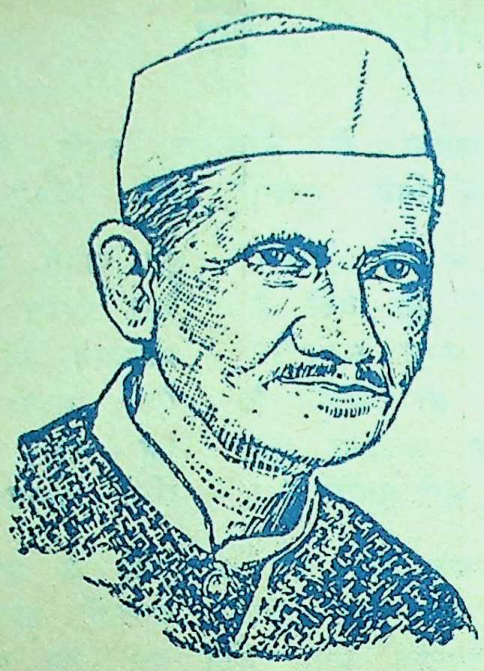

क्षीण देह औ शक्ति दूत
गरम लहू औ शांति दूत
सर्वोच्च शिखर तुम कीर्तिमान
भव्य कलश तुम दीप्तिमान
लेकिन तुमने नींव की धड़कन को समझा
उसके सपनों को पहचाना
उसके ही स्वरों में तुमने
शुरू किया गाना
पाँच सौ अठत्तर दिन
अनुपल, अनुक्षण
लोहे के तारों से बने
मकड़ी के जाले को तुमने था काटा।
तुमने राज दण्ड क्या उठाया
कि देश की देह को
उसकी खोई रीढ़ मिल गई,
उसको चिर खोया विश्वास मिल गया
उजला उजला इतिहास मिल गया।
समय ने संदर्भ बदला
संदर्भ ने तुम्हें कब बदला ?
गंगा का जल कब होता है गदला ?
तुम्हें न पद से मोह था कोई
तुम तो आदमी थे आत्मा के,
आत्मा की पुकार पर थे चलते
आँखों में आत्मा की
शिव सपने थे पलते।
सूर्य की अगवानी की अभिलाषा से
तुमने जीवन भर
स्याही को रात को पिया
अभावों में भी जीवन को
आभा के साथ जिया।
आग और पानी,
शक्ति और क्षमा,
तलवार और तुला,
उसूल और असलियत,
इन दोनों में ही
रूपायित तुम थे;
अपने इस रूप के कारण
कब प्रश्नायित तुम थे ?
लेकिन तुममें शक्ति थी
सर्जन भी था,
विसर्जन था तो
अर्जन भी था।
बिगुल था तुमने बजाया
बाँसुरी तुमने बजाई।
बिगुल बजाने में तुम चुके नहीं
लेकिन आश्चर्य
बाँसुरी बजाने में तुम्हारा
जीवन चुक गया,
काफला चलते - चलते
क्यों अचानक रुक गया ?
लगता है शायद दिल पर
बोझ बड़ा था कोई,
आखों के सम्मुख
हमीद खड़ा था कोई।
तुम तो उस बोझ को
साथ लिए चले गए,
हमारा तो सम्बल गया
हम नाहक में छले गए।
चिंतन के चौराहे पर
हम लुटे - से, ठगे - से
खड़े खाली हाथ
बाँसुरी के बजैया के आगे
श्रद्धा से झुक रहा माथ !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

वह आशीर्वाद

श्रीमती इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री चुनी जाने के बाद तुरन्त स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री की पत्नी श्रीमती ललिता शास्त्री का आशीर्वाद लेने उनके घर गईं। यह संस्मरण मार्मिक भी है, मांगलिक भी, पर यह महत्वपूर्ण भी है; क्योंकि अपने स्वर्गीय पिता की देखरेख में उनकी आत्मा में पूर्व और पश्चिम के संस्कारों का जो समन्वय हुआ है, उसमें भारतीयता कितनी प्रबल है इस छोटी-सी घटना में उसकी अभिव्यक्ति हो गई।

मंत्री पद की शर्त

१३ जनवरी १९६६ को राजधानी जकार्ता में इंडोनेशिया के राष्ट्रपति श्री सुकर्ण ने पत्रकारों से बातचीत करते हुए एक मजेदार बात कही कि इंडोनेशिया के वित्त-मंत्री पद के लिए जो व्यक्ति अपनी सेवाएँ अर्पित करेगाउसे तुरन्त वित्त मंत्री बना दिया जाएगा। शर्त यह है कि वह देश की मौजूदा आर्थिक दशा में सुधार न कर सका, तो उसे पांच साल जेल में रहना पड़ेगा।

शर्त उम्दा है, उपयोगी है। क्या ही अच्छा हो कि भारत के केन्द्रीय खाद्यमंत्री का चुनाव भी इसी शर्त पर किया जाए। मेरा ख्याल है कि ढाई साल में ही भारत के खेत पूरी तरह लहलहा उठें।

एक समाचार एक प्रश्न

उत्तरकाशी जिले के पुरीला ब्लाक, खरसारी ग्राम निवासी किसान श्री तारासिंह ने एक एकड़ जमीन में ७ हजार एक सौ चार किलोग्राम धान पैदाकर एक अभूतपूर्व रिकार्ड कायम किया है। अभी तक महाराष्ट्र के श्री ए. आर. निर्गुदकर का ३ हजार छः सौ पैंसठ किलोग्राम का रिकार्ड था।

इससे दो बाते साफ़ सामने आई पहली यह कि भारत का आम किसान प्रति एकड़ २॥-३ हजार किलोग्राम धान ही पैदा करता है। दूसरी यह कि जब उत्तरकाशी के पहाड़ी इलाके में सात हजार एक सौ चार किलोग्राम धान पैदा हो सकता है, नीचे के अच्छे जिलों की उपजाऊ धरती में तो इससे भी ज्यादा हो सकता है।

इस समाचार को पढ़कर एक प्रश्न मन में उठता है कि जब इतना धान पैदा हो सकता है, तो होता क्यों नहीं? स्पष्ट है कि कृषि पंडित की उपाधि और सर्वोत्तम पैदावार का नकद इनाम प्राप्त करने के लिए एक एकड़ में जितना श्रम, पानी और खाद देता है, उतना श्रम, पानी और खाद वह अपनी पूरी धरती को नहीं देता या नहीं दे सकता। यदि नहीं देता, तो उसे सामाजिक और कानूनी रूप में बाध्य किया जाना चाहिए और यदि वह नहीं दे सकता, तो चारों ओर से बचा कर सरकार उसे वह दे। यदि एक और एक दो होते हैं, तो खाद्य समस्या का यही सम्मानपूर्ण हल है।

सरकारी चबच्चे में

दिसम्बर १९५० में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अड़तीसवां अधिवेशन श्री जयचन्द्र विद्यालंकार के सभापत्वि में हुआ था। जयचन्द्र जी इतिहास के महान विद्वान हैं, पर अतृप्त महत्वाकांक्षी हैं। उन्होंने कोटा-अधिवेशन को नेहरू जी को गाली देने का अधिवेशन बना दिया। इसके बाद सम्मेलन पर कब्जा रखने की मुकदमेबाजी आरंभ हो गई। जब कोई राह न रही, तो टंडन जी की प्रेरणा से उत्तर प्रदेश सरकार ने एक कानून बनाकर सम्मेलन को अपने हाथ में ले लिया। इस कानून को भी हाईकोर्ट में चुनौती दी गई और यह कानून रद्द हो गया। तब भारत सरकार ने एक कानून बनाया और हिन्दी साहित्य सम्मेलन और जामिया मिल्लया को राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित कर अपने हाथ में ले लिया।

इस कानून के अनुसार सब मुकदमे वापस हो गए और एक कमेटी बन गई, जिसका काम नियमावली बनाकर चुनाव कराना था, जिससे सम्मेलन फिर अपना सार्वजनिक रूप ग्रहण करे। इस कमेटी के अध्यक्ष सेठ गोविन्द दास जी संसद सदस्य हैं, जो पानी भी हिन्दी का नाम लेकर ही पीते हैं, पर दो बरस से उन्हीं के नेतृत्व में सम्मेलन सरकारी चबच्चे में सड़ रहा है।

एक मजेदार बात यह सुनी है कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन की अंगभूता राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा को जब श्री आनन्द कौशल्यायन ने छोड़ा, उसके हिसाब में दो लाख रुपये जमा थे। श्री मोहनलाल भट्ट के तत्वाधान में कहा जाता है कि ये रुपये समाप्त हो गए और तब समिति को जीवित रखने के लिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्मचारियों के प्रावीडेंड फंड के भी दो लाख रुपये गैर कानूनीतौर पर खर्च कर दिए गए। उन्हीं भट्ट जी को सुना है सेठ जी ने सरकारी सम्मेलन को प्रजातंत्री सम्मेलन बनाने का काम सौंप रखा है, जिसे दो वर्ष बीतने पर भी अभी पूरा नहीं किया जा सका, यद्यपि नियमावली टंडन जी के सामने ही बन गई थी।

सम्मेलन का वार्षिक उत्सव १५ वर्षों से नहीं हुआ और इस प्रकार हिन्दी बिना मंच के तरस रही है, तड़फ रही है। हिन्दी वाले बहुत शोर मचाते हैं, पर क्या कोई ऐसा नहीं जो हिन्दी के सर्वोच्च मंच को सरकारी चबच्चे में से निकालने के लिए ज़ोर मारे।

मेरी पार्टी

स्वतंत्रपार्टी के महासचिव श्री मीनूमसानी ने भुवनेश्वर में कहा—"मेरी पार्टी अगले चुनाव में उडीसा, गुजरात, राजस्थान में सत्ता प्राप्त करने का जोरदार प्रयत्न करेगी।" जीवन की परिस्थितियाँ आशाजनक न हों, तब भी आशावादी बने रहना बड़ी बात है, पर मसानी जी से निवेदन है कि 'मेरी पार्टी' की जगह 'हमारी पार्टी' कहा करें—प्रजातंत्र में ऐसा ही शिष्टाचार है।

हिन्दी वाले

अलीगढ़ में हिन्दी छात्रों को पारितोषिक वितरण करते हुए कहा "हिन्दी प्रदेशवासी हिन्दी के लिए शोर मचाते हैं, पर आचरण हिन्दी विरोधी करते हैं। और तो और निमंत्रणपत्र तक विदेशी भाषा में छपाते हैं। अभी अभी मैंने जिन छात्रों को उत्तीर्ण होने की बधाई दी, उनसे मुझे थैंक्स मिले, धन्यवाद नहीं।"

जयपुर कांग्रेस में श्री केशवदेव मालवीय खाद्य प्रस्ताव पर अंग्रेजी में बोले, तो हल्ला मचा—'हिन्दी हिन्दी।' मालवीय जी ने कहा—"खाद्यमंत्री श्री सुब्रह्मण्यम् अंग्रेजी ही समझते हैं, इसलिए मुझे अंग्रेजी में बोलना चाहिए।" श्री सुब्रह्मण्यम् ने हिन्दी में कहा—"नहीं, आप हिन्दी में ही बोलिए।" मालवीय जी दो मिनट हिन्दी में बोले और फिर अंग्रेजी में बोलने लगे। सोचने की बात है कि हम किस तरह जी रहे हैं?

जेल में क्यों नहीं

जयपुर कांग्रेस में राष्ट्रवादी मुसलमानों का भी एक सम्मेलन हुआ। प्रश्न यह है कि राष्ट्रवादी मुसलमान का क्या अर्थ है? १५ अगस्त १९४७ से पहले कुछ मुसलमान राष्ट्रवादी थे, कुछ पाकिस्तानवादी। तब यह शब्द चलता था; अब यह एक मज़ाक है। क्या भारत में अब भी ऐसे मुसलमान हैं, जो राष्ट्रवादी नहीं, राष्ट्रविरोधी हैं? यदि हाँ, तो राष्ट्रवादी मुसलमानों का काम सम्मेलन न कर राष्ट्रविरोधी मुसलमानों की गिरफ्तारी में सरकार को सहयोग देना। जो मुसलमान इस तरह के सम्मेलन करते हैं, वे अपना भला करेंगे, न मुसलमानों का, न देश का।

भटक गए, संभलें

श्री महावीर त्यागी ने ताशकंद-समझौते के विरोध में केन्द्रीय पुनर्वास-मंत्री के पद से त्यागपत्र दे दिया। कोई चपरासीगिरी आज कल नहीं छोड़ता, उन्होंने दुलर्भ मंत्री पद छोड़ दिया। जनवरी के 'नयाजीवन' में मतभेद होते भी मैंने उनकी प्रशंसा की, पर जयपुर-कांग्रेस में त्यागी जी ने ताशकन्द-समझौता-प्रस्ताव पर जो रुख लिया वह निश्चय ही भ्रान्त है और जी चाहता है कि उनसे कहूं—त्यागी जी, आप भटक गए हैं, संभल जाइए, भटकते ही न जाइए।

त्यागी जी ने पूछा—"मैं जानना चाहता हूँ कि हमारे नेताओं ने अच्छी तरह यह जानते हुए भी कि इन क्षेत्रों को खाली करना पड़ेगा, बार बार यह आश्वासन क्यों दिया कि हम इन्हें कभी वापस नहीं करेंगे?"

यह प्रश्न इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है कि जनता को भावना में बह सकता है, इसलिए इसका उत्तर दिया जाना चाहिए। दुख है कि जयपुर में किसी ने इसका जवाब नहीं दिया और यह बीमार सवाल अखाड़े में पहलवान की तरह अकड़ता रहा। इस प्रश्न का पहला उत्तर तो यह है कि हाजीपीर से न हटने की बात कहते समय यह किसी को पता न था कि ताशकन्द में समझौते की बात इस ढंग पर होगी। इसलिए जो कुछ कहा गया उस समय की परिस्थिति में कहा गया।

दूसरा इससे गहरा उत्तर यह है कि समझौता एक सौदा होता है, उसमें मोल-तोल करना पड़ता है और मोल-तोल हमेशा ऊँचे से नीचे पर आता है। भारत हाजीपीर से न हटने की बात इतने जोर से न कहता, तो राष्ट्रपति अयूब नरम होकर समझौते की चौसर पर आकर ही न बैठते।

तीसरा उत्तर यह है कि हम हाजीपीर से न हटते, तो राष्ट्रपति अयूब अपने पद पर न रह पाते और भुट्टो उस कुरसी पर आ जाते, जो ठेठ चीन परस्त आदमी है। अयूब साहब मूल में पश्चिमाभिमुख हैं, इसलिए उनके कलेजे पर अपना जोक चिपकाने का कोई न कोई

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रास्ता हमारे पास है। इसे हम यों समझें कि गांधी जी दूसरे विश्व युद्ध में अंग्रेजों के मुकाबले हिटलर की पराजय चाहते थे; क्योंकि हिटलर के मुकाबले अंग्रेजों से लड़ना सुगम था।

बस एक बात और—इस युद्ध में हमारी कुछ धरती पर पाकिस्तान का कब्जा था और पाकिस्तान की कुछ धरती पर हमारा, तो धरती से हमने समझौते में धरती बदली और हाजीपीर के बदले में पाकिस्तान ने 'युद्ध न कर मतभेदों को बातचीत से तै करने की हमारी शर्त मानी। हम हाजीपीर न देते, तो यह शर्त कैसे मनवाते ?

फिर अभी एक ऐसी बात भी है, जिस पर पर्दा पड़ा हुआ है। वह उधड़ जाना चाहिए। क्या शास्त्री जी ने ताशकंद जाते समय साथियों से यह नहीं पूछा था कि यदि हाजीपीर पर बात टूटने लगे, तो बात तोड़ दूँ ? और क्या उन्हें यह उत्तर नहीं दिया गया था कि ना, बात मत तोड़ना ? फिर विरोध की गुंजायश कहाँ है ? क्यों उस हुतात्मा को झंझोड़ा जारहा है ?

सेना की भावना

इस सम्बन्ध में यह प्रश्न भी उठाया गया है कि हाजीपीर वापस करते समय हमें उन सैनिकों की भावना भी जाननी चाहिए, जिन्होंने जान देकर और जान की बाजी लगाकर हाजीपीर जीता है।

उत्तर प्रदेश के प्रखर राजनीतिज्ञ श्री गोविन्द सहाय ने इस संबंध में ठीक ही कहा कि सैनिकों की भावना के सवाल को जिस तरह उठाया—भड़काया गया है, उसे मैं खतरे का संकेत मानता हूँ। राजनैतिक समझौतों और शांति के समझौतों में सैनिकों की भावना का प्रवेश प्रजातंत्र की दृष्टि से इतिहास में हमेशा ही घातक हुआ है, जोश में हमें यह नहीं भूलना चाहिए।"

उचित है कि हमारा विरोध रचनात्मक हो। ऐसा न हो, तो कम से कम ऐसा भी न हो कि हमारे प्रजातन्त्र को ही ले डूबे—'न मर्ज़ रहे न मरीज़ !'

जीवन की लम्बाई

कासा बांका के श्री हजमुहम्मद बेन बशीर की मृत्यु १६ जनवरी १९६६ को १६६ वर्ष की उम्र में होगई। वे शराब-सिगरेट न पीते थे और उबली ही सब्जियाँ ही खाते थे। इन्हीं दिनों मेरठ ज़िले के स्वामी बाल चन्द्रानन्द की मृत्यु १७५ वर्ष की उम्र में हो गई। उनका भी जीवन बहुत सात्विक था। कहें, सादगी में पैसे की ही मितव्ययता नहीं है, ज़िन्दगी के दिनों की भी मितव्ययता है।

ये बूचरखाने

१९५९ में मैंने लिखा था—हमारे अस्पताल इन्सानियत के बूचरखाने बनते जारहे हैं। फरवरी १९६६ में 'नवभारत टाइम्स' ने टिप्पणी लिखी है—

"दिल्ली के अस्पतालों में, जहाँ लोग इसलिए दाखिल होते हैं कि उनका कल्याण होगा, हालत यह है कि अब कल्याण का ही खतरा बढ़ गया है। अस्पतालों में बच्चे बदले जाने या चुराये जाने की घटनाएँ तो होती ही रहती हैं, अब एक ताजा घटना यह हुई कि एक नवजात शिशु की मूत्रेन्द्रिय काट दी गई। यह घटना दिल्ली नगर निगम के एक अस्पताल के प्रसूति कक्ष में हुई। जिस बच्चे के साथ यह हुआ, उसकी इन्द्रियाँ प्लास्टिक सर्जरी द्वारा जोड़ने की कोशिश भी बेकार रही और फिलहाल यही जान पड़ता है कि उस बच्चे का जीवन दुःखमय ही बीतेगा।

दिल्ली के सरकारी अस्पतालों में घोर अव्यवस्था और वहाँ भर्ती होने वालों की जिन्दगी अरक्षित होने की खबरें जब तब आती रहती हैं, लेकिन ताजा घटना इस समूची अव्यवस्था और अरक्षा के चरम सीमा पर पहुंच जाने की परिचायक है। मामले में तत्काल कोई कार्रवाई नहीं की गई और अपराधी का पता लगाने की जिम्मेदारी पुलिस को सौंपने में जो देरदार हुई, उसमें भी यही निष्कर्ष निकाला जाएगा कि प्रशासन का सारा शीराजा बिखरा हुआ है।

प्रसूति गृहों में ऐसे काण्ड क्यों होते हैं, इस सवाल के कई जवाब दिये जा सकते हैं। व्यक्तिगत वैमनस्य, लोभ आदि तो कारण हैं ही, ऐसे समाचार भी आ रहे हैं कि निजी तौर पर काम करने वाली 'मिडवाइफ' और दाइयाँ भी इस बात की कोशिश कर रही हैं कि अस्पतालों में जाने से घबरा कर नागरिक अपना सारा प्रबन्ध इनकी मदद से घरों में ही करने की बात सोचने लगें।

पिछले दिनों पंजाब से समाचार आया कि वहाँ परिवार-नियोजन का सबसे प्रबल विरोध प्राइवेट मिडवाइफें और दाइयाँ कर रही हैं और वे ही उसके खिलाफ प्रचार भी करती हैं; क्योंकि उन्हें अपना धन्धा समाप्त हो जाने का भय है। 'बख्शीश' का मोह और उसके न मिलने पर अस्पतालों और प्रसूति गृहों की आया आदि का रुष्ट हो जाना और नवजात की उपेक्षा करने अथवा जच्चा या बच्चा दो में से किसी एक अथवा दोनों का अहित करने की घटनाएँ भी जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

तब प्रकाश में आती रहती हैं।"

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सम्बन्ध में सुनने को अब और क्या बाकी रहा है ?

विरोधी दल क्या करें ?

कार्य कुशलता और कर्तव्य निष्ठा, कांग्रेस-शासक के दो बड़े दोष हैं। इनके कारण अच्छी योजना भी अमल में आते आते प्रभावहीन हो जाती है। इसे ठीक करने की नम्बर एक जिम्मेदारी विरोधी दलों की है। यह मानने के बाद आचार्य कृपलानी ने अपने एक लेख में कहा है—"यदि चुनावों में कांग्रेस को पराजित करने के लिए वे (विरोधी दल) गंभीर निश्चय करें, तो वे वर्तमान परिस्थितियों में भी एक सामान्य न्यूनतम कार्यक्रम विकसित कर सकते हैं। मेरी दृष्टि में यही एक रास्ता है, जिसके द्वारा प्रजातांत्रिक विरोधी दलों का एक दृढ़ संगठन बनाया जा सकता है। यह प्रस्तावित करना व्यर्थ है कि वे विभिन्न दल देश के सामने उपस्थित अधिकांश विषयों पर एक ठोस सामान्य कार्यक्रम बनाकर सहयोग कर सकते हैं। यदि इस न्यूनतम कार्यक्रम पर भी प्रजातांत्रिक विरोधी दल सहयोग कर सकें, तो यह आशा की जा सकती है कि वे यदि अपने विरोधी उत्तरदायित्व को भली प्रकार निबाहें, तो कांग्रेस को हराने में सफल हो सकते हैं। कांग्रेस को हरा कर वे परिस्थितियों से इस बात के लिए स्वतः विवश हो जाएँगे कि अपने न्यूनतम कार्यक्रम को विस्तृत करें, जो कि देश को प्रगति एवं उत्थान की ओर ले जाए।"

अगर, अगर, अगर, विरोधीदल चुनावों में मिल जाएँ, तो-तो-तो वे कांग्रेस को हरा सकते हैं। मतलब यह कि वयोवृद्ध आचार्य की दृष्टि में सबसे जरूरी काम कांग्रेस को हराना है। ठीक भी है, जो दल १४ साल में ३ बार पिटकर भी एक नहीं हो सके और चौथी बार भी एक होने से साफ इंकार कर रहे हैं, उनकी बड़ी से बड़ी महत्वाकांक्षा, जो है उसे तोड़ने के अतिरिक्त और क्या हो सकती है ?

सुझाव और कांग्रेस को हराने का चाव, दोनों दिलचस्प हैं, पर आचार्य जी इन्हें उद्घोषित करते समय यह भूल गए कि जिस जनता के हाथ में चुनाव करने का निर्णय है, वह उन कारीगरों को अपना भवन क्यों सौंप देगी, जिनके पास विध्वंस का हथौडा तो है, पर निर्माण की करनी-बिसोली नहीं ? आज विरोधी दलों के पास कुछ नहीं है और तब भी वे एक नहीं हो रहे हैं, तो जब उनके पास तर माल होगा, वे एक रह जाएँगे ? फिर पिछले १५ सालों में विरोधी दलों ने क्या कोई रचनात्मक काम किया है ? जन-प्रशिक्षण के लिए देहातों में डेरा डाला है। जनता के दुख दर्द में दवा-पानी नहीं, सिर्फ सान्त्वना देने वे गए हैं? यदि नहीं, तो क्या वे भारत की जनता को इतनी मूर्ख समझते हैं कि वह बेकार लोगों के इकट्ठे होने पर उन्हें काम के योग्य समझ लेगी ? जो लोग जनता को मूर्ख समझते हैं, वे प्रजातंत्री देश में कभी चैन से नहीं बैठते। हमारे विरोधी दल भी शासन की कुरसियों को (और ऐसे ईमानदार लोग भी हैं, जो उन की कमियों-कमजोरियों को) देखते हैं और फुदकते हैं—जानते-बूझते यह भूलकर कि टिड्डा फुदक कर जलती लालटैन की चिमनी से अपना सिर टकरा सकता है, पर खूबसूरत रोशनी को गोद में नहीं ले सकता।

समय और हम

समय और हम बड़े आकार के ६६५ पृष्ठों का एक ग्रन्थ है। यदि उसे हम ऊपर से देखें तो मुखपृष्ठ पर श्री जैनेन्द्र कुमार का विचार मग्न चित्र है, हस्ताक्षरों में नाम है और इस तरह वह जैनेन्द्र जी का नया-अब तक की सब पुस्तकों से बड़ा-ग्रन्थ मालूम होता है, पर उसे ध्यान पूर्वक भीतर से देखें, तो वह कोई ग्रन्थ नहीं, एक इंटरव्यू है—निश्चय ही संसार साहित्य की सब से बड़ी इंटरव्यू।

श्री विरेन्द्र कुमार गुप्त ने प्रातःकाल प्रतिदिन छह महीने तक अपने घर से कई मील जैनेन्द्र जी के घर पहुंच उनसे प्रश्न पूछे और उत्तर टाइप कर लिए। कुल प्रश्नों की संख्या ६४८ है। प्रश्न किसी विशेष शृंखला में नहीं पूछे गए थे। बाद में और छह महीने लगा कर वीरेन्द्र जी ने उन प्रश्नोत्तरों को सोलह भागों में बाँटा और पूरे अड़तीस पृष्ठों का गंभीर विश्लेषणात्मक उपोद्घात लिखा। इस तरह वीरेन्द्र जी के एक वर्ष के घनघोर परिश्रम से जो ग्रन्थ तैयार हुआ उस पर नाम छपा जैनेन्द्र जी का और वीरेन्द्र जी के लिए छपा-प्रश्नकर्त्ता वीरेन्द्र कुमार गुप्त।

पुस्तक प्रकाशित की सर्वसेवा-संघ प्रकाशन काशी ने, कापी राइट हुआ जैनेन्द्र जी का और रॉयल्टी में राजसंस्करण की दो हजार प्रतियां जैनेन्द्र जी को मिलीं, जिन पर प्रकाशक की जगह छपा पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली, यानी स्वयं जैनेन्द्रजी का प्रकाशन-संस्थान। एक पुस्तक का मूल्य बीस रुपये। साफ साफ यों कि वीरेन्द्रजी की उस इंटरव्यू से जैनेन्द्र जी को ४० हजार रुपये मिले, पर उन वीरेन्द्र कुमार गुप्त को क्या मिला.

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व-चिन्तन

● श्री दीनदयालु शास्त्री

वियतनाम

३७ दिन के युद्ध-विराम के बाद वियतनाम में पुनः गोलाबारी शुरू हो गई। युद्धविराम के इन दिनों में या बाद में भी संसार के राजनीतिज्ञों तथा धर्म गुरु पोप ने भी चाहा था कि वियतनाम में स्थायी शान्ति कायम हो जाए, किन्तु दुर्भाग्य से यह न हो सका। परिणाम यह है कि अमरीकी जहाज उत्तरी वियतनाम के फौजी अड्डों पर गोलाबारी करने में लगे हैं और उत्तरी वियतनाम से समर्थित वियतकांगी गोरिल्ले दक्षिणी वियतनाम में तोड़ा-फोड़ी कर रहे हैं।

यह सारी प्रक्रिया यथार्थ में चीन और अमेरिका की प्रतिद्वन्दिता पर आधारित है। साम्यवादी चीन समूचे दक्षिणपूर्वी एशिया को अपना प्रभाव-क्षेत्र मानता है। वह साम्यवादी उत्तरी वियतनाम के राष्ट्रपति होचीमिन्ह द्वारा दक्षिणी वियतनाम के साथ छेड़खानी किये रहता है। उधर दक्षिण वियतनाम को, जिसका शासन साम्यवाद विरोधी है अमेरिका का समर्थन प्राप्त है। अमेरिका दक्षिणपूर्वी एशिया में साम्यवाद का प्रसार नहीं चाहता, अतः दक्षिण वियतनाम में अपनी फौजें रखकर उत्तरी वियतनाम की गतिविधियों को वह रोके रखता है।

पिछले एक साल से इस द्वन्दयुद्ध में एक नया मोर्चा कायम हुआ है वियतकांग का। जाति, धर्म और भाषा के आधार पर दोनों वियतनाम एक हैं। दोनों के नागरिक आपस में मिलते जुलते हैं, उन में शादी विवाह, व्यापार आदि का सम्बन्ध बना है; भले ही राजनैतिक दृष्टि से ये नागरिक दो देशों में विभक्त हों।

उत्तरी वियतनाम में गोरिल्ला युद्ध की शिक्षा पाकर जो सैनिक, अर्ध सैनिक या नागरिक दक्षिणी वियतनाम में पहुंच गए हैं और वहां अमेरिका का प्रतिरोध करने में लगे हैं वही वियतकांगी कहलाते हैं। वियतनाम में स्थायी सन्धि का प्रस्ताव करते समय राष्ट्रपति होची मिन्ह की मुख्य शर्त यह है कि इस वियतकांगी दल को दक्षिणी वियतनाम का यथार्थ प्रतिनिधि माना जाना चाहिए। इस शर्त को न दक्षिणी वियतनाम का शासन मानता है और न ही उसका पोषक अमेरिका। अमेरिका का कहना है कि बिना किसी शर्त के युद्धविराम हो। बाद में आपस में बातचीत हो एवं जनमत गणना द्वारा दोनों वियतनाम फैसला करें कि उन में किस प्रकार का शासन स्थापित होना चाहिए। ये नए शासन चाहें, तो मिल कर एक देश के रूप में परिणत हो जाएँ। ऐसा हो जाने पर अमेरिका की सेना दक्षिणी वियतनाम को खाली कर देगी। लक्षण ये हैं कि उत्तरी वियतनाम अमेरिका के हमरुख को स्वीकार नहीं करेगा और वियतनाम में वर्तमान शीतयुद्ध जारी रहेगा।

कुर्द और इराक

पश्चिमी एशिया में इराक, टर्की, सीरिया और ईरान की जहाँ

जिसके परिश्रम का यह फल था? उत्तर है उसे कुछ नहीं मिला।

पहला प्रश्न यह है कि क्या संसार के साहित्य भंडार में और भी कोई ऐसी इन्टरव्यू है, जिस पर इन्टरव्यू लेने वाले की जगह इन्टरव्यू देने वाले का अधिकार माना गया हो? मैंने एक पत्रकार के रूप में अनेक इन्टरव्यू ली हैं। वे छपी हैं और उनका परिश्रमिक मुझे मिला है। एक साहित्यकार के रूप में मुझसे दूसरों ने अनेक इन्टरव्यू ली हैं, पर उनका आर्थिक लाभ मुझे नहीं, इन्टरव्यू लेने वालों को ही मिला है। सब जगह यही होता है, पर 'समय और हम' के उत्तरदाता जैनेन्द्र जी प्रश्नकर्ता और संपादक श्री वीरेन्द्र कुमार गुप्त को सहलेखक मानने को भी तैयार नहीं हुए। क्या यह साहित्यिक डकैती नहीं है? एक ऐसे मनुष्य के द्वारा जो सर्वोदय, अपरिग्रह, अहिंसा, क्षमा, सत्य और न्याय के अतिरिक्त और किसी विषय पर बात ही नहीं करता जो धन को ही संसार के दुखों का मूल बताता है। मुझे यह जानकर और भी दुख हुआ कि जैनेन्द्र जी से वीरेन्द्र जी की जो बातें हुई, उनमें मामला इसलिए नहीं सुलझा कि जैनेन्द्र जी यह जानते हैं कि वीरेन्द्र जो आर्थिक कारणों से मुकदमा लड़ने की ताकत नहीं रखते यदि ऐसा है, तो यह शोषण शक्ति शाली के द्वारा अशक्त के शोषण का अत्यंय निन्दनीय उदाहरण माना जाएगा। दिल्ली में जैनेन्द्र जी और वीरेन्द्र जी नहीं रहते, दूसरे बड़े-छोटे साहित्यिक भी रहते हैं। उनका उत्तरदायित्व है कि वे बीच में पड़ें और मामले को सुलझाएँ। प्रेमचन्द जी के जीवनचरित पर काफी हल्की बातें हो चुकी हैं। अब उससे आगे का अध्ययन लिखा जाए, इसी में हम सब की शोभा है। •

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीमायें मिलती हैं, वहां कुर्द नाम की एक शूरवीर और स्वतंत्रता प्रिय जाति रहती है। दुर्भाग्य से यह कुर्दिस्तान पिछली कई सदियों से पराधीन है। पहले इसका बड़ा भाग टर्की के मातहत था, केवल एक छोटा प्रदेश ईरान के शासन में था। सन् १९१८ की लड़ाई के बाद कुर्दिस्तान का एक बड़ा भाग इराक में समा गया। कुछ भाग टर्की में रह गया और कुछ सीरिया में चला गया।

मुख्य भाग के कुर्द सन् १९१८ से ही अपनी स्वतंत्रता के लिए आन्दोलन करते रहे हैं और समय-समय पर विभिन्न इराकी शासनों ने उन्हें स्थानीय स्वशासन का वचन भी दिया है, किंतु उसकी पूर्ति आज तक नहीं हो सकी। यही कारण है कि कुर्द नेता मौलाना बरजानी ने इराकी शासन के खिलाफ पुनः विद्रोह की घोषणा की है।

ये कुर्द लोग इराक के उत्तरी पहाड़ों में रहते हैं। इराकी पैट्रोल इसी कुर्द प्रदेश में पैदा होता है जो राजस्व का मुख्य आधार है। कुर्द की स्वतंत्रता का अर्थ है इराक का पैट्रोल से हाथ धो बैठना। यही कारण है कि इराकी शासन कुर्दों की भावना का आदर नहीं करता और स्वयं कुर्द इराकी शासन को बलष्ट स्वीकार नहीं करना चाहते।

एक बात और है—इराक काश्मीर के आत्मनिर्णय सम्बन्धी पाकिस्तानी विचार धारा का समर्थक हैं, किन्तु अपने यहाँ कुर्दों को आत्मनिर्णय का अधिकार देने के लिए तैयार नहीं है। इसे राजनैतिक विडम्बना के सिवाए क्या कहा जा सकता है?

नाइजेरिया

दक्षिणी रोडेशिया में गोरे शासन की स्थापना पर अफ्रीकी राज्यों में शोक पैदा हुआ था, उसके परिणाम स्वरूप नाइजेरिया की राजधानी लैगोस में राष्ट्रमण्डली प्रदेशों के प्रतिनिधि एकत्र हुए थे। अंग्रेज प्रधान मंत्री विलसन भी इस सम्मेलन में गए थे। इस सम्मेलन में ही रोडेशिया का आर्थिक बहिष्कार करने की योजना बनी थी। भाग्य की बात है कि सम्मेलन के तुरन्त बाद नाइजेरिया में सैनिक क्रान्ति हो गई। उसके प्रधान मंत्री सर अबूबदर तालेवा बालेवा मारे गए और सेनापति इदौंसी राष्ट्र के सर्वेसर्वा घोषित किए गए। यह नाइजेरिया आबादी की दृष्टि से अफ्रीका का सब से बड़ा राष्ट्र है। आबादी का बड़ा भाग उत्तरी प्रदेश में है, जहाँ के निवासी इस्लाम के उपासक हैं। दक्षिण के तीनों प्रदेशों में हब्शियों का निवास है, जो मूर्ति पूजक हैं या अब इसाई हो चले हैं। भिन्न-भिन्न भाषाओं और धर्मों का केन्द्र होते हुए भी यह नाइजेरिया अफ्रीका में जनतंत्र का संदेशवाहक है। आशा की जाती है कि वहाँ का सैनिक शासन शीघ्र समाप्त होगा और पुनः वहां जनतंत्री शासन प्रारंभ हो सकेगा।

रोडेशिया

दक्षिणी रोडेशिया में इयान स्मिथ की विद्रोही गोरी सरकार को कायम हुए तीन महीने से अधिक समय हो गया। सुरक्षा कौंसिल ने इस गोरे शासन को अनियमित माना। अंग्रेज प्रधान मंत्री श्री विलसन ने इसे विद्रोह घोषित किया अफ्रीकी स्वतंत्र राज्य चालिस लाख हब्शियों के देश में ढाई लाख गोरों के शासन की बात सुन कर बहुत क्षुब्ध हुए। सब का निर्णय हुआ कि रोडेशिया के खिलाफ आर्थिक प्रतिबन्ध लगाये जाएँ, किन्तु यह सब व्यर्थ रहा। इयान स्मिथ की गोरी सरकार का बालबाँका न हो सका। तम्बाकू, चमड़ा और कपास रोडेशिया के मुख्य उत्पादन हैं। इन्हें वहाँ से न खरीदा जाए, तो रोडेशिया का आर्थिक ढाँचा डगमगा जाएगा ऐसा दुनिया का ख्याल था। पैट्रोल न मिले तो रोडेशिया के उद्योग धन्धे शिथिल पड़ जाएँगे ऐसी भी मान्यता लोगों की थी।

इन वस्तुओं पर प्रतिबन्ध लगे, किन्तु परिणाम जैसी आशा थी वैसा नहीं निकला। कारण यह है कि उसके तीन पार्श्वों में अवस्थित देशों अंगोला, मौजम्बीक और दक्षिण अफ्रीका की रोडेशिया के साथ सहमति है। दक्षिण अफ्रीका में एक करोड़ हब्शी आबाद हैं, किन्तु शासन है बीस लाख गोरों का। तो फिर यदि रोडेशिया में ऐसा हो जाए, तो दक्षिण अफ्रीका को खुश होना चाहिए, बिरादरी में वृद्धि होती है, तब दक्षिण अफ्रीका रोडेशिया का सहायक बनेगा, विरोधी नहीं। अंगोला और मौजम्बीक पुर्तगाल के उपनिवेश हैं इनका शासन पड़ोस में गोरों का एक और उपनिवेश बनता देखकर प्रसन्न होगा, यह हमें मानना चाहिए। ऐसी हालत में आर्थिक प्रतिबन्धों से रोडेशिया के गोरे अपना शासन छोड़ देंगे यह मानना ठीक नहीं है बहुसंख्यक हब्शियों पर दक्षिण रोडेशिया में ढाई लाख गोरों का शासन एक ऐसी समस्या है जिसका हल केवल वहाँ के हब्शियों के हाथ में है। यदि वे सजग हुए तो उनका संख्या बल कालान्तर में इस अल्पसंख्यक शासन को समाप्त करके रहेगा। हाँ, दुनिया की अन्य शक्तियों ने यदि हब्शियों का साथ दिया, तो रोडेशिया में क्रान्ति सहज में हो सकती है, अन्यथा रोडेशिया की समस्या हल होने में देरी लगेगी।

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-दर्शन

शराबबंदी ज्यों की त्यों

गांधीजी की कल्पना में स्वतंत्र भारत की जो तस्वीर थी, उसमें यह भी था कि देश में शराब पीने-बनाने पर पूरी पाबंदी रहेगी। १९३७ में जब पहली बार कांग्रेसी मंत्रीमंडल बने, तो शराबबंदी का काम शासन ने अपने हाथ में लिया। उत्तर प्रदेश में उस समय शराब आदि नशों से सरकार को ६ करोड़ रुपये साल की आय थी और इतने ही रुपये शिक्षा पर खर्च होते थे। अंग्रेज गवर्नर ने साफ कह दिया कि शराबबंदी करेंगे, तो शिक्षा विभाग बंद करना पड़ेगा।

बड़ी करारी चुनौती थी। तब यह रास्ता निकाला गया कि पूरे राज्य में नहीं, थोड़े इलाके में शराब बंदी की जाए और बाकी में शराब के विरुद्ध प्रचार हो। वही नीति १९६२ में चीनी आक्रमण होने तक चलती रही, पर सब समझते थे कि इससे सरकार की आमदनी घटती है, पर लाभ कुछ नहीं होता। शराब बंदी तभी सफल हो सकती है, जब सारे देश में एक साथ हो और महकमा ताकतवर हो। बम्बई राज्य के मुख्यमंत्री श्री मुरारजी देसाई ही देश में अकेले शासक थे, जो शराबबंदी चाहते थे और उसके लिए प्रयत्न करते थे। चोरबाजारी के बावजूद उन्हें काफी सफलता भी मिली थी, पर और सब जगह लोग इसे लोग लिहाज में निभा रहे थे।

चीनी आक्रमण होते ही सैनिक साधनों के लिए रुपये की मांग बढ़ी, तो महाराष्ट्र के मुख्य मंत्री श्री नाइक ने अपने राज्य में शराबबंदी ढीली करदी, तब उत्तर प्रदेश ने भी ऐसा ही चाहा। सरकार ने सर टेकचन्द बख्शी की अध्यक्षता में जो कमेटी बनाई, उसने पूर्ण शराबबंदी की शिफारिस की, इससे उलझन बढ़ी।

मध्य प्रदेश के ४३ जिलों में से कुल छह जिलों में शराबबंदी है। श्री द्वारका प्रसाद मिश्र मुख्य मंत्री उसे हटाना चाहते थे। इसलिए कांग्रेस कार्यकारिणी ने इस प्रश्न पर विचार किया और निर्णय दिया कि शराबबंदी ज्यों की त्यों चलती रहेगी। इसका अर्थ हुआ कि शराब भी रहेगी, शराबबंदी भी; यानी यथार्थ को भी नमस्कार और आदर्श को—भले ही वह काल्पनिक हो।

पंजाबी सूबा

अकाली दल के नेता मास्टर तारासिंह ने आंदोलन उठाया था कि पंजाब का हिन्दी भाषी क्षेत्र अलग कर दिया जाए और शेष को पंजाबी सूबा बना दिया जाए। असल में मास्टर जी सिखों के लिए सिखिस्तान चाहते हैं, पर यह नारा जमता नहीं, इस लिए पंजाबी भाषा का सूबा कहते हैं, जैसे गुजराती का गुजरात, मराठी का महाराष्ट्र, बंगला का बंगाल। श्री प्रतापसिंह कैरों ने मास्टर जी के आंदोलन को ही नहीं, मास्टर जी के नेतृत्व को भी रौन्द कर रख दिया।

तब अकाली दल का नेतृत्व संत फतह सिंह के हाथ में आया, पर नारा उनका भी पंजाबी सूबे का ही है। वे यहाँ तक बढ़े कि पंजाबी सूबे के लिए आमरण अनशन पर उतारू हो गए और घोषणा की कि १५ दिन में सरकार ने पंजाबी सूबे की बात स्वीकार न की, तो मैं जल कर मर जाऊँगा। भाग्य से तभी भारत पाकिस्तान युद्ध छिड़ गया और जनमत के दबाव में संत जी ने अपना अनशन-जलन स्थगित कर दिया। इस पर उनकी खूब तारीफें हुई और युद्ध समाप्त होने के दूसरे ही दिन शास्त्री जी ने पंजाबी सूबे के प्रश्न पर निर्णय करने के लिए एक कमेटी बना दी।

इधर इस प्रश्न पर सार्वजनिक रूप से और सरकारीतौर पर काफी चर्चा हुई है और लगता है कि सरकार शीघ्र ही इस प्रश्न पर निर्णय करना चाहती है। पंजाब के हिन्दू पंजाब का बटवारा नहीं चाहते और सिख इसी पर तुले हुए हैं। पंजाब सरहदी सूबा है, इस लिए सरकार कोई ऐसा मार्ग निकालना चाहती है कि पंजाब का बटवारा न हो और सिखों की हुकूमत करने की महत्वाकांक्षा तृप्त हो जाए।

एक शानदार सफलता

भारत के रेल मंत्री श्री सदोबा कान्ह जी पाटिल ने नये साल का रेल बजट पेश करते हुए राष्ट्रीय नव निर्माण की इस शानदार सफलता का जिक्र किया कि तीसरी योजना में रेलों ने माल डिब्बों और सवारी डिब्बों के निर्माण में आत्म-निर्भरता प्राप्त करली है। अब भारत विदेशों से दोनों तरह के डिब्बे नहीं खरीदेगा। डीजल और बिजली के रेलइंजिनों के निर्माण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की भी नींव पड़ गई है। कोयले के रेलइंजिनों में भारत स्वावलंबी हो ही चुका है। छोटी लाइनों के डीजल इंजिन नहीं बनाए जाएँगे, पर चौथी योजना में रेलों की जरूरत का चलस्टाक भारत की जरूरत के लायक भारत में ही बनने लगेगा। पटरी बिछाने में भी भारत स्वावलंबी हो जाएगा। माल डिब्बों के लिए जो इस्पात विदेशों से मंगाना पड़ता है, वह राऊरकेला और बोकारो से काफ़ी हद तक पूरा हो जाएगा। भारत का सामान इतना अच्छा है कि विदेशों के बाजारों में खुली होड़ कर सकता है। भारत को १.६ करोड़ मूल्य के ८४० वैगनों के आर्डर मिलना इसका सबूत है। यांत्रिक सिगनलों में भी भारत स्वावलंबी हो गया है। चौथी योजना के अंत में रेल-सामान की दृष्टि से भारत बहुत अच्छी स्थिति में होगा, इसमें संदेह नहीं।

भारत में सड़कें

सड़क विकास कार्यक्रम की प्रगति की एक सरकारी समीक्षा के अनुसार चालू वर्ष के अन्त तक देश में पक्की सड़कों की लम्बाई १ लाख ७७ हजार ३०० मील तक पहुंच जाएगी, जबकि सन् १९६१ में पक्की सड़कों की कुल लम्बाई १ लाख ४६ हजार ५१२ मील ही थी।

इसके अतिरिक्त १९६६ के अंत तक देश में कुल मिलाकर कच्ची सड़कों की लम्बाई ४ लाख २१ हजार ४०० मील होने की संभावना है।

सड़क विकास कार्यक्रम ने, जिसे देश के भावी आर्थिक विकास में अति महत्वपूर्ण समझा जाता है, सन १९६२ की आपात स्थिति की घोषणा के बाद और भी महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर लिया है, क्योंकि इस घोषणा से सीमा पर सड़कों के बनाए जाने की भी आवश्यकता पड़ गई है।

सन १९६२-६३ में सड़कों के निर्माण का व्यय ७२.४ करोड़ रु० था, जबकि १९६४-६५ में यह बढ़ कर १०७.५ करोड़ रु० हो गया, तथा ६५-६६ के बजट में १३५.२० करोड़ रु० की व्यवस्था है।

तीसरी योजना में सड़कों के निर्माण के लिए जो २७२ करोड़ रु० की मूल व्यवस्था की गई थी, वह २८७ करोड़ रु० से बढ़ गई है।

प्रत्येक १०० वर्गमीलों के पीछे २६ मील लंबी सड़क के औसत के मुकाबले तीसरी योजना के अन्त तक प्रति १०० वर्ग मीलों के पीछे ४७.६ मील का अनुमान है। फिर भी इस तथ्य को दृष्टि में रखते हुए कि संचार प्रणाली में भावी विस्तार अन्य साधनों के मुकाबले मुख्यतः सड़कों के निर्माण पर ही जोर दिया जाना चाहिए, चौथी योजना में सड़क प्रणाली के विकास पर ही अधिक बल दिया जाएगा।

तीसरी योजना के दौरान में ४५९ करोड़ रु० के व्यय की मूल व्यवस्था की गई थी, पर चौथी योजना में ७४० करोड़ रु० के व्यय की व्यवस्था की जा रही है। इसके मुकाबले में तीसरी योजना में रेलवे विकास के लिए १३०० करोड़ रु० की जो व्यवस्था थी वह बढ़ाकर केवल १३२० करोड़ रु० की ही की गई है।

स्वतंत्रता के बाद लगभग १५० बड़े पुलों का निर्माण हुआ है।

खेल का मैदान

भूतपूर्व स्थल सेनाध्यक्ष और खेलकूद परिषद के अध्यक्ष जनरल करिअप्पा ने कहा कि देश में हरेक स्कूल के साथ खेल का मैदान होना ही चाहिए। इसके लिए जरूरत हो, तो आसपास के मकान गिरा देने चाहिएँ। खेल के मैदान बच्चों की पवित्र क्रीड़ा-भूमि है। उस पर मकान खड़े करके हम अपवित्र होते हैं। शहरों के बीच के मकानों को तोड़ना कष्ट का काम है, पर उनके मालिकों को मावजा देकर हमें उनको तोड़ डालना चाहिए। जीवन का सूत्र यह है कि बच्चों और छात्रों को खेल में और काम में व्यस्त रखो, और उनके बीच राजनीति को प्रवेश न करने दो। हड़तालों एवं उपद्रवों से तुम अपने आप बचे रहोगे।

कृषकहीन ग्राम

बिहार के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री विनोदानन्द झा ने कहा है-शहरी चकाचौंध से आकर्षित हो कर ग्रामीण युवक ग्राम छोड़ रहे हैं। देहातों में ऐसा वातावरण तैयार होना चाहिए कि युवक शहरों की ओर न जाएँ और अपने कृषि कार्य में लगे रहें। छोटा नागपुर जैसी भूमि में १० बीघा जमीन में खेती करके पाँच हजार रुपये की आय हो सकती है, फिर भी युवक १०० रु. की नौकरी की खोज में शहर में भटकते हैं। यदि यही दशा रही, तो देश के ग्राम कुछ वर्षों में कृषकहीन हो जाएँगे।

नए सेनाध्यक्ष

भारत पाक युद्ध के विजेता स्थल सेनाध्यक्ष जनरल जयन्त नाथ चौधरी १० जून १९६६ को सेवानिवृत्त होंगे और उनकी जगह उप सेनाध्यक्ष जनरल आर०पी० कुमारमंगलम् नए स्थल सेनाध्यक्ष होंगे। जल सेनाध्यक्ष श्री बी०एस० सोमन भी मार्च में सेवानिवृत्त होंगे और उनकी जगह श्री ए० के० चटर्जी, जो इस समय उपवायु सेनाध्यक्ष हैं, नए वायुसेनाध्यक्ष होंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्थिक-सामाजिक क्रान्ति की ओर

● कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

श्री बृजमोहन दिल्ली के सार्वजनिक जीवन में विशिष्ट स्थान रखते हैं—वे वहाँ के नेताओं में अग्रणी हैं, पर मैं एक दूसरी ही दृष्टि से उन्हें प्यार करता हूँ। अतीत में भारत के बहुजन की विचारधारा थी—हम असत्य से सत्य की ओर बढ़ें। शताब्दियों तक यही हमारे राष्ट्र की मुख्य विचार धारा—विचार दिशा—रही और सदाचरण ही जीवन की प्रतिष्ठा का मार्ग रहा। समाज का अनुमोदन इस धारा को प्राप्त था और यह अनुमोदन ही इस धारा के बढ़ते रहने की शक्ति थी। समाज साधनों को नहीं, साधना को आदर देता था। सोने की लंका का अधीश्वर और विद्या का समुद्र होकर भी रावण समाज की दृष्टि में राक्षस ही तो था।

अब यह विचार धारा बदल गई है और भारत के बहुजन की धारणा है कि असत्य का, बुराइयों का, जोड़-तोड़ का, अदला बदली का सहारा लिए बिना कोई जीवन में प्रतिष्ठा, सम्पदा और पद प्राप्त नहीं कर सकता। समाज का अनुमोदन इस धारा को प्राप्य है। समाज साधना को नहीं, साधनों को महत्व देने लगा है और असत्य का, बुराइयों का, जोड़-तोड़ का अदला-बदली का सहारा लेकर ऊँचे साधन प्राप्त करने वालों को ऊँचे आसन पर बिठाने, उन्हें माला पहनाने और उनकी जय बोलने में नहीं हिचकता।

यह परिवर्तन क्यों हुआ? यह प्रश्न हमारे राष्ट्रीय जीवन का अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रश्न इसलिए है कि हम इसका सही समाधान पाकर ही यह समझ सकते हैं कि स्वतंत्रता मिलते ही भारत में भ्रष्टाचार का ज्वालामुखी क्यों फट पड़ा?

महाभारत के आरम्भ में ही अर्जुन युद्ध से हिरहिरा गया था और उसने साफ कह दिया था कि युद्ध की विजय से भीख माँग कर खाना अच्छा है। क्या कायरता के कारण? ना, उस समय अर्जुन से बड़ा वीर कौन था? अर्जुन युद्ध से हिरहिराया था अपने विवेक के कारण। उसके विवेक की दिशा यह थी कि युद्ध से श्रेष्ठ मनुष्यों की मृत्यु के कारण कुल की, राष्ट्र की सनातन मर्यादायें भंग हो जाएँगी और हमें जाने कब तक नरक में सड़ना पड़ेगा—'नरके अनियतं वासो भवतीत्मनुशुश्रुमः'।

१९३९ से १९४५ तक जो विश्व-युद्ध हुआ, उससे भारत का नरकवास आरम्भ हुआ, पर अर्जुन के फार्मूले से नहीं, दूसरे ही फार्मूले से। वह फार्मूला यह था कि ठेकेदारों ने भिन्न-भिन्न युद्ध-कामों में काफी रुपया कमाया। १९४७ में भारत स्वतन्त्र होगया और देश का उद्योगीकरण आरम्भ हुआ। ठेकेदारों का कुटुम्ब बड़ा हो गया और उद्योगपतियों के हाथ भी बहुत लम्बे होगए। देश में घाटे की अर्थव्यवस्था चालू होगई थी, रुपये बरस पड़े थे। इन रुपयों पर ज्यादा से ज्यादा छापा मारने के लिए ठेकेदारों ने प्रशासकों को चान्दी के तार में बांधा, तो उद्योगपतियों ने राजनीतिज्ञों को सोने के तालों में बन्द किया। राजनीतिज्ञों के भी हाथ-पैर प्रशासक ही थे। बस राजनैतिक पद, सेवा की अंजलि से लाभ की तिजोरी बन गए और सारा ढाँचा बदल गया। फ्रांस, इङ्गलैंड और जापान में भी यह बाढ़ आ रही है, पर वहाँ के राजनीतिज्ञ अपनी जगह दृढ़ रहे, प्रवाह में नहीं बहे और इसी कारण उस प्रवाह को नियंत्रित कर सके, जो पूरे राष्ट्रीय चरित्र को बहाने के लिए उभरा था। जनता ने भी नेताओं के आदर्श से प्रेरित होकर और राष्ट्रीयता में दीक्षित होने के कारण चमत्कारी चरित्र का प्रदर्शन किया।

हमारे देश में गांधी जी ही यह काम कर सकते थे—करा सकते थे, पर उन्हें तो हमने अपनी ही गोलियों से मार डाला। फिर भी ऋषियों का तप और शहीदों का खून अभी काम कर रहा है और देश में कुछ ऐसे लोग हैं, जो जीवन में सफलता की निश्चित सम्भावना होने पर भी बहुजन की विचारधारा में नहीं बहते और बुरे आचरण से मिलने वाली उस सफलता की उपेक्षा कर पाते हैं। इसके साथ ही अकेले रहकर भी उस बहुजन-प्रवाह के विरुद्ध वे अड़ते-लड़ते रहते हैं। श्री बृजमोहन उन्हीं कुछ में हैं और जीवन के इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

चौराहे पर मैं उन्हें प्यार करता हूँ, मान देता हूँ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी जिसे प्यार करता है, उसकी बात उसे प्रभावित करती है। इसलिए जब दिल्ली की एक सभा में श्री बृजमोहन ने कहा—"महात्मा गांधी के बाद भारत की धरती पर दो आन्दोलन चले हैं। उनमें एक के नेता हैं आचार्य विनोबा भावे और दूसरे के नेता हैं आचार्य तुलसी। एक आर्थिक क्रांति को लेकर चला है, तो दूसरे ने नैतिक क्रांति का बिगुल बजाया है। मेरे ख्याल से ये दोनों आन्दोलन एक दूसरे के पूरक हैं।" तो मेरा ध्यान तुरन्त उनकी बात की ओर गया—मेरा चिन्तन उसके प्रति सजग हो उठा।

विनोबा जी युग-सन्त हैं और रा विचार है कि उन जैसी पैनी और परिष्कृत प्रतिभा का आदमी शंकराचार्य के बाद भारत में कोई दूसरा नहीं हुआ। आचार्य तुलसी भी अपने सम्प्रदाय के सर्वोच्च सन्त हैं और उनकी दृष्टि व्यापक है। दोनों ही देश की जनता के पूज्य हैं, पर राष्ट्रीय प्रश्न यह है कि क्या विनोबा जी का भूदान और तुलसी जी का अणुव्रत आर्थिक-नैतिक क्रांति का रूप ले रहे हैं देश में? क्या भूदान और अणुव्रत कोई राष्ट्रीय आन्दोलन बन पा रहे हैं? या वे एक शुभ अनुष्ठान हैं?

अनुष्ठान, आन्दोलन, क्रान्ति; क्या भेद है इनमें? क्या स्वरूप है इनकी जीवन-प्रक्रिया का?

अनुष्ठान यह कि व्यक्ति को एक शुभ विचार या कार्य अच्छा लगता है और वह उसे अपने आचरण में ले लेता है। यह आचरण उसे श्रेष्ठता प्रदान करता है। यह है अनुष्ठान। यह धर्म का साधन है, क्योंकि धर्म की प्रक्रिया ही यह है कि व्यक्ति-व्यक्ति के श्रेष्ठ आचरण से, धर्मपालन से समाज की व्यापक श्रेष्ठता का निर्माण हो। सब धर्मों ने यही प्रयत्न किया है और अपने क्षेत्र में उन्हें सफलता भी मिली है, पर यह सफलता एक सीमा पर आकर रुक गई है, क्योंकि ऐसा लगता है कि धर्म की प्रक्रिया में कहीं कोई ऐसी चूल ढीली है कि धर्म थोड़ा रास्ता ठीक-ठीक चलकर अपनी मूल प्रेरणा को भूल जाते हैं और कर्मकाण्ड में उलझ कर मानवीय एकता की जगह विभेद को बढ़ावा देने लगते हैं। स्वयं हमारा देश धर्म के नाम पर लम्बे खूनी फाग खेलकर टुकड़ों में बंट चुका है।

शताब्दियों की उथल-पुथल के बाद मार्क्स महान ने नया रास्ता खोजा कि अच्छे व्यक्तियों के द्वारा समाज के निर्माण की घुमावदार बात को छोड़कर हम अच्छे समाज के द्वारा अच्छे व्यक्तियों के निर्माण की सीधी राह पर अपना ध्यान केन्द्रित करें।

मनुष्य के सम्बन्ध में मूल प्रश्न यह है कि मनुष्य अपनी प्रकृति में, अपने मूल रूप में, अच्छा है या बुरा? धर्म का उत्तर है—मनुष्य में ईश्वर का निवास है, वह मूल में शुद्ध सत्व रूप है, निर्मल है, श्रेष्ठ है।

व्यवहार का प्रश्न है—फिर वह बुरा, पतित तामसी क्यों हो जाता है? धर्म का उत्तर है—बुरी परिस्थितियाँ उसे बुरे संस्कारों-स्वभावों से ढक देती हैं, जैसे दहकते अंगारे पर राख की परत चढ़ जाती है।

मार्क्स महान ने कहा कि हम अच्छे व्यक्तियों से अच्छे समाज के निर्माण का द्रविड़ प्राणायाम न करके मूल में ही ऐसे समाज का निर्माण करें, जो मनुष्य को पतित करने वाली उन परिस्थितियों का ही मूलोच्छेद करदे और मनुष्य को पतन के अवसरों से दूर रखे।

विचित्र बात है कि अतीत का राम राज्य एकतंत्रवादी और धर्म-प्राण था। फिर भी उसका मूलमंत्र था अच्छी समाज-व्यवस्था की स्थापना ही, जो व्यक्ति को अच्छा बनने में एक मर्यादा दे। गांधी जी ने रामराज्य और मार्क्स के विधान को विकसित कर जिस सर्वोदय व्यवस्था का रूप दिया, उसमें व्यक्ति स्वतंत्र होकर भी समाज से अनुप्राणित है, समाज द्वारा पोषित है और समाज के हित का शोषण करने से वर्जित है।

हम जिस समाज-व्यवस्था में जी रहे हैं, वह न रामराज्य है, न मार्क्सवादी है, न सर्वोदयवादी है। गलतफ़हमी से बचने के लिए यहाँ यह भी साफ कहा जाना चाहिए कि न वह समाजवादी ही है। उसमें व्यक्ति अपनी बुद्धि और साधन-शक्ति से समाज-हित का शोषण कर रहा है और समाज व्यक्ति को ऊपर उठाने में, अच्छा बनने में मददगार नहीं है, कहें बाधक ही है, पूरी तरह और बुरी तरह बाधक?

इस भ्रष्ट समाज-व्यवस्था को बदल डालने का आवेग पूर्ण प्रयत्न क्रान्ति है, इस क्रान्ति के लिए जनमानस को व्यापक रूप से उद्वेलित कर देने का वेगपूर्ण प्रयत्न आंदोलन है और सामूहिक परिवर्तन एवं सामूहिक उत्थान की बात छोड़ कर व्यक्तिगत रूप से जो भी जितना भी अच्छा बन सके बने, यह अनुष्ठान है।

अंग्रेजी का एक शब्द है ग्रिकर और दूसरा ग्रो। मौसम पर कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्टोरेज में आलू रख दिए जाते हैं और मौसम के बाद निकाल लिए जाते हैं। यह रखना, रक्षित करना ही प्रिजर्व है। हम एक बीज बोते हैं, उसमें अंकुर फूटते हैं, टहनियाँ आती हैं, फूल खिलते हैं, फल लगते हैं। यह सब ग्रो है—सम्वर्धन है।

मध्यकाल में जब देश छोटे-छोटे आपसी झगड़ों में व्यस्त राज्यों में बँट गया और विदेशी आक्रमणों से देश घिर चला, तो संस्कृति खतरे में पड़ गई। राजनीतिज्ञ इस परिस्थिति में बेकार थे—वे विभेद में घिरे थे, विभेदों को बढ़ा रहे थे। तब सन्त उभरे और उन्होंने तीर्थों, त्योहारों, पर्वों और संस्कारों में संस्कृति को चमत्कारी ढंग से सुरक्षित-प्रिजर्व कर दिया। सदियों वह सुरक्षित रही। सुरक्षा की इस प्रक्रिया को न समझ पा कर ही आश्चर्यमुग्धता के भाव से महाकवि इकबाल ने भी कभी गाया था—

कुछ बात है कि हस्ती
मिटती नहीं हमारी।
बरसों रहा है दुश्मन
दौरे ज़मां हमारा।
सारे जहाँ से अच्छा
हिन्दोस्ताँ हमारा।

बरसों बरसों तक ज़माने के सत्यानाशी दौर में सुरक्षित रहने के बाद १५ अगस्त १९४७ का दिन आया। हम जानते हैं कि यह हमारी स्वतन्त्रता का जन्म दिन है, पर हमें जानना चाहिए कि यह हमारी सुरक्षित संस्कृति के ग्रो का—सम्वर्धनकाल का भी जन्मदिन है। इसे जानकर ही उस सम्वर्धन को जन-जन की शक्ति का सहयोग मिल सकता है। इसके लिए एक आर्थिक, नैतिक आन्दोलन की ज़रूरत है, जो देश की सबसे बड़ी आवश्यकता सामाजिक क्रान्ति को बल दे, आगे बढ़ाए।

बहुत गहरे तक अपनी खोज एवं चिन्तन की उंगलियाँ पहुंचा कर भी मैं पाता हूं कि आचार्य विनोबा भावे का भूदान और आचार्य तुलसी का अणुव्रत न आन्दोलन बन पा रहे हैं, न क्रान्ति, बस वे अनुष्ठान ही हैं। कहा तो कि अनुष्ठान का भी अपना महत्व है, पर अनुष्ठान को क्रान्ति मान लेना उचित तो है ही नहीं, राष्ट्रीय दृष्टि से खतरनाक भी है।

कोई विचार जब समाज के—जनमन के मानस-पात्र में प्रतिबिंबित हो उठता है, संकल्पों में झलक उठता है, तब नेतृत्व मिलने पर वह आन्दोलन का रूप लेता है और जब वही विचार समाज के जन-जन के आवेगों उद्वेगों में कर्म का रूप धारण कर भड़क उठता है, तब क्रान्ति का रूप लेता है। भूदान और अणुव्रत दोनों ही इस स्थिति से दूर हैं और एक अनुष्ठान बन कर रहे जा रहे हैं।

मैं इसे हीनता की दृष्टि से नहीं देखता-कोई छोटी बात नहीं मानता। युगसंत विनोबा और आचार्य तुलसी के व्यक्तित्व हमारे अभिनन्दन के पात्र हैं कि उनकी प्रवृत्तियाँ आन्दोलन या क्रांति का रूप न लेकर भी अनुष्ठान बनी रह सकीं। इस अभिनन्दन की गहराई को हम इस गज से नाप सकते हैं कि इसी बीच में सम्पूर्ण साधन-सुविधाओं के साथ उभरी भारत सेवक समाज, भारत साधु-समाज और समाज—कल्याण की प्रवृत्तियाँ साइन बोर्ड बन कर ही रह गईं। इसे यों देखें कि दो अंगोछों का अर्धनग्न वेष गांधी जी का अनुष्ठान था, खादी उनका आन्दोलन था और स्वतंत्रता उनकी क्रान्ति थी।

भूदान और अणुव्रत सामूहिक मानस की आकांक्षा को आकृति नहीं दे सके, पर इसकी तह कहाँ है?

आर्य समाज को मैं आन्दोलन, नहीं, एक जागरण-क्रान्ति मानता हूं—उसने सोये देश को अपनी जगह और अपने ढंग पर जाग्रत किया। देश का पहला आन्दोलन था बंग-भंग के विरुद्ध उठा स्वदेशी आन्दोलन। वह अपने कार्य में सफल हुआ और १९११ में वायसराय लार्ड कर्जन ने बंगभंग का बंगाल को दो हिस्सों में बांटने का प्रस्ताव वापस ले लिया। इसके बाद १९२० से १९४५ तक यह देश गांधी जी के नेतृत्व में देशव्यापी आन्दोलनों का केन्द्र रहा।

आन्दोलन का प्राण है भीड़ और हमारा देश भीड़ों का देश है। अमावस तिथि को सोमवार का पड़ना एक साधारण संयोग है और चन्द्रग्रहण या सूर्यग्रहण एक प्राकृतिक संयोग, पर सोमवती अमावस्या या ग्रहण के आते ही देश के करोड़ों नर नारी नदियों में स्नान करने को उमड़ पड़ते हैं। ऐसे देश में आन्दोलन उठाना क्या मुश्किल है, पर शर्त यही है कि नेता भीड़ जोड़ने का मनोविज्ञान जानता हो। गांधी जी इसके विशेषज्ञ थे।

उनके बाद उनकी कांग्रेस ने कोई आन्दोलन नहीं चलाया, यहाँ तक कि चुनावों को भी आन्दोलन का रूप देने में वह असफल रही। गांधी जी के उत्तराधिकारी और कांग्रेस के नेता जवाहर लाल ने निरंतर भीड़ें जोड़ीं, यह रंगा-पुता सत्य है। साफ-स्वच्छ सत्य यह है कि जवाहर लाल के चारों ओर निरन्तर भीड़ें जुड़ीं, पर जवाहर लाल ने दवाफरोशों की तरह उन भीड़ों को आकर्षित तो किया, पर दिया कुछ नहीं कि वह घर लेजा सकें उसका उपयोग करें। इससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

धीरे-धीरे जनता में आम आन्दोलन की प्रवृत्ति सो गई।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९४६-४७ के साम्प्रदायिक उपद्रवों ने मुसल्मानों को पस्त कर दिया और वे एक समूह के रूप में राष्ट्रीय जीवन से तटस्थ हो गए। भारत-पाकिस्तान युद्ध पहली घटना है, जिसने मुसलमानों के सामूहिक मानस को पहली बार राष्ट्रीय स्पर्श से पुलकित किया है। विरोधी दलों ने कई आन्दोलन चलाए, पर उनके नेता अपने आन्दोलनों का आधार (इश्यू) तैयार न कर सके, जो जन-मानस को अपील करता। इसका एक मजेदार संस्मरण मेरी स्मृति में है। समाजवादी पार्टी ने उत्तर प्रदेश में एक आन्दोलन चलाया और उसे इस अर्थ में पूरी सफलता मिली कि कई हजार आदमी जेल गये, पर जनता के मन पर उसका क्या प्रभाव पड़ा? यह प्रश्न महत्वपूर्ण था, नम्बर एक था। मैं इसका उत्तर पाने के लिए कई गांवों में गया, जिसमें समाजवादी कार्यकर्त्ता गिरफ्तार हुए थे। मेरा गांव वालों से प्रश्न था—"आपके गांव में क्या हलचल हो रही है?" गांव वालों का सामान्य उत्तर था—"अजी, वे लाल टोपी वाले पकड़े जा रहे हैं।" एक वृद्ध से मैंने पूछा—"ये लाल टोपी वाले क्यों पकड़े जा रहे हैं?" तो उत्तर मिला—"पंडत जी, जो सरकार से धींगामस्ती करेगा, वो तो पकड़ा ही जागा (जायगा)। उसे क्या सरकार गरम दूध प्यावैगी (पिलायेगी)?" मतलब यह कि इन आधारहीन आन्दोलनों से जनता की आन्दोलन-वृत्ति को गहरा धक्का लगा, पर विरोधी दलों के नेताओं ने दुख है कि जनता के मनोवैज्ञानिक तत्वों की घोर उपेक्षा की।

एक और गजब हुआ कि गांधी जी के आदर्शों से गिर कर देश के शासकों और प्रशासकों ने वैभव का जीवन जिया और वह भी इस तरह कि वैभव का प्रदर्शन होता रहे। इसके साथ ही भौतिक उन्नति की इतनी अधिक चर्चा हुई कि नैतिक और राष्ट्रीय विचारधारा का रस ही सूख गया। गांधी जी की कार्य पद्धति थी, जीवन का स्तर ऊँचा करना, पर हमारी कार्य पद्धति हो गई, रहन-सहन का स्तर ऊँचा करना। हम जीवन का आदर्श बेच कर, ड्राइंग रूम का हर्ष खरीदने में जुट गए और उन्हें भूल गए जिनके लिए दो रोटी और एक कुरता ही जीवन है।

इससे जीवन में खींचतान आई, गुणों की होड़ छूटी, खुदगर्जी की जोड़ तोड़ ने जोर बांधा। शासक दल आपसी झगड़ों में उलझ कर ऐसा नंगा हुआ कि जनता का आदर खो बैठा और दूसरे दल उसे समेट न सके। वातावरण व्यक्तिवादी हो गया, आपाधापी मच गई, गांव-शहर-प्रदेश-देश के नेता अपने को स्थिर बनाने में जुट पड़े और सामूहिक वृत्ति का दम घुट गया।

विनोबा जी के सामने जब बीस डाकुओं ने ग्वालियर क्षेत्र में शस्त्रों सहित आत्म-समर्पण किया, तो सामूहिकता की लहर देश भर में दौड़ गई और सर्वोदय क्रान्ति का बीज बोने के लिए जनमानस का विशाल क्षेत्र तैयार होगया, पर उस समय के मध्यप्रदेश-शासन की अदूर-दर्शिता और विनोबा जी की नेतृत्व-हीनता से वह पड़ा रह गया।

चीनी आक्रमण के समय भी स्वस्थ सहज रूप में जनमानस उद्बुद्ध हुआ, पर उस उद्बोधनको न किसी ने क्रांति का पथ दिखाया, न आन्दोलन का और व्यक्तिगत उन्नति के लिए शासकों-प्रशासकों और क्षेत्रीय नेताओं ने उसका ऐसा शोषण किया कि वे ही बाद में यह पूछते फिरे कि वह उबाल-उत्साह कहाँ गया?

इस प्रकार जनमानस के जिस वातावरण में आन्दोलन पनपते हैं, क्रांतियाँ फूटती हैं, वही नष्ट हो गया। जनता अनैतिक व्यापार से त्रस्त है, आर्थिक विषमता से ग्रस्त है। नैतिक आन्दोलन और आर्थिक क्रान्ति के लिए भारत के जनमानस को भारत पाकिस्तान युद्ध ने पूरी तरह तैयार कर दिया है पर जनता में स्वावलम्ब की, क्रान्ति का स्वयं नेतृत्व करने की १९४२ जैसी प्रवृत्ति नहीं है।

जीवन में पैसे की कीमत बहुत बढ़ गई है और पैसा कमाने के साधन बिखरे नहीं, थोड़े लोगों में सिमट गए हैं। वे थोड़े उन साधनों का दुरुपयोग कर रहे हैं। यही युग की स्थिति है और भूदान और अणुव्रत इस स्थिति को रोकने के स्वेच्छा-अनुष्ठान हैं। आवश्यकता है कि ये दोनों आन्दोलन का रूप लें, जिससे उस योजना-कमीशन के क्रूर सींखचे ढीले हों, जिसने निर्माण के सब साधनों को अपने कब्जे में कर उन हाथों में दे दिया है, जो आर्थिक क्रान्ति और नैतिक आन्दोलन से अपने व्यक्तिगत हितों के लिए खतरा अनुभव करते हैं। देश के हितों का युग-तकाजा है कि योजना-भवन की ऊँची देह में सर्वोदय के फेफड़े और अणुव्रत की आंखें लगाई जाएँ, जिससे इस देश का समाजवाद एक खूबसूरत, पर लगभग बेकार नारे की जगह जन-जन का भाग्य हरने वाली आर्थिक-सामाजिक क्रांति का अधिष्ठाता बने। देश के नेतृत्व के लिए युग की यही चुनौती है।

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पद्मश्री गोपालप्रसाद व्यास और मैं

डा. पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश'

डा० कमलेश

हास्य रस के सिद्ध कवि भाई गोपालप्रसाद व्यास से मेरा परिचय सन् १९३८ के अक्तूबर महीने में तब हुआ, जब वे मथुरा से हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग की उत्तमा (साहित्यरत्न) परीक्षा में प्रविष्ट होने के लिए आगरा आए थे और बन्धुवर श्री विद्याभूषण जी अग्रवाल (अब उच्चाधिकारी आकाशवाणी, बम्बई) के यहां आकर रुके थे। उस समय मैं भी इसी परीक्षा की तैयारी में लगा था और विद्याभूषण जी के घर पर ही मिल कर पढ़ा करता था। विद्याभूषण जी तब सैंट जांस कालेज, आगरा के गिने-चुने छात्रों में विख्यात थे और अंग्रेजी-साहित्य के गंभीर अध्येता भी। मैं तब आदमरी स्कूल में शिक्षक था, लेकिन काव्य और साहित्य के प्रति अभिरुचि ने मुझे विद्याभूषण जी का स्नेह-भाजन बना दिया था। वे स्वयं हिन्दी-साहित्य में भी गहरी पैठ रखते थे।

नित्य की भाँति एक दिन सायंकाल जब मैं विद्याभूषण जी के घर पहुंच गया, तो देखा कि उन की बैठक में कुर्त्ता और धोती पहने एक साधारण-सा युवक बैठा है जो अपनी बात-चीत के ढंग से शुद्ध ब्रज का नमूना जान पड़ता है। मुझे देखते ही विद्याभूषण जी ने कहा—"आओ, आज एक और सहपाठी से परिचय करा दूं।" और इतना कह कर उन्होंने उस युवक का नाम 'गोपालप्रसाद व्यास' बताया। साथ ही कहा—"यह भी तुम्हारी ही तरह स्वनिर्मित है। प्रेस में कम्पोजीटरी करता है और काव्य और साहित्य में यशोर्जन की तीव्र अभिलाषा संजोए है।" मैं स्वयं 'हाकरी' छोड़ कर अध्यापक बना था और महत्वाकांक्षा मुझे भी चैन नहीं लेने देती थी। अतः अपने जैसे ही एक और साथी को पा कर मुझ में आत्म-विश्वास पहले से कहीं अधिक गहरा हो गया।

'साहित्यरत्न' की परीक्षा का परिणाम घोषित होने के कुछ दिन बाद देखा कि व्यास जी 'साहित्य सन्देश' के सहायक सम्पादक के रूप में आगरा आ कर रहने लगे हैं। 'साहित्य-संदेश' की स्निग्ध छाया में ही मेरे जीवन का कैशौर्य हरा-भरा रह सका था और मैं अध्यापक होने पर भी कृतज्ञतावश उस की प्रत्येक योजना में अपना विनम्र सहयोग देकर सुख का अनुभव करता था। 'साहित्य-संदेश' के लिए पुस्तक-समीक्षा लिखना और अन्य लिखने वालों तक समीक्षार्थ पुस्तकें पहुंचाने और उन की समीक्षा लाकर देने का कार्य मैं अध्यापन कार्य से अवशिष्ट समय में करता रहता था। यहाँ यह कहना भी अप्रासंगिक न होगा कि आदरणीय महेन्द्र जी, उन का साहित्यरत्न भण्डार और 'साहित्य-संदेश' प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से साहित्यिकों के निर्माण का अविस्मरणीय कार्य करते रहे हैं। उन्हीं के कारण नागरी प्रचारिणी सभा, आगरा और उस का हिन्दी-साहित्य-विद्यालय आज के अनेक गण्यमान्य

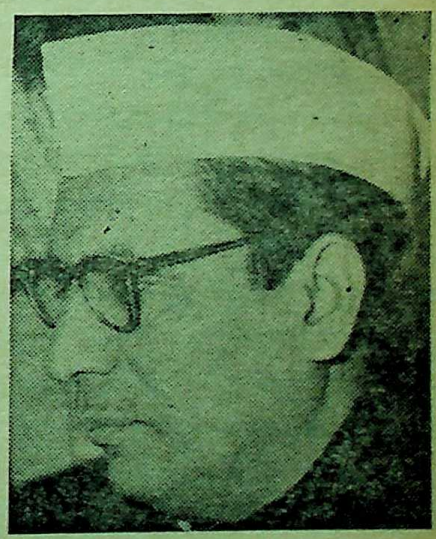

पद्मश्री व्यास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्वानों और साहित्य-सेवियों के आश्रयस्थल रहे हैं।

'साहित्य-संदेश' में व्यास जी के आने से एक नई जान आ गई। आचार्य पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी, आचार्य पं० रामचन्द्र शुक्ल, महाकवि प्रसाद आदि पर उस के जो विशेषांक निकले, उनकी योजना को सफल बनाने का कार्य व्यास जी का ही था। इसके साथ ही विभिन्न विषयों पर अधिकारी विद्वानों से लेख लिखाना और जिस विषय पर लेख न उपलब्ध हो, उस पर स्वयं लिखना भी उन्हीं के जिम्मे था। इन विशेषांकों ने 'साहित्य-संदेश' को इतना लोकप्रिय बना दिया कि उस की ग्राहक - संख्या दिन - प्रतिदिन बढ़ने लगी और व्यास जी की पत्रकार-प्रतिभा को भी विकसित होने का अवसर मिला। परम श्रद्धेय बाबू गुलाबराय का सान्निध्य और हिन्दी के मूर्धन्य लेखकों से सम्पर्क इन दोनों ने मिल कर व्यास जी को हिन्दी-साहित्य जगत में विख्यात कर दिया।

सन् १९३९ से सन् १९४१ तक मैं सूरत और बम्बई में हिन्दी-प्रचारक का कार्य करके जब वापिस आगरा लौटा, तब पता चला कि व्यास जी हास्य रस के कवि हो गए हैं। तुकबन्दी से मुझे भी शौक रहा है इसलिए पत्रकार व्यास जी के कवि रूप में अवतरित होने पर मुझे आश्चर्य मिश्रित प्रसन्नता हुई। साहित्यतीर्थ बाबू गुलाबराय की भैंस से प्रेरणा पाकर लिखी गई 'बाबू जी की डबल भैंस' शीर्षक प्रथम हास्य रस की कविता ने उन्हें हास्यरस के कवि के रूप में वैसे ही लोकप्रिय बना दिया, जैसे महाकवि निराला जी को उनकी 'जुही की कली' ने बना दिया था। ब्रजभाषा में भी कुछ कवित्त-सवैये उन्होंने लिखे और वे कवि-सम्मेलनों में जाने लगे। मुझे याद है कि गुजरात से लौट कर एक कवि सम्मेलन किया था, जिसमें व्यास जी, सुधीन्द्र जी और मैं सम्मिलित हुए थे और इसका सभापतित्व किया था 'साहित्य-संदेश' के सम्पादक बाबू गुलाबराय ने। उस कवि-सम्मेलन में पहली बार मैंने व्यास जी को हास्यरस के सफल कवि के रूप में देखा। उनकी कविताएँ सुनते-सुनते श्रोता अघाते ही न थे। उस कवि-सम्मेलन का मैदान उन्हीं के हाथ रहा था।

कुछ दिनों बाद पता चला कि व्यास जी ने 'साहित्य-संदेश' छोड़ दिया है और दिल्ली में प्रसिद्ध कथाकार श्री जैनेन्द्रकुमार के यहाँ लेखक होकर चले गए हैं (यह स्मरणीय है कि जैनेन्द्र जी स्वयं नहीं लिखते, बोल कर लिखाते हैं)। वहाँ भी वे बहुत दिन रहे और 'दैनिक हिन्दुस्तान' में सहकारी सम्पादक के रूप में कार्य करने लगे। 'दैनिक हिन्दुस्तान' में आकर उनकी पत्रकारिता और काव्य-साधना को प्रशस्त भूमि मिली। प्रति सप्ताह और विशेष अवसरों पर उनकी रचनाएँ हिन्दुस्तान में छपने लगीं। उन रचनाओं ने उनकी लोकप्रियता में चार चाँद लगा दिए, कवि-सम्मेलनों में उनकी तूती बोलने लगी और वे अखिल भारतीय ख्याति के कवि हो गए। उनकी हास्यरस की कविताओं में मौलिकता उनकी पत्नी के केन्द्र में होने से आई और 'पत्नीवाद' नामक एक नए वाद के प्रवर्तक के रूप में उनका नाम लिया जाने लगा। अनेक कवि-सम्मेलनों में मेरा और उनका साथ हुआ है और यह कहने में मुझे कोई संकोच नहीं कि जब उनकी कविता का यौवन काल था, तब कवि-सम्मेलनों में हास्यरस की कवि के नाते उनकी ही धूम रहती थी।

उन्होंने गद्य में भी अच्छे व्यंग्य लेख लिखे हैं, लेकिन हिन्दी-साहित्य में वे अपनी हास्य-कविताओं के लिए ही स्मरण किए जाएँगे। उन की हास्य-कविताओं का ऐतिहासिक महत्व है।

१९६२-६३ में मेरी भेंट उनसे धौलपुर में हुई थी। मैं धौलपुर प्रदर्शनी के कवि-सम्मेलन का अध्यक्ष होकर गया था और व्यास जी कवि के नाते पहुंचे थे। कवि-सम्मेलन से भी अधिक आकर्षण की बात उनके लिए यह थी कि धौलपुर में उनके बड़े लड़के की ससुराल भी है। उस कवि-सम्मेलन से हम साथ ही बस से लौटे थे। हमारा यह साथ बहुत दिन बाद हुआ था। अनेक विषयों पर चर्चा और हँसी-मजाक हुआ। उस समय भी उनकी मस्ती में तो कोई कमी मैंने नहीं देखी। हाँ, उनकी आँखों ने उन्हें जो दगा दी, उससे वे दुखी थे, लेकिन हौसले वाला आदमी कभी नियति से हारता नहीं और व्यास जी भी ऐसे ही हौसलेवाले हैं।

भारत सरकार ने उन्हें पद्मश्री से अलंकृत किया है और मित्र-मण्डली ने उनकी स्वर्ण जयन्ती मनाने का आयोजन किया है, यह प्रसन्नता की बात है। अल्पसाधन-सम्पन्न व्यक्ति का सम्मानित होने योग्य ऊँचाई तक पहुंचना प्रेरणादायक होता है। मुझे आशा है, मित्रों के प्रेम और सद्भाव से व्यास जी शतायु होंगे और मां-भारती की अनवरत सेवा करते रहेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं तुमसे यह पूछना चाहता हूँ कि क्या तुम अपने पुत्रों से (यदि उन्होंने तुम्हें पिता मानसे से इंकार न कर दिया तो !) उसी विश्वास और निर्भयता से अपनी मान्यताओं पर चलने को कह सकोगे, जिस विश्वास और निर्भयता से मेरे पिता ने मुझसे न्याय और स्वाभिमान के संरक्षण की बात कही है ?

卐

सवाल नई पीढ़ी का, नई पीढ़ी से !

श्री जय दत्त पन्त

अभी कल पिताजी का पत्र आया । लिखा है—"बेटा, दुनिया में सचाई और स्वाभिमान से बढ़कर और कोई ताकत नहीं । जीवन में ऊँच-नीच से घबराना नहीं चाहिए। अगर ऐसा न होता, तो फिर इन्सान के इन गुणों की परख कैसे होती ? दिखावटी चमक तो सब में होती है। कसौटी पर कसे जाने पर ही सचाई का पता चलता है। आग की तपन को पीकर ही असली सोना हँसता हुआ बाहर आता है।"

उसी पत्र में आगे लिखा है—"हम तुम्हें कुछ नहीं दे सके, न धन-सम्पत्ति और न कोई और सुख। हम चाहते न हों या कोशिश न की हो, ऐसी बात नहीं, लेकिन मजबूरी तुम जानते - समझते हो । मुझे तुम्हारी नाकामयाबी से दुख जरूर हुआ, व निराश होने के बजाय तुम्हें अपनी क्षमता पर विश्वास रखना चाहिए । यदि तुम्हारी कमजोरी की वजह से काम नहीं बन सका, तो तुम्हें वह कमजोरी दूर करनी चाहिए। यदि कोई और वजह है, तो कोई बात नहीं। तुम ऐसा कोई काम न करना, जिससे तुम्हें सिर झुकाना पड़े। रुपया-पैसा खोकर फिर प्राप्त किया जा सकता है, लेकिन बेटा, इज्जत गई तो फिर कभी नहीं लौटती। मैं तो केवल इतना ही कहूंगा कि न्याय के सामने झुको, मगर अन्याय के सामने कभी मत झुकना। पेट तो जानवर भी पाल लेते हैं, फिर तुम तो पढ़े-लिखे हो।"

सवाल है कि व्यक्तिगत पत्र को प्रकाशित करना कहाँ तक उचित है ? सही है, क्योंकि मेरे पिता मध्यम वर्ग की एक नगण्य और अज्ञात इकाई हैं। वह न कोई महात्मा हैं, न नेता, न साहित्यकार और न पत्रकार। वह उनमें भी नहीं हैं, जो सार्वजनिक सभाओं में या आयोजनों में पहले बाड़े में स्थान पा सकते हैं। उन्होंने हाथ में माला लेकर कभी किसी का स्वागत नहीं किया और न पीछे की पंक्ति में गर्दन उठाकर तस्वीर खिंचवाने की कोशिश की । वे तो सीधे-सादे, अनाकर्षक व्यक्तित्व वाले अल्प वेतन भोगी कर्मचारी मात्र हैं। उनके पत्र का क्या महत्व ? ऐसा व्यक्ति महत्व की बात कैसे कह सकता है ? अगर कोई सुनी-सुनाई बात कह भी दे, तो उसका क्या महत्व ? फिर आपको यह अधिकार कैसे मिल गया कि आप लोगों का समय खराब करें ?

शायद आपकी बात से अनेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोग सहमत हेंगे। फिर भी मैंने यह दुस्साहस क्यों किया? अभी कल तक मैं भी तो आपकी पंक्ति में खड़ा था। कामयाबी अथवा नाकामयाबी की हमने अपनी नई व्याख्या की थी और नए उपायों को खोजा था। स्वयं मैंने अनेक बार दावा किया, हमारी नई पीढ़ी अपने को एकदम अलग समझती और उस पर गर्व करती है। हमें इस बात का गर्व है कि जिस दिन मां की गोद से जमीन पर उतरे और पिता की उंगली का सहारा छोड़कर आंगन पार किया, उसी दिन से आंगन और उस आंगन का संसार तुच्छ, असभ्य, पिछड़ा हुआ और सभी अर्थों में त्याज्य हो गया।

हमने कहा, बिना अतीत से संबंध तोड़े आगे नहीं बढ़ा जा सकता भूल जाओ कि तुम क्या थे, कहाँ थे, कौन थे, कैसे थे और सिर्फ इस बात को ध्यान में रक्खो कि 'तुम हो और केवल तुम्हीं हो। यही तुम्हारा दर्शन है।'

हमने यह भी घोषित किया कि हम हर मायनों में नए हैं, एकदम नए। हम किसी के बनाये रास्ते पर नहीं चल सकते और न चलना चाहते हैं। हमारा रास्ता अपना रास्ता होगा, जिसे हम बनाएँगे, प्रशस्त करेंगे और दिशा देंगे।

ऐसी बात नहीं कि हमने केवल यह घोषित ही किया हो, हमने इसे व्यवहार में अपनाया भी। कितना आकर्षक और प्रेरक रहा है हमारा निश्चय, यह इसी बात से साबित हो जाता है कि हमारा रहन-सहन, पहिनावा, सोचने-विचारने का ढंग, शौक, आदर्श, मान्यताएँ और मूल्य सभी अपनी मूल आधार-भूमि से एकदम अलग हो गए हैं या होते जा रहे हैं।

राष्ट्र, राष्ट्रीयता, देशभक्ति, त्याग आदि निरर्थक शब्दों का भार ढोने से हमने स्पष्ट इन्कार कर दिया और व्यवस्था दी कि जब पैसे खर्च कर काम कराया जा सकता है, तो फिजूल के कामों में हम अपना कीमती समय बरबाद क्यों करें? इस भार को ढोने के लिए नौकर खोजे जा सकते हैं, वह भी अगर जरूरी हो तो। इतनी रियायत हमने इसलिए दे दी है कि अभी मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे, गिर्जे आदि कायम हैं और कुछ बूढ़े लोग भी जो सिर दर्द बन सकते थे, इनमें अपना दिल-बहलाव कर सकते हैं और हमें मुक्ति मिल सकती है।

हमने नए विचारक, नए कवि, नए चित्रकार, नए नेता, नई विधाएँ और नया जीवन-दर्शन दिया और अपनाया। हमने सीधी रेखाओं को तोड़कर टेढ़ा कर दिया, सुलझे बालों को उलझा दिया, संवारे रूप को नई टेकनीक से अरूप की ओर बढ़ाया, परिधान को त्याग निर्वसन होने को प्रोत्साहित किया, हमने केवल शरीर को ही नहीं, अपने प्रकट-अप्रकट स्थूल और सूक्ष्म सभी स्वरूपों को उघाड़कर सूरज की रोशनी में रख दिया। घृणा, मनोरंजन और प्रदर्शन के लिए विचारों में तारतम्यता को त्यागा; क्योंकि गति के युग में तारतम्यता का लोभ मौत के सिवाय और कुछ नहीं। हमने व्यवस्था दी—जिस तरह हो तरक्की करो, आगे बढ़ो। मुख्य है पैसा और पद, वह किस तरह प्राप्त होता है, यह महत्वपूर्ण नहीं।

यह साबित कर दिया कि नैतिकता और अनैतिकता अर्थहीन और भ्रामक हैं। ये ऐसी जंजीरें हैं, जिनसे गति को बांधा जाता है, ताकि पूरी पीढ़ी उस पर 'परजीवी' की तरह चल सके। हमने एक झटके में उसे तोड़कर घोषित किया-'जो है उसका भोग करो, क्योंकि हो सकता है कल न आए।' हम अतृप्ति के विरुद्ध हैं। हम तृप्ति चाहते हैं, डूब-डूब कर तृप्ति। इसके लिए हमने किसी सीमा, मर्यादा, संबंध या इसी प्रकार के किसी बन्धन को स्वीकारने से इन्कार कर दिया। हमने प्रेम, स्नेह आदि बेकार की बातों को पास नहीं फटकने दिया, अपने अलावा अन्य सबको घृणा एवं नफ़रत की, हिकारत निगाह से देखा और इस प्रकार हमने एक नई क्रांति को जन्म दिया, जो हमने सोचा बिल्कुल नई, महान और बेमिसाल है। इससे पूर्व जो क्रांतियाँ हुई हैं, वे हमारी इस क्रांति के सामने ठीक उसी प्रकार प्रतीत हुई, जैसे सूरज के सामने दीपक।

यह सब जानते-समझते हुए भी पिता ने मुझे यह पत्र लिखा। अपनी पीढ़ी की आचार संहिता के अनुसार मैंने इसे 'बकवास' कह कर फेंक दिया, लेकिन पत्र जैसे मुझमें घुटता रहा। आप कहेंगे इच्छा शक्ति कमज़ोर है, लेकिन सच यह है कि मैंने पत्र उठाकर फिर पढ़ा, फिर पढ़ा और कई बार पढ़ा। मैंने उन पिछले पत्रों को भी पढ़ा, जो इसी तरह कोने में फेंक दिए थे। मुझे ऐसा लगा, जैसे मैं कुछ सोचने लगा हूं। कुछ सवाल बार-बार सामने आते और हर बार मेरी नई क्रांति की भूमि को कमज़ोर बनाते जाते।

एक पत्र में लिखा था—"बेटा इस सृष्टि में एकदम नया कुछ नहीं। क्रमिक विकास का अग्रिम चरण ही नया है, जो शीघ्र ही पुराना हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाएगा, नए को जन्म देकर। तुम भी पुराने पड़ जाओगे, जब तुम्हारा पुत्र होगा। इस विकासक्रम में नवीनता हो सकती है, लेकिन कोई कड़ी लुप्त नहीं होती। इसलिए नया क्या है इसे समझो।"

एक अन्य पत्र में लिखा था—"मुझे तुम्हारे विचारों एवं दृष्टिकोण पर कोई आपत्ति नहीं। मैं इसे विकास तो नहीं, हाँ विकास का लक्षण मानता हूं। तुम मुझसे अधिक पढ़े लिखे हो। मैं केवल अनुभव के आधार पर कह रहा हूं। जिसे तुमने नई की संज्ञा दी है, क्या ऐसा दुनिया में अन्यत्र नहीं है या नहीं हुआ है? क्या वहाँ की और यहाँ की आधार भूमि में साम्य है? मैं इतिहास, भूगोल, सभ्यता और संस्कृति की बात कह रहा हूं। यदि है, तो मुझे कुछ नहीं कहना। मैं सिर्फ इतना कहूंगा कि तुम एक बार यह जानने की कोशिश करो कि तुम्हारा इतिहास, भूगोल, सभ्यता, संस्कृति क्या रही, इसका विकास-क्या रहा, ऊँच-नीच के क्या कारण रहे, तत्व क्या है और ऊपरी ढाँचे में कितना असल है और कितना आडम्बर।"

मैं तुम्हें उपदेश नहीं दे रहा, केवल इतना कहना चाहता हूं कि सागर की गहराई और मर्यादा कोई धारा तभी पा सकती है जबकि वह मूलाधार से अलग न हो, पथभ्रष्ट न हो। बाढ़ में उफनाते नाले सूख जाते हैं या फिर मूल धारा में मिल जाते हैं। यदि तुम जो सोचते हो और करते हो, एकदम नवीन है और हीनता के शिकार होकर कहीं बाहर से प्रेरित नहीं हो, तो तुम धन्य हो। दूसरों के वस्त्र पहिनकर और दूसरे की नकल करके श्रेष्ठ साबित होना चाहते हो, तो यह तुम्हारा भ्रम है, दूसरा तुमसे हमेशा आगे रहेगा, तुम हमेशा नकल करते रहोगे और नकल करने वाला पथभ्रष्ट तो होता ही है, उपहास का दयनीय पात्र भी बन जाता है। कोई पुत्र निर्धन पिता को नकार कर किसी धनी को अपना पिता नहीं कहेगा। अगर ऐसा कहे भी, तो धनी उसे पुत्र का स्थान कभी न देगा, क्योंकि वह पितृहन्ता जो ठहरा।"

और भी पत्र हैं, जिनमें उन्होंने लिखा है—क्रांति क्या है और क्रांति कौन कर सकता है। जिसे हम नई क्रांति कहते हैं, वह उल्टे मुख पीछे लौटने और घातक भटकाव के अलावा और कुछ नहीं। आज का पत्र इस क्रम का नया पत्र है और इसने मुझे सोचने को मजबूर किया। इससे कुछ सवाल पैदा हुए हैं।

"न्याय के सामने झुकने और अन्याय से लड़ने का हमारी क्रांति में कोई विधान नहीं। हम तो उचित-अनुचित, मर्यादित-अमर्यादित सबके बंधन काट चुके। हमें न तन की ताकत पर विश्वास है और न मन की ताकत पर। तन का और मन का सौदा करने में हम कभी नहीं हिचके। हम केवल टेकनीक की ताकत पर विश्वास करते हैं। हमारा न कोई आधार है और न हमें 'आधार' पर कोई आस्था।

तो जिसे हमने नई क्रांति कहा है, क्या वह सचमुच न नई है और न क्रांति? क्या हम अपनी हीनता की भावना को प्रतिष्ठित करने में लगे हैं? क्या यह सब आडम्बर है? पिताजी की जर्जर काया में जो ओज पल रहा है, उसे निरर्थक माना जाय? मेरी पीढ़ी में वह ओज क्यों नहीं? आखिर हम में है क्या?

मेरी पीढ़ी निश्चय ही मुझे कमजोर और बुज़दिल कहेगी, लेकिन सच यह है कि मुझे ऐसा महसूस हो रहा है कि क्रांति के लिए ओज होना जरूरी है। 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है' यह गर्जना करने वाला तिलक हमारी पीढ़ी से गया-गुजरा था, इसे मन नहीं मानता। चूंकि मैं खुद नई और पुरानी मान्यताओं के विवाद में उलझ गया हूं और मुझे पथ नहीं सूझता, इस लिए मैं तुमसे यह पूछना चाहता हूं कि क्या तुम अपने पुत्रों से (यदि उन्होंने तुम्हें पिता मानने से इन्कार न कर दिया तो) उसी विश्वास और निर्भयता से अपनी मान्यताओं पर चलने को कह सकोगे, जिस विश्वास और निर्भयता से मेरे पिता ने मुझ से न्याय और स्वाभिमान की रक्षा की बात कही है? □

पतझर की शाम

सुश्री हेम लता

पतझर की उदास वीरान शाम
ढल गया दिन ढल गया घाम
घोर सन्नाटा
हवा मौन
बोले कौन ?
सारा दिन आँसू की बूँदों-सा
पेड़ों की डालों से
एक-एक पात झरा
और अब
विशाल नभ के उस कोने में
उगा एक तारा
जैसे दिन के उजड़े मज़ार पर
तरस खाकर
संझा ने
नन्हा एक दिया बारा ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुराय प्रतीक और पुराय प्रदीप

श्री कृष्णा मूर्ति दिवाकर

❀ किसी ने लिखा कुरुप,
❀ किसी ने लिखा कुरुप्पु;
सही चाहे जो हो, हिन्दी वालों के मन में प्रतिध्वनित हुआ कुरूप ! कुरूप, जो असुन्दर है, भोंडा है, भद्दा है, फिर उसकी चर्चा क्यों ?

❀ यह तो शब्द की बात हुई, हम जानें–पहचानें उसे जिसकी यह चर्चा है, वह चर्चित व्यक्तित्व कौन है ? वह अर्चित व्यक्तित्व कौन है ?

❀ यह हैं भारतीय ज्ञानपीठ के एक लाख रुपये के पुरस्कार से सर्वप्रथम पुरस्कृत भारत की मनमोहिनी भाषा मलयालम के महाकवि श्री जी० शंकर कुरुप्पु और यह पुरस्कार मिला है उन की काव्य पुस्तक 'ओड़ाक्कुड़ल' पर, जिसका अर्थ है बाँसुरी ।

जाने सृष्टि के किस अतीत में किसी ने मस्ती में डूबकर पृथ्वी पर पैर पटक दिया था और ताल की सृष्टि हो गई थी । तब हथेली बजी थी और ताल ने लय पाई थी। शिव ने अपनी ढपली बजा कर–ननाद ढक्कां नव पंच बारम्–ताल को शब्द के ढाँचे में ढाल दिया था। और तब भौंरे के द्वारा छेद-बिंधे बाँस में गूँजती हवा की तरंग लहरी से अभिभूत हो किसी रसिक ने बाँसुरी को जन्म दिया था। यों नृत्य, वाद्य और सङ्गीत की त्रिवेणी बह उठी थी हमारे देश में–सरस्वती देवमंडल में अधिष्ठित हुई थी।

तब सरस्वती के उन पुत्रों का जन्म हुआ, जिन्होंने शब्दों में बाँसुरी रख दो, जो युगयुगों तक बजती रहे–उसके स्वर कभी मैले न हों, कभी फीके न पड़ें । रामायण बाल्मीकि की बाँसुरी ही तो है ? महाभारत वेद-व्यास की बाँसुरी ही तो है ? शकुन्तला कालीदास की बांसुरी ही तो है ! रामचरित मानस तुलसी की बाँसुरी ही तो है। कामायनी प्रसाद की बाँसुरी ही तो है ? साकेत मैथिलीशरण की बाँसुरी ही तो है ? उर्वशी दिनकर की बाँसुरी ही तो है ?

और यह किस की बाँसुरी है, कुछ दिन पहले सुनी थी ?

नित्य नए-नए रूपों से मेरे
प्राणों में आ मेरे प्रियतम !
गंध में आ, वर्ण में आ,
देह का रोमांचित स्पर्श बनकर आ,
चित्त में अखंड हर्ष की
सुधा बनकर आ,
मेरे मुंदे मुग्ध नयनों में आ,
नित्य नए–नए रूपों में आ
मेरे प्रियतम !

और यह किस की बाँसुरी है, जो अब सुनाई दे रही है–

काल और स्थान की सीमाओं से परे
महानता का सिरमौर है तू,
जो खेल खेल में
जीवन के गीत गाता रहता है
और विनष्ट प्रायः मैं
उसी धरती पर पड़ा हुआ,
पर किसी को कोई खबर नहीं !
तेरी कृपा की महानता ने
बनाई एक बाँसुरी,
जो जड़ और जंगम दोनों में
सिहरन पैदा कर देती है,
तेरा प्रश्वास मेरे जीवन की
महत्वहीन खाली रीड को चेतनता
से भर देता है ।

पहली बाँसुरी थी रवीन्द्रनाथ ठाकुर की और दूसरी बाँसुरी है जी० शंकर कुरुप्पु की–अन्तर्दृष्टि और शिल्प में कितनी समानता ! सचाई यह है कि कुरुप्पु की महानता न जन्मजात है, न आरोपित; वह उपार्जित है और यह उपार्जन जन्मजात वर्णव्यवस्था का नहीं कि बढ़ई का बेटा अपने पिता से बढ़ई गिरी ही सीखे और पुजारी का बेटा पूजा पाठ ही। यह उपार्जन तो बंजारे का है कि देश देश घूमे और जहाँ जो पसन्द आए खरीदे-बेचे ।

जब वे उभरे, तो तीन-तीन सूर्य अपने पूर्ण प्रकाश में उनके सामने थे – बल्लतोल, आशान, उल्लूर। कहूँ, बनी बनाई सड़क उनके पैरों तले थी कि बेखटके चलें और चाहें, तो थोड़ा बहुत अपने ढंग पर उसे झाड़-बुहार लें; जैसे आचार्य द्विवेदी के पथ पर फूलों के वृक्ष लगा मैथिलीशरण गुप्त ने अपना पथ प्रशस्त कर लिया था, पर कुरुप्पु की प्यास इससे अधिक थी; बहुत अधिक, बहुत-बहुत अधिक। उन्होंने इनसे चट्टानीपन लिया, उसमें उमर-खैयाम की मस्ती और रवीन्द्रनाथ की इन्द्रधनुषी सुषमा भर दी और तब परखा–पहचाना उस युग को, जिसमें वे जी रहे थे । उसमें संघर्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का शोषक-शोषित का। कुरुप्पु उसी विषम में तो साँस ले रहे थे-आखिर एक प्राइमरी स्कूल के नगण्य अध्यापक से ही तो उन्होंने अपना जीवन आरम्भ किया! ईश्वर का हज़ार हज़ार धन्यवाद कि उनका मानस सांस्कृतिक था, इसलिए वह उस विषमता के संघर्ष से अवसन्न नहीं हुआ, चैतन्य नकर युगदृष्टा हो गया; बिल्कुल वैसे ही, जैसे आचार्य द्विवेदी के पथ पर चलते माखन लाल चतुर्वेदी छायावाद के उद्गाता हो कर भी युगदृष्टा बने रह गए थे।

कुरुप्पु ने अपने भीतर अपनी ही रस-फुहाँर में भीग कर गाया—

आज मैं कल तुम, आज मैं कल तुम
मेरी स्मृतियों में आज भी
प्रतिध्वनित है
सड़क के किनारे खड़े
पेड़ की काली छाया
एक क्षण में प्रेत की तरह
बढ़ जाती है
सूखे हुए पत्ते भय से गश खाकर
गिर रहे हैं, गिरते जा रहे हैं;
हवा इस होने वाली मौत पर
जब तब गहरी साँसें ले रही है।
चारों दिशाएँ चुप्पी साधे खड़ी हैं
सितारों जड़े आकाश का
झिलमिलाता कफ़न ओढ़े पड़े
दिन की अर्थी उठाने को
गश खाती हुई गोधूलि
थर-थर काँप रही है।
मैं खड़ा हूं अकेला उस गलियारे पर
ज़िन्दगी की तरह जिसके
दोनों छोर अदृश्य हैं।
न चिड़ियाँ चहकीं,
न बरगद की पत्तियाँ थिरकीं—
धरती जैसे जम गई हो!
और अचानक पास के गिरजाघर की
घंटियाँ चीख उठीं—णाम् णाम्
आँखों के सामने
बादलों की पंक्ति छा गई
शायद देवदूत उतर रहे हैं
उसका स्पर्श करने!

× × ×

फिर उसी रास्ते से गई एक अर्थी
एक-जीवन हीन अभावग्रस्त शरीर
कहीं कोई बैंड नहीं,
कोई स्वर-लहरी नहीं
फूलों की बारिश नहीं,
लेकिन बरस रहे हैं बच्चे के आँसू

× × ×

अर्थी से उभर कर अक्षर उठे
और मेरी आँखों को बेंध गए—
'आज मैं, कल तुम!'
और मैं सिहर उठा,
देखो वही सिहरन अब तक
सितारों में झिलमिला रही है!

कुरुप्पु के जीवन सखा श्री वेन्नी वासु पिल्लई ने उन्हें 'मनुष्य का कवि और बीसवीं सदी के मनुष्य का कवि' कहा, तो सोच-समझकर ही कहा, जैसे ओं में पूरा अध्यात्म ही भर दिया। बीसवीं सदी का मनुष्य, जिसका भाग्य स्वयं उसके अपने हाथ में है और अपने जीवन को एक ग्रामीण बालक के अति-साधारण जीवन से असाधारण राष्ट्रीय व्यक्तित्व के पद तक पहुंचा, जैसे वे कवि के साथ उसका स्वयं निर्मित प्रतीक भी होगए।

३ जनवरी १९०१ को केरल के एक छोटे गाँव में वे जन्मे, अपनी शताब्दी से कुल तीन साल पीछे और पढ़े नौवें दर्जे तक। तब एक स्कूल में भाषा-शिक्षक, पर आज से कल आगे, निरन्तर गतिशील; यहाँ तक कि विश्वविद्यालय की कोई डिग्री नहीं, पर मद्रास विश्व-विद्यालय में मलयालम के प्रोफेसर—वैधानिक नियम का अपवाद बन कर।

कुरुप्पु की इस ऐतिहासिक और नई पीढ़ियों के का रहस्य क्या है? कुंजी कहाँ है? रहस्य और कुंजी है निरन्तर श्रम में, सर्वविध संचय में, अहर्निश आत्म परिष्कार में, निरालस्य में, ढीलढाल से दूर तेज़ गति में—

कभी कभी लगता है
ठसाठस लदी हुई है
यह ज़िन्दगी की गाड़ी
फिर भी उसके पहिये
अपने आप गतिवान रहते हैं
और हम
(जिनकी रगों में
गर्म लहू प्रवाहित है)
कहते हैं—
"धीमी है गति अभी धीमी है,
तेज़, और तेज़,
और तेज़ हाँको अश्वों को।"

और यह ढेर-सा क्या है? यह पुस्तकों का ढेर है। इस ढेर में बीस जिल्दें कविता-संग्रहों की हैं, नाटक हैं, उमर खैयाम, कालीदास, रवीन्द्रनाथ के अनुवाद हैं और और भी कुछ है। तो कुरुप्पु ऐसे किसान नहीं हैं, जो एक एकड़ के खेत में विशेष धान उपजाकर पुरस्कार पालें, वे तो उस किसान की तरह हैं, जिसके सभी खेत उसके श्रम-कौशल से विशेष उपजाऊ हो जाते हैं, कालिज की भाषा में क्वालिटी और क्वांटिटी के इक्क्वल ऐक्सपर्ट महाकवि कुरुप्पु!

यथार्थ और रहस्य, विद्रोह और समन्वय, जीवन और प्रकृति, प्रदेश और देश, मलयालम् और हिन्दी; कहूँ समग्र राष्ट्रीय संस्कृति के सम्वर्धक महाकवि कुरुप्पु को मेरे शतशः प्रणाम, जिनके हाथों में समर्पित हो भारतीय ज्ञानपीठ का महान पुरस्कार भारत की सांस्कृतिक एकता का पुण्य प्रतीक और पुण्य प्रदीप होगया! ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्रीय नेतृत्व का अभाव

श्री रिषभ दास रांका

श्री जमना लाल बजाज गांधी जी की विशाल मैशीनरी के सर्वोच्च इंजीनियर थे। वे पुर्जे चुनते थे, पुर्जे बनाते थे, पुर्जे लगाते थे, पुर्जे बदलते थे और उन्हें तेल देते थे। राँका जी उन्हीं जमनालाल जी के सहयोगी रहे और उन्होंने गांधी जी की कर्म-प्रक्रिया का भी गहरा अध्ययन किया। व्यवस्थित कर्म उनकी विशेषता है। वे अनेक प्रेरक पुस्तकों के लेखक हैं और 'जैन जगत' के संपादक भी। मानव मानव के बीच खड़ी दीवारों को तोड़ने का वे काम करते रहे हैं। संक्षेप में वे राष्ट्र दृष्टि-संपन्न ऐसे व्यक्ति हैं कि उन्हें देखकर न मिलना और मिलकर भूल जाना असम्भव है। उनका चिंतन हम सबका चिंतन हो।

卐

आजादी प्राप्त होने के बावजूद हमारी प्रगति जिस अनुपात में होनी चाहिए थी नहीं हो पाई, यह वास्तविकता है। देश में मंहगाई बढ़ी है, अन्न जैसी जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक चीज के विषय में हम स्वावलम्बी नहीं हो सके हैं, बल्कि स्थिति चिन्तनीय है। बेकारी की समस्या को भी हम नहीं सुलझा पाए हैं। वैसे ही मकान और पानी की समस्या भी सुलझ नहीं पाई है, गो कि ये बातें राष्ट्रीय जीवन में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। जब हमारे हाथ में हमारे निर्माण का कार्य हो, तब उसे न कर पाना अपनी कमजोरी का द्योतक ही माना जाएगा। जैसे राष्ट्र-निर्माण के क्षेत्र में हमने ऐसी सिद्धि नहीं प्राप्त की, जो सन्तोषजनक कही जा सके, वैसे ही राष्ट्रीय सुरक्षा के मामले में भी हम यह नहीं कह सकते कि हम भय-मुक्त हों। इस में कोई संदेह नहीं कि भारत पाकिस्तान युद्ध में हमारी सेना ने गौरवपूर्ण कार्य किया, उस पर हमें अभिमान है, पर उस छोटी लड़ाई को सुरक्षा की गारंटी मान लेना तो उचित नहीं।

तो क्या कारण है कि भारत जैसे निष्काम कर्मयोग एवं तत्व ज्ञान वाले देश में जहाँ सन्तों और राष्ट्र-सेवकों की काफी बड़ी संख्या है हम पिछड़ गए हैं ?

भारत के तत्वज्ञान और संस्कृति के बहुत उच्च होने का हम दावा करते हैं। जिनके आगे हजारों नहीं लाखों के सर नमन करते हैं, ऐसे महान पुरुषों की देश में कमी नहीं। उस देश की सामान्य स्थिति हर क्षेत्र में पिछड़ी हुई हो, यह बात आश्चर्यजनक ही नहीं, दुःखदायक भी है। हमारे सन्त, महात्मा, देश-भक्त तथा नेता उच्चकोटि के माने जाते हैं। फिर भी सामान्य जनता का नैतिक स्तर क्यों नहीं उठ पाया? हम उनसे भी कैसे पिछड़ गए, जिन्हें हम भौतिकवादी तथा आरामतलब समझते थे। क्या कहीं हमारे नेतृत्व में कोई कमी है, जिससे प्रजा में उत्तम गुणों की वृद्धि नहीं हो पा रही है ? हम मुँह से भले ही ऊँचे तत्वों की बात कहते हों, पर क्या वह महज़ हमारी वाचालता ही है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वास्तव में बात यही है कि हमारा जीवन उच्च नहीं है, पर हम उच्च तत्वों का दिखावा भर करते हैं।

जब श्री प्रकाश जी पाकिस्तान में उच्चायुक्त थे, तब उन्होंने कई देशों के राजपुरुषों से पूछा था कि भारत के सिद्धान्त बहुत उच्च होने पर भी आप उसके प्रतिकूल क्यों रहते हैं? तब उत्तर मिला था कि हमें लगता है भारतीय ऊँचे तत्वों की बात भर करते हैं, उनकी बातों और जीवन में बहुत अन्तर होता है। इसलिए हम उन पर इतना भरोसा नहीं करते, जितना पाकिस्तान पर।

हम उच्च सिद्धान्तों की कितनी भी दुहाई दें, पर वे हमारे जीवन-व्यवहार में नहीं हैं, यह बात सत्य है और हममें उन नेताओं की कमी है, जो हमारी अपनी कमजोरियों और विशेषताओं को समझ कर हमें आगे बढ़ाकर हमसे राष्ट्र-निर्माण का काम ले सकें।

हम हिटलर के विचारों से भले ही सहमत न हों, पर उसने ३-४ साल में जर्मनी की काया-पलट दी थी, यह बात निसंदेह है। जर्मन जैसे प्रथम युद्ध हारे और हताश हुए राष्ट्र को कुछ ही वर्षों में उसने प्रथम श्रेणी का साधन-सम्पन्न और संसार से संघर्ष करने योग्य बना दिया था। नेपोलियन की बात लें, तो उसने भी राष्ट्र की अद्भुत शक्ति बढ़ाई थी। दूसरों की ही बात क्यों, हमारे देश की बात लें तो गांधीजी ने भी भारत को ऐसा नेतृत्व दिया था, कि निरीह जनता बिना शस्त्रों के एक समर्थ राष्ट्र से लड़ी थी और उसने अंग्रेजों को यहाँ से जाने के लिए विवश कर दिया था।

भारत की एक सबसे बड़ी कमजोरी यह रही है कि वह व्यक्ति-पूजक है। आज भी गांधी जी का नाम हर बात में लिया जाता है, पर गांधी जी के विचारों के अनुसार हम नहीं चलते। उनके सिद्धान्तों की हत्या उनके शिष्यों तथा भक्तों के द्वारा ही हो रही है।

गांधीजी ने जनता को जागृत और कार्यक्षम बनाया था। उन्होंने वह कैसी है, उसकी कमजोरियों और विशेषताओं को समझकर उसे राष्ट्र-कार्य में लगाकर शक्तिशाली बनाया था। हजारों सामान्य लोगों को राष्ट्र कार्य में लगाकर उनकी शक्तियों का विकास कर कार्यक्षम बनाया था। उनमें राष्ट्र प्रेम, सेवा और त्याग की भावना भरी थी। क्या बच्चे, क्या स्त्रियां, सभी ने गांधीजी के नेतृत्व में जो कमाल के काम करके दिखाए, वे अद्भुत थे। अंधेरे में घर से बाहर निकलते हुए डरने वाली महिलाओं और बच्चों ने पुलिस की लाठियाँ खाई थीं, जेल यात्राएँ की थीं और जन सेवा के कामों में अपने आप को लगा दिया था। वह उत्साह आज कहाँ चला गया? उस समय पराई सत्ता या विदेशी सरकार की बाधाएं थीं, पर इस समय अपनी सत्ता या सरकार सेवा-कार्यों में सहायक है। फिर भी देश में अभाव, मंहगाई, असन्तोष क्यों अधिक बढ़ रहा है? क्यों नहीं देश की शक्ति और साधनों का जन और राष्ट्र कल्याण में उपयोग लिया जा रहा है?

हम यह भी देख रहे हैं कि गांधी जी ने जो तरीके या सिद्धांत हमें दिए थे, उन पर सूक्ष्मता और गहराई से विचार हो रहा है। उन विचारों का धुंआधार प्रचार भी होता है, लेकिन राष्ट्र में नवजीवन का वह संचार क्यों नहीं होता? हमारे नेतृत्व में कहाँ क्या दोष पैदा हुआ है कि जिससे जनता को हम आगे बढ़ा कर उससे अधिक राष्ट्र-निर्माण का काम नहीं ले पाए। नेतृत्व के प्रति निष्ठा का निर्माण नहीं कर सके।

आज का नेतृत्व दो भागों में बंट गया है। एक वे हैं जो सत्ता पर हैं। वे भी कहते हैं कि वे सत्ता पर इसलिए बैठे हैं कि जनता की सेवा करें, लेकिन व्यवहार में वे भी सेवा से अधिक सत्ता को ही महत्व दे रहे हैं, ऐसा दिखाई पड़ता है और सत्ता का उपयोग जन हित की अपेक्षा प्रतिष्ठा तथा स्वार्थ-साधन में अधिक हो रहा है। सत्ताधीशों को इसकी पर्वाह नहीं है कि जनता का विशुद्ध हित क्या है? इसलिए सत्ताधीशों का नेतृत्व जनता में निष्ठा पैदा नहीं कर पाया और शासक कांग्रेस जनता में लोकप्रिय नहीं रह पाई। उसके प्रति अत्यन्त असंतोष है। फिर सत्ता पर जमे रहने के लिए पक्ष को अत्यधिक महत्व दिया जाता है और चुनाव में निर्वाचित होने के लिए जिनका मतदाताओं पर प्रभाव है, ऐसे लोगों को राजी रखने को उचित-अनुचित का ख्याल न रखकर भी उनके काम करने सत्ताधीशों के लिए आवश्यक हो जाते हैं। तब स्वाभाविक ही उनसे आम जनता के हितों की अवहेलना होती है। सत्ता या कामों की जिम्मेदारी सौंपते समय उस व्यक्ति की योग्यता या जनहित की अपेक्षा राजनैतिक बातें ही अधिक ध्यान में ली जाती हैं, जिससे कार्य-दक्ष या कार्यक्षम व्यक्ति को काम नहीं सौंपे जाते। उन की शक्ति का उपयोग नहीं होता। नेहरू जी के मन में राष्ट्र हित की तीव्र अभिलाषा होते हुए भी और उनके प्रति जनता की अत्यन्त भक्ति रहते हुए भी वे जनता में राष्ट्र-निर्माण की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावना पैदा नहीं कर सके। जनता को योजनाओं में जिस उत्साह और आत्मीयता से हिस्सा लेना चाहिए था, वह कहीं दिखाई न दिया और न वे गांधी जी की तरह योग्य व्यक्तियों का ही निर्माण कर पाए यहाँ तक कि मृत्यु तक उन्हें प्रधानमंत्रित्व का बोझा ढोना पड़ा और वे अपने जीवन में इस कार्य के लिए योग्य व्यक्ति नहीं चुन सके कि नेतृत्व उनका रहता और कर्तव्य दूसरे संभालते।

कांग्रेस वालों की स्थिति नेतृत्व के मामले में जैसी रही, सर्वोदय वालों की भी कोई उनसे अच्छी स्थिति रही हो ऐसा नहीं दीख पड़ता। गांधी जी के सिद्धान्तों की उनसे भी अधिक सूक्ष्म व्याख्या की गई है ऐसा दिखाई देता है। उनके तत्वों पर भाष्य और साहित्य की भी कोई कमी नहीं, बल्कि हजारों पृष्ठों का साहित्य निर्माण हुआ। व्याख्यान भी बहुत अधिक हुए, पर जनता में नवचैतन्य निर्माण हुआ, यह कहना कठिन है। विनोबा जैसे सन्त १२ साल पैदल घूमे, लोक सम्पर्क किया, पर नवचैतन्य-निर्माण हुआ ही, ऐसा दृश्य दिखाई नहीं पड़ता। या तो कहें कि जनता में ऐसी जड़ता है कि सन्त की दीर्घ तपश्चर्या भी उसे जागृत बनाने में असमर्थ रही या फिर प्रयत्न में ही कोई त्रुटि रही है कि जिससे जनता आकर्षित न हो सकी। हम यह जानते हैं कि विनोबा जी के लिए लोगों में अत्यन्त आदर और श्रद्धा है और उनके भक्तों ने उन्हें "बाबा" भी बना दिया। उनके व्याख्यान लोग बड़े प्रेम से सुनते हैं। उनका स्वागत भी उत्साह से होता है, पर काम में ऐसी प्रगति दिखाई नहीं देती कि जिससे जनता में चैतन्य निर्माण हो देश की समस्या सुलझे।

हमारा भी गांधी जी के कामों से सम्बन्ध रहा है और आज भी उसी मार्ग से देश एवं मानव जाति का हित हो सकता है, ऐसी निष्ठा होने से सर्वोदयवादियों की असफलता में अपने आपको भागीदार मान हमें भी आत्मनिरीक्षण के लिए बाध्य होना पड़ता है। हमने देखा कि गांधी जी के तत्वों की सूक्ष्म व्याख्या और आदर्शों पर चिन्तन तो कम नहीं हुआ, पर पारमार्थिक कामों में गांधी जी ने जो व्यवहार अपनाया था, वह बिल्कुल भुला दिया गया। यही कारण है कि हमने उनका कई बातों में यहाँ तक अनुकरण किया कि जिसे लोग अन्धानुकरण भी कहते हैं, पर उनकी कार्यपद्धति को हम नहीं अपना सके।

गांधी जी सही माने में नेता थे। वे हमारी विशेषताओं और कमजोरियों को ठीक से जानते थे और हमें काम में लगाकर कमजोरियाँ कम करते और विशिष्टता बढ़ाते थे।

केवल चिन्तन कल्पनाओं को जन्म देता है, पर चिन्तन के साथ हाथ में प्रत्यक्ष काम हो तो कार्यदक्षता आकर कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। यदि हृदय परिवर्तन की प्रक्रिया के साथ-साथ रचनात्मक कार्यों में कार्यकर्त्ता लगते, तो उनकी कार्य करने की शक्ति बढ़ती और वे कुशल और योग्य कार्यकर्त्ता बनते, पर चिंतन जितना प्रत्यक्ष रचनात्मक कार्य पर जोर नहीं दिया गया और जो रचनात्मक कार्य के नाम पर किया गया उसमें स्थिरता, व्यवहार दृष्टि और लगन का अभाव पाया जाता है।

नए कार्यकर्त्ता प्रशिक्षित कर काम में लगाये जाएँ, न तो ऐसी शिक्षा का उचित प्रबन्ध है और न कार्य करते समय योग्य मार्गदर्शन ही मिलता है। जब पुराने कार्यकर्त्ता भी स्थिर रहकर कोई काम सफल बनाने में असमर्थ हों, तो नये कार्यकर्त्ता से अपेक्षा भी क्या की जाए? सर्वोदयवालों की आलोचना यह अपने स्वयं की आलोचना मान कर भी दुःख के साथ करनी पड़ती है, पर यह व्यथित हृदय से हम इस लिए कर रहे हैं कि यदि योग्य नेतृत्व देश को न मिला, तो देश आगे नहीं बढ़ेगा और उसकी आजादी को भी खतरा है।

आज ऐसे नेता की आवश्यकता है जो बहुत ऊँचे आदर्शों की ऊँची बातें छोड़कर अपनी शक्ति, सामर्थ्य और साधनों का ठीक उपयोग जनता की शक्ति जाग्रत करने में करे, जिससे उसमें आत्मविश्वास निर्माण हो और वह राष्ट्र-निर्माण में लगे। इससे नेता के प्रति उसकी निष्ठा भी बढ़ेगी। नेताओं को निसंशय, निसंदिग्ध और सुस्पष्ट मार्गदर्शन देना चाहिए। वह प्रत्यक्ष कार्यरत नेता ही दे सकता है, जिसे समस्या का यथार्थ और पूर्ण ज्ञान हो और जिसके पास उसका समग्र समाधान हो। इसलिए सत्ताधारियों में पारमार्थिक दृष्टि और पारमार्थिक संतों में व्यवहारिक दृष्टि का आना जरूरी है। जिसमें यह सन्तुलन होगा वही नेता देश को आगे बढ़ा सकेगा, अन्यथा देश का भविष्य प्राप्त उपलब्धियों के बावजूद अंधकारमय है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जयपुर : किसने क्या कमाया ?

● कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

श्री कामराज

कामराज योजना के पंखों पर बैठे श्री कामराज एक देवदूत की भाँति एक राज्य के मुख्यमंत्रित्व की सीमा तोड़कर भारत के विशाल सार्वजनिक जीवन में आए थे; जैसे देश के आकाश में कोई नया इन्द्र धनुष उग आया हो।

वे कांग्रेस-अध्यक्ष के पद पर बैठे थे और ऐसी घोषणाएँ हुई थीं कि टीबे काटे जाएँगे, गड्ढे भरे जाएँगे और समता का काले बादलों में घिरा सूर्य प्रदीप्त होगा। अंधकार जीवी उल्लू फड़फड़ा उठे थे कि एक शक्तिधर आ गया है।

नेहरू जी घोषणा सुनकर बीमार हुए थे और स्वस्थ न हो सके थे—संसार से विदा हो गये थे। दुश्मनों की घोषणा थी—नेहरू के बाद कांग्रेस आपसी युद्ध में नष्ट हो जाएगी, पर श्री कामराज ने श्री लाल बहादुर शास्त्री को सर्वसम्मति से ऐसा प्रधान मंत्री चुनवाया कि आपसी युद्ध की कौन कहे, कहीं कानाफूसी भी नहीं हुई। अब कामराज एक शक्ति स्तम्भ थे और लाल बहादुर जी उस स्तम्भ के सहारे खड़े थे।

कांग्रेस-महासमिति के बंगलौर-अधिवेशन में यह शक्तिस्तंभ श्री मुरारजी देसाई द्वारा ललकारा गया। कामराज योजना का अर्थ था त्याग और कामराज सफल-सुदृढ़ मुख्य मंत्रित्व त्याग कर आए थे। त्याग का सहयात्री है तेज, तेज का सहवर्ती है प्रताप - कामराज कांग्रेस-अध्यक्ष बनते समय प्रताप का पुंज थे।

बंगलौर में प्रश्न था कि क्या कामराज अगली बार भी कांग्रेस के अध्यक्ष हों, इसके लिए कांग्रेसियों की पद-लिप्सा को संयम में रखने के लिए हैदराबाद कांग्रेस में श्री नेहरू की प्रेरणा से पारित यह प्रस्ताव कि कोई एक बार से अधिक कांग्रेस-अध्यक्ष न हो, वापस लिया जाए-संशोधित किया जाए? कामराज भाषण का यह प्रतीक स्वयं कामराज के लिए तोड़ा जा रहा था और कामराज इससे सहमत थे, इसके लिए प्रस्तुत थे, उत्सुक थे।

श्री मुरारजी भाई इसके विरोध में जूझ रहे थे और उनके साथ काफी शक्ति है, यह सब मानते थे। कांग्रेस फिर आपसी युद्ध के द्वार पर थी। कामराज एक ऊँचे उद्देश्य से दुबारा अध्यक्षता चाहते थे कि उनके और लाल बहादुर जी के सौहार्द्र के रूप में कांग्रेस संगठन और कांग्रेस-शासन में समन्वय बना रहे, पर ऊपरी दृष्टि से तो यह पद-लिप्सा ही थी और यहीं कामराज कमजोर थे।

अब लाल बहादुर जी उनके संरक्षक थे और यह संरक्षण उन्होंने इस कलात्मक ढंग से किया कि लाल बहादुर जी ही शासन और संगठन की सर्वोच्च शक्ति हो गए। कहूँ, कामराज बंगलौर में जीतकर हार गए थे, जैसे शीतला में किसी का गौर वर्ण तो बचा रहे, पर ओज जाता रहे। भारत पाकिस्तान युद्ध ने लालबहादुर जी की लोकप्रियता को लोकपूजा में बदल दिया था और कामराज क्या वे नेहरू से भी आगे बढ़ गए थे।

लाल बहादुर जी नहीं रहे और अब फिर श्री मुरारजी देसाई उनके सामने थे—श्री कामराज की पद-वंदना के बिना प्रधानमंत्रित्व के उमीदवार; काफी प्रखर, काफी मुखर—"इंदिरा जी कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज की उमीदवार हैं और मैं संसद सदस्यों का उमीदवार हूं।" लालबहादुर जी का चुनाव श्री कामराज द्वारा सदस्यों की 'आम राय' जानकर सर्वसम्मति से हुआ था, पर इस पर श्री कामराज को वह अधिकार नहीं मिला। यह उस घाटे का नाप था, जो बंगलौर में श्री कामराज ने उठाया था। श्री कामराज इसे जानते थे और इस अवसर पर उसे पूरा करने का संकल्प किये हुए थे।

१९ जनवरी १९६६ को चुनाव था। १८ जनवरी की शाम तक कामराज चुपचाप बिना एक शब्द कहे अपनी शतरंज के मोहरे अदल-बदल कर देखते रहे और जब ५॥ बजे जगजीवन राम जी ने उनके कंधे पर हाथ रखकर अट्टहास किया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शह और मात उनके दिमाग में साफ होगई और वे मुरारजी भाई के घर उनसे चुनाव न लड़ने की बात कहने गए, जिसे मुरारजी भाई ने अस्वीकृत कर दिया।

दूसरे दिन चुनाव में श्रीमती इंदिरा गांधी ज्वार की तरह जीत गई और मुरारजी भाई भाटा की तरह हार गए। जीत इंदिरा जी की थी, हार मुरार जी भाई की, पर कामराज फिर शक्तिस्तम्भ के रूप में स्पष्ट थे, समुन्नत थे।

इसी वातावरण में १०-११ फरवरी १९६६ को जयपुर में कांग्रेस का सत्तरवां अधिवेशन श्री कामराज की अध्यक्षता में हुआ और उसमें खाद्य नीति के प्रस्ताव पर उनकी शक्ति परीक्षा हुई। शतप्रतिशत प्रतिनिधि खाद्यमंत्री श्री सुब्रह्मण्यम् की अन्न क्षेत्रों पर आश्रित खाद्यनीति के विरोध में थे। वे मतभेद की नहीं, रोष की स्थिति में थे—मानसिक रूप से मारपीट पर उतारू। श्री सुब्रह्मण्यम् की बात सुनने से हाऊस ने इंकार कर दिया, जैसे सब की घोषणा थी—हाथ ऊपर करो या गोली खाओ। सदस्य 'तुरत' अनाज क्षेत्रों की समाप्ति चाहते थे और श्री सुब्रह्मण्यम् विचार करने को भी तैयार न थे। गरमी इतनी थी कि प्रधानमंत्री का यह आश्वासन भी व्यर्थ रहा कि सरकार अनाज क्षेत्रों को हटाने पर विचार करेगी।

तब माइक पर आए प्रचंड मुद्रा में कामराज—"इंदिरा गांधी कहती हैं कि अनाज क्षेत्रों पर सरकार जांच करेगी। आप सहमत हैं?" चारों तरफ इंकार की आवाजें। उन्हें सुनकर कामराज ने हाथ हिलाया और कहा—"सहमत।" और वे आसन पर बैठ गए, पर इंकार-इंकार का शोरगुल जारी रहा। वे फिर माइक पर आए—"सहमत हैं?" मसला हल नहीं हुआ, तो बोले—"जो सहमत नहीं हैं, वे एक तरफ हो जाएँ।" कोई एक तरफ नहीं हुआ और अंत में अन्नक्षेत्र तुरत हटाने वाले संशोधन के समर्थन में प्रचंड हाथ उठे, पर कमाल हो गया कि संशोधन के पास होने की घोषणा नहीं हुई, पास माना गया सुब्रह्मण्यम् का मूल प्रस्ताव ही।

यह क्या हुआ? यह हुआ यह कि इस समय श्री कामराज को कोई कांग्रेसी नाराज़ नहीं करना चाहता, क्योंकि चुनाव सामने है और टिकट देना कामराज के बहुत कुछ हाथ में है क्योंकि प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी उनकी तरफ देखती हैं और राज्यों के अधिकांश मुख्यमंत्री मन से उनके साथ हैं। कहूं, कांग्रेस में उनका अखंड प्रभाव है—एकछत्र राज्य है यह जयपुर ने कहा, पर जयपुर ने यह पूछा कि वे कांग्रेस-संगठन के राज्य - राज्यव्यापी विघटन को रोकने, शासकों को सुदृढ़ करने में अपने इस अखंड प्रभाव का दृढ़ता और ताकत के साथ उपयोग कर इस प्रभाव को प्रवर्धमान करेंगे या अभी तक जैसी ढिलमुल पद्धति अपना कर उसे क्षीणता की ओर बढ़ने देंगे?

श्रीमती इंदिरा गाँधी

श्रीमती इंदिरा गांधी का प्रधान मंत्रित्व भारत में 'नए आदमी' का नेतृत्व है; बिल्कुल वैसे ही, जैसे १९३० में पंडित जवाहरलाल नेहरू का कांग्रेस-अध्यक्ष चुना जाना 'नए आदमी' का नेतृत्व था!

श्रीमती इन्दिरा गाँधी इस स्थिति में नहीं थीं कि अपनी ताकत से प्रधान मंत्री बन सकें—वे इतनी शालीन हैं कि संघर्ष ही न करतीं। उनके चुने जाने का श्रेय श्री कामराज को है, जिन्होंने श्री नन्दा, श्री चह्वाण और श्री जगजीवनराम को उनके समर्थन में खड़ा कर दिया, बिल्कुल वैसे ही, जैसे गांधी जी ने सरदार पटेल और राजेन्द्र बाबू को श्री नेहरू के समर्थन में खड़ा कर दिया था!

इस समर्थन में श्री मुरार जी देसाई को पछाड़ा दिया; बिल्कुल वैसे ही, जैसे पंडित जवाहरलाल नेहरू ने सुभाष बाबू को अध्यक्षता की तस्वीर से हटा दिया था!

श्री मुरार जी देसाई गुजरात के नेता हैं, श्री अतुल्य घोष बंगाल के नेता हैं, श्री कामराज मद्रास के नेता हैं, श्री चह्वाण महाराष्ट्र के नेता हैं। लाला लाजपतराय पंजाब के नेता थे, श्री गोविन्दवल्लभ पंत उत्तर प्रदेश के नेता थे, श्री चित्तरंजन दास बंगाल के नेता थे। केन्द्रीय नेतृत्व पाने से पहले हरेक का प्रान्तीय नेतृत्व पुष्ट होगया था।

श्रीमती इन्दिरा गांधी को यह सुविधा प्राप्त न थी। उनकी स्थिति उर्दू जैसी थी कि गुजराती गुजरात की भाषा, बंगला बंगाल की, मराठी महाराष्ट्र की, पर करोड़ों प्रेमियों और बोलने वालों के बावजूद उर्दू का कोई अपना क्षेत्र नहीं। श्रीमती इन्दिरा के नेतृत्व का भी कोई क्षेत्र नहीं, पर पंडित जवाहर लाल के संबंध ने, कुछ दिनों के लिए कांग्रेस की अध्यक्षता ने, विदेश यात्राओं ने, केन्द्रीय मंत्रित्व ने और देश के दौरों ने उन्हें राष्ट्रीय सम्पर्क से अभिषिक्त कर दिया था। कहूं, प्रधानमन्त्री बनते समय उनका व्यक्तित्व राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय था, पर नेतृत्व नहीं।

इस स्थिति में कांग्रेस का जयपुर अधिवेशन श्रीमती इन्दिरा गांधी के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए एक कसौटी भी था, एक वरदान भी। कसौटी इसलिए कि उन्हें यह सिद्ध करना था कि वे अपनी सरकार की तरफ से अपने संगठन को कैसे जवाब देती हैं? साथियों के विरोध का कैसे सामना करती हैं? उन्हें किस हद तक प्रभावित कर सकती हैं? वरदान इसलिए कि यह अधिवेशन पार्लियामेन्ट के बजट अधिवेशन से ठीक पहले हुआ और इस तरह इन्दिरा जी को आत्म विश्वास का अभ्यास करने का अवसर मिल गया। जयपुर का विरोध सहकर्मियों का विरोध था, पर दिल्ली का विरोध तो विरोधियों का विरोध होगा।

जयपुर की कसौटी पर वे खरी उतरीं, पर शक्तिमत्ता से नहीं, बुद्धिमत्ता से। बुद्धिमत्ता यह कि उन्होंने अपने प्रभाव को जाँचा ज़रूर, पर तोल का अवसर नहीं दिया। उनकी पहली सफलता थी ताशकन्द घोषणा का समर्थन करने वाला प्रस्ताव श्री मुरार जी से पेश कराना और इस तरह अपनी सरकार की ज़िम्मेदारी—विरोध का मुकाबला—से शोभा के साथ अपने को बचा लेना। वे विषय समिति में ताशकन्द घोषणा का समर्थन-प्रस्ताव पास होने के बाद बोलीं; जैसे कोई धूप-दीप जलने के बाद आरती आरम्भ करे।

अपने प्रभाव की परीक्षा उन्होंने सिर्फ एक बार ही की। खाद्य मंत्री श्री सुब्रह्मण्यम् जब घनघोर और व्यापक विरोध से परेशान थे, तो वे माइक पर आईं और बोलीं—"श्री सुब्रह्मण्यम् ने कहा है कि अन्न क्षेत्रों के प्रश्न पर विचार किया जाएगा। आप लोग तुरन्त अन्नक्षेत्र हटाने के संशोधन पर आग्रह न करें।" यह प्रधान मंत्री का ही वादा था, पर सदस्यों ने नहीं नहीं शोर कर इसे अस्वीकृत कर दिया। इस पर न अड़ना, उनके शौर्य की पराजय थी, पर झुक जाना नेता के बहुमुखी प्रजातंत्री स्वभाव की विशेषता का प्रदर्शन भी तो था। नेहरू जी भी अपनी बात पर अड़ते थे, उफनते थे, गुर्राते थे, झंझोड़ते थे, पर बहुमत को झुका न सके, तो झुक जाते थे।

इस विरोध से जहाँ श्री कामराज ने अधिनायकता के ढंग से टक्कर ली, वहाँ इन्दिरा जी चुप रह गईं, पर जयपुर से लौटते ही दूसरे दिन दिल्ली में मुख्यमंत्री सम्मेलन में अन्नक्षेत्र हटाने की बात अस्वीकृत कर दी गई; यानी सरकार जयपुर के बहुमत के पंजे से बाहर हो गई। इन्दिरा जी की नीति यह मालूम होती है कि १९६७ के आम चुनाव तक वे अपने पैर मजबूत कर लें, तो दमकें। नेहरू जी विरोध को झिड़क कर समाप्त कर देते थे, लाल बहादुर जी विरोध को अपनी सहिष्णुता से थका कर समाप्त कर देते थे, पर इन्दिरा जी की नीति क्या होगी, यह जयपुर को देखकर पता नहीं चला—'प्रतीक्षा करो और देखो' ही वहाँ का पाठ रहा। लोग उनकी ओर से निराश नहीं हुए, जयपुर में उनकी सब से बड़ी यही सफलता है, पर उनकी कमाई यह है कि आम आदमी, यानी जनता ने उनके प्रति आकर्षण का प्रदर्शन किया। इस घोषणा से कि श्रीमती इन्दिरा जी अमुक समय खुले अधिवेशन में भाषण करेंगी, लोगों का बेताबी से नेहरू-नगर की ओर दौड़ पड़ना स्वयं अपने में महत्वपूर्ण था।

पंडित नेहरू की दो कमाइयाँ थीं। पहला जनता में उनके प्रति आकर्षण और दूसरा जनता में उनके प्रति विश्वास। आकर्षण सत्पुरुष के रूप में, विश्वास—जवाहर लाल सब कुछ कर सकता है—नेता के रूप में। १९६२ के चीनी आक्रमण के बाद जनता का आकर्षण शेष रह गया था, विश्वास खंडित होगया था। चीन के सामने भारत की पराजय के कारण नहीं, इमर्जेंसी के रूप में सर्वाधिकार पाकर जनता के शोषकों का संहार न कर सकने के कारण। जयपुर ने इन्दिरा जी को आकर्षण का उपहार दिया है, पर विश्वास प्राप्त करने का तकाज़ा भी किया है। इन्दिरा जी ने इस तकाज़े को अपनी मुस्कराहट से टुलराया है और बस यही उनकी जयपुर बैलेंस शीट है।

श्री मुरारजी देसाई

जनवरी के 'नयाजीवन' की संपादकीय टिप्पणी में मैंने लिखा था-'चुनाव के तुरंत बाद मुरारजी भाई इंदिरा जी से हाथ मिलाते हुए जिस जोर से हँसे और उनके चेहरे पर जो हास्य प्रदीप्त हुआ, उसकी साक्षी है कि मुरारजी भाई उनमें नहीं हैं, जो हार कर समाप्त हो जाते हैं। वे बलिष्ठ पुरुष हैं, अनुशासित पुरुष हैं और कामराज योजना में मंत्री पद छोड़ने के बाद जिस संतुलित भाषा का प्रयोग उन्होंने लंबे समय में किया है, वह उनकी अपनी विशेषता है।"

इस टिप्पणी के १५ दिन बाद ही जयपुर कांग्रेस में ताशकन्द घोषणा के समर्थन का प्रस्ताव पेश करके मुरारजी भाई ने अपने मानस व्यक्तित्व की वही तस्वीर पेश कर दी, जो उस टिप्पणी में थी। ताशकन्द समझौता सरकार ने किया। इसलिए उसके समर्थन का प्रस्ताव सरकारी प्रस्ताव था। सरकार श्रीमती इंदिरा गांधी की है, जिसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुरारजी भाई को पराजित किया है। यदि इस प्रस्ताव पर कमज़ोर प्रस्तुति होती, तो इंदिरा जी पर ही आलोचना की कड़वी बौछारें आतीं। प्रधानमंत्री होने के नाते इंदिरा जी का ही उत्तरदायित्व था कि वे इसे प्रस्तुत करें, पर मुरार जी भाई ने उस उत्तरदायित्व को अपने सिर लिया और इस शान से निभाया कि सब भौंचक रह गए। जो आलोचना हुई, उसका उत्तर भी उन्होंने बहुत शान से दिया और इस तरह सरकार के बाहर रहते भी सरकार का ऐसा संरक्षण किया, जैसे वे ही सरकार हों।

ताशकंद-प्रस्ताव का मुरारजी भाई द्वारा पूरे मन-सामर्थ्य से प्रस्तुत करना एक बड़ी बात थी। उनकी जगह कोई दूसरा छोटे मन का आदमी होता, तो इंदिरा जी को हुर्लाने की और हुर्लाने में बढ़ावा देने की कोशिस करता, जैसे बिना कहे ही कहता—"लो, मजा चाखो मुझे हरा कर प्रधानमंत्री बनने का और समझ लो कि मैं तुम्हें चैन से नहीं बैठने दूंगा।"

कम्यूनिस्टों की प्रजातंत्र में आस्था नहीं है। फिर भी वे चुनाव लड़ते हैं कि प्रजातंत्र से शक्ति पाकर प्रजातंत्र को तोड़ सकें। जो कम्यूनिस्ट नहीं हैं, उनमें भी काफी लोग ऐसे हैं, जो प्रजातंत्र से शक्ति-पद-प्रतिष्ठा प्राप्त करना चाहते हैं, पर उनकी जीवन पद्धति प्रजातंत्री नहीं है। मुरार जी भाई ने सिद्ध कर दिया है कि वे प्रजातंत्री नागरिक और प्रजातंत्री नेता के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। कहूं, बंगलौर और नई दिल्ली में उन्होंने जो कुछ खोया था, उसे जयपुर में बटोर लिया है।

श्री सुब्रह्मण्यम्

खाद्यमंत्री श्री सुब्रह्मण्यम् जयपुर कांग्रेस के सब से बहादुर आदमी थे। उनकी खाद्यनीति की जो सर्वसम्मत कड़वी, क्रूर और युक्तियुक्त आलोचना जयपुर में हुई, (यहाँ तक कि उनकी बात भी सुनने को लोग तैयार नहीं हुए, उन्हें झिड़क कर लोगों ने चुप कर दिया)। उसे वे सह गए, न उन्होंने त्यागपत्र दिया, न आत्म-हत्या की, यह सचमुच उनका ही साहस था।

"जब मद्रास में चावल का भाव ८० रुपये क्विंटल, मैसूर में १६० रुपये क्विंटल और केरल में २०० रुपये क्विंटल है, क्या तब हम यह दावा कर सकते हैं कि हम देश में समाजवाद का निर्माण कर रहे हैं? इस हालत में क्या भारत को एक राष्ट्र कहा जा सकता है?" यह प्रमुख वक्ताओं का प्रश्न था।

"केरल के लोगों को प्रतिदिन १२० ग्राम चावल, मद्रास के लोगों को प्रतिदिन २०० ग्राम चावल और आंध्र के लोगों को प्रतिदिन २२० ग्राम चावल मिलता है। इस स्थिति में क्या केरल वाले संतुष्ट हो सकते हैं?" यह प्रश्न भी था।

"गेहूं का भाव पंजाब में प्रति क्विंटल ५६ रुपये, दिल्ली में ६२ रुपये, गाजियाबाद में ८५ रुपये और कलकत्ता में १५० रुपये है। क्या इससे भारत की एकता सिद्ध होती है?" यह प्रश्न भी था।

प्रश्न क्या थे बरछे थे, जो सुब्रह्मण्यम् की छाती पर चढ़े कह रहे थे भारत की राष्ट्रीय खाद्यनीति बनाओ या मरने को तैयार रहो। श्री कामराज ने उन्हें बचा दिया, पर इस तरह कि जैसे किसी को फांसी का हुक्म लिख दिया जाए, पर जज उसे बिना सुनाए कचहरी से घर चला जाए। इस बहस के चार दिन बाद १६ फरवरी १९६६ को लोकसभा में खाद्यनीति पर जो बहस हुई, उसमें भी सदस्यों ने सुब्रह्मण्यम् को भाषण नहीं करने दिया यहाँ तक कि लोकसभा के पटल पर भी उन्हें अपने भाषण की प्रति नहीं रखने दी।

खाद्यनीति सुब्रह्मण्यम् की नहीं, भारत-सरकार की है। उस पर अलग से विचार करने की जरूरत है। स्वयं उनके सम्बंध में तो यही कहा जा सकता है कि उनके अफसरों के दिये आंकड़ों के सिवा उनके पास कहने को अपना कुछ नहीं है। दुनिया में मिनिस्टरों के स्टेनों होते हैं, वे अपने अफसरों के स्टेनों हैं। इस हालत में भी वे न शालीन हैं न टैक्टफुल, रूखे उजड्ड हैं—करेला नीम चढ़ा। जयपुर से वे इस हालत में लौटे हैं, जैसे कोई युद्ध में बुरी तरह घायल हो जाए, पर उसकी मृत्यु मोर्चे पर नहीं, घर आने पर हो। वे जर्जर हो गए हैं और खाद्य-नीति तो बदलेगी ही, पर १९६७ के बाद वे केन्द्रीय मंत्री मंडल में नहीं होंगे—पिटे मोहरे को शतरंज पर कौन रखता है?

कांग्रेस-संगठन

लाखों रुपये खर्च करके और चार दिन तक लगातार विचार-मंथन करके कांग्रेस ने जयपुर में क्या कमाया? यह जयपुर-अधिवेशन का सबसे ज़रूरी प्रश्न है और इसका स्पष्ट उत्तर यह है कि कुछ नहीं पाया। १९६४ में ५२ लाख ६३ हजार प्राथमिक सदस्य थे कांग्रेस के और अब १ करोड़ ७३ लाख हैं। कांग्रेस के सचिव श्री मनियन ने इस बढ़ोतरी का कारण १९६७ का चुनाव बताया। कमाल हो गया कि न अध्यक्ष श्री कामराज ने अपने भाषण में कांग्रेस-संगठन के जर्जर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेहरू; व्यक्तित्व और विचार

कुछ पुस्तकें ऐसी भी होती हैं, जो कागज पर छपी होती हैं, जिल्द में बंधी होती हैं, बाज़ार में बिकती रहती हैं, पर पुस्तक नहीं होतीं। ऐसी ही यह पुस्तक है—नेहरू; व्यक्तित्व और विचार। यह अमृत था, जीवन रस का एक श्रोत है, जो सदा बहता रहता है, कभी सूखता नहीं। जवाहरलाल जी मर गए; मर्त्य थे, तो मरते ही, पर इस पुस्तक के ३५१ पृष्ठों में संकलित ११७ संस्मरण-इम्प्रैशनों में उनके हृदय का स्पन्दन हम सुनते हैं, उससे अगले करीब २०० पृष्ठों में संकलित विचारों में उनके मस्तिष्क के सुलझाव-उलझाव हमें मिलते हैं और उससे अगले कोई २५ पृष्ठों में संकलित उनके चित्रों में हम उनके दर्शन करते हैं। इस प्रकार सम्पादक मण्डल ने श्रम और सूझ से इस ग्रंथ को जवाहर लाल जी की आकृति और प्रकृति का सजीव एलबम बना दिया है। जिल्द मजबूत है, कागज उत्तम है, छपाई शुद्ध-स्वच्छ है, मूल्य २५ रुपये है, और मिलने का पता सस्ता साहित्य मंडल, कनाट सर्कस नई दिल्ली है।

पुस्तक-परिचय

त्रिविधा

एक होता है विचार, एक होता है अनुभव और एक होती है कल्पना। विचार से लेख की सृष्टि होती है, अनुभव से संस्मरण की, कल्पना से कविता की, पर किसी कृति में विचार, अनुभव और कल्पना तीनों एक जगह मिल जाएँ, तो वह क्या होती है ? विचारक नेता श्री ब्रजलाल बियाणी ने त्रिविधा में इसके सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। संस्मरण और गद्य काव्य का सुन्दर उदाहरण हैं ये मीठी-भीनीं रचनाएँ। पढ़ने में आनन्द आता है और पढ़ने के बाद भी लगता है हमारे पास कुछ बचा रह गया है, यही इनकी विशेषता है। कल्पना कानन एवं धरती और आकाश नाम के संग्रहों में श्री बियाणी जी की कृतियाँ पाठक पढ़ चुके हैं, पर त्रिविधा में बियाणी जी की कलम गहरे भी गई है और सरस भी हुई है। इसका अर्थ है कि बियाणी जी उम्र के साथ आन्तरिक ह्रास की ओर नहीं, विकास की ओर ही बढ़रहे हैं। सुन्दर सजिल्द पुस्तक का दाम २॥ रुपये और प्राप्ति स्थान नवयुग साहित्य सदन, खजूरी बाजार, इन्दौर। ▣

स्वरूप को सशक्त करने की कोई योजना दी, न सचिव ने उस पर विचार किया और न किसी वक्ता प्रतिनिधि ने ही चार बोल कहे। मतलब यह कि चपरासी को काम कुछ न कुछ हरेक बाबू ने सौंपा, पर यह किसी ने नहीं सोचा—देखा कि वह क्षय का बीमार है—

अब तो आराम से गुज़रती है !
आख़बत की खबर खुदा जाने !!

और देश की जनता

अंतिम, पर सब से महत्वपूर्ण प्रश्न यह कि देश की जिस जनता की सेवा के लिए कांग्रेस का अस्तित्व है और जिस जनता के समर्थन से कांग्रेस-सरकार क़ायम और जीवित है, जयपुर में उसे क्या मिला ?

१९३१ में कराची कांग्रेस में नागरिक के अधिकारों की घोषणा हुई थी। १९५५ में अवाड़ी कांग्रेस में समाजवादी ढंग की समाज रचना का वादा किया गया था। १९६४ में भुवनेश्वर-कांग्रेस में एकाधिकार को—धन साधनों पर थोड़े से आदमियों के अधिकार को—तोड़कर जनता को सुखी करने का, यानी सचमुच समाजवाद लाने का संकल्प लिया गया था। इसका अर्थ था कि १५ अगस्त १९४७ को जो अमृत आकाश बरसा और खजूरों में अटक गया, तो खजूरों को काट कर उसे धरती तक—जनता तक पहुंचाया जाएगा।

जयपुर में यह संकल्प नहीं दोहराया गया, इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा गया और बस, अध्यक्ष श्री कामराज को एक कमेटी बनाने का अधिकार दिया गया, जो जांच करेगी कि भुवनेश्वर-प्रस्ताव की प्रगति का क्या हाल है ? निश्चय ही यह एक आश्वासन है, पर वैसा ही कि जैसे अपने देवता के नाम पर बन रही धर्मशाला के ठेकेदारों को हज़ारों रुपए के चैक देकर गद्दी से उठते हुए सेठ जी, बहुत देर से सामने खड़े उस आदमी को, जो अपनी बेटी के विवाह के लिए मदद चाहता है, कहें—अच्छा तुम्हारे लिए भी कुछ करेंगे भाई, पर आजकल धर्मशाला के काम में काफी खर्च हो रहा है।

जयपुर में जनता ने यही कमाया, पर हाँ, कुछ ऐसा भी उसने पाया, जो उसे किसी ने दिया नहीं, पर मिल गया। वह था सरल हृदय में जनता का यह आशावाद—इन्दिरा जी हमारे लिए अवश्य कुछ करेंगी। •

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुम्बन और चाबुक

श्री जगदीश चावला, एम. ए.

वेश्या, एक फ़िलासफी

दिल्ली स्टेशन का रेलवे प्लेट फार्म। एक तो बला की सर्दी दूर-दूर तक फैला कुहासा; दूसरे थर्ड क्लास के कम्पार्टमेन्ट में यात्रियों की खचाखच भीड़ और ऐसे में मेरे सामने की सीट पर अपनी बूढ़ी मा और दो उस्तादों के साथ बैठी एक जवान वेश्या।

वेश्या—हमारे समाज की एक ऐसी देन, जो रात के अंधेरे में समाज की गुनाहगार नज़रों को अपने आँचल में पनाह देती है और सुबह की रोशनी में खुद समाज की अदालत के बीच एक गुनाहगार, पापी और मुजरिम के रूप में खड़ी हो जाती है।

गाड़ी भाग रही है और मेरे दिमाग में वेश्या के प्रति हल्के भाव तैर रहे हैं। वेश्या की निगाहें नीचे फ़र्श पर झुकी हैं, लेकिन पास खड़े कुछ मन चले अपनी एक आँख दबा कर वेश्या पर हँस देते हैं और फिर इसी बीच कुछ भद्दा मज़ाक करने में मशगूल हो जाते हैं।

मेरठ से मुज़फ्फरनगर के मार्ग में टिकटों की चैकिंग शुरू हो जाती है। गाड़ी स्टेशन पर स्टेशन पार किये जा रही है और ऐसे में बिना टिकट सफर करता हुआ एक यात्री जो देखने में एक मामूली मजदूरसा प्रतीत होता है, टिकट कलैक्टर के कर्तव्य का शिकार और कम्पार्टमेन्ट में खड़े कई सभ्य लोगों के लिए उपहास और अप्रतिष्ठा का केन्द्र बन जाता है। वह बेटिकट है। उस के शब्दों में बेबसी, आतुरता और रहम की मांग है, लेकिन टिकट कलैक्टर के शब्दों में इंकार और रोष भरा है। लोग हँस रहे हैं, व्यंग कर रहे हैं, फबतियाँ कस रहे हैं—'जेब में पैसा होता नहीं, मुफ्त में सफ़र करने की लत पड़ गई है।'—'अजी, कइयों ने तो बिना टिकट सफ़र करना अपना पेशा ही बना लिया है।' उस यात्री के सामने एक लाचारी है कि उसका बेटा सख्त बीमार है, जिसे वह देखने जा रहा है। टिकट कलैक्टर के पास माफी का कोई कालम नहीं। स्टेशन आ जाता है, गाड़ी रुकती है। टिकट कलैक्टर उस यात्री को जेल भिजवाने की धमकी दिये जा रहा है, अन्य हँस रहे हैं।

अचानक मेरे विचार बिखर कर रह जाते हैं, जब वह वेश्या टिकट कलैक्टर से कहती है—"इसे छोड़ दो, जितने पैसे टिकट के चाहिएँ मुझ से ले लो—मगर एक लाचार पिता को उसके बीमार बेटे से मिलने को मत रोको।" यात्री की आँखों में आँसू भर आते हैं, वह रुँधे स्वर से दुआएँ देता हुआ स्टेशन से बाहर आ जाता है। टिकट कलैक्टर अपने हिसाब के पैसे लेकर एक ख़ास मुद्रा में दूसरे कम्पार्टमेंट में चला जाता है और कई सभ्य तमाशबीनों के चेहरे लटक कर रह जाते हैं। मन ही मन मैं उस वेश्या के प्रति, नतमस्तक हुए जा रहा हूं कि हर रोज सूली पर चढ़ने वाली मरियम ने एक मसीह की तरह अपनी फिलासफी से मेरे दिल में जमी घृणा की धूल धो दी है। मैं सोच रहा हूं समाज में वह उथल-पुथल कब होगी, जिस के बाद बहन-बेटियों को वेश्या नहीं बनना पड़ेगा?

नहले पर दहला

एक घरेलू चायपार्टी में मेरे मित्र ने, जो एक इन्टर कालेज में अध्यापक हैं और हर जगह, हर समय अपने अध्यापकपन का प्रदर्शन करने के मरीज बन चुके हैं, चाय की चुस्की लेते हुए किशोर से पूछा—'क्यों बेटा, जानते हो तुम्हारी साईकिल किस की देन है?' किशोर ने अपने ढंग से उत्तर दिया—'मेरे अंकल जी की।' इस उत्तर पर हमें हँसी आ गई। उनका दूसरा प्रश्न था—'सबसे पहला अन्तरिक्ष यात्री कौन था?' किशोर से इसका कोई उत्तर न पा, वे तीसरा प्रश्न पूछ बैठे—'राष्ट्रीय गान की रचना किस सन् में की गई?' किशोर इस पर भी चुप रहा। उसे मौन देख कर मेरे मित्र ने मुझसे कहा—'यार, किस रद्दी स्कूल में दाखिल करा रखा है इसे। तेरा यह जनरल नालेज में तो बिल्कुल निकम्मा है। इसे मसूरी भेज दो।'

इससे पूर्व कि मैं कोई उत्तर दूँ, किशोर चेतन हुआ—'अच्छा अंकल जी, अब आप बताइए कि ध्रुव के माता और पिता का नाम क्या था?' मेरे मित्र इस प्रश्न पर मेरा मुँह देखने लगे। मैं हँस पड़ा, वे सकपका गए। किशोर ने बतलाया कि ध्रुव की माता का नाम सुनीति और पिता का नाम उत्तानपाद था। इतना कह कर वह बाहर खेलने भाग गया। तभी मित्र की पत्नी ने उनसे धीमे स्वर में कहा—"आप भी जनरल नालेज में कोरे हैं, अच्छा रहेगा कि आप इसकी ही कलास में दाखिला लें।" इस पर सर्वत्र हँसी बिखर गई और बेचारे अध्यापक जी अपनी झेंप उतारने के लिए एक विशेष अंदाज में हँसते हुए गटागट सारी चाय अपने गले में उतार गए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन्तों, धोखा कासों कहिए ?

प्रोफेसर श्री विवेकी राय

देश का सबसे जलता हुआ प्रश्न है—अन्न संकट, राजधानी और नगरों में उसका काफी कोलाहल है, पर अन्न नगरों में नहीं, गाँवों में उत्पन्न होता है, विवेकीराय ग्रामीण जीवन के श्रेष्ठतम समीक्षकों में हैं; क्योंकि वे आसमानी वक्तव्यों और आंकड़ों में न उलझ कर, खेत की बात खेत से और किसान की बात किसान से पूछते हैं। इस प्रश्न पर उनकी राय उनके अपने शिल्प में यहाँ प्रस्तुत है।

जब से सुना है कि हमारे मुल्क के हर बारह आदमी पर एक आदमी विदेशी अन्न पर आज पल कर अपने जीवन की नौका खे रहा है।

जब से सुना है कि पी० एल० ४८० के बिना यह कृषि प्रधान विशाल देश भूखों मर जाएगा।

जब से सुना है कि अमरीका में जितना अधिक गेहूं होता है उसका २० प्रतिशत हम मँगा लेते हैं और हमारी पैदावर घटने एवम् आबादी बढ़ने का यही वर्तमान रेट रहा, तो २० वर्ष में उसका समस्त गेहूं हमें मंगाना पड़ेगा। तब से हमारे विचारों के रंगमंच पर एक विचित्र नाट्य-लीला चल रही है।

नेपथ्य से—

सावधान, देशवासियों, सावधान! आत्म सम्मान के लिए गोली खा-खाकर अमर हो जाने के बलिदानी सपनों में चूर भारतवासियों, सावधान! यह अन्न का आतंकवाद, यह आँकड़ों के मकड़ों की मायावी त्रास लीला और यह पी. एल. बिन। तुम्हारे भूखों मरने की नकली नारे बाजी घर के भीतर छिपे दुश्मनों की चाल है, कि तुम्हारा मनोबल गिर जाए कि तुम्हारा स्वाभिमान बिखर जाए, कि तुम स्वयं भीतर से टूट जाओ। सावधान! यह एकदम झूठ है कि पी. एल. ४८० के बिना देश में दुर्भिक्ष पड़ जाएगा। यह झूठी बात है कि देश में ऐसा घनघोर अन्न संकट है कि बस यह भिक्षान्न ही सहारा है। सब धोखा! भारी धोखा!! यह सारी आँकडे बाज़ी का फर्ज़ी हिसाब है। कमी दूसरी बातों की है, अन्न की नहीं। राम राम। मस्तक लज्जा से झुक जाता है, उठते हौसलों के पुतले शर्म से झुक जाते हैं। हम मुट्ठी भर अन्न के लिए मुहताज हैं? एकदम गलत! देश भिक्षान्न पर जी रहा है; दूर हो ऐसा कहने वाले फरेबियों।

सूत्रधार

सुनो, एक कहानी सुनाता हूँ। एक पटवारी था। वह अपने लड़कों को लेकर चला भोज खाने। बीच में पड़ती थी एक नदी। लड़के छोटे-छोटे थे। इसलिए पहले स्वयं पानी में घुस पड़ा। किनारे पर घुटने भर पानी था। आगे कमर बराबर था। बीच में नाक बराबर था। उस पार की ओर इसी क्रम से कम होता गया था। पटवारी था हिसाब किताब वाला जीव। सो पार आकर उसने पूरे पानी का औसत काग़ज़ पेन्सिल के सहारे निकाल डाला। इस औसत के मुताबिक सभी लड़के काफी बड़े निकले। उसने ललकार लगाई—मिल गई पानी की थाह, बालकों, हेल चलो। परिणाम हुआ कि सभो लड़के डूब गए। पटवारी को आश्चर्य हुआ—'नापे जोखे थाहे, लड़के डूबे काहे?'

सो, यह सरकारी आँकड़ों का पटवारी हमारी पैदावार की कमी का औसत बताकर आत्म सम्मान की बलि के लिए ललकार रहा है। क्या इस धोखे के दरिया में हम डूब जाएँगे!

पार्ट पटवारी बनाम लेखपाल का

नहीं, नहीं, डूबो मत। बचो, बचो। मैं गवाह हूँ कि ये सारे आँकड़े धोखे हैं। ये परमअविश्वसनीय और नितान्त असत्य हैं। मैं ही तो इन आँकड़ों की नींव हूँ। मैं ही वह राज हूँ जो बालू को जोड़कर यह दीवार बनाता हूँ। सरपट कलम चलाता हूँ। आँख मूँद कर लिखता हूँ। लिखता क्या हूँ नकल करता हूँ। बापदादे से खतौनी चली आ रही है। अंग्रेजी राज से ही सालों-साल यह कागज कालम-ब-कालम मैं बदलता आ रहा हूँ। कलम भले बदल जाए मगर क्या मजाल कि काग़ज़ बदल जाए। जैसे स्वराज्य हुआ, तो राज्य की या शासन की मशीन वही रही; केवल ड्राइवर बदल गया। गोरे ड्राइवर की जगह काला ड्राइवर आ गया। क्या फरक पड़ता है? पटवारी की जगह लेखपाल; क्या फरक पड़ता है? वही कागज़, वही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कलम, वही नकशा, वही खतौनी; फरमान मिला कि अमुक दिन वो अमुक तिथि तक नकशा भर कर दाखिल दफ्तर हो जाए। टाइम वार्ड–फिर क्या हो? चलने दो बेटा छानवे मील प्रति घण्टे की रफ्तार से कलम भरने दो सभी कालमों को। गेहूँ में जौ, जौ में लतरी, गन्ने में बंजर और बंजर में खंजर। सावन में सूखा, खरीफ में मंढा पसोरी को दो। रेट की चिन्ता क्या? जो कलम से निकल गया, वही रेट है, वही पैदावार है, वही सत्य है, मगर, इस झंझट में पड़ना भी क्यों है? रेट जो पुराने लोग लिख ही गए हैं। उतार देना है। हरफ-ब-हरफ उसे। भक्षिका स्थाने भक्षिका। क्या हुआ जो नलकूप आ जाने से बाबा को परती में मर्द भर गेहूँ लगा है। तुम्हारे कागज में वही रहेगा, जो रहता आया है–यानी बंजर! नई पैदावार की बढ़ोतरी का हिसाब भी क्या ही झंझट का काम है। फिर कौन देखता है कि क्या है? कागज का पेट भर दो, काम खतम, कागज दाखिल दफ्तर, टेबुल-टेबुल, फाइल-फाइल, योग-जुमला; लम्बी यात्रा करके बन गया वह आंकड़ा। अखबार में छपा, लो देश डूब गया। देश में अन्न पैदा ही नहीं हो रहा है। चलो अमरीका, मन्त्री दौड़े। खूब सौर का सुतार लगा। इधर बनियों के कान खड़े हो गए। पौबारह। भाव चढ़ने लगा। आतंक बढ़ने लगा। राजनीति की पाँचों उँगलियाँ घी में। परमिट, कोटा, कन्ट्रोल और लीपा पोती। इसलिए, सावधान, इन्द्रजाल है यह! जय जवान।

जय जवान

माफ करो, मैं बीच में कूद आया। इस अन्न संकट के इन्द्रजाल को भी टूटना है। एक पैटन टैंक और सैबर जेट का इन्द्रजाल हमने सीमा पर तोड़ा है। यह तमाशा देखो कि जो दिल्ली को उड़ा देने के लिए बैरी को बारूद की पेटी देता है वही दिल्ली की कागजी भूख मिटाने के लिए 'पब्लिक ला नम्बर ४८०' का गेहूं देकर वाहवाही लूट रहा है। कैसा इन्द्रजाल है? तो उसकी यह बारूद की पेटियाँ सीमा पर गोबर बन गईं और गेहूं का भी भण्डाफोड़ हो गया। अरे भाइयो, गेहूं और चीनी तो हमने मोर्चे पर देखा है। दिखाऊँ वह दृश्य? वह पंजाब की सोना उगलने वाली धरती ब्रह्मदण्ड की तरह खड़ा गन्ना। मर्द भर घास लगी है, जवानों को मस्ती बांटती मकई की कतार झूम रही है। खेत-खेत हँसते और पात-पात विहँसते हैं। कपास खिलती है, तो लगता है जैसे मक्खन लिए बांट रही है और इन्हीं के बीच में हम मोर्चा बनाते हैं। गोले फटते हैं, धुंआ उठता है, टैंक गुर्रा-गुर्रा कर टक्कर लेते हैं। धड़धड़ाहट से कान फटने लगते हैं, मगर परवाह क्या? वह पंजाबी पौदे-पुत्रों की सनक भरी सरसराहट, वह ललकार, अन्न का वह अनजाना बल, आंखों के रास्ते मन में और फिर रक्त में उतर जाता है। और उधर दूसरी ओर नापाक इलाके में क्या दिखाई पड़ता है? विश्वास नहीं होता। नहर के बावजूद भी इलाके वीरान पड़े हैं। धरती जैसे बन्ध्या हो गई है। खेत फट गए हैं। उनमें जगह-जगह गोलों के फटे टुकड़े, सैबर जेट के ध्वस्त टुकड़े, पुरजे बिखरे हैं। खेत-खेत में फसलों की जगह बर्बाद टैंक खड़े हैं। ध्वस्त पिलवाक्स खड़े हैं। यही पाकिस्तानी खेती है। यही उनकी पैदावार है। जय किसान!

जय किसान

मेरी जय जयकार के शब्द किधर से आए? अच्छा, कुछ [illegible] के पूर्व मैं भी एक कहानी सुनाऊं। बहराइच ज़िले की एक बुढ़िया [illegible] कब्र में पैर लटके हैं। [illegible] शीर्ण वस्त्रों में अपने शरीर [illegible] लपेटे, एक छोटी-सी पोटली [illegible] में दबाए, अपने गांव से दस [illegible] की पैदल यात्रा करके, एक [illegible] जबकि भारतीय जवान सीमा [illegible] अपने खून से देश के गौरव का [illegible] इतिहास लिख रहे थे, जिलाधीश के बंगले पर पहुंच कर कहती [illegible] 'सरकार मेरे पास कुछ चावल [illegible] गत वर्ष एक राजा साहब के [illegible] से भीख में मिले थे। अगर आप [illegible] इन चावलों को लड़ाई पर डटे हमारे बहादुर बेटों को खिला देंगे, [illegible] जिन्दगी भर आपका एहसान मानूंगी।" जिलाधीश साहब [illegible] देखता है कि उसके सामने पोटली में लगभग आधा किलो बढ़िया चावल हैं, लेकिन भाइयों, वह आधा किलो ही क्यों है? वह अभिमंत्रित चावल है। उसमें सैंतालिस करोड़ चमकते दाने हैं। मुझे उसका मर्म मालूम है। मैं देश का किसान हूं। सुनो सूत्रधार, सुनो लेखपाल, सुनो जवान मैं जानता हूं कि मुट्ठी भर अन्न में कितना वज़न होता है। मेरे पास मुट्ठी भर अन्न है, तो मेरे पास क्या नहीं है? देश का, हम किसानों का यह कैसी खिल्ली उड़ाई जा रही है। मेरी हालत माना कि खराब है, परन्तु उसे सुधारने की जगह मेरी दरिद्रता, असमर्थता, बेबसी, बेहाली का यह कैसा ढोल पीटा जा रहा है। मैं बिगड़ता गया और मुझे बनाने के नाम पर बनाने वाले बनते गए। मैं इस देश का बिना वर्दी का सैनिक हूं। मैं रीझ कर चाहे खीझ कर जैसे भी हो अपने मोर्चे पर डटा हूं। यह सीमा के मोर्चे से कम कीमती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है। इसके लिए हमें मान-सम्मान नहीं चाहिए। हम स्वतंत्र हैं। अफसोस यही है कि बिना हम से पूछे यह ढिंढोरा पीट दिया गया कि देश भूखों मर रहा है। एक हिसाब लगा कर रख दिया गया कि देश में अन्न-संकट है। मैंने पानी मांगा, मैंने खाद मांगा और कहा, धरती मेरी रत्न-गर्भा है। कितना अन्न चाहिए? मगर कौन सुनता है? अमरीकी नक्कारखाने में मेरी आवाज़ तूती की आवाज़ हो गई। हमारा तो नियम है कि घर में भोजन नहीं है तो चुप लगा रहते हैं। कोई जानने न पाए। यह कैसा जमाना आया कि दरिद्रता का बखान अखबार में छाप-छाप कर होने लगा जरूर कोई धोखा है, सावधान! स्वावलम्बन, परिश्रम, सहनशीलता, स्वाभिमान और उत्साह के आसन से गिराने का यह कुचक्र है।

पी०एल० ४८० की खोल

यह रंगमंच पर पी०एल० ४८० की खोल गिरी। आवाज़ उठी—नम्बर चार सौ अस्सी नहीं, यह सोलहसौ अस्सी अर्थात् चौगुना चार सौ बीस है। सन् १९५४ में संसार में दुर्भिक्ष रोकने के लिए बनाया गया प्रेसीडेंट आइजन हावर का पब्लिक ला नम्बर ४८०। आ गया चंगुल में भारत, तब से फँसा ही रहा। न मरने देंगे, न मोटा होने देंगे। यह अमरीकी विकास, यह अजीब रंग। पैदावार घटी, तो क्यों न गोली मार दी जाए। बाहर के दुश्मनों की जगह देश के भीतर के उन कुर्सी-शाह दुश्मनों को, जो सारा माल-मताल हजम कर बम बम बोल रहे हैं और अमरीकी सहायता हरदम की रट लगा रहे हैं। कहते हैं कि जिस रेट से आबादी बढ़ती है, उस रेट से पैदावार नहीं बढ़ती है। और तुम लोगों का पेट तो बढ़ता है? जमीन पर के घटने-बढ़ने से तुम्हें क्या मतलब? कागज पर ही घटना है, कागज पर ही बढ़ना है। खुदा के लिए यह कागज भी तो संभालते? क्या तुम नमक खाने की शरियत दे रहे हो? तब तो अन्न संकट जिन्दाबाद! पी० एल० ४८० जिन्दाबाद! अपने अन्नदाता के सामने दस्त बस्ता खड़े होने का आत्म, हीनत्व ग्रन्थि की कसती गाँठें, आत्मसम्मान की गिरावट, स्वराज्य के साथ ही देश में लगा घुन, विकास योजनायें शायद एक बड़ा धोखा। एक साजिश और सूरज की तरह चमकता यह नकली अन्न संकट। 'अधिक अन्न उपजाओ' का असफल नारा कागज पर उठा और कागज पर दफन हो गया। शेष बातें सुनें इन चूहों की ज़बानी। ये मोटे-मोटे चूहे, ये प्लेग-प्रूफ चूहे, लो गिरे रंगमंच पर—

हम चूहे, देश की अभिशप्त रूहें

हम जिन्दा रहस्य बताएँगे। हमें देख रहे हो? हम हवा पीकर इतने मोटे नहीं हो गए हैं? बकौल तुम्हारे आंकड़ों के देश की पैदावार का १० से बीस प्रतिशत तक बर्बाद हो जाता है या फेंक दिया जाता है। ज़रा सोचिए तो, लोग इतने मूर्ख हैं कि फेंक देंगे? इससे साफ यों कहा गया है कि हमारे यहाँ ६० लाख टन गल्ले की कमी है, जिसे हम बाहर से मँगाते हैं और १२९ लाख टन देश की पैदावार चूहों-कीड़ों द्वारा नष्ट हो जाती है। आ गया चूहों का नाम? अब आँखें खोल कर पहचानिए इन चूहों को। ये चूहे बड़े-बड़े बाबू बन कर हुक्का गुड़गुड़ा रहे हैं। ये चूहे बड़े-बड़े सेठ बन कर तिजोरी-तहखाने की कुंजी सरिया रहे हैं। ये चूहे बड़े-बड़े हाकिम बन कर हथेली खुजला रहे हैं। ये चूहे बड़े-बड़े सप्लाई जैसे विभागों के विभागाध्यक्ष बन कर पेट पर हाथ फेर रहे हैं। ये चूहे बड़े बड़े स्मगलर बन कर इधर का माल उधर ओल्हा देते हैं।

चर्चा रही कि हिमालय स्थित चीनी सेना भारत के अन्न पर जी रही है। कितना माल पकड़ में आया। बाजारों में चीनी सामान का होना प्रत्यक्ष उदाहरण है। तो ये घर के चूहे हैं, जो उजाड़ रहे हैं। अन्न की यहाँ कमी नहीं, अधिकता है। घर के हम चूहों को न मना कर अमरीकी खँजड़ी पर पी० एल० के गीत गाते हैं। बेइज्जती-बेहयाई का शानदार सेहरा। यह देखिए, समस्त पी०एल० ४८० की सहायता प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति १ नये पैसे का है। बस इतने के लिए ही मुल्क की असमत गिरवी रख दी जाए? नेता कहते हैं कि भारत विदेश से अपने कुल अनाज का सोलहवाँ भाग मंगाता है। अर्थात् एक लेखक के शब्दों में वह सेर में पन्द्रह छटाँक खुद पैदा कर लेता है। तो यह एक छटाँक की कैसी शर्मनाक मुहताजी है? अगर ताब हो, तो छीन लो चूहों से हम चोर बाजारिये, हम जखीरेबाज, हम मुनाफाखोर, हम स्मगलर दिन की तरह साफ हैं। हम अन्न संकट के सूत्र संचालक हैं तुम उधर अंट-शंट बातें बोलकर देश को आतंकित कर रहे हो। आबादी बढ़ी, तो देश में कृषि क्षेत्र बढ़ा, पैदावार बढ़ी, तब भी अन्न संकट? झूठ है, फरेब है सारे आंकड़े, राजनीति के दांव-पेंच सारे आंकड़े।

मैं बैठा यह नाट्य-लीला देख रहा हूं और बहुत कुछ सोच रहा हूं। कबीर के शब्दों में अन्त में मैं भी कहना चाहता हूं—'सन्तों, धोखा कासों कहिए।'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

अपने पढ़ने के कमरे में

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देव पुरुष लालबहादुर जी

नेहरू के बाद कौन ? प्रश्न का उत्तर जानने के लिए संसार उत्सुक था। यह महसूस किया जा रहा था कि देश में राजनीतिक असुरक्षा और आर्थिक संकट व्याप्त हो जाएगा, किन्तु शास्त्री जी ने देश को नैराश्य और शून्यता से निकाल कर जनता में सुरक्षा, शक्ति और गर्व की भावना भरी।

संसार में महान प्रधान मंत्री हुए हैं। बहुत से महान व्यक्ति भी प्रधान मंत्री हो चुके हैं, किन्तु वर्तमान शताब्दी में किसी भी देश में ऐसा प्रधान मंत्री पाना कठिन होगा, जो भलेपन सादगी और सज्जनता में लाल बहादुर जी से बढ़ कर हो।

वे सामान्य जनता के व्यक्ति थे और सदा उन्हीं के रहे। नेहरू जी की मृत्यु के बाद एक निजी वार्तालाप में श्री मोरारजी देसाई जैसे व्यक्ति ने लाल बहादुर जी की तुलना स्वयं करते हुए कुछ इस प्रकार के शब्द कहे थे : "लाल बहादुर जी उसी प्रकार सोचते हैं जिस प्रकार मैं सोचता हूं और काम भी उसी प्रकार करते हैं जैसे मैं करता हूं किन्तु जहाँ मुझे 'नहीं' कहना होता है वहाँ लाल बहादुर जी केवल मुस्करा भर देते हैं। मैं पुरुष हूं, किन्तु लाल बहादुर जी देव पुरुष हैं।" उनका देवत्व सदा उनमें एक महान गुण बना रहा, हमारे राष्ट्रीय जीवन के संकटकाल में तो और भी विशेष रूप से।

लाल बहादुर जी की स्थिति, शक्ति और सम्मान उनके स्वभाव, दृष्टिकोण तथा रहन-सहन के ढंग को प्रभावित नहीं कर सकते थे। जिस कमरे में वे रहते थे वह बहुत ही छोटा था। फर्नीचर के नाम पर उसमें शायद ही कोई चीज़ मिले। पहनने के लिए कपड़े बहुत ही कम थे। प्राचीन काल के ऋषियों की भांति वे अपरिग्रही थे। दिखावे से बहुत दूर। एक बार सर्दियों में उन्हें किसी ने मोजे पहनने की सलाह दी, किन्तु उनके पास केवल एक जोड़ी जूता था और यदि वे खद्दर के मोजे पहनते, तो जूतों के बढ़ जाने का डर था, जिसके बाद मोजों के बिना उनका इस्तेमाल करना संभव न होता।

उनके एक रिश्तेदार उनकी आवश्यकता महसूस करके जूतों की एक जोड़ी ले आए तो लाल बहादुर जी उन पर नाराज होने लगे कि यह सब खर्च वे कैसे सहन करेंगे ? बड़ी कठिनाई से लाल बहादुर जी को तैयार किया जा सका।

एक बार उनके परिवार के किसी सदस्य ने उनके कमरे में एक छोटा-सा कालीन बिछा दिया, ताकि सर्दी से बचाव हो सके। उन्होंने जब देखा तो उसे उठवा दिया और कहा "यह मैं कैसे इस्तेमाल कर सकता हूं और क्यों करूँ जब इसके बिना काम चल सकता है ?"

लाल बहादुर जी उपदेश कभी नहीं देते थे। वे कर्म में विश्वास करते थे। उनके जीवन से पाठ सीखा जा सकता है कि कठिन परिश्रम ही आराधना है।

(श्रीकमलनयन बजाज दै.हिंदुस्तान में)

बुढ़ापे का जीवन

नाना साहब शांत और कुछ खिन्न दिख रहे थे। वह बहुत दिनों के बाद दिखे थे, इसलिए मैं सहज उन के पास गया और जिस तरह दो तरुण मिलने पर नौकरी की बातें करते हैं, दो वृद्ध स्त्रियाँ मिलने पर बेटी की प्रशंसा और बहू की शिकायत करती हैं, उसी तरह दो बूढ़े मिले कि स्वास्थ्य की पूछताछ करते हैं और संसार के परिवर्तन के बारे में सखेद आश्चर्य अभिव्यक्त करते हैं। और ठीक यही बात हमारी चर्चा का विषय हुई। 'क्या खूब गुजरेगी, जब मिल बैठेंगे दीवाने दो' —कुछ इसी तरह का हुआ। फर्क इतना ही कि हम में से दीवाना कोई भी नहीं था, कम-से-कम नाना साहब तो नहीं ही थे।

दिन-चर्या पर चर्चा हुई। खाद्य-पेयों के विषय में बातें हुईं। मैंने भी कहा—"अब सत्तर पार कर रहा हूं। इसलिए बोलने में नहीं, पर कम-से-कम खाने में मुंह पर रोक लगा दी है।

वह बोले—"मैं पचासी पार कर चुका। आंखों के होते हुए भी देखा नहीं जाता। कानों के होते हुए भी सुना नहीं जाता। गति के होते हुए भी चला नहीं जाता। सब बदल गया है। सच पूछा जाए तो तुरुप न रहने वाला ताश मैं हो गया हूं।" उनकी इस स्वाभाविक और सहज बात का मैंने मार्मिक अर्थ निकाला। मनुष्य खेल खेलता ही रहता है, क्योंकि खेल को पूरा करना पड़ता है। वह तुरूप का पत्ता नहीं, इसका दुखद भान उसे होता है। पर खेल पूरा करने का कर्त्तव्य उसका मन टाल नहीं सकता। विवेक ऐसी सलाह नहीं देता।

नाना साहब की यही स्थिति हो गई थी। नाती-पोते सब उनके पास थे। आचार और विचार में प्रत्येक पीढ़ी किस तरह बदल रही है, यह वह रोज देख रहे थे।

मैंने पूछा—'दिन कैसे बिताते हो?'

"मेरे लिए वह रुकता नहीं!" उन्होंने उत्तर दिया। वह आगे बोले "जितना बिल्कुल अनिवार्य है उतना ही करता हूं।"

(स्व.काका गाडगिल सा.हिंदुस्तान में)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

शिलाओं, पेड़ों की छाल, जानवरों की खाल अथवा धातुओं के टुकड़ों की लिखावटें सभ्यता के उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

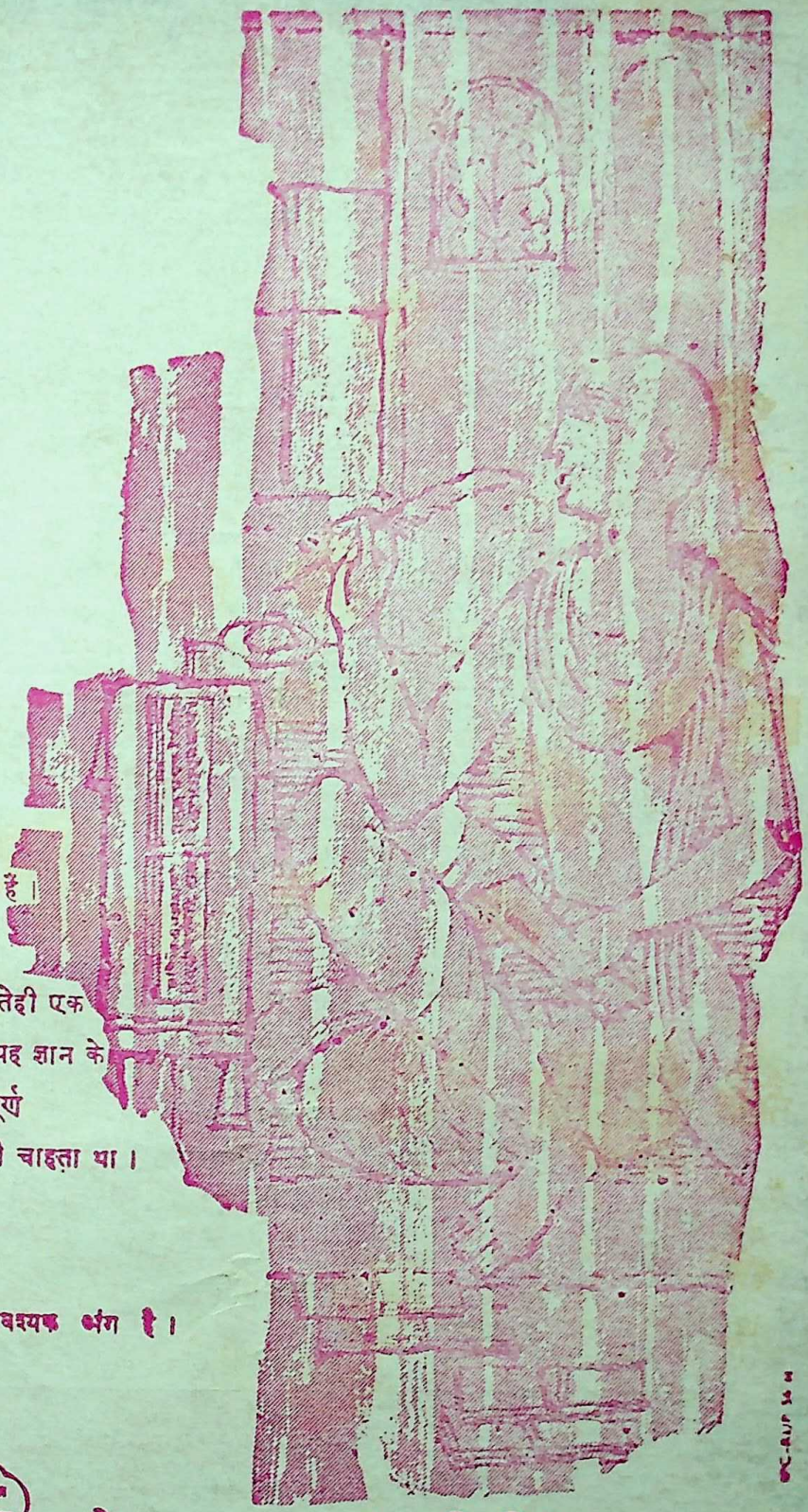

ROHTAS

SAHU JAIN INDUSTRIES

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

मुद्रक—अखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स, सहारनपुर में मुद्रित-प्रकाशित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री अपनी लंदन यात्रा से पूर्व इंगलैंड की महारानी एलीज़ाबेथ को भेंट किए जाने वाले झूले को ध्यान मग्न मुद्रा में देख रहे हैं, लेकिन क्या सिर्फ देख ही रहे हैं ?

जी नहीं, ऐसा लगता है मानो देखने के साथ - साथ वे भारत में विशेष रूप से बने इस झूले को अपने तथा भारत माता के सहज स्नेह रस में पाग भी रहे हैं ताकि यह झूला भारत और इंगलैण्ड की मैत्री का एक प्रतीक बने ।

शास्त्री जी नहीं रहे पर स्नेह सद्भाव और शान्ति का जो दीप उन्होंने जलाया, उसकी जगमग के रूप में वे हमारे आस पास ही तो हैं ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

76291

नया जीवन

चालू दुनिया को जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
चालू दुनिया को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
जाने समझे पर राय बनाने के लिए मासिक आवश्यक है,

'नया जीवन' में

दैनिक, साप्ताहिक, मासिक की सभी विशेषताओं का समावेश है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज़ के एक छोटे पुर्जे पर महात्मा गांधी ने आश्रम के एक रोगी को रात में दो बजे एक हिदायत लिखी थी। अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है।

विदेश के एक अज्ञात कवि द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला उसके मरने के बरसों बाद, वह उसी से अमर हो गया; उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज़ के बिना न शास्त्र मिलते न साहित्य। कागज़ हमारी सभ्यता की एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

पैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दून घाटी

= का =

गौरव

अमिताभ टैक्सटाइल मिल्स लिमिटेड

देहरादून :: उत्तर प्रदेश

श्रेष्ठतम :

★ सूत

★★ हौज़री

★★★ बंटा सूत

निर्माता

अमिताभ ! अमिताभ !! अमिताभ !!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि
स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

समाचार पत्र पंजीयन (केन्द्रीय) कानून १९५६ के आठवे नियम के अन्तर्गत अपेक्षित

'नया जीवन' मासिक पत्रिका विषयक

स्वामित्व तथा अन्य बातों का विवरण

प्रपत्र संख्या—४

१. प्रकाशन का स्थान	सहारनपुर, उत्तर प्रदेश
२. प्रकाशन की अवधि	प्रति मास
३. मुद्रक का नाम	अखिलेश
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	रेलवे रोड, सहारनपुर
४. प्रकाशक का नाम	कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	रेलवे रोड, सहारनपुर
५. सम्पादक का नाम	अखिलेश
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	रेलवे रोड, सहारनपुर
६. स्वामिनी संस्था	विकास लिमिटेड, सहारनपुर

मैं, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' घोषित करता हूं कि मेरी जानकारी और विश्वास के अनुसार उपरोक्त विवरण सही है।

२८ फरवरी १९६६

ह० कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसकी लाखों प्रतियाँ बिक चुकी हैं—

विद्यार्थियों, राजनैतिक व्यक्तियों, सरकारी कर्मचारियों, एवं सैनिकों तथा प्रत्येक भारतीय के लिए आज की पाठ्य-पुस्तक

'जवाहरलाल नेहरू के अन्तिम चरण'

(सैण्ट्रल लायब्रेरी कमेटी, पंजाब द्वारा स्वीकृत)

पत्र सं० पी. आर. डी. लायब्रेरी–६५/५०८३५ दिनांक २ दिसम्बर १९६५

लेखक—
अयोध्याप्रसाद दीक्षित, आई. ए. एस.

मूल्य—
तीन रुपया मात्र

- "अन्तिम चरण" को प्रकाशित करके श्री रतन जी ने एक महान कार्य किया है।
  —श्रीमती इन्दिरा गाँधी
  प्रधान-मन्त्री भारत सरकार
- प्रत्येक व्यक्ति के हाथ में "अन्तिम चरण" हो यही श्री नेहरू जी को सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।
  —गुलजारी लाल नन्दा
  गृह-मंत्री-भारत सरकार
- "अन्तिम चरण" के प्रकाशन से श्री नेहरू का व्यक्तित्व उभरा है।
  —पद्म-भूषण सेठ गोविन्द दास
- एक-एक हिन्दुस्तानी को "अन्तिम चरण" पढ़नी चाहिए।
  —पद्म-भूषण सूर्यनारायण व्यास
- नेहरू-जीवन का इतिहास ही "अन्तिम चरण" के बिना अधूरा है।
  —कामरेड रामकिशन
  मुख्य-मंत्री–पंजाब

नोट—इस पुस्तक की समस्त आय पंजाब सुरक्षा-कोष में जमा हो रही है।

पंजाब में एकमात्र वितरक :

इंग्लिश बुक शाप :: सैक्टर २२ पी., चण्डीगढ़

प्रकाशक—रतन चन्द धीर

सरस्वती प्रकाशन, देहरादून :: उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–

उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है !

★

कोशिश कीजिये–

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए !

खड़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत

एवं

भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के साथ-साथ अब अनेक नवीन एव आकर्षक डिज़ाइन में छींटों का भी निर्माण होने लगा है।

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस : चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—३१६, ३६४, १६०

प्रबन्धक
सेठ कुलदीप चंद बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साकेत साहित्य सदन

प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

मुख्य केन्द्र—६२, हलवासिया मार्केट, हजरतगंज, लखनऊ, उत्तर प्रदेश

हमारा सदन :

१. पाठ्य पुस्तकें—बेसिक, मान्टेसरी, जूनियर हाई स्कूल, कालेज एवं डिगरी कक्षाओं के कोर्स तक।

२. उपन्यास, कहानी एव नाटक—उपन्यास, नाटक, कहानी, संस्मरण, रेखाचित्र, रेडियो नाटक, हास्य रस प्रधान साहित्य तथा फीचर आदि।

३. साहित्यिक पुस्तकें—खण्ड काव्य, महा काव्य, समालोचना, हिन्दी अंग्रेजी कोष एवं अनुसन्धान सम्बन्धी ग्रन्थ।

४. बाल साहित्य—बालोपयोगी अनुपम पुस्तकें।

५. विकास साहित्य—विकास आयुक्त द्वारा स्वीकृत साहित्य विशेषतः (कृषि एवं पशुपालन तथा सहकारी योजना साहित्य)।

का

एक वृहत् भण्डार है।

कृपया हमारे सदन में पधारिए अथवा पत्र द्वारा आदेश भेजिए।

व्यवस्थापक—**साकेत साहित्य सदन, लखनऊ उ. प्र.**

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी के उन्नयन में हिन्दी समिति का योग

राष्ट्रभाषा की समृद्धि के संकल्प को पूर्ण करने की दिशा में हिन्दी समिति अभी तक विभिन्न तकनीकी अभियांत्रिक, सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक विषयों के अनूदित एवं मौलिक १२५ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है।

समिति के कुछ नये प्रकाशन

१—योगदर्शन	डा० सम्पूर्णानन्द	६-००
२—वैज्ञानिक उद्भावों का इतिहास	श्री जगपति चतुर्वेदी	५-००
३—भैषज्य संहिता	श्री अत्रिदेव विद्यालंकार	४-५०
४—पश्चिमी आलोचना शास्त्र	डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय	८-५०
५—रेडियो सर्विसिंग	श्री रमेश चन्द्र विजय	८-५०
६ तेल और उनसे बने पदाथ	डा० एस० पी० पाठक	६-५०
७—शैक्षिक समाज शास्त्र	डा० सीताराम जायसवाल	७-५०
८—विश्व इतिहास	डा० रामप्रसाद त्रिपाठी	१४-५०
९—गहन खेती	डा० सन्त बहादुर सिंह	५-००
१०—भारत की भू-नीति	श्री कालिदास कपूर	७-५०
११—गणित का इतिहास	डा० ब्रजमोहन	६-५०
१२—पदार्थ शास्त्र	श्री आनन्द झा	८-५०
१३—भूमि रसायन	श्री शिवनाथ प्रसाद	१०-००
१४—इतिहास दर्शन	डा० बुद्ध प्रकाश	१२-००
१५—प्रकाश और वर्ण	श्री भगवती प्रसाद श्रीवास्तव	११-५०
१६—संघवाद और संघात्मक शासन	डा० ब्रज मोहन शर्मा	८-५०

उत्तम कागज, सुन्दर छपाई, सुदृढ़ जिल्द, आकर्षक आवरण कम दाम।

सम्पर्क सूत्र :-

सुरेन्द्र तिवारी
सचिव, हिन्दी समिति
एवं सहायक सूचना निदेशक
उत्तर प्रदेश शासन
लखनऊ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरी जानकारी

- महीने के अन्त में महीने का अङ्क प्रकाशित होता है। अगले महीने की ७ तारीख तक भी पिछले महीने का अंक न मिले, तो कार्ड लिखें।
- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य है पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और प्रत्येक रचना पर अपना पूरा पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से बुक पोस्ट द्वारा वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह -मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह चाह रखते भी प्यार मान ही दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें, पर 'नयाजीवन' में अब आम पुस्तकों की समीक्षा नहीं होतीं। प्रकाशकों से विशिष्ट पुस्तकें ही भेजने की प्रार्थना है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में दोनों की सुविधा के लिए ग्राहक-संख्या लिखने की प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीजों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक—नया जीवन
सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

नया जीवन

देहातों और नगरों के लिए
विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

प्रधान संपादक
कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

संपादक-संचालक
अखिलेश

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का फालतू समय चैन और खुमारी में काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् का निर्माण करने का श्रम की भूख जगाएं!

मार्च १९६६

स्वामी संस्थान

विकास लिमिटेड
सहारनपुर • उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अता-पता

हम पंथी अनजान जगत के	श्री शान्ति स्वरूप 'कुसुम' स्टेट बैंक आफ इण्डिया, कैराना, जिला मु० नगर	[illegible]
धरती के गीतों में स्वर	श्री बसंत सिंह भृंग सर्वोदय नगर, हस्तिनापुर, जि. मेरठ	[illegible]
राष्ट्र चिन्तन	सम्पादकीय	[illegible]
विश्व चिन्तन	श्री दीनदयालु शास्त्री जस्साराम मार्ग, हरिद्वार	[illegible]
भारत की सुरक्षा	श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार इतिहास सदन, कनाट सर्कस, नई दिल्ली	[illegible]
हमारा दाम्पत्य : सुख की कसौटी पर	कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'	[illegible]
भारत कहाँ है ?	प्रो. सिद्धेश्वर प्रसाद, संसद सदस्य ५२, साउथ एवेन्यू, नई दिल्ली	[illegible]
सरदार भगत सिंह की घोड़ी	श्री भदन्त आनन्द कौसल्यायन हिन्दी विभागाध्यक्ष, विद्यालंकार विश्वविद्यालय केलानिया (सीलोन)	[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम पन्थी अनजान जगत के

श्री शान्ति स्वरूप 'कुसुम'

चाँदी जैसी रात हमारी सोने जैसे दिन ।
हम पन्थी अनजान जगत के बेजाने पल छिन ।।

बहती जिधर बयार–
पाल पर नाव उसी रुख बहना
भीड़भाड़ की सुबह–
शाम दुख अपना अपना सहना

कौन प्रतीक्षा करे कहाँ हम बहकें विपिन विपिन
हम पन्थी अनजान जगत के बेगाने पल छिन ।।

घटे कहीं न उछाह
चाह पर चाह उभरती मन में
दुख सुख योग वियोग
प्यार का रोग सभी के तन में

एक डाल पर एक फूल तो कांटे लदे अगिन ।
हम पन्थी अनजान जगत के बेगाने पल छिन ।।

अकथ अतीत, अबोध–
भविष्यत आगे सबसे आगे
सपनों के जग मूंद अभी ज्यों
सोये सोये जागे

कूल मिलेगा कौन, ढलेंगे राहों में किन किन ।
हम पन्थी अनजान जगत के बेगाने पल छिन ।।

नील गगन से दिया बड़ा मन
रचना किसने की है
आंसू से भर दिये नयन तो
स्मित अधरों को दी है

मुदित नलिन जीवन जल निधि के व्याकुल अलिन अलिन
हम पन्थी अनजान जगत के बेगाने पल छिन ।

एक राग भर प्रीत कंठ में
[illegible] गाया
डोल उठे [illegible] गगन पहाड़ी
[illegible] जल [illegible] भर लाया

तड़पे तो [illegible] तड़पे [illegible] जल [illegible] ।
हम पन्थी [illegible] ।।

[illegible] जीवन [illegible]
[illegible] की खातिर
अपनाने की खातिर [illegible]
बहकाने की खातिर

जादू सा कर कर जाती है, [illegible] कमसिन ।
हम पन्थी अनजान जगत के [illegible] पल छिन ।।

दूर बहुत है गाँव हमारा
ताल तलैयों वाला
छन छन कर नभ पट से आता
जिसका यहाँ उजाला

छलबल की कुछ रीत न जाने रखते मन न मलिन ।
हम पन्थी अनजान जगत के बेगाने पल छिन ।।

फूलों सा खिलना, भ्रमरों सा–
गुनना, पिक सी वाणी
बुदबुद सा बनना मिट जाना
अपनी राम कहानी

डूब चले तो यों डूबें हम डूबे पुलिन पुलिन ।
हम पन्थी अनजान जगत के बेगाने पल छिन ।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

धरती के गीतों में स्वर

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धरती के गीतों में स्वर भर दो, तो जीवन चहकेगा,
पर स्वर में श्रम का नाद कहाँ से लाओगे ?

क्यों कफ़न विवादों का चिन्तन पर ढंकते हो,
चिन्ता की झोली में असफलता सिसकेगी।
तुम लाश, चिता की राखी पर आसन फैला,
सत्ता हथियाओगे तो कुरसी खिसकेगी ॥

जब स्वार्थ नाचता हो नंगा पंचायत में, तब पेटी में-
मतदान गुप्त रखकर कब तक बहकाओगे ?
धरती के गीतों में स्वर भर दो, तो जीवन चहकेगा,
पर स्वर में श्रम का नाद कहाँ से लाओगे ?

मन नहीं पिरोते स्नेह-सूत्र में जन-जन का,
फिर ढोंग एक मत का बिल्कुल बहकावा है।
जो चिपट गया हो गादी से, गांधी वाला,
मानों हिटलर पर खादी का पहनावा है ॥

सेवा की कठिन तपस्या, चना चबेना है, मेवा वालों !
मानवता की मञ्जिल पर यों पहुंचाओगे ?
धरती के गीतों में स्वर भर दो तो जीवन चहकेगा,
पर स्वर में श्रम का नाद कहाँ से लाओगे ?

लन्दन की सड़कें, औ पैरिस की रंग रलियाँ,
तसवीरें हालीउड की तुमको प्यारी हैं,
लेकिन भारत माँ की छाती पर भी देखो,
गांवों के छालों की जलती चिनगारी हैं ॥

आजादी की पीढ़ी में, जन-मन की राह न दे पाये, कुछ बात नहीं,
क्या द्वेष-द्रोह के दोहन से, निज घर को आग लगाओगे ?
धरती के गीतों में स्वर भर दो तो जीवन चहकेगा,
पर स्वर में श्रम का नाद कहाँ से लाओगे ?

जागो मद-मत्सर से जागो, पद-मद त्यागो,
खुरपी कुदाल की लय पर हो जीवन-नर्तन।
दो बूंद पसीने से धरती को सींचो तो,
जीवन का कण कण नाचेगा, पा परिवर्तन ॥

जब महलों से बाहर आकर, सुख झोंपड़ियों, में झाँकेगा,
तब काल पुरुष के हाथों से, मानवता का युग पाओगे ?
धरती के गीतों में स्वर भर दो तो जीवन चहकेगा,
पर स्वर में श्रम का नाद कहाँ से लाओगे ?

श्री बसन्त सिंह 'भृंग'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

पंजाबी सूबा क्यों ?

कुछ मित्र मिलते हैं, तो पूछते हैं-पंजाबी सूबा क्यों बना ? मन में आता है कि उन्हें पंचतंत्र का एक श्लोक सुना दूँ, जिसका अर्थ है कि 'जो होना है, होगा ही और जो नहीं होना, वह नहीं ही होगा; चिंता के विष को मारने वाली यह विचार-औषध तू क्यों नहीं पीता?'

यही नुस्खा बुद्धिमती मन्थरा ने भी केकयी को दिया था-'कोऊ नृप होय हमैं का हानी ?' नुस्खे दोनों अच्छे हैं, पर मैं जानता हूं कि मेरे प्रश्नकर्ता उनसे संतुष्ट न होंगे। इसलिए मैं उन्हें उत्तर देता हूं—पंजाबी सूबा इसलिए बना कि पंजाबी सूबे के समर्थक सन्त फतहसिंह सचमुच जलकर मरने को तैयार थे और पंजाबी सूबे के विरोधी श्री यज्ञदत्त शर्मा और उनकी कम्पनी के दूसरे ऐक्टर भी न्यू एलफ्रेड कम्पनी के मंच पर वीर-मरण नाटक का पार्ट अदा कर रहे थे—साफ-साफ यह कि मरने को तैयार न थे !

ताकत भी ज्यादा थी

पंजाबी सूबा के समर्थक और पंजाबी सूबा के विरोधी ताकत में भी बराबर न थे। पंजाबी सूबा के समर्थक ज्यादा ताकतवर थे और विरोधी कम ताकतवर। दोनों में लड़ाई हिंसा की थी और हिंसा की लड़ाई में ताकत की परीक्षा होती है और वह जीतता है, जिसके पास ताकत अन्त तक बची रहे; जैसे कि अहिंसा की लड़ाई में वह जीतता है, जिसके पास अन्त तक बर्दाश्त बची रहे।

पंजाबी सूबे के विरोधी दोनों दृष्टियों से कमज़ोर थे कि उनके नेता कमज़ोर थे और नेताओं के अनुयायी भी हिंसात्मक उपद्रवीपन में सूबे के समर्थकों से कमज़ोर थे। विजय सदा शक्ति का वरण करती है; यह शक्ति हिंसा की हो, या फिर अहिंसा की हो। लार्ड माउंट बैटन ने स्वतन्त्रता से पहले के साम्प्रदायिक उपद्रवों पर टिप्पणी करते हुए एक दिन अपने स्टाफ से कहा था कि कांग्रेस और राष्ट्रीय स्वयं-सेवक संघ के स्वयं सेवकों से लीग के नेशनल गार्ड तकड़े रहे, देश के बटवारे का यह भी एक कारण बना।

एक दूर की बात पर भी हमारा ध्यान जाना चाहिए। मैं उस बात को १९५९ से खुले आम कहता लिखता आ रहा हूँ। चीन भारत को जीतना नहीं चाहता, उसे कम्यूनिस्ट देश बनाना चाहता है। इसके लिए उसका दाव यह है कि भारत के चीन परस्त कम्यूनिस्ट धीरे-धीरे ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करें कि देश में सामूहिक हुल्लड़ हो जाए; कारखानों में. रेलों में, सरकारी कर्मचारियों में हड़ताल फैल जाए, आगजनी—शीशे तोड़ कांडों से देश की व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जाए और तभी चीनी सैनिक मुक्ति के स्वयं सेवक बन कर उपद्रवियों की मदद के लिए उतर आएँ। शासन कम्यूनिस्टों के हाथ में आ जाए और इस तरह चीन सारे एशिया और अफ्रीका को अपने प्रभाव में ला सके।

१९६१ में ही मैंने संघ के निष्ठावान नेता श्री लिमये जी से कहा था—"देश की गति की दिशा को देखते हुए ऐसा लगता है कि अतीत में जैसे संघ के स्वयं-सेवकों को लीग के गार्डों से आमने सामने लड़ना पड़ा था, वैसे ही किसी दिन उन्हें चीनपरस्त कम्यूनिस्टों से भी लड़ना पड़ेगा।" उनका उत्तर मार्मिक था—"यह बड़े दुर्भाग्य की बात होगी।" उनका अन्तर्मन्थन इस जिज्ञासा में था—"प्रश्न तो यह है कि जनता किसके साथ होगी ?"

इन वर्षों में इस स्थिति में अन्तर यह हुआ है कि अब कम्यु-निस्टों के साथ जनसंघी और समाजवादी भी उपद्रव-विश्वासी हो गए हैं। बात भी ठीक है कि सब दल तीन चुनावों में पिटने के बाद हताशा की घुटन में फँस गए हैं और अगले तीन चुनावों में भी उन्हें विजय नहीं दीखती। इस हालत में मनोवृत्ति का रूप होगा—'मरता क्या न करता !' समाज-वादी दिल्ली, पटना में अपनी 'शक्ति' का प्रदर्शन कर चुके थे; अब बंगाल में कम्यूनिस्टों ने और पंजाब में जनसंघियों ने अपनी 'शक्ति' का प्रदर्शन किया है। निश्चय ही कम्यूनिस्ट इस समय उपद्रव की कला में सबसे आगे हैं और कोई दूसरा दल उनसे मुँह नहीं मिला सकता। इस बात की ओर शासक दल का और देश के विचारकों का ध्यान जाना चाहिए।

उपद्रवों की रोकथाम

यह ध्यान इस दृष्टि से जाना चाहिए कि नागालैंड, मिजोहिल्स बंगाल में जो उपद्रव हुए उन्हें शांत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने में देश का शासन पूरी तरह असफल रहा और उसे सेना की सहायता लेनी पड़ी। इस बात की गहराई को समझने के लिए यह समझना ज़रूरी है कि हमारा देश भीड़ों का देश है। यहाँ भीड़ जोड़ना भी मुश्किल नहीं और भीड़ जुड़ना भी। अमावस्या तिथि को संयोगवश सोमवार का दिन पड़ जाए, तो देश भर की नदियों के तटों पर दस-बारह करोड़ आदमी इकट्ठा हो जाते हैं। पंडित जवाहर लाल नेहरू के भाषण में किसी की दिलचस्पी नहीं थी, पर उन्हें देखने को हज़ारों-लाखों आदमी जल्से में आ जुटते थे और आज भी वैजयंती माला और दिलीपकुमार को देखने के लिए लोग भीड़ में हाथ पैर तुड़वाने को तैयार हैं। इसके साथ ही स्वतन्त्रता के १८ वर्षों में यह भी बार बार अनुभव हुआ है कि देश की जनता का मानस अभी तक इस हालत में है कि उसे बहकाया जा सकता है और भड़काया जा सकता है। यहीं यह भी हम समझ लें और दिग्भ्रम से बचें कि भारत की जनता संसार की श्रेष्ठ जनता है, क्योंकि भड़कने के कुछ देर बाद ही अपना मानसिक सन्तुलन वह कायम कर लेती है और स्वस्थ निर्णय लेने लगती है। इसे हम यों समझें कि द्रविड़ मुन्नेत्र कड़घम् के भड़काने से मद्रास की जिस जनता ने करोड़ों रुपये की सम्पत्ति स्वाहा कर दी, उसने कुछ सप्ताह बाद हुए चुनाव में वोट दिए कांग्रेस के उम्मीदवार को ही।

यह विश्लेषण तकाज़ा करता है कि भारत के शासक भीड़ नियंत्रण की कला का नया अभ्यास करें और उसे एक वैज्ञानिक प्रशासन का रूप दें। प्रधानमंत्री होने के बाद श्रीमती इंदिरा गांधी के एक स्वागत-समारोह में बारह आदमी मर गए। यह समाचार ऐसा था कि शासन-प्रशासन की पसलियाँ चरमरा उठें, पर भारत-सरकार उस समाचार को इस तरह पचा गई, जैसे गले की खराश दूर करने को गोविन्द अत्तार का शर्बत शहतूत चाट रही हो। यह स्थिति खेद जनक है और खतरनाक है और पंजाबी सूबा उसकी ही एक नई सन्तान है।

औचित्य या हड़बौंग?

यदि पंजाबी सूबा बनाना देश के हित में है, तो उसके लिए इतनी देर क्यों की गई और जनता के सामने उस औचित्य की व्याख्या क्यों नहीं की गई? साफ बात है कि सरकार पंजाबी सूबा बनाना नहीं चाहती थी, उसे उचित नहीं समझती थी, पर अकाली हड़बौंग को शांत करने के लिए उसने पंजाबी सूबा बनाना स्वीकार किया।

क्या देशहित और औचित्य को भूलकर हड़बौंग की ताकत के सामने सिर झुकाना प्रधान मन्त्री श्रीमती इंदिरा गाँधी के लिए उचित है? जनता के मन में यह प्रश्न है, पर असल में यह प्रश्न इंदिरा जी से नहीं, स्वर्गीय जवाहर लाल नेहरू से पूछा जाना चाहिए था क्योंकि क्या उन्होंने आंध्र का निर्माण हड़बौंग से डर कर नहीं किया था? क्या महाराष्ट्र बम्बई और गुजरात की कलाबाजियाँ उन्होंने हड़बौंग से डरकर नहीं खाई थी? क्या नागालैंड का सात एकड़ राज्य उन्होंने हड़बौंग से डरकर नहीं बनाया था? क्या तीन लाख मिजो लोगों को स्काटलैंड के ढंग का स्वायत्त शासन देने की बात नहीं मानी थी और इस प्रकार असम के पेट में नागालैंड और नागालैंड के पेट में मिजोलैंड का फोड़ा पैदा नहीं किया था?

अपने नये नेतृत्व में इंदिरा जी को भी उसी परम्परा में चलना पड़ा, तो क्या आश्चर्य? हाँ, इस अवसर पर इंदिरा जी से जो प्रश्न पूछा जा सकता है और पूछा जाना चाहिए, वह यह है कि वे अपने को प्रधान मन्त्री जवाहर लाल नेहरू का वारिस मानती हैं या प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री का? नेहरू जी की शासन नीति थी समस्याओं को मेज पर से हटाना और लाल बहादुर जी की शासन नीति थी समस्याओं को देश पर से हटाना। नेहरू जी की शासन-नीति थी शांति के लिए सब कुछ दाव पर लगाकर मीठे सपने देखना और लाल बहादुर जी की शासन नीति थी शांति का प्रयत्न हरदम, पर हथियार का जवाब हथियार से। इंदिरा जी किस नीति का अनुगमन करना चाहती हैं?

यह प्रश्न इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि लाल बहादुर जी की सफलता यह थी कि उन्होंने भाँप लिया था कि भारत पाकिस्तान युद्ध में चीन नहीं कूदेगा और इंदिरा जी की सफलता यह होगी कि वे साफ साफ यह समझलें कि इस बार जब भी युद्ध होगा उसमें चीन पाकिस्तान एक साथ और पूरी ताकत से जूझेंगे और उस युद्ध की सफलता असफलता ही इंदिरा जी के नेतृत्व की कसौटी होगी। उस सफलता के लिए आवश्यकता नम्बर एक है देश की भीतरी सुरक्षा का प्रबन्ध। इसके लिए बार बार सेना का बुलाया जाना ज्वालामुखी के शिखर पर पलंग बिछा लेटे लेटे बाँसुरी बजाना है। इसलिए पुलिस इस काम के योग्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है, तो भीड़-नियंत्रण और गुंडागर्दी से; वह दलों की हो या व्यक्तियों की, जनता के संरक्षण के लिए मिलिटरी पुलिस जैसे विशेषतंत्र की रचना तुरन्त आवश्यक है, जिसे पुलिस और मैजिस्ट्रेट की सम्मिलित शक्ति उचित रूप में प्राप्त हो। हमें देश की परिस्थितियों का गहरा जायजा लेकर यह अब स्वीकार कर लेना चाहिए कि हमारा प्रजातन्त्र अधिनायकता का शिकार हो जाए, इससे यह अच्छा है कि हमारा प्रजातन्त्र अधिनायकता के कुछ तत्वों को अपने में अपने ढंग से समो कर अधिनायकता को सफलता के साथ टकराने की शक्ति प्राप्त कर ले। क्या समय रहते इस तत्व पर ध्यान दिया जाएगा ? या जानामिधर्मं न च मे प्रवृत्तिः ही हमारी मनोवृत्ति रहेगी ?

यह पवित्र गोली

जिस गोली से बस्तर के पदच्युत नादिर शाह प्रवीरचन्द्र भंजदेव की मृत्यु हुई, वह हमारे राष्ट्र के शस्त्रागार की एक पवित्र गोली थी; क्योंकि उससे एक ऐसे देशद्रोही की मृत्यु हुई, जो संगठन से नहीं, विगठन से अपने अहंकार का अभिषेक चाहता था। भगवती दाँतेश्वरी देवी की सिद्धि के नाम पर उसने आदिवासियों को अपने चक्कर में फँसा रखा था और वह उनकी अबोध शक्ति के सहारे देश का एक नया बटवारा चाहता था।

उसकी धर्मान्धता का चक्कर कितना घिनौना था, इस का पता इस बात से लगता है कि पिछली बार उसने आदिवासियों को पट्टी पढ़ाई कि तुम निडर होकर सरकार के विरुद्ध प्रदर्शन करो। देवी ने मुझसे कहा है कि सरकार के सिपाहियों की बन्दूकों से गोलियों की जगह पानी की धार निकलेगी। आदिवासी चढ़ दौड़े, पर जब बंदूकों से पानी की जगह गोलियां निकलीं और कई ढेर होगए, तो वे भौंचक भागे।

प्रवीरचन्द भंजदेव जिन्ना की उस परंपरा के दैत्य थे, जिस में विद्रोही नागा, बाग़ी मिजो, विध्वंसक कड़घम् और विस्फोटक तारासिंह आते हैं; जो विविधताओं की एकता में नहीं, एकता की विविधताओं में विश्वास रखते हैं। मध्य प्रदेश के तेजस्वी मुख्य मन्त्री श्री द्वारकाप्रसाद मिश्र ने सही समय पर देश को सही पाठ दिया है कि बागियों और विध्वंसकों को टौफी की गोलियों का नहीं, बारूद की गोलियों का उपहार मिलना चाहिए। देश की एकता और जनता की शांति ऐसे खिलौने नहीं हैं कि जब जो नटखट छोकरा चाहे उन्हें तोड़ फोड़ कर अपना मनोरंजन करने में स्वतंत्र हो !

आन्दोलन की सीमा क्या है ?

देश की राजनीति का एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न है कि आन्दोलन की सीमा क्या है ? इस प्रश्न का सम्बंध प्रजातंत्री दलों से है, कम्यूनिस्टों से नहीं, क्योंकि कम्यूनिस्टों का प्रजातंत्र में विश्वास नहीं है। उनकी शासन पद्धति पार्टी-अधिनायकता में विश्वास रखती है। इसीलिए कम्यूनिस्ट देशों में कम्यूनिस्ट पार्टी के सिवा कोई दूसरा राजनैतिक दल नहीं होता। भारत में कम्यूनिस्ट पार्टी इसलिए प्रजातन्त्री चुनाव लड़ती है कि सत्ता पाकर प्रजातन्त्र को समाप्त कर अपनी पार्टी की अधिनायकता कायम कर सके; जैसा कि उसने केरल में सत्ता प्राप्त करते ही प्रयत्न किया था, पर जनता ने विद्रोह करके उसकी सत्ता का तख्ता पलट दिया। इस स्थिति में कम्यूनिस्टों के आन्दोलन की कोई सीमा और मर्यादा नहीं है। वे पथराव करना, आग लगाना, लाइनें उखाड़ना, निराधार हड़तालें कराना और पड़ौसी कम्यूनिस्ट देश से सैनिक सहायता लेकर सरकार का तख्ता उलटना आन्दोलन की सीमा मानते हैं, इसलिए बंगाल में कम्यूनिस्टों ने जो तूफान किया, वह तो समझ में आता है, पर पंजाब में जनसंघी नेतृत्व में जब दूकानें लूटी गईं, जीवित आदमियों को जलाया गया, पथराव हुआ, अस्तव्यस्तता फैलाई गई, तो यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो उठा कि भारत में आंदोलन की सीमा क्या है ?

प्रदर्शन और प्रशिक्षण

प्रजातन्त्री देश में आन्दोलन की सीमा है प्रदर्शन और प्रशिक्षण। प्रदर्शन क्या ? प्रशिक्षण क्या ? जनता के मन में एक चाह है, आकांक्षा है, दुख है, पर वह उसे प्रकट नहीं कर सकती। राजनैतिक दल अपने जलूस से, अपने आन्दोलन से, जल्से से, ज्ञापन से, अहिंसात्मक सत्याग्रह से जनता की उस चाह को, दुख को, शासकों के सामने प्रदर्शित करता है, यही आंदोलन की प्रदर्शन सीमा है।

शासक यदि उससे प्रभावित होता है, उस चाह को पूरा कर और दुख को दूर कर देता है, तो आन्दोलन सफल हो जाता है। यदि शासक लापरवाही या अपनी शक्ति के गर्व में आन्दोलन से प्रभावित नहीं होता है, तो आन्दोलन आगे बढ़ने के लिए अपना दूसरा कदम उठाता है। यह है प्रशिक्षण। राजनैतिक दल शासकों से दूर हट जनता के द्वार जाता है और उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रशिक्षित करता है, ट्रेंड करता है, कि तुम्हारी चाह, तुम्हारा दुख हमने शासकों के सामने रखा, पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया, तो क्या तुम अब भी उन्हें शासन के योग्य समझते हो ? जनता के मन में इस प्रश्न का उत्तर बैठ जाए-'नहीं वे शासन के योग्य नहीं हैं' और वह अगले चुनाव में उन्हें वोट न देने का निश्चय करले, यह है प्रशिक्षण की सीमा ।

प्रजातन्त्र की इस कसौटी पर स्वतन्त्र भारत में हुए आंदोलनों को हम कसें, तो वे अस्वस्थ और भ्रष्ट आन्दोलन सिद्ध होते हैं, क्योंकि उनमें प्रदर्शन की सीमा-मर्यादा का पालन नहीं किया गया और प्रशिक्षण का तो नाम भी नहीं लिया गया। परिणाम यह कि आन्दोलन राजनैतिक दलों का काम बनकर रह गए, जनता का काम नहीं बन पाए।

दमन की सीमा क्या है ?

आन्दोलन की सीमा के साथ ही दमन की सीमा क्या है ? यह भी प्रजातंत्री देश का महत्वपूर्ण प्रश्न है। कम्यूनिस्ट डिक्टेटर स्टालिन ने रूस में ऐसे लाखों आदमियों को मार डाला, जो उसके मत से भिन्न मत रखते थे और नाजी डिक्टेटर हिटलर ने जर्मनी को शुद्ध आर्य देश बनाने के लिए लाखों यहूदियों को गैस चैम्बरों में फूक डाला, पर प्रजातंत्री देश में तो एक भी गोली चलती है, तो विधान सभा में उस का जवाब देना पड़ता है। मध्य प्रदेश के मुख्यमन्त्री श्री द्वारका प्रसाद मिश्र ने बस्तर के नादिर शाह की मृत्यु के तुरन्त बाद न्यायिक जांच के लिए एक न्यायाधीश को नियुक्त किया है, जो इस बात की जांच करेंगे कि गोली चलाने की परिस्थितियों में ही गोली चलाई गई या नहीं ?

प्रजातंत्री देश में दमन की सीमा क्या है ? यह प्रश्न स्वतंत्र भारत में सबसे पहले सामूहिक रूप में डाक्टर राम मनोहर लोहिया ने उठाया था। केरल में प्रजा समाजवादी पार्टी का शासन था और वहाँ पुलिस ने गोली चलाई थी। डाक्टर लोहिया भी तब प्रजा समाजवादी ही थे। उन्होंने खुले आम गोलीकांड का विरोध किया और मंत्री मंडल को क्षमा मांगने या त्यागपत्र देने के लिए ललकारा और मैं भूलता नहीं हूं, तो इसी बात पर प्रजा समाजवादी दल छोड़ा।

यह चर्चा एक बार लोक सभा में भी उठी थी। तब श्री गोविंद बल्लभ पंत गृहमंत्री थे। विरोधी दलों ने उनसे आग्रह किया कि वे यह वचन दें कि अपने ही देश की पुलिस अपने ही देश के नागरिकों पर गोली नहीं चलाएगी। पंत जी ने तुरन्त उत्तर दिया—मैं वचन देने को तैयार हूं कि अपने देश की पुलिस अपने देश के नागरिकों पर कभी गोली नहीं चलाएगी, पर विरोधी दल भी यह वचन दें कि वे प्रदर्शनों में कभी हिंसा का प्रयोग नहीं करेंगे। पंतजी का उत्तर ऐतिहासिक है और आन्दोलन और दमन के शास्त्र का सार प्रस्तुत करता है।

प्रजातंत्र के अनुसार आन्दोलन की सीमा प्रदर्शन और प्रशिक्षण है और इन पर पाबंदी लगाने का अधिकार सरकार को नहीं है, पर जहाँ हिंसा है, वहाँ बगावत-विद्रोह है और उसे जड़ से कुचल देना सरकार का अधिकार ही नहीं, राष्ट्रीय कर्तव्य भी है। आन्दोलन आरंभ करने वाला राजनैतिक दल शांतिपूर्ण प्रदर्शन की घोषणा करता है, पर आरंभ हो जाता है खून-खराबा; इस स्थिति में उस राजनैतिक दल का उस खूनखराबे के लिए उत्तरदायित्व है या नहीं, यह भी एक प्रश्न है, पर इसका उत्तर १९२० में गान्धी जी ने चोरी चोरा में हिंसा होने पर अपना सफलता की ओर बढ़ता आन्दोलन स्वयं स्थगित कर दे दिया था। स्पष्ट है कि जनता को उभारने वाला दल यदि बाद में उसे नियंत्रण में नहीं रख सकता, तो वह हिंसा का अपराधी है, दंड का पात्र है।

सरकार की समीक्षा

यहीं सरकार की समीक्षा भी आवश्यक है कि आन्दोलनों के साथ व्यवहार करने में क्या सरकार ने अपने कर्तव्य का पालन किया है ? मुझे दुख है कि इसके उत्तर में मैं हाँ नहीं कह सकता। सरकार इस परीक्षा में दो तरह फेल हुई है। पहली यह कि वह (भारत पाक युद्ध के दिनों को छोड़ कर) विरोधी दलों के साथ सम्मानपूर्ण संपर्क में नहीं रही और उसने आंदोलनों को उचित महत्व नहीं दिया। स्वतंत्र भारत में प्रजातंत्री ढंग पर सर्वोत्तम प्रदर्शन था कच्छ समझौते के विरुद्ध जनसंघ का प्रदर्शन, पर शासक दल के किसी भी आदमी ने उसके उद्देश्य से मतभेद रखते हुए, उसकी शांति-व्यवस्था की प्रशंसा में एक शब्द नहीं कहा और धीरे धीरे देश में यह भाव पैदा होने दिया कि सरकार शांति की भाषा नहीं सुनती, हुल्लड़ की भाषा ही सुनती है। आंध्र, बम्बई की घटनाओं ने भी यही पाठ पढ़ाया था। इस तरह आन्दोलनों को बगावती उपद्रव तक पहुंचने में जहाँ विरोधी दलों की हताशा का हाथ है, वहां सरकार की शिथिलता का भी हिस्सा है।

भयंकर हिंसा होती है, गोली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चलती हैं, पर एक तरफ करोड़ों रुपये की राष्ट्रीय सम्पत्ति के नष्ट होने की खबर छपती है, दूसरी तरफ २-४ आदमियों के गोली से मरने की। मन में प्रश्न उठता है—जो भीड़ मुसाफिरों से भरी रेल को फूक रही थी, उसका एक भी आदमी बचकर अपने घर क्यों जा सका ? साफ साफ यों कि उसका कत्लेआम क्यों नहीं किया गया ? दो बलवाई मरते हैं और दो हज़ार शाम को विजय-माला पहन कर घर लौटते हैं, तो समाज पर क्या असर पड़ता है ?

इतने भयंकर कांड के बाद जो लोग पकड़े जाते हैं, वे भी ८-१० दिन में छोड़ दिये जाते हैं और अपनी जय के नारे सुनते हुए घर लौट आते हैं। उदाहरण के लिए बंगाल में गदर कराने वाला कम्यूनिस्ट नेता श्री ज्योति वसु पाँचवे दिन जेल से छूट गया और प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी से भी मीठी मुलाकात कर गया। सरल जनता अवाक सोचती है कि अगर ज्योति बाबू की मांग मुनासिब थी और मुख्यमंत्री श्री प्रफुल्ल चन्द्रसेन ने उसकी उपेक्षा की, तो सेन बाबू को इस अयोग्यता के लिए पदच्युत क्यों नहीं किया जाता? और ज्योति बाबू की दुष्टता से यह गदर हुआ है, तो फिर ५ साल के लिए सींखचों के सुरक्षित महल में उनका आतिथ्य करने में क्यों सरकार कंजूसी बरत रही है ? सरल मनोविज्ञान तो यही कहता है कि मद्रास और पटना के हत्यारे इस समय काले पानी की सजा भोग रहे होते, तो बंगाल और पंजाब में यह सब न हुआ होता। हाँ, भारत सरकार ने उचित को न सुनकर अनुचित को ही सुनने का कोई नया मनोविज्ञान तैयार किया हो, तो दूसरी बात है।

राष्ट्र-चिन्तन

जो सिर्फ हिंसा से शासन करता है और जो सिर्फ हिंसा से ही शासन पाने का प्रयत्न करता है, वह हिंसा से ही शासित होता है और उस पर उससे भी बड़ी हिंसा सवार हो जाती है। यूरोप को अपने बूटों से रौंदने वाला नेपोलियन राजमहल में नहीं, सेंट हेलेना के कारागृह में मरा था और अपनी कड़वी हुंकार से दुनिया को कँपा देने वाले हिटलर ने अपनी चांसलरी में ही अपनी प्रेमिका इवा के साथ आत्महत्या की थी। भारत के शासकों और सार्वजनिक नेताओं से अंधेरे भविष्य की मांग है कि हिंसा से खेलने के शौक को बढ़ावा न देकर उसे पूरी शक्ति से दफना दें। प्रजातंत्र की आन्तरिक शक्ति तलवार नहीं प्यार है, प्रहार नहीं, प्रचार है।

आदिवासी एक प्रश्न

मध्य प्रदेश के आदिवासी एक प्रतिक्रिया वादी के हाथ में रहे, नागा लोगों का भी यही हाल है, मिजों का विद्रोह सामने ही है, बिहार के आदिवासी भी अपना अलग राज्य चाहते हैं। मतलब यह कि आदिवासी देश के साथ नहीं हैं, शासकों के साथ नहीं हैं-साफ साफ विरोधी हैं, तो प्रश्न उठता है जो सरकार उन्हें सब कुछ दे सकती है वे उसके साथ नहीं हैं और जो उन्हें कुछ नहीं दे सकते, वे उनके साथ हैं आखिर यह क्या बात है ?

बिना किसी भूमिका के इसका उत्तर यह है कि स्वराज्य ने उनमें नये जीवन की आशा उत्पन्न की, पंचवर्षीय योजनाओं के ढोल ढमाकों ने इस आशा को पैना किया, पर नये जीवन की कोई किरण उनके अंधेरे में नहीं पहुंची। प्रतिक्रियावादियों ने उन्हें गलत पाठ पढ़ाए और वे गलत राहों पर चल पड़े।

आदिवासी हम शहरियों से दूर हैं। उनकी बात को हम यों समझें कि १५ अगस्त १९४७ को हमारे भंगियों की जो हालत थी, वही २६ जनवरी १९६६ को थी। वे भंगी थे और भंगी हैं। आदिवासी भी जंगली थे, जंगली हैं। भंगी दीनता से ग्रस्त हैं, तो सोचकर संतुष्ट हैं-अजी हमें तो भंगी ही रहना है, पर शिक्षा और पादरियों के संपर्क से उद्धत नागा और मिजो कहते हैं—हमें जंगली नहीं रहना है। प्रश्न यह है कि भारत सेवक समाज, भारत साधु समाज और समाज कल्याण किस मर्ज की दवा हैं, अगर वे १८ साल में आदिवासियों की स्थिति को बदलने की बात छोड़िए, उन्हें अपनी आत्मीयता में भी नहीं ले सके ? अब भी समय है कि हम अपनी उलटमत पर विचार करें।

चण्डीगढ़

फ्रांसीसी विशेषज्ञ की देखरेख में बना विश्व प्रसिद्ध नगर चण्डीगढ़ ज्योतिषियों से अपना भाग्य पूछ रहा है, क्योंकि अभी यह तै नहीं है कि वह पंजाब की राजधानी होगा या हरियाना की या किसी की नहीं ? सिखों को खुश करने के लिए पेप्सू राज्य बनाया गया, जिसकी राजधानी पटियाला थी। पंजाब की राजधानी शिमला थी, पर शिमला ही हिमाचल की भी राजधानी थी। राज्य पुनर्गठन आयोग ने पेप्सू-पंजाब-हिमाचल को मिलाकर एक बड़ा राज्य बनाने की सिफारिश की। इसमें सिख एकदम अल्पमत में हो जाते थे। नेहरू जी ने पेप्सू पंजाब को मिलाने और हिमाचल को अलग रखने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिखों की बात मामली और उसे अंतिम निर्णय मान चंडीगढ़ की महान राजधानी बनी, पर अब पंजाबी भाषा का एक सूबा बन गया और हिन्दी भाषी क्षेत्र उससे अलग कर लिया गया और पहाड़ी क्षेत्र को हिमाचल में मिलाने की बात सोची गई। कितनी विचित्र बात है कि १९ वर्ष में हम अपने देश का स्वरूप ही निश्चित नहीं कर सके, जैसे हम चल नहीं रहे, धिकल रहे हैं :– जैसी बहे बयार,
पीठ तब तैसी दीजे !

खेद के साथ

'नया जीवन' के फरवरी अंक में 'समय और हम' पर एक टिप्पणी प्रकाशित हुई है। यह समाज के न्यायालय में एक सैद्धान्तिक प्रश्न खड़ा करती है और समाज से उसका उत्तर मांगती है, पर एक मित्र ने सुझाया है कि तथ्यों का जो स्वरूप चित्रण उस टिप्पणी में है, वह ठीक नहीं है। जाँच करने पर मैं उन मित्र से सहमत हो गया हूं कि मेरे द्वारा स्थापित सत्य भ्रांत जानकारी पर टिका हुआ है। मैं उस टिप्पणी को वापस लेता हूं और अपनी असावधानी के लिए संबंधित व्यक्तियों के प्रति विनत हो, उनसे सत्य को शुद्ध रूप में समाज के सामने प्रस्तुत करने का अनुरोध करता हूं।

प्रधानमंत्री की विदेश यात्रा

प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी गई तो अमरीका थी, पर जाते हुए फ्रांस के राष्ट्रपति डिगाल के आतिथ्य में तीन दिन रहने और लौटते समय रूस के राजनेताओं से मास्को में और इंगलैंड के प्रधानमंत्री से लन्दन के हवाई अड्डे पर बातचीत करने का सुयोग बना लेने से उनकी यात्रा एक अच्छी खासी विदेश यात्रा हो गई। इस यात्रा को हम क्या कहें ? मित्रता यात्रा ? सम्पर्क यात्रा ? विजय यात्रा ? या क्या ?

ऊपर से देखें तो यह मित्रता-यात्रा लगती है, पर गहरे उतरें, तो कहें कि यह मित्रता यात्रा भी है, सम्पर्क यात्रा भी है, विजय यात्रा भी है, पर अपने मूल रूप में यह तराजू यात्रा है–अमरीका ने नए प्रधानमंत्री के माध्यम से भारत को अपनी तराजू पर रखा और भारत ने राष्ट्रपति जांसन के माध्यम से अमरीका को तोला। इस यात्रा की मुख्य सफलता यह है कि दोनों की कैशबुकों में दोनों के वजन का सही तोल लिखा गया है।

यह तोल क्या है ? अमरीका ने देख लिया है कि पाकिस्तान में चीनी टैंकों के प्रदर्शन, चीनी राष्ट्रपति के रावलपिंडी में घनघोर स्वागत और पाकिस्तान को चीनी सहयोग के आश्वासन के बाद भी भारत की आत्मा दीन नहीं हुई है और वियतनाम के मामले में और दूसरे अन्य राष्ट्रीय मामलों में भी अपना विश्व व्यक्तित्व खोकर अमरीका का पिछलग्गू होना उसे स्वीकार नहीं है। देशव्यापी अकाल और सीमाव्यापी काल के जबड़े में फँसे होकर भी श्रीमती इंदिरा गांधी अमरीका की तराजू पर भारत का इतना वज़न रख सकी, यह उनके व्यक्तित्व की विजय है। आम अमरीकी को इंदिरा जी की बातचीत, उत्तर प्रत्युत्तर और भाषणों से यह अनुभव-ऐहसास नहीं हुआ कि भारत का नेतृत्व अब घटिया या नम्बर दो हाथों में है। कहूं अमरीकी थर्मामीटर में नेहरू और शास्त्री ने भारत के पारे को जिस डिग्री तक पहुंचा दिया था, इंदिरा जी ने उसे उससे नीचे नहीं उतरने दिया और भारत पाक युद्ध में अमरीका के भारत-विरोधी और पाक-समर्थक रुख के कारण दोनों देशों में जो मानसिक रूखापन आ गया था, उसे इंदिराजी ने धो दिया, यह उनके व्यक्तित्व की दूसरी विजय है। यह यात्रा उन्होंने अकेले की, विश्व के सर्वोच्च राजनेताओं की कूटनीतिक बातचीत के महा मोह में वे अकेले उतरीं और नई दीप्ति पाकर लौटीं, यह उनके व्यक्तित्व की तीसरी विजय है। इन सब विजयों ने अमरीका की बही में भारत के विचार-विश्वास का सही आंकड़ा लिख दिया है और यह भी स्पष्ट कर दिया है कि अब भारत में इंदिरा जी का जो कदम उठेगा, वह पहले से अधिक मजबूत होगा।

भारत ने देख लिया है कि अमरीका भारत-पाकिस्तान के मामले में भी शुद्ध सत्य कहने को तैयार नहीं है, पर अभी वह न भारत को छोड़ सकता है, न पाकिस्तान को। अब भी उसे आशा है कि भारत किसी दिन घबराकर उसके साथ हो सकता है, इसलिए भारत को घबराहट में डालने के लिए यदि पाकिस्तान चीन का सहारा ले, तब भी अमरीका पाकिस्तान का सहारा बना रहेगा। इसके साथ ही यह भी सत्य है कि अमरीका इसे कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता कि चीन भारत को हड़प ले; क्योंकि इसका अर्थ होगा पूरे एशिया और अफ्रीका का चीन के प्रभाव में जाना और यह अमरीका के लिए मौत का पैग़ाम है। इसलिए अमरीका भारत को ऐसी मदद देगा कि वह टूटे नहीं, मरे नहीं, सजीव रहे, पर ऐसी मदद नहीं देगा कि भारत चीन पाक का अकेले मुकाबला कर एशिया-अफ्रीका में एक स्वतंत्र शक्ति का रूप लेले। ★

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व-चिन्तन

● श्री दीनदयालु शास्त्री

हिन्देशिया

राष्ट्रपति सुकर्ण की सहानुभूति साम्यवादियों के साथ रही है, इस नाते वे चीन के भी समर्थक रहे हैं। अब देश ने साम्यवाद के प्रति जो रुख लिया है उसमें चीन का समर्थन समाप्त हो गया है, अपितु उसका खुला विरोध वहाँ की जनता करने लगी है। वहाँ के विद्यार्थी जन-आन्दोलन के अगुआ बन चले हैं। परिणाम यह है कि राष्ट्रपति पद पर रहते हुए भी सुकर्ण ने अपने सब अधिकार साम्यवाद विरोधी सुहार्तो को सौंप दिए थे। अब ये सुहार्तो हिन्देशिया की सेना, शासन तथा वहाँ की सब प्रकार की गति-विधियों के संचालक हैं। उन्होंने मंत्रिमण्डल के पन्द्रह मन्त्री बरखास्त कर दिए हैं। चीन के मित्र सुबन्द्रियो समेत कुछ मंत्रियों को गिरफ्तार कर लिया है और स्वयं राष्ट्रपति सुकर्ण की भारी तादाद में विद्यमान अंगरक्षक सेना को भी समाप्त कर दिया है। लक्षण यह हैं कि राष्ट्र-पति अपने महल में कैद हैं और शासन सूत्र पूर्णतया उनके नाम पर सुहार्तो के हाथों में आ गया है। लगता है कि अब हिन्देशिया की राजनीति मध्यमार्ग की होगी और वह विदेशी नीति में तटस्थता का आश्रय लेगा।

सीरिया

पिछले महीने में एशिया और अफ्रीका के कुछ देशों की राजनीति में भारी उथल पुथल हुई है। इनमें सबसे पहला स्थान सीरिया का है। पश्चिमी एशिया का यह अरबी देश अब तक समाजवादी विचारों के नाथ दल द्वारा शासित था। अब इस दल में आपसी फूट के कारण वहां की सेना ने प्रधानमन्त्री हफीज़ को कैद कर लिया और शासन सूत्र अपने हाथ में ले लिया है। आश्चर्य की बात यह है कि सीरिया के नये शासक भी नाथदल के हैं और उन्हें सेना का भी समर्थन प्राप्त है। पिछले १६, १७ वर्षों से जब से सीरिया को स्वतंत्रता प्राप्त हुई है इस देश के शासन में सबसे अधिक परिवर्तन हुए हैं। कभी सीरिया स्वतंत्र हो जाता है, कभी अरब गणराज्य का अंग बन जाता है और कभी सैनिक शासन में पहुंच जाता है। इस उथल पुथल का एक कारण तो यह है कि उसकी आर्थिक स्थिति सदा विषम रहती है। राज्य में उत्पादन के साधन कम हैं, देश के बड़े भाग में मरुस्थल है अतः खेती भी हीन अवस्था में है। उस पर अन्तर्राष्ट्रीय दबाव के कारण शासन व्यय अधिक है। देश की जनता गरीब है और मंहगाई तथा अधिक करों से परेशान है। जब वह आन्दोलन करती है तो शासकों का एक दिल स्वयं ही उसका साथ पाने की इच्छा में विद्रोह कर बैठता है। यही कारण है कि पिछले सालों में एशिया के इस देश में सबसे अधिक क्रान्तियाँ हुई हैं।

डा. मिल्टन

अफ्रीका सन १९४५ तक विभिन्न योरपीय देशों के मातहत था। धीमे-धीमे उसके अधिकतर देश स्वतंत्र हो गए, किन्तु उनमें शासन की योग्यता और अनुभव की कमी स्पष्ट पता चलती है। इस कारण वहाँ के देश जनतंत्री होते हुए भी व्यक्तिवाद के सहारे चलते हैं। अफ्रीका के उत्तरी पार्श्व में अब स्थित अरब देशों एवं मध्य तथा दक्षिण के हब्शी देशों में यह व्यक्तिवाद समान रूप से कार्य करता है। यही कारण है कि पिछले दो महीनों में वहाँ के अनेक देशों में राजनैतिक क्रान्ति या उथल-पुथल देखने में आयी है। जन-वरी में वहाँ के आबादी में सबसे बड़े देश नाइजेरिया में सैनिक क्रान्ति हुई थी। अब फरवरी में पूर्वी अफ्रीका के सब से छोटे देश युगाण्डा में क्रान्ति के दर्शन हुए हैं। वहाँ के प्रधानमंत्री डाक्टर मिल्टन ओबोतु शान्त जनतंत्री विचारधारा के प्रतीक माने जाते हैं। पर्यवेक्षकों का कहना था कि यदि डा. मिल्टन कुछ साल और युगाण्डा के शासन सूत्र को संभाले रहे तो यह देश अफ्रीका में जनतंत्री आदर्शों का नमूना होगा। सचमुच डा. मिल्टन से यह आशा ठीक ही की गयी थी किन्तु भाग्यवश वे युगाण्डा के अल्प संख्यकों में से हैं। युगाण्डा के बुगाण्डा और उसके शासक को डा. मिल्टन की यह लोक-प्रियता स्वीकार नहीं है। इस कारण वहाँ के राष्ट्राध्यक्ष तथा मंत्रियों ने अन्दर-अन्दर ही अपने प्रधानमंत्री का विरोध करना शुरू किया। डा. मिल्टन को समय रहते इस षड्यंत्र का पता चल गया और उन्होंने एकाएक अपने चार मंत्रियों को कैद कर लिया और राष्ट्राध्यक्ष को अप-दस्थ कर दिया। अब डा० मिल्टन स्वभावतः जनतंत्री होते हुए भी युगाण्डा के सर्वेसर्वा हैं और सेना के सहयोग के कारण देश के शासन-सूत्र को सम्यकतया चला रहे हैं। उन्होंने स्वयं कहा है कि स्थिति में सुधार होते ही वे युगाण्डा में पुनः जनतंत्री शासन को बढ़ावा देंगे।

केनिया

युगाण्डा के दक्षिण में ही केनिया नाम का बड़ा देश है। अंग्रेजी दासता से मुक्ति पाने के पहले इस केनिया में दो दल थे। एक दल श्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केनियाटा का था और इसे केनिया राष्ट्रीय दल नाम मिला था। केनियाटा के अध्यक्ष रहते हुए भी इस दल के संगठन का मुख्य श्रेय टामबोया को प्राप्त है। दूसरे दल का नाम था केनिया जनतंत्री दल। स्वतंत्रता मिलने पर इन दोनों दलों ने मिल कर संयुक्त सरकार बनायी थी और इस में जनतंत्री दल के श्री ओडिंगा को नियोजन मंत्री का विशिष्ट पद प्राप्त हुआ था। संयुक्त शासन होने के कारण केनिया के लौह पुरुष केनियाटा उस देश के प्रथम राष्ट्रपति बने थे। अब लक्षण यह हैं कि केनिया के ये दोनों दल पुनः पृथक होंगे। पिछले दिनों संयुक्त दल का जो चुनाव हुआ है उसमें टामबोया के समर्थकों को विजय मिली है और श्री ओडिगा कोई पद नहीं पा सके हैं। निश्चय ही केनिया के शासन पर इस दलबन्दी का बुरा प्रभाव पड़ रहा है और जल्दी ही वहाँ का शासन संयुक्त न रह एकतंत्री होने वाला है।

घाना और नक्रूमा

इस महीने की सबसे बड़ी राजनैतिक घटना है घाना के राष्ट्रपति नक्रूमा का अपदस्थ होना। वे बड़ी धूमधाम से चले थे चीन की राजधानी पैकिंग को ताकि वहाँ के शासकों से मिल कर उत्तरी वियतनाम की समस्या का कोई समाधान निकाल सकें। डा. नक्रूमा का विचार पेकिंग से उत्तरी वियतनाम की राजधानी हनोई पहुंचने का भी था लेकिन भाग्य उनका साथ नहीं दे रहा था। अभी वे चीनी राजधानी के हवाई अड्डे पर उतरे ही थे कि सारे संसार ने आश्चर्य से सुना कि घाना में क्रान्ति हो गयी है और वहाँ का शासन सूत्र सेना के हाथ में आ गया है। बाद में खबर मिली कि घाना में स्थापित नयी मुक्ति समिति ने राष्ट्रपति नक्रूमा को अपदस्थ कर दिया है और विभिन्न प्रदेशों में नयी शासन सत्ता कायम कर दी है। डा. नक्रूमा अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के व्यक्ति हैं। दासता की समाप्ति से पहले ही वे अपने देश के सर्वोपरि विचारक थे और उन्होंने घाना के हब्शियों में जनतंत्री भावना लाने में अनथक परिश्रम किया था। यह निश्चय से कहा जा सकता है कि संसार के हब्शियों में डा. नक्रूमा से अधिक योग्य, समझदार और अहम्मन्य नेता और नहीं मिलने का। इसी अहम्मन्यता ने डा. नक्रूमा को अब नीचे ला गिराया है। बात यह हुई कि स्वतंत्र होने पर वे अपने देश के सर्वप्रथम प्रधान मंत्री बने। धीमे-धीमे उन्होंने अपने विरोधियों को समाप्त कर दिया। परिणाम यह हुआ कि वहाँ की संसद के कुछ सदस्य कैद कर लिए गए और कुछ को देश निकाला मिल गया। इस के बाद डा. नक्रूमा घाना के राष्ट्रपति बन गए और नाम को संसद के रहते हुए भी उस देश में एकतंत्री शासन प्रारंभ हो गया। घाना की यह क्रान्ति डा. नक्रूमा के एकतंत्री शासन के विरुद्ध है और उसे वहाँ की जनता का समर्थन प्राप्त है।

गिनी और घाना

अपदस्थ होकर डा. नक्रूमा पेकिंग से मास्को होते हुए अफ्रीका के एक अन्य देश गिनी में पहुंचे और अब वहां ही रह रहे हैं। गिनी के राष्ट्रपति सेकू तूरे डा. नक्रूमा के गहरे मित्र हैं। सन १९६१ में इन दोनों नेताओं ने माली के राष्ट्रवादियों से मिलकर एक बड़े संघ की स्थापना की थी। गिनी, घाना और माली इस संघ के सदस्य घोषित किए गये थे। अब गिनी के राष्ट्रपति ने उसी संघ कि दुहाई देकर नक्रूमा को अपने यहाँ आश्रय दिया है और वचन दिया है कि वे अपने जन-धन से घाना को पुनः नक्रूमा के कब्जे में लायेंगे। उन्होंने यह भी पेशकश की है कि डा. नक्रूमा जब तक घाना में वापिस नहीं जाते गिनी का शासन सूत्र अपने हाथ में लें। अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से यह बात समझ से बाहर है कि एक देश का अपदस्थ व्यक्ति दूसरे देश में जाकर शासन सूत्र अपने हाथ में लेले, किन्तु यह मानी हुई बात है कि गिनी के सेकू तूरे और घाना के डा. नक्रूमा की विचार धारा में साम्यता है और वे साम्यवादी विचारों से प्रभावित भी हैं। इसके साथ ही अफ्रीका के कुछ अन्य देशों का भी डा. नक्रूमा को समर्थन प्राप्त है। ऐसी अवस्था में यह सम्भव है कि अफ्रीका के यह महत्वाकांक्षी अपनी पद प्राप्ति के लिये कुछ न कुछ अवश्य कर बैठें। उस हालत में पश्चिमी अफ्रीका में घाना के चारों ओर रक्तक्रान्ति विशाल पैमाने पर की जा सकती है। चर्चा यह भी है कि गिनी के सेकू तूरे पड़ोसी आईवरी कोष्ट की सीमा पर अपनी सेनायें जमा कर रहे हैं ताकि मौका पाकर घाना में प्रवेश पा सकें। यह भी ज्ञातव्य हैं कि स्वयं घाना की मुक्ति समिति जिसे कि वहाँ सर्व साधारण का समर्थन प्राप्त है इस बाहरी हमले के प्रतिकार के लिये कुछ न उठा रखेगी। तब घाना में नक्रूमा और उसके विरोधियों में भी आग जलेगी और उसमें संसार के अन्य राष्ट्र आहुति देने के लिये लाचार होंगे। इस दृष्टि से घाना की यह क्रान्ति महत्वपूर्ण है और उसके निर्णय पर अफ्रीका के अन्य राष्ट्रों का भाग्य बहुत कुछ निर्भर करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत की सुरक्षा का प्रश्न जितना जटिल इस समय है, उतना १९६२ के चीनी आक्रमण और १९६५ के पाक-आक्रमण के समय भी न था। देश कठोर अग्नि परीक्षा के मध्य है और शासकों, राजनैतिक दलों और नागरिकों को कर्तव्य के विचार का, सुरक्षा के प्रति एकाग्र होने का निमंत्रण देता है। देश के प्रमुख और निष्ठावान राजनैतिक चिंतक-लेखक श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार ने बिंदु में सिन्धु भर दिया है।

•

भारत की सुरक्षा समस्या

श्री अवनीन्द्र कुमार विद्यालंकार

भारत की सुरक्षा समस्या, अब एकमात्र भारतीय समस्या नहीं रही है। यह एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या हो गई है। चीन के अणु बम ने भारतीय लोकतंत्र की रक्षा का विषय अन्तर्राष्ट्रीय बना दिया है। भारत सरकार और प्रधानमंत्री के बार-बार घोषणा दुहराने से कि भारत अणुबम कभी न बनाएगा और अणु शक्ति का प्रयोग संहार के कार्यों के लिए न करेगा, भारतीय लोकतंत्र की रक्षा का प्रश्न एक गंभीर अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न बन गया है।

भारतीय तृतीय नियोजन ने औद्योगिक क्षेत्र में सन्तोषजनक प्रगति की है, किन्तु कृषि क्षेत्र में उसका परिणाम आशा और अपेक्षा के अनुकूल नहीं रहा है। भारत बड़ी मात्रा में ७० लाख टन तक अन्न आयात करने को वाध्य है। राष्ट्रीय उत्पादन साढ़े पाँच प्रतिशत ही बढ़ रहा है। इस पर दबाव बढ़ रहा है। सैनिक व्यय की वृद्धि के कारण इस पर दबाव और बढ़ गया है। दूसरी ओर भारतीयता की भावना तीव्र नहीं है। हिन्दी को राजभाषा घोषित करने की जो प्रतिक्रिया हुई, उससे यह प्रकट है। देश में भारी करों के कारण घोर असन्तोष है और वेतन भोगी वर्ग के काम से भी देश में भारी असन्तोष है।

भारत के सामने विकट समस्या चीनी आक्रमण की आशंका है। लद्दाख में चीनी टैंकों का जमाव भारत की इस धारणा को पुष्ट करता है कि चीनी मौका पाकर भारत पर फिर आक्रमण करेगा। यद्यपि भारत सरकार चीन से सन्धि करने को प्रस्तुत है। सरकार का ख्याल है कि अक्साई चिन लड़कर चीन से वापस लेना सम्भव नहीं है। इस पराजय की मनोवृत्ति के कारण देश में भी भारी निराशा है, अवसाद है, खिन्नता है। फलतः चीन द्वारा विजित लद्दाख पर चीन का व्यवहारतः अधिकार मानने को सरकार तैयार है। आत्म-हीनता की भावना ने गहराई में प्रवेश कर रखा है। तिब्बत में ठहरी १२०,००० से ६ लाख तक चीनी सेना इसको और बढ़ाती है, क्योंकि तिब्बत में चीनी सेना की उपस्थिति से भूटान और सिक्कम या नेफा पर चीनी आक्रमण की आशंका बनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहती है। इस स्थिति का सामना करने के लिए ८००,००० सैनिकों की पर्वती सेना बनाई जा रही है। इस शक्ति के निर्माण और विकास की योजना ने भारत में एक नूतन आशा और नये साहस को उत्पन्न किया है। भारतीय युवा हर कीमत पर शान्ति प्राप्त करने के लिए उत्सुक नहीं है। वह शक्ति और साहस के मार्ग से शान्ति प्राप्त करने में विश्वास करने लगा है। स्कार्डु और कारगिल के बीच पाकिस्तान द्वारा अधिकृत तीन चौकियों पर भारतीय सेना का अधिकार करना इस बदली मनोवृत्ति का ही परिणाम है। उदारता और परोपकार की राह शान्ति प्राप्त हो सकती है—यह विचार अब पीछे छुटता जा रहा है। राष्ट्रीय जीवन में युद्ध का स्थान है, महत्त्वपूर्ण स्थान है—इस विचार के लोगों की संख्या बढ़ रही है। माओ-त्से-तुंग का जवाब भारत देने की क्षमता रखता है—यह विश्वास नई पीढ़ी में पैदा हो रहा है। वियतनाम संग्राम ने उसकी इस धारणा को पुष्ट कर दिया है। मुख्य आवश्यकता राष्ट्रीय संकल्प की है।

आज का भारतीय समाज तीव्रता से अनुभव कर रहा है कि उसने १८ साल आज से भिन्न संसार बनाने में व्यर्थ गंवा दिए। दुनिया जैसी है, उसी तरह का बनकर रहना चाहिए, यह अब माना जाने लगा है। पिछले १८ सालों में यदि भारत सैनिक शक्ति का निर्माण करता रहता, जेनेवा-कांफ्रेंसों के चक्कर में न रहता और संयुक्त राष्ट्र की युद्धों का अन्त करने की शक्ति पर विश्वास न करता, तो आज भारत की गणना भी विश्व की शक्तियों में होती, तब चीन, कैने फिल्म महोत्सव में भारतीय फिल्म के समकक्ष दिखाये जाने पर आपत्ति न करता और न 'चारूलता' इसी कारण पुरस्कृत होने से वंचित रहती। भारत में यह अनुभूति उत्पन्न हो रही है कि फिल्म महोत्सव में डीगाल चीन को प्रसन्न रखने के लिए भारतीय दावे को इसी कारण अस्वीकार करने को प्रस्तुत हुआ, क्योंकि भारत सैनिक दृष्टि से कमजोर है, और अणुबम से शून्य है।

सुरक्षा की समस्या केवल सैनिक नहीं है, यह राजनीतिक भी है। सैनिक दृष्टि से भारत निर्बल है, अतः भारत का कोई पड़ोसी उसका मित्र नहीं है। एशिया अफ्रीका के जो राष्ट्र १९६२ से पहले हिमालय के नीचे ही नीचे देखते थे, वे ही राष्ट्र सेला और बोमड़ीला में भारत की पराजय के बाद हिमालय के पार देखने लगे हैं। यह स्थिति बदली नहीं है, क्योंकि हमने लाहौर व कराची नहीं लिया। भारत की सामरिक शक्ति ने चकाचौंध उन्नति नहीं की, क्योंकि भारत चीन से किसी को बचाने की सामर्थ्य नहीं रखता। दलाई लामा को अभी तक भारत ल्हासा में पुनः स्थापित नहीं कर सका, यह हरेक पड़ोसी देख रहा है। फलतः बर्मा और सीलोन तक भारत के नहीं, चीन के मित्र हैं। इस स्थिति ने सैनिक शक्ति के महत्व को भारतीयों की नजरों में बढ़ा दिया है और इस वजह से भी यह अनुभूति तीव्र हो गई है। शक्ति पूजक राष्ट्र ने सैनिक शक्ति की उपेक्षा करके भारी भूल की है। इस भूल का परिमार्जन शीघ्र होना चाहिए, किन्तु कामना करते ही कोई चीज नहीं हो जाती। यहां आर्थिक स्थिति बाधक है।

आर्थिक विकास के क्षेत्र में चीन तेजी से कदम बढ़ा रहा है। लोकतन्त्र और अधिनायकतन्त्र के मध्य यहां भी भीषण संघर्ष है। भारत चीन से एक नहीं, दो मोर्चों पर एक साथ लड़ रहा है। चीन का अन्न-संकट दूर हो गया है। यद्यपि चीन का अन्नधान्य उत्पादन २००० लाख टन बढ़ाने का लक्ष्य पूर्ण नहीं हुआ है। इस्पात का उत्पादन भी बढ़ा है। अन्तर्राष्ट्रीय बाजार वह तेजी से प्राप्त कर रहा है। व्यापार में भी चीन भारत की प्रतियोगिता कर रहा है। चाय और वस्त्र के बारे में दोनों में भीषण प्रतियोगिता है।

चीन का राजनीतिक प्रभाव भी तेजी से फैल रहा है। चीन भले ही अफ्रीका में क्रान्ति नहीं कर सका और अल्जीयर्स काफ्रेंस भी स्थापित हो गई, परन्तु भारत चीन को बैरी और शत्रु बनाये रखने की सामर्थ्य अपने में नहीं पाता। भारत के राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन ने मैसूर में भाषण देते हुए शान्ति स्थापना के उद्देश्य से चीन पाकिस्तान के साथ मैत्री भाव रखने की सलाह दी है। यह भारत की नीति में एक नया परिवर्तन है। दो साल पहले राष्ट्रपति ने राष्ट्र को सेला और बामडिला की पराजय का चीन से प्रतिशोध लेने की आवश्यकता बताई थी, किन्तु आज वे उसको भूलकर चीन से मैत्री करने की इच्छा प्रकट कर रहे हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि भारत चीन के अधिकार में अपनी १२,००० वर्ग मील जमीन छोड़ने को तैयार है। यह परिवर्तन चीन के बढ़ते राजनीतिक प्रभाव का फल ही समझना चाहिए। भारत ने चीन से लड़ाई लड़ने का विचार त्याग दिया है। स्वतः भारत लड़कर खोई भूमि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुनः प्राप्त न करेगा और न तिब्बत की स्वाधीनता प्राप्ति के लिए संग्राम करेगा। यह इस समय भारत के शासकों की नीति प्रतीत होती है, क्योंकि ९०० करोड़ रु० का वार्षिक व्यय इनको असह्य भार प्रतीत हो रहा है।

इसका एक कारण तो यह है कि चीन और पाकिस्तान के बीच घनिष्ठ मैत्री हो गई है। इस मैत्री ने पाकिस्तान का महत्व बढ़ा दिया है। पश्चिमी देश और सोवियत रूस भी इस कारण भारत की सहायता खुले दिल से करने को तैयार नहीं हैं। पश्चिमी देशों के समान सोवियत रूस भी पाकिस्तान को असन्तुष्ट करके भारत की सहायता करने को तैयार नहीं है। अकेला भारत चीन से लड़ने की सामर्थ्य और क्षमता नहीं रखता, यह विश्वास भारत के शासकों को प्रतीत होता है। इस कारण से जब तक भारत के शासकों में यह आत्म-विश्वास उत्पन्न न हो कि एकाकी भारत चीन को रण क्षेत्र में पराजित कर सकता है और अपहृत भूभाग वापस ले सकता है, तब तक भारत के वर्तमान शासक स्वतः लड़ाई करने को आगे न बढ़ेंगे।

सीलोन और बर्मा ही नहीं, नैपाल भी चीनी प्रभाव क्षेत्र में है। उत्तरी बर्मा में चीनी क्रियाकलाप बढ़ रहा है। बर्मा से भारतीय निकाले जा रहे हैं। सीलोन में तमिल आबादी का भविष्य संकट में है। थाई लैण्ड में चीनी कार्रवाइयां बढ़ रही हैं। वियतनाम में अमेरिकी चूहा फंस गया है। अमेरिका निकलना चाहता है, पर निकलने की कोई राह नहीं पा रहा है। चीन का बल पाकर हिन्देशिया भारत का अपमान करने से नहीं चूकता। नीकोबार द्वीप समूह हिन्देशिया के तट से केवल बीस मील दूर है। आर्थिक दृष्टि से पिछड़े भारत को जापान आदर की दृष्टि से नहीं देखता। थाईलैण्ड और फिलीपीन भी भारत के प्रति अनुरक्त नहीं है। सीटो की स्थापना का भारत ने विरोध किया था। इस बात को ये अभी तक नहीं भूले हैं। अफ्रीकी एशियाई जगत में मलेशिया और मिश्र अवश्य भारत के मित्र हैं।

चीन ने दो अणु बमों का विस्फोट करके अपनी वैज्ञानिक और शस्त्र-निर्माण की प्रगति का परिचय दिया है। अणु बम का जवाब अणु बम ही हो सकता है। भारत के शासक किन्तु भारत की सुरक्षा करने से पहले विश्व संहार को रोकना अपना मुख्य कर्त्तव्य मानते हैं। इस दृष्टि भेद के रहते हुए भारत आण्विक-आयुधों के निर्माण में चीन का मुकाबला कभी न कर सकेगा। फलतः वह चीनी प्रभाव-मण्डल को कभी भंग न कर सकेगा।

चीन और रूस कभी मित्र हो कर रहेंगे, इस कल्पना का कोई आधार नहीं है। दोनों कम्युनिस्ट होते हुए भी पक्के साम्राज्यवादी हैं। साइबेरिया रूस कभी नहीं छोड़ेगा। बेकल झील परिकल्पना का उद्यापन रूस ने साइबेरिया चीन को भेंट करने के लिए नहीं किया। चीन सोवियत रूस के पास साइबेरिया रहने देने को खुशी-खुशी कभी तैयार न होगा। साइबेरिया का भविष्य-उज्ज्वल है। उसकी अपार खनिज सम्पत्ति अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अतः रूस-चीन का बैर भी चलता रहेगा। रूस-चीन का यह बैर भारत के लिए सीमित मात्रा में ही उपयोगी हो सकता है, क्योंकि रूस भी ऐंग्लो-अमेरिका के समान पाकिस्तान की अनुमति और सहमति के बगैर भारत की सहायता न करेगा। रूस पाकिस्तानी मैत्री के लाभ से तुर्की और ईरान की मदद से भूमध्य सागर और ईरान की खाड़ी में पहुंचने का मार्ग चाहता है। अतः रूस-चीन के बैर से भारत को कुछ विशेष लाभ न होगा।

चीन भारत का ही नहीं, अमेरिका का भी दुश्मन है। इस कारण भारत अमेरिका से सहायता की आशा कर सकता है, लेकिन अमेरिका पाकिस्तान से भी बंधा हुआ है। गिलगित और चित्राल में पाकिस्तान ने उसको अड्डे दिए हैं। चीन ने भी इनको खाली कराने के लिए पाकिस्तान से नहीं कहा है। अतः अमेरिका पाकिस्तान की अनुमति लिए बगैर भारत की सहायता करेगा नहीं। अतिस्वन जैट विमान एफ-१०४ अमेरिका ने भारत को देना आखिरकार नहीं ही माना। बोकारो के इस्पात प्लाण्ट की भी यही कथा है। ब्रिटेन ने भारत को पन्डुब्बियां नहीं लेने दीं। स्वतः भी भारत को नहीं दीं। अमेरिका ने पाकिस्तान को पनडुब्बियां दीं, लेकिन भारत को नहीं दीं। इस दृष्टि से भारत एकाकी है। उसको अपनी सुरक्षा स्वतः ही करनी है। पश्चिमी यूरोप भी भारत के प्रति शाब्दिक सहानुभूति प्रकट करके ही रह जायेंगे। इन सबको ब्रिटेन के समान चीन का बाजार चाहिए। अतः चीन के विरोध में ये भारत की सहायता न करेंगे। डीगाल का चीन के प्रति बदला भाव इस का प्रमाण मानना चाहिए।

राष्ट्रकुल (कामनवेल्थ) से भारत कुछ विशेष आशा नहीं कर सकता, क्योंकि संघ ही नपुंसक है। यह ब्रिटिश साम्राज्य का बदला रूप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। चीन-विजयी भारत एक विश्व-शक्ति होगा, यह भय इनके मन में सदा बना रहता है। अतः ये भारत को उठते देखने और विश्व-शक्ति बनने देने में भूलकर भी सहायता न देंगे।

इस स्थिति में भारत का अणु-बम न बनाने का निर्णय अवश्यमेव ही हानिकर है। भारत के पास अणु शक्ति की कमी नहीं है। नैसर्गिक अणुशक्ति भारत के पास है। चीन ने अणुबम यू-२३५ से बनाया है। भारत के आक के पौधे के फूलों में यू-२३४ प्रचुर मात्रा में होता है। एक पौ. यू-२३४ प्राप्त करने के लिए भारत को कुछ हजार रुपये ही खर्च करने होंगे। जून के अन्त में आक का फूल फूलता है। उस समय यू-२३४ संग्रह करना होगा। डा. भाभा की मान्यता थी कि भारत एक वर्ष के भीतर २० किलोटन बम १८० लाख पौ. में बना सकता है, किन्तु यदि यूरेनियम आक के फूल से प्राप्त किया जाय, तो यह व्यय अपने आप घट जायगा और कम हो जायगा।

चीनी अणु बमों के भय को कम करने के लिए भारत ने मिसाइल (प्रक्षेपास्त्र) का प्रोग्राम प्रारम्भ किया है। फ्रांस से भारत ने आवह (मीटीओरोलाजिकल) राकेट (अग्निबाण) फ्रांस से लिया है। इसका विकास मध्यम-दूरगामी भूमि राकेट में किया जायगा। फ्रेंचों के अनुसार इस योजना पर १८००० लाख पौ. व्यय होगा। यदि यह योजना भारत ६ सालों में पूरी करना चाहे, तो उसको अपने सैनिक बजट में ४५ प्रतिशत की वृद्धि करनी होगी। इसका अर्थ है कि भारत का सैनिक बजट १२००-१३०० करोड़ रु. के मध्य होना चाहिए।

१५०० करोड़ रु. वार्षिक व्यय करके भी भारत चीनी आतंक से सर्वथा मुक्त होने की आशा नहीं कर सकता। उसको किसी न किसी की सहायता लेनी ही होगी। रूस भी पश्चिमी देशों की सहायता मिले बगैर हिटलर को पराजित नहीं कर सकता था। रूस चीन को पराजित करने में भारत को कभी मदद न देगा। यद्यपि मिग-२१ बनाने में वह मदद दे रहा है। पश्चिमी राष्ट्र ही भारत को शस्त्रास्त्रों, प्राविधिक प्रशिक्षण आदि की सहायता दे सकते हैं, किन्तु ये भी हार्दिक सहायता न देंगे। भारत को ऐसे सहयोगी और राष्ट्र चुनने चाहिएं, जिनसे भारत का घनिष्ट सम्बन्ध हो सकता है, और जो भारत के समान चीन से भयाक्रान्त हों और चीनी आतंक से मुक्ति चाहते हैं। इस दृष्टि से यह आवश्यक प्रतीत होता है कि भारत—

१—जापान, आस्ट्रेलिया और मलेशिया के साथ घनिष्ठ मैत्री करे।

२—भारतीय सेना का साज-सामान और भारतीय हवाई सेना की शक्ति हिमालय के परले पार से आने वाले तीव्र प्रहार को रोकने योग्य ही नहीं होनी चाहिए, बल्कि भारतीय हवाई सेना शक्ति इतनी होनी चाहिए, जो भारतीय सीमा से अति दूर भी सफलता पूर्वक काम कर सके। संयुक्त राष्ट्र के आह्वान पर ही वह मदद न दे बल्कि सीलोन, मलेशिया, बर्मा, आस्ट्रेलिया की भी मदद करने को उद्यत हो।

३—पर्वतीय राज्यों, नेपाल, सिक्किम और भूटान को भारतीय संघ का सदस्य बनने की प्रेरणा करनी चाहिए और सुरक्षा-पद्धति में इनकी सीमा को भी सम्मिलित करना चाहिए। मारीशस, ब्रिटिश गायना, फीजी, पूर्वी अफ्रीका मलेशिया आदि देशों में बसे भारतीयों को प्रेरणा की जाय कि वे जहाँ बसे हैं उस देश में अपनी बचत का अधिक मात्रा में विनियोग करें और उन देशों के निर्माण और विकास में अधिकाधिक भाग लें। इस दिशा में वे अग्रणी का काम करें।

४—भारतीय अड्डों से चीनी शहर ३००० मील दूर हैं। अतः भारत की हवाई शक्ति प्रबल होनी चाहिए। हवाई शक्ति के निर्माण से भारत की आर्थिक शक्ति क्षीण हो जायगी, यह एक मिथ्या भय है। यह देश में नूतन आत्म-विश्वास पैदा करेगा, नई शक्ति प्रदान करेगा और साहसिक जीवन बिताने के लिए प्रेरणा करेगा।

५—भारत एक विश्व-शक्ति है। अतः भारत को आण्विक शस्त्रास्त्र बनाने में संकोच न रखना चाहिए। तिब्बत और हिमालय के घाटों से होने वाले संभावित चीनी हमलों को रोकने के लिए आण्विक आयुधों से युक्त सुरक्षा व्यवस्था होनी चाहिए।

६—भारत को कम-से-कम २० कोटि प्लुटोनियम बम अवश्य चाहिएं। ये कैनबेरा द्वारा भी निशाने पर छोड़े जा सकते हैं। भारत को यह सिद्ध करने के लिए कि वह वैज्ञानिक प्रगति में चीन से पीछे नहीं है, यूरेनियम से अणुबम बनाना चाहिए। इस विषयक विवाद को न बढ़ाकर भारत की सुरक्षा को दृढ़ करने की ओर ध्यान देना चाहिए। ○

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

हमारा दाम्पत्य: सुख की कसौटी पर !

विक्टोरिया की शादी की बात चल रही थी और एलबर्ट को उस दिन विक्टोरिया से परिचय कराने के लिए घर बुलाया गया था। चाय की सजी मेज़ पर सब लोग बैठे हुए थे। तभी विक्टोरिया को उस कमरे में लाया गया। विक्टोरिया ने आते ही गुलाब का एक छोटा-सा, पर सुन्दर गुलदस्ता एलबर्ट को भेंट किया।

एलबर्ट ने मेज़ पर से टोस्ट काटने की छुरी उठाकर अपने शानदार और कीमती कोट में हृदय के स्थान पर एक छेद करके करीने से उस गुलदस्ते को उसमें खोंस लिया और सम्मान-भरे स्वर में विक्टोरिया से कहा—"आपका यह उपहार हाथ में नहीं, हृदय के पास ही रखने लायक है। इसके लिए आपको बहुत-बहुत धन्यवाद !"

इस घटना से जो वातावरण बना, उसने एलबर्ट को इंग्लैण्ड की भावी महारानी का पति बना दिया और संसार भर में कोट पर गुलाब का फूल लगाने की प्रथा चला दी। क्या कहा इस घटना ने ? यही कि सुखी दाम्पत्य की स्थापना के लिए आवश्यक है कि हम अनुकूल वातावरण की रचना करने की कला जानें।

अब विक्टोरिया इंग्लैण्ड की महारानी थी और एलबर्ट उनके पति। विशेषज्ञों की राय है कि नारी यह सुनना चाहती है कि उसे प्यार किया जाता है और पुरुष यह महसूस करना चाहता है कि उसे प्यार किया जाता है। एलबर्ट को महसूस नहीं हो रहा था कि उसे प्यार किया जाता है; बल्कि महसूस हो रहा था यह कि उसकी उपेक्षा की जा रही है—'वह महारानी है, तो क्या मैं भी तो महारानी का पति हूं!'

एक दिन एलबर्ट को बहुत गुस्सा आ गया और वह दरवाजे की चटखनी चढ़ा, भीतर बैठ गया। चाय की मेज लग गयी, महारानी विक्टोरिया आ बैठीं, पर एलबर्ट गैरहाजिर। बुलावा भेजा, तो खबर आई—दरवाजा बन्द है और दस्तक दी, तो भीतर से गरम झिड़कियाँ मिलीं।

महारानी तमतमा उठी—मुझसे नाराज हैं, तो सबको यह तमाशा क्यों दिखा रहे हैं ! वे धरती धमक चाल से गयीं और किवाड़ों को भड़भड़ाया। भीतर से आवाज आयी—"कौन है ?" उत्तर दिया—"मैं हूं महारानी !" आवाज आयी—"भाग जाओ।"

चेहरा तो तमतमाया था ही, खून भी खौल उठा—'मेरी सज्जनता का यह दुरुपयोग; समझते क्या हैं ये अपने को।' महारानी अपने कमरे में लौट आयीं, पर मेज तैयार थी और सब प्रतीक्षा में थे। प्रतीक्षा में जिज्ञासा थी, जिज्ञासा में कानाफूसी !

विक्टोरिया फिर उठी, गयी, किवाड़ धमधमाये। भीतर से आवाज आयी—"कौन है ?" उत्तर दिया—"मैं हूं महारानी; किवाड़ खोलिए !" स्वर का टैम्परेचर सौ से एक सौ पांच पर जा पहुंचा था। आवाज आयी—"भाग जाओ यहाँ से !"

खून तो खौल ही रहा था, नस-नस फड़क उठी—"क्या समझा था इसे और क्या निकला ! कोई बात नहीं, कुछ-न-कुछ करना पड़ेगा अब मुझे !" महारानी अपने कमरे में लौट आयीं, पर मेज खराब हो रही थी और दूसरे ऊब रहे थे। कानाफूसी चर्चा में बदल रही थी।

विक्टोरिया फिर उठी, गयी, किवाड़ खटखटाये। भीतर से आवाज आयी—"कौन है ?" उत्तर दिया—"अपने हृदय की महारानी को नहीं पहचानते ? मैं हूं तुम्हारी प्रियतमा !" किवाड़ खुल गये,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकृतियों पर थिरकता ताल सम पर आया, प्यार की निशानियों का लेन देन हुआ और दोनों यों बतियाते मेज पर आ गये, जैसे यह युद्ध नहीं, चाँदमारी थी।

इस घटना ने क्या कहा ? यही कि सुखी दाम्पत्य की सुरक्षा के लिए आवश्यक है कि हम प्रतिकूल वातावरण बनाने की कला जानें।

"बीबी जी, धड़धड़ करता जब वो काला घर-सा आया, तो मैं डर गयी !"

मेरी पत्नी ने जब मेरी भतीजी से कहा, तो सब खूब हँसे—इस हँसी में मेरे भविष्य का ही उपहास था। बात यह थी कि हमारे परिवार क्षेत्र में दो बहुएँ फूहड़ आ गयी थीं। मैं उनकी आलोचना करता था। उन में से एक ने एक दिन कुढ़ कर कहा था—"हाँ, जब तू पदमनी को ब्याह कै लावैगा, तब पता चलैगा तुझै।" मैंने लड़कपन की शेखी में कहा था—"पदमनी न आये, तो पदमनी बनायी तो जा सकती है।"

मेरी पत्नी जब दुलहन बनकर अपने गाँव से मेरे क़स्बे में आई तो उस भोली ने पहली बार रेल देखी थी और उसी का चित्रण था यह—"बीबी जी, धड़धड़ करता जब वो काला घर-सा आया, मैं डर गई।" उनकी हँसी का अर्थ था कि इस शेखी खोरे को सचमुच पदमनी ही मिल गयी है।

एक वर्ष बाद जब मेरा द्विरागमन हुआ और हम परिचित हुए, तो दो बातें सामने थीं कि देखने में स्वस्थ-सौम्य और गृह-कार्य और गृह-व्यवस्था में परम निपुण, पर तीसरी बात भी गुप्त न थी कि काला अक्षर भैंस बराबर। कहूं, मेरी पत्नी विवाह के समय उतनी ही शिक्षित थी, जितने अपने विवाह के समय किंवदन्ती के अनुसार कालिदास थे। मेरे लिए यह एक चुनौती थी। मैं उत्साह से हिन्दी की पहली पुस्तक और स्लेट क़लम खरीद लाया। दो दिन मेरी पाठशाला चली और तीसरे दिन विद्रोह का बिगुल बज उठा—"मेरी भाभी ने भी मुझे पढ़ाने की बहुत कोशिश की, पर मेरा जी नहीं लगा। अब चाहे तुम मेरा सिर काट दो, पढ़ तो मैं सकती नहीं !"

सुनते ही मेरे हृदय में बिजली का धक्का-सा लगा, पर तभी सरस्वती जाग उठी। मैंने किताब-स्लेट उठाकर एक तरफ़ रख दी और कहा—"कोई बात नहीं; तुम्हारा जी नहीं लगता, तो मत पढ़ो। घर में मैं तो पढ़ा हुआ हूं ही। जब तुम कहोगी तुम्हारा पत्र मैं लिख दूँगा और अच्छी-अच्छी किताबें मैं ही पढ़ कर तुम्हें सुना भी दिया करूँगा।"

मेरी शान्ति पत्नी के लिए पहले आश्चर्यजनक लगी, फिर आनन्दजनक और फिर विश्वासजनक। संयोग की बात, अपनी पत्नी का विश्वास मैंने पहली ही बातचीत में जीत लिया था। फिर भी दो-तीन दिन उनमें चौंक रही और तब वे पूर्ण निश्चिन्त हो गयीं। कोई एक सप्ताह बाद मैंने कहा—"तुम्हारी भाभी शिकायत करेगी कि ससुराल जाकर हमें भूल गई। इसलिए उन्हें एक पत्र लिखा दो—जो तुम कहोगी, मैं लिख दूँगा।" पत्र लिखा गया, तो जवाब आता ही। वह मैंने पढ़ भी दिया। यों ही मेरी स्टेनोग्राफ़री चलती रही।

धीरे से मैंने कहानीवाचन यज्ञ भी आरम्भ कर दिया। मैं छाँट कर नम्बर एक दिलचस्प कहानी लाता, रात में अपनी पत्नी और भतीजी को सुनाता बड़ा आनन्द आता उन्हें। धीरे-धीरे मैंने नखरा करना शुरू कर दिया कि जब कहानी अपने सबसे दिलचस्प चौराहे पर आने लगती, मैं पढ़ना बन्द कर देता। मुझे खुशी होती, जब और पढ़ो-और पढ़ो का आग्रह होता। एक दिन मैं बाहर से लौटा तो हिन्दी की पहली किताब और स्लेट मेज पर रखी थी। मन में आया—मार लिया मैदान और रात में सचमुच पढ़ाने का प्रस्ताव आया—"अपने पढ़े बिना बहुत दिक्कत होती है—" जिसे मैंने हाँ-हूँ करके मान लिया। मेरी पाठशाला चल निकली।

यह १९२५-२६ की बात है और यह है मार्च १९३१ की कि मैं जेल से छूटकर आया और तीन-चार दिन बाद एक मीटिंग में मेरठ जाने के लिए मैंने अटैची ठीक की, पर स्टेशन जाने के लिए मैं अटैची उठाने ऊपर के कमरे में गया, तो अटैची पर पेपर वेट से दबा एक परचा रखा था। उस पर एक सवैया लिखा हुआ था, जिसके अंतिम दो पद मुझे इस समय याद हैं।

कल आये हो, जाने की आज लगी,
अपनी न कही, न सुनी पर की,
रुक जाया करो घर दो दिन तो,
तुम्हें सौगन्ध नाथ, मेरे सर की।

—राम कली 'प्रभा'

मैं चमत्कृत हो उठा—ओह, मेरी पत्नी शिक्षिता ही नहीं, कवयित्री भी हो गयी और मेरा उपनाम प्रभाकर है, तो उनका भी 'प्रभा' है। इससे पहले ही वे अपने नगर में घूँघट खोलकर बाजार जाने वाली सबसे पहली समाज सुधारिका, झण्डा ले कर महिलाओं के जलूस का नेतृत्व करने वाली सबसे पहली कांग्रेस कार्यकर्तृ और देश के अनेक नेताओं की आतिथेया बन चुकी थीं। मैंने अपने जीवन में सदा ही अपनी इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सफलता को सर्वोत्तम सफलता माना है; क्योंकि मैं मानता रहा हूं कि जिसका घर ठीक है, वही अपने बाहर को ठीक बना सकता है।

अपने दाम्पत्य को सुखी बनाने की बात मेरे मन में विवाह से पहले ही आगई थी, इसलिये विवाह से पहले मैंने उस पर काफी सोचा था और विवाह के बाद उस पर बराबर प्रयोग किये। मेरी राय में सुखी दाम्पत्य के सम्बन्ध में सोच-विचार की नम्बर एक बात यह है कि हम उसे पकी-पकायी रसोई न मानें और अच्छी तरह यह समझ लें कि वह कच्चा राशन है—उससे स्वादिष्ट और स्वास्थ्यवर्धक भोजन बनाना हमारा उत्तरदायित्व है। यह समझने के बाद आगे बढ़ना सुगम हो जाता है।

पिताजी को कभी क्रोध न आता था, पर माँ महाक्रोधी थी। मैंने उद्वेग और शान्ति के दृश्य खूब देखे थे। इसलिए आरम्भ में ही मैंने प्रभाजी से निर्णय किया कि क्रोध से एकदम बचना तो साधना-साध्य है, पर हम दोनों एक साथ कभी क्रोध न करेंगे और क्रोध करने का अधिकार केवल एक को होगा।

"वह किसे ?" प्रभाजी ने पूछा था और मैंने उत्तर दिया था जिसे क्रोध पहले आ जाए। चूक भी हुई, पर ९९ प्रतिशत सफलता इसमें मिली और इस नियम ने सुखी दाम्पत्य के निर्माण में हमें बहुत सहायता दी।

क्रोध वाणी के संयम को भंग कर देता है और हम औचित्य को छोड़ उद्वेग के घोड़े पर सवार हो जाते हैं। उद्वेग बकवाद को जन्म देता है और बकवाद हृदय के सौमनस्य को खण्डित कर देती है। दाम्पत्य जीवन की एक बहुत महत्त्वपूर्ण बात यह है कि एक ने दूसरे से क्या कहा, इसका मूल्य-महत्त्व बहुत कम है।

मूल्य-महत्त्व है इस बात का कि कब कहा और कैसे कहा ?

मैंने जीवन-भर प्रयोग करके देखा है कि थकान के समय जो बात क़ातिल ज़हर मालूम होती है, वह ताजगी के समय सिर्फ़ रूखी रह जाती है। कहूं, थकान में जो बात असह्य है, वही ताज़गी में सह्य हो जाती है। जो बात थकान की है, वही उत्साह की भी है। पति या पत्नी जब अपने सगे-साथियों के घर से उत्साह में भरे लौटें या उनके बीच बैठे हँसी-खुशी की बातें कर रहे हैं उस समय कोई विरोधी बात मन को अग्राह्य होती है। उस समय चुप रहना और उचित समय की प्रतीक्षा करना ही बुद्धिमानी है।

यह हुई कब कहा की बात और यह है कैसे कहा की बात। एक मित्र अपनी पत्नी के लिए अपनी अँगूठी बेचकर एक साड़ी लाये। पत्नी ने उत्साह से उसी समय पहनने के लिए उसे खोला तो वह एक जगह फटी हुई थी। तमतमाकर पत्नी ने कहा—सारी उम्र में यह जस किया था, उसका भी यह हाल ! मालूम होता है बरतन बेचने वालियों से लाये हो यह पुराना चीथड़ा।" बड़ी करारी चोट थी। पति ने समेट कर साड़ी को चूल्हे पर फेंक दिया. वह भक हो गयी और वह क्या भक हो गयी, दाम्पत्य की दीप्ति ही बुझ गयी।

बरसात के दिन थे। बाग में घूमने गया, तो बड़े खूबसूरत अमरूद लगे हुए थे। मैं आधा सेर ले आया, पर काटे, तो सब में कीड़े—एकदम बेकार। भतीजी ने कहा—"जब आपको चीज़ खरीदनी नहीं आती, तो आप खरीदते ही क्यों हैं ?" कड़वे बोल की प्रतिक्रिया मन तक पहुंची न थी कि प्रभा जी ने उल्लास के स्वर में कहा—"बीबीजी, ये सजीव साहित्यकार हैं, इसलिए इनका हरेक काम सजीव होता है।" सजीव शब्द के इस प्रयोग पर मुझे ऐसी हँसी आयी कि मेरा रोम-रोम खुशी से भर गया। यह है कैसे कहा का चमत्कार।

सुखी दाम्पत्य की वही पुस्तक सफल हो सकती है जो काफ़ी चौड़ा हाशिया छोड़कर लिखी जाये। समझने की बात यह है कि पति पत्नी दो व्यक्तित्व हैं और दो में कितनी भी अधिक एकता हो, हैं वे दो ही। इसलिए एक को दूसरे से उतनी ही सहमति की आशा करनी चाहिए, जितनी सम्भव है। यह सहमति अधिक से अधिक हो, पर संपूर्ण सहमति तो गुलाम के ही साथ सम्भव है—न पति के साथ, न पत्नी के साथ। इसलिए मेरा अनुभव है कि दोनों को मतभेद में भी सन्तुष्ट रहने की आदत रखनी चाहिए। नहीं तो टक्कर अनिवार्य है और यह टक्कर बार-बार हो, तो घरेलू जीवन का रंग फीका पड़ जाता है, वह नीरस हो जाता है। दोनों के दिमाग़ में यह बात रहनी ही चाहिए कि दाम्पत्य का संविधान प्रजातन्त्री है, अधिनायकतावादी नहीं। प्रजातन्त्र हारकर जीतने की कला का प्रयोग-केन्द्र है और दाम्पत्य भी। संक्षेप में सब कुछ कहना हो, तो मैं कहूंगा कि सफल दाम्पत्य की कुंजी है सामंजस्य करने वाला स्वभाव। यह हो, तो शेष सब अभाव भाव में बदल जाते हैं और यह न हो, तो शेष सब भाव मिलकर भी अभाव की ही सृष्टि करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत कहाँ है ?

प्रो० सिद्धेश्वर प्रसाद, संसद सदस्य

प्रश्न कुछ अजीब-सा है, लेकिन मैं आप से यह पूछना चाहता हूं कि भारत कहाँ है ? आप समाचार-पत्रों को पढ़ें या पुस्तकों को, देशी भाषा में लिखी किताबों को पढ़ें या विदेशी भाषा में लिखी किताबों को; बहुत कोशिश करने के बाद भी भारत शायद ही कहीं दिखायी दे सके। यह ठीक है कि मानचित्रों में भारत की भौगोलिक संज्ञा वाला एक देश अंकित होता है, जो एशिया महादेश का एक अंग है। लेकिन, क्या यह भौगोलिक सीमा ही भारत है? क्या भारत इस के अतिरिक्त भी कुछ है ?

जिस भौगोलिक सीमा को आज हम भारत की संज्ञा देते हैं, वह भी तो बदलती रही है। भारत की भौगोलिक सीमा कितनी बार बदली, यह ठीक-ठीक कह सकना विद्वानों के लिए भी कठिन है, लेकिन इन सबके बावजूद मन के किसी कोने में यह भाव भी अपनी झलक दिखा ही जाता है कि भारत नाम की कोई संज्ञा है, रही है और रहेगी; चाहे यह कितनी ही अस्पष्ट क्यों न हो?

भारत की अनुभूति हो कर भी नहीं होती क्यों प्रतीत होती है ? धर्म या भाषा, प्रान्तीयता या जातीयता की प्रचण्ड आंधी भारतीयता की अनुभूति को धूमिल क्यों कर देती है ? क्यों हम धर्म और भाषा, प्रान्तीयता और जातीयता के ऊपर भारतीयता को स्थान नहीं दे पाते ? इन चट्टानों से टकरा कर क्यों हमारी भारतीयता की भावना बार-बार चूर हो जाती रही है ? इसी लिए तो जब भारत की खोज की जाती है तो भारत कहीं दिखाई नहीं देता; दिखायी देते हैं विभिन्न धर्म और सम्प्रदाय तथा उनके परस्पर-विरोधी स्वार्थ; दिखायी देती हैं विभिन्न जातियां और उनके उत्कट आपसी ईर्ष्या-द्वेष; दिखायी देते हैं विभिन्न प्रान्त और उनके एक-दूसरे के प्रति ऐतिहासिक मतभेद या दिखायी देती हैं विभिन्न भाषाएँ और उनकी आन्तरिक कलहप्रियता। इसी लिए आप कश्मीर से ले कर कन्याकुमारी तक और गुजरात से लेकर असम तक के भू-भाग को छान डालें, लेकिन भारतीय कहाँ मिलेंगे ? मिलते हैं हिन्दू और मुसलमान, सिख और ईसाई, मिलते हैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र। दिखायी देते हैं मराठे, गुजराती, पंजाबी या बंगाली। प्रश्न उठता है हिन्दी-अहिन्दी भाषा-भाषियों का, अंग्रेजी समर्थक या हिन्दी विरोधियों का; आन्दोलन चलाये जाते हैं उत्तर या दक्षिण के नाम पर। फिर आप ही बतायें कि भारत के लिए कौन-सी जगह बची रह जाती है ?

मैं जानता हूं कि आप की भावना या आप की बुद्धि या शायद दोनों कभी-न-कभी और चीज़ों को छोड़ कर भारत को ही सर्वोपरि स्थान दे देती हैं। इतिहास का साधारण विद्यार्थी भी इस बात को अच्छी तरह जानता है कि ऐसे मौके आये हैं, जब हम अपने धर्म, प्रान्तीयता, भाषा या जाति से ऊपर उठने में सफल हुए हैं; पर यह कौन नहीं जानता कि ऐसे उदाहरण अपवाद की कोटि में ही आते हैं। लेकिन क्या किसी राष्ट्र की नींव ऐसे अपवादों के आधार पर रखी जा सकती है ? यदि कोई ऐसा करने का दुस्साहस करे तो आखिर उसका क्या परिणाम होगा ? वही, जिसके उदाहरण भारतीय इतिहास के पन्ने-पन्ने पर अंकित हैं।

हमें यदि इस प्रश्न का सही उत्तर पाना हो तो यह बात बेहिचक स्वीकार करनी चाहिए कि भारत काफ़ी पुराने समय से एक भौगोलिक संज्ञा-भर रहा है तथा भारत की एकता से हमारा तात्पर्य हिन्दू-भारत की एकता से रहा है, लेकिन भौगोलिक संज्ञा हमारे उत्थान के लिए पर्याप्त नहीं है और न ऐसी बात है कि १४ अगस्त, १९४७ तक भारत की भौगोलिक संज्ञा से हमारा जो अभिप्राय था, उस में परिवर्तन किये जाने के कारण अनिवार्यतः वह शेष भौगोलिक इकाई, जिसे भारत की संज्ञा दी गई, अनिवार्यतः दुर्बल हो रहेगी। यह ईकाई ईकाई है और उसी प्रकार से पूर्ण है, ठीक उतनी ही पूर्ण है, जितना पूर्ण वह ब्रह्म है जिसे नाना सृष्टियों के प्रादुर्भाव के बाद भी पूर्ण ही कहा गया है। भारत की विशेषता यही है—

पूर्णस्य पूर्णम् आदाय,
पूर्णम् एव अवशिष्यते।

यह स्पष्ट है कि प्राचीन भारत की धर्म पर आधारित जो सांस्कृतिक एकता थी, वह अब सम्भव नहीं है, लेकिन दुर्भाग्यवश अनेक लोग उसी युग का स्वप्न देखते अभी भी नहीं थकते। दूसरी तरफ वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी साफ है कि भारत हिन्दू-भारत अब चाहे न रहे, लेकिन रहेगा भारत ही। इस बात को तनिक स्पष्ट करते हुए मैं यह कहना चाहूंगा कि इस देश के विशाल बहुमत की परम्पराओं को तिरस्कृत कर भारत को नए रूप में गढ़ना भी सम्भव नहीं हो सकेगा।

भारत की तस्वीर तभी उभरेगी जब धर्म, भाषा, जाति और क्षेत्रीयता के ऊपर भारतीयता को स्थान दिया जायेगा और इस भावना के प्रसार के लिए हर प्रकार के कदम उठाये जायेंगे। इसका मतलब यह हुआ कि भारतीयता या दूसरे शब्दों में राष्ट्र-प्रेम ही हमारा, भारत के एक नागरिक के नाते, सर्वोपरि मूल्य हो। हम जो भी नीति निर्धारित करें, प्रशासनिक या आर्थिक दृष्टि से जो भी कदम उठायें, वे सब इस बुनियादी बात को ध्यान में रख कर उठाये जाएँ कि उन के कारण भारतीयता की जड़ कहीं कमजोर न हो पाये। यह एक आदर्श के लिए मर-मिटने की बात है। जो राष्ट्र किसी आदर्श के लिए मिटना नहीं जानता, उसे जीना भी नहीं आता। समझौते छोटी-मोटी बातों के लिए किये जा सकते हैं, लेकिन, मूल्य और आदर्श के मामले में समझौते के लिए कोई भी जगह नहीं होनी चाहिए। यह दुर्भाग्य की बात है कि पिछले २० सालों से, कारण चाहे जो भी रहा हो हम किसी न किसी रूप में मूल्यों और आदर्शों से समझौता एक राष्ट्र के रूप में अपने को दुर्बल बनाते गये हैं। साम्प्रदायिकता से समझौता कर लेने के कारण पाकिस्तान का जन्म हुआ लेकिन क्या इस के कारण भारत से सांप्रदायिकता चली गई ? क्या इस के कारण हिन्दू-मुसलमान समस्या का समाधान हो गया ? अंग्रेजी-दां लोगों को तुष्ट करने के लिए हमने महात्मा गान्धी के आदर्शों को तिलांजलि दे दी, लेकिन क्या इसके कारण समस्या सुलझ गयी ? ऐसे और भी उदाहरण दिये जा सकते हैं। सच बात तो यह है कि जब-जब मूल्यों और आदर्शों के मामले में समझौते किये गये, राष्ट्र कमजोर हुआ है, समस्या और उलझती गयी है तथा विघटन की प्रवृत्तियों को बल मिला है। इसी लिए जब कोई पूछता है कि भारत कहां है तो उलझनें उसे कुछ देखने नहीं देतीं।

भारत मात्र भौगोलिक संज्ञा नहीं है, बल्कि एक आदर्श का प्रतीक है। वह आदर्श समय-समय पर राम और कृष्ण, गौतम बुद्ध और महावीर, वाल्मीकि व्यास और शंकर, चाणक्य और कालिदास, कबीर और तुलसी, स्वामी विवेकानन्द और महर्षि रमन, लोकमान्य तिलक और रवीन्द्रनाथ तथा महात्मा गान्धी जैसे व्यक्तियों के माध्यम से अभिव्यक्ति पाता रहा है। लेकिन, जब तक इन व्यक्तियों की उपलब्धियां समूह की उपलब्धि नहीं हो जातीं, तब तक भारत कहाँ दिखायी देगा ? कौन उसे देखेगा ? कौन उसका पोषण करेगा ?

अनेक कारणों से भारत के विभिन्न क्षेत्रों का सन्तुलित विकास नहीं हो पाया है। भारत के अभी भी कुछ लोग पांचवीं या छठीं शताब्दी में सांस लेते हैं और कुछ बीसवीं सदी के भी आगे की दुनिया का स्वप्न देखते हैं। यह एक अजीब बात है कि ये लोग अपनी दुर्बलताओं को ही अपनी परम्परा और विशिष्टता की संज्ञा दे कर उन से चिपके रहना चाहते हैं। इतना ही नहीं, उसके लिए खून-खतरा तक करने को तैयार हो जाते हैं। अपनी कमजोरियों और संकीर्णताओं को बनाये रखने के लिए मर-मिटने वाले लोगों की संख्या भारत में काफ़ी है, लेकिन उस विराट की अनुभूति से प्रेरित होकर कुछ कर गुजरने वालों की संख्या घटती जा रही है—कारण यही है कि हम आदर्श से डरने लगे हैं, उससे कतराने लगे हैं, लेकिन आज तक आदर्श के बगैर न कोई जी सका है और न हम जी सकेंगे। हां ! यदि मुर्दे से बदतर स्थिति को ही जीवन मानने को तैयार हैं तो बात दूसरी है। शायद हजारों वर्षों की गुलामी के कारण हमारी दृष्टि इतनी धूमिल हो गयी है कि हम ज्यादा दूर तक देख ही नहीं सकते।

यह सम्भव नहीं है कि भारत में एक ही जाति के लोग रहें। यह भी सम्भव नहीं है कि भारत में एक ही धर्म हो। यह भी सम्भव नहीं है कि भारत के प्राकृतिक रूप को बदल कर क्षेत्रीय विशिष्टता को समान रूप दिया जा सके और न यह ही सम्भव है कि भारतीय भाषाओं को समाप्त कर अंग्रेजी का सिक्का चालू रक्खा जाय लेकिन यह जरूर सम्भव है कि भारत के सामने एक आदर्श हो। यह भी सम्भव है कि यहाँ का एक-एक नागरिक उस आदर्श के लिए मर मिटने के लिए तैयार हो और यह भी सम्भव है कि भारत के नागरिकों को इसके लिए तैयार किया जा सके। लेकिन, आदर्शों की यह मेखला कौन तैयार करेगा ? वही न जो यह जानता है कि भारत कहाँ है, वही न जिस के मन में इतनी बेचैनी है कि वहाँ तक पहुंचे बगैर जो अपने जीवन को निरर्थक मानता है ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरदार भगत सिंह की घोड़ी

● श्री भदन्त आनन्द कौसल्यायन ●

हर आदमी के पास एक दो गर्व करने लायक बातें होती हैं। मुझ अकिंचन के पास भी एक दो हैं। एक तो यही कि मैं भी सरदार भगत सिंह का सहपाठी रहा हूं। सहपाठी ही नहीं, ज्येष्ठ-पाठी, क्योंकि भगत सिंह मुझ से एक साल पीछे थे, किन्तु पंजाब कौमी विद्यापीठ के हम सभी विद्यार्थी कुछ इतने अधिक 'राष्ट्रीय' थे कि हम में वर्ग भेद था ही नहीं। ऐसा लगता था कि जैसे हम सभी एक ही कक्षा के विद्यार्थी हों।

सरकारी विश्व विद्यालयों की अपेक्षा कौमी विद्यापीठ के विद्यार्थी जनता की दृष्टि में भी कुछ विशेष थे। ठीक बात तो यह थी कि पंजाब भर के 'सिर-फिरे' ही वहां इकट्ठे हुए थे।

उन्हीं 'सिर-फिरों' के एक 'रुकन' थे सरदार भगत सिंह।

उन के चचा सरदार 'अजीत सिंह' जी की देशभक्ति ही नहीं, उन के पिता सरदार किशन जी की देशभक्ति भी सर्व विदित थी।

विद्यार्थी जीवन में ही सरदार भगत सिंह से सुना हुआ गीत जैसे अभी भी कानों में गूंज रहा है—

सरफरोशी की तमन्ना
अब हमारे दिल में है।
देखना है ज़ोर कितना
बाज़ुए क़ातिल में है॥

मैं नहीं जानता कि सरदार भगत सिंह पंजाब कौमी विद्यापीठ की डिग्री लेने के लिये रुके थे, या नहीं? वह 'मुहिब्बाने-वतन' के जिस परिवार में पैदा हुए थे, उस में किसी भी विद्यापीठ की 'डिग्री-विग्री' की क्या क़ीमत थी?

हम लोग सरकारी कालेजों से भाग कर 'राष्ट्रीय-विद्यापीठ' में आये थे और सरदार भगत सिंह 'राष्ट्रीय-विद्यापीठ' से भी भाग कर एक बार न जाने कहाँ रूपोश हो गये थे। उन की तलाश जारी थी। तभी एक पत्र मिला, जिसकी पंक्ति थी—

"पिता जी से पूछें, यदि वह मुझे शादी करने के लिये हैरान करना छोड़ दें, तो मैं घर लौटने के लिये तैयार हूं।"

उस समय वह 'प्रताप' सम्पादक हुतात्मा गणेश शंकर विद्यार्थी की संरक्षता में अपने 'अज्ञातवास' के दिन काट रहे थे।

१९३१ में जब गान्धी जी ने लार्ड इरविन से समझौता कर लिया था, तो नौजवान भारत सभा के सभी सदस्यों की दृष्टि में ही नहीं, और भी बहुतों की दृष्टि में, महात्मा गान्धी के उस समझौते पर जो हस्ताक्षर हुए थे, वे हस्ताक्षर नहीं थे, बल्कि था 'गान्धी महात्मा' द्वारा हिंसा-अहिंसा की तात्विक बलिवेदी पर देश की तरुणाई की देश-भक्ति का किया गया बलिदान। उस समय गान्धी जी के बजाय यदि और किसी ने भी वे हस्ताक्षर किये होते, तो कराची कांग्रेस को तत्काल रावण की लंका के रास्ते पर जाने से रोकने की ताकत किसी में न थी।

इसी बेजोड़ आनबान के साथ सरदार भगत सिंह का बलिदान देश की तरुणाई के मानस-पटल पर छाया हुआ था।

और बहुत वर्षों के बाद, एक दिन मैं नागपुर के आस पास रेल से कहीं जा रहा था। मुझे अपने देश के एक भू-भाग पर गर्व था कि पंजाब और सिंध के शरणार्थी जहां कहीं भी गए, पुरुषार्थी ही सिद्ध हुए। मैं सिक्ख बालकों को महाराष्ट्र की चलती रेलों में चढ़ते और उतरते और संतरे बेचते देखता, तो मेरी छाती गर्व से फूल उठती। मुझे खुशी होती जब मैं देखता कि वह किसी के सामने हाथ नहीं फैला रहे हैं, बल्कि अपनी पसीने की कमाई खा रहे हैं।

तभी एक दिन देखा, दो पंजाबी बहनों को भीख मांगते हुए। दोनों मधुर स्वर से 'भगत सिंह का गीत' गा रही थीं। उस डिब्बे में उसे समझने वाला मेरे अतिरिक्त और शायद ही कोई हो, लेकिन वह 'गीत' ही क्या, जिसके बोल समझने की जरूरत हो। 'गीत' की समाप्त

तथा जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने से पूर्व ही लोगों ने उन्हें यथा सामर्थ्य, पैसा, दो पैसे, चार पैसे देने शुरू कर दिये।

मैं यूँ भी किसी भिखमंगे को प्रायः कुछ नहीं देता। भीख मांगना और डाका डालना—दोनों अनुचित हैं, लेकिन मुझे लगता है कि डाका डालना कम से कम भीख मांगने से तो अच्छा है।

उस दिन उन बहनों को अधिक से अधिक देने को मैं बेचैन हो उठा। यह 'भगत सिंह के गीत' का ही जादू था। दो चार पैसे देने का मेरे लिये कुछ मतलब न था। सोचने लगा—क्या दूँ कि मन को कुछ तो तसल्ली हो? तभी देखा अपने सन्यासी के कपड़ों को और साथ-साथ उन षोड़षियों के जरा-जीर्ण वस्त्रों को और साथ ही तब ख्याल आया कि कुछ भी असाधारण रकम दिये जाने पर ये आस-पास के देखने वाले लोग क्या कहेंगे?

हाय रे 'लोग क्या कहेंगे' के अभिशाप! सरदार भगत सिंह के नाम पर मांगने वाली उन बहनों को भी मैं कुछ न दे सका। मैंने मन ही मन मातृ-शक्ति को प्रणाम किया।

और अभी इस साल जब मैं पंजाब के गाँव में गया, तो मैंने 'शहीदे आजम सरदार भगतसिंह' की 'घोड़ी' की वार्ता सुनी। यह रही किसी 'घोड़ा-घोड़ी' की बात नहीं, बल्कि पंजाबी के एक प्रसिद्ध छन्द 'घोड़ी' की। मैं पंजाबी को हिन्दी की 'उपभाषा' नहीं मानता। गुजराती, मराठी, बंगला की तरह ही स्वतन्त्र भाषा मानता हूं। इसी लिए 'घोड़ी' अपेक्षा-कृत सरल होने पर भी उसे अधिक सुबोध बना देने के लिये साथ-साथ उस का भावानुवाद भी दे रहा हूं। 'घोड़ी' के बोल इस प्रकार हैं—

जदों वीर भगत सिंघ साहिब नूं,
दिताँ फाँसी दा हुकम सुणा।
ओहदी होवन वाली नार नूं,
किसे पिंड विच दसिआ जा॥

(जब वीरसिंह साहब को फाँसी का हुकम हुआ तो किसी ने गाँव जाकर उसकी भावी पत्नी को इसकी सूचना दे दी।)

ओह तुर पयी खातर परेम दी,
कहिंदी रबां मेल करा।
जा पहुंची विच लाहौर दे,
मिली जेल दरोगे नूं आ॥

(वह प्रेम के वशीभूत हो भगवान से यह प्रार्थना करती हुई कि हे भगवान्! उससे किसी तरह मुलाक़ात हो जाय, चल दी। वह चलते-चलते लाहौर जा पहुंची और जाकर जेल के दारोग़ा से मिली।)

उतों हुक्म होया सरकार दा,
देवो मुलाक़ात करा।
तद हूर परी असमान दी,
दिती दर ते अलख जगा॥

(उस समय ऊपर से सरकार का हुक्म हुआ कि मुलाकात करा दी जाय। तब उस आसमान की परी हूर (परम सुन्दरी) ने (जेल के) दरवाजे पर जाकर अलख जगा दी।)

सीखां विचों जदों तकिया शेर ने,
खड़ी सुन्दरी ऐ कोई आ।
ओहदे हंझू तक के बोलिया,
देवी कौण है तू समझा॥

(जब उस शेर ने उसे सीखचों के भीतर से देखा कि कोई सुन्दरी आकर खड़ी है, तो उसने उसके आंसुओं की ओर देख कर उस से पूछा—देवी तू कौन है? अपना परिचय तो दे।)

देवी—

तेरी होवण वाली नार हाँ,
मेरे दिल दिया शैहन शाह।
रब्बां सधरां सुतिआं जागियां,
मेरा दिल होया दरिआ।

(ऐ मेरे दिल के बादशाह! मैं तेरी भावी पत्नी हूं। मेरी सोई हुई आकाक्षायें जाग पड़ी हैं। मेरा दिल दर्या (नदी) हो गया है।)

मैं लड़ नहीं तेरा छडना,
मैंनू कल्ली छड के ना जा।
मैं कद दी राह पयी वेखदी,
मेरी प्रीत तोड़ निभा॥

(मैं तेरा पल्ला नहीं छोड़ूंगी, मुझे अकेली छोड़ कर मत जाना। न जाने कब से मैं आस लगाये बैठी हूं। मेरी प्रीत को अंत तक निभाना।)

भगत सिंह—

सुण भारत मां दे लाल ने,
अगों हँस के केहा सुणा।
तूं भुले राह पयी जानीए,
किसे दिता भुलेखा पा॥

(भारत माता के लाल ने इस का हँस कर प्रत्युत्तर दिया—सुनो! तुम गलत रास्ते पर चली आई हो। किसी ने तुम्हें गलत रास्ते पर डाल दिया है।)

मेरी मंगणी कद दी हो गयी,
मेरे पूरे हो गये चा।
अज लगेगी महिंदी रात नूं,
सेहरा देसी रूप चढ़ा॥

(मेरी मंगनी तो कब की हो चुकी है। मेरे चाव पूरे हो चुके हैं। आज रात को मैंहदी लगने वाली है। सिर पर बंधने वाला सेहरा मुझे और भी सुन्दर बना देगा।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जंझ चड़ेगी कल दुपैहर नूं,
कई सेहरा देणगे गा।
मेरे सोहणे वीर पंजाब दे,
मै नूं हॅथी लैणगे चा॥

(कल दोपहर को मेरी बारात चढ़ेगी। कई लोग 'सेहरा' गाएँगे। उस समय मेरे पंजाब के सुन्दर 'वीर' मुझे चाव से हाथों हाथ उठा लेंगे।)

काहनूं भुल के आई ऐं भोलिये,
काहनूं भरनी एं ठण्डे साह।

(हे सरले! तू क्यों भटक कर इधर चली आई? हे सोहनी! तू ये ठण्डे साँस क्यों भर रही है?)

देवी–

ओह केहड़ी करमा वालड़ी।
जिस तैनूं लिआ भरमा।
ओहने मेरा दरद न जाणिआ,
दिता आपणा दरद बंढ्ढा।
मेरा जाए सुहाग किऊं लुटिया,
दस मेरा की गुनाह॥

(ऐसी वह कौन-सी भाग्यवान् है, जिसने मेरी ओर से तेरा दिल फेर दिया है। उसने अपना दर्द तो बाँट लिया, लेकिन मेरे दर्द को कुछ नहीं समझा। मैं पूछती हूं, तू बता कि मैंने ऐसा कौन-सा अपराध किया है कि मेरा 'सुहाग' इस प्रकार लूट लिया जाय?)।

भगत सिंह–

मेरी लाडी सोहणी जहान तों,
ओहदी कोई कोई रखदा चाह।
ओने खिच लए कई जवान ते,
बड़े बड़े शैनशाह।
जिदी खातर लाला लाजपत,
दिती आपणी जाण गंवा।
जिदी खातर वीर सुभाष ने,
दिती जेहली उमर गवा।
नी मैं खातर आपणे देस दे,
कर बैठाँ हाँ नेक विआह॥

(मेरे मन को मोह लेने वाली सुन्दरी दुनिया भर में सबसे अधिक खूबसूरत है। उसे कभी कभी ही कोई चाहता है। उसने कई जवानों को ही नहीं, कई बड़े बड़े बादशाहों को भी अपनी ओर आकर्षित किया है, जिसकी खातिर लाला लाजपत राय ने अपनी जान गँवा दी, जिस की खातिर सुभाष चन्द्र बोस ने जेलों में अपनी उम्र बिता दी, मैंने अपने देश के लिये उसी आजादी की देवी से नेक विवाह कर लिया है।)

देवी–

वे तूं लाडी मौत नूं समझिआ,
दिती मेरी जोत बुझा।
मेरी महिंदी भिनी रह गई,
मेरे मन ना लभिया चा।
मैं अंखीं चूड़ा ना वेखिआ,
मेरे नवें नवें सन चा।
मेरे दिल दिआं दिल विच रहि गयीआं,
हुण भरणी हाँ ठन्डे साह।
मेरी सोहणी जुआनी देआ,
मालका मैनूं आपणे नाल लैजा॥

(अरे! तूने तो मौत को ही अपने गले लगा लिया है। तूने तो मेरी जीवन ज्योति को एक ही दम बुझा दिया है। मेरी मेंहदी भीगी की भीगी रह गई। मेरा चाव पूरा ही नहीं हुआ। मैंने अपनी आँख से अपना चूड़ा तक नहीं देखा। मेरी नई नई उमंगें थीं। दिल की बातें मेरे दिल में ही रह गईं, अब मैं बैठकर ठण्डे सांस ले रही हूं। ए मेरी सुन्दर जवानी के मालिक! मुझे भी तू अपने साथ ही लेजा।)

भगत सिंह–

बस जाँदी वारी चंन बोलिया
न कमलिये नीर बहा,
अज जाणा ते फिर नहीं आवनां
तू बैठ के अलख जगा।
ऐ मेला दो जहान दा
तू अखी वेख लिआ,
जद फेर ऐह देस आजाद होवे
असां फेरा देगा पा॥

(उस चन्द्रमा ने विदा होते-होते कहा–हे पगली! आँखों से नीर मत बहा, आज हम चले जाएँगे तो फिर लौट कर नहीं आएँगे। तूने यह दोनों जहान का मेला अपनी आँख से देख लिया है। अब तू बैठी-बैठी अलख जगाती रह। हाँ, जब यह देश आज़ाद हो जाएगा, तो फिर हम दुबारा लौट कर आएँगे।)

१९३१ में सरदार भगत सिंह फांसी के तख्ते पर झूले थे। वे १९४७ की प्रतीक्षा करते रहे होंगे, क्योंकि वे गुलाम भारत में तो जन्म ग्रहण करने वाले नहीं ही थे।

हाँ, यदि अपने वचन के मुताबिक उन्होंने १९४७ में जन्म ग्रहण किया होगा तो अब वे अपने देश की स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण बनाये रखने का दृढ़ संकल्प लिये हुए किसी न किसी मोर्चे पर डटे होंगे। कहाँ? किस मोर्चे पर?

यह प्रश्न मत पूछें, क्योंकि भारत की स्वतंत्रता की अक्षुण्णता की रक्षा करने वाला हर बांका लड़ाका 'सरदार भगत सिंह' ही तो है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : आरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली ज़िला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक

ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल

फोर्ट, बम्बई – १

तार : सोडाकेम, बम्बई

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

शिलाओं, पेड़ों की छाल, जानवरों की खाल अथवा धातुओं के टुकड़ों की लिखावटें सभ्यता के उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमियानगर (बिहार)

मुद्रक—अखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स, सहारनपुर में मुद्रित-प्रकाशित।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

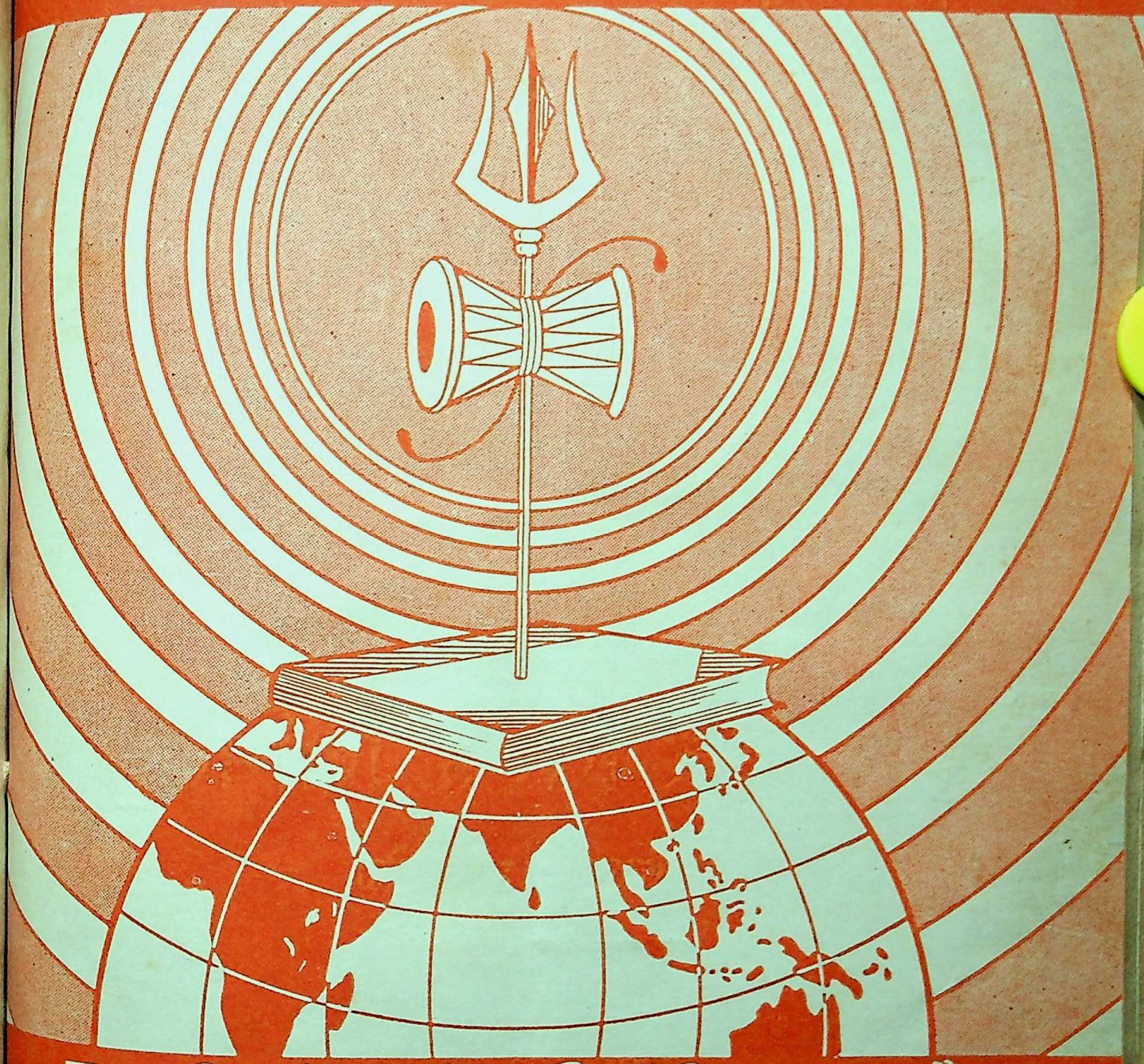

चाल दुनिया को जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
चाल दुनिया को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
जाने समझे पर राय बनाने के लिए मासिक आवश्यक है,

'नया जीवन' में

दैनिक, साप्ताहिक, मासिक की इन सभी विशेषताओं का समन्वय है।
अनेक पत्र पढ़ने वालों के लिए आवश्यक, न पढ़ने वालों के लिए अनिवार्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज़ के एक छोटे पुर्जे पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी।
अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है!

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज़ के बिना न
शास्त्र मिलते न साहित्य।
कागज़ हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवा निधि किदवई अपंग आश्रम

मूक वधिर विद्यालय : प्रद्युम्न नगर : सहारनपुर, उ. प्र.

जिन्हें कुछ लोग शायद परिवार और समाज का बोझ कहना चाहें, उन मूक-वधिर बालक-बालिकाओं को भी ८वीं कक्षा तक की पढ़ाई तथा दस्तकारी के रूप में सिलाई-कढ़ाई, लकड़ी का काम व मोमबत्ती निर्माण आदि सिखा कर जीवन में सकलतापूर्वक स्थापित करने का महत्वपूर्ण संस्थान, जिसमें छात्रावासों की भी सुन्दर व्यवस्था है।

शिलान्यास कर्ता : राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद
संस्थापक : श्री अजित प्रसाद जैन, भू० पू० केन्द्रीय खाद्य मन्त्री

विशेष जानकारी के लिये लिखें—

विशाल चंद जैन
(अध्यक्ष)

अखिलेश
(मन्त्री)

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !

रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है !

सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरी जानकारी

- महीने के अन्त में महीने का अङ्क प्रकाशित होता है। अगले महीने की ७ तारीख तक भी पिछले महीने का अंक न मिले, तो कार्ड लिखें।
- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य है पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और प्रत्येक रचना पर अपना पूरा पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से बुक पोस्ट द्वारा वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह चाह रखते भी प्यार-मान ही दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें, पर 'नयाजीवन' में अब आम पुस्तकों की समीक्षा नहीं होतीं। प्रकाशकों से विशिष्ट पुस्तकें ही भेजने की प्रार्थना है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में दोनों की सुविधा के लिए ग्राहक-संख्या लिखने की प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीजों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक—नया जीवन
सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

नया जीवन

देहातों और नगरों के लिए
विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

प्रधान संपादक
कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

संपादक—संचालक
अखिलेश

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का फालतू समय चैन और खुमारी में काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं!

जुलाई १९६६

स्वामी संस्थान

विकास लिमिटेड
सहारनपुर · उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

अता-पता

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं निराशा की निशा में ढूंढ कर दूंगा सवेरा

सारा सावन यों ही बीता

एक भाव

राष्ट्र-चिन्तन

समय और हम काण्ड : श्री जैनेन्द्र की गवाही में

तालस्ताय : एक जीवन-पद्धति

अमेरिकन चुनाव : जैसा मैंने देखा

बेदी : एक गहराई तक

नेताजी की महत्ता को उस दिन मैंने पूरी तरह समझा

प्रजातन्त्र की स्थिरता के लिये हम क्या करें ?

लन्दन के एक चिकित्सा केन्द्र में

संस्कारों की बुनियाद

अपने पढ़ने के कमरे में

चुम्बन और चाबुक

श्री सुरेश चन्द्र त्यागी
महाराजसिंह कालेज, सहारनपुर १७९

श्रीमती इन्द्रा गौड़, माधोनगर, सहारनपुर १८०

श्री राजकुमार गाबा १२/२०६१
खालापार, सहारनपुर १८०

सम्पादकीय १८१

प्रो० श्री देवेन्द्र दीपक
राजकीय डिग्री कालेज, जगदलपुर म. प्र. १८७

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' १८९

श्री वेद प्रकाश वटुक
विदेशी भाषा विभाग, कैलिफोर्निया १९०
स्टेट कालेज, हैवर्ड, कैलिफोर्निया ९४५४२

श्री वीरेनपाल
३३५, कालबादेवी रोड, बम्बई-२ १९६

श्री अता मोहम्मद खां 'शोला'
एस. डी. एम. सिविल लाइन्स, सहारनपुर २००

प्रो. सिद्धेश्वर प्रसाद, एम. पी.
५२, साउथ ऐवेन्यु, नई दिल्ली २०२

श्री धर्मचन्द सरावगी, एम. एल. सी.
८/१ एस्प्लेनेड रोड, कलकत्ता २०५

श्री जमना लाल जैन
सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी २०७

स्तम्भ २०९

श्री जगदीश चावला
के० २/१४२, देहरादून रोड, सहारनपुर २११

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं निराशा की निशा में ढूंढ कर दूंगा सबेरा

श्री सुरेश चन्द्र त्यागी, एम. ए.

गीत मैं लिखता नहीं हूँ रूप के और चांदनी के,
प्रेयसी की गोद में सुख से सिहरती यामिनी के।

ये विरह की अग्नि को उद्दीप्त भी करते नहीं हैं,
कल्पना के व्योम पर ये गीत पग धरते नहीं हैं;

आग है विद्रोह की इनमें, सुलगते छन्द हैं ये,
मुक्त हैं सब बन्धनों से, वायु-से स्वच्छन्द हैं ये;

सत्य की हुंकार हैं, प्रतिशोध हैं अन्याय का,
ये लिखे हैं भूलकर सब लोभ कंचन-कामिनी के।

घिर रहा यदि सँकटों के बीच प्यारा देश मेरा,
मैं निराशा की निशा में ढूँढ कर दूँगा सवेरा;

जागरण के समय मैं लोरी सुनाऊँगा नहीं,
जानता हूँ कल किसी को याद आऊँगा नहीं;

मैं न अपने धर्म से पर एक पग पीछे हटूँगा,
हैं सुधा का दान देते पुत्र वीणावादिनी के।

गीत मैं लिखता नहीं हूँ रूप के और चांदनी के,
प्रेयसी की गोद में सुख से सिहरती यामिनी के।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारा सावन यों ही बीता !

● श्रीमती इन्द्रा गौड़

ऊधौ सही नहीं जाती है अब सांवरिया की निठुराई, !

उनकी सुधि में डूबी-डूबी, जल भरने जमुना तट जाऊँ,
अपने में ही खोई-खोई, रीती गागर लौटा लाऊँ,
ऐसी बनी बावरी मैं तो, तन-मन की सब सुधि बिसराई।
ऊधौ सही नहीं जाती है अब सांवरिया की निठुराई !

मन के द्वारे अलख जगाने, जब विस्मृति वैरागिन आती,
स्मृति तब तब उस वैरागिन को, खाली हाथों ही लौटाती,
नयनों के घन घिर-घिर आए, सिसकी भर-भर रैन बिताई,
ऊधौ सही नहीं जाती है अब सांवरिया की निठुराई!

जब-जब मानस के पनघट पर, सुघियों की पनिहारिन आई,
तब-तब नयनों के घट अपने, अश्रु-सलिल से ही भर लाई,
सारा सावन यों ही बीता भूला पड़ा न कजरी गाई,
ऊधौ सही नहीं जाती है अब सांवरिया की निठुराई!

★

एक भाव

श्री राज कुमार गाबा

घर, आंगन, द्वार,
सब शांत,
दिशि-दिशि घिर आया
एकांत
काश, तुम होते मेरे पास !
लो, प्रतीक्षा में हुई पागल
आंखें, सुन रही हैं
निकट से आती हुई पदचाप !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

क : असंतोष के दो रूप

अप्रैल १९६५ के 'नया जीवन' में चीनी आक्रमण के समय भारतीय सेना की हार का विश्लेषण करते हुए मैंने लिखा था—"क्या यह हमारी कमज़ोरी का फल था? नहीं, यह हमारी सूझ और ज्ञान की कमी का फल था। चीन से हमारी सेना नहीं हारी, हमारा रण-कौशल हारा। इसे बिना झिझके मानने की जरूरत है। जब हमारी सेना ने तावांग कस्बा खाली किया, और सेलाबोमडीला में मोर्चा जमाया तो हम अच्छी हालत में थे। तावांग से आने के लिए जो घाटी है, उस पर हमारा कब्जा था और उस की बनावट ऐसी है कि हमारे थोड़े से बहुत भी चीनी रेले को बेकार कर सकते थे।

फिर क्या हुआ? हुआ यह कि चीन के दूर पहुंचने वाले पैदल दस्ते, जिन्हें फौजी भाषा में लौंग्स रेंज पेनीट्रेशन ग्रुप कहते हैं, तावान के बहुत सड़क और भूटान की सीमा के बीच वाले जंगलों-पहाड़ों को पार कर हमारी सेना के पीछे आ गए और उन्होंने रास्ते को काट भी दिया और अवरोधक, जिन्हें फौजी भाषा में रोड्स ब्लौक कहते हैं, खड़े कर दिये। इतना सब हुआ, पर हमारी सेना और उसके गुप्तचरों को पता भी न लगा। बाद में वह घबरा गई और डेढ़ अरब से ज्यादा रुपयों का फौजी सामान चीन के हाथ लगा।

पहली भूल तो यह हुई कि भेद लेने वाले दस्ते, जिन्हें फौजी भाषा में प्रोविंग पैट्रोल्स कहा जाता है, जंगलों में नहीं रखे जिनसे चीनी सेनाओं के आने का पता लगता। दूसरी बड़ी भूल यह हुई कि हमारी फौजों को चीनी फौजों पर टूट पड़ने का हुक्म नहीं मिला। बहुत दुखदायी बात यह है कि चीनी एक हजार से ज्यादा नहीं थे और भारतीय बारह हजार से कम नहीं थे। हिम्मत और सूझ से काम होता, तो एक भी चीनी सैनिक जिन्दा न बचता और लड़ाई का रुख ही बदल जाता। कमाल यह है कि जनरल स्टिलवेल की कमान में १९४३-४४ के युद्ध में जापान के मुकाबले पर जिन फौजियों ने ऐसे ही मौकों पर चमत्कार पूर्ण काम किये थे, उनकी शिक्षा भारत में ही हुई थी।

फिर सामान छोड़ने की क्या जरूरत थी? व्यवस्था पूर्वक पीछे हटा जा सकता था। १९४५ में जापानी फौजों ने इम्फाल पर तिकोना हमला किया था, तो जनरल कावेन ने फौजों को टिंडिभ से इम्फाल लौटने का हुक्म दिया था। जापान की फौजों ने रास्ते में रोड्स ब्लौक खड़े कर दिये थे, पर भारत की १७ वीं डिवीजन उन्हें तोड़कर इम्फाल लौट आई थी। चीनी फौजों द्वारा बोमडीला मार्ग पर खड़े किये रोड्स ब्लौकों को तोड़ने में हमारी फौजें क्यों झिझक गई?

सैनिक अफसरों के नेतृत्व की इस कमजोरी ने हमारे जवानों को गाजर मूली की तरह कटवा दिया। समय पर उन्हें सही आदेश, सही सामान और सही जानकारी देने में अफसर असफल रहे। बिना सामान के उन्हें अपरिचित स्थानों में बढ़ा दिया गया। फिर हवाई जहाजों से जो सामान फेंका गया, वह कुछ तो खन्दकों में गया, बाकी कलकत्ता में खुले आम बिका। अफसरों ने लाभ उठाया और युद्ध की लपटों से अपने को बचाकर सिपाहियों को मौत की और अपमान की भट्टी में बेदर्दी के साथ झोंक दिया। देश की जनता के लिए अभी तक यह छिपा हुआ रहस्य ही है कि इस गद्दारी में जिन अफसरों का हाथ था, वे किस की कठपुतली थे? भारत के किसी राजनीतिज्ञ की या दुश्मन की?

यह सचाई चाहे जितनी गहराई में छिपी हो, पर चीनी आक्रमण के बाद जिस का सेनाओं में दूर पार का भी सम्पर्क था, एक सचाई सूरज की तरह उनके सामने थी कि सेना के जवान अपने अफसरों के लिए गहरी नफरत से उफन रहे थे। उन के लिए सिपाहियों के मन आदर तो दूर, भयंकर विद्रोह से भरे हुए थे। मैंने उन दिनों ११६ सिपाहियों से बात चीत की थी। सब की बातें अलग अलग थी, पर एक भाव सब की बातों में समान था—"अब की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार फायरिंग का हुक्म मिले, तो पहले अफसर को मारेंगे फिर दुश्मन को।" मतलब यह कि सिपाही का दुश्मन नम्बर एक दुश्मन नहीं, अफसर था। अपनी बात कहूं मैं तो काँप उठा था सिपाही के उस असन्तोष को देखकर।

वह असंतोष कहाँ गया ? संतोष और प्यार में बदल गया। यह हमारे इतिहास की महत्वपूर्ण घटना है। दुख है कि टनों कागज काला करने वाले हमारे साधन-सम्पन्न पत्रकारों ने इसका अध्ययन नहीं किया। इस महत्वपूर्ण घटना के प्रेरक भारत के रक्षामन्त्री श्री यशवन्त सिंह चौहान थे और विधाता सेवा निवृत्त सेनाध्यक्ष श्री जयंत नाथ चौधरी। श्री चह्वाण ने बदनाम रक्षा मन्त्री श्री कृष्णा मेनन के पदच्युत होने पर रक्षामंत्री का पद जिस दिन संभाला उसी दिन चीन ने युद्ध बन्द करने की घोषणा की और वह बिना शर्त जीते हुए क्षेत्र से स्वयं पीछे हट गया।

साधारण व्यक्तित्व का आदमी भाग्य का यह उपहार पा, लापरवाह हो सकता था, पर चव्हाण इस से बचे और उन्होंने सबसे पहला काम यह किया कि अपने को सेना के अफसरों में घोल दिया। शिवाजी महाराज ने अपने कब्जे में आई दुश्मन की स्त्रियों को सम्मान के साथ उनके घर भेज दिया था। वे क्रूरतम दुश्मन के सन्नद्ध पहरे से सफाई के साथ निकल आए थे। उन्होंने दुश्मन को बहकावे में डालकर उधेड़ डाला था। वे महाराष्ट्र की संस्कृति के प्रतीक थे। हमारे चव्हाण उसी संस्कृति के उत्तम प्रतिनिधि हैं। गद्दार अफसरों के विरुद्ध सैनिकों में असंतोष था, पर निकम्में राजनीतिज्ञों के प्रति सेना के सर्वोच्च अफसरों में असंतोष था। यह असंतोष तीनों सेनाध्यक्षों के सम्मिलित त्यागपत्र में प्रगट हो चुका था और चीनी आक्रमण के समय फिर उभर आया था। बहुत-से फेर बदल करके चव्हाण ने इस असंतोष को पूर्ण संतोष में बदल दिया। इस संतोष का रूप यह था --"अब हमारे साथ कोई अन्याय नहीं हो सकता।"

इस संतोष से एक विचार का जन्म हुआ—'हमारे रहते किसी के साथ अन्याय न हो।' इस विचार की बागडोर स्थल सेनाध्यक्ष जनरल चौधरी ने सम्भालीं। उन्होंने अपने अफसरों को प्रबुद्ध किया कि वे अपने सैनिकों में घुल जाएँ और उन्हें कोरा न्याय ही नहीं, ममता भी दें। जनरल चौधरी कितनी बारीकियों तक गये, इसका अन्दाज़ इससे लगता है कि उन्होंने अफसरों से कहा कि वे अपने अधीन सैनिकों की भाषा सीख लें और उनके साथ पारिवारिक वातावरण में रहें। यदि किसी सैनिक के घर से कोई शुभ समाचार आता, तो उसका अफसर परिवार की तरह उसे बधाई देता और उसके सुख दुख में बराबर का भागीदार बनता। इस ममता का, अफसर सैनिक की आत्मीयता का पूरा और सही प्रदर्शन भारत-पाक युद्ध में हुआ। वहाँ अफसरों ने पीछे से सैनिकों को निर्देश नहीं दिये, वे सिपाहियों से आगे रहे और उन्होंने सिपाहियों से ज्यादा खतरे उठाए। भारत-पाक युद्ध में हमारे अफसरों की मृत्यु संख्या दूसरे युद्धों में अफसरों की मृत्यु संख्या से अधिक रही। पाकिस्तान के जहाँ ३३-३४ अफसर मरे, हमारे ८२ अफसर शहीद हुए। इस घटना ने हमारे सिपाहियों के असन्तोष को दूर ही नहीं किया, आदर से भर दिया। उस युद्ध के समय जनता ने भी सिपाहियों को भरपूर प्यार दिया, सहयोग दिया। इसने जनता और सेना में जो सद्भाव पैदा किया, वह हमारे राष्ट्रीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना थी।

युद्ध समाप्त हो गया, वातावरण सामान्य हुआ, तो सैनिकों को घर जाने के लिए छुट्टियाँ मिलनी शुरू हुई। कच्छ के युद्ध से भी पहले से छुट्टियाँ बन्द थीं और बीच में जिन्हें मिली भी थीं, स्थगित हो गई थीं। घर जाने की छुट्टी सैनिक की सबसे बड़ी खुशी है. फिर इस बार तो यह खुशी और भी गहरी थी। सैनिक देर में घर आया था और विजेता होकर आया था। वह घर आया कि असंतोष में फंस गया। यह गहरी निराशा की चोट से उपजा असंतोष था।

सैनिक ने देखा एक टीन की चादर के बिना घर में पानी आता है। वह रुपये जेब में डाले गाँव से शहर गया। टीन वाले दूकानदार से पता चला कि चादर परमिट से मिलेगी, वह टाउन राशनिंग आफिस गया और फार्म लेने में ही दिन बीत गया। फार्म लेकर शाम को घर आया, फिर दूसरे दिन शहर गया। दफ्तर में इस मेज से उस मेज पर उसका फार्म लुढ़कता रहा और बड़ी मुश्किल से उसे परमिट शाम तक मिला। तीसरे दिन वह दुकान पर गया। बनिये ने कह दिया-कल मिलेगी, आज नहीं है। घर लौटने पर किसी ने बताया कि निश्चित मूल्य से दो रुपये ज्यादा देते तो आज ही चादर मिल जाती। चौथे दिन भी बनिया सीधा न हुआ, पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो रुपये की बात कहने पर चादर मिल गई।

- सैनिक सोचता है जिन लोगों के लिए मैं मौत से मोर्चे पर जूझता हूं और जो इस लिए शान्ति से घरों में बैठे हुए हैं कि हम सैनिक खन्दकों की बे-आराम जिन्दगी गुजार रहे हैं, उन्होंने बड़ी मुश्किल से मिले मेरे आराम के तीन सप्ताह के चार दिन खराब कर दिये।
- फिर टीन की चादर ही तो नहीं हैं। पार्टी बन्दी में फ़ंसा ग्राम सभा का प्रधान, पंच या सरपंच सैनिक के बूढ़े बाप को तंग करता है। शहरी मकान मालिक उसकी पत्नि और बच्चों को घर से बाहर निकालने पर तुला हुआ है और. और भी इसी तरह की सौ बातें हैं।
- सब बातों का सार यह है कि जिस समाज ने भारत-पाक युद्ध के दिनों उस सैनिक को हर स्टेशन पर चाय पिलाई थी, खाना खिलाया था, माला पहनाई थी, उस की जय बोली थी और घायल होने पर अपनी बहू बेटियों से अस्पताल में सेवा कराई थी, उस समाज में आज सैनिक अपने को उपेक्षित देखता है।

इस स्थिति में उसमें अगर गहरा असन्तोष है, तो क्या यह अस्वाभाविक है? नहीं, यह स्वाभाविक है। उचित है, खतरनाक है और शासन के कर्णाधारों एवं देश के नागरिकों से ध्यान देने का तकाजा करता है कि वे सैनिक को विशिष्ट मान दें और उसके प्रति शिष्ट रहें।

किस नेहरूवाद के ?

कम्यूनिस्टों के चतुर वकील 'ब्लिट्ज' ने कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज की ६४ वीं वर्षगांठ पर उन्हें हार्दिक बधाई दी है। इस देश में ऐसा कोई नहीं, जो इस बधाई में शामिल होना पसन्द न करे पर यह बधाई जिस भाषा में दी गई है, वह देश की जनता के सामने कुछ पैने प्रश्न खड़ी करती है।

इस बधाई का मोटा शीर्षक है —'कामराज : नेहरूवाद के अकेले रक्षक'। इसका अर्थ हुआ कि नेहरू की एकलौती बेटी इंदिरा गांधी भी अब नेहरूवाद से दूर हट गई है और सिर्फ कामराज ही उसके संरक्षक रह गए हैं। इस राष्ट्रीय खोज के लिए 'ब्लिट्ज' को स्वर्णपदक और उसके ऐन्द्रजालिक सम्पादक को भारत रत्न की उपाधि मिलनी चाहिए। यह शानदार खोज पहला प्रश्न यह खड़ा करती है कि जब इंदिरा जी नेहरूवाद से हट गई हैं और कामराज के अकेले रह जाने से साफ है कि दूसरे नेता भी इन्दिरा जी के साथ हो गए हैं, तो महामहिम कामराज किन लोगों का विश्वास पाकर कांग्रेस के अध्यक्ष बने हुए हैं? प्रजातन्त्र का तरीका तो यही है कि साथियों का विश्वास खो देने पर पदाधिकारी त्यागपत्र दे देता है, तो क्या 'ब्लिट्ज' ने अपने प्यारे कामराज को यह परामर्श दिया है?

दूसरा और अहम सवाल यह है कि वह नेहरूवाद क्या है, जिसे और तो और, उनकी बेटी ने भी छोड़ दिया? धर्म का निर्णय सत्य के आधार पर होता है। हानि या लाभ, सफलता मिले या असफलता धर्म की कसौटी है सत्य कि कोई मनुष्य या सिद्धान्त सत्य को पकड़े रहा या नहीं? इसके विरुद्ध राजनीति की कसौटी है परिणाम कि फल क्या मिला? इस कसौटी पर हम तथाकथित नेहरूवाद को कसें और देखें कि १५ वर्षों के लम्बे समय में देश को उससे क्या मिला और तब कहें कि इसका नाम है नेहरूवाद :

- शानदार साइनबोर्ड और घटिया दुकान।
- ऊँचे-ऊँचे नारे और बोगस आचरण।
- टूटता फूटता कांग्रेस-संगठन।
- दुश्मनों से घिरा और दुश्मनों से अपमानित देश।
- खंडित दृष्टि, खंडित प्रक्रिया, खंडित आचरण।
- योजनापूर्वक भ्रष्टाचार में दीक्षित किये अधिकारी।
- अस्थिर सामाजिक जीवन।
- खूँखार भैंसों की तरह खुले आम लड़ते मन्त्री और नेता।
- एक पैर वाशिंगटन रोड पर और दूसरा मास्को रोड पर रखे चलती समाज व्यवस्था, जो सीधे चाँगकाई रोड पर पहुंच गई।
- समाजवाद की जय बोलते हुए लखपति से करोड़पति बने और कंगाल से कंकाल रह गये लोग।
- आसमान को छूती बिल्डिंगें और बरसात में अपनी छत की मरम्मत के लिए एक कट्टा सीमेंट को तरसते अध्यापक, लेखक और सैनिक।
- स्वार्थियों के हाथ में फँसी यूनियनें।
- ९० प्रतिशत असफल तीसरी पंचवर्षीय योजना।
- शराब और साहबी में फँसी भ्रष्ट देश सेवा।
- और इसी तरह की हजार बातें।

इतिहास का मजाक देखिए कि बाप के पापों का प्रायश्चित करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को उसने उनकी लाडली बेटी को उनकी गद्दी पर बैठा दिया। यह एक चुनौती थी और अगर इंदिरा जी ने यह स्वीकार करके कि पिछले वर्षों में वह काम नहीं हुआ, जो होना चाहिए था, उस चुनौती को स्वीकार कर लिया, तो उनकी तारीफ होनी चाहिए या निंदा? श्रीमती इन्दिरा जी के प्रधान मन्त्रित्व की सब से बड़ी सफलता ही यह है कि उन्होंने कोरे वादों और शाही पसन्दों को ठुकरा कर राष्ट्रहित को नम्बर एक स्थान पर प्रतिष्ठित करने का बीड़ा उठाया है। श्री कामराज अगर वादों-पसन्दों के खिलौनों से खेलना चाहते हैं, तो मद्रास में अपने घर खेल सकते हैं, ७ जन्तर मंतर रोड में इस खेल के कार्नीवाल को स्थान नहीं दिया जा सकता। अगर यही नेहरू-वाद है, तो वे अकेले हैं और अकेले ही रहेंगे। उनकी ६४वीं वर्षगांठ उन्हें मुबारक!

मन के भीतर क्या है?

जो लोग श्रीमती इंदिरा गांधी का या सरकार के वर्तमान रुख का विरोध कर रहे हैं, उनके मन के भीतर क्या है? इस विरोध में कुछ तो नारेबाज़ लोग हैं, जिनके लिए देश में कोई रचनात्मक काम करना सम्भव नहीं है, वे सिर्फ सरकार का विरोध कर सकते हैं। गाली देने के पक्ष में सबसे बड़ी सुविधाजनक बात यह है कि गाली देने के लिए कुछ सोचना नहीं पड़ता, यानी बिना जिम्मेदारी का खतरा उठाए गाली की दूकान चल सकती है और देश में ऐसी दूकान-दारों की कमी नहीं है।

दूसरे वे लोग हैं, जो देश को कम्यूनिस्ट डिक्टेटरी के शिकंजे में कसे देखना चाहते हैं। श्री कामराज और उनके कम्यूनिस्ट चेले जिसे नेहरूवाद कहते हैं, वह असल में नकली समाजवाद है और नकली समाजवाद देश को कम्यूनिस्ट बनाकर ही दम लेता है, यानी दम तोड़ता है। पिछले पाँच वर्षों में देश कम्यूनिस्ट डिक्टेटरी के लिए बहुत तेज़ी से तैयार हुआ है और श्रीमती इंदिरा गांधी ने इस तेज़ी पर एक ज़ोरदार चोट की है। देश को कम्यूनिस्ट देखने के लिए बेचैन लोग इससे हड़बड़ा गये हैं और हाय-हाय कर रहे हैं। उनके मन में जो बात है उसे वे कहते नहीं, पर वह बात यही है कि जब देश में कम्यूनिस्ट विस्फोट की सब तैयारियाँ पूरी हो चुकी थी, इंदिरा जी ने उसके पलीते में आग लगाने का काम न कर, उस पर पानी डालने का काम शुरू किया है!

ओछे आदमी ० ओछे काम

मान्य श्री चन्द्र भानु गुप्त से बहुतों का मतभेद है बहुत-सी बातों में, उनमें मैं भी एक हूं। पिछले दस वर्षों में उनके खिलाफ मुझ से अधिक कड़वी और कड़ी बातें किसी दूसरे ने नहीं कही, नहीं लिखी। मेरे द्वारा उनके विरुद्ध लिखे गये पन्नों को इकट्ठा कर छापा जाए, तो एक पाकेट बुक तैयार हो जाए। श्री सम्पूर्णानन्द जी के बाद श्री गुप्त जी के मुख्य मंत्री चुने जाने पर मैंने 'विकास' में पाँच पृष्ठ का जो अग्रलेख लिखा था, उसे अंग्रेजी के एक सम्पादक ने 'हाटैस्ट लीडिंग आर्टीकल इन हिन्दी जर्नलिज्म' (हिन्दी पत्रकारिता में सबसे गर्म अग्रलेख) कहा था।

बहुत लोगों ने मेरे विरोध को समाप्त करने के प्रयत्न किये, पर मैंने हमेशा यही कहा कि मेरा उनका विरोध नहीं, चिन्तन और कर्म की दिशा और कर्म की प्रक्रिया में मतभेद है और मतभेद रखने का और उसे प्रकट करने का अधिकार प्रजातन्त्र सबको देता है। इसके बाहर भी जब कभी मैं गुप्ता जी से मिला, तो ठीक उसी तरह, जैसे छोटा भाई बड़े भाई से मिलता है और बावजूद अपने गले के तीखेपन के, वे भी मुझसे उसी ढंग से मिले। ठीक भी है, प्रजातन्त्र मतभेद की इजाजत देता है, अशिष्टता की और ओछेपन की नहीं देता।

मान्य श्री चन्द्र भानु गुप्त की ६५वीं वर्षगाँठ के अवसर पर जहां उन्हें साढ़े तितालिस लाख रुपयों की थैली एक समारोह में भेंट की गई, तहजीब तकल्लुफ की नगरी लखनऊ में एक बहुत ओछा काम हुआ और जिस ढंग पर यह हुआ, उसे जानकर कहना पड़ता है कि यह ओछे आदमियों द्वारा ओछा काम हुआ। कॉफी हाउस के पीछे एक शामियाना लगाया गया और उसमें कुछ लोग इकट्ठे हुए। तब यहाँ एक गधा लाया गया, जिस पर सफेद खादी की झूल पड़ी थी और जो गाँधी कैप ओढ़े हुए था। झूल पर तिरंगी गोट लगी थी और झूल पर लिखा था—जन्मदिन मुबारक।

गधे का नाम भानुचन्द्र प्रकट घोषित किया गया और उसे ६५ पैसों की थैली भेंट की गई। बैंड भी बजा और मोमबत्तियाँ जलाकर केक भी काटा गया। फोटो लिया गया और यह बाहर छपा भी। स्पष्ट है कि यह मान्य श्री चन्द्र भानु गुप्त की वर्षगाँठ का मजाक उड़ाया गया। हँसी मजाक का भी जीवन में ऊंचा स्थान है और प्रजा-तन्त्र में सबको उसकी स्वतन्त्रता है, पर हम यह न भूलें कि शिष्टता की,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की शर्त से हम सब बंधे प्रजातन्त्र का जीवन सूत्र ही है कि हरेक नागरिक को सब कहने और करने की स्वतन्त्रता पर हरेक नागरिक विवेक पूर्वक और अनुशासन के साथ सब करे।

३१ दिसम्बर १९४६ की बात गाँधी जी नोआखाली की कर रहे थे। मनुबहन ने कहा तक सुहरावर्दी जैसे लोग हैं, तक झूठ से भरे वातावरण में कैसे काम कर सकेंगे ?"

सुनते ही गाँधी जी उफन पड़े तुम सुहरावर्दी कैसे कह सकती ? सुहरावर्दी साहब कहना हिए। वे कैसे भी हों ××× तुम शत्र में बड़े हैं। इस प्रकार की हमारी प्रजा में बहुत पाई ती है। जब तक हम में विवेक की कमी होगी, तब तक हम ड़े हुए ही रहेंगे। ×××भाषा में टता और विनय तो कभी ना ही नहीं चाहिए। इस प्रकार व हम में साधारण बन गई है र शायद ही कोई इस पर ध्यान ता है, मगर मैं तो भाषा में ष्टता आ जाए, तो उसे भी म रूप में हिंसा कहता हूं। ×× जो हम से बड़े या बुजुर्ग हैं, उनके सम्मान पूर्ण भाषा ही नी चाहिए। जब प्रत्येक रतवासी को ऐसी आदत पड़ेगी, तभी हमारे देश का, जो ड़ा हुआ माना जाता है उद्धार गा।"

गाँधी जी बहुत कम बोलते थे, कितना लम्बा भाषण दिया होंने ? और वहाँ तो सिर्फ भाषा ही अशिष्टता थी, पर यहाँ तो वहार की अशिष्टता का प्रश्न है। स्चय ही जिन्होंने यह आयोजन किया, जो उसमें सम्मिलित हुए, सुन कर जिन्होंने इसका विरोध नहीं किया, या इससे खुश हुए और जिन्होंने इसे पत्रों में उछाला, उन्होंने प्रजातंत्र की शोभा को लांछित किया, उसकी मर्यादा को घटाया, अपनी मानसिक असंस्कृति की गन्दगी को सार्वजनिक जीवन में बखेरा और मान्य श्री चन्द्रभानु गुप्त को नहीं, अपने को ही समाज के समझदारों की नजरों में हल्का कर अपना मोल घटाया। हम सब मर्यादा का महत्व समझें।

श्री धर्मवीर : एक प्रतीक: एक प्रश्न

श्री धर्मवीर पंजाब के गवर्नर क्या हुए, एक चमत्कार ही हो गया। यह चमत्कार है चुस्त प्रशासन का, भ्रष्टाचार-निरोध का और जनता की सुरक्षा का। ऐसा लग रहा था कि समाज विरोधी तत्व इतने शक्तिशाली हो गए हैं कि वे अब सरकार के बस में नहीं आ सकते। इसे ही यों भी कहा जाता था कि आज का प्रशासन इतना निकम्मा हो चुका है कि वह दुष्टों का दमन कर ही नहीं सकता, पर श्री धर्मवीर ने तीन सप्ताह में ही इन दोनों बातों को झूठ साबित कर दिया है। उन्होंने तलाशियों और गिरफ्तारियों का ऐसा व्यवस्थित क्रम बैठाया कि पंजाब व्यापार मंडल के सभापति श्री तुलसीदास जेटवानी ने उनसे प्रार्थना की है कि वे १८ दिन के लिए अपना अभियान बंद कर दें। इस समय में सम्मेलन बुलाकर हम व्यापारियों से शुद्ध आचरण की शपथ लेंगे। इसके बाद भी कोई चोर बाजारी, जमाखोरी और मुनाफाखोरी करेगा, तो आप उसके विरुद्ध सख्त कार्यवाही करने में स्वतन्त्र होंगे। इस बारे में अत्यन्त महत्वपूर्ण बात यह है कि व्यापार मंडल के अध्यक्ष ने श्री धर्मवीर के कार्य को धर्मयुद्ध कहा है। इस स्थिति में जनता के मन में इस कार्य के प्रति कैसी भावना होगी, यह स्पष्ट है। सचाई यह है कि श्री धर्मवीर पंजाबी जनता की लोकचर्चा के हीरो हो रहे हैं इस समय।

इस प्रकार श्री धर्मवीर शुद्ध-उद्बुद्ध प्रशासन के प्रतीक होगये हैं, पर यह प्रतीक एक प्रश्न को भी जन्म देता है; जो पैना है और उत्तर का पठानी तकाजा करता है। प्रश्न यह है कि जो काम श्री धर्मवीर कर रहे हैं, वही निर्वाचित मंत्री मंडल के सदस्य क्यों नहीं कर सके ? सब जानते हैं कि श्री धर्मवीर लाठी लेकर कहीं नहीं गए, सब कार्य सरकारी अफसर ही कर रहे हैं, तो फिर यही काम इन से मंत्रियों ने क्यों नहीं लिया ? बिना किसी बहस के हमारे राष्ट्रीय जीवन का सबसे बड़ा एक सत्य यह है कि देश इस समय पद और पैसे की लिप्सा में लीन नाकारा और आवारा राजनीतिज्ञों के कारण त्रस्त है और हमें एक नई प्रशासन शैली की आवश्यकता है, जिसमें व्यक्ति की स्वतन्त्रता का सम्मान करते हुए भी व्यक्ति की समाज विरोधी मनमानी का दमन करने की पूर्ण स्वतन्त्रता हो।

देश विभाजन के पहले और बाद देश भर में साम्प्रदायिक दंगे हुए। उत्तर प्रदेश में उस समय पुलिस विभाग के मन्त्री श्री जगन प्रसाद रावत थे, उनके नगर आगरा में भी दंगा हो गया। समय की बात, वे तब आगरा में ही थे। उन्होंने जिलाधीश और पुलिस कप्तान को बुलाकर कहा—"मेरे सब अधिकार आपको प्राप्त हैं, पर मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३ घंटे के अन्दर दंगा समाप्त होने का समाचार सुनना चाहता हूं।" दोनों चल पड़े, तो उन्होंने उन्हें वापस बुलाकर कहा-"आप जो मुनासिब समझें करें, पर एक बात मेरी जरूर मानें। वह बात यह है कि आप कुछ लोगों को गिरफ्तार करेंगे ही। अब आप के पास अगर कोई यह सिफारिश लेकर आये कि अमुक आदमी को छोड़ दो, तो आप उसे अवश्य गिरफ्तार कर लें।"

वे चले गये। दंगा ढाई घंटे में समाप्त हो गया, पर ५० सिफारिशी भी हवालात में बन्द हो गए, इनमें काफी नेता भी थे। बात पंत जी तक गई, पर रावत जी ने जिम्मेदारी अपने सिर पर ली और अधिकारियों का समर्थन किया। श्री धर्मवीर की पंजाब में सफलता का एक रहस्य यह भी है कि अधिकारी यह अनुभव करते हैं कि उन्हें सत्कर्मों के लिए नेताओं की लताड़ नहीं खानी पड़ेगी। सच यह है कि इन नाकारा और आवारा राजनीतिज्ञों ने अधिकारियों को भ्रष्ट भी किया है और नष्ट भी। श्री धर्मवीर के कार्य से सिद्ध है कि यह भ्रष्टता और नष्टता अभी इस दर्जे तक नहीं पहुंची कि उद्धार ही न हो सके। वही बात कि देश को एक नई प्रशासन शैली की आवश्यकता है, जिसमें व्यक्ति की स्वतन्त्रता का सम्मान करते हुए भी व्यक्ति की समाज विरोधी मनमानी का दमन करने की पूर्ण स्वतन्त्रता हो।

नया हंगामा : दो बड़े पाठ

लोक सभा और राज्य सभा के अधिवेशन आरम्भ होते ही २५ जुलाई १९६६ को दोनों में से एक हंगामा हुआ, उससे दो बड़े पाठ मिलते हैं। श्री भूतलिङ्गम भारत सरकार के एक अत्यन्त योग्य सचिव हैं। पहले वे लोहा [illegible] विभाग के सचिव थे, अब वित्त सचिव हैं। संसद की लोक लेखा समिति ने अपनी रिपोर्ट में उन पर यह अभियोग लगाया है कि उन्होंने एक फर्म को बिना यह जांच किये कि उसे कितना सामान निर्यात करना है, निर्यात के भारी लाइसैंस दिये। सरकार का कहना है कि भूतलिंगम का नहीं, इसमें निदेशालय का दोष है। भूतलिंगम ने उस दोष को दूर करने का ही काम किया था। अपना निर्णय सरकार ने लोक लेखा समिति को भेज दिया है और नियमानुसार वह उसकी पुनर्निरीक्षण रिपोर्ट की प्रतीक्षा कर रही है।

१९ मई १९६६ को भी इस प्रश्न पर बहस हुई थी और सदन के नेता श्री छागला ने सदस्यों की भावना पर ध्यान देने का आश्वासन दिया था पर इसी बीच सरकार ने श्री भूतलिंगम को ब्रसेल्स में पदोन्नति देकर राजदूत नियुक्त कर दिया है। राज्य सभा में इस पर विभिन्न दलों के १०७ सदस्यों ने ध्यानाकर्षण प्रस्ताव पेश किया। विधान सभाओं के इतिहास में यह पहला अवसर था कि किसी ध्यानाकर्षण प्रस्ताव पर इतने दलों के इतने अधिक सदस्य एकमत हुए हों। सरकार इस पर झुक गई और उसने वचन दिया कि लोक लेखा समिति ने श्री भूतलिंगम को सर्वथा निर्दोष घोषित न किया, तो भूतलिंगम की पदोन्नति और नई नियुक्ति न होगी।

लोक सभा में हंगामा इस बात पर हुआ कि पहले सरकार की आर्थिक नीति पर बहस हो या अविश्वास प्रस्ताव पर। सरकार आर्थिक नीति की बहस पर अड़ी हुई थी, पर साम्यवादी और संयुक्त समाजवादी सदस्यों ने काम [illegible] असम्भव कर दिया। दोनों दलों [illegible] कोई २५ सदस्य खड़े होकर [illegible] गुल करने लगे और वित्तमन्त्री [illegible] भाषण देना असम्भव कर दिया [illegible] अध्यक्ष ने श्री एस. एम. बनर्जी [illegible] बाहर जाने का आदेश दिया, पर [illegible] नहीं गए। उनके साथियों ने [illegible] दिया—"चाहे सदन में गोली [illegible] जाये, हम इन्हें बाहर न जाने देंगे [illegible] पूरा दिन इसी हुल्लड़ में गया [illegible] दूसरे दिन सरकार ने आरम्भ में [illegible] आर्थिक नीति से पहले अविश्वास [illegible] प्रस्ताव पर बहस कराना [illegible] लिया।

हंगामों का नया पाठ यह [illegible] अब अपनी बात बलपूर्वक मनवा[illegible] की जो मनोवृत्ति देश भर में उ[illegible] उठी है, वह संसद में भी पहुंच [illegible] है और सरकार की बात मा[illegible] जाए, इसके लिए सरकार को [illegible] और बाहर के अपने तरीकों [illegible] सुधार करना पड़ेगा। सरकार [illegible] बात माननी चाहिए, यह बात [illegible] तो भय से उत्पन्न होती है या आ[illegible] से। कांग्रेस सरकार के प्रति [illegible] उसके नेताओं के प्रति जनता [illegible] कण भर भी आदर नहीं है [illegible] उसका भय भी करीब करीब समा[illegible] हो गया है। कांग्रेस और कांग्रे[illegible] सरकार अपने में क्रांति करके [illegible] अगले ५ साल टिक सकती है [illegible] ऐसा न हो, तो वह तो डूबेगी [illegible] हमारे प्रजातन्त्र को भी ले डूबेगी [illegible] इसी पाठ का दूसरा भाग यह है [illegible] विरोधी दलों के नेताओं ने प्र[illegible] ताँत्रिक शालीनता न अपनाई, [illegible] वे उस प्रजातन्त्र को डुबाने के स[illegible] बड़े भागीदार होंगे, जिसके सह[illegible] वे ओछे हुल्लड़ करने के बाद [illegible] मक्खन टोस्ट से इन्टरवल मना[illegible] हैं और शान से रहते हैं।

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी की नई पीढ़ी के श्रेष्ठ समीक्षक और सुकवि प्राध्यापक श्री देवेन्द्र दीपक के विचार 'समय और हम कांड' पर हम दे रहे हैं। दीपक जी ने इस प्रश्न को एक नया और प्रामाणिक आधार दिया है, जिस से इस प्रश्न का महत्व नैतिक दृष्टि से और भी बढ़ गया है।

अगले अंक में हम इस प्रश्न पर कुछ और सामग्री प्रकाशित करेंगे। आशा है तब तक जैनेन्द्र जी का वक्तव्य भी मिल जाएगा और पाठक अपनी सम्मति निर्धारित करने की स्थिति में होंगे।

'समय और हम' कांड ० श्री जैनेन्द्र की गवाही में

प्रोफेसर श्री देवेन्द्र दीपक, एम. ए.

श्री वीरेन्द्र कुमार गुप्त नामक तरुण ने छह महीने तक दो-तीन घंटे प्रतिदिन खर्च कर अहिंसा, सत्य, संस्कृति और सर्वोदय के देश-प्रसिद्ध व्याख्याकार श्री जैनेन्द्र कुमार से एक लम्बी इण्टरव्यू ली। फिर अगले छह महीने लगातार मेहनत कर उन प्रश्नों को विषय-वार बाँटा और उन पर एक अत्यन्त गम्भीर भूमिका लिखी। इस प्रकार एक वर्ष जुटे रहकर उन्होंने बात-चीत को एक महत्वपूर्ण पुस्तक का रूप दिया।

आचार्य विनोबा भावे द्वारा पोषित सर्व सेवा संघ प्रकाशन काशी ने यह पुस्तक प्रकाशित की और ३६०० रुपये रायल्टी के श्री जैनेन्द्र कुमार को दिये। आपसी निर्णय के अनुसार श्री जैनेन्द्र कुमार ने उसी प्रेस में पुस्तक की २००० प्रतियों का एक राज संस्करण भी अपने पूर्वोदय प्रकाशन के लिये साथ ही छपा लिया। एक प्रति का दाम रखा २० रुपये, यानी इस संस्करण का ४०००० रुपये। इस पुस्तक का कापी राइट बिना वीरेन्द्र जी के परामर्श के श्री जैनेन्द्र कुमार के नाम होगया और वीरेन्द्र जो को पुस्तक का सम्पादक न मान कर सिर्फ छापा गया प्रश्नकर्त्ता श्री वीरेन्द्र कुमार गुप्त। वीरेन्द्र जी के बार बार कहने पर भी श्री जैनेन्द्र कुमार उन्हें एक प्रतिशत भी रायल्टी देने को तैयार नहीं हुए। यह है वीरेन्द्र गुप्त द्वारा प्रस्तुत 'समय और हम काण्ड' की संक्षिप्त रूप रेखा।

पढ़ कर बड़ा अजीब-सा लगता है और एक सांस्कृतिक विचार के रूप में श्री जैनेन्द्र कुमार के प्रति वर्षों पुरानी जो साधु जैसी श्रद्धा है वह चाहती है कि यह काण्ड इस तरह न हो, इसका कोई और रूप हो, जिससे वह श्रद्धा टुकड़े-टुकड़े होने से बच जाए; क्योंकि अगर इस काण्ड का यही रूप हो तो, तो संस्कृत की वह पुरानी कहावतें वाणी को मूक कर देंगी कि 'यत्र साध्वीनामियं गति स्तत्र का कथा वारांगनानाम्' यानी जहां पतिव्रताओं का यह हाल है, वहाँ वेश्याओं की बात करना ही व्यर्थ है! दूसरे शब्दों में यदि समर्थ आदर्शवादियों की असमर्थ साहित्यकारों के प्रति यह वृत्ति है तो पूंजी–पशु प्रकाशकों की अन्याय-गाथा हम किस मुंह से गायेंगे?

'नया जीवन' के इस अंक की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छपाई लगभग समाप्त होने पर मैंने प्रधान सम्पादक से पूछा—"क्या श्री जैनेन्द्र जी ने इस काण्ड पर कोई वक्तव्य भेजा है ?" उत्तर मिला—"भाई जैनेन्द्र जी को और उनके पुत्र श्री प्रदीप कुमार को रजिस्टर्ड पत्रों द्वारा वक्तव्य भेजने के लिये लिखा था, पर अभी उत्तर नहीं मिला। सम्भव है वे यात्रा पर हों।" इस उत्तर से मुझे सान्त्वना मिली और जैनेन्द्र जी के प्रति मेरी श्रद्धा को अगले अंक की प्रतीक्षा का सहारा मिला। बात यह है कि वीरेन्द्र जी के वक्तव्य में जैनेन्द्र जी के जिस व्यवहार की चर्चा है, वह व्यवहार अनुचित है, इस पर जैनेन्द्र जी की गवाही उनके साहित्य में ही मौजूद है, इसलिये वैसा व्यवहार यदि वे स्वयं करते हैं, तो फिर न्याय-औचित्य-मर्यादा को कहीं टिकने का स्थान ही नहीं रहता !

जैनेन्द्र जी की पुस्तकों मे उनकी सूक्तियों का संग्रह श्री हर्षचन्द्र ने किया है। इस संग्रह का नाम है 'सूक्ति-संचयन'। इस पुस्तक के टाइटिल पेज पर हर्षचन्द्र नाम उसी तरह छपा है, जैसे लेखकों का छपता है। भीतर छपा है संकलनकर्ता हर्षचन्द्र। इस पुस्तक की भूमिका पूज्य काका कालेलकर ने लिखी है। उसमें उन्होंने कहा है:—

> 'प्रस्तुत पुस्तक जैनेन्द्र जी के वाङमय से चुनी हुई उनकी सूक्तियों का संग्रह अथवा संचयन है। इसमें का हर एक वचन जैनेन्द्र जी का होते हुए भी, मैं कहूंगा, यह पुस्तक जैनेन्द्र जी की नहीं है। संचयनकार उनके शिष्य की है।
>
> मेरा दृढ़ अभिप्राय है कि वचनों का संग्रह एक मौलिक चीज बनती है, जिसके पीछे केवल मूल ग्रन्थकार का ही नहीं, किन्तु संचयनकार का व्यक्तित्व प्रकट होता है। आप किसी जंगल में घूमते घूमते वनस्पति का निरीक्षण कीजिए। वहाँ वन देवी स्वयं स्वच्छन्द विहार करती आपको दर्शन देगी, आप से बातें भी करेगी, आप अगर जीवन रसिक और अनुभव समृद्ध होंगे, तो वन देवी प्रसन्न होकर अभ्यर्थना भी करेगी, किंतु प्राकृतिक वनशोभा को छोड़कर अगर आप किसी मनुष्य निर्मित उपवन अथवा उद्यान में गए तो आपको वनस्पति के दर्शन का आनन्द तो मिलेगा, लेकिन वहाँ वनदेवी की आरण्यक संस्कृति नहीं मिलेगी। उद्यान में आपका आतिथ्य वनदेवी की ओर से नहीं होगा, किंतु उद्यान की रचना करने वाले रसिक मानव का होगा। आप अभिनन्दन करेंगे, तो उस प्रकृति माता का नहीं, किंतु उद्यान के संयोजक का, फिर चाहे वह मालिक हो या माली। इस से भी आगे बगीचे में न जाते हुए अगर आपने मांली का बनाया हुआ गुलदस्ता हाथ में ले लिया, तो उसमें प्रधान उपस्थिति होगी पौधों पर से फूल तोड़ने वाले और उनकी पसंदगी और रचना करने वाले मालाकार की।
>
> इसलिए कहता हूं कि संचयन की खूबी, उसकी जवाबदारी और उसका श्रेय मूल ग्रन्थकार का नहीं, वचनकार का नहीं, किन्तु संचयन और रचना करने वाले रसिक मालाकार का ही होगा।"

हर्षचन्द्र ने जैनेन्द्र जी की उन सूक्तियों का संग्रह किया है जो उनकी पुस्तकों में पहले से छपी हुई हैं, पर 'समय और हम' में तो जैनेन्द्र जी की वे सूक्तियाँ हैं जिन्हें वीरेन्द्र जी ने अपने प्रश्नोंकी और अपनी श्रद्धामय उपस्थिति की प्रेरणा लेकर जैनेन्द्र जी से कहलाया है। इस स्थिति में समय और हम की रचना में उनका महत्व तो असाधारण है ही, इससे जैनेन्द्र जी कैसे इंकार कर सकते हैं?

इसी भूमिका में पूज्य काका जी साफ कहते हैं—

"थोड़ा विषयान्तर करके मैं कहूंगा कि ऐसे वचन-संग्रह को अगर किसी साहित्य परिषद की ओर से इनाम या पुरस्कार मिला तो आधे से ज्यादा हिस्सा संग्रह-रचनाकार को मिलना चाहिए। मुझे पूरा विश्वास है कि ग्रन्थकार ऐसे बटवारे के लिए तुरंत और सहज राजी होगा।"

यह 'सूक्ति संचयन' इस भूमिका के साथ स्वयं जैनेन्द्र जी के अपने पूर्वोदय प्रकाशन में प्रकाशित हुआ है। इसका साफ अर्थ है कि काका जी के इन विचारों को जैनेन्द्र जी और उनके पुत्र प्रदीप कुमार जी का समर्थन और स्वीकृति प्राप्त है। इस स्थिति में 'समय और हम' के मामले में जैनेन्द्र जी तो स्वयं वीरेन्द्र जी की गवाही में खड़े हैं, वे उनकी स्थापना का विरोध कहाँ करते हैं ? इस प्रश्न पर मेरे जैसे जाने कितने जैनेन्द्र-भक्तों की श्रद्धा टूटने के खतरे में कम्पमान है। मैं विश्वास करता हूं कि जैनेन्द्र जी इस खतरे को दूर करने में समर्थ होंगे। ✱

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

ताल्स्ताय; एक जीवन-पद्धति

मेरी धर्म पुत्री कुमारी डेज़ी बालीवर कहीं जाने के लिए एक दिन घर से चली। उसे जहाँ जाना था उस स्थान का नाम तो उसे मालूम था, पर पता सिर्फ इतना ही कि वह स्थान आर्य कन्या पाठशाला के पास है। रिक्शा वाले को उसने यही पता बताया, तो रिक्शा वाले ने कहा—"हाँ हाँ, मुझे मालूम है।"

वह रिक्शा में बैठ गई, पर रिक्शा चली तो चलती ही रही—दूर, बहुत दूर! जानकारी यह थी कि आर्यकन्या पाठशाला घर से ज्यादा दूर नहीं है, पर रिक्शा तो शहर पार कर जंगल में आगई। डेजी का मन आशंका से भर गया और उसने डाटकर कहा—"कहाँ जा रहे हो तुम—तुम्हें कुछ पता भी है?" पूरे आत्म विश्वास के साथ रिक्शा वाले ने कहा—"बीबी जी, हम रोज जाते हैं वहाँ, कोई आज पहली बार तो नहीं जा रहे।" और थोड़ी देर में उसने एक संस्था के सामने रिक्शा रोकदी—"यह लीजिए, आ गई आप की पाठशाला।"

पाठशाला सामने ही थी, पर डेजी ने पढ़ा, वह आर्यकन्या पाठशाला नहीं, शिशु भारती थी। रिक्शावाले के झूठे आत्मविश्वास पर उसे गुस्सा आया और उसने उसे डांटा, तो अपने बचाव में उसने ढाल लगाई—"बीबी जी, आपने पाठशाला कहा था, आप आर्य पाठशाला कहतीं तो मैं इतनी दूर क्यों आता? कोई बात नहीं, मैं आपको अब पहुंचा देता हूं।"

और वह तेज़ी से पैर चलाकर डेज़ी को एक दूसरी पाठशाला के सामने ले आया। 'लीजिए यह है आपकी पाठशाला।' डेजी ने बोर्ड पढ़ा। यह आर्यकन्या पाठशाला नहीं, हिंदू कन्या पाठशाला थी। घड़ी देखी तो वह लेट हो गई थी और समय से न पहुंचने पर उसे अध्यापिका से ताड़ना—अवमानना पाने का भय था।

डेज़ी अस्त व्यस्त हो गई। उसका भोला मन रुआंसा हो उठा, पर तभी एक परिचित वहां आ निकले और उन्होंने उसे ठीक जगह पर पहुंचा दिया। इस घटना में उस परिचित का जो स्थान है, विचारों की यात्रा में युग युगों से दिग्भ्रम में धक्के खाते मानव के जीवन में वही स्थान ताल्स्ताय का है। हम इसे न समझें तो उनके साहित्य के लाख पारायण करें ताल्स्ताय के व्यक्तित्व को नहीं समझ सकते।

संसार विकास शील है, पर मनुष्य का यह विचार आदिकालीन है कि उसे अच्छा जीवन प्राप्त हो। उसका जीवन अच्छा हो। दूसरे शब्दों में हर आदमी अच्छा आदमी बनना चाहता है। आदमी की इसी भावना के गर्भ से संस्कृति का जन्म हुआ, इसी से सभ्यता का, इसी से धर्म का और इसी से ईश्वर का।

संस्कृति ने मनुष्य को अच्छा बनाने की प्रेरणा दी। इस प्रेरणा ने उसे पशु से अपनी भिन्नता-श्रेष्ठता का बोध दिया और वह अच्छा जीवन प्राप्त करने की यात्रा पर निकल पड़ा। सभ्यता ने उसे बाहरी रूप से श्रेष्ठता दी, मनुष्य मनुष्य के बीच व्यवहार की एक पद्धति दी, पर इससे उसका काम न चला, क्योंकि उसे तो जीवन-पद्धति की खोज थी।

तब धर्म का उदय हुआ। हरेक धर्म प्रवर्तक ने अपने अनुभव के अनुसार एक जीवन पद्धति बनाई और उसे एक धर्म का रूप दिया, पर कोई भी धर्म मानव मात्र तक न पहुंच पाया और एक घेरा बनाकर रह गया। फिर हर धर्म युग की परिस्थितियों और प्रवर्तक की अनुभूतियों से जड़ा हुआ था। युग की परिस्थितियां बदलीं और अनुयायियों का अनुभूति स्तर प्रवर्तक के अनुभूतिस्तर तक न पहुंच पाया। इन दो कारणों से धर्म जड़ होता रहा और नया प्रवर्तक नये धर्म की घोषणा करता रहा।

इस तरह संसार में अनेक धर्म हो गए, अनेक जीवन पद्धतियां हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई। हरेक के अनुयायियों ने अपनी पद्धति की श्रेष्ठता स्वीकार की, पर वे यहीं नहीं रुके, उन्होंने दूसरी पद्धति की व्यर्थता-भ्रष्टता की भी घोषणा की और इस तरह अच्छे जीवन का अभिलाषी मानव अच्छे जीवन की पद्धतियों के इस हंगामे में फंस गया।

इस हंगामे के माया-जाल से मानव को निकालने के जो प्रयत्न हुए, उनसे यह हंगामा भयंकर खून खच्चर से रंग गया, क्योंकि हरेक शक्तिशाली ने बलपूर्वक अपनी ही जीवन-पद्धति सबसे मनवाने की कोशिस की। फलस्वरूप रोमन कैथालिकों ने प्रोटैस्टैंटों के खून की होली खेली, तो शैव वैष्णवों ने भी कसर न छोड़ी और इस तरह मनुष्य की स्थिति यह हो गई कि अच्छे जीवन की मंजिल तक पहुंचने के लिए उसके पास कोई रास्ता ही न रहा, क्योंकि रास्ते ही रास्ते हो गए और रास्ते क्या हो गए, रास्ते ही मंजिल होने का दावा करने लगे।

इसी परिस्थिति में अतीत के विचारक ने भारत में गाया था—श्रुतया विभिन्नाः स्मृतया विभिन्ना-नैको मुनिर्यस्यवचः प्रमाणम्—वेद अलग अलग हैं, स्मृतियों में विभेद है और कोई ऐसा मुनि नहीं, जिसकी बात सबके लिए प्रमाण-स्वरूप हो।

कृष्ण ने इस हंगामें में एक राह निकाली—निष्काम कर्म। इसे भी अनुयाइयों ने पोथे लिख कर एक नया हंगामा बना दिया, नहीं तो इसका सादा अर्थ था कि सामने फैले रास्तों में से चाहे जिस पर चल पड़ो, पर चलो ईमानदारी के साथ—लिप्सा से बचकर; बस तुम्हारी व्यक्तिगत ईमानदारी तुम्हें सही स्थान पर पहुंचा देगी। इस तरह का यह पहला प्रयोग था। रास्तों के हंगामे के इतिहास में इस प्रयोग में कृष्ण के महान व्यक्तित्व के दोनों गुण-कवित्व और दार्शनिकता समाए हुए थे। असल में इस प्रयोग की पृष्ठ भूमि ही यह थी कि रास्ते बहुत थे, रास्ता पूछने वाले बहुत थे, पर एक ही रास्ता बताना सम्भव न था। इस स्थिति में मानसिक संतुलन से पूरी जाति-नेशन के डूब जाने का-बिखर जाने का खतरा था। आज की भाषा में कृष्ण का प्रयोग मानवता को 'फ्रस्ट्रेशन' से बचाने का प्रयोग था और इसने बहुत दिनों तक बहुत बड़ा काम किया।

तब आए बुद्ध; मानव की मानसिक क्रांति के अग्रदूत। उनकी निर्वाण यात्रा के समय शिष्यों ने पूछा—"महाराज आपके बाद हमारा पथ प्रदर्शन कौन करेगा?"

बुद्ध ने कहा—अप्पदीपो भव—अपने दीप आप बनो, अपना रास्ता खुद खोजो।

यह रास्तों के हंगामे से बचकर दूसरों का सहारा तज कर, धर्माचार्यों और उनके अनुयाईयों से बच कर, मानव के स्वावलम्बन की घोषणा थी, पर अब भी एक प्रश्न था कि रास्ते को खुद खोजने का तरीका क्या है?

तालस्ताय ने इस प्रश्न का अपने जीवन व्यवहार से उत्तर दिया कि क्या ठीक है, यह पूछने के लिए किसी संत या विद्वान के पास मत जाओ, बल्कि अपने भीतर टटोलो और तुम्हारी आत्मा जिसे ठीक कहे, उसे अपने आचरण में उतार लो। अच्छा जीवन प्राप्त करने की यही सर्वोत्तम जीवन-पद्धति है।

तालस्ताय धन-वैभव-सम्पन्न व्यक्ति थे। एक लेखक के रूप में उन्हें यश प्राप्त था। इस प्रकार उनको अच्छा जीवन प्राप्त था। वे परिपूर्ण जीवन जी रहे थे, पर उन की आत्मा ने, उनके अन्तर ने कहा कि अच्छा जीवन यह नहीं है कि आदमी अपने में भरपूर हो, बल्कि अच्छा जीवन तो यह है कि आदमी दूसरों को भी भरपूर जीवन जीने में सहायता दे।

उनके अन्तर की आवाज यह थी—"जिसके पास दो कोट हैं, वह एक कोट उसे दे दे जिसके पास एक भी नहीं है और जिसके पास भोजन है वह भी ऐसा ही करे।"

बस उन्होंने इस आवाज को सुना और इसके अनुसार आचरण आरम्भ कर दिया। उनकी पत्नि ने देखा, अब तालस्ताय संग्रह करने के नहीं, बखेरने के काम में लग गए हैं। वह क्रुद्ध हो उठी और उसने अपने पति के साथ बहुत ही बुरा व्यवहार करना आरम्भ कर दिया। एक सुख-सुविधापूर्ण जीवन त्रास से भर उठा, पर वे अडिग रहे।

इस प्रकार तालस्ताय एक व्यक्ति नहीं, एक जीवन पद्धति के प्रतीक हो गए: यह जीवन पद्धति जिसे बाद में गांधी जी ने परिपूर्णता दी! ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत प्रजातंत्री देश है और प्रजातंत्र की प्राणशक्ति है चुनाव। हमारा देश तीन चुनाव लड़ चुका है, पर क्या हमारे इन चुनावों ने हमारे देश के प्रजातंत्र को बल दिया है? हमारी संसद और विधानसभाओं की वर्तमान दशा इसका उत्तर हाँ में नहीं देती। कारण यह है कि हमारे राजनैतिक दलों ने चुनाव के काम नम्बर एक—जनता का मानसिक प्रशिक्षण—की घोर उपेक्षा की: फलस्वरूप वे निर्बल हुए हैं, सबल नहीं। चौथा चुनाव जब सामने है, तो अमरीकी चुनाव के संस्मरण प्रस्तुत हैं, जिनसे हम सोचने के लिए कीमती मसाला पा सकते हैं और लाभ उठा सकते हैं।

卐

अमेरिकन चुनाव : जैसा मैंने देखा

● श्री वेद प्रकाश वटुक

४ जून १९६६ के दिन हम लोग एक पर्वतीय प्रदेश के अर्द्ध-प्राकृतिक रंगमंचपर किये लोक संगीत उत्सव में गये। उस दिन की भीड़ अमेरिका के दृष्टिकोण से काफी बड़ी थी। सिवा बेसबाल खेल के और कहाँ भीड़ मिलती है? मुख्य बात थी कि यह भीड़ जो प्रति टिकट के अढ़ाई डालर देकर इकट्ठी हुई थी, एक अत्यन्त लोकप्रिय गायक को सुनने आई थी, जो साथ ही शांति आन्दोलन में भी काफी भाग ले चुका है।

शांति अमेरिका में एक वीभत्स शब्द से कम नहीं है। यह लोक गायक जिसका समस्त परिवार लोक साहित्य के उन्नायकों में से है, कई बार अमेरिकन अधिकारियों की आँखों का कांटा बन चुका है। रेडियो और टेलीविजन उसका बहिष्कार करते हैं, किसी कानून के मातहत, पर जनता है कि उसी के पीछे पागल-सी। कारों की लम्बी पंक्तियों में थोड़ी दूर जाने में भी एक घंटा लगा।

जिस स्थल पर मैं बैठा था, वहां से सामने ही दिखाई देते थे, सुन्दर नगर, घाटी, पर्वतीय मालाएं और लहलहाता सागर। यह वन प्रदेश था शान्तिमय और रंग बिरंगे कपड़ों में लोग थे उत्फुल्ल, पर उनके हृदयों में थी अशांति और असन्तुलन। लोक गायक आया था एक शान्ति उम्मीदवार के लिए रुपया इकट्ठा करने, जो अमेरिका के चुनाव में पानी की तरह बहता है। शांति के लिए पैसा मिलना इस देश में कठिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है जब कि युद्ध के लिए पैसा बढ़ता है इतना, जितना कि विश्व के आधे से अधिक देशों का सारा बजट हो। सभी दल होड़ में लगे हैं अपने को देशभक्त सिद्ध करने के लिए, अर्थात विदेशों को नष्ट करने में सभी दल आगे हैं, एक दूसरे से।

ऐसे में वियतनाम की समस्या का वीभत्स स्वरूप लाया है एक नए प्रकार की राजनीति। विपक्षियों ने इसका नाम दिया है: नया वाम पक्ष। जबकि इस राजनीति के प्रणेताओं ने इसका नाम दिया है: जनता का प्रजातन्त्र, जहां अधिकारी वर्ग ऊपर से अपनी मनमानी नहीं थोपता। वियतनाम या शांति का नाम लेकर चुनाव लड़ना मानो पराजय को निमन्त्रण देना है। इसीलिए मैंने कहा था कि लोग ऊपर सुन्दर थे, प्रसन्न थे, भीतर कोलाहलमय। जो भी हो, उस तीन घंटे के सुन्दर उत्सव ने शांति मताभिलाषी के लिए १० हजार डालर से ऊपर उगाहे। गायक की यह देन थी, अपने मन के मताभिलाषी के लिए।

इस प्रकार के उम्मीदवारों की संख्या इस वर्ष २०० के लगभग है: सारे देश में वे लोग अमेरिका की संसद से लेकर स्थानीय पदों तक के लिए लड़ रहे हैं। अधिकतर जानते हैं कि उनका विजयी होना असंभव है किन्तु उनका मुख्य उद्देश्य है इस देश के सामने उन तत्वों को प्रस्तुत करना जो अधिकांश देशवासियों की दृष्टि में अप्रिय होते हुए भी भयावह हैं। इस दृष्टि से इन चुनावों का महत्व सामान्य चुनावों से अधिक है। इस लेख में मैं चुनावों की साधारण प्रथाओं के साथ नए तत्वों और उपमानों का विश्लेषण देने का प्रयास करूंगा।

अमेरिका में हर दूसरे वर्ष पहले मंगलवार को राष्ट्र और राज्य की संसदों के निम्न भवनों का चुनाव होता है। साथ ही उच्च सदन के एक तिहाई सदस्यों का तथा अनेक गवर्नरों तथा अन्य पदाधिकारियों का चुनाव भी इस दिन होता है। इन चुनावों में प्रत्येक दल के मतदाताओं द्वारा अंतिम उम्मीदवारों का निर्वाचन होता है प्रारम्भिक चुनावों द्वारा। ये प्रारम्भिक निर्वाचन प्रत्येक राज्य में मई जून के आस-पास किसी मंगलवार के दिन होते हैं। उदाहरण के लिए अलाबामा राज्य का निर्वाचन प्रारम्भिक रूप में मई के पहले मंगलवार को हुआ, जबकि कैलिफोर्निया राज्य में प्रारम्भिक निर्वाचन जून के प्रथम मंगलवार ७ जून को हुआ। जो भी मताभिलाषी किसी पद के लिए खड़ा होना चाहते हैं, वे लगभग दो मास पूर्व अपनी पार्टी के उम्मीदवार बनने के लिए आवेदन पत्र भरते हैं।

यहाँ इस बात का स्मरण रखना आवश्यक है कि पार्टी की सदस्यता कोई रूढ़ वस्तु नहीं है, वरन् उम्मीदवार तथा मतदाता के मनोनुकूल बदली जा सकती है। मतदाता यदि एक राज्य से दूसरे राज्य में या एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में नहीं चला गया है तथा यदि उसने विगत निर्वाचन में भाग लिया है, तो उस का नाम दर्ज रहेगा दो बड़ी पार्टियों में से एक के साथ। यदि वह अपना नाम दूसरी पार्टी के साथ दर्ज कराना चाहता है, तो उसे नया आवेदन पत्र भरना पड़ेगा। ये रजिस्टर सरकारी हैं। किसी पार्टी में रजिस्टर कराने का अर्थ यह नहीं है कि नवम्बर में अंतिम चुनाव के समय वे उसी पार्टी के मताभिलाषी को अपना मत देंगे, किन्तु प्रारम्भिक चुनाव में वे उसी पार्टी के उम्मीदवार को मत दे सकते हैं, जिसमें कि उनका रजिस्ट्रेशन है।

भारत जैसा पार्टी का संगठन इस देश में नहीं है। पार्टी के नेता किसी को भी चाहें, पर यदि जनता उस मताभिलाषी को अपनी पार्टी का उम्मीदवार नहीं चाहती, तो प्रारम्भिक चुनाव में अपना मत उसे नहीं देगी। इस प्रकार प्रारम्भ से लेकर अन्त तक जनता पर निर्भर करता है कि कौन उनका प्रतिनिधित्व कहां करेगा: सिद्धान्त रूप में। यदि जनता घोषित उम्मीदवारों के अतिरिक्त और किसी को चाहती है, तो उसका नाम बैलट पर लिख सकती है। इसे "राइट इन" कहते हैं।

साधारणतया उम्मीदवार किसी एक स्थल पर प्रेस कान्फ्रेंस बुलाकर अपनी उम्मीदवारी घोषित करते हैं। इस अवसर पर वे अपना एक लिखित व्याख्यान पढ़ते हैं और प्रेस वालों के प्रश्नों का उत्तर देते हैं। टेलिविजन तथा रेडियो यदि चाहें तो उसको उसी समय ब्राडकास्ट करते हैं। राष्ट्रपति या उच्च सदन के उम्मीदवारों को ब्राडकास्ट करना साधारण बात है।

साधारणतया प्रत्येक उम्मीदवार के लिए एक समिति का संगठन किया जाता है। इस समिति का नाम तीन शब्द का होता है: जैसे "कैनेडी फार प्रेजीडेन्ट" कमेटी "हम्फरी फार सीनेट" कमेटी: शीयर फार कांग्रेस' कमेटी आदि आदि। प्रचार का सारा साधन इस कमेटी के नाम में जुटाया जाता है। लोग कमेटी के नाम में रुपया इकट्ठा करते हैं, कमेटी के नाम से विज्ञा-

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पन देते हैं, कमेटी के नाम में कार्य-क्रम बनाते हैं। यह कमेटी प्रजातांत्रिक ढंग से विभिन्न कार्यक्रमों के लिए उपसमितियां नियत करती है। साथ ही यदा कदा सारी समिति की बैठक बुलाई जाती है। जितने भी कार्यकर्ताओं की बैठकों में मैं जा पाया हूं, वहां सारा वाद-विवाद खुले तौर पर होते पाया गया है। वाद-विवाद के अन्त में जो भी निर्णय किया जाता है, वह सबको मान्य होता है और उस पर अमल किया जाता है। उम्मीदवार भी समिति से पृथक अपना मत नहीं प्रकट करता। इस प्रकार उम्मीदवार समान विचार वाले लोगों के संगठन का एक सदस्य बन जाता है।

समिति के नाम में उन लोगों को आवाहन दिया जाता है जो वार्ड से वार्ड में काम करना चाहते हैं या जो लोग कार्यालय में या इधर उधर। अनेक प्रकार के कामों में से एक काम जो महत्वपूर्ण है, वह है अनुसंधान कार्य। इसमें जुटने वाले लोग प्रायः प्रतिद्वन्दी के प्रत्येक सार्वजनिक कार्य की खोज करते हैं। यदि प्रतिद्वन्दी निर्वाचन के समय उस पद पर है, तो उसके समस्त संसदीय कार्य की छानबीन करना इस दल का काम है। किस प्रश्न पर किसप्रकार प्रतिद्वन्दी ने राय दी। किस विषय पर क्या व्याख्यान उसने दिया—ये प्रश्न पूरी तौर पर रक्खे जाते हैं, ताकि उसके आधार पर चुनाव का कार्यक्रम बनाया जा सके। उस व्यक्ति के द्वारा दिये गये सब व्याख्यानों की प्रति इकट्ठे करने का प्रयास किया जाता है तथा अपने पक्ष के लिए जितनी सामग्री इधर उधर बिखरी हो, उसको इकट्ठा किया जाता है। यह सब प्रयास इसलिए है कि जो भी विचार मताभिलाषी प्रकट करे वह प्रामाणिक हो।

उम्मेदवारों के अपने समूह के अतिरिक्त उनके विचारों में विश्वास रखने वाले विभिन्न पेशेवर व्यक्ति समुदाय बनाते हैं। उदाहरण के लिए प्रोफेसर लोग, डाक्टर लोग, यूनियन के सदस्य आदि आदि अपना संगठन बनाकर अपने मन के उम्मीदवार के पक्ष में सामग्री प्रकाशित करते हैं और बांटते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक संगठन अपने सदस्यों की राय लेकर उम्मीदवारों में से एक को अपने दल द्वारा समर्थित उम्मीदवार घोषित करते हैं। कभी कभी स्वतंत्र रूप से कुछ नागरिक भी किसी मताभिलाषी के पक्ष में समिति बनाते हैं। यहां तक कि विरोधी दल के लोग भी कभी-कभी अपने प्रिय उम्मीदवार के पक्ष में संगठन बनाकर काम करते हैं जैसे *"डैमोक्रैट्स फार गोल्डवाटर" या *"रिपब्लिकन्स फार जानसन" जैसे ग्रुप पिछले राष्ट्रीय चुनाव में बने थे। ये ग्रुप स्वतंत्र रूप से अपने मन के उम्मीदवार के पक्ष में चुनाव का प्रचार करते हैं।

कुछ संस्थाएं ऐसी हैं जो किसी भी उम्मीदवार का समर्थन नहीं करतीं, किन्तु सब उम्मीदवारों की राय लेकर प्रकाशित करती हैं। पिछले दिनों दो ऐसी संस्थाओं के प्रचार देखने को मिले।

(१) एक संस्था है स्त्री मताभिलाषी सभा। उसके द्वारा इस चुनाव में लड़ने वाले सभी उम्मीदवारों के पास कुछ समस्याओं पर उत्तर देने के लिए प्रश्न भेजे गए थे। वियतनाम और विश्व शान्ति, नीग्रो समस्या, कुछ स्थानीय समस्याएं। सब उम्मीदवारों द्वारा भेजे गए उत्तरों को उनके संक्षिप्त जीवन विवरण के साथ प्रकाशित करके सब उम्मीदवारों के वार्ड में रहने वाले लोगों को मुफ्त बांटा गया।

(२) कुछ संस्थाएं ऐसी हैं जो किसी प्रमुख विषय में विशेष रुचि रखती हैं, जैसे नीग्रो समस्या या वन सुरक्षा समस्या। ये संस्थाएं प्रत्येक उम्मीदवार के पास अपने विषयों पर प्रश्न भेजती हैं। उनके द्वारा भेजे उत्तरों को प्रकाशित और प्रचारित करती हैं: ये संस्थाएं तथा कुछ उदार धार्मिक संस्थाएं किसी एक दिन अपने वार्ड के सब उम्मीदवारों को बुलाती हैं। एक ही प्लेटफार्म पर जनता को सब उम्मीदवारों को देखने का अवसर मिलता है। उन्हें प्रश्न करने का अवसर मिलता है और सजग वोटर अपना मत निर्धारित करता है।

इन बड़ी मीटिंगों के अतिरिक्त लोग मोहल्ले में छोटी पड़ौसी मीटिंग बुलाते हैं। कहना व्यर्थ है कि इन मीटिंगों में मतदाता को अपने उम्मीदवारों को देखने, उन पर प्रश्नों की बौछार करने का अवसर खूब मिलता है। इन मीटिंगों में लोगों की संख्या २०:३० के करीब होती है। अतः एक प्रकार का अनौपचारिक वातावरण वहां होता है और कॉफी और बिस्कुट के साथ लोग अपने उम्मीदवार की खुली जांच करते हैं। उम्मीदवारों की अग्नि परीक्षा का कुछ भान एक कार्टून से हो सकेगा जो इस चुनाव से दो दिन पूर्व छपा था। इसमें एक उम्मीदवार अपने मतदाता के घर में झाड़ू लगाता है, बरतन साफ करता है, कपड़े धोता है और अपने

*१९६४ में रिपब्लिकन दल के राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार। *जानसन डैमोक्रैट हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्राम करते हुए मतदाता से पूछता है कि वह मतदाता के लिये और क्या कर सकता है? कहने का अर्थ केवल इतना है कि लीडरी के रौबकी अपेक्षा सौजन्य और स्पष्टता का राज्य इन सभाओं में होता है।

यह सब होते हुए भी आज का चुनाव रेडियो और टेलीविजन का सहारा लेता है: विगत राष्ट्रपति के चुनाव में एक ही समय में विशेष कर शाम के भोजन के समय लगभग ६ करोड़ व्यक्ति उम्मीदवार को सुन सकते थे, देख सकते थे। अतः इस युग में टेलिविजन का सहारा लेना आवश्यक हो गया है किन्तु अमेरिकन रेडियो और टेलिविजन ब्रिटेन तथा भारत की भांति सरकार द्वारा नहीं चलाये जाते। इसलिए उन पर ब्राडकास्ट करने में काफी खर्चा होता है। यदि किसी उम्मीदवार को एक टेलिविजन या रेडियो स्टेशन मुफ्त समय देता है तो कानून का तकाजा है कि अन्य उम्मीदवारों को भी उतना ही समय मुफ्त मिले। शेष समय के लिए पैसा देना पड़ता है जो हजारों डालर होता है। अतः आज का चुनाव अमेरिकन उम्मीदवारों के लिए बहुत महंगा पड़ने लगा है। फिर भी चुनाव में सभी कम से कम एक बार चुनाव को टेलिविजन कमरे में ले जाते हैं। १९६० के चुनाव में हम्फरी की पराजय का एक कारण यह भी था कि वह जनता से टेलिविजन के लिये काफी पैसा न उघा सका। साथ ही टेलिविजन के आविष्कार ने आदमी को मजबूर कर दिया है कि वह अच्छा उम्मीदवार होने के साथ साथ अच्छा अभिनेता और सुन्दर पुरुष भी हो। १९६४ के संसद के उच्च भवन सैनेट के चुनाव में पुराने लोकप्रिय अभिनेता मरफी का चुना जाना इस बात का प्रमाण है कि अच्छा विचार ही नहीं, अच्छा रूप भी सहायक है।

विभिन्न उम्मीदवारों में टेलिविजन वाद विवाद एक प्रकार की पद्धति बन गया है। विशेषतः यदि व्यक्ति पद पर नहीं है और मनोनीत व्यक्ति को पदस्थ करने का इच्छुक है, तो सदा जनता के बीच में और टेलिविज़न पर वाद विवाद करने के लिए आवाहन करता है अपने प्रतिद्वन्दी को। यदि प्रतिद्वन्दी आवाहन स्वीकार नहीं करता, तो जनता पर प्रभाव पहुंचता है। यदि करता है, तो विचारों को स्पष्ट रूप से रखने की क्षमता उसमें होनी चाहिए। पिछले १९६० के चुनाव में उस समय के उपराष्ट्रपति श्री निक्सन की सबसे बड़ी भूल शायद उस समय के सैनेटर कैनेडी के साथ टेलिविजन डिबेट स्वीकार करनी थी। इन चार डिबेटों ने कैनेडी की विजय को जो इतिहास में बहुत कम रायों से हुई थी, सम्भव बना दिया क्योंकि उपराष्ट्रपति पद का हौवा दूर हो गया, जब कैनेडी ने अच्छा उत्तर निक्सन को दिया।

यह सब होते हुए भी असली विजय प्राप्त करने के लिए वार्ड में घर घर काम करना आवश्यक है। विशेषतः उत्तरी अमेरिका के डैमोक्रैटिक मतदाताओं में। उनमें से अनेक विशेषतः श्रमिक और नीग्रो मतदान के प्रति उदासीन पाए जाते हैं। यह वार्ड कार्य निरन्तर करते रहना जरूरी है, ताकि लोगों में अपने प्रति तथा समस्याओं के प्रति भुलक्कड़पन न पनपे। साथ ही प्रत्येक घर जाने से, प्रत्येक मतदाता को अपनी सामग्री देने से जहाँ मताभिलाषी को अपनी शक्ति का मान होता है वहाँ मतदाता का अहं भी तृप्त होता है।

सरकार की ओर से भी कुछ सहायता की जाती है। प्रत्येक मतदाता के पास एक नमूने का मतदान पत्र तथा यदि चुनाव में किसी विषय पर निर्णय होना है जैसे स्कूल टैक्स बढ़ाना आदि तो उस विषय के पक्ष और विपक्ष में मुद्रित सामग्री भेजी जाती है।

ज्यों ही अनौपचारिक ढंग से किसी मताभिलाषी का निर्णय चुनाव लड़ने का हुआ, त्यों ही दो और साधनों -उपकरणों का उपयोग चुनाव में होता है। एक कारों के बम्पर पर चिपकने वाले रंग बिरंगे छोटे विज्ञापन पत्र दृष्टिगोचर होते हैं, दूसरे एक इंच की परिधि वाले मुद्रित बटन। अमेरिका कारों का देश है। अतः कारों पर आगे-पीछे अपने उम्मीदवारों का विज्ञापन लगाकर अपने उम्मीदवार का समर्थन तथा अन्य लोगों में उनका प्रचार करना सहल है। साथ ही कोट या जम्फर आदि पर लगाया बटन भी मूक प्रचार का एक साधन है। बटन इस देश में हर दिन और नए नए विषयों पर भी मुद्रित होते रहते हैं शायद ही कोई आंदोलन ऐसा हो जिसके लिए ये बटन प्रयोग में न लाए गए हों। प्रचार के साथ ही साथ बटन चंदा उद्योग का भी एक साधन है। हर बटन लगभग २५ सैंट का बिकता है। इस प्रकार उघाए चंदे से और प्रचार का काम होता रहता है।

चुनावों में एक सबसे आवश्यक अंग है अनौपचारिक रूप से एकत्र किये वोटों का। इसे पोल कहते हैं। अमेरिका का प्रत्येक राजनीतिज्ञ पोल के प्रति बहुत आतुरता से देखता है। किस भाषण ने कितना प्रभाव सही

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या गलत पहुंचाया, कौन प्रश्न मतदाताओं की रुचि को विशेष रूप से आकर्षित करता है उसके अनुसार मताभिलाषी अपना कार्य क्रम बना सकता है। पोल ने हाल में विशेष रूप से विज्ञान का-सा स्वरूप ले लिया है। कम्प्यूटर की सहायता से वस्तुतः चुनाव किस दिशा में जाएगा इसकी भविष्यवाणी आसानी से की जा सकती है। सारी रायें गिनी जाने से बहुत पूर्व ही कम्प्यूटर द्वारा हर हल्के से थोड़ा-सा नमूना लेकर या अनुसंधान के आधार पर कुछ चुने हल्कों से कुछ राय लेकर भविष्यवाणी की जाती है। ७ जून १९६६ के प्राथमिक चुनाव में तो मतदान के पंद्रह मिनट बाद ही कौन अगले चुनावों में नवम्बर में किस पार्टी का सारे राज्य के लिए उम्मीदवार होगा, इसकी घोषणा कर दी गई थी। सारे इलाकों में बेतरतीब नमूने की राय वाले व्यक्तियों को लेकर उनसे या तो मौखिक रूप से या फोन से या कार्ड भेजकर बिना नाम के पूछा जाता है कि वे किस उम्मीदवार को या किस विषय के बारे में कैसे मत देंगे। उन नमूनों को फिर कम्प्यूटर द्वारा विश्लेषण करके भविष्यवाणी की जाती है। पिछले चुनावों में इस बारे में प्रश्न उठा था कि ये पोल किस प्रकार मतदाता को प्रभावित करते हैं, किन्तु चूंकि इस प्रकार का संदेह अधिकांश रूप में हारने वाले करते हैं अतः सभी राजनीतिज्ञ उन्हें जनता की अभिलाषा मानकर अपना कार्य क्रम निर्धारित करते हैं।

हर चुनाव में सबसे मुख्य काम है, कार्यकर्त्ता को प्रशिक्षित करना। कार्यकर्त्ता के काम पर निर्भर करता है, विजयी या पराजित होना। यह काम अनुभवी लोग करते हैं पर साधारणतः छोटे से छोटे काम के लिए भी लिखित आदेश होते हैं, ताकि समयानुसार उनका अध्ययन कार्यकर्त्ता कर सके। उदाहरणतः यदि किसी कार्यकर्त्ता को किसी विशेष मुहल्ले में काम करना है, तो उसे अनेक छोटे-छोटे कार्ड दिए जाते हैं, जिन पर मतदाताओं का नाम एक एक कार्ड पर पते सहित लिखा रहता है। उसे लिखित आदेश दिये जाते हैं कि वह किस प्रकार से काम करे। जैसे मतदाता

> **जब मैं प्रथम बार कोई उत्तम पुस्तक पढ़ता हूं तो मैं ऐसा अनुभव करने लगता हूं, जैसे किसी नए मित्र से मेरी भेंट हो गई है।**
>
> **कभी-कभी ऐसा भी होता है कि मुझे पहले पढ़ी हुई किसी उत्तम पुस्तक को दुबारा पढ़ने का अवसर मिल जाता है तब मुझे ऐसा प्रतीत होने लगता है जैसे मैं अपने पुराने मित्र से पुनः भेंट कर रहा हूं।**
>
> **—ऑलिवर गोल्डस्मिथ**

को नाम से पुकार कर अपना परिचय दो, उससे सदा प्रथम बार संक्षेप में शिष्टाचार पूर्वक अपनी बात कहो और उससे पूछो कि उस का किस विषय में क्या विचार है और वह कौन से प्रश्न को सबसे महत्वपूर्ण सोचता है। इससे मतदाता के विचार प्रवाह का ज्ञान होगा। यदि मतदाता उम्मेदवार के विचारों का उग्रता से विरोध करता है या यदि मतदाता पूर्ण रूप से सहमत है, तो अधिक बात उस दिन करने की जरूरत नहीं। कहाँ सहमति है, कहां असहमति, इसका विश्लेषण करके पुनः मतदाता के पास जाओ। प्रयत्न करो कि वह अपनी बात रखे। तब जहाँ तक हो सके, शांति से विचार विनिमय करो। किसी भी अवस्था में मतदाता से बहस मत करो। यह उसे विरोधी बना देगा। उनसे पड़ौस में होने वाली छोटी सभा की बात कहो या उनसे कहो कि वे ऐसी मीटिंग बुलाएं। इस बात का पूर्ण प्रयत्न करो कि वे समझें कि उम्मीदवार उनका अपना आदमी है और उन्हें आश्वासन दो कि वह उनके विचारों को समझना और जानना चाहता है। काम करने का सबसे अच्छा समय शाम को या शनिवार रविवार को है जबकि लोग घर होते हैं। अब अपने कार्ड को घर के नम्बर के अनुसार तरतीब से लगाओ। १२५ घरों के क्षेत्रों में घर घर जाकर बात करो और अपना अनुभव कार्ड पर अंकित करो। जैसे जमा (+) का चिन्ह इस अर्थ में कि मतदाता हमारे साथ है। जमा और प्रश्न चिन्ह (+?) का अर्थ है शायद हमारे साथ हो, पर विरोधी के साथ नहीं। नकारात्मक चिन्ह (—) हमारे साथ नहीं, प्रश्न चिन्ह युक्त नकारात्मक चिन्ह (—?) शायद विरोधी के साथ हो। इस सब की सूचना कार्यालय को दो। कार्य कर्त्ताओं की बैठकों में आकर अपना विचार रखो औरों के सुनों। नयी योजना बनाओ।

इसी प्रकार का प्रशिक्षण चुनाव के दिन तक बराबर दिया जाता है। (इसी चुनाव के कुछ महत्वपूर्ण संस्मरण अगले अंक में) ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेदी ० एक गहराई तक

● श्री वीरेन पाल

सन् १९६२-६३ की दोपहर को एक अजीबोगरीब घटना मेरी जिन्दगी में गुज़री। आश्चर्य में मेरे होंठ पानी में गर्क सीप की तरह खुल गए: दिमाग की सतह पर अनजानी सर्द हवा का टुकडा फिसल उठा। मैं सोचने लगा था कि हमेशा ऐसा होता आया है कि जब भी कोई व्यक्ति मुझसे मिलता है, तो वह अचानक हंस देता है। हालाँकि शीशे में मैंने अपने अक्स को ग़ौर से देखा है। वह न तो चार्ली चेपलिन-सा है, न सर्कस के जोकर-सा। खैर, हंसता हुआ चेहरा मुझे पसन्द है। मैं जब किसी के करीब आ जाता हूं तो हरफन मौले की तरह ठहाके हवा में फेंकता हूं। मैं चाहता हूं कि 'आखिरी वक्त तक मैं मस्त मौला ही बना रहूं, ताकि मेरे शव को ले जाने वाले लोग यह बोलते हुए मेरे शरीर को ले जाएँ—"राम नाम सत है, मुर्दा बडा मस्त है।"

दोपहर का वक्त था। बावजूद मेरी ना के मेरा एक ट्ईयाँ कद का दोस्त मुझे बम्बई के एक फिल्म स्टूडियो में ले गया। लाइट्स ऑन··· फेन ऑफ·····कैमरा घूमने लगा ·····हीरोइन रोने लगी ·····शूटिंग खत्म हुई ···लाइट्स ऑफ ····फेन ऑन···—अब हीरोइन हंस रही थी·····हीरोइन के ठीक सामने एक गंजे डायरेक्टर के पास अधेड़ उम्र के बूढ़ी उम्र के साथ समझौता करते हुए, एक मंझले कद के कुछ मोटे-से सिख—सरदार बैठे हुए इत्मीनान के साथ सिगरेट का धुआँ फेंक रहे थे। आदमी विलक्षण था। धुआँ उसके मुंह पर आता। वह उसे नहीं हटाता। हीरोइन रोई और हंसी। कोई असर नहीं। सिगरेट धुआं और गुरु-गम्भीर चेहरा, जो दाढ़ी से और भी गम्भीर था। एकाएक मैंने कुछ सोचा, और तेजी से बढ़ा और तपाक से पूछा—क्या आपने मुझे पहचाना?

उन सिख सरदार की हालत खस्ता थी। वे इस अचानक हमले से चौंक से गये थे। दिमाग पर जोर लगा रहे थे। सोचने के क्षणों में उनका हाथ तक सिर पर पहुंच गया, पर सख्त अफसोस—वे मुझे पहचान न सके। वे बोलें, इसके पहले ही मैंने हंसते हुए कहा—"आप मुझे नहीं पहचान सकते, क्योंकि मैं आपसे पहली बार मिल रहा हूं।" शायद मेरी जिन्दगी में वे पहले व्यक्ति थे जो पहली मुलाकात में हंसने की जगह चौंक गए थे, जबकि हमेशा ऐसा होता आया था कि पहली मुलाकात पर व्यक्ति मेरे सामने हंस जाते थे। यह सन् १९६२-६३ की दोपहर की वह अजीबोगरीब घटना थी, जिससे मैं खुद भी चौंक गया था। ये थे उर्दू के महान लेखक श्री राजेन्द्र सिह बेदी।

स्टूडियो में हीरोइन रोती रही और हम दोनों साहित्यिक बातों के जाल में उलझे हुए खुशी महसूस करते रहे। जरा-सी प्रशंसा पर बेदी निहायत शिष्टता के साथ उर्दू शायरों की तरह झुककर, कुछ आदाब-सा बजाते हुए अपने हाथ को माथे तक पहुंचा देते, "जी, बड़ी मेहरबानी।"

बम्बई में मुझे श्री राजेन्द्र सिह बेदी का मकान खोजने में काफी दिक्कत हुई थी। माटुंगा के सिर पर सूरज चमक रहा था। एक ईरानी रेस्टोरेंट के आगे एक मोटे सरदार जो स्कूटर के आगे खड़े थे। मैंने कहा, "क्यों जनाब, आप उर्दू लेखक श्री बेदी का मकान जानते हैं?" मोटे सरदार ने अफसोस पेश किया—"नहीं बादशाहों!" वह तेलुगी छोकरे की ओर मुड़े—"अबे, जल्दी निकाल सोडे की बोतलें।" फिर उसने 'मुझ बादशाह' की ओर नहीं देखा।

आखिर खालसा कालेज के दो लड़कों ने निहायत लुत्फ के साथ बेदी जी का पता बताया—"ओये··· कौन उर्दू लेखक बेदी···वे पहली रोड के सिरे पर ऊपर वाले तल्ले पर रहते हैं।" दूसरा बोला—"नहीं, नीचे वाले तल्ले पर।" पहला चिल्लाया—"नहीं ऊपर वाले तल्ले पर।"

बेदी निचले तल्ले पर ही रहते हैं। घंटी बजाई। दरवाजा एक अधेड़ सिख महिला ने खोला, "कहिए?" मैंने कहा, "मुझे बेदी साहब से मिलना है।" महिला सहज ही बोली—"कौन से बेदी साहब से? छोटे बेदी साहब से या बड़े बेदी साहब से?" मैंने तपाक से पूछा, "क्या यहाँ दो बेदी साहब हैं?" महिला हंस दी, जैसा कि मेरे साथ पहली मुलाकात पर हमेशा होता है कि सामने वाला हँस देता है। मुझे उनके लड़के से मिलना नहीं था, इसलिए मैं स्पष्ट बोला—"राजेन्द्र सिंह बड़े बेदी साहब से मुझे मिलना है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं एक कमरे में बैठा दिया गया। अलमारियों में किताबें खचा-खच भरीं थीं। पंखा छत पर घूम रहा था। लेनिन की एक मूर्ति खामोश खड़ी थी। कमरे की खिड़की के बाहर लोहे की जाली पर कपड़े सूख रहे थे। मैंने फिर लेनिन को देखा। क्षण भर मुझे लगा, लेनिन मुझे घूर रहा है! मैं बेदी के 'कलाकार' पर सोचने लगा।

शुरू-शुरू में मैं अपने पुराने सांकेतिक नाम 'बी मेहरा' के नाम से लिखता था, वीरेनपाल के नाम से नहीं। तो जनाब यह तथाकथित बी. मेहरा आज से छह-सात वर्ष पहले अपने शहर जोधपुर (जहाँ पाकी-जेटों ने बहुत से बम डाले, पर कुछ न हुआ उसका) की लायब्रेरी से श्री अश्क की किताबें साइकिल के कैरियर में दबाए अपने प्रिय साहित्यिक मित्र बसंत दत्ता के घर पहुंचा। ये हजरत कब्रिस्तान के सामने रहते हैं। कब्रिस्तान पर रात का साया थके पंछी-सा उतर रहा था। शायद जाड़े के दिन थे। बसंत ने किताब के लेखक को देखा, "तो तू अब अश्क के पीछे लट्ठ लेकर पड़ा है!" दरअसल उन दिनों मैं किसी भी देशी या विदेशी लेखक के पीछे लट्ठ लेकर पड़ जाता था; याने उसकी सारी उपलब्ध किताबें पढ़ता। अश्क जी की किसी किताबें से ही मुझे मालूम पड़ा था कि श्री राजेन्द्र सिंह बेदी नाम के कोई लेखक हैं, जिनकी कहानियों के प्लाट इतने मौलिक और विचित्र होते हैं कि उसकी नकल करना असम्भव है! फिर क्या था? मैं लट्ठ लेकर बेदी के पीछे पड़ गया। उनके महान उपन्यास 'एक चादर मैली-सी' (जिसे अकादमी का पुरस्कार प्राप्त हुआ) के साथ उनकी करीब-करीब सभी प्रमुख कहानियाँ पढ़ गया था। उनकी एक कहानी तो.....।

इसके आगे कुछ सोच न सका। बेदी साहब के नौकर ने विचारों के बढ़ते जाल को छिपकली-सा काट दिया—"क्या आप कॉफी लेंगे?" मैंने हँसकर ना कर दिया और उस सुनसान कमरे में अपने अकेले साथी मि० लेनिन को देखा, उनका एक हाथ पतलून में था। वे कुछ आगे बढ़ने की कोशिश में थे।

फटा जाल मैं फिर बुनने लगा। हाँ, तो वह कहानी थी 'स्पर्श' और दूसरी थी 'लाखे'। दोनों कहानियों से मैं बहुत प्रभावित हुआ, क्योंकि दोनों कहानियों में 'वस्तु' मौलिक और विचित्र थी। 'स्पर्श' में एक तथा कथित महान व्यक्ति की खिल्ली उड़ाई थी। उस महान व्यक्ति की मूर्ति को घेरा डाले भीड़ खड़ी थी। सब दिलचस्प कौतूहल के साथ इस 'हौवे' को देख रहे थे। कहानी के आखिर में भीड़ के लोग उस 'मूर्ति' का स्पर्श करते हैं। इसमें उस बात की ओर इशारा था कि महान व्यक्ति भी सामान्य व्यक्ति-सा ही होता है, अगर विश्वास न हो, तो उसे स्पर्श करके देखा जा सकता है, हाँ, उसमें कुछ गुण अधिक होते हैं, पर वह 'हौवा या खुदा' तो न हुआ। 'लाखे में दो कहानियां समानान्तर चलती हैं। एक खड्डे में गन्दा पानी जमा है। वहाँ छोटे-छोटे मेंढ़क के बच्चे या लाखे खुशी से रहते हैं पर जब खड्डा साफ पानी से भर जाता है, तो लाखों की जान पर आ बनती है। इसी तरह कहानी के नायक की बीबी अपनी गरीब और अभाव-ग्रस्त जिन्दगी (गंदा पानी) को छोड़ कर सुन्दर कश्मीर में मौज करने जाती है, पर वह उस स्थिति (यानी मौत) पर पहुंच जाती है, जैसे लाखे साफ पानी में मरते हैं। 'गर्म कोट' और 'ग्रहण' घरेलू जीवन की व्यंगपूर्ण चोट करने वाली कहानियाँ हैं। 'दिवाला', 'तुलादान' और 'दस मिनट वर्षा में' कहानियों में कला-कार बेदी की उस आस्था का पता चलता है, जिसके कारण उसके कमरे में लेनिन की मूर्ति रक्खी है। शोषण के विरुद्ध इन कहानियों में 'आवाज' है, जो दिमाग के कमरे में बैठती नहीं, बल्कि घूमती हैं 'कुछ बदलो-कुछ बदलो'। आखिर में बेदी की लोकप्रिय कहानी 'भोला' आती है। ये किसी भी खाँचे के आदमी को पसन्द आ सकती हैं। सादा-सा प्लाट है। बच्चे का भोला दिल है। इससे कम भोली कहानी बहुत कम किसी साहित्य में लिखी गई हैं। .....'एक चादर मैली-सी' याद आया। यह बेदी का शायद इकलौता महान उपन्यास है। रानो को इसमें कई विकट-विचित्र और

> धन से पुस्तकें खरीदी जा सकती हैं, ज्ञान नहीं।
> धन से सुख खरीदा जा सकता है, शान्ति नहीं।
> धन से स्त्री खरीदी जा सकती है, पत्नी नहीं।
> धन से मकान खरीदा जा सकता है, घर नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असम्भव परिस्थितियों से गुजारता है। रानो की जगह अगर शरत बाबू की 'पारो' या गोर्की की 'मालवा' या हेमिंग्वे का साहसी बूढ़ा या कोई और होता तो निःसंदेह या तो पागल हो जाता या मर जाता, पर रानो न पागल होती है, न मरती है। वह एक चादर मैली-सी को ओढ़ लेती है और अपने पति से झगड़ती है, प्यार करती है, उसके शव को देखती है, अपने देवर मंगल को बच्चे की तरह पालकर उसकी मा बनती है, मा बनकर जीती है, फिर अपने पुत्र—से मंगल की बीबी बन जाती है, उसके बच्चे की माँ बन जाती है, वह मंगल की मा-सी थी, अगले पति तिलोके के बच्चों की भी मा है और अब उसके पेट में मंगल का बच्चा है, उसकी भी माँ है। एक जिस्म : तीन माँ! आखिरी में उसकी बेटी का मंगेतर वह व्यक्ति निकलता है जिसने रानो के पति तिलोके की हत्या की थी पर यह रानो ही थी कि वह उसे भी पी गई और पागल न हुई, मरी भी नहीं।

बेदी की कहानियों के पात्र मध्य वर्गी हैं। वातावरण प्रायः घरेलू। वस्तु मौलिक एवं विचित्र। शैली कहीं कहीं 'भावुकता के बहाव' में उलझन भरी जैसे नदी अधिक पानी से किनारों तक अस्त-व्यस्त फैल गई हो, पर शैली में जगह-जगह हास्य-व्यंग की छटा भी है, इसलिए कहानियां रोचक हैं। भाषा मुर्दे की तरह नहीं, बल्कि उसमें जोश है। 'बेदी हास्य' सबसे अलग है। मैंने गौर किया है, उसमें 'वैज्ञानिक तत्व' मौजूद हैं। बेदी-हास्य स्वीकारना साथ लेकर आता है। पहले मानो, फिर हंसो। एक जगह उन्होंने लिखा है—"एक बोलता है ईश्वर अपनी दया वर्षा द्वारा भेजता है।"

'हाँ, दया···हाय···अरे, राटा की झोंपड़ी की खपरेल उड़ रही है।

"ईश्वर की दया!"

क्योंकि यह हास्य वैज्ञानिक है, इसलिए यह लिखने के 'कुछ' पूर्व निर्मित होता है। जैसे एक्सपेरीमेंट विज्ञान में होता है। इसलिए यह 'बेदी हास्य' प्राकृतिक नहीं, बल्कि कृत्रिम है, पर प्राकृतिक आदमी नंगा था, आज कृत्रिम कपड़े जरूरी जो हैं बेदी की रचनाओं में कहीं-कहीं मुझे बेदी का 'फक्कड़ साधु' रूप भी दीखा है, जो किसी अन्य गुमनाम दुनिया के प्रति लगाव रखता है। आत्मा-परमात्मा—मृत्यु के बाद का अथाह अन्धकार, वासना पर दमन आदि आदि। भावुकता और तीव्र चिन्तन की प्रक्रिया के वक्त बेदी का यह रूप प्रकट होता है पर धीरे-धीरे यह रूप दिये-सा बुझ जाता है। बात अस्पष्ट एवं अधूरी ही रहती है। लगता है बेदी के स्वभाव में 'अविश्वास' भी है: वह कहीं स्थिर नहीं। धरातल पर टेक अडिग नहीं। इस अविश्वास की अचेतन क्रियाएं बेदी की रचनाओं में जगह जगह व्याप्त हैं. जहाँ बेदी किसी एक बात को स्वीकारते हैं, तो तुरन्त उसके विपक्ष पर आ जाते हैं। याने 'हाँ' और उस पर 'ना'। ना और हाँ। उसके पात्र भी ऐसी ही 'हाँ' और 'ना' में घूमते हैं। शैली में यह स्वीकारात्मक और नकारात्मक पहलू जगह जगह किसी मैदान में अलग अलग उगे पौधों से पाये जाते हैं और मेरे दिमाग में घूमने लगे बेदी के पात्र—

"बेदी साहब आ रहे हैं। मैगजीन देखें तब तक" किसी ने कहा और गायब हो गया। मैंने पंखे से नजरें हटाई, जहाँ बेदी के पात्र घूम रहे थे। लेनिन वहीं खड़े थे। कमरे के बाहर जाली पर कपड़े सूख रहे थे। मिसेज़ बेदी किसी पड़ोसिन के साथ बातें कर रही थीं, पर मैंने नहीं सुना। मैं 'कलाकार' बेदी की जगह 'व्यक्ति' बेदी पर सोचने लगा। जरा-सी बात पर नाराज़, जरा-सी बात पर रीं-रीं करता हुआ एक मरियल बच्चा बीमार माँ का दूध पीकर बढ़ रहा है। बचपन में अपने पिता द्वारा लाई किताबों में किस्से कहानियाँ पढ़ता है। हाई स्कूल से पहले बहुत-सी किताबें पढ़ीं। सपना पाले डी० ए० वी० कालिज में दाखिला। मा का देहान्त। फिर बाप का। परिवार का बोझ। कालिज छोड कर राजेन्द्र नाम के इस नौजवान ने डाकखाने में नौकरी की। उसका इश्क कहानियों के साथ बना रहा। वह मनिआर्डर की रसीद काटता और दिमाग में उसके जैन या होली पैदा होते रहते। इधर घर में बच्चे पैदा हो रहे हैं। सपना टूट गया। एम. ए. की डिग्री आकाश को उड गई। उर्दू में लोग उसे जानने लगे। डाकखाने से रेडियो और रेडियो से सीधा फिल्मी दुनिया। दो फिल्म बनाई. दोनों असफल रहीं। 'गर्म कोट' कलापर्ण फिल्म थी. पर उस बेचारे 'गर्म कोट' को बाजारू फिल्मों की गर्मियों में किसी ने नहीं पहना। फिल्मी दुनिया से 'कलाकार' बेदी कटकर अलग हो गया। 'व्यक्ति' बेदी ने 'रङ्गोली' बनाई, पर फेल। किस्मत खुलकर दाव खेलती है। व्यक्ति बेदी के पास दो सूट हैं। एक मोटर है। एक बीबी है. कुछ बच्चे हैं। एक फ्लैट है, बहुत-सी किताबें हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिल्मी 'श्रम' में उसे पैसे मिल जाते हैं, पर उसका मन न गृहस्थी में लगता है, न फिल्मों में, न कहीं। अविश्वास दिल में फैलता है। वह जो चाहता है, उसे वह नसीब नहीं। शायद दुनिया बकवास है। वह 'परम शाँति' की खोज में है। पिछले जन्म जरूर वह कोई हिमालय की गुफा का बाबा था। तपस्वी का योग दुनिया के मोह में भंग हो गया है। वह दौड़ जाना चाहता है। दौड़ नहीं पाता। कैद। मुक्ति अब इसी में है कि वह अपने 'कलाकार' को अभिव्यक्त करे—अभिव्यक्त, अभिव्यक्त·····यह अभिव्यक्ति ही मुक्ति है····· वास्तव में बेदी क्या है? यह 'अस्पष्ट-सा' है।

"नमस्कार जनाब!" बेदी साहब आ गए थे। सोचना खत्म हो गया। वे अपनी कोई कहानी आत्मीयता के साथ सुनाने लगे। कहानी में मुझे कोई गलती दीखी। मैंने कह दिया—"कहानी में यहाँ गलती है। ऐसा स्वाभाविक नहीं है, ऐसा होना चाहिए।" उन्होंने गलती मान ली। मैंने सोचा, यह वास्तव में महान व्यक्ति है। पीढ़ी के साथ उम्र में भी गहरा अन्तर है हमारे बीच। उनमें महान व्यक्ति जैसी कुछ बात नहीं है, शायद इसलिए मैं उन्हें महान मानता हूं। बेदी साहब ने नर्मी से पूछा—"आप कॉफी पीएँ।" मैंने कहा—"मैं कॉफी पीता नहीं।" वे बोले—"अच्छा, सिगरेट पीजिए।" मैंने कहा, "मैं सिगरेट पीता नहीं।" बेदी साहब हार से गए—"अच्छा पान।" मैंने कहा—"दुःख है, मैं यह आदत भी नहीं रखता।" बेदी प्रसन्न हुए—"सचमुच आप बहुत अच्छे आदमी हैं, जो न कुछ खाते हैं, न पीते हैं।"

उन्होंने दो-चार लतीफे सुनाकर हँसाया। अपने नौकर को आवाज़ देकर दूध पिया। साफा बाँधा। मेरी एक ताज़ी कहानी 'एक गलत दुनिया' सुनी। सुनकर कहा, "मुझे कहानी पसन्द आई।" मैंने जवाब दिया, "मैंने कहानी अमुक पत्र के सम्पादक को भेजी है। वह उसे लौटा देगा।" बेदी ने कहा—"ऐसा नहीं हो सकता।"

कार में बेदी बैठे। कार चल पड़ी। गृहस्थी के दरवाजे के बाहर कदम रखते ही उनमें ज्यादा ताजगी भर गई। मैंने क्रिश्चियन चर्च की ओर इशारा करके कहा—"उस मूर्ति पर देखिए बेदी साहब, कौन बैठा है।" बेदी साहब हंसे—"नहीं तो क्या मेरे सिर पर बैठेगा!" एकाएक उनकी कार पानवाले की दुकान पर ठहरी। मैंने पूछा—"विदेशी साहित्यकारों में आप किसे पसन्द करते हैं?" उन्होंने पान मुंह में डाला—"अमेरिकी अर्नेस्ट हेमिंग्वे? फिर वे उदासी में अपने दो चार उर्दू लेखकों की चुगलखोरी करने लगे। उर्दू लेखक '·····'और उर्दू शायर '·····'मेरे साथ शतरंज की चाल खेल रहे हैं···मेरा कोई साथी नहीं। मैंने बहुत सहन किया है···अब सहन की हद हो गई·····

"शतरंज की चाल!" बेदी साहब खुलकर हंसे। दादर सर्किल पर ब्रेक लगा। धूप से हर चीज चमक रही थी। कार रुकी। बेदी साहब ने कार की खिड़की से गर्दन निकाली और गम्भीरता और सौजन्य में कहा—"अगर सम्पादक·····" ने आपकी इस अच्छी कहानी को स्थान न दिया, तो मैं उसे डाटूंगा!" कार दादर के पुल की ओर उड़ चली।

बेदी के शुद्ध और आत्मीय व्यवहार के कारण वे आंसू तो नहीं आए, जो इंसान की आंखों में उभरते हैं। आंखों में आंसू कायरता है, लिचलिची भावुकता है, पर उन आंसुओं के कतरों का क्या कहूँ, जो मन और दिल में कहीं रेंग रहे थे। कितनी अजीब बात है कि एक दिन हम सब हमेशा के लिए हवा की शक्ल में तबदील हो जाएँगे। मैं भी और ये बेदी भी जो उर्दू के आकाश के सूरज हैं, जिन्होंने अपने बारे में सबसे अधिक स्पष्ट बात कहीं है: खुद उन्होंने लिखा है: मुझे आज तक पता नहीं चला कि मैं कौन हूं? ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- शोला एक अजब चीज़ होती है कि एक तरफ उसमें जलन, तो दूसरी तरफ उसमें चमक-रोशनी।
- भाई अता मुहम्मद 'शोला' में भी बुराईयों के खिलाफ जलन है, अन्धेरे के खिलाफ रोशनी है।
- वे उर्दू साहित्य के पहुंचे हुए विद्वान हैं। असल में वे विद्वान नहीं साधक हैं, क्यों कि उनमें विद्वत्ता की उलझन जरा नहीं। साधना की स्पष्टता पूरी तरह है। वे सीधे देखते हैं, साफ कहते हैं।
- वे इतने भले हैं, कि मिलकर मन चिकना हो जाता है और बात करते है, तो दम्भ की गंध कहीं दूर से भी नहीं आती।
- वे ऐसे आदमी हैं कि गरमी में दस कोस पैदल चलकर भी उनसे मिला जाए तो आदमी घाटे में नहीं रहता।
- इधर उनकी कलम हिन्दी में भी फूल बरसाने लगी है। कोई शक़ नहीं कि वे फूल महकेंगे और लोग उन्हें सिर आंखों लेंगे।
- शोला के कलम कैमरे से लिया नेता जी सुभाष चन्द्र बोस का एक शानदार फोटो यहाँ पेश है, पर कमाल यह है कि यह फोटो तब खिंचा, जब नेता जी कहीं आसपास तो क्या दूर भी नहीं थे।
- शोला साहब की जलन-रोशनी भरी कलम को एक पेशगी प्यार अपने पाठकों की तरफ से।

卐

नेताजी की महत्ता को उस दिन मैं पूरी तरह समझा

● श्री अता मुहम्मद 'शोला' ●

अप्रैल का महीना था और साल था १९४५ ई०। मैं इलाहाबाद से नायब-तहसीलदारी का 'इन्टरव्यू' देकर लौट रहा था। मुझे कानपुर से देहली के लिए गाड़ी बदलनी थी। स्टेशन पर विशाल जनसमूह समुद्र की तरह ठाठें मार रहा था। गाड़ी आई और लोग उस पर चढ़ने के लिए इस फुर्ती से लपके, जैसे कि शिकार पर शिकारी झपटता है। वो आपा धापी मची कि बस, खुदा की पनाह! उतरने वालों को उतरना और चढ़ने वालों को चढ़ना दूभर होगया। हर दरवाजे पर मानो एक फौजदारी होरही थी।

ऐसे में रेल पर चढ़ना मेरे बस का कहाँ था; मैं मजबूर हो, एक तरफ खड़ा रहा। थोड़ी देर बाद जब इस घमा चौकड़ी में कुछ कमी हुई, तो मैंने देखा कि लोगबाग़ थर्ड क्लास के दरवाजों पर लटक रहे हैं और रेल के डिब्बों में तिल धरने को जगह नहीं है। मैं भी तीसरे दर्जे का ही मुसाफिर था और इस बात का साहस न कर सकता था कि मैं दूसरे या पहले दर्जे में कदम रखूँ, इसलिए कि अगर चैक हो जाता, तो बाकी पैसा कहाँ से देता?

लिहाज़ा मैंने बड़ी बेचैनी से गाड़ी के एक सिरे से दूसरे सिरे तक चक्कर लगाये, परन्तु तीसरे दर्जे के डिब्बों में कहीं भी कोई जगह नजर नहीं आई। हां, एक डिब्बा था, जिसमें बाहर तिरंगे झण्डे लहरा रहे थे, परन्तु अन्दर कुछ देहाती जवान और अधेड़ उम्र के लोग बैठे थे, जो खद्दर की नीकर और कुर्तियाँ पहने हुए थे। रंग उनके कपड़ों के जरूर फौजी वर्दी के रंगों से मिलते-जुलते थे। उनमें से अधिकांश के सिर घुटे हुए थे और चोटियाँ बहुत बड़ी-बड़ी थीं। गालों की हड्डियाँ चौड़ी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उभरवा थीं, जिस सेउनके चेहरों से थोड़ा-थोड़ा डर लगता था। सब वे पढ़े-लिखे लोग मालूम होते थे।

जब उन्होंने मुझे कई बार बेताबी से चक्कर लगाते देखा, तो एक बार रोक ही लिया और कहा—"तुम कुछ परेशान से दिखाई देते हो। क्या बात है? वो अपने डिब्बे में किसी को चढ़ने न दे रहे थे। मैंने मौका गनीमत जाना और कहा—"मुझको दिल्ली जाना है; क्योंकि मैं वहाँ नौकर हूँ और मुझको सही टाईम से पहुंचना है, परन्तु जगह न होने के कारण, मैं गाड़ी में बैठ नहीं पा रहा हूँ।" इस पर उन्होंने दरवाजा खोला और मुझे अन्दर बिठा लिया। थोड़ी देर बाद गाड़ी स्टेशन से चली। मैं सहमा-सहमा बैठा था और मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि जिन लोगों ने किसी दूसरे आदमी को डिब्बे में चढ़ने न दिया वे मुझ पर इतने दयावान कैसे हो गए?

गाड़ी स्टेशन से चली ही थी कि उनमें से एक ने आँखें चमका कर पूछा—"तुम्हारे पास टिकट है?"

मैंने जेब से टिकट निकाल कर दिखाया और कहा कि जी हाँ।

तुरन्त ही उसने कहा—"अगर तुम्हारे पास टिकट है, तो अगले स्टेशन पर तुम इस डिब्बे से उतर जाना; क्योंकि हम तो अपने बेटिकट हिन्दुस्तानी भाइयों की सेवा करते हैं।"

इस पर मैं परेशान होगया और मेरे चेहरे पर पसीना आ गया। उनके किसी दूसरे साथी ने कहा—"यह बात तो बिठाने से पहले ही पूछने की थी, पर अब जब बिठा ही लिया है, तो इसको देहली तक ही चलने दो।" इससे कुछ जान में जान आई और मैं एक तरफ को दबक कर बैठ गया।

गर्मी अच्छी खासी पड़ रही थी, तो मुझको प्यास लगनी शुरू होगई। एकाध स्टेशन पर मैंने झाँक कर देखा, परन्तु कोई पानी पान्डे नजर नहीं आया। ओठों पर खुश्की दौड़ने लगी और आँखों से भी प्यास झलकने लगी। उन लोगों के पास २-३ टीन के कनस्तर थे, जिनमें पानी था और वह अपने लोटों से निकाल-निकाल कर पी रहे थे, परन्तु उनकी शक्ल सूरत से कुछ ऐसा भय-सा दिल में बैठ गया था कि मुझे पानी माँगने की हिम्मत ही न हुई। फिर मैं यह भी सोचता था कि मैं मुसलमान हूँ और ये लोग हिन्दू हैं। अगर मैंने इनके बर्तन में पानी पी लिया, तो इनका बर्तन भ्रष्ट हो जाएगा।

तभी उनमें से एक दो ने भांप लिया और पूछा कि "बाबू जी! आप हर स्टेशन पर झाँक-झाँक कर क्या देखते हैं? क्या प्यास लग रही है?"

मैंने कहा—"जी हाँ, कहीं पानी मिलेगा, तो पी लूंगा, ऐसी विशेष प्यास नहीं है।"

तुरन्त एक आदमी ने कनस्तर से लोटा भर कर मुझे दिया और कहा—"लीजिए, इसे पी लीजिए।"

मेरी आत्मा उनको धोखा देने पर तैयार न हो सकी और मैंने उनसे मजबूरन कह ही दिया कि "मैं मुसलमान हूं और यदि मैंने आपके लोटे से पानी पी लिया, तो इसे आप मांजेंगे कहां? यहाँ तो कहीं मिट्टी भी नहीं है।"

यह सुनते ही दो-तीन जवान उठ खड़े हुए और उन्होंने जबरदस्ती पानी का लोटा मेरे मुंह से लगा दिया और कहा कि, "अब तो हम आपको पिलाकर ही छोड़ेंगे।"

उसके बाद उस लोटे को जरा से पानी से खंगाल कर कई आदमियों ने बिना प्यास ही पानी पिया और कहने लगे—"आजाद हिन्द सेना में नेता जी ने हमको यही तो सिखाया था। आपका यह कहना कि मैं मुसलमान हूं, इस लोटे से पानी नहीं पिऊंगा, कुछ अच्छी बात नहीं है। इसी भेद भावना को मिटाने के लिए नेता जी ने सब जात-बिरादरियों का किचन एक ही जगह रक्खा था और नेता जी स्वयं भी सबके साथ बैठ कर खाना खाते थे। 'आजाद हिन्द सेना' में अधिकतर खाना पकाने वाले हरिजन लोग थे और वे ही खाना पकाया करते थे। यदि हम उनकी शिक्षा को आम जनता में न पहुंचा पाए, तो हमारा आजाद हिन्द सेना में रहना व्यर्थ ही हुआ।"

ये सुनकर मेरी आंखें खुल गईं और जिन लोगों को अपने प्रति इतनी उदारता दिखाने के बाद भी मैं हूश और ठेठ देहाती समझ रहा था, उनके प्रति तो मेरे मन में प्रेम के श्रोत फूट ही पड़े, पर मैं नेता जी की महत्ता का भी पूर्ण रूप से अन्दाजा लगा सका। जिस व्यक्ति ने ऐसे बेपढ़े-लिखे ठेठ देहातियों (जो पुश्त दर पुश्त जात पांत और छूत छात के बन्धनों में पलते चले आए हों) के मन को ऐसा उज्ज्वल कर दिया हो कि पढ़े लिखे भी उनके सामने मंद दिखाई दें उसको इस युग का सबसे बड़ा महान पुरुष क्यों न समझा जाए। मेरे दिल पर इस वाके की छाप कुछ इस प्रकार लगी है कि मैं मरते दम तक भी इसको नहीं भुला सकता और जब-जब भी इसकी याद आती है, मेरे मन को कुछ और भी उज्ज्वल और आत्मा को बलवान कर जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रजातन्त्र की स्थिरता के लिए

सन् १९४७ में जब हजारों वर्षों के बाद भारत के निवासियों को स्व-शासन का मौका मिला, तो अनेक कठिनाइयों के बावजूद हमारे देश के नेता बड़े ही ऊँचे आदर्श सामने रखकर चले। देश के विभाजन और साम्प्रदायिक दंगों के बावजूद सबके मन पर महात्मा गांधी की आदर्शवादिता की गहरी छाप थी। इसीलिए सन् १९५० में देश का जो संविधान लागू हुआ, उसमें भी विभिन्न देशों के संविधानों की विशेषताएं सन्निहित करने की कोशिश की गई।

ठीक है, लेकिन बात आदर्श की हो या संविधान और कानून की, इन सबका लाभ देश को तब तक नहीं मिल सकता, जब तक कामकाज का ढंग न बदले और सङ्गठन का ढांचा भी उसी के अनुरूप न बनाया जाए। पश्चिम के प्रजातन्त्रवादी देशों ने अपने प्रजातांत्रिक ढांचे का विकास भारत से भिन्न परिस्थितियों में किया है और यद्यपि पश्चिम के अनेक देश प्रजातन्त्री हैं, परन्तु सब अपनी-अपनी विशेषताओं को लिये हुए हैं। इन सब बातों के बावजूद कुछ बुनियादी चीजें हैं, जिनके बगैर प्रजातंत्र का ढांचा खड़ा ही नहीं किया जा सकता। उनमें से सबसे महत्वपूर्ण है व्यक्ति की स्वतन्त्रता की भावना और नागरिकों में इस आदर्श के प्रति सम्मान का भाव तथा इसके पालन की कटिबद्धता।

सामन्तशाही में ऐसी भावनाओं या आदर्शों के लिए कोई स्थान नहीं होता और जब पूंजीवादी व्यवस्था विकसित होती है, तो वह ऐसी परिस्थिति पैदा करती है जिसमें सामन्तवादी जकड़ ढीली हो। इसी लिए और इसी अर्थ में पूंजीवाद के विकास से प्रजातन्त्र का बड़ा गहरा सम्बन्ध है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि जब पूंजीवाद एक विकसित अर्थतंत्र का रूप ले लेता है, तो वह व्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित करने का प्रयत्न नहीं करता। ऐसी स्थिति आ जाती है जब पूंजीवाद व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर अंकुश लगाने लगता है और तब पूंजीवाद का अन्त फासिस्टवादी या नाजीवादी प्रवृत्तियों में होता है, लेकिन भारत जैसे विकासोन्मुख देशों के लिए इन खतरों से सावधान रहना जितना जरूरी है, उतना ही इस बात के प्रति जागरूक होना भी कि सामन्तवादी जकड़ कैसे ढीली पड़े और कैसे देश के नागरिक व्यक्ति की स्वतन्त्रता का मूल्य समझें। अफसोस की बात यह है कि हमारे देश में अभी भी सामन्तवादी पकड़ इतनी ढीली नहीं पड़ी है कि व्यक्ति की मर्यादा का मूल्य हो। इसीलिए इस हद तक अभी भी हमारे देश में प्रजातन्त्र की जड़ें मजबूत नहीं मानी जा सकतीं।

इसके लिए यह आवश्यक है कि संगठन का ढांचा व्यक्ति की स्वतंत्रता के उपयुक्त बनाया जाए। प्रजातंत्र में सरकार बहुमत की होती है और अल्पमत विरोधी दल के रूप में काम करता है, लेकिन बहुमत यदि अल्पमत की भावनाओं का आदर न करे और अल्पमत यदि दायित्व-हीन, उच्छृंखल और अनुशासनहीन हो जाए, तो वैसी स्थिति में प्रजातंत्र का टिकना कठिन ही नहीं असंभव भी हो सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि विभिन्न दल अपने संगठन का ढांचा भी ऐसा बनाएं कि वह प्रजातांत्रिक हो। जब दलों के भीतर खुली चर्चा और बहस के बाद नीतियां निर्धारित की जाएंगी, तो दल की ताकत तो बढ़ेगी ही, उत्तरदायित्व की सन्तुलित भावना का विकास भी होगा। मैं यह मानता हूं कि इस आधार पर काम करने में कठिनाई आ सकती है परन्तु इसके जो लाभ हैं वे इतने अधिक और स्पष्ट हैं कि इसे मान कर ही चलना उचित होगा। बहस से कार्यकर्ता का दिमाग साफ होता है और वह समझकर तथा पूरे उत्साह से नीति का समर्थन करता है। इस सक्रिय सहयोग के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम क्या करें ?

प्रो० सिद्धेश्वर प्रसाद, संसद सदस्य

बल पर ही प्रजातांत्रिक समाजवाद की कल्पना को साकार किया जा सकता है।

पश्चिम के प्रजातंत्रवादी देशों में शासकदल के विधायक प्रतिनिधियों और संगठन के प्रतिनिधियों में अन्तर नहीं होता क्योंकि अनुभव के बाद लोग इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अगर दो समानान्तर सङ्गठन होंगे तो उससे आपसी खींचतान बढ़ेगी और वैसी स्थिति में देश को उचित नेतृत्व नहीं मिल सकता। अगर जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि अपने संगठन में भी प्रतिनिधि नहीं हो सकते, तो और कौन हो सकता है ?

महात्मा गांधी ने कहा था कि स्वतन्त्रता की प्राप्ति के बाद कांग्रेस को विसर्जित कर देना चाहिए और जनता की सेवा के लिए लोक सेवा संघ के नाम से एक अलग संस्था बनाई जानी चाहिए। लेकिन उन्होंने यह कभी नहीं कहा था कि कांग्रेस सरकार की लगाम अपने हाथ में न रखे और शासन का काम किसी और को सौंप दे। जिस राजनैतिक दल ने स्वतन्त्रता संग्राम के दिनों में नेतृत्व किया हो, यदि वह स्वतन्त्रता की प्राप्ति के बाद राष्ट्र निर्माण का काम करने का अधिकारी नहीं है, तो और कौन है ? यह ठीक है कि १९३७ में जब पहली बार कांग्रेस मंत्रिमंडल बने थे, तो गांधी जी ने मंत्रियों के लिए कुछ आदर्श बताये थे और यह ठीक भी है कि उनके पालन से अनेक संकटों से बचा जा सकता था और शायद विकास की गति भी तेज होती, परन्तु यह बिल्कुल दूसरी बात है और इससे यह सिद्ध नहीं होता कि कांग्रेस देश के प्रशासन का बोझ न उठाए, बल्कि यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि और कोई दल इस बोझ को उठा ही नहीं सकता।

यह बात अवश्य है कि राष्ट्र-निर्माण के लिए कांग्रेस के ढांचे में, संगठन के स्वरूप में कुछ परिवर्तन की आवश्यकता थी। महात्मा गांधी ने जब कांग्रेस का नेतृत्व सम्भाला था, तो उन्होंने कांग्रेस का विधान और संगठन बदल डाला था। उसी प्रकार से स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद भी कांग्रेस के विधान और संगठन के स्वरूप में, लेकिन भिन्न कारणों से, परिवर्तन की आवश्यकता थी। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पूर्व जो कांग्रेस आन्दोलन चलाने वाली संस्था थी, वही स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्र निर्माण के लिए निर्देश देने वाली संस्था हो गई। अतः कार्यकर्ताओं को आन्दोलन की नहीं, निर्माण के प्रशिक्षण की आवश्यकता थी। इसे उसी पैमाने पर होना था, जिस पैमाने पर आन्दोलन का काम किया जाता था।

संसद और विधान मंडलों में कांग्रेस के प्रतिनिधि वह रवैया नहीं अपना सकते, जो रवैया स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व कांग्रेस अधिवेशनों के रंगमंचों पर अपनाया जाता रहा था। जो कांग्रेस मांग रखने वाली संस्था थी, वह जब मांग पूरी करने वाली संस्था हो गई, तो उसके ढंग में परिवर्तन आना स्वाभाविक ही है। इस परिवर्तन का अहसास कांग्रेस के प्रत्येक कार्यकर्ता को जब होगा तभी एक शासक दल की हैसियत से कांग्रेस अपने दायित्व का निर्वाह कर सकती है। इसके लिए संगठन और विधायक पक्षों के अन्तर को समाप्त करने की आवश्यकता है। जब लोग यही कहते हैं कि कांग्रेस तो अब केवल चुनाव जीतने-जिताने की मशीन भर रह गई है, तो आश्चर्य होता है, कि इतिहास ने एक राजनैतिक दल के रूप में कांग्रेस को जो दायित्व सौंपा है उसको उसे निभाना ही है और यह तब तक संभव नहीं है जब तक संसद और विधान मंडलों में उसका बहुमत नहीं होता, लेकिन कांग्रेस दल का यह बहुमत संगठन के प्रचार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर नहीं बल्कि संसद या विधान मंडलों द्वारा किये गये उसके कार्यों पर निर्भर करता है क्योंकि जब सरकार उसके दल की है तो उसका काम अब आश्वासन देना या मांग करना नहीं, बल्कि काम कर दिखाना है। अतः विधायक पक्ष को महत्व न देकर या उसका मखौल उड़ाकर भ्रम में रहना उचित नहीं है। सुयोग्य विधायक ही उचित नेतृत्व प्रदान कर सकते हैं तथा संगठन को भी ठोस आधार प्रदान कर सकते हैं।

भारत में प्रजातन्त्र का भविष्य बहुत दूर तक कांग्रेस की सफलता पर ही निर्भर करता है। पिछले वर्षों में कांग्रेस ने अनेक कमियों के बावजूद जितना कुछ किया है उससे देश में प्रजातंत्र की नींव मजबूत हुई है। वर्तमान गम्भीर परिस्थितियों में अपने को संगठित या पुनर्गठित कर कुछ ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है। इस दृष्टि से ऊपर कही गई बातों के अतिरिक्त एक और बात यह है कि प्रजातन्त्र किसी न किसी रूप में स्वतन्त्र परम्परा से बड़े गहरे रूप में जुड़ा हुआ है। पश्चिम के प्रजातन्त्री देशों के इतिहास से ऐसा लगता है कि किसी निर्वाचन क्षेत्र में एक लम्बे अर्से तक प्रतिनिधित्व करने को बड़ा महत्व दिया जाता है। यह तभी संभव है, जब निर्वाचन क्षेत्रों में बार बार परिवर्तन न किये जायें और दल भी अपने प्रतिनिधियों को नामजद करने में, सामान्य तौर पर, हेर फेर न किया करें। इससे निर्वाचकों और प्रतिनिधियों में ज्यादा गहरे सम्बन्ध स्थापित होंगे और तब ऐसी भावना भी विकसित होगी, जिसमें प्रतिनिधियों को न केवल एक विधायक की हैसियत से, बल्कि दल के कार्यकर्ता की हैसियत से भी अधिक ठोस रूप में काम करने का अवसर मिल सकेगा। इससे असुरक्षा की वह भावना भी दूर होगी, जो चुनावों के पहले दल की नामजदगी पाने के साथ जुड़ी हुई है। अनिश्चित वातावरण में निश्चित कार्यक्रमों को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। अनिश्चय की भावना पहले दल के भीतर दूर होगी, फिर देश के भीतर और इससे जो मजबूती आएगी, उसका हमारी सीमा के देशों पर भी असर होगा।

ऐसी शिकायत की जाती है कि कांग्रेस में सभी दलों या मतवादों के प्रतिनिधि हैं। किस भावना से यह बात कही जाती है, यह कहना कठिन है। यह अवश्य है कि कांग्रेस एक राष्ट्रीय संस्था रही है और राष्ट्र का हर विचारधारा के प्रति सहिष्णुता की भावना लेकर आगे बढी है, लेकिन कुछ ऐसी बातें तो जरूर होती हैं, जिनके कारण राष्ट्र राष्ट्र कहा जाता है और जिन पर उसकी मजबूती निर्भर करती है। कांग्रेस में वे तत्व मौजूद हैं, इसीलिए कांग्रेस टिकी हुई है। अनेक अन्तर विरोधों के बावजूद जीने की शक्ति भारत में वर्तमान है, लेकिन इन अन्तर्विरोधों के कारण हम लक्ष्य भ्रष्ट न हों, इसका हमें सदा ख्याल रखना है।

इसकी भी चर्चा की गई है कि राष्ट्रपति-पद्धति हमारे देश के लिए अधिक उपयुक्त है। प्रत्येक देश में वीर-पूजा की भावना विद्यमान होती है और हमारे देश में भी यह कुछ कम नहीं है। बालिग मताधिकार के आधार पर चुना गया राष्ट्रपति किसी अंश तक इस अभाव की पूर्ति कर सकता है। अतः इस पर भी गम्भीरतापूर्वक विचार करने का समय आ गया है। अमेरिका जैसे बड़े देश में यह पद्धति बड़ी सफलता के साथ काम कर रही है। भारत जैसे विशाल देश में भी यह अधिक अनुकूल हो सकती है। इसका एक लाभ यह है कि विभिन्न मंत्रालयों या विभागों के लिए इस पद्धति में स्थायी पद्धतियां होती हैं, जो प्रशासनिक कार्यों पर बड़ा कड़ा नियंत्रण रखती हैं। इसमें संदेह नहीं कि हमारे देश में अभी ऐसे नियंत्रण की आवश्यकता है।

अभी भारत को जिन समस्याओं का समाधान ढूंढना है उसके लिए कई पहलुओं को संगठित और कई दिशाओं में ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है। दुःख की बात यह है कि हम में से अधिकांश न तो सोचने का कष्ट उठाते हैं और न काम करने का। यह आलस्य घातक सिद्ध हो सकता है। पचास करोड़ का यह विशाल देश जब यह तय कर लेगा कि उसे क्या करना है तो फिर संसार की कोई भी शक्ति उसे वैसा करने से नहीं रोक सकती। हमें एक स्वाभिमानी राष्ट्र की तरह अपने पैरों पर खड़ा होना है। बात बड़ी अच्छी है, लेकिन इसके लिए बहुत कुछ करना पड़ेगा। हम यह न सोचें कि हम क्या न करें, बल्कि यह सोचने की आदत डालें कि हम क्या करें? तब हमें मंजिल भी मिल जाएगी और रास्ता भी नजर आएगा। ★

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री धर्मचन्द सरावगी, एम. ए. की

लन्दन के एक चिकित्सा केन्द्र में

विदेश यात्रा करने का मौका मुझे जीवन में चार पांच बार मिला, पर १९६५ की विदेश यात्रा का खास उद्देश्य प्राकृतिक चिकित्सा-केन्द्रों का अध्ययन करना था। इङ्गलैण्ड एवं यूरोप में हेल्थ इन्श्योरेंस स्कीम के अन्तर्गत सभी नागरिकों को एलोपैथिक प्रणाली की औषधियां मुफ्त दी जाती हैं। यहां तक कि आंख खराब होने पर चश्मा, दांत खराब होने पर दांतों का सेट एवं पैर कट जाने पर बैशाखी मुफ्त मिलने की व्यवस्था है। साधारण इन्जेक्शन और औषधियाँ तो मुफ्त मिलती ही हैं। एलोपैथिक चिकित्सा के इतना सुलभ होने पर भी आश्चर्य की बात यह है कि वहां के प्राकृतिक चिकित्सा-केंद्रों में काफी 'चार्जेज' रखे हुए हैं और वे भरे रहते हैं। लंदन के एक प्रवेशित विभाग चलाने वाली संस्था में मैं गया, तो उन्होंने रोगियों का मानस बनाने के लिए छपाई एक विज्ञप्ति मुझे दी। वह इस प्रकार थी—

स्वस्थ जीवन चाहने वालों के लिए आवश्यक बातें

१–प्रतिदिन तीन से अधिक बार भोजन नहीं करना चाहिए और आखिरी भोजन सायंकाल तक समाप्त हो जाए।

२–आपके आहार में पके हुए ताजा फल, सलाद और उबली हुई सब्जियां अवश्य हों।

३–मांस, मछली नहीं खाना चाहिए। इनके स्थान पर अखरोट, मूंगफली, मटर, सेम, पनीर और दूध का सेवन करें। पशु मांस के स्थान पर मक्खन, हरी सब्जियां, ओलीव (जैतून) या मूंगफली का तेल आदि का व्यवहार करें।

४–जहां तक सम्भव हो कच्चे या बिना उबाले हुए पदार्थ ग्रहण करें, क्योंकि पकाने पर उनका विटामिन खत्म हो जाता है और भोजन के सन्तुलन को बिगाड़ देता है। आलू और दाल को कच्चा नहीं खाएँ। आग में भूने हुए छिलके सहित आलू को इसके अधिक गुणों के कारण अवश्य खाना चाहिए। सावधानी रखें कि छिलके जल न जाएँ।

५–प्रतिदिन भोजन में अधिक मात्रा में सलाद का व्यवहार करें। इसमें जड़ों वाली और रसदार सब्ज़ियां होनी चाहिएँ. जैसे गाजर, चुकन्दर, मूली, प्याज, लेटूस, बन्द, गोभी, गाँठ गोभी, टमाटर, धनिया, पोदीना आदि और साथ ही साथ औलीव आयल या नीबू का रस सेव का रस स्वास्थ्य को बढ़ाने में और सलाद को स्वादिष्ट बनाने में अद्वितीय होते हैं।

६–हमेशा फलों का सेवन करें, सब्जियाँ हरी एवं ताजी हों और उन्हें अच्छी तरह धोकर भोजन करने के कुछ ही समय पूर्व तैयार करें। अधिक काटने रगड़ने और मलने से इनके बहुत से पोषक अंश नष्ट हो जाते हैं। **जहाँ तक हो, कम्पोस्ट से तैयार किए हुए पदार्थ का ही सेवन करें और कृत्रिम एवं रासायनिक खादों से उत्पन्न इन पदार्थों का सेवन हानिकर माना जाता है। अगर आपके उद्यान हो तो फलों एवं सब्जियों में रसायनिक खाद न डालें।**

७–जहाँ तक सम्भव हो नमक का सेवन न करें। अभ्यास करने से इसके सेवन की आदत से छुटकारा मिल जाता है।

८–सब्जियाँ पकाने का उत्तम तरीका यह है कि उन्हें काटकर खौलते हुए थोड़े जल में डाल दें और कड़ाही के ऊपर ढक्कन रख दें। जल्दी से पकाकर बिना देर किये ही उन्हें खाजाएँ। तरल द्रव का व्यवहार सूप के तौर पर किया जा सकता है। सूप को अधिक देर तक मत पकाइए, इसके भीतर थोड़ा मक्खन और कटे हुए प्याज भी स्वाद के लिए डाल सकते हैं।

९–सावधानी पूर्वक निश्चय कर लें कि कभी भी अल्मूनियम के बर्तनों में अपना भोजन न पकाएँ।

१०–चाय और काफी से बचें इनका सेवन स्वास्थ्य के लिए हानिकर है। इनके स्थान पर फलों एवं सब्जियों के रस या सूप का उपयोग करें।

११–भोजन को खूब चबा चबा कर करें।

१२-शराब और धूम्रपान से बचें।

१३–ठंडे दिमाग से भोजन करें। भोजन करते समय अच्छी और मधुर बातें ही बोलें। उदर बिकार में या भोजन की अनिच्छा में उपवास कर लेने में बुद्धिमानी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४–मैदे का सेवन न करें, सफेद चीनी से परहेज रखें। इनके स्थान पर चोकर सहित आटे की रोटियाँ, मधु (शहद) और लाल चीनी का उपयोग कर सकते हैं।

१५–औषधियों का व्यवहार मत कीजिए। इनसे रोगों को दबाया जाता है अतः इनसे रोगों का जड़ से नाश होना असम्भव है।

१६–गाजर का रस स्वास्थ्य के लिए अति उत्तम है। कुछ गाजरों को लेकर सुन्दर ग्रेटर में रखें और पल्ला दबाकर उनसे रस निकालें। इसे तुरन्त पी जाएँ। प्रतिदिन एक कप रस का पान करें। इसमें सेव या अन्य फलों के रस को मिला सकते हैं। फल निचोड़ने वाले यंत्र से रस निकालने में मदद ले सकते हैं।

१७–अत्यधिक गरम जल से स्नान न करें। प्रतिदिन तौलिए से रगड़ कर सुषुम पानी से स्नान किया करें या ठंडे जल से स्नान करें।

१८–अधिक हवादार कमरें में रात को कम से कम ६ से ८ घंटे तक सोना चाहिए। जितना हो सके नीचे तकिये का व्यवहार करें।

१९–सर्वदा गहरी सांस लेनी चाहिए।

२०–प्रतिदिन सरल एवं हल्का व्यायाम करना जरूरी है।

२१–शरीर को सीधा रखें, कंधों एवं पीठ को कुछ नीचे करें, पेडु की माँस पेशियों को भीतर की ओर खींचकर आराम से लम्बे कदम चलें। कूल्हों से पैरों को झुलायें, केवल घुटनों से ही नहीं।

२२–निर्माणकारी एवं दयालु बनें। दूसरों की एवं अपनी मदद करते हुए स्वस्थ और प्रसन्न रहें।

२३–उपचार या पथ्य के बतौर ही स्वास्थ्य पूर्ण नियमों का पालन न करें, वरन् इसे सर्वदा के लिए अपने जीवन का अंग बनालें जिससे आनन्द पूर्ण स्वाभाविक और प्राकृतिक जीवन का सुख प्राप्त होता रहे।

इस संस्था का नाम नेचर क्योर क्लिनिक, १३ ओल्डवरी प्लेस लन्दन है। यह लगभग ३० वर्षों से कार्य कर रही है। जहाँ से हजारों रोगी प्रतिवर्ष लाभ उठाते हैं। यह रोगियों को इन्जेक्शन एवं औषधियां नहीं देती। यहां काम करने वाले कर्मचारियों, चिकित्सकों एवं स्वेच्छा सेवकों को भी एक प्रतिज्ञा पत्र सही करना पड़ता है जिसमें लिखा रहता है कि वे प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तों को मानते हैं और रोगियों को किसी प्रकार की औषधि और इन्जेक्शन नहीं देंगे और स्वयं भी प्राकृतिक चिकित्सा के अनुकूल ही भोजन करेंगे एवं जीवन व्यतीत करेंगे।

संस्था के मंत्री महोदय से बात हुई तो उन्होंने बताया कि यहाँ बहुत से रोगी दर्द लेकर आते हैं। अज्ञानता के कारण उन्हें स्वस्थ रहने के नियम भी मालूम नहीं होते हैं। वे धीरे-धीरे जब बिना औषधि की चिकित्सा से लाभ उठाते हैं, तब उनका मानस तैयार हो जाता है और वे गलत रास्तों को छोड़कर एक स्वस्थ आदमी बन जाते हैं। इस तरह यह संस्था मानवों की सेवा सफलता पूर्वक करती है।

कुछ रोगियों से भी मैंने बात की। एक महिला लगभग ३०–३५ वर्ष की थी। उसे मैंने पूछा कि आप कितने दिनों से चिकित्सा करा रही हैं? उसने बताया कि लगभग एक महीना से चिकित्सा करा रही हूं। १५ दिन में बिल्कुल ठीक हो जाऊंगी। यहाँ आने के पहले बराबर दवाइयाँ लेती थी। माथे में दर्द रहता था, नींद नहीं आती थी। मेरी एक सहेली ने यहाँ का पता बताया। उसके उपकार के लिए मैं उसकी कृतज्ञ बराबर रहूँगी।

इसके बाद एक ४५ वर्ष के व्यक्ति से बात हुई, जो किसी कारखाने में हिसाब-किताब का काम करते थे। मैंने उनसे पूछा कि आपको क्या तकलीफ है? उन्होंने बताया कि मैं कब्ज का शिकार था। मुंह फफोले से भरा रहता था, क्योंकि मैं चाय-काफी बहुत पीता था। हैल्थ इन्स्योरेन्स स्कीम के अन्तर्गत दवाइयाँ मुफ्त मिलती हैं। इसलिए दवाईयाँ कई वर्षों तक ली, पर कोई लाभ नहीं हुआ। यहां के उपदेश के अनुसार जीवन का क्रम बदलने पर बहुत ठीक हो गया हूं।

एक जवान लड़की से बातचीत हुई। उसकी आयु २२–२३ वर्ष होगी। पूछने पर उसने बताया कि उसे एक्जिमा हो गया था और इसी कारण मुझ से कोई लड़का विवाह करने को राजी नहीं होता था। उसने हाथ की अंगुलियों एवं पैर के पास के स्थानों को दिखाते हुए बताया कि इन स्थानों पर एक्जिमा बहुत जोरों पर था, पर अब कोई दाग नहीं है। मैंने हंसते हुए कहा कि अब तो आप के जैसी सुन्दर लड़की को कोई न कोई लड़का अवश्य पसन्द कर लेगा। वह भी हंसने लगी।

इस संस्था का मुझ पर अच्छा असर पड़ा और वहाँ से मैं यही सोचते हुए लौटा कि मनुष्य दवाओं के राक्षसी चक्कर से कब मुक्त होगा? ★

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कारों की बुनियाद

● श्री जमना लाल जैन

बच्चे का स्कूल और पिता का दफ्तर पास-पास ही हैं। घर और स्कूल के बीच रेलवे लाइन पड़ती है। आवागमन के लिए बढ़िया पुल भी है। पुल पर से आना-जाना सुविधाजनक, सुरक्षित होता है, लेकिन आदमी का स्वभाव कुछ विचित्र है। वह जल्दबाज या शार्टकट पसन्द भी होता है। सो लोग पुल के बजाय रेलवे लाइन लांघकर आते-जाते हैं। मैंने एक दिन बच्चे से कहा कि 'देखो, रेलवे लाइन से मत आया-जाया करो। कभी-कभी धोखा हो जाने का डर है, लेकिन एक दिन उसने मुझे रेलवे लाइन लांघकर दफ्तर जाते देख लिया। वह स्कूल से लौट रहा था। उस समय तो हम दोनों अपनी अपनी राह चल निकले एक दूसरे को देखते हुए, लेकिन शाम को वह पूछ बैठा :

"बाबूजी, आज आप पटरी पर से क्यों गये ?"

प्रश्न ऐसा था कि मेरे पास कोई उत्तर नहीं था और मैं था कि उसके चेहरे पर अपने मन की से बहुत कुछ बातें पढ़ गया।

बात को तूल दिया जाय तो बहुत बड़ी है, नहीं तो हँसकर टाल सकते हैं। बच्चों की बातें यों टाली ही जाती हैं।

टाल तो सकते हैं, लेकिन टालने से यह प्रश्न खतम तो नहीं होता। प्रश्न यह कि व्यवहार की गाड़ी पर सवार होकर जब हम जिन्दगी की सड़क पर बढ़ चलते हैं, तब पग पग पर जो समस्याएँ आती हैं, उनको कैसे निपटाया जाय ?

सबेरे उठने से लेकर रात को नींद की गोद में पहुंचने तक एक-एक क्षण अनगिनत उतार-चढ़ावों से गुजरता है और यों क्षणों पर क्षण बीतते रहते हैं, जिन्दगी की राह पूरी होती चलती है, पर समस्याएँ हैं कि उभरती-मिटती रहकर भी सदा-सदा के लिए बनी रहती हैं।

तुलसीदास जी बड़े पते की बात कह गये हैं कि सबसे भले वे मूढ़ हैं, जिन्हें जगत की कोई गति नहीं व्यापती, कोई समस्या नहीं छूती। तो क्या हम मूढ़ बन जायँ ? जगत की समस्याओं में यों उलझना तो कोई नहीं चाहता, पर सुलझाने के चक्कर में सभी दिखाई देते हैं। जड़ हम नहीं हैं, पर समझदार भी हैं क्या ?

मैं भी बच्चे के उस प्रश्न को लेकर भीतर-भीतर टटोलता रहा। मैंने कहा न कि बात को तूल दिया जाय तो बड़ी बनाई जा सकती है। मैं भी इसमें उलझ गया और सो न सका।

यों बात संस्कारों पर आ टिकी हम-आप सभी चाहते हैं कि बालक संस्कारी बनें, सभ्य और बुद्धिमान बनें। कल्पनाएँ करते हैं कि ऐसे सिखाया जाय, ऐसे पढ़ाया जाय, यह बताया जाय, वह दिखाया जाय। फिर भी बात कुछ बहुत बन नहीं पाती।

अपने को ही लूं। क्या 'मैं' वही हूं जो दिखाई देता है? मेरी शिष्टता, सभ्यता, मधुरता, मिलनसारिता जो दिखायी देती है, उसके नीचे कुछ ऐसा नहीं है, जिसे दबाना, ढंकना, जरूरी है ? धर्म और अध्यात्म के बड़े-बड़े ग्रंथ मेरे सिरहाने रहते हैं, व्रत-नियम पूजा-पाठ का कमरा भी है, लेकिन क्या मेरे भीतर भी किसी ने देखा है ? जो खाने को मिल जाता है, वह इस तरह खा लेता हूं कि आप समझें बड़े प्रेम से गले उतर गया है। आंखें तो भावुक हैं, पर कान तो बेचारे कुछ भी व्यक्त नहीं कर पाते। उनको पढ़ना तो टेढ़ी खीर है। और मन ? इसकी तो पूछिए ही मत। वह तो एक ही ठग है।

आदमी का भला-बुरापन और कौन जान सकता है ? कहते हैं, आदमी अपने को ही नहीं जान पाता। मैं क्या अपने को बुरा समझता हूं ? अपनी रचना किसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छी नहीं लगती ? जब आदमी की बुराई का दर्शन करते हैं, तब लगता है कि उसमें अच्छाई भी तो है । जीवन क्या सचमुच उलटबांसी ही नहीं है ? सत्य का मुख सोने से ढंका कहा जाता है, पर क्या जीवन का चित्र भी परतों में दबा नहीं है ?

चाहते हैं कि बच्चा संस्कारी बने, लेकिन संस्कार उसमें डाले कैसे जायं ? मां दूध पिलाती है, खाना खिलाती है- नहलाती-धुलाती है, प्यार-पुचकार भी करती है। बच्चे को डांटती-डपटती भी है, चांटे भी लगाती है, धमकाती-रुलाती भी है, क्या इन्हें संस्कार कहा जाय ?

बच्चा कुछ बड़ा होता है, पढ़ने लगता है । स्कूल जाता है । किताब खरीदी जाती हैं । कथा-कहानियां, चरित्र-कथानक पढ़ता है । गीता-रामायण, कथा-पुराण का पाठ कराया जाता है। अहिंसा, सत्य आदि गुणों का माहात्म्य समझाया जाता है। सामाजिक शिष्टाचार, लोक-व्यवहार की सीख दी जाती है । कहते हैं इनसे जीवन का निर्माण होता है, आदमी का एक ढांचा तैयार होता है, स्वरूप निखरता है । यों पत्थर का टुकड़ा प्राणवान मूर्ति बन जाता है । यह निखार भी संस्कार ही नाम पाता है शायद ।

लेकिन पोथियों का भार लाद-कर भी 'ढाई अक्षर' का 'प्रेम' पच नहीं पाता है। लाख-लाख यत्न करके भी समझ में नहीं आता है। शिकायतें सुनने को मिलती हैं कि रोज-ब-रोज दुर्घटनाएँ ऐसी होती हैं कि आदमीयत शर्मा जाय। कमियों, दुर्गुणों और दुर्बलताओं की कहां कमी है ? हजारों वर्षों का ज्ञान संचित करके भी आदमीयत पर शोध बढ़ती जा रही है ।

सोचता हूं कि सोचना अब बेकार है। कानून बनते हैं, धर्म-ग्रन्थ रास्ता बताते हैं, मां-बाप की निगरानी रहती है, फिर भी आदमी है कि आपे से बाहर हुआ जाता है । कहीं किसी की पटती नहीं, कहीं किसी का सहयोग नहीं । सब अपने में, अपने को लेकर ही परेशान ।

एक संस्कार यह भी है कि बच्चे स्वच्छता, सुघड़ता, नियमितता सीखें । सीखते तो होंगे ही, किन्तु सीख-सीख कर भी पैर जहाँ के वहां ठिठके दीखते हैं । सबके चेहरे अलग, भावनाएँ अलग, ढंग अलग । हर मां बाप परेशान कि उनका लड़का कहे में नहीं ।

हम बालक पर गुस्सा हों तो वह क्या सीखेगा ?

हमारा गाली-गलौज उसे क्या बनाएगा ?

ऐसी सैंकड़ों चीजें वह हम से ही पाता है, जिनकी सीख हम नहीं देते हैं, पर वह ग्रहण करता है, क्योंकि हमारे लिए ऐसी क्रियाओं में अस्वाभाविकता नहीं रह गई। हम बच्चों को डराते हैं, क्योंकि हम स्वयं ही उनसे डरते हैं। वह हमारी स्वच्छन्दता की 'बाड़' होता है।

संस्कारों की परतें इतनी अधिक हैं कि उधेड़ते आइए, हाथ कुछ नहीं लगता। ऊंची दुकान और फीका पकवान । पहाड़ खोदिये, मरी चुहिया भी शायद मिले। दो सगे भाइयों का स्वरूप भी एक-दूसरे से अनोखा, भिन्न मिलेगा। संस्कारों का फार्मूला या नियमावली बना कर गले में टाँग देना ऐसा ही है, जैसे गधे की पीठ पर शक्कर की बोरी लाद देना।

घर-गृहस्थी के काम-काज, परिवार के व्यवहार, रहन-सहन से ही बालक अपने जीवन का भवन खड़ा करता है ।

हम अपने दिमाग पर से कल्पित और स्वप्निल 'संस्कारों' का बोझ उतार दें। तब देखिये, हमारा असली स्वरूप कितना सुहावना, कितना रम्य हो उठता है। चट्टान को मूर्ति बनाकर उसकी पूजा ही की जा सकती है वह न उठाई जा सकती है, नहीं उपयोग में ही आ सकती है। अपनी रुचि का जामा पहना कर हम हर चीज की स्वाभाविकता और सौन्दर्य खतम कर डालने में कुशल हैं। हमें पाना है कि व्यक्तित्व स्वयं संस्कार है, बाकी सब तो समय के साथ बह जाने वाली बातें हैं।

कबीर ने कहा था कि भाषा तो बहता नीर है। उसे कूप जल नहीं बनने देना चाहिए। यही बात जीवन पर भी लागू होती है। हम अपनी सन्तान को क्या बनाना चाहते हैं ? बनने की मत सोचिए। उन्हें अपने आप बनने दीजिए। उनके बनने में आपकी कृतियों, आपका व्यवहार, आपकी हर प्रवृत्ति उन्हें आन्दोलित, गतिशील बनाती है।

असल में तो बालक ही हमें बनाता है। हम बुनियाद हैं, वह कलश। हमारे, घिसने, दबने में ही वह चमकता है। हमारे मिटने में ही उसका विकास है। हमको भुला देने में ही उसका गौरव है। •

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने पढ़ने के कमरे में

कातिल से कवि

रात के नौ बजे थे। घर में मेरे और बहादुर के अतिरिक्त कोई न था। इतवार का दिन था। और सभी की छुट्टी—इस लिए घर के सभी लोग "नई दिल्ली" देखने गये हुए थे। मैं भोजन कर, चैस्टर पहिन अकेला ही घूमने निकल पड़ा। पहले तो सर्दी से दाँत बजने लगे, किन्तु कुछ ही दूर जाकर विचारों के विचित्र संसार में खो, मैं यह भूल गया। अभी कुछ ही दूर और चल पाया था कि गुरुद्वारे की ओर से पंजाबी के एक गीत की आवाज सुनाई देने लगी।

नी राताँ कालियाँ देखके कालिये नी,
देखीं किते कोई चन चढ़ा न बई।
देखीं,संभली, किसे लई हो बेकल,
तू किसे नूँ आपना दे दिल बई।

अर्थात

ऐ जल्दबाज (बेटी)! काली रातों को देखकर ध्यान रखना, कहीं कोई चांद न चढ़ा लेना देखना, सम्भलना किसी के लिए बेचैन होकर तुम किसी को अपना दिल न दे बैठना।

मैं सोचने लगा: "यदि भारत की भाषाओं में विवेक से भरा माधुर्य है तो वह केवल तीन भाषाओं में—संस्कृत, बंगला और पंजाबी। कोई गाता है तो प्रतीत होता है सचमुच रस घोले दे रहा हो।"

कुछ ही देर बाद इस कवि-दरबार के मंत्री ने एक विचित्र घोषणा की: अब इस सभा के मुख्य कवि सरदार जगतसिंह उर्फ 'जग्गा' जी अपनी मनमोहक कविता सुनायेंगे।

माईक्रोफोन के पास खड़े हो एक सुन्दर युवक ने कहना शुरू किया: आपके ही अनुरोध पर मैं अपनी प्रिय "कई" (फावड़ा) सुनाऊंगा। यह पिछले ही महीने रेडियो से भी प्रसारित की गई थी।

फिर उसने अति मधुर स्वरों में बोल शुरू किये:—

ओये! मैं गबरू पंजाब दा,
मोरियाँ दूर बलावां,
ओये! परवत थर थर कम्भदे,
मैं जद कई चलावाँ।
ओये! मैं गबरू .....

अर्थात्:

मैं पंजाब का युवक हूं
मुसीबतें मुझ से दूर हैं।
पर्वत भी काँप उठते हैं,
जब मैं फावड़ा चलाता हूं।

× × × ×

कविता क्या थी, गीत ही तो था। उसके अलाप से सारा वायु-मण्डल गूंज उठा। गीत सुनने के बाद लोगों ने करतल ध्वनि जो शुरू की तो रोके न रुकते थे। मंत्री के कई मिनटों के प्रयत्नों के पश्चात् ताली बजना बन्द हुई तो "वन्स मोर, इक वारी होर" ("एक बार फिर") की आवाजें आने लगीं। गीत फिर सुनाया गया। अब क्या था—एक नहीं, दो नहीं, दस नहीं, पूरे २५ व्यक्तियों ने कवि को पुरस्कार दिये।

एक के बाद दूसरा, दूसरे के बाद तीसरा, बस इस तरह गीतों की झड़ी लग गई। यह "जग्गे" कवि की रात थी। —नौ बज गये थे। लोग अब भी उसके गीतों की माँग कर रहे थे। दूसरे किसी को स्टेज पर आने ही न देते।

मेरे दिल में इस कवि से दो बातें करने की चाह हिलोरें लेने लगी। कवि दरबार समाप्त हुआ। मैंने स्टेज के निकट जा कवि को अपना परिचय दिया, और उसका परिचय मांगा।

"एक लम्बी कहानी है", उन्होंने कहा, "आप सुनेंगे तो चकित हो उठेंगे।"

"मुझे भी ऐसे ही अनुभव हो रहा था", मैंने कहा, "यह गले का सोज़ और यह आपका साज जरूर किन्हीं तूफानों की निशानी मालूम होते हैं।"

"जी हां, आइए, आपको भी अपनी कहानी सुना दूं", जग्गा जी बोले, "पंजाब के शेखूपुरे जिले का रहने वाला हूं। पाकिस्तान में क्या रहना था, आजादी के बाद हिन्दुस्तान में आ बसा। सच तो यह है कि इसे बसना नहीं कहा जाय तो अच्छा हो, क्योंकि यहाँ आते ही पुलिस ने मेरा पीछा शुरू कर दिया था।"

"वह क्यों?" मैंने पूछा।

"मैंने तीन कत्ल और जो कर दिये थे।"

"और! क्या आपने पहले भी कुछ कत्ल कर रखे थे।"

"कोई एक कत्ल ही नहीं, मैंने काफी डाके भी डाले हैं। शेखूपुर जिले का मैं नामी डाकू था। मैं ही नहीं, मेरे मामा, नाना सभी डाकू हैं।"

यह सुनकर मेरे रौंगटे खड़े हो गए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो यह डाकू से कवि आप कब बने ? कैसे बने ?"

"यह भी सुन लीजिए। हिन्दुस्तान में आने के बाद कत्ल करके बहुत समय तक मैं छिपा रहा। जब पुलिस ने पकड़ा तो मुकदमे चलने लगे। कई एक में बरी हो गया। कइयों से छुटकारा न पा सका। मिला जुलाकर १२ साल की कैद हो गई। जेल में व्यवहार ठीक न होने के कारण ढाई साल की कैद और बढ़ा दी गई। अब मुझे जेल में लगभग १४ वर्ष काटने थे। उन्हीं दिनों श्री मदन मोहन मेहता जेल के सुपरिन्टेन्डेन्ट होकर आए। एक दिन अकेले में ही गाना गा रहा था तो उन्होंने दीवार के पीछे छिप कर यह गीत सुना। दूसरे दिन मुझे बुलाया गया और अपने दफ्तर से सबको बाहर निकाल कर मेहता जी ने मुझे कुर्सी पर बैठने के लिये कहा। मैं चकित था कि यह कैसे साहब हैं जो एक नामी डाकू को कुर्सी पर बैठने को कह रहे हैं। डाकुओं को तो इनके पास फटकने तक नहीं दिया जाता। उनके बहुत अनुरोध पर मैं बैठ ही तो गया। ऐसे सज्जन पुलिस अफसर से कभी मेरा वास्ता न पड़ा था। उन्हीं के कहने पर मैंने जेल में "जेल यात्रा" नाम का ड्रामा खेला। जिस किसी ने यह नाटक देखा वही मुझे आकर कहता : "जग्गे, तुम तो बड़े सज्जन हो, तुम्हें सरकार ने क्यों बन्द कर रखा है ?"

"प्रसिद्ध अभिनेता श्री पृथ्वीराज ने यह नाटक देखा तो उनके दिल में मुझे स्वतन्त्र कराने का एक तूफान आ गया। वह जहाँ भी गए, उन्होंने मेरी रिहाई की चर्चा की।

उस समय पंजाब के मुख्य मंत्री श्री भीमसेन सच्चर ने मेरा नाटक देखा तो उनके हृदय में भी मेरे लिए स्थान बन गया। इस नाटक में मुझे चाचा कहता है : 'बेटा, दिन का भूला यदि रात को घर आ जाय तो भूला नहीं कहाता।' जिसका उत्तर मैं देता हूं : "चाचा, यदि भूले को घर का किवाड़ खटखटाने पर कोई किवाड़ न खोले तब ?" तो चाचा कहता है : "वह खटखटाता ही जाय। किवाड़ खुलेगा जरूर।"

"श्री भीमसेन सच्चर की आज्ञा से ही मुझे तीन महीने के लिए पैरोल पर छोड़ा गया।

जब मैं पैरोल से वापस लौटा तो मुझे चार माह के लिए फिर जेल में ठूंस दिया गया।

आखिर एक दिन श्री सच्चर ने जालन्धर जेल में मुझे बुलवाया। दो दिन के बाद एक कवि दरबार हुआ। मैंने इस कवि-दरबार में देश-सेवा की शपथ ली। यहीं मुझे स्वतन्त्र कर दिया गया।

सच पूछिए तो श्री मेहता ने ही कला की ओर मेरी रुचि बढ़ा मेरे जीवन में क्रान्ति की है। यदि मैं वह नाटक न खेलता; यदि लोग मुझे बार-बार न कहते : 'जग्गे तुम तो बड़े ही सज्जन पुरुष हो'; यदि मैं अपने आपको अच्छा न समझने लगता, तो मैं कभी अच्छा न बन पाता और आज तक जेल की रूखी रोटियाँ और पुलिस के कोड़े खाता, चक्की पीसता और कुछ साल बाद इस दुनिया को छोड़ सदा के लिए नर्क में चला जाता।

अब मैं देश-सेवा में लगा हूं। पापों को धो रहा हूँ और पुण्यों की कमाई कर रहा हूँ।

'समाज कल्याण' में श्री धनेश मल्होत्रा

नदी जब खूब उफन कर बहती है, तो कूड़ा अपनी बीच धार में बहाकर ले जाती है। जब उसके प्रवाह में उफान का बाढ़ रूप उद्दंड भाव नष्ट हो लेता है, क्षय को प्राप्त हो लेता है, तो कूड़ा करकट किनारे-किनारे बहने लगता है। दिल्ली का कनाट सर्कस, बम्बई का मैरीन ड्राइव और कलकत्ता की चौरंगी ये सभ्यता के, भारतीय सभ्यता के कालकूट हैं, जहाँ केवल कूड़ा करकट और तलछट और झाड़ा बुहारा मैल बहता रहता है। जो नादान बुद्धि हैं. अल्हड़ता जिन पर सवार है, वह इन किनारों को देख कर फैशन का स्वर्ग देखने को मिल गया, ऐसी रंगीनी का नशा ले बैठते हैं, लेकिन भारत 'मेरीन ड्राइव' पर सांस कैसे ले सकता है। ४६ करोड़ भारतीय मनुजों में साढ़े ४५ करोड़ मनुज यथार्थ जीवन जीते हैं, तप का जीवन जीते हैं, गर्दन झुकाकर जीवन जीते हैं और पसीना अपनी छाती का बहाकर और उसे अंजुली से सहेज कर भारत के मातृचरणों में श्रद्धांजलि उलींच कर जीवन जीते हैं। ये चौरंगी, मैरीन ड्राइव और कनाट सर्कस के २५-५० हजार स्त्री पुरुष जो विदेशी राग-रंग से अकड़ कर निकलते हैं, अर्द्धनग्न होकर निकलते हैं, कृत्रिम साज सज्जा का बनाव-शृंगार ओढ़ कर निकलते हैं, अपने ही चर्म के स्खलन को लिपस्टिक और फेस पावडर से पोत कर निकलते हैं, मानो रामलीला के स्वांगी घर की चौहद्दी से बाहर आ गए हों और अपने दिमाग के कोढ़ को रूप-यौवन का अमृत कहते हुए झूठ बोलते हुए निकलते हैं, तब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुम्बन और चाबुक

● श्री जगदीश चावला

प्रतिमा और पुजारी

सन्ध्या की बेला आई और मन्दिर में शंख और घंटियों की मधुरिम ध्वनि गूंज उठी। आस्था में डूबे कई लोग भगवान को अपनी मनौती और मुरादों की सफलता पर फूलों, बताशों और रुपयों का नजरांना भेंट करने आए हैं और कुछ मन में नए संकल्पों के बीज बोकर वापिस लौट रहे हैं।

एक टूक होकर मैं पत्थर की उस प्रतिमा को देखता हूं जिसे भगवान कहते हैं और दूसरी ओर मेरी नजर में वह पुजारी भी है जो इन श्रद्धालु लोगों की भेंट स्वीकार करता जा रहा है। प्रतिमा के होठ सिले हैं, जिससे वह दो बताशे भी नहीं खा सकती और पुजारी का पेट इतना खुला है कि उसकी पहली नजर इन भक्तों के पैसों पर ही पडती है जिन्हें लेकर वह अपने एक थैले में डाल दो बताशे दे, बेअसर आशीर्वाद बांट रहा है।

प्रतिमा के चरणों में दो फूल रखकर घर लौटता हूं, तो अन्तः-करण की अदालत से एक ही फैसला मेरे वैचारिक धरातल पर आ कर टिक जाता है कि इन्सान के स्वार्थ से उसका कोई टकराव नहीं और दुख में वह मनुष्य को एक प्रकार की सान्त्वना भी देता है, इसलिए मन्दिर की वह प्रतिमा पत्थर होकर भी महान है, भगवान है और उस पुजारी का स्वार्थ दुनियावी लोगों की तरह अपना पेट भरने में ही लगा है, अतः उसका महत्व एक पेशेवर दुकानदार से अधिक कुछ नहीं।

लोकतन्त्र का छकड़ा

लोक-सभा को मैं जनता और देश के हितों की रक्षा करने वाली एक अवामी अदालत मानता हूं, पवित्र और आदरणीय।

उस दिन वहां राष्ट्रीय एकता पर एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव प्रस्तुत किया जा रहा था, जिसके अन्तर्गत कहा गया है कि हम सब एक हैं, हमारा देश एक है, हमारी कौम एक है, लेकिन मैं ऊपर की दर्शक गैलरी से देख रहा था कि इस प्रस्ताव पर कई विधायक अपनी बैंचों पर बैठे नींद की खुमारी में ऊंघ रहे थे और कुछ तो जमुहाइयां ले रहे थे।

जानता हूं लोक सभा के बाहर कुछ आवाजें हैं—हमारा धर्म जुदा है, हमारी भाषा जुदा है, हमारा प्रांत जुदा है, हम एकता नहीं चाहते, हम एक साथ नहीं रह सकते। इसी जनून में बहकी उत्तेजित भीड़ देश के संविधान की प्रति को आग की लपटों में झोंकती है। देश का संविधान जिसके विषय में एक बार श्री कृष्णा मेनन ने एक भेंट में हमसे कहा था कि हमारा संविधान हमारे देश की बाइबिल है, गीता है, कुरान है, तो गोया वह

भारत मा शर्म और ग्लानि से अपना मुंह नीचा कर लेती है।

मेरीन ड्राइव उस महासागर के तट का नाम है, जहाँ पर आधुनिक बम्बई की आधुनिकायें चरित्र-स्खलित आधुनिकों का खुलावरण करने, जल की लहरों पर चलने की लीला का अविश्वसनीय करतब दिखाने के समान, सरिता तीरे खरामा-खरामा चहलकदमी किया करती हैं। रात्रि को विद्युत की जगमगाहट में मलाबार हिल से ऐसा लगता है कि मणि-कांचन का एक सर्प अपनी कुंडली खोले बैठा है। मिलिटरी स्पाट से देखने पर प्रतिभासित होता है कि मानों सर्पमणियों का नागराज अपनी सर्पिणी के साथ शयन करते हुए मौन अभिसार रच रहा है! अवश्य इस नयनाभिराम दृश्य को देखकर यह अनुभूति कतई नहीं होती कि हम कहीं दिव्य नागों के लोक में पहुंच गए हैं। जो भी है वह रजतपट की दुराशा, तस्वीर की सी फोटो-पेपर वाली चमक और ढलती रुग्ण जवानी का ग्रीन-रूम वाला मेकअप! कौन ऐसा दर्शक है, जो मेकअप रूम में बैठकर नाटक देखने की रसानुभूति भोग सकता है?

मेरीन ड्राइव उसी समय शाश्वत सत्य है, जब उसके तट रिक्त होते हैं, और समुद्र अपने नर रूप को लिए बीच दुपहर या अर्द्ध-रात्रि में मौन भाव से ज्वार में चढ़ता रहता है! बम्बई रोजी-रोटी की तलाश में उमड़े हुए मनुजों का ज्वार है। मेरीन ड्राइव की फैशन परेड पतित विधवा का बरबस किया हुआ रूप शृंगार है!

[श्री बरूआ 'मंगल दीप' में]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तेजित भीड़ देश की गीता जलाने में मसरूफ है।

ऐसे में केवल एक ही प्रश्न मेरे चिन्तन का केन्द्र बनता है कि जिस देश में लोक सभा के विधायक महत्वपूर्ण प्रस्तावों पर सोने या ऊंघने के आदी हों और जहां की जनता अपने ही संविधान को जलाकर भंगड़ा नृत्य करने की अभ्यस्त हो, वहाँ हमारे लोकतन्त्र का छकड़ा विश्व की प्रगति में किस तरह भाग ले सकेगा।

सभ्य कुत्ता, असभ्य आदमी

मशीनरी की एक दुकान पर एक शिक्षित ग्राहक ने अपना माल खरीदते समय दुकानदार से पूछा—"क्यों भाई साहब, यहाँ नज़दीक कोई पेशाब घर है क्या ?"

दूकानदार ने झट उत्तर दिया—"अजी, आजकल तो सारा हिन्दुस्तान ही पेशाबघर बना हुआ है। गली में बैठ जाओ या सामने वाली बन्द दूकान के चबूतरे के पास, आपको कोई रोकने-टोकने वाला नहीं !"

दूकानदार की बात सुनकर उस ग्राहक ने राह चलते बाज़ारी लोगों का ख्याल किये बिना सामने चबूतरे के पास अपनी नागरिकता को सम्मानित कर दिया।

कुछ दिन पश्चात् दैनिक 'हिन्दुस्तान' के समाचारों में छपी पेरिस की इस घटना ने मेरे मनःस्थल में एक हलचल पैदा कर दी कि वहां के क्षेत्रीय प्रशासन में सफाई की देखभाल करने वाली एक संस्था ने डौली और चाकते नामक दो कुत्तों को इसलिए पुरस्कृत किया कि उन्होंने सभ्य कुत्तों की तरह पेशाब करने के स्थान पर ही जाकर पेशाब किया, कहीं इधर उधर नहीं।

उपरोक्त दोनों घटनाओं पर विचार करने के बाद मैं इसी निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि क्योंकि आज का आदमी कानून या बड़ों का अंकुश अपने पर सहन नहीं करना चाहता, इसी लिए असभ्यता उसकी सहचरी बन रही है और कुत्ते अपने मास्टर के इशारों का पालन करते हैं, इसलिए वे सभ्यता के इतिहास में अपना नाम जोड़ रहे हैं।

विद्वान की सीख, दरोगा का डंडा

नगर के एक छविगृह में नई फ़िल्म के प्रदर्शन पर तीसरे दर्जे की टिकट-खिड़की पर खड़ा है भीड़ का एक मजमा। भीड़ का व्यवहार सामान्य आदमी के व्यवहार से भिन्न होता है, यही कारण है कि भीड़ का यह जमघट टिकट प्राप्ति के लिए आपसी धक्का मुक्की में व्यस्त है। खराच ! लो, उस रिक्शा-पुलर की कमीज़ की आस्तीन ही फट गई ! और देखिए, वह आदमी भी कैसा विचित्र है, जो भीड़ के जमघट के सिरों पर कीड़े की तरह रेंगता हुआ खिड़की तक पहुंचने की कोशिश कर रहा है; जैसे यह कोई आसमानी सड़क हो !

और लो भीड़ से निकल कर कुछ लोग उस बेचारे पत्रकार से ही उलझ पड़े हैं। कारण यह है कि उसने पंक्तिबद्ध होकर टिकट लेने और नागरिकता के नियमों को पालने का मनहूस सुझाव इन्हें दे डाला था !

"अबे नागरिकता में रहेंगे, तो टिकट तेरा बाप देगा क्या ?" एक उस विद्वान पत्रकार पर बरस पड़ा, "अबे, इसके बाप को क्यों तकलीफ देते हो, इसे ही कहो ज़रा लाकर दिखाये।" दूसरे ने भी दौंगड़ा दिया। सब के हो हल्ले में उपहास का बिन्दु बना वह पत्रकार भी अब अपने सुझाव पर पछता रहा है कि निकम्मों को नागरिकता की बात कह दी।

तभी आगए दारोगा जी और आते ही उन्होंने अपना डण्डा क्या घुमाना शुरू किया कि जमघट के दिल दिमाग़ और पाँव भी घूमने लगे और डंडे के भय से यह जमघट तुरन्त लाईनें लगा कर खड़ा होगया।

सिनेमा का शो खत्म होने पर स्क्रीन पर राष्ट्रीय झण्डा फहराया गया और राष्ट्रीय गान की धुन बजाई गई, मगर हॉल में बैठे कुछ मनचलों को खड़ा होना भी कोफ्त सूझ रहा है, तो कुछ कमबख्त इस मौके पर भी गंडेरियाँ चूस रहे हैं, सिगरेट पी रहे हैं या गप्पें मार रहे हैं।

ऐसे अवसर पर सोचता हूँ कि कहीं से वे खिड़की वाले दारोगा जी आ जाएँ और इनकी कमर पर अपने डण्डे का ऐसा तग़मा इनाम में जड़ दें कि इन्हें यह अक्ल हासिल हो कि यह झण्डा और गान हमारे देश के गौरव की निशानी ही नहीं है, हमारे बुजुर्गों के लहू और शहादत की कहानी भी है। ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : आरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक

ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स--

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल

फोर्ट, बम्बई – १

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लुभावनी वस्तु ग्राहकों को अधिक पसन्द आती है

यदि आप
अपने मालको
जल्दी बेचने की सोचते
हैं तो ..बस उनकी बाहरी
सुन्दरता बढ़ा दीजिये; यानि
उसको रोहतास पैकिंग पेपर में
लपेटकर अधिक आकर्षक, मनपसन्द और
अपने ढंग का निराला बना डालिये। ऊँचे दर्जे
के कार्टन्स पे[illegible] और डब्बे बनाने के लिये
इनके निर्माताओं [illegible] हमेशा रोहतास पेपर्स
और बोर्ड ही अपने [illegible] गुणों के कारण अधिक
पसन्द किए जाते हैं। भड़कीले रंगों के साथ लगा हुआ
ट्रेडमार्क इनकी शान में चार चाँद लगा देता है।
रोहतास पैकिंग पेपर्स और बोर्ड्स अधिक टिकाऊ
बनावट में चिकने होते हैं जो आपके माल को गन्दगी,
धूल और नमी से बचाते हैं जिससे आपके माल की
ताजगी और चिकनाहट हमेशा बनी रहती है।

रोहतास
इण्डस्ट्रीज
लिमिटेड
डालमिया नगर (बिहार)

मैनेजिंग एजेंट्स : साहू जैन लिमिटेड ११, क्लाइव रो कलकत्ता-१

IPG-RI : 383 HIN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक—अखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स सहारनपुर में मुद्रित-प्रकाशित

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

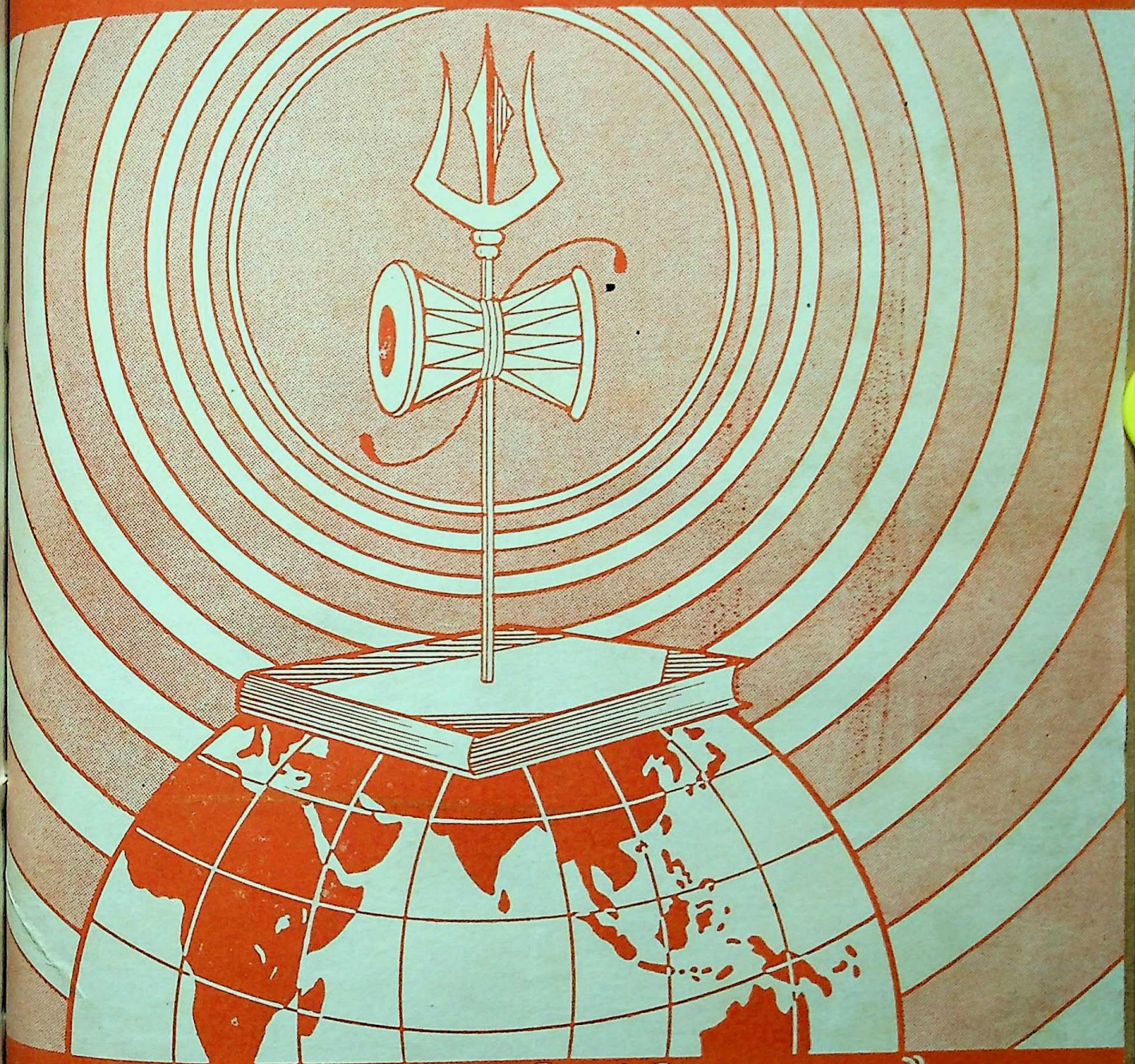

चालू दुनिया को जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
चालू दुनिया को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
जाने समझे पर राय बनाने के लिए मासिक आवश्यक है,

'नया जीवन' में

दैनिक, साप्ताहिक, मासिक की इन सभी विशेषताओं का समन्वय है।
दैनिक पत्र पढ़ने वालों के लिए आवश्यक, न पढ़ने वालों के लिए अनिवार्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज़ के एक छोटे पुर्जे पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी।
अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है!

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज़ के बिना न
शास्त्र मिलते न साहित्य।
कागज़ हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज, एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु, –ईख की खोज करने वाला–
उस गन्ने को लोगों ने चूसा, तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला–
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है !

★

कोशिश कीजिये–
कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!
श्रेष्ठ चीनी के निर्माता–

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,
शामली (मुजफ्फरनगर)

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं
तीनों को सदा ध्यान में रखिए !

खड़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत
एवं
भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के
साथ-साथ अब अनेक नवीन एव आकर्षक डिज़ाइन में छींटों का भी निर्माण होने लगा है।

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स
सहारनपुर : उत्तर प्रदेश
रजिस्टर्ड आफिस : चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—३१६, ३६४, १६०

प्रबन्धक
सेठ कुलदीप चंद बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दून घाटी

= का =

गौरव

अमिताभ टैक्सटाइल मिल्स लिमिटेड

देहरादून :: उत्तर प्रदेश

श्रेष्ठतम :

★ सूत

★★ हौज़री

★★★ बंटा सूत

निर्माता

अमिताभ ! अमिताभ !! अमिताभ !!!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर मौसम में, हर घड़ी अपने काम पर मुस्तैद !

चाहे बारिश हो या धूप; दिन हो या रात; शामलाल अपने काम पर मुस्तैद रहता है लेकिन शामलाल नाम तो डाकतार विभाग का सिर्फ प्रतीक है।

हमारा शामलाल एक पोस्टमैन हो सकता है; तार वाहक हो सकता है; रेलवे मेल सर्विस में चिट्ठी छांटने वाला हो सकता है; तार बाबू हो सकता है; एक कलर्क हो सकता है या फिर, डाक-तार विभाग में काम करने वाले साढ़े चार लाख कर्मचारियों में से कोई एक हो सकता है, जो रात दिन अपनी ड्यूटी पर मुस्तैद रहते हैं।

भारतीय डाक-तार विभाग देश भर में ६७,००० डाकघर; ८,५०० तारघर; २,५०० टेलीफोन एक्सचेंज (८ लाख टेलीफोन से भी अधिक) चलाने के अलावा अनेक अन्य विशिष्ट सेवायें प्रदान करता है। देश भर में रोजाना १८० लाख चीजें डाक से भेजी जाती हैं; १ लाख ५० हजार तार किये जाते हैं और २ लाख सफल ट्रंक कालों के अलावा अनेक अन्य सेवायें पूरी की जाती हैं।

शामलाल का काम हालांकि उसके लिए रोजमर्रा का काम होता है पर वह उसे पूरी जिम्मेदारी और सावधानी से पूरा करता है। अपना काम होशियारी और योग्यता से करने की उसे ट्रेनिंग मिली है। आपका सहयोग मिलने पर वह आपकी सेवा और अच्छी तरह कर सकेगा।

हमें सहयोग दीजिए ताकि हम आपकी बेहतर सेवा कर सकें

डाक व तार विभाग

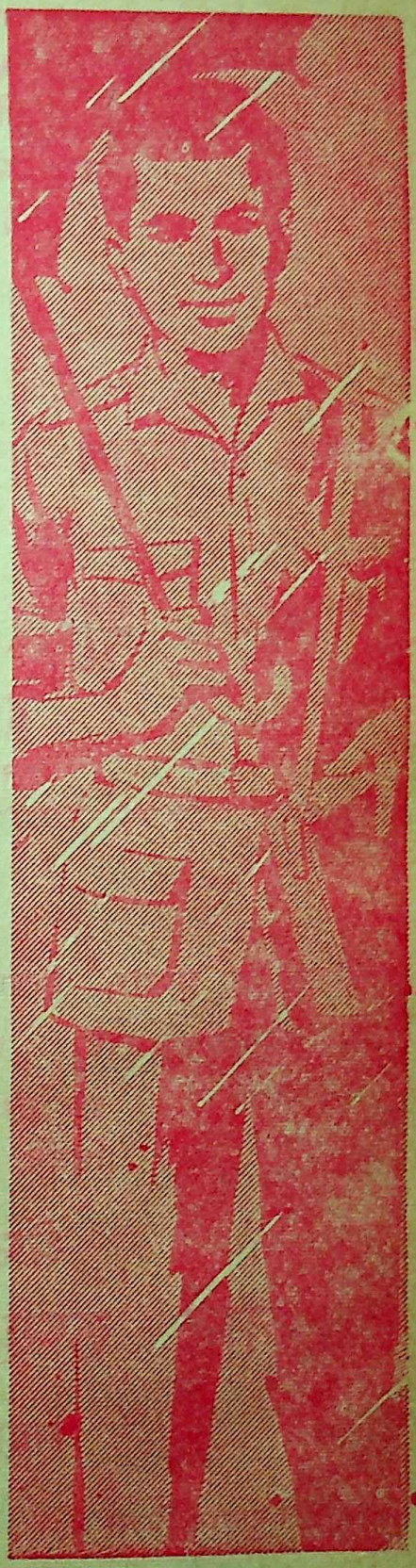

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन राम् ने क्या कुछ कहा,
कि श्याम् भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !
राम् और श्याम् दो सगे भाई,
राम् स्वभाव का कड़वा,
श्याम् शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि

स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है ! सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए ।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन-जन में फैलेगी ।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरी जानकारी

- महीने के अन्त में महीने का अङ्क प्रकाशित होता है। अगले महीने की ७ तारीख तक भी पिछले महीने का अंक न मिले, तो कार्ड लिखें।
- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य है पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और प्रत्येक रचना पर अपना पूरा पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से बुक पोस्ट द्वारा वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण !
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह चाह रखते भी प्यार मान ही दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें, पर 'नयाजीवन' में अब आम पुस्तकों की समीक्षा नहीं होतीं। प्रकाशकों से विशिष्ट पुस्तकें ही भेजने की प्रार्थना है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार मे दोनों की सुविधा के लिए ग्राहक-संख्या लिखने की प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीज़ों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक—नया जीवन
सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

नया जीवन

देहातों और नगरों के लिए
विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

प्रधान संपादक
कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

संपादक–संचालक
अखिलेश

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का फालतू समय चैन और खुमारी में काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें !

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने मे फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं !

अप्रैल, मई १९६६

स्वामी संस्थान
विकास लिमिटेड
सहारनपुर · उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

अता-पता

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं ललकार लगा सकता हूं !	श्री शिवसिंह 'सुमन', कवि निवास, उमरन, रायबरेली	१०३
राष्ट्र-चिन्तन	सम्पादकीय	
विश्व-चिन्तन	श्री दीनदयालु शास्त्री, एम.एल.सी. जस्साराम मार्ग, हरिद्वार	१०४
चौथे आम चुनाव के द्वार पर खड़े भारत के राजनैतिक दल क्या हमारे प्रजातन्त्र की रक्षा कर सकेंगे ?	कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'	१११
तुम मेरे अन्तर को चीरो	श्री प्रेम 'निर्मल' हिन्दी साहित्य परिषद, हापुड़	११३
देश के युवक दीक्षित हों	श्री बलवन्त सिंह स्याल निदेशक शिक्षा विभाग, उ. प्र. लखनऊ	१२४
१९३७ का चुनाव और मंदिर की प्रेरणा	श्री जगन प्रसाद रावत सार्वजनिक निर्माण मंत्री, उ. प्र. लखनऊ	१२५
आस्था का रंग	श्री शंकर कान्त शर्मा पाक्षिक हिन्दी हेरल्ड, पत्रिका भवन बनखेड़ी, भोपाल म. प्र.	१२८
चुम्बन और चाबुक	श्री जगदीश चावला के. २/१४१, देहरादून रोड, सहारनपुर	१३०
जब एक आने में न्याय मिला	श्री रमेशचन्द शर्मा हाई स्कूल लक्सर, जि. सहारनपुर	१३१
गाँवों का मूल रंग उड़ता जा रहा है	श्री रामनारायण उपाध्याय साहित्य कुटीर, खण्डवा (म. प्र.)	१३२
इकहत्तरवीं वर्ष गाँठ : एक आत्म निरीक्षण	श्री ब्रजलाल बियाणी सम्पादक 'विश्व विलोक' १२२/२३ जावरा कम्पाउंड, इन्दौर म. प्र.	१३३
अंतःकरण के फोटोग्राफ	...	१३५
ताज़ी बर्फ के ताज़े सपने	डा. हरिदत्त भट्ट शैलेश, दून स्कूल, देहरादून	१३७
		१३८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं ललकार लगा सकता हूँ !

श्री शिव सिंह 'सुमन'

●

धरती को आकाश बना दूँ मुझ में इतनी शक्ति नहीं है,
लेकिन दूर गगन को भू पर बाहों के बल ला सकता हूं।

मैं अपनी हर स्वर लहरी से जन जन को जागृत कर दूँगा,
मैं अपनी आँखों के जल में हिन्द महासागर भर लूँगा,
हिमगिरि की ऊँची चोटी से धरती के रोमांचित कण तक—
जो भूखे हैं, जो प्यासे हैं, उनकी मैं पीड़ा हर लूँगा,

जीवन छीन मौत से ला दूँ मुझ में इतनी शक्ति नहीं है,
लेकिन महामरण के घर में जीवन राग सुना सकता हूं।

मैं अपनी यह कलम उठा कर जर्जर विश्व बदल डालूँगा,
मैं अपना हर गीत सुना कर हर ठठरी में बल डालूँगा,
जहाँ तड़पती सदा मनुजता जिसके पन्ने रंगे खून से—
मैं अपनी मुट्ठी में भर कर वह इतिहास मसल डालूँगा,

गिरे मनुज को मनुज बना दूँ मुझ में इतनी शक्ति नहीं है,
किन्तु मनुजता की अर्थी में अपना स्कंध लगा सकता हूं।

देख न पाता तड़प रही हैं आँखों के सम्मुख जो लाशें,
देख न पाता रुक रुक जाती पीड़ा मुर्दा मानव की श्वाँसें,
सोच रहा हूं जीवन बदलूँ या मैं स्वयं मरण को बदलूँ,
या जिन्दगी मौत की दूरी में भर दूँ मैं गर्म उसासें,

जन जन में नव जीवन भर दूँ मुझ में इतनी शक्ति नहीं है,
किन्तु गोवर्धन के उठने में अपना हाथ लगा सकता हूं।

मैंने गली गली में जाकर है अविरल आवाज लगाई,
मैंने द्वार द्वार पर फूँकी महा जागरण की शहनाई,
धरती के कण कण में फैले नव विकास का प्रहरी बन कर—
सोती हुई मजारें मैंने दर्द सुना कर पुनः जगाई,

नभ से मैं उत्थान उतारूँ मुझमें इतनी शक्ति नहीं है,
लेकिन जाकर द्वार पतन के मैं ललकार लगा सकता हूं !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

इंदिरा जी सफल रहीं, लेकिन ?

नेहरू जी की लाड़ली बेटी और भारत की तेजस्विनी प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी की अमरीका यात्रा सफल रही और वहाँ उन्होंने राजनीतिज्ञों के माया जाल में, पत्रकारों के बवंडर में और उद्योगपतियों की आँधी में भारत के सम्मान की दीप शिखा को अपने सुन्दर व्यक्तित्व से, आत्मविश्वास से और सुलझे हुए विचारों से प्रदीप्त रखा, यह उनकी एक ऐतिहासिक सफलता है और इसके लिए वे बधाई की हकदार हैं।

उनकी अमरीका यात्रा एक विशेष परिस्थिति में हुई थी और वह परिस्थिति पारस्परिक अविश्वास से भरी थी; यहाँ तक कि जरा-सी भी असावधानी से विस्फोटक हो सकती थी। उस परिस्थिति को समझकर ही हम इंदिरा जी के कार्य का महत्व समझ सकते हैं। जरा पीछे हटकर हम उसे समझें।

२० अक्टूबर १९६२ को भारत पर चीन का आक्रमण हुआ, तो अमरीका ने भारत को तुरन्त सैनिक सहायता दी और इससे अमरीका भारत में बेहद लोकप्रिय हो गया, यहाँ तक कि तटस्थता नीति छोड़कर भारत को अमरीका से गठबंधन कर लेना चाहिए, इस दिशा में देशव्यापी चिंतन हुआ। यह लोकप्रियता भारत-पाक युद्ध में खंडित हो गई; क्योंकि अमरीका और उस के दुमछल्ले इंगलैंड ने खुले आम भारत का विरोध किया।

सारी कड़वाहट को एक ही जगह देखना हो, तो प्रधानमंत्री स्वर्गीय श्री लालबहादुर शास्त्री के निमंत्रण कांड को देखना चाहिए। अमरीकी राष्ट्रपति ने शास्त्री जी को अमरीका आने का निमंत्रण दिया जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया। उसके साथ ही कनाडा का निमंत्रण भी उन्हें मिला। शास्त्री जी ने प्रोग्राम बनाया कि वे कनाडा होकर अमरीका जाएँगे।

इसी बीच वियतनाम में अमरीका ने गैस का प्रयोग किया। शास्त्री जी ने इसकी निन्दा की, इसे गैर इंसानी काम बताया। अमरीकी प्रेजीडेंट जानसन साहब का घमंड इससे बिफर गया और उन्होंने भारत के प्रधानमंत्री का निमंत्रण स्थगित कर दिया, यह कहकर कि इस समय बहुत काम हैं। यह एक राष्ट्रीय अपमान था। शास्त्री जी ने इस स्थगन को स्थगन स्वीकार न कर उस निमंत्रण को अस्वीकृत कर दिया, जिससे वह निमंत्रण समाप्त ही हो गया। यह अमरीका को करारा जवाब था, पर यह करारा तमाचा हो गया, जब शास्त्री जी ने घोषणा की कि कनाड़ा का निमंत्रण कायम है और निश्चित तारीखों में में मैं वहाँ जा रहा हूं। वे कनाडा गए और इतने सख्त रहे कि उन्होंने नियागरा प्रपात को कनाडा वाले किनारे खड़े होकर देखा, अमरीका वाले किनारे खड़े होकर नहीं।

इन सब बातों से भारत अमरीका के संबंधों में गतिरोध पैदा हो गया और गतिरोध की इसी स्थिति में इंदिरा जी अमरीका गईं। उनकी सफलता है कि यह गतिरोध टूट गया और आपसी सम्पर्क की धारा फिर बहने लगी। भय और प्रलोभन के उस राजकीय वातावरण में भी इंदिरा जी ने भारत की नीतियों को झुठलाया नहीं और वियतनाम पर फ्रांस के मत का समर्थन करने के साथ ही साफ-साफ कह दिया कि "हमारी दोस्ती का यह अर्थ नहीं कि हमारे राष्ट्रीय हित हमेशा एक ही हों और साफ-साफ बात है कि जब वे एक न होंगे, तो भारत अपने राष्ट्रीय हितों को महत्व देगा।" काश्मीर के मामले में भी वे दृढ़ रहीं और आर्थिक सहायता के बारे में भी उन्होंने यह कहकर सारा धुआँ एक साथ उड़ा दिया कि "हम हमेशा विदेशी सहायता लेते रहेंगे, यह बात गलत है; सही यह है कि हम बिना किसी की सहायता के अपना स्वावलम्बी निर्माण कर सकें, यह स्थिति पैदा करने के लिए ही सहायता चाहते हैं।"

अमरीकी राष्ट्रपति, मन्त्री, व्यवसायी, पत्रकार इन्दिरा जी से प्रभावित हुए, पर मुख्य प्रश्न तो यह है कि अमरीकी जनता ने भारत को क्या समझा ?

इस प्रकार इंदिरा जी ने अमरीका के शासक और व्यापारी क्षेत्रों में भारत का सर ऊँचा किया और वे इससे प्रभावित हुए; कहें उनकी यात्रा सफल रही, लेकिन प्रश्न तो यह है कि एक प्रजातंत्री देश में असली शक्ति जनता है, तो अमरीकी जनता भारत के बारे में क्या सोचती है ? भारत के बारे में उसके मन की प्रतिक्रिया क्या है ? वह हमें किस नजर से देखती है ? इन प्रश्नों का उत्तर पाने के लिए

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने अमरीकावासी अनेक भारतीय मित्रों को लिखा। उनके पत्र लेकिन का जो उत्तर देते हैं, वह इतना कड़वा है कि अगर हम सर्वज्ञता को ही राष्ट्रीय गौरव नहीं मानते, तो हमें अपने को बदलना चाहिए और अपनी नीतियाँ बदलने के लिए अपनी सरकार को जोर से आवाज़ लगानी चाहिए।

एक मित्र जो दस साल से अमरीका में प्राध्यापक हैं, अपने पत्र में लिखते हैं–"जिन दिनों में यहाँ श्रीमती इंदिरा गांधी रहीं, उन दिनों की रिपोर्टों से जो वेदना हुई, वह मृत्यु की तरह मर्मान्तक है। हमारी सरकार की नीति भारत को खोखला कर रही है। नतीजा यह कि हम भारतीय अमरीका में सिर उठा कर नहीं चल सकते। प्रश्न है कि भारतीय जनता यह कब तक सहेगी?"

एक दूसरे मित्र ने, जो अमरीका में ऊँचे पद पर हैं, लिखा–"अमरीकी जनता और पत्रों का रुख इतना अपमान जनक रहा कि एक भारतीय के नाते ऐसी शर्म आई, जैसी जीवन में पहले कभी नहीं आई थी।"

एक तीसरे मित्र ने, जो अपने व्यापार के सिलसिले में अमरीका रह रहे हैं, लिखा–'भारत के खाद्य-मंत्री श्री सुब्रह्मण्यम ने बुरे ढंग से अकाल का हल्ला मचा कर और उनके नादान दोस्तों ने ऊँचे दामों पर अखबारों में भूखे भारत की सहायता करने के पूरे पूरे पृष्ठों के विज्ञापन छपा कर अमरीकी जनता के सामने भारत की जो तस्वीर पेश की, वह भुखमरे भिखारी की तस्वीर से भिन्न न थी।"

एक चौथे मित्र ने, जिन का सम्बन्ध भारत के दूतावास के साथ है, अपने पत्र में लिखा–"कल ही [illegible] कर कहा कि जब तुम लोगों के पास खाने को रोटी भी नहीं है, तब तुम हमारी भीख के सहारे बड़े बड़े कारखाने बनाने की नवाबी क्यों कर रहे हो? यकीन कीजिए मुझे पसीना आगया और मन में आया कि नौकरी छोड़ कर भारत चला जाऊँ और गाँव गाँव में कहता फिरूँ कि किसानों, भारत की इज्ज़त बचाओ।" सचाई यह है कि विदेशों के लोग यह सोचकर कि संसार भर से अरबों रुपये की सहायता और कर्ज लेकर भी कृषि प्रधान भारत १८ वर्षों में अन्न में स्वावलम्बी नहीं हो सका भारत को एक निकम्मा और भविष्यहीन देश मानने लगे हैं।

(२)

श्री वेदप्रकाश बटुक गांधीवादी विचारक हैं और पिछले कई वर्षों से अमरीका के विश्व विद्यालय में प्रोफेसर हैं। भारतीय दर्शन की भक्त एक विदुषी कन्या ने उनसे विवाह किया है। उन्होंने इस परिस्थिति का जो विश्लेषण किया है, वह इस प्रकार है –

स्वाभिमान, सुरक्षा और प्रगति

"मार्च १९६६ के अंतिम सप्ताह में अमेरिकन पत्रों में दो समाचार साथ साथ छपे, जिन्होंने मन को झकझोर दिया। एक ओर जहाँ भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के आगमन की सूचना अमेरिकन सहायता मांगने के संदर्भ में छपी, वहां दूसरी ओर चीन में भूकम्प से पीड़ित नागरिकों की रूस द्वारा स्वयं निवेदित सहायता के निमन्त्रण को चीन द्वारा ठुकरा देने की सूचना। हम चीन को अपना विरोधी समझते हैं। विगत दिवसों में चीन ने काफी कुछ हमारे विरोध में किया है, किन्तु चीन से स्वाभिमान का पाठ यदि हम सीख सकें, तो आज भी एक राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण आरम्भ हो सकता है। जब रूस का सम्बन्ध चीन से पहले पहल बिगड़ा था, तो चीन ने रूस का कर्जा पूरा पूरा चुकाकर बात करना स्वीकार किया था, समानता के आधार पर। सारे विश्व का शत्रु सब देशों द्वारा तिरस्कृत देश चीन केवल अपने बल पर अणुबम बना सकता है, अपने बल पर बिना दूसरे देशों की आर्थिक दासता को स्वीकार किये भारत के विरोधी देशों को शस्त्रास्त्र भेज सकता है और हम दूसरे देशों से सहायता की भीख मांगते फिरते हैं।

दम्भ भरते हैं कि हम हर अन्तर्राष्ट्रीय समस्या में तटस्थ रहेंगे, पर देश की प्रगति यदि हम कर रहे हैं, तो भ्रष्टाचार में, अनाचार में। अमेरिका से जब भारत की प्रधान मंत्री सहायता मांगने आई हैं, तो अमेरिका के राष्ट्रपति ने उनका स्वागत करते हुए कहा कि वे भारत पाकिस्तान दोनों के साथ समान रूपेण मित्रता चाहते हैं। दूसरे अर्थों में यदि हमारी सहायता भारत चाहता है, तो उसे पाकिस्तान द्वारा छेड़े युद्ध का प्रतिकार नहीं करना चाहिए। करे तो अमेरिका द्वारा दिये गए किसी शस्त्रास्त्र का उपयोग नहीं करना चाहिए। दूसरे शब्दों में यदि चीन स्वयं युद्ध न छेड़कर पाकिस्तान के द्वारा भारत पर आक्रमण करता है, तो भारत को यह अधिकार नहीं कि वह अमेरिका द्वारा दिये गए अस्त्रों का उपयोग करे; जब कि पाकिस्तान को चीन और अमेरिका दोनों ही सहायता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देते रहेंगे।

इस प्रकार हम जहाँ अपनी स्वतन्त्रता को दूसरों के हाथों में सौंप रहे हैं, वहां देश की सुरक्षा भी खतरे में है। चीन के आक्रमण के बाद पंडित नेहरू ने स्वीकार किया था कि हम ख़याली दुनिया में रह रहे हैं। चीन ने उस चेतना को झकझोरा। अब दूसरी खयाली दुनिया में हम रह रहे हैं। वह यह कि पश्चिमी देश आवश्यकता पड़ने पर हमारी सहायता करेंगे। जिन लोगों ने भारत के इतिहास के निर्माण में योग दिया, वे इतनी जल्दी भूल गए कि पश्चिमी देश मुस्लिम लीग के पक्षपाती थे और अब पाक के पक्षपाती हैं। आवश्यकता इस बात की है कि जनता समय आने से पहले चेत जाए, नहीं तो सुरक्षा, स्वतन्त्रता सभी कुछ खतरे में पड़ सकती है।

अमेरिका विश्व में जनतन्त्र का हामी है, यह तो इसी बात से पता चल सकता है कि पिछले बीस वर्षों में कितने जनतन्त्रों का विनाश अमेरिका ने किया। आज भी वियतनाम में जो युद्ध छिड़ रहा है उसमें कितनी जनतन्त्रता अमेरिका ने दिखाई है? भारत, जो इस युद्ध में स्वतन्त्रता का साथ दे सकता था, अपने भिखमंगेपन के कारण और चीन से शत्रुता होने के कारण नहीं दे पा रहा। कब तक हम दूसरों के बल पर अपना पेट पालन करेंगे और दम भरेंगे स्वतन्त्रता का? जो भी व्यक्ति अमेरिका के पत्र पढ़ता है भारत के भिखमंगेपन से उसका सिर झुक जाने को विवश हो जाता है। प्रतिदिन भारत की दुर्दशा और दम्भ ही यहां का पत्रकार लिखता है। भूखे भारत की सहायता के लिए श्रीमती गांधी आई हैं, इसकी घोषणा करता है। फिर कौन-सा गौरव हम अनुभव करें?

एक और बात सामने आई। भारत में रुपये के सिक्के में अमेरिका ने लगभग ढाई अरब रुपया इकट्ठा कर लिया है। डालर के गुलाम तो हम हैं ही पर वह अलग सवाल है। जिस देश का अपने सिक्कों में धीरे-धीरे अधिकाधिक भाग विदेश के हाथ में हो और उन रुपयों का उपयोग केवल भारत में ही हो सकता हो, तो इस बात की क्या गारन्टी है कि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में वह देश दूसरे देश के हस्तक्षेप का शिकार न होगा? परोक्ष रूप का उदाहरण हो सकता है चुनाव के समय अवांछनीय तत्वों की आर्थिक सहायता, प्रचार के द्वारा सरकार-विरोधी प्रवृत्तियाँ। और भी अनेक प्रकार हस्तक्षेप के हो सकते हैं। यदि समय रहते हम न चेत सके, तो देश की दुर्दशा के दिन और सच्चे अर्थों में स्वतन्त्र भारत के गिने चुने दिनों की समाप्ति दूर नहीं।

सुरक्षा के प्रश्न पर एक और प्रश्न है, जिसका समाधान हमें तटस्थता से ढूंढना चाहिए। वह है अणु अस्त्र का निर्माण। यदि वस्तुतः हम अस्त्रों के विरोधी हैं, तो कुछ कहना उचित नहीं, परन्तु विगत अठारह वर्षों में हमने कितनी बार आन्तरिक और वाह्य स्थिति का सामना करने के लिए अस्त्रों का उपयोग नहीं किया? देश की आन्तरिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं है, यह किसी से छिपा नहीं। भाषा के नाम पर दो विरोधी धर्मों में आज भी वैमनस्य हो सकता है, मारकाट हो सकती है। आदिवासी लोग भी सरकार से असन्तुष्ट हैं। और भी अनेक प्रतिक्रियावादी तत्व भारत को खोखला करने पर तुले हैं। ऐसी अवस्था में देश की सुरक्षा की ओर ध्यान कभी-कभी उतना नहीं जाता जितना कि जाना चाहिए। वह दिन दूर नहीं जब पाक के पास अणु अस्त्र हो सकते हैं। चीन के पास तो है ही। फिर यदि हम विदेशों के भरोसे रहे, तो परिणाम अच्छा होने वाला नहीं है।

अहिंसा में यदि भारत का विश्वास है तो सम्पूर्ण निरस्त्रीकरण करके हम विश्व को मार्ग दिखाएं। उसका प्रभाव सब देशों पर अत्यधिक होगा, हमारा गौरव बढ़ेगा, ऐसा मेरा विश्वास है, किन्तु मुझे तो भारत के अहिंसावादी लोग और नेता अधिक घमंडी लगे। उनमें दूसरों के विचारों के प्रति असहिष्णुता लगी। सरकार का कभी शस्त्रास्त्र को लेकर विरोध उन्होंने नहीं किया, न ही कोई अहिंसात्मक मार्ग विश्व को वे दिखा सके। ऐसी अवस्था में यदि गांधी जी के मार्ग को हम नहीं अपना सकते, उनका आत्मबल हम नहीं ला सकते, तो दम्भ छोड़कर पुनः हम अणु अस्त्रों के प्रति चिन्तन करें।

यदि सुरक्षा का भार और आज के भारतीय जन साहित्य का स्तवन जवानों की ओर है, तो हमें सेना के लोगों की ओर से खुली जाँच पड़ताल पब्लिक के सामने करने का अधिकार होना चाहिए। कितनी आवश्यकता हमारी है इसकी सही-सही जानकारी होनी चाहिए। सरकार का कर्तव्य है कि वह जनता के सामने अपनी नीति का लेखा जोखा दें। अधिक दिन स्वप्नों की दुनिया में हम न विचरें। श्रीमती गाँधी ने जो समझौता अमेरिका के राष्ट्रपति से किया है, उसमें स्वतन्त्रता ताक पर रखी लगती है। भारत को यदि भारत की स्वतन्त्र नीति को बेचना ही है, तो उसके लिए एक अरब डालर का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्न काफी नहीं, विशेषकर जबकि उस अन्न का रुपया भारत में ही व्यय होने वाला है, अमेरिका द्वारा।

आशा है भारतीय जन समाज इन प्रश्नों पर गम्भीरता से विचार करेगा। भारतीय स्वतन्त्रता किसी भी देश को किसी भी मूल्य पर बेची जा सके, इसका समय अभी नहीं आया।"

साधक बटुक का चिन्तन गहरा है, पर विदुषी डॉ० सोमावीरा का अनुभव इस चिन्तन को अंगारों से दाहक बना देता है——

"समाचार पत्रों तथा रेडियो टेलिविजन आदि द्वारा श्रीमती गाँधी के आगमन और कार्यक्रम में इतनी रुचि दिखाने का एक परिणाम यह हुआ कि नगर के प्रत्येक व्यक्ति तक वे समाचार पहुंच गए, किन्तु इसका एक और परिणाम भी हुआ। उनके यहाँ आने से पूर्व. जब रेडियो या समाचार पत्र उनके आने का समाचार देते थे, तो आने की सम्भावना की घोषणा करने के दूसरे वाक्य में यह अवश्य कहते थे—"अनुमान है कि प्राइम मिनिस्टर गांधी आर्थिक सहायता के लिए याचना करेंगी।"

बार-बार यह 'याचना' शब्द सुनकर भारतीयों के मन में क्रोध भड़क उठता था, और न्यूयार्क निवासी यह समझने लगे थे कि भारत ऐसा भिखारी देश है, जो स्वयं अपने लिए कुछ भी करने में असमर्थ है। उन दिनों उठते-बैठते प्रायः ये प्रश्न सुनने को मिल जाते थे— 'जब तुम्हारे देश में इतने लोग भूखों मर रहे हैं, तब तुम्हारी प्राइम मिनिस्टर सिल्क की कीमती साड़ियाँ कैसे पहन सकती हैं?"

"जब तुम्हारे यहाँ पैसे की इतनी कमी है, तो तुम्हारी प्राइम मिनिस्टर यहाँ आने में खर्च क्यों कर रही हैं?"

"तुम लोगों को अपने देश में रोटी और वस्त्र नहीं मिलेंगे, इसीलिए तुम लोगों को यहाँ रहना पसंद है?"

ऐसे-ऐसे प्रश्न केवल पढ़े-लिखे लोगों तक ही सीमित नहीं थे। एक-डेढ़ डालर प्रति घन्टा की मजदूरी करने वाले निम्न वर्ग के नीग्रो और गोरे व्यक्तियों के मन में भी यह बात बस गई थी। एक दिन एक दुकान में सब्जी खरीदते समय मैं एक नीग्रो औरत से टकरा गई। बस फिर क्या था, उसने इस बुरी तरह बकना-झकना शुरू कर दिया कि आस पास खड़े सभी स्त्री-पुरुष मेरी ओर देखने लगे। पैसे चुकाने के लिए मैं लाइन में खड़ी थी, इसलिए हट जाने का कोई उपाय नहीं था। जब तक पैसे देकर मैं दरवाजे से बाहर नहीं निकल गई, वह औरत कहती रही, "तुम कौन होती हो मुझे धक्का देने वाली, जब तुम्हारे देश की वह औरत यहाँ हम से भीख माँगने आ रही है। वहाँ तुम्हें खाने को नहीं मिलता। यहाँ तुम हमारे सिर पर सवार होना चाहती हो।"

ऐसी ही एक अप्रिय घटना और भी घटी, जब कि बाहर जाते हुए एक अमरीकी औरत हमारी राह रोक कर बोली—"तुम लोगों को अंग्रेजी बोलना आता है?" हम में से किसी ने स्वीकृति में सिर हिला दिया तो वह बोली—"तुम्हारे देश में टैगोर नाम का एक आदमी था। क्या तुम लोगों ने उसका नाम सुना है?"

हम लोगों ने समझा कि यह शायद श्री रवीन्द्र नाथ टैगोर के विषय में कुछ पूछना चाहती है। इसलिए जल्दी में होते हुए भी, हम लोग रुक कर खड़े हो गए। वह बोली-"टैगोर जब यहाँ था, उसने भूखे हिन्दुस्तानियों के लिए खूब सारे डालर इकट्ठे किये थे। उसके बाद भी हम लोगों ने तुम्हें कितना पैसा दिया है। तुम लोग और कब तक हम से भीख माँगोगे?"

हम लाख कन्नी काटें, हमारी स्थिति राष्ट्रीय सम्मान के लायक नहीं है और इसका एक ही उपाय है कि हम गलत नीतियों, दिमागी ऐय्याशियों, फिजूल खर्चियों, शिथिलताओं, लापरवाहियों और खंडित दृष्टियों से बच कर देश को आत्मनिर्भर बनाने के काम में सबको साथ लेकर जुट जाएँ। क्या देश के शासक, प्रशासक, विचारक और विरोधी दल समय के इस तकाजे को सुनेंगे?

◆

तारीफ करनी चाहिए

प्रसिद्ध लेखक और धर्म प्रचारक डाक्टर ई० स्टैनले जोन्स ने नई दिल्ली में कहा—"महात्मा गांधी ने अहिंसा का जो प्रतिपादन किया और उस पर जिस ढंग से अमल किया, वही एक मात्र युद्ध का विकल्प है। गाँधी जी के तत्व दर्शन का प्रभाव यहाँ तक पड़ा कि ब्रिटेन को अब तक ३६ देशों से निकलना पड़ा और अब गाँधी जी के तत्व दर्शन से ही अमरीका में नीग्रो लोगों को अपने मानवीय अधिकार प्राप्त करने में सफलता मिल रही है।"

इसी बातचीत में उन्होंने कहा—"नीग्रो नेता डॉ० मार्टिन लूथर किंग का हिंसा छोड़कर अहिंसा अपनाना मानवता के इतिहास में बहुत बड़ी बात है; क्योंकि इस घटना के कारण बड़ी शक्तियों के साथ संघर्ष में गाँधी जी के तरीके का लोहा मानना पड़ता है।"

यह सब पढ़कर पहले तो मन ऐसी भावना में डूब गया कि काफी देर कुछ सोचना ही सम्भव नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा। इस भावना-गर्त से उभरा, तो मन में आया कि गांधी जी के भारतीय उत्तराधिकारियों की कमर थपथपानी चाहिए कि गांधी के जिस तत्वदर्शन ने अंग्रेजों को ३६ देशों से निष्कासित किया, वे उसे गद्दियों पर बैठते ही भारत से पूरी तरह निष्कासित करने में कामयाब हो गए। असल में भारत परम्परावादी है। अतीत में भी बौद्धतीर्थ भारत में रह गए थे और बौद्धधर्म बाहर चला गया था। तदनुसार वर्तमान में गांधी-पत्थर भारत में रह गए और गांधी-तत्व बाहर चला गया। मेरा विश्वास है कि इस साहस के लिए इतिहास नेहरू जी को अपने अभिवादन अवश्य देगा !!

प्रशासन में सुधार

स्वर्गीय प्रधान मन्त्री श्री लाल बहादुर शास्त्री का एक बहुत बड़ा कार्य श्री मुरार जी देसाई की अध्यक्षता में प्रशासन सुधार आयोग की स्थापना करना है। श्री मुरार जी भाई दृढ़ संकल्पी व्यक्ति हैं और आयोग में दूसरे सदस्य भी योग्य हैं। आशा करनी चाहिए कि इस आयोग से देश को लाभ होगा।

स्थिति यह है कि कांग्रेस शासन का प्रशासकीय ढाँचा चरमरा गया है और काँग्रेस संगठन का ढाँचा निर्जीव हो गया है और वह प्रशासीय ढाँचे को सड़ा रहा है। इस स्थिति में देश का सबसे बड़ा सवाल वह है, जो श्री करंजिया ने नेहरू जी से पूछा था कि पंडित जी, न काँग्रेस संगठन शक्तिशाली है, न कांग्रेस शासन, फिर देश में समाजवाद की स्थापना आप किस एजेंसी की मार्फत करेंगे ? पंडित जी के पास कोई समाधान न था, जैसा कि किसी समस्या का समाधान न था। फिर भी उन्होंने प्रश्न का उत्तर दिया था, जैसा कि देश के राजनीतिज्ञ हर प्रश्न का उत्तर देने को तैयार रहते ही हैं। उनका उत्तर था कि मुझे भारत की जनता में विश्वास है। यह उत्तर बहुत क्षुब्ध करने वाला है ; क्यों कि नेहरू-शासन के १५ वर्षों में भारत की महान जनता का भावनात्मक सर्वस्व बुरी तरह लूटा गया है और उसे अपाहिज बना दिया गया है। राजनीतिज्ञों में प्रशासन की, देश के अफसरों की, निन्दा करने का फैशन भी जोरों में है, पर १५ अगस्त १९४७ को जो प्रशासन संसार भर में आदर्श था, उसे राजनीतिज्ञों ने किस प्रकार भ्रष्ट किया, इसका विश्लेषण 'नया जीवन' के इसी अंक में पृष्ठ ११३ पर प्रकाशित लेख में दिया गया है।

उस स्थिति से प्रशासन का उद्धार करना प्रशासन-सुधार आयोग का काम नम्बर एक है, पर इसके लिए राजनीतिज्ञों का सुधार भी आवश्यक है। क्या यह सुधार आयोग की शक्ति-सीमा में आता है ?

इसे हम यों समझें कि राजनीतिज्ञ श्री प्रताप सिंह कैरों ने प्रशासकीय अफसरों के हाथों गन्दी अनियमितताएँ की। दास आयोग ने कैरों को पदच्युत कर दिया. पर उन अफसरों के विरुद्ध कोई खास कार्यवाही नहीं हुई। यदि उन अफसरों को 'बैड ऐंट्री' देकर ५-५ वर्ष का 'इनक्रीमेंट' रोक दिया जाता, तो देश भर के प्रशासन पर उसका असर पड़ता। एक दूसरे राज्य में एक अफसर ने चुनाव हो जाने, वोटों की गिनती हो जाने और उम्मीदवार धनपति के हारने की बात पत्रों में छप जाने के बाद दुबारा की गिनती में मतपेटियों की तोड़-फोड़ करके उस धनपति को जिता दिया। चुनाव पिटीशन में उस अफसर की दुर्गति हो गई, पर जिन राजनीतिज्ञों के कहने से यह सब हुआ, हाईकमांड उनकी आरती ही उतारता रह गया। प्रशासन सुधार आयोग को यह गठजोड़ तोड़ने की राह तैयार करनी है।

एक प्रश्न तरीके का है। १९३७ में पहली बार लोकप्रिय मंत्री मंडल बने थे। उन्हीं दिनों की घटना है। गाँधी जी हिन्दू विश्वविद्यालय की रजत जयंती में काशी आए, तो श्री गोविन्द वल्लभ पन्त उत्तर प्रदेश मंत्री मंडल के सदस्यों के साथ उन का आशीर्वाद लेने गए। गाँधी जी ने कहा—तुम लोगों को मेरा सन्देश है कि सेक्रेट्रियेट की सब फाइलों को बिना पढ़े फूक दो और घटना स्थल पर—आन द स्पॉट—ही निर्णय दो। गाँधीजी ने अपने संदेश की व्याख्या में बताया कि नौकरशाही के जिस तंत्र से अंग्रेज हकूमत कर रहे हैं, वे उस तंत्र के निर्माता हैं, पर तुम लोग उसमें उलझ कर रह जाओगे और कुछ भी न कर सकोगे। गाँधी जी की भविष्यवाणी सत्य के रूप में सामने है और पूरा शासन प्रशासन तन्त्र में उलझ कर गतिहीन हो रहा है।

गांधी जी की बात को रफी साहब ने गाँठ में बांध लिया था और यही उनकी सफलता का रहस्य था। आज की स्थिति यह है कि कोई अफसर निर्णय का उत्तर-दायित्व नहीं लेना चाहता। सेक्रेटरी के सामने कागज़ आता है। सत्य सेक्रेटी के सामने है, निर्णय दिमाग में, कलम हाथ में, पर वह उत्तर-दायित्व से बचने के लिए लिखता है "आफिस रिपोर्ट दे !" आफिस वाले ही ज़िम्मेदारी क्यों लें ? वे और नीचे भेज देते हैं और यों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महीनों तक उस कागज़ पर 'नोट्स' लिखे जाते हैं, तब निर्णय होता है। जब बड़े अफसर से कोई पूछता है—"यह द्राविड़ प्राणायाम आपने क्यों किया ?" तो उत्तर मिलता है—'अब रिस्पौंसबिलिटी शेयर होगई।' मतलब यह कि किसी एक की जिम्मेदारी नहीं रही।

इस सम्बन्ध में एक बड़ा मज़ेदार संस्मरण है—स्थल सेनाध्यक्ष जनरल करिअप्पा ने अपने एक लैफ्टीनेंट को अपने कुछ सुझावों को हिन्दी में तैयार करने का आदेश किया। जब वे आदेश तैयार कर लाए, तो उसे करिअप्पा ने इस तरह पढ़ा कि जैसे वे बड़े प्रसन्न हो रहे हैं। उन्होंने उस अफसर से खुशी की मुद्रा में पूछा—"तुमने इस में बहुत मेहनत की ?" गर्व की मुद्रा में लैफ्टीनेंट ने कहा—"जी हाँ।" करिअप्पा एकदम गरजे—"बिल्कुल झूठ ! तुम तो ऐसी हिन्दी जानते ही नहीं !!" लैफ्टीनेंट ने स्वीकार किया कि यह उनके क्लर्क का ड्राफ्ट है। जनरल करिअप्पा ने कहा—"तुम्हें दो हज़ार रुपये तनखाह मिलती है और क्लर्क को पचासी रुपये। तो जो काम दो हजार रुपये के आदमी के करने का है, वह तुमने पचासी रुपये वाले से कराया।" उन्होंने उस अफसर को 'वैड ऐंट्री' दी और सेना के कार्यालय पर इसका बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा।

आज का पूरा प्रशासन पचासी रुपये वालों के निर्णयों से आक्रान्त-जर्जर हो रहा है और आयोग के यशस्वी सदस्य श्री हनुमन्तय्या ने ठीक ही कहा है कि "आयोग का मुख्य काम कार्यविधि के वर्तमान महत्व को हटाकर कार्यवाही के महत्व को प्रशासन में स्थापित करना है।"

स्वयं प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने स्वीकार किया है कि—"प्रशासन की समस्या के कारण कई कठिनाइयाँ बढ़ गई हैं। केन्द्र, राज्यों और सरकारी मशीनरी के निचले स्तरों पर भी प्रशासन का स्तर बहुत घटिया होगया है। प्रशासन में हर स्तर पर सुधार करने की ज़रूरत है। इसके लिए नई प्रक्रियाएँ अपनानी पड़ सकती हैं और शायद सभी स्तरों पर नई भर्ती पर भी विचार करना पड़ेगा।"

स्पष्ट है कि रोग सबके सामने है और चिकित्सा चीरफाड़ की ही लाभ कर सकती है। आशा करनी चाहिए कि आयोग द्वारा प्रशासन राजनीतिज्ञों के आक्रमण और अफसरों के अतिक्रमण से मुक्त होगा।

रेवरेंड माइकेल स्काट

नागा शांति मिशन के सदस्य पादरी स्काट को भारत सरकार ने 'अवाँछित विदेशी' मानकर तुरन्त भारत से बाहर चले जाने का आदेश दिया और वे चले गए। यह समाचार पढ़कर एक पुरानी बात याद हो आई। मैं जैन समाज के एक बहुत बड़े साँस्कृतिक महोत्सव में गया। न्यायाधीश श्री जमना प्रसाद भी आए थे। उत्सव की समाप्ति पर मैंने जमना प्रसाद जी से पूछा—उत्सव की क्या बात आपको सबसे ज्यादा पंसद आई ? बोले—"इस उत्सव की हमें तो सबसे ज्यादा यह बात पसंद आई कि हम चाहे जितने लेट उत्सव में आए, कभी लेट नहीं माने गए।" उनका मतलब था कि उत्सव उससे भी लेट आरम्भ हुआ। सुनकर हम सब खूब हंसे।

हमारी भारत सरकार भी उसके निर्णय कितने ही लेट हों, कभी अपने को लेट नहीं मानती। पादरी स्काट के निष्कासन का निर्णय करने में यदि जापानी सरकार का संबद्ध मंत्री इतनी देर कर देता, तो वह निश्चय ही लज्जा के मारे हाराकारी (आत्म-हत्या) कर लेता, पर हमारे बहादुर उसे 'सही समय पर सही निर्णय' कहने में भी नहीं लजाए। सचाई यह है कि देश का नेतृत्व निर्णय शक्ति में कितना पिछड़ा हुआ है, स्काट इसके प्रतीक हो गए हैं।

स्काट इंग्लैंड के निवासी हैं, भारत के हित-कार्यों की सूची में उनका कभी नाम नहीं लिया गया, पर उनकी और उन जैसों की प्रेरणा पर आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज के वंश-धर हमारे स्वर्गीय प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने यह स्वीकार कर लिया कि नागा क्षेत्रों में ईसाई पादरियों के सिवा कोई दूसरे धर्म का प्रचारक नहीं जाने पाएगा। यही नहीं, अंग्रेजी राज्य में जितने विदेशी पादरी थे, उससे पाँच गुनों को भारत में घुसा दिया और इसे ही सेकुलरिज्म का सर्वोत्तम प्रदर्शन मान लिया। इनमें पादरी का चोगा पहने अनेक विदेशी गुप्तचर और अनेक सैनिक अफसर थे, यह जानने वालों की रिपोर्ट है, पर इतना तो सभी जानते हैं कि इन लोगों के अराष्ट्रीय प्रचार से नागा क्षेत्र में विद्रोही उपद्रव आरम्भ हुए और क्षेत्र सेना को सौंपना पड़ा। सेना के दबाव से विद्रोही नेता फिजो भाग कर लन्दन चला गया और स्काट के संरक्षण में अभी तक भारत को कोसने का काम कररहा है। नियोगी कमेटी ने ईसाई मिश्नरियों के कामों की जाँच की और उन्हें खतरनाक मानकर उन पर पाबंदी लगाने की मांग की, पर सरकार ने उस रिपोर्ट को ही ताले में बंद कर दिया। भारतीय पादरी फतह मसीह ने भारतीय मिशन को विदेशी मिश्नरियों से मुक्त करने के लिए दिल्ली में भूख हड़ताल की, पर सरकारने मसीही को नही स्काट को महत्व दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विदेशियों का प्रचार होता रहा, विद्रोह बढ़ता रहा, नागालैंड बना, उपद्रव जारी रहे और शाँति मिशन कायम हुआ, जिसमें दो सदस्य प्रमुख थे। एक फिजो के धर्मपिता स्काट और दूसरे विचार-विक्षिप्त श्री जयप्रकाश नारायण। निरादर के भाव से मैंने यह विशेषण जय बाबू को नहीं दिया, पर इस अनुभव के आधारपर दिया कि उप प्रधानमंत्री बनने के प्रधानमंत्री नेहरू के निमंत्रण को अपने दोस्तों के घपले में ठुकराने के बाद से उन्होंने राष्ट्र के प्रश्नों पर एक भी सम्मति ऐसी नहीं दी, जो लोक समर्थित हो पाई हो। देश के स्वतंत्र राजनैतिक चिन्तक बराबर चिल्लाते रहे कि नागा लोग शाँति काल का लाभ उठाकर बर्मा, पाक और चीन से सांठ गांठ कर विद्रोह की तैयारी कर रहे हैं, पर हमारी सरकार जो कभी लेट नहीं होती लेटी रही और पादरी स्काट एवं जय बाबू सफलता की धुन बजाते रहे।

हद हो गई कि नागाओं की पैरेलल सरकार को नागालैंड की राजधानी के द्वार पर स्वतन्त्र नागा देश का गणतन्त्र दिवस मनाने दिया गया, स्वतन्त्र नागा सरकार के 'प्रधान मन्त्री' से प्रधान मन्त्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने मुलाकात फरमाई—यानी दिल्ली में दो स्वतंत्र देशों के प्रधान मन्त्री परस्पर मिले और प्रधान मंत्री नेहरू जी ने काश्मीर की तरह ही नागालैंड को गृहमंत्रालय की जगह विदेश विभाग के हाथ में रखने की जो भूल की थी, वह आज तक जारी रही।

अब स्काट चले गए हैं, पर समस्या ज्यों की त्यों है और समस्या यह है कि हमारी सीमाएँ सुरक्षित नहीं हैं। वे पाकिस्तानियों और चीनियों के लिए धर्मशाला बनी हुई हैं। सीमा क्षेत्रों में ऐसे लोग बसे हुए हैं, जो भारत भक्त नहीं हैं। १९ साल में अपने प्यार से हम उन्हें अपना नहीं सके हैं और अंगार से जला नहीं सके हैं। राजनैतिक चिन्तकों की राय है कि दस लाख पाकिस्तानी इस समय भारत में हैं। क्या यह कोई मामूली खतरा है? पता नहीं यह सरकार का भोलापन है या भौंदूपन कि तिब्बती शरणार्थी हजारों की तादाद में भारत आ रहे हैं। इनमें में कितने शरणार्थी हैं और कितने छापा मार इसे जांचने का जब कोई साधन नहीं है, तो उन्हें क्यों घुसने दिया जा रहा है? हालत बहुत खराब है और और खराब होती जा रही है। तुरन्त दृढ़ता के साथ योजना पूर्वक सब काम छोड़ कर सीमा की व्यवस्था होनी चाहिए और यह बात हमें पल भर भी नहीं भूलनी चाहिए कि अमरीका, चीन पाकिस्तान और भारत के वामपंथी कम्यूनिस्ट भारत को निकट भविष्य में ही वियतनाम बनाने के भयंकर प्रयत्न कर रहें हैं। हम भय के भाव से भागे नहीं, जयके भाव से जागें-जागते रहें!

१९ फरवरी १९६७

भारत के मुख्य चुनाव अधिकारियों के सम्मेलन ने यह घोषणा की है कि १९ फरवरी १९६७ से २६ फरवरी १९६७ तक के ७ दिनों में चौथे आम चुनाव होंगे। भारत को प्रशासन के जिन अंगों ने संसार में यश दिया है, उनमें भारत की चुनाव व्यवस्था भी है। १९५२ में चुनाव तीन महीने में पूरे हुए थे १९६२ में १० दिनों में, पर १९६७ के चुनाव ७ दिन में ही पूरे होंगे।

चौथे चुनाव सामान्य परिस्थितियों में नहीं हो रहे हैं और उनके परिणाम देश के लिए भाग्य निर्णायक होंगे। इन चुनावों का पहला प्रश्न है यह कि केरल में संसदीय लोकतंत्र के स्थान का जो पहिया टूटा पड़ा है? क्या वह जुड़ जाएगा और वहाँ पर मन्त्री मन्डल बन सकेगा? साथ ही यह कि यदि ऐसा न हो सका तो क्या केरल स्थायी रूप से राष्ट्रपति शासन में ही रहेगा? दूसरा प्रश्न यह कि बंगाल में वामपन्थी कम्यूनिस्टों का जोर इस घोषणा से और बढ़ गया है कि वहाँ के असंतुष्ट कग्रेसी वामपंथी कम्युनिस्टों से चुनाव समझौता करेंगे। तब देखना है कि वहाँ मन्त्री मन्डलीय कांग्रेसी गुट अकेला बहुमत पाता है या संयुक्त वामपंथी मोर्चा एवं असंतुष्ट कांग्रेसी मिलकर बहुमत पाते हैं या फिर केरल की तरह कोई पार्टी बहुमत नहीं पाती?

तीसरा प्रश्न है पंजाबी सूबे का। उसमें ५५ प्रतिशत सिख और ४५ प्रतिशत हिन्दू हैं। वातावरण साम्प्रदायिकता का है, तो क्या पंजाबी सूबे में संत फतहसिंह के नेतृत्व में अकाली दल को बहुमत मिलेगा? कम्यूनिस्टों का समर्थन उन्हें प्राप्त है ही, पर क्या सिक्खों के विरुद्ध हिन्दू एक हो जाएँगे? तब कांग्रेस मंत्री मंडल बना सकेगी? क्या यह साम्प्रदायिक रस्सा कशी सूबे में शांति रहने देगी? इसके साथ ही हरियाणा में जनसंघ और कांग्रेस का भविष्य क्या है? स्वतंत्र पार्टी ४ राज्यों में मंत्री मंडल बनाने का दावा करती है, तो क्या उसका दावा कहीं एक जगह भी सफल होगा? साराँश यह कि यदि सब राज्यों में सत्ता अब की तरह काँग्रेस के हाथ में न रहकर कई पार्टियों में बंट जाती है, तो उसके क्या परिणाम होंगे? ★

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व-चिन्तन

श्री दीन दयालु शास्त्री

ब्रिटेन का नया चुनाव

३१मार्च को ब्रिटेन की लोकसभा का चुनाव हो गया। ६३० सदस्यों के इस सदन में शासक मजदूर दल को मुख्य विरोधी दल से सौ स्थान अधिक मिले। पिछला चुनाव सन् १९६४ के अक्तूबर मास में हुआ था। उस चुनाव में मजदूर दल अनुदार दल से केवल दस स्थान अधिक पा सका था। उपनिर्वाचनों में इनमें से भी कुछ स्थान उसके हाथ से निकल गये थे।

इतना ही नहीं, मजदूर दल के कतिपय प्रमुख नेताओं को पराजय का मुंह देखना पड़ा था। परिणाम यह हुआ था कि प्रत्येक महत्वपूर्ण मामले में शासकदल को विरोधीदल से टक्कर लेनी पड़ती थी और एक दो निर्णायक मतों से विजय लाभ में सन्तोष करना होता था। एक बार एक गौण मामले में मजदूर दल पराजित भी हुआ था। लोकसभा में अपनी इस अनिश्चित स्थिति के कारण ब्रिटेन के प्रधानमंत्री श्री हैरल्ड विलसन को अपनी नीतियों के संचालन में बड़े संकोच से कदम उठाना पड़ता था।

रोडेशिया के अलगाव, भारत पाक युद्ध तथा वियतनाम के संघर्ष में श्री विलसन क्या चाहते थे? और क्या हुआ? यह सब उनकी लोकसभा में डावांडोल स्थिति के परिचायक हैं। स्वयं अपने देश को आन्तरिक मामलों में भी इस कारण उनकी स्थिति स्पष्ट न थी। यदि वे अच्छी स्थिति में होते तो लोहा इस्पात उद्योग के राष्ट्रीयकरण के लिए वे साहसिक कदम उठा पाते।

अब ३१ मार्च के चुनाव में उनकी स्थिति इतनी अच्छी हो गयी है कि ब्रिटेन के प्रधान मंत्री अपने देश के आन्तरिक या वैदेशिक मामलों में दृढ़ निश्चय का परिचय दे सकते हैं। इस चुनाव में श्री हीथ का अनुदार दल काफ़ी स्थान खो बैठा है। उसके परम्परागत अनेक स्थानों पर भी मजदूर दल ने कब्जा किया है। उदार दल तथा निर्दली सदस्यों की संख्या तो इस बार की लोकसभा में दस तक रह गयी है। इस निर्णायक बहुमत को पाकर ब्रिटेन के प्रधानमंत्री का स्वर अभी से प्रबल हो चला है। जो विलसन नवम्बर दिसम्बर में रोडेशिया की सरकार के साथ ढिलमिल नीति अपना रहे थे, चुनाव के एकदम बाद उसकी सब तरह की आर्थिक नाकाबन्दी का आह्वान कर रहे हैं। अफ्रीका में अवस्थित पुर्तगाली बंदरगाह बीरा में यूनानी जहाज जोहोना का पैट्रोल न उतार सकना विलसन की नयी नीति की विजय का स्पष्ट प्रमाण है। अब वे इस कोशिस में हैं कि रोडेशिया के परम सहायक पुर्तगाल और दक्षिण अफ्रीका या तो स्वेच्छया रोडेशिया का आर्थिक बहिष्कार करें अन्य था राष्ट्रसंघ द्वारा उन्हें इस मार्ग पर चलने के लिये बाधित किया जाये। सन १९६४ और सन १९६६ के प्रधान मन्त्री की शक्ति में यह भेद स्पष्ट है। देखना यह है कि अगले पाँच वर्षों में ब्रिटेन की यह नयी सरकार विश्वशान्ति में क्या सहयोग देती है। श्री विलसन की सफलता का यह मुख्य आधार होगा।

फ्रांस रूठ गया

फ्रांस के राष्ट्रपति जनरल दगाल उन व्यक्तियों में से हैं जो अपना मार्ग स्वयं बनाते हैं। सन १९४० में मार्शल पेतां के आत्म-समर्पण पर जनरल दगाल ने फ्रांस की अक्षुण्णता और स्वतन्त्रता की घोषणा की थी। मित्र राष्ट्रों के सहयोग से अन्ततः फ्रांस विजयी हुआ, लेकिन जनरल अपने देश की राजनीति में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकल गये। अब पुनः जनरल दगाल न केवल फ्राँस के राष्ट्रपति हैं किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय नीति के निर्माण में अपना वर्चस्व प्रगट कर रहे हैं। सत्ता हथियाने पर उनका पहला कदम था फ्रांस के उपनिवेशों को स्वतन्त्र करना। आज परिणाम यह है कि गिनी के अतिरिक्त बाकी सभी पुराने उपनिवेश स्वतन्त्र होकर भी फ्रांस सहयोगी बने हुए हैं। दूसरा साहसी कदम उन्होंने उठाया है चीन के साथ कूटनीति का सम्बन्ध कायम करने में, दगाल की स्पष्टोक्ति है कि विदेशी मामलों में वे मध्यमार्ग के अनुगामी हैं न अमरीका के साथी, न साम्यवादियों के विरोधी। इसी आधार पर उन्होंने दौत्य सम्बन्ध स्थापित किया है और अब ऐलान किया है कि उनका देश फ्राँस उत्तरी अटलांटिक सन्धि का हामी न रहेगा। ऐसा करते समय फ्रांस के राष्ट्रपति ने स्पष्ट कहा है कि दुनिया के देश जिन दो गुटों में विभक्त हैं उनके कारण विश्वशाँति का मार्ग रुक गया है। विश्व शान्ति के लिए यह आवश्यक है कि ये दोनों गुट समाप्त हो जाएँ एवं परिणामस्वरूप उत्तरी अटलाँटिक तथा वारसा सन्धियाँ समाप्त हो जाएँ। उत्तरी अटलांटिक सन्धि में अमेरिका और योरप के चौदह देश सम्मिलित हैं और अपना प्रभाव एशिया में टर्की तक पहुंचता है। इस सन्धि के देशों की सेनाओं का मुख्य कार्यालय अब तक फ्रांस में था। अब इस सन्धि से फ्रांस के निकल जाने से अटलान्टिक सन्धि की व्यूह रचना में दरार पड़ जाएगी एवं सैनिक उपकरणों के संभालने, जोड़ने तथा बनाने में संकट पैदा हो जाएगा। इस सन्धि से पृथक् होकर अब फ्रांस क्या रुख लेगा, यह कहना अभी कठिन है किन्तु इतना तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि दगाल उत्तरोत्तर वामपंथी होते जायेंगे।

दक्षिण अफ्रीका

ब्रिटेन की भांति दक्षिण अफ्रीका में भी पिछले दिनों चुनाव हुए हैं। इन चुनावों में वहाँ की वर्तमान वेर बोर्ड सरकार को पुनः बहुमत प्राप्त हुआ है। इसका अर्थ यह होता है कि दक्षिण अफ्रीका के हब्शियों पर वर्तमान प्रतिबन्ध अधिक कड़े होंगे और वहाँ की वर्ण भेद नीति में अधिक कठोरता आएगी। चर्चा यह भी है कि यदि वहां की सरकारी नीति में राष्ट्रसंघ ने हस्तक्षेप करना चाहा तो वह देश राष्ट्रसंघ की सदस्यता भी छोड़ देगा। यह दक्षिण अफ्रीका अभी कुछ काल पहले तक हमारी भांति अंग्रेजी राष्ट्र कुल का सदस्य था। इस परिवार के अफ्रीकी एवं एशियाई सदस्यों ने जब वहाँ की वर्ण भेद नीति की आलोचना की तो दक्षिण अफ्रीका ने उसे अपने आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप समझा और कुल का त्याग कर दिया। इसी दृष्टि से वह अब राष्ट्र-संघ का भी त्याग कर सकता है। प्रश्न यह है कि तीन चौथाई से अधिक हब्शी आबादी के देश में एक चौथाई से कम आबादी वाले गोरे कब तक शासन करते रहेंगे। एक बड़ा प्रश्न यह भी है कि यदि दक्षिण अफ्रीका वर्तमान वर्ण भेद नीति को त्याग दे तब भी वहाँ के गोरे कालों में जीवन के सभी मामलों में समता कैसे आएगी? अपनी राय में इस समस्या का हल केवल उसके विभाजन में है। उसके आन्तरिक प्रदेश को कुछ समुद्री तट के साथ हब्शी देश करार दिया जाए एवं गोरी आबादी को नेपाल तथा अन्य समुद्री पार्श्व प्राप्त हो जाये। गोरों के प्रदेश में केवल गोरे रहें एवं हब्शी प्रदेश में जो रहना चाहे वह नागरिक हो जाए।

घाना का घेरा

घाना के अपदस्थ राष्ट्रपति क्वाने नक्रूमा अब तक गिनी में हैं। वे वहाँ के राष्ट्रपति श्री सेदू तूरे की मदद से पुनः अपना पद प्राप्त करना चाहते हैं। इन दोनों देशों के तीसरे सहयोगी देश माली के श्री कीता आजकल राष्ट्रसंघ की सुरक्षा परिषद् के अध्यक्ष हैं। इस कारण सुरक्षा परिषद में घाना की वर्तमान सरकार अपनी बात मनवाने में समर्थ नहीं हो रही है। इधर घाना के पड़ौसी पाँच राष्ट्रों ने निर्णय लिया है कि गिनी से घाना पर होने वाले सम्भावित आक्रमण का वे दृढ़ता से मुकाबला करेंगे। ऐसी अवस्था में क्वाने नक्रूमा की घाना में पुनः पहुंचने की आशा धूमिल हो जाती है।

हमारी दुनिया दो भागों में बँटी है। नई दुनिया में उत्तरी व दक्षिणी अमेरिका शामिल है। इनमें संयुक्त राष्ट्र नाम का देश सर्वोपरि है अतः उसके कारण दोनों अमेरिकाओं में प्रायः शान्ति बनी रहती है। इसके विपरीत पुरानी दुनिया के एशिया, योरुप तथा अफ्रीका में प्रायः हलचल बनी रही है। आवश्यकता इस बात की है कि इस पुरानी दुनिया में भी नयी दुनिया की भाँति शान्ति का वातावरण हो। इसके लिये इन तीनों महाद्वीपों के प्रमुख टापू मिल कर कोई योजना बनाएँ तो सफलता की आशा की जा सकती है। ❀

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौथे आम चुनाव के द्वार पर खड़े भारत के राजनैतिक दल क्या हमारे प्रजातंत्र की रक्षा कर सकेंगे ?

● कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

(१)

मांटेग्यू इंगलैंड की सरकार में भारत-सचिव थे और चैम्सफोर्ड भारत में वायसराय। पहले विश्व युद्ध में इंगलैंड ने भारत से कई वादे किए थे आज़ादी देने के। उन्हें पूरा करना नहीं था, पर भारत में काफी भड़क थी इसीलिए कुछ न कुछ करना भी था, तो दोनों ने सलाह की एकऔर नया कानून पार्लियामेंट में पास कर भारत में कुछ शासन-सुधार लागू किए गए। इन्हीं का नाम पड़ा मांटेग्यू चैम्सफोर्ड सुधार।

यह १९१९ की बात है। इसके अनुसार प्रान्तों में लेजिस्लेटिव कौंसिल बनीं और आम चुनाव हुए। मत का अधिकार खींचतान कर अधिकतर ऐसे लोगों को दिया गया, जो मानसिक रूप से सरकार-परस्त थे। कांग्रेस ने इन चुनावों का बहिष्कार कर दिया और वे रायबहादुरों-खानबहादुरों और इसी तरह के दूसरे बड़े आदमियों के क्रीड़ा-प्रांगण बन गए। इस तरह देश की जनता ने पहले पहल विधायकों, विधायिकाओं और विधान का परिचय पाया। निश्चय ही इनसे आम जनता का कोई सम्बन्ध न था और ये थे सरकार का एक राजनैतिक खिलौना।

१९२४ में श्री चितरंजन दास ने और पं. मोतीलाल नेहरू ने स्वराज्य पार्टी बनाई और आम चुनाव लड़े। अब जनता के सामने दो तरह के विधायक उम्मीदवार थे। एक पुराने सरकार-परस्त राय-खान-बहादुर, जमींदार और दूसरे देशभक्त। दोनों तरफ के सर्वोत्तम आदमी मैदान में उतरे और दोनों ही तरफ के सर्वोत्तम आदमी प्रांतों की कौंसिलों और केन्द्रीय असेम्बली में पहुंचे और देश की विधायिकाएँ प्रतिभा और प्रभाव की प्रदर्शनियाँ हो गईं।

बंगाल और मध्य प्रदेश में तो स्वराज्य पार्टी के विधायकों ने अंग्रेजी सरकार को जकड़ कर ही रख दिया, पर दूसरे प्रांतों में भी ऐसे लोग पहुंच गए, जिन्होंने अच्छी धूम मचाई। यू. पी. में श्री गोविन्द वल्लभ पंत का उदय उसी काल में हुआ और उनका पहला भाषण सुन कर ही पं० मोतीलाल नेहरू ने कहा—'यू. पी. की तरफ से अब मैं बेफिक्र होगया हूँ।'

बड़ी कौंसिल में ४५ स्वराजी पहुंचे थे, पर इन्हें स्वतन्त्रों, नेशनलिस्टों और किसी अंश तक नरम दल वालों का भी सहयोग मिलता था और इस प्रकार ये अपना बहुमत बना लेते थे। ये कभी किसी दल के साथ वोट करते थे कभी किसी दल के और कभी सरकार के साथ भी तो इनकी सबको जरूरत थी। ये अत्यन्त योग्य भी थे और अत्यन्त अनुशासित भी। इन लोगों ने सबसे पहला धमाका तब किया, जब श्री रंगाचारी ने शासन व्यवस्था में तुरन्त परिवर्तन करने का प्रस्ताव रखा और पंडित मोतीलाल नेहरू ने भारत में पूर्ण उत्तरदायी सरकार की सिफारिश करने के लिए गोलमेज कांफ्रेंस बुलाने की बात उठाई। अखबारों के पेज इन लोगों के भाषणों से भर गए और जनता ने उन्हें रोमांचित होकर पढ़ा।

सरकार की हार

राजनैतिक कैदियों के छोड़ने के प्रस्ताव पर अंग्रेज सरकार हार गई और दक्षिण अफ्रीका के कोयले पर भारत में कर लगाने तथा सिख-आंदोलन की जाँच करने के प्रस्ताव पर भी सरकार चारों खाने चित रही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस दिन तो भारत के पत्र उफन ही पड़े जोश से, जिस दिन सरकारी माँगों की चार मदों को नामंजूर कर दिया गया। किसी स्वतन्त्र देश में ऐसा हो, तो सरकार को तुरन्त त्याग पत्र देना पड़े।

जनता के आकर्षण का, इन विधायिकाओं के प्रति अधिकाधिक दिलचस्पी लेने का एक विशेष कारण यह था कि प्रेस ऐक्ट से अखबार बंधे हुए थे और राजनैतिक विचार दबे-बुचे रूप में ही पढ़ने को मिलते थे, पर विधायिका सभाओं में मनमानी बातें कहने के लिए सदस्य स्वतंत्र थे और उनके भाषणों को छापने में पत्र स्वतन्त्र थे। इन भाषणों में पाठकों को मसालेदार गरम सामग्री मिल जाती थी और सब उसे बड़े चाव से पढ़ते थे। एक ही बार इसका अपवाद हुआ था जब पंडित कृष्णकांत मालवीय ने क्रिमिनल ला अमेंडमेंड ऐक्ट पर बड़ी कौंसिल में एक गरम भाषण दिया और उसे अपने दैनिक 'अभ्युदय' में छाप दिया। उस पर उत्तर प्रदेश सरकार ने कानूनी कार्यवाही की, पर इस पर इतना विरोध हुआ कि वह कार्यवाही सरकार को वापस लेनी पड़ी।

बाद में प्रेजीडेंट पटेल के कारनामों ने बड़ी कौंसिल का सम्मान बहुत बढ़ा दिया। एक बार सैनिक बजट पर बहस के समय अंग्रेज कमांडर इनचीफ गैर हाजिर थे। इस पर प्रेजीडेंट पटेल ने उन्हें ऐसी करारी डांट पिलाई कि उसे हज्म करना मुश्किल हो गया। मामला यहां तक बढ़ गया कि प्रेजीडेंट पटेल त्यागपत्र दें या कमांडर इनचीफ दें। अंत में कमांडर इनचीफ साहब ने माफी मांगी और प्रेजीडेंट पटेल ने उन्हें चाय पिलाई। जनता को इसमें बड़ा रस मिला। एक बार सर जेम्स क्रेटर गृह सदस्य ने असेम्बली में पुलिस का पहरा लगा दिया। प्रेजीडेंट पटेल ने उन्हें डांटा-यहाँ का सर्वाधिकारी मैं हूं। तुम कौन होते हो मेरे क्षेत्र का प्रबन्ध करने वाले? बड़ी चांगचपेट मची, और सर क्रेटर को झुकना पड़ा।

पंडित मदन मोहन मालवीय, पंडित मोती लाल नेहरू, लाला लाजपत राय, सत्यमूर्ति, अब्दुल कयूम आदि २०, २५ ऐसे लोग थे, जो उस गुम्बद में बोलते थे, तो अंग्रेजों की छाती दरकती थी और वे बोल पत्रों में छपते थे तो जनता की छाती फूल उठती थी। इन सब बातों ने जनता के मन में विधायिकाओं और विधायकों के प्रति आदर का भाव पैदा कर दिया था। यह आदर बाद में देश की महाशक्ति के रूप में प्रकट हुआ १९३६ में।

साइमन कमीशन

१९२९ में साइमन कमीशन भारत आया और उसने शासन सुधारों की जांच कर इंगलैंड की सरकार को अपनी रिपोर्ट दी। १९३० में गांधी जी का नमक सत्याग्रह आरम्भ हुआ और लंदन में सरकार ने गोलमेज कान्फ्रेंस बुलाई। ४ मार्च १९३१ को भारत सरकार ने घुटने टेक दिये और गांधी जी से समझौता कर लिया। तब दूसरी गोलमेज कांफ्रेंस हुई। उसमें कांग्रेस की तरफ से गांधी जी शामिल हुए। नए वायसराय लार्ड विलिंगडन ने गांधी इरविन समझौता तोड़ दिया और तब गांधी जी १९३२ में दूसरा आन्दोलन चलाने में मजबूर हुए। इसी बीच लार्ड लोथियन के नेतृत्व में काम करने वाली लोथियन कमेटी ने मताधिकार की जांच की और भारत में मतदाताओं की संख्या १७ लाख से ४ करोड़ के लगभग कर दी।

इंगलैंड की पार्लियामेंट ने शासन सुधारों का नया कानून १९३५ में पास किया, जिसे 'प्राविंशल एटोनामी' (प्रान्तीय स्वतन्त्रता) का नाम दिया गया, क्योंकि इसमें चुने हुए सदस्यों को ही मंत्रियों के चुनाव का अधिकार था। पंडित जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में लखनऊ कांग्रेस ने चुनाव लड़ने का फैसला किया। ८ फरवरी १९३६ को ये चुनाव हुए। पंडित जवाहर लाल के तूफानी दौरों ने आम जनता को साहस दिया। किसान जो जमींदारों के जूते तले दब कर खंडित जीवन के आखरी किनारे पर पहुंच कर त्राहि-त्राहि कर रहे थे, उभर कर खड़े हो गए। उन्हें बांधा गया, पीटा गया, भयभीत किया गया, पर उनके पैर उन्हें कांग्रेसी उम्मीदवार के ही कैम्प में ले आए।

कहें, भारत के राजनीतिक इतिहास में मतदाता ने पहली बार अपनी मत से मत दिया। भारत पाक युद्ध में खेमकरण क्षेत्र को अमरीकी पैटन टैंकों का कब्रिस्तान कहा गया था, पर ८ फरवरी १९३६ के चुनाव ने पूरे भारत को रायबहादुरों, खानबहादुरों, सर, सामंतों, यानी प्रतिक्रियावादी ताकत के रावणों का कब्रिस्तान बना दिया। यू. पी., सी. पी., मद्रास, बिहार और उड़ीसा की असेम्बलियों में कांग्रेस को बहुमत मिला, तो बंगाल बम्बई, असम और सीमा प्रान्त में कांग्रेस प्रमुख दल रहे। बस सिन्ध और पंजाब में वह अल्पमत में थी। ९ प्रांतों में राष्ट्रीय मंत्रिमंडल बने और इतना लोकहितैषी काम हुआ कि जनता मुग्ध हो गई। इस काम का सार यह है कि जो राक्षसी पंजा जनता का गला दबा रहा था उसकी उंगलियां मरोड़ दी गई। त्रस्त जनता के लिए यह कोई साधारण काम न था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केन्द्रीय असेम्बली में अब भूला भाई देसाई विरोधी दल के नेता थे। ज्यों ही सर जेम्स ग्रिग अर्थ सदस्य ने बजट पेश किया, भूला भाई ने एक वक्तव्य में कहा 'कांग्रेस पार्टी, इंडिपैंडैंट कांग्रेस पार्टी, नेशनलिस्ट पार्टी और डेमोक्रेटिक पार्टी ने फैसला किया कि बजट की आम बहस में भाग न लेंगे, इसलिए मतदान हो।' अंग्रेज सरकार के लिए यह धड़ाका था, पर जनता के लिए मनोरंजक फुलझड़ी। कस्टम की मांग के पक्ष में ४६ मत मिले, तो विरोध में ६४-वह नामंजूर हो गई। दूसरी माँगों का भी यही हाल हुआ और गवर्नर जनरल ने उन माँगों को अपने विशेषाधिकार से पास कर दिया। यह अंगूठा दिखाना था, पर इसका अंगूठा तोड़ जवाब यह दिया गया कि पूरा बजट ही नामंजूर कर दिया गया। सरकार के पक्ष में ४८ वोट आए, विपक्ष में ६८, सरकार नंगी हो गई। अखबार मोटे हेडिंगों से भर गए और जनता आनन्द से नाच उठी। इन सब बातों ने जनता का मन विधायकों और विधान सभाओं के प्रति आदर से भर दिया और यही मानसिक क्रम १५ अगस्त, १९४७ तक चला, जब गुलामी की अंधेरी रात दूर हुई और स्वतन्त्रता का सूर्य उदय हुआ।

अब विधायक विधायिकाएं अपनी थीं। ३ नवम्बर, १९४७ को स्वतन्त्र भारत में उत्तर प्रदेश की विधान सभा का जो पहला अधिवेशन हुआ, उसमें मैं भी दर्शक था। बहुत गहरे उतर कर जो विचार मन में उठे थे, उन पर एक लेख मैंने २४ नवम्बर, १९४७ के अपने साप्ताहिक 'विकास' में लिखा था। उसी में यह पंक्तियां भी हैं—

'जमींदार पार्टी' पर नजर डालते ही ऐसा लगता है, जैसे ये अपनी मरती क्लास की लम्बे सांस हों। अगली असेम्बली में बेचारे दूसरे मेम्बरों से पास माँग कर कभी-कभी यह हाल देखने आया करेंगे। जमींदारियाँ ही खत्म हो जायेंगी तो जूते के जोर से वोट लेने वाले कहां रहेंगे?' प्रसन्नता की बात है कि मेरी यह भविष्य-वाणी सोलह आने सत्य सिद्ध हुई और जमींदारी एवं जमीदार ही नहीं, देश पर छाई पूरी सामंतवादी सत्ता—राजा, तालूकेदार, जमीदार—समाप्त हो गई।

मेरी प्रसन्नता धूमिल हो जाती है, जब उसी लेख में मैं पढ़ता हूं—'कांग्रेस दल पर एक नजर डालते ही पहली बात जो मन में आती है, वह यह कि उसमें प्रांत की सर्वोत्तम प्रतिभाएं नहीं, सर्वोत्तम स्वतन्त्रता साधक हैं। अभी तक जेल निवास की घड़ियाँ गिनकर मेम्बरी की रेवड़ियाँ बांटी गई हैं और यह ठीक भी है, पर भविष्य में ज्यों-ज्यों वैज्ञानिक दृष्टिकोण बढ़ता जायेगा, उपयोगिता जोर पकड़ेगी। अपनी छोटी-सी फ़ाइल लिए देखिए वे चली आ रही हैं श्रीमती विद्यावती राठौर। ८ फरवरी १९३६ को 'लीडर' के विश्व विख्यात संपादक सर सी. वाई चिन्तामणि को इन्होंने ६००० वोटों से हराया था। इन्हें प्रणाम। सर चिन्तामणि, सर सीताराम और सर षण्मुखम चेट्टी की हारें पिछले चुनाव के चमत्कार थे। चमत्कार आन्दोलन को उभार देते हैं, पर निर्माण चमत्कारों से नहीं, गम्भीर योजनाओं से बल पाता है। यह स्वस्थ दृष्टिकोण अब प्रबल होगा और आशा है अगली असेम्बली में जहां प्रान्त के सर्वोत्तम कानून विशारद होंगे, वहाँ कृषि विशारद, पत्रकार, शिक्षा शास्त्री, चित्रकार, अभिनेता, व्यापारी, उद्योगपति और विभिन्न अन्य धाराओं के प्रतिनिधि भी दिखाई देंगे। इससे गुणीजनों का व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं के कारण अराष्ट्रीय संस्थाओं में जाना और नई-नई पार्टियों का बनना रुकेगा और असेम्बली हमारे प्रान्त की आत्मा का सम्पूर्ण प्रतिनिधित्व करने में समर्थ होगी।

स्पष्ट है कि मेरी यह आशा शत प्रतिशत असफल रही और उस लेख के डेढ़ दर्जन वर्षों के बाद १९६६ में हमारी विधायिकाओं की स्थिति यह है कि न वे अपने क्षेत्रों की सर्वोत्तम साधना का प्रतिनिधित्व करती हैं, न प्रतिभा का, कहें न विशिष्टताओं का, न शिष्टताओं का। नतीजा यह कि वे जनता के मानस को न प्रकाश दे पा रही हैं, न विकास और न जनता के मन का विश्वास ले पा रही हैं, न प्यार-सम्मान् जबकि उनके प्रति सम्मान और आस्था ही प्रजातंत्र की सर्वोत्तम शक्ति हैं।

(२)

मद्रास के उद्योग मंत्री श्री आर. वेंकटारमण ने अप्रैल १९६५ में पत्रकारों से कहा था—'हमें संविधान में संशोधन कर संसदीय प्रणाली को हटाना होगा। हमारा एक परम्परागत मस्तिष्क है। हमने ब्रिटिश शासन-प्रणाली को जारी रखना पसंद किया, पर यदि वर्तमान शासन-प्रणाली भारत में जारी रहो, तो १९६७ के चुनाव में अराजकता पैदा हो जायगी और १९७० तक आम गड़बड़ फैल जाएगी। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि देश के विधायक जनता की आशा पूरी नहीं कर सके हैं और जनता इधर से उदासीन होती जा रही है।"

इसमें दो मत नहीं हो सकते कि १९५२, १९५७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और १९६२ के तीन चुनाव लड़ने के बाद जब १९६७ का आम चुनाव हमारे सामने है, तो जनता का भय विधायकों और विधायिकाओं की ओर से निराश और उदासीन-सा लगता है। इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि प्रजातान्त्री देश में यह स्थिति अस्वस्थ है, पर आवश्यक और महत्त्वपूर्ण प्रश्न तो है यह कि देश के स्वतंत्र होते समय तो विधायक और विधायिकाएं जनता की आशा और आकर्षण केन्द्र थे, फिर आज उदासीनता क्यों ?

पद और प्रतिष्ठा

आइए इस गहराई में उतरें। गुलाम भारत में विधायक प्रतिष्ठित थे—जनता के मन में उनका आदर था, और स्वतंत्र भारत में वे पदासीन हैं—जनता के दिमाग पर उनका रौब है। पद-प्रतिष्ठा देखने में एक शब्द है, पर असल में दो शब्द हैं पद और प्रतिष्ठा। पद जोड़-तोड़ से, ताकत से और पैसे से भी मिल जाता है, पर प्रतिष्ठा मिलती है आदर्श चरित्र से। गुलिस्तां में शेखसादी ने कहा है कि यदि टूटी गंदी दीवार पर कोई उत्तम उपदेश लिखा हो, तो तू उसे ग्रहण कर और यह सोच कि दीवार गंदी है—तुझे उपदेश से मतलब है या दीवार से ?

पश्चिम ने यह चरित्र पद्धति स्वीकार की है। युवक श्रमिकों के उत्सव में जार्ज बर्नार्ड शा भाषण देने गए। बोले—"इस भवन के बाहर एक रोल्सरौमस नई चमचमाती कार खड़ी है। वह एक ऐसे आदमी की है, जो एक मिनट भी शारीरिक परिश्रम नहीं करता। मैं पूछता हूं—उसे ऐसी कार रखने का अधिकार समाज ने क्यों दिया और जिस समाज ने यह अधिकार दिया क्या हमें उस सड़े गले समाज को नहीं बदलना चाहिए ?"

और तब धुड़धुड़ी-सी लेकर उन्होंने पूछा—"आप जानते हैं वह नई कार किसकी है ? सुनिए, वह कार मेरी है।" और बस तालियों की गूंज से पूरा हाल गड़-गड़ा उठा। भारत की मनोवृत्ति इससे उल्टी है। यहां चाणक्य ऊंचे राजमहल से दूर फूस की कुटिया में रहता था और राष्ट्रपिता गांधी सेवा ग्राम की खपरैल कुटि में या दिल्ली की भंगी बस्ती में रहते थे। भारत वक्ता से आचरण की मांग करता है—"जो कहे, सो करे जो करे, सो कहे।"

गुलाम भारत की कथनी-करनी एक थी, पर अब कथनी, करनी से उतनी ही दूर है, जितना पृथ्वी से चाँद। हाफिज मौहम्मद इब्राहीम साहब से १९३६ में मुस्लिम लीग ने कहा कि तुम हमारे टिकट पर चुनाव लड़ो। यह सौभाग्य बात थी, क्योंकि कांग्रेस नेतृत्व ने अपनी अदूरदर्शिता से यह स्वीकार कर लिया था कि कांग्रेस के मुस्लिम उम्मीदवार भी लीग के टिकट पर चुनाव लड़ेंगे, यह एक ऐतिहासिक मूर्खता थी और श्री रफी अहमद किदवई जैसे कुछ लोग ही मूर्खता के इस जाल से बचे थे। इस हालत में हाफिज जी मुस्लिम लीग के टिकट पर चुनाव लड़ते तो कोई बुरी बात न होती। याद रखने की बात यह है कि हाफिज जी तब कांग्रेस में नहीं थे, पर उनकी दूर अन्देशी ने घंटी बजा दी और स्वयं चुनाव लड़ा। वे जीत गए और कांग्रेस में शामिल होकर मंत्री बन गए।

मुस्लिम लीग ने बयान दिया कि वे हमारी वजह से जीते हैं। हाफिज जी ने कमाल किया कि तुरंत त्याग पत्र दे दिया और फिर चुनाव लड़ा—काफी वोटों से उन्होंने मुस्लिम लीग को हराया, पर अब इससे यह परम्परा पड़ गई कि यदि कोई सदस्य किसी दल के टिकट पर चुनाव लड़े और उस दल को बाद में छोड़े तो त्यागपत्र देकर मतदाता के सामने अपने को दुबारा पेश करे, पर स्वतन्त्र भारत के विधायक इस ऊंचे चरित्र से गिर गए और जब चाहें अपने मतदाताओं की परवाह किये बिना दल बदल लेते हैं। क्या मतदाता इस अन्तर को नहीं तोलते ?

टंडनजी का आदर्श

१५ अगस्त १९४७ को यू० पी० असेम्बली में दो दर्जन के लगभग लीगी सदस्य थे। उनके नेता श्री लारी ने एक बार झुंझलाहट में कह दिया कि "असेम्बली के अध्यक्ष श्री पुरुषोत्तम दास टंडन में हमारा विश्वास नहीं है—वे कांग्रेस का पक्ष करते हैं।" सुनते ही टंडन जी ने कुर्सी छोड़ दी और कहा—एक दल नहीं यदि एक सदस्य भी यह कहे कि मुझ में उसका विश्वास नहीं है, तो मैं इस कुर्सी पर नही बैठूँगा। सदन में सन्नाटा छा गया और सब लोगों ने लिखित रूप में टंडन जी के प्रति अपना विश्वास और आदर प्रकट किया। तब वे एक बुजुर्ग की तरह हँसते हुए आकर अपनी कुर्सी पर बैठे। इसके विरुद्ध अब क्या हाल है ? हंगामें और दंगे किस जगह नहीं हैं, पर ऐसी विधान सभाएं भी हैं, जहाँ सब विरोधी दल मिल कर अध्यक्ष से त्यागपत्र की मांग करते हैं और स्वयं शासक दल के सदस्य भी उसे एक गुट का समर्थक कहने में नहीं चूकते। फिर भी अध्यक्ष महोदय अपनी कुर्सी पर जमे रहते हैं। क्या मतदाता इस अन्तर को नहीं तोलते ?

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब मैं गंभीरतम बात पर आता हूं और वह बिना लाग-लपेट के एक धड़ाके की तरह यह है कि देश के प्रशासन को विधायकों से, इस प्रकार के रवय्ये से भारी धक्का लगा है। १५ अगस्त १९४७ से पहले दो तरह के सरकारी अफसर थे। एक वे, जो मन से अंग्रेजी राज्य को पसंद करते थे—दिल दिमाग से अंग्रेज-परस्त थे और दूसरे वे, जो रोजगार के कारण सरकार से बंधे थे, पर उनकी आत्मा स्वतन्त्रता के सैनिकों के साथ थी। मोटे तौर पर अंग्रेजपरस्त ५० प्रतिशत थे और देशपरस्त ५० प्रतिशत। मैंने आन्दोलन का अपने क्षेत्र में नेतृत्व करते समय और जेल में रहते समय इन देश परस्तों की देश भक्ति के ऐसे अनेक कारनामे देखे कि मैं अपनी देश भक्ति से इनकी देश भक्ति को कभी कम नहीं आंक पाया। ये स्वतन्त्रता के सैनिकों को गिरफ्तार करते थे, जेल भेजते थे, पर उन्हें धरती का देवता समझते थे, मनसे उनका आदर करते थे।

स्वतन्त्रता आने पर अधिकांश अंग्रेजपरस्त अफसर पाकिस्तान चले गए, इंगलैंड चले गए या हतप्रभ हो गए और प्रशासन की बागडोर उन देशभक्तों के हाथ में आ गई। १४ अगस्त १९४७ की रात में भारत भूमि पर जो लोग सोये, उनमें सबसे बदनाम सरकारी अफसर थे जो पिछले २५ वर्षों से देश की गुलामी की जंजीरों को टूटने से रोके हुए थे और १५ अगस्त १९४७ को भारत भूमि पर जो लोग सोकर उठे उनमें सबसे अधिक देश भक्त वे लोग थे, जो सरकारी अफसर थे, क्योंकि ये लोग ही उस प्राप्त स्वतन्त्रता को अपने कन्धों पर संभाले हुए थे और राजनीतिक क्रांति के विरुद्ध उठी साम्प्रदायिक प्रतिक्रांति के तूफान को ईमानदारी और पूरी ताकत से कुचलने में सन्नद्ध थे।

१९५० में

यह एक मनोवैज्ञानिक चमत्कार था और इसका रहस्य उन अफसरों के मन में व्याप्त यह आनन्द था कि अब हमें अपने देश की सेवा उन देवताओं के साथ करने का सौभाग्य प्राप्त होगा, जिन्हें हम अभी तक अपनी कमजोरियों के कारण सताते थे और अब जो हमारे संरक्षक हैं। १९५० में ये अफसर अपनी नैतिक ऊंचाई के पूरे शिखर पर थे और इसे मैंने हरद्वार के कुम्भ में देखा था। एक पुलिस अफसर श्री बैजल और श्री सतीश चन्द्र आई. सी. एस. परेशान थे। बात यह थी कि तपस्वनी आनंदमयी मां दूसरे दिन लखनऊ से देहरादून जाते समय हरद्वार में गंगा स्नान करना चाहती थीं, पर हरद्वार में बिना टीका लगवाये कोई प्रवेश नहीं कर सकता था। ये सब अफसर उनके भक्त थे, पर नियम से बंधे हुए थे और मार्ग तलाश कर रहे थे। गुप्ता जी के एक मित्र ने कहा—"बैजल, आप स्टेशन से अपनी गाड़ी में आनन्दमयी मां को ले आएं और स्नान कराकर तुरन्त स्टेशन पहुंचा दें, इसमें परेशानी की बात क्या है?"

बैजल ने कहा—"मुझे मालूम है कि मेरी गाड़ी कोई नहीं रोकेगा, पर परेशानी यह है कि हम आनंदमयी मां को टीके से बचा दें, तो दूसरों को टीके के लिए बाध्य करने का हमारे पास क्या नैतिक अधिकार रह जायगा?" फोन कर दिया गया कि यह संभव नहीं है। मैं भी उस गोष्ठी में था और बैजल का उत्तर सुनकर स्तब्ध रह गया था।

दूसरे दिन अफसरों की नैतिकता की इससे भी कठोर परीक्षा हुई। केन्द्रीय पुनर्वास मंत्री श्री मोहनलाल सक्सेना हरद्वार आए। सीमा पर उनकी मोटर टीका लगवाने के लिए रोकी गई। पी. ए. ने मिनिस्टर का परिचय दिया, रौब जमाया, पर उत्तर स्पष्ट—"आप मेला अफसर को फोन कर लें।" फोन पर अफसरों ने नम्रतापूर्वक इंकार कर दिया। उत्तर प्रदेश के स्वायत्त-मंत्री श्री आत्माराम गोविन्द खेर नहर के बंगले में ठहरे हुए थे। श्री सक्सेना ने उन्हें फोन किया और कमाल का उत्तर पाया—"अरे, उठाओ भी आस्तीन और लगवाओ भी टीका, मैं भला उन्हें कैसे कह सकता हूं!" और पुनर्वास मंत्री टीका लगवा कर ही हरद्वार में घुसे। और तो और, पूज्य टंडन जी को गुरुकुल में भाषण देकर तुरन्त लौटना पड़ा था, क्योंकि उनके लिए टीका न लगवाना सिद्धान्त की बात थी। इस प्रकार अफसर, मिनिस्टर और जनता नैतिकता के शिखर पर थे।

१९५२ के चुनाव के बाद

१९५२ के चुनाव के बाद यह शिखर खंड-खंड हो गया और इसका अनुभव भी मुझे हरद्वार में ही हुआ। १९५६ में वहां अर्धकुम्भी हुई। टीके का नियम था ही। एक कमिश्नर महोदय अपनी पत्नी के साथ आए, तो उन्हें रोका गया। उन्होंने जिलाधीश को फोन कर दिया। जिलाधीश ने टीकेवालों को डांट दिया - उनकी गाड़ी चली आई। बहुत ध्यान से देखने, याद रखने की बात यह है कि १९५० में सर्विसेज का नैतिक वातावरण इतना ऊंचा था कि केन्द्रीय मंत्री को राज्य का मंत्री भी टीके से मुक्त न कर सका, पर १९५६ में वह इतना नीचा हो गया कि एक डिविजन के कमिश्नर को एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

जिले का कलक्टर ही बिना खास जोर लगाए उससे मुक्त करा सका।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पतन के इस विकराल स्वरूप को मैंने एक और रूप में भी अनुभव किया। मैंने इन वर्षों में ४ कलक्टरों की गतिविधियां देखी हैं। पहले कलक्टर की स्थिति यह थी कि जिले का सबसे ताकतवर विधायक भी उनसे कोई अनैतिक बात—उदाहरण के लिए गैर कानूनी करार दिये संघ के किसी स्वसमर्थक कार्यकर्ता को जेल से छोड़ने की बात—नहीं कह सकता था, कहने में झिझकता था और कहने पर दो कड़वी बात सुनने को तैयार रहता था।

दूसरा कलक्टर विधायकों की उचित अनुचित हरेक बात सुन लेता था, पर करता था वही, जो मामले की फाइल कहती थी, सत्य होता था। यह सत्य विधायक के विरुद्ध हो, तो वह चुप रह जाता था। तीसरा कलक्टर विधायकों की उचित अनुचित बातें सुन लेता था और किसी अनुचित बात के लिए उनका आग्रह हो, तो उसे कर देता था, पर फाइल को ऐसी बनाकर कि वह कार्य उचित मालूम हो। चौथा कलक्टर वही करता था जो विधायक कहते थे—बिना उचित अनुचित का तर्क किए। उनका तर्क था—"अरे भाई, आखिर हकूमत उनकी है, सोचना उन्हें, हमें तो जो वह कहें करना है।"

सत्य पालन से आज्ञा-पालन तक अफसरों को पहुंचाने के लिए जो प्रयत्न किए गये थे, उनमें मंत्रियों द्वारा दस आदमियों के सामने झाड़ फटकार दिलवाना घटिया स्थानों में ट्रांसफर कराना, उन पर मुकदमें चलवाना और आज्ञापालक अफसरों को विशेष सुविधाएं तरक्कियां दिलाकर प्रलोभन देना भी था।

विधायकों द्वारा हस्तक्षेप !

एक औद्योगिक प्रशिक्षण विद्यालय का विद्यार्थी डकैती के अभियोग में पकड़ा गया। ग्यारह महीने बाद वह सबूत न मिलने के कारण छूट गया। वह प्रथम वर्ष का विद्यार्थी था। उसने प्रिंसिपल को प्रार्थना पत्र दिया कि मैं जेल में रहने के कारण परीक्षा नहीं दे सका, पर वहाँ अध्ययन करता रहा हूं, इसलिए मुझे बिना प्रथम वर्ष परीक्षा दिये ही दूसरे वर्ष की परीक्षा देने की स्वीकृति दी जाए। यदि डकैती के घृणित अभियोग की बात छोड़ भी दें, तब भी संसार में कभी कहीं ऐसा नहीं हुआ कि पहली परीक्षा दिये बिना कोई दूसरी परीक्षा दे सके। प्रिंसिपल ने उसकी प्रार्थना अस्वीकृत करदी।

इस विद्यार्थी के एक सम्बन्धी विधायक थे। उन्होंने डायरेक्टर पर जोर डाला कि वह स्वीकृति दे दें, पर डायरेक्टर एक आदर्शवादी अफसर था उसने पूरी ताकत से [illegible] दिया। विधायक कुछ और विधायकों को साथ लेकर उपमंत्री से जा भिड़ा और प्रार्थनापत्र पर स्वीकृति लिखा लाया। यह स्वीकृत प्रार्थना-पत्र अमल कराने के लिए सचिव के पास गया। दुर्भाग्य से वे भी आदर्शवादी और भारत-माता के प्रति वफादार! उन्होंने उस पर विरोधी नोट लिखकर लौटा दिया। विधायक ने इसे डिप्टी मिनिस्टर की प्रतिष्ठा का प्रश्न बना दिया। अब फाइल चीफ मिनिस्टर के पास गई। चीफ मिनिस्टर ने आदेश दिया कि डिप्टी मिनिस्टर के आदेश का पालन हो, पर इसे नजीर न माना जाए। आदेश का पालन हुआ, पर आदर्शवादी सचिव ने उस पर लम्बा नोट लिखकर ही उसे स्वीकार किया।

अनुचित का समर्थन करने की दुष्प्रवृत्ति किस हद तक पहुंच गई है? इस प्रश्न का उत्तर इस बात से मिलता है कि राज्य में एक मुअत्तिल ओवरसियर के पक्ष में जिसके विरुद्ध, भ्रष्टाचार के ५-६ मुकदमे चलने की सिफारिश है, ४० विधायकों ने उस विभाग के मिनिस्टर से सिफारिश की।

संक्षेप में जिले के अधिकारियों का आम तौर पर दृष्टिकोण यह है कि वे विधायकों को खुश रखें और मौज करें। अपनी सिद्धान्तवादिता के कारण जो यह दृष्टिकोण नहीं अपनाते, वे दूसरे अफसरों की दृष्टि में बगुला भगत हैं और विधायकों की दृष्टि में बेकाम आदमी। नतीजा यह कि वे उन्नति के पथ पर दौड़ते नहीं, घिसटते हैं और असुविधाओं में उलझे रहते हैं।

अंग्रेज सरकार ने जमींदार बनाए थे। कहा जाता है कि जमींदारी के मुकदमों में डिप्टी कलक्टरों को हिदायत थी कि उनसे पूछ कर फैसले लिखें—पुलिस को हिदायत थी कि उनसे पूछकर अपराधों की रिपोर्ट लिखें, जिससे आम जनता को यह बोध रहे कि इनका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता। क्या विधायक भी जमींदारों की तरह बनना चाहेंगे? लेकिन यह स्मरण रहे कि अंग्रेजी राज के जमींदार तो अपनी सरकार को मजबूत बनाते थे। विधायकों के ऐसे कारनामों से तो अब सरकार कमजोर हो रही है। एक मित्र की मजेदार आलोचना है—पुराने जमीदार ऐय्याश थे, नए जमीदार ऐय्यार हैं। ऐय्यार से जनता आतंकित हो सकती है, पर ऐय्यारी तो उसके हृदय में आदर नहीं उपजा सकती। यही आज की स्थिति है।

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम सम्मान किसका करते हैं ? जिसे अपने से बड़ा, अपने से श्रेष्ठ मानते हैं ।

और अपने से बड़ा, अपने से श्रेष्ठ किसे मानते हैं ?

यह खड़ी है प्लेटफार्म पर पंजाब मेल । थर्ड क्लास का टिकट जेब में डाले, अपनी अटैची हाथ में लटकाए एक मुसाफिर जगह देखता फिर रहा है। यह उसके सामने आगया फर्स्ट क्लास का डब्बा, जिसमें बर्थ पर अपना बिस्तर बिछाए एक मुसाफिर बैठा है और एक पूरी बर्थ सामने खाली है, पर यह अटैची वाला उस पर नहीं बैठ सकता ।

क्यों ? क्या यह बैठना नहीं चाहता ? बैठना चाहता है, पर बैठ नहीं सकता, क्योंकि इसके पास थर्ड क्लास का टिकट है । यह चाह कर भी फर्स्ट क्लास का टिकट नहीं खरीद सकता । यह अटैची वाला फस्ट क्लास में बैठे उस मुसाफिर को नहीं जानता, पर मानता है कि यह कोई बड़ा आदमी है, उससे श्रेष्ठ आदमी है, सम्मानित आदमी है ।

यही प्रश्न—जिसे वह जानता नहीं, उसे अपने से बड़ा, श्रेष्ठ और सम्मानित क्यों मानता है ? प्रश्न गंभीर है, पर अनुभव का उत्तर सरल है हर आदमी जो काम करना चाहता है पर प्रयत्न करके भी नहीं कर सकता, उस काम को जो आदमी कर लेता है या कर सकता है, उसे ही वह अपने से बड़ा, अपने से श्रेष्ठ अपने से सम्मानित मानता है ।

सूत्र यह बना कि हर असमर्थता समर्थता के सामने सिर झुकाती है, तो वह अटैची वाला मुसाफिर भी फर्स्ट क्लास का टिकट लेकर उस डब्बे में बैठना चाहता है, पर परिस्थितिवश बैठ नहीं सकता, इसलिये जो बैठ सकता है, बैठा है, उसे अपने से श्रेष्ठ, बड़ा, सम्मानित मानता है ।

इस विश्लेषण के अनुसार विधायकों ने स्वतंत्रता के वर्षों में जन-साधारण की दृष्टि में अपनी श्रेष्ठता विशिष्टता खोई है, क्योंकि वे जनसाधारण से अपनी असाधारणता सिद्ध करने में असफल रहे हैं और यह भी अनेक रूपों में । पहली बात है चरित्र की। पवित्र चरित्र के विधायकों का देश में अकाल नहीं है, पर आम तौर पर विधायकों की जो चर्चा जनसाधारण ने, मतदाता ने सुनी है, वह भली नहीं है । फिर अपने अपने क्षेत्र में अधिकांश विधायकों को जिस स्वदृष्टि में ग्रस्त देखा गया है, वह भी आकर्षक नहीं है । स्पष्ट शब्दों में ऐसे विधायकों की संख्या कम है, जो अपने क्षेत्र में अन्याय के विरुद्ध न्याय पक्ष के संरक्षक-समर्थक हों। परिणाम स्वरूप जनसाधारण विधायकों के प्रति उदासीन हो गया है और इससे चुनावों की स्थिति अस्वास्थ्यकर हो गई है ।

चुनाव की पहली शक्ति है दल के प्रति मतदाता की निष्ठा । प्रजातन्त्र में उम्मीदवार नम्बर दो पर है, नम्बर एक है दल, क्योंकि उम्मीदवार या विधायक दल की नीति से बंधा है, यानी देश में क्या निर्माण हो, इसका निश्चय करेगा दल । १९३६ के चुनाव में मैं उत्तर प्रदेश के कुछ जिलों में श्रीमती सरोजनी नायडू के साथ घूमा । एक बात वे अपने हर भाषण में कहती थीं—"उम्मीदवारों के कपड़े-लत्ते मत देखो । सिर्फ यह देखो कि किस उम्मीदवार को किसने खड़ा किया है। इन शानदार उम्मीदवारों के पीछे अंग्रेजी सरकार है, जिसने देश का शोषण किया है और जनता को भूखी, नंगी बनाया है । इनके विरुद्ध गरीब या मामूली हैसियत के उम्मीदवार हैं, जिन्हें कांग्रेस ने खड़ा किया है, जो देश की आजादी और जनता की खुशहाली के लिए बलिदान कर रही है । इसलिए कसम खाओ कि पढ़े-लिखे और दौलतमन्द सरकार परस्त उम्मीदवार के मुकाबले अगर कांग्रेस लैम्प का खम्भा भी खड़ा करे, तो तुम उसे ही वोट दोगे ।"

कोई दल लोकप्रिय नहीं

तीन आम चुनाव लड़ने के बाद जब चौथा आम चुनाव देश के सामने है, तो इस बात में दो मत नहीं हो सकते कि देश का कोई भी दल इस स्थिति में नहीं है, जिस के प्रति आम मतदाता की निष्ठा हो । कांग्रेस के उम्मीदवार को इस दिशा में जो थोड़ी-सी अच्छी परिस्थितियां प्राप्त हैं, उसका कारण कांग्रेस का शासक दल होना ही है—लोकप्रिय दल होना नहीं ।

चुनाव की दूसरी शक्ति है उम्मीदवार का सेवा-सम्पर्क । मैंने तीनों चुनावों के बाद ऐसे कुछ क्षेत्रों में घूम-घूम कर गहरा अध्ययन किया था, जिनमें सज्जन उम्मीदवारों के मुकाबले दुर्जन उम्मीदवार जीते थे या बहुत प्रभावशाली उम्मीदवारों के मुकाबले साधारण उम्मीदवार जीते थे । एक ऐसे विजयी उम्मीदवार के निर्वाचन क्षेत्र में, जिसे किसी भी कसौटी पर कम कर दुर्जन ही कह सकते हैं एक बूढ़े बाबा ने मुझ से कहा—"यह कौन नहीं जानता कि वह दस नम्बरी है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका विरोधी साधु आदमी है, पर बाबू जी दुःख-मुसीबत में तो वह दुर्जन ही पास आकर खड़ा होता है, उन बाबू जी की तो हमने कभी सूरत भी नहीं देखी।"

देश के एक सर्वोच्च नेता के चुनाव क्षेत्र में एक चौधरी ने कहा—"मेरा बड़ा बेटा अफसर है और छोटा बेटा क्लर्क है। बड़ा हर महीने मनिआर्डर भेजता है, पर न खत-पत्तर, न आना न जाना। छोटा हर छमाही मिल जाता है या मुझे बुला लेता है। बीमारी की खबर सुन कर खुद नहीं आ सकता, तो बहू को भेज देता है। बाबू जी बड़े बेटे का मनिआर्डर लेते समय मुझे ऐसा लगता है, जैसे वह मुझे भीख दे रहा है।" बस, यही बात उम्मीदवारों की है। मतदाता अपना ऐसा उम्मीदवार चाहता है, सुख-दुख में जिसके पास वह पहुंच सके।

उम्मीदवार का सर्वोत्तम मॉडल स्वतन्त्र भारत में मैंने एक संसद सदस्य श्री····· को पाया है। मतदाता से संपर्क ही उनकी शक्ति है। १९५२ में वे एक शक्तिशाली आदमी के मुकाबले हार गए, पर उसी शक्तिशाली मिनिस्टर को उन्होंने १९५७ में उसी निर्वाचन क्षेत्र में हरा दिया। ध्यान देने लायक बात यह है कि मिनिस्टर महोदय ने उस निर्वाचन क्षेत्र को अपनी सरकारी शक्ति से खूब भरापूरा कर दिया था। बहुत कम लोगों ने अपने निर्वाचन क्षेत्र के लिए इतना अधिक काम किया होगा, जितना मन्त्री महोदय ने किया था। चुनाव के बाद उस द्वार की कुंजी तलाश करने को मैं निर्वाचन क्षेत्र में गया। वह कुंजी भी एक बूढ़े आदमी से मिली। मैंने कहा—"आखिर आपने इस चुनाव में·····साहब को हरा ही दिया।" बड़ा अद्भुत उत्तर मिला—"अजी, इस चुनाव की बात ना करो। वे तो पिछले चुनाव में ही हार गए थे।"

मैंने समझा कि बूढ़े की जानकारी गलत है, इसी लिए यह ऐसा कह रहा है। कहा—"नहीं बाबा, पिछले चुनाव में तो वे·····कई हजार वोट से जीते थे।" सुनकर बूढ़े ने मुझे चमत्कृत कर दिया—"अब तुमने तो मोटी बात पकड़ ली और बारीक को भूल गए। यह तो सभी को पता है कि वे जीत गए थे। जीत न जाते तो मिनिस्टर किस तरह रहते, पर जीतने के बाद वे उन्हीं २-३ गांवों में गये जहाँ उन्हें खुमशादियों ने या मतलबियों ने पार्टी दी, पर हारने वाला हारने के बाद भी एक-एक गाँव में गया और कहा—"आपने मेरी बहुत मदद की, यह दूसरी बात है कि मैं हार गया, पर हारकर भी मैं आपका हूं और जब आप कोई सेवा बताएंगे, फौरन हाजिर हूंगा।" बूढ़े बाबा ने कहा—"बस इसी बात से मैंने समझ लिया था कि अपना कौन है और बेगाना कौन है?"

१९६२ के चुनाव में उसी उम्मीदवार ने एक केंद्रीय मन्त्री श्री.....को बुरी तरह हरा दिया, जब कि प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने भी उनकी जीत के लिए प्रयत्न किया था। इस निर्वाचन-क्षेत्र में घूमने पर मैंने आश्चर्य से देखा कि एक एक मतदाता इस संसत्सदस्य को नाम और सूरत से जानता था। निर्वाचन क्षेत्र में उनकी हजारों बहनें, मौसियाँ, फूफियाँ और खालाएं बन गई थीं। यह व्यक्ति निजी तौर पर पाँच लाख से ज्यादा मतदाताओं से मिला था और पाँच साल उस निर्वाचन क्षेत्र पर उसने खर्च किए थे। वह अकेला किसी मुसलमान के घर के सामने जाकर खड़ा हो जाता, आवाज लगाता—"खालाजी, तुम्हारा बेटा.....मिलने आया है।" और बस खालाजी पर्दे के पीछे आ जातीं, बातें करतीं, दुआ देतीं, पास-पड़ौस के वोट पक्के करने की जिम्मेदारी लेतीं।

मतदाता का मनोविज्ञान

क्या ये संस्मरण मतदाता के इस मनोविज्ञान की गीता हमारे सामने नहीं खोलते कि उम्मीदवार का सम्पर्क चुनाव की बहुत बड़ी शक्ति है, पर देश के सभी दल इस शक्ति से विहीन हैं - किसी के पास भी लोकप्रिय उम्मीदवार नहीं है। स्थिति यह है कि दलों के उम्मीदवार मतदाताओं के सामने आते हैं, मतदाताओं के उम्मीदवारों को दल नहीं चुनते।

चुनाव की तीसरी शक्ति है रुपया, जो दलों या अधिकांश उम्मीदवारों के पास अपना नहीं होता, धनपतियों से प्राप्त होता है। यह स्थिति कि चुनाव की शक्ति न दल के प्रति निष्ठा है, न उम्मीदवार के सम्पर्क की आत्मीयता और दोनों को सिर्फ धन का ही सहारा है, उस क्षेत्र के लिए कितनी खतरनाक है, जिसमें लोकतंत्री समाजवाद का पौधा अभी रोपा ही गया है। दलों को धन दो तरह मिलता है - एक चैक-रसीद का और दूसरा बिना चैक रसीद का। कारखाने के डायरेक्टर-प्रस्ताव पास करते हैं कि अमुक दल को इतने रुपए दिए जाएं। उतने का चैक चला जाता है, रसीद आ जाती है, पर दलों के प्रभावशाली नेता ऐसा रुपया भी पाते हैं, जो लिफाफे में आता है और रसीद नहीं मांगता। क्या यह स्पष्ट नहीं है कि लिफाफों का रुपया गोरा नहीं है? और क्या यह स्पष्ट नहीं है कि जो विधायक काला धन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ताकत से जीतता है, वह 'काला प्रवाह' को नहीं बदल सकता ? परिणाम स्पष्ट है कि क्रांति का जो प्रवाह एक ही झटके में सामंतवाद के स्तम्भों—राजाओं, ताल्लुकेदारों, जमींदारों—को तोड़कर गिरा सका, वह समाजवाद को आगे बढ़ाने में कुंठित हुआ जा रहा है और जनता उदास है, उस प्रजातंत्र से जो उसे अधिनायकता के कोल्हू में पिसने से बचाए हुए है।

कोरम की कमी

इस उदासी के केन्द्र को हम यों समझें कि १९६२ के आरम्भ में मतदाताओं ने जिन्हें मत देकर विधायक बनाया, दूसरा चुनाव आने तक मतदाताओं ने उनके बारे में क्या सुना ? उन्होंने सुना कि ये विधायिकाओं में छिछोरे ढंग के हंगामे-हुड़दंगे करते हैं और विधायिकाओं की कार्यवाही कोरम की कमी के कारण बार-बार रुकती है, यहां तक कि ५३० विधायकों की संख्या वाली लोकसभा में ५० सदस्यों की उपस्थिति को असम्भव समझा जाने लगा है और विचार हो रहा है कि १० का कोरम मान लिया जाए।

और मतदाताओं ने जिन्हें मत देकर विधायक बनाया, उनके बारे में इन वर्षों में देखा क्या ? उन्होंने देखा कि जनता को त्रास देने वाली जो बुराईयाँ संगठित होती जा रही हैं और संगठित होकर देश के पूरे राजनैतिक—संगठनात्मक और प्रशासनात्मक—ढांचे को चरमरा रही हैं, उनके संगठन की मूल शक्ति वे विधायक ही हैं। मतदाताओं का मन इसलिए भी अप्रसन्न है कि सब दलों की स्थिति एक समान है और उनके पास कोई विकल्प नहीं है। इस स्थिति में यदि मतदान का प्रतिशत नीचा है, तो क्या आश्चर्य ? सचाई यह है कि चुनाव के प्रति जनता में कोई उत्साह नहीं है और वह चुनाव को अपना काम न समझकर कुछ लोगों का पेशा समझती है। नतीजा स्पष्ट है कि देश के सभी दलों की स्थिति आकाश बेल जैसी है, जो पृथ्वी पर नहीं, किसी वृक्ष पर फैली रहती है और उस वृक्ष के जीवन का शोषण कर अपनी हरियाली बनाए रखती है।

(४)

अंग्रेजी राज्य के समय की बात है।

केन्द्रीय असेंबली का बजट अधिवेशन हो रहा था। विरोधी दल के रूप में कांग्रेस वालों ने अपने पैने व्यंगों, अकाट्य तर्कों, गम्भीर व्यक्तित्वों और प्रभावपूर्ण भाषणों से अंग्रेज सरकार को परेशान कर रखा था।

पहले दिन एक कटौती प्रस्ताव पर सरकार हार का झापड़ खा चुकी थी। इस लिए जब दूसरे दिन श्री सत्य मूर्ति ने सरकार की फिर मंजाई की, तो अंग्रेज अर्थ सदस्य बौखला उठा और बोला—"सदस्य को....."

सर कावस जी जहाँगीर उस समय अध्यक्ष की कुर्सी पर थे। उन्होंने अर्थ सदस्य को बीच में ही काट दिया—"सदस्य को नहीं, माननीय सदस्य को कहिए !" विधायिकाओं की मर्यादा का यह स्तर था उन दिनों।

उत्तर प्रदेश की लेजिस्लेटिव कौंसिल में सर ब्लंट बजट की आलोचनाओं का जवाब देने खड़े हुए, तो उन्होंने देखा कि विरोधी दल के प्रमुख प्रवक्ता सर सी. वाई. चिंतामणि हाउस में नहीं हैं। पता चला कि तबियत ठीक न होने के कारण वे आज नहीं हैं, सर ब्लंट ने अपना भाषण दूसरे दिन के लिये स्थगित कर दिया और यह कह कर सबको हंसा दिया—"जब सुनने के लिये सामने भूत (चिंतामणि जी काले-मोटे थे) न हो, तो बात कहने का क्या मजा ?" विधायकों की मर्यादा का यह स्तर था उन दिनों।

१९२४ में स्वराज्य पार्टी बनी और उसने चुनाव लड़ा। कौंसिलों में उसके अत्यंत योग्य सदस्य पहुंचे। अपने घोषणा-पत्र में स्वराज्य पार्टी ने अपनी नीति को 'सतत—लगातार सरकारी काम में अड़ंगा डालने की नीति' कहा था। गांधी जी कौंसिलों में जाने के विरोधी थे, पर उन्होंने अपने वक्तव्य में स्वराजी सदस्यों का मार्गदर्शन करते हुए कहा, "कौंसिलों में क्या ढंग अपनाना चाहिए, इसके सम्बन्ध में मेरा कहना यही है..... यदि मैं कौंसिलों में जाऊंगा तो सोलह आने अड़ंगा डालने की नीति का अवलम्बन न करके कांग्रेस के रचनात्मक कार्यक्रम को सफल बनाने की चेष्टा करूंगा। मैं उस हालत में प्रस्ताव पेश करके केन्द्रीय या प्रांतीय सरकारों से चाहूँगा कि वे सारे कपड़े खद्दर के खरीदें, विदेशी कपड़ों पर भारी चुंगी लगाएँ, शराब की आय को रद्द कर दें और सेना को कम करें। यदि सरकार कौंसिलों में पास होने के बाद भी इन प्रस्तावों पर अमल करने से इंकार कर दे, तो मैं सरकार से कौंसिलों को भंग करने के लिए कहूँगा और उन्हीं खास-खास बातों पर फिर निर्वाचकों के वोट हासिल करूँगा। यदि सरकार कौंसिल भंग करने से इंकार कर दे, तो मैं अपनी जगह से इस्तीफा दे दूँगा और देश को सत्याग्रह के लिए तैयार करूँगा।"

स्वराज्य पार्टी के नेता श्री चित्तरंजन दास और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री मोतीलाल नेहरू ने अपने वक्तव्य में स्पष्टीकरण करते हुए कहा, "हमारा विचार अड़ंगा डालने की अपेक्षा स्वराज्य के मार्ग में नौकरशाही द्वारा डाली गई रुकावटों का मुकाबला करने का है। अड़ंगा शब्द व्यवहार करते समय हमारा मतलब इसी मुकाबले से है।"

गांधी जी का वक्तव्य प्रजातन्त्री विरोध नीति का व्याकरण प्रस्तुत करता है और इसका फल हम यह देखते हैं कि केन्द्रीय असेम्बली में स्वराज्य पार्टी के सदस्य कभी किसी दल साथ वोट करते थे कभी किसी दल के और कभी सरकार के साथ भी। मतलब यह है कि वे विरोध के लिए विरोध नहीं करते थे। उसकी भी एक मर्यादा थी। इस मर्यादा में जहाँ विरोध करना वर्जित है, वहाँ बहुमत की शक्ति से अल्प मत के उचित विरोध को कुचलने का दर्प करना भी वर्जित है।

इसका एक नमूना भी गांधी जी ने ही पेश किया था। अहमदाबाद में हुई कांग्रेस महासमिति की बैठक में सदस्यों के लिए एक प्रस्ताव आया, जिसके पूर्वार्ध में प्रतिमास २०० गज अच्छा सूत देने का विधान था और उत्तरार्ध में यह दंड-विधान कि सूत न भेजने पर सदस्य का स्थान खाली समझा जाए। बहस के समय दण्ड-दान वाली बात का विरोध करने के लिए कुछ सदस्य बैठक से उठकर चले गए। प्रस्ताव पास हो गया। पक्ष में ६७ और विरोध में ३७ वोट आए। गांधी जी ने इस आधार पर कि उठ कर जाने वाले विरोध में वोट देते, तो प्रस्ताव गिर जाता, दंड वाली बात वापस ले ली।

अल्पमत के सम्मान का यह शायद सारे संसार में सर्वोत्तम उदाहरण है और यह सर्वोत्तम उदाहरण है अल्पमत के उचित सहयोग का कि १९३७ में पहली बार भारत में लोकप्रिय मंत्रीमन्डल बने। उत्तर प्रदेश में जमींदारों के अत्याचारों की तलवार को किसानों के सिर पर से हटाने के लिए यू० पी० में कांग्रेस मन्त्री मण्डल ने टिनेंसी बिल पेश किया। जमींदारों ने इसमें कदम-कदम पर रोड़े अटकाए। पाठकों को जान कर आश्चर्य होगा कि इसमें चौबीस सौ संशोधन पेश हुए थे। यह कानून अंतिम रूप से पास हुआ विधान सभा और विधान परिषद की सम्मिलित सभा में। इसे पास कराने में नवाब छतारी की पार्टी के १७ मेम्बरों ने अपने विरोधी कांग्रेस मन्त्री मण्डल के साथ वोट किया। ऐसा न होता, तो यह कानून पास न होता।

प्रजातन्त्र की कोमलता और पवित्रता को दिल में उतारने के लिए प्रसंग से बाहर की भी एक बात कह दूँ। इस कानून के पास होते ही कांग्रेस मन्त्री मन्डल ने युद्ध-विरोध के लिए दूसरे कांग्रेसी मण्डलों के साथ त्याग-पत्र दे दिया। तब तक इस कानून पर गवर्नर के दस्तखत नहीं हुए थे। उनके दस्तखतों के बिना यह कानून लागू नहीं हो सकता था। जमींदारों ने गवर्नर पर बहुत जोर डाला कि वे इस कानून पर दस्तखत न करें, इसे लागू न होने पर गवर्नर सर हेरी हेग ने क्या जवाब दिया? उन्होंने वह उत्तर दिया, जिससे प्रजातन्त्र का चेहरा खिल उठे। उन्होंने कहा, "यह कानून मेरे मंत्री मण्डल का सर्वोत्तम काम है। इसे व्यर्थ करने का अर्थ है कि मेरा मन्त्री मण्डल व्यर्थ रहा और उस ने कोई काम नहीं किया।" उन्होंने उस पर दस्तखत कर दिए और इसके कुछ दिन बाद जब वे रिटायर होकर इंगलैंड गए, तो उन्होंने व्यक्तिगत पत्र लिख कर मन्त्री मण्डल के हरेक सदस्य को लखनऊ बुलाया और वे प्रीतिपूर्वक उनसे मिले, यद्यपि मंत्री-मंडल और गवर्नर परस्पर विरोधी थे।

इस तरह के संतुलित, शिष्ट, सहानुभूति पूर्ण और बड़प्पन का प्रदर्शन करने वाली परम्पराओं से प्रजातन्त्र पनपता है, उसमें नए जीवन की नई नई कोंपलें फूटती हैं वह समृद्ध होता है, पर स्वतन्त्र भारत में हम कैसी परम्पराएँ डाल रहे हैं? विधायिकाओं में सदस्य हुल्लड़ मचाते हुए अध्यक्ष की कुरसी की ओर बढ़ते हैं, जबरदस्ती उनकी कुरसी पर बैठ जाते हैं, उन पर जूते फेंकते हैं, उनकी मूंगरी उठा लेते हैं, बाहर जाने का आदेश नहीं मानते, चुप रहने की बात नहीं सुनते, मार्शल के आने पर हाथापाई करते हैं, मेज के नीचे छिप जाते हैं, पास के कमरे में जाकर द्वन्दयुद्ध का अखाड़ा बनाते हैं, अपशब्द कहते हैं और इस तरह उस प्रजातंत्र के फलदायी वृक्ष की जड़ें काटते हैं।

पिछले १४ वर्षों में ये जड़ें बड़ी क्रूरता से कटी हैं और फलस्वरूप देश के राजनैतिक दलों की स्थिति उस आकाश बेल जैसी हो गई है, जो बिना अपनी जड़ के किसी वृक्ष पर फैली रहती हैं और उस वृक्ष का ही रस सोखती रहती हैं, जिस पर वह फैली हुई है। आगे चल कर वह वृक्ष भी सूख जाता है और बेल भी। हम उस स्थिति की ओर किस तेजी से बढ़ रहे हैं? केरल में प्रजातन्त्र का मंदिर टूटा पड़ा है और १९६७ के चुनाव में उसके जीर्णोद्धार होने के लक्षण नहीं हैं। बंगाल, उड़ीसा और पंजाब में उसे अगले चुनाव में तोड़ने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूरी तैयारियाँ हो रही हैं। इन तैयारियों की बुनियाद यही है कि देश के प्रजातंत्री, राजनैतिक दलों की नींव भारत की भूमि पर नहीं है। वे आकाश बेल की तरह ऊपर छाए हुए हैं। इसे हम लोकल बोर्डों के शीशे में झाँक कर देख सकते हैं। यह महत्वपूर्ण शीशा है, क्योंकि ये बोर्ड प्रजातन्त्र की पाठशाला कहे जाते हैं और हैं भी।

विस्तार से बचने के लिए मैं अकेले उत्तर प्रदेश को ही लेता हूँ। ९ साल की लम्बी घिस-घिस के बाद १९५३ के अंत में जब उत्तर प्रदेश के स्थानीय बोर्डों के चुनाव कराने की घोषणा सरकार ने की, तो सितम्बर १९५३ के साप्ताहिक 'विकास' में मैंने चुनाव के परिणाम की सम्भावनाओं का विश्लेषण करते हुए लिखा—"इस चुनाव में कांग्रेस जीतेगी या हारेगी ? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि अगर वह उम्मीदवारों का चुनाव ठीक करेगी, तो जीतेगी, नहीं तो शर्तिया हारेगी। शर्तिया मैं क्यों कह रहा हूं ? जानबूझ कर कह रहा हूँ यह।"

१९५२ के आम चुनाव में काँग्रेस को देश भर में शानदार जीत और विरोधी दलों की भयंकर हार मिल चुकी थी, इस स्थिति में यह भविष्य वाणी आश्चर्यजनक थी, पर उसी लेख में मेरा यह आधार भी स्पष्ट था—"आज जनता का हृदय जिन सवालों से भरा है वे कुछ इस तरह के हैं—

१ मौजूदा बोर्डों के कुछ मेम्बर अपने तजर्बे के कारण अगले बोर्डों में भी जरूरी हैं, पर कुछ इस लायक हैं उनका मुँह तारकोल से लीपकर गधे पर उनका जुलूस निकाला जाए। क्या कांग्रेस दोस्ती और पार्टी का ख्याल करके उन्हें अपना उम्मीदवार बनाएगी ?

२ हर वार्ड में कुछ लोग अब नया नया खद्दर पहनने लगे हैं और अपना जोड़ तोड़ भिड़ा रहे हैं। पब्लिक जानती है कि ये महाशोहदे हैं। क्या वे कांग्रेसी उम्मीदवार होंगे ?

३ हर वार्ड में कुछ न कुछ ऐसे लोग हैं, जो बोर्ड में पहुंच कर उसे नया जीवन दे सकते हैं, पर वे खामोश हैं। क्या कांग्रेस ऐसे लोगों को सामने ला सकेगी ?

४ अगर एक तरफ पुराना भौन्दू कांग्रेसी है और दूसरी तरफ एक ईमानदार और समझदार गैर कांग्रेसी, कांग्रेस किसे अपनाएगी ? इन प्रश्नों की हाँ ना पर ही कांग्रेस की हारजीत का दारोमदार है। यह मेरा विश्वास है।"

चुनाव होने के बाद जनवरी १९५४ के 'नयाजीवन' में मैंने चुनावों का विश्लेषण करते हुए लिखा था—जनता की छाती में उमड़ते इन प्रश्नों का सही उत्तर कांग्रेस न दे पाई और नतीजा साफ है कि हार गई..... कांग्रेस के अलावा जो पार्टियां मैदान में थीं, उन में जनसंघ, हिन्दू महासभा और रामराज्य परिषद की एक ही दिशा है, पर इनमें केवल जनसंघ में ही प्राण है। जनसंघ ने इस चुनाव में घमासान प्रचार किया, पर इस प्रचार से उनकी १५ प्रतिशत ताकत बढ़ी, तो २५ प्रतिशत घटी भी। बात यह है कि यह स्पष्ट हो गया कि जनसंघ के पास गौ रक्षा जैसे चटपटे चूरन के सिवा देश के लिए कोई ठोस प्रोग्राम नहीं है और यह स्पष्ट हो गया कि आजकल के रूप में वह अगले १० वर्षों में भी देहातों में पहुंच सके, यह सम्भव नहीं है। कम्यूनिस्ट पार्टी ने इन चुनावों में हिस्सा तो लिया, पर आम तौर पर प्रच्छन्न रूपों में ही उसने अपनी जगह बनाई और उसके कुछ आदमी बोर्डों में पहुंच गए इसे ही गनीमत समझा।.....मतलब यह है कि बोर्डों में कोई पार्टी नहीं जीती और स्वतन्त्र, उम्मीदवारों को आश्चर्यजनक सफलतायें मिलीं।

इस चुनाव के ५ वर्ष बाद उत्तर प्रदेश के ५ म्युनिसिपल कारपोरेशनों आगरा, इलाहाबाद, कानपुर, लखनऊ, और बनारस के चुनाव हुए। कुल सीटें थी २९७। कांग्रेस ने २८४, प्रजातन्त्र समाजवादी पार्टी ने १५१, कम्यूनिस्ट पार्टी ने ८४, जनसंघ ने १९०, सोशलिस्ट पार्टी ने ८२ उम्मीदवार खड़े किए थे और स्वतन्त्र उम्मीदवार थे ७५९। इनमें काँग्रेस के ९६, प्रजासमाजवादी पार्टी के २०, कम्यूनिस्ट पार्टी के ११, जनसंघ के ५४, सोशलिस्ट पार्टी के ५ उम्मीदवार जीते और निर्दली १०९।

इन चुनावों का विश्लेषण करते हुए दिसम्बर १९५९ के 'नया जीवन' में मैंने लिखा—जनता का मन इन बोर्डों स निराश हो गया है। मेम्बर बदलते रहते हैं, चेयरमैन बदलते हैं पर शहर की हालत ज्यों की त्यों रहती है, तो जनता का मन कहता-अरेभाई, यह वह हो, या हमारी गली तो ज्यों की त्यों रहेगी। चुनाव आता है तो जनता की एकाग्रता किसी के साथ नहीं बंधती। जात बिरादरी के कारण, मेल मिलाप के कारण, पार्टी के सम्पर्क के कारण कुछ लोग किसी के साथ हो जाते हैं कुछ किसी के और यही कारण है कि किसी भी बोर्ड में किसी एक दल का बहुमत निश्चित नहीं हो पाता। जनता की यह स्थिति खतरनाक है।"

इस विश्लेषण के अंत में मैंने कहा था कि "कांग्रेस का नेतृत्व दल की शक्तियों को संगठित-संचालित करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में असमर्थ हो रहा है और फलस्वरूप कांग्रेस जीती बाजी हार रही है, पर दूसरे दल उस बाजी को जीतने के लिए हल्ला तो मचा रहे हैं, पर योजनापूर्वक काम नहीं कर रहे हैं। इसलिए नगरों की जनता का मानस अराजकता की ओर बढ़ रहा है। क्या यह स्थिति सब प्रजातंत्री दलों के लिए विचारणीय नहीं है ?"

इस मानसिक अराजकता का प्रदर्शन १९६५ के स्थानीय बोर्डों के चुनाव में हुआ। नोटीफाइड एरिया, टाउन एरिया और म्युनिसिपल बोर्डों की कुल ४ हजार ९ सौ ५६ सीटों पर चुनाव हुआ और हद हो गई कि इनमें से तीन हजार १ सौ १३ पर निर्दलीय सदस्य जीते। क्या हमारे गणतन्त्र की अस्वस्थता का इससे बड़ा कोई प्रमाण हो सकता है ? इस अस्वस्थता की गहराई का पता इससे चलता है कि १९६३ में अब उत्तर प्रदेश की विधान परिषद में जो पूरक चुनाव हो रहे हैं उनमें स्थानीय बोर्डों की सीटों पर कांग्रेस ने लड़ने से इंकार कर दिया है और अब उत्तर प्रदेश मंत्रीमंडल के १ मंत्री २ उपमंत्री और संसदीय सचिव निर्दलीय उम्मीदवार के रूप में चुनाव लड़ रहे हैं।

चौथा आम चुनाव सामने आगया है और विधायकी एवं मिनिस्टरी के सपनों की प्रदर्शनी झिल मिला उठी है। सारा दल में गुटों के विरोधी दलों और विरोधी दलों में दलों के जोड़ तोड़ की होड़ जाग उठी है, पर मुख्य प्रश्न की ओर किसी का ध्यान नहीं है। वह है मतदाता के प्रशिक्षित करने का काम। ये जोड़ तोड़ चुनाव के दिन तक चलते रहेंगे और तब लाउड स्पीकरों का हुल्लड़ मचेगा, गलियों में भगदड़ मचेगी। आवाजें ही आवाजें होंगी, पर समझ कुछ न पड़ेगा। कुछ के हाथ कुरसी आ जाएगी, बाकी रह जाएँगे। विधायिकाएँ बन जाएँगी, उनके अधिवेशन होने लगेंगे, पर इस बात पर किसी का ध्यान न जाएगा कि प्रजातंत्र का वह वृक्ष धीरे धीरे सूख रहा है।

जो राजनीति की आँधी में अंधे नहीं हो गए हैं, उन्हें यह प्रश्न निश्चित रूप से चिंतित करेगा कि क्या वर्तमान संविधान के द्वारा हम अपने देश की अखंडता स्वतंत्रता, प्रजातंत्रात्मकता की रक्षा कर सकेंगे ? रोम जब जल रहा था, नीरो अपने महल के बरामदे में बैठा बांसुरी बजा रहा था और जब अपने संवैधानिक विचारों के पुनर्गठन की आवश्यकता है प्रजातन्त्र के वृक्ष पर आकाश बेल की तरह फैले भारत के राजनैतिक दल राज्यों के पुनर्गठन में जुटे हुए हैं। क्या मेरी आत्मा का चीत्कार उन तक पहुंचेगा ? ★

तुम मेरे अन्तर को चीरो

— श्री प्रेम 'निर्मल' —

मेरे चुप हो जाने से यदि-
जग का चीत्कार मिट जाए,
तुम मेरे अन्तर को चीरो,
मैं अपने अधरों को सी लूँ।
आह-कराहों की गर्मी से,
धरती की छाती पर छाले,
अम्बर बहा रहा है आँसू,
अन्तर में पीड़ा को पाले,
मैं ही अगर शूल राहों का,
जग भर की शोषित चाहों का,
सुन लो पथ के दावे दारों,
पथ से अलग हुआ जाता हूं,
दो मुझको अधिकार कि मैं अब,
उर के छाले खुद ही छीलूँ।
है अभिशाप जिन्दगी, तो फिर-
इस धरती पर कौन जिएगा ?

जग भर की कटुताओं का विष,
मैं न पिऊँ तो कौन पिएगा ?
तो फिर यह संसार तुम्हारा,
तुम्हें मुबारक यह उजियारा,
ओ, जग के निर्माता सुन लो,
तुम से नम्र निवेदन इतना,
शपथ मुझे सुकरात संत की,
लाओ जहर खुशी से पी लूँ,
यह भी क्या जीवन है कोई,
जिसको तुम कहते हो जीवन,
मैं जिसको समझा हूं जीवन,
तुम कहते कोरा पागलपन,
बर्बरता यदि संविधान है,
अनाचार यदि अभयदान है,
आगे बढ़ो अरे मतवालों,
दुहराओ इतिहास पुराना,
ले लो कील, ठोक दो उर में,
अच्छा है मरकर ही जी लूँ !

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षा के माध्यम से हमें पुस्तकीय ज्ञान मिलता है, किन्तु संस्कार के अभाव में यह ज्ञान अधूरा है। हमारे प्रदेश में कुछ लोग हैं जो शिक्षा के साथ-साथ युवकों के संस्कार-निर्माण की दिशा में भी सजग रूप से प्रयत्नशील हैं और उसे पीढ़ी के निर्माण का आवश्यक अंग मानते हैं।

उत्तर प्रदेश के शिक्षा निदेशक श्री बलवंत सिंह स्याल उन्हीं विशिष्ट लोगों में हैं। वे स्वयं एक श्रेष्ठ संस्कारी मानव हैं और शिक्षा विभाग में विभिन्न पदों पर कार्य कर चुके हैं। श्रेष्ठ संस्कारों का प्रचार-प्रसार उनकी सहज वृत्ति रही है। आप उनसे दो मिनट का वार्तालाप करें, या दो घंटे का भाषण सुनें, दोनों ही स्थितियों में अनुभव करेंगे कि उन्हें सुन कर आप कुछ ले चले हैं और यह 'कुछ' बुद्धि का वैभव नहीं, अन्तस का प्रसाद है।

उनका यह लेख युवकों से कुछ कहता है। आशा है कहे को सुना जाएगा, सुने को गुना जाएगा और गुने को जीवन में पचाया-जचाया भी जा सकेगा।

श्री बलवंत सिंह स्याल

देश के युवक दीक्षित हों !

आज का भारत विशाल विश्व का अंग है जो अपनी पार्थिव सीमाओं को पार कर अनन्त से मिलने जा रहा है। इसकी शक्तियों की आज कोई मर्यादा नहीं। इसके एक चरण में मानव का विकास और दूसरे में विनाश–महाविनाश लगा हुआ है। जीवन में लय और प्रलय की ऊर्जाओं का यह उन्मेष विश्व के लिए एक भीषण प्रश्न बन गया है। इस प्रश्न का समुचित उत्तर दिये बिना मनुष्य जीवित नहीं रह सकता। यह महाकाल का जिसे इतिहास भी कहते हैं प्रश्न है। विश्व के उद्विग्न राष्ट्र उन्मुख हैं उत्सुकता से आर्यावर्त की अमराईयों की ओर जिनसे ५००० वर्ष पूर्व **"अन्तरिक्ष शान्तिः पृथवीशान्तिः"** का शीतल मलयानिल प्रवाहित हुआ था। देश के युवकों तथा वैज्ञानिकों पर महाकाल की शक्तियों और सनातन सत्यों में सामंजस्य स्थापित करने का गुरु उत्तरदायित्व है जिसे दृढ़ता और साहस के साथ वहन करने की दीक्षा लेनी होगी।

इस दीक्षा का पहला व्रत है: **स्वकर्म**—अपना काम। भारतीय दर्शन एवं परम्पराओं ने कर्म को बहुत ऊँचा स्थान दिया है। आज तो कर्म ही धर्म है, सबसे बड़ी पूजा और सर्वोत्कृष्ट तप। यदि कोई मनुष्य सब कुछ है, श्रेष्ठ धार्मिक, वाग्मी, विद्वानवेत्ता, सुन्दर और धनी, परन्तु यदि वह स्वकर्म नहीं करता तो निश्चय ही वह निकम्मा है, भारत-भू के लिए भारभूत, निन्द्य और अपराधी। बिना गाढ़ी कमाई के भोग की बात सोचना भी पाप है।

हमारे राष्ट्रीय इतिहास में कर्मनिष्ठा के जवलंत प्रतीकों और उदाहरणों की भरमार है। राम और कृष्ण तो अवतार हैं, वन्द्य हैं, उपास्य हैं, परन्तु हमने अपनी इन आँखों से कर्मवीर महामानव गान्धी जी को अविराम कर्म में रत देखा है। कर्म वेदी पर अपने को बलि करते हुए हमने नेहरू जी का साक्षात्कार किया है। कुछ भी दिन नहीं बीते, जब हमने कर्मनिष्ठा के मूर्त्त उदाहरण शास्त्री जी को अपने बीच में आते और जाते देखा था। आज वे नहीं हैं, परन्तु उनकी कर्मनिष्ठा अमर है, जो भारतीय आत्मा का सच्ची भारतीयता का शाश्वत समर्थ प्रतीक है।

भारतीय जीवन और दर्शन में कर्म को जो महत्व दिया गया है उसका कारण यह है कि मनुष्य को कर्म-स्वातन्त्र्य उसके अधिकार के रूप में उपलब्ध है। भोग में वह स्वतन्त्र नहीं, इसीलिए तो दिव्य लोकों के नायक देवता भी कर्म प्रधान इस लोक को भोग-भूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ मानते हैं। मनुष्य के एक ओर पुण्य और दूसरी ओर पाप, एक ओर सुकर्म और दूसरी ओर दुष्कर्म, एक ओर उत्थान और दूसरी ओर पतन है। इन दोनों में से वरण का अधिकार मनुष्य का अपना है।

कर्म की इस उपासना और गरिमा का आधार क्या है ?

बल छुटकयो बन्धन परे
कछू न होत उपाय।
कहु नानक अब ओट
हरि गज ज्यों होहु सहाय॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नवें गुरु तेग बहादुर की इस वाणी की ध्वनि स्पष्ट है: मनुष्य के लिए भगवान् की शरण माँगना उसका सहज धर्म है। माँगना ही चाहिए, परन्तु इसी वाणी के नीचे दशम गुरु गोविन्द सिंह ने अपने अमर शब्द अंकित किये हैं। कहा जाता है कि गुरु ग्रन्थ साहिब में उनकी यही एक वाणी है:

बल होया वन्धन छुटे
सब किछु होत उपाय।
सब किछु तुमरे हाथ मैं
मैं तुमही होत सहाय॥

इस दोहे के पीछे दशम गुरु का सम्पूर्ण गौरवमय व्यक्तित्व ही नहीं झलकता, अपितु झलकता है उस युग का दहकता इतिहास, सम्मान एवं स्वधर्म की रक्षा के लिए किये गये संघर्षों की गाथा, शूरों की मान्यताएं और वीर जीवन का दर्शन। इतिहास साक्षी है कि दशम गुरु ने देश के वीरों में तेज और बल के नूतन स्रोतों का उद्घाटन किया, जीवन और मरण की नयी व्याख्या की। हमें हर्ष है कि आज भी वे स्रोत सूखे नहीं हैं। देश के संकट की वेला में वे ही ओझल ओज के स्रोत सहस्र धाराओं में फूट कर बह निकले थे।

"सब किछु तुमरै हाथ मै" यही आस्था भारतीय कर्म-दर्शन का निचोड़ है। कर्म ही तो हमारे हाथ में है। कर्म ही तो पौरुष की अभिव्यक्ति है। महाभारत में महाबली कर्ण को चुनौती दी गई: तुम सूत-पुत्र हो। तुम्हें पौरुष का क्या अधिकार? कर्ण बोला: **"सूतो वा सूत पुत्रो वा, यो वा को भवाम्यहम्। दैवायत्तं कुले जन्म, मदायत्तं तु पौरुषम्॥"** अरे, कुल में जन्म लेना तो दैव के अधीन है, न मेरे वश है, न तुम्हारे। पौरुष तो मेरे ही अधीन है, उसे देखो तो। आज शक्ति का आविर्भाव हो चुका है। उसका आह्वान हमें करना है। क्या पौरुषहीन हाथों से शक्ति की उपासना सम्भव है?

हमारे देशवासियों के लिए उपासना के शब्द हैं: **"बलमसि बलं मयि धेहि। ओजोऽसि ओजो मयि धेहि। वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि।"** अर्थात् तू बल है, मुझ में बल धारण कर, तू ओज है, मुझ में ओज का संचार कर, तू वीर्य है, मुझे वीर्य से सम्भृत कर।

हमें यहां यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि जब हम बल, ओज अथवा ऊर्जा की चर्चा करते हैं तब इसका अर्थ केवल पशुबल या भौतिक शक्ति ही नहीं होता। हमारे लिए तो आत्मा का सच्चा स्वरूप ही "अभय" है, बल है। यदि हम स्वयं भयभीत हैं तो कोई भी बाह्य बल हमें बलवान नहीं बना सकता। हम मानते हैं कि **"शस्त्रेण रक्षिते राष्ट्रे शास्त्रचिन्ता प्रवर्त्तते।"** हम **"नमश्चण्डिकायै"** कहकर प्रचंड शक्ति का आवाहन करते हैं, भारतीय इतिहास के मोड़ के अवसरों पर हमारी पूजा का विधान ही रहा है: **"जिते शस्त्र तामं नमस्कार तामं। जिते शस्त्र-मेयं नमस्कार तेयं।"** यह सब होते हुए भी हमने क्रूर पशुबल को मानवता से अधिक मूल्यवान कभी नहीं समझा और परीक्षा के क्षणों में भी शान्ति के महत्व को मान्यता दी। मानवता की व्याख्या हमने दैन्य, दुर्बलता, क्लीवता अथवा पशुता नहीं की। जीवन की उदार एवं उदात्त ऊर्जाओं की अभिव्यक्ति को ही हमने मानवता का मूर्त्तरूप माना है।

हमारी दीक्षा का दूसरा व्रत होना चाहिए: **"शतमदीना स्याम शरदः।** अर्थात् हम शतायु हों, परंतु अदीन होकर। दैन्य और दुर्बलता भारतीय संस्कृति के विरुद्ध हैं। **"नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः"** बलहीन मनुष्य तो आत्मलाभ के लिए भी असमर्थ होता है। बल का पार्थिव आधार है हमारा शरीर और शरीर ही धर्म अर्थ, काम, मोक्ष का उत्तम मूल है:

धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं मूलमुत्तमम्।
तन्निघ्नता किन्न हतं, रक्षिता किन्न रक्षितम्॥

भारतीय संस्कृति के प्रमुख व्याख्याता कालिदास की भी मान्यता है: **शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्।"** वैदिक साहित्य में भी जहाँ एक ओर आध्यात्मिक तत्वों की व्याख्या की गई है वहीं पर शरीर को दैवी वीणा, दिव्य नौका, इत्यादि कह कर शारीरिक मूल्यों का माहात्म्य प्रस्तुत किया गया है।

कहना न होगा कि आज युवकों को बल, सामर्थ्य, साहस, सहनशीलता, दृढ़ता, दक्षता आदि गुणों के विकास के लिए व्रत लेना चाहिए। यद्यपि आज के संघर्ष में यांत्रिक बल एवं कौशल का प्रयोग होता है, तथापि मशीनों के पीछे मनुष्य के दृढ़ हाथों, अदम्य साहस एवं निर्भीक संकल्पों के बल का ही सहारा रहता है। रूस की भाँति हमारे देश में भी प्रत्येक नागरिक के लिए यह अनिवार्य होना चाहिए कि वह एक न एक खेल अथवा व्यायाम में अवश्य भाग ले। प्रत्येक युवक अपने को दृढ़ एवं दक्ष बनाने का व्रत ले। यह उसका अपने प्रति ऋण भी है।

महाकवि कालिकास ने उत्साह, मंत्र और प्रभाव इन तीनों से संयुक्त शक्ति को अक्षय अर्थ की साधिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माना है और इनमें उत्साह अथवा मनोबल का स्थान सर्वप्रथम है। उन्होंने अपने प्रसिद्ध महाकाव्य रघुवंश में महाराज दिलीप का वर्णन करते हुए कहा है कि जब वे नन्दिनी गौ की सेवा के लिए उसे वनप्रदेश की ओर ले गये तब उन्होंने अपने समस्त अनुयायियों को अपने साथ जाने से रोक दिया। उस समय उन्होंने न सेवकों की आवश्यकता समझी और न सेना की, क्योंकि मनु की सन्तान अपने पराक्रम से ही सुरक्षित रहती है।

व्रताय तेनानुचरेण धेनोर्न्यषेधि
शेषोऽप्यनुयायिवर्गः।
न चान्यतस्तस्य शरीररक्षा
स्ववीर्यगुप्ता हि मनोः प्रसूतिः॥

शारीरिक दृढ़ता के साथ मनोबल के इस आदर्श को भी अपनाने की परम आवश्यकता है। मनोबल और संकल्प-शक्ति के लिए आत्म-विश्वास, निश्चय और संयम अपेक्षित हैं। रावण की भरी सभा में अंगद के पैर को कोई तिल मात्र भी न हिला सका। इसका कारण था अंगद का आत्मविश्वास और दृढ़ संकल्प।

कुरुक्षेत्र के मैदान में भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन के सारथी थे। उनका यह निश्चय था कि मैं शस्त्र नहीं ग्रहण करूँगा, परन्तु भीष्म पितामह ने प्रतिज्ञा की कि आज मैं ऐसा भीषण युद्ध करूँगा कि भगवान् श्रीकृष्ण को शस्त्र ग्रहण ही करना पड़ेगा। उन्होंने इस बात की शपथ ली कि यदि मैं अपनी इस प्रतिज्ञा को पूरा न कर सकूं तो मैं क्षत्रिय की गति को प्राप्त न होऊँ।

आज जो हरिहि न सस्त्र गहाऊँ।
लाजौं हौं गंगा जननी को संतनुसुत
न कहाऊँ॥
स्पंदन खंड महारथ खंडौं कपिध्वज
सहित ढुलाऊँ॥
इती न करौं सपथ मोहि हरि की
क्षत्रिय गतिहि न पाऊँ॥

और अंत में दृढ़प्रतिज्ञ भीष्म पितामह की प्रतिज्ञा पूर्ण हुई। भगवान् श्रीकृष्ण को शस्त्र ग्रहण करना ही पड़ा। भीष्म पितामह अपने त्याग, संयम और दृढ़प्रतिज्ञ होने के कारण ही मृत्युंजय हो गए थे। वे कई दिनों तक शरशय्या पर पड़े हुए कौरवों और पांडवों को उपदेश देते रहे और इसके पश्चात् जब सूर्य उत्तरायण हुए तभी उन्होंने अपनी इच्छानुसार प्राण छोड़े।

हमारा लक्ष्य होना चाहिए **'सरस्वती श्रुतिमहती न हीयताम्'** अर्थात् वेदों में भी जिसे महान् माना गया है वह सरस्वती कभी क्षीण न हो, प्रत्युत हमारे अन्तर को ज्ञानालोक से सतत आलोकित करती रहे। इसके लिए हमें अनवरत अभ्यास, अध्यवसाय, मनन, चितन, अनुशीलन और अनुसंधान में रत रहना होगा। विश्व के अन्य कई देश इन्हीं गुणों के कारण आज आश्चर्यजनक प्रगति कर रहे हैं। चन्द्रलोक की यात्रा की कल्पना के साकार होने में सम्भवतः अब बहुत विलम्ब नहीं रह गया है। हमें अभी ज्ञानालोक की इस दिशा में बहुत कुछ करना है, किन्तु अत्यन्त विनम्र भाव से। माइकेल फैरेडे ने चुम्बकीय विद्युत् के क्षेत्र में अनवरत प्रयोग किये। उन्हें सफलता मिली और वे इलेक्ट्रो-मेग्नेटिक इंडक्शन के आविष्कारक हुए। वे सचमुच विद्युत्-युग के जनक हैं। उनके इन महत्वपूर्ण युग-प्रवर्तक चमत्कारों के लिए साम्राज्ञी ने उन्हें 'सर' की उपाधि देकर सम्मानित करना चाहा, परन्तु फैरेडे ने इसे यह कह कर सविनय अस्वीकार कर दिया कि मैं 'सर' माइकेल फैरेडे के रूप में नहीं, प्रत्युत साधारण माइकेल फैरेडे ही रहकर जीना और मरना चाहता हूँ। इसी प्रकार चार्ल्स डारविन ने जीव-जगत् के सम्बन्ध में विकासवाद के सिद्धान्त की जो खोज की वह उनके अनवरत परिश्रम, लगन, एवं चिन्तन का ही परिणाम थी। इसके प्रतिपादन के लिए उन्हें २५ वर्ष की कड़ी साधना करनी पड़ी। 'केप्लर्स थर्ड लॉ ऑफ प्लेनेटरी मोशन' उनके २० वर्ष के दीर्घ तप का फल है।

हमारे भारत ने भी **'विज्ञानं ब्रह्म'** के नाद से विज्ञान की महत्ता को स्वीकार किया था। सचमुच विज्ञान ब्रह्म का स्वरूप है। मेरा विश्वास है कि भारतीय प्रतिभा कुंठित नहीं हुई। आज भी शक्ति के स्रोतों का उद्घाटन कर सकती है और आज से बढ़कर हमें शक्ति की आवश्यकता कभी पहले न थी। शक्ति के आवाहन के लिए हमें भारतीय प्रतिभा के द्वारा विज्ञान के यज्ञकुंडों में प्रचंड प्रकाश जगाना होगा। डा० भाभा जिनके असामयिक निधन से हमारी राष्ट्रीय आत्मा सन्तप्त है, इसी विज्ञान के यज्ञ-कुंड से उद्भूत एक महान् प्रकाश-पिंड थे। निश्चय ही, इनके जाने से एक ज्योतिष्मान् नक्षत्र अस्त हो गया, परन्तु मेरा विश्वास है, जिसका आधार इस देश का इतिहास स्वयं है कि जब तक इस अग्निकुंड में आहुतियां पड़ती रहेंगी, तब तक विज्ञान के क्षेत्र में ज्वाला और ज्योति का क्षय नहीं होगा। हमारे भावी छात्र-वैज्ञानिक जितना श्रम और साधना ज्ञान के संवर्द्धन के लिए क्षण-क्षण करेंगे, उतनी ही उनकी आहुतियां विज्ञान-यज्ञ में पड़ेंगी और उतना ही इस देश में ज्योति का विस्तार होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नए युग में उत्तर प्रदेश की उर्वरा भूमि ने दो महान शासक-एडमिनिस्ट्रेटर—पैदा किए। एक श्री गोविन्द बल्लभ पंत और दूसरे श्री रफी अहमद किदवई। दोनों राजनैतिक मल्ल थे और दोनों ताकत की कुश्ती में नहीं, दाव की कुश्ती में विश्वास रखते थे, निश्चय ही दोनों के दाव अलग अलग थे, पर अद्भुत थे।

पहले ये दोनों एक ही अखाड़े के खलीफा और उस्ताद थे, पर बाद में दोनों के अपने अपने अखाड़े हो गए थे। उत्तर प्रदेश के वर्तमान सार्वजनिक निर्माण मंत्री श्री रावत जी ही एकमात्र ऐसे राजनीतिज्ञ हैं, जिन्हें दोनों समान भाव से स्नेह और विश्वास अंत तक प्राप्त रहा। फलस्वरूप उनके पास दोनों के महत्वपूर्ण संस्मरण हैं, जो साहित्य की निधि और इतिहास का शृंगार बन सकते हैं।

रावत जी ने प्रसन्नता की बात है कि अब संस्मरण लिखना आरम्भ कर दिया है। रोचक संस्मरणों के बाद वे गंभीर गोता लगाएँगे और हीरे-मोती देंगे, यह विश्वसनीय समाचार है। यहाँ प्रस्तुत है उनकी सादी और हार्दिक कलम का एक तोहफा, जो उनका अपना संस्मरण है, पर भारत की आत्मा भी उसमें झिलमिल है।

□

'३७ का चुनाव और मंदिर की प्रेरणा

●श्री जगन प्रसाद रावत

मन्दिरों में जाकर दर्शन करना मुझे अच्छा लगता है। मेरे लिए यह कोई सिद्धान्त की बात नहीं है। न मैं कभी इस तर्क में पड़ता हूं कि मूर्ति पूजा सही है या गलत, लेकिन मन्दिरों में जाकर देव प्रतिमा के दर्शन करने में मुझे एक प्रकार का सात्विक सुख अवश्य मिलता है। मेरे गांव में एक छोटा-सा मन्दिर है। यह मेरे बड़े बाबा श्री नाहर सिंह जी के द्वारा निर्मित हुआ कहा जाता है। जबसे मैंने जीवन में होश संभाला, तबसे मैं इस मन्दिर में देव-प्रतिमा के दर्शन करता आया। ऐसा ही क्यों? शायद होश संभालने से पहले ही मुझे दर्शन कराने ले जाया गया हो और देव-प्रतिमा के चरणों में रखा गया हो।

बचपन में जहाँ शाम हुई नहीं, दर्जनों बच्चे मन्दिर में पहुंच जाते। कोई शंख, कोई घड़ियाल लेकर बजाने लगता और कोई आरती में सम्मिलित हो जाता। उसके बाद बड़ी देर तक भगवान की आरती में चौपाई, छन्द, कवित्त कहते सुनते और प्रसाद का तुलसीदल, चरणामृत और एक बताशा लेकर उछलते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कूदते अपने घर जाते। यह क्रम वर्षों चला। मैं मन्दिर में जितनी देर खड़ा रहता, मुझे कुछ अच्छा भी लगता और कुछ डर भी। मन में सोचता रहता, आज मैंने किसी को गाली तो नहीं दी। आज किसी लड़के से झगड़ा तो नहीं किया? भगवान नाराज तो नहीं होंगे? और जब प्रसाद का बताशा मिल जाता, तो खुश होता हुआ अपने घर भाग जाता। यह क्रम वर्षों चलता रहा। उसके बाद जब मैं पिता जी के पास पढ़ने के लिए अजमेर गया, तो मन्दिर में आना कभी छुट्टियों में ही हो पाता था।

उन्नीस सौ तेइस में जब आगरे आया, तो हफ्ते में एक बार आगरे से करीब करीब हमेशा ही इतवार की छुट्टी में दर्शन किया करता था। उन दिनों आगरे से मेरे गांव तक सड़क पक्की नहीं थी। रास्ते में रेत भी बहुत पड़ता था और कोई सवारी भी नियमित रूप से नहीं आती जाती थी। आगरे से शनिवार को लगभग ३ बजे चलता था। एक खुरजी, कन्धे पर डाल लेता था, जिसमें एक तरफ दो एक किताबें तथा कोई कपड़ा, दूसरी ओर कुछ सामान जो मां शहर से मंगवाया करती थी। एक हाथ में लाठी और दूसरे में एक मिट्टी की मलइया, जिसमें शहर से बूरा भर कर गाँव ले जाया करता था।

कोशिस करता था कि आरती से पहले गांव में पहुंच जाऊं। शनिवार की रात और इतवार के दिन भर गांव में रहकर सोमवार को प्रातःकाल चल देता था। वही खुरजी और मलइया साथ में होती थी, लेकिन उसका सामान बदल जाता था। मां मलइया में लगभग डेढ़ सेर घी घर की भैंस का और खुरजी में लड्डू मठरी एक हफ्ते के लिये बनाकर रख दिया करती थी। यह नाश्ता और घी केवल ६ दिन के लिए ही होता था, क्योंकि इतवार को तो गांव में ही रहता था। इतवार के दिन मेरा काफी समय मन्दिर में बीतता। इस तरह इस मन्दिर के साथ मेरा जन्मजात जैसा ही संबन्ध रहा।

दिन बीतते गए। उन्नीस सौ छत्तीस में उत्तर प्रदेश विधान सभा का चुनाव सामने आया। कांग्रेस ने मुझे बाह, फतेहाबाद, खैरागढ़ विजावली, इन चार तहसीलों के क्षेत्र से चुनाव लड़ने का आदेश दिया और मुझे कांग्रेस उम्मीदवार घोषित किया। चुनाव अभियान जोरों से शुरू हुआ। मैंने भी चारों तहसीलों का दौरा प्रारम्भ किया। सब तहसीलों के सैकड़ों गांवों का दौरा तो किया, लेकिन अपने गांव में लोगों के पास वोट मांगने के लिए जाना मुझे अच्छा नहीं लगा। कुछ तो संकोच कुछ यह भावना कि अपने ही गांव में, जहाँ मैं पैदा हुआ और पला, वहाँ के लोगों से वोट क्यों माँगूं।

दूसरे एक विशेष परिस्थिति भी थी। इस चुनाव में तीन उम्मीदवार थे। एक राय बहादुर मुन्शी अम्बा प्रसाद, दूसरे राय बहादुर पंडित ज्योति प्रसाद उपाध्याय और तीसरा मैं स्वयं। राय बहादुर मुन्शी अम्बा प्रसाद मेरे गांव में वोट मांगने आए हों, ऐसा मुझे याद नहीं, परन्तु पंडित ज्योति प्रसाद जी खानदान के रिश्ते से मेरे मामा होते थे। मेरे बाबा के सगे चचाजात भाई पंडित पूरनमल रावत के लड़के श्री गुलाब सिंह जी का विवाह पंडित ज्योति प्रसाद की बहन के साथ हुआ था। वे वकील भी थे और मेरे गांव के लोग मुकद्दमों के सिलसिले में भी उनके यहाँ आते जाते और ठहरते भी थे वे उम्र में मुझसे काफी बड़े थे। मेरे खानदान के लोग भी अधिकतर उन्हीं के मुवक्किल थे और उन्हीं के यहाँ ठहरते थे।

मैंने उनसे एक बार कहा कि चुनाव का मामला है। अगर वे चाहें, तो ऐसा हो सकता है कि मैं उनके गांव कुर्रा चितरपुर में वोट माँगने न जाऊं और वे मेरे गांव कागारौल में वोट मांगने न आएँ; क्योंकि इसके विपरीत करने से यदि गाँव के लोगों ने किसी कारण आप को वोट देने से इंकार किया, तो आपके मन में ऐसी कोई भावना न हो जाए कि रिश्तेदारी के गाँव ने साथ नहीं दिया। वे बीसियों चुनाव लड़ चुके थे और मैं पहला ही चुनाव लड़ रहा था। अतएव मुझे चुनाव का कुछ अनुभव नहीं था, इसीलिए ऐसी बात उनसे कह बैठा। उन्होंने हँसकर कहा—"चुनाव ऐसे नहीं लड़ा जाता। जहाँ से वोट पल्ले पड़ेगा, हम तो वहीं से वोट लेंगे।"

मेरे मन में उनकी बात कुछ जमी नहीं। मैंने उनसे कहा—आप जैसा चाहें वैसा करें, मैं आपके गाँव में जाऊँगा तो सही, लेकिन वोट नहीं माँगूँगा और अपने गाँव में तो माँगूंगा ही नहीं। वे बड़े खुश हुए। सोचा—दो गाँव के वोट तो पक्के हुए। बोले—'अपनी बात पर डटे रहना, पलट मत जाना।" मैंने कहा—"कांग्रेस वाले बात कहकर पलटते नहीं।"

ज्यों-ज्यों चुनाव नजदीक आता गया, चुनाव-प्रचार बढ़ता गया। मैं कुर्रा चितरपुर गया, वहाँ लोगों से मिला-जुला भी, लेकिन चुनाव

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की चर्चा नहीं की। फिर भी गाँव में काफी लोग मेरे पक्ष में थे और उन्होंने कहा—"वोट माँगो चाहे न माँगो, वोट तो तुम्हें यहाँ मिलेंगे ही।" कुर्रा चितरपुर तो एक दिन की बात थी, निभा गया, लेकिन अपने गांव में तो रोज का आना-जाना था। चुनाव के दिनों में गाँव के लोगों से चुनाव की बात न करना, यह तो बड़ा अटपटा लगने लगा, लेकिन स्वभाव में कुछ अक्खड़पना था। कह दिया सो कह दिया, अब जो भी परिणाम निकले।

यहाँ मेरे गाँव में यह प्रचार शुरू हुआ कि देखो, जरा-से लड़के को कितना घमन्ड है? यह गाँव वालों से चुनाव की बात नहीं करता और वोट नहीं माँगता और दूसरी ओर एक रिश्तेदार है जो उम्र में इससे कहीं बड़ा है और हर तीसरे दिन आकर घर-घर डोलता है और वोट माँगता है। प्रचार का प्रभाव भी बढ़ने लगा और गाँव में यह भावना भी बढ़ने लगी कि इस लड़के को वोट मत दो। बड़ा गाँव, वोटों की तादाद काफी और यह धर्म संकट! वोट माँगने निकलूं, तो बात जाती है और न जाऊं, तो वोट हाथ से जाते हैं।

मेरा यह नियम था कि गाँव में घुसता, तो सबसे पहले अपने मन्दिर में (जो उन दिनों गाँव में घुसते ही सबसे पहले पड़ता था, अब तो और भी मकान पहले बन गए हैं) जाकर भगवान के दर्शन करता था।

एक दिन ऐसा हुआ कि गाँव में आया और मन्दिर में गया, तो भगवान के दर्शन करते समय मन में यह बात भी चलती रही कि क्या किया जाए और भगवान का ध्यान करता रहा। अचानक मन में एक भाव जगमगाया—जा, तुझे गांव में किसी से वोट माँगने की जरूरत नहीं। तू गाँव में केवल हर घर के सबसे बड़े वृद्धजन के पास जा और उनसे कह—वोट आप जिसको चाहें दें। केवल आशीर्वाद मुझे दें। मैंने ऐसा ही किया। गाँव में आठ, दस जगह गया। वृद्धजनों को प्रणाम किया और उनसे यही कहा। जिस किसी वृद्धजन के पास जाता, वह बड़े प्रेम से चिपटा लेता। सिर पर हाथ फेरता और आशीर्वाद देता।

ऐसे घन्टे भर में सारे गाँव में हो आया और आगे जगनेर की तरफ़ बढ़ गया। अगले दिन लौटकर आया, तो मालूम हुआ कि गाँव में प्रचार का रुख ही पलट गया। नौजवानों की टोलियाँ बन गईं और उन्होंने कहना शुरू किया—"वह गाँव में वोट क्यों माँगे? गाँव वाले उसे जानते नहीं हैं? अन्य गाँव के माँगें, तो माँगें, वह अपनों से वोट नहीं माँगेगा। जिसे देना हो दे, जिसे न देना हो न दे।" निर्वाचन तिथि आते-आते अपने आप स्वयं गाँव में ऐसी हवा फैल गई कि लगभग सभी ने मुझे वोट दिया। अब भी जब कभी उस क्षण को याद करता हूं, तो मन पुलकित और देह रोमांचित हो आती है। कैसी सजीव और स्पष्ट प्रेरणा थी वह!

आस्था का रङ्ग

—श्री शंकर कान्त शर्मा

वर्षा की सांझ! आसमान में बादलों की टुकड़ियाँ अपनी मस्ती में इधर उधर उड़ी जा रही हैं। कुछ एकदम स्याह हैं जो कम ऊंचाई पर और कुछ हल्की स्याही लिए हुए सफेद हैं, जो अपेक्षाकृत अधिक ऊंचाई पर उड़ रही हैं। सफेद टुकड़ियाँ एकदम-स्याह टुकड़ियों को बड़ी ही हेय दृष्टि से देख रही हैं तथा जब कभी भी उन्हें एक दूसरे के नजदीक आने का मौका मिलता है वे छेड़े बिना भी नहीं रहती हैं। ऐसे ही जब तक एक सफेद टुकड़ी को मौका मिला उसने व्यंगात्मक मुस्कराहट के साथ कहा—'बड़ा ही गहरा रंग पाया है भई और शायद यही कारण है कि तुम हमसे इतने ही नीचे उड़ पाती हो। मुझे बड़ा दुख होता है तुम्हें इस तरह बोझिल हो तैरते देखकर।"

इस पर स्याह टुकड़ी ने बिना जरा भी लज्जित हुए उत्तर दिया—"मानो हमारा रंग बहुत स्याह है और यह भी कि हम तुमसे अधिक नीचे हैं किन्तु इसका हमें कोई अफसोस नहीं है, क्योंकि हमारा यह स्याह रंग लाखों मनुष्यों के लिए खुशहाली का संकेत लिये हुए है। हम जो नीचे झुकते हैं उसमें निहित होती है जन-कल्याण की भावना जो सर्वोपरि है।"

यह उत्तर सुनकर सफेद टुकड़ी तो निरुत्तर हो गई और अपना-सा मुंह लिए रास्ते से हट गई, किन्तु मेरी चेतना लौट आई, जो प्रकृति के सौंदर्य में खो गई थी। उत्तर बड़ा अमूल्य, अर्थयुक्त लगा मुझे। हमारी आस्था का भी यही हाल है। ज्यों-ज्यों इसका रंग गहरा होता जाता है, वैसे-वैसे मनुष्य अधिक विनम्र तथा कल्याणकारी भावना से परिपूर्ण होता जाता है। उसमें थोथी ऊंचाई पर रहने की भावना भी धीरे-धीरे लुप्त होती जाती है। ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुम्बन और चाबुक

श्री जगदीश चावला, एम. ए.

ईमानदारी के दर्पण में

गांधी आश्रम के पीछे वाली मस्जिद के पास एक मुसलमान भाई की पान की दुकान है। वह पान क्या लगाता है, मानों पान में एक लजीज जायका भर देता है, जिस के कारण दूर दूर तक के लोग उस के ग्राहक हैं। मैं भी पान लेने वालों की कतार में खड़ा था। उसकी उंगलियां पान के पत्तों पर मशीन की तरह चल रही थीं। इसी बीच एक सज्जन पान लेकर १० पैसे दुकानदार को देते हैं, लेकिन व्यस्तता में बेचारा दुकानदार यह समझकर कि पान लेने वाले उस ग्राहक ने ५० पैसे का सिक्का दिया, ४० पैसे वापस लौटा देता है। ग्राहक भी बिना कुछ कहे जल्दी से पैसे लेकर वहां से हवा हो जाता है। मैं उसका पीछा करता हूँ पर वह खिसका कि खिसका ही।

एक दूसरे दिन मुहल्ले के ड्राई क्लीनर साधूराम 'राही' के पास एक ग्राहक अपने कुछ गर्म कपड़े ड्राई क्लीनिंग के लिए छोड़ जाता है। ग्राहक के चले जाने के बाद ड्राई क्लीनर जब उसकी जेब टटोलता है, तो उसमें २५० रुपये निकलते हैं और वह स्वयं जाकर ग्राहक को रुपये दे आता है। ग्राहक प्रसन्न होकर उसे ५ रुपये इनाम देना चाहता है पर दुकानदार उसे भी ग्रहण करना अपने संस्कारों के विरुद्ध समझता है।

पान खाकर ४० पैसे मारने वाले उस ग्राहक और पैसे पाकर अस्वीकार करने वाले इस दुकानदार के चेहरों को जब मैं ईमानदारी के दर्पण में देखता हूं, तो विचारों की कशमकश में एक ही हल मेरे सामने आकर खड़ा हो जाता है कि ईमानदारी स्वतः प्रेरक संस्कार है, क्रीम या पाउडर की तरह बाजार में बिकने वाला कोई प्रसाधन नहीं। यह मानव के विचारों की दृढ़ता पर निर्भर करता है कि वह ४० पैसे पाकर अपना ईमान खो दे या २५० रुपये पाकर भी अपनी आत्मा को मैला न होने दे।

नेता, जनता और जनतन्त्र

गाँधी ग्राउन्ड में एक विशाल मंच पर खड़े एक नेता, अपनी अचकन की सिलवटें सवाँरते, जनता को सम्बोधन में कह रहे थे—"मैं आपका आभारी हूं जो आपने मुझे 'अन्न उगाओ सम्मेलन' के उद्घाटन का सौभाग्य दिया, मेरे सम्मान में चाय पार्टी का आयोजन किया और भेंट में एक रजत-थैली भी प्रदान की। इन सब बातों के लिए मैं आप सबका हृदय से शुक्रगुजार हूं, किन्तु क्या करूं? चिन्ता से ग्रस्त हूं, बेकरार हूं कि अभी हमारा देश अन्न समस्या में आत्म निर्भर नहीं हो पाया। वैसे अन्न की पूर्ति के लिए हम कुछ साधन जुटा रहे हैं। तब तक आप गमलों में बोइये। हम कुछ अन्न विदेशों से भी मंगा रहे हैं। मुझे विश्वास है कि आगामी पाँच वर्षों में यह समस्या सुलझ जायगी। वैसे इस समस्या के सुलझाने में अपेक्षित है—जनता का त्याग, क्योंकि आज जनता ही सब कुछ है। जनता नेता है, जनता सत्ता है, जनता जनतन्त्र है—इसीलिए मैं पूरे जोर से कहता हूं जनता—जिन्दाबाद।"

तालियों का एक जोरदार क्रम चला, पर उस क्रम को तोड़कर एक स्वर बोल उठा—"झूठ, बिल्कुल झूठ! आज जनता नहीं, सिर्फ तन्त्र है, जिसे कुछ अवसर वादी दुह रहे हैं। बातों से ट्विस्ट करने की कला ही उनकी योग्यता है।"

पहले सन्नाटा हुआ, तब बुदबुदाहट, माइक के स्वर गूंगे हो चुके थे। मैं यह सोचता हुआ लौट पड़ा कि क्या गूंगे श्रोताओं के सामने शब्दों की जिम्नास्टिक करना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही वक्तृत्व है ? यदि ऐसा नहीं, तो फिर जनता को पूरी स्थिति साहस के साथ क्यों नहीं समझाई गई, जिससे वह सही परिणाम पर पहुंचती ? और वक्ता अपनी सुरमई आँखें बचाकर सुरमई कार की ओर क्यों बढ़ गए ? क्या इस तरह जनता को किसी निर्माण में जुटाया जा सकता है ?

यह तारकोल

मास्टर तारासिंह गुट के कुछ अकाली लोग देश का बँटवारा कराने वाले जिन्ना का रास्ता अपना रहे हैं, इस कड़वे सत्य के दर्शन मुझे उस दिन अमृतसर में हुए, जहाँ मेरे सामने ही जनून में बहने वाले कई अकाली 'सीधी कार्रवाई' या 'डायरैक्ट-ऐक्शन' के नाम पर डाकघरों, सरकारी दफ्तरों और मील के पत्थरों पर इस कारण से तारकोल पोत रहे थे कि वे हिन्दी भाषा में लिखे हैं।

जब मैं यह नारकीय दृश्य देख रहा था, तभी पास के एक गुरुद्वारे से गुरु ग्रंथ साहब के प्रवचन भी मुझे सुनाई दे रहे थे। उन्हें सुनकर मैं सोच रहा था कि पवित्र ग्रंथ साहब की रचना में अधिकाँश शब्द 'हिन्दी' के ही हैं, तो ये चन्द जनूनी लोग, जो एकता की फुलवारी पर हिंसा की बारूद छिड़क रहे हैं, क्या हिन्दी के प्रति घृणा के कारण ग्रंथसाहब पर भी तारकोल फेर देंगे ? और क्या पंजाबी साहित्यकारों की अनूदित हिंदी कृतियों का भी यही हाल करेंगे ? जनूनी कुछ भी कर सकता है, पर उस हालत में तहजीब के ये ज़ख्म कौन भरेगा और साहित्य साधना के हाथ में सुहाग की चूड़ियाँ कौन पहनाएगा ?

★

जब एक आने में न्याय मिला !

— श्री रमेशचन्द शर्मा, एम. ए., साहित्यरत्न, व्याकरणाचार्य —

बात आज की नहीं है, १९३३ की है। मेरे गाँव नारसन कलाँ में हमारे पूर्वजों का बनवाया एक शिवमंदिर है। उसके साथ ही लगभग ६-७ बीघे का एक बाग था। बाग से सटी हुई जमीन के मालिक थे स्व० चौधरी लाल सिंह मुखिया। मुखिया जी प्रतापी आदमी थे। जिले के अफसरों में उनकी बैठ-उठ थी और यह बात किसी भी आदमी को उस युग में प्रतापी बना देती थी।

चौधरी साहब जब अपनी भूमि में अपना घेर बनाने के उद्देश्य से उस भूमि की चहार दीवारी बनाने लगे, तो हमारे शिवमन्दिर की कुछ जमीन पर भी उन्होंने दागबेल लगा दी। इसका मतलब था मंदिर की जमीन पर उनका कब्जा कर लेना।

मेरे पिता स्व. पंडित गेन्दा लाल शर्मा ने इसका विरोध किया, परन्तु कौन सुनता ? एक ओर थे पिता जी जो सुदामा की वृत्ति वाले ठहरे, दूसरी ओर शक्तिशाली मुखिया जी। कोई सुनता भी क्यों ? और सुनकर करता भी क्या ? जल में रहकर मगर से बैर कौन ठाने ? जमींदार उस युग में सर्वशक्तिमान होता था और उससे टक्कर लेने का अर्थ था गाँव छोड़ना। फिर गाँव में मुखिया का विरोध कौन करे ?

अदालत में मुकदमा चलाने के लिए पिता जी के पास पैसा कहाँ था ? फिर किसी के पास पैसा भी हो, तो गवाह वह कहाँ से लाएगा ? किसी को गवाह भी मिल जाएँ, तो मजिस्ट्रेट वही फैसला करेगा, जो जमीदार चाहता है। इस हालत में मुकदमा लड़ना हिमाकत के सिवा क्या है ? पिता जी को एक युक्ति सूझी। उन्होंने मुझे भेजकर डाकखाने से एक आने का लिफाफा मंगवाया और तत्काल उस समय के वायसराय के नाम एक प्रार्थना-पत्र लिखा, जिसमें अपना दुख-दर्द सुनाने के बाद लिखा गया था—"हम तो सुनते थे कि अंग्रेजी राज्य में शेर और बकरी एक ही घाट पर पानी पीते हैं, परन्तु यहाँ तो ऐसा नहीं हो रहा है। यदि ऐसा ही अनर्थ होता रहा, तो अंग्रेजी राज्य का शीघ्र ही नाश हो जाएगा।"

१५ दिन बाद स्वयं श्री एस० डी० एम० रुड़की घटनास्थल पर पहुंचे और उन्होंने मुखिया जी से क्या कहा, यह तो भगवान ही जाने, परन्तु मंदिर की भूमि मुखिया जी ने छोड़ दी। चलते समय पिता जी को बुलाकर एस० डी० एम० ने कहा—देखिए पंडित जी, आपको हमारी सर्विस का भी ध्यान नहीं है। हमारे ऊपर वायसराय साहब, गवर्नर साहब तथा कलक्टर साहब की लताड़ें पड़ती आ रही हैं कि तुम्हारे इलाके से शिकायत क्यों आई ? अब आपकी भूमि आपको मिल गयी है। आगे कोई दिक्कत आपको आए, तो आप बेधड़क मेरे पास आइएगा। मैं आपकी दिक्कत यहीं दूर कर दिया करूँगा। पिता जी ने कष्ट के लिए धन्यवाद देते हुए यही कहा कि मेरे पास मुकदमा लड़ने के लिए न तो पैसे थे और न यह भरोसा ही था कि यहाँ मेरी बात कोई सुनेगा भी। इसीलिए ऐसा करने पर बाध्य होना पड़ा। अब यह घटना मुझे याद आती है, मैं सोचता हूं कि यह कितनी विचित्र बात है कि एक आने में ही पिताजी को न्याय मिल गया था।

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाँवों का मूल रंग उड़ता जा रहा है

● श्री राम नारायण उपाध्याय

उस दिन एक मित्र मिले, तो बोले–"कुछ लोगों ने फजूल ही हल्ला मचा रखा है कि गाँवों में कुछ काम नहीं हुआ। मैं अभी-अभी गाँव के एक ट्रिप पर गया था और मैं यह दावे के साथ कह सकता हूं कि गाँवों का नक्शा बदल चुका है और गाँव प्रगति के मार्ग पर बढ़े जा रहे हैं।"

मैंने कहा–"आपने एक सैलानी की नजर से गाँव को देखा और पोस्टरों की भाषा में उसे समझा है। मसलन गाँव प्रगति के मार्ग पर बढ़े जा रहे हैं। नक्शा कहते हैं किसी चीज की ऊपरी रेखाओं को और यदि आपने नक्शे के अन्दर झांककर देखा होता तो आपको पता चलता कि नक्शे की सिर्फ ऊपरी रेखायें उभरी हैं लेकिन गाँव का मूल रंग उड़ता जा रहा है। तसवीर का फ्रेम तो सुनहरा हो गया, लेकिन फोटो बिगड़ चुकी। जिन गाँवों ने प्रेमचन्द जी को 'होरी' और 'गोबर' जैसे पात्र दिये, जिन गाँवों के लिए गाँधी जी ने शहरों की सुविधा त्याग कर 'सेवाग्राम' जैसे गाँव को अपना कार्यस्थल बनाया, जिन गाँवों में रहने के लिये कवियों का मन भी ललकता था और वे गुनगुनाते थे–"अहा! ग्राम्य जीवन भी क्या है, क्यों न इसे सबका मन चाहे।" जिन गाँवों में गीत की कड़ियों के साथ दही बिलोया जाता, चक्की के स्वर गूंजते, मजदूर अपनी कुदाली चलाता और किसान के पांव खेत की ओर उठते और जहाँ के चौपाल पर साँझ पड़े बिना किसी वाह्य आकर्षण के गाँवों के समस्त वर्गों के लोग आकर इकट्ठे होते और चिलम के दौर के साथ राजा-रानी की कथा से लेकर देश-विदेश की वार्ता चलती, वे ही गाँव अब टूटते जा रहे हैं।

बोले–आप भी कैसी बात करते हैं, क्या गाँवों में निर्माण कार्य नहीं हुआ और वहाँ स्कूल, अस्पताल, पंचायत भवन आदि नहीं बने?

मैंने कहा–"कुछ सरकारी भवनों का बन जाना, एक बात है और गांव की आर्थिक हालत में सुधार होना दूसरी बात। आज गावों में सरकारी भवनों में तो वृद्धि हुई, लेकिन गाँव की गरीबी में कोई कमी नहीं आई। आज गाँवों में अस्पताल तो खुले, लेकिन कहीं फूल से मुस्कराते चेहरे नजर नहीं आते। आज वहाँ स्कूल तो खुले, लेकिन कहीं स्वावलम्बी नागरिकों के दर्शन नहीं होते, वरन् चारों ओर नौकरी चाहने वालों की बाढ़-सी आगई है। यह सच है कि गाँवों में सड़क बन चुकी है लेकिन सड़क किनारे रहने वाले मजदूरों की हालत में कोई सुधार नहीं हुआ। मैं जब सरकारी बस में से सड़क के किनारे मिट्टी तोड़ने वालों के अध-नंगे बच्चों और घरोंदानुमा झोंपड़ों को देखता हूं तो मेरी आँखों में आँसू छलछला आते हैं। सोचता हूं आज सड़क के ठेकेदारों और उच्चाधिकारियों की कारों में तो वृद्धि हुई, लेकिन सड़क पर काम करने वालों के शरीर में खून की वृद्धि नहीं हुई। आज के हमारे अधिकांश विभाग महज कर्ज और अनुदान बाँटने वाले केन्द्र बन चुके हैं। विनोबा के शब्दों में कहें—"दूध में दही डालने से वह जम जाता है और उसमें से घी निकलता है लेकिन दही में दही डालने से वह सड़ जाता है और उसमें से दुर्गंध आने लगती है।" सो आज देश में यही अनुदान में अनुदान मिलाने का काम चल रहा है, इसी से सारी गड़बड़ी है।

बोले–'आखिर इस खराबी की जड़ कहाँ है?'

मैंने कहा–'इस सारी खराबी की जड़ है आज की हमारी समाज-व्यवस्था। हम बात तो श्रमनिष्ठ शोषणविहीन समाज की करते हैं लेकिन आज हमारे श्रम की प्रतिष्ठा नहीं है और शोषण को खुलकर खेलने के लिये छोड़ दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम बात तो उत्पादन बढ़ाने की करते हैं लेकिन किसान द्वारा उत्पादित माल की पूरी पूरी कीमत दिलाने की हमारे यहाँ कोई व्यवस्था नहीं है। आज सारा बाजार पूंजीपतियों के हाथ में है। इससे जब किसान के घर में फसल आती है तो अनाज के दाम घट जाते हैं और चार माह बाद जब किसान को अनाज की जरूरत पड़ती है तो अपने ही द्वारा बेचे गये अनाज को मनमाना मुनाफा देकर खरीदने के लिये वाध्य होना पड़ता है। उसे अपने माल की कीमत तय करने का भी हक नहीं है वरन् उसके द्वारा उत्पादित अनाज व कपास की कीमतें सरे बाजार नीलाम के जरिये तय की जाती हैं। इस तरह उसे दोहरे-शोषण का शिकार होना पड़ता है। उसे जब अपना माल बेचना होता है तब भी व्यापारी की मर्जी पर मनचाहे दामों में और जब माल खरीदना होता है तब भी व्यापारी की मर्जी पर मुंहमाँगे भाव में। इससे जो उत्पादक है वह गरीब होता जा रहा है और बीच का मुनाफाखोर समृद्ध बना है।

बोले—"आज तो खेती का उत्पादन बढ़ चुका है, इससे तो किसान की हालत सुधरनी चाहिये।"

मैंने कहा—"एक ओर जहाँ खेती का उत्पादन बढ़ा है वहीं दूसरी ओर खेती पर लगने वाले खर्च भी बढ़ चुके हैं। पहले जो किसान मुफ्त में मिलने वाले गोबर के खाद से काम चला लेता था, वही अब बिना मेहनत के कर्ज से प्राप्त कृत्रिम खादों की ओर भागा जा रहा है। पहले जो किसान खुद अपने नागर से खेत जोतता था उस पर अब महंगी दरों वाले ट्रक्टर की जुताई का कर्ज लादा जा रहा है और पहले जो किसान भगवान को नैवेद्य बताने की तरह खेत में बोने के बिजाई के अनाज को सुरक्षित रखता था उसे अब बढ़ती हुई मंहगाई के कारण उसको भी बेचने के लिये वाध्य होना पड़ता है।

पहले जहाँ गाँवों में खेतिहर मजदूर आसानी से मिल जाते थे वहीं अब नजदीकी शहरों में कारखाने खुल जाने से वहाँ की बढ़ी हुई मजदूरी की दरों के कारण उनका मिलना भी मुश्किल होता जा रहा है। आज की शिक्षा पद्धति ऐसी है कि गाँव का जो भी लड़का थोड़ा पढ़ लिख जाता है वह फिर खेती करना नहीं चाहता और श्रम से उसका विश्वास उठ जाता है। वह जब देखता है कि एक साधारण पढ़ा सरकारी कर्मचारी उससे ज्यादा कमा लेता है तो जो साधारण पढ़े लिखे लड़के हैं उनमें ग्रामसेवक, समिति सेवक या ग्राम सहायक बनने की होड़ मच जाती है और जो कम पढ़े लिखे लड़के हैं वे पंचायत या स्कूल अस्पताल की चपरासीगिरी करना ज्यादा पसन्द करते हैं बजाय खेती में काम करने के।

इस तरह आप बारीकी से गाँवों की स्थिति का अध्ययन करें तो आपको पता चलेगा कि पहले जो किसान अपने खेत का मालिक था, बढ़ते हुए खर्च के कारण उसे अपनी जमीनें साहूकार, सरकार या बैंक के पास रहन रखने के लिये वाध्य होना पड़ रहा है। आज एक साधारण किसान के लिये खेती करना असंभव होता जा रहा है और उसकी जमीनें व्यापारी किस्म के बड़े काश्तकारों के पेट में समाती जा रही हैं।

पूंजीपतियों के हाथ में जमीन के केन्द्रित होते जाने से पहले जो खेती अन्न स्वावलम्बन का आधार थी, वही अब "अधिक अन्न उपजाओ" की बजाय व्यापारिक फसलें बोकर "अधिक रुपया कमाओ" का साधन बनती जा रही है।

कहा—पंचायती राज्य के रूप में गाँवों में दलबन्दी का ऐसा नग्न स्वरूप सामने आया है जिसे देखकर विश्वास के पाँव उखड़ने लगे हैं। पहले जहाँ लोग एक परिवार की तरह रहते थे वे ही अब एक दरी पर बैठने के लिये तैयार नहीं हैं। पूरे गाँव दो अलग अलग खेमों में बँटते जा रहे हैं। राजनैतिक पार्टियों ने अपने स्वार्थ के लिये इस दरार को और भी गहरी करने के लिए कोई कसर उठा नहीं रखी है। इसी से पहले जो गाँव कभी शाँति के घर माने जाते थे, वे ही आज अशाँति के गढ़ हुये जा रहे हैं। पहले जिन गाँवों के घरों में ताला नहीं लगता था वहीं अब फसलों की चोरी होने लगी है और जहाँ के लोग कलम छू देने मात्र से अपनी कही हुई बात को टालते नहीं थे वहीं के लोग अब दलबंदी के कारण कसम उठाकर बात से इन्कार करने में नहीं झिझकते।

इस तरह पहले जो गाँव भारतीय संस्कृति के निर्माता और एक श्रमनिष्ठ स्वावलम्बी समाज व्यवस्था की रीढ़ रहे और जो गाँव बड़े से बड़े राज्यों के आने और चले जाने से नहीं टूटे, वे ही गाँव अब टूटते जा रहे हैं, टूटते जा रहे हैं और टूटते ही जा रहे हैं। ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इकहत्तरवीं वर्षगाँठ : एक आत्मनिरीक्षण

● श्री ब्रजलाल बियाणी ●

इस अवसर पर मैं अपने ७० वर्षीय जीवन का संक्षिप्त आत्म-निरीक्षण करूँ तो आज की परिस्थिति में मेरे लिये योग्य होगा। आत्म-निरीक्षण एक कठिन कार्य है, पर मैं प्रयत्न करूँगा कि अपने आपको जैसा मैंने देखा, उस रूप में आपके सम्मुख रखूँ। मित्रों ने मेरा रूप किस प्रकार देखा यह 'बियाणी जी मित्रों की नजर में' नामक ग्रंथ में है और मैं अपने आपको किस प्रकार देखता हूं, यह निवेदन कर रहा हूं। इस प्रकार मेरे जीवन का चित्र पूर्ण हो जाएगा।

अनेकों बंधनों से जकड़े हुए मनुष्य के लिए समय और स्थान के बंधन से मुक्त होना एक कठिन कार्य है। मनुष्य के ऊपर, जिस समय वह जन्म लेता है, उस समय का बोझ होता है और जहाँ जन्म लेता है वहाँ का आकर्षण। स्थान से प्रेम स्वाभाविक है और समय का प्रभाव भी आवश्यक। इन बंधनों से ऊपर उठना मानव-धर्म है और विश्व-मानवता एकता. काल और स्थान के बंधन से मुक्ति में है। जीवन में मैंने भी समय का उपयोग और स्थान से प्रेम किया है. पर उन बंधनों से स्वयं को बाँधा नहीं है। अतः मेरे लिए हर समय कार्य उपयोगी और हर स्थान कार्य क्षेत्र रहा है। इस कारण मैं हर समय से समरस होकर हर स्थान के अनुरूप स्वयं को बना लेता हूं। इन्दौर में भी स्वयं को वैसा ही पाता हूँ, जैसा विदर्भ में था। विदर्भ का प्यार दिल में है, पर मालवा में रह रहा हूं, इसकी विस्मृति नहीं। फिर आज तो इन्दौर-निवासी होने में मुझे किसी प्रकार संकोच नहीं, प्रत्युत इससे मेरी समरसता की भावना का पोषण होता है।

समय और स्थान के बंधन से मुक्त रहने के लिए मैंने अपने जीवन को ढाला है। मैंने विश्व की धारणा के अनुसार परिवर्तन को अपना ध्येय माना है। उसके अनुसार सब क्षेत्रों में कार्य किया है। परिवर्तन की पूजा करने के लिए जीवन में त्याग, साहस, स्वावलम्बन और बुद्धि की अपनी अंजलि अर्पित की है। इसलिए मैं विश्व - संस्कृति का भक्त हूं।

दुनिया का जीवन संतुलन में स्थायी है। इसलिए विश्व-व्यवस्था में लेना-देना अज्ञात रूप से चलता रहता है। मानव जीवन में भी दुनिया एक बाजार रूप है। वहाँ देना-लेना सतत चालू है। देने-लेने के विविध प्रकार हैं, बुद्धि का लेन-देन और शरीर श्रम का लेन-देन, यह प्रमुख हैं। कुछ व्यक्ति शरीर की मेहनत देते हैं और कुछ बुद्धि की मेहनत देते हैं। शरीर श्रम से मानवीय आवश्यकताओं का निर्माण होता है और बुद्धि या विवेक से मानव का विकास होता है। दोनों एक दूसरे पर अवलम्बित हैं पर उनकी तुलना करने का कोई सर्व-श्रेष्ठ माप नहीं है। जो ज्यादा ले और कम दे उसका जीवन गौण है और जो ज्यादा दे और कम ले वही मानव है। मैं अपने जीवन का जब अवलोकन करता हूं, तो पाता हूं कि मैंने ज्यादा लिया है और कम दिया है। यही शोषण का अर्थ है।

मैंने अपने कुटुम्बियों का कुछ अंश में शोषण किया है। मैंने अपने आप्तजनों का भी शोषण किया है, मित्रों का उपयोग भी किया है और साथियों के शोषण का दोषी भी मैं हूँ जिनका मैंने शोषण किया, उन्होंने प्रेममय भावना से मेरे लिए कार्य किया और शोषक के रूप में मुझे कभी नहीं देखा, पर शोषण शोषण ही है। साथ ही मुझे इस बात का भी पूर्ण सन्तोष है कि मैं कभी किसी के ऊपर भार रूप नहीं बना। इस परिस्थिति में मेरे ऊपर यह विचार सवार है कि मैंने जो कुछ दुनिया से लिया उसका मूल्य अधिक है और जो कुछ दुनिया को दिया उसका मूल्य न्यून है। इस कारण जब कुटुम्ब-जन मित्र तथा अन्य व्यक्ति मुझे कहते हैं कि इतनी बीमारियों के आघात के पश्चात तथा इस उम्र में मुझे विश्राम करना चाहिए और विश्रांति में जीवन व्यतीत करना चाहिए, तो उनकी प्रेम-रूपी छत्र-छाया का उचित आदर करते हुए मैं व्यस्त और कार्यरत रहने का प्रयत्न करता हूं। कारण मेरे पास जब इस अवस्था में भी बुद्धि और विचारों की शक्ति है, तो मुझे उसका उपयोग संसार में अपने विचारों के अनुसार, निर्भयता पूर्वक करना ही चाहिए। मृत्यु तो अवश्यम्-भावी है, उसकी लम्बे समय तक राह देखते रहना, यह मेरा दिल नहीं मानता। अतः जीवन में जो कुछ बचा है, उसका उपयोग करना शरीर और मन का कर्तव्य है. यही मेरा धर्म है। साथ में मैं यह भी मानता हूं कि नाश की मेरी वृत्ति नहीं है. अतः वैज्ञानिक रूप से जीवन-यापन करते रहना और अधिक-से-अधिक कार्य करना, यही मेरा आज का स्वधर्म है।

हर व्यक्ति का अपना जीवन अपने मित्रों और साथियों से संबंध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखता है। जितने अधिक, कार्यशील और समर्थ साथी होंगे, उतना ही उसका काम व्यापक और प्रभावशाली होगा। मैंने अपने जीवन में काफी बड़ा मित्र-परिवार निर्माण किया है और साथ ही खासा लम्बा साथियों का सहयोग भी प्राप्त किया है। मेरे मित्रों ने मुझे समय-समय पर सहायता और प्रेम का अनुभव कराया है। मैं अपने जीवन में मित्र-परिवार के रूप में भाग्यशाली हूं। साथ ही साथियों के सम्बन्ध में भी अपने आपको भाग्यवान मानता हूं। सार्वजनिक क्षेत्र में मैंने अनेक साथियों का सहयोग लिया है। अभी भी मेरा साथी-परिवार काफी बड़ा है, पर मैंने उनमें से कुछ साथी खो भी दिये हैं। जो व्यक्ति धन कमाता है और खो देता है, वह दोषी है; इसी प्रकार मैंने कुछ साथी खो दिये, यह मेरा भी दोष है। इसका कारण या तो मेरा उनका प्रामाणिक मतभेद होगा या मैं उनकी सामयिक भूख अथवा आवश्यकता पूरी नहीं कर सका हूंगा अथवा मैंने उनके प्रेम-सम्बन्ध में अतिरेक का अवलम्ब किया होगा या जो पैसा आया, वह मूल में ही खोटा आया। जो कुछ भी हो मेरी गलती या असमर्थता किसी प्रकार होगी या मैंने मानव-मन को समझने में गलती की होगी। किसी भी प्रकार हो, मैं अपने आपको दोषी मानता हूं। इसीलिए जो साथी किसी भी कारण मुझसे पूर्णतया या आंशिक रूप से अलग हो गए हैं, मैं उनको प्रकट रूप से या दिल से किसी भी प्रकार का दोष नहीं देता। साथ ही हमेशा आशा करता हूं कि किसी दिन फिर हम एक दूसरे को समझेंगे।

मैं अपने जीवन के सब क्षेत्रों का अवलोकन करता हूं, अपने संघर्षमय जीवन का विवेचन करता हूं तो मुझे यह कहते हुये हर्ष होता है कि मैंने अपने जीवन में अपने विचारों के अनुसार कार्य किया है और इसी कारण मुझे अपने जीवन में जय और पराजय दोनों का अनुभव करना पड़ा है। मुझे जीवन के पचपन वर्ष तक पराजय का कोई विशेष अनुभव नहीं हुआ। जिस क्षेत्र में भी मैंने हाथ डाला, उस में ही अनेकों कठिनाईयों के बावजूद सफलता मिली, अतः मेरे जीवन में सफलता केन्द्र-बिन्दु बन गई, पर मुझे सफलताओं से प्राप्त आनन्द कभी अपने अतिरेक को नहीं पहुंचा। मेरी तो पराजय में भी परीक्षा होनी थी और इस बात का मुझे हर्ष है कि मैंने अपने जीवन में दोनों अवस्थाओं का अनुभव कर लिया। अपने जीवन में सन् १९५५ के उपरांत मुझे अनेक पराजयों का सामना करना पड़ा। मैं सत्य बोलूँ तो इन पराजयों का मुझ पर काफी असर हुआ है। बड़े-बड़े महापुरुषों के जीवन का अवलोकन करता हूं, तो अनेकों के जीवन में अंतिम समय में पराजय या हार का इतिहास दिखाई देता है। फिर मैं तो ठहरा एक मामूली आदमी। मेरे जीवन में पराजय आए, तो कौन विशेष बात है फिर मैंने तो पराजयों को आमन्त्रित किया था! यह आशा मुझे नहीं थी कि विजय मिलेगी, कर्त्तव्य पालन में मुझे आनन्द था, और इस आनन्द में मैं शनैः-शनैः अपनी पराजय का आघात भूल सका। जीवन का हर क्षेत्र में अनुभव, यही जीवन की परीक्षा है।

अपने जीवन का यदि थोड़े में मैं सार निकालूँ, तो मैं कह सकता हूं कि मैंने अपने जीवन में बहुत लिया, पर दो बातें निश्चित रूप से समाज की सेवा में अर्पित की हैं। मैंने अपने जीवन में अन्यों का दुख-दर्द या व्यथा समझी, उनसे सहानुभूति दिखाने का प्रयत्न किया, उन्हें ममत्व दिया और किया प्रेम-प्रदर्शन। संसार की व्यापक पीड़ा और असमानता के नाश का भी यथाशक्ति प्रयत्न मैंने किया है। मेरे पास यही सर्वश्रेष्ठ पूंजी है, मेरा सारा जीवन इसी धुरी पर घूमता है। मेरा जीवन निर्भयता और मानवता की चट्टान पर इसी चक्र की गति से घूमा है। इसी भावना से मैंने राजकीय आंदोलन में भाग लिया, इसी भावना से सामाजिक क्षेत्र में कार्य किया, इसी भावना से शैक्षणिक और व्यापारी क्षेत्र में कार्य किया, इस आकांक्षा की पूर्ति हेतु साहित्य - निर्माण किया, इसी भावना से मैंने अपना जीवन अन्य क्षेत्रों में भी व्यतीत किया। मेरे पास देने के लिए इसके अलावा कुछ नहीं है। मैंने समाज से कुछ लिया है। मुझे प्रेम मिला, सम्मान मिला और मिली सत्ता। इसके बदले में मैंने यही दिया, इसी में मुझे सँतोष है। विवेकपूर्ण आत्मसंतोष यही तो जीवन का सर्वश्रेष्ठ मार्ग है और मानवता और विशालता की आराधना यही मेरी सर्वश्रेष्ठ पूजा है।

मैंने अपने जीवन के प्रधान पहलुओं का आत्म-निरीक्षण करने का प्रयत्न किया है। आत्म-निरीक्षण एक कठिन कार्य है और विशेषतः जब कि उसे दुनिया के सामने पेश करना हो, तथापि मैंने स्वयं को जैसा देखा है, वैसा प्रामाणिकता के साथ निवेदन किया है। मित्रों की नजर में मैं कैसा हूं, यह निर्दोष कृति मित्रों ने निर्माण की है और मैं स्वयं की नजर में कैसा हूं, इस दोषपूर्ण कृति का निर्माण मैंने किया है। ▣

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीनी आक्रमण से ३५ दिन पहले

२० अक्टूबर १९६२ को भारत पर चीन का आक्रमण हुआ। उससे ठीक ३५ दिन पहले सेवा निवृत्त राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने सदाक़त आश्रम पटना से विश्व विख्यात ज्योतिषी श्री सूर्य नारायण के नाम यह पत्र लिखा था। इसमें उनकी देश चिन्ता का चित्र तो है ही, उनके सरल विश्वास का चित्र भी है—

सदाक़त आश्रम, पटना
१४ सितम्बर १९६२

पंडित सूर्य नारायण व्यास जी,

प्रणाम

आपके पत्र यथा समय प्राप्त हुए थे। आपका (पत्नी की मृत्यु पर) संवेदना पूर्ण तार भी मिला। आपकी सहृदय सहानुभूति के लिए मैं हृदय से आभारी हूं। यहाँ पटना समय से पहुंच गए और ईश्वर ने उनकी इच्छा पूरी करके उनकी आत्मा को शान्ति पहुंचाई। गंगा के किनारे उनका देहान्त हुआ। अब तो बार-बार ईश्वर से यही प्रार्थना है कि वह उस दिवंगत आत्मा को शांति प्रदान करें। यूं तो इस संसार में एक दिन सबको ही जाना है, फिर भी आप जैसे व्यक्तियों की सहानुभूति से हृदय को धीरज मिलता है।

आपके पत्र के सन्दर्भ में ही एक दो बातें पूछनी हैं। इधर कई बातों में हलचल सुनाई दे रही है। देश का भविष्य क्या है, पता नहीं। अपने व्यक्तिगत दुख से भी अधिक आज देश की चिन्ता अधिक सता रही है। चीन, पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, सिक्किम सभी ओर हलचल है और इधर आपने अखबारों में पढ़ा होगा कि नेता जी सुभाष चन्द्र बोस के बारे में भी फिर से चर्चा चल पड़ी है और बताया जाता है कि कूच बिहार में शौलमारी आश्रम के साधू बाबा वही हैं। अभी से कुछ भी कहना कठिन है। सभी बातों में आपका क्या विचार है लिखिएगा।

मेरी तो बस एक यही प्रार्थना है कि जीवन के जो भी शेष वर्ष बच गए हैं, उनका कुछ सदुपयोग कर सकूं। बस कभी कभी अपने स्वास्थ्य को देखकर निराश-सा हो जाता हूं। आपका क्या विचार है? कृपया अपने विचार विस्तार से लिखिएगा।

आपका
राजेन्द्र प्रसाद

अंतःकरण के फोटोग्राफ

चीनी आक्रमण से २४ दिन बाद

श्री महाबीर प्रसाद जैन हिन्दी के श्रेष्ठ कहानी लेखक हैं। वे अपनी कलम के साथ एकाग्र हो पाते, तो साहित्य में आज उनका अपना स्थान होता। लापरवाही की लम्बी बौछारों के बाद उनकी कई कहानियाँ ऐसी हैं कि समय की बौछारों को झेलकर भी दमकती रहें। १३ नवम्बर १९६२ को उन्होंने प्रभाकर जी को यह पत्र नागपुर से लिखा था, जिसमें उनके अन्तःकरण का क्या, भारत की जनता के अन्तःकरण का ही फोटो खिंच गया है—

भइय्या प्रभाकर जी,

मैंने जीवन में दो चमत्कार देखे—एक तो गाँधी जी की मृत्यु के बाद और दूसरा चीन के हमले के बाद। जो काम हजारों लीडर लम्बे लम्बे भाषणों से वर्षों में न कर पाते, वह गाँधी की मृत्यु ने ३० मिनट में कर दिया। चीन ने भी ऐसा ह कुछ किया। आपने 'नया जीवन' सम्पादकीय में चीन के हमले व शुभ-स्वागत किया, मानों मेरे म की बात कह दी।

श्री अरविन्द ने लिखा है कि एक मनुष्य समुद्र में डूब रहा है उसने अन्तिम आशा जान कर ए बहते हुए तख्ते को पकड़ लिय किन्तु प्रचण्ड लहर ने वह तख्त उसके हाथ से छीन लिया। तब भ यदि वह मनुष्य उस लहर क कृपालु भगवान का वरदान मानक जीवन को समुद्र में अर्पण कर दे तो कहना चाहिए उस मनुष्य ने ह वेदान्त का सार समझा है।

राम यदि भगवान था, त रावण कौन था!

वाह रे, चू-एन-लाई (ला अंग्रेजी में झूठ को कहते हैं) ज एहसान तूने भारत पर किया है उसके लिए सदा ही हम तेरे ऋणी रहेंगे। एशिया में अब कम्युनिज्म जिसने धर्म की जड़ में बासी मट्ठ डाला, रहेगा या भारतीय परम्परा जिसने धर्म की जड़ को गंगा-जल से सींचा, रहेगा। दोनों का रहन तो यार मेरे, अब नामुमकिन है इस संघर्ष के बाद चीन और भारत वास्तव में एक झण्डे के नीचे होंगे—दुनिया के १०० करोड़ इंसान! तब वास्तव में सूर्य नवकालीन प्रभात की विभूति सहित पूर्व में उदय होगा।

क्या ही अच्छा हो, यदि इस सुअवसर पर पाकिस्तान भी भारत पर हमला कर दे! सारा रोग एक ही ऑपरेशन से ठीक हो जाए। रोज़ की आह-ऊह से छुटकारा मिले—हमें न सही, आने वाली पीढ़ी को तो मिले।

(कृपया देखिये पृष्ठ १४०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताजी बर्फ के ताजे सपने

"सब मुझे छोड़कर चले गए। अब बचूंगा नहीं। ओह, अंग-अंग दुख रहा है। रग-रग टूट गई है। जरा भी हिलने-डुलने की शक्ति नहीं। सारा बदन अकड़ गया है। प्यास के मारे परेशान हूं। गला सूख गया है। आस-पास कोई नहीं, कुछ नहीं·····बर्फ ही बर्फ, और कहीं येती इधर आ गया तो·····

येती का ध्यान आते ही अंग थार्के सुध-बुध खो बैठा है। उसका कलेजा थर-थर काँप रहा है।

आज सुबह ही सुबह, जैसे ही वे दूसरे खेमे (कैंप) से चले थे·····" पैरों के बड़े-बड़े निशान मिले। बाप रे बाप, वह बेहद घबरा उठा। बर्फ में दूर-दूर तक इतने बड़े बड़े निशान।

अंग थार्के ने अपनी आँखों से आज तक कभी येती नहीं देखा है। वह उसे देखना भी नहीं चाहता। उनके यहाँ उस 'मनहूस' को देखना भी बहुत बुरा माना जाता है। सोलु-खुम्बु का कोई भी शेरपा उसे देखना नहीं चाहता, लेकिन चार-चार बार स्वयं अपनी आँखों से उसने ऐसे निशान देखे हैं।

नंदादेवी अभियान के समय, दूर दूर तक फैली हिमानी (ग्लैशियर) में, मीलों तक, उसने और उसके साथियों ने ऐसे निशान देखे थे। एवरेस्ट अभियान में खुम्बु हिमप्रपात (आइस फॉल) पार करते हुए भी ऐसे ही कुछ निशान देखे थे। बंदर पूंछ जाते हुए भी और आज चौथी बार फिर देखे हैं।

जब कभी उस ने ऐसे निशान देखे हैं, हमेशा ही बुरा हुआ है और अगर कहीं येती ही दिखाई दे तो, फिर कहना ही क्या, साक्षात मौत।

अनायास 'ओम मणि-पद्मे हुम्' उसके मुंह से निकल पड़ा।

बचपन से ही उसके मुंह में 'ओम् मणि-पद्मे हुम्' रम गया है। उसके क्या नामचेबाजार और सोलु-खुम्बु के बच्चे बच्चे के मुंह में यह वाक्य रमा हुआ है।

●डा० हरिदत्त भट्ट 'शैलेश'

जब कभी कोई किसी संकट में होता है तो 'ओम् मणि-पद्मे हुम्' कहने से ही छुटकारा मिल जाता है, ऐसा उनका विश्वास था, लेकिन आज क्या हो गया है—इस वाक्य को। सौ बार दुहराने से भी मन शान्त न हुआ। उसका डर दूर न हुआ। उसने सुना था कि उसके बाप की मौत का कारण भी मनहूस येती ही था।

एक बार नामचे बाचार से तिब्बत जाते हुए, रास्ते में उसके बाप को अजीब अजीब आवाजें सुनाई दी और फिर थोड़ी देर में ही, पाँच फुट ऊंचा, आगे-पीछे बालों से भरा, दो पैरों पर खड़ा, नुकीले सिर वाला, साक्षात महाकाल-सा येती दिखाई दिया।

उसके बाप की धड़कनें रुक गई। डरके मारे थर-थर काँपने लगा और खड़ा-खड़ा येती को देखते ही रह गया। तभी से बीमार पड़ गया था। वही बीमारी छह महीने में ही उसे ले गई।

उसके दस दिन बाद ही, माँ भी चल बसी और फिर रह गया था—अनाथ, जिसके आगे-पीछे कोई नहीं—पाँच साल का अंग थार्के।

तब से लेकर अब तक कैसे कैसे दिन देखे हैं उसने।

दस साल तो नामचेबाजार में एक प्रकार से मजे-मजे में कट गए थे। कभी किसी के याक चराते हुए, कभी किसी के खेतों में काम करके और कभी किसी के घर में छोटे-मोटे काम करते-करते, लेकिन पन्द्रहवें साल जैसे ही पेम्बा के साथ वह दार्जिलिंग आया, दुख के पहाड़ टूट पड़े उस पर। एक दिन भी चैन से नहीं कटा।

दस बार तो पहाड़ पर चढ़ते-चढ़ते गिर पड़ा। कई बार बीमार होगया और कभी-कभी एक-एक पैसे के लिए भयंकर परेशानी। अब उस पर कुछ कर्ज भी चढ़ गया।

वह कई अभियानों में गया। जान की बाजी लगाकर 'साबों' को बचाता रहा, लेकिन उसकी अपनी हालत कभी ठीक न हुई।

कभी-कभी उसे अपनी जिन्दगी से एक वितृष्णा-सी होती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"क्या करना ऐसी नंगी जिन्दगी से, बिल्कुल ऊबड़-खाबड़, नीरस जिन्दगी।" लेकिन मजबूरी की बात। जान तो सभी को प्यारी होती है–अंग थार्के को भी।

दो साल पहले एकाएक लाह्मू उसकी जिन्दगी में थोड़ा क्या आई कि उसकी दुनिया ही बदल गई। कुछ-कुछ अच्छा-अच्छा लगने लगा है उसे, लेकिन लाह्मू शादी के लिए तैयार ही नहीं होती।

कितनी-कितनी मिन्नतें की उसने "लाह्मू (देवी), मैं तुम्हारे लिए क्या नहीं कर सकता। अपनी जान तक दे सकता हूं, लेकिन तुम हो कि कुछ समझती ही नहीं। माना कि मेरे ऊपर कर्ज चढ़ा हुआ है। मैं पैसे-पैसे के लिए मुहताज हूं लेकिन तुम मेरी जिन्दगी में एक बार पूरी तरह आओ तो सही, तब देखना कि अंग थार्के में कितनी हिम्मत है, कितनी ताकत है।"

एकाएक फिर जोर का दर्द उठा और अंग थार्के तड़पने-सा लगा। विचार-धारा टूट गई। लाह्मू के ताने-बाने टूट गए। सब कुछ छिन्न-भिन्न हो गया।

उसकी आँखें खुलीं और फिर वह रोने-सा लगता, लेकिन गला इतना सूख गया है कि रो भी नहीं सकता। वह जी भर कर रोना चाहता है लेकिन रो भी नहीं पाता। ऐसी उत्पीड़न, ऐसी तड़पन, ऐसी कसक, ऐसी मजबूरी और ऐसी छटपटाहट कि जैसे प्राण-पखेरू उड़ने को तैयार बैठे हों, परन्तु वे भी पंख कटे होने से उड़ नहीं पाते–ऐसी बेबसी और लाचारी।

"तो क्या सचमुच साहब लोग मुझे छोड़कर चले गए हैं?" कुछ-कुछ होश में आते हुए अंग थार्के ने सोचा। सामने बर्फ की भयंकर दीवार खड़ी है। कल रात भर बर्फ पड़ती रही और सुबह बिल्कुल साफ।

साहब लोगों ने कहा–"कितना अच्छा मौसम है। बस, दो-तीन दिन के अन्दर ही चोटी पर चढ़ने का प्रयत्न करना चाहिए, नहीं तो बाद में मौसम खराब होने का डर है।

पहाड़ों पर चढ़ने में सफलता का मुख्य कारण मौसम ही है। खराब मौसम में बर्फीली चोटियों पर चढ़ना मौत को बुलावा देना जैसा है।

सुबह-सुबह दूसरे खेमे से चले तो चढ़ते गए, बढ़ते गए। ऊपर ताजी-ताज़ी बर्फ पड़ने के कारण पैर टिकाने मुश्किल हो रहे हैं·····फिर भी हिम्मत बाँध कर बढ़ रहे हैं, लेकिन एकाएक ताज़ी बर्फ में एक साथी फिसल जाता है और उसके साथ-साथ दो और साथी और फिर अंग थार्के भी लुढ़क पड़ता है। हड़बड़ाहट में हिम कुठार (आइस-एक्स) टिकाने या जमाने का भी मौका न मिला और चारों लुड़कते-लुड़कते दो हजार फुट नीचे हिमानी तक पहुंच गए।

अग्रगामी दल (एडवांस पार्टी) के चारों साथियों के पीछे-पीछे दो का एक और दल उनकी मदद के लिए आ रहा था। उन्होंने जब चारों को ऊपर से लुड़कते देखा तो उनकी सिट्टी-पिट्टी गोल हो गई। चारों मौत के मुंह में। उनकी रक्षा के लिए दोनों साथी उधर ही बढ़ गए, जिधर चारों गिरे पड़े थे।

तीनों साहबों को तो ये लोग जैसे-तैसे नीचे ले गए पर बेचारे अंग थार्के को यहां अकेले छोड़ देना पड़ा। उसे समझा बुझाकर, अपने दो स्लीपिंग बैग भी उसे देकर वे नीचे लौट चले·····यह कहकर कि जैसे हम नीचे पहुंचेंगे, दो-चार आदमियों को भेज देंगे, क्योंकि तुम्हारी टाँग में ऐसी चोट लगी है कि तुम्हारा अपने आप नीचे चलना असम्भव है। इसलिए तुम यहाँ इन्तजार करो, घबराने की कोई बात नहीं, किन्तु उनके जाते ही, अंग थार्के सहम-सा गया।

इतनी ऊंचाई पर अकेले-अकेले एक-एक पल काटना पहाड़-सा हो जाता है। दिन में बर्फ की चकाचौंध तथा हड्डियों को पिघला देने वाली भयंकर गर्मी और थोड़ी ही देर में सूरज डूबते ही घू-घू तेज हवा और हड्डियों की कंपा देने वाली असह्य सर्दी। शरीर का अंग-अंग काँप उठता है।

न तम्बू, न गरम चाय, न पानी न कोई साथी–दर्द के मारे अंग थार्के फिर बिलख उठता है।

"सब छोड़ गए मुझे। ऐसा बेकार है मेरा जीवन। लाह्मू भी मुझ से ब्याह नहीं करती। गरीब जो हूँ। उसे डर है कि मेरे साथ अच्छा खाना-पीना नहीं मिलेगा, नहीं तो क्या बात है। खाने-कमाने की उम्र है मेरी, लेकिन जब चारों तरफ से निराशा ही निराशा है तो फिर ऐसे जीने से क्या। इससे तो मर जाना ही अच्छा है।"

अंग थार्के क्रुद्ध हो उठता है और हिम-कुठार से अपने सिर पर दो-तीन प्रहार करता है, फिर खून और बेहोशी।

दूसरे दिन सुबह-सुबह जब दो शेरपा और दो साहब वहां पहुंचते हैं तो एकाएक अंग थार्के को देखकर घबरा जाते हैं। एक ही रात में इतना परिवर्तन।

अंग थार्के के साथी दो शेरपा उसके हाथ-पैर मलते हैं। उसे गरम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाय पिलाने का प्रयत्न करते हैं, पर अंग थार्के तो जैसे सो गया हो। उसके चेहरे पर खून जमा था। चोट के कारण वह बिल्कुल मरा-सा पड़ा था, न जाने क्यों सासें अभी चल रही थी·····अटक अटक कर निकल रही थी। बीस-तीस मिनट के बाद उसकी आँखें खुली। अंग क्षुतर को देखकर वह बिलख उठा ·····"तुम सब मुझे मरने के लिए छोड़ गए थे।"

"नहीं, नहीं अंग थार्के, हम तो रात भर चलते रहे, तब कहीं यहाँ तक पहुंच पाए हैं। अब घबराने की कोई बात नहीं। यह देखो तुम्हारी चिट्टी भी आई है।"

"चिट्ठी और मेरी!" अंग थार्के चकित—विस्मित। "किसने भेजी है? कहाँ से आई है?"

"लाह्मू ने भेजी है। लिखा है कि तुम जैसे ही दार्जिलिंग आओगे, मैं तुम से ब्याह करूंगी। गोम्बु बड़ा खराब है। उसने मुझे धोखा दिया। मुझसे ब्याह करने के लिए चार साल से कहता रहा और अब कहीं और जगह कर बैठा है। मैं भी उसे दिखा दूंगी। बस, तुम जल्दी ही आ जाओ।

अंग थार्के हक्का-बक्का·····। "हैं यह क्या हो गया। तो क्या लाह्मू सचमुच मुझसे ब्याह करेगी।" वह फिर विचारों में खो गया।

अंग क्षुतर उसकी कमजोरी को जानता है और जानता है कि अंग थार्के पढ़ना भी नहीं जानता। वैसे वह फर्राटे से हिन्दी बोल लेता है, नेपाली बोल लेता है, अपनी शेरपानी बोल लेता है और दो चार टूटे-फूटे अंग्रेजी शब्द भी समझ लेता है, पर काला अक्षर भैंस बराबर। अंग थार्के को समझा-बुझाकर पीठ पर लादकर पहले खेमें में लाए, वहाँ से आधार शिविर (बेस कैंप) में।

डाक्टर ने दो-तीन इंजेक्शन लगाए, कुछ दवादारू की और दो-तीन दिन में ही अंग थार्के ठीक हो गया। अब हरदम उसके चेहरे पर फूल खिले रहते। हर काम करने को तैयार लेकिन डाक्टर का कहना था कि अभी दो - चार दिन और खाओ - पीओ, फिर जो मर्जी कर लेना।

एक हफ्ते के बाद ही सब ठीक हो गए, पासंग भी। चोटी पर चढ़ने की फिर जोर-शोर से तैयारियां हुईं।

अब हरदम अंग थार्के की आंखों में लाह्मू का चित्र रहता। उसके फड़कते होठ और मचलती पलकें उसके हृदय में तूफान मचाते रहते। अंग थार्के खुशी में पागल हो गया और उसी का उत्साह रहा कि अभियान चोटी पर चढ़ने में सफल हो गया। एक साहब के साथ अंग थार्के ने उस दुर्गम्य चोटी पर विजय का झंडा फहरा दिया। चोटी की मांग में सिन्दूर भर दी। अब वह लाह्मू की मांग भरने के लिए उतावला है, पागल है।

अभियान की सफलता की खबर चारों तरफ फैल जाती है। अंग थार्के को उसकी बहादुरी और जिन्दादिली से दार्जिलिंग में सरकारी नौकरी मिल जाती है। आठ सौ रुपये माहवार।

अंग थार्के को जैसे ही यह बात दल के नेता ने सुनाई कि वह नाच उठा।

"अब लाह्मू तंगी महसूस नहीं करेगी। आठ सौ रुपये तनख्वाह-बाप-रे-बाप।" उसने अपनी जिन्दगी में इतने ढेर सारे रुपये एक [illegible] नहीं देखे थे। लाह्मू को पता [illegible] गया होगा। वह खुशी से पा[illegible] हो गई होगी।

× × ×

लाह्मू, मेरी लाह्मू। तुम च[illegible] गई। क्यों। आखिर क्यों। [illegible] घंटों सिसकता रहा, बिलख[illegible] रहा। अब उसे सब फीका-फीका सूना-सूना लग रहा है। अब क्या करूंगा नौकरी का·····अंग थार्के अंग क्षुतर से लिपट कर रो पड़ा।

अंग क्षुतर, क्या हो गया लाह्मू को? कहां चली गई वह? वह घंटों अंग क्षुतर से पूछता रहा, लेकिन वह मौन, क्या उत्तर दे।

वह अब अंग थार्के के हृदय में बसी लाह्मू के चित्र को भी नहीं उतारना चाहता है। क्या फायदा? गलतफहमी भी तो जिन्दगी की एक पनाह है। अच्छा ही हुआ लाह्मू चल बसी, नहीं तो अंग थार्के तो खुदकशी ही कर डालता अगर उसे·····। फिर वह आगे कुछ सोच ही न सका। ★

(पृष्ठ १३७ का शेष)

जवाहरलाल का नेतृत्व आग से कुन्दन बनकर निकल रहा है।

एक अवसर पर मैंने पटनायक जी से, जो आजकल उड़ीसा के मुख्य मंत्री हैं, कहा—"जवाहर लाल जी की झुकने की नीति (एपीचमैंट पालिसी) देश को कमज़ोर कर रही है।" मुस्करा कर पटनायक जी ने पूछा—"और जब लड़ाई का अवसर आएगा तो लड़ेगा कौन?"

देख रहा हूँ जवाहरलाल ही लड़ रहा है!

आपको पत्र लिखने बैठा था। भला यह भी कोई पत्र है?

आपका : महावीर प्रसाद जैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : आरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैल्सियम क्लोराइड

नमक

धांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स--

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल

फोर्ट, बम्बई - १

टेलीफोन : २५१२१८-१९-१०.

तार : सोडाकेम, बम्बई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखावट ही सभ्यता का आरम्भ है

शिलाओं, पेड़ों की छाल, जानवरों की खाल अथवा धातुओं के टुकड़ों की लिखावटें सभ्यता के उदय की ओर संकेत करती हैं।

लेकिन कागज के निर्मित होतेही एक नया रास्ता खुल गया और यह ज्ञान के विस्तार का एक ऐसा महत्वपूर्ण साधन बन गया जिसे आदमी चाहता था।

वास्तव में कागज आज के जीवन का अत्यावश्यक अंग है।

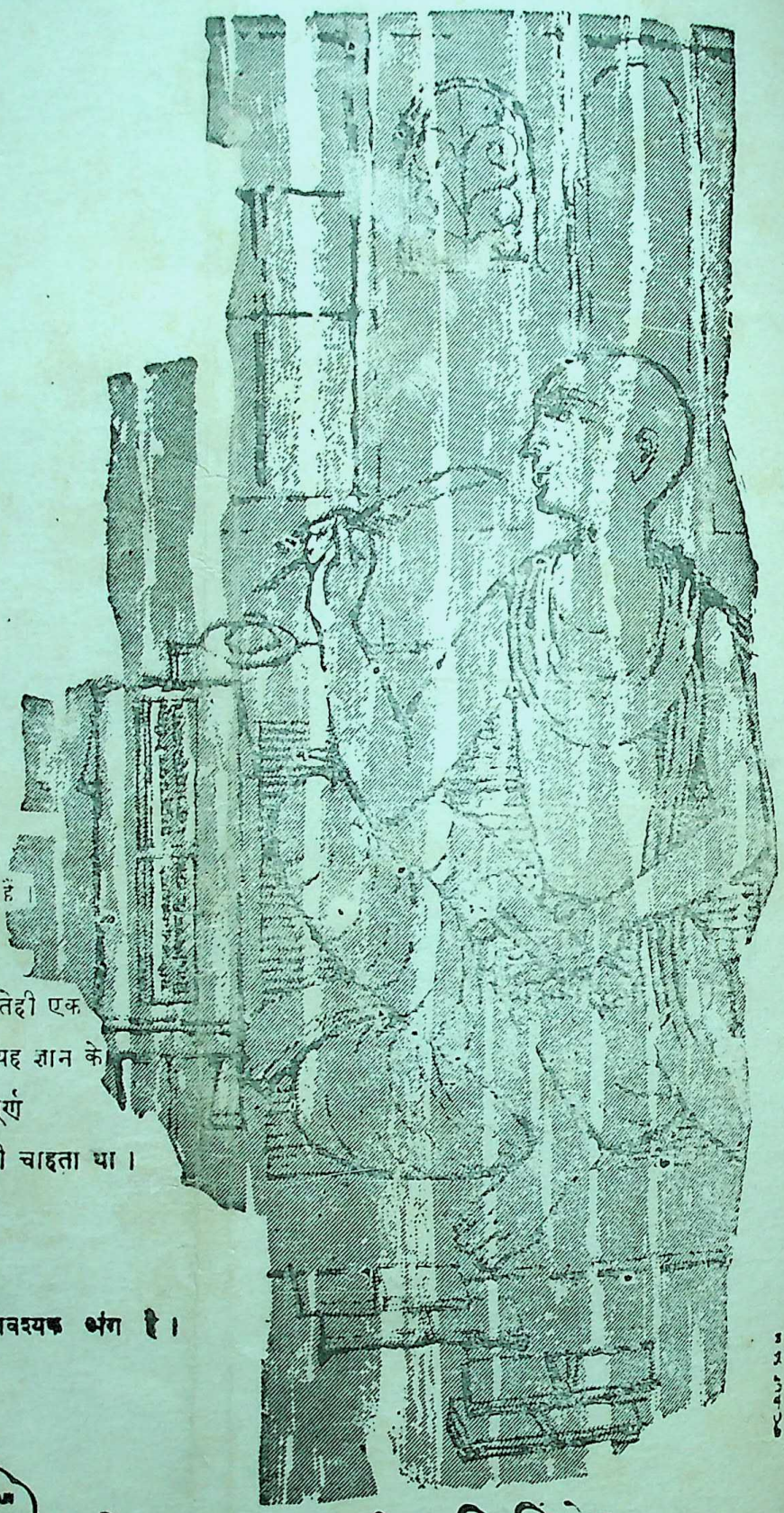

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमियानगर (बिहार)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मुद्रक—अखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स, सहारनपुर में मुद्रित-प्रकाशित।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नया जीवन

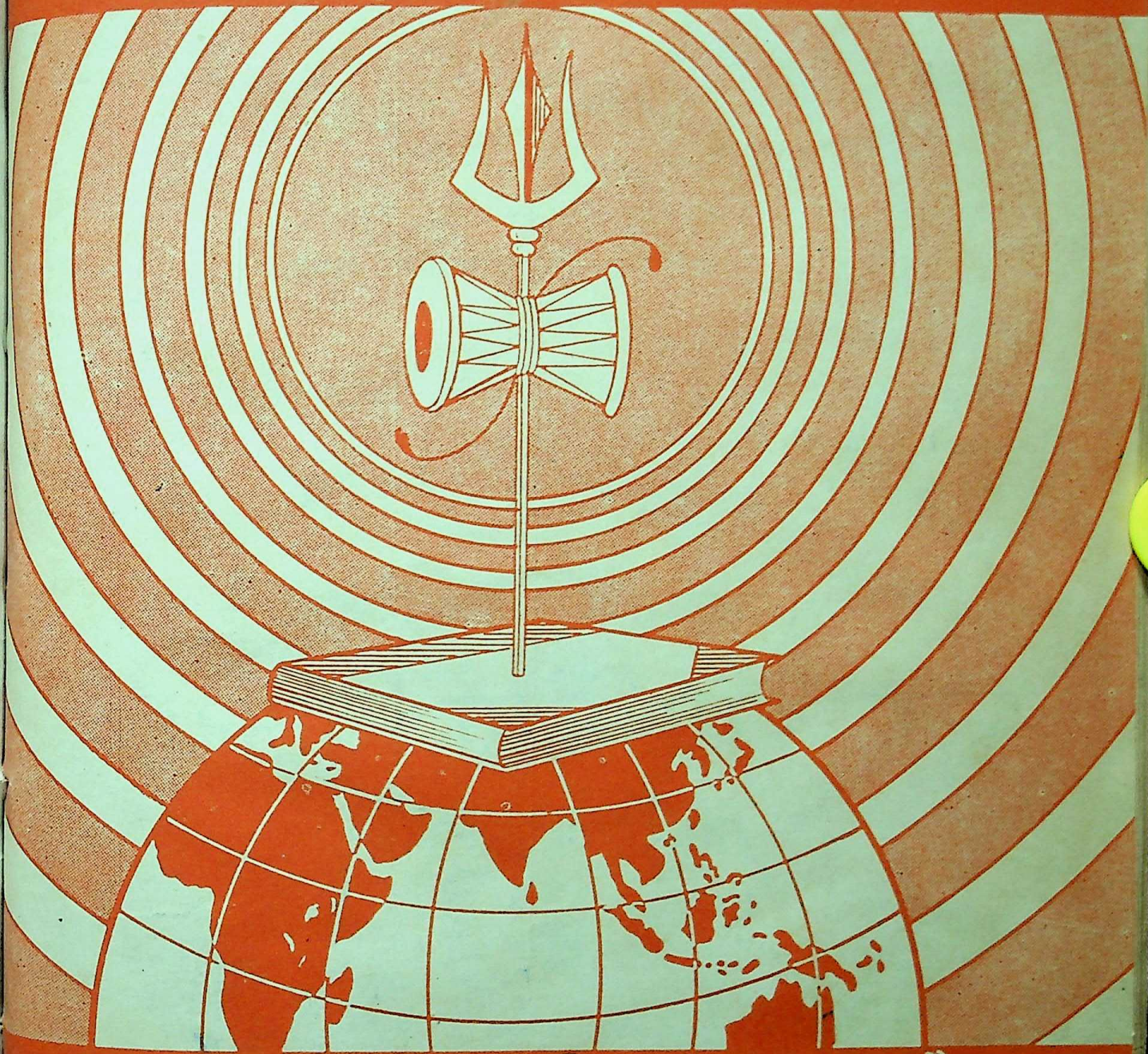

चालू दुनिया को जानने के लिए दैनिक आवश्यक है,
चालू दुनिया को समझने के लिए साप्ताहिक आवश्यक है,
जाने समझे पर राय बनाने के लिए मासिक आवश्यक है,

'नया जीवन' में

दैनिक, साप्ताहिक, मासिक की इन सभी विशेषताओं का समन्वय है।
अनेक पत्र पढ़ने वालों के लिए आवश्यक, न पढ़ने वालों के लिए अनिवार्य।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कागज़ के एक छोटे पुर्जे पर
महात्मा गांधी ने आश्रम के
एक रोगी को रात में दो
बजे एक हिदायत लिखी थी।
अब यह पुर्जा एक कीमती संस्मरण है!

विदेश के एक अज्ञात कवि
द्वारा लिखा एक पुर्जा मिला
उसके मरने के बरसों बाद,
वह उसी से अमर हो गया;
उस पर उसकी एक कविता लिखी थी

कागज़ के बिना न
शास्त्र मिलते न साहित्य।
कागज़ हमारी सभ्यता की
एक पवित्र धरोहर है!

श्रेष्ठ स्वदेशी कागज़ों के निर्माता

स्टार पेपर मिल्स लिमिटेड,

सहारनपुर :: उत्तर-प्रदेश

मैनेजिंग एजेन्ट्स—

बाजोरिया एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' द्वारा रचित यह साहित्य
आपके पुस्तकालय में न हो तो इसे तुरन्त मंगा लीजिये !

★ ज़िन्दगी मुस्कराई ४.०० रु०
★ बाजे पायलिया के घुंघरू ४.०० रु०
★ दीप जले शंख बजे ३.०० रु०
★ महके आँगन चहके द्वार ४.०० रु०

(नई स्फुरणा के साथ जीवन को चमकाने वाली चारों पुस्तकें)

★ माटी हो गई सोना २.०० रु०
बलिदान की चेतना से पूर्ण १७ अमर अक्षर चित्रों का संग्रह

★ आकाश के तारे धरती के फूल २.०० रु०
जीवन की गहराई, लोच और गति से भरपूर अनोखी लघु कथाएँ

★ क्षण बोले कण मुस्काए ४.०० रु०

की विशिष्ट शैली का प्रतिनिधित्व करने वाले
ललित एवं मनोरंजक निबंधों का नव प्रकाशित संग्रह

प्रकाशक:—

भारतीय ज्ञानपीठ, दुर्गाकुंड, वाराणसी

विक्रय केन्द्र ३६२०/२१ नेता जी सुभाष मार्ग, दिल्ली—६

भोजन, भवन, भेषभूषा; सभ्यता के तीन बड़े स्तम्भ हैं

तीनों को सदा ध्यान में रखिए !

खड़ियों तथा दूसरे उपयोग में आने वाला १० नं० से ४० नं० तक का बढ़िया सूत
एवं
भारत भर में प्रसिद्ध कोरा-धुला-लट्ठा, धोती, चादर, मलमल व रंगीन कपड़ों के
साथ-साथ अब अनेक नवीन एवं आकर्षक डिजाइन में छींटों का भी निर्माण होने लगा है।

निर्माता—

लार्ड कृष्णा टैक्सटाइल मिल्स

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

रजिस्टर्ड आफिस: चाँद होटल, चाँदनी चौक दिल्ली

प्रबंध-संचालक
सेठ आनन्द कुमार बिंदल
फोन—३१८, ३६४, १६०

प्रबन्धक
सेठ कुलदीप चंद बिंदल
तार—'टैक्सटाइल्स'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक दिन रामू ने क्या कुछ कहा,
कि श्यामू भी बेकाबू होगया,
दोनों में मुकदमेबाजी छिड़ी
और दोनों बरबाद हो गए !

रामू और श्यामू दो सगे भाई,
रामू स्वभाव का कड़वा,
श्यामू शान्त सज्जन,
दोनों का परिवार समृद्ध !

याद रखिये कि
स्वभाव का मिठास जीवन का वरदान है !
सदा मीठे रहिए !

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

गंगा शूगर कारपोरेशन लिमिटेड

देवबन्द :: उत्तरप्रदेश

जनरल मैनेजर—बी० सी० कोहली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान राम के पूर्वज,
एक राजा ने गन्ने की खोज की।
उनका नाम पड़ गया इक्ष्वाकु,
ईख की खोज करने वाला--

उस गन्ने को लोगों ने चूसा,
तो उन्हें एक अद्भुत आनन्द मिला--
एक नये स्वाद की सृष्टि हुई
और यों संसार में मिठाई का जन्म हुआ।

आज गुड़ से लेकर लैमनजूस तक गन्ने का परिवार फैला है
और गन्ना हमारी सभ्यता के विकास का एक अध्याय है!

★

कोशिश कीजिये-

कि आप भी देश के उभरते जीवन में कुछ नयापन ला सकें!

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

अपर दोआब शुगर मिल्स लिमिटेड,

शामली (मुजफ्फरनगर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवा निधि किदवई अपंग आश्रम

मूक वधिर विद्यालय : प्रद्युम्न नगर : सहारनपुर, उ. प्र.

जिन्हें कुछ लोग शायद परिवार और समाज का बोझ कहना चाहें, उन मूक-वधिर बालक–बालिकाओं को भी ८वीं कक्षा तक की पढ़ाई तथा दस्तकारी के रूप में सिलाई-कढ़ाई, लकड़ी का काम व मोमबत्ती निर्माण आदि सिखा कर जीवन में सकलतापूर्वक स्थापित करने का महत्वपूर्ण संस्थान, जिसमें छात्रावासों की भी सुन्दर व्यवस्था है ।

शिलान्यास कर्ता : राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद
संस्थापक : श्री अजित प्रसाद जैन, भू० पू० केन्द्रीय खाद्य मन्त्री

विशेष जानकारी के लिये लिखें—

विशाल चंद जैन (अध्यक्ष)

अखिलेश (मन्त्री)

सदा ही तो

जीवन के आचार, विचार और व्यवहार को ऊंची भावना के मिठास से भरने का संकल्प कीजिए ।

इस संकल्प से समाज के उपवन में माधुर्य के फूल खिलेंगे, जिनकी सुगन्ध जन–जन में फैलेगी ।

श्रेष्ठ चीनी के निर्माता-

लार्ड कृष्णा शूगर मिल्स लि०

सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

सेठ सुशील कुमार बिंदल
संचालक

सेठ रमेश चन्द बिंदल
प्रबन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरूरी जानकारी

- महीने के अन्त में महीने का अङ्क प्रकाशित होता है। अगले महीने की ७ तारीख तक भी पिछले महीने का अंक न मिले, तो कार्ड लिखें।
- वार्षिक (४०० पृष्ठ पाठ्यसामग्री का) मूल्य है पाँच रुपये और साधारण प्रति का पचास पैसे।
- लेखकों से प्रार्थना है कि उत्तर या रचना की वापसी के लिए टिकट न भेजें और प्रत्येक रचना पर अपना पूरा पता अवश्य लिखें।
- एक मास के भीतर ही बुक-पोस्ट से उनकी रचना या स्वीकृति/अस्वीकृति का पत्र और रचना छपने पर अङ्क निश्चित रूप से सेवा में भेजा जाएगा।
- अस्वीकृत छोटी रचनाएँ वापस नहीं की जातीं। हाँ, बड़े लेख और कहानियाँ, जिनकी नकल करने में दिक्कत होती है, निश्चित रूप से बुक पोस्ट द्वारा वापस कर दी जाती हैं।
- 'नया जीवन' में वे ही रचनाएं स्थान पाती हैं, जो जीवन को ऊँचा उठाएं और देश को सौन्दर्य बोध एवं शक्ति बोध दें, पर उपदेशक की तरह नहीं, मित्र की तरह —मनोरंजक, मार्ग-दर्शक और प्रेरणापूर्ण!
- प्रभाकर जी अपने सिर रोग के कारण अब पहले की तरह पत्र व्यवहार नहीं कर पाते और बहुत आवश्यक पत्रों के ही उत्तर देते हैं। निवेदन है कि इस का ध्यान रखें।
- 'नया जीवन' धन-साधन पर नहीं, साधना पर जीवित है, इसलिए लेखकों को वह चाह रखते भी प्यार-मान ही दे सकता है, धन नहीं।
- समालोचनार्थ प्रत्येक पुस्तक की दो-दो प्रतियाँ भेजें, पर 'नयाजीवन' में अब आम पुस्तकों की समीक्षा नहीं होतीं। प्रकाशकों से विशिष्ट पुस्तकें ही भेजने की प्रार्थना है।
- ग्राहकों से पत्र-व्यवहार में दोनों की सुविधा के लिए ग्राहक-संख्या लिखने की प्रार्थना है।
- 'नया जीवन' में उन चीज़ों के ही विज्ञापन छपते हैं, जिन से देश की समृद्धि, स्वास्थ्य, सुरुचि और संपूर्णता बढ़े।
- तार का पता 'विकास प्रेस' और फोन नं० १५३ है।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार का पता—

सम्पादक—नया जीवन
सहारनपुर : उत्तर प्रदेश

नया जीवन

देहातों और नगरों के लिए
विचारों का विश्वविद्यालय

आरम्भ—१९४०

अनेक सरकारों द्वारा स्वीकृत मासिक

प्रधान संपादक
कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर'

संपादक–संचालक
अखिलेश

हमारा काम यह नहीं है कि इस विशाल देश में बसे चन्द दिमाग़ी ऐय्याशों का फालतू समय चैन और खुमारी में काटने के लिए मनोरंजक साहित्य नाम का मैखाना हर समय खुला रखें!

हमारा काम तो यह है कि इस विशाल देश के कोने-कोने में फैले जन-साधारण के मन में विशृङ्खलित वर्तमान के प्रति विद्रोह और भव्य भविष्यत् के निर्माण के लिए श्रम की भूख जगाएं!

अगस्त, सितम्बर १९६६

स्वामी संस्थान

विकास लिमिटेड
सहारनपुर · उत्तर प्रदेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश का आंगन बुहारो तो सही !

बाहों को काम दो, जबान को लगाम दो !

राष्ट्र-चिन्तन
चुम्बन और चाबुक

आदमी के लिये काम नहीं, काम के लिये आदमी नहीं
एक विश्व और हिन्दुस्तान

युग प्रश्न : सैनिक तन्त्र क्या, क्यों और कैसा ?

अमेरिकन चुनाव : जैसा मैंने देखा

ताशकन्द के बाद : गम्भीर भविष्य चिन्तन
'समय और हम' काण्ड : श्री जैनेन्द्र की दृष्टि में !
श्री जैनेन्द्र का स्पष्टीकरण : श्री वीरेन्द्र की दृष्टि में!
हम पारखी हैं !

श्री मधुर शास्त्री
५४, मिंटो रोड, नई दिल्ली २१५
श्री विश्वदेव शर्मा ४,आफिसर्स फ्लैट्स,
गणेश लाइन, किशनगंज, दिल्ली-६ २१६
सम्पादकीय
श्री जगदीश चावला २१७
के २/१४१ देहरादून रोड, सहारनपुर २१८
कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'
आचार्य श्री शशिकर २२५
प्र० सम्पादक 'शबरी' चक्रधरपुर (बिहार) २२८
श्री नेमी शरण मित्तल
खादी मन्दिर, बीकानेर २२९
श्री वेदप्रकाश वटुक २३२
विदेशी भाषा विभाग, कैलीफोर्निया स्टेट
कालेज, हैवर्ड, कैलिफोर्निया, ९४५४२
कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' २३७
२४४
२४६
श्री राजाराम साहू 'पीड़ित' १९०, बजरिया २४८
अन्दर सागर द्वार, झांसी (उ. प्र.)

जीवन निर्माण के लिए आवश्यक

जीवनोपयोगी पुस्तकें

१.	चिन्तामुक्त कैसे हों ?	स्वेट मार्डन	२·२५ पैसे
२.	जो चाहें सो कैसे पायें ?	स्वेट मार्डन	२·२५ पैसे
३.	इच्छा-शक्ति कैसे बढ़ायें ?	जॉन कैनैडी	२·२५ पैसे
४.	प्रभावशाली व्यक्तित्व कैसे बनायें ?	लिली एलन	२·२५ पैसे
५.	आप सफल कैसे हों ?	जेम्ज़ एलन	२·२५ पैसे
६.	क्यों बचायें, कैसे बचायें ?	सैमुअल स्माइल्स	३·०० पैसे
७.	आप क्या करें ?	जोज़फ़ मेज़िनी	३·०० पैसे
८.	नियोजित परिवार—सुख का आधार	अशफ़ाक़ अहमद	३·०० पैसे

प्रकाशक

सुबोध प्रकाशन

४५९२, चर्खेवालां, दिल्ली-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश का आँगन बुहारो तो सही !

श्री मधुर शास्त्री

देहरी पर मैं नये मणिदीप धर दूँगा
साज कर नूपुर पधारो तो सही।

चाहता हूँ रोशनी को स्वर मिले
चाँदनी से तामसी अम्बर खिले
शोर में चिमगादड़ों के गेह है
जुगनुओं की भीड़ पर सन्देह है

दीप की मैं हर किरण को सूर्य कर दूँगा
एक पल अपलक निहारो तो सही।

संकुचित हैं सत्य कहने में वचन
चल रहा ऐसा अंधेरे का दमन
काव्य ने ओढ़ा अनर्थों का कफन
इसलिए अनिवार्य है मेरा सृजन

प्राण के मैं हर वचन को गीत कर दूंगा
झोपड़ी का मन सिंगारो तो सही।

आंधियाँ तो और भी शैतान हैं
हर नयन के सिन्धु में तूफान हैं
नष्ट - सा चिनगारियों का वंश है
आज शलभों का प्रणय भी दंश है

आँसुओं की आर्द्रता में आग भर दूंगा
क्रान्ति के स्वर में पुकारो तो सही।

आज तिनके - सा हुआ यह देश है
कुछ नपुंसक कह रहे, आवेश है
आँख नीची है हृदय की, प्यार की
बस प्रतीक्षा है किसी अंगार की

मैं हिमालय के शिखर बारूद धर दूंगा
देश का आँगन बुहारो तो सही।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

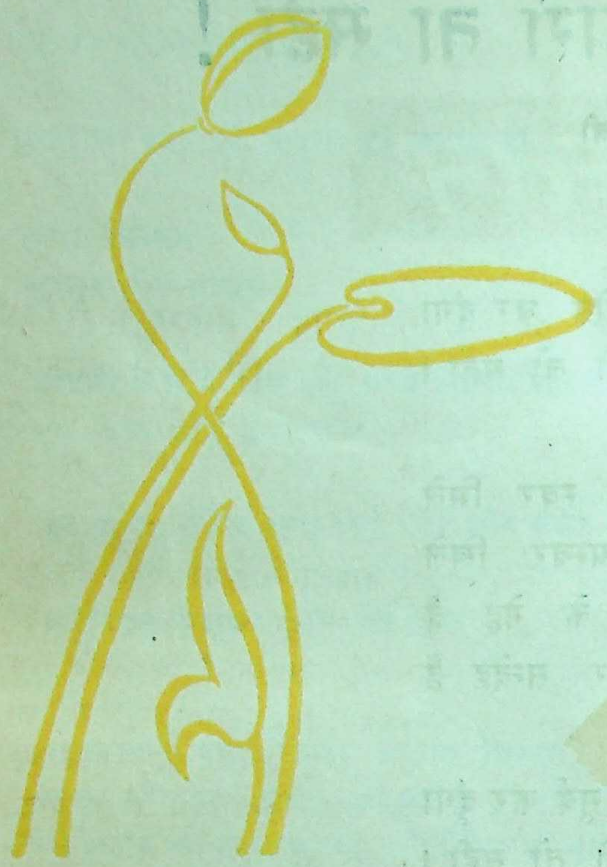

बाहों को काम दो !
जबान को लगाम दो !

●श्री विश्वदेव शर्मा

नारे तो पतवारें बना नहीं करते हैं !
और यों किनारे पर
नावों को खेने का अभिनय कर लेने से
मझधारें पार नहीं हो जाया करती हैं
भाषण से ही शासन हो जाया करता तो
एक नहीं दो दो ये दशक व्यर्थ क्यों जाते ?

आयोजन ही से यदि भोजन मिल जाता तो
कागज पर जोते गये
बोये गये खेतों में
एक बार तो फसलें लहरायी ही होतीं।

जिनकी ओर चलने का शोर सुना जाता है
वे मंजिल थोड़ी बहुत
कहीं तो पास आयी ही होतीं।
लेकिन जाने क्या है
नौ दिन चलकर भी ढाई कोस नहीं जाते हम।
बढ़ा है तो सिर्फ कर्ज–
दवा के साथ-साथ बढ़ता ही गया मर्ज।

अवमूल्यन मुद्रा का कभी नहीं होता है
साख उसकी गिरती है
जिस देश, जाति, शासन की
मुद्रा वह होती है।

इस बार, आओ स्वाधीनता दिवस पर हम,
उन खतरों पर सोचें
जो बाहर से आते नहीं,
साधारणतः दिख पाते नहीं,
लेकिन भीतर ही भीतर खोखला बनाते हैं।
और जिनके मारे राष्ट्र,
रेत की दीवार से अनायास ही ढह जाते हैं।

श्रम करने को उतावली (बेकार) बाहों को
श्रम करने का उपदेश नहीं काम दो ! काम दो !

जो जबान भाषण के सिवा कुछ उपजाती नहीं
उसको आराम दो ! उसको लगाम दो !

यह सत्य समझो तपते खेतों, कारखानों में
होने वाले काम का आयोजन,
वातानुकूलित योजना-भवन में असंभव है।
'यह होना चाहिये', 'वह होना चाहिये'
जैसे तटस्थ चिंतन, संदेशन में असंभव है।

करने को वही कहे जो करके दिखलाये
जो कुछ करने को कहे, करने को आगे आये,
कुछ ऐसे ही गरम वातावरण में बन्धु !

देखा है तकदीरों के साँचे ढला करते हैं
'तुम करो' के बजाय 'आओ हम करें' जहाँ
जीवन का मंत्र बने
देखा है वहीं नये सूर्य निकला करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र-चिन्तन

शांति के साथ ० अशांति की ओर

भारतीय (दक्षिण पंथी) कम्यूनिस्ट पार्टी ने पार्लियामेंट के सामने जो प्रदर्शन किया, वह शुद्ध प्रजातंत्री प्रदर्शन था। उसकी विशेषता उसकी शांति और व्यवस्था थी। कहना चाहिए जनसंघ ने कच्छ-समझौता – विरोधी – प्रदर्शन में शांति और व्यवस्था का जो प्रजातन्त्री आदर्श उपस्थित किया था, कम्यूनिस्ट प्रदर्शन में उसका पालन किया गया। इसके लिए कम्यूनिस्ट पार्टी के नेताओं को बधाई, पर इस प्रदर्शन की विशिष्टता यह शांति न थी। इसकी ऐतिहासिक विशिष्टता थी पार्टी के अध्यक्ष श्री पाद अमृत डांगे का भाषण।

उन्होंने कहा – "हम सरकार को अंतिम बार चेतावनी देने यहां आये हैं कि वह अपनी जनता-विरोधी नीति और इजारेदारी-समर्थक तरीके बदले। अब कोई और प्रदर्शन करने पार्लियामेंट पर नहीं आएँगे और सरकार ने अपने को नहीं बदला, तो उसे बदलने के लिए कम्यूनिस्ट और कोई तरीका अपनाएँगे।"

यह तरीका क्या होगा? इस प्रश्न का साफ उत्तर उन्होंने नहीं दिया, पर कहा—"हमारा लाल झण्डा जब शांति की बात करता है, तो पूरी शांति रहती है। उन्नीस वर्ष से हम शांत हैं, लेकिन लगता है यह सरकार ऐसे बदलने वाली नहीं है।"

जो लोग बारीक इशारों में भविष्य की झाँकी आँकने में रुचि रखते हैं, उनके लिए मंच पर संयुक्त समाजवादी पार्टी के नेता डॉक्टर राम मनोहर लोहिया का बैठना गहरे माने रखता है। दिल्ली के कम्यूनिस्ट प्रदर्शन से दस-बारह दिन पहले संयुक्त समाजवादी पार्टी की उत्तर प्रदेश शाखा के सचिव श्री कप्तान आबिद अली ने सहारनपुर में बोलते हुए कहा था—"उत्तर प्रदेश बन्द में जो पार्टियां हमारे साथ शामिल हुईं, उन में ऐसी भी पार्टियाँ थीं, जिनका अहिंसा में यकीन नहीं है। हमने उनसे अहिंसा की शर्त रखी और उसे उन्होंने माना, पर अहिंसा हमारा धर्म नहीं है। अहिंसा से काम नहीं चलता, तो हम सोचेंगे कि हिंसा को क्यों न अपनायें।"

आने वाले चुनाव को ध्यान में रखते हुए देश के राजनैतिक दलों में जो जोड़ तोड़ हुए हैं, उनकी एक खास उपलब्धि यह है कि डाक्टर लोहिया (और इसका अर्थ है संयुक्त समाजवादी पार्टी) अब कम्यूनिस्टों के निकट आ गए हैं। मेरे पास गणित का एक और एक दो बताने वाला तथ्य नहीं है, पर मेरा मानसिक चिन्तन है कि डा० लोहिया निकट भविष्य के ही किसी हिंसात्मक आंदोलन में वामपंथी और दक्षिणपंथी कम्यूनिस्ट पार्टियों को एक करने की प्रवृत्ति में जुटे हुए हैं।

डाक्टर लोहिया एक महत्वाकांक्षी बहादुर आदमी हैं। उनकी असाधारणता यह है कि उनके पास समाजवादी समाज-व्यवस्था का पूरा चित्र है। वे इस समाज व्यवस्था के निर्माण में जुटना चाहते हैं, पर वे महसूस करते हैं कि निर्माण की मशीनरी पर ऐसे लोगों का कब्जा है, जो वह नहीं कर रहे हैं, जो उन्हें करना चाहिए। उनका यह अहसास कड़वा हो उठता है यह सोचकर कि उनके और सत्ता के बीच की दूरी कम नहीं हो रही है। १९६२ के चुनाव से काफी पहले उत्तर प्रदेश के दौरे में उन्होंने कहा था कि "चुनावों में मुझे कहीं हरियाली नहीं दिखाई देती।" प्रजातंत्री दृष्टि से यह घोर निराशा की स्थिति है। घोर निराशा में कमज़ोर आदमी टूट जाता है, ताकतवर विद्रोही हो उठता है। डाक्टर लोहिया अकेले विद्रोह की शक्ति नहीं रखते, यह वे दिल्ली पटना-दाह की योजना में देख चुके। तो वे विद्रोह के विशेषज्ञ कम्यूनिस्टों के साथ आ खड़े हुए हैं यदि विचार की ये सीढ़ियां सही हैं, तो यह आश्चर्यजनक न होगा यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९६७ के चुनाव शांति से न हो सकें।

तेजा, गंजू, पटनायक

हींग लगे न फिटकड़ी रंग चोखा आए की कहावत को श्री धर्मवीर तेजा ने चरितार्थ कर दिया। उनके पास लाख सवा लाख रुपये मुश्किल से थे, पर बेहद खूबसूरत पत्नी थी और सुन्दर सूरत थी। उन्होंने अपनी जयंती शिपिंग कम्पनी के रजिस्टर्ड होने से भी पहले भारत सरकार से २० करोड़ रुपये कर्ज ले लिया और इस कर्ज के रौब में लाखों रुपये के शेयर भी बना लिए। नेफा के देशद्रोही जनरल कौल को, जिसे २॥ हजार वेतन मिलता था, दस हजार रुपये मासिक पर नौकर रख लिया और इसी तरह कई दूसरे लोगों को भी, जिनकी पहुंच ऊपर तक थी। काम कुछ हुआ नहीं। अब सरकार ने कम्पनी को १५ वर्ष के लिए अपने हाथ में ले लिया है और तेजा को फ्रांस से बुलाकर मुकदमा चलाने की बात मान ली है।

श्री गंजू भारत के अमरीकी दूतावास में जन सम्पर्क अधिकारी थे। सब मिलाकर ४००० रुपये वेतन मिलता था। काम की शिकायत थी तो कोलम्बो उनका तबादला कर दिया गया। उन्होंने इस्तीफा दे दिया और अमरीका में एक कम्पनी सी बना ली। भारत सरकार ने इस कम्पनी को ६२ हजार डालर प्रतिवर्ष पर अमरीका में भारत के प्रचार का काम सौंप दिया। पार्लियामेंट में इस पर खूब हल्ला मचा। हल्ले की बात ही है।

श्री गंजू में जन-सम्पर्क का कोई गुण ही नहीं है। बेहद शराबी और ऐयाश नवाबी दिमाग का आदमी है वह। कच्छ युद्ध के समय जब अमरीका प्रवासी भारतीय विद्यार्थियों ने गंजू से कच्छ के सम्बन्ध में साहित्य मांगा, तो इस बेहया इंसान ने जवाब दिया कि पाकिस्तानी विद्यार्थियों से ले लो. वहां के जनसम्पर्क अधिकारी ने उन लोगों में काफी साहित्य बांटा है। भारतीय विद्यार्थियों ने जब पाकिस्तानी विद्यार्थियों से पूछा, तो जवाब मिला कि लड़ाई शुरू होते ही हमें पढ़ने को अलग और बांटने को अलग साहित्य मिला था। पाकिस्तानी विद्यार्थियों से मिला यह साहित्य ही अब तक भारतीय विद्यार्थियों की जानकारी का श्रोत रहा।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के भारतीय छात्रों ने श्री गंजू को टेलीफोन पर कहा कि वे भारतीय राजदूत के भाषण की व्यवस्था विश्वविद्यालय में कर दें। "राजदूत को ७० मील मोटर में जाना पड़ेगा, वे थक जाएंगे, यह सम्भव नहीं है।" कहकर श्री गंजू ने फोन रख दिया। तब एक शिष्ट मंडल राजदूत से मिला। गरमागरमी के बाद वे तैयार हुए, उनका भाषण हुआ, पर दूसरे दिन सुबह विद्यार्थी श्री गंजू से मिलने गये, तो वे रात में पी शराब के नशे में धुत पड़े सो रहे थे। "अमरीका में बिना टैक्स की शराब पीने को मिलती है, इसी से हम तो यहां हैं" यह उनका रोज का वचन रहा है। ऐसा आदमी क्या जनसम्पर्क करेगा ?

पटनायक याने उड़ीसा के भूतपूर्व मन्त्री श्री बीजू पटनायक। कामराज योजना में मुख्य मंत्री पद से हटाये गये थे और भ्रष्टाचार के विराट लांछनों से सदा उनका नाम चर्चाओं में जुड़ा रहा है। ये विराट लांछन सचमुच विराट हैं। नेफा में चीन से लड़ रही फौजों के लिए हवाई जहाज से गिराने के लिए दिए कम्बल कलकत्ता में बिके और वाल्कट कांड जैसे कांडों में भी उनकी कानाफूसी होती रही है। ये बातें दुश्मनों की उड़ाई हो सकती हैं, पर कुछ मामले ऐसे हैं जिनकी सरकार द्वारा ही जांच हो रही है। जनता ने फटी आंखों से यह समाचार दैनिक पत्रों में पढ़ा है कि "नेहरूवाद के अचेले रक्षक" कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज ने उड़ीसा के आम चुनावों की पूरी जिम्मेदारी श्री बीजू पटनायक को सौंप दी है। इनके साथ सरकारी रियायतों पर भी पार्लियामेंट में खूब हल्ला मचा।

सरकार के मंत्रियों ने सभी आक्षेपों पर अपने को निर्दोष बताया और जनता में सभी ने उन्हें दोषी महसूस किया, यह सारी बहसों का सार है। जनता में जो बौद्धिक वर्ग है, उसने पार्लियामैंट के इस अधिवेशन में जो बहसें हुई, उनसे यह सीखा है कि हकूमत कांग्रेस के हाथ में है, पर मंच अब विरोधी दलों के हाथ में जा रहा है। कांग्रेस के मंत्री रोज रोज आत्महीन होते जा रहे हैं और वे बोलते हैं तो इस तरह बोलते हैं कि जैसे जो कुछ वे कह रहे हैं, उसमें स्वयं उनका ही विश्वास न हो। फलस्वरूप वे नेतृत्व की—जनता के पथ प्रदर्शन की क्षमता खो रहे हैं। वह स्थिति उनके लिए चिन्तनीय होनी चाहिए।

श्री सुब्रह्मण्यम्

तेजा, गंजू, पटनायक के साथ पार्लियामेंट में जिस आदमी की सबसे ज्यादा चर्चा हुई वह है खाद्यमंत्री श्रीसुब्रह्मण्यम्। वे एक योग्य और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेहनती आदमी हैं, पर नेता और किसी विभाग के प्रधान होने में अयोग्य हैं। उनमें ज़िद है, धृष्टता है और बात को बिगड़ने से पहले सभालने की शालीनता नहीं है। उनके राजनैतिक जीवन की अंत्येष्टि जयपुर कांग्रेस में ही गेहूँ क्षेत्रों के प्रश्न पर हो जाती, यदि श्री कामराज उन्हें अन्तिम घड़ियों में न बचा लेते: इस बचाव से श्री सुब्रह्मण्यम् ने पाठ नहीं पढ़ा, यह इस बार की बहस में दिखाई दिया।

श्री सुब्रह्मण्यम् खाद्यमंत्री बनने से पहले इस्पात मन्त्री थे। तब उन्होंने अमीन चन्द प्यारेलाल नाम की फर्म को उसकी भूलों के कारण काली सूची में लिख दिया कि अब उसे सरकारी ठेके न मिलें, पर दो दिन बाद ही उस आदेश को स्वयं बदल दिया और उसे बेहद काम दे दिया। पार्लियामेंट की लोक लेखा समिति (हिसाब किताब देखने वाली संसद सदस्यों की कमेटी) ने इसे अपनी रिपोर्ट में अनुचित बताया।

पार्लियामेंट में इस रिपोर्ट की चर्चा हुई। भड़ककर श्री सुब्रह्मण्यम् ने कहा, मेरा इसमें कोई सम्बन्ध नहीं है, पर उनकी भड़क जल्दी ही झटक दी गई और जिम्मेदारी उन्हें माननी पड़ी। उचित था कि वे त्याग पत्र दे देते और उचित था कि प्रधान मंत्री इन्दिरा जी त्यागपत्र ले लेतीं, पर अपने पृष्ठ पोषक श्री कामराज का उन्हें भरोसा था और इन्दिरा जी को लिहाज़ था, इस लिए वे जमे रहे कुर्सी पर, पर बहस का वेग तकड़ा था, तो इन्दिरा जी ने उनके मामले पर लोकलेखा समिति से उनके केस पर, दुबारा विचार करने की प्रार्थना की। श्री सुब्रह्मण्यम् ने अपनी बात समिति के सामने रखी। उनका कहना था कि अमीनचन्द प्यारेलाल फर्म के प्रतिनिधि श्री जीतपाल ने क्षमा-याचना की, इसलिए मैंने अपना आदेश बदला।

लोकलेखा समिति इस से संतुष्ट नहीं हुई और उसने फिर उन्हें दुबारा दोषी घोषित किया। इस पर फिर हल्ला मचा और उनके त्यागपत्र की मांग गूंजी, पर उन्होंने त्यागपत्र नहीं दिया। प्रधान मन्त्री ने तब एक समिति नियुक्त कर दी, जो जांचकर रिपोर्ट देगी कि वे दोषी हैं या नहीं। इस रिपोर्ट के बाद ही उनके सम्बन्ध में फैसला होगा। बात वही है कि श्री सुब्रह्मण्यम् को सहारा है और इन्दिरा जी दबाव में हैं, पर इन्दिरा जी बराबर उस दबाव में स्वतंत्र मार्ग निकालती रही हैं, इसलिए यदि इस समिति की रिपोर्ट श्री सुब्रह्मण्यम् के विरोध में हुई, तो उस दबाव को तोड़कर त्यागपत्र ले लेंगी, पर किसी तरह वह पक्ष में हुई, तो मंत्री मण्डल में उनका विभाग बदलेंगी। यह सब न हुआ तो फिर ऐसा लगता है कि अगले चुनाव में जनता उनके भाग्य का फैसला करेगी। इतना तो निश्चय है कि चुनाव के बाद के केन्द्रीय मंत्री मण्डल में न होंगे। प्रजातन्त्र का तकाजा था कि वे त्यागपत्र दें, पर भारत का प्रजातन्त्र उनके हाथ में हैं जो स्वयं प्रजातंत्री नहीं हैं, यह इस घटना ने साफ-साफ कहा।

बहस का कड़वा फल

तेजा, गंजू, पटनायक, रामरतन गुप्त (जिन पर ३१ लाख रुपये इन्कम टैक्स छोड़ दिया गया) और सुब्रह्मण्यम् के सम्बन्ध में जो बहस हुई, उसका कड़वा फल यह है कि अभी तक अवाम की धारणा थी कि देश के पूंजी पति भ्रष्ट हैं, राजनीतिज्ञ भ्रष्ट हैं, पर इस बहस के बाद अवाम ने सोचा है कि दोनों एक भी है और मिलकर जनता को लूटते हैं। कहूं, इस बहस में पूंजी-पति और राजनीतिज्ञ दोनों की प्रतिष्ठा को गहरा घाटा हुआ है और हिंसात्मक आन्दोलन की सम्भावना बढ़ी है।

महत्वपूर्ण बात, लेकिन—

प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने इस बहस में एक दिन गरम होकर कहा कि जो लोग बढ़ा-चढ़ा कर भ्रष्टाचार की चर्चा करते हैं, वे विदेशों के सामने देश की पूरी तस्वीर पेश करते हैं। अपने पिता के जीवन काल में जब वे अमरीका गईं, तो वहां से लौटकर उन्होंने बताया कि विदेशों के राज नेता पूछते हैं कि जब आपके देश में इतना भ्रष्टाचार है, तो उसे सहायता क्यों दी जाए?

बात महत्वपूर्ण है, लेकिन विरोधियों ने भ्रष्टाचार के जो नारे गुंजाये, उसकी जो रंगीन तस्वीरें पेश कीं, हम उनकी निन्दा कर सकते हैं, पर सरकार के मंत्रियों ने उत्तर में जो प्रभावहीन, खोये-खोये और अटपटे बयान उचारे, उन्होंने भी तो उन तस्वीरों के रंगों पर बारनिश ही की, इसका क्या उपाय है? सौ बातों की एक बात है कि यदि कांग्रेस अपने में अब भी परिवर्तन नहीं करती, तो १९६७ के चुनाव में खंडित विजय ही उसके सौभाग्य की अंतिम सीढ़ी सिद्ध होगी।

१५ अगस्त का महापाप

१५ अगस्त १९६६ को लाल-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किले से प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने जो भाषण दिया, उसमें योजना पूर्वक स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री की उपेक्षा की गई–कहीं भी उनका नाम नहीं लिया गया। क्या यह १५ अगस्त १९६६ का महापाप नहीं है? बाद का समाचार है कि १५ अगस्त के किसी भी समारोह का निमन्त्रण श्रीमती ललिता शास्त्री को नहीं दिया गया।

यह सब क्या है? इसे हम मनोविज्ञान के चश्मे से देखें। पंडित जवाहर लाल नेहरू का स्वभाव था कि सिवाय अपने किसी को महत्व मत दो। उनकी पुत्री भी उसी स्वभाव का शिकार है। यहाँ तक कि उनके पिछले महीनों का गहरा विश्लेषण करें तो हम देखेंगे कि उनमें तेज अन्तर्द्वन्द है कि वे अपने पिता को कितना महत्व दें? कितना महत्व न दें?

राजनीतिज्ञ बुद्धि जीवी होते हैं और वे सोचते हैं कि हम दूसरों को उतना महत्व दें, जितने महत्व से हमारा महत्व कम न हो। नेहरूजी की मित्रता भी राजनैतिक होती थी। वे बेहद सहृदय मनुष्य थे, फिर भी वे अमरीका गए, तो मैडम चाङ काई शेक अस्पताल में बीमार पड़ी थीं, पर चीन के शासकों को बुरा लगेगा, इस राजनैतिक विचार से वे उनसे मिलने नहीं गए। ये वही मैडम थीं, भारत में पलपल जिनके साथ रहना नेहरू जी के लिए अमृत था।

इन्दिरा जी के लिए भी उनके पूर्ववर्ती प्रधान मंत्री एक समस्या हैं। नेहरू जी के बाद जब वे प्रधान मन्त्री बने, तो भारत का सार्वजनिक जीवन बिखरा हुआ था। शास्त्री जी ने अपने वीर नेतृत्व से उसे संगठित कर दिया था। उनके जाने के बाद वह फिर बिखर गया है। इस स्थिति में इन्दिरा जी किन शब्दों में उनका स्मरण करें? उनके पिता उनके लिए वरदान हैं, क्योंकि उनका राजनैतिक कैरियर ही इन्दिरा जी का आधार है, पर उन के लिए अभिशाप भी हैं, क्योंकि उनकी कमियों कमजोरियों के लिए इंदिरा जी से जवाब तलब किया जाता है। एक फ्रांसीसी पत्र की इन्टरव्यू में उन्होंने कहा है–मुझसे पहले लोगों की कमियों के लिए मेरी आलोचना क्यों की जाती है?

एक और पहलू भी है इस बात का। नेहरू जी की कुछ नीतियों का गुणगान इन्दिरा जी को कुछ अमरीका से दूर करता है, कुछ रूस से। वे क्या करें? कुछ दिन पहले 'ब्लिट्ज' ने श्री कामराज को "नेहरू वाद के अकेले समर्थक" कहा था, यानी इन्दिरा जी ने भी नेहरूवाद से हाथ खींच लिया था. पर इन्दिरा जी ने 'ब्लिट्ज' से कहा है कि भारत नेहरू जीके ही कारण जिन्दा है।' यह सब राजनीति की फुटबाल का उछाल गिराव है। फिर भी भारत की संस्कृति का तकाजा है कि हम शुभ अवसरों पर अपने बड़ों का सादर स्मरण करें—यह श्राद्ध का देश है, हम इसे न भूलें।

इधर या उधर?

दो बातें एक साथ कही जा रही हैं। पहली यह कि बैंकों, व्यापारों, उद्योगों का राष्ट्रीयकरण करो। दूसरी यह कि राष्ट्रीयकरण किये हुये सरकारी उद्योगों में अव्यवस्था है, फिजूल खर्ची है, लाभदायकता की भयंकर कमी है। जरूरत है कि देश में ऊँचे स्तर की आलोचना का विकास हो जो जनता को प्रगति की सही तस्वीर दे सकें। आज की स्थिति यह है कि राष्ट्र के महत्वपूर्ण प्रश्नों पर पाठकों और श्रोताओं की कोई राय ही नहीं बन पाती और विचारशीलता बढ़ती जाती है।

हमारी सीमाएं

अप्रैल १९६५ के 'नया जीवन' में—पाकिस्तानी आक्रमण से छः मास पहले—मैंने लिखा था–"चीन राजनैतिक और सैनिक दृष्टि से अत्यंत चालाक देश है। अब तो वह बहुत ताकतवर हो गया है, पर १९५० में ही उसने उत्तरी और दक्षिणी कोरिया की लड़ाई में अपने रणकौशल का ऐसा परिचय दिया था कि एक बार तो अमरीकी फौजों को पीछे हटाते-हटाते इस स्थिति में पहुंचा दिया था कि वे जमी रहें या पीछे हटकर जापान में शरण लें। फिर अमरीकी सिपाहियों को हर तरह की सुविधायें प्राप्त थीं और चीनी सिपाहियों को जो घोर ठंडा पहाड़ी क्षेत्र रातोंरात पैदल पार करके आना पड़ता था, वह सैनिक साहस और कुशलता का एक आश्चर्य ही था।

छिपते-छिपते आगे बढ़ने की कला में उनका यह चमत्कार ही था कि अमरीकी हवाई जहाजों की दूरबीन भी बेकार रहती थीं। आश्चर्य और चमत्कार का भंडा फोड इस सूचना से होता है कि तीन लाख से अधिक चीनी कोरिया में चुपचाप शस्त्र सहित पहुंच गये थे और अमरीका के गुप्तचरों को इस की खबर तो खबर आभास भी नहीं था। × × ×

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके विरुद्ध चीन के गुप्तचर जाने कैसे अमरीकी फौजियों की हर गतिविधि का पता चला लाते थे और पहले से ही उनका जवाब तैयार रखते थे। मतलब यह है कि छापामार युद्ध के झपट्टू तरीकों में वे बेजोड़ थे।"

इसी लेख में एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया गया था—"क्या हमारी सरहदें इतनी सुरक्षित हैं कि यदि युद्ध हो, तो चीनी सैनिक उन्हें पार कर कश्मीर में या दूसरे क्षेत्रों में न घुस सकेंगे? क्या हमारा बदनाम गुप्तचर विभाग अब अच्छे हाथों में है?"

चीनी पद्धति पर प्रशिक्षित पाकिस्तानी घुसपैठिये १९६५ में कश्मीर में घुसे और हम उन्हें नहीं रोक सके, यह बात सबके सामने है नागा और मिजो लोग भारत में तोड़ फोड़ कर हमारी फौजों का दबाव पड़ने पर बर्मा और पाकिस्तान में ऐसी ही सुगमता से चले जाते हैं, जैसे कि नागरिक शहर के एक मुहल्ले से दूसरे मुहल्ले में और वहां से छापामार युद्ध का प्रशिक्षण नये शस्त्र लेकर ऐसे ही लौट आते हैं, जैसे बाजार से सब्जी। ताजा समाचार है कि कश्मीर में नये घुसपैठिये आये हैं और उन्होंने लूट एवं आगजनी की है। पाकिस्तान में चीनियों द्वारा छापामार युद्ध के प्रशिक्षण की बात तो अब हमारे शासक भी स्वीकार कर चुके हैं और यह भी साफ है कि चीन-पाकिस्तान के मनसूबे क्या हैं?

इस हालत में विरोधियों के मनसूबों को धूल में मिलाने के लिए सब से जरूरी काम है सीमाओं की सुरक्षा। धर्मशालाओं और सरायों के दरवाजे भी किसी समय बन्द हो जाते हैं, पर हमारी सरहदों-सीमाओं के द्वार कभी बन्द ही नहीं होते। अपनी सरकार पर क्रोध आता है यह सोचकर कि तिब्बत में जबकि कोई तिब्बती नहीं रहा, सब चीनी हो गए हैं, तिब्बती शरणार्थी भूतान-सिक्किम में चले आ रहे हैं, जबकि यह जानने का कोई साधन नहीं कि आने वालों में कितने पीड़ित हैं और कितने सैनिक-तोड़फोड़िये-जासूस। साथ ही सीमाओं के ग्रामों में पाकिस्तानियों द्वारा जो लूटपाट रोज होती रहती है वह भी पाकिस्तानी योजनाओं का ही हिस्सा है, साधारण घटना नहीं।

पाकिस्तानी अवैध प्रवासियों के सम्बन्ध में भी सरकारी नीति ढीली है और खतरों के कान खजूरे पैदा करती है। विदेशी मिशनरी देश के लिए दुश्मन सिद्ध हुए हैं। उन्हें तुरन्त स्काट के रास्ते भेजना चाहिए। देश के भीतर जो पंचमाँगी हैं. उन्हें भी काफी स्वतंत्रता प्राप्त है। उन्हें कसा जाना चाहिए। प्रजातन्त्र के नाम पर आन्दोलनों, हड़तालों और अनशनों की जो बाढ़ आई है, उसे रोकना आवश्यक है और इतना ही महत्वपूर्ण है भावों में उतार-चढ़ाव का रोकना, जिससे जनता स्थिरता अनुभव करे। सरकार का हर काम एक महकमा बन गया है और अफसरों का काम, काम करना नहीं, महकमा चलाना हो गया है। फलस्वरूप पूरा ढांचा ही चरमरा रहा है। इन्दिरा जी ने इधर अपनी नेतृत्व प्रतिभा का बहुत ऊंचा परिचय दिया है और उनकी लोकप्रियता बढ़ी है, पर उनके नेतृत्व की सफलता की कसौटी यह होगी कि वे पुरानी सड़ी हुई गृहनीति को नया रूप दे सकती हैं या नहीं। इस कसौटी पर खरी उतर कर ही वे ताशकन्द के बाद वाला विजय-अध्याय लिखने का श्रेय पा सकेंगी। हम सब उनकी सफलता चाहें।

आज के राष्ट्रीय अपराध

'सम्पदा' के संपादक श्री कृष्ण चन्द्र विद्यालंकार ने आज की परिस्थिति के लिए एक महत्वपूर्ण सुझाव दिया है कि "आज आवश्यकता यह है कि शासन अधिक दृढ़ और स्थिर हो। शासकों और सार्वजनिक नेताओं को देश में एक व्यापक आन्दोलन करना चाहिए और ऐसे सब कार्यों को राष्ट्र के प्रति भीषण अपराध घोषित कर देना चाहिए, जिन से देश की आर्थिक व्यवस्था, सुरक्षा और स्थिरता को खतरा पहुंचे। अपराध केवल जनता नहीं करती, सरकारी अधिकारी और मंत्री तक भी ऐसे अपराधों के लिए उत्तरदायी होते हैं।

इतिहास के विद्यार्थी जानते हैं, कि आज से ४०-४५ वर्ष पूर्व इटली में भी अराजकता का दौर दौरा चला था। सरकारी कानूनों की कोई प्रतिष्ठा नहीं रही थी। हड़तालों और प्रदर्शनों के कारण इटली का उद्योग व्यापार ठप्प हो रहा था और इस कारण देश की प्रतिष्ठा भी खतरे में पड़ गई थी। इस विकट स्थिति को देखकर ही वहाँ मुसोलिनी जैसे उग्र राष्ट्रवादी फासिस्ट नेता को बल ग्रहण करने और सब अधिकार अपने हाथ में लेकर भी जनता में लोकप्रिय बनने का अवसर मिल गया। हिटलर भी ऐसी अरा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जक स्थितियों में ही आतंकवादी शासन स्थापित करके भी जर्मन जनता का आराध्य बन गया था। सामान्य स्थितियों में न मुसोलिनी सफल होता और न हिटलर। यदि हमें भी भारत में उसकी पुनरावृत्ति नहीं होने देनी है, तो एक प्रबल जनव्यापी आन्दोलन करना पड़ेगा और देश घाती प्रवृत्तियों को राष्ट्र के प्रति भीषण अपराध घोषित करना पड़ेगा। संकेत के लिए हम कुछ अपराधों का उल्लेख यहाँ करना चाहते हैं।

१. जीवनोपयोगी वस्तुओं का मूल्य बढ़ाने वाले सभी तत्वों को राष्ट्र का अपराधी घोषित किया जाय। केवल व्यापारी, उत्पादक या दुकानदार ही नहीं, वे सब सरकारी अधिकारी, सरकारी संस्थाएं – केन्द्र, राज्य या स्थानीय—भी किसी तरह कोई ऐसा कर या नियंत्रण न लगा सकें, जिससे किसी वस्तु या सेवा के मूल्यों में थोड़ी बहुत भी वृद्धि हो। अपने बहुमत का भी सरकार कोई दुरुपयोग न कर सके। बिक्री कर, उत्पादन कर अथवा तटकर आदि सभी प्रकार के कर इनमें सम्मिलित हैं। घाटे की अर्थ-व्यवस्था को गैर काननी करार देना चाहिए।

२. वेतन वृद्धि, बोनस, काम के घण्टे, आदि कारणों से कोई भी श्रमिक कर्मचारी, अध्यापक या क्लर्क हिंसात्मक प्रदर्शन या हड़ताल करें तो वे अपराधी घोषित किये जाएं। कम से कम आगामी ३-४ वर्षों के लिए ऐसे अपराध पर कठोर दण्ड व्यवस्था की जाए। अच्छा हो कि यह निर्णय श्रमिक या कर्मचारी संघ स्वेच्छापूर्वक करें। सामान्य वेतनवृद्धि दो वर्षों के लिए स्थगित हो और ४-५०० रु० से अधिक वेतन वालों के लिए ५ वर्ष तक।

३. सरकार को ऐसी सब योजनाएँ स्थगित कर देनी चाहिएँ, जिन स व्यय बढ़ता हो और जिनके बिना भी काम चल सकता हो उदाहरण के तौर पर दिल्ली में राजधानी परिषद की स्थापना। ४ वर्ष तक यदि यह कौन्सिल नहीं बनेगी तो दिल्ली निवासियों पर संकट का कोई पहाड़ नहीं टूट पड़ेगा। इस परिषद के संगठन के कारण १५-२० लाख रुपया या अधिक सरकार पर अर्थात गरीब कर दाताओं पर बोझ बढ़ जाएगा। इसी तरह टेलीविजन तथा रेडियो के नये कार्यक्रम भी स्थगित किये जा सकते हैं।

साराँश यह है कि हमें अपव्यय को बचाना चाहिए। कम जरूरी खर्चे रोक देने चाहिएं और कोई भी ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए, जिस से मूल्यों में किसी भी प्रकार को वृद्धि हो। ये सब आज राष्ट्रीय अपराध हैं। हम १५ वर्षों से विकास योजनायें बनाते आ रहे हैं। इन योजनाओं का एक ही अर्थ है कि अधिक आवश्यक कार्यों को प्राथमिकता देना और कम आवश्यक कार्यों को साधनों के अनुसार ही क्रम देना। आज इस प्राथमिकता के सिद्धाँत पर और भी अधिक कठोरता से अमल की जरूरत है। इस प्राथमिकता पर ध्यान न देना आज राष्ट्रीय अपराध है।"

स्वर्ण नियन्त्रण

सारे देश को जिसकी इन्तजार थी, स्वर्ण नियन्त्रण पर सरकार का वह फैसला श्रीमती इन्दिरा गांधी ने घोषित कर दिया। असली सोना २४ कैरट का होता है। स्वर्ण नियन्त्रण के अनुसार यह पाबंदी थी कि १४ कैरट से ज्यादा का जेवर नहीं बन सकता। १९६१ में जब यह नियम बना, तो सुनार जाति की मानसिक रूप से वही दशा हो गई, जो हिटलर के समय जर्मनी में यहूदी जाति की हो गई थी। समझा गया था कि जो मारीच (स्वर्ण मृग) राम का तीर खाकर भी बच गया था, वह मुरार जी की गदा से समाप्त हो जायगा-देश में सोने का व्यवहार नहीं रहेगा, पर मारीच बहुत सख्तजान निकला और गदा से भी नहीं मरा-चोरी चोरी इतना सोना घड़ा गया कि कुछ न पूछिए। अब शुद्ध सोने के जेवर पर से पाबंदी हटा ली गई है और सुनार बन्धु खुले आम अपना काम कर सकते हैं।

सामूहिक खेती और स्वर्ण नियन्त्रण स्वतन्त्रता के १९ वर्षों की महत्वपूर्ण घटनाएं हैं। न जनता ने सामूहिक खेती को स्वीकार किया, न स्वर्ण नियन्त्रण को ही और यह प्रजातन्त्र की विजय है कि सरकार ने दोनों में अपने को ही पीछे हटा लिया। स्वर्ण नियन्त्रण ढीला करने के विरुद्ध विशेषज्ञों की समिति ने रिपोर्ट दी थी, पर श्रीमती इन्दिरा ने लोकमत का सम्मान करते हुए स्वतंत्र निर्णय लिया। निश्चय ही इससे इन्दिरा जी के नेतृत्व की लोकप्रियता बढ़ी और वे ऊँची हुई और पता चला कि वे समस्याओं को उलझाना नहीं, सुलझाना चाहती हैं जानती हैं। क्या ही अच्छा हो कि सरकार इससे यह पाठ पढ़ले कि अच्छी सरकार की कसौटी जनता के मन को तुरन्त समझ लेना है, घिस घिस कर मान

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेना नहीं। जो निर्णय तीन महीने में हो जाना चाहिए था, वह तीन वर्ष में हुआ, यह कोई शोभा की बात नहीं है।

मूल प्रश्न ज्यों का त्यों

इस घोषणा के बाद भी मूल प्रश्न ज्यों का त्यों है कि चोरी से आने वाला सोना कैसे बन्द हो। विशेषज्ञों की राय है कि लगभग एक अरब रुपये का सोना चोरी से आता है। तस्कर व्यापार इस समय देश का सबसे बड़ा व्यापार बन गया है। सरकार सोने के ज़ेवर रखने की सीमा बनाकर और स्वर्ण शोधन एवं स्वर्ण-आयात के व्यापार को अपने हाथ में लेकर इस तस्कर व्यापार को बन्द करना चाहती है। कौन है जो उसकी सफलता न चाहे!

कोई रास्ता नहीं

श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा है कि एक नारे के तौर पर हमने समाजवाद को नहीं अपनाया, बल्कि इसलिए कि समाजवाद के सिवा और कोई रास्ता ही नहीं है। बात तो ठीक है, पर प्रश्न यह है कि सरकारी क्षेत्र में कुछ कारखाने बना लेना ही तो समाजवाद नहीं है?

पूंजीवाद व्यक्ति को अधिकार देता है कि वह अपने साधनों से साधनहीन व्यक्तियों का शोषण कर अपनी पूंजी को और बढ़ाये। क्या हमारे देश में पूंजी का यह अधिकार खंडित हुआ?

समाजवाद साधनों पर व्यक्ति का नहीं, समाज का स्वामित्व घोषित करता है और उन साधनों का समान बटवारा कर साधनहीनों को भी साधन देता है। क्या हमारे देश में साधनहीनों को साधन मिले?

उत्तर के लिए आंकड़ों में उलझने की जरूरत नहीं अपने चारों ओर आँख खोलकर देखने की जरूरत है। क्या दिखाई देता है? धनवालों की कोठियां धड़ा धड़ बन रही हैं और हालत यह है कि पचास हजार रुपये की लागत का मकान मामूली माना जाता है। इसके विरुद्ध अवाड़ी काँग्रेस में समाजवाद की घोषणा होने के बाद फुटपाथों पर सोने वालों की संख्या दुगनी हो गई है।

प्रधानमंत्री की बात ठीक है कि समाजवाद के सिवा कोई रास्ता नहीं है, पर समाज का प्रश्न तो यह है कि समाजवाद का भी कोई रास्ता है या नहीं? यह प्रश्न महत्वपूर्ण है; क्योंकि अधूरा समाजवाद समाज को प्रजातन्त्र की गोद से छीन कर अधिनायकता के द्वार जा टिकाता है।

उन्होंने कहा–

राष्ट्रीय एकता-सम्मेलन का उद्घाटन करते हुये काँग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज ने कहा—"आजादी का तभी कोई मतलब है, जबकि हम उन लोगों के स्तर को उठायें, जिनके पास रोटी नहीं है। अगर पिछड़े हुओं को नहीं उठाते, तो कुछ भी नहीं करते। आजादी को बचाना हरेक भारतवासी का कर्त्तव्य है, पर मैं आपको बताऊँ कि आजादी को बनाए रखने का मतलब आम आदमी को ऊपर उठाना है।"

सम्मेलन के अध्यक्ष श्री जगजीवन राम ने तो अधूरे समाजवाद को उधेड़कर ही रख दिया—"लोग यहाँ भावनात्मक एकता की बात करते हैं, पर महलों में रहने वालों और झोंपड़ी में रहने वालों की भावना एक होती है यह भावनात्मक एकता का मज़ाकभर है। समाजवाद हमारे यहाँ अभी एक कल्पना मात्र है। वास्तव में हम आज भी राजशाही की भावनाओं में ग्रस्त हैं। मैं चेतावनी देना चाहता हूं कि जब जनता के सब्र का प्याला टूट जाएगा, तो शोषण को पोषित करने वाली मजबूत से मज़बूत दीवार भी नहीं रह सकेगी। मनुष्य के मनुष्य बने रहने में जो बाधायें हैं, उन्हें दूर करना चाहिए।"

और इसी सम्मेलन में श्री गुलजारी लाल नन्दा गृहमन्त्री ने कहा—"सिर्फ कहते रहने से समाजवाद नहीं आएगा। मैं कहता हूं कि संविधान द्वारा लाया गया समाजवाद अधूरा है। अगर किसी के पास रोटी नहीं है, तो लोकतंत्र उसके लिए कोई माने नहीं रखता। समाजवाद और लोकतंत्र आपस में जुड़े हुये हैं जो भी आर्थिक या सामाजिक क्रांति लानी है, वह अगर जल्दी न लाई गई, तो बहुत बड़े खतरे पैदा हो सकते हैं।

देश की परिस्थितियाँ नया संविधान चाहती हैं, जो देश को नये ढंग का शासन दे सके और व्यक्ति के सम्मान को सुरक्षित रखते हुये भी उसके वे दाँत तोड़ सके, जो खुद मोटा होने के लिए समाज को खाने के लिए तैयार रहते हैं। क्या वर्तमान नेतृत्व यह कर सकेगा? ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुम्बन और चाबुक

श्री जगदीश चावला

●

यह बेशर्म पीढ़ी

माँ बाप से कभी सुना करते थे कि 'लाज' नारी का और 'परिश्रम' मर्द का आभूषण होता है। पहले जीवन का अर्थ मनुष्य की शालीनता से आँका जाता था, लेकिन अब जीवन के मायने बनते जा रहे हैं—मनुष्य में बढ़ती हुई बेशर्मी !

माडर्नाइज़ेशन (आधुनिकीकरण) के नाम पर आज की पीढ़ी बाहर से जितनी दिलकश और हसीन नज़र आती है, अन्दर से उसका रूप उतना ही भद्दा और बदसूरत बनता चला जा रहा है। इस पीढ़ी का यह रंग देखना हो, तो बड़े-बड़े होटलों में देखिए, जहाँ आर्केस्ट्रा की धुनों में इसका सैक्स थिरकन लेता है। नाइट क्लबों में जाकर झाँकिए जहाँ घर की चार दीवारी में रहने वाली कुँवारी लाजवन्तियाँ इन्टरनेशनल बनी फिरती हैं।

जुहू और चौपाटी की रेत पर देखिए, जहाँ कोठों और मुजरों की महफिल से उठ कर आने वाली सामन्ती विलास की प्यास हविस के सूखे होंठ लिये भटकती फिरती है।

नीली पीली छतरियों के नीचे थोड़े-थोड़े फासलों पर अलसाई बाहों के घेरों में बन्दी जोड़ों को जब मैं देखता हूँ, तो बस देखता रह जाता हूँ कि 'सन बाथ' के नाम पर जिस्म पर केवल एक चोली और एक अन्डरवियर अटकाये इनका सारा शरीर इनके नंगेपन की नुमाइश सजाये लोगों की कामुकता को तीव्र कर रहा है।

पास से गुज़रने वाले राहगीरों को अन्धा समझ कर जब ये जोड़े चहक उठते हैं, तो विवाह से पूर्व सहवास का अनुभव संजोने वाले इन शेखचिल्ली के अनुगामियों और बीटल्स के नकलचियों को देख कर एक ही बात मेरे मन में जन्म लेती है कि रेत पर मचलनी यह बेशर्म पीढ़ी सामाजिक व्यवस्था और शालीनता के बैरियर तोड़ कर लिफाफिया बन रही है और समाज में भी लिफाफियापन लाना इसका क्रम होगया है।

राष्ट्र नायकों के जूलूस

प्रजातन्त्र में प्रचारतन्त्र का बोलबाला इसलिए अधिक रहता है कि प्रचार के माध्यम से जनता किसी भी अभिव्यक्ति को सहज ही समझ सकती है, लेकिन प्रचारतन्त्र की तह में जो कुछ चल रहा है उसका तो बाबा आदम ही निराला दीखता है। लॅक्स साबुन की टिकिया हो या सेरिडॉन की गोली। हीरे की दुकान हो या जलजीरे की बोतल; सभी पर सिने-अभिनेत्रियों का अधिकार है, जो अपनी मुस्कुराती मुद्रा में कहती है कि "लॅक्स साबुन ही मेरे सौन्दर्य का राज़ है।" भले ही इसको एक टिकिया खरीदने में मामूली आदमी का वज़न ही कम हो जाए।

'अमुक दुकान के हीरे और अमुक कम्पनी का जलजीरा व्यवहार कर मेरे सौंदर्य में निखार आ जाता है।'—आदि आदि !

सिनेमा अभिनेत्रियों को तो छोड़िए। ये कम्पनियों वाले अपने राष्ट्र-नायकों को भी नहीं बख्शते। वो देखिये—'शिवाजी छाप बीड़ी!' तलवार की नोक से देश का इतिहास लिखने वाले शिवाजी आज बीड़ी के बन्डलों पर किस शान से चिपके हैं—है न कमाल ? आगे देखिए—'गुरू नानक बूट हाउस'। और यह है 'नूरजहाँ नूरानी तेल' यानी इस तेल को अपने सिर में डालिए और मलिका-ए-हिन्दोस्तान बनिये। अरे, ये कोने में क्या पड़ा है ? वाह वाह ! 'इन्दिरा फ़ेस पाउडर' यानी इन्दिरा जी की तरह प्रियदर्शिनी बनने के लिए अलादीन का चिराग़।

इस तरह प्रचार के नाम पर राष्ट्र-नायकों के जुलूस देख कर सोचता हूँ कि नायक बनने की जगह नागरिक ही बना रहूँ तो अच्छा है। पता नहीं नायक बनने पर ये कम्पनियों वाले किस समय मेरे नाम का लाभ उठा कर मुझे भी किसी हल्दी की बोरी में बंद कर दें और ऊपर से उसका मुँह सींकर छाप दें—'जगदीश छाप असली हल्दी।' ★

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदमी के लिए काम नहीं; काम के लिए आदमी नहीं !

● कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

"बाबूजी, थर्ड डिवीजन का मतलब है जीवन भर के लिए फेल !"

उस दिन श्री देवेन्द्र दीपक आए तो पता चला कि वे इंटर कालेज की दो वर्ष पुरानी अध्यापकी छोड़ कर फिर विद्यार्थी बन गए हैं। सुनकर अजीब-सा लगा तो कहा—लगा-लगाया काम क्यों छोड़ दिया, फिर जगह भी अच्छी थी। सुनकर दीपक जी बोले, "बाबूजी, थर्ड डिवीजन का मतलब है जीवन भर के लिए फेल और फेल होकर जीना तो मेरे बस का नहीं है। एक साल के लिए फेल होना ही मुसीबत है, फिर जीवन भर के लिए फेल !"

दीपक जी ने जब हिन्दी एम. ए. के दूसरे वर्ष की परीक्षा दी, तो वे ६१ दिन लम्बे टाइफाइड से उठे ही उठे थे। बेहद कमजोर और टूटे-टूटे। वे परीक्षा नहीं देना चाहते थे, पर पिता जी के आग्रह से जैसे-तैसे पर्चे कर आए थे और थर्ड डिवीजन में पास हो गए थे। जिस दिन उन का परिणाम निकला, पिता ने प्रसन्न होकर कहा था, "तू यों ही हिम्मत हार रहा था। देख, पास हो गया या नहीं ? मेरी बात न मानता, तो बेकार एक साल खराब होता।"

ठीक ही थी उनकी बात कि दीपक जी का एक साल खराब होने से बच गया था, पर ठीक ही थी दीपक जी की भी बात कि उनकी जिन्दगी खराब हो गई थी, क्योंकि विश्वविद्यालय तो दूर, उनके लिए अब किसी डिग्री कालेज में भी स्थान पाना संभव न था। वे थर्ड डिवीजन वाले जो थे ! उन्होंने साहस किया, दो वर्ष नौकरी कर फिर विद्यार्थी बने और दूसरे विषय से प्रथम श्रेणी में फर्स्ट डिवीजन में एम. ए. कर लिया। अब राजकीय डिग्री कालेज में सम्मान के साथ प्राध्यापक हैं और आगे बढ़ने के सब द्वार खुले हुए हैं उनके लिए।

दीपक जी की बात के कुछ दिन बाद ही एक मित्र मेरे पास आए। उनके पुत्र ने बी. एस-सी. पास किया था और वे उसे इंजीनियरिंग में भेजना चाहते थे। उन्हें खबर लगी थी कि इंजीनियरिंग कालेज·····के प्रिंसिपल मेरे मित्र हैं और ऐसे मौकों पर जैसा कि सब कहते हैं, उन्होंने भी कहा, "आपकी बात वे नहीं टाल सकते। बस आप जरा कह दें, तो मेरे पुत्र का दाखला हो जाएगा। प्रार्थना-पत्र मैं भेज चुका हूं।"

मैं उनके साथ गया। प्रिंसिपल साहब ने बहुत आदर दिया, चाय पिलाई और दर्शन देने के लिये कृतज्ञता प्रकट की। मेरे साथी को अपने पुत्र का प्रवेश सवा सौ प्रतिशत सरल दिखाई दिया और यह सरलता सफलता के विश्वास में बदल गई, जब प्रिंसिपल साहब ने कहा—"वाह, आप के कैंडीडेट (उम्मीदवार) को दाखिला नहीं मिलेगा तो फिर किसे मिलेगा ?"

मैं भी खुश था, मेरे साथी भी। तभी प्रिंसिपल साहब ने कहा—"हम ने तीन फाइलें बनाई हैं। एक में फर्स्ट डिवीजन वालों के प्रार्थना-पत्र हैं, दूसरी में सेकेण्ड डिवीजन वालों के और तीसरी में थर्ड डिवीजन वालों के। हम अपनी जरूरत के विद्यार्थी पहली फाईल में से ले लेते हैं, पर कभी-कभी ऐसा होता है कि प्रथम श्रेणी वालों के प्रार्थना पत्र कम होते हैं और उनसे हमारी संख्या पूरी नहीं होती, तो दूसरी फाइल में से सर्वोत्तम नम्बरों के विद्यार्थी छांट लेते हैं।"

सहसा मैंने पूछा, "और तीसरी फाइल ?" उत्तर मिला—"उसे खोलने का तो सवाल ही नहीं उठता।" बाद में पता चला कि मेरे मित्र के पुत्र का प्रार्थना पत्र भी तीसरी फाइल में था, इसलिए उस के प्रवेश का प्रश्न ही नहीं उठता था। वही बात कि उसके लिए सफलता के सब द्वार बंद थे।

एक डिग्री कालेज में एक प्रोफेसर की नई नियुक्ति हुई। वे प्रथम श्रेणी में सर्वोत्तम परीक्षा पास थे। क्लास में आए, तो एक पुस्तक साथ। उसमें से बोलकर विद्यार्थियों को पाठ लिखाया। दूसरे दिन भी उसी पुस्तक से लिखाया। तीसरे दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर उन्होंने पुस्तक खोली, तो एक ही प्रार्थना पत्र भेजें' का कोई भी विद्यार्थी ने खड़े होकर कहा, "सर जो कुन्जी आपके पास है, वह मैं खरीद लाया हूं। आप कष्ट न करें, मैं अपने सब साथियों को लिखा दूंगा।" और वह सचमुच अगला पाठ बोलने लगा और विद्यार्थी लिखने लगे।

प्रोफेसर साहब का मुंह सफेद हो गया, पर इसमें उनका क्या दोष? मैट्रिक से बी. एस-सी. तक रो-रो कर पढ़े और झींक झींक कर थर्ड डिवीजन में पास हुए। क्लास के साथी उन्हें गूदल कहा करते थे, पर एम. एस-सी. में गूदल ने लाल इमली के सब कम्बलों को मात कर दिया। वे परीक्षा देने को तैयार नहीं थे, तैयारी ही न थी, पर एक विशेषज्ञ ने उन्हें १० प्रश्न तैयार करा दिए। प्रश्न-पत्र में ज्यों के त्यों उनमें से ९ रखे मिले। रटी चीज थी, साफ सुथरी लिख आए और फर्स्ट डिवीजन पा गए, पर क्लास में तो विशेषज्ञ जी साथ नहीं आ सकते।

फर्स्ट क्लास पाने के और भी कई नुस्खे ईजाद हो गए हैं, पर ये नुस्खे अब इतने सर्वविदित हो गए हैं कि नियुक्ति का भी एक नया फार्मूला निकल आया है—जिन्होंने मैट्रिक, इन्टर, बी. ए. में प्रथम श्रेणी ली हो, उन्हीं की एम. ए. की प्रथम श्रेणी को प्रथम श्रेणी माना जाए। वही दीपक जी की बात, "थर्ड डिवीजन का मतलब है जीवन भर के लिए फेल होना और एक साल के लिए फेल होना ही मुसीबत है, फिर जीवन भर के लिए फेल!"

पत्रों में ऐसे विज्ञापन भी पढ़ने को मिलते हैं कि 'प्रथम श्रेणी वाले 'थर्ड डिवीजन वाले प्रार्थना पत्र न भेजें'। पढ़ कर मुंह से निकलता है—हे भगवान, किसी दुश्मन का बेटा भी थर्ड डिवीजन में पास न हो। शुभ-कामना अच्छी है, पर ऊंची परीक्षाओं में थर्ड डिवीजन में पास होने वालों की संख्या तो ५० से ७० प्रतिशत तक है। इस संख्या में राष्ट्रीय कलेजे का जो घाव है उसे हम यों समझ सकते हैं कि कुल परीक्षा देने वालों में पास होने वालों का औसत ४५ प्रतिशत है। थर्ड डिवीजन वालों का औसत ५० से ७० प्रतिशत है। इसका मतलब यह हुआ कि काम के आदमी बहुत ही कम तैयार हो रहे हैं, यानी काम के लिये आदमी का अभाव और आदमी के लिये काम का अभाव, इस प्रकार देश डबल संकट से एक साथ गुजर रहा है।

यह एक समस्या है। इसके समाधान के लिये एक सुझाव बार-बार दोहराया गया है कि परीक्षा प्रणाली में से थर्ड डिवीजन को हटा दिया जाये, पर यह इस समस्या का समाधान तो न होगा। कुछ ही वर्षों में सेकेंड डिवीजन की वही स्थिति हो जायेगी, जो अब बेचारे थर्ड डिवीजन की है। फिर पास होने वालों का जो औसत थर्ड डिवीजन के रहते ही ४५ प्रतिशत है, वह २५ प्रतिशत रह जायेगा, जिससे हमारी समाज व्यवस्था ही चरमरा जायेगी। १०० में ५५ माता पिता का पैसा और १०० में ५५ विद्यार्थियों का परिश्रम व्यर्थ जाना ही हमारे राष्ट्रीय जीवन का एक मर्मवेधी प्रश्न है, तो १०० में ७५ का क्या अर्थ होगा?

गाँधी जी के बाद हमारा देश दुर्भाग्यवश खंडित नेतृत्व के क्रूर अभिशाप से ग्रस्त हो गया। सबने समस्याओं को टुकड़ों में देखा, टुकड़ों में उनका समाधान किया। नतीजा साफ है कि उनके वारिसों के हाथ में आज टुकड़े हैं और वे भी समग्र समाधान न खोज कर उन टुकड़ों को मिला कर समग्रता प्राप्त करने का ऐसा प्रयत्न कर रहे हैं जिसकी असफलता पहले से ही निश्चित है।

शिक्षा के प्रश्न की समग्रता यह है कि हमें देश में उच्च शिक्षितों की कितनी जरूरत है? अब यदि वह जरूरत १०० है और हम २०० को उच्च शिक्षा देंगे, तो १०० निश्चय ही बेकार रहेंगे। पिछले वर्षों में यही हुआ है और उसका बुरा फल यह हुआ है कि राज्यों और केन्द्र की सरकारों में काम के लिये जितने आदमियों की आवश्यकता है, उनसे दुगने आदमी भर लिये गये हैं। यदि खाने वाले २० हों और परोसने वाले ३०, तो सिवा अव्यवस्था के और क्या होगा? प्रशासन में भी इन ज्यादा आदमियों से शिथिलता ही बढ़ी है, पर सरकार छंटनी का नाम लेती है, तो कर्मचारियों की यूनियन हड़ताल कराती है। बस, सरकार के गले में गाँठ फंसी हुई है, वह परेशान है और वह दिन दूर नहीं, जब उसे सत्यानाशी गतिरोध का सामना करना पड़ेगा।

भारतीय डाक्टर

इस मूर्खतापूर्ण स्थिति का सही अन्दाजा इस से लग सकता है कि अमरीका में हर साल १७०० डाक्टर संसार के दूसरे देशों से आ बसते हैं—नौकरी करते हैं। इन १७०० डाक्टरों में १५०० डाक्टर भारत के होते हैं। इस प्रश्न के दो पहलू हैं। पहला यह कि गरीब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत धन कुबेर अमरीका के लिए १५०० डाक्टर तैयार करने का अपना खून सींचता है और भारत के देहातों, कस्बों के सैंकड़ों अस्पताल बिना डाक्टरों के पड़े हैं। यदि नेताओं में समग्र दृष्टि होती, मैट्रिक और मध्यमा पास विद्यार्थियों को होम्योपैथी, नैचरोपैथी, यूनानी और आयुर्वेदिक शिक्षा देकर देहातों की स्वास्थ्य समस्या हल कर लेती।

अब हम अपने थर्ड डिवीजन के प्रश्न को उधेड़ कर सामने रखें कि हमें वह साफ साफ दिखाई दे। हमने रेल की इन्टर क्लास भला क्यों तोड़ दी है। आप कहेंगे, इन्टर क्लास का और थर्ड डिवीजन का क्या सम्बन्ध? मैं कहता हूं जो इन्टर क्लास के मसले को नहीं समझता वह इस युग की समग्र समस्याओं का समग्र समाधान कर ही नहीं सकता। तो बताइए, हमने रेल की इन्टर क्लास क्यों तोड़ दी?

इन्टर क्लास क्यों तोड़ दी?

हमारे समाज में तीन क्लास हैं। पहली उच्च वर्ग की, दूसरी मध्यम वर्ग की, तीसरी निम्न वर्ग की। अंग्रेजी समय में थोड़े से राजा, जमींदार, ऊँचे अफसर व उद्योगपति-व्यापारी पहली श्रेणी में थे। वकील, दूकानदार, प्रोफेसर, राज्यकर्मचारी मध्यम श्रेणी में और शेष विशाल जन-समूह निम्न श्रेणी में। पहली श्रेणी ऐश में मस्त थी और शासन की सब सुविधाएं उसे प्राप्त थीं। यह श्रेणी समाज की शान थी—सर्वाधिकार प्राप्त। मध्यम श्रेणी में शिक्षा थी, साधारण साधन थे और आगे बढने की—पहली श्रेणी की तरह रहने सहने की—लालसा थी। इस लालसा का ही फल था कि देश को नेतृत्व देने वाले लोग इसी श्रेणी में उपजे। निम्न श्रेणी साधन और सम्मान से वंचित थी और मानसिक रूप से इतनी हीन कि उसमें अपनी स्थिति को बदलने की भावना तक नष्ट हो गई थी। वह अपनी हीनता को भगवान का निर्णय मानती थी। यही श्रेणी-विभाजन अंग्रेज के लिए भारत की गुलामी का अमर पट्टा था, क्योंकि उच्च वर्ग में न स्वतंत्रता की भावना थी, न जरूरत—उसे गुलामी में ही सब कुछ प्राप्त था—और विराट बहुमत की निम्न श्रेणी सामाजिक और मानसिक रूप से लुंज-पुंज थी—फिर अंग्रेजी शासन की अमरता को कौन चैलेंज करेगा? मध्यम श्रेणी को उठाना और निम्न श्रेणी को जगाना ही गाँधी जी के नेतृत्व का महान दान है और इतिहास के इसी आंगन में वे राष्ट्रपिता हैं।

स्वतंत्रता के बाद यह स्थिति नहीं रह सकती थी, बदलनी थी। गांधी जी के जीने के बाद भी गांधी-क्रांति की जो आग शेष रही थी, उसने राजाओं के मुकुट उतार लिए और जमींदारों को उखाड़ दिया। इसमें मध्यम श्रेणी पुष्ट हुई, पर क्रांति की सफलता तो निम्न श्रेणी को शक्तिशाली और पुष्ट बनाने में थी—इन्टर क्लास को तोड़कर गांधी क्रांति के वारिसों ने घोषणा की कि हम निम्न श्रेणी को नई क्षमता देंगे, जिस से समाज के कुछ लोग नहीं, सब लोग स्वाधीनता का सुख भोग सकें।

मैं महसूस करता हूं कि मेरे पाठक उलझ रहे हैं कि रेल की इन्टर क्लास तोड़ने से निम्न श्रेणी के उठने का क्या सम्बन्ध? मेरा काम अपने पाठकों को उलझाना नहीं, सुलझाना है, इसलिए मैं पूछता हूं कि इन्टर क्लास के टूटने पर इन्टर क्लास के मुसाफिर कहाँ गए? उत्तर साफ है कि उनमें से १०-१५ प्रतिशत के साधन अपेक्षाकृत अच्छे थे या नई परिस्थितियों में अच्छे हो गए, वे सेकेण्ड क्लास में चलने लगे और बाकी ८५ प्रतिशत थर्ड क्लास में उतर आए।

क्रान्ति का लक्ष्य

बस, नई सामाजिक क्रांति का काम भारत में मध्यम श्रेणी को तोड़ना है, जैसे इन्टर क्लास को तोड़ दिया। इससे क्या होगा? बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न है और उत्तर इसका यह है कि इस क्लास के १०-१५ प्रतिशत आदमी, जिनमें विशेष योग्यता होगी, ऊपर की क्लास में चढ़ जायेंगे और बाकी ८५ प्रतिशत लोग नीचे की श्रेणी में उतर आएंगे। इस प्रकार समाज में दो श्रेणियाँ रह जाएंगी और नीचे की श्रेणी हीन दीन न होकर आज की मध्यम श्रेणी का साधन-सम्मान पूर्ण रूप से ले लेगी। दुख है कि क्रांति की गति बेहद धीमी पड़ गई है।

अब हम घूमकर फिर अपने थर्ड डिवीजन के चौराहे पर आ जाएं। मैट्रिक पास हो गया आपका पुत्र? जी हां, हो गया। बधाई आपको, पर यह तो बताइए कि पढ़ने में उस की रुचि और गति कैसी रही इन वर्षों में? बस यह प्रश्न ही सारी समस्या की कुञ्जी है और इस कुञ्जी को सम्भाल कर ही हम समाधान का ताला खोल सकते हैं। साफ-साफ यों कि यदि आपके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुत्र की रुचि पढ़ने में तीव्र है, वह बिना आपके धमकाए, कहे प्रतिदिन घर में अपनी पढ़ाई का काम करता रहा है, अपने परिश्रम से वह फर्स्ट डिवीजन में या ऊंचे सेकेण्ड डिवीजन में पास हुआ है और आगे पढ़ने के लिए आग्रही है तो उसे इंटर कालिज में भेज दीजिए, नहीं तो किसी टैकनीकल काम की ट्रेनिंग दिलाइए। लाग-लपेट की बात करना लेखक का धर्म के विरुद्ध होगा, इसलिए कहूं कि और कुछ न हो तो घड़ीसाजी सिखाइए, बिजली की मरम्मत सिखाइए, किसी छोटे स्कूल में मास्टर करा दीजिए, प्रेस में कम्पोजिटरी या मशीनमैनी में लगाइए, पर कालेज की ओर मुंह न करने दीजिए, वरना आपका खून चूसने के बाद भी वह अपने लिए सब द्वार बन्द पाएगा और आपके साथ देश पर भी बोझ बनेगा।

सरकार का भी कर्त्तव्य है कि वह ऐसा शिक्षाक्रम बनाए कि कमजोर किशोर कालेजों की ओर न दौड़ें और शक्तिशाली किशोर साधनों की कमी के कारण कालेजों से बाहर न रह जाएं। मतलब यह कि माता पिता और सरकार दोनों मिलकर यह देखें कि यह बालक क्या अपनी शक्ति और उसके सहारे से उच्चवर्ग में जाने योग्य है? यदि है, तो उसे आगे बढ़ाएं, वरना निम्न वर्ग को सशक्त करने में उसे लगा दें।

भारत का बीसवां पंद्रह अगस्त देश के कर्णधारों से तकाजा करता है कि उन्होंने अभी तक ईंट चूने के ऊंचे भवनों का खूब आयोजन किया, पर अब कृपाकर वे मानव प्रतिभा का आयोजन करें। अभी तक इसकी उपेक्षा हुई है और गहराई के तत्व को भूलकर विस्तार के दिखावे पर इतना अधिक जोर दिया गया है कि आयोजना भवन के खंडहरों में आयोजना के दबकर मर जाने का खतरा पैदा हो गया है। क्या वे समय रहते सावधान होंगे?

एक विश्व और हिन्दुस्तान

आचार्य श्री शशिकर

कैसा होगा एक विश्व?
जैसा हिन्दुस्तान!
यह है प्रश्न महान।
खोजा समाधान—
वैसा होगा एक विश्व,
जैसा हिन्दुस्तान!
बोलो विश्ववासियों,
जय जय हिन्दुस्तान!
हिन्दुस्तान नहीं है देश,
यह है छोटा विश्व
कहें—
प्रारूप विश्व-जीवन का
अनेकता में एकता का
सबके सुख का सर्वोदय का
'संघम् शरणम् गच्छामि'
देता मन्त्र महान।
तकाजा है प्राथमिकता का
पहले छोटा विश्व सवारें;
क्योंकि
इसकी सेवा
जग की सेवा,
समस्याएँ इसकी
जग की समस्याएं हैं,
उनका समाधान करेगा
दुर्गम पथ आसान।
जय जय हिन्दुस्तान।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● श्री नेमिशरण मित्तल

युग प्रश्न : सैनिक तंत्र क्या, क्यों और कैसा ?

आदमी शुरू में आदम था, धीरे-धीरे उसमें 'ई' का विकास हुआ और वह आदमी बन गया। यह 'ई' उस ईर्ष्या और अहं भावना (ईगो) की ओर संकेत करती है जो मनुष्य की सामाजिक प्रवृत्ति के बावजूद उसके व्यक्तित्व का एक अभिन्न अंग बन गई है। यह ईर्ष्या-वृत्ति अनेक सामाजिक उपद्रवों और संघर्षों का कारण बनती रही है। वैयक्तिक स्तर से ऊपर उठकर व्यक्ति ने आत्मचेतना को जिस समूह के साथ संबद्ध किया और वह जिस सावयन समूह का अंग बन गया, उस समूह में एक सामूहिक चेतना अथवा सामूहिक अहं का प्रादुर्भाव हुआ और व्यक्ति का मानस उस सामूहिक अहं का वाहन बना। समूह और समूह के बीच ईर्ष्या उत्पन्न हुई और संघर्ष उठे। लोग झुण्ड बनाकर मुक्के से लड़े, दांतों से लड़े, नाखूनों से लड़े और फिर पत्थरों से लड़े। लड़ाई के शस्त्र बने, शास्त्र बने और फिर व्यूह रचना आरम्भ हुई। समूह में बालक, नारी—विशेषतः गर्भवती नारी और वृद्धों के संरक्षण का प्रश्न उठा।

धीरे-धीरे समूह बड़े बने, क्योंकि वैसा करना शक्ति-बल बढ़ाने के लिये अनिवार्य हुआ। बड़े समूह में यह आवश्यक नहीं रहा कि संरक्षण अथवा आक्रमण के लिए सभी सदस्य लड़ाई में प्रत्यक्ष भाग लें। कृषि और पशुपालन के विकास के साथ घर बसाकर, गांव बनाकर रहना आरम्भ हुआ, तब जीवन क्षेत्र अर्थात बस्ती तथा मरण क्षेत्र अर्थात रणक्षेत्र अलग-अलग बनाने की परम्परा बनी। इसी प्रकार जीवन कर्म और रण कर्म भी पृथक हुए।

कुछ लोगों ने रणकौशल प्राप्त किया, परम्परा और वंश-वैभव से वे राणा बने। युद्ध जीतकर लौटे तो समाज में, समूह में प्रतिष्ठित हुए, प्रमुख बने, समाज के संरक्षक बने अग्रणी माने जाने लगे और धीरे-धीरे सामाजिक जीवन के संरक्षण के साथ-साथ उसके संचालन का जिम्मा भी उनके कंधों पर आ गया। वे जीवन कर्म से निवृत्त थे, अर्थात् उन पर कोई आर्थिक उपार्जन अथवा उत्पादन का भार नहीं था। अतः उनके पास शांतिकाल में सामाजिक संघर्ष अर्थात् समाज के आंतरिक अनुशासन और प्रबन्ध का कार्य करने के लिये पर्याप्त समय, प्रतिष्ठा और अपने नियमों को मनवाने के लिये समुचित बल था। अब जो राणा थे वे महाराणा हो गये।

संरक्षण, प्रतिरक्षण और अनुशासन की आवश्यकता में से शासन का उदय हुआ तथा जो व्यक्ति या वर्ग समाज को संरक्षण, प्रतिरक्षण और अनुशासन देने में बलतः समर्थ थे, वे ही शासक बने। यह ऐतिहासिक तथ्य है। १९४७ में जब भारत को स्वराज्य मिला तो शासन की बागडोर उनके हाथों में आई जो उसके लिये लड़े थे अर्थात् भारत में स्वराज्य के उपरान्त योद्धाओं का, राणाओं का, सैनिकों का शासन आया। यह बात अलग है कि वे सैनिक शस्त्रबद्ध थे या निःशस्त्र, यहाँ केवल इतना ही प्रासंगिक है कि वे सैनिक थे, उन्होंने लड़कर स्वराज्य लिया, वे विदेशी सत्ता के विरुद्ध लड़े, उन्होंने देश को विदेशी शासन से मुक्त कराया। वे शिस्त-बद्ध अर्थात् अनुशासन बद्ध थे, उनका अपना रणगीत था, रण-ध्वज था और गण वस्त्र (खादी) भी।

सत्ता सैनिक की अथवा सैनिक के बल पर

राज्य की सत्ता लोक में निहित है। यह एक सत्य है, परन्तु लोक अमूर्त है, निराकार ब्रह्म है, उसकी सत्ता की अभिव्यक्ति सेना में होती है। सेना का बल शस्त्र बल तो होता ही है, परंतु वस्तुतः उसके पीछे लोक समर्थन होता है। सैनिक दम्भ और दमन के आधार पर शासन नहीं कर सकता। नेपोलियन सरीखे अधिना-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यक को भी कहना पड़ा—तलवारें तीन लाख हों तो भी मैं नहीं डरूँगा, परन्तु यदि तीन समाचार-पत्र भी मेरे विरुद्ध हो जायें तो मुझे भय लगता है।"

राज्य—सत्ता अथवा प्रभुता कितनी ही लोकाधारित और लोकतंत्रात्मक हो, फिर भी उसका भौतिक आश्रय सैनिक बल ही है। सत्ता चाहे सैनिक के हाथ में हो अथवा न हो, वह सदा उस पर आधारित तो होता ही है। यहां प्रश्न यह उठता है कि दोनों में कौन-सी स्थिति लोकहित की दृष्टि से श्रेष्ठ है-सेना आदेश दे अथवा वह आदेश ग्रहण करे।

लोकतंत्र के प्रणेता, आचार्य और स्तोता मानते हैं कि सेना को राजनीति से अलग-अलग रह कर सत्ता के झमेले में नहीं पड़ना चाहिए। उसका कार्य केवल इतना है कि वह शासक के आदेश पर शस्त्र का प्रयोग करे। शासकी अपनी ही जनता पर शस्त्र चलाने की आज्ञा दे अथवा शत्रु के विरुद्ध बल प्रयोग की आज्ञा, दोनों स्थितियों में सेना को निर्द्वन्द होकर, रागातीत रहकर आदेश का पालन करना चाहिए, उसे क्यों और क्या नहीं पूछना चाहिये। मंथरा ने कहा था—

कोउ नृप होय हमें का हानि,
चेरी छांड़ि नहिं होउब रानी।

वैसा ही सेना पर लागू होता है।

यह मर्यादा की बात है। मर्यादा कभी एकाँगी अथवा एक पक्षीय नहीं होती, उभय पक्षीय होती है। राजनीति और सेनायें दो प्रमुख पक्ष हैं। सत्ता का लोक हितार्थ प्रयोग इन दोनों के मर्यादित आचरण पर निर्भर है। यदि दोनों में से कोई भी एक अपनी मर्यादा का उल्लंघन करता है तो लोकहित और लोकतंत्र का सारा महल टूट जाने वाला है।

यहाँ यह बात बहुत महत्वपूर्ण है कि सैनिक भी राष्ट्र का नागरिक होता है और वह राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रीयता, राष्ट्रहित और राष्ट्रीय गौरव की भावना से इतना अभिभूत रहता है कि उसे अपने जीवन का स्मरण ही नहीं आता। वह सदा राष्ट्र को प्रथम रखता है और कुल, जन अथवा स्वयं को पीछे। सैनिक चिन्तन न करे, यह हम भल ही कहें, परन्तु सैनिक मनुष्य है वह चिन्तन से बच नहीं सकता और क्योंकि वह राष्ट्रीय प्रतिरक्षण के लिये जीता मरता है, अतः उसके मन में राष्ट्रीय-चिन्तन होना स्वाभाविक है।

सैनिक तंत्र क्या और क्यों ?

सेना जब राजनैतिक सत्ता हाथ में ले लेती है तो सैनिकतंत्र का जन्म होता है, पर ऐसा होता क्यों है ? इस प्रश्न के विविध उत्तर हो सकते हैं—किसी सेनापति की महत्वाकांक्षा, किसी राजनैतिक और लोकतान्त्रिक शासन की भ्रष्टता, किसी विदेशी कूटनीतिज्ञ द्वारा फैलाया जाने वाला अंतराष्ट्रीय राजनीति का कुचक्र अथवा युद्ध या गृह-कलह जन्य अन्य परिस्थितियाँ।

सैनिक तन्त्र को महर्षि अरस्तु ने डिमाक्रेसी के नाम से पुकारा है और उनका विश्वास है कि वह एक विकृत शासन प्रणाली है। अरस्तु ने लोकतंत्र की निन्दा की है, परन्तु जहाँ उनके सामने यह प्रश्न आता है कि धनिकतंत्र (आलिगार्की) सैनिकतंत्र (डिमाक्रेसी) और लोकतंत्र (डिमाक्रेसी) में से किसी एक का चुनाव हो तो किसे चुनें ? वहां ये डिमाक्रेसी को पसन्द करते हैं।

महर्षि अरस्तु सामान्य शासन प्रणालियों में सेवा प्रेरित अल्पतन्त्र को सर्वश्रेष्ठ शासन पद्धति मानते हैं फिर भी धनिकतन्त्र और सैनिकतन्त्र की अपेक्षा लोकतन्त्र के लिये उनका सम्मान बहुत बड़ी बात है। इसके पीछे यह मूल भावना निहित है कि तीन प्रकार की प्रधान शक्तियाँ धन—बल, शस्त्रबल और राजनीतिक बल को अलग-अलग रखना चाहिये। सत्ता भ्रष्ट कर देती है और संपूर्ण सत्ता सर्वतः भ्रष्ट कर देती है। तीन ही नहीं, ये शक्तियां भी संयुक्त नहीं की जानी चाहियें, क्योंकि सत्ता अकेले ही काफी खतरनाक है। यदि धनी के हाथ में राजनीतिक सत्ता आती है तो वह शोषण करेगा और यदि वह सैनिक के हाथों में आती है तो वह क्रूर शासन करेगा। अतः राजनीतिक सत्ता एक तीसरे वर्ग के हाथों में रखी जानी चाहिये, जो विशेष का नहीं, शेष का प्रतिनिधि हो, सामान्य जन हो और जनसामान्य का प्रतिनिधित्व करे। यह है लोकतंत्र का हार्द, उसका मर्म।

फिर क्या यह मानें कि लोक प्रतिनिधि भ्रष्ट हो जायें, वे सत्ता का प्रयोग वैयक्तिक हित सिद्धि के लिए करने लगें तथा अपनी सत्ता बनाये रखने के लिये हीनतम कुचालों और कुचक्रों का प्रयोग करें तो क्या सेना का यह धर्म नहीं हो जाता कि ऐसे भ्रष्ट शासन को समाप्त करके सत्ता को स्वयं सम्भाल ले ? कोई राजनीतिक शासक यदि किसी वैदेशिक सत्ता के साथ इस सीमा तक सांठ-गांठ करले कि राजकीय हितों की

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुली उपेक्षा होने लगे तो क्या सेना का यही कर्त्तव्य रह जाता है कि वह आंख मूंद कर ऐसे शासक के आदेशों का प्रतिपालन करती रहे अथवा उसका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह राष्ट्रीय हितों को रक्षा के लिये शासन की बागडोर अपने हाथों में सम्भाल ले। ये कुछ प्रश्न हैं, जिनके उत्तर हमें देने होंगे। सैनिकों को नागरिकता के अधिकारों से वंचित नहीं किया जा सकता और वे यह स्थिति सहने के लिये भी बाध्य नहीं किये जा सकते कि जिस विदेशी आक्रमण से राष्ट्र की रक्षा करना उनका परम धर्म है वह राजनीतिक स्तर पर चालू रहकर देश को पराधीनता की स्थिति में डाल दे।

सैनिकतंत्र का औचित्य उसके विलय में

सैनिकतंत्र कोई स्थायी व्यवस्था नहीं हो सकती। सेनापतियों को शासन की बागडोर हाथ में लेने के पश्चात सत्ता का दुरुपयोग करने वाले राजनीतिज्ञों को न्यायालयों के हाथों सौंपकर जनता से कह देना चाहिये कि वह अपने नये शासकों का निर्वाचन कर ले : यदि जनता सेनापति को ही शासक चुने और सेनापति भी राजनीति में आना चाहे तो उसे सेना में अपने पद का परित्याग करना चाहिये तथा राजनीतिक विरोध का सामना जन समर्थन के आधार पर करना चाहिये, न कि सैनिक बल के आधार पर।

मूल बात यह है कि राजनीतिक सत्ता को बनाये रखने के लिये सेना की शक्ति का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिये। यदि सेना किसी भी शासक का अनुचित समर्थन बन्द करदे तथा उसे इस बात के लिये विवश करे कि वह जन-प्रतिनिधियों के समर्थन पर निर्भर रहे तो राजनीतिज्ञ भी सत्ता का दुरुपयोग नहीं कर सकेंगे तथा उन्हें अपनी स्थिति सुदृढ़ बनाये रखने के लिये जनता की शक्ति और सहमति पर निर्भर रहना होगा। अधिनायक को भी जनाधार चाहिये। लोकाधारित सत्ता ही शुद्ध सत्ता है अन्य सब सत्तायें विकृत और भ्रष्ट सत्तायें हैं चाहे वे शस्त्र की सत्ता हो या धन की सत्ता।

मूल प्रश्न सैनिकतंत्र का नहीं है, लोकतन्त्र का भी नहीं है, प्रश्न तो प्रयोजनों का है, ध्येयों का है और उससे भी अधिक निष्ठाओं तथा लोकचारित्र्य का है। मूल प्रश्न यह है कि क्या हम वस्तुतः व्यक्तित्व तथा अन्य व्यक्तियों के साथ उसकी समानता और स्वतंत्रता में आस्था रखते हैं? यदि हां तो हम बलतंत्र, शक्तितंत्र और ऐसा तंत्र जिसमें व्यक्ति पर दबाव हो, वह विवश किया जाए, नहीं बनायेंगे और हमारी प्रवृत्ति सहमति-तन्त्र, लोकेच्छा पर आधारित तन्त्र अथवा लोकतंत्र की ओर होगी। दो पृथक बातें हैं--क्रांति का वाहन अथवा साधन और क्रांति के उपरान्त नई राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था। नई क्रांति का वाहन सेना बन सकती है, परन्तु सैनिक शासन स्थायी व्यवस्था का रूप नहीं ले सकता। अन्ततः उस लोक निर्वाचित जन-प्रतिनिधियों के समक्ष आत्मसमर्पण करना ही चाहिये। ●

व्यक्तियों के समूह का ही दूसरा नाम समाज है। व्यक्ति को देखना–परखना आसान हो सकता है, किन्तु समाज को उसी कसौटी पर कसने के लिए विशेष दृष्टि की आवश्यकता होती है—वह भी कुछ इस तरह कि कभी समाज को अपनी नजर से देखा जाए तो कभी समाज को समाज की नजर से भी।

समाज को देखने की यह नजर अधूरी है यदि देखने वाला निष्पक्ष दृष्टा होने के साथ-साथ गहन वैचारिक न हो। दृष्टा और विचारक मिल जाता है तभी तो वह व्यक्ति को, समाज को, राष्ट्र को और यहाँ तक कि विश्व को उस गहरी नजर से देख पाता है जो एक्सरे की तरह भीतर जाकर जीवन का वास्तविक चित्र खींच लाती है।

प्रोफेसर श्री नेमी शरण मित्तल हमारे देश के उन्हीं गहन विचारकों में हैं, जिनकी पैनी दृष्टि समाज की समस्याओं को कुछ इस ढंग से देख पाती है कि वे आसानी से उसका ऐक्सरे तो कर ही लेते हैं, उस ऐक्सरे की रिपोर्ट भी तैयार करते हैं, साथ-साथ रोग की चिकित्सा–समस्या का समाधान–भी दे पाते हैं, बता पाते हैं। आप उनसे बातें करें तो जीवन के सूत्र भी पाएंगे और समाधान की व्यापकता भी।

श्री नेमीशरण मित्तल के कुछ महत्वपूर्ण–तथ्यपूर्ण विचार प्रस्तुत लेख में आपको मिलेंगे। आशा है उनकी लेखनी की यह लज्जत 'नया जीवन' के विचारशील पाठकों को निरन्तर प्राप्त रहेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्र देश में चुनाव भी राजनैतिक जन शिक्षण का एक माध्यम है। भारत संसार का सबसे बड़ा जनतन्त्र है और जैसा कि स्वाभाविक है, प्रत्येक ५ वें वर्ष होने वाले हमारे आम चुनाव को संसार के अनेक देश उत्सुकता के साथ देखते हैं।

अपनी आंखों देखे को लेखनी के माध्यम से पाठकों को सफलता पूर्वक परस देने की कसौटी यह मानी जाती है कि देखे की जानकारी सौ फीसदी और आनन्द कम से कम पचास फी सदी अपने पाठक को अवश्य मिल जाए।

अमरीका में केलीफोर्निया यूनिवर्सिटी में विदेशी भाषा विभाग के विद्वान प्राध्यापक श्री वेद प्रकाश वटुक ने 'अमेरिकन चुनाव : जैसा मैंने देखा' शीर्षक से एक महत्वपूर्ण रिपोर्ताज लिखा है, जिसका पहला भाग 'नया जीवन' के पिछले अंक में और दूसरा भाग इस अंक में प्रकाशित है—निश्चय ही आँखों देखे की सफल कसौटी पर पूरा-पूरा और खरा-खरा।

पहले भाग में वटुक जी ने अमरीका में चुनाव के तरीके और जन-प्रशिक्षण पद्धति का उल्लेख किया था तो इस दूसरे भाग में अमरीकी चुनाव सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण संस्मरण दिए हैं। ६ मास बाद ही होने वाले हमारे आगामी चुनाव की इस वेला में यह सामग्री हमें बहुत कुछ सिखाती है। सार में बस यही कि हम अपने वोट की कीमत को सही-सही आँकें और उसका सही-सही उपयोग भी करें।

(२)

अमेरिकन चुनाव : जैसा मैंने देखा

● श्री वेद प्रकाश वटुक ●

(२)

इस साधारण भूमिका के उपरांत अब मैं एक विशेष चुनाव के विषय में विस्तार से कहूंगा। जैसा मैंने ऊपर कहा–वियतनाम समस्या इस देश में आजकल भयानक समस्या बन गई है। विदेश-नीति प्रायः सरकार की दलगत राजनीति से परे रही है अतः इस क्षेत्र में अमेरिका की पार्टियों में और भी कम भेद है। अमेरिका की दोनों पार्टियाँ बाहरी आदमी के लिए प्रायः एक-सी हैं। यदि पश्चिम भाग में रिपब्लिकन दल अनुदार है तो दक्षिणी भाग में डैमोक्रैटिक पार्टी नीग्रो विरोधी रही है। दोनों दलों में तथाकथित वामपक्षी, दक्षिण पक्षी तथा मध्यमार्गी हैं। इस अवस्था में अधिकाँश जनता आज साम्यवाद विरोधी प्रचार की शिकार है। सरकार भी इस घेरे में फंसी है। चीन-विरोध, सोवियत-विरोध, साम्यवाद विरोध, कुछ इतना पनपा है कि आज कुछ आदमी इस घेरे से ऊब गये हैं। वियतनाम का युद्ध जिस ढंग से चल रहा है, उसमें दिन पर दिन अमरीकी लोग पशोपेश में पड़ते जा रहे हैं, किन्तु जब भी दक्षिण पंथी लोग किसी भी चीज को विनष्ट करना चाहें, तो उस पर साम्यवादी लेबुल लगा सकते हैं। अतः शान्ति की बात साम्यवादी बात हो जाती है, यानी देशद्रोह की बात। इसी लिए यदि कोई शान्ति की बात लेकर चुनाव लड़ना चाहता है, तो आमंत्रण देता है पराजय को, किन्तु देश का अधिकाँश विद्यार्थी भाग आज साधारण जनता की अपेक्षा अधिक परेशान है इस युद्ध से। एक तो पिछली पीढ़ी की विचारधारा से छात्रों का उतना लगाव नहीं, दूसरे आखिर युद्ध में मरना तो नौजवानों को है और युद्ध का लाभ होता है वीभत्स हथियार बनाने वाली बड़ी पूंजीपति कम्पनियों को। अतः विगत दो वर्षों से इस देश के छात्र हर प्रकार युद्ध का विरोध करना चाहते हैं। सभा की गई। बहसें की गईं। अधिवेशन किये। देश की विचारधारा को साम्यवाद के हौए से बाहर आने की चुनौती दी गई, पर देश के राजनीतिज्ञों पर उसका प्रभाव कोई नहीं पड़ा। गत वर्ष इस इलाके के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक डाक्टर ने बरकले के प्रतिनिधि यानी संसद के निम्न भवन के सदस्य को पत्र भेजने का आन्दोलन प्रारम्भ किया, जिसमें कहा गया कि वह वियतनाम युद्ध का विरोध संसद में करे। अमेरिका का हर प्रतिनिधि अपने मतदाता के प्रति इतना उत्तरदायित्व अवश्य अनुभव करता है कि वह पत्रों का उत्तर तुरन्त दे, परन्तु उसके उत्तरों में वही दो मुखी बातें थीं, जो इस देश के तथा कथित उदार राजनीतिज्ञ करते हैं। हम शान्ति के लिए हैं, किन्तु शक्ति के साथ, यानी विरोधी हमारी बात सुनें, हमारी बात मानें। ये संसद सदस्य उदार पक्ष के माने जाते हैं। नीग्रो आदि समस्याओं पर उन्होंने बिल पेश किये हैं। अतः ऐसे सदस्य से गोलमोल बात सुनकर लोग प्रसन्न नहीं थे, युद्ध विरोधी लोग। अतः कड़े विरोध का एक स्वरूप उनके सामने रखने के लिए कुछ लोगों ने उनके सामने एक उम्मीदवार खड़ा करने का प्रयत्न किया, जो केवल शान्ति पक्ष का प्रचार करे। खुले तौर पर वे बात कहें, जो अमरीकी समाज में अछूत समझी जाती है। ऐसा एक उम्मीदवार था एक तीस वर्ष का युवक जो एक उदार पत्र का विदेश सम्पादक है। इस पत्र में काफी लेख ऐसे छपे हैं. जो अमरीका की परराष्ट्र नीति के खोखलेपन पर तरस खाने पर विवश कर दें। जिस मिशिगन विश्वविद्यालय के जासूसी कार्यक्रम की चर्चा ने भारत के काँग्रेस दल के कुछ सदस्यों को उचित ही इंडो-अमेरिकन फाउंडेशन के प्रश्न पर विरोध करने को विवश किया, वह इसी पत्र द्वारा प्रकाश में लाया गया था। इस पत्र का नाम है "रैमपार्ट"। इसके सम्पादक हैं, ऐडवर्ड कीटिंग शीयर। दोनों ने ही अनेक शान्ति उम्मीदवारों की भाँति अपना विरोध चुनाव में खड़ा होकर करना निश्चित किया। उनका उद्देश्य चुनाव जीतना नहीं था, वरन् शान्ति प्रसार था। जब ये शान्ति विरोधी उम्मीदवार प्राथमिक चुनाव के लिए खड़े हुये, जैसा कि आवश्यक था तो अधिकाँश लोगों का विश्वास था कि उन्हें चौथाई रायों से अधिक मिलने वाली नहीं हैं। दोनों ही अपने उन संसद सदस्यों का विरोध कर रहे थे, जो साधारणतया उदार समझे जाते हैं। अतः और भी कम सफलता की आशा थी। दोनों ही उनका विरोध कर रहे थे जो सत्तारूढ़ हैं। इस प्रकार सब प्रकार से उनका पक्ष कमजोर था, पर चूंकि वे चुनाव में नहीं, समस्याओं में उनके प्रचार-प्रसार में काम करने के इच्छुक थे, अतः खुले रूप में सामने आने का निश्चय उन्होंने किया। उदारवादी राजनीतिज्ञों के ढोंग को पर्दाफाश करने का।

जैसे ही इन लोगों ने अपनी नमूने की विरोध की, उम्मेदवारी की घोषणा आरम्भ की अनेक छात्र अपनी पढ़ाई से दो तीन महीने की छुट्टी लेकर आए। ये सभी लोग संसद सदस्यों के पुराने समर्थकों में से थे या आमतौर पर उनके समर्थक थे, किन्तु शान्ति के प्रश्न पर वे चाहते थे दो टूक बात। ऐसे भी कितने ही अध्यापक लोग थे, जो कभी भी चुनाव के झंझट में नहीं पड़े, पर जो इस बार काम करने आए। लोग प्रारम्भ में सोचते थे कि यह एक तमाशा है, पर जब इतने लोगों ने जीवन में पहली बार कालेज से बाहर घर घर जाकर घंटी बजानी शुरू की, तो उनका भय दूर हो गया। उन्होंने नये लोगों को मतदान के लिए रजिस्टर करना शुरू किया। लगभग १०००० नये लोगों को। नए नए प्रचार पत्र छापकर बांटना शुरू किया। लगभग १००० लोगों ने इस प्रकार के चुनाव में अपनी सेवाएं भेंट की। इन लोगों की क्षेत्र के अनुसार कई उपसमितियाँ थीं। उसमें रोज खुले ढंग से मीटिंग होती, जिसमें एक दूसरे के काम की भी खुली आलोचना होती। ऐसी ही एक मीटिंग में मैं गया, जहां लगभग तीन घंटे तक संगठन पर चर्चा की गई। चर्चा में कोई सभापति आदि नहीं था। लगभग सभी युवा अवस्था के स्त्री पुरुष थे। सभी एक दूसरे को पहले नाम से पुकारने वाले और सभी आलोचना सुनने को आतुर। यदा कदा बहस में उग्रता आई अवश्य, परन्तु वह कभी असभ्यता के केन्द्र तक नहीं पहुंची। इस बहस के बाद जो निर्णय लिया गया, वही था सबको मान्य।

दो दिन बाद मैं एक बैठक में गया जो नीग्रो जाति की प्रगति के लिए बनाई एक संस्था की ओर से थी। यह बैठक एक स्कूल में थी। रात के समय। उस हल्के के सभी पदों के अभिलाषी भी वहां मौजूद थे। उनके लिए कोई विशेष सम्मान का प्रयास वहां नहीं था। उनकी अवस्था प्रायः उस अपराधी की भांति थी. जो अपने को निर्दोष सिद्ध करना चाहते हैं। सभा की अध्यक्षता करने वाले व्यक्ति का वाक्य वहां अन्तिम था। प्रत्येक उम्मीदवार को संक्षेप में पांच मिनट में अपना कार्य-क्रम लोगों के सन्मुख रखना था और अगले कुछ मिनट प्रश्नों के लिए थे। जो लोग पदों पर थे और पुनः उम्मीदवार थे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे अपना पिछला रिकार्ड लोगों के सामने रखते। जो नहीं थे वे उनके रिकार्ड की आलोचना करते और अपना कार्यक्रम रखते। प्रश्न तीखे होते। कोई बख्शने या झिझकने वाली बात नहीं थी। जब संसद सदस्य जैफरी कोहेलन ने अपना व्याख्यान समाप्त किया तो उनसे पूछा गया कि वे शब्द जंजाल की बात छोड़कर यह बताएं कि वे कब कितनी मृत्युओं के उपरान्त अपना मत शांति के लिए बदलेंगे। कब तक वे प्रजातन्त्र का ढोंग करेंगे, जबकि दूसरे देशों के प्रजातन्त्र के साथ खुला बलात्कार करते हैं। उम्मीदवार रोबर्ट शीयर ने कहा, "मैं अपने संसद-सदस्य और विरोधी श्री कोहेलन से स्पष्ट पूछना चाहता हूं कि वे दोमुखी बात छोड़कर अपनी राय साफ-साफ जाहिर करें। किस-किस अपने क्षेत्र के विषय पर उन्होंने क्या राय जाहिर की? अपने नीग्रो क्षेत्र के लिए उन्होंने क्या किया? इस प्रकार कठोर भाषा में सादर उनसे पूछताछ की गई। प्रतिनिधि अपने क्षेत्र के मतदाताओं का प्रतिनिधित्व करता है न कि जानसन सरकार का, पर कोहेलन महोदय अपने क्षेत्र के शांति-आन्दोलन, छात्र-आन्दोलन, नीग्रो-आन्दोलन आदि सब की उपेक्षा करके केवल वाशिंगटन में रहते हैं, जानसन सरकार की सहायता करने। कब वे अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करना शुरू करेंगे?" इस प्रकार उन पर आक्षेप आया अपने मतदाताओं की रायों की उपेक्षा करने का। लगभग दो घंटे की यह सभा काफी खुली थी। इस प्रकार दो तीन और सभाओं में उम्मीदवारों ने भाग लिया।

एक पड़ौस सभा में भी मैंने भाग लिया। जब मैं वहां पहुंचा तो गृह स्वामिनी आने वाले लोगों के लिए कॉफी और बिस्कुट का प्रबन्ध कर रही थी। धीरे-धीरे लोग आने शुरू हुए और दो कमरों में लगी कुर्सियों में जहां भी जगह मिली अनौपचारिकता से कॉफी और बिस्कुट लेकर बैठते गए। उम्मीदवार के आने से पहले किसी ने चर्चा शुरू की और आपस में लोग बात करते रहे। जब उम्मीदवार अपनी सुन्दर युवा स्त्री के साथ आए तो बची कुरसियों में से एक पर बैठ गए। बिना किसी बड़े परिचय के उन्होंने ऐसे बोलना आरम्भ किया, जैसे बात कर रहे हों। अपना परिचय दिया, जिसमें उन्होंने कब क्या क्या किया और अब क्यों वे चुनाव लड़ना चाहते हैं, इस पर प्रकाश डाला। किस प्रकार का प्रतिनिधित्व वे करना चाहते हैं, किस प्रकार वे चाहते हैं कि जनता की आवाज सही राजनीति बने, प्रतिनिधि उसे सुनकर उसके अनुसार अपना मत निश्चय करें। दूसरे शब्दों में राजनीति वाशिंगटन को बटोरकर न ले जाएँ, बल्कि उसे जनता को लौटाएं और जनता की धरोहर के रूप में उसका उपयोग वाशिंगटन में करे। जड़ता से चेतन की ओर लौटें। समाज में क्या-क्या विरोधाभास है, इसको सामने रक्खा। यदि साम्यवाद से अफगानिस्तान को बचाना है, तो अमेरिकन सरकार दूध भेजती है, पर मेरे क्षेत्र में वैसा करे, नीग्रों के लिए तो वह अपव्यय है। जो हथियार बनने से पहले ही बेकाम और असामयिक हो जाएँ, उन पर खरबों खर्च करना ठीक है, पर बेकार आदमी की सहायता दुरुपयोग है। लाखों-करोड़ों चांद तक जाने को, लोगों को कत्ल करने को व्यय करना उपयोगी है, पर स्कूलों की रचना करना दुरुपयोग। इसी प्रकार साम्यवाद का हौआ उन्होंने समय से पीछे होना बताया। जब मैंने उनसे पूछा कि इस प्रकार के प्रचार से आप क्यों पराजय को आमंत्रण देते हैं तो उन्होंने कहा—"मैं ढोंग की राजनीति से तंग आ गया हूं। जनता को भय से विहीन बनाना ही मेरा ध्येय है। यहां एक ऐसा आन्दोलन शुरू हो जो चुनाव के बाद भी चलता रहे। नया जीवन लोगों में लाए। बीस मिनट में वियतनाम के लोगों का जीवन तबाह करने में जितना व्यय अमरीकी सरकार करती है, उतना सारे वर्ष में इस दस लाख की आबादी के गिरे लोगों की अवस्था को सुधारने में नहीं। जीतूं या हारूं मुझे यही जनता के सामने रखना है। मैं चापलूसी और भय से नहीं, लोगों के पैरों पर जूते रखकर चुनाव लड़ना चाहता हूं। वियतनाम युद्ध को मैं सिवा वीभत्सकारी जुल्म के कुछ नहीं समझता। हिटलर ने जो किया वह हम कर रहे हैं।

इस प्रकार अमेरिका का नया चुनाव नई राजनीति सत्य और केवल सत्य पर आधारित है। जो लोग सर पर कफन बाँधकर, गिरफ्तार होकर, किसी भी दशा में सत्य से मुंह न मोड़ें, वह इसमें हैं। सब युवक, सब बेपैसे काम करने वाले। सब निर्भीक और पद के प्रति उदासीन। "मैं डैमोक्रैटिक पार्टी के अधिनायक की रक्षा के लिए नहीं, उसके विनाश के लिए चुनाव लड़ रहा हूं," उम्मीदवार ने कहा था। लोगों का भय अभी पूरी तौर पर

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया नहीं है। अज्ञान भी अभी है, पर जिस प्रकार लोग शांति की बात सुनने लगे हैं, वह राजनीतिज्ञों के लिए भय का कारण बनने लगा है।

इस चुनाव का प्रभाव यह हुआ कि विरोधी उम्मीदवार, जिन्हें संसद की सदस्यता के खोने का भय अब मजाक नहीं, सत्य बनने लगा था, धीरे-धीरे वियतनाम युद्ध नीति के विषय में और उग्रता से विरोध में बोलने लगे। उन्होंने संसद में चुनाव से तीन सप्ताह पहले घोषणा की कि वे वियतनाम में युद्ध के विस्तार को खतरनाक मानते हैं। वियतनाम में चुनाव होने चाहिएं आदि-आदि।

सत्य की यह पहली विजय थी।

उसके बाद संसद सदस्य कोहेलन ने सभी युद्ध विरोधी नेताओं की देश भर से चिट्ठियां अपने पक्ष में पाने की कोशिश की। चुनाव शांति आन्दोलन बना। केवल कैसे कौन शांति ला सकता है, यही प्रश्न रह गया।

अमेरिकन चुनाव में पार्टी की अपेक्षा व्यक्ति का महत्व अधिक है। १९३६ में जब राष्ट्रपति रूजवैल्ट के कार्यक्रमों का विरोध उन्हीं की पार्टी के दक्षिणी भाग से आने वाले सदस्यों ने करना शुरू किया था तो १९३८ में चुनावों में राष्ट्रपति ने उनका चुनाव न होना देश के लिए शुभ बताया। जानसन भी चाहते हैं कि उनकी पार्टी के युद्ध विरोधी उम्मीदवारों का चुनाव न हो। अतः यह निर्वाचन आज सारे देश का केन्द्र बिन्दु बन गया है। कितनी जनता युद्ध को कितने अंश तक नहीं चाहती है इसका मापदंड। अतः देश के बड़े समाचारपत्रों ने इस पर टिप्पणी की है, राष्ट्रीय टेलिविजन ने अपने कार्यक्रम बनाए हैं। हालांकि यह चुनाव लगभग ५०० सदस्यों में से एक को चुनेगा।

एक और प्रभाव इस चुनाव का पड़ा है। जो उम्मीदवार राज्य के अधिकारियों के सामने लड़ रहे हैं, वे भी अब बिना भय के, वे बातें कहने लगे हैं जो पहले खतरनाक समझी जाती थीं।

जो उम्मीदवार पहले राज्य के चुनाव में राष्ट्रीय प्रश्नों को उठाने से भय खाते थे, वे अब वियतनाम युद्ध के विरोध में बोलने लगे। इस प्रकार राज्य की असेम्बली में कई युद्ध विरोधी सदस्य चुने जाएंगे और अब वे राज्य या राष्ट्र के कर्णधारों के विरोध में बोलने से भी नहीं हिचकेंगे।

चुनाव के दिन तक भी बाहरी किसी बड़े नेता को नहीं बुलाया गया था, किसी भी उम्मीदवार के पक्ष में। उम्मीदवार को अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए। जब श्री कोहेलन से किसी ने पूछा-"सुना है आप इतने भयभीत हैं कि श्री जानसन को बुलाने की सोचते हैं" तो उन्होंने कहा था-"नहीं, मैं अपने चुनाव का काम स्वयं पूरा करने में समर्थ हूं। इस प्रकार श्री जानसन के हाथ मजबूत करने जैसा नारा यहां नहीं लगता। जब १९५६ के आसपास एक भारतीय अमेरिकन श्री दिलीप सिंह सौंध अमेरिका की संसद के निम्न भवन कांग्रेस की सदस्यता के लिए चुनाव लड़ रहे थे, तो उनकी प्रतिद्वन्दी महिला ने कहा था कि वे राष्ट्रपति को जानती हैं, बहुत सारे नेताओं को जानती हैं तो श्री सौंध ने टेलिविजन डिबेट में उत्तर दिया था-"आप इस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने वहां जा रही हैं या राष्ट्रपति की लल्लो चप्पो करके भीख मांगने? इस तर्क ने श्री सौंध को विजयी बनाया। जब उनकी प्रतिद्वन्दी महिला ने स्टीवैन्सन के मुकाबले श्री आइजनहोवर को अच्छा बताया तो श्री सौंध ने कहा कि "आप कांग्रेस के लिए चुनाव लड़ रही हैं या राष्ट्रपति पद के लिए?" इसी प्रकार पिछले दिनों जब हमारे कालेज ने यहाँ के गवर्नर उम्मीदवारों को बुलाया तो उनमें से एक ने सारा भाषण राष्ट्र के हितों पर दिया। प्रश्नकाल में एक छात्र ने बड़े व्यंग से उनसे पूछा-क्या वे राष्ट्रपति होना चाहते हैं, नहीं तो राज्य के प्रश्नों पर क्यों नहीं बोलते।

कुछ भी हो, चुनाव के दिन मैं कुछ कार्यकर्त्ताओं के साथ घूमने गया। उनमें से हरेक के पास कार्ड थे, जिन पर कौन उनके पक्ष में है, कौन नहीं आदि अंकित था। एक-एक घर में जाकर उन्होंने इस बात की चेष्टा की कि वे अपने समर्थकों को वोट देने के लिए कहें फिर पोलिंग बूथ पर जाकर किस-किस ने वोट दिया, यह देखें। जिन्होंने नहीं दिया, उनके घर फिर जाएं। मैं कुछ व्यक्तियों के साथ ऐसे मुहल्ले में गया, जो गरीब समझा जाता है, जहाँ चीनी लोग रहते हैं। वहां ४ पीढ़ियों से रहते आने पर भी लोग चीनी में बोलते हैं। चीनी लोग मेहनती हैं, पर अपने अधिकारों के प्रति नीग्रो लोगों की अपेक्षा उदासीन हैं। हमारे साथ एक चीनी अमेरिकन थी, जिन्होंने चीनी भाषा में पहले घर घर जाकर समझाया, फिर फैक्ट्री में। महिलाओं के बच्चों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की देखभाल की, ताकि वे वोट दे सकें। इसी क्षेत्र में मुझे अनेक अनुभव हुए, जिनसे पता चला कि गरीब लोग अभी भी शिक्षित करने हैं। एक मतदाता ने कहा कि वह कांग्रेसमैन के विरोध में कैसे वोट दे? राष्ट्र के प्रति अपराध तो नहीं? दूसरे ने कहा कि वह प्रति निर्वाचन में मतदान करता है, पर अब की बार उसके पास नमूने का मतदानपत्र नहीं आया तो वह वोट दे सकता है क्या? उसे बताया गया कि उसका नाम मतदाताओं की लिस्ट में है, तो वह प्रसन्न था।

संध्या समय यह पता लगाने के लिए कि कितना मतदान किस पार्टी में हुआ है, हम मतदान स्थल पर गये। मतदान स्थल या तो स्कूल में या गिरजे में या किसी व्यक्ति के मोटर गैराज में हो सकता है। कोई विशेष पाबन्दी नहीं दिखती। लगभग हर दूसरे मुहल्ले में मतदान स्थल थे। लोगों को दूर नहीं जाना पड़ता। मतदान स्थल के बाहर सड़क पर एक अमेरिकन झंडा टंगा था, यह पहचान थी। मतदान करने में बाहर एक लिस्ट थी, जिस पर मतदाताओं के नाम अंकित थे। साथ ही किस किस ने मत दे दिया है, इसकी भी सूचना उनका नाम पैंसिल से काटकर दी जाती थी। अंदर चार महिलाएं थीं। मतदान पत्र तीन प्रकार के थे, प्राथमिक चुनाव होने के कारण। डैमोक्रैटिक दल का मतदानपत्र पीला लाल था। रिपब्लिक दल का हरा और स्वतन्त्र लोगों का किसी और रंग का। कुछ चुनाव ऐसे थे, जो दलगत नहीं होते, उसके लिए स्वतन्त्र मतदाता इस तीसरे रंग के मतदानपत्र के द्वारा मत देते हैं। मतदान पत्र क्या था, रजिस्टर का पूरा पन्ना था, लगभग एक गज लम्बा और दो फुट चौड़ा। उस पर सब दलगत नाम छपे थे—हर पद के लिए। इसको लेकर व्यक्ति छः या सात मतदान के लिए बने वर्गाकार लकड़ी के घेरे में से एक में जाता, जहां खड़ा होकर, तख्ती पर जो उसमें थी, मतदानपत्र रख कर अंकित करता, जिसे भी मत देना होता। फिर बाहर आकर मतदानपत्र की तह करके एक संदूक में डाल देता। इस प्रकार ५-६ व्यक्ति एक साथ वोट दे सकते थे।

एक पागल साहित्यकार को किसी मनोवैज्ञानिक के पास चिकित्सा के लिए भेजा गया। मनोवैज्ञानिक ने उससे प्रश्न किया—आपने अभी हाल में कौन-सी पुस्तक लिखी है?

"मैकबैथ।" पागल साहित्यकार ने पूरे आत्म-विश्वास के साथ उत्तर दिया।

"इस किताब को तो शेक्सपीयर ने लिखा है और तुम उसे अपनी लिखी किताब बता रहे हो।" मनोवैज्ञानिक ने पूछा।

इस पर उसने कहा—"जब मैंने पहले 'हैमलेट' लिखी थीं, तब भी लोगों ने मुझसे यही बात कही थी। क्या मेरी लिखी सब किताबें शेक्सपीयर पहले ही लिखकर मर गया?"

अधिक भीड़ वहां नहीं थी। किसी भी उम्मीदवार का कोई प्रतिनिधि वहां नहीं था। यहाँ तक जब मतदान ८ बजे समाप्त हुआ तो भी कोई व्यक्ति उम्मीदवार की ओर से न था। इतना विश्वास ईमानदारी में संदूक खोलकर महिलाओं ने पहले एक रजिस्टर में वे रायें दर्ज कीं जो किसी और उम्मीदवार के लिए उसका नाम लिखकर दी गई थीं। फिर रायें बन्द करके टाउन-हाल भेज दीं गईं, जहां मशीन द्वारा वे अगले कुछ ही घंटों में पचासों पदों के उम्मीदवारों का फैसला कर देंगी। अगली प्रातः से पूर्व सारे चुनाव के परिणाम ज्ञात हो चुके थे। लोग पुनः शान्ति से अपने काम में लग गए थे।

जैसी कि आशा थी, कोई भी शान्ति उम्मीदवार नहीं जीता, पर उनके लिए डाली गई रायें ४५ से ४७ प्रतिशत थीं। इनमें से एक-एक राय शान्ति के लिये थी, जबकि जीतने वाले सदस्यों की राय युद्ध के पक्ष में थीं ऐसी कोई गारन्टी नहीं। शाँति के उम्मीदवार के लिए इतनी रायें सारे शासन के विरोध में होते हुए मिलना एक अभूतपूर्व बात थी। अमेरिका की राजनीति या प्रजातन्त्र भले ही पूर्ण न हुआ हो, पर यदि ये उम्मीदवार चुनाव को शांति का प्रचार साधन न बनाते तो वोटर पिछले वर्षों की अपेक्षा दुगनी संख्या में वोट देने न आते। न ही समस्या का इतना प्रचार होता। प्रजातंत्र में यह पहला स्वस्थ पग अमेरिका में है, जहाँ गोलमोल राजनीतिज्ञों को एक नवयुवक ने इतना चेताया। भविष्य काल से आशाप्रद है। ⊙

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताशकंद के बाद : गंभीर भविष्य चिंतन

● कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'

धमाके की तैयारी

दस जनवरी १९६६ को सुबह ही सुबह भारत-पाकिस्तान के बीच रूस के एक नगर ताशकन्द में समझौता हुआ। इस पर भारत के प्रधान मन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री और पाकिस्तान के राष्ट्रपति श्री अयूब ने हस्ताक्षर किये।

जय पराजय का वातावरण सद्भाव की पगचाप में ढक गया और दोनों देशों के नेता यों गले मिले, जैसे दोनों देशों की बिछुड़ी आत्मायें ही मिल रही हों। संसार भर ने खुशी के साथ यह समाचार सुना और चीन इससे कुम्हला गया।

यह लाल बहादुर शास्त्री के अकम्प निर्णय की विजय थी, यह जनरलों, सेनापतियों और सैनिकों के शौर्य की विजय थी और यह भारत में बसे हिन्दुओं-मुसलमानों-सिखों-जैनों-पारसियों-इसाईयों के एकाग्र संकल्प की विजय थी।

हां, यह भारत के इतिहास की वरणीय घड़ी थी, पर स्मरणीय हो गई. क्योंकि उसी दिन रात को शास्त्री जी की मृत्यु हो गई। अब ताशकन्द से बड़ा प्रश्न देश के नेता का चुनाव था। नेहरू जी की मृत्यु के बाद सारे संसार ने हमारी तरफ देखा था। इस देखने में एक प्रश्न था—हम आपस में लड़ मरेंगे और शासकदल छिन्न-भिन्न हो जाएगा या हम प्रजातंत्री ढंग से नये नेता का चुनाव कर अपनी जीवन शक्ति का परिचय देंगे? शास्त्री जी के सर्वसम्मत चुनाव ने देश को गौरवान्वित किया, प्रजातन्त्र को सामर्थ्य समन्वित।

कुल उन्नीस महीने बाद यह प्रश्न और भी तीखे रूप में फिर सामने खड़ा होगया। शांत-संतुलित वातावरण में प्रजातंत्री ढंग से श्रीमती इंदिरा गाँधी प्रधान मंत्री चुनी गईं, तो प्रश्न ने नया रूप लिया—शास्त्री जी ने भारत के नेतृत्व को जिस ऊँचे धरातल पर पहुंचा दिया है, क्या इंदिरा जी उसे उस धरातल पर बनाये रख सकेंगी? इस प्रश्न में अविश्वास था और यह अविश्वास गहरा था। गहराई का रूप यह था कि इंदिरा जी में नेतृत्व की क्षमता कितनी है?

यह प्रश्न सबसे पहले कसौटी पर आया इंदिरा जी की अमरीका यात्रा में। भारत और अमरीका के संबंध काफी खराब हो रहे थे और देखना था कि इंदिरा जी उन सबको क्या मोड़ देती हैं? मनोरमा और मनोबला प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की अमरीका यात्रा सफल रही, इसमें दो राय नहीं हो सकती। अमरीका के कूटनीतिज्ञ गिद्धों के झुन्ड में भारत की राजहंसिनी अविचल रही, इसमें दो राय नहीं हो सकती। भारत-पाक युद्ध के समय अमरीका और भारत में जो कटुता आ गई थी और संबन्धों में जो गतिरोध पैदा हो गया था, उसे अपने व्यवहार की मनोरमता से इन्दिरा जी ने तोड़ दिया, इसमें दो राय नहीं हो सकती। अमरीका के कूटनीतिज्ञ शालीन नारी से हाँ में हाँ मिलाने का जो वातावरण भय और प्रलोभन के धागों से बुन रहे थे, उसे इन्दिरा जी ने तार तार कर दिया, इसमें दो राय नहीं हो सकती।

हाँ, इनमें से किसी पर भी समझदार और ईमानदार आदमी की दो राय नहीं हो सकती, पर क्या इसमें दो राय हो सकती हैं कि अमरीका स्वयं भारत को विश्व की एक महाशक्ति न बनने देकर संकट के समय भारत को अपना आश्रित रखने की, जो कूटनीति प्रेजीडेंट आइजन होवर के समय आरम्भ कर चुका है, उसे उसने मनोरमा और मनोबला प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी की अमरीका यात्रा के बाद भी समाप्त नहीं किया। साफ साफ कहूं कि अब वह भारत पर अपने कूटनैतिक दबाव का सब से बड़ा बोझ डालने की तैयारी में है और चीन पाक दोस्ती की पृष्ठभूमि में पाकिस्तान ताशकन्द समझौते का उलंघन कर युद्ध की जो तैयारी कर रहा है, वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमरीका के उसी दबाव का अस्त्र है ?

बिना किसी भूमिका और रंग-रोगन के मैं कहना चाहता हूं कि इस बड़े बोझ में दब कर या तो भारत पूरा कश्मीर, लद्दाख, नेफा, भूतान, सिक्किम और आसाम देगा या इस बोझ को अपनी शक्ति-धीरज से व्यर्थ कर पूरा पाकिस्तान लेगा—फिर से अखंड भारत की रचना में सफल होगा। युग की पुकार है कि भारत के राजनीतिज्ञ, सेनापति, विचारक और नागरिक इस बात को एक साथ समझें।

अगर हम राजनैतिक धुवें से बाहर आकर देखें, तो सब समस्याओं की समस्या और सब प्रश्नों का प्रश्न यह है कि पाकिस्तान का धर्मपिता अमरीका भारत से कश्मीर लेना चाहता है। पंडित जवाहरलाल नेहरू के शासक जीवन की एक बड़ी सफलता यह है कि अमरीका के लाख दबाव पड़ने पर भी वे उसकी चाह पर नहीं झुके और एक बड़ी असफलता यह है कि काश्मीर के प्रश्न की सही तस्वीर वे संसार के सामने नहीं रख सके। भारत-पाक युद्ध की एक बहुत बड़ी उपलब्धि, यह थी कि काश्मीर के प्रश्न की सही तस्वीर दुनिया के सामने आ गई—अरे, काश्मीर भारत का है, तभी तो वह उसके लिये लड़ रहा है। इसे और भी साफ-साफ यों कहा जा सकता है कि काश्मीर लेने के लिए ही अमरीका पाकिस्तान के रूप में हम से लड़ा था, पर शास्त्री जी के महान नेतृत्व ने और सैनिकों के शौर्य ने उसे पीटकर रख दिया—उस के मनसूबे मिट्टी में मिला दिये।

ताशकन्द समझौते की भारत के लिए सबसे बड़ी उपलब्धि ही यह थी कि अमरीका काश्मीर के बारे में पूरी तरह निराश हो गया और उसने मान लिया कि वह उसे नहीं मिल सकता और जो मिल जाए, उसे ही लेकर संतुष्ट होने को तैयार है। केन्द्रीय मंत्री श्री जगजीवन राम का यह वक्तव्य कि हमें काश्मीर की वर्तमान सीमाओं में थोड़ा बहुत फेर फार कर अन्तर्राष्ट्रीय सीमा बनाने के लिए तैयार हो जाना चाहिए, अमरीकी मन की ही प्रतिच्छाया थी, पर तुरन्त ही कुछ ऐसी बातें हो गईं कि अमरीका की सूखी आशा में कश्मीर प्राप्ति की कोपलें फिर निकल आईं। राष्ट्रीय महत्व की दृष्टि से इन बातों का समझना जरूरी है, महत्वपूर्ण है।

पहली बात हुई शास्त्री जी की तुरन्त मृत्यु। स्वतंत्रता के १८ वर्षों की यह सबसे बड़ी राष्ट्रीय दुर्घटना थी। कैसे ? जवाहर लाल ने विश्व की परिस्थितियों का—विशेषतः रूस अमरीका के बीच कड़वे तनाव का लाभ उठाकर संसार के मंच पर भारत को नैतिक शक्ति का, शाँतिदूत का रूप दिया था, पर चीन ने २० अक्टूबर १९६२ को नेफा में आक्रमण कर उस शक्ति के टुकड़े-टुकड़े कर दिये और भारत नगण्य हो गया। इसी स्थिति का लाभ उठाने के लिए कश्मीर पर पाकिस्तानी आक्रमण हुआ, पर लाल बहादुर जी राष्ट्र की शक्तियों को संगठित करने में और उन शक्तियों का बलिष्ठ प्रदर्शन करने में इस हद तक सफल हो गये कि विश्व के इस रंगमंच पर, जहाँ नैतिक भारत की मूर्ति टूटी पड़ी थी, राजनैतिक शक्ति सम्पन्न भारत की नई मूर्ति प्रतिष्ठित हो गई और लाल बहादुर जी जवाहर लाल के वारिस न रह कर स्वयं एक महाशक्ति के रूप में उदित हुए। ताशकन्द समझौते की पृष्ठभूमि में इसी महाशक्ति का आतंक था और लाल बहादुर जी की मृत्यु से वह टूट गया। यह भारत के भाग्य की अपूर्णीय क्षति थी।

दूसरी बात यह हुई कि शास्त्री जी के मरते ही भारत के अदूरदर्शी और व्यक्ति एवं दल की निष्ठा से अभिभूत राजनीतिज्ञ ऐसी हल्की बहसों में बहके कि वह आतंक पूरी तरह चूर-चूर हो गया। सबसे पहला छेद केन्द्रीय मंत्री श्री महावीर त्यागी ने किया—ताशकन्द समझौते के विरोध में त्याग पत्र देकर और फिर छेद ही छेद हो गए। पार्लियामेंट की हल्की बहस में किसी ने पूछा—शास्त्री जी को रात में दूध किस ने पिलाया था ? किसी ने पूछा उनके कमरे में टेलीफून था या नहीं ? किसी ने पूछा—वे कैसे मकान में ठहराये गए थे ? किसी ने कुछ, किसी ने कुछ और सब भूल गए कि दुनिया उनका नंगा नाच देख रही है—आये थे हरि भजन को ओटन लगे कपास।

तीसरी बात हुई यह कि ताशकन्द समझौता कराने से एशिया, अफ्रीका में रूस का बहुत प्रभाव बढ़ गया और सब देश अपनी समस्याओं के लिए रूस की ओर देखने लगे। यही क्षेत्र अब अधिकसित होने के कारण शोषण के लिए उपयुक्त है, तो अमरीका के लिए यह असह्य हुआ कि यह क्षेत्र रूस के प्रभाव में चला जाए। इसी बीच रूस ने अमरीका से पहले चान्द पर अपना उपग्रह उतार दिया, इससे भी अमरीका हिरहिराया और उसने रूस के साथ अपना शक्ति-सन्तुलन सही रखने के लिए चीन

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कमर थपथपाई। चीन पाकिस्तान की नई दोस्ती में इसी थपथपाहट की आवाज है। भारत की आन्तरिक कमजोरी ने इस आवाज को नई ताकत दी है।

कमजोरी आती है तो वह कमजोरियां साथ लाती है। नागालैंड-शांतिमिशन का गुब्बारा फट गया, बंगाल में कम्यूनिस्टों ने काँग्रेस शासन को चारों खाने चित्त दे मारा, सेना बुलानी पड़ी, पंजाब में अकाली और जनसंघी दुश्मनों की तरह लड़े, हड़तालों, प्रदर्शनों, अनशनों और धमकियों की बाढ़ आ गई और मिजो विद्रोह का झण्डा खुलेआम फहरा उठा प्रतिष्ठा की दीवार बील-खील हो गई। काँग्रेस की गुटबंदियों ने इस टूटी दीवार पर बदबूदार तेजाब छिड़क दिया, प्रशासन का ढाँचा और भी चरमरा गया, व्यापारी और वितरण एजेन्सियां, मिलकर खुल खेले, संगठन विघटन में बदल गया और अमरीकी कूटनीति के होठों पर मुस्कराहट खेल गई–'वंसमोर'–एक बार कश्मीर पाने के लिये और नया धमाका किया जाए, भले ही इस पाने में चीन को भी कुछ देना पड़े।

देश के नेताओं, सेनापतियों, विचारकों और नागरिकों से हृदय की सम्पूर्ण आकुलता के साथ मैं निवेदन करता हूं कि यह नया धमाका पहले सब धमाकों से बड़ा होगा और इसमें हम कमजोर पड़े, तो पूरा कश्मीर-लद्दाख भूतान, सिक्किम, नेफा और आसाम देंगे, पर जमे रहे, तो पूरा पाकिस्तान लेंगे और भारत फिर अखंड होगा।

कैसा बड़ा धमाका ?

केनेडी और ख्रुश्चेव के विश्व की राजनीति में आने के समय रूस और अमरीका में भयंकर तनाव था, खुली दुश्मनी थी और उस समय की संसार की राजनीति का चिन्तन सूना था–दोनों की टक्कर से होने वाला संसार का सर्वनाश कैसे बचे ?

तनाव इतना गहरा था कि दोनों देशों के नेता आपस में बात भी नहीं कर सकते थे और जहां सम्पर्क की ही गुंजायश न हो, वहां सम्बन्ध का सूत्र कैसे जुड़ सकता है ? दोनों के बीच फौलाद की दीवार थी।

इस चट्टानी दीवार को घन की चोट से तोड़ना, डायनामाइट से उड़ाना या क्रेन से हटाना किसी लौह पुरुष के वश का न था। एक निहायत हसीन राजकुमार ने अपना लाल गुलाब धीरे से इस दीवार पर थपथपाया और भाग्य का चमत्कार कि वह दीवार हिल गई। जवाहर लाल ही वह राजकुमार थे।

अब जवाहरलाल केनेडी-ख्रुश्चेव नेहरू की त्रिमूर्ति में प्रतिष्ठित थे–दो शिखरों के बीच मधुर सम्पर्क सूत्र। जवाहरलाल को इतिहास का एक मैल्यूट कि इस रूप में दो बार उन्होंने विश्वयुद्ध को पीछे धकेला और दोनों की टक्कर से होने वाला संसार का सर्वनाश कैसे बचे, इस प्रश्न को मुलायम बनाया।

जवाहरलाल पर इतिहास का एक व्यंगात्मक अट्टहास कि वे अमरीका-रूस-युद्ध को रोकने में इतने खो गए कि भारत के सिर मंडराते युद्ध को भूल गए। हाय रे, भले मनुष्य के भोले अहंकार 'जब मैं विश्व युद्ध को रोक सकता हूं, तो मेरे रहते, भारत के साथ युद्ध का साहस कौन कर सकता है ?'

चीन ने यह साहस किया और नेहरू का विश्व व्यक्तित्व दचका खा गया। चीन नई शक्ति के रूप में उभरा और उसने रूस-अमरीका को ललकारा–भय बिन होत न प्रीत, तो रूस-अमरीका शत्रुता भूल समीप हो गए। यह समीपता हमारे काम आई उस दिन, जिस दिन चीन ने भारत-पाक युद्ध में हमें अल्टीमेटम दिया और अमरीकी रेडियो ने घोषणा की–"रूस के नेताओं से सलाह कर हमने-चीन से कह दिया है कि वह भारत पर आक्रमण करेगा तो हम भारत को पूरी सहायता देंगे।

चीन रुक गया, भारत पाकिस्तान पर हावी रहा, ताशकन्द समझौता हो गया, पर कुछ दिन बाद ही उस का रंग फीका पड़ गया। क्यों ? इस समय अमरीका की कूटनीति संसार का नेतृत्व कर रही है। रूस शक्ति में अमरीका के बराबर है, कहीं आगे भी है पर कूटनीति में अमरीका ही सिरमौर है। इस धारा में उसके दाव को हम समझें।

अंग्रेज ने पाकिस्तान इस लिए बनाया था कि शेष भारत में भी बटवारे की प्रवृत्ति जागेगी। हैदराबाद, ग्वालियर-बड़ौदा-इन्दौर आदि स्वतंत्र हो जायेंगे, भारत कमजोर रहेगा—हम उसे गुलाम बनाने के कलंक से बच कर भी गुलाम बनाए रखेंगे, पर ऐसा नहीं हुआ। काश्मीर पर कबालियों का आक्रमण अंग्रेज राजनीति का माया चक्र था। उद्देश्य था भारत की दृढ़ता को खंडित करना। अंग्रेज युद्ध में टूटे हुये थे, अमरीका साधन-सम्पन्न था। उसने अंग्रेज के माया-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चक्र पर कब्जा कर लिया और कबालियों का नेता बन गया। अमरीकी धूर्त हैमरसेट, जिसने मुसलमान बनने का नाटक रच सब को बेवकूफ बनाया। अंग्रेज के माया चक्र पर अमरीका का कब्जा होते देख अंग्रेज राजनीतिज्ञ लार्ड माऊन्ट बैटन ने जवाहरलाल को पट्टी पढ़ा काश्मीर को सुरक्षा-परिषद में उलझवा दिया, पर सुरक्षा परिषद में अमरीका का प्रभुत्व था, इसलिए काश्मीर का माया चक्र अमरीका के हाथ में चला गया।

हम साफ समझ लें—अमरीका चाहता है आजाद कश्मीर के नाम पर काश्मीर को अपने कब्जे में रखना। जिन्ना जैसे अंग्रेज का हथियार था, अब्दुल्ला अमरीका का हथियार है। अमरीका ने बरसों तक सुरक्षा परिषद में भारत को दबाया कि काश्मीर पा ले, पर रूस के वीटो ने हमें बचा दिया। यह नेहरू जी की विदेश नीति का सफल चमत्कार था। तब अमरीका ताकत पर उतर आया, क्योंकि नेहरू रहे नहीं थे और लाल बहादुर को दुनिया राजनैतिक बौना समझ रही थी। भारत-पाक युद्ध अमरीका की काश्मीर फतह का प्रोग्राम था। इसे हम यों समझें कि हमारे रक्षा मन्त्री श्री यशवन्त राव चव्हाण ने साफ-साफ कहा था कि अमरीका का यह कहना कि पाकिस्तान को पैटन टैंक चीन और रूस से लड़ने के लिए दिए गए हैं, सफेद झूठ है, क्योंकि चीन और रूस की तरफ तो भौगोलिक कारणों से जमीन की ऊंचाई के कारण से ये टैंक चढ़ ही नहीं सकते, ये तो भारत के लिए ही पाक को दिये गए थे।

भारत-पाक युद्ध का यह विश्लेषण तो सर्व सम्मत ही है कि अमरीका पूरे रूप में पाकिस्तान की विजय चाहता था, उस की विजय का विश्वासी था। इस युद्ध में अमरीका की कूटनीति ने चीन को दबाया भी और उससे लाभ उठाया भी, क्योंकि चीन के आक्रमण का आतंक दिखाकर ही भारत को पूर्वी पाकिस्तान, यानी पाकिस्तानी बंगाल पर आक्रमण करने से रोका गया। नहीं तो, लाहोर से बहुत आसान था बंगाल पर कब्जा करना भारत के लिए।

जो हो, भारत-पाक युद्ध में अमरीका की कूटनीति भारत के भाग्य के सामने पिट गई, पर पिट कर बैठ जाना तो कूटनीति का स्वभाव नहीं। उसका स्वभाव है नई करवट लेकर हार को विजय हार बनाने का प्रयत्न करना। भारत की जनता में अमरीका के प्रति नफरत का उफान था, इसलिए रूस के माध्यम से भारत-पाक समझौता हुआ और अमरीका ने उस पर प्रसन्नता प्रकट की।

इस समझौते से एशिया-अफ्रीका में चीन हीन हो गया और रूस महान। इन्डोनेशिया में चीन और भी बुरी तरह पिट गया और इस तरह कम्युनिस्ट संसार का नेतृत्व फिर पूरी तरह रूस के हाथ में जाने लगा। अमरीका की विदेश नीति का सार है—कम्यूनिस्ट शक्ति का अवरोध। पहले महायुद्ध के बाद रूस की बढ़ती हुई शक्ति का नियंत्रण करने के लिये इंगलैंड ने हिटलर को ताकत दी थी और अब रूस की बढ़ती हुई शक्ति का नियंत्रण करने के लिए अमरीका चीन को थपथपाने की ओर झुक गया, जिससे अमरीका भारत पर बड़ा धमाका कर काश्मीर भी ले सके और रूस के प्रभाव को भी बाँट सके।

सबसे पहले अमरीका के प्रभावशाली सीनेटर (संसद सदस्य) श्री फुललाइट और श्री वाल्टर लिपमैन ने हाँक लगाई कि अमरीका को वियतनाम युद्ध से पीछे हटना चाहिए और एशिया में चीन का प्रभाव स्वीकार करना चाहिए। इसके बाद अमरीका के उपराष्ट्रपति श्री हरबर्ट हम्फ्री ने कहा—"विश्व की राजनीति में चीन को अलग थलग रखना ठीक नहीं है।"

अमरीकी कांग्रेस की विशेषज्ञ समिति ने जो रिपोर्ट दी, उसमें विदेश मंत्रालय को निर्देश दिया गया है कि साम्यवादी चीन के साथ सम्पर्क बढ़ाने की कोशिश की जाए भले ही चीन हमारे प्रस्तावों के प्रति बेरुखी दिखाए।

विशेषज्ञों के निष्कर्ष का आधार यह है—"अन्ततः हमें यह लगता है कि एशिया में टिकाऊपन और शान्ति की स्थापना, साम्यवादी आक्रमण को हतोत्साहित करने और एशिया के स्वतंत्र देशों—भारत पाक, कोरिया, जापान—को आर्थिक रूप से विकसित होकर राजनैतिक रूप में परिपक्षता प्राप्त करने देने के हमारे प्रयत्नों की सफलता समय आने पर हमारे साम्यवादी चीन से अच्छे और प्राप्यवान सम्बन्ध स्थापित करने पर ही निर्भर करती है।"

और यह सोचना एक दम गलत होगा कि एशिया में शान्ति चीन को झुकाने पर ही स्थापित हो सकती है।"

चीन के प्रति अमरीका का नया झुकाव अंत में एकदम साफ हो गया अमरीका के प्रतिरक्षामन्त्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री मैकनमारा के इस प्रेस-वक्तव्य से कि चीन के अलगाव को जितना कम किया जाएगा, उससे युद्ध का खतरा उतना ही कम हो जाएगा।

अमरीका और रूस के बीच चीन के प्रति अमरीकी रुझान से खींच पैदा हुई; यह रूसी प्रधान मंत्री श्री कोसिगिन की मिश्र यात्रा के समय साफ दिखाई दिया। उन्होंने अमरीका की वियतनाम नीति की कड़वी आलोचना की और अमरीकी राजदूत श्री बैटल ने कोसीगिन के सम्मानभोज और विदाई समारोह का बायकाट किया। वियतनाम में अमरीका की युद्धनीति चीन की अप्रत्यक्ष युद्धनीति से पछाड़ खा रही है और वह वहां इसलिए लड़ रहा है कि हटने का बहाना नहीं पा रहा। यहीं इतना और कि रूस और भारत यह बहाना देने में असफल रहे हैं और शायद अमरीका अब चीन से ही यह बहाना पाना चाहने लगा है, क्योंकि अमरीका का जागृत जन मानस वियतनाम में युद्ध का घोर विरोधी बनता जा रहा है।

क्या इस पृष्ठ-भूमि में यह स्पष्ट नहीं है कि जिस दिन प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी भारत से अमरीका के लिए चलीं, अचानक उसी दिन पाकिस्तान में चीन के युद्धनेता का जोरदार स्वागत हुआ और करांची में चीनी टैंकों का प्रदर्शन किया गया, पर अमरीका इससे ज़रा भी क्यों नाराज नहीं हुआ ? बात साफ है कि चीन-पाकिस्तान दोस्ती में अमरीका की शह है और वह काश्मीर लेने के लिए भारत पर एक बड़ा धमाका करना चाहता है, जिसमें काश्मीर अमरीका को मिल जाए, भूतान, सिक्किम, नेपाल चीन को और आसाम पाकिस्तान को।

इस बड़े धमाके का स्वरूप क्या होगा ? यह कि नागा मिजो क्षेत्र में वियेत कंग जैसा गुरिल्ला वार शुरू हो, कम्यूनिस्ट रेलों की तोड़-फोड़ आगज़नी और हड़तालों से जिनका वह खूब रिहरसल कर रहे हैं, भीतरी व्यापक गड़बड़ी मचा दें और तब चीन, पाक का सम्मिलित आक्रमण भारत पर हो और भारत मुंह में तिनका दबाकर आत्म रक्षा के लिए अमरीका के सामने शरणागत हो-उस की मुंह बोलो शर्तों पर उस के झंडों के नीचे आ जाए।

राह कहाँ है ?

अप्रैल १९६५ के 'नया जीवन' में मैंने लिखा था कि युद्ध के सम्बन्ध में जनता के मन में क्या सन्देह है और सरकार के आश्वासन कितने विश्वसनीय हैं –

"इधर के दिनों में हमारे देश के नेताओं ने बार-बार कहा है कि हम युद्ध की किसी भी परिस्थिति के लिए तैयार रहें। इसका एक ही अर्थ होता है कि भारत सैनिक दृष्टि से अब मजबूत है, पर यह सुनने के बाद भी मैं अनुभव करता हूं कि भारत के पढ़-लिखे समझदार लोगों और अनपढ़ भोले लोगों के दिमाग में बड़ों की बात सुनकर भी संदेह का वातावरण बना रहता है, जैसे वे अपने से पूछ रहे हों–क्या सचमुच भारत मजबूत है ?

इस संदेह की पृष्ठ-भूमि क्या है ? क्यों है यह संदेह ? इस सन्देह की पृष्ठ-भूमि है चीनी आक्रमण का पुराना अनुभव। सर्व समर्थ और सर्वाधिकारी स्वर्गीय प्रधान मन्त्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने जो वादे किये थे कि यदि आक्रमण हुआ, तो मुंह तोड़ जवाब दिया जाएगा, वे अनुभव की कसौटी पर झूठे और बेदम निकले। उनके साथ ही छड़ी हिलाने और चलाने में परम प्रचंड रक्षामंत्री श्री मेनन ने बार-बार फौजी सामान बनाने वाले जिन कारखानों की चर्चा की थी, बाद में मालूम हुआ था कि उनमें थर्मस बन रहे थे। ये बातें आम आदमी के मन में शक पैदा करती हैं कि आज के नेताओं के वादे भी कहीं वैसे ही न हों।"

१९६२ के चीनी आक्रमण की एक महत्वपूर्ण बात यह थी कि प्रधान मन्त्री नेहरू को आक्रमण न होने का अखंड विश्वास था। इस विश्वास ने उन्हीं के शब्दों में 'एक अवास्तविक वातावरण' की रचना कर दी थी। चीनी आक्रमण से यह अवास्तविक वातावरण टूट गया और इसके साथ ही टूट गये नेहरू जी। तब बागडोर आई श्री लाल बहादुर शास्त्री के हाथ। शास्त्री जी वास्तविक वातावरण के आदमी थे। भारत-पाक युद्ध में शास्त्री जी की वास्तविक बुद्धि का प्रदर्शन इस अन्दाज में हुआ कि इस युद्ध में चीन नहीं कूदेगा। वह युद्ध भारत पर अमरीका - इङ्गलैंड-पाकिस्तान का सम्मिलित आक्रमण था; बाद की घटनाओं से यह स्पष्ट हो गया कि इसमें भारत से कश्मीर ले लेने की सम्मिलित योजना थी। शास्त्री जी की दृढ़ता से वह फेल हो गई।

ताशकन्द समझौते के बाद हम पर जिस आक्रमण की तैयारी हो रही है, वह एक तरफ से अमरीका, इंगलैंड, चीन और पाकिस्तान का भारत पर सम्मिलित आक्रमण होगा और उसका उद्देश्य, जैसा कि मैंने ऊपर, भारत से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काश्मीर, लद्दाख, नेफा, भूतान, सिक्किम और आसाम लेना होगा—मौका लगे तो बंगाल और राजस्थान का भी काफी भाग—जिससे बाकी बचा स्वतंत्र भारत सदा ही अमरीका का आश्रित रहे और चीन की दृष्टि भी उसके प्रति मुलायम रहे।

सचमुच यह एक भयंकर योजना है और इसका एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि १९१४-१८ के प्रथम विश्वयुद्ध से ही अमरीका की रणनीति यह है कि 'दूसरे देश की जमीन पर, अपने देश से दूर लड़ो, यानी काटने को हथियार हमारे लो, कटने को जवान अपने दो और जम कर लड़ो। तो अमरीका काश्मीर लेकर भारत में इस तरह पैर जमाना चाहता है कि वह संसार की युद्ध नीति को ऐसा मोड़ दे सके कि तीसरे विश्वयुद्ध का कुरुक्षेत्र भारत की भूमि बने और अमरीका की भूमि उससे सुरक्षित रहे। यह तो निश्चय ही है कि अणु युद्ध होने पर भी सारा संसार नष्ट न होगा और उसके बाद भी यह दुनिया किसी न किसी रूप में बची ही रहेगी। अमरीका ने अन्न में और उपभोक्ता उद्योगों में भारत को काफी सहायता दी है, पर भारत को सैनिक दृष्टि से कमजोर रखने का ही प्रयत्न किया है। भारत पाक युद्ध के बाद भी पाकिस्तान को सैनिक दृष्टि से मजबूत और भारत को कमजोर रखने के जो प्रयत्न अमरीका कर रहा है, उसकी यही पृष्ठ भूमि है कि भारत संसार की एक स्वतंत्र शक्ति नहीं अमरीका की पिछलग्गू शक्ति रहे। भारत-पाक युद्ध में भारत ने एक स्वतंत्र शक्ति का रूप लेने की ओर जो कदम उठाया, अब अमरीका, चीन, पाक, सम्मिलित आक्रमण के रूप में उनको बदला लेने पर उतारू हैं।

निश्चय ही यह भारत के लिए एक खतरनाक बात है, पर यह बात भारत के साथ ही अमरीका के लिए भी खतरनाक हो सकती है। इसे भी हम समझें। अमरीका-दाव के दो परिणाम निश्चय हैं। पहला यह कि चीन का प्रभाव पाकिस्तान में बढ़े और दूसरा यह कि रूस अमरीका से तनाव में आकर भारत की ओर बढ़े, इस युद्ध में महत्वपूर्ण मदद करे। इस स्थिति में यदि भारत चीन-पाक सम्मिलित आक्रमण को असफल कर दे, उसकी बाढ़ को रोक दे, तो क्या होगा? स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि पाकिस्तान चीन के पेट में चला जाएगा और अफगानिस्तान, ईरान, ईराक, टर्की तक का कोना उसके आतंक में समायेगा। इस स्थिति को रोकने के लिए अमरीका के पास कोई दाव न बचेगा, सिवा इसके कि वह अपना प्रभाव डालकर भारत-पाकिस्तान को किसी न किसी रूप में फिर एक करे और दोनों की सम्मिलित शक्ति से चीन को पीछे धकेले।

क्या भारत ने अमरीका, चीन इङ्गलैंड, पाकिस्तान के सम्मिलित आक्रमण के खतरे को समझा?

क्या भारत ने चीन-पाकिस्तान सम्पर्क के इस खतरे को समझा?

क्या भारत ने इस खतरे से बचने के लिए कोई उपाय किया?

क्या अमरीका ने इस खतरे से बचने के लिए कोई उपाय किया? हाँ, भारत अमरीका ने इस खतरे को समझा और इन से बचने का उपाय किया। अमरीकी उपाय के रूप में ही भुट्टो की विदाई हुई, क्योंकि भुट्टो घोर चीन समर्थक था और वह पाकिस्तान में किसी दिन वही स्थिति पैदा कर सकता था, जो इंडोनेशिया में चीन समर्थकों ने की। उसके हटने से अमरीका का पंजा मजबूत हुआ है और वह अब किसी दिन पाक में बढ़ते चीन प्रभाव को रोक देने की आशा करता है।

भारत में इन्दिरा जी के नेतृत्व ने इस खतरे से बचने के लिए यह किया कि समाजवाद की नारेबाजी छोड़ कर अपने को काफी हद तक अमरीका की ओर झुकाया। खाद कारखानों के ऐग्रीमेंट, शिक्षा-संस्थान की स्थापना और अवमूल्यन इसी का फल थे। अमरीका को एक दिन ऐसे आदमी की जरूरत थी, जो रूस अमरीका के तनाव को कम कर सके। जवाहर लाल नेहरू ने यह काम किया था और उससे विश्व राजनीति में उनका महत्व बढ़ा था। अब अमरीका को ऐसे आदमी की जरूरत है, जो वियतनाम में उसकी प्रतिष्ठा को सही सलामत वापिस ला सके। इन्दिरा जी ने वियेतनाम में समझौता कराने के लिए इंगलैंड, रूस, भारत के अन्तर्राष्ट्रीय जेनेवा आयोग की मीटिंग बुलाने का प्रस्ताव पूरी ताकत से आसमान में उछाला कि वे अपने पिता की तरह यह जरूरत पूरी कर सकें।

इस सबसे अमरीका मुलायम पड़ा और उसने अन्न एवं दूसरी उपभोक्ता योजनाओं में सहायता देने का हाथ बढ़ाया। भारत की स्थिति कुछ सम्भली, पर उतनी ही मात्रा में रूस भारत से खिंच गया और पाकिस्तान की तरफ झुक गया। अफवाह गरम हुई कि वह पाक को सैनिक सहायता भी देगा। इसी स्थिति में इन्दिरा जी रूस गईं। इस अर्थ में यह यात्रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सफल हुई कि रूस से टूटती भारत-मैत्री की कड़ी टूटने से बच गई और सहायता का वचन मिला, पर इस अर्थ में यह यात्रा असफल हुई कि अमरीका में इन्दिरा जी के व्यक्तित्व प्रभाव को जो नम्बर मिले थे, वे फर्स्ट डिवीजन से थर्ड डिवीजन में आ गए। इसके दो कारण हुए। इंदिरा जी और कोसीगिन के हस्ताक्षरों से जो विज्ञप्ति प्रकाशित हुई, उसमें इन्दिरा जी वियतनाम के प्रश्न पर अमरीका से और भी दूर हो गईं। रूस जाने से पहले उनका प्रस्ताव था कि वियतनाम में शांति के लिए आवश्यक है कि युद्धबंदी हो--इसका मोटा अर्थ था कि दोनों पक्ष युद्ध बन्द करें। रूस की विज्ञप्ति में वे इस पक्ष पर कि अमरीका बम वर्षा बन्द करे—इसका मोटा अर्थ था कि दूसरे पक्ष पर उन्होंने कोई पाबन्दी नहीं लगाई। इसका बाकी अर्थ हुआ कि वियेतनाम की गड़बड़ी का जिम्मेदार अकेला अमरीका है।

एक और भी बात हुई कि भारत में जमा अमरीकी रुपये से जो भारत-अमरीका-शिक्षा-संस्थान स्थापित होना तय हुआ, उसका देश में घोर विरोध हुआ और उसे भारत की संस्कृति पर अमरीकी अभिमान कहा गया। इस विरोध का प्रतिरोध इन्दिरा जी नहीं कर पाईं और अमरीका ने संस्थान स्थापित करने का जो प्रस्ताव बेइज्जती के साथ वापस ले लिया, इससे अमरीका की दृष्टि में निश्चय ही इन्दिरा जी की अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय उपयोगिता कम हो गई। तुरन्त यह समाचार आया कि पश्चिमी जर्मनी से ९० लड़ाकू विमान ईरान होकर पाकिस्तान पहुंच गये हैं. यानी भारत पर चीन-पाक आक्रमण का चक्र फिर तेजी से घूम चला।

और रूस कहाँ रहा ? यह सच है कि रूस के वीरों ने ही अभी तक काश्मीर को भारत के हाथ में रहने दिया। नहीं तो अमरीकी कूटनीति उसे कभी का निगल जाती, पर अब रूस की नीति में थोड़ा परिवर्तन आ गया है। ख्रुश्चेव उन सब के दुश्मन थे, जो अमरीका परस्त हैं। इसलिए पाकिस्तान, ईरान और टर्की के खिलाफ उनका रुख सख्त था। बाद में नीति यह हो गई कि अपने पड़ौसियों से दोस्ती करो। अब रूस पाकिस्तान, ईरान और टर्की के प्रति मुलायम हो गया है। दो विरोधियों के साथ दोस्ती रखने का एक ही उपाय है कि उनका विरोध कम कर दिया जाए। काश्मीर ही भारत-पाक दुश्मनी की जड़ है और अमरीका प्रयत्नशील है कि काश्मीर भारत से छिन जाए, तो रूस भी अब चाहता है कि काश्मीर के बारे में कोई फैसला हो जाए। ठीक कहना तो कठिन है, पर काश्मीर का जो भाग भारत के हाथ में है, उसका कुछ भाग भारत छोड़ दे, यह प्रस्ताव हो सकता है। इस तरह रूस को समझौता कराने का यश भी मिल सकता है और इस क्षेत्र में वह अमरीका के प्रभाव को कम करने में भी सफल हो सकता है।

सर्वोदयी नेता श्री जय प्रकाश नारायण यहीं इस कांड में आते हैं। शेख अब्दुल्ला से उनकी मुलाकात का यही रहस्य है। जिन्ना अंग्रेज का यन्त्र था और अब्दुल्ला अमरीका का यन्त्र है। अंग्रेज कूटनीति ने देश का बटवारा किया, पर निमित्त रहा जिन्ना। अमरीकी कूटनीति काश्मीर चाहती है, पर निमित्त बनाना चाहती है अब्दुल्ला को कि उसके नेतृत्व में काश्मीर अमरीका की कठपुतली रहे। श्री राजगोपालाचारी और श्री जयप्रकाश जी जैसे लोगों का देश में एक वर्ग ऐसा है, जो किसी भी कीमत पर यह नहीं चाहता कि भारत कम्यूनिस्ट हो हो जाए। वे अनुभव करते हैं कि भारत के प्रजातन्त्र की रक्षा सिर्फ अमरीका के साथ रहने से ही हो सकती है। इसलिए वे चाहते हैं कि यदि काश्मीर के मसले पर कोई सुलह हो, तो उसका श्रेय अमरीका को मिले, यानी वह इस तरह हो कि भारत अमरीकी समीपता उससे बढ़े। यह शायद इस तरह हो सकता है कि सुलह का रूप यह हो कि जो काश्मीर पाकिस्तान के हाथ में है. भारत मानले कि पाकिस्तान का है और जो भारत के हाथ में, वह शेख अब्दुल्ला के नेतृत्व दे में दिया जाय।

क्या होगा, कोई नहीं जानता, पर यह निश्चित है कि भारत इस समय अमरीकी कूटनीति के भयंकरतम दबाव से गुजर रहा है और उसकी प्रतिष्ठा दाव पर लगी हुई है। यदि भारत का नेतृत्व अपनी विदेश नीति और गृहनीति में सफल रहा, तो बहुत कुछ पाएगा, नहीं तो इतना अधिक खोएगा कि शायद फिर कभी उस घाटे को पूरा न कर सके। आवश्यकता है कि भारत का शासन और जनसाधारण युद्धस्तर और युद्धस्तर पर जीए, पर हो रहा है यह कि दोनों का जीवन और चिंतन ऐश-आराम के निश्चित युग में उलझा हुआ है। क्या समय रहते हम सावधान होंगे ? ★

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'समय और हम' कांड ० श्री जैनेन्द्र की दृष्टि में

प्रिय श्री प्रभाकर जी,

वीरेन्द्र के लेख की कतरन के साथ आपका पत्र समय पर मिल गया था, लेकिन इन दिनों मैं ग़ैर-हाजिर रहा। दिल्ली से उतना नहीं जितना अपने से गैरहाज़िर। इस लिए उत्तर अब आ रहा है।

इस से पहले के भी दो पत्रों में आपकी ओर से न्यौता था कि मैं उस बारे में कुछ लिखूं। हां, अभियुक्त के बयान के लिए भी मौका होता है, लेकिन आपके सम्पादकीय ने फैसला ही दे डाला था। फिर अपराधी के लिये क्या कहना बचता था। दूसरे अंक में आपने जो माफी मांगी उससे प्रगट हो गया कि आपकी जानकारी झूठी थी, लेकिन वहां भी आपने अपना निर्णय कायम रखा कि जैनेन्द्र की नीयत खोटी थी। (बिल्कुल गलत संपादक) यह सब देखकर मुझे लिखने का उत्साह नहीं रह गया।

लेकिन वीरेन्द्र मुझे अजीज़ से भी अधिक हैं। उनके मन को खोना नहीं चाहता, पर वह गहरे वहम में पड़ गए हैं। यह सोच सोचकर उन्होंने अपने को घायल कर लिया है कि 'समय और हम' से जैनेन्द्र को 'मोटा अर्थ-लाभ' हुआ है। सच यह कि एक पैसा लाभ मुझे नहीं हुआ। पूर्वोदय को तीन अंकों तक की राशि बची हो तो उस तक में मुझे संशय है। ३६०० रु० की रकम रायल्टी नाते जो हिसाब में इधर जमा हुई, उधर करीब वही छपाई व्यवस्था खाते काट ली गई। वीरेन्द्र या कोई अपना भ्रम हिसाब-किताब जांच के साथ देखकर निवारण कर सकते हैं।

पर वीरेन्द्र ने यह किया नहीं। शायद वे करेंगे भी नहीं। आर्थिक तल पर वह आना नहीं चाहते, प्रश्न को नैतिक मानते हैं। इससे अर्थ-देय के सम्बन्ध में मैं और 'पूर्वोदय' दोनों निरुपाय होकर रह गए हैं। दोनों इसलिए कहता हूं कि 'पूर्वोदय' मुझ से स्वतन्त्र संस्था है, अर्थ-लाभ में मैं उसमें सम्मिलित नहीं हूं।

अब रही नैतिक बात। मुझे अधिकारों में विश्वास नहीं है। आस्तिक होकर मैं अधिकार खो बैठा हूं, लेकिन कानून अधिकार का निर्माण करता है। उसे अपेक्षा है कि हर किताब पर 'सी' के आगे किसी नाम का उल्लेख हो। प्रकाशक ने उस जगह के लिए मेरा नाम लिख दिया, मुझसे परामर्श नहीं किया। परामर्श करते तो शायद है कि मैं वीरेन्द्र से बात कर लेता। शायद इसलिए कि बात करना अनावश्यक भी समझ सकता था, क्योंकि वह चेतना उस समय कहीं किसी ओर नहीं थी। नाम छपकर आया तो उसमें किसी को अनौचित्य नहीं मालूम हुआ। मुझ को नहीं मालूम हुआ, वीरेन्द्र को भी नहीं मालूम हुआ। नहीं तो पुस्तक की प्रति लेकर वह मेरा आटोग्राफ न मांगते।

यह तो पीछे हुआ कि उनका मन जागा। पहले जो भावना में शांत-सा था, वह पीछे अधिकार की बहक में उद्विग्न हो आया। दो हजार प्रतियां बीस रुपये मूल्य के संस्करण की छपी हैं, तीन हज़ार बारह रुपये वाली। यह राशि सीधे छियत्तर हज़ार की बन जाती है। वीरेन्द्र की जगह जैनेन्द्र की कल्पना में छियत्तर हजार की वह राशि झूम आती, तो क्या वही अचल बैठ

नया जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकता था ? और इस विचलन में वीरेन्द्र को याद आने लगा कि इन्टरव्यू तो उसने ली है, इत्यादि, इत्यादि।

यह गलत है कि वीरेन्द्र किसी स्वार्थ लाभ की दृष्टि से मेरे पास आए थे। ऐसा होता तो छह महीने तक यह वार्ता टिक नहीं सकती थी सोचने की बात है कि जैनेन्द्र कितना भी दार्शनिक और अव्यावहारिक माना जाय, अपने नाम का इतना शोषण कैसे होने देता ? इन्टरव्यू की बात वीरेन्द्र के मन में होती तो उसकी प्रेस लिपि करने और फिर प्रकाशन में लाने का सिरदर्द नाहक पूर्वोदय क्यों ओढ़ता ? वीरेन्द्र को अब तक नहीं मालूम, न मालूम करने का उन्होंने यत्न किया कि पुस्तक की टंकित प्रेस-लिपि में क्या खर्च आया। दो तिहाई पुस्तक तो सीधे टाइप पर टायपिस्ट ने ली, जिसके वेतन के बारे में वीरेन्द्र को चिन्ता नहीं करनी पड़ी। यह सब इसलिए कि पुस्तक के पीछे उसमें अर्थ-लाभ या स्वत्व लाभ की दृष्टि नहीं थी और इसके लिए, चाहे फिर बाद में जो भी हुआ, मेरे मन में वीरेन्द्र के लिए आदर है।

पुस्तक छपकर आई तब तक उनके मन में बहुत उत्साह था। कहते थे कि अगले पांच वर्ष का कार्य [illegible] है, वह उस पर भाष्य लिखेंगे। उस स्फूर्ति की जगह उनमें उल्टे नासूर जैसा यह घाव बन गया है, इसका मुझे बहुत ही परिताप है, लेकिन मैं अपने को अवश पाता हूं। कई बार वीरेन्द्र से बातें हुई। अन्तिम बार ऐसा लगा कि हाथी पार हो गया है, पूंछ भर अटका रह गई है। तब वह यह कहकर गए थे कि इस पर सोचकर फिर मिलूंगा। वह मिलना अब तक नहीं हुआ है और मैं देखता हूं कि घाव बराबर फैल रहा है।

ऊपर मैंने कहा ही है कि अधिकार कानून बनाता है अतः मैंने ऊंचे से ऊंचे विधि-विशेषज्ञों से राय ली। वे सब तर्क जो मेरे विपक्ष में और वीरेन्द्र के पक्ष में भेंटकर्ता की हैसियत से हो सकते थे मैंने अपनी ओर से दिये, किंतु मैं उनमें से किसी एक में भी तनिक दुविधा पैदा नहीं कर सका। सबने यह कहा कि प्रश्न ही पैदा नहीं होता। जिसके विचार और शब्द के लिए पुस्तक बिकेगी. अधिकार उससे बाहर जा नहीं सकता।

मैंने पुस्तक में लिखकर माना है और हर एक से हर बार हर जगह कहा है कि पुस्तक वीरेन्द्र के निमित्त से बनी। उसका योग उसमें अमित है। उस ऋण से कभी उऋण नहीं हुआ जा सकेगा। पैसा उस कृतज्ञता को धो नहीं सकता, लेकिन इस सत्यता से जैनेन्द्र या कोई मुंह नहीं मोड़ पाएगा कि पुस्तक में जैनेन्द्र के शब्द जैनेन्द्र के ही हैं। यह देखते हुए मैंने वीरेन्द्र को कहा और अब भी कहता हूँ कि, यदि विवाद का अंत न हुआ तो वह बताए कि मैं प्रकाशक को सिवाय इसके क्या सलाह दूं कि वे आगे वीरेन्द्र के कृतित्व से तनिक लाभ न लें और चाहें तो मेरे ही शब्द रखें, बाकी का लोभ छोड़ दें। वीरेन्द्र शायद यहाँ तक आग्रह नहीं करेंगे कि मेरे अपने शब्दों पर भी मेरा अपना अधिकार नहीं है।

पैसे पर मैंने बहुतेरा लिखा है, लेकिन लगता है उसकी माया का पार नहीं है। उसमें से जाने क्या नया वैचित्र्य नहीं निकल सकता, लेकिन अब भी मैं यह नहीं मानना चाहता कि मेरे और वीरेन्द्र के मनों को फाड़ कर पैसा बीच में ऐसा आ सकता है या आ गया है कि वे मन सदा के लिए फटे रहें। पर ऐसा लग रहा है कि पैसे के नितांत असंसर्ग का समय शायद जीवन में आ पहुंचा है और साहित्य का नहीं, उसी का प्रयोग अब शेष है।

आपका स्नेहाधीन,
जैनेन्द्र कुमार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री जैनेन्द्र का स्पष्टीकरण ० श्री वीरेन्द्र की दृष्टि में

समय और हम कांड पर 'नया जीवन' में छपी मेरी बात का श्री जैनेन्द्र जी ने उत्तर दे दिया है। यह न्यायोचित ही है कि इस उत्तर के प्रत्युत्तर का अवसर मुझे दिया जाए।

जैनेन्द्र जी के उत्तर में अनगिनत अन्तर्विरोध हैं। जैनेन्द्र की आध्यात्मिक प्रतिभा कैसे उन्हें न देख सकी यह आश्चर्य का विषय है।

सर्व सेवा संघ ने सस्ते संस्करण की रायल्टी के रूप में ३६००) जैनेन्द्र जी को दिये थे। पुस्तक का डिलक्स संस्करण जैनेन्द्र से भिन्न-अस्तित्व किसी पूर्वोदय प्रकाशन ने छापा। डिलक्स की छपाई पर रुपया लगाना इस पूर्वोदय का काम था तब जैनेन्द्र जी ने रायल्टी के ३६००) छपाई के लिए पूर्वोदय को क्यों दे दिये? कभी दे दिये थे तो अब डिलक्स के लगभग पूरा बिक जाने पर भी वह रकम वापस क्यों नहीं ली? सस्ते संस्करण की रायल्टी का डिलक्स की छपाई पर होने वाले खर्च से क्या सम्बन्ध? जैनेंद्र जी डिलक्स संस्करण की छपाई पर होने वाले खर्च का वर्णन करते नहीं अघाते, पर उसकी बिक्री से होने वाली आमद का उल्लेख तक नहीं करते। जितनी मेरी सूचना है २००० का संस्करण लगभग पूरा बिक चुका है। जैनेन्द्रजी का कहना है कि पूर्वोदय को इसमें ३ अङ्कों की भी राशि बची हो तो उन्हें संशय है। भाव यह है कि 'समय और हम' की २००० प्रतियों की छपाई (प्रेस कापी पर आया भीषण खर्च इसमें सम्मिलित) बिक्री, बिक्री कमीशन आदि पर ५९००० के लगभग खर्च आ गया, पर इस कानून सम्मत खर्चे में लेखक को रायल्टी भी तो पूर्वोदय को कानूनन शामिल करनी पड़ी होगी हो। जैनेन्द्र जी भिन्न अस्तित्व रखते हुए भी पूर्वोदय को यह 'सलाह' देने को तत्पर हैं कि अगले संस्करण में से वीरेन्द्र को निकाल फेंका जाय। उन्होंने पूर्वोदय को यह सलाह क्यों नहीं दी कि वह रायल्टी को दो सम न सही विषम भागों में बाँटे और न्याय संगत भुगतान करे। जैनेन्द्र जी या पूर्वोदय के विजिनेस में साझा मैंने कभी नहीं चाहा। जैनेन्द्र जी के शब्दों पर अधिकार की कामना मैंने कभी नहीं की। जो मौलिक श्रम मैंने किया है, उसकी एवज़ रायल्टी ही मैंने चाही है। इसमें जैनेन्द्र जी या भिन्न-अस्तित्व पूर्वोदय को हिचक क्यों है? जैनेन्द्र जी जैसे अहिंसा-अध्यात्मवादी अपरिग्रही को ऐसे थोथे तर्क देने की क्यों जरूरत आ पड़ी है?

कापी राइट 'सी' के आगे जैनेन्द्र जी का नाम भिन्न अस्तित्व पूर्वोदय ने जैनेन्द्र जी से परामर्श किये बिना ही दे दिया। चलिये माना, पर भूल सुधार तो हो सकती थी। एक चिप्पी चिपकवाई जा सकती थी। वैसा नहीं किया गया, क्योंकि वीरेन्द्र को इसमें कोई अनौचित्य नहीं दीखा। मुझे तो नहीं दीखा, माना; पर प्रश्न यह है कि पूर्वोदय की इस स्वार्थपूर्ण मनमानी में जैनेन्द्र जी को अनौचित्य क्यों नहीं दीखा? जब बाद में मुझे दीखा और मैंने उन्हें नम्रता के साथ दिखाया, तब भी उन्हें क्यों नहीं दीखा? आज तक हर तर्क-कुतर्क से क्यों वे इस अनौचित्य को संगत ठहराते आये हैं? पूरा 'समय और हम काण्ड' इसी एक प्रश्न की धुरी पर घूम रहा है; पैसे की, हिसाब-किताब की बातें गौण हैं। कहने वाले कहते हैं कि जैनेन्द्र जी का नाम जाने में उनकी पूर्ण सहमति रही, क्योंकि भिन्न अस्तित्व पूर्वोदय का दूरगामी हित उसी में संरक्षित था और उन्हें विश्वास था कि कुछ सौ-दो सौ देकर वीरेन्द्र को अलग किया जा सकेगा।

मेरी मांग को जैनेन्द्र जी ने 'अधिकार की बहक' बताया है। उनका कहना है कि पहले मेरा मन भावना में शान्त था। मेरा मन भावना में शान्त रहता, यदि दूसरों की धन-लिप्सा एवं अधिकार-लिप्सा की झाँकी उसे न मिलती। मैं विचार के प्रचार की भावना से ही जैनेन्द्र जी के पास गया था। विचारों का बिजिनेस करने या किसी भिन्न अस्तित्व पूर्वोदय की कमाई के लिए इस्तेमाल होने नहीं गया था। मजे की बात यह है कि जैनेन्द्र जी इतने अव्यावहारिक तो नहीं है कि वीरेन्द्र के लिए वीरेन्द्र को इन्टरव्यू देकर अपना शोषण कराते,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाँ, इतने व्यावहारिक वे अवश्य हैं कि इन्टरव्यू लेने वाले के श्रम का, उसकी श्रद्धा-आस्था का एक भिन्न अस्तित्व पूर्वोदय के लाभ के लिए पूरा शोषण होने दें।

जैनेन्द्र जी कहते हैं–"पुस्तक के पीछे इनमें (यानी वीरेन्द्र में) अर्थ लाभ या स्वत्व लाभ की दृष्टि नहीं थी।" मुझमें तो वह दृष्टि नहीं थी, पर जैनेन्द्र जी में भी क्या वह नहीं है और तभी 'उंचे से ऊंचे विधि विशेषज्ञों से राय लेकर' वे आश्वस्त हो रहे कि 'समय और हम' उनका है और वीरेन्द्र का उस पर रंच भी अधिकार नहीं है। विधि-विशेषज्ञों ने तो मुझे भी मेरे ही पक्ष की राय दी है। फैसला अदालत ही कर सकती है, पर प्रश्न भिन्न है। मेरा मन कुछ भी रहा, विधि विशेषज्ञों ने कुछ भी कहा, क्यों जैनेन्द्र जी ने सामने आकर यह नहीं कहा कि ग्रंथ में तुम्हारे योगदान की एवज रायल्टी का इतना अंश तुम्हारा है और तुम सिर्फ प्रश्नकर्ता नहीं 'समय और हम' के सम्पादक हो। तब उनका गौरव बहुत बढ़ता और मेरा मन भी टूटने से बच जाता। अधिकार-लिप्सा में स्वयं फंस कर दूसरों को उसके लिए निन्दित करना शायद एक अपरिग्रही के लिए ही संभव है!!

प्रश्न पैसे का नहीं, इस आत्म-छलना की वृत्ति का है, जो स्वयं पूरा समेट कर भी दूसरे को सिर्फ श्रम-सुख पर सन्तोष करने का उपदेश देती है और इतने पर भी स्वयं को अपरिग्रही तथा दूसरे को परिग्रही घोषित करती है। 'पैसे के नितान्त असंसर्ग' का प्रयोग जैनेन्द्र जी कर सकते है। सैकड़ों मुनि-साधु श्रद्धालु सेठों एवं बड़े बड़े राज्याधिकारियों के विलास-भवनों में बैठकर वैसा प्रयोग सफलता पूर्वक कर रहे हैं। मेरी शुभ-कामनाएं उन्हें सादर समर्पित हैं।

अधिकार के प्रति जैनेन्द्र जी का रुख बड़ा विचित्र है। अपने शब्द पर अपने अधिकार के प्रति पूर्ण सतर्क रहते हुए भी 'स्वतन्त्र सँस्था' पूर्वोदय के हितों की पूरी वकालत करते हुए भी, यह कहने में उन्होंने संकोच नहीं माना है कि वीरेन्द्र अधिकार की बहक में फंस गया है और पैसे के चक्कर में जा उलझा। वे पुस्तक के अगले संस्करण से मुझे निकाल फेंकने की सलाह पूर्वोदय को दे सकते हैं, पर भूल जाते हैं कि पुस्तक में उनका एक भी शब्द मेरे शब्द से स्वतन्त्र, अप्रेरित, असम्बद्ध नहीं है। तब तो उन्हें अपने शब्द भी निकाल फेंकने चाहिएँ। पुस्तक प्रश्नोत्तर शैली में है। उसके स्वरूप को बदलने का उन्हें कोई नैतिक या कानूनी हक प्राप्त नहीं है। 'अधिकार की साझेदारी में पुस्तक का हित नहीं है।' यह तर्क मेरी समझ से परे है। क्या एक पुस्तक के कई लेखक नहीं होते और सभी योगानुपात से रायल्टी नहीं पाते? क्या उससे पुस्तक का अहित होता है? पर दूसरों को तुच्छ मानकर, उनकी श्रद्धा भावना का इस्तेमाल लाभ के लिए करना जैनेन्द्र जी अपनी प्रतिभा का अधिकार मान बैठे हैं और दूसरे को बस मूक समर्पण का ही अधिकार दे सकते हैं।

जैनेन्द्र जी ने मुझे अज़ीज़ से अधिक माना है। मैंने भी उन्हें प्रथम परिचय के समय से ही गुरु रूप में मान्यता दी है। 'समय और हम' के बाद तो मेरे मन में उनके प्रति गुरुता का भाव बहुत ही बढ़ गया है; क्योंकि तथाकथित अहिंसा-अध्यात्म-दर्शन की परिसीमा का जैसा सूक्ष्म एवं प्रकट अनुभव मुझे अब हुआ है वैसा कदाचित ही कहीं हो पाता। भला क्या लाख रुपया लेकर भी इस अनुभव को बेचा जा सकता है? इस काण्ड पर अब क्षोभ नहीं एक हंसी ही मुझ में से फूटती है। मैं क्या समझा था, यह सब क्या निकला? मैं जैनेन्द्र जी को विश्वास दिलाता हूँ, न मुझ में कोई 'घाव' है, न 'नासूर' पर भारत एवं भारतीय संस्कृति की छाती में हजारों वर्षों से सड़ते नासूर को जैनेन्द्र जी की कृपा से ही मैं देख पाया हूँ इसके लिए मेरा रोयाँ-रोयाँ उनका आभारी है।

—वीरेन्द्र कुमार गुप्त

111311

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम पारखी हैं !

—श्री राजाराम साहू 'पीड़ित'

हम पारखी हैं।
हम देखते हैं, परखते हैं;
उलटते नहीं, पलटते नहीं !

हम पारखी हैं।
हमारी आदत
देखने की है, परखने की है।
सिक्के के पहलू हैं
दो,
एक में
किसी शासक की मुद्रा
या कोई राष्ट्रीय चिन्ह
(जो हमें मोह लेते हैं।)
दूसरे में
सिक्के का मूल्य
और उसकी निर्माण-तिथि
(जो, सचमुच ही
सिक्के की आरसी है।),
मोह को हम त्याग नहीं पाते।
हम पारखी हैं।
हम देखते हैं, परखते हैं;
उलटते नहीं, पलटते नहीं !

हम पारखी हैं।
मिल गया परखने को
हमें
सिक्का आजादी का
उन्नीस-सौ-सैंतालीस में
पन्द्रह अगस्त को।
(वैसे,
कुछ पूर्व भी
देख हमें रहे थे,
किन्तु, दूर-दूर से।
मूर्ति के मोही हम,
देख बैठे पहले-पहल
मुद्रा गान्धी की,
जिसमें,
आत्मा महात्मा की
मानस आकाश का,
प्रताप परमात्मा का,
ऐश्वर्य
भारत के दीनबन्धु कृषक का।
जब रीझ हम गए
आप ही बताइए,
सिक्के को कैसे
तब हम पलट पाते ?

हम पारखी हैं।
हम देखते हैं, परखते हैं;
उलटते नहीं, पलटते नहीं !

हम पारखी हैं,
हम देखते हैं,
परखते हैं,
उलटते नहीं।
पलटते नही।
बस.
देखते हैं,
देखते ही रह जाते हैं
और इसी से,
(क्रम
कुछ ऐसा ही रहा है हमारा।)
देखकर भी
देख नहीं पाते,
परखकर भी
परख नहीं पाते।

हम पारखी हैं।
हम देखते हैं, परखते हैं,
उलटते नहीं, पलटते नहीं।

और अब
जब
सिक्का गाड़ दिया गया है
और
वह जम गया है,
हम उलटना चाहते हैं,
पलटना चाहते हैं
उलट—पलटकर
देखना चाहते हैं,
परखना चाहते हैं,
पर
वह उखड़ता नहीं है
और हम
देखना चाहते हैं—
मूल्य वाले पहलू में
क्या है ?
मूल्य क्या है
आजादी के सिक्के का,
जो किसी को मालूम नहीं ?
(वैसे,
मालूम है
वह
कुछ 'सिरफिरों' को।
पर वे पारखी तो नहीं !
फिर भी
हम इतना जानते हैं,
वह सिक्का
पूरा खरा है,
खोट उसमें है नहीं।
अपने को दोष हम दे नहीं पाते।

हम पारखी हैं।
हम देखते हैं, परखते हैं,
उलटते नहीं, पलटते नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ध्रांगध्रा केमिकल वर्क्स लिमिटेड

भारी रसायनों के निर्माता

कास्टिक सोडा
(रेयन ग्रेड)

हाइड्रोक्लोरिक एसिड

ब्लीच लिकर

साहूपुरम् में
डाकखाना : आरुमुगनेरी
(तिन्नेवेली जिला)

सोडा ऐश,

सोडा बाईकार्ब

कैसिल्यम क्लोराइड

नमक

ध्रांगध्रा में
(गुजरात राज्य)

मैनेजिंग एजेण्ट्स—

साहू ब्रदर्स (सौराष्ट्र) प्राइवेट लिमिटेड

१५ ए, हार्निमन सर्कल

फोर्ट, बम्बई – १

टेलीफोन २५१२१८-१९-१०,

तार : सोडाकेम, बम्बई

नया जीवन, सहारनपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लुभावनी वस्तु ग्राहकों को अधिक पसन्द आती है

यदि आप अपने मालको जल्दी बेचने की सोचते हैं तो ..बस उनकी बाहरी सुन्दरता बढ़ा दीजिये; यानि उसको रोहतास पैकिंग पेपर में लपेटकर अधिक आकर्षक, मनपसन्द और अपने ढंग का निराला बना डालिये। ऊँचे दर्जे के कार्टन्स पेपरकोन्स और डब्बे बनाने के लिये इनके निर्माताओं द्वारा हमेशा रोहतास पेपर्स और बोर्ड ही अपने अच्छे गुणों के कारण अधिक पसन्द किए जाते हैं। भड़कीले रंगों के साथ लगा हुआ ट्रेडमार्क इनकी शान में चार चाँद लगा देता है। रोहतास पैकिंग पेपर्स और बोर्ड्स अधिक टिकाऊ बनावट में चिकने होते हैं जो आपके माल को गन्दगी, धूल और नमी से बचाते हैं जिससे आपके माल की ताजगी और चिकनाहट हमेशा बनी रहती है।

ROHTAS

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड

डालमिया नगर (बिहार)

मैनेजिंग एजेंट्स : साहू जैन लिमिटेड ११, क्लाइव रो कलकत्ता-१

IPC-R : 383 HIN

मुद्रक—अखिलेश द्वारा विकास प्रिंटिंग वर्क्स सहारनपुर में मुद्रित-प्रकाशित।
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1-3-2008

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri